आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ति रचित

गोम्मटसार

(कर्मकाण्ड)

भाग-२

सम्पादन-अनुवाद

डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये

सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोम्मटसार

जैन-धर्म के जीवतत्त्व और कर्मसिद्धान्त की विस्तार से व्याख्या करनेवाला महान् ग्रन्थ है 'गोम्मटसार'। आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती (दसवीं शताब्दी) ने इस वृहत्काय ग्रन्थ की रचना 'गोम्मटसार जीवकाण्ड' और 'गोम्मटसार कर्मकाण्ड' के रूप में की थी। डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये और सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री के सम्पादकत्व में यह ग्रन्थ भारतीय ज्ञानपीठ से सन् 1978-1981 में प्राकृत मूल गाथा, श्रीमत् केशववर्णी विरचित कर्णाट-वृत्ति जीवतत्त्व-प्रदीपिका संस्कृत टीका तथा हिन्दी अनुवाद एवं विस्तृत प्रस्तावना के साथ पहली बार चार वृहत् जिल्दों (गोम्मटसार जीवकाण्ड, भाग 1,2 और गोम्मटसार कर्मकाण्ड, भाग 1,2) में प्रकाशित हुआ था। और अब जैन धर्म-दर्शन के अध्येताओं एवं स्वाध्याय-प्रेमियों को समर्पित है ग्रन्थ का यह एक और नया संस्करण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला : प्राकृत ग्रन्थांक १७

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ति रचित

गोम्मटसार

(कर्मकाण्ड)

भाग-२

[श्रीमत्केशववर्णिविरचित कर्णाटवृत्ति, संस्कृत टीका जीवतत्त्वप्रदीपिका,
हिन्दी अनुवाद तथा प्रस्तावना सहित]

सम्पादन एवं अनुवाद
डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये
सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

भारतीय ज्ञानपीठ

तृतीय संस्करण : २००० ई. □ मूल्य : २५० रुपये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ISBN 81 - 263 - 0168 - 6 (Set)
81 - 263 - 0170 - 8

भारतीय ज्ञानपीठ

(स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ६; वीर नि. सं. २४७०; विक्रम सं. २०००; १८ फरवरी १९४४)

पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी की स्मृति में
साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित
एवं
उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रमा जैन द्वारा संपोषित

मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन साहित्य का अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उनका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदि के साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारों की ग्रन्थसूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य पर विशिष्ट विद्वानों के अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित हो रहे हैं।

•

ग्रन्थमाला सम्पादक : (प्रथम संस्करण)

सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री
डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
१८, इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-११० ००३

मुद्रक : नागरी प्रिण्टर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२

© भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

MOORTIDEVI JAIN GRANTHAMALA : Prakrit Grantha No. 17

GOMMAṬASĀRA

(KARMAKĀṆḌA)

of

ACHARYA NEMICHANDRA SIDDHANTACHAKRAVARTI

VOL. II

[With Karṇāṭa-vṛtti, Sanskrit Ṭikā Jīvatattvapradīpikā, Hindi Translation & Introduction]

Edited and translated by

Dr. A. N. Upadhye
Siddhantacharya Pt. Kailash Chandra Shastri

BHARATIYA JNANPITH

Third Edition : 2000 □ Price : Rs. 250

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ISBN 81 - 263 - 0168 - 6 (Set)
81 - 263 - 0170 - 8

BHARATIYA JNANPITH

(Founded on Phalguna Krishna 9; Vira N. Sam. 2470; Vikrama Sam. 2000; 18th Feb. 1944)

MOORTIDEVI JAINA GRANTHAMALA

FOUNDED BY
Sahu Shanti Prasad Jain
In memory of his illustrious mother Smt. Moortidevi
and
promoted by his benevolent wife
Smt. Rama Jain

In this Granthamala critically edited Jain agamic, philosophical, puranic, literary, historical and other original texts in Prakrit, Sanskrit, Apabhramsha, Hindi, Kannada, Tamil etc., are being published in original form with their translations in modern languages.

Also being published are catalogues of Jain bhandaras, inscriptions, studies on art and architecture by competent scholars and also popular Jain literature.

•

General Editors : (First Edition)
Siddhantacharya Pt. Kailash Chandra Shastri
Dr. Jyoti Prasad Jain

Published by
Bharatiya Jnanpith
18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110 003
Printed at : Nagri Printers, Naveen Shahdara, Delhi-110 032

© All Rights Reserved by Bharatiya Jnanpith.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

ऋषभजयन्ती संवत् २०३४ में गोम्मटसार जीवकाण्डका प्रथम भाग प्रकाशित हुआ था और ऋषभ निर्वाण चतुर्दशी वि. सं. २०३७ में कर्मकाण्डके दूसरे भागके साथ गोम्मटसारका प्रकाशन कार्य पूर्ण हुआ है। जब मैंने इस महत्कार्यका भार वहन किया था तो मुझे यह सन्देह था कि मैं यह कार्य पूर्ण कर सकूँगा कि नहीं ? क्योंकि मेरे सहयोगी डॉ. ए. एन. उपाध्ये आयुमें मुझसे तीन वर्ष छोटे होते हुए भी दिवंगत हो गये थे। किन्तु जिनभक्तिके प्रसादसे मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा और यह महत्कार्य ऐसे समयमें पूर्ण हुआ जब श्रवणबेलगोलामें अनेकोपाधि विभूषित चामुण्डरायके द्वारा स्थापित बाहुबलि स्वामीकी विशाल मूर्तिकी, जो चामुण्डरायके घरेलू नामपर गोम्मटेश्वरके नामसे विख्यात है, स्थापनाके एक हजार वर्ष पूर्ण होनेके उपलक्षमें २२ फरवरीके दिन महामस्तकाभिषेक निष्पन्न होने जा रहा है और समस्त विश्वमें उसीकी चर्चा प्रचरित है। तथा भारतके कोने-कोनेसे दर्शनार्थी भक्त जनता उमड़ी चली आ रही है।

यह गोम्मटसार महाग्रन्थ भी सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्य नेमिचन्द्रने चामुण्डरायके निमित्तसे ही रचा था इसीसे उन्होंने इसको गोम्मटसार नाम दिया है। इस तरह चामुण्डरायके द्वारा प्रस्थापित गोम्मटेश्वर और उनके ही निमित्तसे रचा गया गोम्मटसार ये दोनों अमूल्य कृतियाँ उसी तरहसे परस्परमें सम्बद्ध हैं जैसे भरत और बाहुबलि थे। एक जिनकी प्रतिकृति है तो दूसरी जिनवाणी की।

गोम्मटसार दो भागोंमें विभक्त है—प्रथम भाग जीवकाण्डकी समाप्तिपर ग्रन्थकार नेमिचन्द्रने अन्तिम गाथा द्वारा चामुण्डरायके गुरु अजितसेनका उल्लेख करते हुए गोम्मट नामसे चामुण्डरायका जयकार किया है। किन्तु गोम्मटसार कर्मकाण्डके अन्तमें चामुण्डरायके द्वारा निर्मापित गोम्मटस्वामीकी मूर्तिका, उसके आगे निर्मापित ब्रह्म स्तम्भका तथा जिनभवनका उल्लेख विस्तारसे किया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जीवकाण्डकी रचनाके पश्चात् और कर्मकाण्डकी समाप्तिसे पूर्व चामुण्डरायने उक्त निर्माण कराया था। गोम्मटसार कर्मकाण्डकी अन्तिम प्रशस्ति एक तरहसे चामुण्डरायकी ही प्रशस्ति है। उसमें ग्रन्थकारने अपने सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखा।

उसकी अन्तिम गाथाके अर्थके सम्बन्धमें विद्वानोंको सन्देह है। वह गाथा इस रूपमें प्राप्त है—

> गोम्मटसुत्तल्लिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी।
> सो राओ चिरकालं णामेण य वीर मत्तंडी ॥९७२॥

इसकी संस्कृत टीका इस प्रकार है—

'गोम्मटसारसूत्रलेखने गोम्मटराजेन या देशीभाषा कृता स राजा नाम्ना वीरमार्तण्डश्चिरकालं जयतु।'

पं. टोडरमलजीने इसका अर्थ इस प्रकार किया है—

'गोम्मटसार ग्रन्थके सूत्र लिखने विषैं गोम्मट राजा करि जो देशी भाषा करी सो राजा नामकरि वीरमार्तण्ड चिरकाल पर्यन्त जीतिवंत प्रवर्तो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्व. श्री नाथूरामजी प्रेमीने चामुण्डराय शीर्षक अपने निबन्धके पादटिप्पणमें लिखा है—'इस गाथाका ठीक अन्वय नहीं बैठता। परन्तु यदि सचमुच ही चामुण्डरायकी कोई देसी या कनड़ी टीका हो, जिसका कि नाम वीरमतंडी था, तो वह केशववर्णीकी कर्नाटकी वृत्तिसे जुदा ही होगी, यह निश्चित है। एक कल्पना यह भी होती है कि उन्होंने गोम्मटसारकी कोई देसी (कनडी) प्रतिलिपि की हो।'

—(जै. सा. इ., पृ. २६९)

स्व. मुख्तार सा. जुगल किशोरजीने पुरातन जैन वाक्य सूचीकी प्रस्तावनामें लिखा है—'सचमुचमें चामुण्डरायकी कर्नाटक वृत्ति अभी तक पहेली ही बनी है। कर्मकाण्डको उक्त गाथामें प्रयुक्त हुए 'देसी' पद-परसे की जानेवाली कल्पनाके सिवाय उसका अन्यत्र कहीं कोई पता नहीं चलता और उक्त गाथाकी शब्द-रचना बहुत कुछ अस्पष्ट है।'

'यहाँ देसीका अर्थ देशकी कनडी भाषामें छायानुवाद रूपसे प्रस्तुत की गयी कृतिका ही संगत बैठता है न कि किसी वृत्ति अथवा टीकाका, क्योंकि ग्रन्थकी तैयारीके बाद उसकी पहली साफ़ कापीके अवसरपर, जिसका ग्रन्थकार स्वयं अपने ग्रन्थके अन्तमें उल्लेख कर सके छायानुवाद जैसी कृतिकी ही कल्पना की जा सकती है, समयसाध्य तथा अधिक परिश्रमकी अपेक्षा रखनेवाली टीका जैसी वस्तुकी नहीं। यही वजह है कि वृत्ति रूपमें उस देशीका अन्यत्र कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता—वह संस्कृत छायाकी तरह कन्नड़ छाया रूपमें ही उस वक्तकी कर्नाटक देशीय कुछ प्रतियोंमें रही जान पड़ती है।'

स्व. मुख्तार सा. का लिखना यथार्थ प्रतीत होता है फिर भी उक्त प्रश्न विचारणीय ही बना है। अस्तु,

हमने कर्मकाण्डके प्रथम भागकी प्रस्तावनामें लिखा है कि हमें उसकी संस्कृत टीकाकी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त नहीं हो सकीं। जो एक प्रति दिल्लीके भण्डारसे प्राप्त हुई थी उससे प्रतीत हुआ कि उसमें कोई अन्य टीका मिश्रित है।

कलकत्तासे जो गोम्मटसार कर्मकाण्डका बृहत् संस्करण प्रकाशित हुआ था, उसके पाद टिप्पणमें कहीं-कहीं यह लिखा मिलता है कि अभयचन्द्र नामसे अंकित टीकामें अमुक पाठ अधिक मिलता है। हमने उस पाठका मिलान केशववर्णीकी कन्नड़ टीकासे किया तो वह उससे बिल्कुल मिलता हुआ प्रतीत हुआ। इससे हमने उन पाठोंके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी दे दिया जो पं. टोडरमलजीकी टीकामें नहीं है। इसपरसे हमें ज्ञात हुआ कि नेमिचन्द्रकी संस्कृत टीकाके भी दो रूप हैं और उसका समर्थन संस्कृत टीकाकी अन्तिम प्रशस्तियोंसे होता है। कलकत्ता संस्करणमें दोनों प्रशस्तियाँ मुद्रित हैं। उन दोनोंके अन्तमें लिखा है—

निर्ग्रन्थाचार्यवर्येण त्रैविद्यचक्रवर्तिना।
संशोध्याभयचन्द्रेणालेखि प्रथमपुस्तकः॥

अर्थात् निर्ग्रन्थाचार्य त्रैविद्यचक्रवर्ती अभयचन्द्रने नेमिचन्द्रकी टीकाका संशोधन करके उसकी पहली पुस्तक लिखी।

इस संशोधनमें केशववर्णीकी टीकाके ऐसे कुछ अंश, जिन्हें नेमिचन्द्रने छोड़ दिया था, उन्हें भी अभयचन्द्रने सम्मिलित कर लिये। ये अंश प्रायः दार्शनिक हैं या विशेष विस्तारको लिये हैं। इससे संस्कृत टीकाके भी दो रूप हो गये—एक नेमिचन्द्रकृत और दूसरा अभयचन्द्रके द्वारा संशोधित और परिवर्धित। ऐसा प्रतीत होता है कि अभयचन्द्र भी अच्छे विद्वान् थे। टीकाकारोंके सम्बन्धमें जीवकाण्डके प्रथम भागकी प्रस्तावनामें लिखा गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्णाटवृत्तिके रचयिता केशववर्णीने अपनी टीकाके अन्तमें कुछ कन्नड़ पद्य भी दिये हैं। मूड़विद्रीके श्री चारुकीर्तिजी महाराजने अपने शोधसंस्थानके विद्वान् द्वारा उनका शोधनपूर्वक हिन्दी अर्थ कराकर भेजा इसके लिए हम स्वामीजी तथा उक्त विद्वान्का आभार स्वीकार करते हैं।

मेरी यह आन्तरिक भावना थी कि श्रवणवेलगोलामें महामस्तकाभिषेकके अवसरपर इस ग्रन्थराजका विमोचन हो। भारतीय ज्ञानपीठके वर्तमान अध्यक्ष साहू श्रेयांसप्रसादजी आदिने भी मेरी इस भावनाको मान्य किया और ता. १९ फरवरीको चामुण्डराय मण्डपमें विशाल मुनि संघ और जनसमुदायके समक्ष इस ग्रन्थराजका विमोचन हुआ। यह मेरे लिये बड़े हर्ष की बात हुई।

श्रवणवेलगोलासे लौटते हुए बाहुबली (कुम्भोज) में आचार्य समन्तभद्रजी महाराजके दर्शन किये। उन्हींके समक्ष इस ग्रन्थराजके प्रकाशनकी योजना बनी थी और उसे भारतीय ज्ञानपीठके तत्कालीन अध्यक्ष साहू शान्तिप्रसादजी तथा मन्त्री बाबू लक्ष्मीचन्दजीने स्वीकार किया था। उन्हींके शुभाशीर्वादसे यह महान् कार्य निर्विघ्न पूर्ण हुआ है। अतः उनके प्रति मैं नतमस्तक हूँ।

अन्तमें मैं भारतीय ज्ञानपीठके संचालक मण्डल तथा व्यवस्थापक मण्डलको तथा सन्मति मुद्रणालयके संचालकों और सुदक्ष कम्पोजीटर श्री महावीरजीको धन्यवाद देता हूँ जिनके सहयोगसे यह महान् कार्य निर्विघ्न पूर्ण हो सका।

स्व. साहू शान्तिप्रसादजी और उनकी स्व. धर्मपत्नी रमारानीजीका स्मरण बरबस हो आता है जो इस ज्ञानपीठके संस्थापक और संचालक रहे हैं और जिसके कारण जिनवाणीके महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोंका प्रकाशन हो रहा है। साहूजीके बड़े भाई साहू श्रेयांसप्रसादजी तथा बड़े पुत्र साहू अशोककुमारजी उनके कार्यको संलग्नता के साथ कर रहे हैं यह सन्तोषकी बात है।

श्री गोम्मटेश्वर सहस्राब्दी महामस्तकाभिषेक
दिवस
२२ फरवरी सन् १९८१

—कैलाशचन्द्र शास्त्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय सूची

४. त्रिचूलिकाधिकार ६४७-६८१

नव प्रश्न चूलिकाओंके नाम ६४७
प्रथम तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियाँ ६४८
दूसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियाँ ६५०
तीसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियाँ ६५२
सप्रतिपक्षा और अप्रतिपक्षा प्रकृतियाँ ६५४
पाँच भागहार चूलिकाओंके नाम ६५७
संक्रमणका स्वरूप ६५७
पाँचों संक्रमणका स्वरूप ६५९
उद्वेलन प्रकृतियाँ ६६१
सर्व संक्रमणरूप प्रकृतियाँ ६६२
प्रकृतियोंमें संक्रमणका नियम ६६३
विध्यात और अधःप्रवृत्त संक्रमणकी प्रकृतियाँ ६६७
स्थिति अनुभाग और प्रदेश बन्धके संक्रमणके गुणस्थानोंकी संख्या ६६८
पाँच भागहारोंका अल्पबहुत्व ६६९
दस करणोंके नाम ६७३
दस करणोंका स्वरूप ६७४
किन प्रकृतियों और गुणस्थानोंमें ये करण होते हैं ६७५

५. स्थानसमुत्कीर्तनाधिकार ६८२–११२१

नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा ६८२
स्थानका स्वरूप ६८३
गुणस्थानोंमें मूल प्रकृतियोंके बन्ध उदय उदीरणा और सत्त्वको लिये स्थानोंका कथन ६८३
उनमें भुजकारादि बन्धोंका कथन ६८४
उत्तर प्रकृतियोंमें स्थानोंका कथन ६८८
दर्शनावरणके बन्धस्थान तथा उनमें भुजकारादि बन्ध ६८९
दर्शनावरणके उदयस्थान ६९२
दर्शनावरणके सत्त्वस्थान ६९३
मोहनीयके बन्ध स्थान ६९३
तथा उनके गुणस्थान ६९४
उन स्थानोंमें ध्रुवबन्धी प्रकृतियाँ ६९४
उनके भंग गुणस्थानोंमें ६९५
गुणस्थानोंमें मोहनीयके बन्धस्थानोंमें भंगोंकी संख्या ६९९
भुजकारादि बन्धोंका लक्षण ७००
अवक्तव्य बन्धोंकी संख्या ७०१
भुजकार बन्धोंकी संख्या ७०२
अल्पतर बन्धोंकी संख्या ७०४
विशेष भुजकारादिकी संख्या ७०५
गुणस्थानोंमें भुजकार बन्धोंकी संख्या ७०९
अल्पतर बन्धोंका कथन ७१०
विशेष रूपसे अवक्तव्य बन्ध ७१४
मोहनीयके उदयस्थान ७१५
उदयके कूटोंकी रचना ७१६
मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें कूटोंकी संख्या ७२०
गुणस्थानोंमें अपुनरुक्त उदयस्थान ७२३
गुणस्थानोंमें उदयस्थानों और कूटोंका सूचक यन्त्र ७२६
दो प्रकृतिरूप उदयस्थानके भंग ७२६
गुणस्थानोंमें मोहनीयके सब उदयस्थानोंकी और प्रकृतियोंकी संख्या ७३०
अपुनरुक्त स्थानोंकी संख्या और प्रकृतियाँ ७३१
उपयोगकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें मोहके उदय स्थानों और प्रकृतियोंका कथन ७३४
योगकी अपेक्षा उक्त कथन ७३९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिश्रयोगवाले और केवलपर्याप्त योगवाले गुणस्थान ७४०
जुदे रखे योगोंका कथन ७४३
घटाये गये वेदोंका कथन ७४४
योगके आश्रयसे मोहनीयकी सब उदय-प्रकृतियोंकी संख्या ७५०
संयमकी अपेक्षा उक्त कथन ७५१
गुणस्थानोंमें लेश्या ७५३
लेश्याके. आश्रयसे मोहके स्थानों और प्रकृतियोंकी संख्या ७५४
सम्यक्त्वके आश्रयसे मोहके उदयस्थानों और प्रकृतियोंकी संख्या ७५८
मोहनीयके सत्त्वस्थानोंका कथन ७६२
गुणस्थानोंमें सत्त्वस्थान ७६४
क्षपक श्रेणिपर आरोहण करनेवालोंके वेदके उदय भेदसे भेद ७६६
यन्त्र द्वारा स्पष्टीकरण ७६९
मोहनीयके बन्धस्थानोंमें सत्त्वस्थान ७७३
नामकर्मके स्थानोंके आधारभूत इकतालीस पद ७७५
नामकर्मके बन्धस्थान ७७८
वे किन प्रकृतियोंके साथ बँधते हैं ७७९
आतप और उद्योत प्रशस्त प्रकृति किस पदके साथ बँधती हैं ७८०
तेईस आदि स्थानोंकी प्रकृतियोंको जाननेके लिए उन प्रकृतियोंका पाठक्रम ७८२
नामकर्मके एक जीवके एक समयमें बन्ध योग्य बन्धस्थान ७८५
अठाईस प्रकृतिरूप बन्धस्थान ७८६
उनतीस प्रकृतिरूप छह स्थान ७८७
तीस प्रकृतिरूप छह स्थान ७८८
नामकर्मके बन्ध स्थानोंका यन्त्र ७९०
नामकर्मके बन्ध स्थानोंके भंग ७९१
मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें भंग ७९४
सासादन गुणस्थानमें भंग ७९५
मिश्र गुणस्थान आदिमें भंग ७९५
एक भवको छोड़कर दूसरे भव में उत्पन्न होनेका नियम ७९७
नाम कर्मके बन्ध स्थानोंका मार्गणाओंमें कथन ८०५
तिर्यंच गतिमें छह ही बन्ध स्थान ८०६
इन्द्रियादि मार्गणाओंमें कथन ८०७
प्रमाण और नयका स्वरूप ८०९
नयों के भेद ८११
निश्चयनय ८१२
व्यवहारनय ८१२
नैगम आदि नयोंका स्वरूप ८१५
योगोंमें नामकर्मके बन्ध स्थान ८२१
वेदों और कषायोंमें बन्ध स्थान ८२२
कषायोंके भावोंका सूचक यन्त्र ८२८
ज्ञान मार्गणामें बन्ध स्थान ८३०
संयम मार्गणामें बन्ध स्थान ८३२
सामायिक संयमका स्वरूप ८३२
छेदोपस्थापना आदिका स्वरूप ८३४
देवगतिमें कौन कहाँ तक उत्पन्न होता है ८४१
देवोंमें मिथ्यादृष्टियोंमें बन्ध स्थान ८४४
तिर्यंचोंमें सम्यक्त्वकी प्राप्ति कैसे ? ८४५
दर्शन मार्गणामें नाम कर्मके बन्ध स्थान ८४८
लेश्या मार्गणामें नाम कर्मके बन्ध स्थान ८५०
नरकोंमें उत्पन्न होने योग्य जीव ८५२
लेश्याओंमें संक्रमणका कथन ८६२
लेश्यासहित तिर्यंचोंमें नामकर्मके बन्ध स्थान ८६४
लेश्यासहित मनुष्योंमें नामकर्मके बन्ध स्थान ८६७
लेश्या सहित देवोंमें नाम कर्मके बन्ध स्थान ८६८
देवों में तथा देवोंकी उत्पत्तिका कथन ८७३
भव्य मार्गणामें बन्ध स्थान ८७६
सम्यक्त्व मार्गणामें बन्ध स्थान ८७७
प्रसंगवश सम्यक्त्वकी उत्पत्ति आदिका कथन ८७७
वेदक सम्यग्दृष्टिके क्षायिक सम्यग्दर्शन होनेका विधान ८८५
एक गुणस्थानसे दूसरेमें जानेके नियम ८९४
संज्ञी और आहार मार्गणामें नाम कर्मके बन्ध स्थान ८९८
अपुनरुक्त भंगोंका कथन ८९९
पूर्वोक्त भंगके भुजकार आदि प्रकार तथा सम्बद्ध स्वस्थान आदिका लक्षण ९०३

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टि आदि अपना गुणस्थान छोड़कर किन गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं ९०३
किन अवस्थाओंमें मरण नहीं होता ९०४
नाम कर्मके बन्ध स्थानोंके तीन प्रकार ९०५
इकतालीस पदोंमें भंग सहित स्थानोंका कथन ९०६
उनमें भुजाकार बन्ध लानेका त्रैराशिक यन्त्र ९१०
उनमें अल्पतर भंगोंका कथन ९१०
मिथ्यादृष्टिके भंग लानेकी लघु प्रक्रिया ९१५
असंयतमें भंगोंका विधान ९१८
असंयतमें अल्पतर ९१९
अप्रमत्त आदिमें भुजाकार ९२०
उनकी उपपत्ति ९२२
अप्रमत्तमें अल्पतर ९२३
नाम कर्मके सब भुजाकारादि बन्धोंका यन्त्र ९२५
उन भंगोंकी उत्पत्तिका साधारण उपाय ९२६
अवक्तव्य भंगोंका कथन ९२७
नाम कर्मके उदयस्थान सम्बन्धी पाँच काल तथा उनका प्रमाण ९२८
पाँच कालोंकी जीव समासोंमें योजना ९२९
नाम कर्मके उदय स्थानोंकी उत्पत्तिका क्रम ९३१
नाना जीवोंकी अपेक्षा उक्त कथन ९३३
उन स्थानोंके स्वामी ९३३
उन स्थानोंका कथन ९३४
नाम कर्मके उदय स्थानोंका यन्त्र ९४१
नाम कर्मके उदय स्थानोंमें भंग ९४२
इकतालीस जीवपदोंमें सम्भव भंग ९४६
पुनरुक्त भंगोंका कथन ९५४
नाम कर्मके सत्त्वस्थान ९६१
उनकी उपपत्ति ९६२
दस और नौके स्थानोंकी प्रकृतियाँ ९६३
उद्वेलना स्थानोंका विशेष कथन ९६३
उद्वेलनाके अवसरका काल ९६४
उनका लक्षण ९६४
तेजकाय वायुकायमें उद्वेलन योग्य प्रकृतियाँ ९६५
सम्यक्त्व आदिकी विराधना जीव कितनी बार करता है ९६७
गुणस्थानोंमें नाम कर्मके सत्त्वस्थानोंकी योजना ९६९
इकतालीस पदोंमें सत्त्व स्थानोंका कथन ९७१
मूल प्रकृतियोंमें त्रिसंयोगी भंगोंका कथन ९७४
उत्तर प्रकृतियोंमें उक्त कथन ९७५
गोत्र कर्मका बन्ध उदय सत्त्व ९७९
गुणस्थानोंमें गोत्रके भंग ९८०
गुणस्थानोंमें गोत्रके भंगका यन्त्र ९८१
आयुके बन्ध उदय सत्त्वका कथन ९८२
आयु बन्धके नियम ९८३
नाना जीवोंकी अपेक्षा आयु बन्धके भंग ९८५
गुणस्थानोंमें आयुके अपुनरुक्त भंग ९८७
गुणस्थानोंमें आयुबन्धके भंगोंका जोड़ ९८९
वेदनीय गोत्र आयुके सब भंगोंका जोड़ ९८९
वेदनीय गोत्र आयुके मूल भंग ९९०
मोहनीयके त्रिसंयोगी भंग ९९०
गुणस्थानोंमें मोहनीयके स्थानोंकी संख्या ९९१
वे स्थान कौन हैं, यह कथन ९९१
मोहनीयके त्रिसंयोगमें विशेष कथन ९९४
बन्धस्थानमें उदय और सत्त्वस्थान ९९६
उदयस्थानमें बन्ध और सत्त्वस्थान ९९७
सत्त्वस्थानमें बन्ध और उदयस्थान १०००
मोहनीयके बन्धादि तीनमें-से दोको आधार और एकको आधेय बनाकर कथन १००४
बन्ध उदयमें सत्त्वका कथन १००४
बन्ध सत्त्वमें उदयका कथन १०१२
उदय और सत्त्वमें बन्धका कथन १०१६
नाम कर्मके स्थानोंके त्रिसंयोगी भंग १०२२
नाम कर्मके स्थानोंके गुणस्थानोंमें ,, १०२२
नाम कर्मके स्थानोंके चौदह मार्गणामें ,, १०३१
नाम कर्मके स्थानोंके इन्द्रिय मार्गणामें ,, १०३१
नाम कर्मके स्थानोंके कायमार्गणामें ,, १०३४
नाम कर्मके स्थानोंके योगमार्गणा में ,, १०३५
कषाय और ज्ञान मार्गणामें ,, १०३८
संयम मार्गणामें ,, १०४१
दर्शन लेश्या मार्गणामें ,, १०४२
भव्य और सम्यक्त्व मार्गणामें ,, १०४४
आहार मार्गणामें ,, १०४७

ऊपर कहे त्रिसंयोगमें एकको आधार दोको
आधेय बनाकर कथन १०४८
बन्ध आधार उदय सत्त्व आधेय १०४८
उदय आधार बन्ध सत्त्व आधेय १०७१
सत्त्व स्थान आधार बन्ध उदय आधेय १०९४
बन्ध उदय आधार सत्त्व आधेय ११०९
बन्ध सत्त्व आधार उदय आधेय १११३
उदय सत्त्व आधार बन्ध आधेय १११५

६. आस्रवाधिकार ११२२–११५६

नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञा ११२२
आस्रवके मूल कारण ११२२
मूल कारणोंका गुणस्थानोंमें कथन ११२३
उत्तर कारणोंका गुणस्थानोंमें कथन ११२५
गुणस्थानोंमें प्रत्ययोंकी व्युच्छित्ति और
अनुदयका कथन ११२६
प्रत्ययोंके पाँच प्रकार ११२८
स्थानोंका गुणस्थानोंमें कथन ११२८
स्थानोंके प्रकार ११२९
कूटोंके प्रकार ११३०
कूटोंके यन्त्र ११३२
कूटोच्चारणके प्रकार ११३९
भंगानयन प्रकार ११४४
भंगोंका कथन ११४७
द्विसंयोगी आदि भंगोंको लानेका उपाय ११४८
ज्ञानावरण आदिके बन्धके कारण ११५१

७. भावचूलिकाधिकार ११५७–१२४८

नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा ११५७
पाँच भाव तथा उनके लक्षण ११५८
पाँच भावोंके उत्तर भेद ११५९
गुणस्थानोंमें मूल भाव ११६१
गुणस्थानोंमें उत्तर भाव ११६१
एक जीवके एक कालमें सम्भव भाव ११६३
तथा उनके संयोगी भंग ११६३
मूल भावोंकी तरह संयोगी भंगोंकी संख्या ११६५
उत्तर भावोंके भंगके दो प्रकार ११६६
औदयिक स्थानोंके भंग ११७०
भावोंमें गुण्य गुणाकार क्षेपका कथन ११७५
पदभंगोंका कथन ११९०
जातिपदकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें भंगोंके
समुदायका कथन ११९२
गुण्य आदि की संख्याका कथन ११९९
पदोंका आश्रय लेकर भंगोंका कथन १२०२
भंगोंके मिलानेके लिए सूत्र १२०७
मिथ्यादृष्टिके सब पदभंगोंका प्रमाण १२१२
अन्य गुणस्थानोंमें उक्त कथन १२:३
अन्य मतोंके भेदोंका कथन १२३८
क्रियावादियोंके मूल भंग १२३८
कालवाद, ईश्वरवाद, आत्मवाद,
नियतिवादका अर्थ १२४०
अक्रियावादके मूल भंग १२४१
अज्ञानवादके भेद १२४२
वैनयिकवादके मूल भंग १२४६
अन्य एकान्तवाद १२४४

८. त्रिकरणचूलिकाधिकार १२४९–१३८५

नमस्काररूप मंगल १२४९
अधःप्रवृत्तकरण कौन करता है १२४९
अधःप्रवृत्तकरणका लक्षण १२४९
अधःप्रवृत्तकरणका अंकसंदृष्टि द्वारा कथन १२५०
अधःकरणके चयधन आदिका कथन १२५१
चयधन लानेका विधान १२५४
अनुकृष्टिके प्रथम खण्डका प्रमाण १२५५
अर्थ संदृष्टि द्वारा कथन १२५७
षट्स्थान वृद्धिका कथन १२६३
अपूर्वकरणका कथन १२६७
अनिवृत्तिकरणका कथन १२७२
कर्मस्थिति रचना १२७२
नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञा १२७४
आबाधाका कथन १२७४
आयुकी आबाधाका कथन १२७७
उदीरणाकी अपेक्षा आबाधाका कथन १२७७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्मोंकी स्थिति रचनामें ज्ञातव्य राशियाँ १२७९
सत्तर कोड़ाकोड़ीवाले मिथ्यात्व कर्मकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और गुणहानि १२८२
गुणहानि आयामका प्रमाण १२८४
गुणहानिका प्रमाण और प्रयोजन १२८४
अंक संदृष्टि अपेक्षा निषेकोंका यन्त्र १२८८
अर्थरूपमें कथन १२८९
पल्यकी वर्गशलाका मूल आदिका कथन १३०१
बीस कोड़ाकोड़ी आदिकी स्थितिकी नाना-गुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि १३०७
आयु कर्मके स्थिति भेदोंमें विलक्षणता १३२१
त्रिकोण रचनाका चित्रण १३२४
सत्तारूप त्रिकोण यन्त्र के जोड़ देनेका विधान १३२७
सात कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिके भेद १३३८
सान्तर स्थितिके भेद १३३९
कषायाध्यवसाय स्थानोंका कथन १३४१
स्थिति बन्धाध्यवसायस्थानोंका प्रमाण १३४४
आयु कर्मके स्थिति बन्धाध्यवसायोंमें विशेषता १३४८
अंक संदृष्टि द्वारा कथन १३४९
शेष कर्मोंके बन्धाध्यवसायोंका कथन १३५५
अंक संदृष्टि द्वारा कथन १३६१
अनुकृष्टि विधानका कथन १३६३
विशेष प्रमाणका कथन १३६४
अनुकृष्टिके खण्डोंमें स्थितिबन्धाध्यवसाय-स्थानों का प्रमाण १३६६
प्रथम गुणहानिमें अनुकृष्टि रचनाका कथन १३६९
उसीका अंकसंदृष्टि द्वारा कथन १३७४
आठों ही कर्मोंकी उक्त रचना विशेषमें समानता है १३८०
अनुभाग बन्धाध्यवसायस्थानोंका कथन १३८१
ग्रन्थकी प्रशस्ति १३८६
कर्णाट वृत्तिकार की प्रशस्ति १३८९
संस्कृत टीकाकारकी प्रशस्ति १३९३
परिशिष्ट १३९७–१४५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोम्मटसार कर्मकाण्डे

द्वितीयो भागः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथ त्रिचूलिका अधिकार ॥४॥

उसहाइजिणवरिंदे असहायपरक्कमे महावीरे ।
पणमिय सिरसा वोच्छं तिचूलियं सुणुह एयमणो ॥३९८॥

वृषभादिजिनवरेंद्रान् असहायपराक्रमान् महावीरान् । प्रणम्य शिरसा वक्ष्यामि त्रिचूळिकां श्रुणुतेकमनसः ॥

असहायपराक्रमरुं महावीररुगळमप्प वृषभादिजिनवरेंद्ररुगळं तळेयेरकदिवं नमस्करिसि नवप्रश्न । पंचभागहार । दशकरण भेदभिन्नमप्प त्रिचूलिकेयं पेळ्दपें केळिमेकचित्तमनुळ्ळरागि एंदितु शिष्यरुगळु संबोधिसल्पट्टरु ॥

उक्तानुक्तदुरुक्तचिंतनं चूलिकेयें बुदक्कुमल्लि प्रथमोद्दिष्ट नवप्रश्नचूलिकेयं पेळ्वपर :—

किं बंधो उदयादो पुव्वं पच्छा समं विणस्सदि सो ।
सपरोभयोदयो वा निरंतरो सांतरो उभयो ॥३९९॥

किं बंधः उदयात्पूर्वं पश्चात्समं विनश्यति सः । स्वपरोभयोदयो वा निरंतरः सांतर उभयः ॥

उदयव्युच्छित्तियिदं मुन्नं बळिक्कं युगपद्बंधव्युच्छित्ति यावुदु सः आबंधं स्वोदयदिदं परोदयदिंदमुभयोदयदिंदमाउदु वा मत्तं निरंतरं सांतरमुभयबंधमुमाउदें दितु नव प्रश्नंगळप्पुवल्लि

असहायपराक्रमान् महावीरगुरून् वृषभादिजिनवरेंद्रांश्च शिरसा प्रणम्य नवप्रश्न-पंचभागहार-दशकरणनामत्रिचूलिकां वक्ष्यामि शृणुतैकमनसः । उक्तानुक्तदुरुक्तचिंतनं चूलिका ॥३९८॥ तत्र तावन्नवप्रश्न-चूलिकामाह—

उदयव्युच्छित्तेः पूर्वं पश्चात् युगपद्बन्धव्युच्छित्तिः का । स बंधः स्वोदयेन परोदयेनोभयोदयेन कः ? वा

जिनका ज्ञानादि शक्तिरूप पराक्रम इन्द्रिय आदिकी सहायतासे रहित है उन भगवान् महावीर और ऋषभ आदि जिनेन्द्रदेवोंको सिरसे नमस्कार करके नवप्रश्न पंचभागहार और दसकरण नामक त्रिचूलिका अधिकारको कहूँगा। तुम एकचित्त होकर सुनो। जो अर्थ कहा गया है, या नहीं कहा गया, या ठीक रीतिसे नहीं कहा गया है उस सबके चिन्तन करनेको चूलिका कहते हैं ॥३९८॥

प्रथम नवप्रश्न चूलिका कहते हैं—

पूर्वमें कही प्रकृतियोंमें-से उदय व्युच्छित्तिके पहले बन्धकी व्युच्छित्ति किन प्रकृतियों की होती है ? उदय व्युच्छित्तिके पीछे बन्धकी व्युच्छित्ति किन प्रकृतियोंकी होती है ? तथा

क–८२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदयव्युच्छित्तिगळिदं मुन्नं बंधव्युच्छित्तिगळप्प प्रकृतिगळावुवें दोडे उदयव्युच्छित्तिगळि बळिक्कं बंधव्युच्छित्तिप्रकृतिगळुमं समंगळुमं पेळ्दु पारिशेषिकन्यायदिंद मेण्भत्तों दु ८१ प्रकृतिगळप्पुवें दु गाथाद्वयदिदं पेळ्दपरु :—

देवचउक्काहारदुगज्जसदेवाउगाण सो पच्छा ।
मिच्छत्तादावाणं णराणुथावरचउक्काणं ॥४००॥

देवचतुष्काहारद्विकायशस्कीर्त्तिदेवायुषां स पश्चात् मिथ्यात्वातपयोर्न्नरानुपूर्व्यस्थावरचतुष्काणां ॥

पण्णरकषायभयदुगहस्सदु चउजाइपुरिसवेदाणं ।
सममेक्कत्तीसाणं सेसिगिसीदाण पुव्वं तु ॥४०१॥

पंचदशकषायभयद्विकहास्यद्विकचतुर्ज्जातीनां सममेकत्रिंशतां शेषैकाशीतीनां पूर्व्वं तु ॥

उदयदिदं मुन्नं बंधव्युच्छित्तिप्रकृतिगळु एण्भत्तों दु ८१। उदयव्युच्छित्तियिदं बळिक्कं बंधव्युच्छित्तिप्रकृतिगळें टु ८। उदयदोडने बंधव्युच्छित्तिप्रकृतिगळु मूवत्तों दु ३१ कूडि नूरिप्पत्तप्पुववावुवें दोडे देवचतुष्कमुमाहारद्विकमुमयशस्कोर्त्तियुं देवायुष्यमुमें वें टुं प्रकृतिगळ्गे उदयव्युच्छित्तियिदं बळिक्कं बंधव्युच्छित्तियक्कुं। संदृष्टि :—

दे	आ	अ	दे
४	२	१	१

पुनः निरंतरः सांतरः उभयरूपः कः ? इति नव प्रश्ना भवंति ॥३९९॥ तत्राद्यप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

देवचतुष्कमाहारकद्विकमयशस्कीर्तिर्देवायुरित्यष्टानामुदयव्युच्छित्तेः पश्चाद्बंधव्युच्छित्तिः। तथाहि-देवचतुष्कस्यासंयते उदयव्युच्छित्तिः, अपूर्वकरणषष्ठभागे बंधव्युच्छित्तिः। आहारकद्वयस्य प्रमत्ते उदयव्युच्छित्तिः,

उदय व्युच्छित्तिके साथ बन्ध व्युच्छित्ति किन प्रकृतियोंकी होती है। ये तीन प्रश्न हुए। अपना उदय होते हुए जिनका बन्ध होता है वे प्रकृतियाँ कौन हैं ? अन्य प्रकृतियोंके उदयमें जो बँधती हैं वे प्रकृतियाँ कौन हैं ? तथा जिनका बन्ध अपने भी उदयमें होता है और अन्य प्रकृतियोंके उदयमें भी होता है वे प्रकृतियाँ कौन हैं ? ये तीन प्रश्न हुए। जिनका निरन्तर बन्ध होता है वे प्रकृतियाँ कौन हैं ? जिनका सान्तर बन्ध होता है कभी होता है कभी नहीं होता, वे कौन हैं ? जिनका सान्तर-निरन्तर दोनों प्रकारका बन्ध होता है वे प्रकृतियाँ कौन हैं ? तीन प्रश्न ये हुए। सब नौ प्रश्न हुए ॥३९९॥

प्रथम तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां दो गाथाओंसे कहते हैं—

देवगति, देवानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर व अंगोपांग ये देवचतुष्क, आहारक शरीर व अंगोपांग, अयशःकीर्ति, देवायु इन आठ प्रकृतियोंकी उदय व्युच्छित्तिके पीछे बन्ध व्युच्छित्ति होती है। वही कहते हैं—

देव चतुष्ककी उदय व्युच्छित्ति असंयत गुणस्थानमें होती है और अपूर्वकरणके छठे भागमें बन्ध व्युच्छित्ति होती है। आहारकद्विककी उदयव्युच्छित्ति प्रमत्तमें और बन्धव्युच्छित्ति अपूर्वकरणके षष्ठ भागमें होती है। अयशःकीर्तिकी असंयतमें उदय व्युच्छित्ति होती है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अदेंतेंदोडे देवचतुष्कमसंयतनोळुदयव्युच्छित्तियक्कुमपूर्व्वकरणन षष्ठभागदोळु बंधव्युच्छित्तियक्कुमाहारकद्वयक्के प्रमत्तसंयतनोळुदयव्युच्छित्तियक्कुमपूर्व्वकरणनोळु षष्ठभागदोळु बंधव्युच्छित्तियक्कुं। अयशस्कीर्तिगसंयतनोळुदयव्युच्छित्तियक्कुं। प्रमत्तनोळु बंधव्युच्छित्तियक्कुं। देवायुष्यक्कसंयतनोळुदयव्युच्छित्तियक्कुमप्रमत्तसंयतनोळु बंधव्युच्छित्तियक्कुमी प्रकारविदं शेषसमाधिगळोळं योजिसिकोंबुदु। मिथ्यात्वमुमातपमुं मनुष्यानुपूर्व्यमुं स्थावरसूक्ष्मापर्य्याप्तसाधारणचतुष्कमुं संज्वलनलोभवर्ज्जित पंचदशकषायंगळुं भयद्विकमुं हास्यद्विकमुं एकेंद्रियादि जातिचतुष्कमुं पुरुषवेदमुमेंब मूवत्तोंदु प्रकृतिगळ्गुदयव्युच्छित्तियुं बंधव्युच्छित्तियुं सममक्कुं। संदृष्टि :—

मि०	आत०	म० आनु०	स्थावर	कषाय	भय	हा०	जाति	पुंवे०
१	१	१	४	१५	२	२	४	१

शेषैकाशीतिप्रकृतिगळ्गुदयव्युच्छित्तियिदं मुंनं बंधव्युच्छित्तियक्कुं। संदृष्टि:—

ज्ञा	द	वे	लो	स्त्री	न	अरति	न आ	ति आ	म आ	नरक गति	तिर्यग् गति	मनुष्य गति	पं	औदारिक शरीर	तै	का	संहनन	औ. अंगोपां.
५	९	२	१	१	१	२	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	६	१

सं	वर्ण	ना आनु	ति आनु	अगु०	उद्यो.	विहा	त्र	स्थि	शु	सु	सु	आदे
६	४	१	१	४	१	२	४	२	२	२	२	२

जस	नि	ति	गोत्र	अंतराय
१	१	१	२	५

अपूर्वकरणषष्ठभागे बंधव्युच्छित्तिः। अयशस्कीर्तेरसंयते उदयव्युच्छित्तिः, प्रमत्ते बंधव्युच्छित्तिः। देवायुषोऽसंयते उदयव्युच्छित्तिः अप्रमत्ते बंधव्युच्छित्तिः। एवं शेषसमयादिष्वपि योज्यं। मिथ्यात्वमातपो मनुष्यानुपूर्व्यं स्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणानि संज्वलनलोभवर्जितपंचदशकषायाः भयद्विकं हास्यद्विकमेकेंद्रियादिजातिचतुष्कं पुंवेदः इत्येकत्रिंशत उदयव्युच्छित्तिर्बंधव्युच्छित्तिश्च द्वे समं स्तः। शेषाणां पंचज्ञानावरणनवदर्शनावरणद्विवेद-

प्रमत्तमें बन्ध व्युच्छित्ति होती है। देवायुकी असंयतमें उदय व्युच्छित्ति होती है और अप्रमत्तमें बन्धव्युच्छित्ति। इसी प्रकार जिनकी बन्ध व्युच्छित्ति और उदय व्युच्छित्ति एक साथ होती है या बन्ध व्युच्छित्तिके पीछे उदय व्युच्छित्ति होती है उनका भी लगा लेना। मिथ्यात्व, आतप, मनुष्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्तक, साधारण, संज्वलन लोभ बिना पन्द्रह कषाय, भय-जुगुप्सा, हास्य-रति, एकेन्द्रिय आदि जाति चार, पुरुषवेद इन इकतीस प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति एक साथ होती है। शेष पाँच ज्ञानावरण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरणपंचकक्के सूक्ष्मसांपरायनोळु बंधव्युच्छित्तियक्कुं। क्षीणकषायनोळुदयव्युच्छित्तियक्कुमित्यादि सुगममक्कुं ॥

अनंतरं परोदयबंधंगळु पन्नोंदुं ११ स्वोदयबंधंगळिप्पत्तेळुं पेळ्दु शेषंगळु स्वोदयपरोदयोभयबंधप्रकृतिगळेंभत्तेरडुं गाथाद्वयदिद पेळदपरु :—

सुरणिरयाऊ तित्थं वेगुव्वियछक्कहारमिदि एसिं ।
परउदयेण य बंधो मिच्छं सुहुमस्स घादीओ ॥४०२॥

सुरनारकायुषी तीर्त्थं वैक्रियिकषट्कमाहारकद्विकमिति येषां। परोदयेन च बंधः मिथ्यात्वं सूक्ष्मस्य घातिनः ॥

एवां आवुवु केलवु प्रकृतिगळ्गे परोदयदिदं बंधमक्कुमें दु पेळल्पडुगुमवु सुरनारकायुर्द्वयमुं तीर्त्थमुं वैक्रियिकषट्कमुमाहारकद्वयमुमें बी पन्नोंदुं प्रकृतिगळप्पुवु। संदृष्टि। सु १। ना १। ती १। वै ६। आ २। कूडि ११ ॥ मिथ्यात्वप्रकृतियुं सूक्ष्मसांपरायन घातिगळु पदिनाल्कुं ॥

तेजदुगं वण्णचऊ थिरसुहजुगलगुरुणिमिणधुवउदया ।
सोदयबंधा सेसा बासीदा उभयबंधीओ ॥४०३॥

तैजसद्वयं वर्ण्णचतुष्कं स्थिरशुभयुगळागुरुलघुनिर्म्माणध्रुवोदयाः। स्वोदयबंधाः शेषाः द्व्यशीतिरुभयोदयबंधाः ॥

नीयसंज्वलनलोभस्त्रीनपुंसकवेदारतिशोकनारकतिर्यग्मानुष्यायुर्नारकतिर्यग्मनुष्यगतिपंचेंद्रियजात्यौदारिकतैजसकार्मणषट्संहननौदारिकांगोपांगषट्संस्थानवर्णचतुष्कनरकतिर्यगानुपूर्व्यागुरुलघुचतुष्कोच्छ्वासविहायोगतिद्वयत्रस - चतुष्कस्थिरद्विकशुभद्विकसुभगद्विकसुस्वरद्विकादेयद्विकयशस्कीर्तिनिर्माणतीर्थकरगोत्रद्विकपंचांतरायाणामेकाशीतेः उदयव्युच्छित्तेः पूर्वं बंधव्युच्छित्तिः स्यात् ॥४००—४०१॥ द्वितीयप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

यासां परोदयेन बंधः, ताः प्रकृतयः सुरनारकायुषी तीर्थं वैक्रियिकषट्कमाहारकद्वयं चेत्येकादश भवंति। मिथ्यात्वं सूक्ष्मसांपरायस्य चतुर्दशघातीनि ॥४०२॥

नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, संज्वलन लोभ, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु, नरकगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक तैजस कार्मण शरीर, छह संहनन, औदारिक अंगोपांग, छह संस्थान, वर्णादि चार, नरकानुपूर्वी, तिर्यंचानुपूर्वी, अगुरुलघु आदि चार, उच्छ्वास, विहायोगति दो, त्रसादि चार, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग सुस्वर-दुःस्वर, आदेय-अनादेय, यशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर, गोत्र दो, पाँच अन्तराय इन इक्यासी प्रकृतियोंकी उदय व्युच्छित्तिसे पहले बन्ध-व्युच्छित्ति होती है ॥४००-४०१॥

आगे दूसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियाँ दो गाथाओंसे कहते हैं—

देवायु, नरकायु, तीर्थंकर, वैक्रियिक शरीर, अंगोपांग, देवगति, देवानुपूर्वी, नरकगति, नरकानुपूर्वी, आहारक शरीर व अंगोपांग इन ग्यारह प्रकृतियोंका बन्ध अन्य प्रकृतियोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैजसद्विकमुं वर्णचतुष्कमुं स्थिरद्विकमुं शुभद्विकमुं अगुरुलघुवुं निर्म्माण नाममुमितु ई ध्रुवोदयंगळेल्लं कूडि स्वोदयबंधंगळिप्पत्तेळु प्रकृतिगळप्पुविवक्केतलानुं बंधमक्कुमप्पोडे स्वोदयदोळेयक्कुमुदयं बंधमिल्लदेयुमक्कुं। संदृष्टि—मि १। णा ५। अं ५। द ४। तैज २। वर्ण ४। थि २। शु २। अ १। नि १। कूडि २७॥ शेषदर्शनावरणपंचकमुं वेदनीयद्विकमुं मोहनीयपंचविंशतिप्रकृतिगळुं मनुष्यायुष्यमुं तिर्य्यगायुष्यमुं मनुष्यगतिनाममुं तिर्य्यग्गतिनाममु मेकेंद्रियादिजातिपंचकमुं औदारिकशरीरमुं औदारिकांगोपांगमुं संहननषट्कमुं संस्थानषट्कमुं मनुष्यानुपूर्व्यमुं तिर्य्यगानुपूर्व्यमुं उपघातपरघातातपोद्योतचतुष्कमुमुच्छ्वासमुं विहायोगतिद्विकमुं त्रसद्विकमुं बादरद्विकमुं पर्य्याप्तद्विकमु प्रत्येकसाधारणशरीरद्विकमुं सुभगद्विकमुं सुस्वरद्विकमुं आदेयद्विकमुं यशस्कीर्त्तिद्विकमुं गोत्रद्विकमुमेंबी द्व्यशीतिप्रकृतिगळुभयोदयबंधप्रकृतिगळप्पुवु॥ संदृष्टि:—
द ५। वे २। मो २५। म १। ति १। म १। ति १। जा ५। औ १। औ अं १। सं ६। सं ६। म १। ति १। उ ४। उ १। वि २। त्र २। बा २। प २। प्र २। सु २। सु २। आ २। य २। गो २। कूडि ८२॥

अनंतरं निरंतरबंधप्रकृतिगळय्वत्तनाल्कु ५४। सांतरबंधप्रकृतिगळु मूवत्तनाल्कु ३४। सांतरनिरंतरोभयबंधप्रकृतिगळु मूवत्तेरडुं गाथाचतुष्टयदिदं पेळदपरु :—

तैजसद्विकं वर्णचतुष्कं स्थिरद्विकशुभद्विकागुरुलघुनिर्माणानीति ध्रुवोदयाश्च मिलित्वा सप्तविंशतिः स्वोदयबंधा भवंति। आसां बंधः स्वोदयेनैव, उदयः अबंधेऽपि स्यात्। शेषाः पंचदर्शनावरणद्विवेदनीयपंचविंशतिमोहनीयतिर्यग्मनुष्यायुस्तिर्यग्मनुष्यगतिपंचजात्यौदारिकतदंगोपांगषट्संहननषट्संस्थानतिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्योपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतिद्विकत्रसद्विकबादरद्विकपर्याप्तद्विकप्रत्येकसाधारणसुभगद्विकसुस्वरद्विकादेयद्विकयशस्कीर्तिद्विकगोत्रद्विकानि द्व्यशीतिप्रकृतयः उभयोदयबंधा भवंति॥४०३॥ तृतीयप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाचतुष्टयेनाह—

उदयमें होता है, इनका उदय रहते इनका बन्ध नहीं होता। तथा मिथ्यात्व, सूक्ष्मसाम्परायमें जिनकी बन्ध व्युच्छित्ति होती है वे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पाँच अन्तराय ये घातिकर्मोंकी चौदह प्रकृतियाँ। तैजस, कार्माण, वर्णादि चार, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु, निर्माण ये बारह ध्रुवोदयी हैं इनका उदय निरन्तर पाया जाता है। इनमें पूर्वोक्त पन्द्रह मिलकर सत्ताईस प्रकृतियाँ स्वोदयबन्धी हैं अर्थात् इनका बन्ध अपने ही उदयमें होता है किन्तु उदय इनके अबन्धमें भी होता है। शेष पाँच निद्रा, दो वेदनीय, पच्चीस मोहनीय, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, तिर्यंचगति, मनुष्यगति, जाति पाँच, औदारिक शरीर व अंगोपांग, छह संहनन, छह संस्थान, तिर्यंचानुपूर्वी, मनुष्यानुपूर्वी, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, उच्छ्वास, विहायोगति दो, त्रस दो, बादर दो, पर्याप्त दो, प्रत्येक, साधारण, सुभग दो, सुस्वर दो, आदेय दो, यशस्कीर्ति दो, गोत्र दो, ये बयासी प्रकृतियाँ उभयबन्धी हैं, इनके उदयमें भी इनका बन्ध होता है और इनका उदय न होते हुए भी इनका बन्ध होता है॥४०२-४०३॥

तीसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियाँ चार गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तेताल धुवावि य तित्थाहाराउगा णिरंतरगा ।
णिरयदुजाइचउक्कं संहदिसंठाण पण पणगं ॥४०४॥

सप्तचत्वारिंशद्ध्रुवा अपि च तीर्त्थाहारायूंषि निरंतराणि । नरकद्विकजातिचतुष्कं संहनन-संस्थानपंचकं ॥

दुग्गमणादावदुगं थावर दसगं असादसंडित्थी ।
अरदीसोगं चेदे सांतरगा होंति चोत्तीसा ॥४०५॥

दुर्गमनातापद्विकं स्थावरदशकमसातषंडस्त्रियः । अरतिः शोकश्चैताः सांतरा भवंति चतुस्त्रिंशत् ॥

ज्ञानावरणपंचकमुं दर्शनावरणीयनवकमुमंतरायपंचकमुं मिथ्यात्वप्रकृतियुं षोडशकषायंगळं भयद्विकमुं तैजसद्विकमुं अगुरुलघुद्विकमुं निर्म्माणमुं वर्णचतुष्कमुमितु ध्रुवोदयंगळु सप्तचत्वारिंशत् प्रकृतिगळं तीर्त्थमुमाहारकद्विकमुमायुष्यचतुष्कमुमितप्पत्त नाल्कुं प्रकृतिगळु ध्रुवोदयबंधं गळप्पुवु । संदृष्टिः—णा ५ । द ९ । अं ५ । मि १ । क १६ । भय २ । ते २ । आ २ । णि १ । व ४ । ति १ । आ २ । आ ४ । कूडि ५४ ॥ नरकद्विकमुं एकेंद्रियादि जातिचतुष्कमुं पंचसंहननंगळुं पंचसंस्थानंगळुं अप्रशस्तविहायोगतियुमातपोद्योतद्विकमुं स्थावरदशकमुं असातवेदनीयमुं षंडवेदमुं स्त्रीवेदमुं अरतियुं शोकमुमेंबितु मूवत्तनाल्कुं प्रकृतिगळु सांतरोदयबंधंगळप्पुवु ॥ संदृष्टि—णि २ । जा ४ ।

पंचज्ञानावरणनवदर्शनावरणपंचांतरायमिथ्यात्वषोडशकषायभयद्विकतैजसद्विकागुरुलघुद्विकनिर्माणवर्ण-चतुष्काणीति सप्तचत्वारिंशद् ध्रुवोदयाः । तीर्थमाहारकद्विकमायुश्चतुष्कं चेति चतुःपंचाशत्प्रकृतयो निरंतरबंधा भवंति । नरकद्विकमेकेंद्रियादिजातिचतुष्कं पंचसंहननानि पंचसंस्थानान्यप्रशस्तविहायोगतिरातपोद्योतौ स्थावर-

पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, पाँच अन्तराय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस, कार्मण, अगुरुलघुद्विक, निर्माण, वर्णादि चार, ये सैंतालीस प्रकृतियाँ ध्रुवोदयी हैं, अपनी-अपनी व्युच्छित्ति पर्यन्त सदा इनका उदय पाया जाता है। तीर्थंकर, आहारकद्विक, आयु चार, ये सात और उक्त सैंतालीस ये चौवन प्रकृतियाँ निरन्तर बन्धी हैं इनमें-से सैंतालीस प्रकृतियोंका तो व्युच्छित्तिके प्रथम समय तक सदा निरन्तर बन्ध होता है। और तीर्थंकर तथा आहारकका बन्ध प्रारम्भ होनेपर जिन गुणस्थानोंमें इनका बन्ध होता है उनमें प्रति समय बन्ध होता है। आयुका जिस कालमें बन्ध होना योग्य है वहाँ आयुबन्ध होनेके पश्चात् उस कालमें प्रति समय निरन्तर बन्ध होता है। इससे इनको निरन्तर बन्धी कहा है।

नरकगति, नरकानुपूर्वी, एकेन्द्रिय आदि जाति चार, पाँच संहनन, पाँच संस्थान, अप्रशस्त विहायोगति, आतप, उद्योत, स्थावर आदि दस, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, ये चौंतीस सान्तरबन्धी हैं। जैसे किसी समय नरकगतिका बन्ध

१. निरंतरबंधगळु एंदु पाठांतरं । थावरसुहुममपज्जत्तं साहरण सरीरमथिरं च असुहं दुब्भगदुस्सरणादेज्जं अजसकित्तित्ति ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सं ५ । सं ५ । बु १ । आ २ । था २ । सू १ । अ १ । सा १ । अ १ । अ १ । बु १ बु १ अ १ अ १ अ १ । षं १ । स्त्री १ । अ १ । शो १ कूडि मूवत्तनाल्कु ३४ ॥

सुरणरतिरियोरालिय-वेगुव्वियदुगपसत्थगदिवज्जं ।
परघाददुसमचउरं पंचेंदिय तसदसं सादं ॥४०६॥

सुरनरतिर्यगौदारिकवैक्रियिकद्विक प्रशस्तगतिवर्ज्जं । परघातद्विक समचतुरस्रं पंचेंद्रिय त्रसदशसातं ॥

हस्सरदि पुरिसगोददु सप्पडिवक्खम्मि सांतरा होंति ।
णट्ठे पुण पडिवक्खे णिरंतरा होंति बत्तीसा ॥४०७॥

हास्यरतिपुरुषगोत्रद्विकं सप्रतिपक्षे सांतरा भवंति । नष्टे पुनः प्रतिपक्षे निरंतरा भवंति द्वात्रिंशत् ॥

सुरद्विकमुं मनुष्यद्विकमुं तिर्य्यग्द्विकमुमौदारिकद्विकमुं वैक्रियिकद्विकमुं प्रशस्तविहायोगतियुं वज्रऋषभनाराचसंहननमुं परघातोच्छ्वासद्विकमुं समचतुरस्रसंस्थानमुं पंचेंद्रियजातियुं त्रसबादरपर्य्याप्त प्रत्येकस्थिर शुभ सुभग सुस्वरादेय यशस्कीर्त्ति सातवेदनीय हास्यरतिद्विक पुंवेदगोत्रद्विकमें ब द्वात्रिंशत्प्रकृतिगळु सप्रतिपक्षदोळु सांतरंगळप्पुवु । मत्तं नष्ट प्रतिपक्षंगळागुत्तं विरलु निरंतरोदयबंधंगळप्पुवु । संदृष्टि–सु २ । म २ । ति २ । औ २ । वै २ । प्र १ व १ प २ स १ पं १ त्र १० सात १ हा १ । र १ । पुंवेद १ गो २ कूडि ३२ ॥ यिल्लि सुरद्विकक्के मिथ्यादृष्टि-

दशकमसातं स्त्रीषंढवेदौ अरतिः शोकश्चेति चतुस्त्रिंशत्सांतरबंधा भवंति ॥४०४–४०५॥

सुरद्विकं मनुष्यद्विकं तिर्यग्द्विकं औदारिकद्विकं वैक्रियिकद्विकं प्रशस्तविहायोगतिर्वज्रवृषभनाराचं परघातोच्छ्वासौ समचतुरस्रसंस्थानं पंचेंद्रियं त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तयः सातं हास्यरती पुंवेदो गोत्रद्विकं चेति द्वात्रिंशत्प्रकृतयः सप्रतिपक्षे सांतरा भवंति । तस्मिन्नष्टे निरंतरोदयबंधा

होता है किसी समय अन्य गतिका बन्ध होता है। किसी समय एकेन्द्रिय जातिका बन्ध होता है किसी समय अन्य जातिका बन्ध होता है। इस प्रकार ये प्रकृतियाँ सान्तर बन्धी हैं ॥४०४-४०५॥

देवगति, देवानुपूर्वी, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, तिर्यंचगति तिर्यंचानुपूर्वी, औदारिक शरीर व अंगोपांग, वैक्रियिक शरीर व अंगोपांग, प्रशस्त विहायोगति, वज्रवृषभनाराच संहनन, परघात, उच्छ्वास, समचतुरस्रसंस्थान, पंचेन्द्रिय, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, सातावेदनीय, हास्य, रति, पुरुषवेद, गोत्र दो ये बत्तीस प्रकृतियाँ प्रतिपक्षीके रहते हुए सान्तरबन्धी हैं। और प्रतिपक्षीके नष्ट होनेपर निरन्तर बन्धी हैं। जैसे अन्य गतिका जहाँ बन्ध पाया जाता है वहाँ तो देवगति सप्रतिपक्षी है। अतः वहाँ किसी समय देवगतिका बन्ध होता है और किसी समय अन्य गतिका बन्ध होता है। जहाँ अन्य गतिका बन्ध नहीं पाया जाता केवल देवगतिका बन्ध है वहाँ देवगति अप्रतिपक्षा होनेसे प्रतिसमय देवगतिका ही बन्ध होता है। अतः देवगतिको उभयबन्धी कहा है। इसी प्रकार अन्य प्रकृतियोंमें जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योळु नरकद्विकमुं तिर्य्यग्द्विकमुं मनुष्यद्विकमुं प्रतिपक्षमक्कुं । सासादननोळु सुरद्विकक्के तिर्य्यग्द्विकमुं मनुष्यद्विकममुं प्रतिपक्षमक्कुं । मिश्रासंयतरोळु सुरद्विकक्के मनुष्यद्विकं प्रतिपक्षमक्कुं । देशसंयताद्यपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षमक्कुं । भोगभूमियं कुरुतु सुरद्विकक्के निःप्रतिपक्षत्वमक्कुं । मनुष्यद्विकक्कानतादिकल्पंगळोळु निःप्रतिपक्षत्वमेकें दोडे सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगमें बुदु शतार सहस्रार कल्पपर्य्यंतमे तिर्य्यग्द्विकक्के बंधमुंटप्पुदरिदं नीचैर्ग्गोत्रक्कं तिर्य्यग्द्विकक्कं सप्तम[1] पृथ्वियोळु निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । तेजस्कायिक वातकायिक जीवंगळोळं तिर्य्यग्द्विकक्कं नीचैर्ग्गोत्रक्कं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । औदारिकद्विकक्के नरकदेवगतिद्वयदोळु निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं वैक्रियिकद्विकक्के मनुष्यतिर्य्यगसंयतादियोळं भोगभूमियोळं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । प्रशस्तविहायोगति प्रकृतिप्रभृतिगळगे व्युच्छिन्नस्वप्रतिपक्षगुणस्थानोपरितनगुणस्थानमादियागि स्वबंधव्युच्छित्तिगुणस्थानपर्य्यंतं निष्प्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं मदेंतेंदोडे सासादनगुणस्थानदोळप्रशस्तविहायोगतिगे बंधव्युच्छित्तियादुदप्पुदरिदं मिश्रगुणस्थानमोदलागि अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निष्प्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । वज्रवृषभनाराचसंहननक्के मिथ्यादृष्टियोळं सासादननोळं सप्रतिपक्षत्वं मिश्रनोळं असंयतनोळं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । परघातोच्छ्वासद्वयक्के पुण्णेण समं सव्वेणुस्सासो णियमसादु परघाओ एंबी नियममुंटप्पुदरिदमपर्य्याप्तनामकम्मंमे

भवंति । तत्र सुरद्विकं नरकतिर्यग्मनुष्यद्विकैर्मिथ्यादृष्टौ, तिर्यग्मनुष्यद्विकाभ्यां सासादने, मनुष्यद्विकेन मिश्रासंयतयोश्च सप्रतिपक्षं, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागांतं भोगभूमौ च निःप्रतिपक्षम् । मनुष्यद्विकं 'सदरसहस्सारगोत्तितिरियदुगं' इत्यानतादिकल्पेषु निःप्रतिपक्षम् । नीचैर्गोत्रं तिर्यग्द्विकं च सप्तमपृथिव्यां तेजोवातकायिकयोश्च निःप्रतिपक्षम् । औदारिकद्विकं नरकदेवगत्योर्निष्प्रतिपक्षम् । वैक्रियिकद्विकं नरतिर्यगसंयतादौ भोगभूमौ च निःप्रतिपक्षं । प्रशस्तविहायोगतिरप्रशस्तविहायोगतेः सासादने बंधच्छेदान्मिश्राद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निष्प्रतिपक्षा । वज्रवृषभनाराचं मिथ्यादृष्टि[2]सासादनयोः सप्रतिपक्षं, मिश्र[3]ासंयतयोर्निष्प्रतिपक्षं । परघातोच्छ्वासद्वयं

अब ये प्रकृतियाँ सप्रतिपक्षा कहाँ हैं और अप्रतिपक्षा कहाँ हैं यह कहते हैं—

देवगति और देवानुपूर्वी मिथ्यादृष्टिमें नरकद्विक, तिर्यंचद्विक और मनुष्यद्विकका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षा हैं। सासादनमें तिर्यंचद्विक, मनुष्यद्विकका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षा हैं। मिश्र और असंयतमें मनुष्यद्विकका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षा हैं। ऊपर अपूर्वकरणके छठे भाग पर्यन्त तथा भोगभूमिमें देवद्विकका ही बन्ध होनेसे अप्रतिपक्षा हैं। मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी 'सदर सहस्सारगोत्ति तिरियदुगं' इस कथनके अनुसार आनत आदि कल्पोंमें अप्रतिपक्षा हैं। नीचगोत्र और तिर्यंचद्विक सातवीं पृथिवीमें और तेजकाय-वायुकायमें अप्रतिपक्षा हैं। औदारिकद्विक, नरकगति और देवगतिमें प्रतिपक्ष रहित है। वैक्रियिकद्विक असंयत सम्यग्दृष्टि मनुष्य तिर्यंचमें और भोगभूमिमें अप्रतिपक्षी हैं। प्रशस्तविहायोगति-अप्रशस्त विहायोगतिकी सासादनमें बन्धव्युच्छित्ति हो जानेसे मिश्रसे अपूर्वकरणके षष्ठ भागपर्यन्त अप्रतिपक्षा है। वज्रवृषभनाराच संहनन मिथ्यादृष्टि और सासादनमें सप्रतिपक्षी

१. मिस्साविरदे उच्चं मणुवदुगं सत्तमो हवे बंधो । मिच्छा सासणसम्मो मणुवदुगुच्चं ण बंधंति ॥ एंबि इदरिंद मिथ्यादृष्टि सासादनरोलु निःप्रतिपक्षत्वं ॥ २. ब दृष्टिद्वये स° । ३. ब मिश्रद्वये नि° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपक्षमक्कुमें दरियल्पडुगुमा अपर्याप्तनाम कर्म्ममुं मिथ्यादृष्टियोळे व्युच्छित्तियादुदरिंदं परघातनामप्रकृतिगे अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्यंत निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं आतपनामकर्म्मक्के मिथ्यादृष्टियोळु अपर्य्याप्तनाममं कट्टिदागळु पर्य्याप्तनामदोडने निष्प्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । समचतुरस्रसंस्थानक्के मिश्रगुणस्थानमादियागि अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निष्प्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं पंचेंद्रियजातिनामक्के मिथ्यादृष्टियोळु सप्रतिपक्षत्वं सासादनं मोदलगोंडु अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । त्रसबादरपर्य्याप्तप्रत्येकशरीरंगळगे मिथ्यादृष्टियोळु सप्रतिपक्षत्वमेकेंदोडे स्थावरसूक्ष्मापर्य्याप्तसाधारणशरीरंगळगे बंधमुंटप्पुदरिंदं मेले सासादनं मोदलगोंडपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । स्थिरशुभयशस्कीर्त्तिनामंगळगे प्रमत्तसंयतपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकेंदोडस्थिरमशुभमयशस्कीर्त्तिनामंगळगे बंधमुंटप्पुदरिंदं मेलणऽप्रमत्तसंयतं मोदलगोंडपूर्व्वकरण षष्ठभागपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमक्कुं । यशस्कीर्त्तिनामक्के सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमक्कुं । सुभगसुस्वरादेयंगळगे सासादनपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकेंदोडे दुर्भगत्रयक्के सासादननोळु बंधमुंटप्पुदरिंदं । मेले अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वं सातवेदक्के प्रमत्तसंयतपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकेंदोडऽसातक्के प्रमत्तसंयत पर्य्यंतं बंधमुंटप्पुदरिंदं । मेले सयोगकेवलिपर्य्यंतं निःप्रति-

अपर्याप्तेनैव सप्रतिपक्षं, अपर्याप्तस्य मिथ्यादृष्टौ बंधच्छेदात् परघातोच्छ्वासद्वयं[2] सासादनाद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं । आतपः मिथ्यादृष्टावपर्याप्तबंधे पर्याप्तेन निःप्रतिपक्षः । समचतुरस्रं मिश्राद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं । पंचेंद्रियं मिथ्यादृष्टौ सप्रतिपक्षं,[3] सासादनाद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं । त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकानि मिथ्यादृष्टौ स्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणशरीराणां बंधात्सप्रतिपक्षाणि, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागे[4]पर्यंतं निष्प्रतिपक्षाणि । स्थिरशुभयशस्कीर्तयः प्रमत्तपर्यंतमस्थिराशुभायशस्कीर्तीनां बंधात्सप्रतिपक्षाः, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निष्प्रतिपक्षाः । यशस्कीर्तिस्तु सूक्ष्मसांपरायपर्यंतं निःप्रतिपक्षा । सुभगसुस्वरादेयानि सासादनपर्यंतं दुर्भगत्रयबंधात् सप्रतिपक्षाणि उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षाणि । सातवेदनीयं प्रमत्त-

है और मिश्र तथा असंयतमें अप्रतिपक्षी है। परघात और उच्छ्वास अपर्याप्त अपेक्षा सप्रतिपक्षी हैं, और अपर्याप्तकी मिथ्यादृष्टिमें बन्धव्युच्छित्ति होनेपर सासादनसे अपूर्वकरणके षष्ठ भाग पर्यन्त प्रतिपक्ष रहित हैं। आतप मिथ्यादृष्टिमें अपर्याप्तका बन्ध होते सप्रतिपक्षी है क्योंकि अपर्याप्तका बन्ध होनेपर इसका बन्ध नहीं होता। पर्याप्तके साथ अप्रतिपक्षी है। समचतुरस्रसंस्थान मिश्रसे अपूर्वकरणके षष्ठभाग पर्यन्त प्रतिपक्षरहित है। पंचेन्द्रिय जाति मिथ्यादृष्टीमें सप्रतिपक्षी है और सासादनसे अपूर्वकरणके षष्ठभाग पर्यन्त प्रतिपक्ष रहित है। त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक मिथ्यादृष्टिमें स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त और साधारण शरीरका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षी हैं। ऊपर अपूर्वकरणके षष्ठ भाग पर्यन्त प्रतिपक्षरहित हैं। स्थिर शुभ यशःकीर्ति प्रमत्तगुणस्थान पर्यन्त अस्थिर अशुभ अयशःकीर्तिका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षी हैं। ऊपर अपूर्वकरणके षष्ठभाग पर्यन्त अप्रतिपक्षी है। किन्तु यशःकीर्ति सूक्ष्मसाम्पराय पर्यन्त अप्रतिपक्षी है। सुभग सुस्वर आदेय सासादन पर्यन्त दुर्भग दुःस्वर अनादेयका बन्ध होनेसे

१. आतपनामं सांतरप्रकृतिगळोल्पेळल्पट्टुदु ई सांतरनिरंतरप्रकृतिगळोळु उच्छ्वासनामक्के एंदु पेळबेकु विचारिसिकोंबुदु ॥ २. ब परघातमपूर्व° । ३. ब °मुपर्यपूर्वं° । ४. ब °गान्तं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्षत्वमरियल्पडुगुं । हास्यरतिद्वयक्के प्रमत्तसंयतपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकें दोडरतिशोकंगळ्गे प्रमत्तसंयतपर्य्यंतं बंधमुंटप्पुदरिंदं । मेलपूर्व्वकरणचरमसमयपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । पुंवेदक्के सासादनपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकें दोडे मिथ्यादृष्टियोळु षंडवेदमुं स्त्रीवेदमुं सासादननोळु स्त्रीवेदमुं बंधमुंटप्पुदरिंदं । मेले मिश्रं मोदलगोंडनिवृत्तिकरण सवेदभागपर्य्यंतं निप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । उच्चैर्गोत्रक्कें सासादनपर्य्यंतं सप्रतिपक्षत्वमेकें दोडे सासादनपर्य्यंतं नीचैर्गोत्रक्कें बंधमुंटप्पुदरिंदं । मेले मिश्रं मोदलगोंडु सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं निःप्रतिपक्षत्वमरियल्पडुगुं । इंतु नवप्रश्न प्रथमचूळिकाधिकारं व्याख्यातमादुदु ॥

जत्थ वरणेमिचंदो महणेण विणा सुणिम्मलो जादो ।
सो अभयणंदि णिम्मलसुओवही हरउ पावमलं ॥४०८॥

यत्र वरनेमिचंद्रो मथनेन विना सुनिर्म्मलो जातः । सोऽभयनंदिनिर्म्मलश्रुतोदधिर्हरतु पापमलं ॥

आवुदोंदु अभयनंदिनिर्म्मलश्रुतोदधियोळु वरनेमिचंद्रं मथनमिल्लदे सुनिर्म्मलनागि पुट्टिदनंतप्पऽभयनंदिश्रुतोदधि भव्यजनंगळ पापमलमं किडिसुगें ।

पर्यंतमसातबंधात्सप्रतिपक्षं, उपरि सयोगपर्यंतं निःप्रतिपक्षं । हास्यरतिद्वयं प्रमत्तपर्यंतमरतिशोकबंधात्सप्रतिपक्षं, उपर्यपूर्वकरणचरमसमयपर्यंतं निष्प्रतिपक्षं । पुंवेदः सासादनपर्यंतं सप्रतिपक्षः, मिथ्यादृष्टौ षंढस्त्रीवेदयोः सासादने स्त्रीवेदस्य च बंधात् उपर्यनिवृत्तिकरणसवेदभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षः । उच्चैर्गोत्रं सासादनपर्यंतं नीचैर्गोत्रबंधात्सप्रतिपक्षं, उपरि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतं निःप्रतिपक्षं ॥४०६–४०७॥ इति नवप्रश्नप्रथमचूलिका व्याख्याता ।

वरनेमिचंद्रो मथनेन विनापि सुनिर्मलो जातः सोऽभयनंदिनिर्मलश्रुतोदधिर्भव्यजनानां पापमलं हरतु ॥४०८॥

सप्रतिपक्षी हैं। ऊपर अपूर्वकरणके षष्ठभाग पर्यन्त प्रतिपक्ष रहित हैं। सातावेदनीय प्रमत्तपर्यन्त असातावेदनीयका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षी है। ऊपर सयोगीपर्यन्त अप्रतिपक्षी है। हास्य रति प्रमत्तपर्यन्त अरति शोकका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षी है। ऊपर अपूर्वकरणके अन्तिम समय पर्यन्त अप्रतिपक्षी हैं। पुरुषवेद सासादन पर्यन्त सप्रतिपक्षी है क्योंकि मिथ्यादृष्टिमें नपुंसकवेद स्त्रीवेदका और सासादनमें स्त्रीवेदका बन्ध होता है। ऊपर अनिवृत्तिकरणके सवेदभाग पर्यन्त प्रतिपक्ष रहित है। उच्चगोत्र सासादन पर्यन्त नीचगोत्रका बन्ध होनेसे सप्रतिपक्षी है। ऊपर सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त अप्रतिपक्षी है ॥४०६–४०७॥

इस प्रकार नवप्रश्नचूलिका व्याख्यान समाप्त हुआ।

पंच भागहारचूलिका

जिस अभयनन्दि आचार्यरूपी निर्मल शास्त्र समुद्रमें-से बिना ही मथन किये नेमिचन्द्र आचार्यरूपी निर्मल चन्द्रमा प्रकट हुआ वह शास्त्रसमुद्र सब जीवोंके पापमलको दूर करे ॥४०८॥

---

१. विद्यागुरु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उब्वेल्लणविज्झादो अद्धापवत्तो गुणो य सव्वो य।
संकमदि जेहि कम्मं परिणामवसेण जीवाणं ॥४०९॥

उद्वेल्लनो विध्यातोऽधाप्रवृत्तो गुणश्च सर्व्वश्च संक्रमति यैः कर्म्म परिणामवशेन जीवानां ॥

यैर्भागहारैः उद्वेल्लनादि आउ केलउ भागहारंगळिंद कर्म्मं ज्ञानावरणाद्यशुभकर्म्ममुं आहारकद्वयादिशुभकर्म्मंगळुं जीवानां संसारिजीवंगळ परिणामवशेन शुभाऽशुभपरिणामवशदिदं संक्रामति परप्रकृतिस्वरूपदिदं परिणमिसुगुमा भागहारंगळु उद्वेल्लनविध्यात अधाप्रवृत्त गुण सर्व्वसंक्रमभागहारंगळें दितु पंचप्रकारंगळप्पुवु। संक्रमस्वरूपमं पेळदपरु :—

बंधे संकामिज्जदि णोबंधे णत्थि मूलपयडीणं।
दंसणचरित्तमोहे आउचउक्के ण संकमणं ॥४१०॥

बंधे संक्रामति नोऽबंधे नास्ति मूलप्रकृतीनां। दर्शनचरित्रमोहे आयुश्चतुष्के न संक्रमणं ॥

बंधे संक्रामति बध्यमानपात्रदोळु संक्रमिसुगुमें बुदिदुत्सर्गविधियक्कुमेकें दोडे क्वचिद-बध्यमानदोळं संक्रममुंटप्पुदरिदं नोबंधे अबंधदोळु संक्रमणमिल्लें बुदनर्थकवचनमप्पुदरिदं। दर्शनमोहनीयमं बिट्टन्यत्र बध्यमानपात्रदोळु एंदितु नियममरियल्पडुगुं। नास्ति मूलप्रकृतीनां ज्ञानावरणादिमूलप्रकृतिगळ्गे परस्परं संक्रमणमिल्लुत्तरप्रकृतिगळ्गे स्वस्थानसंक्रमणमुंटें बुदर्थ-मल्लियुं दर्शनमोहनीयक्कं चारित्रमोहनीयक्कं संक्रमणमिल्ल। नारकतिर्य्यंग्मनुष्यदेवायुष्यंगळ्गेयुं

यैः शुभाशुभं कर्म संसारिजीवानां परिणामवशेन संक्रामति परप्रकृतिरूपेण परिणमति, ते भागहाराः उद्वेल्लनविध्याताधःप्रवृत्तगुणसर्वसंक्रमनामानः पंच संभवंति ॥४०९॥ संक्रमस्वरूपमाह—

बंधे बध्यमानमात्रे संक्रामति इत्ययमुत्सर्गविधिः क्वचिदबध्यमानेऽपि संक्रमात्, नोबंधे अबंधे न संक्रामति इत्यनर्थकवचनाद्दर्शनमोहनीयं विना शेषं कर्म बध्यमानमात्रे एव संक्रामतीति नियमो ज्ञातव्यः। मूलप्रकृतीनां परस्परं संक्रमणं नास्ति उत्तरप्रकृतीनामस्तीत्यर्थः। तत्रापि दर्शनचारित्रमोहयोः चतुर्णामायुषां

जिन भागहारोंके द्वारा शुभ और अशुभ कर्म संसारी जीवोंके परिणामोंके वश अन्य प्रकृतिरूप होकर परिणमन करते हैं वे भागहार पाँच हैं—उद्वेलन, विध्यात, अधःप्रवृत्त, गुणसंक्रम, सर्वसंक्रम ॥४०९॥

संक्रमणका स्वरूप कहते हैं—

जिस प्रकृतिका बन्ध होता है उस प्रकृतिमें अन्य प्रकृति उस रूप होकर परिणमन करती है। यह सामान्य कथन है क्योंकि कहीं-कहीं जिसका बन्ध नहीं है उसमें भी संक्रमण होता है। 'जिसका बन्ध नहीं है उसमें संक्रमण नहीं होता'। इससे अभिप्राय यह है कि दर्शन मोहनीयके बिना शेष कर्म जिसका बन्ध हो रहा है उसीमें संक्रमित होते हैं ऐसा नियम जानना। किन्तु मूल प्रकृतियोंमें संक्रमण नहीं होता जैसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि रूप नहीं होता। उत्तर प्रकृतियोंमें संक्रमण होता है। किन्तु दर्शनमोह और चारित्र-मोहमें संक्रमण नहीं होता। दर्शनमोहकी प्रकृति चारित्रमोहकी प्रकृतिरूप नहीं परिणमन करती और चारित्र मोहकी प्रकृति दर्शनमोहरूप परिणमन नहीं करती। इसी तरह चारों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परस्परसंक्रमणमिल्ल।

सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि।
सासणमिस्से णियमा दंसणतियसंकमो णत्थि ॥४११॥

सम्यक्त्वमिथ्यात्वमिश्रं स्वगुणस्थाने नैव संक्रामति। सासादनमिश्रयोर्न्नियमाद्दर्शनत्रयसंक्रमो नास्ति ॥

सम्यक्त्वप्रकृतियुं मिथ्यात्वप्रकृतियुं मिश्रप्रकृतियुं स्वस्वगुणस्थानदोळु नैव संक्रामति परप्रकृतिस्वरूपदिदं संक्रमिसुवुवे यिल्ल। सासादनमिश्ररुगळोळु नियमदिदं दर्शनमोहनीयत्रयसंक्रमणमिल्ल। असंयतादि नाल्कुं गुणस्थानंगळोळुंटें बुदत्थं।

मिच्छे सम्मिस्साणं अधापवत्तो मुहुत्त अंतोत्ति।
उव्वेल्लणं तु तत्तो दुचरिमकंडोत्ति णियमेण ॥४१२॥

मिथ्यात्वे सम्यक्त्वमिश्रयोरथाप्रवृत्तो मुहूर्तांतं यावत्। उद्वेल्लनस्तु ततो द्विचरमकांडपर्यंतं नियमेन ॥

मिथ्यात्वे प्राप्ते मिथ्यात्वं पोर्द्दलपडुतिरलागळु सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिगळेरडक्कमथाप्रवृत्तसंक्रममंतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं प्रवृत्तिसुगुं। तु मत्ते उद्वेल्लनभागहारसंक्रमं द्विचरमकांडकपर्य्यंतं नियमदिदं प्रवर्त्तिसुगुमल्लि अथाप्रवृत्तसंक्रमं फालिरूपदिदमुद्वेल्लनसंक्रमं कांडकरूपदिदं प्रवर्त्तिसुगुं।

च परस्परं संक्रमणं नास्ति ॥४१०॥

सम्यक्त्वं मिथ्यात्वं मिश्रं च स्वस्वगुणस्थाने एव न संक्रामति, सासादनमिश्रयोर्नियमेन दर्शनमोहत्रयस्य संक्रमणं नास्ति। असंयतादिचतुर्ष्वस्तीत्यर्थः ॥४११॥

मिथ्यात्वे प्राप्ते सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्योरधःप्रवृत्तसंक्रमोऽन्तर्मुहूर्तपर्यंतं वर्तते। तु पुनः—उद्वेल्लनभागहारसंक्रमो द्विचरमकांडपर्यंतं वर्तते नियमेन। तत्राधःप्रवृत्तसंक्रमः फालिरूपेण, उद्वेल्लनसंक्रमः कांडकरूपेण वर्तते ॥४१२॥

आयुकर्मोंमें भी परस्परमें संक्रमण नहीं होता, देवायु मनुष्यायु आदि अन्य आयुरूप परिणमन नहीं करती। यह संक्रमणका स्वरूप है ॥४१०॥

सम्यक्त्व मोहनीय, मिथ्यात्व और मिश्र मोहनीय अपने-अपने गुणस्थानमें संक्रमण नहीं करते। अर्थात् सम्यक्त्व मोहनीयका संक्रमण असंयत आदि गुणस्थानोंमें नहीं होता। मिथ्यात्वका संक्रमण मिथ्यात्व गुणस्थानमें और मिश्र मोहनीयका मिश्र गुणस्थानमें संक्रमण नहीं होता। तथा सासादन और मिश्रमें नियमसे दर्शनमोहकी इन तीन प्रकृतियोंका संक्रमण नहीं होता। असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें होता है ॥४११॥

मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर सम्यक्त्व प्रकृति और मिश्र प्रकृतिका अधःप्रवृत्त संक्रमण अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त होता है। तथा उद्वेलन भागहार संक्रमण नियमसे द्विचरमकाण्डक पर्यन्त होता है। उनमें-से अधःप्रवृत्त संक्रम फालि रूपसे और उद्वेलन संक्रम काण्डकरूपसे होता है। एक समयमें संक्रमण होनेको फालि कहते हैं। और बहुत समयोंमें संक्रमण हो तो उसे काण्डक कहते हैं। इनका विशेष वर्णन आगे करेंगे ॥४१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उव्वेल्लणपयडीणं गुणं तु चरिमम्मि कंडये णियमा ।
चरिमे फालिम्मि पुणो सव्वं च य होदि संकमणं ॥४१३॥

उद्वेल्लनप्रकृतीनां गुणस्तु चरमे कांडके नियमाच्चरमे फालौ पुनः सर्व्वं च च भवति संक्रमणं ॥

उद्वेल्लनप्रकृतिगळेल्लं द्विचरमकांडकपर्य्यंतमुद्वेल्लनसंक्रमणमक्कुं । चरमकांडदोळु तु मत्ते नियमदिदं गुणसंक्रमणमक्कुं । पुनः मत्ते चरमफाळियोळु सर्व्वसंक्रमणमक्कुमप्पुदरिदं सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिगळुद्वेल्लनप्रकृतिगळप्पुदरिदं चरमकांडकदोळु गुणसंक्रमणमुं चरमफाळियोळु सर्व्वसंक्रमणमुमक्कु । संदृष्टिः

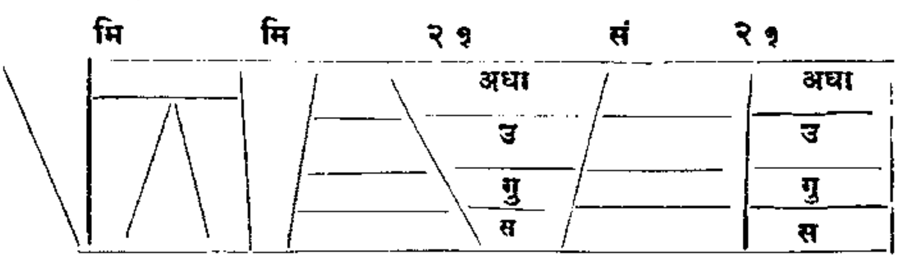

करणपरिणाममिल्ल देनेणिन तुदिर्यिदं पुरिबिच्चुवंते कर्म्मपरमाणुगळगे परप्रकृतिस्वरूपदिंदं निक्षेपणमुद्वेल्लनसंक्रमणमें बुदु । विध्यातविशुद्धिकनप्पजीवंगेस्थित्यनुभागकांडगुणश्रेण्यादि

उद्वेल्लनप्रकृतीनां द्विचरमकांडकपर्यंतमुद्वेल्लनसंक्रमणं, चरमकांडके तु पुनः नियमेन गुणसंक्रमणं । चरमफालौ पुनः सर्वसंक्रमणं चास्ति तेन सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्योरुद्वेल्लनप्रकृतित्वाच्चरमकांडके गुणसंक्रमणं चरमफालौ सर्वसंक्रमणं च सिद्धं । संदृष्टिः—

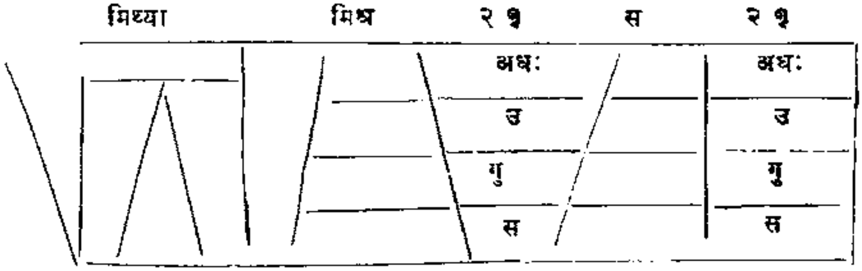

करणपरिणामेन विना कर्मपरमाणूनां परप्रकृतिरूपेण निक्षेपणमुद्वेल्लनसंक्रमणं नाम । विध्यातविशुद्धि-

जो उद्वेलन प्रकृतियाँ हैं उनका द्विचरम काण्डक पर्यन्त तो उद्वेलन संक्रम होता है। और अन्तके काण्डकमें नियमसे गुण संक्रम होता है। तथा अन्तिम फालिमें सर्व संक्रमण होता है। इससे चूँकि सम्यक्त्व प्रकृति और मिश्रप्रकृति भी उद्वेलन प्रकृति हैं अतः इनके भी चरम काण्डकमें गुण संक्रमण और चरमफालिमें सर्वसंक्रमण सिद्ध है।

यहाँ पाँचों संक्रमणका स्वरूप कहते हैं—

अधःप्रवृत्त आदि तीन करण रूप परिणामोंके बिना कर्म परमाणुओंका अन्य प्रकृतिरूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणामंगळु निलुत्तं विरलु प्रवर्त्तिसुगुमप्पुदरिदं विध्यातसंक्रममें बुदक्कुं। बंधप्रकृतिगळगें स्वकबंधसंभवविषयदोळु आउदों दु प्रदेशसंक्रमवधःप्रवृत्तसंक्रमणमें बुदक्कुं। प्रतिसमयमसंख्येयगुणश्रेणिक्रमदिदमाउदों दु प्रदेशसंक्रमणमदु गुणसंक्रमणमें बुदक्कुं। चरमकांडकचरमफाळिय सर्व्वप्रदेशाग्रक्के आउदों दु संक्रमणमदु सर्व्वसंक्रमणमें बुदक्कुं ॥

अनंतरं सर्व्वसंक्रमणमनुळ्ळ प्रकृतिगळं मुंदे पेळ्वपरल्लि तिर्य्यगेकादशप्रकृतिगळें दु पेळ्वपरदु कारणमागि या तिर्य्यगेकादश प्रकृतिगळावुवें दोडे पेळ्दपरु ॥

तिरियदु जाइचउक्कं आदावुज्जोवथावरं सुहुमं।
साहारणं च एदे तिरियेयारं मुणेदव्वा ॥४१४॥

तिर्य्यग्द्वयं जातिचतुष्कमातपोद्योतस्थावराः सूक्ष्मः। साधारणं चैतास्तिर्य्यगेकादश मंतव्याः ॥

तिर्य्यग्द्वयमुं मोदलजातिचतुष्कमुमातपमुमुद्योतमुं स्थावरमुं सूक्ष्ममुं साधारणशरीरमुमें बी पनों दुं प्रकृतिगळु तिर्य्यग्गतियोळल्लदितरगतियोळुदयमिल्लप्पुदरिदं तिर्य्यगेकादशमें दितन्वर्थसंज्ञेयक्कुं ॥

अनंतरं उद्वेल्लनप्रकृतिगळवाउवें दोडे पेळ्दपरु।

कस्य जीवस्य स्थित्यनुभागकांडक-गुणश्रेण्यादिपरिणामेष्वतीतेषु प्रवर्तनाद्विध्यातसंक्रमणं नाम। बंधप्रकृतीनां स्वबंधसंभवविषये यः प्रदेशसंक्रमः तदधःप्रवृत्तसंक्रमणं नाम। प्रतिसमयसंख्येयगुणश्रेणिक्रमेण यत्प्रदेशसंक्रमणं तद् गुणसंक्रमणं नाम। चरमकांडकचरमफालेः सर्वप्रदेशाग्रस्य यत्संक्रमणं तत्सर्वसंक्रमणं नाम ॥४१३॥ सर्वसंक्रमणप्रकृतिस्थतिर्यगेकादशमाह—

तिर्यग्द्वयमाद्यजातिचतुष्कमातपः उद्योतः स्थावरः सूक्ष्मं साधारणं चेत्येता एकादश तिर्यक्ष्वेवोदयात्तिर्यगेकादश इति संज्ञाः स्युः ॥४१४॥ अथोद्वेल्लनप्रकृतयः काः? इति चेदाह—

परिणमना उद्वेलन संक्रमण है। मन्द विशुद्धिवाले जीवके स्थिति और अनुभागको घटानेरूप काण्डक अथवा गुणश्रेणि आदि परिणामोंके होनेके बाद जो होता है वह विध्यात संक्रमण है। बन्धरूप प्रकृतियोंके परमाणुओंका अपने बन्धके विषयमें संभवती प्रकृतियोंमें जो संक्रमण होना है उसे अधःप्रवृत्त संक्रमण कहते हैं। प्रतिसमय असंख्यात गुणश्रेणिके क्रमसे परमाणुओंका जो अन्य प्रकृतिरूप परिणमन होता है वह गुणसंक्रम है। अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालीके सर्वप्रदेशोंमें जो परमाणु अन्य प्रकृतिरूप नहीं हुए उनका अन्य प्रकृतिरूप सर्वसंक्रमण है ॥४१३॥

आगे सर्वसंक्रमणकी प्रकृतियोंमें तिर्यक् एकादश आता है उसे स्पष्ट करते हैं—

तिर्यंचगति, तिर्यंचानुपूर्वी, एकेन्द्रिय आदि चार जाति, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण इन ग्यारह प्रकृतियोंका उदय तिर्यंचमें ही होता है, इससे इन्हें तिर्यक् एकादश कहते हैं ॥४१४॥

---

१. ब °तास्ततिर्यगेकादशमिति मन्तव्याः। तासां तिर्यक्ष्वेवोदयात्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहारदुगं सम्मं मिस्सं देवदुग णारय चउक्कं ।
उच्चं मणुदुगमेदे तेरसमुव्वेलणा पयडी ॥४१५॥

आहारद्विक सम्यक्त्वं मिश्रं देवद्विक नारकचतुष्कं । उच्चं मनुष्यद्विकमेतास्त्रयोदशोद्वेल्लनाप्रकृतयः ॥

आहारद्विकमुं सम्यक्त्वप्रकृतियुं मिश्रप्रकृतियुं देवद्विकमुं नारकचतुष्टयमुमुच्चैर्गोत्रमुं मनुष्यद्विकमुमें बी त्रयोदशप्रकृतिगळुद्वेल्लनप्रकृतिगळें बुवक्कुं ॥

बंधे अधापवत्तो विज्झादस्सत्तमोत्ति हु अबंधे ।
एत्तो गुणो अबंधे पयडीणं अप्पसत्थाणं ॥४१६॥

बंधे अधाप्रवृत्तो विध्यातः सप्तमपर्य्यंतं खल्वबंधे इतो गुणोऽबंधे प्रकृतीनामप्रशस्तानां ॥

बंधेऽधाप्रवृत्तः प्रकृतिबध्यमानवागुत्तं विरलु स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्य्यंतमधाप्रवृत्तसंक्रमणं प्रवर्त्तिसुगुं । मिथ्यात्वं बध्यमानवागुत्तं विरलुमधःप्रवृत्तसंक्रमणमिल्लेकें दोडे—सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि एंदिदु कारणमागि । विध्यातः सप्तमपर्य्यंतमबंधे बंधव्युच्छित्तियागुत्तं विरलु असंयताद्यप्रमत्तपर्य्यंतं विध्यातसंक्रमणमक्कुं । इतः ई अप्रमत्तगुणस्थानदिदं मेलपूर्व्वकरणाद्युपशांतकषायपर्य्यंतं बंधरहितमप्रशस्तप्रकृतिगळगे गुणसंक्रमणं प्रवर्त्तिसुगुमन्यत्र प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयमादियागंतर्म्मुहूर्त्तकालपर्य्यंतमुं मत्तं मिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिगळ पूरणकालदोळं गुणसंक्रमणमक्कुं । मिथ्यात्वक्षपणेयोळु मत्ते अपूर्व्वकरणपरिणामं मोदलगोंडु मिथ्यात्व-

---

आहारकद्विकं सम्यक्त्वं मिश्रं देवद्विकं नारकचतुष्कमुच्चैर्गोत्रं मनुष्यद्विकं चेत्येतास्त्रयोदश उद्वेल्लनानामप्रकृतयः स्युः ॥४१५॥

प्रकृतीनां बंधे सति स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्यंतमधःप्रवृत्तसंक्रमणः स्यात् न मिथ्यात्वस्य, सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदीति[1] निषेधात् । बंधव्युच्छित्तौ सत्यामसंयताद्यप्रमत्तपर्यंतं विध्यातसंक्रमणं स्यात् । इतः अप्रमत्तगुणस्थानादुपर्युपशांतकषायपर्यंतं बंधरहिताप्रशस्तप्रकृतीनां गुणसंक्रमणं स्यात् । ततोऽन्यत्रापि प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयादंतर्मुहूर्तपर्यंतं पुनः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योः पूरणकाले मिथ्यात्वक्षप-

---

आहारकद्विक, सम्यक्त्व प्रकृति, मिश्रप्रकृति, देवगति, देवानुपूर्वी, नरकगति, नरकानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर व अंगोपांग, उच्चगोत्र, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी ये तेरह उद्वेलन प्रकृतियाँ हैं ॥४१५॥

प्रकृतियोंका बन्ध होनेपर अपनी-अपनी बन्ध व्युच्छित्ति पर्यन्त अधःप्रवृत्त संक्रमण होता है । किन्तु मिथ्यात्वका नहीं; क्योंकि मिथ्यात्वके संक्रमणका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें निषेध किया है, और मिथ्यात्वका बन्ध मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है । बन्धकी व्युच्छित्ति होनेपर असंयतसे अप्रमत्त पर्यन्त विध्यात संक्रमण होता है । अप्रमत्त गुणस्थानसे ऊपर उपशान्त कषाय गुणस्थान पर्यन्त बन्धरहित अप्रशस्त प्रकृतियोंका गुणसंक्रमण होता है । इससे अन्यत्र भी प्रथमोपशम सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयसे अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त गुणसंक्रमण होता है । पुनः मिश्र प्रकृति और सम्यक्त्व प्रकृतिके पूरणकालमें मिथ्यात्वकी

---

१. ब नियमात् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरमकांडकद्विचरमफाळिपर्य्यंतमुं गुणसंक्रमणभागहारमेयक्कुं। चरमफाळियोळु सर्व्वसंक्रमण-भागहारमक्कुं ॥

अनंतरं सर्व्वसंक्रमणमुळ्ळ प्रकृतिगळं पेळ्दपरु :—

तिरिएयारुव्वेल्लण पयडी संजलणलोहसम्ममिस्सूणा।
मोहा थीणतिगं च य बावण्णे सव्वसंकमणं ॥४१७॥

तिर्य्यगेकादशोद्वेल्लनप्रकृतयः संज्वलनलोभसम्यक्त्वमिश्रोना मोहाः स्त्यानगृद्धित्रिकं च च द्विपंचाशत्सु सर्व्वसंक्रमणं ॥

मुं पेळ्द तिर्य्यगेकादशप्रकृतिगळु मुद्वेल्लनप्रकृतिगळु पदिमूरुं। संज्वलनलोभसम्यक्त्वप्रकृतिमिश्रप्रकृतिगळिदं विहीनमप्प पंचविंशति मोहनीयप्रकृतिगळुं स्त्यानगृद्धित्रयमुमें बी द्वापंचाशत्प्रकृतिगळोळु सर्व्वसंक्रमणमुंटु। संदृष्टि—

ति	उ	मो	थि	कूडि
११	१३	२५	३	५२

अनंतरं प्रकृतिगळगे संक्रमणनियममं पेळ्दपरु—

उगुदाल तीससत्तयवीसे एक्केक्कबारतिचउक्के।
इगिचदुदुगतिगतिगचदुपणदुगदुगतिण्णि संकमणा ॥४१८॥

एकान्नचत्वारिंशत्त्रिंशत्सप्तविंशतावेकैक द्वादशत्रिचतुष्के। एक चतुर्द्विकत्रिकत्रिकचतुःपंच द्विक द्विक त्रीणि संक्रमणानि ॥

णायामपूर्वकरणपरिणामान्मिथ्यात्वचरमकांडकद्विचरमफालिपर्यंतं च गुणसंक्रमणं स्यात्। चरमफालौ सर्वसंक्रमणं स्यात् ॥४१६॥ ताः सर्वसंक्रमणप्रकृतीराह—

प्रागुक्तर्तिर्यगेकादशोद्वेल्लनत्रयोदशसंज्वलनलोभसम्यक्त्वमिश्र[1]वर्जितमोहनीयानि स्त्यानगृद्धित्रयं चेति द्वापंचाशत्प्रकृतिषु सर्वसंक्रमणं स्यात् ॥४१७॥ अथ प्रकृतीनां संक्रमणनियममाह—

क्षपणाके विषयमें अपूर्वकरण परिणामसे मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी द्विचरम फालि पर्यन्त गुणसंक्रमण होता है और अन्तिम फालीमें सर्वसंक्रमण होता है ॥४१६॥

आगे सर्वसंक्रमण रूप प्रकृतियोंको कहते हैं—

पूर्वोक्त तिर्यक् एकादश, उद्वेलन प्रकृति १३, संज्वलन लोभ सम्यक्त्व मिश्रके बिना मोहनीयकी पच्चीस प्रकृतियाँ और स्त्यानगृद्धि आदि तीन इन बावन प्रकृतियोंमें सर्वसंक्रमण होता है ॥४१७॥

आगे प्रकृतियोंके संक्रमणका नियम कहते हैं—

---

१. ब °मिश्रोवमो° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूवत्तोंभत्तु मूवत्तु मेळुमिप्पत्तु मोंदु ओंदु पन्नेरडुं मूरेडेयोळ् नाल्कुगळुभागुत्तं विरलो प्रकृतिगळोळ् यथाक्रमदिंदमोंदुं नाल्कुमेरडुं मूरुं मूरुं नाल्कुमय्दु मेरडुमेरडुं मूरुं संक्रमणंगळप्पुवु—

३९	३०	७	२०	१	१	१२	४	४	४
१	४	२	३	३	४	५	२	२	३

अनंतर मी प्रकृतिगळुमनिवर संक्रमणंगळुमं क्रमदिदं गाथासप्तकदिदं पेळदपरु :—

सुहुमस्स बंधघादी सादं संजलणलोह पंचिंदी ।
तेजदुसमवण्णचऊ अगुरुगपरघाद उस्सासं ॥४१९॥

सूक्ष्मस्य बंधघाति सातं संज्वलनलोभपंचेंद्रिये। तैजसद्विकसमचतुरस्रवर्णचतुरगुरुलघु-परघातोच्छ्वासं ॥

सत्थगदी तसदसयं णिमिणुगुदाले अधापवत्तो दु ।
थीणतिथारकसाया संढित्थी अरदिसोगो य ॥४२०॥

शस्तगतित्रसदशकं निर्म्माणमेकान्नचत्वारिंशत्सु। अधाप्रवृत्तस्तु स्त्यानगृद्धित्रिक द्वादश-कषायाः षंडस्त्र्यरतिशोकं च ॥

ज्ञानावरणपंचकमुं अंतरायपंचकमुं दर्शनावरणचतुष्कमुमेंब सूक्ष्मसांपरायन बंधघाति-प्रकृतिगळप्प पदिनाल्कुं सातवेदमुं संज्वलनलोभमुं पंचेंद्रियजातियुं तैजसकार्म्मणशरीरद्वयमुं समचतुरस्रसंस्थानमुं वर्णचतुष्कमुमगुरुलघुकमुं परघातमुमुच्छ्वासमुं प्रशस्तविहायोगतियुं त्रस-बादरपर्य्याप्त प्रत्येक स्थिरशुभसुभगसुस्वर आदेययशस्कीर्तियुमेंब त्रसदशकमुं निर्म्माणमुमेंबी एकान्नचत्वारिंशत्प्रकृतिगळुद्वेल्लनप्रकृतिगळल्लप्पुदरिदमुद्वेल्लन संक्रमणमिल्ल । विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे एंदितो प्रकृतिगळ्गप्रमत्तगुणस्थानाभ्यंतरदोळु बंधव्युच्छित्ति यिल्लप्पुदरिंद ।

एकान्नचत्वारिंशत्त्रिंशत्सप्तविंशत्येकैकद्वादशत्रिचतुष्केषु क्रमेणैकचतुर्द्वित्रित्रिचतुःपंचद्विद्वित्रिसंक्रमा भवंति ॥४१८॥ ताः प्रकृतीः तासां संक्रमणानि च क्रमशो गाथासप्तकेनाह—

पंचचतुर्ज्ञानदर्शनावरणपंचांतरायाः सातं संज्वलनलोभः पंचेंद्रियं तैजसकार्मणे समचतुरस्रं वर्णचतुष्क-मगुरुलघुकं परघातः उच्छ्वासः प्रशस्तविहायोगतिस्त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तयो निर्माणं चेत्येकान्नचत्वारिंशत्प्रकृतिष्वनुद्वेल्लनप्रकृतित्वान्नोद्वेल्लनसंक्रमणं । 'विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे'

उनतालीस, तीस, सात, बीस, एक, एक, बारह, चार, चार चार प्रकृतियोंमें क्रमसे एक, चार, दो, तीन, तीन, चार, पाँच, दो, दो, तीन संक्रमण होते हैं ॥४१८॥

आगे उन प्रकृतियोंको और उनके संक्रमणोंको सात गाथाओंके द्वारा कहते हैं—

पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पाँच अन्तराय, सातावेदनीय, संज्वलन लोभ, पंचेन्द्रिय जाति, तैजस, कार्मण, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णादि चार, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर,

विध्यातसंक्रमणमिल्ल ॥ एत्तो गुणो अबंधे एंदितु गुणसंक्रमणलक्षणरहितत्वदिदं गुणसंक्रमणमिल्ल। मुंपेळद बावण्णप्रकृतिगळोळु पठियिसल्पडवबप्पुदरिदं सर्व्वसंक्रमणमिल्लदु कारणमागि अधःप्रवृत्तसंक्रममो देयक्कुं। इंतल्ला प्रकृतिगळगे व्यतिरेकं विचारणीयमक्कुं।

मिथ्यात्वं बध्यमानमागुत्तिदों डं मिथ्यादृष्टियोळु अधःप्रवृत्तसंक्रमणमिल्लेके दोडे सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमवि एंदितु निषेधमुंटप्पुदरिदं। संदृष्टिः—

सू	सा	सं	पं	तै	स	व	अ	प	उ	प्र	त्र	नि	कूडि
१४	१	१	१	२	१	४	१	१	१	१	१०	१	३९ १

तु मत्तं स्त्यानगृद्धित्रिकमुं द्वादशकषायंगळुं षंढवेदमुं स्त्रीवेदमुं अरतियुं शोकमुं :—

तिरिएयारं तीसे उव्वेल्लणहीण चारि संकमणा।
णिद्दापयला असुहं वण्णचउक्कं च उवघादे ॥४२१॥

तिर्य्यगेकादश त्रिंशत्सूद्वेल्लनहीन चत्वारि संक्रमणानि। निद्राप्रचलाशुभवर्णचतुष्कोपघाते ॥

सत्तण्हं गुणसंकममधापवत्तो य दुक्खमसुहगदी।
संहदिसंठाणदसं णीचापुण्णथिरछक्कं च ॥४२२॥

सप्तानां गुणसंक्रमोऽधःप्रवृत्तश्च दुःखमशुभगतिः। संहननसंस्थानदशकं नीचापूर्णं स्थिरषट्कं च ॥

इत्यप्रमत्तगुणाभ्यंतरे बंधच्छेदाभावान्न विध्यातसंक्रमणं। 'एत्तो गुणो अबंधे' इति न गुणसंक्रमणं। प्रागुक्तबावण्णे पाठाभावान्न सर्वसंक्रमणं तेनाधःप्रवृत्तसंक्रमणमेकमेव स्यात्। एवं सर्वप्रकृतीनां व्यतिरेकं विचारयेत्। मिथ्यात्वे बध्यमाने मिथ्यादृष्टावधःप्रवृत्तसंक्रमणं न, कुतः? सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदीति निषेधात्। पुनः स्त्यानगृद्धित्रयं द्वादश कषायाः षंढस्त्रीवेदौ अरतिः शोकः—॥४१९-४२०॥

आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण इन उनतालीस प्रकृतियोंमें एक अधःप्रवृत्त संक्रमण ही होता है; क्योंकि ये उद्वेलन प्रकृतियाँ नहीं हैं इसलिए इनमें उद्वेलन संक्रमण नहीं होता। विध्यात संक्रमण अबन्ध दशामें सातवें गुणस्थान तक कहा है। अप्रमत्तगुणस्थान तक इनकी बन्ध व्युच्छित्ति नहीं होती। अतः विध्यात संक्रमण भी नहीं होता। इसीसे गुणसंक्रमण भी नहीं होता। वह भी अबन्धदशामें होता है। पूर्वमें कही गयी सर्वसंक्रमणकी बावन प्रकृतियोंमें न होनेसे सर्वसंक्रमण भी नहीं होता। अतः एक अधःप्रवृत्त संक्रमण ही होता है। इसी प्रकार सभी प्रकृतियोंमें संक्रमणका विचार करना चाहिए।

शंका—मिथ्यात्वका बन्ध होनेपर मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें अधःप्रवृत्त संक्रमण क्यों नहीं होता?

समाधान—अपने गुणस्थानमें इनके संक्रमणका निषेध किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिर्य्यगेकादशप्रकृतिगळुमें दितु त्रिंशत्प्रकृतिगळोळुद्वेल्लन हीनमागि चतुःसंक्रमणंगळप्पुवु ।

संदृष्टिः—

थि	क	षं	स्त्री	अर	शोक	ति	कूडि
३	१२	१	१	१	१	११	३०/४

मत्तं निद्रेयुं प्रचलेयुं अशुभवर्णचतुष्कमुमुपघातमुमें ब सप्तप्रकृतिगळ्गे गुणसंक्रमणमुं अधःप्रवृत्तसंक्रमणमुमेरडक्कुं। संदृष्टिः—

नि	प्र	अ व	उ	कूडि
१	१	४	१	७/२

असातवेदनीयमुमप्रशस्तविहायोगतियुं आद्यरहित संहननपंचकमं संस्थानपंचकमुं नीचैर्ग्गोत्रमुमपर्य्याप्तमुमस्थिराशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्त्तियें बऽस्थिरषट्कमुमेंब ॥

वीसण्हं विज्झादं अधापवत्तो गुणो य मिच्छत्ते ।

विज्झादगुणं सव्वं सम्मे विज्झादपरिहीणा ॥४२३॥

विंशतेर्व्विध्यातोऽधःप्रवृत्तो गुणश्च मिथ्यात्वे । विध्यातगुणः सर्व्वं सम्यक्त्वे विध्यातपरिहीनाः ॥

विंशतिप्रकृतिगळ्गे विध्यातधाप्रवृत्तगुणसंक्रमणमें ब भागहारत्रयमक्कुं । संदृष्टि :—

अ	अ.वि	सं	सं	नि	अ	अ	अ	दु	दु	आ	अ	कूडि
१	१	५	५	१	१	१	१	१	१	१	१	२०/३

मिथ्यात्वप्रकृतियोळु विध्यातगुणसर्व्वसंक्रमणमें ब भागहारत्रयमक्कुं मि/३ सम्यक्त्वप्रकृतियोळु विध्यातपरिहीन भागहारचतुष्टयमुमक्कुं । सम्य १/४ ॥

तिर्यगेकादशं चेति त्रिंशत्प्रकृतिषूद्वेल्लनवर्जितचत्वारि संक्रमणानि स्युः । पुनः निद्रा प्रचला अशुभवर्णचतुष्कमुपघातश्चेति सप्तसु गुणसंक्रमणमधःप्रवृत्तसंक्रमणं च । असातवेदनीयमप्रशस्तविहायोगतिः, आद्यं विना पंच पंच संहननसंस्थानानि, नीचैर्गोत्रमपर्याप्तमस्थिराशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तय इति ॥४२१-४२२॥

विंशतौ विध्यातावधःप्रवृत्तगुणसंक्रमणानि, मिथ्यात्वे विध्यातगुणसर्वसंक्रमणानि, सम्यक्त्वप्रकृतौ

स्त्यानगृद्धि आदि तीन, बारह कषाय, नपुंसक वेद, स्त्रीवेद, अरति, शोक, तिर्यक् एकादश, इन तीस प्रकृतियोंमें उद्वेलन बिना चार संक्रमण होते हैं। निद्रा, प्रचला, अशुभ वर्णादि चार, उपघात इन सात प्रकृतियोंमें गुणसंक्रमण और अधःप्रवृत्त संक्रमण होते हैं। असाता वेदनीय, अप्रशस्त विहायोगति, अन्तके पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नीचगोत्र, अपर्याप्त, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय अयशस्कीर्ति, इन बीसमें विध्यात, अधः-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मविहीणुव्वेल्ले पंचेव य तत्थ होंति संकमणा ।
संजलणतिए पुरिसे अधापवत्तो य सव्वो य ॥४२४॥

सम्यक्त्वविहीनोद्वेल्लनप्रकृतिषु पंचैव च तत्र भवंति संक्रमणानि । संज्वलनत्रये पुरुषे अधाप्रवृत्तश्च सर्व्वश्च । सम्यक्त्वप्रकृतिरहित द्वादशोद्वेल्लनप्रकृतिगळोळु उद्वेल्लनप्रकृतिगळ-प्पुदरिंदमुद्वेल्लनगुणसंक्रमण सर्व्वसंक्रमणहारत्रयं सिद्धमक्कुं । बंधे अधापवत्तो एंदितु स्वस्वबंध-व्युच्छित्तिपर्यंतमधः प्रवृत्तभागहारं सिद्धमक्कुं । विज्झादस्सत्तमोत्ति हु अबद्धे एंदितु विध्यातमुं सिद्धमप्पुदरिंदं भागहारपंचकं सिद्धमक्कुं । संदृष्टि :—

अ	मि	सु	ना	उ	म	कुडि
२	१	२	४	१	२	१२
						५

संज्वलनक्रोधमानमायापुरुषवेदंगळें व नाल्करोळु अथाप्रवृत्त सर्व्वसंक्रमणद्वयमक्कुमल्लि संज्वलनत्रयनवकबंधवक्के बंधरहितत्वदोळु गुणसंक्रमणप्राप्ति यिल्लेकें दोडे सूत्रोक्तहारद्वयनियम-मंटप्पुदरिंदं संदृष्टि :—

सं क	पुं	कूडि
३	१	४
		२

ओरालदुगे वज्जे तित्थे विज्झादधापवत्तो य ।
हस्सरदिभयजुगुच्छे अधापवत्तो गुणो सव्वो ॥४२५॥

औदारिकद्विके वज्रे तीर्थे विध्याताधाप्रवृत्तौ च । हास्यरतिभयजुगुप्सास्वथाप्रवृत्तो गुणः सर्व्वः ॥

विध्यातवर्जितानि चत्वारि ॥४२३॥

सम्यक्त्वं विना द्वादशोद्वेल्लनप्रकृतिषु पंचैव संक्रमणानि भवंति । संज्वलनक्रोधमानमायापुंवेदेष्वधः-प्रवृत्तः सर्वसंक्रमणं च । न चैषां बंधव्युच्छित्तौ गुणसंक्रमणप्राप्तिः सूत्रे हारद्वयस्यैव नियमात् ॥४२४॥

औदारिकद्विके वज्रवृषभनाराचे तीर्थे च विध्यातोऽधःप्रवृत्तश्च । तेषु प्रशस्तत्वाद् गुणसंक्रमणं नास्ति । तीर्थस्य नारकाभिमुखे नारकापर्याप्ते च मिथ्यादृष्टौ विध्यातोऽस्ति । हास्यरतिभयजुगुप्सास्वधःप्रवृत्तसंक्रमणं गुणसंक्रमणं सर्वसंक्रमणं च ॥४२५॥

प्रवृत्त और गुणसंक्रमण होते हैं। मिथ्यात्वमें विध्यात गुण और सर्व संक्रमण होते हैं। सम्यक्त्व प्रकृतिमें विध्यातके बिना चार संक्रमण होते हैं ॥४१९–४२३॥

सम्यक्त्व मोहनीयके बिना बारह उद्वेलन प्रकृतियोंमें पाँचों संक्रमण होते हैं। संज्वलन क्रोध मान माया और पुरुषवेदमें अधःप्रवृत्त और सर्वसंक्रमण होते हैं। इन प्रकृतियोंमें बन्धव्युच्छित्तिके होनेपर भी गुणसंक्रमण सम्भव नहीं, क्योंकि गाथामें दो ही संक्रमणका विधान किया है ॥४२४॥

औदारिक शरीर व अंगोपांग, वज्रवृषभनाराच, और तीर्थंकरमें विध्यात और अधः-प्रवृत्त दो संक्रमण ही होते हैं। ये प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं इससे इनमें गुणसंक्रमण नहीं होता। किन्तु नरकके अभिमुख मिथ्यादृष्टि मनुष्यके तथा उसके मरकर नरकमें उत्पन्न होनेपर अपर्याप्त अवस्थामें तीर्थंकर प्रकृतिमें विध्यात संक्रमण कहा है। हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, इनमें अधःप्रवृत्त संक्रमण, गुणसंक्रमण और सर्वसंक्रमण होते हैं ॥४२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औदारिकद्विक वज्रवृषभनाराच तीर्त्थमुमें ब नाल्कुं प्रकृतिगळोळु प्रशस्तत्वदिदं गुणसंक्रमविल्ल। तीर्त्थंकरवक्कं नरकाभिमुखनोळं नारकापर्य्याप्तकनोळं मिथ्यादृष्टियोळु विध्यातमक्कुं। विध्यातसंक्रमणमुमधाप्रवृत्तसंक्रमणमुमें ब संक्रमणद्वयमक्कुं। संदृष्टि :— औ। व। ती। कूडि
२।१।१। $\frac{४}{२}$

हास्यरतिभयजुगुप्से गळें ब नाल्कुं प्रकृतिगळोळाथाप्रवृत्तसंक्रमणमुं गुणसंक्रमणमुं सर्व्वसंक्रमणमुमें ब संक्रमणत्रयमक्कुं। संदृष्टि :— ह। १। र १। भ १। जु १ कूडि $\frac{४}{३}$

सम्मत्तूणुव्वेल्लणथीणति तीसं च दुक्खवीसं च।
वज्जोरालदु तित्थं मिच्छं विज्झाद सत्तट्ठी ॥४२६॥

सम्यक्त्वप्रकृतिरहितमाद पन्नेरडुमुद्वेल्लनप्रकृतिगळुं स्त्यानगृद्धित्रयादि त्रिंशत्प्रकृतिगळुमसातवेदादिविंशतिप्रकृतिगळुं वज्रवृषभनाराचशरीरसंहननमुमौदारिकद्विकमुं तीर्त्थमुं मिथ्यात्वप्रकृतियुमें ब सप्तषष्टिप्रकृति[illegible] विध्यातसंक्रमणमनुळ्ळुवक्कुं। उ १२। थि ३०। अ २०। व १। औ २। ती १। मि १। कूडि विध्या ६७॥

मिच्छूणिगिवीससयं अधापवत्तस्स होंति पयडीओ।
सुहुमस्स बंधघादिं पहुडी उगुदालदुगतित्थं ॥४२७॥

मिथ्यात्वप्रकृतिगाथाप्रवृत्त संक्रममिल्लप्पुदरिदं मिथ्यात्वप्रकृतिरहितमागि युदयप्रकृतिगळु नूरिप्पत्तोंदु १२१। अथाप्रवृत्तसंक्रमप्रकृतिगळप्पुवु। सूक्ष्मसांपरायन बंधघातिगळु मोदलादुगुदाळप्रकृतिगळुमौदारिकद्विकमुं तीर्त्थमुं—

वज्जं पुं संजलणतिऊणगुणसंकमस्स पयडीओ।
पणहत्तरि संखाओ पयडीणियमं विजाणाहि ॥४२८॥

वज्रवृषभनाराचशरीरसंहननमुं पुंवेदमुं संज्वलनत्रयमुमितु नाल्वत्तेळु प्रकृतिगळिंदमूनमादुदयप्रकृतिगळु नूरिप्पत्तेरडुं १२२। ४७। गुणसंक्रमणप्रकृतिगळप्पुवेप्पत्तय्दुं बुदत्थं। ७५॥

सम्यक्त्वोनद्वादशोद्वेल्लनाः स्त्यानगृद्धित्रयादित्रिंशत्, असातादिविंशतिः, वज्रर्षभनाराचमौदारिकद्विकं तीर्थकरत्वं मिथ्यात्वं चेति सप्तषष्टिः विध्यातसंक्रमणाः स्युः ॥४२६॥

मिथ्यात्वोनाः एकविंशतिशतं अधःप्रवृत्तसंक्रमणप्रकृतयो भवंति। सूक्ष्मसांपरायस्य बंधघातिप्रभृत्येकान्नचत्वारिंशत् औदारिकद्विकं तीर्थकरत्वं ॥४२७॥

सम्यक्त्व प्रकृतिके बिना बारह उद्वेलना प्रकृति, स्त्यानगृद्धि तीन आदि तीस, असातावेदनीय आदि बीस, वज्रवृषभनाराच, औदारिकद्विक, तीर्थंकर मिथ्यात्व, ये सड़सठ प्रकृतियाँ विध्यात संक्रमणकी हैं ॥४२६॥

मिथ्यात्व बिना एक सौ इक्कीस प्रकृतियाँ अधःप्रवृत्त संक्रमणकी हैं। सूक्ष्म साम्परायमें जिनका बन्ध होता है वे घातिकर्मोंकी चौदह प्रकृति आदि उनतालीस, औदारिकद्विक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुव्र्वोक्तोद्वेल्लनप्रकृतिगळ् पदिमूरु १३। विध्यात ६७। अधः १२१। गुणसंक्रमप्रकृतिगळेप्पत्तय्दु ७५। सव्र्वसंक्रम प्रकृतिगळय्वत्तेरडु ५२॥

अनंतरं स्थित्यनुभागंगळ बंधक्कं प्रदेशसंक्रमणक्कं स्वामित्वगुणस्थान संख्येयं पेळ्दपरु :—

ठिदियणुभागाणं पुण बंधो सुहुमोत्ति होदि णियमेण ।
बंधपदेसाणं पुण संकमणं सुहुमरागोत्ति ॥४२९॥

स्थित्यनुभागानां पुनर्ब्बंधः सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं भवति नियमेन। बंधप्रदेशानां पुनः संक्रमणं सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं ॥

स्थित्यनुभागंगळबंधं मत्ते सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानपर्य्यंतमक्कुमेकेंदोडे ठिदि अणुभागा कसायदो होंति येंदु सूक्ष्मलोभकषायोदयमुळ्ळल्लि पर्य्यंतं यथासंभवमागि स्थित्यनुभागबंधमक्कुमल्लिदं मेले कारणाभावे कार्य्यस्याप्यभावः येंदितु स्थित्यनुभागबंधमिल्लप्पुदरिंदमेकसमयस्थितिकमप्प योगहेतुकसातबंधक्के प्रकृतिप्रदेशबंधमात्रमेयक्कुं नियमदिदं। मत्तं बंधप्रदेशंगळ संक्रमणमुं सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं यथासंभवमागियक्कुमेकेंदोडे बंधे अधापवत्तो येंदु स्थितिबंधमुळ्ळल्लिपर्य्यंतं प्रदेशसंक्रममुंटप्पुदरिंदं ॥

अनन्तरं पंचभागहारंगळगल्पबहुत्वमं गाथाषट्कदिदं पेळ्दपरु :—

सव्वस्सेकं रूवं असंखभागो दु पल्लछेदाणं ।
गुणसंकमो दु हारो ओकड्ढुक्कड्ढणं तत्तो ॥४३०॥

सर्व्वस्यैकं रूपमसंख्यभागस्तु पल्यच्छेदानां। गुणसंक्रमस्तु हारोऽपकर्षणोत्कर्षणस्ततः ॥

वज्रर्षभनाराचं पुंवेदः संज्वलनत्रयं चेति सप्तचत्वारिंशद्भिर्द्वाविंशतिशतं गुणसंक्रमप्रकृतयो भवंति, पंचसप्ततिरित्यर्थः ॥४२८॥ अथ स्थित्यनुभागबंधस्य प्रदेशबंधसंक्रमणस्य च गुणस्थानसंख्यामाह—

स्थित्यनुभागयोर्बंधः पुनः सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमेव स्यात्, तयोः कषायहेतुत्वात्। सातस्य तदुपरि बंधेऽपि तस्य प्रकृतिप्रदेशमात्रत्वात्। पुनः प्रदेशबंधानां संक्रमणमपि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमेव 'बंधे अधापवत्तो' इति स्थितिबंधपर्यंतमेव तत्संभवात् ॥४२९॥ अथ पंचभागहाराणामल्पबहुत्वं गाथाषट्केनाह—

तीर्थंकर, वज्रवृषभनाराच, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध मान माया, इन सैंतालीस प्रकृतियोंसे रहित एक सौ बाईस अर्थात् पिचहत्तर प्रकृतियोंमें गुणसंक्रमण होता है ॥४२७-४२८॥

आगे स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्धके संक्रमणके गुणस्थानोंकी संख्या कहते हैं—

स्थिति और अनुभागका बन्ध सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त ही होता है क्योंकि वे दोनों बन्ध कषायहेतुक होते हैं। यद्यपि सातावेदनीय सूक्ष्मसाम्परायके बाद भी बँधता है तथापि वहाँ उनका प्रकृतिबन्ध प्रदेशबन्ध ही होता है। पुनः बन्धको प्राप्त हुए परमाणुओंका संक्रमण भी सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त ही होता है; क्योंकि 'बंधे अधापवत्तो' इस गाथाके अनुसार जहाँ तक स्थितिबन्ध होता है वहीं तक संक्रमण होता है ॥४२९॥

आगे पाँच भागहारोंका अल्प-बहुत्व छह गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व्वसंक्रमणभागहारं सर्व्वतः स्तोकमवक्कं प्रमाणमेकरूपमक्कुं । १ । तु मत्त मदं नोडलुमसंख्यातगुणमप्प पल्यच्छेदासंख्यातैकभागं गुणसंक्रमभागहारप्रमाणमक्कु छे
a a a a
मदं नोडलपकर्षणोत्कर्षणभागहारमसंख्यातगुणितमागुत्तळुं पल्यच्छेदाऽसंख्यातैकभागमात्रमेयक्कु छे
a a a
मदं नोडलु :—

हारं अधापवत्तं तत्तो जोगंमि जो दु गुणगारो ।
णाणागुणहाणिसला असंखगुणिदक्कमा होंति ॥४३१॥

हारोऽधाप्रवृत्तस्ततो योगे यस्तु गुणकारो नानागुणहानिशलाका असंख्यगुणितक्रमा भवंति ॥

आ उत्कर्षणापकर्षणभागहारमं नोडलधाप्रवृत्तसंक्रमभागहारमसंख्यातगुणितमागुत्तळुं पल्यच्छेदासंख्यातैकभागप्रमाणमेयक्कुं छे
a a
ततः अदं नोडलुं योगदोळाउदोंदु गुणकारमदुवुमसंख्यातगुणितमागुत्तलु पल्यच्छेदाऽसंख्यातैक भागमेयक्कुं छे
a
तु मत्तदं नोडलु स्थितिय नानागुणहानिशलाकेगळुमसंख्यातगुणितंगळागुत्तळुं पल्यवर्गशलाकार्द्धच्छेदराशिविरहितपल्यार्द्धच्छेदराशिप्रमितंगळप्पुवु । छे व छे ॥

सर्वसंक्रमणभागहारः सर्वतः स्तोकस्तस्य प्रमाणमेकरूपं १ । तु-पुनः ततोऽसंख्यातगुणः पल्यच्छेदासंख्यातैकभागो गुणसंक्रमणभागहारः छे
aaaa
ततोऽपकर्षणोत्कर्षणभागहारावसंख्यातगुणावपि प्रत्येकं पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे
aaa
ततः अधःप्रवृत्तसंक्रमभागहारोऽसंख्यातगुणितोऽपि पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे
aa
ततो योगे

सर्वसंक्रमण भागहार सबसे थोड़ा है। अतः उसका प्रमाण एक है। आशय यह है कि अन्तकी फालिमें जितने परमाणु शेष रहे थे; उनमें इस भागहारके प्रमाण एकसे भाग देनेपर सर्व ही परमाणु आये। वे सब अन्य प्रकृतिरूप परिणमे तो उसे सर्वसंक्रमण जानना। उससे असंख्यातगुणा गुणसंक्रमण भागहार है, जिसका प्रमाण पल्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग है। सो गुणसंक्रमण रूप प्रकृतियोंके परमाणुओंमें इस भागहारके प्रमाणसे भाग देनेपर जो परिमाण आवे उतने परमाणु यथायोग्य कालमें प्रतिसमय असंख्यात गुणे होकर अन्य प्रकृतिरूप परिणमन जब करें तो वह गुण संक्रमण है। उससे उत्कर्षण भागहार और अपकर्षण भागहार असंख्यात गुणे हैं। तथापि ये दोनों पृथक्-पृथक् पल्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। यद्यपि इन पाँच भागहारोंमें इनका कथन नहीं है तथापि जहाँ उत्कर्षण भागहार या अपकर्षण भागहारका कथन आवे वहाँ ऐसा जानना। इनसे अधःप्रवृत्त संक्रमण भागहार असंख्यात गुणा है तथापि वह भी पल्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्तो पल्लसलायच्छेदहिया पल्लछेदणा होंति ।
पल्लस्स पढममूलं गुणहाणीवि य असंखगुणिदकमा ॥४३२॥

ततः पल्यशलाकाच्छेदाधिकाः पल्यच्छेदना भवंति । पल्यस्य प्रथममूलं गुणहानिरपि चाऽसंख्यातगुणितक्रमाः ॥

ततः आ स्थितिनानागुणहानिशलाकेगळं नोडलुं पल्यवर्गशलाकार्द्धच्छेदाधिकंगळु पल्यार्द्धच्छेदशलाकेगळप्पुवु । छे ॥ अदु कारणमागि नानागुणहानिशलाकेगळु पल्यवर्गशलाकार्द्धच्छेदराशिविरहितपल्यार्द्धच्छेदप्रमितंगळें दु पेळल्पट्टुवु । अपि आ पल्यच्छेदशलाकेगळं नोडलुं पल्य प्रथममूलमसंख्यातगुणितमक्कु मू १ मेंतें दोडे द्विरूपवर्गधारेयोळु पल्यच्छेदराशियिदं मेले पल्यप्रथममूलमसंख्यातवर्गस्थानंगळं नडेदु पुट्टिदुदप्पुदरिंदं । च अदं नोडलु स्थितिगुणहान्यायाममसंख्यातगुणितमक्कु प १ / छे व छे मेंतें दोडा प्रथममूलगुणकारं सप्ततिचतुर्व्वारकोटिपल्यप्रथममूलंगळं स्थितिनानागुणहानिशलाकेगळिदं भागिसिदेकभागमप्पुदरिंदं । मू १ । मू १ । ७० । को ४ / छे व छे गुणिसिदोडिदु । प १ / छे व छे ॥

यो गुणकारः सोऽसंख्यातगुणोऽपि पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे / a । तु-पुनस्ततः स्थितेर्नानागुणहानिशलाकाराशिरसंख्यातगुणोऽपि पल्यवर्गशलाकार्धच्छेदोनपल्यार्धच्छेदमात्रः छे—व—छे । ततः पल्यार्धच्छेदशलाकाराशिः पल्यवर्गशलाकार्धच्छेदाधिकः छे अपि ततः पल्यप्रथममूलमसंख्यातगुणं मू १, द्विरूपवर्गधारायां तस्योपर्यसंख्यातवर्गस्थानान्यतीत्योत्पन्नत्वात् । च ततः स्थितिगुणहान्यायामोऽसंख्यातगुणः प १ / छे–व–छे स्थितिनानागुणहानिशलाकाभक्तसप्ततिचतुर्वारकोटिगुणितपल्यप्रथममूलवर्गमात्रत्वात् मू १ मू १ ७० को ४ / छे–व–छे गुणिते सत्येवं ।

भाग है। सो जो अधःप्रवृत्त संक्रमण रूप प्रकृतियाँ हैं उनके परमाणुओंमें इसका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे उतने परमाणु अन्य प्रकृतिरूप होकर जहाँ परिणमे वहाँ अधःप्रवृत्त संक्रमण जानना। इससे योगोंके कथनमें जो गुणकार कहा है वह असंख्यात गुणा है। तथापि वह भी पल्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग है। उससे जघन्य योगस्थानको गुणा करनेपर उत्कृष्ट योगस्थान होता है। इससे कर्मोंकी स्थितिकी नानागुणहानि शलाकाका प्रमाण असंख्यात गुणा है। सो पल्यके अर्धच्छेदोंमें-से पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंको घटानेपर जो प्रमाण रहे उतना है। उससे पल्यके अर्धच्छेदोंका प्रमाण अधिक है। सो पल्यकी वर्गशलाकाके जितने अर्धच्छेद होते हैं उतना अधिक हैं। उससे पल्यका प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा है। क्योंकि द्विरूपवर्गधारामें पल्यके अर्धच्छेदरूप स्थानसे असंख्यात स्थान जानेपर पल्यका प्रथम वर्गमूल होता है। उससे कर्मकी स्थितिकी एक गुणहानिके समयोंका प्रमाण असंख्यात गुणा है। क्योंकि सात सौ को चार बार एक कोटिसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उससे गुणित पल्यको स्थितिकी नाना गुणहानिके प्रमाणका भाग देनेपर यही प्रमाण आता है।

---

१. इदर अभिप्रायं मुंदेव्यक्तमादपुदु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अण्णोण्णब्भत्थं पुण पल्लमसंखेज्जरूवगुणिदकमा ।
संखेज्जरूवगुणिदं कम्मुक्कस्सठिदी होदि ॥४३३॥

अन्योन्याभ्यस्तः पुनः पल्यमसंख्येयरूपगुणितक्रमौ । संख्येयरूपगुणिता कर्म्मोत्कृष्टस्थितिर्भवति ॥

पुनरन्योन्याभ्यस्तराशिः मत्ता स्थितिगुणहान्यायाममं नोडलुमन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणितमक्कु प म ते वोडवुवुं नानागुणहानिशलाकामात्रद्विक संवर्गसंजनितमन्योन्याभ्यस्तराशि- व यप्पुदरिदं । पल्यवर्गशलाकाराशिविभक्तपल्यप्रमितमक्कुमप्पुदरिदमसंख्यातगुणितत्वं सिद्धमक्कुमदं नोडलु पल्यमसंख्यातगुणितमक्कुमन्योन्याभ्यस्तराशियं पल्यवर्गशलाकाराशियिंदं गुणिसिदोडे पल्यमक्कुमप्पुदरिदं प आ पल्यमं नोडलु कर्म्मोत्कृष्टस्थिति संख्यातरूपगुणितमक्कु प १ मा गुणकारभूत संख्यातप्रमाणमनरियल्वेडि त्रैराशिकं माडल्पडुगुमदें तेंदोडे एकसागरोपमक्के पत्तु कोटी कोटि पल्यंगळागुत्तं विरलेप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपमंगळ्गेनितु पल्यंगळप्पुवेंदितु । प्र । स १ । फ प १० । को २ । इ सा । ७० । को २ । बंद लब्धं सप्ततिचतुर्वारकोटिपल्यंगळप्पुवप्पुदरिदं गुणकारभूत संख्यात प्रमाणं सिद्धमावुदु ॥

अंगुलअसखभागं विज्झादुव्वेल्लणं असंखगुणं ।
अणुभागस्स य णाणागुणहाणिसला अणंताओ ॥४३४॥

अंगुलासंख्यातभागो विध्यात उद्वेल्लनोऽसंख्यगुणोऽनुभागस्य नानागुणहानिशलाका अनंताः ॥

प १ ततोऽन्योन्याभ्यस्तराशिरसंख्यातगुणः प नानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गसमुत्पन्नत्वात् । ततः पल्यम-
छे–व–छे a

संख्यातगुणं पल्यवर्गशलाकागुणितत्वात् प । ततः कर्मोत्कृष्टस्थितिः संख्यातगुणा प १ । यद्येकसागरोपमस्य दशकोटाकोटिपल्यानि तदा सप्ततिकोटाकोटीनां कतीति सप्ततिचतुर्वारकोटिगुणकारसंभवात् । ततो विध्यातसंक्रम-

---

उससे कर्मकी स्थितिकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण असंख्यातगुणा है; क्योंकि नाना गुणहानि प्रमाण दोके अंक रखकर उन्हें परस्परमें गुणा करनेपर अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण होता है। उससे पल्यका प्रमाण असंख्यातगुणा है; क्योंकि उस अन्योन्याभ्यस्त राशिके प्रमाणको पल्यकी वर्गशलाकासे गुणा करनेपर पल्य होता है। उससे कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण संख्यातगुणा है, क्योंकि एक सागरके दस कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं तो बहत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके कितने होंगे। चार बार एक कोटिसे सात सौको गुणा करे उतने पल्य हुए। उससे विध्यात संक्रमण भागहार असंख्यातगुणा है। वह सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सो विध्यात संक्रमणकी प्रकृतियोंके परमाणुओंको उसका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उतने परमाणु जहाँ अन्य प्रकृतिरूपसे परिणमन करें वहाँ विध्यात संक्रम जानना। उससे उद्वेलन भागहार असंख्यातगुणा है। वह भी सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सो उद्वेलन प्रकृतिके परमाणुओंको उससे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उतने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ कर्म्मोत्कृष्टस्थितियं नोडलु विध्यात संक्रमभागहारमसंख्यातगुणितमक्कुमवुवुं सूच्यंगुला-संख्यातैकभागप्रमितमक्कु २ ꠶ ꠶ मदं नोडलुद्वेल्लनभागहारमसंख्यातगुणितमक्कुमवुवुं सूच्यंगुला-संख्यातैकभागप्रमाणमक्कु २ ꠶ मनुभागविषयनानागुणहानिशलाकेगळु अनंतंगळप्पुवु ख—

गुणहाणि अणंतगुणं तस्स दिवड्ढं णिसेयहारो य।
अहियकमा अण्णोण्णब्भत्थो रासी अणंतगुणो ॥४३५॥

गुणहानिरनंतगुणा तस्या द्व्यर्द्धो निषेकहारश्चाधिकक्रमौ। अन्योन्याभ्यस्तराशिरनंतगुणः॥

अनुभागविषयनानागुणहानिशलाकेगळं नोडलनुभागविषयगुणहान्यायाममनंतगुणमक्कु। ख। ख। मदं नोडलनुभागविषयप्रथमवर्ग्गणानयननिमित्तद्वर्द्धगुणहानि एकगुणहानि अर्द्धविदमधिक-मक्कु ख ख ३/२। मदं नोडलु दोगुणहानियुमेकगुणहान्यर्द्धविदमधिकमक्कु। ख। ख। २॥ मा निषेकहारमं नोडलु अनुभागविषयाऽन्योन्याभ्यस्तराशियुमनंतानंतगुणितमक्कु। ख। ख। २। ख। मिल्लि समुच्चयसंदृष्टि :—

स	गण	अ। उ	अथा	यो. गु.	नाना	प	प	गुण	अन्यो	प	क. उ	४ विध्या	५ उद्वे
१	छे ꠶꠶꠶꠶	छे ꠶꠶꠶	छे ꠶꠶	छे ꠶	छेछे	छे	म ११	प१ छेवछे	प व	प	प १	२ ꠶꠶	२ ꠶

→

अनु. नाना	अनु. गु	अनु. दिव	निषेक	अन्योन्या	
ख	ख ख	ख ख ३/२	ख। ख२	ख। ख	२ ख

←

भागहारोऽसंख्यातगुणः। स च सूच्यंगुलासंख्यातैकभागः २ ꠶ ꠶ तत उद्वेल्लनभागहारोऽसंख्यातगुणः सोऽपि तदालापः २ ꠶। ततोऽनुभागस्य नानागुणहानिशलाका अनंता ख। ततो नानागुणहान्यायामोऽनंतगुणः ख ख। ततो द्व्यर्धगुणहानिरर्धाधिका ख ख ३/२। ततो दोगुणहानिरर्धाधिका ख ख २। ततोऽन्योन्याभ्यस्तराशिरनंतगुणः ख ख

परमाणु जहाँ अन्य प्रकृतिरूप परिणमन करें वहाँ उद्वेलन संक्रमण जानना। उससे कर्मोंके अनुभागके कथनमें नाना गुणहानि शलाका अनन्त प्रमाण है। उससे उस अनुभागकी एक गुणहानिके आयामका प्रमाण अनन्तगुणा है। उससे उसकी ही डेढ़ गुणहानिका प्रमाण उसके आधे प्रमाण अधिक है। उससे उसकी ही दो गुणहानिका प्रमाण आधे गुणहानिके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[इंतु भगवदर्हत्परमेश्वर चारुचरणारविंदद्वंद्ववंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरुमंडलाचार्य्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरि सिद्धांतचक्रवर्त्तिश्रीपादपंकजरजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्ण विरचितगोम्मटसार कर्णाटवृत्तिजीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळ् कर्म्मकांड पंचभागहार द्वितीयचूलिकाधिकारं निरूपिसल्पट्टुदु ॥]

अनंतरं दशकरणतृतीयचूलिकेयं चतुर्द्दशगाथासूत्रंगळिदं पेळलुपक्रमिसि तदादियोळ् निजश्रुतगुरुगळं नमस्कारमं माडिदपं ।

जस्स य पायपसाएणणंतसंसारजलहिमुत्तिण्णो ।
वीरिंदणंदिवच्छो णमामि तं अभयणंदिगुरुं॥४३६॥

यस्य च पादप्रसादेनानंतसंसारजलधिमुत्तीर्ण्णो । वीरेंद्रणंदिवत्सो नमामि तमभयणंदिगुरुं ॥

आवनानोर्व्वं श्रुतगुरुविन पादप्रसाददिदं वीरेंद्रणंदिवत्सं संसारजलधियनुत्तरिसिदनंतप्पऽभयनंदिगुरुवं नमस्करिसुवें ।

बंधुक्कड्ढणकरणं संकममोकड्डुदीरणा सत्तं ।
उदयुवसामणिधत्ती णिकाचणा होंति पडिपयडी ॥४३७॥

बंधोत्कर्षणकरणं संक्रमापकर्षणोदीरणासत्त्वमुदयोपशमनिधत्तिनिकाचना भवंति प्रतिप्रकृति ॥

बंधकरणमुमुत्कर्षणकरणमुं संक्रमणकरणमुं अपकर्षणकरणमुमुदीरणाकरणमुं सत्वकरणमुमुदयकरणमुमुपशमकरणमुं निधत्तिकरणमुं निकाचनकरणमुमेंदितु दशकरणंगळु प्रत्येकमेकैकप्रकृतिगळप्पुवु ।

---

२ ब ॥४३०-४३५॥

इति पंचभागहाराख्या द्वितीयचूलिका व्याख्याता ।

अथ दशकरणचूलिकां चतुर्दशगाथासूत्रैर्वक्तुमुपक्रममाणस्तदादौ निजश्रुतगुरुं नमस्यति—

यस्य श्रुतगुरोः पादप्रसादेन वीरेंद्रनंदिवत्सः अनंतसंसारजलधिमुत्तीर्णः तमभयनंदिगुरुं नमामि ॥४३६॥

बंधः उत्कर्षणं संक्रमोऽपकर्षणमुदीरणा सत्त्वमुदयः उपशमो निधत्तिर्निष्काचनेति दश करणानि प्रकृति प्रकृति भवंति ॥४३७॥

आयाम प्रमाण अधिक है, उससे उस अनुभागकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण अनन्तगुणा है। इस प्रकार पाँच भागहारोंके अल्पबहुत्वके प्रसंगसे दूसरोंके भी अल्पबहुत्वका कथन किया ॥४३०-४३५॥

पंचभागहार चूलिका समाप्त ।

जिस शास्त्रगुरुके चरणोंके प्रसादसे वीरनन्दि और इन्द्रनन्दिका शिष्य मैं नेमिचन्द्राचार्य अनन्त संसार समुद्रके पार हो गया उस अभयनन्दि गुरुको नमस्कार करता हूँ॥४३६॥

बन्ध, उत्कर्षण, संक्रम, अपकर्षण, उदीरणा, सत्त्व, उदय, उपशम, निधत्ति, निकाचना ये दस करण प्रत्येक प्रकृतिमें होते हैं ॥४३७॥

---

१. ब प्रति प्रकृति भ° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कम्माणं संबंधो बंधो उक्कड्ढणं हवे वड्ढी ।
संकममणत्थगदी हाणी ओकड्ढणं णाम ॥४३८॥

कर्म्मणां संबंधो बंध उत्कर्षणं भवेद्वृद्धिः । संक्रमोऽन्यत्रगतिर्हानिरपकर्षणं नाम ॥

आउदो़ दु जीवक्कें मिथ्यात्वादिपरिणामंगळिंदमाउदो़ दु पुद्गलद्रव्यं ज्ञानावरणादिकर्म्म-स्वरूपदिदं परिणमिसुगुमदु मत्ताजीवक्के ज्ञानादिगळं मरसुगुमें दित्यादिसंबंधं बंधमें बुदक्कुं । कर्म्मंगळ स्थित्यनुभागंगळ वृद्धियुत्कर्षणमें बुदक्कुं । परप्रकृतिस्वरूपपरिणमनं संक्रममें बुदु । स्थित्यनुभागंगळ हानि अपकर्षणमें बुदक्कुं ॥

अण्णत्थठियस्सुदये संछुहणमुदीरणा हु अत्थित्तं ।
सत्तं सकालपत्तं उदओ होदित्ति णिद्दिट्ठो ॥४३९॥

अन्यत्र स्थितस्योदये निक्षेपणमुदीरणं खलु अस्तित्वं । सत्त्वं स्वकालप्राप्तमुदयो भवतीति निर्दिष्टं ॥

उदयावलिबाह्यस्थितद्रव्यक्कपकर्षणवशदिदमुदयावलियोळ् निक्षेपणमुदीरणमें बुदक्कु । मस्तित्वमं सत्वमें बुदु । स्वस्थितियनेय्दल्पट्टुदुदयमें दु पेळल्पट्टुदु ॥

उदये संकमुदये चउसुवि दादुं कमेण णो सक्कं ।
उवसंतं च णिधत्ती णिकाचिदं होदि जं कम्मं ॥४४०॥

उदये संक्रमोदये चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं । उपशांतं च निधत्ति निकाचितं भवति यत्कर्म्मं ॥

मिथ्यात्वादिपरिणामैर्यत्पुद्गलद्रव्यं ज्ञानावरणादिरूपेण परिणमति तच्च ज्ञानादीन्यावृणोतीत्यादि संबंधो बंधः । स्थित्यनुभागयोर्वृद्धिः उत्कर्षणं । परप्रकृतिरूपपरिणमनं संक्रमणं । स्थित्यनुभागयोर्हानिरपकर्षणं नाम ॥४३८॥

उदयावलिबाह्यस्थितस्थितिद्रव्यस्यापकर्षणवशादुदयावल्यां निक्षेपणमुदीरणा खलु, अस्तित्वं सत्त्वं, स्वस्थितिं प्राप्तमुदयो भवतीति निर्दिष्टः ॥४३९॥

मिथ्यात्व आदि परिणामोंसे जो पुद्गलद्रव्य ज्ञानावरणादिरूप परिणमता है और ज्ञानादिको ढाँकता है उसका सम्बन्ध होना बन्ध है। जो स्थिति अनुभाग पूर्वमें था उसमें वृद्धि होना उत्कर्षण है। जो प्रकृति पूर्वमें बँधी थी उस प्रकृतिके परमाणुओंका अन्य प्रकृति-रूप होना संक्रमण है। जो स्थिति अनुभाग पूर्वमें था उसमें हानि होना अपकर्षण है ॥४३८॥

उदयावलीके बाहर स्थित द्रव्यको अपकर्षणके द्वारा उदयावलीमें लाना उदीरणा है। अर्थात् जिन प्रकृतियोंके निषेकोंका उदयकाल नहीं है, उनकी स्थितिको घटाकर, जो निषेक आवली मात्र कालमें उदयमें आते हैं उनमें उनके परमाणुओंको मिलाना, जिससे उनके साथ ही उनका भी उदय हो वह उदीरणा है। अस्तित्वको अर्थात् पुद्गलोंका कर्मरूपसे रहना सत्त्व है। कर्मोंकी जितनी स्थिति है उस स्थितिका पूरा होना उदय है ॥४३९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यत्कर्मं आउदों दु कर्म्मस्वरूपपरिणतपुद्गलद्रव्यं उदयावलियोळिक्कलु बारददनुपशांतमें बुदु । उदयावलियोळिक्कलुं संक्रमिसियसलुं शक्यमल्लदुदं निधत्तियें बुदु । उदयावलियोळिक्कलुं संक्रमिसलुमुत्कर्षिसलुं अपकर्षिसलुं शक्यमल्लवुवु निकाचितमें वु पेळल्पट्टुवु ।।

इंतु दशकरण लक्षणंगळं पेळ्द नंतरं प्रकृतिगळगेयुं गुणस्थानंगळगेयुं संभविसुव करणंगळं गाथाद्वयदिदं पेळदपरु :—

संकमणाकरणूणा णवकरणा होंति सव्वआऊणं ।
सेसाणं दसकरणा अपुव्वकरणोत्ति दसकरणा ।।४४१।।

संक्रमकरणोनानि नवकरणानि भवंति सर्व्वायुषां । शेषाणां दशकरणानि अपूर्व्वकरणपर्य्यंतं दशकरणानि ।।

संक्रमकरणरहितनवकरणंगळु नालकुमायुष्यंगळोळमक्कुं । शेषप्रकृतिगळेल्लं दशकरणंगळप्पुवु । मिथ्यादृष्टियादियागि अपूर्व्वकरणगुणस्थानपर्य्यंतं दशकरणंगळप्पुवु ।।

आदिमसत्तेव तदो सुहुमकसाओत्ति संकमेण विणा ।
छच्च सजोगित्ति तदो सत्तं उदयं अजोगित्ति ।।४४२।।

आदिमसप्तैव ततः सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं संक्रमेण विना । षट् च सयोगपर्य्यंतं ततः सत्वमुदयोऽयोगिपर्य्यंतं ।।

ततः अपूर्व्वकरणगुणस्थानदिदं मेले सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानपर्य्यंतं मोदल सप्तकरणंगळप्पुववरोळु संक्रमकरणं पोरगागि षट्करणंगळु सयोगकेवलिगुणस्थानपर्य्यंतमप्पुवल्लिदं मेले अयोगि-

---

यत्कर्म उदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्यं तदुपशांतं नाम । उदयावल्यां निक्षेप्तुं संक्रमयितुं चाशक्यं तन्निधत्तिर्नाम । उदयावल्यां निक्षेप्तुं संक्रमयितुमुत्कर्षयितुमपकर्षयितुं चाशक्यं तन्निकाचितं नाम भवति ।।४४०।। एवं दशकरणलक्षणं प्ररूप्य प्रकृतीनां गुणस्थानानां च संभवंति तानि गाथाद्वयेनाह—

चतुर्णामायुषां संक्रमकरणं विना नव करणानि भवंति । शेषसर्वप्रकृतीनां दशकरणानि भवंति । मिथ्यादृष्टयाद्यपूर्वकरणपर्यंतं दशकरणानि भवंति ।।४४१।।

ततः अपूर्वकरणगुणस्थानादुपरि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमाद्यान्येव बंधादीनि सप्त करणानि भवंति । तत्रापि

कर्मको उदयावलीमें लानेमें असमर्थ कर देना उपशम है । कर्मका उदयावलीमें लानेमें या अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण करनेमें समर्थ न होना निधत्ति है । कर्मका उदयावलीमें लानेमें, अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण करनेमें, उत्कर्षण या अपकर्षण करनेमें असमर्थ होना निकाचित है ।।४४०।।

इस प्रकार दस करणोंका निरूपण करके जिन प्रकृतियोंमें और गुणस्थानोंमें ये करण होते हैं उन्हें दो गाथाओंसे कहते हैं—

चारों आयुमें संक्रमकरणके बिना नौ करण होते हैं । शेष सब प्रकृतियोंमें दस करण होते हैं । मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यन्त ये दस करण होते हैं ।।४४१।।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे ऊपर सूक्ष्मसाम्पराय पर्यन्त आदिके बन्ध आदि सात ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलिगुणस्थानदोळु सत्वकरणमुमुदयकरणमुमेरडेयप्पुवु ॥

णवरि विसेसं जाणे संकममवि होदि संतमोहम्मि ।
मिच्छस्स य मिस्सस्स य सेसाणं णत्थि संकमणं ॥४४३॥

नविन विशेषं जानीहि संक्रमोपि भवत्युपशांतमोहे । मिथ्यात्वस्य च मिश्रस्य च शेषाणां नास्ति संक्रमणं ॥

उपशांतकषायगुणस्थानदोळु [1]विशेषमुंटप्पुददावुदें दोडे मिथ्यात्वमिश्रप्रकृतिगळेरडक्के संक्रमणकरणमुंटदें तें दोडे मिथ्यात्वद्रव्यमुमं मिश्रप्रकृतिद्रव्यमुमं सम्यक्त्वप्रकृतिस्वरूपमागि माळ्पनप्पुदरिदं शेषप्रकृतिगळगे संक्रमणकरणं पोरगागि षट्करणंगळेयप्पुवु । संदृष्टि :—

*	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ		क्षी	स	अ
व्युच्छि	०	०	०	०	०	०	०	३	०	०	१	०	०	४	२
करण	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	७	७	७	६	६	६	२
असत्व	०	०	०	०	०	०	०	०	३	३	३	४	४	४	८

अपूर्व्वकरणनोळु उपशमनिधत्तिनिकाचनंगळु मूरुं व्युच्छित्तियक्कु । अनिवृत्तिकरणनोळं सूक्ष्मसांपरायनोळं व्युच्छित्तिशून्यमक्कुं । उपशांतकषायनोळु मिथ्यात्वमिश्रंगळगे संक्रमणमुंटप्पु-

संक्रमकरणं विना षडेव सयोगपर्यंतं भवंति । तत उपर्ययोगे सत्त्वोदयकरणे द्वे एव ॥४४२॥

उपशांतकषाये विशेषोऽस्ति । स कः ? मिथ्यात्वमिश्रयोरेव संक्रमणमस्ति तद्द्रव्यस्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण करणात् । शेषप्रकृतीनां संक्रमकारणं विना षडेव । अपूर्वकरणे उपशमनिधत्तिनिकाचनत्रयं व्युच्छित्तिः,

करण होते हैं। उनमें-से भी सयोगी पर्यन्त संक्रमके बिना छह ही करण होते हैं। उससे ऊपर अयोगीमें सत्त्व और उदय दो ही करण होते हैं ॥४४२॥

किन्तु उक्त कथनमें विशेष यह है कि उपशान्त कषाय गुणस्थानमें मिथ्यात्व और मिश्र इन दोनोंका संक्रमण भी होता है, इनके परमाणुओंको सम्यक्त्व मोहनीयरूप परिणमाता है। शेष प्रकृतियोंमें संक्रमके बिना छह ही करण होते हैं। इस तरह अपूर्वकरणमें

१. म मुंटदावुदें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दरिंदमा प्रकृतिद्वयमं कुर्त्तु संक्रमसहितमागि सप्तकरणंगळप्पुवु। शेषप्रकृतिगळं कुरुत्तु संक्रमणकरणव्युच्छित्ति सूक्ष्मसांपरायनोळेयक्कं अप्पुदरिंदमुपशांतकषायनोळु षट्करणमेयक्कुं। क्षीणकषायनोळु करणव्युच्छित्तिशून्यमक्कुं। सयोगकेवलियोळु बंधोत्कर्षणापकर्षण उदीरणाकरणचतुष्कव्युच्छित्तियक्कुमयोगिकेवलियोळु सत्वोदयकरणद्वयक्के व्युच्छित्तियक्कुं। शेष सुगमं॥

बंधुक्कड्ढणकरणं सगसगबंधोत्ति होदि णियमेण।
संकमणं करणं पुण सगसगजादीण बंधोत्ति ॥४४४॥

बंधोत्कर्षणकरणे स्वस्वबंधपर्य्यंतं भवतः नियमेन। संक्रमणं करणं पुनः स्वस्वजातीनां बंधपर्य्यंतं ॥

बंधकरणमुत्कर्षणकरणमें बेरडुं स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्य्यंतमक्कुं नियमदिदं। संक्रमणकरणं मत्ते स्वस्वजातिगळबंधव्युच्छित्तिपर्य्यंतमक्कुं ॥

ओकड्ढणकरणं पुण अजोगिसत्ताण जोगिचरिमोत्ति।
खीणं सुहुमंताणं खयदेसस्सावलीयसमयोत्ति ॥४४५॥

अपकर्षणकरणं पुनरयोगिसत्वानां योगिचरमपर्य्यंतं क्षीणसूक्ष्मांतानां क्षयदेशः सावलिकसमयपर्य्यंतं ॥

अनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये च शून्यं, उपशांतकषाये मिथ्यात्वमिश्रप्रकृती प्रति सप्त करणानि स्युः, शेषप्रकृतीः प्रति संक्रमणस्य सूक्ष्मसांपराये एव छेदात् षडेव। क्षीणकषाये व्युच्छित्तिः शून्यं, सयोगे बंधोत्कर्षणापकर्षणोदीरणकरणानि, अयोगे सत्त्वोदयौ। शेषं सुगमं ॥४४३॥

बंधकरणमुत्कर्षणकरणं च स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्यंतं स्यात् नियमेन। संक्रमणकरणं पुनः स्वस्वजातीनां बंधव्युच्छित्तिपर्यंतं स्यात् ॥४४४॥

उपशम, निधत्ति, निकाचना इन तीनकी व्युच्छित्ति हो जाती है। ये तीनों आगे नहीं होते। अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्म साम्पराय शून्य हैं अर्थात् इनमें किसी करणकी व्युच्छित्ति नहीं होती। उपशान्त कषायमें मिथ्यात्व और मिश्र प्रकृतिमें सातों करण होते हैं शेष प्रकृतियोंमें छह ही करण होते हैं; क्योंकि संक्रमकरणकी व्युच्छित्ति सूक्ष्म साम्परायमें ही हो जाती है। क्षीणकषायमें व्युच्छित्ति शून्य है। सयोगीमें बन्ध, उत्कर्षण, अपकर्षण और उदीरणा करणकी व्युच्छित्ति होती है। तथा अयोगीमें सत्त्व और उदयकी व्युच्छित्ति होती है। शेष कथन सुगम है ॥४४३॥

बन्धकरण और उत्कर्षण करण अपनी-अपनी बन्ध व्युच्छित्ति पर्यन्त ही नियमसे होते हैं। अर्थात् जिस-जिस प्रकृतिकी जहाँ-जहाँ बन्ध व्युच्छित्ति होती है उस-उस प्रकृतिमें वहीं तक बन्ध और उत्कर्षण करण होते हैं। किन्तु संक्रमकरण अपनी-अपनी सजातीय प्रकृतियोंकी बन्ध व्युच्छित्ति पर्यन्त होता है। जैसे ज्ञानावरणकी पाँचों प्रकृतियाँ सजातीय हैं। इनका संक्रमकरण जहाँ तक इनकी सजातीय प्रकृतियोंकी बन्ध व्युच्छित्ति होती है वहाँ तक होता है ॥४४४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपकर्षणकरणमुं मत्तें अयोगिकेवलियोळु पेळव सत्वप्रकृतिगळेण्भत्तय्दक्कं सयोगकेवलिचरमसमयपर्य्यंतमक्कुं । ८५ ॥ क्षीणकषायगुणस्थानावसानमाद निद्राप्रचलाज्ञानावरणांतरायदशकदर्शनावरणचतुष्कमुमितु षोडशप्रकृतिगळ्गेयुं सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानावसानमाद संज्वलनलोभप्रकृतिगेयुं क्षयदेशपर्य्यंतमपकर्षणकरणमक्कु । मिल्लि क्षयदेशमें बुवाउदें दोडे परमुखोदयदिदं किडुव प्रकृतिगळ्गे चरमकांडक चरम फाळियं क्षयदेशमें बुदु । स्वमुखोदयदिदं किडुवप्रकृतिगळ्गे समयाधिकावलियं क्षयदेशमें बुदु कारणमागि क्षीणकषायन सत्वव्युच्छित्तिप्रकृतिगळु पदिनारक्कं सूक्ष्मसांपरायन सत्वव्युच्छित्ति संज्वलनलोभक्कमुं स्वमुखोदयदिदं किडुव प्रकृतिगळप्पुदरिदं समयाधिकावलिपर्य्यंतमपकर्षणकरणमक्कुं । संदृष्टि :—

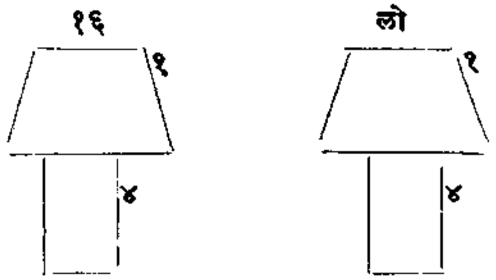

अपकर्षणकरणं पुनरयोगोक्तपंचाशीतिसत्त्वस्य सयोगचरमसमयपर्यंतं भवति । क्षीणकषायसत्त्वव्युच्छित्तिषोडशानां सूक्ष्मसांपरायसत्त्वव्युच्छित्तिसंज्वलनलोभस्य च क्षयदेशपर्यंतमपकर्षणं स्यात् । तत्र क्षयदेशो नाम परमुखोदयेन विनश्यतां चरमकांडकचरमफालिः, स्वमुखोदयेन विनश्यतां च समयाधिकावलिस्तेनैषां सप्तदशानां समयाधिकावलिपर्यंतमपकर्षणं स्यात् । संदृष्टिः—

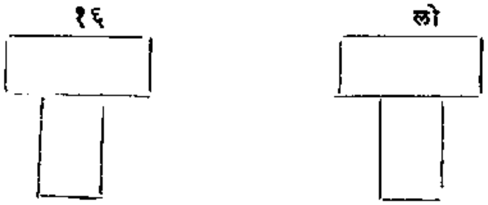

अयोगीमें जिन पिचासी प्रकृतियोंकी सत्ता कही है उनका अपकर्षणकरण सयोगीके अन्त समय पर्यन्त होता है । क्षीणकषायमें सत्त्वसे विच्छिन्न हुई सोलह और सूक्ष्मसाम्परायमें सत्त्वसे विच्छिन्न हुआ सूक्ष्मलोभ इनका अपकर्षण करण अपने क्षयदेश पर्यन्त होता है ।

शंका—क्षयदेश क्या है ?

समाधान—जो प्रकृति अपने ही रूप उदय होकर नष्ट होती है उसे स्वमुखोदयी कहते हैं । स्वमुखोदयी प्रकृतियोंका एक समय अधिक आवली प्रमाण काल क्षयदेश है । जो प्रकृति अन्य प्रकृतिरूप उदय देकर नष्ट होती हैं वे परमुखोदयी हैं, उनका क्षयदेश अन्तिम काण्डककी अन्तिम फाली है । अतः इन सतरह प्रकृतियोंमें एक समय अधिक आवलीकाल पर्यन्त अपकर्षण होता है ॥४४५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवसंतोत्ति सुराऊ मिच्छत्तिय खवगसोलसाणं च।
खयदेसोत्ति य खवगे अट्ठकसायादिवीसाणं ॥४४६॥

उपशांतकषायपर्य्यंतं सुरायुषो मिथ्यात्वत्रय क्षपकषोडशानां। क्षयदेशपर्य्यंतं क्षपकेऽष्टकषायादिविंशतीनां ॥

उपशांतकषायगुणस्थानपर्य्यंतं देवायुष्यक्कपकर्षणकरणमक्कुं। मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतित्रयक्कं–णिरयतिरिक्ख दु वियलं थीणतिगुज्जोव ताव एइंदी। साहरण सुहुमथावर सोळमें ब क्षपकन षोडशप्रकृतिगळगं क्षयदेशपर्य्यंतं चरमकांडकचरमफाळिपर्य्यंतमें बुदर्त्थं। क्षपकनोळष्टकषायादि 'संडित्थिछक्कसाया पुरिसो कोहो य माणमायं च' एंब विंशति प्रकृतिगळगं–

मिच्छत्तियसोलसाणं उवसमसेडिम्मि संतमोहोत्ति।
अट्ठकसायादीणं उवसमियट्ठाणगोत्ति हवे ॥४४७॥

मिथ्यात्वत्रयषोडशानामुपशमश्रेण्यां शांतमोहपर्य्यंतं। अष्टकषायादीनामुपशमितस्थानपर्य्यंतं भवेत् ॥

मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतित्रयक्कं नरकद्विकादिषोडशप्रकृतिगळगमुपशमश्रेणियोळुपशांतकषायपर्य्यंतमष्टकषायादिगळगे स्वस्वोपशमितस्थानपर्य्यंतमपकर्षणकरणमक्कुं ॥

पढमकसायाणं च विसंजोजकओत्ति अयददेसोत्ति।
णिरयतिरिआउगाणमुदीरणसत्तोदया सिद्धा ॥४४८॥

प्रथमकषायाणां च विसंयोजकपर्य्यंतमसंयतदेशसंयतपर्य्यंतं नरकतिर्य्यगायुषोदीरण सत्वोदयाः सिद्धाः ॥

उपशांतकषायपर्यंतं देवायुषोऽपकर्षणकरणं स्यात्। मिथ्यात्वसम्यक्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतीनां णिरयतिरिक्खेत्यादिक्षपकषोडशानां च क्षयदेशपर्यंतं चरमकांडकचरमफालिपर्यंतमित्यर्थः। तथा क्षपकाष्टकषायादिविंशतिप्रकृतीनां स्वस्वक्षयदेशपर्यंतमपकर्षणं स्यात् ॥४४६॥

मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतीनां नरकद्विकादिषोडशानां चोपशमश्रेण्यामुपशांतकषायपर्यंतं अष्टकषायादीनां स्वस्वोपशमस्थानपर्यंतं चापकर्षणकरणं स्यात् ॥४४७॥

देवायुका अपकर्षण करण उपशान्त कषाय पर्यन्त होता है। मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति और 'णिरयतिरिक्ख' आदिमें कही अनिवृत्तिकरणमें क्षय हुई सोलह प्रकृतियोंका अपकर्षण करण क्षयदेश पर्यन्त अर्थात् अन्त काण्डकके अन्तिम फालि पर्यन्त होता है। तथा अनिवृत्तिकरणमें क्षय हुई आठ कषाय आदि बीस प्रकृतियोंका अपकर्षण करण अपने-अपने क्षयदेश पर्यन्त होता है ॥४४६॥

उपशमश्रेणिमें मिथ्यात्व, मिश्र, सम्यक्त्व प्रकृति और नरकद्विक आदि सोलहका अपकर्षण करण उपशान्त कषाय पर्यन्त होता है। आठ कषाय आदिका अपकर्षण करण अपने-अपने उपशमन स्थान पर्यन्त होता है ॥४४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतानुबंधिक्रोधमानमायालोभंगळ्गेयुं विसंयोजकपर्य्यंतमसंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरोळ् यथासंभवावसानमागियुं अपकर्षण करणमक्कुं। मिथ्यादृष्ट्याद्यसंयतपर्य्यंतं नरकायुष्यक्के मिथ्यादृष्ट्यादिदेशसंयतपर्य्यंत तिर्य्यगायुष्यक्केयुमुदीरणकरणमुं सत्वकरणमुं उदयकरणमुं सिद्धं गळप्पुवु॥

मिच्छस्स य मिच्छोत्ति य उदीरणाउवसमाहिमुहियस्स ।
समयाहियावलित्ति य सुहुमे सुहुमस्स लोहस्स ॥४४९॥

मिथ्यात्वस्य मिथ्यादृष्टिपर्य्यंतमुदीरणमुपशमाभिमुखस्य । समयाधिकावलिपर्य्यंतं च सूक्ष्मे सूक्ष्मस्य लोभस्य ॥

मिथ्यात्वप्रकृतिगे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळ्उदीरणाकरणमक्कुमुपशमसम्यक्त्वाभिमुखंगे समयाधिकावलिपर्य्यंतमुदीरणकरणमक्कुमेकें दोडल्लि पर्य्यंतं मिथ्यात्वोदयमुंटप्पुदरिदं। सूक्ष्मसांपरायनोळे सूक्ष्मलोभक्कुदीरणमक्कु मेकें दोडन्यगुणस्थानदोळु तदुदयमिल्लप्पुदरिदं ॥

उदये संकमुदये चउसुवि दादुं कमेण णोसक्कं ।
उवसंतं च णिधत्ती णिकाचिदं तं अपुव्वोत्ति ॥४५०॥

उदये संक्रमोदययोश्चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं। उपशांतं च निधत्ति निकाचितं तदपूर्व्वपर्य्यंतं ॥

आउदों दुपशांतमाद द्रव्यमनुदयावळियोळिक्कलु शक्यमल्ल। आउदों दु निधत्तिकरणद्रव्यमं संक्रमोदयंगळगे कुडल्बारदु। आउदों दु निकाचितकरणद्रव्यमनुदयावळिगं संक्रमक्कुमुत्कर्षणापक-

---

अनंतानुबंधिनां विसंयोजकपर्यंतं असंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तेषु यथासंभवावसानमपकर्षणं स्यात्। नरकायुषोऽसंयतपर्यंतं तिर्यगायुषो देशसंयतपर्यंतं चोदीरणासत्त्वोदयकरणानि सिद्धानि ॥४४८॥

मिथ्यात्वप्रकृतेर्मिथ्यादृष्टौ उपशमसम्यक्त्वाभिमुखस्य समयाधिकावलिपर्यंतं उदीरणाकरणं स्यात्, तावत्पर्यंतमेव तदुदयात्। सूक्ष्मलोभस्य च सूक्ष्मसांपराये एव अन्यत्र तदुदयाभावात् ॥४४९॥

यत् उपशांतद्रव्यं उदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्यं यत् निधत्तिकरणद्रव्यं संक्रमणोदययोर्निक्षेप्तुमशक्यं, यत्

अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अपकर्षण करण असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्तमें यथासम्भव जहाँ विसंयोजन होता है वहाँ पर्यन्त होता है। नरकायुका असंयत पर्यन्त, तिर्यगायुका देशसंयत पर्यन्त, उदीरणा, सत्त्व और उदय करण प्रसिद्ध हैं ॥४४८॥

मिथ्यात्व प्रकृतिका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें उपशम सम्यक्त्वके सम्मुख हुए जीवके एक समय अधिक आवली काल पर्यन्त उदीरणा करण होता है क्योंकि उतने पर्यन्त ही उसका उदय है। सूक्ष्मलोभका सूक्ष्मसाम्परायमें ही उदीरणा करण है क्योंकि उससे अन्यत्र उसका उदय नहीं है ॥४४९॥

जो उदयावलीमें लाये जानेमें समर्थ नहीं है वह उपशान्तद्रव्य है, जो संक्रम और उदयमें लानेमें समर्थ नहीं है वह निधत्तिकरण द्रव्य है, और जो उदयावली, संक्रम, उत्कर्षण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षंगळ्गं कुडल्बारदें बुदत्थं अपूर्व्वकरणगुणस्थानपर्य्यंतमेयक्कुमल्लिदं मेलणगुणस्थानंगळोळु यथासंभवमागि शक्यमें बुदत्थं ॥

इंतु भगवदर्हत्परमेश्वरचारुचरणारविंदद्वंद्ववंदनानंदित पुण्यपुंजायमान श्रीमद्रायराजगुरुमंडलाचार्य्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदभयसूरि सिद्धांतचक्रवर्त्ति श्रीपादपंकजरजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्णविरचितमप्प गोम्मटसार कर्णाटवृत्तिजीवतत्वप्रदीपिकेयोळु कर्म्मकांड दशकरण तृतीयचूलिकाधिकारं व्याख्यातमादुदु ॥

निकाचितकरणद्रव्यं उदयावलिसंक्रमोत्कर्षणापकर्षणेषु निक्षेप्तुमशक्यं तत् अपूर्वकरणगुणस्थानपर्यंतमेव स्यात् । तदुपरि गुणस्थानेषु यथासंभवं शक्यमित्यर्थः ॥४५०॥

इति दशकरणचूलिका ।

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे त्रिचूलिकानामचतुर्थोऽधिकारः ॥४॥

अपकर्षणरूप होनेमें समर्थ नहीं है वह निकाचितकरण द्रव्य है। ये तीनों करण अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यन्त ही होते हैं। उससे ऊपरके गुणस्थानोंमें यथासम्भव शक्यता जानना ॥४५०॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें कर्मकाण्डके अन्तर्गत त्रिचूलिकानामक चतुर्थ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थान समुत्कीर्तनाधिकार ॥५॥

इंतु त्रिचूलिकाधिकारनिरूपणानंतरं नेमिचंद्रसैद्धांतचक्रवर्तिगळु बंधोदयसत्वयुक्तस्थानसमुत्कीर्त्तनाधिकारमं पेळलुपक्रमिसुत्तं तदादियोळु निजेष्टदेवताविशेषमं नमस्कारमं माडिदपरु :–

णमिऊण णेमिणाहं सच्चजुहिट्ठिरणमंसियंघिजुगं ।
बंधुदयसत्तजुत्तं ठाणसमुक्कित्तणं वोच्छं ॥४५१॥

नत्वा नेमिनाथं सत्ययुधिष्ठिरनमस्कृतांघ्रियुगं । बंधोदयसत्वयुक्तं स्थानसमुत्कीर्त्तनं वक्ष्यामि ।

प्रत्यक्षवंदकनप्प सत्ययुधिष्ठिरनमस्कृतांघ्रियुग्मनप्पनेमिनाथनं नमस्कारमं माडि बंधोदयसत्वयुक्तमप्प स्थानसमुत्कीर्त्तनमं पेळ्दपेनेंदिताचार्य्यनप्रतिज्ञेयक्कुं ॥ स्थानसमुत्कीर्त्तनमेनु निमित्तं बंदुदेंदोडे मुन्नं प्रकृतिसमुत्कीर्त्तनदिदमावुवु केलवु प्रकृतिगळु प्ररूपिसल्पट्टुववक्के बंधमेनु क्रमदिंदमक्कुमो मेणक्रमदिंदमक्कुमो येंदितु प्रश्नमागुत्तं विरलु ई प्रकारदिंदमक्कुमेंदितरियल्वेडियंदुदिल्लि । स्थानमेंबुदेंतेंदोडे—एकस्य जीवस्य एकस्मिन् समये संभवंतीनां प्रकृतीनां समूहः स्थानमेंदितेकजीवक्केकसमयदोळु संभविसुवंतप्प प्रकृतिगळ समूहं स्थानमेंबुदक्कु । मा स्थानसमुत्कीर्त्तनं बंधोदयसत्वभेददिदं त्रिविधमक्कुमल्लि मुन्नं गुणस्थानदोळु मूल-

एवं त्रिचूलिकाधिकारं निरूप्य श्रीमन्नेमिचन्द्रसिद्धांतचक्रवर्ती निजेष्टदेवताविशेषनमस्कारपुरस्सरमुत्तरकृत्यमिदं प्रतिजानीते—

प्रत्यक्षवंदारुसत्ययुधिष्ठिरनमस्कृतांघ्रियुगं नेमिनाथं नत्वा बंधोदयसत्त्वयुक्तं स्थानसमुत्कीर्तनं वक्ष्ये । तत्किमर्थमागतं ? पूर्वं प्रकृतिसमुत्कीर्तने याः प्रकृतयः उक्तास्तासां बंधः क्रमेणाक्रमेण वेति प्रश्ने एवं स्यादिति ज्ञापयितुं । किं स्थानं ? एकस्य जीवस्यैकस्मिन् समये संभवंतीनां प्रकृतीनां समूहः ॥४५१॥ तत्स्थानसमुत्कीर्तनं

इस प्रकार त्रिचूलिका अधिकारको कहकर श्रीमान् नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती अपने इष्टदेवको नमस्कार करके आगेके कार्य करनेकी प्रतिज्ञा करते हैं—

प्रत्यक्ष वन्दना करनेवाले सत्यवादी युधिष्ठिरके द्वारा जिनके चरणयुगल नमस्कार किये गये हैं उन नेमिनाथको नमस्कार करके बन्ध, उदय और सत्त्वसे युक्त स्थानसमुत्कीर्तनको कहूँगा ।

शंका—वह किस प्रयोजनसे कहेंगे ?

समाधान—पहले प्रकृति समुत्कीर्तन अधिकारमें जो प्रकृतियाँ कही हैं उनका बन्ध आदि क्रमसे होता है या बिना क्रमसे होता है ? ऐसा प्रश्न होनेपर इस प्रकारसे होता है यह बतलानेके लिए यह स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार कहते हैं ।

शंका—स्थान किसे कहते हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिगळ्गे बंधोदयोदीरणासत्वंगळं गाथाषट्कदिदं पेळदपरु :—

छसु सगविहमट्ठविहं कम्मं बंधंति तिसु य सत्तविहं ।
छव्विहमेक्कट्ठाणे तिसु येक्कमबंधगो एक्को ॥४५२॥

षट्सु सप्तविधमष्टविधं कर्म्म बध्नाति त्रिषु च सप्तविधं। षड्विधमेकस्थाने त्रिष्वेकमबंधक एकः ॥

मिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि देशसंयत प्रमत्तसंयता प्रमत्तसंयतरेंबारु गुणस्थानवर्त्तिगळायुर्व्वर्जितमागि सप्तमूलप्रकृतिस्थानमुमनायुष्यसहितमागष्टमूलप्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। मिश्रापूर्व्वानिवृत्तिकरणरेंब मूरुं गुणस्थानवर्त्तिगळायुर्व्वर्जितमप्पगिये सप्तमूलप्रकृतिस्थानमं कट्टुवरु। सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवर्त्तियोर्व्वनें आयुर्म्मोहवर्जितषण्मूलप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। उपशांतकषायक्षीणकषायसयोगकेवलिगळेंब मूरुं गुणस्थानवर्त्तिगळों वेदनीयमूलप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मूलप्रकृतिगळबंधकनोर्व्वनें अयोगिकेवलिगुणस्थानवर्त्तियक्कुमितष्टविधमूलप्रकृतिस्थानंगळ्गे गुणस्थानसंदृष्टि :—

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
बं	७।८	७।८	७।८	७।८	७।८	७।८	७।८	७	७	६	१	१	१	०

चत्तारि तिण्णितियचउ पयडिट्ठाणाणि मूलपयडीणं ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणि वि कमे होंति ॥४५३॥

चत्वारि त्रीणि त्रिक चतुः प्रकृतिस्थानानि मूलप्रकृतीनां। भुजाकारात्पतरावस्थिता अपि क्रमेण भवंति ॥

तावद् गुणस्थानेषु मूलप्रकृतीनां बंधोदयोदीरणसत्त्वभेदं गाथाषट्केनाह—

मिश्रवर्जिताप्रमत्तांतषड्गुणस्थानेषु विनायुः सप्तविधं तत्सहितमष्टविधं च कर्म बध्नंति। मिश्रापूर्वानिवृत्तिकरणेषु तत्सप्तविधमेव। सूक्ष्मसांपराये आयुर्मोहवर्जितं षड्विधमेव। उपशांतक्षीणकषायसयोगेष्वेकं वेदनीयमेव। अयोगे बंधो नास्ति ॥४५२॥

समाधान—एक जीवके एक समयमें जितनी प्रकृतियाँ सम्भव हैं उनके समूहका नाम स्थान है। उसका कथन इस अधिकारमें है ॥४५१॥

गुणस्थानोंमें मूल प्रकृतियोंके बन्ध, उदय, उदीरणा और सत्त्वको लिये स्थान समुत्कीर्तनको छह गाथाओंसे कहते हैं—

मिश्र गुणस्थानको छोड़कर अप्रमत्त पर्यन्त छह गुणस्थानोंमें आयु बिना सात प्रकार अथवा आयु सहित आठ प्रकारका कर्मबन्ध होता है। मिश्र, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें आयुके बिना सात प्रकारका ही कर्म बँधता है। सूक्ष्मसाम्परायमें आयु और मोहके बिना छह प्रकारका ही कर्म बँधता है। उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय और सयोगीमें एक वेदनीय कर्म ही बँधता है। अयोगीमें कर्मबन्ध नहीं होता ॥४५२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतीनां मूलप्रकृतिगळ सामान्यबंधस्थानंगळ् चत्वारि नाल्कप्पुवें तें दोडष्टविधकर्म्मबंधस्थानमों दु. सप्तविधकर्म्मबंधस्थानमों दु, षड्विधकर्म्मबंधस्थानमों दु, एकविधकर्म्मबंधस्थानमों दितु मूलप्रकृतिगळ बंधस्थानंगळु नाल्कु । संदृष्टि १ । ६ । ७ । ८ ॥ यिवावाव गुणस्थानदोळें दोडे अप्रमत्तपर्य्यंतमष्टविधबंधकरु मिश्रापूर्व्वानिवृत्तिकरणरायुर्व्वज्जितसप्तविधकर्म्मबंधकरु सूक्ष्मसांपरायनायुर्म्मोहवर्ज्जितषड्विधकर्म्मबंधकनु उपशांतकषायादित्रितयगुणस्थानवर्त्तिगळु वेदनीयमेकविधकर्म्मबंधकरु इंती नाल्कुं बंधस्थानंगळ्गे स्वामिगळप्परु। ई नाल्कुं सामान्यबंधस्थानंगळ्गुपशमश्रेण्यवतरणदोळु भुजाकारबंधस्थानंगळु मूरप्पुवु। संदृष्टि

१	६	७
६	७	८

उपर्य्युपरिगुणस्थानारोहणदोळा सामान्यचतुर्ब्बंधस्थानंगळगे अल्पतरबंधत्रिकल्पंगळु मूरप्पुवु। संदृष्टि

८	७	६
७	६	१

मत्तमा सामान्यचतुर्ब्बंधस्थानंगळ्गे स्वस्थानदोळवस्थितबंधविकल्पंगळु नाल्कप्पुवु। संदृष्टि

८	७	६	१
८	७	६	१

यिल्लियुपशांतकषायंगवतरणदोळु सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानमं पोर्द्ददे अनिवृत्यादिगुणस्थानंगळ्गनाश्रयणत्वदिदमितप्प

१	१
७	८

भुजाकारबंधमिल्ल। अप्रमत्ता-

मूलप्रकृतीनां सामान्यबंधस्थानान्यष्टप्रकृतिकं सप्तप्रकृतिकं षट्प्रकृतिकमेकप्रकृतिकमिति चत्वारि भवंति। १ । ६ । ७ । ८ । एषां च उपशमश्रेण्यवतरणे भुजाकारबंधास्त्रयः ।

१	६	७
३	७	८

उपर्युपरि गुणस्थानारोहणे अल्पतरास्त्रयः

८	७	६
७	६	१

पुनस्तेषामेव स्व-

इस प्रकार सामान्यसे मूल प्रकृतियोंके बन्ध स्थान आठ, सात, छह और एक प्रकृतिरूप चार हैं। इनमें उपशम श्रेणिसे उतरनेपर भुजकार बन्ध तीन हैं। ऊपर-ऊपर गुणस्थानोंपर आरोहण करनेपर अल्पतर बन्ध तीन हैं। पुनः उन्हींके स्वस्थानमें अवस्थित बन्ध चार हैं। इनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

उपशान्त कषायमें एकका बन्ध था। वहाँसे गिरकर सूक्ष्म साम्परायमें आया तो छहका बन्ध किया। एक भुजकार बन्ध यह हुआ। सूक्ष्मसाम्परायमें छहका बन्ध था। वहाँसे अनिवृत्तिकरणमें आया तब सातका बन्ध हुआ। एक भुजकार बन्ध यह हुआ। अपूर्वकरणमें सातका बन्ध था, नीचेके गुणस्थानमें आठका बन्ध हुआ। यह एक भुजकार बन्ध हुआ। इस प्रकार तीन भुजकार होते हैं। यथा—

१	६	७
६	७	८

तथा ऊपर-ऊपर गुणस्थान चढ़नेपर अल्पतर बन्ध तीन हैं। आठ कर्मोंको बाँधकर सातका बन्ध होनेपर एक अल्पतर होता है। सातसे छहका बन्ध होनेपर एक अल्पतर होता है। छहसे एकका बन्ध होनेपर एक अल्पतर होता है। इस प्रकार तीन अल्पतर हैं। यथा—

८	७	६
७	६	१

अपने ही स्थानमें पहले समयमें जितने कर्मोंका बन्ध होता है उतने ही कर्मोंका बन्ध आगेके समयमें होनेपर अवस्थित बन्ध होता है। वे बन्ध चार हैं—

निवृत्तिकरणग्गे साक्षादुपशांतकषायगुणस्थानारोहणक्कभावमप्पुदरिंदं ८/१ ७/१ मितप्पल्पतर-बंधविकल्पाभावमुमक्कुं। इल्लिचोदकनेंदपं। उपशांतकषायंगे मरणमागुत्तं विरलु देवासंयत-गुणप्राप्तसंभवमप्पुदरिंद १/७ १/८ मितप्प भुजाकारबंधमेंतिल्लेंदोडंतल्लेकेंदोडे अबद्धायुष्यना-दोडातंगे मरणमिल्लप्पुदरि १/७ मितप्प भुजाकारक्कभावं सिद्धमक्कुं। बद्धायुष्यंगे मरणमुंटादोडं देवासंयतंगे स्वस्थितिषण्मासावशेषमादोडल्लदायुर्ब्बंध योग्यतेयिल्लप्पुदरिंद १/८ मितप्प भुजा-कारक्कमुमभावं सिद्धमक्कुं। अल्पमं कट्टुत्तं पिरिदं कट्टिदोडे भुजाकारबंधमक्कुं। पिरिदं

स्थानेऽवस्थितबंधाश्चत्वारः

८	७	६	१
८	७	६	१

उपशांतकषायस्यावतरणे सूक्ष्मसांपरायं मुक्त्वा अनिवृत्तिकरणादौ गमनाभावादिमौ १/७ १/८ भुजाकारौ न स्तः। नाप्यप्रमत्तानिवृत्तिकरणयोः समनंतर-मेवोपशांतकषायेनारोहणादिमा ८/१ ७/१ वल्पतरौ स्तः। उपशांतकषायस्य मरणे देवासंयतगुणप्राप्तेरीदृशौ १/७ १/८ भुजाकारबंधौ कुतो नोक्तौ ? अबद्धायुष्कस्याऽमरणादस्य १/७ भावात्। बद्धायुषो मरणे देवासंयतस्य स्वस्वस्थितिषण्मासावशेषे एवायुर्बंधादस्य १/८ भावात्। अल्पं बध्वा बहु बध्नतो भुजाकारो

पहले आठ कर्मका बन्ध था पीछे भी आठका ही बन्ध होनेपर एक अवस्थित बन्ध हुआ। सातका बन्ध करके पीछे भी सातका बन्ध होनेपर एक हुआ। छहका बन्ध करके छहका बन्ध करनेपर एक हुआ। एकका बन्ध करके पीछे भी एकका बन्ध करनेपर एक हुआ। इस तरह अवस्थित बन्ध चार हुए।

८	७	६	१
८	७	६	१

उपशान्त कषायसे उतरकर सूक्ष्म साम्परायको छोड़ अनिवृत्तिकरणमें नहीं आ सकता। अतः एकका बन्ध करनेके पश्चात् सात या आठका बन्ध सम्भव नहीं है इससे ये दो भुजकार बन्ध नहीं होते। इसी प्रकार अप्रमत्त या अनिवृत्तिकरणके बीचके गुणस्थानोंको छोड़ उपशान्तकषायमें आना सम्भव नहीं है। इससे आठके पश्चात् एकका बन्धरूप और सातके पश्चात् एकके बन्धरूप ये दो अल्पतर नहीं होते।

शंका—जो उपशान्त कषायसे मरकर असंयत गुणस्थानवर्ती देव हुआ उसके एकसे सातके या आठके बन्धरूप जो भुजकार होते हैं वे क्यों नहीं कहे ?

समाधान—अबद्धायुका तो मरण होता नहीं। अतः एकसे सातके बन्धरूप भुजकार-का अभाव है। और बद्धायुका मरण होता है सो देव असंयत गुणस्थानवर्ती हुआ। वहाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कट्टुत्तं किरिदं कट्टिदोडल्पतरबंधमक्कुं । स्वस्थानदोळवस्थितबंधमक्कुं । एनुमं कट्टदे बद्दु पिरिदनागलि किरिदनागलु कट्टिदोडवक्तव्यबंधमक्कुमी मूलप्रकृतिबंधस्थानंगळोळवक्तव्यबंधभेदमिल्लेकें दोडे अवतरणदोळु वेदनीयमं आरोहणदोळु षट्कर्म्ममनुपशांतकषायनुं सूक्ष्मसांपरायनुं कट्टुत्तलुमवतरिसुगुमारोहणमं माळकुमप्पुदरिंदं ।

अट्ठुदयो सुहुमोत्ति य मोहेण विणा हु संतखीणेसु ।
घादिदठाणचउक्कस्सुदओ केवलिदुगे णियमा ॥४५४॥

अष्टोदयः सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं च मोहेन विना खलूपशांतक्षीणकषाययोर्घातीतराणां चतुष्कस्योदयः केवलिद्वये नियमात् ॥

सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानपर्य्यंतमष्टमूलप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । उपशांतकषायक्षीणकषायरुगळोळु मोहवर्ज्जितसप्तमूलप्रकृतिस्थानोदयमक्कु । मघातिचतुष्कोदयं सयोगायोगिकेवलिद्वयदोळक्कुं नियमदिदं । संदृष्टि :—

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
उ	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	७	७	४	४

घादीणं छदुमट्ठा उदीरगा रागिणो य मोहस्स ।
तदिआऊण पमत्ता जोगंता होंति दोण्हंपि ॥४५५॥

घातीनां छद्मस्थाः उदीरकाः रागिणश्च मोहस्य । तृतीयायुषोः प्रमत्ता योग्यंताः भवंति द्वयोरपि ॥

बंधः । बहु बध्नाल्पं बध्नतोऽल्पतरः । अल्पं बहु वा बध्वानंतरसमये तावदेव बध्नतोऽवस्थितः । किमप्यबध्वा पुनर्बध्नतोऽवक्तव्यः, नायं भेदो मूलप्रकृतिबंधस्थानेष्वस्ति ॥४५३॥

सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमष्टमूलप्रकृतीनामुदयः, उपशांतक्षीणकषाययोर्मोहेन विना सप्तानामेवोदयः । सयोगायोगयोरघातिनामेव चतुर्णामुदयो नियमेन ॥४५४॥

अपनी देवायुमें छह महीना शेष रहनेपर ही आयुका बन्ध होता। अतः एकसे आठके बन्धरूप भुजकार नहीं होता।

पहले थोड़ी प्रकृतियोंको बाँधकर पीछे बहुत प्रकृतियोंको बाँधनेका नाम भुजकार बन्ध है। पहले बहुत प्रकृतियोंको बाँध पीछे थोड़ीको बाँधनेका नाम अल्पतर है। पहले जितनी प्रकृति बाँधी हो उतनी ही पीछे अनन्तर समयमें बाँधनेको अवस्थित बन्ध कहते हैं। और कुछ भी न बाँधकर पीछे बाँधनेको अवक्तव्य बन्ध कहते हैं। यह अवक्तव्य बन्ध मूलकर्मोंमें सम्भव नहीं है, उत्तर प्रकृतियोंमें ही सम्भव है। यह इन चारों बन्धोंका स्वरूप है ॥४५३॥

सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त आठों मूल प्रकृतियोंका उदय रहता है। उपशान्तकषाय क्षीणकषायमें मोहके बिना सातका ही उदय रहता है। सयोगी और अयोगीमें चार अघाति कर्मोंका ही उदय नियमसे है ॥४५४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घातिकर्म्मंगळु नाल्कक्कं मिथ्यादृष्ट्याादि क्षीणकषायावसानमाद छद्मस्थरुगळुदीरकर्प्परु। तत्रापि सूक्ष्मसांपरायावसानमाद रागिगळनिबरुं मोहनीयक्कुदीरकरप्परु। वेदनीयायुष्यंगळगे प्रमत्तसंयतावसानमादप्रमादिगळुदीरकरप्परु। नामगोत्रंगळगे सयोगकेवलिपर्य्यंतमाद गुणस्थानवर्त्तिगळुदीरकप्परु॥

मिस्सूणपमत्तंते आउस्सद्धा हु सुहुमखीणाणं।
आवलिसिट्ठे कमसो सगपणदोच्चे उदीरणा होंति ॥४५६॥

मिश्रोनप्रमत्तांते आयुषोद्धा खलु सूक्ष्मक्षीणकषाययोरावलिशिष्टे क्रमशस्सप्तपंचद्विके उदीरणा भवंति॥

मिश्रं पोरगागि प्रमत्तसंयतगुणस्थानावसानमाद गुणस्थानपंचकदोळु आयुःकर्म्माद्धें आवलिमात्रावशेषमागुत्तं विरलु सूक्ष्मसांपरायंगं क्षीणकषायंगं स्वस्वगुणस्थानकालमावलिमात्रावशेषमागुत्तं विरलु मितु मूरेडयोळं क्रमदिदमायुर्व्वज्जितसप्तकर्म्मंगळगमायुर्व्वेदनीयमोहनीयवज्जितपंचकर्म्मंगळगमायुर्व्वेदनीयमोहनीयज्ञानदर्शनावरणीयांतरायमेंब षट्कर्म्मंगळवर्जितमागि नामगोत्रंगळेरडे कर्म्मंगळगं उदीरकरप्परु। सम्यग्मिथ्यादृष्टिगायुष्यकर्म्मंमुदीरितशेषमुच्छिष्टावलिमात्रावशेषमागुत्तं विरलु नियमदिदं गुणस्थानांतरमं पोर्द्दि मृतनप्पनक्कुमप्पुदरिंदमातंगे सप्तकर्म्मोदीरकत्वमिल्ल। संदृष्टि—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
८।७	८।७	८	८।७	८।७	८।७	६	६	६	६।५	५	५।२	२	०

घातिकर्मणां चतुर्णां क्षीणकषायांताश्छद्मस्था एवोदीरका भवंति। तत्रापि मोहनीयस्य सूक्ष्मसांपरायांता रागिण एव। वेदनीयायुषोः प्रमत्तांताः प्रमादिन एव। नामगोत्रयोः सयोगपर्यंता एव ॥४५५॥

सम्यग्मिथ्यादृष्टेरायुष्यावलिमात्रेऽवशिष्टे सति नियमेन गुणस्थानांतराश्रयणात्तं विना प्रमत्तांतपंचानामायुषि आवलिमात्रेऽवशिष्टे सति तथा सूक्ष्मसांपरायक्षीणकषाययोः कालेऽपि तावत्यवशिष्टे सति क्रमेणायुर्वजितसप्तायुर्मोहवेदनीयवर्जितपंचनामगोत्रद्वयानामेवोदीरका भवंति ॥४५६॥

चार घातिकर्मोंकी उदीरणा क्षीणकषाय पर्यन्त छद्मस्थ ही करते हैं। उनमें भी मोहनीय और आयुकी उदीरणा प्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त प्रमादी जीव ही करते हैं। नाम और गोत्रकी उदीरणा सयोगी पर्यन्त होती है ॥४५५॥

सम्यग्मिथ्यादृष्टि आयुमें आवली मात्र काल शेष रहनेपर नियमसे मिश्र गुणस्थानसे अन्य गुणस्थानमें चला जाता है। अतः मिश्रगुणस्थानके बिना प्रमत्त पर्यन्त पाँच गुणस्थानोंमें आयुमें आवलीमात्र काल शेष रहनेपर आयुको छोड़ सात कर्मोंकी उदीरणा होती है। सूक्ष्मसाम्परायमें उतना ही काल शेष रहनेपर आयु मोहनीय और वेदनीयके बिना पाँचकी उदीरणा होती है। क्षीणकषायमें उतना ही काल शेष रहनेपर नाम और गोत्रकी उदीरणा होती है ॥४५६॥

१. आयुःकर्म्माद्धे आवलिमात्रावशेषमादलिं आयुर्व्वज्जितसप्तप्रकृतिगळगे उदीरणे हिंदे अष्टकर्म्मगळगे उदीरणे मुंदेयुमिते योग्यवागि योजिसिकोबुदु।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संतोत्ति अट्ठसत्ता खीणे सत्तेव होंति सत्ताणि ।
जोगिम्मि अजोगिम्मि य चत्तारि हवंति सत्ताइं ॥४५७॥

शांतपर्य्यंतमष्टसत्त्वानि क्षीणकषाये सप्तैव भवंति सत्त्वानि । योगिन्ययोगिनि च चत्वारि भवंति सत्त्वानि ॥

उपशांतकषायपर्य्यंतमष्टमूलप्रकृतिसत्वमक्कुं । क्षीणकषायनोळु मोहनीयवर्जितसप्तकर्म्मसत्वमक्कुं । सयोगकेवलिभट्टारकनोळुमयोगिकेवलिभट्टारकनोळमघातिकर्म्मंगळु नाल्कुं सत्वमक्कुं । संदृष्टि :—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
सत्व ८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	७	४	४

अनंतरमुत्तरप्रकृतिगळ्गे बंधोदयसत्वस्थानंगळं पेळ्दपरल्लि भुजाकारबंधसंभवस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

तिण्णि दस अट्ठठाणाणि दंसणावरणमोहणामाणं ।
एत्थेव य भुजगारा सेसेसेयं हवे ठाणं ॥४५८॥

त्रीणि दशाष्टस्थानानि दर्शनावरणमोहनाम्नां । अत्रैव च भुजाकाराः शेषेष्वेकं भवेत्स्थानं ॥

दर्शनावरणीयमोहनीयनामकर्म्मंगळें बी मूरुं मूलप्रकृतिगळ उत्तरप्रकृतिगळोळु यथाक्रमदिंदं मूरुं पत्तुमेंटुं बंधस्थानंगळप्पुवल्लियें भुजाकारबंधविकल्पंगळु संभविसुववु । शेषज्ञानावरणीयपंचकक्कं वेदनीयद्वयान्तरक्कं चतुर्विधायुरन्यतमक्कं गोत्रद्वयान्यतरक्कं अंतरायपंचक्कं ओंदोंदे स्थानमप्पुदरिंदं । भुजाकारबंधमिवरोळु संभविसदु । संदृष्टि :

	णा	दं	वे	मो	आ	ना	गो	अ
	५	९	२	२६	४	९३	२	५
स्थान	१	३	१	१०	१	८	१	१

उपशांतकषायपर्यंतमष्टौ मूलप्रकृतयः सत्त्वं भवंति । क्षीणकषाये मोहं विना सप्तैव सत्त्वं भवंति । सयोगायोगयोरघातिचतुष्टयमेव सत्त्वं भवति ॥४५७॥ अथोत्तरप्रकृतीनां तत्समुत्कीर्तनमाह—

दर्शनावरणमोहनामकर्मणां बंधस्थानानि क्रमशः त्रीणि दशाष्टौ भवंति । तेन भुजाकारबंधा अप्येष्वेव नान्येषु । शेषेषु मध्ये ज्ञानावरणेऽन्तराये च पंचात्मकं । गोत्रायुर्वेदनीयेष्वेकात्मकं चैकैकमेव बंधस्थानं भवेदिति कारणात् ॥४५८॥

उपशान्त कषाय पर्यन्त आठों मूल प्रकृतियोंकी सत्ता है । क्षीणकषायमें मोहके बिना सातका ही सत्त्व है । सयोगी और अयोगीमें चार अघातिकर्मोंका ही सत्त्व है ॥४५७॥

आगे उत्तर प्रकृतियोंमें स्थानोंका कथन करते हैं—

दर्शनावरण, मोह और नाम कर्मके बन्धस्थान क्रमसे तीन, दस और आठ होते हैं । इससे भुजकार बन्ध भी इन्हींमें होते हैं, अन्यमें नहीं होते, क्योंकि शेषमें-से ज्ञानावरण और अन्तरायमें तो पाँच प्रकृतिरूप एक ही बन्ध स्थान है । गोत्र, आयु और वेदनीयमें एक प्रकृतिरूप एक-एक ही बन्ध स्थान है । इससे इनमें भुजकार बन्ध सम्भव नहीं हैं ॥४५८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं दर्शनावरणीयभुजाकारबंधं संभविसुव स्थानंगळगे प्रकृतिसंख्येयं पेळ्दपरु :—

णव छक्क चउक्कं च य विदियावरणस्स बंधठाणाणि ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य जाणाहि ॥४५९॥

नवषट्कचतुष्कं च च द्वितीयावरणस्य बंधस्थानानि । भुजाकारात्पतराश्चावस्थिता अपि च जानीहि ॥

नवषट्कचतुष्कप्रकृतिस्थानत्रयं द्वितीयावरणप्रकृतिबंधस्थानंगळप्पुवल्लि दर्शनावरणसर्व्वोत्तर प्रकृतिगळों भत्तक्कमों दु स्थानमक्कुमवरोळु स्त्यानगृद्धित्रयरहितमागि षट्प्रकृतिगळों दु स्थानमक्कुमवरोळु निद्राप्रचलोनचतुष्प्रकृतिगळगों दु स्थानमक्कुमिती मूरुं स्थानंगळगे भुजाकार-

दर्शनावरणस्य बंधस्थानानि नवप्रकृतिकं, स्त्यानगृद्धित्रयेण विना षट्प्रकृतिकं, पुनर्निद्राप्रचले विना चतुःप्रकृतिकं चेति त्रीणि । तेषां भुजाकारात्पतरावस्थितबंधाः, अपिशब्दादवक्तव्यबंधो च स्युरिति जानीहि । तद्यथा—

उपशमश्रेण्यवरोहकोऽपूर्वकरणद्वितीयभागे चतुःप्रकृतिकं बध्वा तत्प्रथमभागेऽवतीर्णः षट्प्रकृतिकं बध्नाति । प्रमत्तो देशसंयतोऽसंयतो मिश्रो वा षट्प्रकृतिकं बध्नन्मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा वा प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिः सासादनो भूत्वा नवप्रकृतिकं बध्नाति इति भुजाकारौ द्वौ स्तः । प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखो मिथ्यादृष्टिरनिवृत्तिकरणचरमसमये नवप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमयेऽसंयतो देशसंयतोऽप्रमत्तो वा भूत्वा षट्प्रकृतिकं बध्नाति । तथा तत उपशमकः क्षपको वाऽपूर्वकरणप्रथमभागचरमसमये षट्प्रकृतिकं बध्नन् द्वितीयभागप्रथमसमये चतुःप्रकृतिकं बध्नातीत्यल्पतरौ द्वौ भवतः । मिथ्यादृष्टिः सासादनो वा नवप्रकृतिकं मिश्राद्यपूर्वकरणप्रथमभागांतःषट्प्रकृतिकं अपूर्वकरणद्वितीयभागादिसूक्ष्मसांपरायांतः चतुःप्रकृतिकं च बध्नन् अनंतरसमये तदेव

दर्शनावरणके बन्धस्थान नौ प्रकृतिरूप, स्त्यानगृद्धि आदि तीनके बिना छह प्रकृतिरूप, निद्रा प्रचलाके बिना चार प्रकृतिरूप इस प्रकार तीन ही होते हैं। उनमें भुजकार बन्ध, अल्पतर बन्ध, अवस्थित बन्ध और अपि शब्दसे अवक्तव्यबन्ध होते हैं। वे इस प्रकार हैं—

उपशम श्रेणिसे उतरनेवाला अपूर्वकरणके दूसरे भागमें दर्शनावरणकी चार प्रकृतियोंका बन्ध करके पुनः उसीके प्रथम भागमें उतरनेपर छह प्रकृतियोंका बन्ध करता है। यह एक भुजकार हुआ। प्रमत्त, देशसंयत, असंयत अथवा मिश्र गुणस्थानवर्ती छह प्रकृतियोंका बन्ध करके मिथ्यादृष्टि होकर अथवा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी सासादन गुणस्थानमें आकर नौ प्रकृतियोंका बन्ध करता है। इस प्रकार दो भुजकार होते हैं। प्रथमोपशम सम्यक्त्वके अभिमुख मिथ्यादृष्टि अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके अन्तिम समयमें नौ प्रकृतिरूप स्थानका बन्ध करके अन्तर समयमें असंयत, देशसंयत, अथवा अप्रमत्त होकर छह प्रकृतिरूप स्थानका बन्ध करता है। यह एक अल्पतर हुआ। उपशमक अथवा क्षपक अपूर्वकरणके प्रथम भागके अन्तिम समयमें छह प्रकृतिरूप स्थानका बन्ध करके दूसरे भागके प्रथम समयमें चार प्रकृतिरूप स्थानका बन्ध करता है। एक अल्पतर यह हुआ। इस तरह दो अल्पतर बन्ध होते हैं।

मिथ्यादृष्टि अथवा सासादन नौ प्रकृतिरूप स्थानको बाँधकर मिश्रसे लेकर अपूर्वकरणके प्रथम भाग पर्यन्त छह प्रकृतिरूप स्थानको बाँधकर तथा अपूर्वकरणके दूसरे भागसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधंगळेरडुमल्पतर बंधंगळेरडुमवस्थितबंधंगळु मूरुमवक्तव्यबंधंगळेरडुमपि शब्ददिंदरियल्पडुवुवु। जानीहि एंदितु शिष्यं संबोधिसल्पट्टनु।

अनंतरं दर्शनावरणीयस्थानत्रयक्के बंधस्वामिगळं गुणस्थानदोळु पेळ्दपरु :—

णव सासणोत्ति बंधो छच्चेव अपुव्वपढमभागोत्ति ।
चत्तारि होंति तत्तो सुहुमकसायस्स चरिमोत्ति ॥४६०॥

नव सासादनपर्य्यंतं बंधाः षट्चैवापूर्व्व प्रथमभागपर्य्यंतं। चतस्रो भवंति ततः सूक्ष्मकषायस्य चरमपर्य्यंतं ॥

नवप्रकृतिकस्थानं सासादनपर्य्यंतं बंधमक्कुं। षट्प्रकृतिकस्थानमपूर्व्वकरण प्रथमभागपर्य्यंतं बंधमक्कुं। चतुःप्रकृतिकस्थानं सूक्ष्मसांपराय चरमसमयपर्य्यंतं बंधमक्कुं। संदृष्टिः—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
९।९	९	६	६	६	६	६	६।४	४	४	०	०	०	०

यिल्लि भुजाकाराल्पतरावस्थितावक्तव्यबंधविशेषं पेळल्पडुगुमें तेंदोडे उपशमश्रेण्यारोहकनप्प सूक्ष्मकषायनुपशांतकषायगुणस्थानमं पोद्दि तद्गुणस्थानकालमंतर्म्मुहूर्तपर्य्यंतमिद्दुं उपशमश्रेण्यवतरणदोळु सूक्ष्मसांपरायनागि तद्गुणस्थानप्रथमसमयं मोदल्गोंडु क्रमदिंदमिळिदु अपूर्व्वकरणषष्ठभागचरमसमयपर्य्यंतं चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं अपूर्व्वकरणावतरण सप्तमभाग प्रथमसमयदोळु निद्राप्रचलासहितमागि षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टिददोडल्लि भुजाकारबंधविकल्पमोंदक्कु। मत्तं प्रमत्तनागलु देशसंयतनागलुमसंयतनागळु मिश्रनागलु षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तमिद्दु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोद्दि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टिददोडिदोंदु भुजाकारबंधविकल्पमक्कु—मथवा प्रथमो-

बध्नातीत्यवस्थितबंधास्त्रयो भवंति। उपशांतकषायः दर्शनावरणं किमप्यबध्नन् अवतरणे सूक्ष्मकषायप्रथमसमये चतुःप्रकृतिकं वा यदि बद्धायुष्को म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा षट्प्रकृतिकं च बध्नातीत्यवक्तव्यबंधौ द्वौ भवतः ॥४५९॥ इममुक्तार्थं द्योतयति—

नवप्रकृतिकं सासादनपर्यंतमेव बध्नाति। उपर्यपूर्वकरणप्रथमभागपर्यंतं षट्प्रकृतिमेव। तत उपरि

लेकर सूक्ष्मसाम्पराय पर्यन्त चार प्रकृतिरूप स्थानको बाँधकर अन्तर समयमें उतनी ही अर्थात् नौ, छह और चारको बाँधता है। इस तरह अवस्थितबन्ध तीन होते हैं।

उपशान्तकषाय दर्शनावरणका किंचित् भी बन्ध न करके उतरनेपर सूक्ष्म साम्परायके प्रथम समयमें चार प्रकृतिरूप स्थानको बाँधता है। अथवा बद्धायु अवस्थामें मरकर असंयत गुणस्थानवर्ती देव होकर छह प्रकृतिरूप स्थानको बाँधता है, इस प्रकार दो अवक्तव्य बन्ध होते हैं ॥४५९॥

इसी कहे अर्थको प्रकट करते हैं—

दर्शनावरणके नौ प्रकृतिरूप स्थानको सासादन पर्यन्त ही बाँधता है। ऊपर अपूर्व-

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

पशमसम्यग्दृष्टिगळु मेणु सासादनगुणस्थानमं पोद्दिदोडल्लियु ६/९ मितप्प भुजाकारबंधविकल्पसंभवमक्कुं। मितु भुजाकारबंधविकल्पंगळेरडप्पुवु। २। अल्पतरबंधविकल्पंगळुं दर्शनावरणदोळेरडप्पुवेंतेंदोडे प्रथमोपशम सम्यक्त्वाभिमुखनप्प मिथ्यादृष्टिकरणत्रयमं माडियनिवृत्तिकरणकालमंतर्मुहूर्त्त चरमसमयदोळु नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनंतरसमयदोळु असंयतदेशसंयताप्रमत्तगुणस्थानत्रयदोळन्यतमगुणस्थानममोंदं पोद्दि षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडल्लियोंदल्पतरबंधविकल्पमक्कु–। मुपशमश्रेणियोळागलु क्षपकश्रेणियोळागलपूर्व्वकरण गुणस्थान प्रथमभागचरमसमयदोळु षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनंतरसमयदोळु तन्न श्रेण्यारोहण द्वितीयभागप्रथमसमयदोळु निद्राप्रचलोन चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडल्लियुमोंदल्पतरबंधविकल्पमक्कुमितल्पतर बंधविकल्पंगळु मेरडप्पुवु। २॥ अवस्थितबंधविकल्पंगळु मूरप्पुवेंतेंदोडे मिथ्यादृष्टियुं सासादननुं स्वस्थानंगळोळु नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्प्परल्लियोंदवस्थितबंधविकल्पमक्कुं। मिश्रासंयत देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणप्रथमभागवर्तिगळिवर्गळु स्वस्थानदोळु षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं षट्प्रकृतिस्थानमने कट्टुत्तिरलिदोंदु अवस्थितबंधमक्कु–। मपूर्व्वकरणं तन्न द्वितीयतृतीयचतुर्त्थपंचमषष्ठसप्तमभागंगळोळमनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवर्त्तिगळु स्वस्थानदोळु चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टि चतुःप्रकृतिस्थानमने कट्टुत्तिर्दोडिदोंदवस्थितबंधविकल्पमक्कुमितवस्थितबंधविकल्पंगळु मूरप्पुवु। ३॥ अवक्तव्यबंधविकल्पंगळेरडप्पुवेंतेंदोडे अबंधकबंधोऽवक्तव्यबंधः एंदितवक्तव्यबंधलक्षणमप्पुदरिंदमुपशांतकषायं दर्शनावरणमनेनुमं कट्टदे बंदु अवतरणदिं सूक्ष्मकषायनागि तद्गुणस्थानप्रथमसमयदोळु चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदवक्तव्यबंधभेदमक्कुं मत्तमुपशांतकषायगुणस्थानवर्तिबद्धायुष्यं दर्शनावरणमनेनुमं कट्टदे मरणमादोडे देवासंयतनागि षट्प्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदों दवक्तव्यबंधभेदमक्कुमितेरडवक्तव्यबंधविकल्पंगळप्पुवु। २॥ इवक्के यथाक्रमदिदं संदृष्टि :—

दर्शनावरणस्थानंगळु मूरु ९। ६। ४। इवक्के भुजाकारबंधंगळेरडु |४|६| / |६|९| अल्पतरबंधंगळेरडु |९|६| / |६|४| अवस्थितबंधंगळु मूरु |९|६|४| / |९|६|४| अवक्तव्यबंधंगळेरडु |०|०| / |४|६|

उपशमश्रेण्यवतरणदोळं मिश्रासंयत देशसंयत प्रमत्तसंयतरुगळु सासादनगुणस्थानमुमं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं मेणु पोद्दिदोडं भुजाकारबंधमप्पुवु। उपर्य्युपरि गुणस्थानारोहणदोळल्पतरबंधमप्पुवु। स्वस्थानदोळवस्थितबंधमप्पुवुपशमश्रेण्यवतरणदोळं मरणदोळमवक्तव्यबंधंगळप्पुवेंदरिदु बंध संभवासंभव प्रकारंगळनुक्तप्रकारदिंदं विचारमं माडि मुंदेयुं मोहादिगळोळु निश्चयिसुवुदु॥

सूक्ष्मसांपरायचरमसमयपर्यंतं चतुःप्रकृतिकमेव ॥४६०॥

करणके प्रथम भाग पर्यन्त छह प्रकृतिरूप स्थानको ही बाँधता है। उससे ऊपर सूक्ष्म साम्परायके अन्तिम समय पर्यन्त चार प्रकृतिरूप स्थानको ही बाँधता है ॥४६०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं दर्शनावरणोदयस्थानमं गुणस्थानदोळु पेळदपरु :—

खीणोत्ति चारि उदया पंचसु णिद्दासु दोसु णिद्दासु ।
एक्के उदयं पत्ते खीणदुचरिमोत्ति पंचुदया ॥४६१॥

क्षीणकषायपर्य्यंतं चतुरुदयाः पंचसु निद्रासु द्वयोर्न्निद्रयोरेकस्मिन्नुदयं प्राप्ते क्षीणकषायद्विचरमपर्य्यंतं पंचोदयाः ॥

मिथ्यादृष्टयादियागि क्षीणकषायचरमसमयपर्य्यंतं चक्षरचक्षुरवधिकेवलदर्शनावरणीयमें ब-चतुःप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । सनिद्ररोळु स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्राप्रचलाप्रचला निद्रा प्रचलेगळें ब पंचनिद्राप्रकृतिगळोळेकप्रकृत्युदयमनेय्दुत्तं विरलु प्रमत्तगुणस्थानपर्य्यंतं दर्शनावरणप्रकृतिपंचकमुदयस्थानमक्कुमल्लि स्त्यानगृद्धित्रयोदयव्युच्छित्तियागुत्तं विरलु अप्रमत्तादि क्षीणकषायाद्विचरमसमयपर्य्यंतं निद्राप्रचलाद्वयदोळों दुदयमनेय्दुत्तं विरलुमय्दुं दर्शनावरणप्रकृत्युदयस्थानमक्कुमल्लि निद्राप्रचलोदयव्युच्छित्तियागुत्तं विरलु तत् क्षीणकषायचरमसमयदोळु निद्रारहितचतुःप्रकृत्युदयस्थानमक्कुमल्लिये तच्चतुःप्रकृतिगळुदयव्युच्छित्तियप्पुदरिंदं सयोगायोगिकेवलिगुणस्थानद्वयदोळु दर्शनावरणोदयस्थान शून्यमक्कुं । संदृष्टि :—

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
अनिद्रा	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	०	०
सनिद्रा	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५।४	०	०

अनंतरं दर्शनावरणप्रकृतिस्थानमं गुणस्थानदोळु पेळदपरु ।

मिच्छादुवसंतोत्तिय अणियट्टीखवगपढमभागोत्ति ।
णवसत्ता खीणस्स दुचरिमोत्ति य छच्चदू चरिमे ॥४६२॥

मिथ्यादृष्टिरुपशांतपर्य्यंतं चानिवृत्तिक्षपकप्रथमभागपर्य्यंतं । नव सत्वानि क्षीणकषायस्य द्विचरमसमयपर्य्यंतं च षट्चत्वारि चरमे ॥

दर्शनावरणस्योदयस्थानं जाग्रज्जीवे मिथ्यादृष्टयादिक्षीणकषायचरमसमयपर्यंतं चक्षुर्दर्शनावरणादिचतुरात्मकमेव, निद्रिते तु प्रमत्तपर्यंतं स्त्यानगृद्धयादिपंचस्वेकस्यां उपरि क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्यंतं निद्राप्रचलयोरेकस्यां चोदितायां पंचात्मकमेव । उपरि दर्शनावरणोदयो नास्ति ॥४६१॥

दर्शनावरणका उदयस्थान जाग्रत् जीवमें मिथ्यादृष्टिसे क्षीणकषायके अन्तिम समय पर्यन्त चक्षु दर्शनावरण आदि चार प्रकृतिरूप ही होता है। निद्रित जीवमें प्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त स्त्यानगृद्धि आदि पाँचमें-से एकका उदय रहते और ऊपर क्षीणकषायके द्विचरम समय पर्यन्त निद्रा और प्रचलामें-से एकका उदय रहते पाँच प्रकृतिरूप ही होता है। उससे ऊपर दर्शनावरणका उदय नहीं है ॥४६१॥

---

१. चक्षुरादिचतुष्कदोळु स्त्यानगृध्यादिपंचकदोंदं कूडुत्तं विरलु प्रमत्तपर्य्यंतं पंचप्रकृत्युदयं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टिमोदलगोंडुपशांतकषायगुणस्थानपर्य्यंतंमनिवृत्तिक्षपकन प्रथमभागपर्य्यंतमुं नवदर्शनावरणप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमा क्षपकानिवृत्तिप्रथमभागदोळु स्त्यानगृद्धित्रयं किडिसल्पट्टुदप्पुदरिंदल्लिदत्तलु क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्य्यंतं दर्शनावरणषट्प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमा क्षीणकषाय द्विचरमसमयदोळु निद्राप्रचलाद्वयं किडिसल्पट्टुदरिना क्षीणकषायचरमसमयदोळु दर्शनावरणचतुःप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमा क्षीणकषायचरमसमयदोळा दर्शनावरणचतुष्कं किडिसल्पट्टुदप्पुदरिंदं सयोगायोगिकेवलिद्वयदोळु दर्शनावरणसत्वं शून्यमक्कुं। संदृष्टि :—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
९	९	९	९	९	९	९	९	उ।क्ष	उ।क्ष	९	६।४	०	०
								९।६	९।६				

अनंतरं मोहनीयबंधस्थानंगळगे प्रकृतिसंख्येयं पेळदपरु।

बावीसमेक्कवीसं सत्तारस तेरसेव णव पंच।
चदु तिय दुगं च एक्कं बंधट्ठाणाणि मोहस्स ॥४६३॥

द्वाविंशतिरेकविंशतिः सप्तदश त्रयोदशैव नव पंच। चतुस्त्रिकद्विकं चैकं बंधस्थानानि मोहस्य॥

द्वाविंशत्येकविंशति सप्तदशत्रयोदश नव पंच चतुः त्रि द्वि एकप्रकृतिसंख्यास्थानंगळितु मोहनीयक्के दशस्थानंगळप्पुवु। ई पत्तुं बंधस्थानंगळगे संदृष्टि :—२२। २१। १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १॥

दर्शनावरणीयस्य गुणस्थानेषु सत्वस्थानं मिथ्यादृष्टयाद्युपशांतकषायपर्यंतं क्षपकानिवृत्तिप्रथमभागपर्यंतं च नवात्मकमेव। उपरि क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्यंतं षडात्मकमेव स्त्यानगृद्धित्रयस्य तत्प्रथमभागे एव विनष्टत्वात्, तच्चरमसमये चतुरात्मकमेव, निद्राप्रचलयोर्द्विचरमे एव क्षपितत्वात्। सयोगायोगयोः शून्यं॥४६२॥

मोहस्य बंधस्थानानि द्वाविंशतिकं एकविंशतिकं सप्तदशकं त्रयोदशकं नवकं पंचकं चतुष्कं त्रिकं द्विकमेककं चेति दश॥४६३॥

गुणस्थानोंमें दर्शनावरणीयका सत्त्वस्थान मिथ्यादृष्टिसे लेकर उपशान्त कषाय पर्यन्त और क्षपकश्रेणिमें अनिवृत्तिकरणके प्रथम भाग पर्यन्त नौ प्रकृतिरूप ही है। ऊपर क्षीणकषायके द्विचरम समय पर्यन्त छह प्रकृतिरूप ही है; क्योंकि स्त्यानगृद्धि आदि तीन अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागमें ही नष्ट हो जाती हैं। क्षीणकषायके अन्तिम समयमें चार प्रकृतिरूप ही हैं, क्योंकि निद्रा और प्रचलाका क्षय द्विचरम समयमें ही हो जाता है। सयोगी और अयोगीमें दर्शनावरणका सत्त्व नहीं है॥४६२॥

मोहनीय कर्मके बन्धस्थान बाईस, इक्कीस, सतरह, तेरह, नौ, पाँच, चार, तीन, दो और एक प्रकृतिरूप दस हैं॥४६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई मोहनीय दशबंधस्थानंगळगे स्वामिगळं गुणस्थानदोळु पेळदपरु :—

बावीसमेक्कवीसं सत्तर सत्तार तेर तिसु णवयं ।
थूले पणचदु तियदुगमेक्कं मोहस्स ठाणाणि ॥४६४॥

द्वाविंशतिरेकविंशतिः सप्तदश सप्तदश त्रयोदशैव त्रिषु नवकं । स्थूले पंचचतुस्त्रिकद्विकैकं मोहस्य स्थानानि ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि अपूर्व्वकरणपर्य्यंतं मोहनीयबंधस्थानंगळु क्रमदिदं द्वाविंशति, एकविंशति, सप्तदश, सप्तदश, त्रयोदश नव नव नवंगळु । मनिवृत्तिकरणनोळु पंचचतुः त्रि द्वि एक प्रकृतिस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि :—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
२२	२१	१७	१७	१३	९	९	९	५।४।३।२।१	०	०	०	०	०

अनंतरमुक्तस्थानप्रकृतिगळोळु ध्रुवबंधिगळ संख्येयं पेळदपरु :—

उगुवीसं अट्ठारस चोद्दस चोद्दस य दस य तिसु छक्कं ।
थूले चदु तिदुगेक्कं मोहस्स य होंति धुवबंधी ॥४६५॥

एकान्नविंशत्यष्टादश चतुर्द्दश चतुर्द्दश दश त्रिषु षट्कं स्थूले चतुस्त्रिद्व्येकं मोहस्य भवंति ध्रुवबंधिन्यः ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि अनिवृत्तिकरण भागभागेगळु पर्य्यंतमुक्त द्वाविंशत्यादि प्रकृतिस्थानंगळोळु मोहनीयध्रुवबंधि प्रकृतिगळ संख्ये यथाक्रमदिदं एकान्नविंशति अष्टादश चतुर्द्दश चतुर्द्दशदश षट् षट् षट् चतुःत्रि द्वि एकंगळप्पुवु । संदृष्टि :

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ			
१९	१८	१४	१४	१०	६	६	६	४	३	२	१

मोहनीयबंधस्थानानि गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ द्वाविंशतिकं । सासादने एकविंशतिकं । मिश्रासंयतयोः सप्तदशकं । देशसंयते त्रयोदशकं । प्रमत्तादित्रये प्रत्येकं नवकं । अनिवृत्तिकरणे पंचकं चतुष्कं द्विकमेककं च ॥४६४॥

मिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणभागांतमुक्तस्थानेषु क्रमेण मोहनीयस्य ध्रुवबंधान्येकान्नविंशतिरष्टादश चतुर्दश चतुर्दश दश षट् षट् षट् चत्वारि त्रीणि द्वे एकं भवंति ॥४६५॥

इनमें-से मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें तो बाईस प्रकृतिरूप स्थान है। सासादनमें इक्कीस प्रकृतिरूप स्थान है। मिश्र और असंयत गुणस्थानमें सतरह प्रकृतिरूप स्थान है। देशसंयतमें तेरह प्रकृतिरूप स्थान है। प्रमत्त आदि तीनमें-से प्रत्येकमें नौ प्रकृतिरूप स्थान है। अनिवृत्तिकरणमें पाँच, चार, तीन, दो और एक प्रकृतिरूप पाँच स्थान हैं ॥४६४॥

मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरणके भाग पर्यन्त जो स्थान कहे हैं उन स्थानोंमें क्रमसे उन्नीस, अठारह, चौदह, चौदह, दस, छह, छह, छह, चार, तीन, दो एक तो मोहनीयकी ध्रुवबन्धी प्रकृतियाँ हैं। जिनका बन्ध अवश्य होता है उन्हें ध्रुवबन्धी कहते हैं ॥४६५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई ध्रुवबंधिगळोडनध्रुवबंधिगळं कूडुत्तं विरलु गुणस्थानदोळु पूर्व्वोक्तमोहनीयस्थानप्रकृतिगळुमवर भंगंगळुमप्पुवेंदु पेळ्दपरु :—

सगसंभवधुवबंधे वेदेक्के दोजुगाणमेक्के य ।
ठाणा वेदजुगाणं भंगहदे होंति तब्भंगा ॥४६६॥

स्वसंभवध्रुवबंधे वेदैकस्मिन्द्वियुगलयोरेकस्मिंश्च स्थानानि वेदयुगलानां भंगहते भवंति तद्भंगाः ॥

आ गुणस्थानंगळोळु पेळ्द स्वसंभवध्रुवबंधिप्रकृतिसंख्येगळोळु स्वयोग्यवेदमनोंदं हास्यारतियुगळद्वयदोळोंदु युगळमुमं कूडुत्तं विरलु स्थानप्रकृतिसंख्याप्रमाणमुं स्वसंभववेदसंख्येयं स्वसंभवयुगळसंख्येयिदं गुणिसुत्तं विरलु स्वस्वस्थानदोळु भंगंगळुमप्पुवेंतेंदोडे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु मोहनीयबंधकूटमिदो

भ २
हा २ । २ अ
। १ । १ । १ ।
कषा १६
मि
१

कूटदोळु ओंदु मिथ्यात्वप्रकृतियुं षोडशकषायंगळु भयद्विकमुं मितु एकान्नविंशति प्रकृतिगळु ध्रुवबंधिगळु इवरोळु वेदत्रयदोळोंदं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुमं कूडिदोडे द्वाविंशतिप्रकृतिगळप्पुवी स्थानदोळु हास्यद्विकक्के मूरुं वेदंगळुमरतिद्वयक्के मूरुं वेदंगळंतु षड्भंगंगळप्पुवु २२/६ सासादननोळु मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदी

उक्तस्वस्वध्रुवबंधिषु पुनर्वेदेष्वेकस्मिन् हास्यरतियुग्मयोरेकस्मिंश्च मिलिते तानि स्थानानि तद्वेदयुग्मभंगे च हते तद्भंगा भवंति । तद्यथा— मिथ्यादृष्टिबंधकूटे

२ भ
२ । २
१ । १ । १
१६
१

मिथ्यात्वषोडशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु वेदत्रये युग्मयोश्चैकैकस्मिन् मिलिते द्वाविंशतिकं । तद्भंगा हास्यरतिद्विकाभ्यां वेदत्रये हते षट् २२/६ ।

अपने-अपने स्थानोंमें कहीं इन ध्रुवबन्धी प्रकृतियोंमें यथा सम्भव तीन वेदोंमें-से एक वेद और हास्य-शोकके युगल और रति-अरतिके युगलमें-से एक मिलानेपर स्थान होता है। तथा वेदोंके प्रमाणको युगलके प्रमाणसे गुणा करनेपर भंगोंका प्रमाण होता है। वही कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिके बन्धकूटमें एक मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा ये उन्नीस तो ध्रुवबन्धी हैं। और तीन वेदोंमें-से एक वेद तथा दो युगलोंमें-से एक युगल मिलकर बाईस प्रकृतिरूप स्थान होता है। यहाँ कूटके आकार रचना है इससे इसे कूट कहा है। तीन वेदोंको हास्य रतिके युगलसे गुणा करनेपर छह होते हैं। सो इस स्थानमें छह भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भ २
हा २ । २ अ
० । १ । १ ।
१६
०

कूटदोळ् षोडशकषायंगळुं भयद्विकमंतुमष्टादशमोहध्रुवबंधंगळप्पु ववरोळ् वेदद्वयदोळोंदं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमं कूडिदोडेकविंशतिप्रकृतिस्थानदोळ् वेदद्वयक्कं युगलद्विकक्कं नाल्कु भंगंगळप्पुवु २१/४ मिश्रंगे मोहनीयबंधकूटमिदी

२
२ । २
१
१२

कूटदोळ् द्वादशकषायंगळुं भयद्विकमुमंतु ध्रुवबंधिगळु पदिनाल्कप्पुववरोळ् पुंवेदमुं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुमं कूडिदोडे सप्तदश प्रकृतिस्थानमक्कुमवरोळ् हास्यद्विकक्कमरतिद्विकक्कमेरडे भंगंगळप्पुवु १७/२ असंयतंगे मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदी

२
२ । २
१
१२

कूटदोळ् द्वादशकषायंगळुं भयद्विकमुमंतु ध्रुवबंधिगळु पदिनाल्कप्पुववरोळु द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुमं पुंवेदमुमं कूडिदोडे सप्तदशप्रकृतिस्थानमक्कुमदरोळु द्विकद्वयदेरडे

सासादने बंधकूटे

२ भ
हा २।२। अ
० । १ । १
१६
०

षोडशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु वेदयोर्द्विकयोश्चैकैकस्मिन्मिलिते एकविंशतिकं, तद्भंगाः वेदद्वययुग्मद्वयजाश्चत्वारः

२१
४

मिश्रबंधकूटे

२
२।२
१
१२

द्वादशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु

जो इस प्रकार हैं—उन्नीस ध्रुवबन्धी और पुरुषवेद हास्य रति इस प्रकार एक भंग हुआ। पुरुषवेदकी जगह स्त्रीवेद होनेपर दूसरा भंग हुआ। नपुंसकवेद होनेपर तीसरा भंग हुआ। तथा हास्य रतिकी जगह शोक अरति होनेपर भी उसी प्रकार तीन भंग होते हैं। इस प्रकार छह भंग होते हैं। इसका मतलब यह है कि बाईसका बन्ध छह प्रकारसे होता है। इसी प्रकार आगे भी प्रकृतियोंके बदलनेसे भंग जानना।

सासादन बन्धकूटमें सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा ये अठारह तो ध्रुवबन्धी हैं। इनमें पुरुष-स्त्री दो वेदोंमें-से एक वेद और दो युगलोंमें-से एक मिलानेपर इक्कीस प्रकृतिरूप स्थान होता है। इनमें-से दो वेदोंको दो युगलोंसे गुणा करनेपर चार भंग होते हैं।

मिश्र बन्धकूटमें बारह कषाय, भय, जुगुप्सा ये चौदह ध्रुवबन्धी, इनमें पुरुषवेद और दो युगलोंमें-से एक मिलानेपर सतरह प्रकृतिरूप स्थान होता है। यहाँ एक वेदको दो युगलसे गुणा करनेपर दो भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगंगळप्पुवु १७/२ देशसंयतंगे मोहनीयबंधकूटमिदी २ | २।२ | १ | ८ कूटदोळु अष्टकषायंगळुं भयद्विकमुं कूडि दश ध्रुवबंधिप्रकृतिगळप्पुववरोळु पुंवेदमुमं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमं कूडुत्तं विरलु त्रयोदशमोहनीयप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमदक्के द्विकद्वयकृतभंगद्वितयमेयक्कुं १३/२ प्रमतसंयतंगे मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदी २ | २।२ | १ | ४ कूटदोळु कषायचतुष्कमुं भयद्विकमुमितारुं ध्रुवबंधिगळप्पुववरोळु पुंवेदमुमं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुमं कूडुत्तं विरलु नवप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमवरोळु द्विकद्वितयकृतभंगद्वयमक्कु ९/२ मी प्रमत्तगुणस्थानदोळु अरतिद्विकं बंधव्युच्छित्तियादुदु अप्रमत्तसंयतंगे मोहनीयप्रकृतिबंधकूटमिदी भ २ | हा २ | पु १ | क ४ कूटदोळ संज्वलनकषायचतुष्कमुं भयद्विकमुमंतारुं प्रकृतिगळु ध्रुवबंधिगळप्पुववरोळु

पुंवेदे द्विकयोरेकैकस्मिश्च मिलिते सप्तदशकं, तद्भंगाः हास्यरतिद्विकजौ द्वौ | १७/२ | असंयतबंधकूटे | २ | २।२ | १ | १२ |

द्वादशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु द्विकयोरेकस्मिन् पुंवेदे च मिलिते सप्तदशक, तद्भंगा द्विकद्वयजौ द्वौ | १७/२ |

देशसंयतबंधकूटे | २ | २।२ | १ | ८ | अष्टकषायभयद्वयध्रुवबंधिषु पुंवेदे द्विकद्वयोरेकैकस्मिश्च मिलिते त्रयोदशकं, तद्भंगाः द्विकद्वयजौ द्वौ १३/२ । प्रमत्तबंधकूटे २ | २।२ | १ | ४ चतुष्कषायभयद्विकध्रुवबंधिषु पुंवेदे द्विकयोरेकस्मिश्च मिलिते नवकं

असंयतमें भी मिश्रकी तरह सतरह प्रकृतिरूप स्थान जानना तथा भंग दो जानना।

देशसंयत बन्धकूटमें आठ कषाय, भय, जुगुप्सा ये दस ध्रुवबन्धी हैं। इनमें पुरुषवेद और दो युगलोंमें-से एकके मिलनेपर तेरह प्रकृतिरूप स्थान होता है। उसमें एक वेदको दो युगलसे गुणा करनेपर दो भंग होते हैं।

प्रमत्त बन्धकूटमें चार कषाय, भय, जुगुप्सा ये छह ध्रुवबन्धी हैं। इनमें पुरुषवेद और दो युगलोंमें-से एक मिलानेपर नौ प्रकृतिरूप स्थान होता है। एक वेदको दो युगलसे गुणा करनेपर दो भंग होते हैं। यहाँ अरति और शोककी बन्ध व्युच्छित्ति हो जाती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुंवेदमुमं हास्यद्विकमुमं कूडिदोडे नवप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लियों दे भंगमक्कुं ९/१ अपूर्व्वकरणंगे मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदी २/२/१/४ कूटदोळु कषायचतुष्कमुं भयद्विकमुमंतु ध्रुवबंधिगळारप्पुववरोळु पुंवेदमुमं हास्यद्विकमुमं कूडिदोडे नवप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लियुमो दे भंगमक्कु ९/१ मी यपूर्व्व-करणगुणस्थानचरमसमयदोळु हास्यद्विकमुं भयद्विकमुं व्युच्छित्तियक्कुमनिवृत्तिकरणगुणस्थानदोळु मोहनीयबंधकूटं प्रथमभागदोळिदी १/४ कूटदोळु ध्रुवबंधिगळु कषायंगळु नाल्के यक्कुमवरोळु पुंवेदमं कूडिदोडे पंचप्रकृतिस्थानमक्कुमदरोळो देभंगमक्कु ५/१ मिल्लि पुंवेदं व्युच्छित्तियक्कुं। अनिवृत्तिद्वितीयभागदोळु मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदी ४ कूटदोळी कषायचतुष्कं ध्रुवबंधिगळ-प्पुवु। भंगमो देयक्कुं ४/१ यिल्लि क्रोधं निदुदु। अनिवृत्तितृतीयभागदोळु मोहनीयबंधकूटमिदी ३ कूटदोळु ध्रुवबंधिगळो मूरुं कषायंगळेयप्पुवु स्थानमुमिदेयक्कुं। भंगमुमो देयक्कुं ३/१ इल्लि मान-कषायं निदुदु। अनिवृत्तिचतुर्त्थभागदोळु मोहनीयबंधकूटमिदी २ कूटदोळी कषायद्वयमे ध्रुवबंधि-गळप्पुवु। स्थानमुं द्विप्रकृतिकमक्कुं। भंगमो देयक्कुं २/१ इल्लि मायाकषायं निदुदु। अनिवृत्ति-

---

तद्भंगाः द्विकद्वयजौ द्वौ ९/२। अत्र रतिद्विकं बंधव्युच्छिन्नं। अप्रमत्तेऽपूर्वकरणे च बंधकूटे २/२/१/४ चतुःसंज्वलनभय-द्विकध्रुवबंधिषु पुंवेदे हास्यद्विके च मिलिते नवकं, तेन तद्भंग एकः ९/१ अत्र हास्यद्विकभयद्विके व्युच्छिन्ने। अनिवृत्तिकरणबंधकूटे १/४ चतुष्कषायध्रुवबंधिषु पुंवेदे मिलिते पंचकं तद्भंग एकः ५/१। अत्र पुंवेदो व्युच्छिन्नः। द्वितीयभागे कषायचतुष्कं ध्रुवबंधिभंग एकः ४/१, क्रोधो व्युच्छिन्नः। तृतीयभागे कषायत्रयं, भंग एकः ३/१ मानो

अप्रमत्त और अपूर्वकरण बन्धकूटमें चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा ये ध्रुवबन्धी हैं। इनमें पुरुषवेद, हास्य, रति मिलनेपर नौ प्रकृतिरूप स्थान होता है। यहाँ भंग एक ही है। यहाँ हास्य, रति, भय, जुगुप्साके बन्धकी व्युच्छित्ति हो जाती है।

अनिवृत्तिकरणके बन्धकूटमें चार कषाय ध्रुवबन्धी हैं। उनमें पुरुषवेद मिलनेपर पाँच प्रकृतिरूप स्थान होता है। यहाँ भंग एक ही है। यहाँ पुरुषवेदके बन्धकी व्युच्छित्ति हो जाती है। उसीके दूसरे भागमें कषायचतुष्क ध्रुवबन्धीरूप स्थान है। भंग एक। यहाँ क्रोधकी व्युच्छित्ति हो जाती है। उसीके तीसरे भागमें तीन कषाय ध्रुवबन्धीरूप स्थान है। भंग एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचमभागदोळु मोहनीयबंधप्रकृतिकूटमिदो १ कूटदोळी लोभकषायमो'दे ध्रुवबंधियक्कुमिदे एकप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लि यो'दे भंगमक्कुं १ इंतुक्तनवगुणस्थानंगळोळु संदृष्टि :—

१

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
२२	२१	१७	१७	१३	९	९	९	५।४।३।२।१।
६	४	२	२	२	२	१	१	१।१।१।१।१।

मोहनीयद्वाविंशत्यादिबंधस्थानंगळोळु भंगसंख्येयं पेळदपरु :—

छब्बावीसे चदुइगिवीसे दोद्दो हवंति छट्ठोत्ति ।
एक्केक्कमदो भंगा बंधट्ठाणेसु मोहस्स ॥४६७॥

षट्द्वाविंशत्यां चत्वार एकविंशतौ द्वौ द्वौ भवंति षष्ठपर्यंतं एकैकोऽतो भंगाः बंधस्थानेषु मोहस्य ॥

मिथ्यादृष्टयाद्यनिवृत्तिकरणपर्य्यंतं पेळ्द मोहनीयबंधस्थानंगळोळु मोदल द्वाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानदोळु षड्भंगंगळप्पुवु । एकविंशतिप्रकृतिबंधस्थानदोळु नाल्कुभंगंगळप्पुवु । मेले प्रमत्तपर्य्यंतमेरडेरडु भंगंगळप्पुवु । अतः अल्लिदं मेलेल्ला स्थानंगळोळोदो'दे भंगंगळप्पुवु ॥

अनंतरं मोहनीयबंधसामान्यस्थानसमुच्चयसंख्येयुमनवक्कं संभविसुव भुजाकारादिबंधभेदसंख्येगळुमं पेळदपरु :—

दस वीसं एक्कारस तित्तीसं मोहबंधठाणाणि ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य सामण्णे ॥४६८॥

दश विंशतिरेकादश त्रयस्त्रिंशन्मोहबंधस्थानि । भुजाकाराल्पतरावस्थिता अपि च सामान्ये ॥

व्युच्छिन्नः । चतुर्थभागे कषायद्वयं भंग एकः २ माया व्युच्छिन्ना, पंचमभागे लोभ एव भंग एकः १ ॥४६६॥
१ १

उक्तभंगसंख्यामाह—

मिथ्यादृष्टयाद्यनिवृत्तिकरणांतेषूक्तमोहनीयबंधस्थानेषु भंगा द्वाविंशतिके षड् भवंति । एकविंशतिके चत्वारः । उपरि प्रमत्तपर्यंतं द्वौ द्वौ । अत उपरि सर्वस्थानेष्वेकैकः ॥४६७॥

है। यहाँ मानकी व्युच्छित्ति हुई। चौथे भागमें दो कषाय ध्रुवबन्धीरूप स्थान है। भंग एक। यहाँ मायाकी व्युच्छित्ति हुई। पाँचवें भागमें लोभ ध्रुवबन्धीरूप स्थान है। भंग एक है ॥४६६॥

आगे भंगोंकी संख्या कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरण पर्यन्त मोहनीयके बन्धस्थानोंमें भंग बाईस प्रकृतिरूप स्थानमें छह, इक्कीस प्रकृतिरूपमें चार, ऊपर प्रमत्त पर्यन्त दो-दो तथा उससे ऊपर सब स्थानोंमें एक-एक जानना ॥४६७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगविवक्षेयं माडदे सामान्यदोळ् मोहनीयबंधस्थानंगळ् भुजाकारंगळ् मल्पतरंगळ् मवस्थितंगळ् यथाक्रमदिदं दश विंशति एकादश त्रयस्त्रिंशत्संख्येगळप्पुवु। संदृष्टि—स्था १०। भुजाकारं २०। अल्प ११। अव ३३॥

अनंतरं भुजाकार बंधादिगळ्गे लक्षणमं पेळ्दपरु :—

अप्पं बंधंतो बहुबंधे बहुगा दु अप्पबंधेवि।
उभयत्थ समे बंधे भुजकारादी कमे होंति ॥४६९॥

अल्पं बध्नन्बहुबंधे बहुकात्तु अल्पबंधेपि। उभयत्र समे बंधे भुजाकारादयः क्रमे भवंति॥

अल्पप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तमनंतरसमयदोळ् बहुप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं विरलु भुजाकारबंधमें बुदक्कुं। तु मत्ते बहुकात् बहुप्रकृतिस्थानमं कट्टुतमनंतर समयदोळल्पप्रकृतिस्थानमं कट्टिदनादोडे अल्पतरबंधमें बुदक्कुं। उभयत्र समे बंधे भुजाकाराल्पतरप्रकृतिस्थानबंधकं द्वितीयादिसमयंगळोळ् समबंधकनागुत्तं विरलवस्थितबंधमें बुदक्कु–। मपिशब्ददिदमवक्तव्यबंधमुमल्लियुमवस्थितबंधमुमुंटें दरियल्पडुगुं॥

अनंतरमव्यक्तबंधमं भंगविवक्षेयं माडद सामान्यदिदं पेळ्दपरु :—

सामण्ण अवत्तव्वो ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे।
एक्कं च होदि एत्थवि दो चेव अवट्ठिदा भंगा ॥४७०॥

सामान्यावक्तव्योऽवतीर्यमाणे एको मरणे। एकश्च भवत्यत्रापि द्वावेवावस्थितौ भंगौ॥

प्राग्मोहनीयबंधस्थानानि दशोक्तानि तेषां भंगविवक्षामंतरेण भुजाकारबंधाः विंशतिः। अल्पतरबंधा एकादश। अवस्थितबंधास्त्रयस्त्रिंशत् ॥४६८॥ एतान् लक्षयति—

अल्पप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमये बहुप्रकृतिकं बध्नाति तदा भुजाकारबंधः स्यात्। पुनः बहुप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमयेऽल्पप्रकृतिकं बध्नाति तदाल्पतरबंधः। तत्र उभयत्र अपिशब्दादवक्तव्यबंधद्वयेऽपि च द्वितीयादिसमयेषु समानप्रकृतिकं बध्नाति तदावस्थितबंधः ॥४६९॥ अथ सामान्यावक्तव्यभंगसंख्यामाह[1]—

पहले मोहनीयके बन्धस्थान दस कहे हैं। उनके भंगोंकी विवक्षा बिना किये भुजकार बन्ध बीस हैं, अल्पतर बन्ध ग्यारह हैं। और अवस्थित बन्ध तैंतीस हैं ॥४६८॥

भुजकारादिका लक्षण कहते हैं—

थोड़ी प्रकृतियोंका बन्ध करनेके अनन्तर समयमें बहुत प्रकृतियोंको बाँधे तो भुजाकार बन्ध होता है। बहुत प्रकृतियोंका बन्ध करनेके अनन्तर समयमें थोड़ी प्रकृतियोंको बाँधे तो अल्पतर बन्ध होता है। इन दोनों ही प्रकारके बन्धोंमें तथा 'च' शब्दसे दोनों अवक्तव्य बन्धोंमें भी जितनी प्रकृति पहले बाँधी थी पीछे द्वितीयादि समयोंमें उतनी ही बाँधे तो अवस्थित बन्ध होता है ॥४६९॥

आगे सामान्य अवक्तव्य भंगोंकी संख्या कहते हैं—

---

१. 'अथ सामान्योक्तस्थानानि तद्भुजाकारादिबंधांश्च संख्याति' पाठोऽयमभयचंद्रनामांकितायां टीकायामधिकः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगविवक्षारहितमागि सामान्यदिदमवक्तव्यबंधमुपशमश्रेणियनिळियुत्तिर्प्पातनोळु एक भंगमक्कुं। मरणमुंटादोडल्लियोंदु भंगमक्कुमंतवक्तव्यबंधमेरडप्पुवा येरडरोळं द्वितीयादिसमयदोळु समप्रकृतिस्थानबंधमागुत्तं विरलु भयदोळकूडि येरडुभंगंगळवस्थितंगळप्पुवंतागुत्तं विरलु सामान्यबंधस्थानंगळु हृत्तक्कं वक्ष्यमाणप्रकारदिं भुजाकारबंधंगळिप्पत्तु। अल्पतरबधंगळप्पत्नोंदु। आ भुजाकाराल्पतरमुभयदोळमवस्थितबंधंगळु कूडि मूवत्तोंदु। अवक्तव्यबंधद्वयद द्वितीयादि समयदोळु संभविसुव अवस्थितबंधंगळेरडंनु कूडि अवस्थितबंधंगळु मूवत्तमूरु। भुजाकाराल्पतरावस्थितदिदं निरूपिसल्पडद्दुदरतणिदमवक्तव्यबंधमेंबुदक्कुमवक्के क्रमदिदं संदृष्टि :—

ठा २२। २१। १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १। कूडि १०॥

भुजाकार संदृष्टि :–

१।१	२।२	३।३	४।४	५।५	९।९	९।९	१३।१३।१३	१७।१७	२१
२।१७	३।१७	४।१७	५।१७	९।१७	१३।१७	२१।२२	१७।२१।२२	२१।२२	२२

अल्पतर संदृष्टि :–

२२।२२।२२	१७।१७	१३	९	५	४	३	२
१७।१३। ९	१३। ९	९	५	४	३	२	१

अवक्तव्यबंधंगळ संदृष्टि ० ० अवस्थितंगळु कूडि मूवत्तमूरु ३३। यिन्नु भुजाकाराविबंधंगळु संभविसुव प्रकारं पेळल्पडुगुमदेंतेंदोडे—उपशमश्रेण्यवतरणदोळु अनिवृत्तिकरणं संज्वलनलोभमं कट्टुतलिळिदनंतर समयदोळु संज्वलनमाये सहितमागवतरणद्वितीयप्रथमभागदोळु
१।१७

सामान्येन भंगविवक्षामकृत्वा अवक्तव्यबंधः। उपशमश्रेण्यवरोहके एकः। तत्र मरणेऽप्येकः एवं द्वौ भवतः। तथा तद्द्वितीयादिसमये चावस्थितबंधावपि द्वौ भवतः। अमीषां भुजाकारादीनां संभवप्रकार उच्यते—

अवरोहकानिवृत्तिकरणः संज्वलनलोभं बध्नन्नधस्तनभागेऽवतीर्य मायासहितं बध्नाति वा स यदि बद्धायुष्को म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश च बध्नातीत्येकबंधके भुजाकारौ द्वौ। पुनः तद्द्वयं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे मानसहितं बध्नाति। वा तथा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नातीति द्विबंधकेऽपि द्वौ। पुनस्तत्त्रयं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे चतुःसंज्वलनान् वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश च बध्नातीति त्रिबंधके द्वौ।

सामान्यसे अर्थात् भंगोंकी विवक्षा न करके अवक्तव्य बन्ध दो होते हैं—

उपशमश्रेणिसे उतरनेपर एक और वहाँ मरनेपर एक। तथा उसके द्वितीय आदि समयमें अवस्थितबन्ध भी दो होते हैं। इन भुजाकार आदिके होनेको कहते हैं—

उपशमश्रेणिसे उतरनेवाला अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती संज्वलन लोभका बन्ध करके नीचेके भागमें उतरकर माया-लोभ दोका बन्ध करता है। अथवा यदि वह बद्धायु वहाँ मरकर देव असंयत होकर सतरहका बन्ध करता है तो इस प्रकार एक प्रकृतिरूप बन्ध स्थानमें दो भुजाकार होते हैं। पुनः उन दोनोंको बाँध नीचेके भागमें उतर मान सहित तीनका बन्ध करता है अथवा उक्त प्रकारसे असंयत देव होकर सतरहका बन्ध करता है तो दो प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें भी दो भुजाकार होते हैं। पुनः उन तीनोंको बाँध उतरकर नीचेके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येरडं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारबंधमक्कुं। मत्तमा संज्वलनलोभमं कट्टुत्तिद्दुं मरणमादोडे देवासंयतनागि पदिनेळु प्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमितेरडु। मत्तमा संज्वलनलोभमायाद्वयमं कट्टुत्तिळिदनंतरसमयदोळु अवतरणद्वितीयभागदोळ संज्वलनलोभमायामानत्रयमं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारमा द्विबंधकंगे मरणमादोडे देवासंयतनागि पदिनेळु प्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमंतु द्विबंधकनोळेरडु। मत्तमा संज्वलनलोभमायामान सहितमागि मूरं कट्टुत्तिर्द्दिळिदनिवृत्तिकरणावरणतृतीयचतुर्थभागदोळु नाल्कुं संज्वलनकषायप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमा त्रिबंधकंगे मरणमादोडे देवासंयतनागिपदिनेळं कट्टुगुमिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमंतेरडु। मत्तमवतरणचतुर्थभागदोळनिवृत्तिकरणं संज्वलनकषायचतुष्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिळिदु पंचमभागदोळु पुंवेदसहितमागि पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमा चतुष्कषायबंधकंगे चतुर्थभागदोळु मरणमादोडे देवासंयतनागि पदिनेळु प्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमंतु चतुष्कषायबंधकनोळेरडु। मत्तमा पंचप्रकृतिस्थानबंधकानिवृत्तिकरणनिळिदु अपूर्व्वकरणगुणस्थानमं पोद्दिद प्रथमसमयदोळु नवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडे इदों दु भुजाकारबंधमक्कुमा पंचप्रकृतिस्थानबंधकानिवृत्तिकरणंगे मरणमादोडे देवासंयतनागि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदों दु भुजाकारबंधमक्कुमंतेरडप्पुवु।

पुनस्तच्चतुष्कं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे पुंवेदसहितं बध्नाति। वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नातीति चतुर्बंधके द्वौ। पुनस्तत्पंच बध्नन्नवतीर्यापूर्वकरणो भूत्वा हास्यरतिभयजुगुप्साचतुष्केण सह नवकं बध्नाति। वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश च बध्नातीति पंचबंधके द्वौ। पुनः अपूर्वकरणोऽप्रमत्तः प्रमत्तो वा नवबंधकः क्रमेणावतीर्य देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश, वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश, वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वः सासादनो भूत्वैकविंशतिं, वा वेदकसम्यक्त्वः स मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च बध्नातीति नवबंधके चत्वारः। पुनः तत्त्रयोदशबंधकोऽसंयतो देवासंयतो वा भूत्वा सप्तदश वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वः स सासादनो भूत्वैकविंशतिं वा

भागमें चार संज्वलन कषायोंको बाँधता है अथवा असंयत देव होकर सतरहको बाँधता है तो तीन प्रकृतिरूप स्थानमें भी दो भुजकार होते हैं। पुनः उन चारको बाँध उतरकर नीचेके भागमें पुरुषवेदके साथ पाँचको बाँधता है अथवा असंयतदेव हो सतरहको बाँधता है तो इस प्रकार चार प्रकृतिरूप स्थानमें भी दो भुजकार होते हैं। पुनः उन पाँचका बन्ध करके उतरकर अपूर्वकरण गुणस्थानमें हास्य, रति, भय, जुगुप्साके साथ नौका बन्ध करता है या असंयत देव होकर सतरहका बन्ध करता है इस प्रकार पाँचके बन्धस्थानमें भी दो भुजाकार होते हैं।

पुनः अपूर्वकरण, अप्रमत्त या प्रमत्त नौका बन्ध करके क्रमसे उतरकर देशसंयत होकर तेरहका अथवा देव असंयत होकर सतरहका बन्ध करे। अथवा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादनमें जाकर इक्कीसका बन्ध करे अथवा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी या वेदक सम्यग्दृष्टी मिथ्यादृष्टी होकर बाईसका बन्ध करे इस प्रकार नौ प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें चार भुजाकार होते हैं। पुनः तेरहको बाँधकर असंयत या देव असंयत हो सतरहको बाँधे, अथवा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादन होकर इक्कीसको बाँधे या प्रथमोपशम सम्यक्त्वी या वेदक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मत्तमा नवबंधकावतारकापूर्व्वकरणं क्रमदिदमिळिदु प्रमत्तनागि नवबंधकनागुत्तिळिदु देशसंयतनागि त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुमथवा श्रेण्यवतारकनल्लद प्रमत्तसंयतं देशसंयतनागि मेणु त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा बद्धायुष्यं नवबंधकापूर्व्वकरणंगमप्रमत्तसंयतंगं प्रमत्तसंयतंगं मरणमादोडे देवासंयतनागि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुं। अवतारकापूर्वकरण चरमभागदोळ मरणमेंतु घटिसुगुमदु मरणरहित भागमेंदितु शंकिसल्वेडेकेंदोडे उपशमश्रेण्यारोहणदोळे प्रथमभागदोळु मरणमिल्लवतरणदोळल्लि मरणमुंटप्पुदरिंदं। मत्तं प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियप्रमत्तसंयतं प्रमत्तसंयतनागि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं विराधिसि अनंतानुबंधि कर्म्मोदयदिदं सासादननागि एकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुं। मत्तमा नवबंधकं प्रमत्तसंयतं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोर्द्दि द्वाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुमंतु नवबंधकनोळु नाल्कु भुजाकारबंधंगळप्पुवु। त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्द देशसंयतनसंयतनागि मेणु मरणमादोडे देवासंयतनागि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुं। मत्तं प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि देशसंयतं त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दुं सासादननागि एकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुं। प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियागळि वेदकसम्यग्दृष्टियागलि त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्द देशसंयतं मिथ्यात्वोदयदिदं मिथ्यादृष्टियागि द्वाविंशति प्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुमितु त्रयोदशप्रकृतिस्थानबंधकंगे भुजाकारबंधंगळु मूरु संभविसुववु। सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दसंयतसम्यग्दृष्टि प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालमावळिषट्कमवशेषमादागळ् अनंतानुबंध्युदयदिदं सासादननागि एकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुमा सप्तदशप्रकृतिस्थानबंधकनसंयतं प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि मेणु वेदकसम्यग्दृष्टियागलि मेणु मिश्रनागलि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दुं मिथ्यात्वोदयदिदं मिथ्यादृष्टियागि द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिदोंदु भुजाकारबंधमक्कुमितु सप्तदशप्रकृतिस्थानबंधकनोळु भुजाकारबंधंगळेरडप्पुवु। मत्तमेकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्द सासादनं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमनोंदने नियमदिदं पोर्द्दि तद्भवदोळं मेणु परभवदोळं द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमिदोंदे प्रकारबंधमक्कु। मितु भुजाकारबंधंगळिप्पत्तुं पेळल्पट्टु विन्न-

---

प्रथमोपशमसम्यक्त्वो वेदकसम्यक्त्वश्च मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च बध्नातीति त्रयोदशबंधके त्रयः। तत्सप्तदशबंधकः प्रथमोपशमसम्यक्त्वः सासादनो भूत्वैकविंशतिं वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वो वेदकसम्यक्त्वो मिश्रश्च स मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च बध्नातीति सप्तदशबंधके द्वौ। पुनस्तदेकविंशतिं बध्नन् मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा तस्मिन्न-

---

सम्यग्दृष्टी मिथ्यादृष्टी होकर बाईसको बाँधे तो इस प्रकार तेरह प्रकृतिरूप बन्ध स्थानमें तीन भुजाकार होते हैं। सतरह प्रकृतिको बाँधकर प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादन होकर इक्कीसको बांधे या प्रथमोपशम सम्यक्त्वी वेदक सम्यग्दृष्टी और मिश्रगुणस्थानवर्ती मिथ्यादृष्टि हो बाईसको बाँधता है तो इस प्रकार सतरहके बन्धस्थानमें दो भुजाकार होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ल्पतरबंधंगळु विचारिसलपडुगुमदें तें दोडे—अनादिमिथ्यादृष्टियेणु सादिमिथ्यादृष्टियेणु करणत्रयमं माडि अनिवृत्तिकरणचरमसमयदोळु द्वाविंशतिप्रकृति मोहनीयस्थानमं कट्टुत्तमनंतरसमयदोळु असंयतप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियागि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडे यिदोंदल्पतरबंधभेदमक्कुमथवा सादिमिथ्यादृष्टिसम्यक्त्व प्रकृत्युदयदिंद वेदकसम्यग्दृष्टियागि अप्रत्याख्यानकषायोदयदिंदमसंयतनागि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा मिथ्यादृष्टिकरणत्रयमं माडि अनिवृत्तिकरण चरमसमयदोळु द्वाविंशतिमोहनीयबंधस्थानमं कट्टि तदनंतर समयदोळु प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियागि प्रत्याख्यानावरणोदयदिंदं देशसंयतनागि त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। अथवा सादिमिथ्यादृष्टि द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दुं तदनंतरसमयदोळु सम्यक्त्वप्रकृतिप्रत्याख्यानावरणोदयंगळिदं वेदकसम्यग्दृष्टि देशसंयतनागि त्रयोदशप्रकृतिबंधस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा साद्यनादिमिथ्यादृष्टिगळु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनंतरसमयदोळप्रमत्तनागि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमितपुनरुक्तात्पतरबंधभेदंगळु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानबंधदत्तणिदं मूरप्पुवु। मत्तमसंयतवेदकसम्यग्दृष्टि मेणु क्षायिकसम्यग्दृष्टि सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दुं तदनंतरसमयदोळु प्रत्याख्यानवरणोदयदिं देशसंयतनागि त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमसंयतं सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु अनंतरसमयदोळु महाव्रतियप्रमत्तसंयतनागि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। यितु सप्तदशप्रकृतिस्थानबंधकंगल्पतरबंधभेदंगळेरडप्पुवु। सप्तदशप्रकृतिबंधकं सम्यग्मिथ्यादृष्टिमेले असंयतगुणस्थानमं पोर्द्दिसप्तदशप्रकृतिस्थानमनल्लियुं कट्टुगुमप्पुदरिंदमामिश्रंगे अल्पतरबंधभेदं संभविसदु। मत्तं त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु देशसंयतं महाव्रतियप्रमत्तसंयतनागि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमपूर्व्वकरणं नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्ददंनिवृत्तिकरणप्रथमभागमं पोर्द्दि तत्प्रथमसमयदोळु पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा प्रथमभागानिवृत्ति-

---

न्यस्मिन्वा भवे द्वाविंशतिं बध्नातीत्येकः। एवं भुजाकारा विंशतिः। अथाल्पतरबंधा उच्यंते—

अनादिः सादिर्वा मिथ्यादृष्टिः करणत्रयं कुर्वन्ननिवृत्तिकरणचरमसमये द्वाविंशतिं बध्नन्ननंतरसमये प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा वा सादिमिथ्यादृष्टिरेव सम्यक्त्वप्रकृत्युदये सति वेदकसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा उभयोऽप्यप्रत्याख्यानोदयेऽसंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नाति। वा प्रत्याख्यानोदये देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश बध्नाति, वा संज्वलनोदयेऽप्रमत्तो भूत्वा नव बध्नातीति द्वाविंशतिबंधे त्रयः। पुनः वेदकसम्यग्दृष्टिः क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा

इक्कीसको बाँधकर मिथ्यादृष्टि होकर उसी भवमें या दूसरे भवमें बाईसको बाँधे तो इक्कीस प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें एक भुजाकार हुआ। इस प्रकार भुजाकार बन्ध बीस होते हैं।

अब अल्पतर बन्ध कहते हैं—अनादि अथवा सादि मिथ्यादृष्टी तीन करण करते हुए अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें बाईसका बन्ध करके अनन्तर समयमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वी होकर अथवा सादि मिथ्यादृष्टी सम्यक्त्व मोहनीयके उदयसे वेदक सम्यक्त्वी होकर, दोनों ही अप्रत्याख्यानका उदय होनेसे असंयत होते हुए सतरहको बाँधे, या प्रत्याख्यानके उदयमें देशसंयत हो तेरह बाँधे, या संज्वलनका उदय होनेसे अप्रमत्त हो नौ को बाँधे इस प्रकार बाईस प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें तीन अल्पतर बन्ध होते हैं।

वेदक सम्यग्दृष्टी या क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंयत सतरहको बाँध देशसंयत हो तेरहको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करणं पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु द्वितीयभागमं पोद्दि तत्प्रथमसमयदोळु चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा निजद्वितीयभागानिवृत्तिकरणं चतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु निजतृतीयभागमं पोद्दि तत्प्रथमसमयदोळु त्रिप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा तृतीयभागानिवृत्तिकरणं त्रिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु निजचतुर्त्थभागमं पोद्दि तत्प्रथमसमयदोळ्द्विप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। मत्तमा चतुर्त्थभागानिवृत्तिकरणं द्विप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु निजपंचमभागमं पोद्दि एकप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुं। इंतल्पतरबंधंगळु पन्नोंदुं संभविसुव प्रकारं पेळपट्टुदु। अवस्थितबंधभेदंगळु मूवत्तमूरप्पुवेंतेंदोडे भुजाकारबंधभेदंगळिप्पत्तमल्पतरबंधंगळु पन्नोंदुमवक्तव्यबंधंगळेरडुमितु मूवत्तमूररोळं द्वितीयादिसमयंगळोळु समबंधसंभवंगळप्पुवेंदु निश्चयिसुवुदु॥

ई सामान्यभुजाकारात्पतरावस्थितावक्तव्यमेंब चतुर्व्विधबंधंगळं विशेषिसि पेळदपरु :-

सत्तावीसहियसयं पणदालं पंचहत्तरहियसयं।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि विसेसेण॥४७१॥

सप्तविंशत्युत्तरशतं पंचचत्वारिंशत्पंचसप्तत्यधिकशतं। भुजाकाराल्पतराश्चावस्थिता अपि विशेषेण॥

विशेषदिदं भुजाकाराल्पतरावस्थितंगळु यथाक्रमदिदं सप्तविंशत्युत्तरशतं १२७। पंचचत्वारिंशद् भेदमुं ४५। पंचसप्तत्यधिकशतमु १७५। मप्पुवदेंतेंदोडे सामान्यबंधस्थानंगळु पत्तु १०।

असंयतः सप्तदश बध्नन् देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश वा अप्रमत्तो भूत्वा नव च बध्नातीति सप्तदशबंधे द्वौ। पुनः तत्त्रयोदशबंधकोऽप्रमत्तो भूत्वा नव, नवबंधकोऽपूर्वकरणेऽनिवृत्तिकरणप्रथमभागे पंच, पंचबंधकः द्वितीयभागे चत्वारि, चतुर्बंधकस्तृतीयभागे त्रीणि, त्रिबंधकश्चतुर्थभागे द्वे, द्विबंधकः पंचमभागे एकं च बध्नातीत्येकैकः। एवमल्पतरबंधाः एकादश। उक्तभुजाकाराल्पतरावक्तव्यानां द्वितीयादिसमयेषु समबंधोऽवस्थितबंधस्त्रयस्त्रिंशत्॥४७०॥ अथ विशेषभुजाकारादीन् संख्याति—

विशेषभुजाकाराः सप्तविंशतिशतं, अल्पतराः पंचचत्वारिंशत्, अवस्थिताः पंचसप्ततिशतं। तत्र

बाँधे या अप्रमत्त होकर नौको बाँधे, इस तरह सतरहके बन्धस्थानमें दो अल्पतर होते हैं। तथा तेरहका बन्धक अप्रमत्त हो नौको बाँधे, नौका बन्धक अपूर्वकरण या अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागमें पाँच बाँधे, पाँचको बाँधकर दूसरे भागमें चार बाँधे, चारको बाँध तीसरे भागमें तीन बाँधे, तीनको बाँध चौथे भागमें दो बाँधे, दोको बाँध पाँचवें भागमें एक बाँधे, इस तरह इन स्थानोंमें एक-एक अल्पतर होता है। ऐसे सब अल्पतर ग्यारह होते हैं।

तथा ऊपर कहे दो अवक्तव्य, बीस भुजाकार, ग्यारह अल्पतर ये सब मिलकर तेंतीस अवस्थित बन्ध होते हैं; क्योंकि इन बन्धोंमें जितनी प्रकृतियोंका बन्ध कहा है उतनी ही प्रकृतियोंका बन्ध द्वितीयादि समयोंमें जहाँ होता है वहाँ अवस्थित बन्ध कहा जाता है॥४७०॥

आगे विशेष भुजाकारादिकी संख्या कहते हैं—

विशेष रूपसे भुजाकार एक सौ सत्ताईस, अल्पतर पैंतालीस, और अवस्थित एक सौ पिचहत्तर होते हैं। विशेष भुजाकार कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिवक्कें संभविसुव विशेषभुजाकारंगळु नूरिप्पत्तेळवक्के संभवमं पेळवल्लि साधनमप्प रचनाविशेषमिदु :—

सा १	मिश्र१	असं २		देशसं । ३ ॥०॥			प्रमत्तको ४ ॥				अप्र १
२१ ४	१७ २	१७ २	१७ २	१३ २	१३ २	१३ २	९ २	९ २	९ २	९ २	९ १
२२ ६	२२ ६	२१ ४	२२ ६	१७ २	२१ ४	२२ ६	१३ २	१७ २	२१ ४	२२ ६	१७ २
२४	१२	८	१२	४	८	१२	४	४	८	१२	२

→

अपू १	अनिवृत्तिको २									
९ १	५ १	५ १	४ १	४ १	३ १	३ १	२ १	२ १	१ १	१ १
१७ २	१ १	१७ २	५ १	१७ २	४ १	४ २	३ १	१७ २	२२ १	१७ २
४	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२

←

ई विशेषभुजाकारंगळगाळापं माडल्पडुगुमदें तें दोडे इल्लि द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानम कट्टुत्तिर्प्पं मिथ्यावृष्टियहुलं प्रकृतिस्थानमं कट्टुवडा बहुप्रकृतिस्थानांतरासंभवमप्पुदरिदं भुजाकारबंधमा द्वाविंशतिप्रकृतिबंधदत्तणिदं शून्यमक्कुं। सासादनसम्यग्दृष्टि एक भंगयुतैकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलु षड्भंगयुत द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिरलु चतुर्भंगयुतैकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळेनितु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानबंध भुजाकारंगळप्पुवें वितु त्रैराशिकमं माडुत्तिरलु | प्र २१/१ | फ २२/६ | इ २१/४ | बंद लब्धं चतुर्विंशति भुजाकारबंधंगळप्पुवु | २४ | सम्यग्मिथ्यादृष्टि एकभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलु षड्भंगयुत द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं क्रमदिदं कट्टुत्तिरलु द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागलेनितु द्वाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानभुजाकारंगळप्पुवेंदितु त्रैराशिकमं माडुत्तिरलु | प्र १७/१ | फ २२/६ | इ १७/२ |

भुजाकारो यथा—द्वाविंशतिकस्य मिथ्यादृष्टौ शून्यं, ततोऽधिकस्य मोहनीयबंधस्थानस्याभावात् । सासादनबन्धयोग्यचतुर्थैकविंशतिकस्यैकभंगस्य मिथ्यादृष्टिबंधयोग्यषोढाद्वाविंशतिकस्यैकैकभंगेन समबंधे चतुर्विंशतिः । एवं

मिथ्यादृष्टिमें बाईससे अधिकका बन्धस्थान मोहनीय का न होनेसे शून्य है। सासादनमें बन्धयोग्य इक्कीसके चार भंग कहे हैं और मिथ्यादृष्टिमें बन्धयोग्य बाईसके छह भंग कहे हैं। सासादनसे मिथ्यादृष्टिमें आवे तो एक-एक भंगकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टिमें बाईसके बन्धके छह भागोंके भुजाकार ४ × ६ = चौबीस होते हैं। इसी प्रकार मिश्रमें सतरहके बन्धके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंदलब्ध द्वादशभुजाकारबंधंगळप्पुवु १२। असंयतसम्यग्दृष्टि एकप्रकार भंगयुत सप्तदश प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलु चतुर्भंगयुतैकविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिरलु द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळेनितु एकविंशतिप्रकृतिस्थानबंधभुजाकारबंधंगळप्पुवेंदु त्रैराशिकमं माडुत्तिरलु —

प्र	फ	इ
१७	२१	१७
१	४	२

बंदलब्धं भुजाकारंगळु एंटु। मत्तमा सप्तदश प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलसंयतं षड्भंगयुतद्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळु द्विभंगयुत सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलेनितु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानभुजाकारंगळं माळ्कुमेंदितिदोंदु त्रैराशिकमं माडि

प्र	फ	इ
१७	२२	१७
१	६	२

बंद लब्धं भुजाकारंगळु पन्नेरडप्पु १२ वंतसंयतन सप्तदशप्रकृतिस्थानदत्तणिं भुजाकारंगळिप्पत्तप्पुवु २०। [1]देशसंयतं एक भंगयुत त्रयोदश प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलु द्विभंगयुत सप्तदशप्रकृतिस्थानमनसंयतनागि मेणु मिश्रनागि मेणु देवासंयतनागि कट्टुवातं द्विभंगयुतत्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेनितु भुजाकारंगळप्पुवेंदितु त्रैराशिकमं माडि मत्तमंते चतुर्भंगयुतैकविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं षड्भंगयुत द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं फलराशिगळं माडितु त्रैराशिकत्रितयमं माडि—

प्र	फ	इ	लब्ध	प्र	फ	इ	लब्ध	प्र	फ	इ	लब्ध
१३	१७	१३	४	१३	२१	१३	८	१३	२२	१३	१२
१	२	२		१	४	२		१	६	२	

लब्धत्रयभुजाकरविशेषंगळु त्रयोदशप्रकृतिस्थानदत्तणिदमिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४। प्रमत्तसंयतं एकभंग-

सम्यग्मिथ्यादृष्टिबंधयोग्यद्विधासप्तदशकस्य मिथ्यादृष्टिषोढाद्वाविंशतिकेन द्वादश। असंयतद्विधासप्तदशकस्य सासादनचतुर्धैकविंशतिकेनाष्टौ मिथ्यादृष्टिषोढाद्वाविंशतिकेन च द्वादशेति विंशतिः। देशसंयतद्विधात्रयोदशकस्य मिश्रासंयतदेवासंयतानां द्विधासप्तदशकेन चत्वारः।-सासादनचतुर्धैकविंशतिकेन चाष्टौ मिथ्यादृष्टिषोढाविंशतिकेन

दो भंग होते हैं। मिश्रसे मिथ्यादृष्टिमें आता है। अतः मिथ्यादृष्टिके बाईसके बन्धमें छह भंगोंकी अपेक्षा भुजाकार २ × ६ = बारह होते हैं।

असंयतमें सतरहके बन्धके दो प्रकार हैं। वहाँसे सासादनमें आनेपर वहाँ इक्कीसके बन्धके चार प्रकार होनेसे उनकी अपेक्षा आठ भुजाकार होते हैं। यदि सासादनसे मिथ्यादृष्टिमें आवे तो वहाँ बाईसके बन्धके छह प्रकार होनेसे उनकी अपेक्षा बारह भुजाकार होते हैं। इस प्रकार बीस हुए।

देशसंयतमें तेरहका बन्ध दो प्रकारसे होता है। वहाँसे मिश्रमें या असंयतमें या मरकर असंयत देव हो तो वहाँ सतरहके बन्धके दो प्रकार होनेसे उनकी अपेक्षा चार भुजाकार हैं। यदि सासादनमें आवे तो वहाँ इक्कीसके बन्धके चार प्रकार हैं, उनकी अपेक्षा आठ भुजाकार हुए। मिथ्यादृष्टिमें आवे तो वहाँ बाईसके बन्धके छह प्रकार हैं, उनकी अपेक्षा बारह भुजाकार हुए। इस प्रकार सब चौबीस भुजाकार हुए।

१. असंयतं मिश्रगुणस्थानमं पोद्दिदोडे अवस्थितमल्लदे भुजाकारबंधमिल्ल ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युलनत्रप्रकृतिस्थामं कट्टुत्तिद्र्दुं द्विभंगयुतत्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळु द्विभंगयुतनवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेनितु भुजाकारंगळप्पुवें दितु त्रैराशिकमं माडिमत्तमंते द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमुमं चतुर्भंगयुतैकविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं षड्भंगयुतद्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं फलराशिगळं माडितु त्रैराशिक चतुष्टयदिदं—

प्र	फ	इ	लब्ध	प्र	फ	इ	लब्ध	प्र	फ	इ	लब्ध	प्र	फ	इ	लब्ध
९	१३	९	४	९	१७	९	४	९	२१	९	८	९	२२	९	१२
१	२	२		१	२	२		१	४	२		१	६	२	

बंद लब्ध भुजाकारंगळु इप्पत्तें टु २८। अप्रमत्तसंयतनेकभंगयुतनवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्र्दुं देवासंयतनागि द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडे भुजाकारंगळु त्रैराशिकसिद्धंगळेरडप्पुवु। २। अपूर्व्वकरणंगमंते एकभंगयुतनवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्र्दुं द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं देवासंयतनागि कट्टिदोडेरडु भुजाकारंगळप्पुवु। २। अनिवृत्तिकरणं एकभंगयुतपंचप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दिळिदपूर्व्वकरणनागि एकभंगयुतनवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों दु भुजाकारमक्कुं। मत्तमा येकभंगयुत पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्र्दुं देवासंयतनागि द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमंतु पंचबंधकनत्तणिदं भुजाकारभंगंगळु मूरप्पुवु। मत्तं चतुर्व्बंधकनेकभंगयुतपंचप्रकृति स्थानमं कट्टिदोडों दु भुजाकारमा चतुर्व्बंधकं देवासंयतनागि द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडु भुजाकारंगळंतु चतुर्व्बंधकनत्तणिदं भुजाकारंगळु मूरप्पुवु। मत्तं त्रिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तमनिवृत्तिकरणंचतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों दु भुजाकारमक्कु। मत्तं त्रिप्रकृतिस्थानबंधकं देवासंयतनागि द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडु भुजाकारंगळप्पुवंतु प्रकृतिस्थानबंधकनत्तणिदं

च द्वादशेति चतुर्विंशतिः। प्रमत्तसंयतद्विधानवकस्य देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन चत्वारः, मिश्रासंयतद्विविधसप्तदशकेन चत्वारः, सासादने चतुर्विधैकविंशतिकेनाष्टौ मिथ्यादृष्टिषड्विधद्वाविंशतिकेन द्वादशेत्यष्टाविंशतिः। अप्रमत्तैकविधनवकस्य देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ। अपूर्वकरणनवकस्यापि तथैव द्वौ। अनिवृत्तिकरणैकभंगपंचकस्यापूर्वकरणैकभंगनवकेनैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, चतुष्कस्यैकभंगपंचकेनैकः, देवासंयतद्वि-

प्रमत्तमें नौके बन्धके दो प्रकार हैं। वहाँसे देशसंयतमें आवे तो वहाँ तेरहके बन्धके दो प्रकार हैं। अतः चार भुजाकार हुए। यदि मिश्रमें या असंयतमें आवे तो वहाँ सतरहके बन्धके दो प्रकार हैं। अतः चार भुजाकार हुए। सासादनमें आवे तो वहाँ इक्कीसके बन्धके चार प्रकार अतः आठ भुजाकार हुए। मिथ्यादृष्टिमें आवे तो वहाँ बाईसके बन्धके छह प्रकार हैं। अतः बारह भुजाकार हुए। इस तरह सब अट्ठाईस हुए।

अप्रमत्तमें बन्धका एक ही प्रकार है। वहाँसे मरकर असंयत देव हो तो वहाँ सतरहके बन्धके दो प्रकार हैं। अतः दो भुजाकार हुए। प्रमत्तमें आवे तो वहाँ नौका ही बन्ध होता है अतः भुजाकार नहीं है। अपूर्वकरणमें नौका बन्ध है। वहाँ भी इसी प्रकार दो ही भुजाकार हुए।

अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागमें पाँचके बन्धका एक प्रकार है। वहाँसे अपूर्वकरणमें आवे तो वहाँ नौके बन्धका एक प्रकार है अतः एक भुजाकार है। यदि मरकर असंयत देव हो तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भुजाकारंगळु मूरप्पुवु। मत्तमा द्विप्रकृतिस्थानबंधकनप्पनिवृत्तिकरणं त्रिप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों दु भुजाकारमक्कुमा द्विप्रकृतिस्थानबंधकं देवासंयतनागि द्विभंगयुतसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडु भुजाकारंगळप्पुवितु द्विप्रकृतिस्थानबंधकनत्तणिदं मूरु भुजाकारबंधभेदंगळप्पुवु। मत्तमेकप्रकृतिबंधकं द्विप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों दु भुजाकारमक्कु। मत्तमा एक प्रकृतिस्थानबंधकं मरणमादोडे देवासंयतनागि द्विभंगयुत सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडु भुजाकारंगळप्पुवितु एकप्रकृतिस्थानबंधकनत्तणिद भुजाकार भेदंगळु मूरप्पुवितनिवृत्तिकरणंगे भुजाकारबंधभेदंगळु पदिनैदप्पुवु १५। इंतु सर्व्वविशेषभुजाकारंगळु नूरिप्पत्तेळु १२७। यितु पेळल्पट्ट नूरिप्पत्तेळुं भुजाकारबंधविशेषंगळु मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु इनितिनितप्पुवेंदु संख्येयं पेळ्दपरु :—

णभ चउवीसं बारस वीसं चउरट्ठवीस दो द्दो य।
थूले पणगादीणं तिय तिय मिच्छादिभुजगारा ॥४७२॥

नभश्चतुर्विंशतिर्द्वादश विंशतिश्चतुरष्टविंशतिर्द्वौ द्वौ च। स्थूले पंचकादीनां त्रिक त्रिकं मिथ्यादृष्ट्यादि भुजाकाराः ॥

मिथ्यादृष्ट्यादियागनिवृत्तिकरणपर्य्यंत विशेषभुजाकारंगळुत्तंगळु क्रमदिदं पेळल्पडुवल्लि मिथ्यादृष्टियोळु शून्यमक्कुमेकेंदोडा मिथ्यादृष्टि कट्टुव मोहनीयप्रकृतिबंधस्थानं द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमल्लदे मेलधिकप्रकृतिबंधस्थानमिल्लप्पुदरिंदं। सासादनंगे चतुर्विंशतिभुजाकारंगळप्पुवु। २४। मिश्रंगे द्वादशभुजाकारंगळप्पुवु ॥१२॥ असंयतंगे विंशतिभुजाकारंगळप्पुवु २०। देश·

भंगसप्तदशकेन द्वौ, त्रिकस्य चतुष्केणैकः, देवासंयताद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, द्विकस्यैकभंगत्रिकेणैकः देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, एकस्यैकभंगद्विकेनैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ मिलित्वा सप्तविंशत्यग्रशतं ॥४७१॥ तानेवाह—

विशेषभुजाकाराः मिथ्यादृष्टौ शून्यं। सासादने चतुर्विंशतिः। मिश्रे द्वादश। असंयते विंशतिः।

सतरहके बन्धके दो प्रकार हैं। अतः दो भुजाकार हुए। इस तरह तीन हुए। दूसरे भागमें चारका बन्ध। वहाँसे प्रथम भागमें आकर पाँचका बन्ध करे तो उसकी अपेक्षा एक भुजाकार है। यदि मरकर देव असंयत हो तो वहाँ सतरहके बन्धके दो प्रकार हैं। अतः दो भुजाकार होनेसे सब तीन हुए।

इसी प्रकार तीसरे भागमें तीनका बन्ध। वहाँसे दूसरे भागमें आकर चारका बन्ध करे तो एक भुजाकार। मरकर देव असंयत हो तो उसकी अपेक्षा दो। इस प्रकार तीन हुए। चौथे भागमें दोका बन्ध। वहाँसे तीसरे भागमें आकर तीनका बन्ध करनेपर एक भुजाकार; देव असंयत हो सतरहका बन्ध करनेपर दो, ऐसे तीन हुए। पाँचवें भागमें एकका बन्ध। वहाँसे चौथे भागमें आकर दोका बन्ध करनेपर एक। अथवा देव असंयत होकर सतरहका बन्ध करनेपर दो, इस प्रकार तीन भुजाकार हुए। सब मिलकर भुजाकार बन्ध एक सौ सत्ताईस होते हैं ॥४७१॥

आगे उन्हींको कहते हैं—

भंगोंकी अपेक्षा विशेष भुजाकार मिथ्यादृष्टिमें शून्य, सासादनमें चौबीस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयतंगे चतुर्व्विशति भुजाकारंगळप्पुवु । २४ । प्रमत्तसंयतंगे अष्टाविंशति भुजाकारंगळप्पुवु २८ ॥ अप्रमत्तंगे द्वयभुजाकारंगळप्पुवु । २ । अपूर्व्वकरणंगेयू द्विकभुजाकारंगळप्पुवु । २ । स्थूलनोळ-निवृत्तिकरणनोळु पंचकादिप्रकृतिस्थानंगळोळु त्रिकत्रिकभुजाकारंगळप्पुवु ३।३।३।३।३। संदृष्टि :—

प्रकृ. भंग			भुजाकार संख्या	अल्पतर बंध
अ	५ ३	४ ३	३ ३	२ ३
अ	९	१	२	१
अ	९	१	२	०
प्र	९	२	२८	२
दे	१३	२	२४	२
अ	१७	२	२०	६
मि	१७	२	१२	०
सा	२१	४	२४	०
मि	२२	६	०	०

अल्पतर बंध अनिवृत्ति					
१ ३	५	४	३	२	१
स्थू	१	१	१	१	०

अप्पदरा पुण तीसं णभ णभ छ दुदोण्णि णभ एक्कं ।
थूले पणगादीणं एक्केक्कं अंतिमे सुण्णं ॥४७३॥

अल्पतराः पुनस्त्रिंशन्नभो नभः षड् द्वौ द्वौ नभ एकः । स्थूले पंचकादीनामेकैकोंऽतिमे शून्यं॥

पुनः मत्तल्पतरंगळु मिथ्यादृष्टियोळु ३० । सासादननोळु नभमेयक्कुं शून्यमें बुदर्त्थं । आ सासादनंगे भुजाकारबंध संभविसुगुमल्लदल्पतरबंधं संभविसदेकें दोडे पतनशीलनप्पुदरिदं । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमनल्लदन्यगुणस्थानमं नियमदिदं पोद्दिनप्पुदरिदं । मिश्रंगेयुमल्पतरबंधविशेषं शून्यमेयक्कुमेकें दोडा मिश्रनुमेले असंयतगुणस्थानमल्लदन्यगुणस्थानांतरमं पोर्द्दनप्पुदरिदं सम-

देशसंयते चतुर्विंशतिः । प्रमत्तेऽष्टाविंशतिः । अप्रमत्ते द्वौ । अपूर्वकरणेऽपि द्वौ । स्थूले अनिवृत्तिकरणे पंचकादिषु त्रयस्त्रयो भूत्वा पंचदश मिलित्वा तावंतः ॥४७२॥

पुनः अल्पतरा मिथ्यादृष्टौ षोडाद्वाविंशतिकस्य मिश्रासंयतयोर्द्विधासप्तदशकेन द्वादश, देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन द्वादश, अप्रमत्तैकधानवकेन षडिति त्रिंशत् । तस्यैकविंशतिकेन द्विधानवकेन च बंधः 'सासणपमत्त-

मिश्रमें बारह, असंयतमें बीस, देशसंयतमें चौबीस, प्रमत्तमें अठाईस, अप्रमत्तमें दो, अपूर्वकरणमें दो, अनिवृत्तिकरणमें पाँच आदिके बन्धमें तीन-तीन भुजकार होनेसे मिलकर पन्द्रह। इस तरह एक सौ सत्ताईस भुजाकार हुए ॥४७२॥

अब अल्पतर बन्ध कहते हैं—मिथ्यादृष्टिमें बाईसका बन्ध, उसके छह प्रकार। वहाँसे मिश्र या असंयतमें जानेपर सतरहका बन्ध दो प्रकार। सो एक-एक प्रकारमें छह प्रकारके बाईसके बन्धकी अपेक्षा बारह अल्पतर होते हैं। यदि देशसंयतमें गया तो वहाँ तेरहका बन्ध दो प्रकार। अतः बारह अल्पतर होते हैं। यदि अप्रमत्तमें गया तो वहाँ नौका बन्ध एक प्रकार। अतः छह अल्पतर सब तीस हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधमक्कुमप्पुदरिंदमवस्थितबंधमेयक्कुमल्पतरबंधविशेषं संभविसदु। कळगे मिथ्यादृष्टियप्पनल्लदे सासादननागनक्कु कारणमागि मिश्रंगल्पतरबंधविशेषं शून्यमें बुदु सिद्धमक्कुं ॥ असंयतनोळल्पतरंगळारप्पुवु। ६। देशसंयतनोळेरडप्पुवु। २।- प्रमत्तसंयतनोळमेरडेयल्पतरंगळप्पुवु। २। अप्रमत्तनोळु शून्यमक्कुमपूर्व्वकरणनोळु ओंदेयल्पतरबंधविशेषमक्कुं। स्थूलनोळु पंचकादिस्थानंगळगेकैकाल्पतरंगळप्पुवंतिमदोळु अल्पतरशून्यमक्कुमिदक्के संदृष्टि :—

	मि			अ		दे	प्र	अपू।	अनि				
ठा	२२ ६	२२ ६	२२ ६	१७ २	१७ २	१३ २	९ २	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	१ १
ठा	१७ २	१३ २	९ १	१३ २	९ १	९ १	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	१ १	०
भं	१२	१२	६	४	२	२	२	१	१	१	१	१	०

ई पंचचत्वारिंशदल्पतरबंधंगळ स्वरूपनिरूपणं गेय्यल्पडुगुमदे तें दोडे मिथ्यादृष्टिजीवं षट्प्रकार द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलुं द्विप्रकार सप्तदशप्रकृतिस्थानमं मिश्रनागि मेणसंयतनागि कट्टुत्तं विरलु द्वादशभंगंगळप्पुवु। १२। मत्तमा मिथ्यादृष्टि षट्प्रकार द्वाविंशतिप्रकृति स्थानमं कट्टुत्तं देशसंयतनागि द्विप्रकारत्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडे द्वादशाल्पतरबंधभेदंगळप्पुवु। १२॥ मत्तमा मिथ्यादृष्टि षट्प्रकारद्वाविंशति प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलुमप्रमत्तनागि एकप्रकारनवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडल्पतरबंधविकल्पंगळारप्पु ६। विंतु मिथ्यादृष्टिगल्पतरबंधभेदंगळु मूवत्तप्पुवु ३०।

वज्जं अपमत्तं तं समल्लियइ मिच्छो' इति नियमात्, सासादनस्य पतनशीलत्वात् मिथ्यादृष्टावेव गमनादेकविंशतिकस्य भुजाकार एव नाल्पतरमिति शून्यं। मिश्रस्यासंयते गमने बंधस्यावस्थितत्वान्मिथ्यादृष्टौ च गमने भुजाकारत्वादन्यत्रागमनाच्च सप्तदशकस्य नाल्पतरोऽस्तीति शून्यं। असंयते द्विधासप्तदशकस्य देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन चत्वारः, अप्रमत्तैकभंगनवकेन च द्वाविति षट्। देशसंयते द्विधात्रयोदशकस्याप्रमत्तैकधानवकेन

मिथ्यादृष्टि जीव सासादन और प्रमत्त गुणस्थानोंको छोड़ अप्रमत्त तक जाता है अतः सासादनके चार प्रकारवाले इक्कीसके बन्धकी अपेक्षा और प्रमत्तके दो प्रकारवाले नौके बन्धकी अपेक्षा अल्पतर बन्ध नहीं कहे। तथा सासादनसे गिर मिथ्यादृष्टी ही होता है। इससे इक्कीसके बन्धके भुजकार बन्ध तो सम्भव हैं किन्तु ऊपर नहीं चढ़ता, इससे अल्पतरका अभाव है। इसीसे सासादनमें शून्य कहा है।

मिश्रसे गिरे तो मिथ्यादृष्टि ही होता है अतः वहाँ भुजकार बन्ध ही होता है और ऊपर चढ़े तो असंयतमें जाता है। वहाँ भी मिश्रकी ही तरह सतरहका बन्ध है। इससे मिश्रमें अल्पतर बन्ध न होनेसे शून्य कहा है। असंयतमें दो प्रकारसे सतरहका बन्ध होता है। वहाँसे देशसंयतमें जावे तो वहाँ दो प्रकारसे तेरहका बन्ध। अतः चार अल्पतर हुए। यदि अप्रमत्तमें जावे तो वहाँ एक प्रकारसे नौका बन्ध है। अतः दो अल्पतर हुए। इस तरह छह हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टिजीवं सासादननुं प्रमत्तनुमागि एकविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं द्विप्रकार नवप्रकृतिस्थानमुमं कट्टनेकेंदोडे—सासणपमत्तवज्जं अपमत्तं तं समल्लियइ मिच्छो एंबी नियममुंटप्पुदरिंदं। सासादननोळं मिश्रनोळं शून्यमक्कुं। द्विप्रकार सप्तदशप्रकृतिस्थानमनसंयतं कट्टुत्तमिद्दु देशसंयतनागि द्विप्रकार त्रयोदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडल्पतरबंधभेदंगळु नाल्कप्पुवु ४। मत्तमा असंयतं द्विप्रकारसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तमिद्दु अप्रमत्तनागि एकप्रकार नवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडल्पतरबंधभेदंगळप्पुवु २। वितसंयतंगल्पतरबंधभेदंगळारप्पुवु। ६। सप्तदशप्रकृतिस्थानबंधकसम्यग्मिथ्यादृष्टि देशसंयतगुणस्थानमुमनप्रमत्तगुणस्थानमुमं साक्षात्पोद्दुवुदिल्लक्रमदिदमसंयतनाद बळिकं पोद्दुगुमें बुदु मुंपेळ्दर्ते ज्ञातव्यमक्कुं। मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानवर्तिगळु साक्षादिनितिनितु गुणस्थानंगळं पोद्दुवरेंदु मुंदे चदुरेक्क दुपण पंच य इत्यादि सूत्रं पेळल्पडुगुमप्पुदरिंदं। मिश्रगुणस्थानवर्त्ति केळगे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमनल्लदे सासादनगुणस्थानमं पोद्दुवुदिल्ल। द्विप्रकार त्रयोदश प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दं देशसंयतनेकप्रकारमप्प नवप्रकृतिस्थानमनप्रमत्तनागि कट्टिदोडेरडल्पतरबंध भेदंगळप्पुवु। २। द्विप्रकार नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दं प्रमत्तसंयतनप्रमत्तसंयतनागि एकप्रकार नवप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडेयल्पतरबंधविशेषंगळप्पु। २। [1]मिल्लि नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिद्दु प्रमत्तसंयतनप्रमत्तनागियल्लियुं नवप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमंतु कट्टुत्तं विरलु अवस्थितबंधविशेषमल्लदल्पतरबंधविशेषमें तक्कुमें दोडे प्रमत्तसंयतंगरतिद्विकबंधमुंटु। अप्रमत्तनोळु बंधमिल्लप्पुदरिंदं। बहुप्रकृतिबंधदत्तणिंदमल्पतरप्रकृतिबंधमप्रमत्तसंयतनोळु सिद्धमप्पुदरिंदं। अप्रमत्तसंयतंगल्पतरबंधविशेषं संभविसदेकें दोडप्रमत्तनपूर्व्वकरणनागियुमल्लियु समानभंगनवप्रकृतिस्थानमं कट्टुगुमप्पुदरिदमल्पतरबंधं शून्यमक्कुं। अपूर्व्वकरणसंयतनेकप्रकारनवप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दु अनिवृत्तिकरणनागि एकप्रकार

द्वौ। प्रमत्तद्विधानवकस्य अप्रमत्तैकभंगनवकेन द्वौ। कथं समसंख्याबंधेऽल्पतरत्वं ? प्रमत्ते अरतिद्विकबंधच्छेदेनाप्रमत्ते प्रकृतिबंधस्याल्पतरत्वसंभवात्। अप्रमत्तेऽपूर्वकरणसमानभंगनवकबंधाच्छून्यं। अपूर्वकरणे एकधानवक-

---

देशसंयतमें तेरहका बन्ध दो प्रकारसे। यहाँसे अप्रमत्तमें जावे तो वहाँ नौका बन्ध, प्रकार एक। अतः दो अल्पतर हुए।

प्रमत्तमें नौका बन्ध, दो प्रकार। यहाँसे अप्रमत्तमें जावे तो वहाँ नौका बन्ध एक प्रकार। अतः दो अल्पतर हुए।

शंका—प्रमत्त और अप्रमत्तमें नौका ही बन्ध होता है। अतः समान संख्या होनेसे अवस्थित बन्ध ही सम्भव है। अल्पतर कैसे कहा ?

समाधान—प्रमत्तमें अरति और शोकके बन्धकी व्युच्छित्ति हुई है। उसकी अपेक्षा प्रकृतिबन्ध अल्पतर होनेसे अल्पतर बन्ध सम्भव है।

अप्रमत्तसे अपूर्वकरणमें जानेपर दोनोंमें समान रूपसे नौका बन्ध होनेसे अल्पतर बन्ध सम्भव नहीं है। अतः शून्य कहा है।

---

१. म विल्ली। २. इदरभिप्रायं मुंपेळ्व प्रमत्ताप्रमत्तनोळु अरिवुदु।

पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों देयल्पतरबंधभेदमक्कु । १ । एकप्रकार पंचप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनिवृत्तिकरणसंयतनेकविधचतुःप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडल्लियुमों दल्पतरबंधभेदमक्कुं १ । त्रिप्रकृतिस्थानमनेकविधमं कट्टुत्तिर्द्दनिवृत्तिकरणनेकविधद्विप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों देयल्पतरबंधविशेषमक्कुं । १ । एकप्रकार द्विप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनिवृत्तिकरणसंयतनेकप्रकारैकप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडों देयल्पतरबंधविशेषमक्कुं । १ । एकप्रकारैकप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दनिवृत्तिकरणनेनुमं 'कट्टदे सूक्ष्मसांपरायनादोडे अल्पतरबंधलक्षणमल्लदवक्तव्यलक्षणमप्पुदरिंदमल्लि अल्पतरबंधं शून्यमक्कुं । इंतल्पतरबंधविशेषंगळु पंचचत्वारिंशद्भेदंगळप्पुवु ४५ ॥

विशेषावस्थितबंधभेदंगळुं भुजाकाराल्पतरबंधंगळ द्वितीयादिसमयंगळोळु संभविसुवंतप्प-समानप्रकृतिस्थानबंधंगळ नूरेप्पत्तेरडप्पुवु १७२ । मुंदे पेळल्पडुव विशेषावक्तव्यबंधविशेषंगळु मूररोळं द्वितीयादिसमयंगळोळु समानप्रकृतिस्थानंगळु मूरप्पुवंतु विशेषावस्थितबंधंगळु नूरेप्पत्तय्दप्पु १७५ ववरोळाळापमुं भुजाकाराल्पतरंगळ बंधविशेषंगळोळु सासादननिप्पत्तों दु प्रकृतिस्थानमं चतुर्व्विधमं कट्टुत्तलु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोर्द्दि षट्प्रकारद्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टिद द्वितीयादिसमयंगळोळमा चतुर्व्विंशतिभेदयुतद्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमनेकट्टुत्तिरलिप्पत्तनाल्कु विशेषावस्थितबंधभेदंगळप्पुवें दित्यादिबंधंगळं समंगळागि पेळ्दुकोळ्वुदु । संदृष्टि :—

	सा	मि	अ			वे			प्र			अ	अ	अनि	भुजाकारोत्पन्नावस्थितर रचनेय									
ठा	२१/४	१७/२	१७/२	१७/२	१३/२	१३/२	१३/२	९/२	९/२	९/२	९/२	९/१	९/१	५/१	५/१	४/१	४/१	३/१	३/१	२/१	२/१	१/१	१/१
ठा	२२/६	२२/६	२१/४	२२/६	१७/२	२१/४	२२/६	१३/२	१७/२	२१/४	२२/६	१७*/२	१७/२	९/१	१७/२	५/१	१७/२	४/१	१७/२	३/१	१७/२	२/१	१७/२ →
भं	२४	१२	८	१२	४	८	१२	४	४	८	१२	२	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२

स्यानिवृत्तिकरणेकधापंचकेनैकः । अनिवृत्तिकरणे एकधापंचकस्यैकधाचतुष्केणैकः । तच्चतुष्कस्यैकधात्रिकेणैकः । तत्त्रिकस्यैकधाद्विकेनैकः । तद्द्विकस्यैकधैकेनैकः । चरमभागे एकं बध्वा सूक्ष्मसांपरायं गतस्य बंधादवक्तव्यत्वाद-

अपूर्वकरणमें नौका बन्ध, एक प्रकार। और अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागमें पाँचका बन्ध, एक प्रकार। अतः एक अल्पतर है।

अनिवृत्तिकरणमें एक प्रकार पाँचके बन्धके एक प्रकार चारके बन्धकी अपेक्षा एक। एक प्रकार चारके बन्धके एक प्रकार तीनके बन्धकी अपेक्षा एक। एक प्रकार तीनके बन्धके एक प्रकार दोके बन्धकी अपेक्षा एक। और एक प्रकार दोके बन्धके एक प्रकार एकके बन्धकी अपेक्षा एक अल्पतर है।

अनिवृत्तिकरणके पंचम भागमें एकका बन्ध है। वहाँसे सूक्ष्मसाम्परायमें जावे तो

१. सूक्ष्मसांपरायनु मोहनीयापेक्षेयिंदेनुमं कट्टुवुदिल्लेंबुदर्त्थं यी अवक्तव्यं । अवस्थितबंधशून्यमक्कुमेकें दोडे द्वितीयादिसमयदोळु ई अवक्तव्यबंधमं कट्टनप्पुदरिं ॥

* अप्रमत्तः प्रमत्त एव भवति पश्चात् असंयतस्तद्भवापेक्षया देवासंयतत्वे सत्येवमित्यभिप्रायः । एवमपूर्व्वकरणादिसु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	मि	मि	मि	अ		दे	प्र	अ	अनिवृ.			अल्पतरोत्पन्नावस्थित			
	२२ ६	२२ ६	२२ ६	१७ २	१७ २	१३ २	९ २	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	१ १	०	कूडि अवस्थित गळु १७५
←	१७ २	१३ २	९ १	१३ २	९ १	९ १	९ १	५ १	४ १	३ १	२ १	१ १	० ·	१७ २	
•	१२	१२	६	४	२	२	२	१	१	१	१	१	अव१ त्तअव२त्तव्यजावस्थित		

इल्लि विशेषावक्तव्यंगळु मूरप्पुववें ते दोडे उपशमश्रेण्यवतरणदोळुपशांतकषायं क्रमदिदं तन्मुंहूर्त्तकालं तन्न गुणस्थानयोळिद्दु तदनंतरसमयदोळु सूक्ष्मसांपरायनागि तद्गुणस्थानकालमं-तर्म्मुहूर्त्तमात्रसमयंगळं क्रमदिदं कळिदनंतरसमयदोळनिवृत्तिकरणनागि तत्प्रथमसमयदोळु संज्वलनलोभमनों दनें कट्टिदोडों दवक्तव्यबंधविशेषमक्कुं १/१/० मत्तमा उपशांतकषायनागलि मेणा-रोहणावरोहणसूक्ष्मसांपरायनागलि प्राग्बद्धदेवायुष्यरुगळ्गे मरणमादोडे देवासंयतरागि द्विभंग-युत सप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडिवेरडवक्तव्यबंधविशेषंगळप्पुवंतवक्तव्यंगळु मूरप्पुववर द्वितीयादिसमयंगळोळु समबंधमादोडवस्थितंगळुमल्लि मूरप्पु ३ वें दितरियल्पडुवुवें दिदं मुंदण गाथा-सूत्रदिदं पेळ्दपरु :—

भेदेण अवत्तव्वा ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे ।
दो चेव होंति एत्थवि तिण्णेव अवट्ठिदा भंगा ॥४७४॥

भेदेनावक्तव्या अवतीर्यमाणे एको मरणे द्वावेव भवतोऽत्रापि त्रय एवावस्थिता भंगाः ॥

भेदेन विशेषदिदमवक्तव्यभंगंगळु मुंपेळ्दंते उपशमश्रेण्यवरोहकोपशांतकषायं सूक्ष्मसांपरायनागि तद्गुणस्थानचरमसमयदोळु मोहनीयमनेनुमं कट्टदनिवृत्तिकरणनागि एकप्रकृतिस्थानमं

ल्पतरशून्यं । एवमल्पतरबंधाः पंचचत्वारिंशत् । अवस्थितस्तु भुजाकाराल्पतरवक्ष्यमाणावक्तव्यानां द्वितीयादिसमयेषु बंधे पंचसप्तत्यग्रशतं ॥४७३॥

ते विशेषेणावक्तव्यास्तु सूक्ष्मसांपरायोऽस्तमोहबंधोऽवतरणेऽनिवृत्तिकरणो भूत्वा संज्वलनलोभं बध्ना-

वहाँ मोहनीयका बन्ध नहीं है। अतः वहाँ अवक्तव्य बन्ध सम्भव है, अल्पतर नहीं। अतः शून्य है। इस प्रकार अल्पतर बन्ध पैंतालीस हैं।

एक सौ सत्ताईस भुजाकार, पैंतालीस अल्पतर कहे और तीन अवक्तव्य कहेंगे। इन सबमें पहले समयमें जितनी-जितनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है उतनी-उतनी ही प्रकृतियोंका बन्ध द्वितीय समयमें जहाँ हो वहाँ अवस्थित बन्ध कहलाता है। अतः अवस्थित बन्ध एक सौ पिचहत्तर हैं ॥४७३॥

भंग विवक्षा होनेपर विशेषरूपसे अवक्तव्य बन्ध कहते हैं—

सूक्ष्म साम्परायमें मोहका बन्ध नहीं होता। वहाँसे उतरकर अनिवृत्तिकरणमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कट्टिदोडिदों दवक्तव्यबंधभेदमक्कुमा उपशांतकषायनागलि मेणारोहणावरोहणसूक्ष्मसांपरायनागलि मोहनीयमनेनुमं कट्टदे प्राग्बद्धायुष्यंगे मरणमादोडे देवासंयतनागि द्विविधसप्तदशप्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडेरडवक्तव्यंगळप्पुवितवक्तव्यबंधभेदंगळ् मूरप्पु ३ ववर द्वितीयादिसमयंगळोळु सदृशप्रकृतिस्थानबंधमागुत्तं विरलवस्थितबंधंगळं मूरप्पुवु ३ ॥ इंतु मोहनीयक्के सामान्यविशेषभुजाकाराल्पतरावस्थितावक्तव्यमें ब चतुर्विधबंधंगळं पेळ्दनंतरं मोहनीयोदयप्रकृतिस्थानंगळें नितें दोडे पेळ्दपरु :—

दस णव अट्ठ य सत्त य छप्पण चत्तारि दोण्णि एक्कं च ।
उदयट्ठाणा मोहे णव चेव य होंति णियमेण ॥४७५॥

दश नवाष्ट च सप्त च षट् पंच चत्वारिद्वे एकं चोदयस्थानानि मोहे नव चैव च भवंति नियमेन ॥

दश नव अष्ट सप्त षट् पंच चतुः द्वि एकप्रकृतिसंख्यावच्छिन्नंगळप्पुदयस्थानंगळु मोहनीयदोळु नवस्थानंगळप्पुवु । संदृष्टि—१० । ९ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । २ । १ ॥

अनंतरं मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु मोहनीयोदयप्रकृतिसंभवासंभवंगळनुदयस्थानंगळगे पेळ्दपरु ।

मिच्छं मिस्सं सगुणे वेदगसम्मेव होदि सम्मत्तं ।
एका कसायजादी वेददुजुगलाणमेक्कं च ॥४७६॥

मिथ्यात्वं मिश्रं स्वगुणे वेदकसम्यग्दृष्टावेव भवति । सम्यक्त्वं एका कषायजातिर्वेदद्वियुगलयोरेकं च ॥

मिथ्यात्वप्रकृतियुं मिश्रप्रकृतियुं तंतम्मगुणस्थानदोळे उदयिसुववु । वेदकसम्यग्दृष्टिगळप्प असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळोळे सम्यक्त्वप्रकृतिय्युदयमक्कुमिती पेळल्पट्टप्रकृतिगळगे

तीत्येकः । स एव च यदि बद्धायुष्कः आरोहणेऽवरोहणे वा म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा द्विधा सप्तदशकं बध्नातीति द्वौ एवं त्रयो भवंति । अत्रापि तद्द्वितीयादिसमयेषु समबंधे त्रय एवावस्थिताश्च भवंति ॥४७४॥ एवं मोहनीयस्य सामान्यविशेषभुजाकारादिचतुर्विधबंधानुक्त्वा इदानीमुदयस्थानान्याह—

दशनवाष्टसप्तषट्पंचचतुर्द्व्येकप्रकृतिसंख्यान्युदयस्थानानि मोहनीये नवैव भवंति ॥४७५॥

मोहनीयोदयप्रकृतिषु मिथ्यात्वं मिश्रं च स्वस्वगुणस्थाने एवोदेति । सम्यक्त्वप्रकृतिः वेदकसम्यग्दृष्टावे-

---

संज्वलन लोभका बन्ध करनेपर एक अवक्तव्य बन्ध होता है। और बद्धायु सूक्ष्म साम्पराय चढ़ते या उतरते हुए मरण करे तो देव असंयत होकर दो प्रकारसे सतरह प्रकृतियोंका बन्ध करता है, उसकी अपेक्षा दो अवक्तव्य हुए। इस प्रकार तीन अवक्तव्य बन्ध हैं। यहाँ भी द्वितीयादि समयमें समान प्रकृतियोंका बन्ध होनेपर तीन अवस्थित बन्ध सम्भव हैं ॥४७४॥

इस प्रकार मोहनीयके सामान्य विशेषरूप भुजाकार आदि चार प्रकारके बन्धोंको कहकर अब मोहनीयके उदयस्थान कहते हैं—

दस, नौ, आठ, सात, छह, पाँच, चार, दो और एक प्रकृतिरूपसे नियमसे मोहनीयके नौ उदयस्थान होते हैं ॥४७५॥

मोहनीयकी उदयप्रकृतियोंमें मिथ्यात्व और मिश्रका उदय अपने-अपने मिथ्यादृष्टि

पेळ्लपट्ट गुणस्थानंगळोळेयुदयनियममरियल्पडुत्तं विरलुदयकूटं पेऴल्पडुगुमदें तें दोडे --एककषाये जातिः ओंदु कषायजातियुं वेदस्त्रीपुंनपुंसकमें ब वेदत्रयदोऴों दु वेदमुं हास्यद्विकमरतिद्विकमें ब युगलद्वयदोळों दु युगलमुं :—

भयसहियं च जुगुंछासहियं दोहिवि जुदं च ठाणाणि ।
मिच्छादि अपुव्वंते चत्तारि हवंति णियमेण ।।४७७।।

भयसहितं च जुगुप्सासहितं द्वाभ्यामपि युतं च स्थानानि । मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वांते चत्वारि भवंति नियमेन ।।

मुंपेळ्द क्रोधादिकषायजातियोळों दु कषायजातियुं वेदत्रयदोळों दु वेदमुं युगलद्वयदोळों दु युगलमेंबी प्रकृतिगळोऴुभयसहितमादोडों दु कूटमक्कुं । जुगुप्सासहितमादोडों दु कूटमक्कुमुभय-सहितमादोडें वों दु कूटमक्कुं । उभयमुं रहितमादोडे च शब्दादिदमदों दु कूटमक्कु मिती नाल्कु कूटंगळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदलगों डपूर्वकरणगुणस्थानपर्यंतं नाल्कु नाल्कु कूटंगळप्पुवु—

सा	२	१	१	०
मा	२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
न्य	१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

वासंयतादिचतुर्षूदेति, आसां गुणस्थानेषूदयनियमं प्रदर्श्योदयकूटानि रचयति । चतसृष्वेका कषायजातिः, वेदत्रये एको वेदः, हास्यद्विकारतिद्विकारतिद्विकयोरेकं द्विकं चेतीदं ।।४७६।।

भयजुगुप्सासहितमेककूटं, भयेन युतमेककूटं, जुगुप्सया युतमेककं कूटं, चशब्दादुभयरहितमेकं कूटममीषु—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४
मि १	१	१	१

और मिश्रगुणस्थानमें होता है । सम्यक्त्व प्रकृतिका उदय वेदक सम्यग्दृष्टीके असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें होता है । इन प्रकृतियोंका गुणस्थानोंमें उदयका नियम बतलाकर उदयके कूटोंकी रचना करते हैं ।

अनन्तानुबन्धी आदि चार कषायोंकी क्रोध, मान, माया, लोभरूप चार जातियोंमें-से एक जातिका उदय होता है । तीन वेदोंमें-से एक वेदका उदय होता है । हास्य, शोक और रति, अरतिके युगलोंमें-से एक-एकका उदय होता है ।।४७६।।

एक जीवके एक कालमें या तो भयका ही उदय हो, या जुगुप्साका ही उदय हो, या दोनोंका उदय हो या दोनोंका उदय न हो, इस अपेक्षासे चार कूट किये जाते हैं । अर्थात्

१. यिल्लि कषायजाति यें बुदें दोडे क्रोधचतुष्कं ओंदुजाति मानचतुष्कमोंदु जाति इत्यादि । इतरचतुर्षु गुणस्थानेषु वेदकापेक्षया रचना द्रष्टव्या ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यी सामान्यमोहनीयोदयस्थानप्रकृतिसंख्या साधक चतुःकूटंगळोळु मिथ्यात्वप्रकृतियं कूडिदोडे अनंतानुबंधियुत मिथ्यादृष्टिगे चतुः कूटंगळप्पुवु । संदृष्टि :—

मि २	१	१	०
ध्या २ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४
१	१	१	१

ई नाल्कु कूटंगळोळु मिथ्यात्वप्रकृतियं कळेदोडे सासादनंगे चतुरुदयकूटंगळप्पुवु । संदृष्टि—

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

यी नाल्कुं कूटंगळोळु मिश्रप्रकृतियं कूडि अनंतानुबंधिकषायचतुष्कमं कळेदोडे मिश्रंगे मोहनीयोदय कूटंगळु नाल्कप्पुवु । आ नाल्कुं स्थानंगळगे संदृष्टि :—

मिथ्यात्वे युतेऽनंतानुबंधियुते मिथ्यादृष्टेर्भवंति—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४
मि १	१	१	१

एषु मिथ्यात्वेऽपनीते सासादनस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

एषु मिश्रप्रकृतिं निक्षिप्यानंतानुबंधिचतुष्केऽपनीते मिश्रस्य—

कूटके आकार रचना की जाती है। उसमें सबसे नीचे एक मिथ्यात्वका अंक एक लिखा। उसके ऊपर अनन्तानुबन्धी आदि चार-चार कषायोंके चार जगह चार-चारके अंक लिखे। इनमें-से जहाँ जिसका उदय हो वहाँ उसका जानना। उसके ऊपर तीन वेदोंमें-से तीन जगह एक-एक अंक लिखे। जिसका उदय जहाँ हो सो जानना। उसके ऊपर दो युगलोंमें-से एक-एक प्रकृतिका उदय, उनके दो जगह दो-दोके अंक लिखे। सो जिन हास्य रति, या अरति, शोकका उदय पाया जाये वहाँ वही जानना। उसके ऊपर प्रथम कूटमें भय-जुगुप्सा। दूसरे कूटमें केवल भय, तीसरे कूटमें जुगुप्सा। और चौथे कूटमें दोनोंका अभावरूप शून्य जानना। इसके लिए चारों कूटोंमें क्रमसे दो, एक, एक और शून्य लिखा। इस तरह चार कूट किये। प्रथम कूटमें दस प्रकृतिरूप उदयस्थान जानना। दूसरे और तीसरेमें नौ-नौ प्रकृतिरूप उदयस्थान है और चौथे कूटमें आठ प्रकृतिरूप उदय स्थान है। सो ये चारों कूट तो अनन्तानुबन्धी सहित मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके जानना। इन चारोंमें-से मिथ्यात्वको हटा देनेपर सासादनके चार कूट होते हैं। [कूटोंकी रचना ऊपर सं. टीकामें देखें]।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मि	२	१	१	०
श्र	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	३३३३	३३३३	३३३३	३३३३
	१	१	१	१

ई नाल्कुं मिश्रकूटंगळोळु मिश्रप्रकृतियं कळेदु सम्यक्त्वप्रकृतियं कूडिदोडसंयतंगे नाल्कुमुदयकूटंगळप्पुवु । संदृष्टि :—

अ	२	१	१	०
सं	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	३३३३	३३३३	३३३३	३३३३
	१	१	१	१

ई असंयतन नाल्कुमुदयकूटंगळोळु अप्रत्याख्यानकषायचतुष्कमं कळेदोडे देशसंयतंगे नाल्कुमुदयकूटंगळप्पुवु । संदृष्टि :—

दे	२	१	१	०
श	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	२२२२	२२२२	२२२२	२२२२
	१	१	१	१

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
मि १	१	१	१

एषु मिश्रमपनीय सम्यक्त्वप्रकृतौ युतायामसंयतस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ २	३ ३ ३ ३
स १	१	१	१

एष्वप्रत्याख्यानचतुष्केऽपनीते देशसंयतगुणस्थानस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २
१	१	१	१

मिश्र गुणस्थान सम्बन्धी कूटमें मिथ्यात्वकी जगह मिश्रमोहनीय लिखा। और चार-चार कषायोंके स्थानमें तीन-तीन ही लिखे। क्योंकि ऊपरके कूटमें एक कालमें एक जीवके जो क्रोधका उदय होता है वह अनन्तानुबन्धी आदि चारोंरूप होता है। किन्तु मिश्र और असंयतमें अनन्तानुबन्धी बिना तीन रूप ही है। इस तरह मिश्र गुणस्थानके चार कूट जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई नाल्कुं देशसंयतन कूटंगळोळु प्रत्याख्यानकषायचतुष्कमं कळेवोडे प्रमत्तसंयतंगे मोहनीयोदयकूटंगळु नाल्कुमप्पुवव्वक्के संदृष्टि :—

प्र	२	१	१	०
	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	११११	११११	११११	११११
	१	१	१	१

ई प्रमत्तसंयतन नाल्कुं मोहनीयोदयकूटंगळे अप्रमत्तसंयतंगे नाल्कुमुदयकूटंगळप्पुवु। संदृष्टि :—

अ	२	१	१	०
प्र	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	११११	११११	११११	११११
	१	१	१	१

ई नाल्कुमप्रमत्तसंयतन मोहनीयोदयकूटंगळोळु सम्यक्त्वप्रकृतियं कळेवोडपूर्व्वकरणंगे मोहनीयोदय कूटंगळु नाल्कुमप्पुवव्वक्के संदृष्टि :—

अ	२	१	१	०
पू	२२	२२	२२	२२
	१११	१११	१११	१११
	११११	११११	११११	११११

एषु प्रत्याख्यानचतुष्केऽपनीते प्रमत्ताप्रमत्तयोः—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १
१	१	१	१

प्रत्येकं । एषु सम्यक्त्वप्रकृतौ वियुतायामपूर्वकरणगुणस्थानस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

मिश्रमोहनीयके स्थानमें सम्यक्त्व मोहनीय रखनेपर वेदक सम्यक्त्व सहित अविरत सम्यग्दृष्टीके चार कूट होते हैं।

देशसंयत सम्बन्धी कूटमें तीन-तीन कषायके स्थानमें दो-दो कषाय लिखो; क्योंकि वहाँ अप्रत्याख्यानका भी उदय नहीं है। प्रमत्तसम्बन्धी कूटमें दो-दो कषायके स्थानपर एक-एक कषाय लिखें। प्रमत्तकी ही तरह चार कूट अप्रमत्तके हैं। इन चारों कूटोंमें-से सम्यक्त्व प्रकृतिको हटा देनेपर ये ही चार कूट अपूर्वकरणके होते हैं।

क–९१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई अपूर्व्वकरणननाल्कुं मोहनीयोदयकूटंगळोळु षण्णोकषायंगळ कळेदोडे अनिवृत्तिकरणन प्रथमभागेयोळों दे कूटमक्कुमदक्के संदृष्टि १११
११११
ई कूटदोळु वेदत्रयमं कळेदोडे अनिवृत्तिय द्वितीयभागदोळों दे कूटमक्कु ११११ मल्लि संज्वलनक्रोधरहितमागि तृतीयभागदोळों दु कूटमक्कु १११ मिल्लि संज्वलन मान कषायमं कळेदोडे चतुर्त्थभागदोळु अनिवृत्तिकरणंगों दे कूटमक्कु ११ मिल्लि संज्वलनमायेयं कळेदोड निवृत्तिकरणन पंचमभागदोळु संज्वलनबादरलोभप्रकृतिकूटमोंदे-यक्कुं १ । सूक्ष्मसांपरायंगे सूक्ष्मलोभोदयप्रकृतियों देयक्कुं १ ॥

अनंतरं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळं असंयताद्यप्रमत्तसंयतांतमाद चतुर्ग्गुणस्थानवर्त्तिगळु-पशमक्षायिकसम्यग्दृष्टिगळोळं मोहनीयोदयविशेषमं पेळ्दपरु ।

अणसंजोजिदसम्मे मिच्छं पत्ते ण आवलित्ति अणं ।
उवसमखयिए सम्मं ण हि तत्थवि चारि ठाणाणि ॥४७८॥

अनंतानुबंधिविसंयोजितसम्यग्दृष्टौ मिथ्यात्वं प्राप्ते न आवलिपर्यंतमनंतानुबंधि । उपशमक्षायिके सम्यक्त्वं न हि तत्रापि चत्वारि स्थानानि ॥

अनंतानुबंधिकषायचतुष्टयमनसंयतादिचतुर्ग्गुणस्थानवर्त्तिगळु वेदकसम्यग्दृष्टिगळु विसंयोजिसि मिथ्यात्वकर्म्मोदयदिदं असंयतदेशसंयतप्रमत्तगुणस्थानवर्त्तिगळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोद्दुत्तं विरला मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोर्द्दिद प्रथमसमयं मोदलगों डु अनंतानुबंधिकषाय-

---

इतीमानि चत्वारि चत्वारि मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणांतमेव नियमेन । अत्र षण्णोकषायेष्वनिवृत्तिकरण-प्रथमभागे एकं कूटं १ १. १
१ १ १ १
अत्र वेदत्रयेऽपनीते तद्द्वितीयभागे १ १ १ १ पुनः संज्वलनक्रोधेऽपनीते तृतीय-भागे १ १ १ मानेऽपनीते चतुर्थभागे १ १ मायायामपनीतायां पंचमभागे बादरलोभः १ सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः १ ॥४७७॥ अथ मिथ्यादृष्टावसंयतादिचतुर्षु संभवद्विशेषमाह—

अनंतानुबंधिविसंयोजितवेदकसम्यग्दृष्टौ मिथ्यात्वकर्मोदयान्मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं प्राप्ते आवलिपर्यंतमनं-

---

इस तरह मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपूर्वकरण पर्यन्त नियमसे चार-चार कूट हैं। अपूर्वकरणमें हास्यादि छहकी व्युच्छित्ति होती है। अतः अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागमें चार संज्वलन कषायोंमें-से एक कषाय और तीन वेदोंमें-से एक वेदके उदयरूप एक ही कूट है। इनमें-से वेदके घटनेपर दूसरे भागमें चार संज्वलन कषायोंमें-से एकके उदयरूप एक ही कूट है। इनमें-से क्रोधको घटानेपर तीसरे भागमें तीन संज्वलन कषायोंमें-से एकके उदयरूप एक ही कूट है। इनमें-से मानको घटानेपर चौथे भागमें दो संज्वलन कषायोंमें-से एकके उदयरूप एक ही कूट है। इनमें-से मायाको घटानेपर पाँचवें भागमें बादर संज्वलन लोभके उदयरूप एक ही कूट है। सूक्ष्मसाम्परायमें सूक्ष्म लोभके उदयरूप एक ही कूट है ॥४७७॥

आगे मिथ्यादृष्टि तथा असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें कुछ विशेष कथन है, वह कहते हैं—

अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाला वेदक सम्यग्दृष्टी मिथ्यात्व कर्मके उदयसे यदि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें आता है तो उसके एक आवली काल तक अनन्तानुबन्धीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुष्टयमं कट्टुत्तिर्प्परा प्रथमसमयदोळु कट्टिदनंतानुबंधिकषायसमयप्रबद्धमों दचलावलिकालपर्य्यंतमपकर्षणकरणदिंदमपकृष्टद्रव्यमनुदयावलियोळिक्कियुदीरणेयं माडल्बारदप्पुदरिंदमों दचलावलिपर्य्यंतमनंतानुबंधिकषायोदयमिल्ल । अदरिनं मिथ्यादृष्टियोळनंतानुबंधिरहितमोहनीयोदयचतुष्कूटंगळप्पुववक्के संदृष्टि :—

अनं.	२	१	१	०
	२२	२२	२२	२२
रहि.	१११	१११	१११	१११
मिथ्या.	३३३३	३३३३	३३३३	३३३३
	१	१	१	१

असंयताद्युपशमसम्यग्दृष्टिगळोळं क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळोळं सम्यक्त्वप्रकृत्युदयमिल्लप्पुदरिना सम्यक्त्वप्रकृतिरहितमादऽसंयतंगं देशसंयतंगं प्रमत्तसंयतंगमप्रमत्तसंयतंगं प्रत्येकं नाल्कु नाल्कु मोहनीयोदयकूटंगळप्पुववक्के क्रमदिंदं संदृष्टि :—

वेदकरहितासंयत ॥				वेदकरहित देशसंयत ॥			
२	१	१	०	२	१	१	०
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२
१११	१११	१११	१११	१११	१११	१११	१११
३३३३	३३३३	३३३३	३३३३	२२२२	२२२२	२२२२	२२२२

→

तानुबंध्युदयो नास्ति । तत्प्राप्तिप्रथमसमये बद्धतत्समयप्रबद्धस्यापकर्षणे कृते तावत्कालमुदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्तः । तत्रानंतानुबंधितरहितचतुष्कूटानि—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
१	१	१	१

उपशमसम्यक्त्वे क्षायिकसम्यक्त्वे च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयो नास्ति इति तद्रहितान्यसंयतचतुष्के तत्कूटानि संदृष्टि—

वेदकरहितासंयते—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३

वेदकरहितदेशसंयते—

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २

उदय नहीं होता; क्योंकि मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें जो समयप्रबद्ध बाँधा, उसका अपकर्षण करके एक आवली प्रमाण काल तक उदयावलीमें लानेमें वह असमर्थ होता है। और अनन्तानुबन्धीका बन्ध मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है। पूर्वमें जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदकरहित प्रमत्त ॥				वेदकरहित प्रमत्त ॥			
२	१	१	०	२	१	१	०
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२
१११	१११	१११	१११	१११	१११	१११	१११
११११	११११	११११	११११	११११	११११	११११	११११

अपूर्व्वकरणादिगळेल्लरुमुपशमकरं क्षायिकरुमप्पुदरिदं सम्यक्त्वप्रकृत्युदयमिल्ल ।

अनंतरं गुणस्थानंगळोळो विशेषकूटंगळु सहितमागि कूटसंख्येयं पेळदपरु :—

पुव्विल्लेसुवि मिलिदे अड चउ चत्तारि चदुसु अट्ठेव ।

चत्तारि दोण्णि एक्कं ठाणा मिच्छादिसुहुमंते ॥४७९॥

पूर्व्वोक्तेष्वपि मिलितेष्ट चतुश्चत्वारि चतुर्ष्वष्टैव । चत्वारि द्व्येकं स्थानानि मिथ्यादृष्टयादिसूक्ष्मांते ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदलगोंडु सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानांतमाद गुणस्थानवर्तिगळोळु पूर्व्वोक्तकूटंगळोळी विशेषकूटंगळं कूडुत्तं विरलु मिथ्यादृष्टियोळें टु कूटंगळप्पुवु । सासादननोळु नाल्कु कूटंगळप्पुवु । मिश्रनोळु नाल्कु कूटंगळप्पुवु । असंयतनोळें टु कूटंगळप्पुवु । देशसंयत-

वेदकरहितप्रमत्ते ।

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

वेदकरहिताप्रमत्ते ।

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

एतेषूक्तकूटेषु पूर्वकूटेषु मिलितेषु मिथ्यादृष्टावष्टौ । सासादने मिश्रे च चत्वारि । असंयतादिचतुष्के-

अनन्तानुबन्धी थी उसका विसंयोजन कर दिया। अतः उसके एक आवली तक अनन्तानुबन्धीका उदय न होनेसे उसकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टिमें अनन्तानुबन्धी रहित भी चार कूट होते हैं। उनमें-से प्रथम कूटमें नौ प्रकृतिरूप, दूसरे-तीसरेमें आठ प्रकृतिरूप और चौथेमें सात प्रकृतिरूप उदयस्थान होता है।

तथा उपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्वमें सम्यक्त्व मोहनीयका उदय नहीं है। अतः असंयत, देशसंयत, प्रमत्त और अप्रमत्तमें जो पहले चार-चार कूट कहे हैं वे सब वेदक सम्यक्त्वकी अपेक्षासे कहे हैं। उन सब कूटोंमें सम्यक्त्व मोहनीयको घटानेपर उपशम और क्षायिककी अपेक्षा असंयत, देशसंयत, प्रमत्त और अप्रमत्तमें चार-चार कूट होते हैं ॥४७८॥

पहलेके कहे कूटोंमें इन कूटोंको मिलानेपर मिथ्यादृष्टिमें आठ, सासादन और मिश्रमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नोळेंदु कूटंगळप्पुवु। प्रमत्तसंयतनोळेंदु कूटंगळप्पुवु। अप्रमत्तसंयतनोळमेंटु कूटंगळप्पुवु। अपूर्व्वकरणनोळु नाल्कु कूटंगळप्पुवु। अनिवृत्तिकरणनोळेरडु। सूक्ष्मसांपरायनोळोंदक्कुं। संदृष्टि :—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू
८	७	७	७	६	५	५	४	१	१
९।९	८।८	८।८	८।८	७।७	६।६	६।६	५।५	२	
१०	९	९	९	८	७	७	६		
७	०	०	६	५	४	४	०	०	०
८।८			७।७	६।६	५।५	५।५			
९			८	७	६	६			
८	४	४	८	८	८	८	४	२	१

अनंतरं गुणस्थानंगळोळपुनरुक्तमोहनीयोदयस्थानंगळ पेळ्दपरु :—

दस णव णवादिचउतिय तिट्ठाण णवट्ठ सग सगादिचऊ।
ठाणा छादितियं च य चदुवीसगदा अपुव्वोत्ति ॥४८०॥

दश नव नवादि चतुस्त्रिकत्रिस्थाननवाष्ट सप्तसप्तकादि चतुः। स्थानानि षडादित्रयं च चतुर्विंशतिगतान्यपूर्व्वकरणपर्य्यंतं ॥

गुणस्थानंगळोळु पूर्व्वोक्त अडचउ चतारि इत्याद्युक्तस्थानंगळोळपुनरुक्तस्थानंगळु मिथ्यादृष्टियोळु दशादि चतुःस्थानंगळप्पुवु। १०।९।८।७॥ सासादननोळु नवादि त्रिस्थानंगळप्पुवु ९।८।७॥ मिश्रनोळं नवादि अपुनरुक्तस्थानंगळु मूरप्पुवु।९।८।७॥ असंयतनोळं नवादि मोहनीयोदयस्थानंगळपुनरुक्तंगळु नाल्कप्पुवु।९।८।७।६॥ देशसंयतनोळु अष्टादि अपुनरुक्तस्थानंगळु नाल्कप्पुवु ८।७।६।५॥ प्रमत्तसंयतनोळु सप्तादिचतुरपुनरुक्तस्थानंगळप्पुवु। ७।६।५।४॥ अप्रमत्तसंयतनोळु सप्तप्रकृतिस्थानमादियागि चतुरपुनरुक्तमोहनीयोदयस्थान-

---

ऽष्टावष्टौ। अपूर्वकरणे चत्वारि। अनिवृत्तिकरणे द्वे। सूक्ष्मसांपराये एकम् ॥४७९॥ अमीष्वपुनरुक्तोदयस्थानानि गुणस्थानेष्वाह—

मिथ्यादृष्टौ दशकादीनि चत्वारि १०, ९, ८, ७। सासादने मिश्रे च नवकादीनि त्रीणि ९, ८, ७। असंयते तदादीनि चत्वारि ९, ८, ७, ६। देशसंयतेऽष्टकादीनि चत्वारि ८, ७, ६, ५। प्रमत्तेऽप्रमत्ते च

चार-चार, असंयत आदि चारमें आठ-आठ, अपूर्वकरणमें चार, अनिवृत्तिकरणमें दो और सूक्ष्मसाम्परायमें एक कूट होता है ॥४७९॥

इनमें अपुनरुक्त उदय स्थान गुणस्थानोंमें कहते हैं—

मिथ्यादृष्टीमें दस आदि चार उदयस्थान हैं जो दस प्रकृतिरूप, नौ प्रकृतिरूप, आठ प्रकृतिरूप और सात प्रकृतिरूप हैं। सासादन और मिश्रमें नौ आदि तीन-तीन स्थान हैं, जो नौ, आठ और सात प्रकृतिरूप हैं। देशसंयतमें आठ आदि चार उदयस्थान हैं, जो आठ, सात, छह और पाँच प्रकृतिरूप हैं। प्रमत्त और अप्रमत्तमें सात आदि चार हैं जो सात,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळप्पुवु । ७ । ६ । ५ । ४ ॥ अपूर्व्वकरणनोळु षट्प्रकृतिस्थानमादियागि अपुनरुक्तोदयस्थानंगळु मूरप्पुवु । ६ । ५ । ४ ॥ इंतीयपुनरुक्तस्थानंगळनितुं प्रत्येकं चतुव्विंशति भंगयुतंगळप्पुवु । संदृष्टि मि १० । ९ । ८ । ७ । भं २४ ॥ सासादननोळु ९ । ८ । ७ । भं २४ ॥ मि ९ । ८ । ७ । भं २४ ॥ अ । ९ । ८ । ७ । ६ । भं २४ ॥ दे ८ । ७ । ६ । ५ । भं २४ ॥ प्र ७ । ६ । ५ । ४ । भं २४ ॥ अ ७ । ६ । ५ । ४ । भं २४ ॥ अ ६ । ५ । ४ । भं २४ ॥

इल्लि मिथ्यादृष्टियादियागि पंचगुणस्थानंगळोळु संख्यापेक्षेयिदमपुनरुक्तस्थानंगळोळु सादृश्यमुंटादोडं प्रकृतिभेदमुंटप्पुदरिंदमपुनरुक्तंगळेयप्पुववें तें दोडे मिथ्यादृष्टियवशादि चतुःस्थानंगळोळं मिथ्यात्वप्रकृत्युदयमुंटु । सासादनन मूरु स्थानंगळोळं मिथ्यात्वप्रकृत्युदयमिल्लवु कारणदिंदमपुनरुक्तंगळप्पुवु । मिश्रन मूरु स्थानंगळोळु सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्युदयभेदमुंटप्पुदरिंदमपुनरुक्तंगळप्पुवु । असंयतन नाल्कुं स्थानंगळोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयमुळ्ळुवरिंदमपुनरुक्तंगळप्पुवु । देशसंयतन नाल्कुं स्थानंगळोळप्रत्याख्यानावरणकषायोदयमिल्लप्पुदरिंदमपुनरुक्तंगळप्पुवु ।

अनंतरं पुनरुक्तस्थानंगळु सहितमागि सर्व्वगुणस्थानंगळोळिद्दं दशादिप्रकृतिस्थानंगळ संख्येयुमनवर भंगंगळ संख्येयुमं पेळदपरु :—

एक्क य छक्केयारं एयारेयारसेव णव तिण्णि ।
एदे चदुवीसगदा चदुवीसेयार दुगठाणे ॥४८१॥

एकं च षट्कमेकादशैकादशैकादशैव नव त्रीणि । एतानि चतुर्विंशतिगतानि चतुर्विंशतिरेकादश द्वयेकस्थाने ॥

सप्तकादीनि चत्वारि ७, ६, ५, ४ । अपूर्वकरणे षट्कादीनि त्रीणि ६, ५, ४ । अमूनि सर्वस्थानि प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगानि ।

अथ मिथ्यादृष्ट्यादिषु पंचस्वपुनरुक्तानां संख्यासादृश्येऽपि प्रकृतिभेदादपुनरुक्तता तद्भेदस्तु मिथ्यात्वात्सासादने तदभावात्, मिश्रे सम्यग्मिथ्यात्वात्, असंयते सम्यक्त्वप्रकृतेर्देशसंयतेऽप्रत्याख्यानाभावाच्च ज्ञातव्या ॥४८०॥

छह, पाँच और चार प्रकृतिरूप हैं। अपूर्वकरणमें छह आदि तीन स्थान हैं जो छह, पाँच और चार प्रकृतिरूप हैं। ये सब स्थान प्रत्येक चौबीस-चौबीस भंगवाला है।

इन मिथ्यादृष्टि आदि पाँच गुणस्थानोंमें अपुनरुक्त स्थान कहे हैं उनमें-से किसीकी संख्या समान होते हुए भी प्रकृति भेदकी अपेक्षा अपुनरुक्तपना जानना। जैसे नौ-नौ प्रकृतिरूप स्थान अनेक कहे हैं। किन्तु उनमें प्रकृतियाँ अन्य-अन्य हैं। जैसे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मिथ्यात्व सहित है। सासादनमें मिथ्यात्व नहीं है। मिश्रमें सम्यक् मिथ्यात्व है, असंयतमें सम्यक्त्व मोहनीय है। देससंयतमें अप्रत्याख्यानका अभाव है आदि। अतः प्रकृतिभेद होनेसे अपुनरुक्तता जानना ॥४८०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व्वगुणस्थानंगळोळं कूडि दशप्रकृतिस्थानमों देयक्कुं। नवप्रकृतिस्थानंगळु षट्प्रमितंगळप्पुवु। अष्टप्रकृतिस्थानंगळेकादशप्रमितंगळप्पुवु। सप्तप्रकृतिस्थानंगळुमेकादशप्रमितंगळेयप्पुवु। षट्प्रकृतिस्थानंगळुमेकादशमात्रंगळेयप्पुवु। पंचप्रकृतिस्थानंगळु नवप्रमितंगळप्पुवु। चतुःप्रकृतिस्थानंगळु त्रिसंख्यातयुतंगळप्पुविंतिनितुं स्थानंगळनितुं प्रत्येकं चतुर्व्विंशति चतुर्व्विंशति भंगयुतंगळु। द्विप्रकृतिस्थानमों दुं चतुर्व्विंशतिभंगमनुळ्ळुदु। एकप्रकृतिस्थानमों दुं एकादशभंगयुतमवकु। संदृष्टि :—

१ ल	१	११
२ ल	१	२४
४	३	२४
५	९	२४
६	११	२४
७	११	२४
८	११	२४
९	६	२४
१०	१	२४

सर्वगुणस्थानेषु मिलित्वा दशकं स्थानमेकं नवकानि षट्, अष्टकानि सप्तकानि षट्काणि चैकादशैकादश, पंचकानि नव, चतुष्काणि त्रीणि। एतानि प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगगतानि द्विकमेकं भंगाश्चतुर्विंशतिः, एकैकमेकं

सब गुणस्थानोंमें मिलकर दस प्रकृतिरूप स्थान तो एक ही है जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें है। नौ प्रकृतिरूप छह स्थान हैं—मिथ्यादृष्टिमें तीन, दो प्रथम कूटोंमें और एक पिछले कूटोंमें। तथा सासादन मिश्र असंयतमें पहले कूटोंमें एक-एक। इस तरह छह हैं। तथा आठ प्रकृतिरूप, सात प्रकृतिरूप, छह प्रकृतिरूप ग्यारह-ग्यारह स्थान हैं। उनमें-से मिथ्यादृष्टिमें पहले कूटोंमें एक, पिछले कूटोंमें दो इस प्रकार तीन। सासादन और मिश्रमें दो-दो। असंयतमें पहले कूटोंमें दो, पिछले कूटोंमें एक, इस तरह तीन। देशसंयतमें पहले कूटोंमें एक। इस तरह आठ प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान हैं। तथा पिछले कूटोंमें एक मिथ्यादृष्टिमें, एक-एक सासादन और मिश्रमें, तीन असंयतमें, एक पहले और दो पिछले कूटोंमें। देशसंयतमें तीन—दो पहले और एक पिछले कूटोंमें। प्रमत्त और अप्रमत्तके पहले कूटोंमें एक-एक। इस तरह सात प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान हैं। तथा असंयतके पिछले कूटमें एक, देशसंयतके पहले कूटमें एक, पिछले कूटमें दो इस तरह तीन, प्रमत्त-अप्रमत्तमें दो पहले कूटमें एक पिछले कूटमें इस तरह तीन-तीन, एक अपूर्वकरणमें, इस तरह छह प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान होते हैं।

पाँच प्रकृतिरूप नौ स्थान हैं। उनमें-से एक देशसंयतके पिछले कूटमें, एक पहले दो पिछले कूटमें इस तरह तीन-तीन प्रमत्त और अप्रमत्तमें और दो अपूर्वकरणमें हैं। चार प्रकृतिरूप तीन स्थान हैं। एक-एक प्रमत्त-अप्रमतके पिछले कूटमें और एक अपूर्वकरणमें। ये सर्वस्थान जानना। इनमें-से एक-एक स्थानमें चौबीस-चौबीस भंग हैं। जैसे दस प्रकृतिरूप स्थानमें चार क्रोधादि कषायोंका उदय एक-एक वेदमें होनेसे बारह भंग हुए। वे बारह भंग हास्य-रति सहित और बारह भंग अरति-शोक सहित होनेसे चौबीस हुए। इसी प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमी रचनेयोळु द्वयेकप्रकृतिस्थानंगळोळु पेळदचतुर्विंशति भंगंगळुमेकादशभंगंगळुमुपपत्तियं तोरिदपरु :—

उदयट्ठाणं दोण्हं पणबंधे होदि दोण्हमेक्कस्स ।
चदुविहबंधट्ठाणे सेसेसेयं हवे ठाणं ॥४८२॥

उदयस्थानं द्वयोः पंचबंधे भवति द्वयोरेकस्य । चतुर्विधबंधस्थाने शेषेष्वेकं भवेत्स्थानं ॥

पुंवेदमुं कषायचतुष्टयमुमंतु पंचबंधकनोळु द्वयोरुदयस्थानं भवति त्रिवेदंगळोळोंदु वेदमुं चतुःकषायंगळोळोंदु कषायमुमंतु द्विप्रकृत्युदयस्थानमक्कुं । केवलं चतुष्कषायबंधकनोळु द्वयोरेकस्य च येरडरुदयस्थानमुमोंदरुदयस्थानमुमक्कुं । शेषेष्वेकं भवेत् । स्थानं शेषत्रिकषायद्विकषाय एककषायबंधकनोळमबंधकनोळमेकप्रकृत्युदयस्थानमक्कुं । संदृष्टि :—

भंगा एकादश ॥४८१॥ एतत्स्थानद्वयभंगानामुपपत्तिमाह—

पंचबंधकचतुर्बंधकानिवृत्तिकरणभागयोस्त्रिवेदचतुःसंज्वलनानामेकैकोदयसंभवं द्विप्रकृत्युदयस्थानं स्यात् । तत्र भंगा द्वादश द्वादशेति चतुर्विंशतिः । पक्षांतरापेक्षया चतुर्बंधकचरमसमये त्रिद्वयेकबंधकेष्वबंधके च क्रमेण चतुस्त्रिद्व्येकैकसंज्वलनानामेकैकोदयभवमेकोदयभवमेकोदयस्थानं स्यात् । तेन तत्र भंगाः चतुस्त्रिद्व्येकैके

अन्य स्थानोंमें जानना । दो प्रकृतिरूप एक स्थान है उसके चौबीस भंग हैं । एक प्रकृतिरूप एक स्थान है उसके ग्यारह भंग हैं ॥४८१॥

गुणस्थानोंमें उदयस्थानों और कूटोंका सूचक यन्त्र—

	मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अ.	अ.	अ.	सू.
	८ ९।९ १०	७ ८।८ ९	७ ८।८ ९	७ ८।८ ९	६ ७।७ ८	५ ६।६ ७	५ ६।६ ७	४ ५।५ ६	१ २	१
	७ ८।८ ९	०	०	६ ७।७ ८	५ ६।६ ७	४ ५।५ ६	४ ५।५ ६	०	०	०
कूट	८	४	४	८	८	८	८	४	२	१

आगे दो प्रकृतिरूप स्थानोंके भंग कहते हैं—

अनिवृत्तिकरणमें जहाँ पाँच प्रकृतियोंका बन्ध होता है और जहाँ चार प्रकृतियोंका बन्ध होता है वहाँ भी कुछ काल वेदोंका उदय रहता है । इन दोनों भागोंमें तीनों वेदों और चार कषायोंमें-से एक-एकका उदय होनेसे दो प्रकृतिरूप स्थान पाया जाता है । तो चार-चार कषाय एक-एक वेदमें होनेसे बारह भंग हुए । दोनों भागोंमें मिलाकर चौबीस भंग हुए । अन्य आचार्य (कनकनन्दि) के मतसे जहाँ चार प्रकृतियोंका बन्ध होता है उसके अन्तिम समयमें वेदोंका उदय नहीं है । अतः उसमें और जहाँ तीन, दो और एक प्रकृतिका बन्ध होता है उनमें और जहाँ बन्ध नहीं होता है उसमें क्रमसे चार, तीन, दो, एक-एक संज्वलन

---

१. चौरस्यासमंतभद्रायस्याद्वादवारवघूटी सन्निधाल तिलकोपमः । श्री चौंहरसंज्ञो मे वृत्तिमत्रांतमस्यधात् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं ५	बं ४	बं ४	बं ३	बं २	बं १	बं ०
उ २	उ २	उ १	उ १	उ १	उ १	उ १
भं १२	भं १२	भं ४	भं ३	भं २	भं १	भं १

अनंतरं चतुर्ब्बंधकनोळु द्विप्रकृतिस्थानोदयमक्कुमें दोडवक्कुपपत्तियं पेळदपरु :—

अणियट्टिकरणपढमा संढित्थीणं च सरिसउदयद्धा ।
तत्तो मुहुत्तअंते कमसो पुरिसादिउदयद्धा ॥४८३॥

अनिवृत्तिकरणप्रथमात् षंडस्त्रियोश्च सदृशोदयाद्धा। ततो मुहूर्तांते क्रमशः पुरुषोदयाद्युदयाऽद्धा ॥

अनिवृत्तिकरणप्रथमभागप्रथमसमयं मोदल्गोंडु षंढस्त्रीवेदंगळेरडक्कं सदृशोदयाद्धा समानोदयाद्धेयक्कुं । ततः आ षंडस्त्रीवेदंगळ समानोदयाद्धेय मेले अंतर्म्मुहूर्त्ताधिकोदयाद्धे पुरुषवेदक्कक्कुमादिशब्ददिदं संज्वलनक्रोधादिगळुदयाद्धेगळु मंतर्म्मुहूर्त्तांतर्म्मुहूर्त्ताधिकंगळप्पुवु ॥ ई द्वादश पुरुष संबंधिरचनेयिंदु--

							२१
						२१	२१
					२१	२१	२१
			४	२१	२१	२१	२१
५	४	४	२१	२१	२१	२१	२१
	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१
षं		स्त्री	पुं	क्रो	मा	या	लो

भूत्वैकादश ॥४८२॥ अमुमेवार्थं विशदयितुं सूत्रचतुष्टयमाह—

अनिवृत्तिकरणप्रथमभागप्रथमसमयमादिं कृत्वा षंढस्त्रीवेदयोरुदयाद्धा सदृशी ततः पुंवेदस्य आदिशब्दात् संज्वलनक्रोधादीनां च क्रमशोंऽतर्मुहूर्ताधिका भवंति । द्वादशपुरुषसंबंधिनी रचनेयं ।

कषायोंमें-से एक-एकका उदय होता है। वहाँ भंग क्रमसे चार, तीन, दो एक-एक जानना। इस प्रकार एक प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें ग्यारह भंग होते हैं ॥४८२॥

यही कथन चार गाथाओंसे करते हैं—

अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागके प्रथम समयसे लगाकर नपुंसक वेद और स्त्रीवेदके उदयका काल समान है। उससे पुरुषवेद, संज्वलन, क्रोध, मान, माया, लोभके उदयका काल क्रमसे यथासम्भव अन्तर्मुहूर्त-अन्तर्मुहूर्त अधिक है ॥४८३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं पंचबंधकंगेयुं चतुर्ब्बंधकंगेयुं सवेदावेदविभागमं पेळ्दपरु :—

पुरिसोदयेण चडिदे बंधुदयाणं च जुगवदुच्छित्ती ।
सेसोदयेण चडिदे उदयदुचरिमम्मि पुरिसबंधछिदी ॥४८४॥

पुरुषोदयेन चटिते बंधोदययोर्य्युगपद्व्युच्छित्तिः । शेषोदयेन चटिते उदयद्विचरमे पुरुषबंधव्युच्छित्तिः ॥

पुरुषवेदोदयदिदं श्रेण्यारोहणं माडल्पडुत्तिरला पुरुषवेदोदयमुं तद्बंधमुमेरडुं युगपद्व्युच्छित्तियप्पुवु । च शब्ददिदमुदयद्विचरमसमयदोळु पुरुषवेदबंधव्युच्छित्तियक्कुमेंदु पक्षांतराचार्य्याभिप्रायं सूचिसल्पट्टुदा पक्षमुमंगीकृतमादुदेंतेंदोडे चतुर्ब्बंधकनोळु द्विप्रकृत्युदयस्थानं पेळल्पट्टुदप्पुदरिंदमल्लियुं द्वादश भंगंगळप्पुवेंदु मुंदण सूत्रदोळु पेळ्दपरप्पुदरिंदं । शेषषंडस्त्रीवेदोदयंगळिदं श्रेण्यारोहणं माडल्पडुगुमप्पोडे उदयद्विचरमसमयदोळु पुरुषवेदबंधव्युच्छित्तियक्कुमंतागुत्तंविरलु :—

पणबंधगम्मि बारस भंगा दो चेव उदयपयडीओ ।
दो उदये चदुबंधे बारेव हवंति भंगा हु ॥४८५॥

पंचबंधे द्वादशभंगा द्वे एवोदयप्रकृती द्वयोरुदये चतुर्ब्बंधे द्वादशैव भवंति भंगाः खलु ॥

						२१
					२१	२१
				२१	२१	२१
		४	२१	२१	२१	२१
४	४	२१	२१	२१	२१	२१
२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१
षं	स्त्री	पुं	क्रो	मा	मा	लो

पुंवेदोदयेन श्रेण्यारूढे पुंवेदस्य बंधव्युच्छित्तिः उदयव्युच्छित्तिश्च द्वे युगपदेव । अथवा चशब्दाद्बंधव्युच्छित्तिः उदयद्विचरमसमये स्यात् । शेषस्त्रीषंढवेदोदयेन श्रेण्यारूढयोरुदयद्विचरमसमये एव पुंवेदबंधव्युच्छित्तिः ॥४८४॥ तत्र—

जो पुरुषवेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़ते हैं उनके पुरुषवेदकी बन्ध व्युच्छित्ति और उदय व्युच्छित्ति एक साथ होती है । अथवा 'च' शब्दसे बन्धकी व्युच्छित्ति उदयके द्विचरम समयमें होती है । शेष स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदयके साथ जो श्रेणि चढ़ते हैं उनके उन वेदोंके उदयके द्विचरम समयमें पुरुषवेदकी बन्ध व्युच्छित्ति होती है ॥४८४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुंवेदमुं चतुःसंज्वलनकषायमुमें ब पंचबंधकानिवृत्तिकरणनोळु द्वादश भंगंगळप्पुवु । उदयप्रकृतिगळोंदु वेदमुमोंदु कषायमुमंतेरडयप्पुउ ब ५ चतुर्ब्बंधे केवल चतुःप्रकृतिबंधदोळु
१११
११११
द्वयोरुदये द्विप्रकृत्युदयमागुत्तं विरलु द्वादश भंगंगळप्पुवु ब ४ पुरुषवेदोदयदिदं श्रेण्यारोहणंगे
१११
११११
य्दंगे पुरुषवेदोदयद्विचरमसमयदोळे पुरुषवेदबंधव्युच्छित्तियक्कुमें बुदक्के इदे ज्ञापकमक्कुं । द्विप्रकृत्युदयचतुर्ब्बंधकनोळु अष्टभंगंगळल्लदे द्वादशभंगंगळान्यथानुपपत्ति यप्पुदरिदं ॥

कोहस्स य माणस्स य मायालोहाणियट्टिभागम्मि ।
चदुतिदुगेक्कं भंगा सुहुमे एक्को हवे भंगो ॥४८६॥

क्रोधस्य च मानस्य च मायालोभानिवृत्तिभागे । चतुस्त्रिद्व्येको भंगाः सूक्ष्मे एको भवेद् भंगः ॥

क्रोधद, मानद मायेय लोभदुदयदनिवृत्तिकरणभागेयोळु क्रमदिदं चतुर्ब्बंधकनोळं त्रिबंधकनोळं द्विबंधकनोळमेकबंधकनोळमबंधकनोळं नाल्कुं मूरुमेरडुमोंदुमोंदुं भंगंगळप्पुवु । इंतनिवृत्तिकरणन सवेदावेदभागेगलोळु पंचबंधचतुर्ब्बंधभेददिदं द्वादशद्वादशभंगंगळगं अवेदभागेय चतुस्त्रिद्व्येकभंगंगळगं सूक्ष्मसांपरायनेकभंगवक्कं संदृष्टि—

बं ५	बं ४	बं ४	बं ३	बं २	बं १	सू. बं. ०
उ २	उ २	उ १	उ १	उ १	उ १	उ १
भं १२	भं १२	भं ४	भं ३	भं २	भं १	भं १

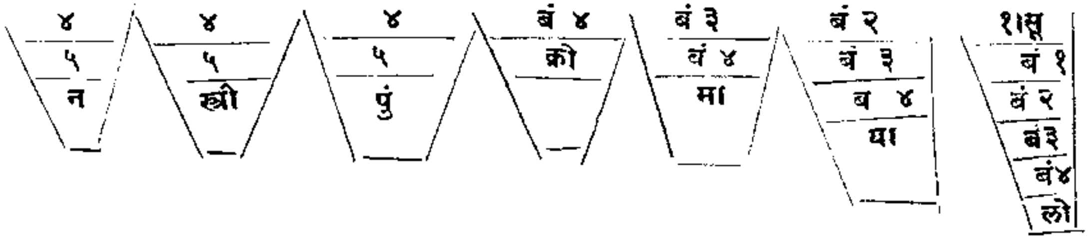

पंचबंधकानिवृत्तिकरणे द्वे एवोदयप्रकृती । तत्र भंगा द्वादश भवंति ।
बं ५
१ १ १
१ १ १ १
चतुर्बंधकेऽपि द्व्युदये भंगा द्वादश खलु
बं ४
१ १ १
१ १ १ १ ॥४८५॥
क्रोधमानमायालोभोदयानिवृत्तिकरणभागेषु चतुस्त्रिद्व्येकबंधकेषु क्रमेण चतुस्त्रिद्व्येकभंगा भवंति ।

अनिवृत्तिकरणमें जहाँ पाँच प्रकृतियोंका बन्ध होता है वहाँ दो उदय प्रकृतियाँ हैं। तथा चार कषाय और तीन वेदोंके बारह भंग हैं। इसी प्रकार जहाँ चार प्रकृतियोंका बन्ध है वहाँ भी दोका उदय होनेसे बारह भंग हैं ॥४८५॥

क्रोध, मान, माया, लोभके उदयरूप अनिवृत्तिकरणके चार भागोंमें चार, तीन, दो और एक प्रकृतिका बन्ध पाया जाता है। उनमें कषाय बदलनेकी अपेक्षा क्रमसे चार, तीन,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं सर्व्वोदयस्थानसंख्येयुमनवर प्रकृतिसंख्येयुमं पेळदपरु:—

बारससयतेसीदी ठाणवियप्पेहिं मोहिदा जीवा ।
पणसीदिसदसगेहिं पयडिवियप्पेहिं ओघम्मि ॥४८७॥

द्वादशशतत्र्यशीतिस्थानविकल्पैर्म्मोहिताः जीवाः पंचाशीतिशत सप्तभिः प्रकृतिविकल्पैरोघे । ओघे गुणस्थानदोळु सर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळ्

१०	९	८	७	६	५	४
१[1]	६	११	११	११	९	३

यितु द्विपंचाशत्प्रमितंगळप्पुवु[2] ५२। इवक्के प्रत्येकं चतुर्व्विंशतिस्थानंगळागुत्तं विरलु। ५२। २४। गुणिसे सासिरदिन्नूर नाल्वत्तेंटप्पुववरोळु १२४८। द्विप्रकृत्युदयभंगंगळु चतुर्व्विंशति-प्रमितंगळु मनेक प्रकृत्युदय भंगंगळुमेकादशप्रमितंगळप्पुवंतु मूवत्तय्दु स्थानंगळं ३५। प्रक्षेपिसुत्तिरलु सर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळु सासिरदिन्नूरेण्भत्तमूरु स्थानंगळप्पुवु १२८३। इंतनितुं मोहोदयस्थानं-गळिंदं त्रिकालत्रिलोकोदरवर्त्ति चराचरजीवंगळु मोहिसल्पट्टुवा स्थानंगळ सर्व्वप्रकृतिगळु १०। ५४। ८८। ७७। ६६। ४५। १२। कूडि मूनूरय्वत्तेरडु प्रकृतिगळप्पु ३५२। विवक्के प्रत्येकं

सूक्ष्मसांपराये मोहनीयबंधरहित एको भंगः ॥४८६॥ अथ सर्वोदयस्थानसंख्यास्तत्प्रतिसंख्याश्चाह—

ओघे गुणस्थानेषु सर्वमोहनीयोदयस्थानानीमानि—

१०	९	८	७	६	५	४	२
१	६	११	११	११	९	३	१

मिलित्वा त्रिपंचाशत् । प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगानीति तावता संगुण्यैकप्रकृतिकस्यैकादशभिर्युतानि त्र्यशीत्यग्रद्वादशशतानि तत्प्रकृतयोऽमूः १०। ५४। ८८। ७७। ६६। ४५। १२। २। मिलित्वा चतुःपंचाशत्

दो और एक भंग होते हैं। और सूक्ष्म साम्परायमें मोहनीयका बन्ध नहीं होता। वहाँ सूक्ष्मलोभके उदयरूप स्थानमें एक भंग है। इस तरह ग्यारह भंग हैं ॥४८६॥

आगे सब उदयस्थानोंकी और उनकी प्रकृतियोंकी संख्या कहते हैं—

गुणस्थानोंमें मोहनीयके सब उदयस्थान दस प्रकृतिरूप एक, नौ रूप छह, आठ, सात, छह प्रकृतिरूप ग्यारह-ग्यारह, पाँचरूप नौ, चार रूप तीन, दो रूप एक, सब मिलकर तिरपन हुए। एक-एकके चौबीस-चौबीस भंग होनेसे चौबीससे तिरपनको गुणा करनेपर बारह सौ बहत्तर हुए। तथा एक प्रकृतिरूप स्थानके ग्यारह भंग मिलाकर बारह सौ तिरासी हुए।

अब उन स्थानोंकी प्रकृतियोंकी अपेक्षा कहते हैं—

दस प्रकृतिरूप एक स्थानकी प्रकृति दस। नौ रूप छह स्थानोंकी चौवन, आठरूप ग्यारह स्थानोंकी अठासी, सातरूप ग्यारह स्थानोंकी सतहत्तर। छह रूप ग्यारह स्थानोंकी छियासठ। पाँचरूप नौ स्थानोंकी पैंतालीस। चार रूप तीन स्थानोंकी बारह। दोरूप एक

---

१. दशसंख्यावच्छिन्नसामान्योदयकूटमोंदु नवसंख्यावच्छिन्नसामान्योदयकूट आरु इंतु मुंदयुं ॥

२. हत्तु प्रकृत्युदयवनुळळ स्थानमोंदप्पुदरिं प्रकृतियुहत्ते ओंभत्तु प्रकृत्युदयस्थानंगळारप्पुदरिंदलिल नवगुणितषट्-स्थानप्रकृतिगळु ५४ मुंदयमितं सामान्यस्थान ५२ इवं विशेषिसे १२४८ ॥

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

चतुर्व्विंशतिकल्पंगलागुत्तं विरलु ३५२। २४। गुणिसियें दु सासिरद नानूरनाल्वत्तें दु प्रकृत्युदयप्रकृतिगळोळु ८४४८। द्विप्रकृत्युदयस्थानद नाल्वत्तें दु प्रकृतिगळुमनेकप्रकृत्युदयस्थानद पन्नों दु प्रकृतिगळुमनंतय्वत्तों भत्तु ५९ प्रकृतिगळं प्रक्षेपिसुत्तं विरलु एंटु सासिरदैनूरेळु प्रकृतिगळिदमं ८५०७। मोहिसल्पट्टुवु ॥

अनंतरमपुनरुक्तस्थानसंख्येयुमनवरपुनरुक्तप्रकृतिगळुमं पेळदपरु :—

एक्क य छक्केयारं दस सग चदुरेक्कयं अपुणरुत्ता।
एदे चदुवीसगदा बारदुगे पंच एक्कम्मि ॥४८८॥

एकं च षट्कैकादश दश सप्त चतुरेकमपुनरुक्तानि एतानि चतुर्व्विंशतिगतानि द्वादशद्विके पंचैकस्मिन् ॥

एकं च दश प्रकृतिस्थानमों देयक्कुं। षट्क नवप्रकृतिस्थानंगळारप्पुवु। एकादश अष्टप्रकृतिस्थानंगळु पन्नों दप्पुवु। दश सप्तप्रकृतिस्थानंगळु दशप्रमितंगळप्पुवेकें दोडे वेदकसमन्वितरप्प प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोलों दु सप्तप्रकृतिस्थानं पुनरुक्तमें दु कळेदुदप्पुदरिंद। सप्त षट्प्रकृतिस्थानंगळेळेयप्पुवेकें दोडे वेदकसमन्वितप्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळेरडु षट्प्रकृतिस्थानंगळगमवेदक प्रमत्ताऽप्रमत्तरुगळ षट्प्रकृतिस्थानद्वयवक मपूर्व्वकरणषट्प्रकृतिस्थान ओंदवकं पुनरुक्तत्वमप्पुदरिनवेरडुमंतु पुनरुक्तषट्प्रकृतिस्थानंगळु नाल्कुं कळेदवप्पुदरिंदं। चतुः पंचप्रकृतिस्थानंगळुं नाल्कयप्पुवेकें दोडे सवेदकरप्प प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळों दु पंचप्रकृतिस्थानमुमवेदकरोळेळु पंचप्रकृतिस्थानंगळोळु नाल्कु पंचप्रकृतिस्थानंगळु पुनरुक्तंगळप्पुवंतु पुनरुक्त पंचप्रकृतिस्थानंगळेदुं कळेदु

त्रिशतं चतुर्विंशत्या संगुण्य ८४९६ एकप्रकृतिकस्यैकादशभिर्युताः सप्ताग्रपंचाशीतिशतानि। एतैः स्थानविकल्पैश्च त्रिकालत्रिलोकोदरवर्त्तिचराचरजीवा मोहिताः संति ॥४८७॥ अथापुनरुक्तस्थानसंख्यां तत्प्रकृतीश्चाह—

दशकस्थानमेकं नवकानि षट् अष्टकान्येकादश सप्तकानि दशैव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तदेकस्य पुनरुक्तत्वात्। षट्कानि सप्तैव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोः षट्कद्वयस्य षट्कद्वयेन अवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तु षट्कद्वयस्या-

---

स्थानकी दो। सब मिलकर तीन सौ चौवन प्रकृतियाँ हुईं। उन्हें चौबीस भंगोंसे गुणा करनेपर चौरासी सौ छियानबे, और एक प्रकृतिरूप स्थानके ग्यारह भंग मिलानेपर पचासी सौ सात भेद सर्व प्रकृतियोंकी अपेक्षा हुए। इन स्थान-भेद और प्रकृति-भेदोंसे त्रिकाल और त्रिलोकमें वर्तमान जीव मोहित हैं ॥४८७॥

आगे अपुनरुक्त स्थानोंकी संख्या और उनकी प्रकृतियाँ कहते हैं—

दस प्रकृतिरूप एक स्थान, नौ रूप छह स्थान, आठरूप ग्यारह स्थान, किन्तु सातरूप दस स्थान हैं। पहले ग्यारह कहे थे। उनमें-से पहलेके कूटोंमें सम्यक्त्व मोहनीय सहित वेदक सम्यग्दृष्टिके प्रमत्त-अप्रमत्तके सात प्रकृतिरूप दो स्थान कहे थे। वे दोनों समान हैं। अतः एक स्थान पुनरुक्त होनेसे दस कहे। छह प्रकृतिरूप सात ही हैं। पहले ग्यारह कहे थे उनमें-से वेदक सहित पहले कूटोंमें छह प्रकृतिरूप दो कूट प्रमत्तके और दो कूट अप्रमत्तके।

---

१. अंतु मूल ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वप्पुदरिंदं एकं चतुःप्रकृतिस्थानमों वेयक्कु मेंतेंदोडे अवेदकरोळु चतुःप्रकृतिस्थानद्वयं पुनरुक्तंगळेंदु कळेदुवप्पुदरिंदं। इंतु अपुनरुक्तस्थानंगळु नाल्वत्तेयप्पु ४० वी नाल्वत्तुं स्थानंगळुं प्रत्येकं चतुर्व्विशतिभेदंगळप्पुवप्पुदरिंदमा नाल्वत्तनिप्पत्तनाल्करिंदं गुणिसिदो ४०। २४। डों भइनूररुवत्तु मोहनीयोदयस्थानंगळप्पु ९६० विवरोळु द्वादश द्विके द्विप्रकृत्युदयस्थानदोळु द्वादशस्थानभेदभंगंगळप्पुवेंतेंदोडे पुनरुक्तद्वादशस्थानभेदंगळु कळेदु वप्पुदरिंदं पंचैकस्मिन् एकप्रकृत्युदयस्थानदोळपुनरुक्तस्थानविकल्पंगळैदेयप्पुवेंतेंदोडे संज्वलनक्रोधादिचतुष्टयमुं[1] सूक्ष्मलोभमुमितैदे स्थानंगळप्पुवु। शेष षट्स्थानंगळु पुनरुक्तंगळेंदु कळेदुवप्पुदरिंदं। इंतु द्व्येक प्रकृत्युदय स्थानंगळेरडरोळं कूडि पदिनेळु स्थानंगळप्पु १७। विवं कूडिदोडे अपुनरुक्त सर्व्वस्थानंगळों भैनूरेप्पत्तेळप्पु ९७७ वेंदु मुंदण सूत्रदोळु पेळ्दपरु। संदृष्टि—

१०	९	८	७	६	५	४	२	१
१ ठा	६	११	१०	७	४	१	१	१
१० प्र	५४	८८	७०	४२	२०	४	१२	५

पूर्वकरणषट्केन च पुनरुक्तत्वात्। पंचकानि चत्वार्येव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तद्द्वये एकस्य अवेदकतत्सत्सु चतुर्णां च पुनरुक्तत्वात्। चतुष्कमेकमेव अवेदकं तद्द्वयस्यापूर्वकरणस्य तेन पुनरुक्तत्वात्। एतानि चत्वारिंशत् प्रत्येकं चतुर्विंशतिभेदानीति तावता गुणयित्वा द्विप्रकृतिकस्य द्वादशभिरेकप्रकृतिकस्य पंचभिश्चापुनरुक्तैर्युतानि भूत्वा ॥४८८॥

उनमें समानता होनेसे दो पुनरुक्त हुए। तथा वेदक रहित पिछले कूटोंमें छह प्रकृतिरूप स्थानको लिये एक कूट प्रमत्तका और एक कूट अप्रमत्तका था। ये दोनों कूट अपूर्वकरणके छह प्रकृतिरूप कूटके समान हैं। अतः दो कूट पुनरुक्त हुए। इस प्रकार चार कूटोंके चार स्थान पुनरक्त होनेसे घटा दिये।

पाँच प्रकृतिरूप चार ही स्थान हैं। पहले नौ कहे थे। उनमें वेदक सहित पहले कूटोंमें एक प्रमत्तका कहा था और एक अप्रमत्तका कहा था। वे दोनों समान हैं। अतः उनमें एक पुनरुक्त है। वेदक रहित पिछले कूटोंमें एक देशसंयतका, दो-दो प्रमत्त अप्रमत्त और अपूर्वकरणके, इन सातमें-से प्रमत्त, अप्रमत्त अपूर्वकरणके समान हैं। अतः चार पुनरुक्त हुए। इस प्रकार पांच स्थान पुनरुक्त कम किये।

चार प्रकृतिरूप एक ही स्थान है। पहले तीन कहे थे। वे तीनों ही समान होनेसे दो पुनरुक्त घटा दिये। इस प्रकार जिनमें प्रकृतियोंकी समानता है ऐसे पुनरुक्त स्थान घटानेपर चालीस शेष रहते हैं। एक-एक स्थानके चौबीस-चौबीस भंग होनेसे चौबीससे गुणा करनेपर नौ सौ साठ हुए।

पहले दो प्रकृतिरूप स्थानके चौबीस भंग कहे थे। उन-मेंसे बारह पुनरुक्त छोड़े बारह रहे। और एक प्रकृतिरूप स्थानके ग्यारह भंग कहे थे। उनमें-से छह पुनरुक्त छोड़े पाँच रहे। इन सतरहको नौ सौ साठमें जोड़नेपर नौ सौ सत्तहत्तर हुए ॥४८८॥

1. क्रोधमानमायाबादर लोभसूक्ष्मलोभ अंतु ५ ॥

णवसयसत्तत्तरिहिं ठाणवियप्पेहि मोहिदा जीवा ।
इगिदालूणत्तरिसय पयडिवियप्पेहि णायव्वा ॥४८९॥

नवशतसप्तसप्ततिभिः स्थानविकल्पैर्म्मोहिता जीवाः । एकचत्वारिंशदेकान्न सप्ततिशत-प्रकृतिविकल्पैर्ज्ञातव्याः ॥

अपुनरुक्तसर्व्व मोहनीयोदयस्थान विकल्पंगळो भैनूरेप्पत्तेळरिंदं त्रिकालत्रिलोकोदरवर्त्ति-चराचर संसारि जीवंगळु मोहिसल्पट्टुववर प्रकृतिविकल्पंगळु मारुसासिरवो भैनूर नाल्वतो द-रिंदमुं मोहिसल्पट्टुवु । संदृष्टि स्थान । ९७७ । प्रकृतिगळु कूडि ६९४१ ॥

१०	५४	८८	७०	४२	२०	४	२४	५
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	०	०

अनंतरं मोहनीयोदयस्थानमुमनवर प्रकृतिगळुमं गुणस्थानदोळुपयोगयोगादिगळोळु पेळ्दपरु ।

उदयट्ठाणं पयडिं सगसगउवजोगजोगआदीहिं ।
गुणयित्ता मेलविदे पदसंखा पयडिसंखा च ॥४९०॥

उदयस्थानं प्रकृतिं स्वस्वोपयोगयोगादिभिर्गुणयित्वा मिलिते पदसंख्या प्रकृतिसंख्या च ॥

उदयस्थानं, पुव्विल्लेसुवि मिळिदे अडचउ चत्तारि इत्यादिगाथासूत्रदि गुणस्थानोक्तोदय-स्थानसंख्येयुमं प्रकृतिं स्वस्वगुणस्थानसंबंधि कूटंगळ दशाद्यंकंगळ मेळनेदोळाद प्रकृतिसंख्येयुमं

नवशतानि सप्तसप्तत्यग्राणि तत्प्रकृतयोऽमूः—१० । ५४ । ८८ । ७० । ४२ । २० । ४ । मिलित्वा-ऽष्टाशीतिद्विशतं चतुर्विंशत्या गुणयित्वा द्विप्रकृतिकस्य चतुर्विंशत्या एकप्रकृतिकस्य पंचभिश्च युताः एकचत्वा-रिंशदग्रैकोनसप्ततिशतानि । एतैः स्थानविकल्पैः प्रकृतिविकल्पैश्च त्रिकालत्रिलोकोदरवर्तिचराचरसंसारिजीवाः मोहिताः संति ॥४८९॥ अथ मोहोदयस्थानतत्प्रकृतीर्गुणस्थानेषूपयोगादीनाश्रित्याह—

'पुव्विल्लेसुवि मिलिदे' इति सूत्रोक्तस्थानसंख्यां तत्प्रकृतिसंख्यां च संस्थाप्य स्वस्वगुणस्थाने संभव्यु-

इस प्रकार नौ सौ सतहत्तर हुए । इनकी प्रकृतियां कहते हैं—

दसरूप एक स्थानकी दस प्रकृति । नौरूप छह स्थानोंकी चौवन प्रकृतियाँ । आठरूप ग्यारह स्थानोंकी अठासी । सातरूप दस स्थानोंकी सत्तर । छहरूप सात स्थानोंकी बयालीस । पाँचरूप चार स्थानोंकी बीस । चार रूप एक स्थानकी चार । ये सब मिलकर दो सौ अठासी हुईं । इनको चौबीस भंगसे गुणा करनेपर उनहत्तर सौ बारह हुए । उनमें दो प्रकृतिरूपके चौबीस भंग (एक-एकके बारह-बारह) और एक प्रकृतिरूपके पाँच मिलानेपर उनहत्तर सौ इकतालीस भेद हुए । इन स्थानभेद और प्रकृतिभेदसे त्रिकाल और त्रिलोकवर्ती चराचर संसारी जीव मोहित हैं ॥४८९॥

आगे मोहके उदयस्थान और उनकी प्रकृतियोंको गुणस्थानोंमें उपयोग आदिकी अपेक्षा कहते हैं—

'पुव्विल्लेसुवि मिलिदे' इत्यादि गाथामें कही स्थानोंकी संख्या और उन स्थानोंकी

१. एकचत्वारिंशदधिकान्येकोनसप्तति ६९ मितानि शतानि प्रकृतयः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टयाद्विस्वस्वगुणस्थानसंभवोपयोगयोगंगळिवमुमादिशब्ददिंदं संयमलेश्यासम्यक्त्वंगळिवमुं गुणिसि कूडुत्तं विरलु स्थानसंख्येयुं तत्प्रकृतिसंख्येयुमक्कुमें दु पेळ्दनंतरं स्वस्वगुणस्थानदोळु संभविसुव उपयोगंगळं पेळ्दपरु :—

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते जिणे य सिद्धे य।
पणछस्सत्त दुगं च य उवजोगा होंति दोच्चेव ॥४९१॥

मिथ्यादृष्टिद्वये मिश्रत्रये प्रमत्तसप्तसु जिनयोश्च सिद्धे च। पंच षट् सप्त द्विकं च चोपयोगा भवंति द्वौ चैव ॥

मिथ्यादृष्टिद्वये पंच मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळं सासादनसम्यग्दृष्टिगुणस्थानदोळमितो गुणस्थानद्वयदोळु प्रत्येकं कुमतिकुश्रुतविभंगमें ब ज्ञानोपयोगंगळु मूरुं चक्षुर्द्दर्शनमचक्षुर्द्दनमें ब दर्शनोपयोगद्वयमंतुपयोगपंचकमक्कुं। मिश्रत्रये षट् मिश्रनोळमसंयतनोळं देशसंयतनोळं मतिश्रुतावधि चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनमें बुपयोगषट्कं प्रत्येकमक्कुं। प्रमत्तसप्तसु सप्त प्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषाय क्षीणकषायरें ब सप्तगुणस्थानंगळोळु मतिश्रुतावधिमनःपर्य्ययज्ञानोपयोगंगळु नाल्कुं चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनमुमें ब दर्शनोपयोगंगळु मूरुमंतु प्रत्येकं सप्तसप्तोपयोगंगळप्पुवु। जिने द्विकं च सिद्धे च द्वौ चैव यें बुपयोगंगळप्पुवु—

गु०	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू
ठा	८	४	४	८	८	८	८	४	११११	१
प्रकृ	६८	३२	३२	६०	५२	४४	४४	२०	२।१	१
उप	५	५	६	६	६	७	७	७	७।७	७
ठा वि	४०	२०	२४	४८	४८	५६	५६	२८	७।७	७
प्र वि	३४०	१६०	१९२	३६०	३१२	३०८	३०८	१४०	१४।७	७
गुणका	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	१२।४	१

पयोगयोगैः, आदिशब्दात्संयमदेशसंयमलेश्यासम्यक्त्वैश्च संगुण्य मेलने स्थानसंख्या प्रकृतिसंख्या च स्यात् ॥४९०॥ तद्यथा—

उपयोगा मिथ्यादृष्टयादिद्वये त्र्यज्ञानं द्विदर्शनमिति पंच। मिश्रादित्रये त्र्यज्ञानं त्रिदर्शनमिति षट्।

प्रकृतियोंकी संख्याको अपने-अपने गुणस्थानोंमें सम्भव उपयोग योग और आदि शब्दसे संयम, देशसंयम, लेश्या, सम्यक्त्वसे गुणा करके सबको जोड़नेपर जो प्रमाण हो उतनी वहाँ मोहकी स्थान संख्या और प्रकृति संख्या जानना ॥४९०॥

वही कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि आदि दो गुणस्थानोंमें तीन अज्ञान, दो दर्शन ये पाँच उपयोग होते हैं। मिश्र आदि तीनमें तीन ज्ञान तीन दर्शन ये छह उपयोग होते हैं। प्रमत्त आदि सातमें चार ज्ञान तीन दर्शन ये सात उपयोग होते हैं। सयोगी और अयोगी जिनमें तथा सिद्धोंमें केवलज्ञान, केवलदर्शन ये दो उपयोग होते हैं।

इंतुपयोगंगळिंदं गुणिसल्पट्टुदयस्थानंगळुमं तत्प्रकृतिगळुमं तंतम्मगुणस्थानदोळु स्थापिसल्पट्टुवं भाविसिदातंगनंतरमवरोळालापं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे मिथ्यादृष्टियोळु कूटद्वयदोळु दशादिचतुःस्थानंगळुं नवादिचतुःस्थानंगळुमंतुदयस्थानंगळेंटुमं तन्नुपयोगंगळय्दरिदं गुणिसिदोडुदयस्थानंगळु नाल्वत्तप्पुववर प्रकृतिगळुं प्रथमकूटदोळु मूवत्तारु ३६। द्वितीयकूटदोळु मूवत्तेरडंतरुवत्तेंटप्पु

८	७
९।९	८।८
१०	९
३६	३२

६८ वयंतनुपयोगपंचकदिदं गुणिसिदोडे मूनूरनाल्वत्तु प्रकृतिविकल्पंगळप्पुवा स्थानविकल्पंगळुमी प्रकृतिविकल्पंगळां प्रत्येकं चतुर्विंशति भेदंगळप्पुववरिदं गुणकारंगळुमिप्पत्तनाल्कप्पुवु।

सासादननोळु नवाद्येककूटदोळु चतुःस्थानंगळप्पुवु। प्रकृतिगळु मूवत्तेरडप्पु ७ ८८ ९ ३२ ववं तन्नुपयोगपंचकदिदं गुणिसिदोडे उदयस्थानंगळु विंशतिप्रमितंगळप्पुवु। प्रकृतिगळु नूररुवत्तप्पुववक्कं चतुर्व्विंशतिगुणकारमक्कुं। मिश्रनोळु नवाद्येककूटदोळु चतुरुदयस्थानंगळुं द्वात्रिंशत्प्रकृतिगळुमप्पुवि ७ ८।८ ९ ३२ वं तन्नुपयोगंगळारिंरं गुणिसुत्तं विरलुदयस्थानविकल्पंगळिप्पत्तनाल्कुं

प्रमत्तादिसप्तके चतुर्ज्ञानं त्रिदर्शनमिति सप्त। जिने सिद्धे च केवलज्ञानदर्शने इति द्वौ द्वौ। तत्र मिथ्यादृष्टौ स्थानानि प्रकृतयश्च

अ ८	७
९।९	८।८
१०	९
३६	३२

स्वोपयोगैर्गुणिते सति स्थानानि चत्वारिंशत्, प्रकृतयश्चत्वारिंशदग्रत्रिशतानि। सासादने स्थानप्रकृतयः ७ ८।८ ९ ३२ स्वोपयोगैर्गुणिता विंशतिः षष्ट्युत्तरशतं। मिश्रे ७ ८।८ ९ ३२ स्वोप-

---

मिथ्यादृष्टिमें पहले कूटमें एक दस प्रकृतिरूप, दो नौ-नौ प्रकृतिरूप, एक आठरूप ये चार स्थान हैं। इनकी प्रकृतियोंका जोड़ छत्तीस हुआ। पिछले कूटमें एक नौरूप, दो आठ-आठ रूप, और एक सातरूप ये चार स्थान हैं। इनका जोड़ बत्तीस। दोनोंको मिलानेपर आठ स्थान और अड़सठ प्रकृतियाँ हुईं। उनको पाँच उपयोगसे गुणा करनेपर चालीस स्थान और तीन सौ चालीस प्रकृतियाँ हुईं।

सासादनमें एक नौरूप, दो आठ-आठरूप और एक सातरूप ये चार स्थान और बत्तीस प्रकृतियाँ हैं। उनको पाँच उपयोगोंसे गुणा करनेपर बीस स्थान और एक सौ साठ प्रकृतियाँ होती हैं।

क-९३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिगळु नूरतोंभत्तेरडुमप्पुवु । गुणकारंगळं चतुर्विंशतिप्रमितंगळप्पुवु । असंयतनोळु नवाद्यष्टादिकूटद्वयदोळु

७	६
८८	७७
९	८
३२	२८

दयस्थानंगळें टु प्रकृतिगळरुवत्तुमप्पुवु । अवं तन्नुपयोगषट्कदिदं गुणिसिदोडे नाल्वत्तें टु स्थानंगळं मूनूररुवत्तु प्रकृतिगळप्पुवु । गुणकारंगळु मिप्पत्तनाल्कप्पुवु । देशसंयतंगे अष्टादिसप्तादि कूटद्वयदोळें टु स्थानंगळुमय्वत्तेरडु प्रकृतिगळप्पु

६	५
७७	६६
८	७
२८	२४

ववं तन्नुपयोगषट्कदिं गुणिसिदोडे नाल्वत्तें टुदयस्थानंगळं मूनूरहन्नेरडु प्रकृतिविकल्पंगळुमप्पुवल्लियुं गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु । प्रमत्तसंयतंगे सप्तादिषडादिकूटद्वयदोळें टु स्थानंगळु नाल्वत्तनाल्कुप्रकृतिगळप्पुवु

५	४
६६	५५
७	६
२४	२०

इवं तन्नुपयोगसप्तकदिदं गुणिसिदोडुदयस्थानंगळय्वत्तारप्पुवु । प्रकृतिगळु मूनूरेंटप्पुवु । गुणकारंगळ मिप्पत्तनाल्कुमप्पुवु । अप्रमत्तंगेयुं प्रमत्तनंते सप्तावि-

---

योगैर्गुणिताश्चतुर्विंशतिः, द्वानवत्यग्रशतं । असंयते

७	६
८।८	७।७
९	८
३२	२८

अष्टचत्वारिंशत् षष्ठ्यग्रत्रिशती । देशसंयते

६	५
७।७	६।६
८	७
२८	२४

अष्टचत्वारिंशत् द्वादशाग्रत्रिशती । प्रमत्तेऽप्रमत्ते च

५	४
६।६	५।५
७	६
२४	२०

षट्पंचाशत् अष्टाग्रत्रिशती

मिश्रमें एक नौरूप, दो आठ-आठ रूप, और एक सातरूप ये चार स्थान हैं। उनकी बत्तीस प्रकृतियां हैं। उन्हें छह उपयोगोंसे गुणा करनेपर चौबीस स्थान और एक सौ बानबे प्रकृतियां होती हैं।

असंयतमें पहले कूटोंमें नौरूप एक, आठरूप दो और सातरूप एक स्थान है। उनकी प्रकृतियां बत्तीस। पिछले कूटोंमें आठरूप एक, सातरूप दो और छहरूप एक, ये चार स्थान हैं। उनकी प्रकृतियां अट्ठाईस। दोनोंको मिलानेपर आठ स्थान और साठ प्रकृतियां होती हैं। उनको छह उपयोगोंसे गुणा करनेपर अड़तालीस स्थान और तीन सौ साठ प्रकृतियां होती हैं।

देशसंयतमें पहले कूटोंमें एक आठरूप, दो सातरूप, एक छहरूप ऐसे चार स्थान हैं, प्रकृतियां अठाईस। पिछले कूटोंमें एक सातरूप, दो छहरूप और एक पांचरूप ये चार स्थान हैं। चौबीस प्रकृतियां हैं। दोनोंको मिलाकर आठ स्थान बावन प्रकृतियां होती हैं। उनको छह उपयोगोंसे गुणा करनेपर अड़तालीस स्थान और तीन सौ बारह प्रकृतियाँ हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षडादिकूटद्वयदोळेंटु स्थानंगळुं नाल्वत्तनाल्कुं प्रकृतिगळप्पुवु

५	४
६६	५५
७	६
२४	२०

इवं तन्नुपयोगसप्तकदिदं गुणिसिदोडय्वत्तारुदयस्थानंगळुं मूनूरेंटु प्रकृतिगळुमप्पुवु गुणकारंगळमिप्पत्तनाल्कुमप्पुवु ॥ अपूर्व्वकरणंगे षडादिचतुःस्थानंगळुं विंशतिप्रकृतिगळुमप्पुवु। अवं तन्नुपयोगसप्तकर्दि गुणिसिदोडे मोहनीयोदयस्थानंगळिप्पत्तेंटु प्रकृतिविकल्पंगळनूरनाल्वत्तुमप्पुवु। गुणकारंगळुमिप्पत्तनाल्कप्पुवु। इंतिल्लिगे चतुर्विंशतिगुणकारमनुळ्ळ मोहनीयोदयस्थानंगळुपयोगाश्रितंगळु मूनूरिप्पत्त ३२०। प्पुवु। प्रकृतिविकल्पंगळु येरडुसासिरद नूरिप्पत्तप्पुवु २१२०॥ इवं चतुर्विंशतिगुणकारदिदं गुणिसिदोडे स्थानविकल्पंगळु येळु सासिरवरुनूरेंभत्तप्पुवु ७६८०। प्रकृतिविकल्पंगळुमय्वत्तु सासिरदेण्टुनूरेंभत्तप्पुवु ५०८८०। अनिवृत्तिकरणंगे उदयस्थानमोंदु प्रकृतिगळेरडवं तन्नुपयोग-सप्तकदिदं गुणिसिदोडे स्थानविकल्पंगळेळुं प्रकृतिविकल्पंगळु पदिनाल्कप्पुवु। अवं द्वादश विकल्प-दिदं गुणिसिदोडुदयस्थानंगळेंभत्तनाल्कु ८४। प्रकृतिविकल्पंगळु नूररुवत्तेंटु १६८। मतम-निवृत्तिकरणन अवेदभागेयोळुदयस्थानमोंदु प्रकृतियुमोंदु। अवं तन्नुपयोगसप्तकदिदं गुणिसिदोडे

अपूर्वकरणे

४
५।५
६
२०

अष्टाविंशतिः चत्वारिंशदग्रशतं। अनिवृत्तिकरणस्य स्थानं प्रकृती, १/२ उपयोगैर्गुणिते सप्त चतुर्दश पुनर्द्वादश भंगैर्गुणिते चतुरशीतिः अष्टषष्ठ्यग्रशतं। अवेदभागे स्थानं प्रकृतिः १/१ उपयोगैर्गुणिते

प्रमत्त और अप्रमत्तमें पहले कूटोंमें एक सातरूप, दो छहरूप, एक पाँचरूप ये चार स्थान हैं, चौबीस प्रकृतियां हैं। पिछले कूटोंमें एक-एक छहरूप, दो पाँच-पाँच रूप, एक चार-रूप ये चार-चार स्थान और बीस-बीस प्रकृतियां हैं। दोनोंको मिलानेपर दोनोंमें आठ-आठ स्थान और चवालीस-चवालीस प्रकृतियां हैं। उनको सात उपयोगसे गुणा करनेपर छप्पन-छप्पन स्थान और तीन सौ आठ-तीन सौ आठ प्रकृतियां होती हैं।

अपूर्वकरणमें छह रूप एक, पाँचरूप दो और चाररूप एक ये चार स्थान और बीस प्रकृतियां हैं। उनको सात उपयोगोंसे गुणा करनेपर अठाईस स्थान और एक सौ चालीस प्रकृतियां होती हैं। इन सब गुणस्थानोंको जोड़नेपर ४० + २० + २४ + ४८ + ४८ + ५६ + ५६ + २८ = तीन सौ बीस स्थान हुए। और सबकी प्रकृतियोंको जोड़नेपर ३४० + १६० + १९२ + ३५० + ३१२ + ३०८ + ३०८ + १४० = इक्कीस सौ बीस प्रकृतियां हुईं। उनको चौबीस भागोंसे गुणा करनेपर पचास हजार आठ सौ अस्सी प्रकृतियां हुईं।

अनिवृत्तिकरणमें दो प्रकृतिरूप एक स्थान है। उनको सात उपयोगोंसे गुणा करनेपर सात स्थान चौदह प्रकृतियाँ हुईं। उनको बारह भंगोंसे गुणा करनेपर चौरासी स्थान, एक सौ अड़सठ प्रकृतियाँ होती हैं। अनिवृत्तिकरणके अवेद भागमें एक प्रकृतिरूप एक स्थान। उनको सात उपयोगोंसे गुणा करनेपर सात स्थान सात प्रकृतियाँ हुईं। उनको चार भंगोंसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानविकल्पंगळु ७ प्रकृतिविकल्पंगळुमेळप्पुव ७ वं चतुष्कषायभेदर्दिदं गुणिसिदोडे स्थानविकल्पंगळु इप्पत्तें टु २८। प्रकृतिविकल्पंगळुमिप्पत्तें टप्पुवु २८। अंतनिवृत्तिकरणन सवेदावेदभागेगळोळु स्थानविकल्पंगळु नूरहन्नेरडु ११२। प्रकृतिविकल्पंगळु नूरतोंभत्तारु १९६। सूक्ष्मसांपरायनोळु सूक्ष्मलोभस्थानमो ंदु। प्रकृतियुमदो ंदेयक्कुमवं तन्नुपयोगसप्तकर्दिदं गुणिसिदोडे उदयस्थानविकल्पंगळु एळु ७। प्रकृतिगळु मेळु ७ मवेकविकल्पमप्पुदरिदमनितेयप्पुवु। अनिवृत्तिकरणनुदयस्थानविकल्पंगळु नूरहन्नेरडरोळो सूक्ष्मसांपरायनुदयस्थानंगळेळं कूडिदोडे उपयोगाश्रितस्थानंगळु नूरहत्तो ंभतुं क्षेपंगळें बुवक्कुं । ११९। अनिवृत्तिकरणन नूरतो ंभत्तारु प्रकृतिगळोळो सूक्ष्मसांपरायनेळुं प्रकृतिविकल्पंगळं कूडिदोडे इन्नूर मूरु २०३ प्रकृतिगळु क्षेपंगळें बुवक्कु। मी स्थानक्षेपंगळुमं प्रकृतिक्षेपंगळुमं मुन्निन स्थानविकल्पंगळु येळु सासिरदरुनूरेण्भत्तरोळ ७६८० प्रकृतिविकल्पंगळय्वत्तु सासिरदें दु नूरेण्भत्तरोळ क्रमर्दिदं कूडुत्तं विरलु गुणस्थानदोळु पयोगाश्रितमोहनीयोदयस्थानंगळु सर्व्वमुमेळु सासिरदेळु नूरतोंभत्तोंभत्तप्पुवु ७७९९। प्रकृतिविकल्पंगळु मय्वत्तो ंदु सासिरदेण्भत्तमूरप्पु ५१०८३। वें दु मुंदण गाथाद्वयर्दिदं पेळदपरु :—

णवणउदिसगसयाहिय सत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु उवजोगे मोहणीयस्स ॥४९२॥

नव नवतिसप्तशताधिकसप्तसहस्रप्रमाणमुदयस्य। स्थानविकल्पान् जानीहि उपयोगे मोहनीयस्य ॥

सप्त सप्त। पुनश्चतुर्भंगैर्गुणितेऽष्टाविंशतिरष्टाविंशतिः सूक्ष्मसांपराये स्थानं प्रकृतिः १/१ उपयोगैर्गुणिते सप्त सप्त। अत्रापूर्वकरणांतं स्थानानि प्रकृतीश्चैकीकृत्य चतुर्विंशत्या संगुण्य तत्र च स्थानेऽत्रनिवृत्तिकरणाद्येकान्नविंशत्यग्रशतस्थानानि प्रकृतिषु त्र्यग्रद्विशतं प्रकृतीश्च क्षेपं कुर्यात् ।

गुणा करनेपर अठाईस स्थान अठाईस प्रकृतियाँ हुईं। सूक्ष्म साम्परायमें एक प्रकृतिरूप एक स्थान। सात उपयोगसे गुणा करनेपर सात स्थान सात प्रकृतियाँ होती हैं। यहाँ भंग एक ही है। इनको जोड़नेपर ८४+२८+७ एक सौ उन्नीस स्थान और १६८+२८+७ दो सौ तीन प्रकृतियाँ होती हैं। इनको अपूर्वकरण पर्यन्त कहे स्थानों और प्रकृतियोंमें मिलाइए ॥४९१॥

गुण.	८मि.	४सा.	४मि.	८अ.	८दे.	८प्र.	८अप्र.	४अ.	१अ.	१अ.	१सू.
प्रकृति	६८	३२	३२	६०	५२	४४	४४	२०	२	१	१
उपयोग	५	५	६	६	६	७	७	७	७	७	७
स्थान	४०	२०	२४	४८	४८	५६	५६	२८	७	७	७
प्रकृति	३४०	१६०	१९२	३६०	३१२	३०८	३०८	१४०	१४	७	७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवनवतिसप्तशताधिक सप्तसहस्रप्रमाणमं ७७९९। मोहनीयोदयदुपयोगस्थानविकल्पंगळ-नरियें दु शिष्यं संबोधिसल्पट्टनु ॥

एक्कावण्णसहस्सं तेसीदिसमण्णियं वियाणाहि ।
पयडीणं परिमाणं उवजोगे मोहणीयस्स ॥४९३॥

एकपंचाशत्सहस्रं त्र्यशीतिसमन्वितं विजानीहि । प्रकृतीनां प्रमाणं उपयोगे मोहनीयस्य ॥

त्र्यशीतिसमन्वितमप्प एकपंचाशत्सहस्रमनुपयोगदोळु मोहनीयद प्रकृतिगळ परिमाणम-नरियेंदितु शिष्यं संबोधिसल्पट्टं । ५१०८३ ।

अनंतरं गुणस्थानदोळु मोहनीयोदयस्थानमं प्रकृतिगळं योगमनाश्रयिसि पेळदपरु :—

तिसु तेरं दस मिस्से णव सत्तसु छट्ठयम्मि एक्कारा ।
जोगिम्मि सत्तजोगा अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥४९४॥

त्रिषु त्रयोदश दश मिश्रे नव सप्तसु षष्ठे एकादश । योगिनि सप्तयोगा अयोगिस्थानं भवेच्छून्यं ॥

त्रिषु त्रयोदश मिथ्यादृष्टियोळं सासादननोळं असंयतनोळं प्रत्येकं त्रयोदशत्रयोदशंगळ-प्पुवु । दश मिश्रे मिश्रगुणस्थानदोळु दशयोगंगळप्पुवु । नव सप्तसु देशसंयताप्रमत्तापूर्वकरणा-निवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषायक्षीणकषायरेंब सप्तगुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं नव नव योगंगळप्पुवु । षष्ठे एकादश प्रमत्तसंयतनोळेकादशयोगंगळप्पुवु । योगिनि सप्त योगाः सयोग-केवलिभट्टारकनोळु सप्तयोगंगळप्पुवु । अयोगिस्थानं भवेच्छून्यं अयोगिकेवलिभट्टारकगुण-स्थानदोळु योगशून्यमक्कुं । संदृष्टि :—

उपयोगाश्रितमोहनीयोदयस्थानविकल्पा नवनवत्यग्रसप्तशताधिकसप्तसहस्राणि जानीहि ७७९९ ॥४९२॥

उपयोगाश्रितमोहनीयप्रकृतिपरिमाणं च त्र्यशीतिसमन्वितैकपंचाशत्सहस्राणि जानीहि ५१०८३ ॥४९३॥ अथ योगमाश्रित्याह—

योगाः मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतेषु त्रयोदश त्रयोदश । मिश्रे दश । देशसंयतादिषु सप्तसु नव नव । प्रमत्त एकादश । सयोगे सप्त । अयोगे शून्यं भवेत् ॥४९४॥

इस प्रकार उपयोगके आश्रयसे मोहनीयके उदयस्थानके भेद सात हजार सात सौ निन्यानबे ७७९९ होते हैं ॥४९२॥

तथा उपयोगके आश्रयसे मोहनीयकी प्रकृतियोंका प्रमाण ५१०८३ इक्यावन हजार तिरासी जानना ॥४९३॥

आगे योगके आश्रयसे कथन करते हैं—

योग मिथ्यादृष्टि, असंयत और सासादनमें तेरह-तेरह, मिश्रमें दस, देशसंयत आदि सात गुणस्थानोंमें नौ-नौ, प्रमत्तमें ग्यारह, सयोगीमें सात होते हैं। अयोगीमें योग नहीं होता ॥४९४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
१२	१३	१०	१३	९	११	९	९	९	९	९	९	७	०

अनंतरमो गुणस्थानंगळोळ् मिश्रयोगंगळुळ्ळ गुणस्थानंगळुमं केवलं पर्य्याप्तयोगंगळुळ्ळ गुणस्थानंगळुमं विवरिसि पेळ्दपरु :—

मिच्छे सासण अयदे पमत्तविरदे अपुण्णजोगगदं ।
पुण्णगदं च य सेसे पुण्णगदे मेलिदं होदि ॥४९५॥

मिथ्यादृष्टौ सासादने असंयते प्रमत्तविरते अपूर्ण योगं पूर्णगतं च च शेषे पूर्णगते मिलितं भवति ॥

मिथ्यादृष्टौ मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळं, सासादने सासादनगुणस्थानदोळं, असंयते असंयतगुणस्थानदोळं, प्रमत्तविरते प्रमत्तविरतगुणस्थानदोळमितु चतुर्गुणस्थानंगळोळ् अपूर्णयोगमुं पूर्णयोगमुमोळवा अपूर्णयोगगतं च अपर्य्याप्तयोगगतस्थानमुमं। पूर्णगतं च पर्य्याप्तकयोगगतस्थानमुमं मिलितं कूडिदुदं। शेषे पूर्ण्णगते शेषगुणस्थानंगळ पूर्णयोगगतस्थानदोळ् मिलितं कूडल्पट्टुदु । योगाश्रितसर्व्वस्थानप्रमाणमु प्रकृतिप्रमाणमुं भवति अक्रुमदंतेदोडे मिथ्यादृष्टियोळनंतानुबंधिकषायोदययुत चतुःस्थानंगळुमवर प्रकृतिगळुं ८ / ९।९ / १० / ३६ मनोयोगचतुष्कमुं वाग्योगचतुष्कमुमौदारिककाययोगमुमौदारिकमिश्रयोगमुं वैक्रियिककाययोगमुं वैक्रियिकमिश्रयोगमुं कार्म्मणकाययोगमुमेंब

अथ मिश्रयोगयुक्तकेवलपर्याप्तयोगयुक्तगुणस्थानानि विशेषयति—

मिथ्यादृष्टौ सासादने असंयते प्रमत्तविरते चेति चतुर्गुणस्थानेषु अपर्याप्तयोगगतं पर्याप्तयोगगतं च मिलितं स्थानप्रमाणं प्रकृतिप्रमाणं च भवति । शेषगुणस्थानेषु केवलपर्याप्तयोगगतमेव तद्द्वयं भवति । तद्यथा—

मिथ्यादृष्टौ स्थानप्रकृतयः | ८ / ९।९ / १० / ३६ | स्वयोगैर्गुणिता द्वापंचाशत्, अष्टषष्टचतुःशतानि । विसंयोजिता-

आगे मिश्रयोगवाले और केवल पर्याप्त योगवाले गुणस्थानोंको कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत तथा प्रमत्त विरत इन चार गुणस्थानोंमें अपर्याप्त योग भी होते हैं और पर्याप्त योग भी होते हैं। अतः इनमें इन दोनोंको मिलाकर स्थानों और प्रकृतियोंका प्रमाण होता है। शेष गुणस्थानोंमें केवल पर्याप्त योग ही होते हैं अतः उन्हींको लेकर स्थान प्रमाण और प्रकृति प्रमाण होता है। वही कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिके पहले कूटोंमें चार स्थान और १०+९+९+८=छत्तीस प्रकृति हैं। उनको तेरह योगोंसे गुणा करनेपर बावन स्थान और चार सौ अड़सठ प्रकृति होती हैं। अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनरूप अन्तर्मुहूर्तमें मरण नहीं होता इसलिए पिछले चार कूटोंके चार स्थान और बत्तीस प्रकृतियोंको ९+८+८+७=दस योगोंसे गुणा करनेपर चालीस

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

पर्य्याप्तापर्य्याप्तयोगंगळ् त्रयोदशंगळक्कुमें बु। १३। ४। १३। ३६। गुणिसुत्तं विरलु द्विपंचाशत्स्थानंगळ् ५२ मष्टषष्ट्युत्तर चतुःशतप्रकृतिगळुमप्पुवु। ४६८। मत्तमा मिथ्यादृष्टियोळ् अनंतानुबंधिकषायोदयरहित चतुःस्थानंगळुमं द्वात्रिंशत्प्रकृतिगळुमं ७ / ८।८ / ९ / ३२ मनोयोग चतुष्कमुं वाग्योगचतुष्कमुमौदारिककाययोगमुं वैक्रियिककाययोगमुमेंब पर्य्याप्तदशयोगंगळप्पुवें दु गुणिसुत्तं विरलु।

नुबंधिन्यंतर्मुहूर्ते मरणाभावात्तत्पर्याप्तदशयोगैर्गुणिताः स्थानप्रकृतयः ७ / ८।८ / ९ / ३२ चत्वारिंशत् विंशत्यग्रत्रिशती मिलित्वा स्थानानि द्वानवतिः प्रकृतयोऽष्टाशीत्यग्रसप्तशती। सासादने स्थानप्रकृतयः ४ / ३२ वैक्रियिकमिश्रस्य पृथग्वक्ष्यतीति द्वादशभिर्गुणिता अष्टचत्वारिंशत् चतुरशीत्यग्रत्रिशती। मिश्रे ७ / ८।८ / ९ / ३२ दशभिर्गुणिताश्चत्वारिंशत् विंशत्यग्रत्रिशती। असंयते ७ / ८।८ / ९ / ३२ | ६ / ७।७ / ८ / २८ कार्मणौदारिकमिश्रवैक्रियिकमिश्राणां पृथग्वक्ष्यतीति दशभिर्गुणिता अशीतिः षट्छती। देशसंयते ८ / ५२ नवभिर्गुणिता द्वासप्ततिरष्टषष्ट्यग्रचतुःशती। प्रमत्तेऽप्रमत्ते च ५ / ६।६ / ७ / २४ | ४ / ५।५ / ६ / २० आहारकद्वयस्य पृथग्वक्ष्यतीति नवभिर्गुणिता द्वासप्ततिः षण्णवत्यग्रत्रिशती। अपूर्वकरणे

स्थान और तीन सौ बत्तीस प्रकृतियाँ हैं। सब मिलकर बानवे स्थान और सात सौ अठासी प्रकृतियाँ होती हैं। सासादनमें चार स्थान, बत्तीस प्रकृति ९+८+८+७ हैं। चूँकि वैक्रियिक मिश्रयोगको अलगसे कहेंगे, इसलिए बारह योगोंसे गुणा करनेपर अड़तालीस स्थान और तीन सौ चौरासी प्रकृतियाँ होती हैं।

मिश्रमें स्थान चार और प्रकृति ९+८+८+७=बत्तीस। उनको दस योगोंसे गुणा करनेपर चालीस स्थान और तीन सौ बीस प्रकृतियाँ होती हैं।

असंयतमें आठ स्थान और ९+८+८+७=३२। ८+७+७+६=२८। साठ प्रकृतियाँ हैं। चूँकि कार्माण, औदारिक मिश्र और वैक्रियिक मिश्रका कथन पृथक् करेंगे अतः दस पर्याप्त योगोंसे गुणा करनेपर स्थान अस्सी और प्रकृतियाँ छह सौ होती हैं।

देशसंयतमें स्थान आठ और प्रकृतियाँ ८+७+७+६=२८। ७+६+६+५=२४ बावन। उनको नौ योगोंसे गुणा करनेपर बहत्तर स्थान और प्रकृति चार सौ अड़सठ होती हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४। १०। ३२। १०। चत्वारिंशत्स्थानंगळं ४०। विंशत्युत्तरत्रिशतप्रकृतिगळुमप्पु ३२०। वेकें दोडे अनंतानुबंधिकषायोदयरहितमिथ्यादृष्टिगंतर्म्मुहूर्त्तंकालपर्य्यंतं मरणमिल्लप्पुदरिंदमपर्य्याप्त-योगंगळ् संभविसुवप्पुदरिंदं। अंतु मिथ्यादृष्टियोळुभयस्थानंगळु द्वानवतिप्रमितंगळप्पुवु ९२। प्रकृतिगळमष्टाशीत्युत्तरसप्तशतप्रमितंगळप्पुवु ७८८॥ चतुःकषायत्रिवेदद्विकद्वयभेदर्दिदं चतु-र्व्विंशतिगुणकारंगळप्पुवु २४॥

अनंतरं सासादनासंयतप्रमत्तगुणस्थानत्रयदोळु मिश्रयोगंगळोळु विशेषमं गाथाद्वयदिदं पेळदपरु :—

सासण अयदपमत्ते वेगुव्वियमिस्स तच्च कम्मइयं।
ओरालमिस्सहारे अडसोलडवग्ग अट्ठवीससयं ॥४९६॥

सासादनासंयतप्रमत्तेषु वैक्रियिकमिश्रं तच्च कार्म्मणं औदारिकमिश्रे आहारे अष्ट षोडशा-ष्टवर्गाष्टाविंशतिशतं ॥

| ४ | ५।५ | ६ | २० | नवभिर्गुणिताः षट्त्रिंशदशीत्यग्रशतं। एतावत्पर्यंतं सर्वत्र स्थानप्रकृतीनां गुणकारश्चतुर्विंशतिः।

अनिवृत्तिकरणसवेदभागे | १/२ | नवभिर्गुणिता नवाष्टादश। गुणकारो द्वादश। अवेदभागे | १/१ | तथा नव नव गुणकारश्चत्वारः। सूक्ष्मसांपरायेऽपि | १/१ | तथा नव नव गुणकार एकः ॥४९५॥ अथापनीतयोगानां विशेषं गाथाद्वयेनाह—

प्रमत्त और अप्रमत्तमें स्थान आठ, प्रकृति ७ + ६ + ६ + ५ = २४। ६ + ५ + ५ + ४ = २०। चवालीस। आहारकद्विकका कथन पृथक् करेंगे इसलिए नौ योगोंसे गुणा करनेपर प्रत्येकमें बहत्तर स्थान और तीन सौ छियानबे प्रकृतियाँ हैं।

अपूर्वकरणमें चार स्थान और प्रकृति ६ + ५ + ५ + ४ = बीस हैं। इनको नौ योगोंसे गुणा करनेपर छत्तीस स्थान और एक सौ अस्सी प्रकृति हैं। यहाँ तक इन स्थानों और प्रकृतियोंको चौबीस भंगोंसे गुणा करें।

अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें एक स्थान और दो प्रकृति। इनको नौ योगोंसे गुणा करनेपर नौ स्थान और अठारह प्रकृति होती हैं। इनको बारह भंगोंसे गुणा करें। और अवेद भागमें एक स्थान एक प्रकृति। इनको नौ योगोंसे गुणा करनेपर नौ स्थान नौ प्रकृति होते हैं। इनको चार भंगोंसे गुणा करें।

सूक्ष्मसाम्परायमें एक स्थान एक प्रकृति, इनको नौ योगोंसे गुणा करनेपर नौ स्थान नौ प्रकृति होती हैं। इनको एक भंगसे गुणा करें ॥४९५॥

आगे पृथक् रखे योगोंका कथन दो गाथाओंसे करते हैं—

---

१. अण संजोजिदसम्मे मिच्छं संते ण आवलित्ति अणं। अण संजोजिद मिच्छे मुहुत्त अंतेत्ति णत्थि मरणं तु १०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सासादनगुणस्थानदोळमसंयतगुणस्थानदोळं प्रमत्तसंयतगुणस्थानदोळमल्लि सासादनवैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळष्टवर्ग्गमात्रस्थानविकल्पंगळप्पुवु । ६४ । असंयतन वैक्रियिकमिश्रकार्म्मणकाययोगद्वयदोळं षोडशवर्ग्गप्रमितस्थानविकल्पंगळप्पुवु । २५६ । मत्तमसंयतनौदारिकमिश्रकाय-

सासादनस्य वैक्रियिकमिश्रयोगे स्थानान्यष्टवर्गमात्राणि प्रकृतयो द्वादशाग्रपंचशती । कुतः ? षंढवेदवर्जितकूटस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
० । १ । १	० १ १	० । १ । १	० । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

संजातचतुःस्थानद्वात्रिंशत्प्रकृतीनां

७
८।८
९
३२

षोडशभंगैर्गुणितत्वात् । असंयतस्य वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगयोः स्थानानि षोडशवर्गमात्राणि प्रकृतयो विंशत्यग्रैकान्नविंशतिशती । कुतः ? स्त्रीवेदवर्जिततत्कूटसंजाताष्टस्थानषष्टिप्रकृतीनां

७	६
८।८	७।७
९	८
३२	२८

षोडशभंगैर्योगयुग्मेन च गुणितत्वात् । पुनः असंयतस्यौदारिकमिश्रयोगे स्थानान्यष्टवर्गमात्राणि प्रकृतयोऽशीत्यग्रचतुःशती, कुतः ? स्त्रीषंढवेदवर्जितासंयताष्टकूटसंजाताष्टस्थानषष्टिप्रकृतीनां

७	६
८।८	७।७
९	८
३२	२८

अष्टभंगैर्गुणितत्वात् । प्रमत्तसंयतस्याहारकद्वये स्थानान्यष्टाविंशत्यग्रशतं प्रकृतयश्चतुरग्रसप्त-

---

सासादनके वैक्रियिक मिश्रयोगमें स्थान आठका वर्ग चौंसठ प्रमाण और प्रकृति पांच सौ बारह हैं। ये कैसे हैं ? इसका कथन करते हैं—

सासादनमें चार कूट किये थे। उनमें तीन वेदोंमें-से एकका उदय कहा था। किन्तु यहाँ नपुंसकवेदके बिना दो वेदोंमें-से एकका उदय जानना। सो नौरूप एक, आठरूप दो और सातरूप एक ये चार स्थान और बत्तीस प्रकृति। उनको चार कषाय, दो वेद और दो युगलोंसे हुए सोलह भंगोंसे गुणा करनेपर चौंसठ स्थान और पांच सौ बारह प्रकृति हुई।

असंयतके वैक्रियिक मिश्र और कार्मण योगमें पूर्वोक्त आठ कूटोंमें स्त्रीवेदके बिना दो वेदोंमें-से एकका उदय जानना। इससे उन कूटोंमें आठ स्थान और साठ प्रकृतियोंको चार कषाय, दो वेद और दो युगलोंके सोलह भंगोंसे तथा दो योगोंसे गुणा करनेपर सोलहका वर्ग दो सौ छप्पन प्रमाण स्थान और उन्नीस सौ बीस प्रकृतियाँ होती हैं।

असंयतके औदारिक मिश्रमें स्त्रीवेद-नपुंसक वेद दोनोंका उदय नहीं होता। अतः पूर्वोक्त आठ कूटोंमें तीन वेदोंके स्थानमें एक वेद लिखना। आठ कूटोंके आठ स्थान और साठ प्रकृतियोंको चार कषाय, एक वेद, दो युगलके आठ भंगोंसे और एक योगसे गुणा करनेपर आठका वर्ग चौंसठ प्रमाण स्थान और चार सौ अस्सी प्रकृतियां होती हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योगवोळष्टवर्ग्गमात्रस्थानविकल्पंगळप्पुवु । ६४ ॥ प्रमत्तसंयतनाहारकयोगद्वयवोळष्टाविंशतिशत-स्थानंगळप्पुवु । १२८ ॥

ई स्थानंगळं प्रकृतिगळुमनुपपत्तियं पेळदपरु :--

णत्थि णउंसयवेदो इत्थीवेदो णउंसइत्थिदुगे ।
पुव्वुत्तपुण्णजोगगचउसु ट्ठाणेसु जाणेज्जो ॥४९७॥

नास्ति नपुंसकवेदः स्त्रीवेदो नपुंसकस्त्रियौ द्वये । पूर्व्वोक्ताऽपूर्णयोगगतचतुर्षु स्थानेषु ज्ञातव्यः ॥

पूर्व्वोक्ताऽपूर्ण्णयोगगचतुर्षु स्थानेषु पेरगण सूत्रवोळु पेळल्पट्ट सासादनासंयतप्रमत्तरुगळ अपर्य्याप्तयोगगतचतुःस्थानयोगंगळोळु क्रमविदं मोदल सासादनवैक्रियिकमिश्रकाययोगवोळु नास्ति नपुंसकवेदः नपुंसकवेदोदयमिल्लेकेंदोडे–"णिरयं सासणसम्मो ण गच्छदित्ति" एंदु सासादनसम्यग्-दृष्टि नरकवोळु पुट्टनुर्दारिवं

२
२।२
०।१
४।४।४।४

असंयतन वैक्रियिकमिश्रकार्म्मणयोगद्वयवोळु स्त्रीवेदो नास्ति स्त्रीवेदोदयमिल्लेकेंदोडे असंयतसम्यग्दृष्टि तिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिगळोळु पुरुषनागि पुट्टुगुमप्पुदरिवं । घर्म्मेयोळु नपुंसकनुमागि पुट्टुगुमप्पुदरिवं

२
२।२
१०१
३३३३

मत्तमसंयतनौवारिकमिश्र-काययोगदोळं प्रमत्तसंयतनाहारकयोगद्वयदोळमंतु द्वये येरडेडेयोळं नपुंसकस्त्रियौ न भवतः नपुंसक वेदमुं स्त्रीवेदमुमिल्लेंदु ज्ञातव्यः अरियल्पडुगुमेंतेंदोडसंयतं तिर्य्यग्मनुष्यरोळु पुरुषनागि पुट्टुगुम-

शती । कुतः ? स्त्रीषंढवर्जिततत्कूटजाताष्टस्थानचतुश्चत्वारिंशत्प्रकृतीनां—

५	४
६।६	५।५
७	६
२४	२०

अष्टभंगैर्योग-युग्मेन च गुणितत्वात् ॥४९६॥ अथ तमपनीतवेदं स्वयं निषेधयति—

पूर्वोक्तापूर्णयोगगतचतुःस्थानेषु प्रथमे सासादने वैक्रियिकमिश्रकाययोगे नपुंसकवेदोदयो नास्ति;

प्रमत्तसंयतके आहारक-आहारक मिश्ररूप दो योगोंमें भी स्त्री-नपुंसक वेदरहित आठ कूटोंके आठ स्थान और चवालीस प्रकृतियोंको आठ भंगोंसे और दो योगोंसे गुणा करनेपर एक सौ अठाईस स्थान और सात सौ चार प्रकृतियाँ होती हैं ॥४९६॥

आगे उन घटाये गये वेदोंको ग्रन्थकार स्वयं कहते हैं—

पूर्वोक्त अपर्याप्त योगगत चार स्थानोंमें-से प्रथम सासादनमें वैक्रियिक मिश्रकाय योगमें नपुंसक वेदका उदय नहीं है; क्योंकि सासादन मरकर नरकमें उत्पन्न नहीं होता। असंयतमें वैक्रियिक मिश्र और कार्मण योगमें स्त्रीवेदका उदय नहीं है; क्योंकि असंयत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ष्पुदरिंदं २ प्रमत्तसंयतं षंडस्त्रीवेदोदयमुळ्ळनादोडा संक्लिष्टनोळाहारकवृद्धिगुत्पत्तिथि-

२।२
०।०।१
३३३३
१

ल्लप्पुदरिंदं । संदृष्टि--
२
२।२
०।०।१
१११
१

	० न	० इ	१ ० न । इ	० ० न इ	
सासादन ।		असंयत ।	असंयत ।	प्रमत्तसंयत ।	
ठा।वि	६४	२५६	६४	१२८	स्थानविशेष
प्र०वि	५१२	१९२०	४८०	७०४	प्रकृतिविशेष
ठा०सा	४	८	८	८	स्थानसामान्य
प्र०सा	३२	७०	६०	४४	प्रकृतिसामान्य
यो	१	२	१	२	यो ॥
भं	१६	भंग १६	भं ८	भंग	

ई रचनातात्पर्य्यार्त्थं पेळल्पडुगुमदेंतेंदोडे वैक्रियिकमिश्रकाययोगि सासादनंगे मोहनीयोदयकूटंगळु नाल्कक्कं नाल्कु स्थानंगळप्पुवु ।

२	१	१	०	७
२।२	२।२	२।२	२।२	८८
०।१।१	०।१।१	०।१।१	०।१।१	९
४४४	४४४४	४४४४	४४४४	३२

प्रकृतिगळु मूवत्तेरडप्पुवु । ३२ । इल्लि क्रोधचतुष्कादि चतुष्क दोळोंदु चतुष्कमुं स्त्रीवेदमुं पुंवेदमुमेंबेरडरोळोंदु वेदमुं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुं भयद्विकमुमंतु नवादिस्थानंगळु नाल्कक्कं चतुष्कषायमुं वेदद्विकमुं द्विकद्वयमुमेंदिवर गुणितदिदाद भंगंगळु षोडशप्रमितंगळप्पु १६ वा नाल्कुं स्थानंगळगे प्रत्येकमी षोडश भंगंगळप्पुवेंदु गुणिसिदोडे । ४ । १६ । चतुःषष्टिस्थानंगळप्पुवु ।६४। आ द्वात्रिंशत्प्रकृतिगळुमनी षोडशभंगंगळिदं गुणिसिदोडे ३२ । १६ । द्वादशाधिकपंचशतप्रकृतिगळप्पुवु । ५१२ । ई सासादनंगुत्कृष्टदिदं षडावलिकालमक्कुं । जघन्यदिदमेकसमयमक्कुमातं स्त्रीवेदोदयदिदं देवियक्कुं । पुंवेदोदयदिद देवनक्कु–मातंगाकालदोळु क्रोधचतुष्कमुं मानचतुष्कमुं मायाचतुष्कमुं लोभचतुष्कमुमेंबिवरोळोंदु चतुष्कमुं स्त्रीवेदमुं पुंवेदमुमेंबेरडुं वेदंगळोळोंदोंदु

सासादनस्य नरकेऽनुत्पत्तेः । असंयते वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगयोः स्त्रीवेदोदयो नास्ति असंयतस्य स्त्रीत्वेनुत्पत्तेः ।

स्त्रियोंमें उत्पन्न नहीं होता। पुनः असंयतके औदारिक-मिश्रयोगमें और प्रमत्त संयतके आहारक-आहारक मिश्रयोगमें स्त्रीवेद-नपुंसक वेद नहीं हैं। ऐसा जानना। यहाँ मिथ्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदमुं हास्यद्विकमुमरतिद्विकमुमेंबेरडुं द्विकदोळोंदु द्विकमुं, भयद्वितयमुमंतु नवप्रकृतिगळुदयस्थानमोंदुं मत्तमा प्रकृतिगळोळु जुगुप्सेयं कळेदोडेंदु प्रकृतिस्थानमोंदु मत्तमा प्रकृतिगळोळु भयमं कळेदोडेंदु प्रकृतिस्थानमिदोंदुभयमुं जुगुप्सेयुं रहितसप्तप्रकृतिस्थानमदोंदंतु स्थानचतुष्टयमुं द्वात्रिंशत्प्रकृतिगळगे षोडशभंगंगळक्कुमेंबुदर्थं। असंयतंगे वैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळु मोहनीयोदयकूटंगळु सवेदकंगळु नाल्कुमवेदकंगळु नाल्कुमप्पुवु। संदृष्टि :—

२ २।२ १।०।१ ३३३३ १	१ २।२ १।०।१ ३३३३ १	१ २।२ १।०।१ ३३३३ १	० २।२ १।०।१ ३३३३ १	२ २।२ १।०।१ ३३३३	५ २।२ १।०।१ ३३३३	१ २।२ १।०।१ ३३३३	० २।२ १।०।१ ३३३३	कूटस्थान ८ भं १६	प्रकृति ६० भं १६

ई कूटंगळेंटक्कं कषायवेदद्वय द्विकद्वयकृत भंगंगळु प्रत्येकमोंदोंदु कूटक्के षोडशप्रमितंगळप्पुवु। ८। १६। प्रकृति ६०। १६। गुणिसिदोडे नूरिप्पतेंदु स्थानंगळुं १२८। ओंभयिनूररुवत्तु प्रकृतिगळु ९६०। मप्पुवु। असंयतंगे कार्म्मणकाययोगदोळमिनिते स्थानंगळुं प्रकृतिगळु मागुत्तं विरलु द्विगुणिसिदोडे बेसदछप्पण्ण प्रमितस्थानंगळुं २५६। सासिरदोंभैनूरिप्पत्तु प्रकृतिगळप्पुवु। १९२०॥ मत्तमौदारिकमिश्रकाययोगियसंयतंगे सवेदकावेदकगतोदयकूटंगळेंटक्कमेंटुं स्थानंगळप्पुवु

७ ८८ ९	६ ७७ ८	कूडि स्थान ८
३२	२८	प्र। ६०

प्रकृतिगळरुवत्तप्पुवु। ३ भंगंगळेंटेयप्पुवेकेंदोडौदारिकमिश्रकाययोगि असंयततिर्य्यंचनुं मनुष्यनुमप्पुदरिदं पुंवेदोदयमोंदेयप्पुदरिंदमा एंटुं भंगंगळिदमेंटुं स्थानंगळं गुणिसिदो ८। ८। डरुवत्तनाल्कुस्थानंगळुं ६४। प्रकृतिगळुं ६०। ८। नानूरेंभत्तप्पुवु ४८०॥

प्रमत्तसंयतंगाहारकमिश्रकाययोगदोळं सवेदकावेदकगतोदयकूटमेंटक्कमेंटु स्थानंगळप्पुवु। प्रकृतिगळुनाल्वत्तनाल्कप्पुवु। ६४। २। ३५२। २। संदृष्टि :—

२ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१ १	१ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१ १	१ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१ १	० २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१ १	२ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१	१ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१	१ २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१	० २।२ ०।०।१ १।१।१।१।१	→

पुनः असंयतौदारिकमिश्रयोगे प्रमत्ताहारकयोश्च स्त्रीषंढवेदौ न स्तः, इति ज्ञातव्यं। अत्र मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्व-

दृष्टिसे लेकर अपूर्वकरण पर्यन्त स्थानोंको एकत्र कर चौबीस भंगोंसे गुणा करो। जो प्रमाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५	४	कूडि स्थान ८
६६	५५	
७	६	भंग— ८
२४	२०	प्रकृति ४४
		८

←

इवक्के पुंवेदोदयमेयप्पुदरिंदमें टे भंगंगळप्पुवु । ८ । ८ । ई स्थानंगळुमं प्रकृतिगळुमनें टरिंद गुणिसिदोडे ४ । ४ । ८ । स्थानंगळरुवत्तनाल्कुं ६४ प्रकृतिगळु मूनूरय्वत्तेरडप्पुवु ३५२ । ई आहारकमिश्रकाययोग दोळें तंते आहारककाययोगियोळप्पुदरिंदं स्थानंगळुमं प्रकृतिगळुमं द्विगुणिसिदोडे

६४।२	
३५२।२	

नूरिप्पतें टु स्थानंगळं १२८ । एळु नूर नाल्कु प्रकृतिगळुमप्पुवें दु ७०४ । निश्चैसुवुदी मूरुं गुणस्थानंगळ विशेषस्थान प्रकृतिगळं मुंदे सर्व्वस्थानप्रकृतिगळोळु क्षेपमं माडि कों डाचार्य्यं मुंवण सूत्रदोळु पेळदप नंतागुत्तं विरलु सासादनंगे वैक्रियिकमिश्रकाययोगं पोरतागि मुंपेळ्द पन्नेरडुं योगंगळगे योगं प्रति नाल्कु नाल्कुं स्थानंगळुं मूवत्तेरडु मूवत्तेरडु प्रकृतिगळागुत्तं विरलु—

स्थान	यो
४	१२
प्र	यो
३२	१२

नाल्वतें टुं स्थानंगळं ४८ मूनूरें भतनाल्कु प्रकृतिगळप्पुवु । ३८४ ॥ भंगंगळु चतुर्विंशतिप्रमितंगळप्पुवु २४ । मिश्रंगे पर्य्याप्तयोगंगळु पत्तक्कं योगमेकैकं प्रति चतुःस्थानंगळं

७
८।८
९
३२

द्वात्रिंशत्प्रकृतंगळुमप्पुवु

१०।४	
१०।३२	

गुणिसिदोडे नाल्वत्तु स्थानंगळु ४० । मूनूरिप्पत्तु प्रकृतिगळप्पुवु । ३२० । भंगंगळु चतुर्विंशतिप्रमितंगळप्पुवु २४ । असंयतंगे वैक्रियिकमिश्रकाययोगमुं कार्म्मणकाययोगमुमौदारिकमिश्रकाययोगमुमंतु योगत्रितयमं वर्जिजसि पर्य्याप्तयोगंगळु हत्तक्कं योगमेकैकं प्रति सवेदकावेदकसम्यक्त्वसंबंधि मोहनीयोदयकूटंगळें टक्कमें टुं स्थानंगळुमरुवत्तु प्रकृतिगळप्पुवु—

७	६	उभ ८ १०
८८	७७	
९	८	
३२	२८	प्र ६० १०

गुणिसिदोडें भत्तु स्थानंगळमरुनूरु प्रकृतिगळुमप्पुवु $\frac{८०}{६००}$

प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगंगळप्पुवु २४ ॥ देशसंयतंगे पर्य्याप्तयोगंगळु मनोवाग्योगंगळें टुमौदारिककाययोगमुमितों भत्तु योगंगळप्पुवेकैकयोगं प्रति सवेदकावेदकसम्यक्त्वसंबंधिमोहनीयोदयकूटंगळें टक्कमें टु स्थानंगळुमय्वत्तेरडुं प्रकृतिगळप्पुवु

८	९
५२	९

गुणिसिदोडेंप्पत्तेरडु स्थानंगळु

करणपर्यंतानि स्थानान्येकीकृत्य चतुर्विंशतिगुणकारेण संगुण्य तत्र सवेदानिवृत्तिकरणादीनां त्रिपंचाशदुत्तरशतं

आवे उसमें अनिवृत्तिके सवेद-अवेद भागके तथा सूक्ष्म साम्परायके एक सौ तरेपन स्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२। नानूररुवत्तें टु ४६८। प्रकृतिगळप्पुवु। भंगगुणाकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४।

प्रमत्तसंयतंगाहारकयोगद्वयरहितमागि नव पर्य्याप्तयोगंगळप्पुववक्केकैकयोगं प्रति सवेदवा- वेदकसम्यक्त्वसंबंधि मोहनीयोदयकूटंगळें टक्कमें टुं स्थानंगळु नाल्वत्त नाल्कुं प्रकृतिगळप्पुवु

५	४	उभ ८	१
६६	५५		
७	६		
२४	२०	४४	१

गुणिसिदोडेप्पत्तेरडु स्थानंगळु मूनूरतों भत्तारुं प्रकृतिगळप्पुवु

७२	२४
३९६	२४

गुणकारंगळुमिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४। अप्रमत्तसंयतंगे पर्य्याप्तयोगंगळु प्रमत्तसंयत- नोळु पेळ्दों भत्तेयप्पुवेकैकयोगं प्रति सवेदकावेदकसम्यक्त्वसंबंधिमोहनीयोदयकूटंगळें टक्कमें टुं स्थानंगळुं नाल्वत्तनाल्कु प्रकृतिगळप्पुवु

५	४	उभ। ८	१
६६	५५		
७	६		
२४	२०	प्र। ४४	१

गुणिसिदोडेप्पत्तेरडुं स्थानंगळु ७२। मूनूरतों भत्तारुप्रकृतिगळप्पुवु ३९६। भंगगुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४॥

अपूर्व्वकरणंगे पर्य्याप्तयोगंगळों भत्तप्पुवु। प्रतियोगं नाल्कुं स्थानंगळुमिप्पत्तुप्रकृति- गळप्पुवु

४	४	१
५५		
६		
२०	२०	१

गुणिसिदोडे मूवत्तारु स्थानंगळु ३६ नूरें भत्तु प्रकृतिगळप्पुवु १८०। गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४। अनिवृत्तिकरणंगे पर्य्याप्तयोगंगळों भत्तप्पुवु। प्रतियोगमों दुदय कूटदोळों दे स्थानमुमेरडु प्रकृतिगळागुत्तं विरलु १।१।१।स्था १।९ गुणिसिदोडों भत्तु
१।१।१।१।प्र २।९

स्थानंगळुं पदिनें टु प्रकृतिगळप्पुवु। स्था ९। प्र १८। गुणकारंगळु पन्नेरडप्पुवु १२। मत्तम- निवृत्तिकरणंगे अवेदभागेयोळों दुदयकूटदो १।१।१।१। ळों देस्थानमुं ओं दे प्रकृत्युदयमक्कु- मदनों भत्तु योगंगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ओं भत्तेस्थानंगळप्पुवु।९। प्रकृतिगळुमनितें विकल्पंगळु १।९। मप्पुवु। गुणकारंगळु क्रोधादिभेदर्दिदं नाल्केयप्पुवु।४। सूक्ष्मसांपरायंगेयुं सूक्ष्मलोभोदय- स्थानमों देयप्पुददक्के योगंगळुमों भत्तप्पुवप्पुदरिंदमों भत्ते स्थानंगळुमों भत्ते प्रकृतिगळुमप्पुवु। स्था ९। प्र ९। गुणकारमुमों दे सूक्ष्मलोभमक्कुं।१। संदृष्टि :—

क्षेपं कृत्वा पुनः अपर्याप्तसासादनासंयतप्रमत्तानां द्वादशाग्रपंचशते मिलिते—

मिलाओ। तथा अपर्याप्त सासादन, असंयत और प्रमत्तके पांच सौ बारह स्थानोंको मिला-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

※	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अनिवृ.		सू
योग	१३	१२	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९
ठाण	९२	४८	४०	८०	७२	७२	७२	३६	९	९	९
प्रकृ	७८८	३८४	३२०	६००	४६८	३९६	३९६	१८०	१८	९	९
गुण	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	१२	४	१

यिल्लि मिथ्यादृष्टियादियागि अपूर्व्वकरणपर्य्यंतमिद्दं स्थानंगळु चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळनुळ्ळवप्पुदरिदं कूडिदोडय्नूरहन्नेरडु स्थानंगळप्पु ५१२। २४। ववनिप्पत्तनाल्करिदं गुणिसिदोडे पन्नेरडुसासिरविन्नूरेंभत्तेंटप्पुवु। १२२८८। अनिवृत्तिकरणादिगळ स्थानंगळु नूरय्वत्तमूरप्पुवु १५३। उभयमुं कूडि पन्नेरडु सासिरद नानूर नाल्वत्तोंदु स्थानंगळप्पुवु १२४४१। इवरोळु मुंपेळ्द अपर्य्याप्तसासादनासंयतप्रमत्तरुगळ अडसोळडवग अट्ठवीससयमें ब स्थानंगळय्नूर हन्नेरडुमं ५१२ कूडिदडे हन्नेरडु सासिरदों भैनूरय्वत्तमूरु १२९५३। योगाश्रितसर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळप्पविवनाचार्य्यं मुंदणगाथा सूत्रदिदं पेळ्दपरु :—

तेवण्णणवसयाहियबारसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु जोगं पडि मोहनीयस्स ॥४९८॥

त्रिपंचाशन्नवशताधिक द्वादशसहस्रप्रमाणमुदयस्य। स्थानविकल्पान्जानीहि योगं प्रति मोहनीयस्य ॥

एंदितु सर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळु योगाश्रितंगळु पन्नेरडु सासिरदों भैनूरय्वत्तमूरप्पुववं शिष्य नीनरियें दितावार्य्यंनिदं संबोधिसल्पट्टं। आ स्थानंगळ प्रकृतिविकल्पंगळं मिथ्यादृष्टियादि अपूर्व्वकरणगुणस्थानावसानमागि चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळनुळ्ळुवु। द्वात्रिंशदुत्तर पंचशताधिकत्रिसहस्रप्रमाणंगळप्पु। ३५३२।२४। ववं गुणिसिदोडे अष्टषष्ट्युत्तर सप्तशताधिकचतुरशीतिसहस्रप्रमितंगळप्पु ८४७६८। ववरोळु अनिवृत्तिकरणादिगळेकषष्ट्युत्तरद्विशतप्रकृतिगळं २६१। प्रक्षेपिसुत्तं विरलु एकान्नत्रिंशदुत्तरपंचाशीतिसहस्रप्रकृतिविकल्पंगळप्पु ८५०२९। ववरोळु कूडल्पडुव वैक्रियिकमिश्रकाययोगादिसासादनासंयतप्रमत्तरुगळ प्रकृतिविकल्पंगळं पेळ्दपरु ॥—

योगाश्रितसर्वमोहनीयोदयस्थानानि त्रिपंचाशदग्रनवशताधिकद्वादशसहस्राणीति जानीहि १२९५३। प्रकृतयोऽपि मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणांता एकीकृत्य चतुर्विंशत्या गुणयित्वाऽनिवृत्तिकरणादीनामेकषष्ट्यग्रद्विशती क्षेपं कृत्वा (एकान्नत्रिंशदुत्तरपंचाशीतिसहस्राणि भवंति। ८५०२९॥४९८॥अथ तेषु निक्षेपयन्नाह)पुनस्तत्र—

कर सबको जोड़ो ॥४९७॥

ऐसा करनेपर योगके आश्रयसे मोहनीयके सब उदयस्थान बारह हजार नौ सौ तरेपन होते हैं। और प्रकृतियाँ भी मिथ्यादृष्टिसे अपूर्वकरण पर्यन्त एकत्र कर उनको चौबीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बिदिए बिगि पणगयदे खदु णव एक्कं ख अट्ठ चउरो य।
छट्ठे चउ सुण्ण सगं पयडिवियप्पा अपुण्णम्मि ॥४९९॥

द्वितीये द्वयेक पंचासंयते खद्विनवैकं खाष्टचत्वारि च। षष्ठे चतुः शून्यसप्तप्रकृतिविकल्पा अपूर्णे ॥

द्वितीये अपूर्णे वैक्रियिकमिश्रकाययोगिसासादननोळु अंकक्रमदिदं प्रकृतिविकल्पंगळु द्वयेकपंच द्वादशोत्तरपंचशतप्रकृतिगळु ५१२। असंयतेऽपूर्णे वैक्रियिकमिश्रकार्म्मणकाययोगियोळु खद्विनवैक विंशत्युत्तरनवशताधिकसहस्रप्रकृतिविकल्पंगळु १९२०। च शब्ददिदमौदारिकमिश्रासंयतनोळु खाष्टचत्वारि अशीत्युत्तर चतुःशतंगळु ४८०। षष्ठे प्रमत्तसंयतनोळु आहारकाहारकमिश्रकाययोगद्वयदोळु चतुःशून्यसप्त चतुरुत्तरसप्तशतप्रकृतिविकल्पंगळप्पुवु ७०४। कूडि नाल्कुं स्थानदोळु षोडशोत्तर षट्छताधिकत्रिसहस्रप्रकृतिविकल्पंगळप्पु ३६१६। वर्व कूडिदोडे योगाश्रितमोहनीयोदयसर्व्वप्रकृतिविकल्पंगळु पंचचत्वारिंशदुत्तर षट्छताधिकाष्टाशीतिसहस्रप्रमितंगळप्पु ८८६४५। वी संख्येयुमनाचार्य्यं मुंदण गाथा सूत्रदिदं पेळदपरु :—

पणदालछस्सयाहिय अट्ठासीदीसहस्समुदयस्स।
पयडीणं परिसंखा जोगं पडि मोहणीयस्स ॥५००॥

पंचचत्वारिंशत् षट्छताधिकाष्टाशीतिसहस्रमुदयस्य। प्रकृतीनां परिसंख्या योगं प्रति मोहनीयस्य ॥

योगमं कूर्त्तु मोहनीयोदय प्रकृति विकल्पंगळु पंचचत्वारिंशदधिकषट्छताधिकाष्टाशीतिसहस्रप्रमितंगळप्पुवेंदितु पेळल्पट्टुवु ॥

सासादने वैक्रियिकमिश्रे क्रमेण प्रकृतिविकल्पाः द्वयेकपंच ५१२। असंयते वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोः खद्विनवैकं १९२०। चशब्दादौदारिकमिश्रे खाष्टचत्वारि ४८०। प्रमत्ते आहारकद्वये चतुःशून्यसप्त ७०४ चैकीकृत्य निक्षिप्तेषु—

योगाश्रितमोहनीयोदयप्रकृतिविकल्पाः पंचचत्वारिंशदग्रषट्छताधिकाष्टाशीतिसहस्राणि ८८६४५ ॥५००॥

भंगोंसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उसमें अनिवृत्तिकरणके सवेद-अवेद भाग तथा सूक्ष्मसाम्परायकी दो सौ इकसठ प्रकृति मिलानेपर पिचासी हजार उन्तीस होती हैं ॥४९८॥

इसी बातको ग्रन्थकार आगे स्वयं कहते हैं—

सासादनके वैक्रियिक मिश्रमें प्रकृति विकल्प पाँच सौ बारह हैं। असंयतमें वैक्रियिक मिश्र और कार्माणके प्रकृति विकल्प उन्नीस सौ बीस हैं। 'च' शब्दसे औदारिक मिश्रमें चार सौ अस्सी हैं। प्रमत्तमें आहारक-आहारक मिश्रमें सात सौ चार हैं। इन्हें एकत्र करके मिलानेपर—॥४९९॥

योगके आश्रयसे मोहनीयके सब उदय प्रकृतियोंके भेद अठासी हजार छह सौ पैंतालीस होते हैं ॥५००॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अनंतरं संयममनाश्रयिसि मोहनीयोदयस्थानप्रकृतिसंख्येगळं पेळदपरु :—

तेरस सयाणि सत्तरि सत्तेव य मेलिदे हवंति त्ति ।
ठाणवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ॥५०१॥

त्रयोदशशतानि सप्तति सप्तैव च मिलिते भवंतीति । स्थानविकल्पान् जानीहि संयमावलंबेन मोहस्य ॥

संयमावलंबनदिदं मोहनीयदुदयस्थानविकल्पंगळु त्रयोदशशतंगळु सप्ततियु सप्तकमुं कूडियप्पुवेंदितरि १३७७। येंदु संबोधिसल्पट्टुददेंते दोडे प्रमत्तसंयतनोळु सामायिकमुं छेदोपस्थापनमुं परिहारविशुद्धिसंयममुमेंब मूरुं संयमंगळप्पुवंतागुत्तं विरलेकैकसंयमक्केंदु मोहनीयोदयस्थानंगळागुत्तं विरलु मूरुं संयमंगळिगे चतुर्विंशतिस्थानंगळप्पुवु २४। प्रकृतिविकल्पंगळु ४४। ३ गुणिसिदोडे नूर मूवत्तेरडप्पुवु। १३२। गुणकारंगळु चतुर्व्विंशतिप्रमितमक्कुं। २४॥ अप्रमत्तसंयतनोळमंते मूरुं संयमंगलिगप्पत्तनाल्कुं स्थानंगळुं २४। नूरमूवत्तेरडु प्रकृतिविकल्पंगळु १३२। चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळप्पुवु। २४॥ अपूर्व्वकरणनोळ् सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमद्वयक्के प्रत्येकं नाल्कु नाल्कुदयस्थानंगळागुत्तं विरलेंटुदयस्थानंगळु ८ प्रकृतिविकल्पंगळिप्पत्तु २०। २। गुणिसुत्तं विरलु नाल्वत्तप्पुवु। ४०। गुणकारंगळुं चतुर्व्विंशतिप्रमितंगळप्पुवु। २४। अनिवृत्तिकरणनोळु सामायिकछेदोपस्थापनासंयमद्वयक्के प्रत्येकं मोहनीयोदयस्थानमोंदोंदागळेरडुं संयमंगळगेरडे स्थानंगळप्पुवु। २। प्रकृतिगळुमोंदोंदु संयमक्केरडेरडागलेरडुं संयमंगळगे नाल्कु प्रकृतिगळप्पुवु ४। गुणकारंगळु हन्नेरडप्पुवु। १२। सवेदभागेयोळनिवृत्तिकरणंगे संयमद्वयगुणितमुदयस्थानमोंदक्केरडुस्थानंगळप्पुवु। २। प्रकृतिगळु मेरडेयप्पुवु। २। गुणकारंगळु क्रोधादि-

अथ संयममाश्रित्याह—

संयमावलंबेन मोहनीयस्योदयस्थानविकल्पास्त्रयोदशशतानि सप्तसप्तत्यग्राणि मिलित्वा भवंतीति जानीहि १३७७ ॥ तद्यथा—प्रमत्तेऽप्रमत्ते च सामायिकादित्रयं प्रति स्थानानि चतुर्विंशतिः। प्रकृतयो द्वात्रिंशदग्रशतं। अपूर्वकरणे सामायिकादिद्वयं प्रति स्थानान्यष्टौ। प्रकृतयश्चत्वारिंशत्। एतेषु त्रिषु गुणकारश्चतुर्विंशतिः। अनिवृत्तिकरणेऽपि तद्द्वयं प्रति सवेदभागे स्थाने द्वे। प्रकृतयश्चतस्रः। गुणकारो द्वादश। अवेदभागे

आगे संयमके आश्रयसे कथन करते हैं—

संयमके अवलम्बनसे मोहनीयके उदयस्थानके भेद मिलकर तेरह सौ सतहत्तर होते हैं। उन्हें कहते हैं—

प्रमत्त और अप्रमत्तमें सामायिक आदि तीन संयम होते हैं। उनके द्वारा आठ-आठ स्थानोंको गुणा करनेपर चौबीस-चौबीस स्थान होते हैं। और उन स्थानोंकी प्रकृतियाँ चवालीस हैं। उनको तीनसे गुणा करनेपर एक सौ बत्तीस-एक सौ बत्तीस प्रकृतियाँ होती हैं। अपूर्वकरणमें सामायिक आदि दो संयम होते हैं। उन दोसे चार स्थानोंको गुणा करनेपर आठ स्थान होते हैं और बीस प्रकृतियोंको गुणा करनेपर चालीस प्रकृतियाँ होती हैं। इनको चौबीस भंगोंसे गुणा करो। अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें एक स्थान और दो प्रकृति हैं। उनको दो संयमोंसे गुणा करनेपर दो स्थान चार प्रकृति होती हैं। इनको बारह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेददिदं नाल्कप्पुवु । ४ । सूक्ष्मसांपरायनोळु सूक्ष्मसांपरायसंयममों देयक्कुमदक्कुदयस्थानमों दुं प्रकृतियुमों दप्पुदु । गुणकारमुं सूक्ष्मलोभसंबंधियुमों देयक्कुमिदक्के संदृष्टि :—

०	प्रमत्त	अप्रमत्त	अपू	अनिवृत्तिकर		सू
सं	३	३	२	२	२	१
स्था	२४	२४	८	२	२	१
प्र	१३२	१३२	४०	४	२	१
गु	२४	२४	२४	१२	४	१

इल्लि मोदल प्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणस्थानंगळिगे चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळु टप्पुदरिंद कूडि अय्वत्तार ५६ निप्पत्तनाल्करिंदं २४ गुणिसिदोडे ५६ । २४ । लब्धं सासिरद मूनूरनाल्वत्तनाल्कप्पु १३४४ । ववरोळु अनिवृत्तिकरणादिगळ मूवत्तमूरुं स्थानंगळं ३३ । कूडिदोडे पूर्व्वोक्तसासिरद मूनूरेप्पत्तेळु स्थानविकल्पंगळप्पुवु । १३७७ । प्रकृतिविकल्पंगळुमा मूरुं गुणस्थानंगळोळु चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळनुळळुवप्पुदरिंदं कूडि गुणिसुत्तं विरलु । ३०४ । २४ । येळु सासिरदिन्नूर तों भत्तारप्पुवु । ७२९६ । इवरोळनिवृत्तिकरणादिगळय्वत्तेळु ५७ प्रकृतिगळं कूडिकोळुत्तं विरलु येळु सासिरद मूनूरय्वत्तमूरप्पु ७३५३ । वी संख्येयं मुंदण गाथासूत्रदिंदं पेळदपरु :—

तेवण्णतिसदसमहिय[1] सत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
पयडिवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ॥५०२॥

त्रिपंचाशत्त्रिशताधिक सप्तसहस्रप्रमाणमुदयस्य । प्रकृतिविकल्पान्जानीहि संयमावलंबेन मोहस्य ॥

स्थाने द्वे । प्रकृती अपि द्वे । गुणकारश्चत्वारः । सूक्ष्मसांपराये तत्संयमं प्रति स्थानमेकं, प्रकृतिरेका, गुणकारोऽप्येकः । अत्र तावत्प्रमत्तादित्रयस्य स्थानान्येकीकृत्य चतुर्विंशत्या संगुण्य तत्रानिवृत्तिकरणादीनां त्रयस्त्रिंशतः प्रक्षेपे कृते पूर्वोक्तसंख्यानि भवंति १३७७ ॥५०१॥

भंगोंसे गुणा करो । अवेद भागमें एक स्थान एक प्रकृति । इनको दो संयमोंसे गुणा करनेपर दो स्थान, दो प्रकृति होती हैं । इनको चार भंगोंसे गुणा करो । सूक्ष्मसाम्परायमें एक संयम और वहाँ एक स्थान एक प्रकृति और भंग भी एक ।

यहाँ प्रमत्त आदि तीनके छप्पन स्थानोंको चौबीससे गुणा करनेपर तेरह सौ चवालीस होते हैं । उनमें अनिवृत्तिकरण आदिके तैंतीस मिलानेपर तेरह सौ सतहत्तर उदयस्थान होते हैं ॥५०१॥

---

१. तिसदसहियं—मु० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयमावलंबर्नादिदं मोहनीयोदयद त्रिपंचाशदुत्तरत्रिशताधिकसप्तसहस्रप्रमितप्रकृतिविकल्पंगळनरियें दु शिष्यनाचार्य्यनिदं संबोधिसल्पट्टं ॥

अनंतरं गुणस्थानदोळु संभविसुव लेश्येगळं पेळ्दपरु :—

मिच्छचउक्के छक्कं देसतिये तिण्णि होंति सुहलेस्सा ।
जोगित्ति सुक्कलेस्सा अजोगिठाणं अलेस्सं तु ॥५०३ ॥

मिथ्यादृष्टिचतुष्के षट्कं देशव्रतित्रये तिस्रो भवंति शुभलेश्याः । योगिपर्य्यंतं शुक्ललेश्या अयोगिस्थानमलेश्यं तु ॥

मिथ्यादृष्टिचतुष्के षट्कं मिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिगळें ब गुणस्थानचतुष्कदोळु प्रत्येकं लेश्याषट्कमक्कुं । देशव्रतित्रये तिस्रो भवंति शुभलेश्याः देशसंयतप्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयतरें ब गुणस्थानत्रयदोळु प्रत्येकं शुभलेश्यात्रयमक्कुं । योगिपर्य्यंतं शुक्ललेश्यामेलपूर्व्वकरणादिसयोगकेवलिगुणस्थानपर्य्यंतं शुक्ललेश्येयो देयक्कुं । तु मत्ते अयोगिस्थानमलेश्यं अयोगिगुणस्थानं लेश्यारहितमक्कुं । इंतु गुणस्थानदोळ पेळल्पट्ट लेश्येगळनाश्रयिसि मोहनीयोदयस्थानविकल्पंगळ संख्येयुमं प्रकृतिविकल्पंगळ संख्येयुमं गाथाद्वयदिदं पेळ्दपरु :—

पंचसहस्सा बेसय सत्ताणउदी हवंति उदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु लेस्सं पडि मोहणीयस्स ॥५०४॥

पंचसहस्राणि द्विशतसप्तनवतिश्च भवंति उदयस्य । स्थानविकल्पान्जानीहि लेश्यां प्रति मोहनीयस्य ॥

संयमावलंबेन मोहनीयोदयप्रकृतयोऽपि स्थानवदेकीकृते त्रिपंचाशदग्रत्रिशताधिकसप्तसहस्राणीति जानीहि ॥५०२॥ अथ गुणस्थानेषु संभवल्लेश्याः प्राह—

मिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्गुणस्थानेषु प्रत्येकं लेश्याः षड् भवति । देशसंयतादित्रये शुभा एव तिस्रः । उपर्यपूर्वकरणादिसयोगपर्यंतमेका शुभलेश्यैव । तु—पुनः अयोगिगुणस्थानं लेश्यारहितं ॥५०३॥ उक्तलेश्यामाश्रित्य तत्संस्थानप्रकृतिसंख्ये गाथाद्वयेनाह—

संयमका अवलम्बन लेकर मोहनीयकी उदय प्रकृतियोंको भी स्थानोंकी तरह एकत्र करके अर्थात् प्रमत्त आदि तीनकी तीन सौ चारको चौबीससे गुणा करके उनमें अनिवृत्तिकरण आदिके सत्तावन मिलानेपर सात हजार तीन सौ तिरपन प्रकृतियाँ होती हैं ॥५०२॥

अब गुणस्थानोंमें लेश्या कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें छह लेश्या होती हैं । देशसंयत आदि तीनमें तीन शुभलेश्या ही होती हैं । ऊपर अपूर्वकरणसे सयोगी पर्यन्त शुक्ललेश्या ही है । और अयोगी गुणस्थान लेश्यासे रहित है ॥५०३॥

उक्त लेश्याओंका आश्रय लेकर मोहके स्थानों और प्रकृतियोंकी संख्या दो गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्त नवत्युत्तर द्विशताधिक पंचसहस्रप्रमितंगळप्पुवु । ५२९७ । लेश्येयं कुरुत्तु मोहनीयवुदयस्थानविकल्पंगळनरियेंदु शिष्यं संबोधिसल्पट्टं ॥

अट्ठत्तीससहस्सा बेण्णिसया होंति सत्ततीसा य ।
पयडीणं परिमाणं लेस्सं पडि मोहणीयस्स ॥५०५॥

अष्टात्रिंशत्सहस्राणि द्विशतानि भवंति सप्तत्रिंशच्च । प्रकृतीनां परिमाणं लेश्यां प्रति मोहनीयस्य ॥

लेश्येयं कुरुत्तु मोहनीयवुदयप्रकृतिगळ परिमाणं सप्तत्रिंशदुत्तरद्विशताधिकाष्टात्रिंशत्सहस्रंगळप्पुवु ३८२३७ । वदेंतेंदोडे संदृष्टि :—

गु	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अनिवृत्तिकर		सू
ले	६	६	६	६	३	३	३	१	१		१
ठाण	८	४	४	८	८	८	८	४	१	१	१
ठाण वि	४८	२४	२४	४८	२४	२४	२४	४	१	१	१
प्र वि	४०८	१९२	१९२	३६०	१५६	१३२	१३२	२०	२	१	१
गुणका	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	१२	४	१

ई रचनाभिप्रायं सूचिसल्पडुगुमदेंतेंदोडे मिथ्यादृष्टियोळु दशकादि चतुस्थानंगळु ८
९९
१०
नवकादिचतुस्थानंगळु ७
८८
९
मंतेंटुं स्थानंगळारुं लेश्यंगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ८ । ६ नाल्वत्तेंटु स्थानंगळप्पुवु ४८ । प्रकृतिगळरुवत्तेंटनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ६८ । ६ । नानूरेंटु

इमा गुणस्थानेषूक्तलेश्या आश्रित्य तावत्सर्वमोहनीयोदयस्थानानि सप्तनवत्यग्रद्विशताधिकपंचसहस्राणीति जानीहि ॥५२९७॥

लेश्यां प्रति मोहनीयोदयप्रकृतिपरिमाणं सप्तत्रिंशदग्रद्विशताधिकाष्टात्रिंशत्सहस्राणि भवंति ३८२३७ । तद्यथा—मिथ्यादृष्टौ स्थानानि दशादीनि चत्वारि ८ ९।९ १० नवादीनि चत्वारि ७ ८।८ ९ मिलित्वाष्टौ, षड्-

गुणस्थानोंमें कही लेश्याओंके आश्रयसे मोहनीयके सब उदयस्थान पांच हजार दो सौ सत्तानबे जानो ॥५०४॥

तथा लेश्याओंके आश्रयसे मोहनीयकी उदय प्रकृतियोंका परिमाण अड़तीस हजार दो सौ सैंतीस हैं । उन्हें कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें स्थान दस आदि चार तथा नौ आदि चार । इन आठ स्थानोंको छह लेश्यासे गुणा करनेपर अड़तालीस स्थान हुए । उनकी अड़सठ प्रकृतियोंको छह लेश्याओंसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिगळप्पुवु ४०८। गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४।सासादननोळु नवकादि चतुस्थानंगळप्पु ७
८८
९
ववनारु लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ४। ६। चतुर्विंशति स्थानंगळप्पुवु। २४। प्रकृतिगळु मूवत्तेरडनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ३२। ६। नूरतोंभत्तेरडुदय प्रकृतिगळप्पुवु १९२। गुणकारंगळिप्पनाल्कु २४॥ मिश्रनोळु नवकादिचतुःस्थानंगळप्पु ७
८८
९
ववनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ४। ६। इप्पत्तनाल्कुं स्थानंगळप्पुवु। २४। प्रकृतिगळु मूवत्तेरडनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु। ३२। ६। नूरतोंभत्तेरडु प्रकृतिगळप्पुवु। १९२। गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४। असंयतनोळु नवकादिचतुःस्थानंगळुमष्टकादिचतुःस्थानंगळुं ६
७७
८
कूडियेंटुं स्थानंगळनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु। ८। ६। नाल्वत्तेंटुं स्थानंगळप्पुवु। ४८। प्रकृतिगळुमरुवत्तनारुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ६०। ६। मूनूररुवत्तु प्रकृतिगळप्पुवु। ३६०। गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु॥ देशसंयतनोळष्टकादिचतुःस्थानंगळुं ६
७७
८
सप्तकादि चतुःस्थानंगळुं ५
६६
७
कूडि येंटुं स्थानं-

लेश्यागुणितान्यष्टचत्वारिंशत्, प्रकृतयोऽष्टषष्टिः षड्लेश्यागुणितान्यष्टाग्रचतुःशती। सासादने स्थानानि नवादीनि चत्वारि | ७ ८।८ ९ | षड्लेश्यागुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वात्रिंशत्, षड्लेश्यागुणिता द्वानवत्यग्रशतं। मिश्रे स्थानानि नवादीनि चत्वारि | ७ ८।८ ९ | षड्लेश्यागुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वात्रिंशत्, षड्लेश्यागुणिता द्वानवत्यग्रशतं।

असंयते स्थानानि नवादीनि चत्वारि | ७ ८।८ ९ | अष्टादीनि चत्वारि | ६ ७।७ ८ | मिलित्वाष्टौ षड्लेश्यागुणिताःयष्टाचत्वारिंशत् प्रकृतयः षष्टिः, षड्लेश्यागुणिताः षष्टयग्रत्रिशती। देशसंयते स्थानान्यष्टादीनि

गुणा करनेपर चार सौ आठ प्रकृतियाँ हुईं। सासादनमें नौ आदि चार स्थानोंको छह लेश्यासे गुणा करनेपर चौबीस स्थान हुए। उनकी बत्तीस प्रकृतियोंको छहसे गुणा करनेपर एक सौ बानबे प्रकृतियाँ हुईं। मिश्रमें स्थान नौ आदि चार, प्रकृति बत्तीस। छह लेश्यासे गुणा करनेपर स्थान चौबीस और प्रकृतियाँ एक सौ बानबे हुईं। असंयतमें स्थान नौ आदि चार और आठ आदि चार इस तरह आठ। उनकी प्रकृति साठ। उनको छह लेश्यासे गुणा करनेपर स्थान अड़तालीस, प्रकृति तीन सौ साठ हुईं। देशसंयतमें स्थान आठ आदि चार और सात आदि चार मिलकर आठ। प्रकृति बावन। तीन लेश्यासे गुणा करनेपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळना मूरु शुभलेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलिप्पत्तनाल्कु स्थानंगळप्पुवु । २४ । प्रकृतिगळुमय्वत्तेरडं मूरु शुभलेश्यगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ५२ । ३ । नूरय्वत्तारु प्रकृतिगळप्पुवु । १५६ । गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु । २४ ॥ प्रमत्तसंयतनोळु सप्तकादिचतुःस्थानंगळुं ५ षट्कादिचतुःस्थानंगळुं

६६
६

४ कूडि येंटु स्थानंगळं मूरु लेश्यगळिदं गुणिसूत्तं विर ८ । ३ । लिप्पत्त नाल्कुं स्थानंगळप्पुवु
५५
६

२४ । प्रकृतिगळु नाल्वत्तनाल्कं मूरुं लेश्येगळिदं गुणिसुत्तं विरलु ४४ । ३ । नूरमूवत्तेरडु १३२ । प्रकृतिगळप्पुवु । गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४ ॥

अप्रमत्तसंयतनोळमा प्रकारदिदं सप्तकादि चतुःस्थानंगळु ५ षट्कादिचतुस्थानंगळुं ४
६६ ५५
७ ६

कूडि येंटुंस्थानंगळं मूरुं लेश्येगळिदं गुणिसुत विर ८ । ३ । लिप्पत्तनाल्कुं स्थानंगळप्पुवु । २४ । प्रकृतिगळु नाल्वत्तनाल्कुमशुभलेश्यात्रयदिदं गुणिसुत्तं विरलु ४४ । ३ । नूरमूवत्तेरडु प्रकृतिगळप्पुवु । १३२ । गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४ ॥ अपूर्व्वकरणनोळु षट्कादिचतुस्थानंगळं
४ शुक्ललेश्येयोंदरिदं गुणिसुत्तं विरलु ४ । १ । नाल्के स्थानंगळप्पुवु । ४ । प्रकृतिगळिप्पत्तु-
५५
६

मनोंदे शुक्ललेश्येयिदं गुणिसुत्तं विरलु २० । १ । इप्पत्ते प्रकृतिगळप्पुवु । २० । गुणकारंगळि-

---

चत्वारि | ६ / ७।७ / ८ | सप्तादीनि चत्वारि | ५ / ६।६ / ७ | मिलित्वाष्टौ शुभलेश्यात्रयगुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वापंचाशत्, तत्त्रयगुणिताः षट्पंचाशदग्रशतं । प्रमत्तेऽप्रमत्ते च स्थानानि सप्तादीनि चत्वारि | ७ / ६।६ / ७ | षट्कादीनि चत्वारि | ४ / ५।५ / ६ | मिलित्वाष्टौ, तत्त्रयगुणितानि चतुर्विंशतिः । प्रकृतयश्चतुश्चत्वारिंशत्, तत्त्रयगुणिता द्वात्रिंशदग्रशतं । अपूर्वकरणे स्थानानि षट्कादीनि चत्वारि | ४ / ५।५ / ६ | शुक्ललेश्यागुणितानि चत्वार्येव,

---

स्थान चौबीस, प्रकृति एक सौ छप्पन हुईं । प्रमत्त और अप्रमत्तमें स्थान सात आदि चार और छह आदि चार मिलकर आठ । प्रकृति चवालीस । तीन लेश्यासे गुणा करनेपर स्थान चौबीस, प्रकृति एक सौ बत्तीस हुईं । अपूर्वकरणमें स्थान छह आदि चार, प्रकृति बीस । शुक्ललेश्यासे गुणा करनेपर उतने ही रहे । यहाँ तक स्थानों और प्रकृतियोंको चौबीस भंगोंसे गुणा करें । अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें स्थान एक, प्रकृति दो । शुक्ललेश्यासे

प्पत्तनाल्कप्पुवु । २४ ॥ अनिवृत्तिकरणनोळु द्विप्रकृतिस्थानमोदनोंदे शुक्ललेश्येयिंदं गुणिसिदोडोंदे स्थानमक्कु । १ । प्रकृतिगळेरडुमनोंदे शुक्ललेश्येयिंदं गुणिसिदो २ । १ डेरडे प्रकृतिगळप्पुवु । २ । गुणकारंगळु चतुष्कषायत्रिवेदोदयकृतंगळु पन्नेरडप्पुवु । १२ । मत्तमनिवृत्तिकरणन वेदरहितभागेयोळु एकप्रकृतिस्थानमनेकशुक्ललेश्येयिंदं गुणिसुत्तं विरलु एकस्थानमक्कुं । १ । प्रकृतियुमोंदनोंदे शुक्ललेश्येयिंदं गुणिसुत्तं विरलु ओंदे प्रकृतियक्कुं । १ । गुणकारंगळु संज्वलनक्रोधादिभेददिंदं नाल्कप्पुवु । ४ ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळु सूक्ष्मलोभोदयस्थानमोंदेयक्कुं १ । प्रकृतियुं सूक्ष्मलोभमोंदेयक्कु १ । गुणकारमुमदोंदेयक्कुमंतागुत्तं विरलु मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्व्वकरणगुणस्थानपर्य्यंतमाद गुणस्थानंगळोळु मोहनीयोदयस्थानंगळु लेश्याश्रितंगळु चतुर्व्विंशतिगुणकारंगळनुळ्ळु दप्पुदरिदं कूडिदोडिन्नूरिप्पत्तप्पुववनिप्पत्तनाल्करिदं गुणिसुत्तं विरलु । २२० । २४ । अय्दु सासिरदिन्नूरेण्भत्तप्पुवु । ५२८० । इवरोळनिवृत्यादिगळस्थानंगळु पदिनेळं १७ । कूडिदोडे मुंपेळ्दय्दु सासिरदिन्नूर तोंभत्तेळप्पुवु । ५२९७ । प्रकृतिगळुं सासिरदय्नूर तोंभत्तेरडप्पुववनिप्पत्तनाल्करिदं गुणिसुत्तं विरलु । १५९२ । २४ । मूवत्तेंटु सासिरदिन्नूरेंटु प्रकृतिगळप्पुवु । ३८२०८ । ववरोळनिवृत्यादिगळ प्रकृतिगळिप्पत्तोंभत्तप्पुववं २९ कूडिदोडे मुंपेळ्व मूवत्तेंटु सासिरदिन्नूरमूवत्तेळु प्रकृतिगळप्पुवु । ३८२३७ ॥

अनंतरं सम्यक्त्व गुणमनाश्रयिसि असंयतादिगुणस्थानंगळोळु संभविसुव सर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळसंख्यायुतियं पेळ्दपरु :—

> अट्ठत्तरीहि सहिया तेरससयसया हवंति उदयस्स ।
> ठाणवियप्पे जाणसु सम्मत्तगुणेण मोहस्स ॥५०६॥

अष्टासप्ततिभिः सहितानि त्रयोदशशतानि भवंत्युदयस्य । स्थानविकल्पान् जानीहि सम्यक्त्वगुणेन मोहस्य ॥

प्रकृतयो विंशतिः, तया गुणिता विंशतिरेव । एतावत्पर्यंतं सर्वत्र गुणकारश्चतुर्विंशतिः । अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे स्थानं तया गुणितमेकं प्रकृती द्वे तया गुणिते द्वे एव । गुणकारो द्वादश । अवेदभागे स्थानं तया गुणितमेकं प्रकृतिस्तया गुणितैका, गुणकारश्चतुष्कं । सूक्ष्मसांपराये स्थानमेकं, प्रकृतिरेका गुणकारोऽप्येकः । अत्रापूर्वकरणपर्यंतं स्थानानि प्रकृतीश्च मेलयित्वा चतुर्विंशत्या संगुण्य तत्र स्थानेष्वनिवृत्तिकरणादीनां स्थानदशके प्रकृतिषु तत्प्रकृतेकान्नत्रिंशत्के च प्रक्षिप्ते प्रागुक्तलेश्याश्रितमोहनीयस्थानप्रकृतिप्रमाणे स्यातां ॥५०५॥ अथ सम्यक्त्वमाश्रित्याह—

गुणा करनेपर उतने ही रहे । इनको बारह भंगोंसे गुणा करो । अवेदभागमें स्थान एक प्रकृति एक । शुक्ललेश्यासे गुणा करनेपर भी उतने ही । इनको चार भंगोंसे गुणा करो । सूक्ष्मसाम्परायमें स्थान एक, प्रकृति एक । शुक्ललेश्यासे गुणा करनेपर भी उतने ही । भंग भी एक । अपूर्वकरण पर्यन्त स्थानों और प्रकृतियोंको जोड़कर चौबीस भंगोंसे गुणा करनेपर तथा अनिवृत्तिकरणके सतरह स्थानोंको स्थानोंकी संख्यामें और उनतीस प्रकृतियोंको प्रकृतियोंकी संख्यामें मिलानेपर पूर्वोक्त स्थानभेद और प्रकृतिभेदका प्रमाण आता है ॥५०५॥

आगे सम्यक्त्वके आश्रयसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक्त्वगुणदोडने मोहनीयदुदयस्थानविकल्पंगळष्टासप्तत्युत्तरत्रयोदशशतंगळप्पुववं नीनरिये'दु शिष्यं संबोधिसल्पट्टं ।१३७८ ॥

अट्ठेव सहस्साइं छव्वीसा तह य होंति णादव्वा ।
पयडीणं परिमाणं सम्मत्तगुणेण मोहस्स ॥५०७॥

अष्टैव सहस्राणि षड्विंशतिस्तथैव भवंति ज्ञातव्याः । प्रकृतीनां परिमाणं सम्यक्त्वगुणेन मोहस्य ॥

मोहनीयदुदयप्रकृतिगळ परिमाणमुं सम्यक्त्वगुणदोडने'दु सासिरंगळुमंते षड्विंशतिगळुमप्पुवे'दु ज्ञातव्यंगळप्पुवु । ८०२६ । अदे'ते'दोडे—असंयतसम्यग्दृष्टियोळु क्षायोपशमिकसम्यक्त्वमुमौपशमिकसम्यक्त्वमुं क्षायिकसम्यक्त्वमुमे'ब सम्यक्त्वत्रितयमक्कुमवरोळु क्षायोपशमिकसम्यक्त्वदोळु नवकादि चतुःस्थानंगळप्पु ७ / ८८ / ९ ववर प्रकृतिगळु मूवत्तेरडप्पुवु ।३२। औपशमिकदोळं क्षायिकदोळं प्रत्येकमष्टकादिचतुश्चतुस्थानंगळुमप्पुदरिदं ६ | ६ / ७७ | ७७ / ८ | ८ कूडि एंटु स्थानंगळुमवर प्रकृतिगळु प्रत्येकमिप्प—त्तें'टु मिप्पत्ते'टु मागुत्तं विरलु । २८ । २८ । कूडि अय्वत्तारु प्रकृतिगळप्पुवु । ५६ । गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु । २४ । देशसंयतनोळुमंते क्षायोपशमिकादि सम्यक्त्वत्रयमक्कुमल्लि क्षायोपशमिकसम्यक्त्वदोळु अष्टकादिचतुःस्थानंगळप्पु ६ / ७७ / ८ ववर प्रकृतिगळिप्प-

---

सम्यक्त्वगुणेन सह मोहनीयोदयस्थानविकल्पा अष्टासप्तत्यग्रत्रयोदशशतानि १३७८ भवंतीति जानीहि ॥५०६॥

सम्यक्त्वगुणेन सह मोहनीयोदयप्रकृतिपरिमाणं अष्टैव सहस्राणि तथा च षड्विंशतिः ८०२६ ज्ञातव्या भवंति । तद्यथा—असंयते क्षायोपशमिकस्य स्थानानि नवकादीनि चत्वारि | ७ / ८।८ / ९ | प्रकृतयो द्वात्रिंशत् । औपशमिकक्षायोपशमिकयोः स्थानान्यष्टकादीनि चत्वारि चत्वारि | ६ / ७।७ / ८ | ६ / ७।७ / ८ | प्रकृतयः षट्पंचा-

---

सम्यक्त्व गुणके साथ मोहनीयके उदयस्थानके भेद तेरह सौ अठत्तर जानो ॥५०६॥

सम्यक्त्वगुणके साथ मोहनीयकी उदय प्रकृतियोंका परिमाण आठ हजार छब्बीस जानना चाहिए । उसे कहते हैं—

असंयतमें क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके स्थान नौ आदि चार । उनकी प्रकृतियां बत्तीस । औपशमिक क्षायिकके स्थान आठ आदि चार । प्रकृति अठाईस । दोनों सम्यक्त्वोंको मिलानेपर स्थान आठ, प्रकृति छप्पन । देशसंयतमें क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके स्थान आठ आदि चार । प्रकृति अठाईस । औपशमिक और क्षायिकके पृथक्-पृथक् स्थान सात आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ttंटप्पुवु । २८ । औपशमिकक्षायिकंगळ्गे प्रत्येकं सप्तकादिचतुःस्थानंगळुमागल् ५ ६।६ ७ | ५ ६।६ ७ कूडि स्थानंगळें टुं ८ प्रकृतिगळु प्रत्येकमिप्पत्तनाल्कुमिप्पत्त नाल्कागुत्तं विरलु। २४। २४। नाल्वत्तें टु प्रकृतिगळप्पुवु। ४८। गुणकारंगळुमिप्पत्तनाल्कप्पुवु २४। प्रमत्तसंयतनोळु क्षायोपशमिकादि-सम्यक्त्वत्रयमक्कुमल्लि क्षायोपशमिकसम्यक्त्वदोळु सप्तकादिचतुस्थानंगळ् ५ ६।६ ७ मवर प्रकृतिगळु मिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४। औपशमिकक्षायिकंगळग्गे प्रत्येकं षट्कादि चतुःस्थानंगळु ४ ५।५ ६ | ४ ५।५ ६ मिप्पत्तुमिप्पत्तुं प्रकृतिगळुमागळु कूडियें टुस्थानंगळु ८ नाल्वत्तु प्रकृतिगळुमप्पुवु ४०। गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४॥ अप्रमत्तसंयतनोळु क्षायोपशमिकादि सम्यक्त्वत्रयमक्कुमल्लि क्षायोपशमिकसम्यक्त्वदोळु सप्तकादिचतुःस्थानंगळु ५ ६।६ ७ चतुर्विंशति प्रकृतिगळुमप्पुवु। २४। औपशमिक-क्षायिकंगळोळु प्रत्येकं षट्कादिचतुःचतुस्थानंगळुं विंशतिर्विंशति प्रकृतिगळुमागुत्तं विरलु ४ ५।५ ६ | ४ ५।५ ६ कूडि यें टु स्थानंगळुं ८। नाल्वत्तुप्रकृतिगळु ४० मिप्पत्तनाल्कु गुणकारंगळुमप्पुवु। २४॥ अपूर्व-

---

शत्। देशसंयते क्षायोपशमिकस्य स्थानान्यष्टकादीनि चत्वारि | ६ ७।७ ८ | प्रकृतयोऽष्टाविंशतिः। औपशमिक-क्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं सप्तकादीनि चत्वारि | ५ ६।६ ७ | ५ ६।६ ७ | प्रकृतयोऽष्टचत्वारिंशत्। प्रमत्तेऽप्रमत्ते च क्षायोपशमिके स्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि | ५ ६।६ ७ | ५ ६।६ ७ | प्रकृतयश्चतुर्विंशतिः। औपशमिकक्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं षट्कादीनि चत्वारि | ४ ५।५ ६ | ४ ५।५ ६ | प्रकृतयश्चत्वारिंशत्। अपूर्वकरणे तु न क्षायोपशमिकं।

चार, प्रकृति चौबीस। दोनोंके मिलकर स्थान आठ, प्रकृति अड़तालीस। प्रमत्त और अप्रमत्त-में क्षायोपशमिकके स्थान सात आदि चार-चार। प्रकृति चौबीस-चौबीस। औपशमिक और क्षायिकमें स्थान छह आदि चार-चार। प्रकृति बीस-बीस। दोनों सम्यक्त्वोंके स्थान आठ-आठ। प्रकृति चालीस-चालीस। अपूर्वकरणमें क्षायोपशमिक सम्यक्त्व नहीं होता।

औपशमिक क्षायिकमें स्थान छह आदि चार, प्रकृति बीस। दोनों सम्यक्त्वोंके मिलकर स्थान आठ, प्रकृति चालीस। यहाँ तकके स्थानों और प्रकृतियोंको चौबीस भंगोंसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करणनोळु क्षायोपशमिकं पोरगागियौपशमिकमुं क्षायिकमुमें बेरडे सम्यक्त्वमवकुमल्लि प्रत्येकं षट्कादि चतुश्चतुःस्थानंगळुं विंशतिर्विंशति प्रकृतिगळुमागुत्तं विरलु

४	४
५।५	५।५
६	६
२०	२०

कूडियें टुस्थानंगळुं ८ नाल्वत्तु प्रकृतिगळुमप्पुवु ४०। गुणकारंगळुमिप्पत्तनाल्कप्पुवु। २४॥ अनिवृत्तिकरणनोळु औपशमिक सम्यक्त्वमुं क्षायिकसम्यक्त्वमुमप्पुवल्लि प्रत्येकं द्विप्रकृतिस्थानंगळो दो देयप्पुवु। प्रकृतिगळुमेरडेरडेयप्पुवंतागुत्तं विरलु कूडि स्थानंगळेरडुं २ प्रकृतिगळु नाल्कुमप्पुवु ।४। गुणकारंगळु चतुःकषायत्रिवेदकृतंगळु १।१।१ / १।१।१।१ पन्नेरडप्पुवु १२। मत्तमनिवृत्तिकरणन अवेदभागेयोळु औपशमिकक्षायिकसम्यक्त्वंगळ्गे प्रत्येकमेकप्रकृतिमो दो वे स्थानंगळागुत्तं विरलेरडु स्थानंगळप्पुवु। २। प्रकृतियुं प्रत्येकमो वो वागुत्तं विरलेरडे प्रकृतिगळप्पुवु २। गुणकारंगळु संज्वलनक्रोधादि भेदविदं नाल्कप्पुवु। ४॥

सूक्ष्मसांपरायनोळु औपशमिकक्षायिकंगळ्गे प्रत्येकं सूक्ष्मलोभोदयस्थानमो वो वागुत्तं विरलेरडु स्थानंगळप्पुवु। २। प्रकृतिगळुमेरडप्पुवु। २। गुणकारमुं सूक्ष्मलोभविनो देयक्कुं १। संदृष्टि :—

औपशमिकक्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं षट्कादीनि चत्वारि

४	४
५।५	५।५
६	६
२०	२०

प्रकृतयश्चत्वारिंशत्। एतावत्पर्यंतं सर्वत्र गुणकारश्चतुर्विंशतिः। अनिवृत्तिकरणे औपशमिकक्षायिकयोः स्थानमेकैकं प्रकृती द्वे द्वे। गुणकारो १ १ १ / १ १ १ १ द्वादश। अवेदभागे तयोः स्थानप्रकृती एकैके इति द्वे द्वे गुणकारश्चतुष्कं। सूक्ष्मसांपरायेऽपि तथा स्थानप्रकृती द्वे द्वे गुणकारः सूक्ष्मलोभः। अत्रापूर्वकरणांतं स्थानानि प्रकृतीश्चैकीकृत्य चतुर्विंशत्या गुणयित्वा तत्रानिवृत्तिकरणादेस्तद्गुणकारगुणितस्थानप्रकृतीनां प्रक्षेपे कृते तत्तदुक्तप्रमाणं स्यात्। अत्र प्रकरणे यथा

गुणा करें। अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें एक स्थान एक ओपशमिक क्षायिकमें, प्रकृति दो दो। दो सम्यक्त्वोंके मिलकर स्थान दो, प्रकृति चार। इनको बारह भंगोंसे गुणा करें। अवेद भागमें स्थान एक, प्रकृति एक। दोनों सम्यक्त्वोंके मिलकर स्थान दो, प्रकृति दो। इनको चार भंगोंसे गुणा करें। सूक्ष्म साम्परायमें एक स्थान, एक प्रकृति। दोनों सम्यक्त्वोंके दो स्थान, दो प्रकृति। इनको एक भंगसे गुणा करें।

अपूर्वकरण पर्यन्त स्थानों और प्रकृतियोंको जोड़कर चौबीससे गुणा करें। और उनमें अनिवृत्तिकरण आदिके अपने गुणकारसे गुणित स्थानों और प्रकृतियोंको मिलानेपर स्थानों और प्रकृतियोंका जो प्रमाण गाथामें कहा है वह आ जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	गुणस्थान	असं	देश	प्रमत्त	अप्रमत्त	अपू	अनि	सू
	सम्यक्त्व	३	३	३	३	२	२	२
	वेदकस्थान	४	४	४	४	०	०	०
औपश०	क्षायिक स्थान	८	८	८	८	८	२।२	२
	वेदक प्रकृति	३२	२८	२४	२४	०	०।०	०
औपश०	क्षायिक प्रकृति	५६	४८	४०	४०	४०	४।२	२
	गुणकार	२४	२४	२४	२४	२४	१२।४	१

ई रचनेयोळसंयतादि गुणस्थानंगळोळपूर्व्वकरणावसानमागि स्थानंगळं प्रकृतिगळं चतुर्व्विशतिचतुर्व्विशति गुणकारंगळनुळ्ळुवप्पुवरिं स्थानंगळं प्रकृतिगळं बेरेबेरे कूडुत्तं विरलु स्थानंगळय्वत्तारप्पुवु । ५६ । अवं चतुर्व्विशतिगुणकारंगळिदं गुणिसुत्तं विरलु । ५६ । २४ । सासिरद मूनूरनाल्वत्तनाल्कप्पुवु । १३४४ । इवरोळनिवृत्तिकरणादिगळ स्थानंगळं मूवत्तनाल्कं ३४ । कूडिकोळ्ळुत्तं विरलु मुंपेळ्द सम्यक्त्वाश्रित सर्व्वमोहनीयोदयस्थानंगळु सासिरद मूनूरेप्पत्तेंटप्पुवु । १३७८ । प्रकृतिगळु कूडिदोडे मूनूर मूवत्तेरडप्पु । ३३२ । ववनिप्पत्तनाल्करिदं गुणिसुत्तं विरलु ३३२ । २४ । येळु सासिरदों भैनूररवत्तेंटप्पु ७९६८ । ववरोळनिवृत्तिकरणादिगळय्वत्तेंदुं ५८ प्रकृतिगळं कूडिकोळ्ळुत्तं विरलु मुं पेळद येंटुसासिरविप्पत्तारु प्रकृतिगळु ८०२६ सम्यक्त्वाश्रित-सर्व्वमोहनीयोदयप्रकृतिगळें बुदत्थं । ई मोहनीयस्थानोदय प्रकरणदोळितु गुणस्थानोपयोग योगसंयमलेश्यासम्यक्त्वंगळनाश्रयिसि मोहनीयोदयस्थानंगळं प्रकृतिगळं पेळल्पट्टुवी प्रकारदिदं जीवसमासेगळोळं गत्यादिविशेषमार्गणेगळोळमागमानुसारदिदं मोहनीयोदयस्थानंगळं प्रकृतिगळं योजिसिकोळल्पडुवुवु । मुंदेयुं येकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळमी युदयस्थानंगळं प्रकृतिगळं योजिसल्पडुवुवु ॥

अनंतरं मोहनीयसत्वस्थानप्रकरणमनेकादशगाथासूत्रंगळिदं पेळदपरु :—

गुणस्थानेषूपयोगयोगसंयमलेश्यासम्यक्त्वान्याश्रित्य मोहनीयोदयस्थानतत्प्रकृतय उक्तास्तथा जीवसमासेषु गत्यादिविशेषमार्गणासु वक्ष्यमाणैकचत्वारिंशज्जीवपदेषु चागमानुसारेण वक्तव्याः ॥५०७॥ अथ तत्सत्त्वप्रकरण-मेकादशगाथासूत्रैराह—

इस प्रकरणमें जैसे गुणस्थानोंमें उपयोग, योग, संयम, लेश्या और सम्यक्त्वके आश्रयसे मोहनीयके उदयस्थान और प्रकृतियोंकी संख्या कही है उसी प्रकार जीव समासोंमें गति आदि मार्गणाओंमें और आगे कहे गये इकतालीस जीव पदोंमें आगमके अनुसार कहना चाहिए ॥५०७॥

आगे मोहनीयके सत्त्वका प्रकरण ग्यारह गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठ य सत्त य छक्क य चदु तिदुगेगाधिगाणि वीसाणि ।
तेरस बारेयारं पणादिएगूणयं सत्तं ॥५०८॥

अष्ट च सप्त च षट् च चतुस्त्रिद्वयेकाधिका विंशतिः। त्रयोदशद्वादशैकादश पंचाद्येकोनकं सत्वं ॥

येंटुमेळुमूरुं नाल्कुं मूरुमेरडुमोंदुमधिकमादविंशतिगळुं त्रयोदशमुं द्वादशमुं एकादशमुं पंचाद्येकोनमादुदुं सत्वमक्कुं ॥ संदृष्टि। २८। २७। २६। २४। २३। २२। २१। १३। १२। ११। ५। ४। ३। २। १॥ यिल्लि दर्शनमोहनीयत्रयमुं ३। पंचविंशति चारित्रमोहनीयमु २५ मंतष्टाविंशति प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु सम्यक्त्वप्रकृतियनुद्वेल्लनमं माडिदोडे सप्तविंशति प्रकृतिस्थानमक्कुमवरोळु सम्यक्मिथ्यात्वप्रकृतियनुद्वेल्लनमं माडिदोडे षड्विंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं मत्तमा इप्पत्तेंटर स्थानदोळनंतानुबंधिचतुष्टयमं विसंयोजनमं माडिदोडे चतुर्विंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु मिथ्यात्वप्रकृतियं क्षपिसिदोडे त्रयोविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु सम्यक्मिथ्यात्वप्रकृतियं क्षपिसिदोडे द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमक्कुमवरोळु सम्यक्त्वप्रकृतियं क्षपिसिदोडेकविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु मध्यमाष्टकषायंगळं क्षपिसिदोडे त्रयोदश प्रकृतिस्थानमक्कुमवरोळु षंढवेदमनागलि स्त्रीवेदमनागलि क्षपिसिदोडे द्वादश प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु स्त्रीवेदमनागलि षंढवेदमनागलि क्षपियिसिदोडेकादशप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु षण्णोकषायंगळं क्षपियिसिदोडे पंचप्रकृतिस्थानमक्कुमवरोळु पुंवेदमं क्षपियिसिदोडे चतुःप्रकृतिसत्वस्थान-

---

अष्टसप्तषट्चतुस्त्रिद्वयेकाधिकविंशतयस्त्रयोदशद्वादशैकादशपंचाद्येकोनं च सत्वं स्यात् । अत्र त्रिदर्शनमोहपंचविंशतिचारित्रमोहमष्टाविंशतिकं । तत्र सम्यक्त्वप्रकृतावुद्वेल्लितायां सप्तविंशतिकं । पुनः सम्यग्मिथ्यात्वे उद्वेल्लिते षड्विंशतिकं । पुनः अष्टाविंशतिकेऽनंतानुबंधिचतुष्के विसंयोजिते चतुर्विंशतिकं । पुनः मिथ्यात्वे क्षपिते त्रयोविंशतिकं । पुनः सम्यग्मिथ्यात्वे क्षपिते द्वाविंशतिकं । पुनः सम्यक्त्वे क्षपिते एकविंशतिकं । पुनः मध्यमकषायाष्टके क्षपिते त्रयोदशकं । पुनः षंढे स्त्रीवेदे वा क्षपिते द्वादशकं । पुनः स्त्रीवेदे वा षंढे क्षपिते एकादशकं ।

आठ, सात, छह, चार, तीन, दो और एक अधिक बीस अर्थात् अठाईस, सत्ताईस, छब्बीस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीस तथा तेरह, बारह, ग्यारह और पाँच आदि एक-एक हीन प्रकृतिरूप सत्त्व स्थान हैं—२८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १। इन्हें कहते हैं—

तीन दर्शन मोह और पचीस चारित्रमोह ये अठाईस प्रकृतिरूप सत्त्व स्थान हैं। इनमें-से सम्यक्त्व प्रकृतिकी उद्वेलना करनेपर सत्ताईस प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। पुनः सम्यक्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करनेपर छब्बीस प्रकृतिक सत्त्व होता है। पुनः अट्ठाईसमें-से अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन होनेपर चौबीस प्रकृति सत्त्व होता है। उनमेंसे मिथ्यात्वका क्षय होनेपर तेईस प्रकृतिक सत्त्व होता है। मिश्र मोहनीयका क्षय होनेपर बाईस प्रकृतिक सत्त्व होता है। सम्यक्त्व मोहनीयका क्षय होनेपर इक्कीस प्रकृतिक सत्त्व होता है। अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यानरूप मध्यम कषायोंका क्षय होनेपर तेरह प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। स्त्रीवेद और नपुंसक वेदमें-से एकका क्षय होनेपर बारह प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मक्कुमवरोळु संज्वलनक्रोधमं क्षपियिसिदोडे त्रिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु संज्वलनमानमं क्षपियिसिदोडे द्विप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमवरोळु संज्वलनमायेयं क्षपियिसिदोडेकादशप्रकृतिसत्व-स्थानमक्कु। मा बादरलोभमं क्षपियिसिदोडेकसूक्ष्मलोभप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमल्लि लोभसामान्य-विदमोंदे प्रकृतिसत्वस्थानं पेळल्पट्टुदु। इंतु मोहनीयसत्वस्थानंगळु पदिनैदप्पुवेंदु निर्द्देशि-सल्पट्टुवु। १५॥

अनंतरमी पदिनय्दुं मोहनीयसत्वस्थानंगळं मिथ्यादृष्ट्याद्युपशांतकषायगुणस्थानपर्य्यंत-मावगुणस्थानंगळोळु संभविसुव सत्वस्थानंगळं संख्येयं मुंदणगाथासूत्रदिदं पेळ्दपरु :—

तिण्णेगे एगेगं दो मिस्से चदुसु पणणियट्ठीए।
तिण्णि य थूलेक्कारं सुहुमे चत्तारि तिण्णि उवसंते ॥५०९॥

त्रीण्येकस्मिन् एकस्मिन्नेकं द्वे मिश्रे चतुर्षु पंचनिवृत्तौ। त्रीणि च स्थूले एकादश सूक्ष्मे चत्वारि त्रीण्युपशांते॥

त्रीण्येकस्मिन् मूरुं सत्वस्थानंगळोंदुं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळप्पुवु ३॥ एकस्मिन्नेकं सासादनगुणस्थानमोंदरोळोंदे सत्वस्थानमक्कुं १॥ द्वे मिश्रे मिश्रगुणस्थानदोळेरडु सत्वस्थानं-गळप्पुवु २। चतुर्षु पंच असंयतादि नाल्कुगुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं पंच अय्दय्दु सत्वस्थानंगळप्पुवु ५॥ निवृत्तौ अपूर्व्वकरणनोळु त्रीणि च मूरु सत्वस्थानंगळप्पुवु। ३॥ स्थूले अनिवृत्तिकरणनोळु एकादश पन्नोंदु सत्वस्थानंगळप्पुवु ११॥ सूक्ष्मे सूक्ष्मसांपरायनोळु चत्वारि नाल्कु सत्व स्थानं-गळप्पुवु ४॥ उपशांते उपशांतकषायनोळु त्रीणि मूरु सत्वस्थानंगळप्पुवु ३॥ अनंतरमीस्थानंगळ-वाउवेंबडे पेळ्दपरु :—

पुनः षण्णोकषाये क्षपिते पंचकं। पुनः पुंवेदे क्षपिते चतुष्कं। पुनः संज्वलनक्रोधे क्षपिते त्रिकं। पुनः संज्वल-नमाने क्षपिते द्विकं। पुनः संज्वलनमायायां क्षपितायामेककं। पुनः बादरलोभे क्षपिते सूक्ष्मलोभरूपमेककं। उभयत्र लोभसामान्येनैक्यं॥ ५०८ अमीषां पंचदशानां गुणस्थानसंभवमाह—

मिथ्यादृष्टौ त्रीणि सासादने एकं मिश्रे द्वे असंयतादिचतुर्षु पंच पंच अपूर्वकरणे त्रीणि अनिवृत्तिकरणे एकादश सूक्ष्मसांपराये चत्वारि उपशांतकषाये त्रीणि ॥५०९॥ तानि कानीति चेदाह—

तथा उनमें-से शेष दूसरेका क्षय होनेपर ग्यारह प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। छह हास्यादि नो-कषायोंका क्षय होनेपर पाँच प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। पुरुषवेदका क्षय होनेपर चार प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। संज्वलन क्रोधका क्षय होनेपर तीन प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। संज्वलन मानका क्षय होनेपर दो प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। संज्वलन मायाका क्षय होनेपर एक बादर लोभरूप सत्त्व होता है। बादर लोभका क्षय होनेपर सूक्ष्म लोभरूप सत्त्व होता है। बादर और सूक्ष्म लोभ एक ही प्रकृति है। इससे दोनोंका एक ही स्थान कहा है। इस प्रकार पन्द्रह सत्त्व स्थान हैं ॥५०८॥

इन पन्द्रह स्थानोंका गुणस्थानोंमें सत्त्व बतलाते हैं —

मिथ्यादृष्टिमें तीन, सासादनमें एक, मिश्रमें दो, असंयत आदि चारमें पाँच-पाँच, अपूर्वकरणमें तीन, अनिवृत्तिकरणमें ग्यारह, सूक्ष्म साम्परायमें चार और उपशान्त कषायमें तीन सत्त्व स्थान होते हैं ॥५०९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमतियं च य पढमं पढमच्चवुवीसयं च मिस्सम्मि ।
पढमं चउवीस चऊ अविरददेसे पमत्तिदरे ॥५१०॥

प्रथमत्रिकं च प्रथमं प्रथमं चतुर्विंशतिकं च मिश्रे प्रथमं चतुर्विंशति चत्वारि अविरत देशसंयत प्रमत्तेतरेषु ॥

प्रथमत्रिकं च अष्टाविंशत्यादि प्रथमत्रिस्थानंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु । २८।२७।२६ । एकें दोडे चतुर्गतिय मिथ्यादृष्टिजीवंगळु सम्यक्त्वप्रकृतियुमं मिश्रप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं माळपनप्पुदरिदं प्रथमं सासादननोळु प्रथममष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमों दे सत्वमक्कुं । २८ ॥ प्रथमं चतुर्विंशतिकं च मिश्रे मिश्रनोळुमष्टाविंशति प्रकृतिसत्वस्थानमुं चतुर्विंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमुमेरडेयप्पुवु । २८ । २४ । एंतें दोडनंतानुबंधिचतुष्टयमं विसंयोजिसिद असंयतादिगळु सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्युदयदिदं मिश्रपरिणामगळप्पुदरिदं प्रथमं चतुर्विंशति चत्वारि असंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरोळु प्रत्येकमष्टाविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमु चतुर्विंशत्यादि चतुःसत्वस्थानंगळप्पुवु । २८।२४।२३।२२।२१। एकें दोडा नाल्कुं गुणस्थानवर्तिगळे अनंतानुबंधिचतुष्टयमं विसंयोजिसुवरु । मिथ्यात्वमुमं मिश्रमुमं सम्यक्त्वप्रकृतियुमं क्रमदिदं क्षपियिसुवरुमप्पुदरिदं मेले अपूर्वकरणाद्युपशमश्रेणिय चतुर्गुणस्थानवर्तिगळोळं क्षपकश्रेणियोळष्टकषायानिवृत्तिपर्य्यंतं संभविसुव सत्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

अडचउरेक्कावीसं उवसमसेढिम्मि खवगसेढिम्मि ।
एक्कावीसं सत्ता अट्ठकसायाणियट्टित्ति ॥५११॥

अष्ट चतुरेकविंशतिरुपशमश्रेण्यां क्षपकश्रेण्यामेकैकविंशतिः सत्वान्यष्टकषायानिवृत्तिपर्यंतं ॥

मिथ्यादृष्टौ त्रीण्यष्टाविंशतिकादीनि सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्युद्वेल्लनयोश्चतुर्गतिजीवानां यत्र करणात् । सासादनेऽष्टाविंशतिकं । मिश्रे द्वे अष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके, विसंयोजितानंतानुबंधिनोऽपि सम्यग्मिथ्यात्वोदये तत्र गमनात् । असंयतादिचतुर्षु पंच प्रत्येकं अष्टाविंशतिकं चत्वारि चतुर्विंशतिकादीनि, विसंयोजितानंतानुबंधिनः क्षपितमिथ्यात्वादित्रयाणां च तेषु संभवात् ॥५१०॥

वे कौन हैं ? यह कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें अठाईस, सत्ताईस और छब्बीस रूप तीन सत्त्व स्थान हैं; क्योंकि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें चारों गतिके जीव सम्यक्त्व प्रकृति और मिश्र प्रकृतिकी उद्वेलना करते हैं। सासादनमें अठाईस प्रकृतिरूप एक ही सत्त्व होता है। मिश्रमें अठाईस और चौबीस प्रकृतिरूप दो सत्त्वस्थान हैं; क्योंकि अनन्तानुबन्धीको विसंयोजन करनेवाले भी सम्यक् मिथ्यात्वके उदयमें मिश्र गुणस्थानमें जाते हैं। असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें पाँच-पाँच स्थान होते हैं—अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीस प्रकृतिरूप। क्योंकि अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन और मिथ्यात्व आदि तीनका क्षय इन गुणस्थानोंमें होता है ॥५१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपशमश्रेणियोळु अपूर्व्वकरणाद्युपशांतकषायपर्य्यंतमाद नाल्कुं गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकमष्ट चतुरेकविंशतिः अष्टाविंशति प्रकृतिसत्वस्थानमुं चतुर्व्विंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमुमेकविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमुमप्पुवु। २८।२४।२१। एंतेंदोडुपशमश्रेणियनंतानुबंधिचतुष्टयमुं विसंयोजिसदेयुं विसंयोजिसियुं दर्शनमोहनीयमं क्षपियिसियुं मेणु क्षपियिसदेयुमारोहणमं माळपरप्पुदरिदं, क्षपकश्रेण्यां क्षपकश्रेणियोळु अपूर्व्वकरणनोळमष्टकषायानिवृत्तिकरणपर्य्यंतं नियमदिदमेकविंशति प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं २१॥

अनंतरं क्षपकाष्टकषायानिवृत्तिकरणभागदिदं मेले अनिवृत्तिकरणंगे सत्वस्थानंगळं पेळदपरु :—

तेरसबारेयारं तेरसबारं च तेरसं कमसो।
पुरिसित्थिसढवेदोदयेण गदपणगबंधम्मि ॥५१२॥

त्रयोदश द्वादशैकादशत्रयोदश द्वादश च त्रयोदश क्रमशः। पुरुषस्त्रीषंडवेदोदयेन गतपंचकबंधे॥

अष्टकषायक्षपणानंतरं पुंवेदोदयदिदं क्षपकश्रेण्यारोहणं गेय्द पंचप्रकृतिबंधकानिवृत्तिकरणंगे त्रयोदश द्वादशैकादश प्रकृतिसत्वस्थानंगळप्पुवु। १३। १२। ११। स्त्रीवेदोदयदिदं क्षपकश्रेण्यारोहणं गेय्द पंचबंधकानिवृत्तिकरणनोळु त्रयोदश द्वादशत्रयोदशप्रकृतिसत्वस्थानमुं द्वादशप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं १३। १२। नपुंसकवेदोदयदि क्षपकश्रेण्यारोहणं गेय्द पंचबंधकानिवृत्तिकरणनोळु त्रयोदश त्रयोदश प्रकृतिसत्वस्थानमक्कु। १३। मदेंतेंदोडे पुंवेदिपंचबंधकानिवृत्तिकरणनोळष्टकषायंगळु क्षपियिसल्पडुत्तिरलु पदिमूरुं षंडवेदं क्षपियिसल्पडुत्तिरलु पन्नेरडुं स्त्रीवेदं क्षपियिसल्प-

---

उपशमश्रेण्यां चतुर्गुणस्थानेषु प्रत्येकमष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि त्रीणि विसंयोजितानंतानुबंधिनः क्षपितदर्शनमोहसप्तकस्य तत्सत्त्वस्य तत्रारोहणात्। क्षपकश्रेण्यामपूर्वकरणे अष्टकषायानिवृत्तिकरणे चैकविंशतिकमेव ॥५११॥

तत उपरि पुंवेदोदयारूढस्य पंचबंधकानिवृत्तिकरणे त्रयोदशकद्वादशकैकादशकानि। अष्टकषायक्षपणा-

---

उपशम श्रेणिके अपूर्वकरण आदि चार गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें अठाईस, चौबीस और इक्कीस प्रकृतिक तीन सत्त्वस्थान होते हैं, क्योंकि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले और अनन्तानुबन्धी तथा तीन दर्शनमोहका क्षपण करनेवालेके चौबीस और इक्कीस प्रकृतिक सत्त्व होता है और ऐसे जीव उपशम श्रेणिपर आरोहण करते हैं। क्षपकश्रेणिमें अपूर्वकरणमें और अनिवृत्तिकरणमें आठ कषायोंका क्षय करनेसे पूर्व इक्कीस प्रकृतिक ही सत्त्वस्थान होता है ॥५११॥

उससे ऊपर जो पुरुषवेदके उदयसे श्रेणि चढ़ता है उसके जहाँ अनिवृत्तिकरणमें पुरुषवेद और संज्वलन, क्रोध, मान, माया, लोभका बन्ध होता है उस भागमें तेरह, बारह और ग्यारह प्रकृतिरूप तीन सत्त्वस्थान हैं। क्योंकि आठ कषायोंके क्षयके अनन्तर स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका क्रमसे क्षय होता है। जो स्त्रीवेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़ता है उसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डुत्तिरलु पन्नोंदुं प्रकृतिसत्वस्थानंगळप्पुवु । स्त्रीवेदिपंचबंधकानिवृत्तिकरणनोळमंते अष्टकषायंगळ क्षपियिसल्पडुत्तिरलु पदिमूरुं षंढवेदं क्षपियिसल्पडुत्तिरलु पन्नेरडुं प्रकृतिसत्वस्थानंगळप्पुवु । षंड- वेदिपंचबंधकानिवृत्तिगेअष्टकषायक्षपणानंतरं स्त्रीवेदक्कं पुंवेदक्कं युगपत्क्षपणाप्रारंभमक्कुमप्पु- दरिदं त्रयोदशप्रकृतिसत्वस्थानमेयक्कु । संदृष्टि रचना विशेषमिदु :—

इदर विवरणं मोहनीयत्रिसंयोगदोलु द्वयाधिकरण एकादेय त्रिप्रकारदोलुयोजिसिकों बुदु= बंधोदयसत्व=।।

बं १ २ ३ ४	स १ २ ३ ४	बं १ २ ३ ४	स १ २ ३ ४	बं १ २ ३ ४	स १ २ ३ ४।५
नों ०/७	४।११	नो ०/७	४।११	नो ०/७	५।११
	४।१३		४।१२		इं।१२
	५।१३		५।१२		सं।१३
	१३।१३		सं।१३		।२१
	२२।२१		।२१		।
न		इ		पुं	

पुरिसोदयेण चडिदे अंतिमखंडंतिमोत्ति पुरिसुदओ ।
तप्पणिधिम्मिदराणं अवगदवेदोदयं होदि ।।५१३।।

पुरुषोदयेन चटिते चरमखंडचरमसमयपर्य्यंतं पुरुषोदयः । तत्प्रणिधावितरयोरपगतवेदोदयो भवति ॥

पुरुषोदयेन पुंवेदोदयदिदं चडिदे क्षपकश्रेण्यारूढनोळु अंतिमखंडंतिमोत्ति चरमखंड चरम- समयपर्य्यंतं पुंवेदोदयप्रथमस्थित्यायामदोळु नपुंसकवेदक्षपणाखंडमुं स्त्रीवेदक्षपणाखंडमुं पुंवेद- क्षपणाखंडमुमेंब त्रिखंडंगळोळु चरमपुंवेदक्षपणाखंडचरमसमयपर्य्यंतं पुरुषोदयः पुंवेदोदयमुं

नंतरं तत्र षंढस्त्रीवेदयोः क्रमशः क्षपणात् । स्त्रीवेदोदयारूढस्य तत्र त्रयोदशकं षंढे क्षपिते च द्वादशकं षंढोदयारूढस्य तत्र त्रयोदशकमेव स्त्रीपुंवेदयोर्युगपत्क्षपणाप्रारंभात् ।। संदृष्टिः—

तो तेरह प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान हैं और नपुंसक वेदका क्षय होनेपर बारह प्रकृतिरूप सत्त्व स्थान हैं। जो जीव नपुंसकवेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़ता है उसके तेरह प्रकृतिरूप ही सत्त्वस्थान हैं; क्योंकि वह नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका क्षपण एक साथ प्रारम्भ करता है ।।५१२।।

जो पुरुषवेदसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है उसके अन्तिम खण्डके अन्तिम समय पर्यन्त पुरुषवेदके उदयकी प्रथम स्थितिके कालमें नपुंसक वेद क्षपणाखण्ड, स्त्रीवेद क्षपणाखण्ड और पुरुषवेद क्षपणाखण्डोंमें-से अन्तिम खण्डके अन्तिम समय पर्यन्त पुरुषवेदका उदय और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुंवेदबंधमुं निरंतरमक्कु। तत्प्रणिधौ आसँवळियोळु इतरयोः इतरंगळप्प स्त्रीषंडवेदंगळगे अपगत-वेदोदयो भवति। वेदोदयरहितमक्कुमंतागुत्तं विरलु :—

तट्ठाणे एक्कारस सत्ता तिण्होदयेण चडिदाणं।
सत्तण्हं समगंछिदी पुरिसे छण्हं च णवगमत्थित्ति ॥५१४॥

तत्स्थाने येकादशसत्वं त्रयाणामुदयेन चटितानां सप्तानां समच्छित्तिः पुरुषे षण्णां च नवकमस्तीति ॥

तत्स्थाने आ पुंवेदोदयारूढानिवृत्तिसवेदचरमखंडदोळमा सँवळिय स्त्रीषंडवेदोदयारूढरुगळु वेदोदयरहितस्थानद्वयदोळं एकादशसत्वं नोकषायसप्तकमु संज्वलनकषायचतुष्कमुमें ब पन्नोंदुं प्रकृतिगळुं प्रत्येकं सत्वमक्कुमवरोळु त्रयाणामुदयेनारूढानां मूरुवेदोदयंगळिदं क्षपकश्रेण्यारूढरु-

	१ २ ३ बं ४	१ २ ३ स४		१ २ ३ बं ४	१ २ ३ स ४		१ २ ३ बं ४	१ २ ३ स ४।५
० नो७	४	११	० नो७	४	११	० नो७	५	११
	४	१३		४	१२	इ		१२
	५	१३		५	१२	सं		१३
		१३	सं		१३			१३
		२१			२१			२१
न			इ			पुं		

पुंवेदोदयेन क्षपकश्रेण्यारूढे चरमसमयपर्यंतं पुंवेदोदयप्रथमस्थित्यायामे षंढक्षपणाखंडस्त्रीक्षपणाखंड-पुंक्षपणाखंडेषु चरमे खंडे चरमसमयपर्यंतं पुंवेदस्योदयो बंधश्च निरंतरो भवति। तत्प्रणिधौ चेतरवेदयोरपगत-वेदोदयो भवति ॥५१३॥ एवं सति—

तस्मिन् पुंवेदोदयारूढानिवृत्तिसवेदचरमखंडे तत्प्रणिधौ स्त्रीषंढोदयारूढयोरवेदोदयस्थानद्वये च सप्तनो-

बन्ध निरन्तर होता है। उस पुरुषवेदकी क्षपणाके अन्तिम खण्डके निकट शेष नपुंसक वेद और स्त्रीवेदके उदयका अभाव हो जाता है ॥५१३॥

ऐसा होनेपर—

पुरुषवेदके उदय सहित श्रेणि चढ़नेवालेके अनिवृत्तिकरणके सवेदभागके अन्तिम खण्डमें, उसी खण्डके निकट अनिवृत्तिकरणके उस अन्तिम खण्डके कालमें और स्त्रीवेद और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळ्गे सप्तानां समच्छित्तिः सप्तनोकषायंगळगे युगपत्क्षपणा प्रारंभमुमक्के तच्चरमखंड चरमसमयदोळु युगपत्सत्वव्युच्छित्तियुमक्कुमल्लि पुरुषे पुरुषवेदोदयारूढनोळु षण्णां च षण्णोकषायंगळोये सत्वव्युच्छित्तियक्कुमेकेंदोडे नवकमस्तीति पुंवेदनवकबंधसमयप्रबद्धंगळु क्षपितावशेषंगळु समयोनावळि प्रमितंगळुं संपूर्णसमयप्रबद्धंगळु संपूर्णावलिप्रमितंगळुमंतु समयोनद्व्यावलिमात्रनवकबंधसमयप्रबद्धंगळु सत्वमुंटप्पुदरिंदमदेंतेंदोडे पुंवेदनवप्रश्नाधिकारदोळु समानबंधोदयव्युच्छित्तिप्रकृतिगळु मूवत्तोंदरोळु पठितमप्पुदरिंदमदक्के बंधोदयंगळु युगपद्व्युच्छित्तिगळप्पुवप्पुदरिंदं पुंवेदोदयचरमसमयदोळु समयोनद्व्यावळिमात्रंगळप्पुववक्के संदृष्टि —

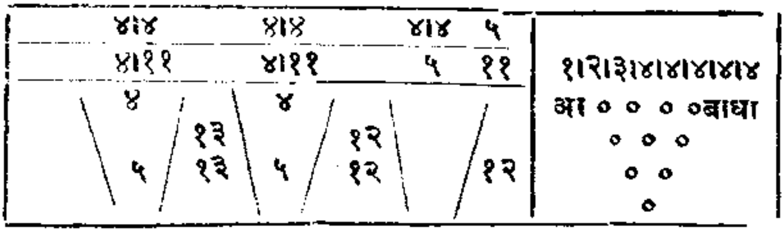

कषायचतुस्संज्वलना इत्येकादश सत्वमस्ति । त्रिवेदोदयारूढानां सप्तनोकषायक्षपणाप्रारंभः चरमखंड चरमसमये सत्वव्युच्छित्तिश्च युगपदेव । तत्र पुंवेदोदयारूढे तु समयोनावलिमात्रक्षपितावशेषा आवलीमात्रसंपूर्णाश्च पुंवेदस्य नवकबंधसमयप्रबद्धाः संतीति षण्णोकषायाणामेव सत्वव्युच्छित्तिः । ते च नवकसमयप्रबद्धाः स्वस्वबंधसमयादचलावली गतायां प्रतिसमयमेकैकफालिं परमुखेनवोदयंतः, आवलिकाले क्षीयमाणाः समयोनद्व्यावलिकाले सर्वे उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकैः सह क्षीयंते । गलितावशेषास्तु समयप्रबद्धांशत्वात्समयप्रबद्धा इत्युच्यंते ।

नपुंसक वेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़नेवालेके स्त्रीवेद नपुंसकवेदके उदयका अभावरूप दो स्थानोंमें पुरुषवेद सहित छह नोकषाय और चार संजलन इन ग्यारह प्रकृतिरूप स्थान होता है। तीनोंमें-से किसी भी एक वेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़नेवालोंके सात नोकषायोंकी क्षपणाका प्रारम्भ और अन्तिम खण्डके अन्तिम समयमें उन सात कषायोंकी सत्त्व व्युच्छित्ति एक साथ होती है। उसके होनेपर चारका ही सत्त्व रहता है। किन्तु इतना विशेष है— जो पुरुषवेदके उदयके साथ श्रेणी चढ़ा है उसके एक समय कम दो आवली प्रमाण समयप्रबद्धोंमें-से एक समय कम आवली प्रमाण क्षय होनेके पश्चात् सम्पूर्ण आवली प्रमाण पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। अतः उसके छह नोकषायोंकी ही सत्त्व व्युच्छित्ति होती है। इससे पुरुषवेद सहित श्रेणि चढ़नेवालेके पाँचका सत्त्व रहता है। जिनका बन्ध हुए थोड़ा समय हुआ हो और जो संक्रमण आदि करनेके योग्य न हों ऐसे नूतन समयप्रबद्धके निषेकोंको नवक समयप्रबद्ध कहा है। वे नवक समयप्रबद्ध अपने-अपने बन्धके प्रथम समयसे लेकर आवली प्रमाण कालमें अन्य अवस्थाको प्राप्त नहीं होते, इससे इस आवलीकालको अचलावली कहते हैं। उस अचलावलीके बीतनेपर प्रति समय वे नवक समयप्रबद्ध एक-एक फालि परमुखरूपसे उदय होकर आवलीकालमें क्षय होते हुए एक समय कम दो आवली कालमें सब उच्छिष्टावली मात्र निषेकोंके साथ क्षयको प्राप्त होते हैं। 'गलितावशेष' अर्थात् गलनेके पश्चात् अवशेष समयप्रबद्धके जो निषेक रहते हैं वे समयप्रबद्धके अंश हैं, इससे उनको भी समयप्रबद्ध कहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इल्लि नवकसमयप्रबद्धक्के अंकसंदृष्टि नाल्कु ४। अदक्कचलावलिकालमाबाधेयक्कुमाय-चलावलिगेयुं नाल्कु शून्यं संदृष्टियक्कुं। आ नवकसमयप्रबद्धमचलावलिकालमं कळियलोडनावलि-मात्रपाळिगळप्पुवु। ४। अवरोळु समयं प्रत्येकैकपाळिगळिकडुत्तं विरलावळिमात्रकालक्कुदयिसि पोपुवंतु पोगुत्तं विरलु गळितावशेषसमयप्रबद्धंगळु एकद्वित्र्यादिपाळिगळगं समयप्रबद्धांशत्वविवं समयप्रबद्धमें बु पेळल्पट्टुवी समयोनद्व्यावलिमात्रनवकबंधसमयप्रबद्धंगळु पुंवेदोदयारूढचतुर्बंधका-निवृत्तिकरणवेदरहितभागदोळु सत्वमक्कुमवक्के स्वमुखोदयमिल्लवे परमुखोदयदोळु समयोन-द्व्यावळिमात्रकालक्कुच्छिष्टावलिमात्रनिषेकंगळु सहितमागि केडुवुवें दरिवुदु। उच्छिष्टावलि-यें बुदेने दोडे उदयमुळ्ळ प्रकृतिगळगावलिमात्रनिषेकंगळवशिष्टमादागळवक्के स्वमुखोदयमिल्लवे परमुखोदयदिंदमेयावळिमात्रकालक्के प्रतिसमयमेकैकनिषेकक्रमदिंदं किडुवुवु। मत्तमुदयरहित प्रकृतिगळगावलिमात्रनिषेकंगळं कळेदु लक्षिसल्पट्ट चरमस्थितिकांडकचरमपाळि किडुत्तं विरलु शेषोच्छिष्टावलिमात्रनिषेकंगळगे क्षपणे इल्लप्पुदरिंदं स्थितोत्कसंक्रमविधानदिंदं परमुखोदयदिंदमा-वलिमात्रकालक्के प्रतिसमयमेकैकनिषेकंगळु संक्रमिसि केट्टु पोपुवें दरिवुदु।

उक्तार्थानुवादपुरस्सरमागियानिवृत्तिकरणनोळु सत्वस्थानविशेषंगळं पेळ्दपरु।

संदृष्टिः—

ब ४	स ४	बं ४	स ४	बं ४	स ४	५	१। २। ३। ४। ४। ४। ४। ४।
४	११	४	११		५	११	आ ०। ०। ०। ०। बाधा
४	१३	४	१२			१२	० ० ०
५	१३	५	१२				० ०
							०

अत्र नवकसमयप्रबद्धस्यांकसंदृष्टिश्चतुष्कं। तस्याचलावलिराबाधा। तस्याः संदृष्टिश्चतुःशून्यं। उच्छिष्टा-वलिस्तु उदयागतानामावलिमात्रका अनुदयागतानामावलिमात्रनिषेकानतीत्य लक्षितचरमस्थितिकांडकचरम-फालिपतनेऽवशिष्टावलिमात्रनिषेकाश्च क्षपणां विना स्थितोक्तसंक्रमविधानेन परमुखोदयेनैव प्रतिसमयमेकैक-निषेकगलनक्रमेण विनश्यंतीति ॥५१४॥ उक्तार्थानुवादपुरस्सरमनिवृत्तिकरणे सत्त्वस्थानविशेषानाह—

संदृष्टिमें नवक समयप्रबद्धकी पहचान चारका अंक है। उस समयप्रबद्धकी अबाधा अचलावली प्रमाण है। उसमें उसका उदयादि नहीं होता। उसकी पहचान चार बिन्दी हैं। उच्छिष्टावलीका अभिप्राय—जो कर्म उदयको प्राप्त हैं उनके आवली मात्र शेष रहे निषेक और जो कर्म उदयको प्राप्त नहीं हुए उनके आवली मात्र निषेकोंको लाँघकर स्थितिके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालीके पतनमें आवलीकाल मात्र शेष रहे निषेक, वे क्षपणा बिना संक्रम विधानके द्वारा अन्य प्रकृतिरूप हो परमुख उदय द्वारा प्रति समय एक-एक निषेक क्रमसे गलकर नष्ट होते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि वेदके क्षपणा कालमें जो पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धका सत्त्व शेष रहता है वह क्रोध क्षपणाकालमें क्रोधरूप परिणमन करके नष्ट होता है। इससे वहाँ पाँचका भी सत्त्व जानना ॥५१४॥ इस अर्थको कहकर अनिवृत्ति-करणमें सत्त्वस्थानोंका विशेष कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इदि चदुब्बंधं खवगे तेरस बारस एगार चउसत्ता ।
तिदु इगिबंधे तिदु इगि णवगुच्छिट्ठाणविवक्खा ।।५१५।।

इति चतुर्बंधक्षपके त्रयोदशद्वादशैकादशचत्वारि सत्वानि । त्रिद्व्येकबंधे त्रिद्व्येकं नवकोच्छिष्टानामविवक्षा ॥

इंतुक्तप्रकारदिदं चतुर्ब्बंधक्षपके नपुंसकवेदोदयारूढ सवेदानिवृत्तिकरणचरमसमयचतुर्ब्बंधकनोळु त्रयोदशत्रयोदशप्रकृतिसत्वस्थानमक्कं द्वादशस्त्रीवेदोदयारूढसवेदानिवृत्तिकरणचरमसमयचतुर्ब्बंधकनोळु द्वादशप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं । एकादशषंडवेदस्त्रीवेदोदयारूढापगतवेदोदयानिवृत्तिकरणक्षपकचतुर्ब्बंधकरोळेकादशप्रकृतिसत्वस्थानमक्कं । चत्वारि सत्वानि मत्तमा षंडवेद स्त्रीवेदपुंवेदोदयारूढापगतवेदोदयानिवृत्तिकरण चतुर्ब्बंधकक्षपकरोळु चतुःप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमल्लिये मत्तमा पुंवेदोदयारूढापगतवेदोदयानिवृत्तिकरणप्रथमभागचतुर्ब्बंधकनोळु पंचप्रकृतिस्थानमुं सत्वमक्कुमेकेंदोडे गुणस्थानविषयसत्वस्थानसंख्याप्ररूपणेयोळनिवृत्तिकरणनोळु सत्वस्थानंगळु पन्नोंदु । पुंवेदनवकबंधसत्वं चतुर्ब्बंधकानिवृत्तिकरणनोळु विवक्षिसल्पट्टुदरिदं ।

अल्लिदं मेले नपुंसकवेदस्त्रीवेदपुंवेदत्रितयोदयारूढापगतवेदोदयानिवृत्तिकरणक्षपकरुगळु त्रिद्व्येकबंधे त्रिबंध द्विबंध एकबादरलोभकषायबंधभागेगळोळु यथाक्रमदिदं त्रिद्व्येकं त्रिबंधकनोळु त्रिप्रकृतिसत्वस्थानमुं द्विबंधकनोळु द्विप्रकृतिसत्वस्थानमुं संज्वलनलोभैकप्रकृतिबंधकनोळु संज्वलनलोभैकप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमा त्रिद्व्येकबंधकस्थानकंगळोळु पुंवेदबंधदोळपेळदंते नवकोच्छिष्टानां नवकबंधसमयोनद्वयावळिमात्रसमयप्रबद्धंगळ सत्वमुं उच्छिष्टावळिमात्रोदयावशेषप्रथम-

---

इति उक्तप्रकारेण षंढोदयारूढस्य सवेदानिवृत्तिकरणचरमसमयचतुर्बंधके सत्त्वं त्रयोदशकं । स्त्रीवेदोदयारूढस्य द्वादशकं । षंढस्त्रीवेदोदयारूढापगतवेदोदयचतुर्बंधके एकादशकं । पुनः षंढस्त्रीवेदोदयानां तत्र चतुष्कं पुंवेदोदयारूढस्य पंचकमपि तदेकादशस्थानेषु पुंवेदनवकसत्त्वस्य विवक्षितत्वात् । तत उपरि त्रिवेदो-

---

इस कहे विधानके अनुसार जो नपुंसक वेद सहित श्रेणि चढ़ता है उसके वेद सहित अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें, जिसमें मोहनीयकी चार प्रकृतियोंका बन्ध होता है, तेरह प्रकृतियोंका सत्त्व है। जो स्त्रीवेदके उदय सहित श्रेणी चढ़ता है उसके उसी समयमें बारह प्रकृतियोंका सत्त्व है। जो नपुंसकवेद या स्त्रीवेदके उदयके साथ श्रेणी चढ़ता है उसके वेदके उदयसे रहित तथा चार प्रकृतियोंके बन्धवाले भागमें ग्यारहका सत्त्व है। पुनः नपुंसकवेद या स्त्रीवेद सहित श्रेणि चढ़नेवालेके सात नोकषायोंका क्षय होनेपर चार प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान होता है। पुरुषवेदके उदयके साथ श्रेणि चढ़नेवालेके पाँच प्रकृतिरूप भी सत्त्वस्थान होता है। क्योंकि उसके ग्यारहके सत्त्वस्थानमें पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धकी विवक्षा है। उससे ऊपर तीनों ही वेदोंके उदय सहित श्रेणी चढ़नेवालोंके जहाँ तीन, दो और एक प्रकृतिका बन्ध पाया जाता है ऐसे तीन भागोंमें क्रमसे तीनरूप, दोरूप और एकरूप सत्त्वस्थान होता है। यहाँ पूर्ववत् नवक बन्धके एक समय कम दो आवली प्रमाण समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली मात्र उदयसे अवशेष प्रथम स्थितिके निषेक यद्यपि हैं तथापि यहाँ उनकी विवक्षा नहीं है। जैसे पुरुषवेदके नवक समयप्रबद्धका सत्त्व अवशेष रहनेपर वह क्रोध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थितिनिषेकंगळुं सत्वमुंटागुत्तमिर्द्दोडमवक्के अविवक्षा स्यात् अविवक्षेयक्कुं। इंतनिवृत्तिकरण-नोळुपशमश्रेणियोळष्टाविंशतिचतुर्व्विंशत्येकविंशति ॥ त्रिस्थानगळु त्रिस्थानंगळोळु । २८ । २४ । २१ । क्षपकश्रेणिय एकविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमुं त्रयोदशद्वादशैकादश पंचचतुस्त्रिद्व्येकप्रकृतिसत्व स्थानंगळों भत्तप्पुववरोळेकविंशतिस्थानं पुनरुक्तमेंदु बिट्टेकादशसत्वस्थानंगळेंदु पेळल्पट्टुवु। क्षपक । १३ । १२ । ११ । ५ । ४ । ३ । २ । १ । उप । २८ । २४ । २१ । कूडि ११ ॥ सूक्ष्मसांप-रायनोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशत्येकविंशति त्रिस्थानंगळुपशमश्रेणियोळप्पुवु। क्षपकश्रेणियोळु सूक्ष्मलोभप्रकृतिस्थानं सत्वमोंदेयक्कुं । १ । कूडि चतुःस्थानंगळप्पुवु। २८ । २४ । २१ । १ । इल्लि सूक्ष्मसांपरायंगे सूक्ष्मलोभसत्वमेंतेंदोडे बादरसंज्वलनलोभक्कश्वकर्ण्णकरणसहचारिता-पूर्व्वस्पर्द्धककरणमुमवक्के बादरकृष्टिकरणमुमवक्के मत्ते सूक्ष्मकृष्टिकरणमुमनिवृत्तिकरणनोळ-नंतैकभागानुभागक्रमदिदं माडल्पट्टुवप्पुदरि ना सूक्ष्मकृष्टिगळनिवृत्तिकरणनोळनुदयसत्वमक्कुमी सूक्ष्मसांपराय संयमियोळुदयसत्वमक्कुमी सूक्ष्मलोभकषायोदयानुरंजितसंयमं सूक्ष्मसांपराय-संयममेंदन्वर्थं नाममक्कुमदेंतेंदोडे सूक्ष्मः सांपरायः कषायो यस्याऽसौ सूक्ष्मसांपरायः एंदितु।

दयारूढानां त्रिद्व्येकबंधभागेषु यथाक्रमं त्रिकं द्विकमेककमस्ति। अत्र प्राग्वन्नवकबंधसमयोनद्व्यावलिमात्रसमय-प्रबद्धा उच्छिष्टावलिमात्रोदयावशेषप्रथमस्थितिनिषेकाश्च संत्यपि ते न विवक्षिताः। एवमनिवृत्तिकरणे उपशमश्रेण्यामष्टाविंशतिचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि, क्षपकश्रेण्यामेकविंशतिकत्रयोदशकद्वादशकैकादशकपंचक-चतुष्कत्रिकद्विकैकानि। एतेषु एकमेकविंशतिकं पुनरुक्तमित्येकादशेत्युक्तं। सूक्ष्मसांपराये उपशमश्रेण्यामष्टा-विंशतिचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि। क्षपकश्रेण्यां सूक्ष्मलोभरूपैकमिति चत्वारि। तल्लोभसत्त्वं कीदृशं? अनंतैकभागानुभागक्रमेणानिवृत्तिकरणे बादरसंज्वलनलोभस्याश्वकर्णकरणसहचरितापूर्वस्पर्धककरणं तेषां च बादरकृष्टिकरणं तासां च सूक्ष्मकृष्टिकरणमिति तत्र सूक्ष्मकृष्टिरूपमनुदयगतमत्रोदयगतमिति ज्ञातव्यं।

क्षपणाकालमें क्रोधरूप होकर नष्ट हो जाता है उसी प्रकार क्रोध, मान, मायाके भी अवशेष रहे नवक समयप्रबद्धका सत्त्व क्रमसे मान, माया, लोभके क्षपणाकालमें परमुख होकर नष्ट हो जाता है। परन्तु उनकी विवक्षा नहीं की। यदि उनकी विवक्षा होती तो जैसे चारके सत्त्वके स्थानमें पाँचका सत्त्व कहा उसी प्रकार तीन, दो, एकके स्थानमें चार, तीन, दोका भी सत्त्व कहते। किन्तु विवक्षा न होनेसे तीन, दो, एकका ही सत्त्व कहा।

इस प्रकार अनिवृत्तिकरणमें उपशम श्रेणिमें तो अठाईस, चौबीस, इक्कीसरूप तीन सत्त्वस्थान हैं। क्षपक श्रेणिमें इक्कीस, तेरह, बारह, ग्यारह, पाँच, चार, तीन, दो और एकरूप नौ स्थान हैं। इनमें इक्कीसरूप स्थान उपशमक और क्षपक दोनोंमें कहा है इससे पुनरुक्त है। इसीसे ग्यारह सत्त्वस्थान कहे हैं।

सूक्ष्म साम्परायमें उपशमश्रेणिमें अठाईस, चौबीस, इक्कीस तीन स्थान हैं। क्षपक-श्रेणिमें सूक्ष्म लोभरूप एक स्थान है। इस तरह चार स्थान हैं। वह लोभका सत्त्व किस रूप है यह कहते हैं—

अनिवृत्तिकरणमें क्रमसे अनन्तवें-अनन्तवें भाग बादर संज्वलन लोभका अश्वकर्ण-करण सहित अपूर्वस्पर्धक करण होता है। फिर उन स्पर्धकोंका स्थूलखण्डरूप बादरकृष्टि-करण होता है। फिर उन बादरकृष्टियोंका सूक्ष्मखण्डरूप सूक्ष्मकृष्टिकरण होता है। उन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपशांतकषायनोळमष्टाविंशति चतुर्विंशति एकविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानत्रितयमक्कु । २८ । २४ । २१ । मितु गुणस्थानदोळुक्तसत्वस्थानंगळगे संदृष्टि :—

मि ३	सा १	मि २	अ ५	दे ५	प्र ५
२८।२७।२६	२८	२८।२४	२८।२४।२३।२२।२१	२८।२४।२३।२२।२१	२८।२४।२३।२२।२१

अ ५	अ ३	अ ११	
२८।२४।२३।२२।२१	२८।२४।२१	क्षप २१	२८।२४।२१।क्ष२१।१३।१२।११।५।४ ३।२।१।

सू ४	उ ३	क्षी	स	अ	सि
२८।२४।२१।१	२८।२४।२१।	०	०	०	०

अनंतरं मोहनीयबंधस्थानंगळोळु सत्वस्थानंगळनाधाराधेयभावदिदं पेळदपरु :—

तिण्णेव दु बावीसे इगिवीसे अट्ठवीस कम्मंसा ।
सत्तर तेरे णवबंधगेसु पंचेव ठाणाणि ॥५१६॥

त्रीण्येव तु द्वाविंशत्यां एकविंशतावष्टाविंशतिः कर्म्मांशाः । सप्तदश त्रयोदशसु नवबंधकेषु पंचैव स्थानानि ॥

पंचविधचदुविधेसु य छसत्त सेसेसु जाण चत्तारि ।
उच्छिट्ठावलिनवकं अविवक्खिय सत्तठाणाणि ॥५१७॥

पंचविधचतुर्विधयोः षट्सप्त शेषेषु विद्धि चत्वारि । उच्छिष्टावलिनवकमनपेक्ष्य सत्वस्थानानि । गाथाद्वितयं ॥

उपशांतकषायेऽष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि ॥५१५॥ अथ मोहनीयबंधस्थानेषु सत्वस्थानान्याधेयभावेन गाथाद्वयेनाह—

सूक्ष्मकृष्टियोंका उदय अनिवृत्तिकरणमें नहीं होता किन्तु सूक्ष्मसाम्परायमें होता है। अश्वकर्णादिका स्वरूप आगे लिखेंगे।

उपशान्तकषायमें अठाईस, चौबीस, इक्कीस तीन स्थान होते हैं। उससे ऊपर मोहनीयका सत्त्व नहीं है ॥५१५॥

क्षपक अनिवृत्तिकरणके सत्त्वस्थानोंका यन्त्र

नपुंसक वेदसहित श्रेणिमें		स्त्रीवेद सहित श्रेणिमें		पुरुषवेद सहित श्रेणिमें	
बन्ध	सत्त्व	बन्ध	सत्त्व	बन्ध	सत्त्व
१	१	१	१	१	१
२	२	२	२	२	२
३	३	३	३	३	३
४	४	४	४	४	४ वा ५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रीण्येव द्वाविंशत्यां द्वाविंशति प्रकृतिबंधस्थानमं कट्टुवागळा जीवनोळु २८ । २७ । २६ । मूरे मोहनीयसत्वस्थानंगळु संभविसुववु । तु मत्ते एकविंशतावष्टाविंशतिकर्म्मांशाः एकविंशति-मोहनीयप्रकृतिसत्वस्थानमं कट्टुवागळु जीवनोळष्टाविंशति प्रकृतिगळु अंशाः सत्वंगळप्पुवु । सप्तदशत्रयोदशसु नवबंधकेषु पंचैव स्थानानि सप्तदश प्रकृतिबंधस्थानमं कट्टुवागळा जीवनोळं त्रयोदशप्रकृति मोहनीयबंधस्थानमं कट्टुवागळा जीवनोळं नवबंधकेषु नवप्रकृतिमोहनीयबंध-स्थानमं कट्टुवागळा जीवनोळं पंचैव स्थानानि प्रत्येकं पंचपंचमोहनीयसत्वस्थानंगळु संभवि-सुववु । २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । पंचविधचतुर्विधयोः षट्सप्त पंच प्रकृतिबंधस्थानमं कट्टु-वागळा जीवनोळु षण्मोहनीयसत्वस्थानंगळु संभविसुववु । २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ । चतुःप्रकृतिमोहनीयबंधस्थानमं कट्टुवागळा जीवंगे सप्तमोहनीयसत्वस्थानंगळु संभविसुववु । २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ । ४ । इल्लि चतुर्ब्बंधकनोळु पंचप्रकृतिसत्वस्थानमेकें पेळल्प-डर्दे दोडे नवकोच्छिष्टंगळ्गिल्लि सत्वविवक्षे इल्लप्पुदु कारणमागि । शेषेषु चत्वारि शेषत्रिप्रकृति द्विप्रकृत्येकप्रकृतिमोहनीयबंधस्थानंगळं कट्टुवागळा जीवंगळु प्रत्येकं त्रिप्रकृतिबंधकनोळु चत्वारि ई नाल्कुं मोहनीयसत्वस्थानंगळु संभविसुववु । २८ । २४ । २१ । ३ । द्विप्रकृतिमोहनीय-स्थानबंधकनोळु नाल्कुं मोहनीयसत्वस्थानंगळु संभविसुववु । २८ । २४ । २१ । २ । एकप्रकृति-मोहनीयबंधस्थानमं कट्टुवागळा जीवनोळु मोहनीयसत्वस्थानंगळिवु नाल्कु संभविसुववु । २८ ।

द्वाविंशतिबंधे कर्मांशाः सत्त्वस्थानानि अष्टाविंशतिकसप्तविंशतिकषड्विंशतिकानि त्रीणि । एकविंशति-बंधेऽष्टाविंशतिकमेव । सप्तदशबंधे त्रयोदशबंधे नवबंधे चाष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकत्रयोविंशतिकद्वाविंशतिकैक-विंशतिकानि पंच पंच । पंचबंधे तान्येव पंचैकादशाग्राणि । चतुर्बंधे तान्येव षट्चतुष्काग्राणि । अत्र पंचकसत्त्वं

व्युच्छित्ति	बन्ध	सत्त्व	व्युच्छित्ति	बन्ध	सत्त्व	व्युच्छित्ति	बन्ध	सत्त्व
नोकषाय ७	४	११	नोक. ७	४	११	नोक. ७	५	११
←	बन्ध ४	सत्त्व १३		बन्ध ४	सत्त्व १२		बन्ध ५	सत्त्व १२
	बन्ध ५	सत्त्व १३		बन्ध ५	सत्त्व १२		बन्ध ५	सत्त्व १३
	बन्ध ५	सत्त्व १३		बन्ध ५	सत्त्व १३		बन्ध ५	सत्त्व १३
		सत्त्व २१			सत्त्व २१			सत्त्व २१

आगे मोहनीयके बन्धस्थानोंमें सत्त्वस्थान दो गाथा द्वारा कहते हैं—

जहाँ बाईसका बन्ध है वहाँ सत्त्वस्थान अठाईस, सत्ताईस, छब्बीस प्रकृति तीन हैं। इक्कीसका जहाँ बन्ध है वहाँ अट्ठाईस रूप सत्त्व स्थान है। सतरह, तेरह और नौके बन्ध-स्थानोंमें अट्ठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीसरूप पाँच-पाँच सत्त्वस्थान हैं। पाँचके बन्ध स्थानमें अट्ठाईस, चौबीस, इक्कीस, तेरह, बारह, ग्यारह प्रकृतिरूप छह सत्त्वस्थान हैं। चारके बन्धस्थानमें छह पूर्वोक्त और एक चार प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान है। यहाँ पाँच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४। २१। १। उच्छिष्टावलिनवकमनपेक्ष्य चतुर्बंधकं मोदलागि एकबंधकावसानमादबंधकरोळु पेळ्द सत्वस्थानंगळु उच्छिष्टावलिनवकबंधंगळ सत्वमनवज्ञेयं माडि पेळल्पट्टवें वितु रवं विद्धि नीनरि शिष्य येंदितावार्थदिनिदं संबोधिसल्पट्टं। उक्तार्थोपयोगियक्कुमी रचने।

बंध	२२	२१	१७	१३	९	५	४	३	२	१
सत्व	३	१	५	५	५	६	७	४	४	४
	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८
	२७		२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
	२६		२३	२३	२३	२१	२१	२१	२१	२१
			२२	२२	२२	१३	१३	३	२	१
							१२			
			२१	२१	२१	१२	११			
						११	४			

अनंतरमितु मोहनीयदोळु पेळल्पट्ट बंधोदयसत्वस्थानसंख्येयननुवदिसुत्तलुमुपसंहरिसि मुंदे मत्ते नामकर्म्मम पेळदपेमेंदु मुंदण सूत्रदोळु प्रतिज्ञेयं माडिदपरु।

दस णव पण्णरसाइं बंधोदयसत्तपयडिठाणाणि।
भणिदाणि मोहणिज्जे एत्तो णामं परं वोच्छं ॥५१८॥

दश नव पंचदशबंधोदयसत्वप्रकृतिस्थानानि। भणितानि मोहनीये इतो नाम परं वक्ष्यामि ॥

मोहनीयें मोहनीयदोळु बंधोदयसत्वप्रकृतिस्थानानि बंधप्रकृतिस्थानंगळुमुदयप्रकृतिस्थानंगळुं सत्वप्रकृतिस्थानंगळुं कर्मदिदं दश पत्तुं। नव ओंभत्तुं। पंचदश पदिनय्दुं भणितानि पेळल्पट्टुवु। इतः परं इल्लिदं मुंदे नाम वक्ष्यामि नामकर्म्मबंधोदयसत्वस्थानमं पेळ्दपें॥

इंतु मोहनीयबंधोदयसत्वप्रकृतिस्थानप्ररूपणानिरूपणं परिसमाप्तमादुदु ॥

तु नवकोच्छिष्टयोरविवक्षितत्वान्नोक्तं। त्रिबंधे द्विबंधे एकबंधे चाष्टाविंशतिकचतुर्विंशतैकैकविंशतिकानि क्रमशः त्रिकद्विकैकाग्राणीति चत्वारि चत्वारि जानीहि। इमान्यपि सत्वस्थानानि उच्छिष्टावलिनवकबंधाविवक्षयैवोक्तानि ॥५१६॥५१७॥

प्रकृतिरूप स्थान नहीं कहा; क्योंकि नवकरूप समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावलीकी यहाँ विवक्षा नहीं है। तीनके बन्धस्थानमें अट्ठाईस, चौबीस, इक्कीस और तीन प्रकृतिरूप चार सत्त्व स्थान हैं। दोके बन्धस्थानमें अट्ठाईस, चौबीस, इक्कीस और दो प्रकृतिरूप ये चार सत्त्वस्थान हैं। एकके बन्धस्थानमें अट्ठाईस, चौबीस, इक्कीस और एक प्रकृतिरूप चार सत्त्वस्थान हैं। ये सत्त्वस्थान भी उच्छिष्टावली तथा नवक समयप्रबद्धकी विवक्षाके बिना कहे हैं ॥५१६-५१७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकं जिनोक्तागममं नोकरिसुविरण्णगळिरं परसमयिगळं—। तेक परिभाविसिन्निमगेकांतमे जीवितं हृषीकसुखंगळु ॥

आरिमोहनीयकर्म्मद बिरुवोय्यि सत्तु नरकदुःखर्ण्णदोळु। गुरियप्पेनारकरगंळगरिगट्टिव सायकवर्क्के मरदिर्द्दरनं ॥ अरनें बुदाउददनानरिवंदमदाउदें दु चिंतिसुतिरदों। मरमरुळुतनमनुळि-नोनरि रुचिवेरसादिजिनमुखाब्जोदितमं ॥ तत्वरुचितत्वदरितं सत्वंगळनोउवंदमादोडे दानं। सत्वदोळु पूजे जिननोळु स्वत्वं स्पर्शावलंबिगेउदो मर्ट्टं ॥

अनंतरमेकचत्वारिंशज्जीवस्थानंगळोळु नामकर्म्मबंधोदयसत्वस्थानंगळं पेळल्वेडि नाम-निर्द्देशमं गाथाद्वयदिदं माडिदपरु :—

णिरया पुण्णा पण्हं बादरसुहुमा तहेव पत्तेया।
वियलासण्णी सण्णी मणुवा पुण्णा अपुण्णा य ॥५१९॥
सामण्णतित्थकेवलि उहय समुग्घादगा य आहारा।
देवावि य पज्जत्ता इदि जीवपदा हु इगिदाला ॥५२०॥

नारकाः पूर्णाः पंचानां बादरसूक्ष्माः तथैव प्रत्येकाः। विकला असंज्ञी संज्ञी मानवाः पूर्णा अपूर्णाश्च ॥

सामान्यतीर्थकेवलिनौ उभयसमुद्घातकौ च आहाराः। देवा अपि च पर्य्याप्ता इति जीव-पदानि खल्वेकचत्वारिंशत् ॥

नारकाः पूर्णाः नारकरुगळेल्लरुं पर्य्याप्तकरुगळु। पंचानां बादरसूक्ष्माः पृथ्विकायिकाप्का-यिकतेजस्कायिकवायुकायिकसाधारणवनस्पतिकायिकमें ब पंचस्थावरंगळ बादरसूक्ष्मंगळु तथैव प्रत्येका प्रत्येकवनस्पतिगळु विकलाः द्वींद्रियमुं त्रींद्रियमुं चतुरिंद्रियमुमसंज्ञिपंचेंद्रियमुं संज्ञिपंचेंद्रियमुं मानवाः मानवरुमें दितु तिर्य्यग्मनुष्यरुगळ भेदद पृथ्वीकायिक बादरादिपदंगळु पदिनेळु पूर्णा-पूर्णाश्च पर्य्याप्तरुगळुमपर्य्याप्तरुगळुमोळरप्पुदरिंदं मूवत्तनाल्कु पदंगळप्पुवु। ३४। सामान्य-तीर्थकेवलिनौ सामान्यकेवलिगळु तीर्थकेवलिगळु उभयसमुद्घातकौ च सामान्यसमुद्घात

मोहनीये बंधोदयसत्त्वप्रकृतिस्थानानि क्रमेण दश नव पंचदश भणितानि। इतः परं नामकर्मणस्तानि वक्ष्यामि ॥५१८॥ तदाधारत्वादेकचत्वारिंशत्पदानि तावद्गाथाद्वयेन निर्दिशति—

नारकाः सर्वे पर्याप्ता एव, पृथ्व्यादयः पंच बादराः सूक्ष्माश्च, तथा प्रत्येकं वनस्पतयः, द्वित्रिचतुरिंद्रियाः

इस प्रकार मोहनीयमें दस बन्ध स्थान, नौ उदयस्थान और पन्द्रह सत्त्वस्थान कहे। आगे नामकर्मके कहेंगे ॥५१८॥

प्रथम ही नामकर्मके स्थानोंके आधारभूत इकतालीस पदोंको दो गाथाओंसे कहते हैं—

सब नारकी पर्याप्त ही होते हैं। पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण वनस्पतिकायिक ये पाँच बादर और सूक्ष्म तथा प्रत्येक वनस्पति, दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी, और मनुष्य ये सतरह पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों अतः चौंतीस हुए। सामान्य केवली,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलियुं तीर्त्थंसमुद्घातकेवलियुमाहाराः आहारकरुं देवा अपि च देवक्कळुमेंबी षट्पदंगळ पर्य्याप्ताः पर्याप्तरुगळुं इति यिंतु पर्य्याप्तनारकपदयुतमागि एकचत्वारिंशत् नाल्वत्तोंदु खलु स्फुटमागि जीवपदानि नामकर्म्मबंधस्थानविवक्षेयोळु कर्म्मपदंगळप्पुवु । उदयसत्वविवक्षेयोळु जीवपदंगळप्पुवु । अदेंतेंदोडे नरकगतिनामकर्म्ममुं पृथ्वीकायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियनामकर्म्ममुं पृथ्वीकायस्थावरविशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियनामकर्म्ममुं अप्कायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियनामकर्म्ममुं अप्कायस्थावरविशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियनामकर्म्ममुं तेजस्कायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियनामकर्म्ममुं तेजस्कायस्थावरविशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियनामकर्म्ममुं वायुकायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियनामकर्म्ममुं वायुकायस्थावरविशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियनामकर्म्ममुं साधारणस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियनामकर्म्ममुं साधारणस्थावरविशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियनामकर्म्ममुं अहंगे स्थावरबादरविशिष्टप्रत्येकवनस्पत्येकेंद्रियनामकर्म्ममुमितिवेकेंद्रियत्वनिमित्तकर्म्मभेदंगळप्पुवु ।

त्रसविशिष्टद्वींद्रियजातिनामकर्म्ममुं त्रसविशिष्टत्रींद्रियजातिनामकर्म्ममुं त्रसविशिष्टचतुरिंद्रियजातिनामकर्म्ममुं त्रसविशिष्टासंज्ञिपंचेंद्रियजातिनामकर्म्ममुं त्रसविशिष्टसंज्ञिपंचेंद्रियजातिनामकर्म्ममुं त्रसविशिष्टमनुष्यगतिनामकर्म्ममुमें दिंतु पर्य्याप्तविशिष्टंगळु पृथ्वीकायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियकर्म्मपदं मोदल्गोंडु पदिनेळुं कर्म्मपदंगळुमपर्य्याप्तनामकर्म्मविशिष्टंगळुं पदिनेळुं कर्म्मपदंगळप्पुवु । १७ ॥ उभयकर्म्मपदंगळुं मूवत्तनाल्कप्पुवु । ३४ । केवलिपदचतुष्टयं केवलं

असंज्ञिनः संज्ञिनो मानवाश्चैते सप्तदशापि पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च, सामान्यकेवलिनस्तीर्थकेवलिनः एते उभये समुद्घातवंतश्च आहारका देवाश्चामी षट् पर्याप्ता एवेत्येकचत्वारिंशत्खलु स्फुटं जीवपदानि, नामकर्मबंधस्थानविवक्षया कर्मपदान्युदयसत्वविवक्षया जीवपदानि च भवंति । तद्यथा—

नरकगतिनाम पृथ्वीकायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं अप्कायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं तेजस्कायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं वायुकायस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं, साधारणस्थावरविशिष्टबादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं स्थावरबादरविशिष्टप्रत्येकवनस्पत्येकेंद्रियमित्येकादश नामकर्माण्येकेंद्रियत्वनिमित्तानि । त्रसविशिष्टद्वीन्द्रियं, तद्विशिष्टत्रीन्द्रियं,

---

तीर्थंकर केवली, और समुद्घातगत सामान्य केवली, समुद्घातगत तीर्थंकर केवली ये चार, तथा आहारक और देव ये छह पर्याप्त ही हैं। ये इकतालीस जीवपद होते हैं। नामकर्मके बन्धस्थानोंकी विवक्षा होनेपर ये कर्मपद हैं क्योंकि इन प्रकृतिरूप नामकर्मका बन्ध होता है। और उदय तथा सत्वकी विवक्षामें ये जीवपद हैं क्योंकि इनका उदय और सत्व जीवमें पाया जाता है ॥ वही कहते हैं—

नरकगति नाम, पृथ्वीकाय स्थावर विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय, पृथ्वीकाय स्थावर विशिष्ट सूक्ष्म एकेन्द्रिय, अप्काय स्थावर विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय, अप्काय स्थावर विशिष्ट सूक्ष्म एकेन्द्रिय, तेजस्काय स्थावर विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय, तेजस्काय स्थावर विशिष्ट सूक्ष्म एकेन्द्रिय, वायुकाय स्थावर विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय, वायुकाय स्थावर विशिष्ट सूक्ष्म एकेन्द्रिय, साधारण स्थावर विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय, साधारण स्थावर विशिष्ट सूक्ष्म एकेन्द्रिय, स्थावर बादर विशिष्ट प्रत्येक वनस्पति एकेन्द्रिय, ये ग्यारह नामकर्म एकेन्द्रिय निमित्तक हैं, त्रस विशिष्ट दोइन्द्रिय, त्रस विशिष्ट तेइन्द्रिय, त्रस विशिष्ट चौइन्द्रिय, त्रस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवपदंगळेयप्पुवु । आहारपदमुं जीवपदमेयक्कुमदें तें दोडे—आहारकद्वयं देवगतिनामकर्म्मंबोड-नल्लदन्यगतित्रितयदोडने नियमदिदं बंधमागदप्पुदरिदं तद्देवगत्यंतर्भावियक्कुं । पर्य्याप्तविशिष्ट-देवगतिनामकर्म्ममुमितु पर्य्याप्तविशिष्टनारकदेवगतिनामकर्म्मद्वयमुं २ । तिर्य्यंग्मनुष्यगतिद्वय पर्य्याप्तापर्य्याप्तविशिष्टचतुस्त्रिंशत्कर्मपदंगळु ३४ । कूडि षट्त्रिंशत्कर्म्मपदंगळप्पुवु । केवलं जीवपदंगळुमय्दु कूडि एकचत्वारिंशत्पदंगळप्पुवु ।४१। ई नाल्वत्तोंदु पदंगळ्गे संदृष्टि :—

प	नि	पृ बा	पृ सू	आ।बा	आ।सू	ते।बा	ते।सू	वा बा	वा सू	सा बा	सा।सू	प्र	द्वीं
अ	०	पृ बा	पृ सू	आ।बा	आ।सू	ते।बा	ते।सू	वा बा	वा सू	सा बा	सा।सू	प्र	द्वीं

→

त्रीं	च	अ	सं	म	सा।के	ति।के	सा। स के	ति। स के	अ	दे	२४
त्रीं	च	अ	सं	म	०	०	०	०	०	०	१७

←

अनंतरं नामकर्म्मप्रकृतिबंधस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

तेवीसं पणुवीसं छव्वीसं अट्ठवीसमुगुतीसं ।
तीसेक्कतीसमेवं एक्को बंधो दु सेढिम्मि ।।५२१।।

त्रयोविंशतिः पंचविंशतिः षड्विंशतिरष्टाविंशतिरेकान्नत्रिंशस्त्रिंशदेकत्रिंशदेवमेको बंधो द्विश्रेण्यां ।।

तद्विशिष्टचतुरिंद्रियं, तद्विशिष्टासंज्ञिपंचेंद्रियं, तद्विशिष्टसंज्ञिपंचेंद्रियं मनुष्यगतिनामेमानि सप्तदशापि पर्याप्त-नामविशिष्टानि पर्याप्तपदानि अपर्याप्तनामविशिष्टान्यपर्याप्तपदानि । चत्वारः केवलिनः केवलजीवपदानि आहारकमपि जीवपदं देवगतिं विनान्यगत्या सह बंधाभावात् तस्यामेव तदंतर्भावात् पर्याप्तविशिष्टदेवगतिनाम । नारकदेवगती पदे तिर्यग्मनुष्यगत्योश्चतुस्त्रिंशत्पदानि च कर्मपदानि केवलजीवपदानि पंच मिलित्वैकचत्वा-रिंशत् ।।५१९–५२०।।

विशिष्ट असंज्ञी पंचेन्द्रिय, त्रसविशिष्ट संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्यगति नाम। ये सतरह भी पर्याप्तनाम विशिष्ट होनेसे पर्याप्तपद हैं और अपर्याप्तनाम विशिष्ट होनेसे अपर्याप्त पद हैं। ये चौंतीस हुए। सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली, समुद्घातगत सामान्य केवली, समुद्घातगत तीर्थंकर केवली, ये चार केवली, ये केवल जीवपद हैं। आहारक भी जीवपद हैं; क्योंकि देवगतिके बिना अन्यगतिके साथ उसका बन्ध नहीं होता। उसीमें उसका अन्तर्भाव होनेसे पर्याप्त देवगति नाम है। इस तरह नरक देवगति पद दो और तियंच मनुष्यगतिके चौंतीस पद ये छत्तीस कर्मपद हैं और केवल जीवपद पाँच हैं—चार केवली और आहारक। सब मिलकर इकतालीस पद हैं ।।५१९–५२०।।

त्रयोविंशतिः त्रयोविंशति प्रकृतिबंधस्थानमुं पंचविंशतिः पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं षड्विंशतिः षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं अष्टाविंशतिः अष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं एकान्नत्रिंशत् एकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुं त्रिंशत् त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुं एकत्रिंशत् एकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुं एवं यितेळु नामकर्मप्रकृतिबंधस्थानंगळप्पुवु ।७। एको बंधः एकप्रकृतिस्थानबंधं द्विश्रेण्यां उभयश्रेणियोळं अपूर्वकरणचरमभागप्रथमसमयं मोदलगोंडु सूक्ष्मसांपरायचरमसमयपर्य्यंत बंधमक्कुं। त्रयोविंशत्यादिसप्तबंधस्थानंगळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदलगोंड पूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं यथासंभवमागि मुंदे पेळव क्रमदिदं बंधमप्पुवु। ई त्रयोविंशत्यादिबंधस्थानंगळु।

१	प	०		
३१	प	दे		
३०	प	ति	म	दे
२९	प	ति	म	दे
२८	प	दे	नि	
२६	प	अ त	उद्यो	
२५	प	अ		
२३	अ			

अनंतरं ई येंदुं स्थानंगळितप्पितप्प प्रकृतिगळोंडने बंधंगळप्पुवेंदु मुंदण गाथाद्वयदिदं पेळदपरु :—

नामकर्मबंधस्थानानि त्रयोविंशतिकं पंचविंशतिकं षड्विंशतिकमष्टाविंशतिकमेकान्नत्रिंशत्कं त्रिंशत्कमेकत्रिंशत्कमेककमित्यष्टौ। आद्यानि सप्तापूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं यथासंभवमेककमुभयश्रेण्योरपूर्वकरणसप्तमभागप्रथमसमयात् सूक्ष्मसांपरायचरमसमयपर्यंतं च बध्यते ॥५२१॥ तानि केन केन कर्मपदेन युतानि बध्यंते इति सूत्रद्वयेनाह—

नामकर्मके बन्धस्थान तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीस और एक प्रकृतिरूप आठ हैं। उनमें-से आदिके सात अपूर्वकरणके छठे भाग पर्यन्त यथासम्भव होते हैं। एक प्रकृतिरूप स्थान दोनों श्रेणियोंमें अपूर्वकरणके सातवें भागके प्रथम समयसे सूक्ष्म साम्परायके अन्त समय पर्यन्त बँधता है ॥५२१॥

ये बन्धस्थान किस-किस कर्मपद सहित बँधते हैं, यह दो गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठाणमपुण्णेण जुदं पुण्णेण य उवरि पुण्णगेणेव ।
तावदुगाणण्णदरेणण्णदरेणमरणिरयाणं ॥५२२॥
णिरयेण विणा तिण्हं एक्कदरेणेवमेव सुरगइणा ।
बंधंति विणा गइणा जीवा तज्जोग्गपरिणामा ॥५२३॥

स्थानमपूर्णेन युतं पूर्णेन च उपरि पूर्णकेनैव । आतपद्विकयोरन्यतरेणान्यतरेणामरनरकयोः ॥ नरकेण विना त्रयाणामेकतरेणैवमेव सुरगत्या । बध्नंति विना गत्या जीवास्तद्योग्यपरिणामाः ॥

त्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानमं अपूर्णेन युतं अपर्य्याप्तनामकर्म्मयुतमागियुं पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमं पूर्णेन च पर्य्याप्तनामकर्म्मयुतमागियुं च शब्ददिदं अपर्य्याप्तनामकर्म्मयुतमागियुं उपरिपूर्णकेनैव षड्विंशतिप्रकृतिस्थानं मोदलोंडु मेलेल्ला बंधस्थानंगळुमं पर्य्याप्तनामकर्म्मदोडनेयुं षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं आतपद्विकयोरन्यतरेण आतपोद्योतंगळेरडरोळन्यतरप्रकृतियुमागियुं अष्टाविंशति प्रकृतिबंधस्थानमं अन्यतरेणामरनरकयोः देवगतिनरकगतिनामकर्म्मंगळेरडरोळन्यतरप्रकृतियुतमागियुं एकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं नरकेण विना त्रयाणामेकतरेण नरकगतिनामकर्म्मरहितमागि शेषतिर्य्यग्मनुष्यदेवगतित्रयंगळोळगेकतरप्रकृतियुतमागियुं त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं एवमेव मुं पेळ्वंते नरकगतिनामकर्म्मं पोरमागि तिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिप्रकृतित्रितयंगळोळेकतरप्रकृतियुतमागियुं एकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं सुरगत्या देवगतिनामकर्म्मयुतमागियुं विना गत्या एकप्रकृतिबंधस्थानमनाव गतियुतमल्लदेयुं जीवाः जीवंगळु तद्योग्यपरिणामाः तत्तद्योग्याः तद्योग्याः तद्योग्याः परिणामाः येषां ते जीवास्तद्योग्यपरिणामाः तत्तत्प्रकृतिबंधकारणयोग्यपरिणामंगळनुळ्ळवु बध्नंति कट्टुवउ । संदृष्टि मुंपेळ्दुदेयक्कुं ।

त्रयोविंशतिकं अपर्याप्तेन युतं । पंचविंशतिकं पर्याप्तेन युतं । चशब्दादपर्याप्तेन युतं च । उपरितनानि षड्विंशतिकादीनि पर्याप्तेन युतान्यपि षड्विंशतिकं आतपोद्योतान्यतरेण युतं । अष्टाविंशतिकं देवगतिनरकगत्यन्यतरेण युतं । एकान्नविंशत्कं त्रिंशत्कं च तिर्यगादिगतित्रयान्यतमेन युतं । एकत्रिंशत्कं देवगत्या युतं । एकैकं कयापि गत्या युतं न भवति । एतानि स्थानानि जीवाः तत्तत्स्थानबंधयोग्यपरिणामाः संतो बध्नंति ॥५२२–५२३॥ तौ चातपोद्योतौ प्रशस्तत्वात्केन पदेन सह बध्नंतीति चेदाह—

तेईस प्रकृतिरूप स्थान अपर्याप्त प्रकृतिके साथ बँधता है। पच्चीसरूप स्थान पर्याप्त-प्रकृतिके साथ बँधता है। 'च' शब्दसे अपर्याप्त सहित भी बँधता है। ऊपरके छब्बीस आदि स्थान पर्याप्त सहित बँधते हैं। छब्बीसरूप स्थान आतप और उद्योतमें-से किसी एक प्रकृति सहित बँधता है। अठाईस प्रकृतिक स्थान देवगति, नरकगतिमें-से किसी एक गतिके साथ बँधता है। उनतीस और तीस प्रकृतिरूप स्थान तिर्यंचगति आदि तीन गतियोंमें-से किसी एक गतिके साथ बँधता है। इकतीस प्रकृतिरूप स्थान देवगतिके साथ बँधता है। एक प्रकृतिरूप स्थान किसी भी गतिके साथ नहीं बँधता। इन स्थानोंको जीव उस-उस स्थानके योग्य परिणाम होनेपर बाँधते हैं ॥५२२–५२३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमातपनामकर्म्ममुद्योतनामकर्म्ममुं प्रशस्तविशेषप्रकृतिगळप्पुदरिदं बंधकालदोळावाव कर्म्मपदयुतमागि बंधमक्कुमें दोडे पेळ्दपरु :—

भूबादरपज्जत्तेणादावं बंधजोग्गमुज्जोवं ।
तेउतिगूणतिरिक्खपसत्थाणं एगदरगेण ॥५२४॥

भूबादरपर्य्याप्तेनातपो बंधयोग्यः उद्योतः । तेजस्त्रिकोनतिर्य्यक्प्रशस्तानामेकतरेण ॥

भूबादरपर्य्याप्तेन पृथ्विकायबादरपर्य्याप्तकर्म्मपददोडने आतपो बंधयोग्यः आतपनामकर्म्म बंधयोग्यमक्कु । मन्यकर्म्मपदंगळोळेल्लियुं बंधमिल्लें ब नियममुंटप्पुदरिदं । उद्योतः उद्योतनाम-कर्म्मं तेजस्त्रिकोनतिर्य्यक्प्रशस्तानामेकतरेण बंधयोग्यः तेजस्कायवायुकायसाधारणवनस्पतिकायं-गळ बादरमुमं सूक्ष्ममुमनन्यकर्म्मपदंगळ सूक्ष्मंगळुमप्रशस्तंगळप्पुदरिंदमउ सहितमागि बिट्टु शेषतिर्य्यंचरुगळ संबंधि बादरपर्य्याप्तादिप्रशस्तकर्म्मपदंगळ मध्यदोळेकतर कर्म्मपददोडने बंध-योग्यमक्कुमदु कारणमागि पृथ्वीकायबादरपर्य्याप्तकर्म्मपददोडने आतपनामकर्म्मयुत षड्विंशति प्रकृतिबंधस्थानमुमुद्योतनामकर्म्मयुतषड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानंगळेरडुं संभविसुववु । अप्कायबादर-पर्य्याप्तकर्म्मपददोडनुद्योतनामकर्म्मयुतषड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं संभविसुवुदु । प्रत्येकवनस्पति-कायपर्य्याप्तकर्म्मपददोडनेयुमुद्योतनामकर्म्मयुत षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानसंभवमक्कुं । द्वींद्रिय-त्रींद्रियचतुरिंद्रिय असंज्ञिपंचेंद्रिय संज्ञिपंचेंद्रिय कर्म्मबंधपदंगळोडनुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थान-संभवमक्कुमितु तिर्य्यक्प्रशस्तकर्म्मपदंगळ मध्यदोळेकतरकर्म्मपददोडने बंधमागुत्तिरलें दु कर्म्म-पदंगळोळुद्योतनामकर्म्मं बंधयोग्यमक्कु ॥

पृथ्वीकायबादरपर्याप्तेनातपः बंधयोग्यो नान्येन । उद्योतस्तेजोवातसाधारणवनस्पतिसंबंधिबादरसूक्ष्मा-ण्यन्यसंबंधिसूक्ष्माणि च अप्रशस्तत्वात् त्यक्त्वा शेषतिर्यक्संबंधिबादरपर्याप्तादिप्रशस्तानामन्यतरेण बंधयोग्यः, ततः पृथ्वीकायबादरपर्याप्तेनातपोद्योतान्यतरयुतं, बादराप्कायपर्याप्तप्रत्येकवनस्पतिपर्याप्तयोरन्यतरेणोद्योतयुतं च षड्विंशतिकं, द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियकर्मान्यतरेणोद्योतयुतं त्रिंशत्कं च भवति ॥५२४॥

आतप और उद्योत प्रशस्त प्रकृति होनेसे किस पदके साथ बँधती हैं यह कहते हैं—

आतप प्रकृति पृथ्वीकाय बादर पर्याप्तके साथ ही बन्धयोग्य है, अन्यके साथ उसका बन्ध नहीं होता। तेजस्काय, वायुकाय और साधारण वनस्पति सम्बन्धी बादर सूक्ष्म तथा अन्य सम्बन्धी सूक्ष्म ये सब अप्रशस्त हैं। अतः इन्हें छोड़कर शेष तिर्यंच सम्बन्धी बादर पर्याप्त आदि प्रशस्त प्रकृतियोंमें-से किसी एकके साथ उद्योत प्रकृति बन्धयोग्य है। अतः पृथ्वीकाय बादर पर्याप्त सहित आतप उद्योतमें-से किसी एकके साथ छब्बीस प्रकृतिरूप स्थान होता है। अथवा बादर अप्कायिक पर्याप्त, प्रत्येक वनस्पति पर्याप्तमें-से किसी एकके साथ उद्योत प्रकृति सहित छब्बीस प्रकृतिरूप बन्धस्थान होता है। दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रियमें-से किसी एक प्रकृति सहित तथा उद्योत प्रकृति सहित तीस प्रकृतिरूप बन्धस्थान होता है ॥५२४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं तीर्त्थंकरनाममुमाहारकद्वयमुं प्रशस्तविशेषप्रकृतिगळप्पुदरिंदमिवावकर्म्मपददोडने बंधंगळप्पुव दोडे पेळ्दपरु :—

णरगइणामरगइणा तित्थं देवेण हारमुभयं च ।
संजदबंधट्ठाणं इदराहि गईहि णत्थि त्ति ॥५२५॥

नरकगत्यामरगत्या तीर्त्थं देवेनाहारमुभयं च । संयतबंधस्थानमितराभिर्गतिभिर्न्नास्तीति ॥

नरगत्या सह मनुष्यगतिनामकर्म्म पददोडनेयुं अमरगत्या सह देवगतिनामकर्म्मपददोडनेयुं तीर्त्थं केवलं तीर्त्थंकरनामकर्म्ममं बध्नंति जीवाः एंबिदध्याहार्य्यमक्कुं । असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळु देवक्कळुं नारकरुं मनुष्यगतिनामकर्म्मपददोडने कट्टुवरु । मनुष्यरुगळु देवगतिनामकर्म्मपददोडने कट्टुवरु । देवेन देवगत्या सहैव देवगतिनामकर्म्मपददोडनेये तीर्त्थरहितमागि केवलमाहारकद्वयमनप्रमत्तसंयतरे कट्टुवरु । उभयं च तीर्त्थंकरनामकर्म्ममुमनाहारकद्वयमुमनंतुभयमुमं देवगत्या सहैव देवगतिनामकर्म्मपददोडनेये बध्नंति अप्रमत्तसंयतरे कट्टुवरितरगतित्रयकर्म्मपददोडने केवलमाहारकद्वयमुमं तीर्त्थाहारकोभयमुमं कट्टुवरल्लरेकें दोडे संयतबंधस्थानं अप्रमत्तसंयतरु कट्टुव केवलमाहारकद्वययुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुमं तीर्त्थाहारोभययुतमेकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुमं देवगतिनामकर्म्मपददोडनेये कट्टुवरप्पुदरिंदं । इतराभिर्गतिभिः इतरगतित्रयकर्म्मपददोडने नास्ति बंधमिल्लें दु इति यितु पेळल्पट्टुदु । अदु कारणमागि तीर्त्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं मनुष्यगतिनामकर्म्मपददोडनसंयतदेवनारकरुगळ् कट्टुवरें दरियल्पडुगुं । तीर्त्थाहारद्वययुतैकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमनप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतमाद संयतरुगळु देवगति नामकर्म्मपददोडनेये कट्टुवरें दरियल्पडुगु । मनंतरमा त्रयोविंशत्याद्यष्टनामकर्म्मप्रकृतिबंधस्थानंगळ प्रकृतिसंख्यानिमित्तमप्प नामकर्म्म प्रकृतिपाठक्रममं गाथात्रयदिंदं पेळ्दपरु :—

तीर्थाहाराणां प्रशस्तविशेषत्वात् तीर्थं मनुष्यगत्यैवासंयतदेवनारकाः देवगत्यैवासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिमनुष्याश्च बध्नंति । आहारकद्वयं तीर्थाहारकोभयं च देवगत्यैव बध्नंति । कुतः ? संयतबंधस्थानमितराभिर्गतिभिर्न बध्नातीति कारणात् । अनेन सूत्रेणैते देवनारका मनुष्यगतित्रिंशत्कमेते मनुष्याः देवगतिनवविंशतिकं, अप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांतं देवगतियुते आहारकद्वयत्रिंशत्कतीर्थाहारोभयैकत्रिंशत्के च बध्नंतीत्युक्तं

तीर्थंकर और आहारक विशेष प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं । अतः तीर्थंकरको असंयत देव नारकी तो मनुष्यगति सहित ही बाँधते हैं । और असंयत आदि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्य देवगति सहित ही बाँधते हैं । आहारकद्विक तथा तीर्थंकर और आहारकद्विक देवगतिके साथ ही बाँधते हैं । क्योंकि संयतके योग्य बन्धस्थान अन्य गतियोंके साथ नहीं बँधते हैं ।

इसी गाथासूत्रसे यह बात कही गयी जानना कि असंयत देव नारकी मनुष्यगति सहित तीस प्रकृतिरूप स्थानको और मनुष्य देवगति सहित उनतीस प्रकृतिरूप स्थानको तीर्थंकर सहित ही बांधते हैं । तथा अप्रमत्तसे अपूर्वकरणके छठे भागपर्यन्त देवगतिके साथ आहारकद्विक सहित तीसको तथा तीर्थंकर आहारकद्विक सहित इकतीस प्रकृतिक स्थानको बाँधते हैं ॥५२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णामस्स णव धुवाणि य सरूणतसजुम्मगाणमेक्कदरं ।
गइजाइदेहसंठाणाणूणेक्कं च सामण्णा ॥५२६॥

नाम्नो नवध्रुवाश्च स्वरोनत्रसयुग्मानामेकतरं । गतिजातिदेहसंस्थानानुपूर्व्याणामेकतरं तु सामान्याः ॥

तसबंधेण य संहदि अंगोवंगाणमेगदरगं तु ।
तप्पुण्णेण य सरगमणाणं पुण एगदरगं तु ॥५२७॥

त्रसबंधेन च संहननांगोपांगानामेकतरं तु । तत्पूर्णेन च स्वरगमनानां पुनरेकतरं तु ॥

पुण्णेण समं सव्वेणुस्सासो णियमसा दु[1] परघादो ।
जोग्गट्ठाणे तावं उज्जोवं तित्थमाहारं ॥५२८॥

पूर्णेन समं सर्व्वेणोच्छ्वासो नियमतस्तु परघातः । योग्यस्थाने आतपः उद्योतस्तीर्थमाहाराः । यितु गाथात्रयं ॥

नाम्नो नव ध्रुवाः नामकर्म्मद तैजसकार्म्मणशरीरद्वयमुं अगुरुलघूपघातद्वयमुं निर्म्माणनामकर्म्ममुं वर्णचतुष्कमुमें ब नव ध्रुवप्रकृतिगळं स्वरोनत्रसयुग्मानामेकतरं सुस्वर दुःस्वरयुग्मरहितमाद [2]त्रसबादरपर्य्याप्त प्रत्येकशरीरस्थिरशुभसुभगादेययशस्कीर्त्तितदितरयुतनवयुग्मंगळोळों दुं गतिजातिदेहसंस्थानानुपूर्व्याणामेकतरं तु गतिचतुष्कजातिपंचकदेहत्रयसंस्थानषट्क आनुपूर्व्यचतुष्कमें बी पिंडप्रकृतिगळोळों दों दु । इंती त्रयोविंशति प्रकृतिगळ् सामान्याः सामान्याः साधारणप्रकृतिगळप्पुवु । ई त्रयोविंशतिप्रकृतिगळ मेले यथायोग्यमागियुत्तर वक्ष्यमाणप्रकृतिगळु

भवति ॥५२५॥ अथ त्रयोविंशतिकादीनां प्रकृतिसंख्यानिमित्तं तत्पाठक्रमं गाथात्रयेणाह—

नामकर्मणः तैजसकार्मणागुरुलघूपघातनिर्माणवर्णचतुष्काणीति ध्रुवप्रकृतयो नव । स्वरयुग्मोनत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मानामेकैकेत्यपि नव चतुर्गतिपंचजातित्रिदेहषट्संस्थानचतुरानुपूर्व्यानामेकैकेति पंच मिलित्वा त्रयोविंशतिः सामान्याः साधारणाः । तु-पुनः चशब्दद्वयमत्रावधारणार्थं तेन त्रसा-

---

आगे तेईस आदि स्थानोंकी प्रकृतियाँ जाननेके लिये तीन गाथाओंसे उन प्रकृतियोंका पाठक्रम कहते हैं—

नामकर्मकी तैजस, कार्मण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादि चार ये नौ ध्रुवबन्धी, इनका बन्ध सब जीवोंके निरन्तर होता रहता है, तथा स्वरके युगल बिना त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय, यशःकीर्तिके युगलोंमें-से एक-एक, ये भी नौ हुईं। चार गति, पाँच जाति, तीन शरीर, छह संस्थान, चार आनुपूर्वी, इनमें-से भी एक-एकका बन्ध

---

1. °मदो दु मु० ।
2. त्रयोविंशतिप्रकृत्यपेक्षेयिं स्थावरमेंबुदर्थं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चिद पेच्चिव स्थानाष्टकप्रकृतिसंख्येगळप्पुवप्पुदरिदं। त्रसबंधेन च संहननांगोपांगानामेकतरं तु। तु मत्ते त्रसनामकर्म्मबंधदोडने संहननषट्क अंगोपांगत्रयंगळोंदोंदुं तत्पूर्ण्णेन च तत्त्रसपर्य्याप्तिगळोडने स्वरगमनानां पुनरेकतरं तु सुस्वरदुःस्वर प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगतिगळें ब द्विकद्वयंगळोंदोंदुं च शब्दंगळेरडुमवधारणात्थँगळप्पुवप्पुदरिदं त्रसापर्य्याप्तनामकर्म्मंदोडनेयुं त्रसपर्य्याप्तनामकर्म्मं- दोडनेयुं संहननांगोपांगंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। त्रसपर्य्याप्तनामकर्म्मंदोडनेये स्वरविहायोगतिनाम कर्म्मंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवें बुदत्थँ। पूर्ण्णेन समं सर्व्वेणोच्छ्वासो नियमात्परघातः पर्य्याप्तनाम- कर्म्मंदोडनेये सर्व्वेण त्रसस्थावरंगळोडने नियमदिंदमुच्छ्वासमुं परघातनामकर्म्ममुं बंधयोग्यमप्पुवु। योग्यस्थाने आतप उद्योतस्तीर्त्थमाहाराः योग्यमप्प नामकर्म्मपददोळे आतपनामकर्म्ममु मुद्योत- नामकर्ममु तीर्त्थमुमाहारकंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। ई प्रकृति पाठक्के संदृष्टिरचनेः—

तोआनिाव	त्र	बा	प	प्र	दे	शु	सुाआज	गाजाादोसंज	त्राआाप	त्र । प	प रि
२।२।१।४	२	२	२	२	२	२	२।२।२	४।५।३।६।४	सं।६।अं ३	स्वर२। वि २	उ प आ उ ती अ १ १ १ १ १ १ २
९	१	१	१	१	१	१	१ १ १	१ १ १ १ १	१ १	१ १	

प	ना	पु।बा	पु।सू	आ।बा	आ।सू	ते।बा	ते।सू	वा।बा	वा।सू	सा।बा	सा।सू	प्र	वी
स्था	२८ १	२६ ८ २६ ८ २५ ८	२५ ४	२५ ८ २६ ८	२५ ४	२५ ८	२५ ४	२५ ८	२५ ४	२५ ४	२५ ४	२६ ८ २५ ८	३० ८ २९ ८
अ	०	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२३ १	२५ १

→

पर्याप्तत्रसपर्याप्तयोरन्यतरबंधेनैव षट्संहननानां त्र्यंगोपांगानां चैकतरं बंधयोग्यं नान्येन, पुनः त्रसपर्याप्तबंधेनैव सुस्वरदुःस्वरयोः प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगत्योश्चैकतरं बंधयोग्यं नान्येन, तु-पुनः पर्याप्तेनैव समं वर्तमानसर्वत्रस- स्थावराभ्यां नियमादुच्छ्वासपरघातौ बंधयोग्यौ नान्येन, तु-पुनः योग्यनामपदे एवातपनामोद्योतनामतीर्थंकर- १.

होता है। ये पाँच मिलकर तेईस प्रकृति सामान्य हैं। इनका बन्ध सब जीवोंके होता है। गाथामें आये दो 'च' शब्द अवधारणके लिए हैं। अतः त्रस अपर्याप्त और त्रस पर्याप्तमें-से किसी एक सहित छह संहनन और तीन अंगोपांगमें-से एक-एक बन्धयोग्य है, अन्यके साथ नहीं। पुनः त्रसपर्याप्तके बन्धके साथ ही सुस्वर, दुःस्वर और प्रशस्त, अप्रशस्त विहायो- गतिमें-से एक-एक बन्ध योग्य है, अन्यके साथ नहीं। पुनः पर्याप्तके साथ ही वर्तमान सर्व त्रस-स्थावरके साथ नियमसे उच्छ्वास-परघात बन्धयोग्य हैं अन्यके साथ नहीं। पुनः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ति	च	अ	सं	म	सा|के	तो|के	सा|स	वो|स	अ	दे अ
३० ८	३० ८	३० ८	३०	३०	०	०	०	०	०	३०|३१|२९|२८|१ १| १| ८| ८|१
			२९	२९						
२९ ८	२९ ८	२९ ८	४६०८	४६०८						
२५ १	२५ १	२५ १	२५ १	२५ १						

तित्थेणाहारदुगं एक्कसराहेण बंधमेदीदी ।
पक्खित्ते ठाणाणं पयडीणं होदि परिसंखा ॥५२९॥

तीर्त्थेनाहारकद्विकं युगपद्बंधमेतीति । प्रक्षिप्ते स्थानानां प्रकृतीनां भवति परिसंख्या ॥

तीर्त्थदोडनाहारकद्वयं युगपद्बंधमनेय्दुगुमें दितु सामान्यत्रयोविंशति प्रकृतिगळ मेले योग्य-प्रकृतिगळं प्रक्षेपिसुत्तं विरलु स्थानंगळ संख्येयुं प्रकृतिगळ संख्येयुमक्कुमदें तें दोडे गाथाद्वयदिदं पेळ्दपरु :—

एयक्ख अपज्जत्तं इगिपज्जत्तबितिचपणराऽपज्जत्तं ।
एइंदियपज्जत्तं सुरणिरयगईहि संजुत्तं ॥५३०॥

एकेंद्रियापर्य्याप्तं एकेन्द्रियपर्याप्त विति च प नरापर्य्याप्तं । एकेंद्रियपर्य्याप्तं सुरनरकगतिभ्यां संयुक्तं ॥

पज्जत्तगबिदिचप-मणुस्स-देवगदिसंजुदाणि दोण्णि पुणो ।
सुरगइजुदमगइजुदं बंधट्ठाणाणि णामस्स ॥५३१॥

पर्य्याप्तक बितिचप मनुष्यदेवगतिसंयुते द्वे पुनः । सुरगतियुतमगतियुतं बंधस्थानानि नाम्नः ॥

माहारकद्वयं च बंधयोग्यं भवति ॥५२६–५२८॥

तीर्थेन सहाहारकद्वयं युगपद् बंधमेति तेन सामान्यत्रयोविंशतौ योग्यप्रकृतिप्रक्षेपे स्थानसंख्या प्रकृतिसंख्या च स्यात् ॥५२९॥ तामेव गाथाद्वयेनाह—

योग्य नामपदमें ही आतपनाम, उद्योतनाम, तीर्थंकर और आहारकद्विक बन्धयोग्य हैं ॥५२६–५२८॥

तीर्थंकरके साथ आहारद्विकका भी एक साथ बन्ध होता है। अतः पूर्वोक्त सामान्य तेईस प्रकृतियोंके बन्धमें यथायोग्य प्रकृतियाँ मिलानेपर स्थानोंकी और प्रकृतियोंकी संख्या होती है ॥५२९॥

उसको ही दो गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेंद्रियापर्य्याप्तं नामबंधस्थानप्रकृतिसंख्याहेतु पूर्व्वोक्त "णामस्स णव धुवाणि य" इत्यादि पाठक्रमदोळु नामकर्म्मंनव ध्रुवप्रकृत्याद्यानुपूर्व्व्यावसानमाद यथायोग्यत्रयोविंशतिप्रकृति-बंधस्थानं स्थावरापर्य्याप्ततिर्य्यंग्गत्येकेंद्रियचतुःप्रकृतियुतबंधस्थानमप्पुदरिंदमेकेंद्रियापर्य्याप्तयुत-बंधस्थानमेयक्कुं । २३।ए।अ । पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानं एकेंद्रियपर्य्याप्तक । बितिच पनरापर्य्याप्तं। एकेंद्रियपर्य्याप्तयुतमागियुं द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय मनुष्यापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमु-मक्कुमदेंतेंदोडे एकेंद्रियापर्य्याप्तयुतत्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानदोळु अपर्य्याप्तनाममं कळेदु पर्य्याप्तो-च्छ्वासपरघातत्रयमं कूडिदोडी पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कुं । मत्तमा पंचविंशतिप्रकृतिस्थानदोळु स्थावरपर्याप्तैकेंद्रियोच्छ्वासपरघातंगळें ब पंचप्रकृतिगळं कळेदु त्रसापर्य्याप्तद्वींद्रियसंहननांगोपांगंगळें ब पंचप्रकृतिगळं कूडिदोडी पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानं द्वींद्रियापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । मल्लि द्वींद्रियजातिनाममं तेगदु त्रींद्रियजातिनाममं कूडिदोडी पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानं त्रींद्रियापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । मल्लि त्रींद्रियजातिनाममं कळेदु चतु-रिंद्रियजातिनाममं कूडिदोडी पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानं चतुरिंद्रियापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । मल्लि चतुरिंद्रियजातिनाममं कळेदु पंचेंद्रियजातिनाममं कूडिदोडी पंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानं पंचेंद्रिय-पर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु। मल्लि तिर्य्यग्गतिनाममं कळेदु मनुष्यगतिनाममं कूडिदोडी पंचविंशति-

---

तन्नवध्रुवाद्यानुपूर्व्यांतप्रकृतिबंधत्रयोविंशतिकं । स्थावरापर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतं तदेकेंद्रियापर्याप्तयुतं २३ ए अ । तत्रापर्याप्तमपनीय पर्याप्तोच्छ्वासपरघातेषु निक्षिप्तेषु पंचविंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तयुतं । पुनः
१
स्थावरपर्याप्तैकेंद्रियोच्छ्वासपरघातान् पंचापनीय त्रसपर्याप्तद्वींद्रियसंहननांगोपांगेषु पंचसु निक्षिप्तेषु तद्द्वींद्रियापर्याप्तयुतं पुनः द्वींद्रियमपनीय त्रींद्रिये निक्षिप्ते तत्त्रींद्रियापर्याप्तयुतं, पुनःत्रींद्रियमपनीय चतुरिंद्रिये निक्षिप्ते तच्चतुरिंद्रियापर्याप्तयुतं पुनः चतुरिंद्रियमपनीय पंचेंद्रिये निक्षिप्ते तत्पंचेंद्रियापर्याप्तयुतं । पुनः

नामकर्मके एक जीवके एक समयमें बन्धयोग्य बन्धस्थान कहते हैं—

पूर्वोक्त नौ ध्रुवबन्धी आदि आनुपूर्वी पर्यन्त तेईस प्रकृतियाँ। इनमें-से स्थावर, अपर्याप्त, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय जाति सहित जो बन्ध है वह एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित तेईसका बन्धस्थान है। २३ ए. अ.। इसमें अपर्याप्त प्रकृति घटाकर पर्याप्त, उच्छ्वास, परघात
१
मिलानेपर एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत पच्चीसका बन्धस्थान होता है। इनमें-से स्थावर, पर्याप्त, एकेन्द्रिय जाति, उच्छ्वास, परघात इन पाँचको घटाकर त्रस अपर्याप्त, दो इन्द्रिय जाति, सृपाटिका संहनन, औदारिक अंगोपांग मिलानेपर दो-इन्द्रिय अपर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान होता है। इनमें-से दोइन्द्रिय जाति घटाकर तेइन्द्रिय जाति मिलानेपर तेइन्द्रिय अपर्याप्त सहित पच्चीसका बन्धस्थान होता है। इनमें-से तेइन्द्रिय जाति घटाकर चौइन्द्रिय जाति मिलानेपर चौइन्द्रिय जाति सहित पच्चीसका स्थान होता है। इनमें-से चौइन्द्रिय जाति घटाकर पंचेन्द्रिय जाति मिलानेपर पंचेन्द्रिय अपर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान होता है। इनमें-से तिर्यंचगति घटाकर मनुष्यगति मिलानेपर मनुष्य अपर्याप्तयुत पच्चीसका स्थान होता है। ऐसे पच्चीस प्रकृतिरूप छह बन्धस्थान हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिबंधस्थानं मनुष्यापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । २५ । ए । प । बिति च प म । अ । मी मनुष्यायुष्यापर्य्याप्त पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानद मेलण षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानं एकेंद्रियपर्य्याप्तं एकेंद्रियपर्य्याप्तयुतमेयक्कुमें तें दोडे मनुष्यापर्य्याप्तयुतपंचविंशतिप्रकृतिस्थानदोळु त्रसापर्य्याप्त मनुष्यगतिपंचेंद्रिय जातिसंहननांगोपांगगळेंब षट्प्रकृतिगळं कळेदु स्थावरपर्य्याप्ततिर्य्यग्गति-एकेंद्रियजाति उच्छ्वासपरघातगळेंब षट्प्रकृतिगळुमनातपनाममुमनितेळं प्रकृतिगळं कूडिदोडी षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । मल्लि आतपनाममं कळेदुद्योतनाममं कूडिदोडी षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतबंधस्थानमक्कु । २६ । ए । प । मी एकेंद्रियपर्य्याप्तयुत षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानद मेलणष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानं सुरनरकगतिभ्यां संयुक्तं देवगतिनरकगतिगळिदं कूडिदुवक्कुमदें तें दोडे तैजसद्विकमुमगुरुलघुद्विकमुं वर्णचतुष्कमुं निर्म्माणनाममुमेंब नव ध्रुवबंधप्रकृतिगळुं त्रसबादरपर्य्याप्तप्रत्येकशरीरंगळुं स्थिरास्थिरंगळोळेकतरमुमं शुभाशुभंगळोळेकतरमुं सुभगमुमादेयमुं यशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्ति-गळोळेकतरमुं देवगतियुं पंचेंद्रियजातियुं वैक्रियिकशरीरमुं प्रथमसंस्थानमुं देवगत्यानुपूर्व्यमुं वैक्रियिकशरीरांगोपांगमुं सुस्वरमुं प्रशस्तविहायोगतियुमुच्छ्वासमुं परघातमुमितु देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमक्कुं । मत्तं नव ध्रुवबंधप्रकृतिगळुं त्रसबादरपर्य्याप्तप्रत्येकशरीरास्थिराशुभदुर्भगानादेयायशस्कीर्त्तिनरकगतिपंचेंद्रियजातिवैक्रियिकशरीरहुंडसंस्थान नरकगत्यानुपूर्व्य-

---

तिर्यग्गतिमपनीय मनुष्यगतौ निक्षिप्तायां तन्मनुष्यापर्याप्तयुतं २५ ए प वि ति च प म अ । तत्र त्रसापर्याप्तमनुष्यगतिपंचेंद्रियसंहननांगोपांगानि षडपनीयस्थावरपर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रियोच्छ्वासपरघातेषु षट्स्वातपे च निक्षिप्तेषु षड्विंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तयुतं । पुनः आतपमपनीयोद्योते निक्षिप्तेऽपि तदेव २६ ए प । अष्टाविंशतिकं तु नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरसुभगादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरदेवगतिपंचेंद्रियवैक्रियिकप्रथमसंस्थानदेवगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगसुस्वरप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तद्देवगतियुतं नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकास्थिराशुभदुर्भगानादेयायशस्कीर्तिनरकगतिपचेंद्रियवैक्रियिकशरीरहुंडसंस्थाननरकगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगदुःस्वराप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तन्नरकगतियुतं २८ दे नि ।

फिर मनुष्यगति सहित पच्चीसके स्थानमें त्रस, अपर्याप्त, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, सृपाटिका संहनन, औदारिक अंगोपांग ये छह प्रकृतियाँ घटाकर स्थावर, पर्याप्त, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय जाति, उच्छ्वास, परघात, और आतपको मिलानेपर एकेन्द्रिय पर्याप्त-युत छब्बीसका स्थान होता है। इनमें-से आतप घटाकर उद्योत मिलानेपर भी एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित छब्बीसका बन्धस्थान होता है। इस तरह छब्बीस प्रकृतिरूप दो स्थान हुए।

आगे अठाईस प्रकृतिरूप स्थान कहते हैं—

नौ ध्रुवबन्धी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर-अस्थिरमें-से एक, शुभ-अशुभमें-से एक, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्तिमें-से एक। देवगति, पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, प्रथम संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक अंगोपांग, सुस्वर, प्रशस्तविहायोगति, उच्छ्वास, परघात इन अट्ठाईसरूप देवगति सहित अठाईसका बन्धस्थान होता है। पुनः नौ ध्रुवबन्धी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैक्रियिकशरीरांगोपांग दुःस्वराप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वास परघातगळें दी नरकगतियुताष्टाविंशति-प्रकृतिबंधस्थानमक्कु । २८ । दे । नि ॥

अल्लिद मेलण एकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुं त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुमें बी द्वे येरडुं स्थानंगळु पर्य्याप्तक बिति च प मनुष्यदेवगतिसंयुते पर्य्याप्तक द्वींद्रिय त्रींद्रियचतुरिंद्रिय पंचेंद्रियजातिमनुष्यगतिदेवगतियुतबंधस्थानंगळप्पुवुदें तें दोडे नवध्रुवबंधप्रकृतिगळु त्रसबादर-पर्य्याप्त प्रत्येकशरीरं स्थिरास्थिरंगळोळेकतरमुं शुभाशुभंगळोळेकतरमुं दुर्ब्भगमुमनादेयमुं यशस्कीर्त्ययशस्कीर्तिगळोळेकतरमुं तिर्य्यग्गतियुं द्वींद्रियजातियुं औदारिकशरीरमुं हुंडसंस्थानमुं तिर्य्यग्गत्यानुपूर्व्यमुमसंप्राप्तसृपाटिकासंहननमुमौदारिकांगोपांगमुं दुःस्वरमुमप्रशस्तविहायोगतियुमुच्छ्वासमुं परघातमुमें बिवु पर्य्याप्तद्वींद्रिययुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लि द्वींद्रिय-जातिनाममं कळेदु त्रींद्रियजातियं कूडुत्तं विरलदु पर्य्याप्तत्रींद्रियजातिनामयुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृति-बंधस्थानमक्कुमल्लि त्रींद्रियजातिनाममं कळेदु चतुरिंद्रियजातिनाममं कूडुत्तं विरलदु पर्य्याप्त-चतुरिंद्रियजातिनामकर्म्मयुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लि चतुरिंद्रियजातिनाममं कळेदु पंचेंद्रियजातिनाममं कूडुत्तं विरलदु पर्य्याप्तपंचेंद्रियजातियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमा

एकान्नत्रिंशत्कं च नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरदुर्भगानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरतिर्यग्गतिद्वींद्रियौदारिकशरीरहुंडसंस्थानतिर्यग्गत्यानुपूर्व्यासंप्राप्तासृपाटिकौदारिकांगोपांगदुःस्वराप्रशस्त-विहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तस्य द्वींद्रिययुतं । तत्र द्वींद्रियमपनीय त्रींद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तत्रींद्रिययुतं । पुनः त्रींद्रियमपनीय चतुरिंद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तचतुरिंद्रिययुतं । पुनः चतुरिंद्रियमपनीय पंचेंद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तपंचेंद्रिययुतं । अत्र स्थिरास्थिरशुभाशुभसुभगदुर्भगादेयानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्तिषट्संस्थानषट्संहनन-सुस्वरदुःस्वरप्रशस्ताप्रशस्तविहायोगत्येकतरमिति विशेषः । तत्र तिर्यग्गतितदानुपूर्व्ये अपनीय मनुष्यगतितदानु-

नरकगति, पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, हुण्डक संस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक अंगोपांग, दुःस्वर, अप्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास, परघात ये नरकगति सहित अट्ठाईसका बन्धस्थान होता है। ये दो अट्ठाईसके बन्धस्थान हुए। नौ ध्रुवबन्धी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिरमें-से एक, शुभ-अशुभमें-से एक, दुर्भग, अनादेय, यशःकीर्ति-अयशःकीर्तिमें-से एक, तिर्यंचगति, दोइन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, हुण्डक संस्थान, तिर्यंचानुपूर्वी, सृपाटिका संहनन, औदारिक अंगोपांग, दुःस्वर, अप्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास, परघात, ये दो इन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीसका स्थान है।

इनमें-से दोइन्द्रियजाति घटाकर तेइन्द्रिय जाति मिलानेसे तेइन्द्रिय पर्याप्त सहित उनतीसका स्थान होता है। इनमेंसे तेइन्द्रिय जाति घटाकर चौइन्द्रिय जाति मिलानेपर चौइन्द्रिय पर्याप्त सहित उनतीसका स्थान होता है। उनमें-से चौइन्द्रिय जाति घटाकर पंचेन्द्रिय जाति मिलानेपर पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित उनतीसका स्थान होता है। किन्तु यहाँ स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय, यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति, छह संस्थान, छह संहनन, सुस्वर-दुःस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति इनमें-से कोई एक-एक प्रकृति ग्रहण करना। इन उनतीसमें-से तिर्यंचगति और तिर्यंचानुपूर्वी घटाकर मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी मिलानेपर पर्याप्त मनुष्य सहित उनतीसका स्थान होता है। पुनः नौ ध्रुवबन्धी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानदोळु स्थिरास्थिर शुभाशुभ सुभगदुर्भगादेयानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्ति संस्थानषट्क संहनन-षट्कसुस्वरदुःस्वर प्रशस्ताप्रशस्त विहायोगतिगळोळेकतरबंधमक्कुमेंदी विशेषमरियल्पडुगुं।

अपर्य्याप्तपंचेंद्रियजातियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळु तिर्य्यग्गतितिर्य्यग्गत्यानुपूर्व्यमं कळेदु मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्व्यमं कूडुत्तं विरलु पर्य्याप्तमनुष्यगतियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृति-बंधस्थानमक्कुं। मत्तं नवध्रुवप्रकृतिगळुं त्रसबादर-पर्य्याप्त-प्रत्येकशरीरंगळुं स्थिरास्थिरदोळेकतरमुं शुभाशुभदोळेकतरमुं सुभगमुमादेयमुं यशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्तिगळोळेकतरमुं देवगतियुं पंचेंद्रियजातियुं वैक्रियिकशरीरमुं प्रथमसंस्थानमुं देवगत्यानुपूर्व्यमुं वैक्रियिकांगोपांगमुं सुस्वरमुं प्रशस्तविहायोग-तियुमुच्छ्वासमुं परघातमुं तीर्त्थकरमुमेंबी देवगतियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमदं मनुष्या-संयतादिचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळु यथायोग्यरु कट्टुवरु। २९॥ प। वि। ति। च। प। म। दे॥

अपर्य्याप्त द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रियजातियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळुद्योत-नाममं कूडिकोळुत्तं विरलापर्य्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिययुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळु यथाक्रमदिनप्पुवु। मनुष्यगतियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळु तीर्त्थमं कूडिकोळुत्तं विरलु देवनारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळु कट्टुव मनुष्यगतियुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमल्लिस्थिरास्थिर शुभाशुभ यशस्कीर्त्ययशकीर्त्तिसुभगदुर्भगंगळोळेकतरयुतमेंबी विशेषमरियल्पडुगुं। मत्तं देवगति-युतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळु तीर्त्थकर नाममं कळेदाहारकद्वयमं कूडिकोळळुत्तिरलु देवगति-युतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुमदनप्रमत्तसंयतने कट्टुगुं। ३०। प। वि। ति। च। प। म। दे। सुरगतियुतं एकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानं देवगतियुतबंधस्थानमेयक्कुमदें तें दोडे देवगतियुं तीर्त्थकर-

---

पूर्व्यनिक्षेपे तत्पर्याप्तमनुष्यगतियुतं। पुनः नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरसुभगा-देययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरदेवगतिपंचेंद्रियवैक्रियिकशरीरप्रथमसंस्थानदेवगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगसुस्वरप्रश-स्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघाततीर्थकरं तद्देवगतियुतं मनुष्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिनो बध्नंति प २९ वि ति च प म दे। एतेष्वाद्यानि चत्वार्युद्योतयुतानि पर्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिययुतं त्रिंशत्कानि। मनुष्य-गत्येकान्नत्रिंशत्कं तीर्थयुतं देवनारकासंयतबंधयोग्यं मनुष्यगतित्रिंशत्कं स्यात्। तच्च स्थिरास्थिरशुभाशुभयश-स्कीर्त्ययशस्कीर्तिसुभगदुर्भगैकतरयुतमिति विशेषः। पुनः देवगत्येकान्नत्रिंशत्कं तीर्थमपनीयाहारकद्वययुतं देव-

---

त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर-अस्थिरमें-से एक, शुभ-अशुभमें-से एक, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति-अयशकीर्तिमें-से एक, देवगति, पंचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, प्रथम संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक अंगोपांग, सुस्वर, प्रशस्तविहायोगति, उच्छ्वास, परघात, तीर्थंकर, इनरूप देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसका स्थान होता है। इसका बन्ध असंयत आदि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्य ही करता है। इस प्रकार उनतीस प्रकृतिरूप छह स्थान कहे।

दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीसके स्थानमें उद्योत प्रकृति मिलानेपर दोइन्द्रिय सहित तीसका, तेइन्द्रिय सहित तीसका, चौइन्द्रिय सहित तीसका और पंचेन्द्रिय सहित तीसका बन्धस्थान होता है। पर्याप्त मनुष्य सहित उनतीसके स्थानमें तीर्थंकर प्रकृति मिलानेपर असंयत सम्यग्दृष्टी देव व नारकीके बन्धयोग्य मनुष्यगति सहित तीसका बन्धस्थान होता है। इतना विशेष है कि यहाँ स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यशःकीर्ति-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाममुं युतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळु आहारकद्वयमं कूडिकोळुत्तं विरलदुवु मप्रमत्तसंयतं देवगतियुतमागि कट्टुव युगपत्तीर्थाहारयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमक्कुं । ३१ । सु । एक प्रकृतिबंधस्थानं अगतियुतं आ।वगतियुतबंधस्थानमल्लेकें दोडे अपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं गतियुतबंधस्थानंगळप्पुवु । तद्गुणस्थानचरमभागमादियागि सूक्ष्मसांपराय चरमसमयपर्य्यंतं बंधमागुत्तिर्द्द यशस्कीर्तिनामप्रकृतियों दे गतियुतमल्लद बंधस्थानमक्कुं १ । उक्तार्थं समुच्चय संदृष्टि : --

१								
३१	सु	तीर्थं = आहा २			उद्यो तिर्य्य	ती	आहा	
३०	प	बि	ति	च	पं	म	दे	
२९	प	बि	ति	च	पं	म	दे	
२८	दे	णि			तिर्य्य		तीर्थं	
२६	प	ए						
२५	प	ए	अ प	बि	ति	च	पं	म
२३	अ	ए						

अनंतरमी बंधस्थानंगळों संभविसुव भंगंगळं पेळदपरु :—

संठाणे संघडणे विहायजुम्मे य चरिमछज्जुम्मे ।
अविरुद्धेक्कदरादो बंधट्ठाणेसु भंगा हु ॥५३२॥

संस्थाने संहनने विहायो युग्मे च चरमषड्युग्मे । अविरुद्धैकतरतो बंधस्थानेषु भंगाः खलु ॥

गतित्रिंशत्कं स्यात् । तच्चाप्रमत्तो बध्नाति ३० प वि ति च प म दे । पुनः देवगतितीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्कं आहारकद्वययुतं अप्रमत्तबंधयोग्यं एकत्रिंशत्कं स्यात् ३१ सु । एककमगति अपूर्वकरणषष्ठभागादासूक्ष्मसांपरायांता बध्नंति ॥५३१॥ एवं नामबंधस्थानान्युक्त्वा तद्भंगानाह—

अयशःकीर्ति, सुभग-दुर्भगमें-से कोई एक प्रकृति सहित स्थान होता है। देवगति सहित उनतीसके स्थानमें तीर्थंकर प्रकृति घटाकर आहारकद्विक मिलानेसे देवगति सहित तीसका स्थान होता है। इसे अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती बांधता है। इस तरह तीस प्रकृतिरूप छह स्थान हुए।

देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसके स्थानमें आहारकद्विक मिलानेपर अप्रमत्तके बन्धयोग्य देवगति सहित इकतीसका स्थान होता है। इस प्रकार अपूर्वकरणके छठे भाग पर्यन्त बन्धयोग्य इकतीस प्रकृतिरूप एक स्थान है। एक यशःकीर्ति प्रकृतिरूप एक स्थान है। उसे अपूर्वकरणके सातवें भागसे सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त जीव बाँधते हैं। ऐसे नामकर्मके बन्धस्थान कहे ॥५३०–५३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्थानषट्कदोळं संहननषट्कदोळं विहायोगतियुग्मदोळं स्थिरशुभ सुभग आदेय यशस्कीर्तिस्वरनाममं ब चरमषड्युग्मंगळोळमविरुद्धैकतरप्रकृतिग्रहणदिदं बंधस्थानंगळोळु भंगंगळप्पुवें द-क्षसंचारविधानमं कटाक्षिसि स्थानंगळोळु भंगंगळुत्पत्तिक्रममं पेळ्दपरदेतें दोडे :—

यशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्ति	१	१			
आदेयानादेय	१	१			
सुस्वरदुस्वर	१	१			
सुभगदुर्भग	१	१			
शुभाशुभ	१	१			
स्थिरास्थिर	१	१			
प्रशस्ताप्रशस्त वि	१	१			
संहनन	१	१	१	१	१
संस्थान	१	१	१	१	१

षट् स्थानानि षट् संहननानि विहायोगतियुग्मं प्रत्येकस्थिरशुभसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मानि चोपर्युपरि

५ नामकर्मके बन्धस्थानोंका यन्त्र

तेईसका स्थान १

एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत	२३

पच्चीसके स्थान ६

१ एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत	२५
२ दोइन्द्रिय अपर्याप्तयुत	२५
३ तेइन्द्रिय अपर्याप्तयुत	२५
४ चौइन्द्रिय अपर्याप्तयुत	२५
५ पंचेन्द्रिय अपर्याप्तयुत	२५
६ मनुष्य अपर्याप्तयुत	२५

छब्बीसके स्थान २

१ एकेन्द्रिय पर्याप्त आतपयुत	२६
२ एकेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	२६

अठाईसके स्थान २

१ देवगतियुत	२८
२ नरकगतियुत	२८

उनतीसके स्थान ६

१ दोइन्द्रिय पर्याप्तयुत	२९
२ तेइन्द्रिय पर्याप्तयुत	२९
३ चौइन्द्रिय पर्याप्तयुत	२९
४ पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत	२९
५ मनुष्य पर्याप्तयुत	२९
६ देवतीर्थयुत	२९

तीसके स्थान ६

१ दोइन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	३०
२ तेइन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	३०
३ चौइन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	३०
४ पंचेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत	३०
५ मनुष्य तीर्थयुत	३०
६ देव आहारकयुत	३०

इकतीसका स्थान १

१ देव आहारक तीर्थयुत	३१

एकका स्थान १

१ यशस्कीर्ति	१

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

ई नवस्थानंगळोळक्षमं प्रत्येकमिरिसि "पढमक्खो अंतगदो आदिगदे संकमेदि बिदियक्खो। दोण्णि वि गंतूणंतं आदिगदे संकमेदि तदियक्खो॥" एंदितु जीवकांडदोळु प्रमत्तसंयतंगे प्रमादविकल्पंगळं पेळवल्लि पेळदंते भंगंगळु तरल्पडुववंतु तरल्पडुत्तिरलु संस्थानषट्कमं संहनन-षट्कदिं गुणिसि। ६। ६। लब्धभूत षट्त्रिंशद् भंगंगळं ३६। सप्तद्विकंगळिदं। २। २। २। २। २। २। २। गुणिसिदोडे। ३६। १२८। अष्टोत्तरषट्छताधिक चतुः सहस्रप्रमितभंगंगळु ४६०८ अप्पुवु। इवरोळु नरकगतियुतबंधस्थानदोळं सर्व्वापर्य्याप्तयुतस्थानंगळोळमेनितेनितु भंगंगळु संभविसुगुमें दडे पेळदपरु :—

तत्थासत्थो णारयसव्वापुण्णेण होदि बंधो दु।
एक्कदराभावादो तत्थेक्को चेव भंगो दु॥५३३॥

तत्राशस्तो नारकसर्व्वाऽपूर्ण्णेन भवति बंधस्तु। एकतराभावात्तत्रैकश्चैव भंगस्तु॥

तत्र तेषु मध्ये आ बंधस्थानंगळोळु नारकसर्व्वापूर्ण्णेन नरकगतिनामकर्म्मदोडनेयुं तु मत्ते त्रसस्थावरयुतसर्व्वापूर्ण्णेन सर्व्वापर्य्याप्तदोडनेयुं बंधः बंधं अशस्तो भवति अप्रशस्तमेयक्कुमे-केंदोडे एकतराभावात् इतरप्रतिपक्षे प्रकृतिबंधाभावमक्कुमप्पुदरिंदमदु कारणदिदं तत्रैकश्चैव भंगस्तु आ नरकगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानदोळं सर्व्वत्रसस्थावरापर्य्याप्तयुतत्रयोविंशति-पंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानंगळोळं तु मत्ते एकभंगमेयक्कुं $\frac{२३}{१}$। $\frac{२५}{१}$ अदु कारणमागि मुंपेळ्देक चत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु बंधविवक्षेयिदं भाविभवजातकर्म्मपदंगळमूवत्तारप्पुववरोळु नरकगति-युताष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमोदेयक्कुमदक्के भंगमुमोंदेयक्कुं $\frac{२८}{१}$। १ एकेंद्रियभेदंगळप्प

संस्थाप्य अविरुद्धैकतरग्रहणाद् बंधस्थानेषु खल्वष्टाग्रषट्छताधिकचतुःसहस्रीं भंगा भवंति ४६०८॥५३२॥ अत्र नरकगतियुतस्य सर्वापर्याप्तयुतानां च कतीति चेदाह—

तत्र प्रशस्ताप्रशस्तबंधमध्ये नरकगत्या त्रसस्थावरयुतसर्वापर्याप्तेन च बंधः, अप्रशस्त एव स्यात्

इन नामकर्मके बन्धस्थानोंके भंग कहते हैं—

छह संस्थान, छह संहनन, विहायोगति युगल, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय, यशःकीर्तिके युगल, इन सबको ऊपर-ऊपर स्थापित करके अविरुद्ध एक-एकका ग्रहण करें; क्योंकि इनमें-से एक-एकका ही बन्ध होता है। अतः ६ × ६ × २ × २ × २ × २ × २ × २ × २ इनको परस्परमें गुणा करनेपर चार हजार छह सौ आठ भंग होते हैं।

भावार्थ यह है कि प्रकृतिके बदलनेसे भंग होता है। जैसे प्रथम संस्थान सहित स्थान कहा। पीछे दूसरे सहित कहा। इस तरह एक-एक प्रकृतिके बदलनेसे भंग होते हैं॥५३२॥

उन प्रशस्त और अप्रशस्त बन्धरूप प्रकृतियोंमें-से नरकगतिके साथ हुण्डक संस्थान अप्रशस्त विहायोगति आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है। इसी प्रकार त्रसस्थावर सहित अपर्याप्तके साथ दुर्भग-अनादेय आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है। क्योंकि इनमें बन्धयोग्य प्रकृतिकी प्रतिपक्षी प्रकृतिका बन्ध नहीं है। संस्थान आदिमें-से

१. क °पक्षप्रशस्त प्र°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म्मपदंगळोळपर्य्याप्तयुतत्रयोविंशति प्रकृतिबंधस्थानं प्रत्येकमो दोंदरोळेकैकभंगमेयक्कुं। त्रसापर्य्याप्तयुत द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रियासंज्ञि संज्ञि मनुष्यगतियुतापर्य्याप्तयुतषट्कर्म्मपदंगळोळं प्रत्येकं पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमक्कुं। भंगमुमेकमेयक्कुमें बुदत्थं ॥

तत्थासत्थं एदि हु साहारणथूलसव्वसुहुमाणं।
पज्जत्तेण य थिरसुहजुम्मेक्कदरं तु चदुभंगा ॥५३४॥

तत्राशस्तमेति खलु साधारणस्थूलसर्व्वसूक्ष्माणां। पर्य्याप्तेन च स्थिरशुभयुग्मैकतरं तु चतुर्भंगाः ॥

तत्र आ एकेंद्रियभेदंगळोळु साधारणस्थूलसर्व्वसूक्ष्माणां पर्य्याप्तेन च साधारणवनस्पतिबादरपर्य्याप्तदोडनेयुं सर्व्वसूक्ष्मंगळपर्य्याप्तदोडनेयुं बंधमप्प पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानपंचकं अशस्तमेति खलु अप्रशस्तप्रकृतिबंधमनेय्दुगुमंतेय्दुवडं तु मत्ते विशेषमुंटदावुदें दोडे स्थिरशुभयुग्मैकतरं स्थिरास्थिरशुभाशुभयुग्मंगळोळेकतरप्रकृतिबंधमनेय्दुगुमदु कारणमागि चतुर्भंगाः नाल्कु भंगंगळप्पुवु $\frac{२५}{४}$ यितु साधारणबादरवनस्पतिपर्य्याप्तयुत पंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानदोळं पृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणंगळ सूक्ष्मपर्य्याप्तयुतपंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानपंचकदोळं नाल्कु नाल्कु भंगंगळप्पुवें बुदत्थं ॥

कुतः? एकतरप्रतिपक्षबंधाभावात्। तेन प्रागुक्तैकचत्वारिंशत्पदेषु नरकगतियुताष्टाविंशतिकेषु एकेंद्रियापर्याप्तियुतैकादशत्रयोविंशतिकेषु, त्रसापर्याप्तयुतषट्पंचविंशतिकेषु चैकैक एव भंगः स्यात् ॥५३३॥

तत्र तेषु एकेंद्रियभेदेषु साधारणवनस्पतिबादरपर्याप्तेन सर्वसूक्ष्माणां पर्याप्तेन च पंचविंशतिकं खलु अप्रशस्तं बंधमेति तेन स्थिरशुभयुग्मयोरेकैकप्रकृतिबंधाच्चत्वारो भंगा भवंति $\frac{२५}{४}$। साधारणबादरवनस्पतिपर्याप्तयुतपंचविंशतिके पृथिव्यप्तेजोवायुसाधारणानां सूक्ष्मपर्याप्तियुतपंचविंशतिकपंचके च चत्वारो भंगा भवंतीत्यर्थः ॥५३४॥

जिसका बन्ध होता है उसी एक-एक प्रकृतिका ही बन्ध होता है। अतः पूर्वमें कहे इकतालीस पदोंमें-से नरकगति सहित अट्ठाईसके स्थानमें और एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित ग्यारह पदोंके तेईस बन्धक स्थानोंमें तथा त्रस सहित छह पदोंके अपर्याप्त सहित पच्चीसके स्थानोंमें एक-एक ही भंग होता है ॥५३३॥[1]

उन एकेन्द्रियके ग्यारह भेदोंमें-से साधारण वनस्पति बादरपर्याप्त और सब सूक्ष्मोंके पर्याप्त सहित पच्चीसके बन्धस्थानमें अप्रशस्तका ही बन्ध होता है। किन्तु स्थिर और शुभके युगलमें-से एक-एक प्रकृतिका ही बन्ध होता है। अर्थात् स्थिर-अस्थिरमें-से या तो स्थिरका ही बन्ध होता है या अस्थिरका ही बन्ध होता है। इसी तरह शुभ-अशुभमें-से या तो शुभका ही बन्ध होता है या अशुभका ही बन्ध होता है। इससे साधारण, बादर, वनस्पति पर्याप्त सहित पच्चीसके स्थानमें और पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारणके सूक्ष्म पर्याप्त सहित पच्चीसके पांच स्थानोंमें उक्त दो युगलोंके चार-चार भंग होते हैं ॥५३४॥

1.

२३	२५
१	१

पुढवी आऊ तेऊ वाऊ पत्तेय वियलसण्णीणं ।
सत्तेण असत्थं थिरसुहजसजुम्मट्ठभंगा हु ॥५३५॥

पृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकविकलासंज्ञिनां । शस्तेनाशस्तं स्थिरशुभयशोयुग्माष्ट भंगाः खलु ॥

पृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकवनस्पति द्वींद्रियत्रींद्रिय चतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियंगळ अविरुद्ध भावि भवजातंगळ पंचविंशति षड्विंशत्येकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळ । २५ । २६ । २९ । ३० । शस्तेनाशस्तं बंधमेति त्रसबादरपर्य्याप्तादि यथायोग्यप्रशस्तप्रकृतियोडने दुर्भगानादेयाद्यप्रशस्तप्रकृतियुं बंधनेय्दुगुमंतेय्दिदोडं स्थिरशुभयशोयुग्माष्टभंगाः खलु स्थिरास्थिरशुभाशुभयशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्तियुग्मत्रयैकतरबंधकृतभंगंगळेंटप्पुवु २५ | २६ | २९ | ३० / ८ | ८ | ८ | ८ यितु पृथ्वीकायबादरपर्य्याप्तयुतपंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानमुं आतपयुतषड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुमुद्योतयुत षड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुमप्कायबादरपर्य्याप्तयुतपंचविंशतिप्रकृति-बंधस्थानमुमुद्योतयुत-षड्विंशति-प्रकृतिबंधस्थानमुं तेजस्कायबादरपर्य्याप्तयुतपंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं वायुकायबादरपर्य्याप्तयुत पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं प्रत्येकवनस्पतिपर्य्याप्तयुत पंचविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुमुद्योतयुतषड्विंशतिप्रकृतिबंधस्थानमुं द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानद्वयंगळुमिविनितुमष्टाष्टभंगंगळनुळ्ळुवप्पुवेंबुदत्थं ॥ शेषतिर्य्यक्पंचेंद्रियपर्य्याप्तयुतसंज्ञियोळं मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुतमनुष्यकर्म्मपददोळमेकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळु भंगंगळं पेळ्वा भंगंगळु मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगळोळिनितिनितु भंगंगळेंबु पेळ्वपरु :—

पृथिव्यप्तेजोवायुप्रत्येकवनस्पतिद्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियाणामविरुद्धभाविभवजातपंचविंशतिकषड्विंशतिकैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्कानां त्रसबादरपर्याप्तादियथायोग्यप्रशस्तदुर्भगानादेयाद्यप्रशस्तेन बंधमेति । तेन स्थिरशुभयशोयुग्मकृतभंगाः खल्वष्टावष्टौ भवंति २५ २६ २९ ३० / ८ ८ ८ ८ । पृथ्वीकायबादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकमातपयुतषड्विंशतिकं उद्योतयुतषड्विंशतिकं अप्कायबादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकमुद्योतयुतषड्विंशतिकं तेजस्कायबादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं वायुकायबादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं प्रत्येकवनस्पतिपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं उद्योतयुत-

---

पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञि पंचेन्द्रिय जीवके भविष्यमें जिन भवोंमें जन्म ले सकते हैं उनके अनुकूल पच्चीस, छब्बीस, उनतीस और तीसके बन्धस्थानोंमें त्रस-बादर पर्याप्त आदि यथायोग्य प्रशस्त और दुर्भग अनादेय आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है। किन्तु स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति इन तीन युगलोंमें-से एक-एकका बन्ध होता है।

अतः इन तीन युगलोंकी प्रकृति बदलनेसे आठ-आठ भंग होते हैं। अर्थात् पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसमें-से प्रत्येकके आठ भंग होते हैं। पृथ्वीकाय बादरपर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान, आतप अथवा उद्योत सहित छब्बीसका स्थान, अप्काय बादर पर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान अथवा उद्योत सहित छब्बीसका स्थान, तेजस्काय बादर पर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान, वायुकाय बादर पर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान, प्रत्येक वनस्पति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सण्णिस्स मणुस्सस्स य ओघेक्कदरं तु मिच्छभंगा हु ।
छादालसयं अट्ठ य बिदिये बत्तीससयभंगा ॥५३६॥

संज्ञिनो मनुष्यस्य च ओघे एकतरं तु मिथ्यादृष्टिभंगाः खलु। षट्चत्वारिंशच्छतमष्टौ च द्वितीये द्वात्रिंशच्छतभंगाः ॥

तिर्यंग्गतिपर्य्याप्तयुतसंज्ञिय येकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळमुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळं मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुमें बिवरोळु । २९ । ३० । २९ । ओघे सामान्यषट्संस्थान षट्संहनन युग्म सप्तकंगळोळु एकतरं बंधमेति एकतरप्रकृतिबंधमनेय्दुगु मप्पुदरिंदं षट्चत्वारिंशच्छतमष्टौ च अष्टाधिक षट्छताधिक चतुःसहस्रमित भंगंगळप्पु–४६०८ । ववुं मिथ्यादृष्टिय भंगंगळप्पुवु । खलु स्फुटमागि । मि । ति । २९ । ३० । मि म । २९ यितु
४६०८ । ४६०८ । ४६०८

तिर्य्यग्गतिपर्य्याप्तपंचेंद्रिययुतसंज्ञिकर्म्मपददोळुद्योतरहित सहितैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळं मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळं अष्टोत्तरषट्छताधिकचतुःसहस्रप्रमितभंगंगळप्पुववु । मिथ्यादृष्टियोळेयप्पुवें बुदत्थं । मनुष्यगतियुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानं देवनारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळु तीर्त्थयुतमागि कट्टुव स्थानमप्पुदरिंद मिथ्यादृष्टिस्थानभंगंगळोळु पेळल्पडदु । मुंदे यसंयतसम्यग्दृष्टियोळु पेळ्दपरु :—

षड्विंशतिकं द्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्कं त्रिंशत्कानि चेति सर्वाण्यष्टाष्टभंगानीत्यर्थः ॥५३५॥ शेषतिर्यक्पंचेंद्रियपर्याप्तयुतसंज्ञिकर्मपदे मनुष्यगतिपर्याप्तयुतमनुष्यकर्मपदे चैकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्कयोर्भंगान् वक्तुं गुणस्थानेषु विभजयति—

तिर्यग्गतिपर्याप्तयुतसंज्ञिनः एकान्नत्रिंशत्कोद्योतयुतत्रिंशत्कयोः मनुष्यगतिपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्के च सामान्यषट्संस्थानषट्संहननसप्तयुग्मेष्वेकतरबंधमेतीति तेषु खल्वष्टाग्रषट्चत्वारिंशच्छतानि भंगा भवंति । ते च मिथ्यादृष्टेरेव—मिति २९ ३० मि म २९ । मनुष्यगतियुतत्रिंशत्कं तु तीर्थयुतमसंयतदेवनाराकाणामेव
४६०८ ४६०८ ४६०८

पर्याप्त सहित पच्चीसका स्थान अथवा उद्योत सहित छब्बीसका स्थान, दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित उनतीस और तीसका स्थान, इन सबमें आठ-आठ भंग होते हैं ॥५३५॥

शेष तिर्यंच पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित संज्ञी कर्मपदमें और मनुष्यगति पर्याप्तयुत मनुष्य-कर्मपदमें उनतीस और तीसके स्थानोंके भंग कहनेके लिए गुणस्थानोंमें विभाग करते हैं—

तिर्यंचगति पर्याप्त सहित संज्ञीके उनतीसके स्थानमें और उद्योत सहित तीसके स्थानमें तथा मनुष्यगति पर्याप्त सहित उनतीसके स्थानमें सामान्य छह संस्थान, छह संहनन और विहायोगति आदि सात युगलोंमें-से एक-एकका ही बन्ध होता है। अतः छह संस्थान आदिमें-से एक-एकके बदलनेसे पूर्वोक्त एक-एक स्थानमें $६ \times ६ \times २ \times २ \times २ \times २ \times २ \times २ \times २ = ४६०८$ छियालीस सौ आठ भंग होते हैं। ये भंग मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सासादनंगुद्योतनामकर्म्मबंधमुंटप्पुदरिंदमुद्योतरहितसहितैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळं द्वात्रिंशच्छत प्रमितभंगंगळप्पुवें तेंदोडे मिथ्यादृष्टियोळु हुंडसंस्थानमुं मसंप्राप्तसृपाटिकासंहननमुं बंधव्युच्छिन्नंगळादुवप्पुदरिंदं पंचपंचसंस्थानसंहननंगळिंदं सप्तद्विकंगळिंदं संजातभंगंगळु ५।५।१२८। गुणिसिदोडे तावन्मात्रंगळेयप्पुवप्पुदरिंदं। सा २९। ३० / ३२००। ३२०० मत्तमा सासादनन मनुष्यगति पंचेंद्रियपर्य्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळं तावन्मात्र भंगंगळेयप्पुवु—
सा २९
३२००

अनंतरं मिश्रगुणस्थानादिगळोळु पेळ्दपरु :—

मिस्साविरदमणुस्सट्ठाणे मिच्छादिदेवजुदठाणे।
सत्थं तु पमत्तंते थिरसुहजसजुम्मगट्ठभंगा हु ॥५३७॥

मिश्राविरतमनुष्यस्थाने मिथ्यादृष्टादिदेवयुतस्थाने। शस्तं तु प्रमत्तांते स्थिरशुभयशोयुग्माष्टभंगाःखलु ॥

देवनारकगतिजमिश्रासंयतगुणस्थानवर्तिगळु पर्य्याप्तमनुष्यगतियुतैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं कट्टुवरंता स्थानदोळं मत्तं देवनारकगतिजाऽसंयतसम्यग्दृष्टिगळु मनुष्यगतिपर्य्याप्ततीर्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमं कट्टुवरन्ता स्थानदोळं स्थिरशुभयशोयुग्माष्टभंगंगळेयप्पुवेकें दोडे सासादननोळु दुर्भगदुःस्वरानादेयाप्रशस्तविहायोगति चतुःप्रतिपक्षप्रकृतिगळ्गे बंधव्युच्छित्तिया-

---

बंधान्मिथ्यादृष्टिस्थानभंगेषु नोक्तं। सासादनस्योद्योतरहितैकान्नत्रिंशत्के तद्युतत्रिंशत्के च पंचसंस्थानपंचसंहननसप्तद्विककृताः द्वात्रिंशच्छतान्येव सा २९ ३०। सासादनस्य मनुष्यगतिपंचेंद्रियपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्केऽपि
३२०० ३२००
तावंतः सा २९ ॥५३६॥ अथ मिश्रगुणस्थानादिष्वाह—
३२००

देवनारकमिश्रासंयतयोः पर्याप्तमनुष्यगतियुतैकान्नत्रिंशत्के तद्द्वयासंयतस्य मनुष्यगतिपर्याप्ततीर्थयुत-

---

मनुष्यगति सहित तीसका स्थान तीर्थंकर सहित है। इसलिए उसका बन्ध असंयत सम्यग्दृष्टी देव नारकियोंमें ही होता है। इसलिए मिथ्यादृष्टिके बन्धस्थानके भंगोंमें इसे नहीं कहा।

सासादनके उद्योत रहित उनतीसके स्थानमें और उद्योत सहित तीस के स्थानमें पाँच संस्थान, पांच संहनन और सात युगलोंमें-से एक-एकका ही बन्ध होता है। अतः इनमें-से एक-एक प्रकृति बदलनेसे बत्तीस सौ-बत्तीस सौ भंग होते हैं। सासादनके मनुष्यगति पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित उनतीसके स्थानमें भी इसी प्रकार बत्तीस सौ भंग होते हैं ॥५३६॥

आगे मिश्र गुणस्थान आदिमें कहते हैं—

देव नारकी मिश्र और असंयत गुणस्थानवर्तीके पर्याप्त मनुष्यगति सहित उनतीसके स्थानमें तथा देव नारकी असंयत गुणस्थानवर्तीके मनुष्यगति पर्याप्त और तीर्थंकर सहित तीसके स्थानमें स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यशकीर्ति-अयशस्कीर्ति इन तीन युगलोंमें-से किसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युवप्पुरिदं शस्तप्रकृतिये बंधमनेय्दुगुमप्पुदरिदं मि २९/८ असं २९/८ ३०/८ तिर्य्यग्मनुष्यगतिजरप्प मिश्रासंयतरुगळ्गे मनुष्यगतियुतस्थानद्वयमेके पेळल्पडवेंदोडे वज्जं ओराळमणुयित्याद्यसंयतबंधषट्प्रकृतिगळ्गे सासादननोळ् बंधव्युच्छित्तियुंटप्पुदरिदं तद्गतिजग्गे तद्बंधस्थानंगळगऽभावमक्कुमप्पुदरिदं। मिथ्यादृष्ट्यादिदेवयुतस्थाने प्रमत्तांते मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतरुगळ देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिबंधस्थानदोळं मत्तमसंयतन देवगतितीर्थयुतयिकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानदोळं देशसंयतन देवगतियुत तीर्त्थरहित सहिताष्टाविंशत्येकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळं प्रमत्तसंयतन देवगतियुत तीर्त्थरहित सहिताष्टाविंशत्येकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळमितु मिथ्यादृष्ट्यादि प्रमत्तसंयतावसानमाद गुणस्थानंगळोळु देवगतियुताष्टाविंशति एकान्नत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळं शस्तं बंधमेति प्रशस्तप्रकृतिबंधमक्कुमावोडं अस्थिराशुभायशस्कीर्त्तिनामप्रकृतिगळ्गे प्रमत्तसंयतनोळु व्युच्छित्तियप्पुदरिदं। प्रमत्तपर्य्यंतं स्थिरशुभयशोयुग्माष्टभंगंगळप्पुवु।

खलु स्फुटमागि	मि २८	सा २८	मि २८	अ २८	२९	दे २८।२९	प्र २८।२९
	८	८	८	८	८	८ ८	८ ८

अप्रमत्तसंयतंगमपूर्व्वकरणंगं देवगतियुताष्टाविंशति तीर्त्थयुतैकान्नत्रिंशत्। तीर्त्थरहिताहारकद्वययुतत्रिंशत्। तीर्त्थाहारयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानंगळोळ् एकैकभंगमेयक्कुमेकेंदोडे प्रमत्तसंयतनोळु अस्थिराशुभायशस्कीर्त्तिनामकर्म्मप्रकृतिगळ्गे बंधव्युच्छित्तियुंटप्पुदरिदमेकतरबंधाभावमप्पुदरिदं प्रशस्तप्रकृतिबंधमेयक्कुमप्पुदरिदं।

त्रिंशत्के च स्थिरशुभयशोयुग्मकृतभंगा अष्टावष्टौ दुर्भगदुःस्वरानादेयाप्रशस्तविहायोगतिबंधस्य सासादने एव च्छेदात्। मि २९/८ असं २९/८ ३०/८। तिर्यग्मनुष्यमिश्रासंयतयोस्तु मनुष्यगतियुतबंधस्य सासादने छेदात्तत्स्थानद्वयं न बध्नाति। मिथ्यादृष्ट्याद्यसंयतांतानां देवगतियुताष्टाविंशतिके असंयतस्य देवगतितीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्के देशसंयतस्य प्रमत्तस्य च देवगतियुततीर्थयुतवियुताष्टाविंशतिकैकान्नत्रिंशत्कयोश्च प्रशस्तं बंधमेत्यप्यस्थिराशुभायशस्कीर्तीनां प्रमत्तपर्यंतं बंधात् तत्त्रियुग्मकृत्या अष्टावष्टौ भंगा भवंति खलु स्फुटं मि २८/८। सा २८/८। मि २८/८। अ २८/८,

---

एक-एक ही प्रकृतिका बन्ध होता है। दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अप्रशस्त विहायोगतिके बन्धका विच्छेद सासादनमें ही हो जाता है। अतः तीन युगलोंकी प्रकृतियाँ बदलनेसे आठ-आठ भंग होते हैं। तिर्यंच और मनुष्य मिश्र तथा असंयत गुणस्थानवर्तीके मनुष्यगतिके बन्धका विच्छेद सासादनमें ही हो जाता है। इससे यहाँ उन दोनों स्थानोंका बन्ध नहीं होता। मिथ्यादृष्टि आदि असंयत गुणस्थान पर्यन्त जीवोंके देवगति सहित अठाईसके स्थानमें और असंयत सम्यग्दृष्टीके देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसके स्थानमें तथा देशसंयत और प्रमत्तमें देवगतियुत अठाईसके स्थान और देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसके स्थानमें प्रशस्त प्रकृतियोंका ही बन्ध होता है। तथापि अस्थिर, अशुभ और अयशस्कीर्तिका बन्ध प्रमत्त गुणस्थान तक ही होता है। इससे इन स्थानोंमें इन तीन युगलोंके आठ-आठ भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अ-प्र २८ २९ ३० ३१ अपू २८ २९ ३० ३१ अपूर्व्वकरणचरमभागप्रथम-
१ १ १ १ १ १ १ १

समयं मोदल्गो ण्डु सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानचरमसमयपर्यंतं यशस्कीर्त्तिनामकर्म्मबंधमेकप्रकृति-स्थानदोळेकभंगमेयक्कुमदावगतियुतमल्तु ।

अनंतरं भवच्यवनोत्पत्तिगळं पेळ्दपरु :—

णेरइयाणं गमणं सण्णीपज्जत्तकम्म तिरियणरे ।

चरिमचऊ तित्थूणे तेरिच्छे चेव सत्तमिया ।।५३८।।

नारकाणां गमनं संज्ञिपंचेंद्रियकर्म्मं तिर्य्यग्नरे। चरमचतसृणां तीर्थोने तिरश्च्येव सप्तम्याः ॥

नारकाणां गमनं घर्म्मेयुं वंशेयुं मेघेयुमें बी मूरुं पृथ्विगळ नारकरुगळ्गे स्वस्वायुः-स्थितिक्षयवशदिवं मृतरागि नारकभवमं पत्तुविट्टु बंदावेडेयोळाव गतिजरोळु पुट्टुवरें दोडेया मूरुं पृथ्विगळ नारकरुगळ्गे गर्भज पंचेंद्रियपर्य्याप्तसंज्ञिकर्म्मभूमितिर्य्यग्मनुष्यरोळु जननमक्कुम-देंतें दोडय्दुं मंदरंगळ पूर्व्वापर पंचविदेहंगळुं पंचभरतंगळुं पंचैरावतंगळुमें ब पंचदशकर्म्म भूमि-गळोळु यथायोग्यमेल्लियादोडं तीर्त्थकरुं चरमांगरु मा पिव्वरुमल्लद सामान्यपर्य्याप्तमनुष्यरागियुं जनियिसुवरु। मत्तमा पंचदश कर्म्मभूमिगळोळं कर्म्मभूमिप्रतिबद्धस्वयंप्रभाचलापरभाग स्वयं-भूरमण द्वीपार्द्धदोळं स्वयंभूरमणसमुद्रदोळं गर्भजपंचेंद्रियपर्य्याप्त संज्ञितिर्य्यग्जीवंगळागियुं जनियि-सुवरु। कर्म्मभूमिविशेषजत्वदिदमा पंचमंदरंगळ दक्षिणोत्तरदिग्भागस्थित निषधनीलगजदंत पर्व्वत द्वितयांतरितदेवकुरूत्तरकुरूत्तम भोगभूमिगळपत्तरोळं (ळंतरित) हिमवन्निषधांतरित हरिक्षेत्र-

---

२९। दे २८। २९। प्र २८। २९ अप्रमत्तापूर्वकरणयोः देवगतियुताष्टाविंशतिके तीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्के तीर्थ-
८ ८ ८ ८ ८

वियुताहारकद्वययुतत्रिंशत्के तीर्थाहारकयुतैकत्रिंशत्के च भंग एकैक एव। अप्र २८ २९ ३० ३१
१ १ १ १

अपू २८ २९ ३० ३१। अपूर्वकरणचरमभागप्रथमसमयादासूक्ष्मसांपरायचरमसमयं यशस्कीर्तिबंधकपैकके
१ १ १ १

भंग एकः ।।५३७।। अथ भवच्यवनोत्पत्ती प्राह—

नारकाणां गमनं—मृत्वोत्पत्तिः, घर्मादित्रयजानां गर्भजपंचेंद्रियपर्याप्तसंज्ञिकर्मभूमितिर्यग्मनुष्येष्वेव,

---

अप्रमत्त और अपूर्वकरणमें देवगति सहित अठाईसका, तीर्थंकर सहित उनतीस, तीर्थंकर रहित आहारकद्विक सहित तीस और तीर्थंकर आहारकद्विक सहित इकतीस इन चारों स्थानोंमें प्रतिपक्षी अप्रशस्त प्रकृतिका बन्ध नहीं होता। अतः एक-एक ही भंग होता है। अपूर्वकरणके अन्तिम भागके प्रथम समयसे सूक्ष्म साम्परायके अन्तिम समय पर्यन्त एक यशस्कीर्तिका बन्धरूप ही स्थान है तथा एक ही भंग है ।।५३७।।

आगे एक भवको छोड़ने और दूसरे भवमें उत्पन्न होनेका नियम कहते हैं—

नारकियोंका गमन अर्थात् मरकर उत्पन्न होना कहते हैं। घर्मा आदि तीन नरकोंके नारकी मरकर गर्भज पंचेन्द्रिय पर्याप्त संज्ञी कर्मभूमिया तिर्यंच और मनुष्योंमें ही जन्म लेते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकमुं नीलरुग्मि कुलपर्व्वतांतरित रम्यकक्षेत्र पंचकमुमंतु पत्तुं मध्यमभोगभूमितलंगळोळं हिमवन्महाहिमवंतकुलपर्व्वतद्वयांतरित पंचहैमवत क्षेत्रंगळुं रुक्मिशिखरिकुलपर्व्वतद्वयांतरित पंच हैरण्यवत क्षेत्रंगळु मंतु पत्तुं जघन्यभोगभूतलंगळोळं षण्णवतिकुमानुष्य भोग भूतलंगळोळमा मनुष्यरुं तिर्य्यंचरागि पुट्टरु। मानुषोत्तरस्वयंप्रभाचलद्वितयांतरितजघन्यतिर्य्यग्भोगभूप्रतिबद्धंगळप्प जंबूद्वीप धातकीखंड पुष्कर स्वयंभूरमणमें ब नाल्कुं द्वीपशलाकापरिहीनंगळप्पेरडुवरेयुद्धार सागरोपमार्द्धं प्रमित द्वीपंगळोळं पुष्करद्वीपोत्तरार्द्धदोळं स्वयंप्रभाचलार्व्वाचीनार्द्धदोळं[2] स्थलचर-खचरतिर्य्यंचरुगळुमागियुं पुट्टरु। लवणोदकालोदस्वयंभूरमण में ब मूरुं समुद्रशलाका परिहीनंगळप्पेरडुवरेयुद्धारसागरोपमार्द्धप्रमितसमुद्रंगळु तिर्य्यग्भोगावनिप्रतिबद्धंगळादोडमा समुद्रंगळोळु जल मिक्षुरसस्वादुवुं जलचरंगळुमिल्ल। सर्व्वभागभूतलंगळोळु जलमिक्षुरसस्वादुवुं विकलेंद्रियजीवंगळुत्पत्तियुमिल्ल। चरमचवसुणां अंजनेयुमरिष्टेयुं मघवियुं माघवियुमें ब नाल्कुं पृथ्विगळ नारकरुगळोळगे सप्तमपृथ्वियनारकरुगळं बिट्टु मूरुं पृथ्विगळ नारकरुगळगे स्वस्वायुःक्षितिक्षयवशदिदं मरणमादोडे जननमावेडेयोळावावगतिगळोळक्कुमें दोडे तीर्त्थंनि मुंपेळद पंचदश कर्म्मभूमिगळोळु तीर्त्थंकररल्लद यथायोग्यमागि क्वचिच्चरमांगरुं[3] साधारणमनुष्यरुगळुमागियुं गर्ब्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रिय संज्ञितिर्य्यग्जीवंगळु मागियुं जनियिसुवरु। मुंपेळद तिर्य्यक्कर्मभूमियोळं स्थलचरजलचर खचर गर्ब्भज पर्य्याप्तपंचेंद्रिय संज्ञितिर्य्यग्जीवंगळु मागियुं लवणकालोदक समुद्रंगळ जलचरगर्ब्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रियसंज्ञितिर्य्यंचरागियुं जनियिसुवरु। सप्तम्याः तिरश्चि चैव माघविय नारकरुगळगे स्वस्वायु-

कुतः ? अर्धसकलचक्रिबलभद्रवर्जितपंचदशकर्मभूमितिर्यग्मनुष्येषु लवणोदकालोदस्वयंप्रभाचलापरभागस्वयंभूरमणद्वीपापरार्धतत्समुद्रतद्बहिश्चतुष्कोणजलस्थलखेचरेषु च तादृक्चैवोत्पत्तेः। त्रिंशत्षण्णवतिभोगकुभोगभूमितिर्यग्मनुष्यमानुषोत्तरस्वयंप्रभाचलांतरालस्थलजघन्यतिर्यग्भोगभूमिजेषु चानुत्पत्तेः। अंजनजातां गमनं धर्मा-

हैं। क्योंकि उनकी उत्पत्ति अर्धचक्री, सकलचक्री और बलभद्र अवस्थाको छोड़कर पन्द्रह कर्मभूमिके तिर्यंच—मनुष्योंमें, लवणसमुद्र, कालोद समुद्र, स्वयंप्रभाचलके परे स्वयंभूरमणद्वीपके आधे भागमें, स्वयंभूरमण-समुद्रमें और उसके बाहरके चारों कोनोंमें जलचर, थलचर और नभचरोंमें होती है।

विशेषार्थ—त्रस नाली चौकोर है और स्वयंभूरमण समुद्र गोल है। इससे उन चारों कोनोंमें भी पंचेन्द्रिय तिर्यंच हैं उनमें उत्पत्ति बतलायी है।

तीस भोगभूमियों और छियानबे कुभोगभूमियोंके तिर्यंच मनुष्योंमें, मानुषोत्तर और स्वयंप्रभाचलके मध्यमें असंख्यात द्वीप और समुद्रोंमें जघन्य भोगभूमि हैं वहाँके तिर्यंचोंमें वे

---

१. तिर्यक् भोगभूमिस्थसमुद्रेषु जलचरजीवाभावात्।

२. स्वयंप्रभाचलद बोळ भागमें बुदत्थं। बोळ भागमनेके पेळदरे दोडे अपर भागं कर्म्मभूमियप्पुदरिदं बोळभागं भोगभूमियप्पुदरिनिल्लिगे प्रकृतं भोगभूमियेयप्पुदरिदं स्वीकरिसल्पट्टुदु॥

३. णिरयचरो णत्थि हरीबलचक्की तुरियपहुडि णिस्सरिदो। तिरयचरमग्गसंजुद मिस्सतियं (मिश्रासंयतदेशसंयत) णत्थि णियमेण॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थितिक्षयवशदिंदं मृतरादोडावेडेयोळावगतियोळु जननमक्कुमें दोडे मुंपेळ्द पंचदशकर्म्मभूमिगळं गर्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रिय संज्ञितिर्य्यंग्जीवंगळोळं कर्म्मभूप्रतिबद्धतिर्य्यक्कर्म्मभूमियोळं लवणोदकालोदसमुद्रंगळोळं यथायोग्यमागि स्थलचरखचरजलचरगर्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रियसंज्ञितिर्य्यग्जीवंगळागिये नियमदिदं जनियिसुवरु। एकें दोडा सप्तमपृथ्विय नारकरुगळनिबरुं तिर्य्यगायुष्यमल्लदितरायुस्त्रितयमं नियमदिदं कट्टरप्पुदरिंदं ॥

तत्थतणऽविरदसम्मो मिस्सा मणुवदुगमुच्चयं णियमा।
बंधदि गुणपडिवण्णा मरंति मिच्छेव तत्थ भवा ॥५३९॥

तत्रतनाविरतसम्यग्दृष्टिम्मिश्रो मनुष्यद्विकमुच्चकं नियमाद् बध्नाति गुणप्रतिपन्नाः म्रियंते मिथ्यादृष्टावेव तत्र भवाः ॥

तत्रतनाविरतसम्यग्दृष्टिम्मिश्रः तत्सप्तमभूसंजातासंयतसम्यग्दृष्टियुं मिथ्यादृष्टियुं स्वस्वगुणस्थानंगळोळे मनुष्यद्वितयमुमुच्चैर्गोत्रमुमं नियमदिदं कट्टुवरु। तत्र भवाः तत्सप्तमभूमिजरप्पनारकरुगळु गुणप्रतिपन्नाः सासादनमिश्रासंयतगळागिद्दवरुगळु स्वस्वायुःस्थितिक्षयवशदि मृतरप्पोडे मिथ्यादृष्टावेव नियमदिदं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोद्दिद बळिक्क म्रियंते मृतरप्परु। अंतु मृतरागि बंदु मुंपेळ्द नियमस्थानदोळु तिर्य्यंचरागि जनिसुवरें बुदत्थं।

नारकनुमागि तिर्य्यग्घोरमहादुःखयोनियोळपुट्टदे नीं।
सारु श्रीजिनपदमं बेरिदं कोळु वुरघवृक्षाटवियं ॥

अनंतरं तिर्य्यग्गतियोळु मृतरागिवंद जीवंगळावावेडेयोळावाव गतिगळोळु पुट्टुगुमें दोडे पेळ्दपरु :—

त्रियोक्तजीवेष्वेव तीर्थंकरोनेषु, अरिष्टाजानां पुनश्चरमांगोनेषु, मघवीजानां पुनः सकलसंयम्यूनेषु, माघवीजानां देशसंयतासंयतमिश्रसासादनवर्जिततादृक्मिथ्यादृष्टितिर्यक्ष्वेव अन्यायुषस्तेषामबंधात् ॥५३८॥

तत्रतनः—सप्तमनरकोत्पन्नः असंयतसम्यग्दृष्टिः सम्यग्मिथ्यादृष्टिश्च स्वस्वगुणस्थाने मनुष्यद्विकमुच्चैर्गोत्रं च नियमेन बध्नाति तत्र भवाः सासादनमिश्रासंयतगुणप्रतिपन्नास्तु यदा म्रियंते तदा मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने गत्वैव ॥५३९॥

नारकी मरकर उत्पन्न नहीं होते। अंजना नरकके नारकी तीर्थंकर बिना, अरिष्टावाले चरमशरीरी बिना, और मघवीवाले सकल संयम बिना पूर्वोक्त तिर्यंच या मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं। माघवीवाले नारकी देशसंयत, असंयत, मिश्र और सासादन बिना पूर्वोक्त मिथ्यादृष्टि तिर्यंचोंमें ही उत्पन्न होते हैं क्योंकि सातवें नरकमें तिर्यंच आयुके सिवाय अन्य आयुका बन्ध नहीं होता ॥५३८॥

सातवें नरकमें उत्पन्न हुआ जीव असंयत सम्यग्दृष्टी और सम्यग्मिथ्यादृष्टि होकर अपने-अपने गुणस्थानमें नियमसे मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका बन्ध करता है। किन्तु वहाँ उत्पन्न होनेके पश्चात् सासादन, मिश्र और असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानको प्राप्त हुए जीव जब मरते हैं तब मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें जाकर ही मरते हैं ॥५३९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेउदुगं तेरिच्छे सेसेग अपुण्णवियलगा य तहा।
तित्थूणणरेवि तहाऽसण्णी घम्मे य देवदुगे ॥५४०॥

तेजोद्विकं तिरश्चि शेषैकापूर्णविकलाश्च तथा। तीर्त्थोननरेपि तथाऽसंज्ञो घर्मायां देवद्विके ॥

तेजोद्विकं तिरश्चि तेजस्कायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवंगळुं वायुकायिक बादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवंगळु नियमदिद तिर्य्यग्गतियोळे जायंते एंदध्याहारिसल्पडुगुं। जनियिसुवरु। एकेंदोडा जीवंगळु तद्भवदोळु तिर्य्यगायुष्यमनल्लदितरायुस्त्रितयमं कट्टरें ब नियमवुंटप्पुदरिंदमंतादोडा जीवंगळावेडेयोळावाव तिर्य्यग्जीवंगळोळु जनियिसुवरें दोडेरडुवरे द्वीपंगळोळु मुंपेळ्दुत्तममध्यमजघन्यत्रिंशद्भोगभूमितिर्य्यग्गर्भजपर्य्याप्ता-पर्य्याप्तपंचेंद्रियसंज्ञितिर्य्यग्जीवंगळुमं मत्तं तिर्य्यग्भोगावनी प्रतिबद्धंगळप्प मुंपेळ्द द्वीपंगळोळाद गर्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रियसंज्ञिस्थलचरखचरतिर्य्यग्जीवंगळुमं बिट्टु अशेषजगत्प्रदेशंगळोळिर्द्द पृथ्वीकायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त, अप्कायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त, तेजस्कायिकबादरपर्य्याप्तापर्य्याप्त, सूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त, वायुकायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त, साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त, प्रतिष्ठितप्रत्येकवनस्पतिपर्य्याप्तापर्य्याप्त, अप्रतिष्ठितप्रत्येकवनस्पतिपर्य्याप्तापर्य्याप्त, द्वींद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त, त्रींद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त, चतुरिंद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त असंज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त, संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त तिर्य्यग्जीवंगळोळु यथायोग्यमेल्लियादोडं स्वस्वोपार्जितकर्म्मोदयवशदिदं चराचरतिर्य्यग्जीवंगळागि जनियिसुववें बुदर्त्थं। शेषैकेंद्रियापूर्णविकलाश्च तथा ई पेळल्पट्ट स्थावरतेजस्कायिक वायुकायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्ततिर्य्यगेकेंद्रियजीवंगळल्लद शेषाशेषपर्य्याप्तपृथ्वीकायिक बादरसूक्ष्म अप्कायिकपर्य्याप्तबादरसूक्ष्म साधारणवनस्पतिनित्यनिगोद पर्य्याप्तबादरसूक्ष्मचतुर्गतिनिगोदपर्य्याप्तबादरसूक्ष्म

बादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ततेजोवातकायिकाः नियमेन तिर्यग्गतावेवोत्पद्यंते सर्वभोगभूमिजपंचेंद्रियवर्जितत्रिलोकोदरवर्तिसर्वबादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणपर्याप्तापर्याप्तप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकद्वित्रि-चतुःसंज्ञ्यसंज्ञिपंचेंद्रियतिर्यगायुषामेव बंधात्। शेषाः बादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तपृथ्व्यप्कायिकनित्यचतुर्गतिनिगोदाः

बादर और सूक्ष्म पर्याप्त-अपर्याप्त तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव मरकर नियमसे तिर्यंचगतिमें ही उत्पन्न होते हैं। क्योंकि उनके सर्वभोगभूमिज पंचेन्द्रियोंको छोड़कर सर्व त्रिलोकवर्ती सर्व बादर सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण तथा पर्याप्त-अपर्याप्त प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक, दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय, इन सर्व तिर्यंचोंकी ही आयुका बन्ध होता है। इससे तेजकाय-वायुकायके जीव मरकर इन सर्व प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें ही उत्पन्न होते हैं किन्तु भोगभूमिके तिर्यंचोंमें उत्पन्न नहीं होते।

---

१. चतुर्गतिनिगोद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितपर्य्याप्ततिर्य्यगेकेंद्रियजीवंगळुं शेषाऽशेषाऽपूर्णं आ तेजस्कायिकवायुकायिकबादरसूक्ष्मापर्य्याप्ततिर्य्यगेकेंद्रियंगळल्लद पृथ्वीकायिकबादरसूक्ष्मापर्य्याप्तरुं अप्कायिकबादरसूक्ष्मापर्य्याप्तरुं साधारणवनस्पतिकायिकनित्यनिगोदबादरसूक्ष्मापर्य्याप्तरुं चतुर्गतिनिगोदबादरसूक्ष्मापर्य्याप्तरुं, प्रतिष्ठितप्रत्येकापर्य्याप्तरुं अप्रतिष्ठितप्रत्येकापर्य्याप्तरुं, द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियापर्य्याप्तरुं विकलाश्च द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपर्य्याप्तरुमिती तिर्य्यग्जीवंगळु स्वस्वायुःस्थितिक्षयवशदिंदं मृतरागि बंदु तथा तिरश्च तथा शब्दं तिरश्चि एंदितु संबंधिसल्पडुगुमवु कारणदिंदमा तेजस्कायिक वायुकायिक बादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवंगळिगे जननस्थानजीवभेदंगळुमंतु पेळल्पट्टंतेयुमी जीवंगळगमा तिर्य्यग्जीवंगळ तिर्य्यग्गतियोळं तीर्त्थोननरेपि तीर्त्थंकररुगळल्लद मनुष्यरोळं जनियिसुवरी जीवंगळनितु तिर्य्यग्मनुष्यायुष्यंगळोळन्यतरायुष्यमं कट्टुवरें बागमोक्तियुंटप्पुदरिंदं ॥

यिल्लि नित्यचतुर्गतिसूक्ष्मनिगोददिंदं पोरमट्टुत्तरानंतरभवदोळन्यत्राऽनुत्पन्ननागि बंदु मनुष्यनागि पुट्टिद मनुष्यंगे सम्यक्त्वमुं देशसंयममुं दोरेकोळ्गुं । सकलसंयमं संभविसदें बी विशेषोपदेशमरियल्पडुगुं। नि नियमेन गां क्षेत्रं शरीरमनंतानंतजीवानां ददातीति निगोदंकर्म्मं । एकेंद्रियस्थावरविशिष्टसाधारणोत्तरोत्तरप्रकृतिनिगोदौदारिकशरीरनामकर्म्मोदयाज्जातोपि निगोदजीवः एंदी निगोदजीवंगे नोकर्म्माहारं साधारणमादोडं कर्म्माहारमसाधारणमक्कुमादोडमोंदु निगोदशरीरदोळिर्प्प जीवंगळु विवक्षितवर्त्तमानकालदिंदं पेरगणनंतानंतातीतकालदोळाद सिद्धपरमेष्ठिगळु सर्वजीवराश्यनंतैकभागप्रमितरप्परंतादोडमभव्यसिद्धराशियं नोडलनंतगुणमप्परंतप्प सिद्धराशियं नोडलुमनंतगुणितमप्पुवी निगोदजीवंगळ्गे नोकर्म्माहारमुमुच्छ्वासनिश्वासमुं साधारणमप्पुदरिंदं साधारणनिगोदंगळें दु संज्ञियक्कुमा निगोदजीवंगळोंदु शरीरदोळु बादरंगळुं सूक्ष्मंगळुं । मिश्रमिल्ल । बादरशरीरंगळोळु बादरंगळें । सूक्ष्मशरीरदोळु सूक्ष्मंगळेयिप्पुवें वरियल्पडुवुवु । आ बादरसूक्ष्मशरीरंगळोळिर्प्पनंतानंतजीवंगळोळोंदु जीवं मृतमादोडेकनिगोदशरीरस्थानंतानंतजीवंगळनितक्कं मरणमक्कुमोंदु शरीरदोळोंदु जीवक्कुत्पत्तियादोडनंतानंतजीवंगळगुत्पत्तियक्कु–। मी निगोदजीवंगळ सर्व्वशरीरंगळुमसंख्यातलोकप्रमितंगळप्पुवा शरीरंगळुं साधारणवनस्पतिस्कंधंगळोळं प्रतिष्ठितप्रत्येकशरीरस्कंधंगळोळि-

---

पर्याप्तापर्याप्तप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकाः पर्याप्तापर्याप्तद्वित्रिचतुरिंद्रियाश्च तेजोद्विकोक्ततिर्यक्षु त्रिषष्टिशलाकापुरुषवर्जितमनुष्येषु च । तत्र नित्यचतुर्गतिसूक्ष्मनिगोदागतमनुष्याः सम्यक्त्वं देशसंयमं च गृह्णीयुर्न सकलसंयम-

---

शेष बादर सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, नित्य निगोदिया, चतुर्गतिनिगोदिया, पर्याप्त-अपर्याप्त प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक, पर्याप्त-अपर्याप्त दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, ये सब जीव मरकर तेजकाय वायुकायके समान उक्त सब तिर्यंचोंमें और तरेसठ शलाका पुरुष रहित मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं। किन्तु इतना विशेष है कि नित्य और चतुर्गति सूक्ष्म निगोदसे आकर मनुष्य हुए जीव सम्यक्त्व और देशसंयमको तो ग्रहण करते हैं किन्तु सकलसंयमको ग्रहण नहीं करते, ऐसा परम्परागत उपदेश है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

र्प्पुवा प्रतिष्ठितप्रत्येकशरीरंगळुमवावुवें दोडे पृथिव्यादिचतुष्टयमुं केवल्याहार देवनारकांगंगळुमें दु-मप्रतिष्ठितंगळु । शेषाशेषजीवशरीरंगळनितुं प्रतिष्ठितंगळप्पुवु । असंज्ञि तथा तिरश्चि तीर्त्थोन-नरेपि असंज्ञिजीवनुं आ पृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणवनस्पतिप्रत्येकवनस्पति द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रिय-सर्व्वबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवंगळु स्वस्वायुःस्थितिक्षयवशदिदं भोगभूपंचेंद्रियतिर्य्यंचरं बिट्टु भुवनत्रयोदरवर्त्तिसर्व्वैकेंद्रियबादरसूक्ष्मविकलत्रयासंज्ञिसंज्ञि-पंचेंद्रिय-पर्य्याप्तापर्य्याप्त-तिर्य्यंचरोळं तु पुट्टुवरंता तिर्य्यंग्गतियोळं तीर्त्थोनसामान्यमनुष्यरोळमसंज्ञिजीवं पुट्टुगुं । मत्तमाजीवंगळ्-पुट्टल्नेरेयद प्रथमनरकदोळं भावनरोळं व्यंतरोळं पुट्टुगुमें तें दोडे असंज्ञिजीवं नरकायुष्यक्कं देवायुष्यक्कमुत्कृष्टदिदं पल्योपमासंख्येयभागमने स्थितिबंधमं माळ्कुमप्पुदरिदं ज्योतिरमर-रोळ्पुट्टनेकें दोडा ज्योतिरमररुगळुत्कृष्टस्थिति पळितोपममक्कुं । जघन्यस्थिति पळितोपमाष्टम-भागमक्कुमप्पुदरिवं प्रथमनरकदोळु पल्योपमासंख्येयभागमात्रस्थिति संभविसुगुमप्पुदरिदमा प्रथमनरकदोळे पुट्टुगुं । द्वितीयपृथ्वियोळ्समयाधिकैकसागरोपमं जघन्यस्थितियप्पुदरिदमा द्वितीयादिनरकंगळोळमसंज्ञिजीवं पुट्टुवनल्लं । स्वस्वायुःस्थितिक्षयवशदिदं पूर्व्वभवत्यागमागुत्ति-रलुत्तरानंतरभवोत्पत्तिनियममिल्लेल्लेडेयोळप्पुदें दरियल्पडुगुमेकें दोडनादिसंसारदोळ् द्रव्यादि पंचपरावर्त्तनंगळिदं मेट्टद नेलनुं पुट्टद योनियुमिल्लप्पुदरिदं ॥

सण्णीवि तहा सेसे णिरये भोगेवि अच्चुदंतेवि ।
मणुवा जांति चउग्गदिपरियंतं सिद्धिठाणं च ॥५४१॥

संज्ञ्यपि तथा शेषे नरके भोगेऽप्यच्युतांतेऽपि । मनुष्या यांति चतुर्गतिपर्य्यंतं सिद्धिस्थानं च ॥

संज्ञ्यपि तथा संज्ञिपंचेंद्रिय तिर्य्यंचजीवनु मसंज्ञिजीवनंते भुवनत्रयोदरवर्त्ति सर्व्वैकेंद्रिय-बादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त विकलत्रयपर्य्याप्तापर्य्याप्त असंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तापर्य्याप्त जीवंगळोळु स्वायुःस्थितिक्षयवशदिदं तिर्य्यंग्गतियोळं पुट्टुगुं । तीर्त्थकरचक्रवर्तिबलदेववासुदेवप्रतिवासुदेव-रहितपर्य्याप्तापर्य्याप्तमनुष्यरोळं प्रथमनरकदोळं भावनामरनिकायदोळं व्यंतरामरनिकायदोळं पुट्टुगु मसंज्ञिजीवं पुट्टल्नेरेयद शेषद्वितीयादिषट्पृथ्विगळोळं ज्योतिरमररोळं सौधर्म्माद्यच्युताव-

---

मित्युपदेशः । असंज्ञी पृथ्वीकायिकोक्ततिर्यग्मनुष्येषु प्रथमनरके भावनव्यंतरयोश्च न शेषदेवनारकेषु । कुतः ? तदायुःस्थितिबंधस्योत्कृष्टेन पल्यासंख्येयभागमात्रत्वात् ॥५४०॥

संज्ञितिर्यङप्यसंज्ञ्युक्तसर्वजीवेषु सर्वनारकेषु सर्वभोगभूमिजेष्वच्युतांतसर्वदेवेषु च जायते । कर्मभूमि-

---

असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर पृथिवीकायिकके समान तिर्यंच मनुष्योंमें, प्रथम नरकमें और भवनवासी तथा व्यन्तरदेवोंमें उत्पन्न होता है, शेष देवों और शेष नारकियोंमें उत्पन्न नहीं होता। क्योंकि असंज्ञीके आयुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होता है ॥५४०॥

संज्ञी तिर्यंच भी असंज्ञी पंचेन्द्रियवत् सब जीवोंमें तथा सब नारकियोंमें, सब भोग-भूमियोंमें और अच्युत स्वर्ग पर्यन्त सब देवोंमें उत्पन्न होता है। कर्मभूमिया पर्याप्त मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सानमाद कल्पजरोळं स्वायुःस्थितिपरिक्षयदिंदमुत्तरानंतर भवदोळ्पुट्टुगुं । मनुष्याः कर्म्मभूपर्याप्तमनुष्यरु स्वायुःस्थितिपरिक्षयवशदिंदं नरकतिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिगळोळेनितनितु जीव भेदंगळोळवनितरोळं यथा प्रवचनं तथैव संहनन विशेषंगळिदमेल्ला नरकंगळोळं त्रसस्थावरपर्य्याप्तापर्य्याप्त कर्म्मस्थित्यनुभागसंस्थानसंहननादिविशेषंगळिदं सर्व्वतिर्य्यंचरोळं त्रसपर्य्याप्तापर्य्याप्तमनुष्यगति संस्थानसंहनन कर्म्मस्थित्यनुभागविशेषंगळिदं तीर्त्थंकरचक्रधरबलदेव वज्जित सर्व्वमनुष्यरोळं त्रसपर्य्याप्त देवगति देवायुर्व्वैक्रियिकशरीर संस्थानवर्णगंधरसस्पर्शकर्म्मस्थिति कर्म्मानुभागादिविशेषंगळिदं भवनत्रयादिसर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमाद सर्व्वदेवनिकायदोळं स्वायुःस्थितिक्षयवशदिंदं पोगि पुट्टुवरु–। मपर्य्याप्तमनुष्यं कर्म्मभूमिपर्य्याप्तापर्य्याप्तमनुष्यरोळं सर्व्वत्र सर्व्वतिर्य्यग्जीवंगळेनितोळवनितरोळं स्वायुःस्थितिक्षयवशदिंदमनंतरोत्तरभवदोळ्पुट्टुगुं । मुंपेळ्दरडुवरे द्वीपद मूवत्तुं भोगभूसम्यग्दृष्टिमनुष्यरुगळं तिर्य्यग्जघन्य भोगावनिज सम्यग्दृष्टि तिर्य्यंचरुगळं सौधर्म्मकल्पद्वयदोळ्पुट्टुवरु । तत्रतनमिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिमनुष्यरुगळं कुमानुष्यरुगळं स्वायुःस्थितिक्षयवशदिंद मनंतरोत्तरभवदोळु भवनत्रयामररागि पुट्टुवरु । सिद्धिट्ठाणं च पंचदशकर्म्मभूमिगळोळेरडुवरे द्वीपद मनुष्यलोकदोळुळळ मनुष्यरुगळोळकेलंबरु तीर्त्थंकररुकेलंबरु चरमांगरु केलंबरु सामान्यमनुष्यरप्परवर्गळोळु तीर्त्थंकरमनुष्यरुगळं चरमांगरुगळुमप्प मनुष्यरुगळु तिर्य्यक्संज्ञि जीवनेय्दल्लेरेयद स्वात्मोपलब्धिलक्षणसिद्धिस्थानमुमनेय्दुवरु ॥

आहारगा दु देवे देवाणं होदि कम्म तिरियणरे ।
पत्तेयपुढवि आऊ बादरपज्जत्तगे गमणं ॥५४२ ॥

आहारका तु देवे देवानां भवति कर्म्म तिर्य्यग्नरे । प्रत्येकपृथ्व्यब्बादरपर्य्याप्तके गमनं ॥

आहारकाद्देहान्मृतानां गमनं देवे भवतीति वाक्यसंबंधः स्यात् । प्रमत्तसंयतरुगळाहारक देहदिंदं मृतरादवरावोडे कल्पजरोळं कल्पातीतजरोळं जननमक्कुं । देवानां गमनं सौधर्म्मादिकल्पज-

---

मनुष्याः पर्याप्ताः संज्ञियुक्तसर्वजीवेषु कल्पातीतदेवेषु च, तदपर्याप्ताः पर्याप्तापर्याप्तकर्मभूमिसर्वतिर्यग्सामान्यमनुष्येषु, त्रिंशद्भोगभूमितिर्यग्मनुष्या जघन्यतिर्यग्भोगभूमितिर्यंचश्च सम्यग्दृष्टयः सौधर्मद्वये तन्मिथ्यादृष्टिसासादनाः कुमनुष्याश्च भवनत्रये, चरमांगाः स्वात्मोपलब्धिलक्षणं सिद्धिस्थानमाप्नुवंति ॥५४१॥

आहारकदेहेन मृतप्रमत्तसंयतानां गमनं वैमानिकेष्वेव भवति । देवानामुत्पत्तिः सर्वार्थसिद्धयंतानां

संज्ञी पंचेन्द्रियवत् सब जीवोंमें और कल्पातीत अहमिन्द्र देवोंमें उत्पन्न होता है । अपर्याप्त मनुष्य कर्मभूमिके पर्याप्त-अपर्याप्त सब तिर्यंचोंमें और सामान्य मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं । तीस भोगभूमिके तिर्यंच और मनुष्य तथा असंख्यात द्वीप समुद्र सम्बन्धी जघन्य तिर्यंच भोगभूमिके तिर्यंच यदि सम्यग्दृष्टी होते हैं तो सौधर्म ईशानमें उत्पन्न होते हैं । और मिथ्यादृष्टि या सासादन तथा कुभोगभूमिके मनुष्य भवनत्रिकके देवोंमें उत्पन्न होते हैं । और चरमशरीरी मनुष्य स्वात्मोपलब्धिरूप सिद्धिस्थानको प्राप्त होते हैं ॥५४१॥

आहारकशरीरके साथ मरे प्रमत्त संयतोंका गमन वैमानिक देवोंमें ही होता है ।

---

१. °णं सण्णिक°—मु० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुगळुं कल्पातीतजरुगळुं स्वस्वायुस्थितिक्षयवशदिदं मृतराददरादोडे पंचदशकर्म्मभूमितिर्य्यंचपंचेंद्रिय संज्ञिपर्य्याप्तरोळं स्वयंभूरमण द्वीपार्द्धमुं स्वयंभूरमणसमुद्रमुमें बिवरोळु पर्य्याप्ततिर्य्यंचपंचेंद्रियसंज्ञिस्थलचरखचरजलचरतिर्य्यंचरुगळुमागियुं यथायोग्यं पुट्टुवरु। नाल्वत्तय्दुं लक्षयोजनप्रमाणमप्प मनुष्यलोकद कर्म्मभूमिगळपदिनैदरोळु तीर्थंकररुं चक्रधररुं बलदेववासुदेवरुगळें ब विशेषपुरुषरुं सामान्यमनुष्यरुमागियुं पुट्टुवरु। आकल्पजरुगळोळु सौधर्म्मद्वयदेवर्कळुगळुं प्रत्येकवनस्पति पृथ्व्यब्बादरपर्य्याप्तजीवंगळोळं जननमक्कुं ॥

भवणतियाणं एवं तित्थूणणरेसु चेव उप्पत्ती ।
ईसाणंता[1] एगे सदरदुगंता हु सण्णीसु ॥५४३॥

भवनत्रयाणामेवं तीर्त्थोननरेषु चैवोत्पत्तिः । ईशानांतादेकेंद्रिये शतारद्विकांतात्खलु संज्ञिषु ॥

भवनत्रयदेवर्क्कळुगळुं कल्पजरुगळगे पेळदंते मनुष्यलोकतिर्य्यग्लोकंगळ प्रतिबद्धकर्म्मभूमिगळोळु संजातपंचेंद्रियसंज्ञिपर्य्याप्ततिर्य्यक् जीवंगळोळं कर्म्मभूमिप्रतिबद्धम्लेच्छखंडार्य्यखंडजपर्य्याप्तमनुष्यरोळु तीर्त्थकररुं बलदेववासुदेवादिगळल्लद मनुष्यरुगळुमागियुं जनिसुवरु। ईशानकल्पावसानादितो देवानां गमनं भवनत्रयं मोदलागीशानकल्पावसानमाद देवर्क्कळ गळगेकेंद्रिय जीवंगळोळं जननमक्कुं। शतारद्विकांतादितो देवानां गमनं संज्ञिषु खलु भवनत्रयं मोदल्गोंडु शतारसहस्रारकल्पदिदमित्तलाद देवर्कळुगळगे मनुष्यलोकप्रतिबद्ध पंचदशकर्म्मभूमिजपर्य्याप्तपंचेंद्रिय संज्ञितिर्य्यग्जीवंगळोळं तिर्य्यग्लोककर्म्मभूमिप्रतिबद्धस्वयंभूरमणद्वीपापरभागयुतस्वयंभूरमणचरमसमुद्रदोळं लवणोदकाळोदसमुद्रंगळोळं पर्य्याप्तपंचेंद्रियसंज्ञि स्थलचरखचरजलचर तिर्य्यग्जीवंगळोळं जननमक्कुं। यितु चतुर्ग्गतिजीवंगळगे तद्भवपरित्यागमागुत्तिरलनंतरभवग्रहणनियमलक्षणच्यवनोपपादंगळु संक्षेपदिदं पेळल्पट्टवु ॥

क ॥ नानाविधजीवंगळोळेनुं तोडळिल्लदंतु पुट्टुव दुःखं। नानागतिजंगेदंरिदेनुं तडदिरदे पिडि जिनश्रीपदमं ॥

पंचदशकर्मभूमिमनुष्येष्वेव नान्यत्र । सहस्रारांतानां तेषु च पंचदशकर्मभूमिलवणोदककालोदकस्वयंभूरमणद्वीपपरार्धतत्समुद्रसंज्ञिपर्याप्तजलस्थलखचरतिर्यक्षु च ईशानांतानां तेषु च बादरपर्याप्तपृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिभेदैकेंद्रिये च। भवनत्रयाणां तेष्वपि मनुष्येषु तीर्थकरादित्रिषष्टिशलाकापुरुषवर्जितेष्वेव ॥ ५४२–५४३ ॥

सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त देवोंकी उत्पत्ति पन्द्रह कर्मभूमियोंके मनुष्योंमें ही होती है, अन्यत्र नहीं। सहस्रार पर्यन्त देवोंकी उत्पत्ति उन मनुष्योंमें तथा पन्द्रह कर्मभूमि, लवण समुद्र, कालोदसमुद्र, स्वयंभूरमण द्वीपका अपरार्ध, स्वयंभूरमण समुद्रमें संज्ञी पर्याप्त जलचर, थलचर, नभचर तिर्यंचोंमें होती है। ईशान पर्यन्त देवोंकी उक्त मनुष्य तिर्यंचोंमें और बादर पर्याप्त पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पति एकेन्द्रियोंमें होती है। भवनत्रिकके देवोंकी भी उत्पत्ति ईशान स्वर्गवत् जानना। किन्तु मनुष्योंमें वे तीर्थंकर आदि त्रेसठ शलाका पुरुषोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं ॥५४२–५४३॥

1. ईसाणंताणेगे सदरदुगंत.ण सण्णीसु ।—मु० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं नामकर्म्मबंधस्थानंगळं चतुर्द्दश मार्ग्गणगळोळु गाथाष्टकदिदं योजिसिदपरु :—

णामस्स बंधठाणा णिरयादिसु णव य वीस तीसमदो ।
आदिमछक्कं सव्वं पण छण्णव वीस तीसं च ।।५४४।।

नाम्नो बंधस्थानानि नारकादिषु नव विंशतिस्त्रिंशदत-। आदितनषट्कं सर्व्वं पंच षड् नव विंशतिस्त्रिंशच्च ।।

नामकर्म्मबंधस्थानंगळु नरकादिचतुर्ग्गतिगळोळु क्रमदिदं नरकगतियोळु नव विंशतिप्रकृतिस्थानमुं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमेंबेरडुं स्थानंगळनेरडुं नरकंगळ नारकर्कळु कट्टुवरु। नारकगति २९। ३०। अल्लि नवविंशतिप्रकृतिस्थानमं पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुतमागियुं पर्य्याप्तमनुष्यगतियुतमागियुं माघविपर्य्यंतमाद नारकरु कट्टुवरु। त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुमुद्योतनामयुतमागियुं माघविपर्य्यंतमाद नारकरु कट्टुवरु। पर्य्याप्तमनुष्यगतितीर्त्थयुतमागियु मेघे पर्य्यंतमाद नारकरु कट्टुवरु। २९। ति। म। ३०। ति। उ। म। ति।। यिल्लि नरकगत्यादिमार्ग्गणेगळोळु गुणस्थानविवक्षेइंदं बंधस्थानंगळु ग्रंथगौरवभयदिदं योजिसल्पडवा योजनिकेयुं सुगममेयक्कुमेंते दोडे गतींद्रियपर्य्याप्तादिविशेषंगळु प्रतिस्थानं पेळल्पडुगुमप्पुदरिदमंतु पेळल्पडुत्तिरलु मिथ्यादृष्टिनारकरुं सासादननारकरुंगळुं तिर्य्यग्गतियुतमागियुं मनुष्यगतियुतमागियुं नवविंशतिस्थानमं कट्टुवरु। सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकरनिबरुं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरेकेंदोडे सासादननोळु तिर्य्यग्गतिद्वयमुमुद्योतमुं

एवं चतुर्गतिजानां च्यवनोपपादान् संक्षेपेणोक्त्वाधुना तानि बंधस्थानानि चतुर्दशमार्गणासु गाथाष्टकेनाह—

नामबंधस्थानानि नरकादिगतिषु क्रमेण नरकगतौ नवविंशतिकं त्रिंशत्कं च। तत्र नवविंशतिकं पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतं पर्याप्तमनुष्यगतियुतं च मघवीपर्यंता बध्नंति। त्रिंशत्कं पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमुद्योतयुतं च माघवीपर्यंताः बध्नंति। पर्याप्तमनुष्यगतितीर्थयुतं मेघापर्यंता बध्नंति। मार्गणासु गुणस्थानविवक्षया तद्योजनिका सुगमा, गतींद्रियपर्याप्तादिविशेषाणां प्रतिस्थानं प्राक् प्रतिपादनात्। तत्र नारका मिथ्यादृष्टयः सासादनाश्च तिर्यग्गतियुतं मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकं बध्नंति। सम्यग्मिथ्यादृष्टयः मनुष्यगतियुतमेव।

इस प्रकार चारों गतिके जीवोंका जन्ममरण संक्षेपसे कहकर अब उन नामकर्मके बन्धस्थानोंको चौदह मार्गणाओंमें आठ गाथाओंसे कहते हैं—

नामकर्मके बन्धस्थान नरकादि गतियोंमें-से क्रमसे नरकगतिमें उनतीस और तीस दो बँधते हैं। उनमें-से पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहित और मनुष्यगति सहित उनतीसको मघवी पर्यन्त नारकी बाँधते हैं। और पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहित उनतीसको व उद्योत सहित तीसको माघवी पर्यन्त नारकी बाँधते हैं। और पर्याप्त मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसके स्थानको मेघा पृथ्वी पर्यन्त ही बाँधते हैं।

मार्गणाओंमें गुणस्थानोंकी विवक्षासे बन्धस्थानोंका लगाना सुगम है; क्योंकि गति, इन्द्रिय, पर्याप्त आदि विशेषोंको पहले प्रत्येक स्थानके साथ कहा है। उनमें-से मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टी नारकी तिर्यंचगति सहित और मनुष्यगति सहित उनतीसके स्थानको बाँधते हैं। सम्यक् मिथ्यादृष्टि नारकी मनुष्यगति सहित ही उनतीसका स्थान बाँधते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्युच्छित्तियागि पोदुदप्पुदरिंदं । असंयतसम्यग्दृष्टिनारकरनिबरुं मनुष्यगतियुतमागि नवविंशतिस्थानमं कट्टुवरु । केलंबरुगळु मोदल मूरुं नरकंगळोळु मनुष्यगतिपर्य्याप्तदोडने तीर्त्थयुतमागि कट्टुवरें दिदु मोदलाद योजनिकें सुगममक्कुमें बुदर्त्थमदु कारणमागि यथा प्रवचनं तथा परमागमकोविदरिंदं गुणस्थानविवक्षेयिदमुमा नामकर्म्मबंधस्थानंगळु योजिसल्पडुववेंम्मिदं ग्रंथगौरवभयदिदं योजिसल्पडवु । अतः मुंदण तिर्य्यग्गतियोळु तिर्य्यग्जीवंगळु आदितनषट्स्थानंगळं कट्टुवरु । तिर्य्यग्गति । २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ यिल्लि तिर्य्यग्गतियोळितर्य्यग्जीवंगळु त्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानमं स्थावरबादरापर्य्याप्तैकेंद्रिययुतमागियुं स्थावरसूक्ष्मापर्य्याप्ततिर्य्यग्गत्येकेंद्रिययुतमागियुं कट्टुवरु । पंचविंशतिप्रकृतिस्थानमनेकेंद्रियबादरपर्य्याप्तयुतमागियुं मत्तमेकेंद्रियसूक्ष्मपर्य्याप्तयुतमागियुं त्रसापर्य्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रियतिर्य्यग्गतियुतमागियुं त्रसापर्य्याप्तमनुष्यगतियुतमागियुं कट्टुवरु । षड्विंशतिप्रकृतिस्थानमं पृथ्वीकायविशिष्टबादरैकेंद्रियातपनाम तिर्य्यग्गतियुतमागियुं मत्तं तेजोवायुसाधारणवनस्पतिरहितशेषैकेंद्रियबादरपर्याप्तोद्योततिर्य्यग्गतियुतमागियुं कट्टुवरु । अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमं त्रसपर्य्याप्तनरकगतियुतमागियुं कट्टुवरु । त्रसपर्य्याप्तदेवगतियुतमागियुं[1] कट्टुवरु । नवविंशति स्थानमं त्रसपर्य्याप्त द्वींद्रियत्रींद्रिय [चतुरिंद्रिय] पंचेंद्रियतिर्य्यग्गतियुतमागियुं कट्टुवर । त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं

तिर्यग्गतिद्वयोद्योतबंधस्य सासादने छेदात् । असंयता मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकं तत्केचिदाद्यत्रिनरके मनुष्यगतिपर्याप्ततीर्थयुतं त्रिंशत्कं च । तिर्यग्गतौ आद्यान्येव षट् । तत्र त्रयोविंशतिकं स्थावरबादरापर्याप्तैकेंद्रिययुतं स्थावरसूक्ष्मापर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतं च । पंचविंशतिकमेकेंद्रियबादरपर्याप्तयुतमेकेंद्रियसूक्ष्मपर्याप्तयुतं, त्रसापर्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिययुतं त्रसापर्याप्तमनुष्यगतियुतं च । षड्विंशतिकं पृथ्वीकायविशिष्टबादरैकेंद्रियातपतिर्यग्गतियुतं तेजोवायुसाधारणोनैकेंद्रियं बादरापर्याप्तोद्योततिर्यग्गतियुतं च । अष्टाविंशतिकं त्रसपर्याप्तनरकगतियुतं त्रसपर्याप्तदेवगतियुतं च । नवविंशतिकं त्रसपर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गतियुतं

क्योंकि तिर्यंचगति, तिर्यंचानुपूर्वी और उद्योतके बन्धकी व्युच्छित्ति सासादनमें ही हो जाती है। असंयत सम्यग्दृष्टी नारकी मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध करते हैं। उनमें-से आदिके तीन नरकोंमें कोई-कोई मनुष्यगति पर्याप्त तीर्थंकर सहित तीसका बन्ध करते हैं।

तिर्यंचगतिमें आदिके छह ही बन्धस्थान हैं। उनमें-से तेईसका बन्धस्थान स्थावर बादर अपर्याप्त एकेन्द्रिय सहित या स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त तिर्यंचगति एकेन्द्रिय सहित बँधता है। पच्चीसका बन्धस्थान एकेन्द्रिय बादर पर्याप्त सहित, या एकेन्द्रिय सूक्ष्म पर्याप्त सहित, या त्रस अपर्याप्त दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जाति सहित या त्रस अपर्याप्त मनुष्यगति सहित बँधता है। छब्बीसका बन्धस्थान पृथ्वीकाय विशिष्ट बादर एकेन्द्रिय आतप तिर्यंचगति सहित या तेजकाय, वायुकाय साधारण बिना अन्य एकेन्द्रिय बादर अपर्याप्त तिर्यंचगति उद्योत सहित बँधता है। अठाईसका स्थान त्रसपर्याप्त नरकगति सहित या त्रस पर्याप्त देवगति सहित बँधता है। उनतीसका स्थान त्रसपर्याप्त दो-इन्द्रिय,

---

१. म °मागियुं देव° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रसबादरपर्य्याप्त द्वीन्द्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रियतिर्य्यग्गतियुतोद्योतयुतमागियुं कट्टुवरें बुदर्थं। लब्ध्यपर्य्याप्ततिर्य्यंचरुगळु अष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि शेषस्थानंगळय्दुमं कट्टुवरु। २३। २५। २६। २९। ३०॥ मनुष्यगतियोळु मनुष्यजीवंगळु सर्व्वं सर्व्वस्थानंगळं कट्टुवरु। मनुष्यगतिजरु २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१॥ देवगतियोळु देवक्कळु पंचविंशति षड्विंशति नव-विंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानचतुष्टयमं कट्टुवरु। देवगति। २५। ए प २६। ए आ उ २९। ति। म ३०। ति उ। म ति। यिंतु गतिमार्ग्गणेयोळु नामबंधस्थानंगळं पेळ्दनंतरमिंद्रियादिमार्ग्गणेगळोळु नामबंधस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

पंचक्खतसे सव्वं अडवीसूणादि छक्कयं सेसे।
चदुमणवयणोराले सव्व देवं वा विगुव्वदुगे॥५४५॥

पंचाक्षत्रसयोः सर्व्वमष्टाविंशत्यूनाद्यषट्ककं शेषे। चतुर्म्मनोवचनौदारिकेऽवष्टौ देववद्-वैक्रियिकद्विके॥

यिंद्रियमार्ग्गणेयोळेनेवरं पंचेंद्रियमार्ग्गणेयोळु पेळ्दपरल्लि सर्व्वं सर्व्वनामबंधस्थानमक्कुं। संदृष्टि :—पंचेंद्रियबंध २३। ए अ। २५। ए प। त्र। अ। २६। ए अ। उ। २८। न। दे। २९। बि। ति। च। अ। सं। म। दे। ति। ३०। बि। ति। च। अ। सं। ति। उ। म। ति। दे। आ। ३१। दे। ति। आ। ७। १। अ गति॥ ई पंचेंद्रियत्वं नारकरोळमसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रिय-तिर्य्यंचरोळं मनुष्यरोळं देवक्कंरोळमक्कुमेकें दोडे भवप्रथमसमयदोळु पंचेंद्रियजातिनामकर्म्म-

---

त्रसपर्याप्तमनुष्यगतियुतं च। त्रिंशत्कं त्रसबादरपर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गत्युद्योतयुतं। लब्ध्यपर्याप्तेषु तान्येवाष्टाविंशतिकं विना पंच। मनुष्यगतौ सर्वाणि। देवगतौ पंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि ॥५४४॥ अथेंद्रियादिमार्गणास्वाह —

इंद्रियमार्गणायां पंचेंद्रिये कायमार्गणायां त्रसे च सर्वाणि, शेषासु एकेंद्रियादिषु चतसृषु पृथ्वीकायादिषु

तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जाति तिर्यंचगति सहित या त्रसपर्याप्त मनुष्यगति सहित बँधता है। तीसका स्थान त्रस बादर पर्याप्त दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जाति, तिर्यंचगति और उद्योत सहित बँधता है।

लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच अठाईसके बिना पाँच स्थान बाँधता है। मनुष्यगतिमें सब ही स्थान बँधते हैं। देवगतिमें पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीस चार ही स्थान बँधते हैं॥५४४॥

इन्द्रियादि मार्गणाओंमें कहते हैं—

इन्द्रिय मार्गणामें पंचेन्द्रियमें, और कायमार्गणामें त्रसमें सब बन्धस्थान हैं। शेष एकेन्द्रिय आदि चारमें और पृथ्वीकायादि पाँचमें आदिके छह स्थानोंमें-से अठाईस बिना पाँच-पाँच स्थान हैं। चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाय योगमें सब बन्ध-स्थान हैं। वैक्रियिक योग और वैक्रियिक मिश्रमें देवगतिकी तरह चार बन्धस्थान हैं॥५४५॥

---

१. एतद्गाथायाष्टीका अभयचंद्रनामांकितायां टीकायां विभिन्नतयोपलब्धा। सा च यथा—इंद्रियमार्गणायां पंचेंद्रिये सर्वं २३। ए अ। २५। ए प। त्र अ। २६। ए आ। उ। २८। न। दे। २९। वि ति च अ सं म दे ती। ३० वि ति च अ सं ति उ म ती दे आ। ३१ दे ती आ। १ अगति। इदं पंचेंद्रियत्वं नारकेषु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विपाकजीवविपाकित्वदिनाविर्भूतंगळप्प पंचइंद्रियाणि एष्विति पंचेंद्रिया जीवा यें दितु पंचेंद्रियत्व-सादृश्यसामान्यव्यापकदिदं व्याप्त नारकतिर्य्यग्मनुष्यदेवक्कळोळु व्याप्यत्वदिदं पंचेंद्रियत्वं सिद्धमक्कुमेकें दोडे—

"व्यापकं तदतन्निष्ठं व्याप्यं तन्निष्ठमेव हि ।
व्याप्यं तु गमकं प्रोक्तं व्यापकं गम्यमिष्यते ॥"

एंदितु व्यापकमप्प पंचेंद्रियत्वं तन्निष्ठमुमतन्निष्ठमुमक्कुं । व्याप्यं तन्निष्ठमेयप्पुदरिदं पंचेंद्रियत्वं नारकरोळं तिर्य्यंचादिगळोळमक्कुं ।

नारकत्वं नारकरोळेयक्कुं तिर्य्यगादिरवं तिर्य्यगादिगळोळेयक्कुमेंबुदत्थं । मत्तं तद्भव-सामान्यपेक्षेयिदं ॥

"धर्म्मे धर्म्मेन्य एवार्त्थो धर्म्मिणोऽनंतधर्म्मणः ।
अंगित्वेन्यतमांतस्य शेषांतानां तदंगता ॥"—आप्तमी० २२ का० ।

पंचसु च मार्गणासु तदादिषट्कमष्टाविंशतिकं विना, चतुश्चतुर्मनोवाग्योगेष्वौदारिककाययोगे च सर्वाणि वैक्रियिकतन्मिश्रयोगयोर्देवगत्युक्तानि चत्वारि ॥५४५॥

विशेष—केशववर्णीकी कन्नड़ टीका गा. ५४५ में विस्तारसे नयोंकी चर्चा है। उसके संस्कृत रूपान्तरकार नेमिचन्द्र टीकाकारने उसे अपनी संस्कृत टीकामें छोड़ दिया है। इसीसे पं. टोडरमलजीकी टीकामें भी उसका अनुवाद नहीं आ सका है।

गोम्मटसारके कलकत्ता संस्करणमें कर्मकाण्ड पृ. ७०४ पर टिप्पण रूपमें लिखा है कि अभयचन्द्रके नामसे अंकित इसकी टीकामें नीचे लिखा अधिक पाठ पाया जाता है। हमने उसे कन्नड़ टीकासे मिलाया तो वह अक्षरशः मिल गया। इससे यहाँ उसका हिन्दी अनुवाद दिया जाता है—सं.

[यह पंचेन्द्रियत्व नारकियोंमें, संज्ञी-असंज्ञी तिर्यंचोंमें, मनुष्योंमें और देवोंमें होता है। भवके प्रथम समयमें पंचेन्द्रिय नामकर्मके उदयसे प्रकट पाँच इन्द्रियाँ इनमें हैं, अतः पंचेन्द्रिय हैं।

पंचेन्द्रियत्वरूप सादृश्य सामान्य व्यापक है और वह नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देवोंमें व्याप्त है। कहा है—

'जो व्यापक होता है वह तत्में भी रहता है और अतत्में भी रहता है, किन्तु जो व्याप्य होता है वह तत्में ही रहता है। अतः व्यापक गमक होता है और व्यापक गम्य होता है।' अतः पंचेन्द्रियत्व व्यापक है क्योंकि वह नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव सबमें पाया जाता है। किन्तु नारकपना नारकियोंमें ही पाया जाता है, तिर्यंचपना तिर्यंचोंमें ही पाया जाता है। यह तद्भव सामान्यकी अपेक्षा जानना। कहा है—

संज्ञ्यसंज्ञितिर्यक्षु मनुष्येषु देवेषु च स्यात् । भवप्रथमसमये पंचेंद्रियनामोदयाविर्भूतपंचेंद्रियाण्येष्विति पंचेंद्रियाः, तस्य सादृश्यसामान्यत्वात् ।

धर्मे धर्मेऽन्य एवार्थो धर्मिणोऽनंतधर्मणः । अंगित्वेऽन्यतमांतस्य शेषांतानां तदंगता ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तुविन पूर्व्वोत्तरपर्य्यायरूप धर्म्मंगळ विवक्षेयिदमनंतधर्म्मणः अनंतानंतधर्म्मंगळनुळ्ळ धर्म्मिणः धर्म्मियप्प वस्तुविन धर्म्मे धर्म्मे तत्पर्य्यायरूप धर्म्मं धर्म्मंदप्पदे अन्य एवार्त्थः पेरतो‍ंदु पेरतो‍ंदुमर्त्थमेयक्कुमा पृथग्भूतार्त्थंगळोळु अन्यतमांतस्यांगित्वे सति ओ‍ंदानुमो‍ंदु विवक्षितमप्प धर्म्ममदक्कवयवित्वमागुत्तं विरलु शेषातांनां शेषभूतभविष्यत्पर्य्यायरूपधर्म्मंगळेल्लं तदंगता तदवयवता अदक्कवयवत्वमक्कुमेंदितूर्ध्वतासामान्यविवक्षेयिदमनंतानंतधर्म्मंगळनुळ्ळ धर्म्मियप्प जीवन विवक्षितपंचेंद्रियत्वैकधर्म्मक्केकांतत्वमुमनेकांतत्वमुं समर्त्थिसल्पट्टुवा जीवविवक्षित-पंचेंद्रियत्व धर्म्मैकांतमवु नयविषयमें‍दु पेळल्पट्टुवदें‍तें‍दोडे—

"अनेकांतात्मकादर्त्थादपोद्धृत्यांजसान्नयः।
तत् प्राप्त्युपायमेकांतं तदंशं व्यावहारिकं ॥" [ ]

अनेकांतात्मकादर्त्थात् अनेकधर्म्मात्मकमप्प वस्तुविनत्तणिदं तत्प्राप्त्युपायमेकांतं वस्तुविननेकांतप्राप्तिगुपायभूतनिश्चयनयविषयमेकांतमं तदंशं व्यावहारिकं आ निश्चयनयविषयैकान्त-वस्तुविनअंशमवु व्यवहारनयविषयमक्कुमदं अपोद्धृत्य बेक्केय्दिदर्दो‍ंडवु नयः नयविषयमप्पुवरिदं नयमक्कुं ॥

"प्रकाशयन्न मिथ्या स्याच्छब्दात्तच्छास्त्रवत्स हि।
मिथ्याऽनपेक्षोनेकांतक्षेपान्नान्यस्तदत्ययात् ॥ [ ]

सः आ प्रमाणविषयार्त्थदेकदेशग्राहियप्प निश्चयव्यवहारनयं तां पिडिदिर्द्दकांतमं स्याच्छब्दात् स्यात्पददिदं प्रकाशयन् बेळगिसुत्तं न मिथ्या स्यात् सुनयमक्कुं। हि तथा हि अंतेयक्कुमल्ते। यत् आउदो‍ंदु स्याच्छब्दात्प्रकाशयच्छास्त्रं स्यात्पददिदं बिजृंभिसुत्तंविर्द्द शास्त्रं न मिथ्या स्यात्।

'धर्मी वस्तु अनन्त धर्मवाली होती है। उसके प्रत्येक धर्मका प्रयोजन भिन्न-भिन्न होता है। उनमें-से एक धर्मके मुख्य होनेपर शेष धर्म गौण हो जाते हैं।'

इस प्रकार ऊर्ध्वता सामान्यकी विवक्षासे भी उनके पंचेन्द्रियत्वका समर्थन होता है। वही पंचेन्द्रियत्व नयका विषय भी होता है। कहा है—

'अनेकान्तात्मक अर्थसे उस अनेकान्तात्मक अर्थकी प्राप्तिके उपायभूत उसके एक-एक अंशको पृथक् करके कहना नय है, वह नयका विषय है।'

प्रमाणके विषयभूत पदार्थके एकदेशको ग्रहण करनेवाला निश्चयनय अथवा व्यवहार-

---

पूर्वोत्तरपर्यायरूपधर्माणां विवक्षयाऽनंतधर्मणो धर्मे धर्मे धर्मं धर्मं प्रति अन्य एवार्थः पृथक् पृथगेवार्थः। तेषु पृथगर्थेष्वन्यतमस्य कस्यचिद्विवक्षितस्य धर्मस्यावयवित्वे सति शेषधर्माणां तदंगता तदवयवता इत्यूर्ध्वता-सामान्यविवक्षयापि तत्पंचेंद्रियत्वं एकांतत्वानेकांताभ्यां समर्थितं। तदेव पंचेंद्रियत्वं पुनर्नयविषयमपि। तथाहि—

अनेकांतात्मकादर्थादपोद्धृत्यांजसान्नयः। तत्प्राप्त्युपायमेकांतं तदंशं व्यावहारिकं ॥१॥

अनेकांतात्मकादर्थात्सकाशात् तदनेकांतात्मकार्थस्य प्राप्त्युपायभूतं व्यावहारिकं प्रवृत्तिनिवृत्तिसाधकं तदंशं एकांतं एकस्वभावं पृथक्कृत्योच्यते स परमार्थतो नयः स्यात् नयविषयत्वात्।

प्रकाशयन्न मिथ्या स्याच्छब्दात्तच्छास्त्रवत्स हि। मिथ्याऽनपेक्षोऽनेकांतक्षेपान्नान्यस्तदत्ययात् ॥१॥

स प्रमाणविषयार्थस्यैकदेशग्राही निश्चयनयो व्यवहारनयो वा स्वगृहीतमेकांतं स्याच्छब्दात्प्रकाशयन्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यं तु मिथ्यारूपमल्लंते पेळल्पट्टुदु। स्यात्कारः सत्यलांछनः एंदितु अनपेक्षो नयः स्यात्पद-निरपेक्षमप्प नयं मिथ्यः मिथ्येयनुळ्ळुदक्कु। मिल्लि मिथ्यः एंदितु अभ्रादियाकृतिगणमप्पुदरिदं मत्वर्थीयाऽप्रत्ययांतमक्कुं। स्याच्छब्दनिरपेक्षमादोडेके दुर्नयमक्कुमें दोडे अनेकांतक्षेपात् स्याच्छब्द-निरपेक्षमादोडा एकांतमनेकांतत्वदिदं तोलगुगुमंतनेकांतत्वदिदं तोलगिदोडेनादुदें दोडे तदत्य-यान्नान्यः अनेकांतातिक्रममादोडे वस्तु अनन्यमक्कुमा एकांतमो देयक्कुमंतागुत्तं विरलवस्तुवक्कुमदु जिनमतमल्तु। श्रीसमंतभद्रस्वामियिदं निरूपिसल्पट्टुदु।

"सधर्म्मणैव साध्यस्य साधर्म्यादविरोधतः।
स्यात्कारप्रविभक्तार्त्थविशेष व्यंजको नयः॥—[आप्तमी० १०६]

स्यादनेकांतं वस्तु स्यादेकांतं वस्तु एंदितु सधर्म्मणैव समानधर्म्ममनुळ्ळुदरिंदमे प्रमाणनय-साधनंगळिंदं साध्यस्य साध्यमप्पनेकांतद साधर्म्यादविरोधतः सदृशधर्म्मत्वदत्तणिंदं विरोधमिल्लप्पु-दरिंदं स्यादनेकांतं वस्तु एंदितु स्यात्कारप्रविभक्तार्थं स्यात्कारदिदं बेर्प्पडिसल्पट्ट वस्तुविन विशेषः एकांतमदु व्यंग्यमक्कुमदक्के व्यंजकः व्यंजकमप्पुदु। नयः नयमेंदु पेळल्पट्टुदु।

"नयोपनयैकांतानां त्रिकालानां समुच्चयः।
अविभ्राड्भावसंबंधो द्रव्यमेकमनेकधा॥" [आप्तमी० १०७]

नय अपने द्वारा गृहीत एकान्तको स्यात् शब्द पूर्वक प्रकाशित करनेसे मिथ्या नहीं है किन्तु सुनय है। क्योंकि निरपेक्षनय मिथ्या होता है। स्यात् सापेक्षनय सच्चा होता है। कहा है—स्यात्कार सत्यका चिह्न है। स्यात् निरपेक्षनय मिथ्या है, दुर्नय है; क्योंकि वह अनेकान्तका तिरस्कार करता है। अनेकान्तका तिरस्कार करनेपर तो अनेकान्त नहीं, एकान्त ही रहता है और वह अवस्तु है।

स्वामी समन्तभद्रने कहा है—वस्तु स्यात् अनेकान्तात्मक है स्यात् एकान्तात्मक है इस प्रकार प्रमाण और नयरूप साधनसे साध्य अनेकान्तात्मक वस्तुकी सिद्धि होनेमें कोई विरोध नहीं है। वस्तु स्यात् अनेकान्तरूप है इस प्रकार स्यात्कारसे प्रविभक्त वस्तुके विशेषका व्यंजक नय है। और भी कहा है—

न मिथ्या स्यात् सुनयः स्यात् हि यस्मात्कारणात्तन्निरपेक्षो मिथ्यः। किंवत् ? स्याच्छब्दसापेक्षनिरपेक्षशास्त्रवत् 'स्यात्कारः सत्यलांछनः' इति वचनात्। मिथ्य इत्यभ्राद्याकृतिगणत्वान्मत्वर्थीयाऽप्रत्ययांतः स्याच्छब्दनिरपेक्षः कथं दुर्नयः स्यात् ? अनेकांतक्षेपात्। तत्क्षेपाच्चानेकांतो न, एकांत एव स्यात् तथा सति अवस्तु, तन्न जिनमतं। श्रीसमंतभद्रस्वामिनोक्तं—

सधर्मणैव साध्यस्य साधर्म्यादविरोधतः। स्यात्कारप्रविभक्तार्थविशेषव्यंजको नयः॥१॥

स्यादनेकांतं वस्तु स्यादेकांतं वस्तु इति सधर्मणैव समानधर्मणैव प्रमाणनयसाधनेन साध्यस्य अनेकांतस्य साधर्म्यादविरोधतः सदृशधर्मत्वादविरोधात् स्यादनेकांतं वस्त्विति स्यात्कारप्रविभक्तार्थस्य वस्तुनो विशेष एकांतः व्यंग्यः, तस्य व्यंजको नयः। तथा चोक्तं—

नयोपनयैकांतानां त्रिकालानां समुच्चयः। अविभ्राड्भावसंबंधो द्रव्यमेकमनेकधा॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिकालानां मूरुं कालंगळ नयोपनयैकांतानां नयाश्च उपनयाश्च नयानामंशा उपनयाः। नयोपनयास्त एवैकांतास्तेषां नयोपनयैकांतानां निश्चयव्यवहारनयविषयंगळप्पेकांतंगळ समुच्चयः समुदयं अविभ्राड्भावसंबंधः अनश्वरवस्तुसंबंधमक्कुमदु कारणदिदं द्रव्यमेकमनेकधा द्रव्यमोंदुमनेकप्रकारमक्कुं।

"मिथ्यासमूहो मिथ्या चेन्न मिथ्यैकांततास्ति न।
अनपेक्षा नया मिथ्या सापेक्षा वस्तुतोऽर्थकृत्॥ —[आप्तमी० १०८]

नयोपनय विषय मनितु मेकान्त मेयक्कुमप्पुदरिना त्रिकालगोचरंगळप्प एकांतंगळ समुच्चयं मिथ्यासमूहमागलेवेळकु-। मा मिथ्यासमूहं अमिथ्येयक्कुमप्पोडे नयविषयत्वदिदमदल्लमुं सत्यमक्कुमप्पोडे मिथ्यानयैकांता नास्ति मिथ्यानयैकांतत्व में बुदिल्लदे पोकुमेंदितु न न वाच्यं नुडियल्वेडेकेंदोडे अनपेक्षा नया मिथ्या स्यात्कारानपेक्षमप्प नयंगळनितुं मिथ्यानयंगळप्पुवु। स्यात्कारसापेक्षमप्प नयंगळनितुं वस्तुतोऽर्थकृत् वस्तुवृत्तियिदमिष्टप्रयोजनमं माळकुं।

यितु पेळल्पट्ट सामान्यनयं निश्चयव्यवहारनयभेददिदं द्विविधमक्कु-। मा निश्चयनयं शुद्धाशुद्धभेददिदं द्विविधमक्कुं। व्यवहारनयं सद्भूतासद्भूत भेददिदं द्विविधमक्कुमल्लि सद्भूतनयं शुद्धमुमशुद्धमुं मेणनुपचरितसमुद्भूतमुमुपचरितसमुद्भूतमुमेंदु द्विविधमक्कु-। मनुपचरितासद्भूतमुमुपचरितासद्भूतमुमेंदसद्भूतमुं द्विविधमक्कु मितु षण्नयंगळप्पुवेंतेंदोडे :—

त्रिकालगोचर नयैकान्त और उपनयैकान्त अर्थात् निश्चय और व्यवहारनयके विषयभूत अर्थोंका समुदाय, जो सदा अविनाशी अभिन्न सम्बन्धरूप है वह द्रव्य है और वह एक तथा अनेकरूप है।

शायद कोई कहे कि नय और उपनय तो एकान्त—एकधर्मको विषय करते हैं अतः उनका समुदाय भी मिथ्या एकान्तोंका समूह होनेसे मिथ्या है। किन्तु ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि स्यात् पदसे निरपेक्षनय मिथ्या होते हैं और स्यात् सापेक्ष नय वस्तुरूप होनेसे इष्टसाधक होते हैं।

यह सामान्य नय निश्चय और व्यवहारके भेदसे दो प्रकारका है। निश्चयनय भी शुद्ध-अशुद्धके भेदसे दो प्रकार है तथा व्यवहारनय भी सद्भूत और असद्भूतके भेदसे दो प्रकारका है। उनमें-से सद्भूत व्यवहारनय भी शुद्ध-अशुद्धके भेदसे अथवा उपचरित-अनुपचरितके भेदसे दो प्रकारका है। असद्भूतनय भी अनुपचरित और उपचरितके भेदसे

त्रिकालानां त्रिकालगोचराणां नयोपनयैकांतानां नयाश्च तदंशाः—उपनयाश्च नयोपनयाः त एव एकांताः निश्चयव्यवहारनयविषयधर्माः तेषां समुच्चयः समुदायः अविभ्राट् भावसंबंधः अनश्वरवस्तुसंबंधः स्यात् ततः कारणात् द्रव्यमेकमनेकधा अनेकप्रकारं स्यात्।

मिथ्यासमूहो मिथ्या चेन्न मिथ्यैकांततास्ति न। अनपेक्षो नयो मिथ्या सापेक्षो वस्तुतोऽर्थकृत्॥१॥

नयोपनयानामेकांतविषयत्वात् तदेकांतानां समुच्चयैः मिथ्यासमूहः स मिथ्यैव चेत्तन्न, नयविषयत्वेन सत्यत्वात् तदा मिथ्यानयैकांततास्ति तदपि न स्यात्कारानपेक्षो नयो मिथ्या सापेक्षस्तु वस्तुतः वस्तुवृत्त्या अर्थकृदिष्टसाधकः। सोऽयं सामान्यनयः निश्चयव्यवहारभेदाद् द्वेधा। तत्र निश्चयनयोऽपि शुद्धाशुद्धभेदाद् द्वेधा व्यवहारनयोऽपि सद्भूतासद्भूतभेदाद् द्वेधा। तत्र सद्भूतनयोऽपि शुद्धाशुद्धभेदादनुपचरितोपचरितभेदाद्वा द्वेधा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्त्राद्या वस्तुनो भिन्ना येन निश्चयसिद्धये ।
साध्यंते व्यवहारोऽसौ निश्चयस्तदभेददृक् ॥"—[अन. ध. १।१०२।]

वस्तुविन कर्त्रादिधर्म्मंगळु वस्तुविनत्तणिदं भिन्नंगळागि साधिसल्पडुवुवेकें दोडे निश्चयसिद्धिनिमित्तवागि येन आउदों दरिंदमदु व्यवहारनयमें बुदक्कुं । निश्चयनयमें बुदा कर्त्रादिधर्म्मंगळगें वस्तुविनोळभेदमं काण्गु ॥

"सर्व्वेऽपि शुद्धबुद्धैक-स्वभावाश्चेतना इति ।
शुद्धोऽशुद्धश्च रागाद्या एवात्मेत्यस्ति निश्चयः ॥"—[अन. ध. १।१०३।]

सर्व्वेऽपि चेतनाः येल्ला जीवंगळुं शक्तियोळं व्यक्तियोळं शुद्धबुद्धैकस्वभावाः शुद्धंगळं बुद्धंगळुमें बेकस्वभावंगळेयप्पुवु । इति यितें दु शुद्धः शुद्धनिश्चयनयमक्कुं । तु मत्ते रागाद्या एवात्मेति रागादिगळे आत्मनेंदितु अशुद्धः अशुद्धनिश्चयनयमक्कुं ॥

सद्भूतेतरभेदाद्व्यवहारः स्यात् द्विधा भिदुपचारः ।
गुणगुणिनोरभिधायामपि सद्भूतो विपर्य्ययादितरः ॥—[अन. ध. १।१०४]

सद्भूतेतरभेदात् सद्भूतमुमसद्भूतमुमें ब भेददत्तणिदं व्यवहारः स्याद्द्विधा व्यवहारनयमेरडु प्रकारमक्कुमल्लि गुणगुणिनोरभिधायामपि गुणगुणिगळें अभेदमुंटागुत्तं विरलु भिदुपचारः भेदमनुपचरिसुउदु सद्भूतः सद्भूतव्यवहारनयमक्कुं । विपर्य्ययात् गुणमुं गुणियुमल्लदल्लि भेदमुंटागुत्तं विरलु अभेदमनुपचरिसुवुदु । इतरः असद्भूतव्यवहारनयमक्कुं ॥

दो प्रकारका है । इस प्रकार छह नय हैं । कहा है—

जिसके द्वारा निश्चयकी सिद्धिके लिए कर्ता आदि धर्म वस्तुसे भिन्न साधे जाते हैं वह व्यवहारनय है । और जो वस्तुमें कर्ता आदिके अभेदको देखता है वह निश्चयनय है ।

सभी चेतन प्राणी शक्ति और व्यक्ति रूपसे (?) एक शुद्ध-बुद्ध स्वभाववाले हैं, यह शुद्ध निश्चयनयका उदाहरण है।, तथा आत्मा रागादिरूप है यह अशुद्ध निश्चयनयका उदाहरण है ।

सद्भूत और असद्भूतके भेदसे व्यवहारनयके भी दो भेद हैं । गुण और गुणीमें

असद्भूतोऽप्यनुपचरितोपचरितभेदाद् द्वेधा । इति षण्णयाः । तद्यथा—

कर्त्राद्या वस्तुनो भिन्ना येन निश्चयसिद्धये । साध्यते व्यवहारोऽसौ निश्चयस्तदभेददृक् ॥१॥

कर्त्रादयो धर्मा वस्तुनः सकाशाद्भिन्नाः साध्यंते । किमर्थं ? निश्चयसिद्धये येनासौ व्यवहारनयः स्यात् । निश्चयनयस्तु तेषां कर्त्रादिधर्माणां वस्तुन्यभेददर्शनं ।

सर्वेऽपि शुद्धबुद्धैकस्वभावाश्चेतना इति । शुद्धोऽशुद्धश्च रागाद्या एवात्मेत्यस्ति निश्चयः ॥

सर्वेऽपि चेतनाः प्राणिनः शक्तितो व्यक्तितश्च शुद्धबुद्धैकस्वभावाः इति शुद्धनिश्चयनयः स्यात् । तु—पुनः रागाद्या एवात्मेत्यशुद्धनिश्चयनयः स्यात् ।

सद्भूतेतरभेदाद् व्यवहारः स्याद् द्विधा भिदुपचारः ।
गुणगुणिनोरभिदायामपि सद्भूतो विपर्ययादितरः ॥१॥

सद्भूतःशुद्धेतरभेदात् द्वेधा तु चेतनस्य गुणः।

केवलबोधादय इति शुद्धोनुपचरितसंज्ञो ऽसौ ॥—[अन. ध. १।१०५।]

तु मत्तमा सद्भूतः सद्भूतव्यवहारनयं शुद्धेतर भेदात् शुद्धाशुद्धभेददत्तणिदं द्वेधा द्विप्रकारमक्कुमल्लि चेतनस्य गुणाः चेतनगुणंगळु केवलबोधादयः इति केवलज्ञानादिगळें दितु शुद्धः शुद्धसद्भूतव्यवहारनयमक्कुं। असौ अदु अनुपचरितसंज्ञः अनुपचरितमें ब पेसरनुळ्ळ सद्भूतव्यवहारनयमक्कुं ॥

मत्यादिविभावगुणाश्चित इत्युपचरितकः स चाशुद्धः।
देहो मदीय इत्यनुपचरितसंज्ञस्त्वसद्भूतः ॥—[अन. ध. १।१०६।]

मत्यादिविभावगुणाः मतिज्ञानादिगळु विभावगुणंगळप्पुववु। चित इति जीवन गुणंगळें दितु उपचरितकः उपचरितसद्भूतव्यवहारनयमक्कुं स चाशुद्धः अवुवुमशुद्ध सद्भूतव्यवहारनयमुमें दु मक्कुं। तु मत्तं देहो मदीय इति देहमें नदें दितु अनुपचरितसंज्ञः अनुपचरितमें ब संज्ञेयनुळ्ळ असद्भूतः असद्भूतव्यवहारनयमक्कुं ॥

देशो मदीय इत्युपचरितसमाह्वः स एव चेत्युक्तं।

नयचक्रमूलभूतं नयषट्कं प्रवचनपटिष्ठैः ॥—[अन. ध. १।१०७।]

मदीयो देश इति येन देशमें दितु उपचरितसमाख्यः उपचरितमें ब पेसरनुळ्ळुवु। स एव

अभेद होनेपर भी भेदका उपचार सद्भूत व्यवहारनय है। और भेदमें अभेदका उपचार असद्भूत व्यवहार नय है।

सद्भूत व्यवहारनय शुद्ध और अशुद्धके भेदसे दो प्रकार है। चेतनके गुण केवलज्ञानादि हैं यह शुद्ध सद्भूत व्यवहारनय है। इसीको अनुपचरित सद्भूत व्यवहार नय कहते हैं।

मतिश्रुत आदि वैभाविक गुण जीवके हैं यह उपचरित नामक अशुद्ध सद्भूत व्यवहारनय है। 'शरीर मेरा है' यह अनुपरित नामक असद्भूत व्यवहारनय है। 'यह देश मेरा है' यह उपचरित असद्भूत व्यवहारनय है। इस प्रकार ये छह नय प्रवचनोपदेष्टा गणधर आदिने नयचक्रशास्त्रके मूलभूत कहे हैं।

सद्भूतासद्भूतभेदाद् व्यवहारनयो द्विधा तत्र गुणगुणिनोरभेदे सत्यपि भेदोपचारः स सद्भूतव्यवहारनयः। भेदे चाभेदोपचारः स असद्भूतव्यवहारनयः स्यात्।

सद्भूतः शुद्धेतरभेदाद् द्वेधा तु चेतनस्य गुणाः। केवलबोधादय इति शुद्धोऽनुपचरितसंज्ञोऽसौ ॥१॥

तु—पुनः स सद्भूतव्यवहारनयः शुद्धाशुद्धभेदात् द्वेधा ॥ तत्र चेतनस्य गुणाः केवलज्ञानादयः इति शुद्धसद्भूतव्यवहारनयः। असौ पुनः अनुपचरितनामा स्यात्।

मत्यादिविभावगुणाश्चित इत्युपचरितकः स चाशुद्धः।
देहो मदीय इत्यनुपचरितसंज्ञस्त्वसद्भूतः ॥१॥

मतिश्रुतादिविभावगुणा जीवस्येत्युपचरितनामा स चाशुद्धसद्भूतव्यवहारनयः स्यात्। तु—पुनः देहो मदीय इत्यनुपचरितनामा असद्भूतव्यवहारनयः स्यात्।

देशो मदीय इत्युपचरितसमाह्वः स एव चेत्युक्तं। नयचक्रमूलभूतं नयषट्कं प्रवचनपटिष्ठैः ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चेति आ असद्भूतव्यवहारनयमक्कुमेंदितु नयचक्रमूलभूतं नयचक्रशास्त्रक्क कारणमप्प नयषट्कं षण्नयंगळ् प्रवचनपटिष्ठैः परमागमपटुगळप्प गणधरादिमुनिमुख्यरिंदं उक्तं पेळल्पट्टुदु ॥

व्यवहारपराचीनो निश्चयं यश्चिकीर्षति ।
बीजादीनां विना मूढः स सस्यानि सिसृक्षति ॥—[अन. ध. १।१००]

व्यवहारनयक्के पराङ्मुखनप्प मूढनावनानुमोव्वंनु निश्चयमने माडलिच्छयिसुगु मातं बीजादिसामग्रियिल्लदे ससिगळं पुट्टिसलिच्छयिसुगुं ॥

व्यवहारमभूतार्थं प्रायो भूतार्थविमुखजनमोहात् ।
केवलमुपयुंजानो व्यंजनवद्भ्रश्यति स्वार्थात् ॥—[अन. ध. १।९९]

व्यवहारनयविषयमविद्यमानार्थमदं भूतार्थविमुखजनंगळ ज्ञानदत्तणिदं निश्चयव्यतिरिक्त-व्यवहारमों दने उपयोगिसुवनें बातनुपदंशगळने मेल्दु स्वार्थान्नादिगळत्तणिदं किडुगुं ॥

भूतार्थे रज्जुवत्स्वैरं विहर्तुं वंशवन्मुहुः ।
श्रेयो धीरैरभूतार्थो हेयस्तद्विहृतीश्वरैः ॥—[अन. ध. १।१०१]

भूतार्थे निश्चयनयविषयमप्पर्थदोळु रज्जुवत् मिळियोळे तंते स्वैरं मुहुर्विहर्तुं तंनिच्छेयि मरळ मरळि विहरिसल्वेडि वंशवत् बिदिरनें तु पिडिदोडे श्रेयः ओळितक्कुं व्यवहारनयमोळितक्कुं । धीरैस्तद्विहृतीश्वरैर्हेयः भूतार्थदोळु स्वैरविहारपरिणतरप्प धीररुगळिंदमा व्यवहारविषयमप्प अभूतार्थं हेयमक्कुं । त्याज्यमक्कुमेंबुदर्थं । मुळिदवगें ल्लं व्यवहारनयं हेयमल्लें बुदर्थं ॥

जो मूढ व्यवहारसे विमुख होकर निश्चयको प्राप्त करना चाहता है वह बीज आदि सामग्रीके बिना धान्य उत्पन्न करना चाहता है। व्यवहार अभूतार्थ है। जो भूतार्थसे विमुख जनोंके मोहवश केवल उसीका उपयोग करता है वह अन्नके बिना केवल दाल-शाक आदि व्यंजनोंका उपयोग करनेवाले पुरुषकी तरह स्वार्थ-मोक्षसे भ्रष्ट होता है। जैसे नट रस्सीपर स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करनेके लिए बार-बार बांसका सहारा लेता है और उसमें दक्ष हो जानेपर उसे छोड़ देता है, उसी प्रकार धीर मुमुक्षुको निश्चयनयमें निरालम्बन-पूर्वक विहार करनेके लिए बार-बार व्यवहारनयका आलम्बन लेना चाहिए और उसमें समर्थ हो जानेपर उसे छोड़ देना चाहिए।]

मदीयो देश इत्युपचरितनामा असद्भूतव्यवहारनयः स्यात् । इत्येवं नयचक्रशास्त्रस्य मूलभूत नयषट्कं प्रवचमपटिष्ठैर्गणधरादिभिरुक्तं ।

व्यवहारपराचीनो निश्चयं यश्चिकीर्षति । बीजादिना विना मूढः स सस्यानि सिसृक्षति ॥१॥

व्यवहारे पराङ्मुखो यो मूढो निश्चयमुत्पादयितुमिच्छति स बीजादिसामग्रीं विना सस्यान्युत्पादयितुमिच्छति ।

व्यवहारमभूतार्थं प्रायो भूतार्थविमुखजनमोहात् । केवलमुपयुंजानो व्यंजनवद् भ्रश्यति स्वार्थात् ॥१॥

व्यवहारनयं—अविद्यमानेष्टविषयं निश्चयनयविमुखजनजनिताज्ञानान्निश्चयनिरपेक्षं व्यवहारमेवैकमुपयुंजानो विवक्षितार्थात्प्रच्यवते केवलं शालीनमुपयुंजानोऽन्नादेर्यथा ।

भूतार्थे रज्जुवत्स्वैरं विहर्तुं वंशवन्मुहुः । श्रेयोधीरैरभूतार्थो हेयस्तद्विहृतीश्वरैः ॥१॥

निश्चयनयविषये स्वैरं मुहुर्विहर्तुं धीरैः व्यवहारनयः श्रेयः रज्ज्वां यथा चारणैर्वेणुर्यथा भूतार्थे स्वैरविहारपरिणतैस्तु हेयः न शेषैरित्यर्थः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मत्तमनेकांतात्मकमप्प वस्तुविनोळविरोर्धाददं हेत्वर्प्पणेयिदं साध्यविशेषयाथात्म्यप्रापणप्रवणप्रयोगं नयमें दितु सामान्यलक्षणमनुळ्ळ नयं नैगमादिभेददिदं सप्तविधमक्कुमल्लि द्रव्यं सामान्यमुत्सर्गमक्कुं । तद्विषयं द्रव्यार्त्थिकनयमक्कुं । पर्य्यायं विशेषमें बुदत्र्थमवुं व्यावृत्तियें बुवत्थं । तद्विषयं पर्य्यायार्त्थिकनयमक्कु-। मा येरडर भेदंगळु नैगमादिनयंगळक्कुमवक्के विशेषलक्षणं पेळल्पडुगुमें तें दोडभिनिर्वृतात्थं संकल्पमात्रग्राही नैगमः । अनिष्पन्नात्थंसंकल्पग्राहि नैगमनयमदें तेंने कैयोळु कोडलियं पिडिदु पोप पुरुषनोव्वं कंडु बेसगोळ्गु 'मेनुनिमित्तं पोपें' यें दिदु बेसगों डोडातं नां बळ्ळमं तरल्पोपेनें गु मागळा बळ्ळमनिष्पन्नमक्कुमादोडमदर निष्पत्तिनिमित्तं संकल्पमात्र बळ्ळद व्यवहरणमक्कुमंते कट्टिगेयुं नीरुमं कों डु बर्प्पंननोव्वं बेसगोळ्गु मेनं माडिदपे नोनें दितु बेसगों डोडातं पेळ्गुमोगरमनट्टपेनें बितागळा ओगरद पर्य्यायमनिष्पन्नमादोडं तन्निमित्तमुद्युक्तनक्कुमी प्रकारदिदं लोकव्यवहारममनिष्पन्नात्थं संकल्पमात्रविषयं नैगमनयगोचरमक्कुं ॥ स्वजात्यविरोर्धाददं मेकत्वमनाश्रयिसि पर्य्यायंगळनु आक्रांत भेदवर्त्तादं । समस्तग्रहणात्संग्रहः । एंदितु संग्रहनयमक्कुं । सत् द्रव्यं घट इति यें दितु संग्रहनयमक्कुं । मल्लि सत्

अनेकान्तात्मक वस्तुमें विरोधके बिना हेतुकी अपेक्षासे साध्यविशेषके यथार्थ स्वरूपको प्राप्त करानेमें समर्थ 'प्रयोगको नय कहते हैं। यह नय सामान्यका लक्षण है। नैगम आदिके भेदसे उसके सात भेद हैं। द्रव्य अर्थात् सामान्य या उत्सर्गको विषय करनेवाला द्रव्यार्थिक नय है और पर्याय अर्थात् विशेष या व्यावृत्तिको विषय करनेवाला पर्यायार्थिकनय है। उन दोनोंके भेद नैगम आदि हैं। उनका लक्षण कहते हैं—

अनिष्पन्न अर्थके संकल्प मात्रको ग्रहण करनेवाला नैगमनय है। जैसे हाथमें कुठार लेकर जाते हुएसे किसीने पूछा—किस लिए जाते हो? वह बोला—रस्सी लाने जाता हूँ। उस समय रस्सी बनी नहीं है फिर भी रस्सी बनानेके संकल्प मात्रमें रस्सीका व्यवहार करता है। इसी प्रकार पानी लेकर आते हुए पुरुषसे किसीने पूछा—क्या करते हो? वह बोला—भात पकाता हूँ। उस समय भात तैयार नहीं हुई है। फिर भी उसीके लिए उसका प्रयत्न है। इस प्रकार अनिष्पन्न अर्थके संकल्प मात्रको ग्रहण करनेवाला लोक-व्यवहार नैगम नयका विषय है। अपनी जातिका अविरोधपूर्वक सब भेदसहित पर्यायोंमें एकत्व लाकर सबको ग्रहण करनेवाला संग्रहनय है। इसके तीन उदाहरण हैं—सत्, द्रव्य और घट। 'सत्' कहनेपर 'सत्' इस प्रकार वचन और विज्ञानकी प्रवृत्तिरूप लिंगसे अनुमित सत्ताके आधारभूत सब

पुनः—अनेकांतात्मके वस्तुन्यविरोधेन हेत्वर्पणया साध्यविशेषयाथात्म्यप्रापणप्रवणप्रयोगो नय इति सामान्यलक्षणम्। स च नैगमादिभेदात्सप्तधा। तत्र द्रव्यं सामान्यमुत्सर्गः तद्विषयः द्रव्यार्थिकः। पर्यायः विशेषः व्यावृत्तिरित्यर्थः। तद्विषयः पर्यायार्थिकः। तयोर्भेदा नैगमादयः तेषां लक्षणमुच्यते। तद्यथा—अभिनिर्वृत्तार्थसंकल्पमात्रग्राही नैगमः, यथा हस्ते कुठारं गृहीत्वा गच्छन् केनचिद् दृष्ट्वा पृष्टः—'किमर्थं यासि? रज्जुमानेतुं' तदा रज्जुरनिष्पन्ना तथापि रज्जुनिष्पत्तिनिमित्तं संकल्पमात्ररज्जोर्व्यवहरणम्। तथा एवं नीरं च गृहीत्वा समागच्छन् कश्चित्पृष्टः 'किं करोषि?' ओदनं पचामीत्युक्तवांस्तदौदनपर्यायोऽनिष्पन्नस्तथापि तन्निमित्तमुद्युक्तो भवेत्। एवं लोकस्य व्यवहारः अनिष्पन्नार्थसंकल्पमात्रविषयो नैगमनयगोचरः स्यात्।

स्वजात्यविरोधेनैकत्वमाश्रित्य पर्यायाक्रांतभेदात्समस्तग्रहणात्संग्रहः। सत् द्रव्यं घटः इति। अत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येंदितु पेळल्पडुत्तिरलु सत्तेंब वाग्विज्ञान अनुप्रवृत्ति लिंगानुमितसत्ताधार भूतंगळ विशेषरहितदिदमेल्लवर संग्रहमक्कुमंते द्रव्यमेंदितु नुडियल्पडुत्तिरलु द्रवति गच्छति तांस्तान्पर्य्यायानिति द्रव्यमेंदितुपलक्षित जीवाजीवतद्भेदप्रभेदंगळ संग्रहमक्कु मंते घटयेंदितु नुडियल्पडुत्तिरलु घटबुद्धि अभिधानानुगमलिंगानुमितसकलात्थसंग्रहमक्कुमी प्रकारमन्यमुं संग्रहनयविषयमक्कुं ॥

संग्रहनयदोळिक्षकल्पट्टत्थंगळ्गे विधिपूर्व्वकमवहरणं व्यवहारमेंदितु भेदग्रहणं व्यवहारनयमक्कुं। विधियें बुदाउदें दोडे आउदोंदु संग्रहनयगृहीतात्थं तदनुपूर्व्वंदिदमे व्यवहारं प्रवर्त्तिसुगुमेंदितु विधियें बुदक्कुं अदें तें दोडे पेळल्पडुगुं। सर्व्वसंग्रहदिदमाउदोंदु सत्संग्रहिसल्पट्टुदददुमनपेक्षितविशेषं संव्यवहारक्के योग्य मल्तेंदु यत्सत्तद्द्रव्यं गुणो वा येंदितु व्यवहारनयमनाश्रयिसल्पडुगुं। संग्रह नयविषयद्रव्यदिदमुं संग्रहाक्षिप्तजीवाजीव विशेषानपेक्षमप्पुदरिदं संव्यवहारं शक्यमल्तेंदु यद्द्रव्यं तज्जीवमजीवद्रव्यमेंदितु व्यवहारनयमनाश्रयिसल्पडुगुं। मत्तमा जीवाजीवंगळेरडुं संग्रहाक्षिप्तंगळादोडं संव्यवहार योग्यंगळल्तेंदु प्रत्येकं देवनारकादियुं घटादियुं व्यवहारनयदिदमाश्रयिसल्पडुगु-। मिती नयमन्नेवरेगं वर्त्तिसुगुमेन्नेवरं पुनर्व्विभागमिल्लं ॥

पदार्थोंका ग्रहण होता है। तथा द्रव्य कहनेपर—जो उन-उन पर्यायोंको द्रवति–प्राप्त करता है वह द्रव्य है अतः उससे उपलक्षित जीव-अजीव और उसके भेद-प्रभेदोंका ग्रहण होता है। तथा घट कहनेपर घट बुद्धि और घट शब्दके अनुगम लिंगसे अनुमित सब पदार्थोंका ग्रहण होता है। इसी प्रकार अन्य भी संग्रहनयका विषय होता है।

संग्रहनयके द्वारा संगृहीत पदार्थोंका विधिपूर्वक भेद ग्रहण करना व्यवहारनय है। संग्रहनयमें जिस क्रमसे ग्रहण किया गया हो उसी क्रमसे भेद करना यह विधि है। जैसे सर्व संग्रहके द्वारा जिस सत्का ग्रहण किया है जबतक उसके भेद न किये जायें वह व्यवहारके योग्य नहीं होता है। अतः जो सत् है वह द्रव्य या गुण है ऐसा व्यवहार नयका आश्रय लिया जाता है। संग्रहनयके विषय द्रव्यसे भी जीव-अजीव भेदोंकी अपेक्षा किये बिना व्यवहार शक्य नहीं हैं, अतः जो द्रव्य है वह जीव-अजीवके भेदसे दो प्रकारका है ऐसा व्यवहारनयका आश्रय लेना चाहिए। संग्रहसे आक्षिप्त जीव और अजीवसे भी व्यवहार नहीं चलता। प्रत्येकके भेद देव-नारकी आदि और घट-पट आदिका आश्रय लेना होता है। इस प्रकार यह नय तबतक चलता है जबतक भेदकी गुंजाइश नहीं रहती।

सदित्युक्ते सत्तेति वाग्विज्ञानानुप्रवृत्तिलिंगानुमितसत्ताधारभूतानामविशेषेण सर्वेषां संग्रहः स्यात्। तथा द्रव्यमित्युक्ते द्रवति गच्छति तांस्तान् पर्यायानिति द्रव्यमित्युपलक्षितजीवाजीवतद्भेदप्रभेदानां ग्रहणं स्यात्। तथा घट इत्युक्ते घटबुद्धयभिधानानुगमलिंगानुमितसकलार्थसंग्रहः स्यात्। एवमन्योऽपि संग्रहनयविषयो भवेत्।

संग्रहे निक्षिप्तार्थानां विधिपूर्वकमवहरणं भेदग्रहणं व्यवहारः। यः संग्रहनयगृहीतार्थस्तदनुपूर्वेणैव व्यवहारः प्रवर्तते इति विधिः। स कथं? उच्यते—सर्वसंग्रहेण यत्सत् संगृहीतं तदनपेक्षितविशेषाणां संव्यवहारायोग्यत्वात् यत्सत् तद् द्रव्यं गुणो वेति व्यवहारनय आश्रेयः। संग्रहनयविषयद्रव्येणापि संग्रहाक्षिप्तजीवाजीवविशेषानपेक्षत्वेन संव्यवहाराशक्यत्वात् यद् द्रव्यं तज्जीवोऽजीव इति व्यवहारनय आश्रेयः। पुनः तौ जीवाजीवौ द्वावपि संग्रहाक्षिप्तौ तदापि संव्यवहारायोग्यौ इति प्रत्येकं देवनारकादिर्घटादिर्व्यवहारनयेनाश्रेयौ। इत्ययं नयस्तावद्वर्तते यावत्पुनर्विभागो न स्यात्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋजु प्रगुणं सूत्रयति तंत्रयति स्वीकरोतीति ऋजुसूत्रः पूर्व्वापरंगळप्प त्रिकालविषयंगळं त्यजिसि वर्त्तमान विषयंगळं स्वीकरिसुगु मतीतानागतंगळ्गे विनष्टानुत्पन्न मागुत्तं विरलु संव्यवहाराभाववत्तणिनदुवुं वर्त्तमानसमयमात्रमक्कुं । तद्विषयपर्य्यायमात्र ग्राहियक्कुमी ऋजुसूत्र-नयमंतावोडे संव्यवहारलोपप्रसंगमक्कु में देनल्वेकें दोडे नयक्के विषयमात्रप्रदर्शनं माडल्पट्टु दावुदों दु सर्व्वनयसमूह साध्यमदु लोकव्यवहारमक्कुमप्पुदरिंदं । लिंगसंख्या साधनादि[1] व्यभिचार निर्व्वृत्तिप्रधानं शब्दनयमक्कुं । अल्लि पुष्यस्तारका नक्षत्रमें तिवु लिंगव्यभिचारमें बुदु । जलमापो वर्षाः एंदितिवु संख्याव्यभिचारमें बुदु । सेना वनमध्यास्ते यें दितिवु साधनव्यभिचारमें बुवु कारक-व्यभिचारमक्कुं । आदिशब्ददिदं एहि मन्ये रथेन यास्यसि न हि यास्यसि यातस्ते पिता एंबुदु पुरुष-व्यभिचारमक्कुं । विश्वदृश्वा[2]ऽस्यां पुत्रो जनिता एंबिदु कालव्यभिचारमक्कुं । संतिष्ठते प्रतिष्ठते विरमति उपरमति एंबिदुपग्रहव्यभिचारमक्कुमिती प्रकार व्यवहारमनी शब्दनयमंन्याय्यमें दु-बगेगुमेकें दोडे अन्यार्त्थंक्कन्यार्त्थदोडने संबंधाभावमप्पुदरिंदं । यितादोडीनयं लोकसमयविरोध-

ऋजु अर्थात् सीधे सरलको जो स्वीकार करता है वह ऋजुसूत्रनय है । यह नय भूत और भाविको छोड़कर वर्तमान विषयोंको ही ग्रहण करता है, क्योंकि अतीत तो नष्ट हो गये और जो भावि है वे उत्पन्न नहीं हुए अतः उनसे व्यवहार नहीं चलता । इस तरह वर्तमान समय मात्रको ग्रहण करनेवाला ऋजुसूत्रनय है । ऐसा होनेसे व्यवहारका लोप हो जायेगा ऐसा न कहना । यहाँ तो नयका विषय मात्र दिखलाते हैं, लोक व्यवहार तो सब नयोंके समूह द्वारा ही साधा जाता है । लिंग, संख्या साधन आदिके व्यभिचारकी निवृत्ति करनेमें तत्पर शब्दनय है । पुष्य, तारका, नक्षत्र ये शब्द भिन्न लिंगवाले हैं । इनका समान रूपसे प्रयोग लिंग व्यभिचार है । 'जलं आपो वर्षाः' ये तीनों शब्द भिन्न वचनवाले हैं इनका समान रूपसे प्रयोग संख्या व्यभिचार है । सेना वनमें है, यह कारक व्यभिचार है । आदि शब्दसे उत्तम पुरुषके स्थानमें मध्यम पुरुषका और मध्यमके स्थानमें उत्तम पुरुषका प्रयोग पुरुष व्यभिचार है । इसका पुत्र विश्वद्रष्टा—जिसने विश्वको देख लिया है—होगा यह काल व्यभिचार है । सतिष्ठते-प्रतिष्ठते, विरमति-उपरमतिका संस्कृत प्रयोग उपग्रह व्यभिचार है । इस प्रकारके व्यवहारको शब्दनय उचित नहीं मानता । क्योंकि इसके मतसे अन्य अर्थका अन्य अर्थके साथ विरोध है ।

ऋजु प्रगुणं सूत्रयति तंत्रयति स्वीकरोतीति ऋजुसूत्रः । पूर्वापरान् त्रिकालविषयान् त्यक्त्वा वर्तमान-विषयानेव स्वीकरोति । अतीतानागतानां विनष्टानुत्पन्नत्वेन संव्यवहाराभावात् । सोऽपि वर्तमानः समयमात्रः तद्विषयपर्यायमात्रग्राही स्यादयं ऋजुसूत्रनयः । तथा सति संव्यवहारलोपप्रसंग इति न वाच्यं नयस्य विषय-मात्रप्रदर्शकत्वात् लोकव्यवहारस्य च सर्वनयसमूहसाध्यत्वात् ।

लिंगसंख्यासाधनादिव्यभिचारनिवृत्तिप्रधानः शब्दनयः । तत्र पुष्यस्तारका नक्षत्रमिति लिंगव्यभिचारः । जलमापो वर्षाः इति संख्याव्यभिचारः । सेना वनमध्यास्ते इति साधनव्यभिचारः—कारकव्यभिचारः । आदिशब्दात् एहि मन्ये रथेन यास्यसि यातस्ते पिता इति पुरुषव्यभिचारः । विश्वदृश्वास्यां पुत्रो जनिता इति

---

१. कारकादि—कारक । २. वनिप्—प्रत्यय—उपसर्ग—लौकिकशास्त्रविरोधमक्कुं । इदंनात्—विश्वव्याप्ति—सामर्थ्यात्—ग्रामादिभेदनात् ।

मक्कुमें वें बोडे विरोधमादोडमक्कुं। तत्वविचारमिंतुटेयक्कुं। न भैषज्यमातुरेच्छानुवर्त्तियल्ता-दोडं प्रयोगिसल्पडुगुं ॥ नानात्थंसमभिरोहणात्समभिरूढः । आउदोंदु कारणदिदं नानात्थंगळं परित्यजिसि ओंदत्थंमनभिमुखत्वदिदं रूढमदु समभिरूढमक्कुं। गौः एंदितो शब्दं गवादिगळोळु वर्त्तमानं पशुविनोळु रूढमक्कुं। अथवा अत्थंज्ञप्त्यत्थंमागि शब्दप्रयोगमक्कुमल्लि एकात्थंक्केक-शब्ददिंदं ज्ञातात्थंत्ववत्तणिदं पर्य्यायशब्दप्रयोगमनत्थंकमक्कुं। शब्दभेदमुंटक्कुमप्पोडत्थंभेदमुंटप्पुदु। मा यत्थं भेददिंदमवश्यं संभविसल्पडदेंदितु नानात्थंसमभिरोहणात्समभिरूढः एंदितु पेळल्पट्टुदु। इंदनादिंद्रः शकनाच्छक्रः पूर्दारणात्पुरंदरः एंदितो प्रकारदिदं सर्व्वत्रमरियल्पडुगुं। अथवा शब्द-मेल्लि अभिरूढमदल्लि बंदभिमुखत्वदिदमभिरोहणवत्तणिदमुं समभिरूढमक्कु। मेंतीगळु क्व भवानास्ते आत्मनि एंदितेकेंदोडे वस्त्वंतरदोळु वृत्यभावमप्पुदरिदं। यितल्लवेत्तलानुमन्यक्क-न्यत्रवृत्तियक्कुमप्पोडे ज्ञानादिगळगं रूपादिगळगमुमाकाशदोळु वृत्तियक्कुं ॥

किन्तु इससे लोक और शास्त्रका विरोध होनेका भय नहीं करना चाहिए। यह तत्त्व विचार है। औषधि रोगीकी इच्छाके अनुसार नहीं दी जाती। नाना अर्थोंका समभिरोहण करनेसे समभिरूढ़ नय है—अर्थात् नाना अर्थोंको त्यागकर एक अर्थमें मुख्यतासे रूढ़ होनेवाला समभिरूढ़ नय है, जैसे गौ शब्द गाय आदि अर्थोंमें वर्तमान रहते हुए भी पशुओंके अर्थमें रूढ है। अथवा अर्थका ज्ञाता ज्ञाप्य अर्थके अनुरूप शब्दका प्रयोग करता है। एक अर्थका बोध एक शब्दसे होनेपर पर्याय शब्दका प्रयोग व्यर्थ है। यदि शब्द भिन्न है तो अर्थमें भी भेद होना ही चाहिए। इस प्रकार नाना शब्दोंके नाना अर्थ माननेवाला समभिरूढ है। जैसे इन्द्र, शक्र, पुरन्दर तीन शब्द एकार्थवाचक माने जाते हैं किन्तु उनके अर्थ भिन्न हैं। इन्दन करनेसे इन्द्र, शक्तिशाली होनेसे शक्र और नगरोंको दारण करनेसे पुरन्दर कहा जाता है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना। अथवा जो जहाँ अधिरूढ़ है वह मुख्य रूपसे वहीं अधिरूढ़ है। जैसे इस समय आप कहाँ स्थित हैं? उत्तर है—आत्मामें। क्योंकि एक वस्तु दूसरी वस्तुमें नहीं रहती। यदि ऐसा न हो तो जीवके ज्ञानादि और पुद्गलके रूपादि आकाशमें रहने लगें।

कालव्यभिचारः। संतिष्ठते प्रतिष्ठते विरमते उपरमति इत्ययं प्रग्रहव्यभिचारः। एवंप्रकारः शब्दनयन्यायः (?)। कुतः? अन्यार्थस्यान्यार्थेनासंबंधात्। एवं चेदयं नयः लोकसमयविरोधः इति न वाच्यं तत्त्वविचार एवं स्यात् भैषज्यमातुरेच्छानुवर्ति न तथापि प्रयोक्तव्यम्।

नानार्थसमभिरोहणात्समभिरूढः। यतः कारणात् नानार्थान् हि परित्यज्यैकार्थमभिमुखत्वेन रूढः। गौ इति शब्दः गवादिषु वर्तमानः पशुषु रूढः। अथवा अर्थज्ञः ज्ञाप्यार्थानुरूपं शब्दं प्रयुंक्ते तत्रैकार्थस्यैकशब्देन ज्ञातत्वात् पर्यायशब्दप्रयोगोऽनर्थकः। शब्दभेदोऽस्ति चेदर्थभेदो भवेत्तेनार्थभेदेनावश्यं न संभवतीति नानार्थसमभिरोहणात्समभिरूढः, इंदनादिंद्रः, शकनाच्छक्रः, पूर्दारणात्पुरंदरः इत्येवंप्रकारेण सर्वत्र ज्ञातव्यं। अथवा यः शब्दो यत्राभिरूढः स तत्रागत्याभिमुखत्वे नाभिरोहणात्समभिरूढः। इदानीं क्व भवानास्ते? आत्मनि, वस्त्वंतरे वृत्यभावात्। अन्यथा ज्ञानादीनां रूपादीनां चाकाशे वृत्तिः स्यात्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येनात्मना भूतस्तेनैवाध्यवसाययतीत्येवंभूतः । स्वाभिधेयक्रियापरिणतिक्षणदोळे तच्छब्दं युक्तमक्कुमन्यकालदोळु युक्तमल्तु । एंतें दोडेयदैवेंदति तदैवेंद्रः नाभिषेचको नापि पूजकः एंदितु । यदैव गच्छति तदैव गौः न स्थितो न शयितः एंदितु । अथवा एनात्मना येन ज्ञानेन भूतः परिणतः तेनैवाध्यवसाययति । यथेंद्राग्निज्ञानपरिणत आत्मा इंद्रोऽग्निः एंदितु एवंभूतनयमरियल्पडुगुं ॥

इंतु पेळल्पट्ट नैगमादिनयंगळुत्तरोत्तरसूक्ष्मविषयत्वदिदमी क्रमं पूर्व्वं पूर्व्वहेतुकत्वदिदमुमरियल्पडुवुविति नयंगळु पूर्व्वपूर्व्वविरुद्धमहाविषयंगळुमुत्तरोत्तरानुकूलाल्पविषयंगळुमप्पुवें तें दोडे द्रव्यक्कनंतशक्तियत्तणिदं प्रतिशक्तिभिद्यमानंगळागि बहुविकल्पंगळप्पुवु । अविवेल्लं नयंगळु गौणमुख्यतेयिदं परस्परतंत्रंगळु पुरुषार्त्थक्रियासाधनसामर्थ्यदत्तणिदं सम्यग्दर्शनहेतुगळु ।

इंतु तद्भवसामान्य सादृश्यसामान्यंगळनाश्रयिसि जीवक्के पंचेंद्रियत्वदोळु प्रमाणनयविषयत्वदिदमनेकांतत्वमुमेकांतत्वमुं सिद्धमादुदिदुपलक्षणमिते सर्व्वमुक्तजीवद्रव्यंगळगे सर्व्वकर्म्मविप्रमोक्षलक्षणमोक्षदोळु संसारिजीवंगळगमेकेंद्रियादिजातिनामकर्म्मोदयजनित एकेंद्रियादिपर्य्यायंगळोळं तत्सामान्यद्रव्यविवक्षेयिदं प्रमाणनयविषयत्वदिदमनेकांतत्वमुमेकांतत्वमुमरियल्पडुगुं ।

जो जिस रूप है उसको उसी रूप जानना एवंभूत है, शब्दका जो वाच्यार्थ है उस क्रियारूप परिणमनके समय ही उस शब्दका प्रयोग युक्त है, अन्य समयमें नहीं। जैसे जिस समय इन्दन क्रियाशील है उसी समय इन्द्र है अभिषेक या पूजा करते समय नहीं। जब चले तभी गौ है बैठा या सोते हुए नहीं। अथवा जिस आत्मा अर्थात् ज्ञानरूपसे परिणत हो उसी रूप जानना एवंभूत नय है जैसे 'इन्द्रके ज्ञानरूप परिणत आत्मा इन्द्र है' आगको जाननेवाला आत्मा आग है।

नैगम आदि नयोंका विषय उत्तरोत्तर सूक्ष्म होता है इसीसे उनका यह क्रम रखा गया है। इनका विषय पूर्व-पूर्वमें महान् है और विरुद्ध है किन्तु उत्तरोत्तर अनुकूल और अल्प विषय है। क्योंकि द्रव्य अनन्त शक्तिवाला है अतः प्रत्येक शक्तिके भेदसे बहुत विकल्प होते हैं। ये सब नय गौणता और मुख्यतामें परस्परसे सम्बद्ध हैं, उनमें पुरुषार्थकी क्रियाको साधनेकी सामर्थ्य है तभी वे सम्यग्दर्शनमें निमित्त होते हैं।

इस प्रकार तद्भव सामान्य और सादृश्य सामान्यको लेकर जीवका पंचेन्द्रियत्व

येनात्मना भूतस्तेनैवाध्यवसाययतीत्येवंभूतः । स्वाभिधेयक्रियापरिणतिक्षणे एव तच्छब्दो युक्तो नान्यकाले यदा इंदति तदैवेंद्रः नाभिषेचको नाभिपूजकः । यदैव गच्छति तदैव गौः न स्थितो न शयित इति । अथवा येनात्मना ज्ञानेन भूतः परिणतस्तेनैवाध्यवसाययति यथेंद्राग्निज्ञानपरिणत आत्मा इंद्राग्निः । नैगमादीनामुत्तरोत्तरसूक्ष्मविषयत्वेनायं क्रमः । पूर्वपूर्वहेतुका अमी पूर्वपूर्वविरुद्धमहाविषया उत्तरोत्तरानुकूलाल्पविषयाः स्युः । कुतः ? द्रव्यस्यानंतशक्तितः प्रतिशक्तिभिद्यमानत्वे बहुविकल्पाः स्युः । ते सर्वे नया गौणमुख्यतया परस्परतंत्राः पुरुषार्थक्रियासाधनसामर्थ्यात्सम्यग्दर्शनहेतवः ।

एवं तद्भवसामान्यसादृश्यसामान्ये आश्रित्य जीवस्य पंचेंद्रियत्वे प्रमाणनयविषयत्वेनानेकांतत्वमेकांतत्वं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"अडवीसूणाविछक्कयं सेसे" शेषैकेंद्रियादिचतुरिंद्रिय पर्य्यंतं बंध नामस्थापनंगळुमष्टाविंशत्यूनादिषट्कमक्कुं। ए। बि। ति। च। बंध। २३। ए अ। २५। ए प। त्र अ। २६। ए प। आ उ। २९। बि। ति। च। पं। म ३०। बि। ति। च। पं। ति उ। त्रसंगळोळु बंध २३। ए अ २५। ए प। त्र अ २६। ए प। आ। उ २८। न। सु। २९। बि। ति। च। पं। ति। म। दे। ति। ३०। बि। ति। च। पं। ति। उ। म। ति। दे। अ। ३१। दे। ति। आ। ०। १। अगति। शेष पृथ्व्यप्तेजोवायुवनस्पतिगळ्गे बंध। २३। ए अ २५। ए प। त्र अ। २६। एप। अ उ। २९। बि। ति। च। पं ति। म। ३०। बि। ति। च। पं। ति। उ। चतुर्म्मनोवचनौदारिकेष्वष्टौ ८। सत्यासत्योभयानुभयमनोवचनौदारिककाययोगंगळें बोंभत्तुं योगंगळोळु नामबंधस्थानंगळु त्रयोविंशत्यादियागि एकप्रकृतिस्थानपर्य्यंतमादवेंटुं ८ बंधयोग्यंगळप्पुवु। संदृष्टिः—म ४। व ४। औ १ बंध २३। ए अ २५। ए प। त्र अ २६। ए प। आ उ २८। न। दे। २९। बि। ति। च। पं। ति। म। दे। ति। ३०। बि। ति। च। पं। ति। उ। म ति। दे। आ ३१। दे। ती। आ। १। अ ग ति। देववद्वैक्रियिकद्विके वैक्रियिककाययोगदोळं वैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळं देवगतियोळ्पेळ्दंते पंचविंशतिषड्विंशेति नवविंशति त्रिंशदेंब चतुःस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। वै मि। बंध २५। ए प। २६। ए प। आ उ। २९। ति। म ३०। ति उ। म ति॥

अडवीसदु हारदुगे सेसदुजोगेसु छक्कमादिल्लं।
वेदकसाए सव्वं पढमिल्लं छक्कमण्णाणे ॥७४६॥

अष्टाविंशति द्विकमाहारद्विके शेषद्वियोगयोः षट्कमाद्यतनं। वेदकषायेषु सर्व्वं प्रथमतनषट्कमज्ञाने॥

प्रमाण और नयका विषय होनेसे अनेकान्त और एकान्तरूप सिद्ध होता है, अतः सर्व मुक्त जीवोंके सब कर्म बन्धनसे छूटने रूप मोक्षमें और संसारी जीवोंके एकेन्द्रिय आदि जाति नामकर्मके उदयसे उत्पन्न एकेन्द्रियादि पदार्थोंमें भी जीवपना जानना।

च सिद्धं। तदुपलक्षणं तेन सर्वमुक्तानां सर्वकर्मविप्रमोक्षलक्षणे मोक्षे संसारिणां चैकेन्द्रियादिजातिनामोदयजनितैकेंद्रियत्वादिपर्यायेष्वपि ज्ञातव्यं। 'अडवीसूणादिछक्कयं सेसे।' शेषैकेंद्रियादिचतुरिंद्रियपर्यंतं चतुरिंद्रियमार्गणासु पृथ्वीकायादिपंचकायमार्गणासु च बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकोनाद्यानि षट् २३ ए अ। २५ ए प त्र अ। २६ ए प आ उ। २९ वि ति च प म। ३० वि ति च पं ति उ। सत्यासत्योभयानुभयमनोवाग्योगेष्वौदारिककाययोगे चाष्टौ २३ ए अ। २५ ए प त्र अ। २६ ए प आउ। २८ न दे। २९ वि ति च पं ति म दे ती। ३० वि ति च पं ति उ म ती दे आ। ३१ दे ती आ। १ अगति। देवगतिवद्वैक्रियिकतन्मिश्रयोः २५ ए प। २६ ए प आ उ। २९ ति म ३० ति उ म ती।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

आहारकाहारकमिश्रकाययोगद्विकदोळु अष्टाविंशत्यादिस्थानद्विकमक्कुं । संदृष्टि । आ । आ मि । बंध । २८ । दे २९ । दे ति । शेषद्वियोगयोः षट्कमाद्यतनं कार्म्मणकाययोगदोळं औदारिकमिश्रकाययोगदोळं त्रयोविंशत्यादि स्थानषट्कंबंधमक्कुं ॥ संदृष्टि :—औदारिमिश्रकार्म्मणकाय-बंधः । २३ । ए अ २५ । ए प । त्र अ २६ । ए प । आ उ २८ । दे । २९ । बि । ति । च । पं । म दे ति । ३० । बि । ति च । पं ति । उ । म ति । देवगतियुतमुमाहारकद्वययुतस्थानमप्रमत्तापूर्व्वकरणरोळल्लदे संभविसदवर्गळोळी योगं संभविसदु । कार्म्मणकाययोगमें बुदु कार्म्मणशरीरनामकर्म्मोदयदिनाद कार्म्मणशरीरं कार्म्मणकायमें बुदक्कु–। मा कार्म्मणकायवर्गणा संयोगदिंदं पुट्टिद जीवप्रदेशप्रचयकर्म्मादानशक्तिजीवप्रदेशपरिस्पंदलक्षणमदु कार्मणकाययोगमा योगं नारकादिचतुर्गतिजरुगळ विग्रहगतियोळेक द्वित्रि समयंगळोळक्कुमंते उक्तं । एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः एंदितु पूर्व्वभवशरीरपरित्याग मागुत्तं विरलुत्तर भव शरीरग्रहणमिल्लदवर्गे नारकादिकत्वमो विग्रहगतियोळें तक्कु में दोडे गतिनामकर्म्मोदयदिदं नारकादिपर्य्यायंगळु आनुपूर्व्व्योदयदिदं तत्तत्क्षेत्रसंबंधमुमायुष्कर्म्मोदयदिदं तत्तद्भवनारकादित्वमुं संभविसुगुमप्पुदरिंदं । तंनारकादित्वमा कालदोळु सिद्धमक्कुं । यी योगद्वयदोळु मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतगुणस्थानत्रयमुं सयोगगुणस्थानमुं संभविसुगुं । अल्लि नरकगतिजरोळु मिथ्यादृष्ट्यसंयत गुणस्थानद्वयमे संभविसुगुं । देवगतियोळु मिथ्यादृष्टि सासादनासंयत गुणस्थानत्रयं संभविसुगुं । अष्टाविंशति बंधस्थानं मनुष्यकार्म्मणकाययोगिगळप्प मिथ्यादृष्टियोळं मिथ्यादृष्टि तिर्य्यंचरोळं बंधमिल्लें ते दोडे कम्मे उरालमिस्सं वा एंदितु कार्म्मणकाय योगंगळोळु औदारिकमिश्रकाययोगिगळोळु पेळदंते नरकद्विकं देवद्विकं बंध-

आहारकतन्मिश्रयोगयोः अष्टाविंशतिकनवविंशतिके द्वे । शेषयोः कार्मणौदारिकमिश्रयोस्तान्याद्यानि षट्, नात्र देवगत्याहारकद्वययुतं अप्रमत्तापूर्वकरणयोरेव तद्बंधसंभवात् । नापि तिर्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टावष्टाविंशतिकं 'कम्मे उरालमिस्सं'वेति देवनारकद्विकयोरबंधात् तिर्यग्मनुष्यकार्मणयोगसासादने सर्वैकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तत्रयोविंशतिकपंचविंशतिकषड्विंशतिकनरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकविकलत्रययुतनवविंशतिकत्रिंशत्क -

आहारक आहारक मिश्रयोगमें अट्ठाईस उनतीस ये दो बन्धस्थान हैं। शेष कार्माण और औदारिक मिश्रमें आदिके छह बन्धस्थान हैं। यहाँ देवगति और आहारकद्विक सहित स्थान सम्भव नहीं है; क्योंकि इनका बन्ध अप्रमत्त और अपूर्वकरणमें ही होता है। कार्माण व औदारिक मिश्र सहित तिर्यंच या मनुष्य मिथ्यादृष्टिमें अठाईसका बन्धस्थान नहीं होता; क्योंकि 'कम्मे उरालमिस्सं वा' इस गाथाके अनुसार उनमें देवद्विक और नरकद्विकका बन्ध नहीं होता। कार्माण योग सहित तिर्यंच और मनुष्य सासादन गुणस्थानवर्तीके सब एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त सहित तेईस, पच्चीस, छब्बीस और नरकगति देवगति सहित

१. णिरयं सासणसम्मो गच्छदित्ति—मिश्रगुणस्थाने मरणाभावात्—मिथ्यादृष्ट्यसंयतौ संभवतः—उराळमिस्सं वेत्युक्तं तर्हि औदारिकमिश्रे कथमिति चेत्, ओराळं वा मिस्से ण हि सुरणिरयाउहारणिरय दुगं । मिच्छदुगे देव चऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि ॥ इत्यत्र नरकद्विक-देवद्विकयोरबंधः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिल्लेंब नियममुंटप्पुदरिंदं। तिर्य्यग्मनुष्यकार्म्मणकाययोगिगळप्प सासादनरु सर्व्वैकेंद्रियबादर-सूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तयुतंगळप्प त्रयोविंशति पंचविंशति षड्विंशति नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशति द्वींद्रियादिविकलत्रययुत नवविंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळं पोरगागि शेषतिर्य्यक्पंचेंद्रियमनुष्यगति-युतंगळप्प नवविंशतित्रिंशत् स्थानद्वयमने कट्टुवरु। सासादनंगे देवगतियुताष्टाविंशतिबंधस्थानं विरोधमिल्लप्पुदरिंदमेके सासादननोळु तद्बंधस्थानं निषेधिसल्पट्टुदें दोडे मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि एंदितु कार्म्मणकाययोगिगळप्प मिथ्यादृष्टि सासादनरुगळगे औदारिकमिश्रकाययोगि-गळोळु पेळदंते निषेधमुंटप्पुदरिंदं तद्बंधमिल्ल। तिर्य्यग्मनुष्य कार्म्मणकाययोगासंयतसम्यग्दृष्टि-गळगे देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुं मनुष्यकार्म्मण काययोगासंयत सम्यग्दृष्टियोळे देवगतितीर्त्थ-युत नवविंशतिस्थानबंधमक्कु-। मितु पंचदशयोगंगळोळु नामकर्म्मबंधस्थानंगळु योजिसल्पट्टवु॥

वेदकषायेषु सर्व्वं पुंवेदस्त्रीवेदषंढवेदत्रितयदोळं क्रोधमानमायालोभकषायचतुष्टयदोळं त्रयोविंशतिस्थानमादियागि सर्व्वनामकर्म्मप्रकृतिस्थानंगळें टुं बंधंगळप्पुवु। वे ३। क ४। बंध २३। ए अ। २५। ए प। त्र अ। २६। ए प। अ। उ। २८। न। दे। २९। बि। ति। च। प ति। म। दे ति। ३०। बि। ति। च। प ति। उ। म ति। दे आ। ३१। दे ति आ। १।

वर्जितशेषतिर्यक्पंचेंद्रियमनुष्यगतियुतनवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे। देवगत्यष्टाविंशतिकाभावस्तु 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहीति' वचनात्। तिर्यग्मनुष्यकार्मणयोगासंयते तच्च तन्मनुष्ये देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकं च। त्रिषु वेदेषु चतुर्षु क्रोधादिषु च सर्वाणि, षंढे नवविंशतिकद्वयं त्वाद्यनरकं प्रति, तिर्यग्गतौ एकेंद्रियबादरसूक्ष्मापर्याप्त-युतत्रयोविंशतिकं एकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्याप्तयुतत्रसापर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गतिमनुष्यगतियुतपंचविंशतिकं एकेंद्रियबादरपर्याप्तातपोद्योतयुतषड्विंशतिकं तिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तनवविंशतिकं, तिर्यग्गतिपर्याप्तोद्योतयुतत्रिंशत्कं

अठाईस तथा विकलत्रय सहित उनतीस तीसको छोड़ शेष तिर्यंच पंचेन्द्रिय या मनुष्यगति सहित उनतीस और तीसके दो बन्धस्थान होते हैं। यहाँ देवगति सहित अठाईसके स्थानका अभाव है क्योंकि 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थंणहि' ऐसा कथन है।

कार्माण सहित तिर्यंच मनुष्य असंयत सम्यग्दृष्टिके देवगति सहित अठाईसका स्थान और कार्माण सहित मनुष्य असंयतमें देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसका भी स्थान होता है।

तीनों वेदों और चारों कषायोंमें सब बन्धस्थान होते हैं। विशेष इस प्रकार है—नपुंसकवेदमें उनतीस और तीसके स्थान आदिके तीन नरकोंमें होते हैं। नपुंसक वेद सहित तिर्यंचगतिमें एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म अपर्याप्त सहित तेईसका, एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म पर्याप्त सहित पच्चीसका, त्रस अपर्याप्त दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंचगति मनुष्यगति सहित पच्चीसका एकेन्द्रिय बादर पर्याप्त आतप उद्योत सहित छब्बीसका तिर्यंच या मनुष्यगति पर्याप्तयुत उनतीसका, तिर्यंचगति पर्याप्त उद्योत सहित तीसका स्थान होते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय नपुंसक वेदीके नरक देवगति युत अठाईसका भी स्थान होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगति। इल्लि षंड वेदमोंदे नारकरोळक्कुं। तिर्य्यंचरोळं मनुष्यरोळं पुंवेदमुं स्त्रीवेदमुं षंडवेदमुं संभविसुवउ। देवगतिजरोळु पुंवेदं पुरुषदेवक्कंळोळु, स्त्रीवेदं देवियरोळक्कुमेकेंदोडे देवगतियोळु द्रव्यदिदं भावदिदं समानं वेदिगळप्परप्पुदरिदं॥ नारकषंडवेदिगळोळु नरकगतियोळु पेळ्द नवविंशतिद्विकं बंधमक्कुं। नारकषंड बंध २९। ति म ३०। ति उ। म ति। तिरियंचरोळेकेंद्रियबादरसूक्ष्मद्वित्रि चतुरिंद्रिय पर्य्याप्तापर्य्याप्त जीवंगळनितुं षंडरप्पुदरिनवक्केल्लं यथाप्रवचनं तथा एकेंद्रियबादरसूक्ष्मापर्य्याप्तयुत त्रयोविंशति प्रकृतिस्थानमुं एकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तयुत पंचविंशतिस्थानमुं त्रसापर्य्याप्तद्वित्रिचतुः पंचेंद्रिय तिर्य्यग्गतियुतमुं। मनुष्यगतियुतमागियुं पंचविंशतिस्थानमुमेकेंद्रिय बादरयुतपर्य्याप्तातपोद्योतयुतषड्विंशतिस्थानमुं तिर्य्यग्मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुत नवविंशतिस्थानमुं तिर्य्यग्गतिपर्य्याप्तोद्योतयुतत्रिंशत्स्थानमुं बंधमुमप्पुवु। तिर्य्यक्पंचेंद्रियषंडवेदिगळोळु ई पेळ्द पंचस्थानंगळुं नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुं बंधमप्पुवु। तिर्य्यक्पंचेंद्रिय पुंवेदिगळोळं स्त्रीवेदि गळोळमंते षड्बंधस्थानंगळं बंधमप्पुवु। मनुष्यलब्ध्यपर्य्याप्तरनिबरुं षंडवेदिगळेयप्परा जीवंगळ नितुं नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि शेषबादरसूक्ष्मैकेंद्रियापर्य्याप्तयुत त्रयोविंशतिस्थानमुमं। एकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तयुत पंचविंशतिस्थानमुमं। त्रसापर्य्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रियतिर्य्यग्गतियुतमागियुं मनुष्यगतियुतमागियुं पंचविंशतिस्थानमं कट्टुवरु। मत्तमा जीवंगळु बादरैकेंद्रिय पृथ्वीकायपर्य्याप्तातपयुतमागियुं षड्विंशतिस्थानमुमं मत्तमेकेंद्रिय तेजोवायु साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्त वर्जितशेषैकेंद्रियपर्य्याप्तोद्योतयुतमागियुं षड्विंशतिस्थानमं तिर्य्यग्मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुत नवविंशति स्थानमुमं तिर्य्यग्गतिपर्य्याप्तोद्योतयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। मनुष्यपर्य्याप्तरु केलंबरु द्रव्यषंडरुगळु। पुरुषस्त्रीषंढवेदोदयंगळिदं भावपुरुषस्त्रीषंडरप्परु। केलंबरु द्रव्यस्त्रीयरु भावपुरुष स्त्रीषंडरुगळुमप्परु। केलंबरु द्रव्यपुरुषरु। भावषंडस्त्रीपुरुषरुगळुमप्पररितु षंडस्त्रीपुंवेदोदयंगळिदं षंडरुं स्त्रीयरुं पुरुषरुगळुं भावदिदं प्रत्येकं त्रिविधमप्परल्लि संदृष्टि :—द्रव्यषंड भावषंड। द्रव्यषंड भावस्त्री। द्रव्यषंड भावपुरुष। द्रव्यस्त्री भावस्त्री। द्रव्यस्त्री भावषंड। द्रव्यस्त्री भावपुरुष। द्रव्यपुरुष

च तत्पंचेंद्रियषंढे तानि च नरकगतिदेवगतियुताष्टविंशतिकं च। तत्स्त्रीपुंवेदयोस्तानि षट्। मनुष्यलब्ध्यपर्याप्ते एकविकलेंद्रियोक्तानि पंच। पर्याप्तमनुष्याः द्रव्यषंढस्त्रीपुंवेदाः पुंस्त्रीषंढवेदोदयेन भावपुंस्त्रीषंढा भवंति विना तीर्थकरं। तत्र भावतः षंढे स्त्रियां पुंसि च गुणस्थानानि तत्तत्सवेदानिवृत्तिकरणांतानि। नव नव बंधस्थानानि

तिर्यंच स्त्रीवेदी पुरुषवेदीके छह स्थान होते हैं। मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकके एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियमें कहे पाँच स्थान होते हैं।

पर्याप्त मनुष्य जो द्रव्यसे नपुंसकवेदी, स्त्रीवेदी या पुरुषवेदी हैं वे पुरुष स्त्री और नपुंसक वेदके उदयसे भाव पुरुष, भावस्त्री, भावनपुंसकवेदी होते हैं तीर्थंकर बिना। भावसे नपुंसक वेदी, स्त्रीवेदी और पुरुषवेदीमें गुणस्थान अपने-अपने सवेद अनिवृत्तिकरण पर्यन्त होते हैं। उनमें नौ-नौ बन्धस्थान होते हैं। किन्तु भावस्त्रीवेदी और भाव नपुंसकवेदी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावपुरुष । द्रव्यपुरुष भावस्त्री । द्रव्यपुरुष भावषंड एंदितु नवविधमप्परल्लि । तीर्थंकर परम देवरुगळनिबरुं द्रव्यदिदं भावदिदं पुंवेदिगळेयप्परु । शेषमनुष्यरुगळु यथासंभवमप्परु । पर्य्याप्त-मनुष्य भावषंडवेदिगळोळु मिथ्यादृष्टियादियागि अनिवृत्तिकरणषंडवेदभागे पर्य्यंतमो भत्तुं गुणस्थानंगळप्पुवु । अल्लि यथाप्रवचनं तथा सर्व्वनामबंधस्थानंगळप्पुवु । भावस्त्रीवेदिगळोळुमंते सर्व्वबंधस्थानंगळुमप्पुवु । ई षंडस्त्रीवेदि क्षपकरोळु देवगतितीर्थयुत नवविंशतियुमेकत्रिंशत्-स्थानमुं बंधमिल्लेकेंदोडिल्लि चोदने—तीर्थंकरपरमदेवरुगळ्गे द्रव्यदिदं भावदिदं पुंवेदमेयक्कु-मप्पुदरिंद । मी क्षपकश्रेण्यारूढरप्प षंढस्त्रीवेदिगळोळेंतु तीर्थदेवगतियुत नवविंशतिस्थानमुं देवगति तीर्थं आहारकद्वययुतैकत्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानमुमिती तीर्थयुतस्थानद्वयबंधाबंधविचार-मेत्तणिदमें दोडे पेळ्वें ।

सौधर्म्मकल्पमादियागि सर्व्वार्थसिद्धिपर्य्यंतमाद कल्पजकल्पातीतज तीर्थसत्कर्म्मरुगळ्गं घर्मादिमेघावसानमाद पृथ्विज तीर्थसत्कर्म्मरुगळ्गं गर्भावतरणादिपंचकल्याणंगळं द्रव्यभावपुंवे-वंगळुमप्पुवु । चरमांगरागि तीर्थरहितरागिद्दुं द्रव्यपुरुषभावषंडस्त्रीवेदिगळु केवलिश्रुतकेवलिद्वय श्रीपादोपांतदोळिद्दुं षोडश भावनाबलदिदं तीर्थबंधमं प्रारंभिसि तीर्थसत्कर्म्मरागिद्दुं असंयत-देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थानवर्त्तिगळोळु असंयतदेशसंयतरुगळ्गे परिनिष्क्रमणकल्याणसमन्वित-मागि त्रिकल्याणमक्कुं । प्रमत्ताप्रमत्ततीर्थं सत्कर्म्मरुगळ्गे दीक्षाकल्याण मिल्ल । केवलज्ञानकल्या-णादिकल्याणद्वितयमक्कु-। मंतवर्गळु क्षपकश्रेण्यारोहणं माळ्पागळु षंडस्त्रीवेदंगळुदमं पत्तुविट्टु पुंवेदोदयदिदमे क्षपकश्रेण्यारोहणमं माळ्परेंदितु पेळ्वमेकेंदोडे "वेदादाहारोत्ति य सगुणट्ठाणाण-मोघंतु" एंदितु षंढवेददोळं स्त्रीवेददोळं तीर्थबंधमुंटप्पुदरिंदं । भावपुंवेदिगळोळमंते मिथ्यादृष्ट्यादि-पुंवेदोदयभागानिवृत्तिकरणपरियंतमाद गुणस्थानंगळो भत्तुमप्पुवु । आ गुणस्थानंगळोळु यथा-प्रवचनं तथाऽष्ट नामकर्म्मबंधस्थानंगळप्पुवेंबुदर्थं ॥

सर्वाणि, न च स्त्रीषंढक्षपके देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकैकत्रिंशत्के, चरमांगाणां केषांचित्तत्र तीर्थबंधसंभवेऽपि क्षपकश्रेण्यां पुंवेदोदयेनैवारोहणात् । तीर्थबंधप्रारंभश्चरमांगाणामसंयतदेशसंयतयोस्तदा कल्याणानि निष्क्रमणा-दीनि त्रीणि, प्रमत्ताप्रमत्तयोस्तदा ज्ञाननिर्वाणे द्वे, प्राग्भवे तदा गर्भावतरादीनि पंचेत्यवसेयम् ।

क्षपक श्रेणिवालेके देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसका और इकतीसका स्थान नहीं होता। यद्यपि किन्हीं चरम शरीरियोंके वहाँ तीर्थंकरका बन्ध सम्भव भी है किन्तु वे पुरुषवेदके उदयसे ही श्रेणि चढ़ते हैं। यदि चरमशरीरियोंके तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ असंयत और देशसंयत गुणस्थानोंमें होता है तब उनके तप आदि तीन ही कल्याणक होते हैं। यदि प्रमत्त अप्रमत्तमें तीर्थंकरका बन्ध होता है तो उनके ज्ञान निर्वाण दो ही कल्याणक होते हैं। यदि पूर्वभवमें तीर्थंकरका बन्ध किया है तो गर्भावतरण आदि पाँचों कल्याणक होते हैं, इतना विशेष जानना।

---

१. "तित्थयरसत्थकम्मा तदियभवे तब्भवे हु सिज्झेइ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कषायमार्ग्गणेयोळु क्रोधचतुष्टयक्कं मानचतुष्टयक्कं मायाचतुष्टयक्कं लोभचतुष्टयक्कं ग्रहणमक्कु । मंतादोडनंतानुबंधिक्रोधमानमायालोभादिषोडशकषायंगळ्गे जात्याश्रयणदिदमभेदविवक्षेयिदमें तु साधारणक्रोधमानमायालोभचतुष्टयकथनमक्कुमें दोडे शक्तिप्रधानकथनमप्पुदरिदमभेदविवक्षेयिद पेळल्पट्टुददें तेदोडे द्वादशकषायंगलगे देशघातिस्पर्द्धकंगळिल्ल । सर्व्वमुं सर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळेयप्पुवु । संज्वलनकषायचतुष्टयक्का सर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळुं देशघातिस्पर्द्धकंगळुमप्पुवदु कारणमनंतानुबंधिक्रोधोदयमुळ्ळ जीवनोळु नियमदिदमितर क्रोधकषायत्रयोदयमुंदु । मत्तमनंतानुबंधिमानोदयमुळ्ळ जीवनोळु नियमदिद मितरमानकषायत्रयोदयमुंदु । मत्तमनंतानुबंधिमायोदयमुळ्ळ जीवनोळु नियमदिदमितरमायाकषायत्रयोदयमुंटु । मत्तमनंतानुबंधिलोभोदयमुळ्ळ जीवनोळु नियमदिदमितरलोभकषायत्रयोदयमुंटु । अदु कारणदिदमनंतानुबंधिकषायोदयक्कें तु जीवगुण सम्यक्त्वसंयमोभयघातनशक्तिसिद्धमंतितर कषायत्रयोदयक्कमुंटप्पुदरिदं । मत्तमंते अप्रत्याख्यान क्रोधमानमायालोभोदयंगळुळ्ळ जीवंगळोळ्नियमदिदमितर प्रत्याख्यानसंज्वलनद्वय क्रोधमानमायालोभोदयंगळुं क्रमदिनुंटेकें दोडे प्रत्याख्यानक्रोधादिगळुदयंगळ्गे जीवगुणसंयमासंयमघातनशक्तियें तंता । प्रत्याख्यानसंज्वलनद्वयक्रोधादिकषायोदयंगळ्गमा शक्तियुंटप्पुदरिदं । मत्तमंते प्रत्याख्यानक्रोधमानमायालोभोदयंगळुळ्ळ जीवंगळोळु नियमदिदं संज्वलनक्रोधमानमायालोभोदयंगळुं क्रमदिनुंटेकें दोडे प्रत्याख्यानक्रोधोदयक्के जीवगुणसकलसंयमघातनशक्ति-

कषायमार्गणायां क्रोधादीनामनंतानुबंध्यादिभेदेन चतुरात्मकत्वेऽपि जात्याश्रयेणैकत्वमभ्युपगतं शक्तिप्राधान्येन भेदस्याविवक्षितत्वात् । तद्यथा—द्वादशकषायाणां स्पर्धकानि सर्वघातीन्येव न देशघातीनि । संज्वलनानामुभयानि तेनानंतानुबंध्यन्यतमोदये इतरेषामुदयोऽस्त्येव तदुदयसहचरितेतरोदयस्यापि सम्यक्त्वसंयमगुणघातकत्वात् । तथा—अप्रत्याख्यानान्यतमोदये प्रत्याख्यानाद्युदयोऽस्त्येव तदुदयेन समं तद्द्वयोदयस्यापि देशसंयमघातकत्वात् तथा प्रत्याख्यानान्यतमोदये संज्वलनोदयोऽस्त्येव प्रत्याख्यानवत्तस्यापि सकलसंयमघातकत्वात् । न

कषाय मार्गणामें क्रोधादिके अनन्तानुबन्धी आदिके भेदसे यद्यपि चार-चार भेद होते हैं तथापि जातिके आश्रयसे एकपना स्वीकार किया है; क्योंकि यहाँ शक्तिकी प्रधानतासे भेदोंकी विवक्षा नहीं है। वही कहते हैं—बारह कषायोंके स्पर्धक सर्वघाती ही होते हैं, देशघाती नहीं। संज्वलनके स्पर्धक देशघाती भी हैं और सर्वघाती भी हैं। अतः अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभमें-से किसी एकका उदय होनेपर अप्रत्याख्यान आदि तीनोंका भी उदय है ही, क्योंकि अनन्तानुबन्धीके उदय सहित अन्य कषायोंके उदयके भी सम्यक्त्व और संयमगुणका घातकपना है। इसी प्रकार अप्रत्याख्यान क्रोधादिमें-से किसी एकका उदय होनेपर प्रत्याख्यानादि दोका भी उदय है ही क्योंकि अप्रत्याख्यानके उदयके साथ उन दोनोंका भी उदय देशसंयमको घातता है। तथा प्रत्याख्यान क्रोधादिमें-से किसी एकका उदय होनेपर संज्वलनका उदय है ही; क्योंकि प्रत्याख्यान कषायकी तरह संज्वलन कषाय भी सकलसंयमकी घातक है। किन्तु केवल संज्वलन कषायका उदय होनेपर प्रत्याख्यान आदि तीन कषायोंका उदय नहीं है; क्योंकि उनके स्पर्धक सकलसंयम घाती हैं, केवल

येंतंता संज्वलनक्रोधमानमायालोभोदयंगळगमा शक्तियुमुंटप्पुदरिंदं। मत्तं केवलमा देशघातिशक्ति संज्वलनक्रोधमानमायालोभोदयमेकैकंगळुळ्ळ जीवंगळोळु क्रमदिदं नियमदिदमितरप्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानानंतानुबंधिक्रोधमानमायालोभोदयंगळु संभविसवेकेंदोडी संज्वलनकषायचतुष्टयक्के देशघातिस्पर्द्धकंगळुळ्ळंतितर द्वादशकषायंगळिगल्लमा द्वादशकषायंगळगे सकलसंयमविघातन-समर्त्थ सर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळेयक्कुमप्पुदरिंदं। अहंगे केवलं प्रत्याख्यानसंज्वलन कषायद्वयोदयमुळ्ळ जीवनोळु नियमदिदमितराप्रत्याख्यानानंतानुबंधिकषायोदयमिल्लेकेंदोडे अवक्काऽजीवगुणसंयमा-संयम सकलसंयम निर्म्मूलनकरणसमर्त्थसर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळल्लदितरशक्तिसंभविसदप्पुदरिंदं। मत्तमंते केवलमप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलनकषायोदयंगळुळ्ळ जीवंगळोळु नियमदिदमनंतानु-बंधिकषायोदयमिल्लेकेंदोडदक्का जीवगुणसम्यक्त्वसंयमासंयमसकलसंयमसर्व्वविघातन समर्त्थ सर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळल्लदितरशक्ति संभविसदप्पुदरिंद। मदु कारणमागियनंतानुबंधिकषायक्के सम्यक्त्वसंयमोभयविघातनशक्तियक्कु। मप्रत्याख्यानावरणं चारित्रमोहनीयमे यप्पुदावोडॆ-मनंतानुबंधियोडननंतानुबंधिकार्य्यमं माळ्गु मेकेंदोडवरुदयदोडने तनगेयु मा शक्तियुदयमुंटप्पु-दरिंदं। प्रत्याख्यानसंज्वलन कषायद्वयमुमंतेयनंतानुबंधियुदयदोडनुदयिसि तामुमनंतानुबंधि कार्य्यमं माळ्युवेकेंदोडवरुदयदोडने तमगेयुमा शक्तियुदयमुंटप्पुदरिंदं। अनंतानुबंध्युदयरहितमागि अप्रत्या-ख्यानप्रत्याख्यान संज्वलनत्रयंगळु संयमासंयमप्रतिघातमं माळ्पुवु। अप्रत्याख्यानोदयरहितमागि प्रत्याख्यान संज्वलनकषायोदयंगळु सकलसंयमप्रतिघातकंगळप्पुवु। प्रत्याख्यानावरणोदयरहित-

---

च केवलं संज्वलनोदये प्रत्याख्यानादीनामुदयोऽस्ति तत्स्पर्धकानां सकलसंयमविरोधित्वात्। नापि केवलप्रत्या-ख्यानसंज्वलनोदये शेषकषायोदयः तत्स्पर्धकानां देशसकलसंयमघातित्वात्। नापि केवलाप्रत्याख्यानादित्रयोद-येऽनंतानुबंध्युदयः तत्स्पर्धकानां सम्यक्त्वदेशसकलसंयमघातकत्वात्, इत्यनंतानुबंधिनां तदुदयसहचरिताप्रत्या-ख्यानादीनां च चारित्रमोहत्वेऽपि सम्यक्त्वसंयमघातकत्वमुक्तं तेषां तदा तच्छक्तेरेवोदयात्। अनंतानुबंध्युदयर-हिताप्रत्याख्यानाद्युदयाः देशसंयमं घ्नंति। अप्रत्याख्यानोदयरहितप्रत्याख्यानसंज्वलनोदयाः सकलसंयमं प्रत्याख्यानोदयरहितसंज्वलनदेशघात्युदयाः यथाख्यातमिति शक्तिसाधारणविवक्षया षोडशकषायाणां क्रोधादि-

---

प्रत्याख्यान और संज्वलनका उदय होते हुए शेष दो कषायोंका उदय नहीं है; क्योंकि उनके स्पर्धक देशसंयम और सकलसंयमके घाती हैं।

केवल अप्रत्याख्यान आदि तीन कषायोंका उदय रहते अनन्तानुबन्धीका उदय नहीं है क्योंकि अनन्तानुबन्धीके स्पर्धक सम्यक्त्व, देशसंयम और सकलसंयमके घातक हैं। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीके और उसके उदयके साथ सहचारी अप्रत्याख्यानादिके चारित्र-मोहपना होते हुए भी सम्यक्त्व संयमका घातकपना कहा। क्योंकि उस समयमें उनमें उसी शक्तिका ही उदय होता है। अनन्तानुबन्धीके उदयसे रहित अप्रत्याख्यान आदिके उदय देश-संयमको घातते हैं। अप्रत्याख्यानके उदयसे रहित प्रत्याख्यान और संज्वलनके उदय सकलसंयमको घातते हैं। प्रत्याख्यानके उदयसे रहित संज्वलनका उदय यथाख्यातको घातता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मागि संज्वलनदेशघातिकषायोदयं यथाख्यातचारित्रप्रतिघातियक्कु । मी शक्ति साधारणविवक्षेयिदं षोडशकषायंगळ्गे जात्याश्रयण क्रोधमानमायालोभ साधारण चतुर्विधत्वमंगीकरिसल्पट्टुदप्पुदरिंदं सम्यक्त्वसंयमासंयमसकलसंयमंगळाऽसंयत देशसंयत प्रमत्तसंयतादिगळोळु संभवं सिद्धमक्कु । मनंतानुबंधिकषायचतुष्टयशक्तियोडनितरकषायशक्तिसमानमें तक्कुमें दोडे—

आवरणदेसघादंतराय संजळण पुरिस सत्तरसं ।
चदुविह भावपरिणदा तिविहा भावा हु सेसाणं ॥

देशघात ज्ञानावरणचतुष्क दर्शनावरणत्रय अंतरायपंचक संज्वलन चतुष्क पुंवेदमें ब सप्तदश-प्रकृतिगळु चतुर्विधानुभागपरिणतंगळु शेषमिश्रोन केवळणाणावरणं दंसणछक्कमित्यादिविंशति सर्व्वघातिगळं नोकषायाष्टकमुं पंचसप्तत्यघातिगळुं त्रिविध भावपरिणतंगळप्पुवु । येंदितु मिथ्यात्वमनंतानुबंधिचतुष्कमप्रत्याख्यानचतुष्कं प्रत्याख्यानचतुष्कं संज्वलनचतुष्क सर्व्वघातिशक्तियुं समानमक्कुमवक्के संदृष्टि—

भेदेन चतुर्धात्वमंगीकृतं तेन सम्यक्त्वदेशसंयमसकलसंयमानां असंयतदेशसंयतप्रमत्तादिषु संभवः सिद्धः । कथमनंतानुबंधिशक्त्येतरकषायशक्ते सादृश्यं उच्यते ?

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरिससत्तरसं । चदुविधभावपरिणदा तिविहा भावा हु सेसाणं ॥१॥

देशघातिचतुस्त्रिज्ञानदर्शनावरणपंचांतरायचतुःसंज्वलनपुंवेदाः सप्तदशापि चतुर्धानुभागपरिणताः शेषमिश्रोनकेवलज्ञानावरणादिसर्वघातिविंशतिः नोकषायाष्टकमघातिपंचसप्ततिश्च त्रिधा भावपरिणता भवंति । संदृष्टिः—

है। इस प्रकार शक्ति सामान्यकी विवक्षासे सोलह कषायोंको क्रोधादिके भेदसे चार प्रकारका स्वीकार किया है। इससे सम्यक्त्व, देशसंयम और सकलसंयमका असंयत, देशसंयत, प्रमत्त आदिमें होना सिद्ध होता है।

शंका—अनन्तानुबन्धी शक्ति और अन्य कषायोंकी शक्तिमें समानता कैसे होती है?

समाधान—पहले अनुभागबन्धके कथनमें कहा है कि देशघाती चार ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण, पाँच अन्तराय, चार संज्वलन, एक पुरुषवेद ये सतरह प्रकृतियाँ तो चार प्रकारके अनुभागरूप परिणमती हैं। शेष मिश्र मोहनीय बिना केवलज्ञानावरण आदि बीस, आठ नोकषाय, पिचहत्तर अघातिया ये तीन प्रकारके अनुभागरूप परिणमती हैं। अतः अनुभाग शक्तिकी विशेषतासे अनन्तानुबन्धीकी तरह अन्य कषायोंके भी सम्यक्त्व आदिका घात करनेसे समानता होती है। सो मिथ्यात्व सहित उदयप्राप्त कषाय सम्यक्त्वको घातती है। अनन्तानुबन्धीके साथ उदयागत कषाय सम्यक्त्व और संयमको घातती है। अप्रत्याख्यानके साथ उदयागत कषाय देशसंयम सकलसंयमको घातती है। प्रत्याख्यान सहित उदयागत कषाय सकलसंयमको घातती है। संज्वलनके देशघाती स्पर्धकोंका उदय यथाख्यातको घातता है। इस तरह बारह कषाय सर्वघाती और संज्वलनोंमें कथंचित् भेद होनेपर भी शक्तिकी समानतासे और समान कार्य करनेसे क्रोधादिके भेदसे चार भेद जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

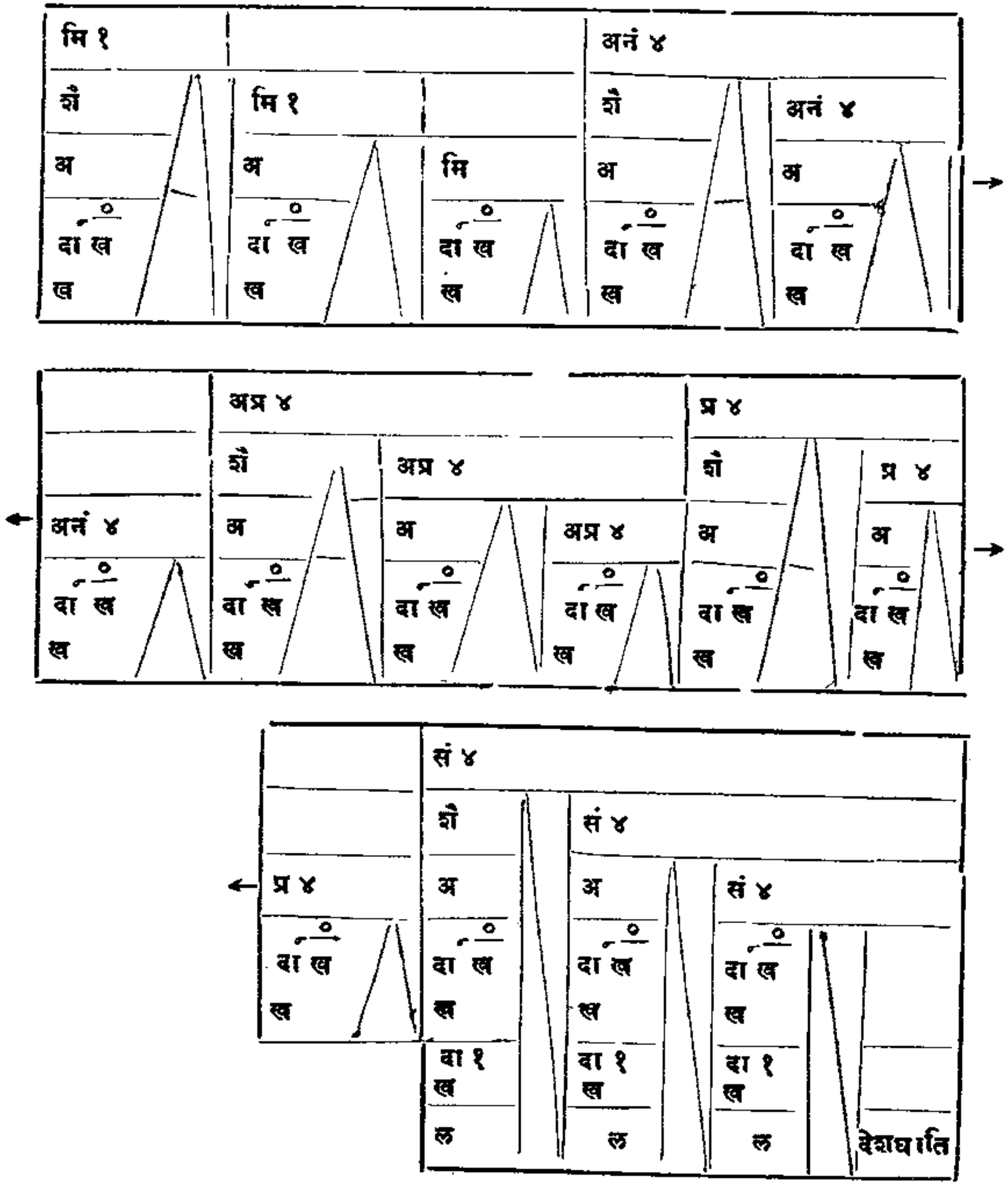

यिल्लि मिथ्यात्वकर्म्मंदोडनुदयिसुवनंतानुबंध्यप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन सर्व्वघाति-शक्तिगळसमानंगळप्पुदरिदं मिथ्यात्वकर्म्मंदंते सम्यक्त्वघातंगळप्पुवु। मिथ्यात्वरहितमागि अनंतानुबंधिकर्म्मंदोडनुदयिसुव अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानसंज्वलन सर्व्वघाति स्पर्द्धकंगळ शक्ति समानमप्पुदरिदमनंतानुबंधिकषायदंते सम्यक्त्व संयमोभयघातंगळप्पुवु। अनंतानुबंधि रहिताप्रत्याख्याना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरणोदयदोडनुदयिसुव प्रत्याख्यानसंज्वलन सर्व्वघातिस्पर्द्धकंगळ शक्ति समानमप्पुदरिंदमप्रत्याख्यानकषायदंते देशसकलसंयमघातकंगळप्पुव प्रत्याख्यानावरणरहितमागि प्रत्याख्यानावरणदोडनुदयिसुव संज्वलनसर्व्वघातिस्पर्द्धकोदयं सकलसंयममं प्रत्याख्यानावरणदंते घातिसुगुं। संज्वलनदेशघातिस्पर्द्धकोदयं यथाख्यातचारित्रमं घातिसुगुमेंबुदु सुसिद्धमावुदु।

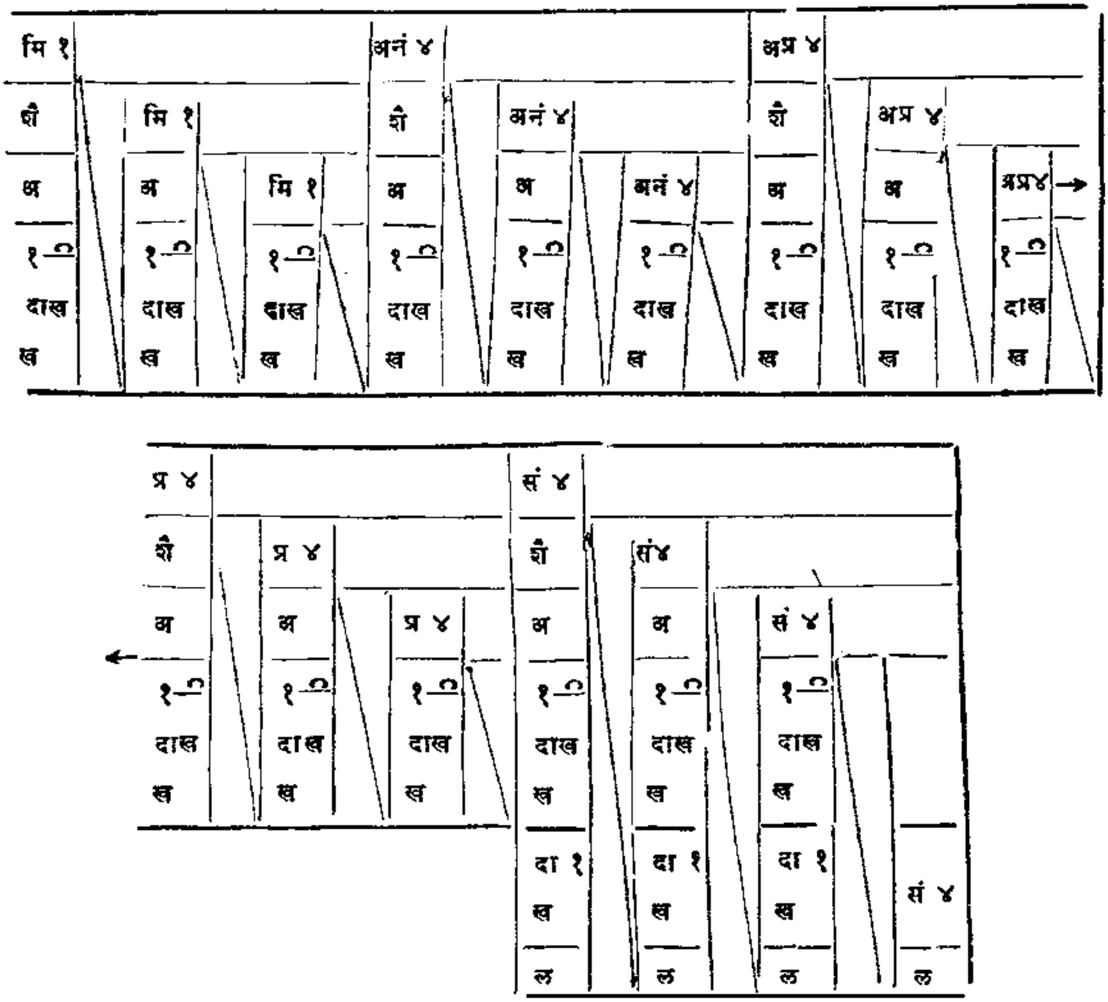

अत्र मिथ्यात्वेन सहोदीयमानाः कषायाः सम्यक्त्वं घ्नंति। अनंतानुबंधिना च सम्यक्त्वसंयमौ। अप्रत्याख्यानेन देशसकलसंयमौ। प्रत्याख्यानेन सकलसंयमं संज्वलनदेशघात्युदयो यथाख्यातमिति सिद्धम्। एवं द्वादशकषायाणां सर्वघातिसंज्वलनानां च कथंचिद्भेदेऽपि शक्तिसादृश्यात्समानकार्यकरणाच्च क्रोधादिभेदाच्चातुर्विध्यं ज्ञातव्यम्। तत्र क्रोधे नामबंधस्थानानि नारकेषु द्वे २९।३०। तिर्यग्गतावाद्यानि षट्। मनुष्येषु सर्वाणि, देवगतौ चत्वारि २५ २६ २९ ३०। एवं मानादित्रयेऽपि ज्ञातव्यं ज्ञानमार्गणायामज्ञानत्रये आद्यानि षट्।

क्रोधकषायमें नामके बन्धस्थान नारकियोंमें उनतीस और तीस दो हैं। तिर्यंचगतिमें आदिके छह हैं। मनुष्योंमें सब हैं। देवगतिमें चार हैं—पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीस।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यितु द्वादश कषायंगळगं संज्वलन सर्व्वघातिशक्तिगं कथंचिच्छक्तिभेदर्दिदं भेदमिल्ल। सदृशशक्तित्वर्दिदं समानकार्य्यत्वर्दिदं समानंगळप्पुदरिं ॥ जात्याश्रयणर्दिदं क्रोधमानमायालोभभेदर्दिदं कषायमार्गणे चतुर्भेदमेंब प्रकृतार्त्थमुं सुसिद्धमादुदल्लि क्रोधकषायोदय जीवंगळु चतुर्गतिगळोळ मोळरप्पुदरिंदं नारकरोळु द्विस्थानबंधमक्कुं। २९। ३०। तिर्य्यग्गतियोळाद्य षट्स्थानंगळु बंधमप्पुवु। मनुष्यरोळु मिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणपर्य्यंतं सर्व्वस्थानंगळु बंधमप्पुवु। देवगतियोळु चतुस्थानंगलिवु बंधमप्पुवु। २५। २६। २९। ३०। ज्ञानमार्ग्गणेयोळु प्रथमतन षट्कमज्ञाने कुमति कुश्रुतविभंगमेंब अज्ञानत्रयदोळु मोदल षट्स्थानंगळु बंधमक्कु २३।२५।२६। कु।कु।वि २८। २९। ३० मदेंतेंदोडे नारकरोळं तिर्य्यंचरोळं मनुष्यरोळं देवर्क्कळोळं मिथ्यादृष्टिसासादनरुगळु कुमतिकुश्रुत ज्ञानिगळुं। कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानिगळु मोळरप्पुदरिंदं। तत्तवुपयोगविवक्षेयिदं नारककुमतिकुश्रुत विभंगज्ञानिगळु संज्ञिपंचेंद्रिय पर्य्याप्त तिर्य्यग्गतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमनुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं । मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। तिर्य्यंचरोळेकेंद्रिय बादरसूक्ष्म विकलत्रयबादरपर्य्याप्तापर्य्याप्त कुमतिकुश्रुत ज्ञानिजीवंगळु नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि यथायोग्यतिर्य्यग्मनुष्यगतियुत त्रयोविंशत्यादि पंचनामकर्म्मस्थानंगळं कट्टुवरु। पंचेंद्रियतिर्य्यग्मनुष्यापर्य्याप्त कुमतिकुश्रुतज्ञानि मिथ्यादृष्टिगळुमा पंचस्थानंगळं कट्टुवरु। पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यक्कुमतिकुश्रुतविभंग ज्ञानि मिथ्यादृष्टि सासादनरुगळु यथायोग्यमागि चतुर्ग्गतियुत नामकर्म्मबंधस्थानंगळारुमं कट्टुवरु। मनुष्यकुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानि मिथ्यादृष्टिसासादनरुगळुं यथायोग्यचतुर्ग्गतियुत षट्स्थानंगळं कट्टुवरु। देवर्क्कळोळु भवनत्रय सौधर्म्मकल्पद्वय कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानि मिथ्यादृष्टि सासादनरुगळु यथायोग्य पंचविंशति षड्विंशति नवविंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळं तिर्य्यग्गतियुतमागि नवविंशतिस्थानमं मनुष्यगतियुतमागि कट्टुवरु। शेष सानत्कुमारादि शतारसहस्रारावसानमाद देवर्क्कळोळु कुमतिकुश्रुतविभंग-

---

तत्र नारकेषु तिर्यग्गतिमनुष्यगतिपर्याप्तयुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे। एकविकलेंद्रिये कुमतिकुश्रुते नरकदेवगतियुताष्टाविंशतिकवर्जितयोग्यतिर्यग्मनुष्यगतियुतत्रयोविंशतिकादीनि पंच। पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्यापर्याप्तकुमतिकुश्रुतिमिथ्यादृष्टावपि तानि पंच, कुज्ञानत्रये मिथ्यादृष्टिसासादने पर्याप्तपंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्ये योग्यचतुर्गतियुतानि षट्। भवनत्रयसौधर्मद्वये तिर्यग्गतियुतयोग्यपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कमनुष्यगति-

---

इसी तरह मानादि तीनमें जानना। ज्ञानमार्गणामें तीन अज्ञानोंमें आदिके छह हैं। उनमें-से नारकोंमें तिर्यंचगति, मनुष्यगति पर्याप्त सहित उनतीस और उद्योत सहित तीस ये दो हैं। एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रियमें कुमति-कुश्रुतमें नरकगति देवगति सहित अठाईसको छोड़ तिर्यंचगति मनुष्यगति सहित तेईस आदि पाँच हैं। पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त कुमति कुश्रुत सहित मिथ्यादृष्टिमें भी वे ही पाँच हैं। तीन कुज्ञान सहित मिथ्यादृष्टि सासादनमें और पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्योंमें यथायोग्य चतुर्गतियुत छह स्थान हैं। भवनत्रिक और सौधर्म युगलमें तिर्यंचगति सहित यथायोग्य पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीस तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानिमिथ्यादृष्टिसासादनरुगळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुत नवविंशतिस्थानमुमं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुद्योतयुतमुमं मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। मेलानतादिकल्पजरोळं नवग्रैवेयकंगळोळं कुमतिकुश्रुतविभंग ज्ञानिमिथ्यादृष्टिसासादनरुगळु मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमों दने कट्टुवरेकें दोडे तदो णत्थि सदरचऊ एंब नियममुंटप्पुदरिंदं ॥

सण्णाणे चरिमपणं केवलजहखादसंजमे सुण्णं ।
सुदमिव संजमतिदये परिहारे णत्थि चरिमपदं ॥५४७॥

संज्ञाने चरमपंच केवलयथाख्यातसंयमे शून्यं । श्रुतमिव संयमत्रितये परिहारे नास्ति चरमपदं ॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्य्यय सत् ज्ञानचतुष्टयदोळु त्रयोविंशति षड्विंशति प्रकृतिनामकर्म्मबंधस्थानंगळ कळेदु शेषाष्टाविंशत्यादि पंचस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । म । श्रु । अ । म । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । मतिश्रुतावधिज्ञानत्रयंगळु नारकरोळं संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यंचरोळं मनुष्यपर्य्याप्तरोळं भवनत्रयादि सर्व्वार्थसिद्धि पर्य्यवसानमाद देवर्क्कळोळमप्पुवल्लि सप्तपृथ्विगळ नारकासंयत सम्यग्दृष्टिगळु मनुष्यगतियुतनवविंशतिस्थानमं कट्टुवरु मेघे पर्य्यंतमाद मूरुं पृथ्विगळ असंयतसम्यग्दृष्टिगळु मनुष्यगतितीर्त्थंयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु । सौधर्म्मादिदेवर्क्कळुगळा मनुष्यगतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं तीर्त्थमनुष्यगतियुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। भवनत्रयत्रिज्ञानिगळु मनुष्यगतियुत नवविंशतिस्थानमों दने कट्टुवरु।

युतनवविंशतिकानि । सानत्कुमारादिसहस्रारांते संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे । आनतादिनवग्रैवेयके मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव 'तदो णत्थि सदरचऊ' इति नियमात् ॥५४६॥

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानेष्वष्टाविंशतिकादीनि पंच त्रयोविंशतिकपंचविंशतिषड्विंशतिकाभावात्, मतिज्ञानादित्रयं पर्याप्तापर्याप्तनारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यदेवेषु । तत्र नारके मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमाद्यपृथ्वीत्रये तु मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमपि, सौधर्मादिदेवे ते एव द्वे, भवनत्रये मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव, तिरश्चि

मनुष्यगति सहित उनतीस ये पाँच स्थान हैं। सानत्कुमारसे सहस्रार पर्यन्त संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच और मनुष्यगति सहित उनतीस, तथा उद्योत सहित तीस ये दो स्थान हैं। आनतादि नौ ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्यगति सहित उनतीसका ही स्थान है; क्योंकि 'तदो णत्थि सदरचऊ' इस वचनके अनुसार वहाँ तिर्यंचगति सहित स्थान नहीं होता ॥५४६॥

मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्ययज्ञानमें अठाईस आदि पाँच स्थान हैं, उनमें तेईस, पच्चीस और छब्बीसके स्थान नहीं होते।

मतिज्ञान आदि तीन पर्याप्त अपर्याप्त नारकी, संज्ञीतिर्यंच तथा मनुष्यों और देवोंमें होते हैं। उनमेंसे नारकियोंमें मनुष्यगति सहित उनतीसका स्थान होता है। प्रथम तीन नरकोंमें मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीस भी होता है। सौधर्म आदिके देवोंमें भी वे ही दो स्थान होते हैं। भवनत्रिकमें मनुष्यगति सहित उनतीसका ही स्थान होता है। तिर्यंचमें देवगति सहित अठाईसका स्थान होता है। मनुष्यमें देवगति सहित अठाईस और देवगति तीर्थंकर सहित उनतीस ये दो स्थान होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिर्य्यंचमतिश्रुतावधिज्ञानिगळप्प असंयतसम्यग्दृष्टिगळुं देशसंयतरुगळुं देवगतियुताष्टाविंशति स्थानमनों दने कट्टुवरु। मनुष्यगतिय मनुष्यासंयतसम्यग्दृष्टिगळुं देशसंयतरुगळप्प मतिश्रुतावधिज्ञानिगळुं देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुमं देवगतितीर्त्थयुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। मतिश्रुतावधिमनःपर्य्यय ज्ञानिगळप्प प्रमत्तसंयतरुगळुं देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुमं देवगतितीर्त्थयुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। अप्रमत्तापूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतमाद चतुर्ज्ञानधररुगळु देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुमं देवगतितीर्त्थयुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं देवगत्याहारकद्वययुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं देवगतितीर्त्थाहारकद्वययुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। अपूर्व्वकरणसप्तमभागं मोदलागि अपूर्व्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायचतुर्ज्ञानदिव्यसंयमिगळु यशस्कीर्त्तिनामकर्म्मबंधस्थानमनों दने कट्टुवरेंबुदर्त्थं। केवलज्ञानिगळोळु नामकर्म्मबंध शून्यमक्कुं। के। ०॥ सामायिकछेदोपस्थापनपरिहारविशुद्धिगळेंब संयमत्रितये संयमत्रितयदोळु श्रुतमिव श्रुतज्ञानदोळु पेळ्दंतयक्कुमेंदितु चरमपंचस्थानंगळप्पुवल्लि परिहारे नास्ति चरमपदं एंदितु परिहारविशुद्धि संयमिगळोळु चरमपदमेकप्रकृति नामकर्म्मबंधस्थानमिल्ल। सा। छे। २८। २९। ३०। ३१। १। परिहार। २८। २९। ३०। ३१। अदेंतेंदोडिल्लि सम् एंदितु सम् शब्दमेकीभावार्त्थदोळु वर्त्तिसुगुमदेंतेंदोडे घृतसंगतं तैलमें बितेकीभूतमाद्दुदें बुदर्त्थंमंते सम् एकत्वेन अयोगमन समयः समय एव सामायिकं समयः प्रयोजनमस्येति वा सामायिकं यें दितो निरुक्ति सिद्धमप्प सामायिकमिनितु क्षेत्रदोळिनितु कालदोळें दितु नियमिसल्पडुत्तिरलु सामायिकसंयमदोळिरुत्तिर्द्द

देवगतियुताष्टाविंशतिकं, मनुष्ये तच्च देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकं च। चतुर्ज्ञानप्रमत्ते ते द्वे, तदप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांते तद्द्वयं च, देवगत्याहारकद्वययुतत्रिंशत्कदेवगतितीर्थाहारयुतैकत्रिंशत्के च। तत्सप्तमभागादिसूक्ष्मसाम्परायांते यशस्कीर्तिरूपैकं। केवलज्ञाने नामबंधशून्यं। सामायिकादिसंयमत्रये श्रुतमिव पंच स्थानानि। तत्र परिहारविशुद्धौ न चरमपदं नैककं स्थानमस्ति। तत्र सम्-एकीभावेन अयः-गमनं समयः, समय एव सामायिकं। समयः प्रयोजनमस्येति वा सामायिकं। एतावति क्षेत्रे काले च नियमिते सति स्थितस्य मुनेर्महाव्रतं स्यात्, न केवलं कृतस्थूलसूक्ष्मजीवहिंसादिनिवृत्तेः तस्यास्तद्घात्युदयेऽर्हच्छ्रुतलिंगवन्मिथ्यादृष्टावपि संभवात्कुल राज-

चार ज्ञान सहित प्रमत्तमें अठाईस, उनतीस दो स्थान हैं। अप्रमत्त और अपूर्वकरणके षष्ठ भाग पर्यन्त भी वे दो तथा देवगति आहारकद्विक सहित तीस और देवगति तीर्थंकर आहारद्विक सहित इकतीस ये चार स्थान होते हैं। अपूर्वकरणके सप्तम भागसे सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त एक यशस्कीर्तिरूप एक स्थान है। केवलज्ञानमें नामकर्मका बन्ध नहीं होता।

सामायिक आदि तीन संयममें श्रुतज्ञानकी तरह पाँच स्थान हैं। किन्तु परिहारविशुद्धिमें एक प्रकृतिक बन्धस्थान नहीं होता।

'सम्' अर्थात् एकीभावसे 'अयः' अर्थात् गमनको समय कहते हैं। और समय ही सामायिक है। अथवा समय जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है। इतने क्षेत्र और इतने कालका नियम लेकर स्थित मुनिके महाव्रत होता है केवल स्थूल और सूक्ष्म जीवोंकी हिंसा आदिका त्याग करनेसे महाव्रत नहीं होता क्योंकि ऐसी क्रिया तो चारित्रमोहके उदय होते हुए अर्हन्तलिंगके धारी मिथ्यादृष्टिके भी होती है। जैसे राजकुलमें सर्वत्र गतिवाले चैत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनिगे महाव्रतत्वमरियल्पडुगुं। स्थूलसूक्ष्मजीवंगळोळु माडल्पट्ट हिंसादिनिवृत्तियिंदमा संयममक्कुमेनल्वेडेके दोडदक्के मिथ्यादृष्टिगळोळर्हच्छ्रुतमर्हल्लिंगवंतरोळु घातिकर्म्मोदयसद्भावमप्पुदरिदं। अंतादोडदक्के महाव्रतत्वाभावमक्कुमें दोडागदेकेंदोडदक्कुचार महाव्रतत्वमक्कु में तीगळु [1]राजकुलसर्व्वगत [3]चैत्रंगे तदभिधानमें तंते। यितु देशकालंगळ इयत्ता परिच्छित्तियिंदमेकत्ववृत्तिवर्त्तनं सामायिकमें बुदा सकलसावद्याद्विरतोस्मि ये दितु कै यिक्किदई सामायिकसंयमियोळु पंचमहाव्रतंगळु पंचसमितिगळु त्रिगुप्तिगळुमें ब त्रयोदशविधचारित्रं पडेयल्पप्पुवल्लि पंचमहाव्रतंगळे बवु प्रमादयोगंगळिदं प्राणव्यपरोपणलक्षण हिंसानिवृत्तिलक्षणाहिंसाव्रतपरिपालनार्त्थमनृतस्तेयाब्रह्म परिग्रह निवृत्तिलक्षण सत्यादिमहाव्रतंगप्पुवु। पंचसमितिगळे बुवु सम्यगीर्य्येयु सम्यग्भाषेयु सम्यगेषणेयु सम्यगादाननिक्षेपणंगळु सम्यगुत्सर्गमुं विदितजीवस्थानादिविधियनुळ्ळ मुनिगे प्राणिपीडापरिहाराभ्युपायंगळप्पुदरिनो पंचसमितिगळु गुप्तित्रयमें बवु। सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ये दितिल्लि कायवाङ्मनोव्यापारमं योगमें बुदु। आकायवाग्मनोव्यापारक्के स्वेच्छाप्रवृत्तिनिवर्त्तनमं निग्रहमें बुदु। अदुवुं विषयसुखाभिलाषार्त्थवृत्तिनिषेधार्त्थमादुदादोडे सम्यक्के बुदक्कु-। मा संक्लेशप्रादुर्भावकारणमल्लद कायवाग्मनोव्यापारनिग्रहलक्षणगुप्तियुमितिनितु महिंसाव्रतपरिपालन सम्यगुपायंगळप्पुदरिदमी त्रयोदशविधचारित्रमुमा सामायिकसंयमांतर्भाविय प्पुदरिदं। श्रीवर्द्धमानस्वामियिंदं पेरगण चिरंतनोत्तम संहननयुतजिनकल्पाचरण परिणतरोळेकविध सामायिकसंयममक्कुं। श्रीवीरवर्द्धमानस्वामियिंदं यी पंचमकाल स्थविरकल्पाल्पसंहननयुत

सर्वगतचैत्रस्य राजाभिधानवत्तस्योपचारेणैव तदभिधानात्। तत एव देशकालयोरियत्तापरिच्छित्त्यैकत्ववृत्तिरेव सामायिकं सिद्धं। 'प्रमादयोगैः प्राणव्यपरोपणं हिंसा' तन्निवृत्तिरहिंसा महाव्रतं। अनृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहनिवृत्तयः सत्यादिमहाव्रतानि। सम्यगीर्याभाषैषणादाननिक्षेपणोत्सर्गाः पंच समितयः। सम्यग्योगनिग्रहास्तिस्रो गुप्तयः। कायवाङ्मनोव्यापारा योगाः। तेषां स्वेच्छाप्रवृत्तिनिवृत्तयः निग्रहास्ते च विषयसुखाभिलाषानुवृत्तिनिषेधार्थजाताः सम्यगित्युच्यंते। सत्यादयोऽहिंसाव्रतपरिपालनसम्यगुपायाः। ते चामी त्रयोदश सर्व-

नामक व्यक्तिको उपचारसे राजा कह देते हैं उसी प्रकार उस क्रियाको उपचारसे महाव्रत कहते हैं। इसीसे देश और कालकी मर्यादा करके एकत्वरूप वृत्ति ही सामायिक है यह सिद्ध होता है।

प्रमादयोगके द्वारा प्राणोंके घातको हिंसा कहते हैं और उसकी निवृत्ति अहिंसा महाव्रत है। असत्य, चोरी, अब्रह्म और परिग्रहसे निवृत्ति सत्यादि महाव्रत है। सम्यक् ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेप और उत्सर्ग ये पाँच समिति हैं। सम्यक् योगनिग्रहरूप तीन गुप्ति हैं। मन-वचन-कायके व्यापारको योग कहते हैं। उनकी स्वेच्छाचारपूर्वक प्रवृत्तिसे निवृत्तिको निग्रह कहते हैं। वे गुप्तियाँ विषयसुखकी अभिलाषाकी अनुवृत्तिका निषेध करनेके लिए होनेसे सम्यक् कही जाती हैं। सत्य आदि अहिंसा व्रतका परिपालन करनेके समीचीन उपायरूप हैं। ये तेरह 'मैं सर्वसावद्यसे विरत हूँ' इस प्रकार स्वीकार किये गये सामायिक

१. संयमघाति। २. राजालय। ३. सर्व्वस्थानमनैदिद कश्चित्पुरुषंगे यिदेनेंबुदेंदोडे राजालयदोळसलिगेयुळळ पुरुषनोर्व्वंगे स्थिति योंदेडेयोळप्पोडं राजालयदोळेल्लियु मितगे येंब सर्व्वगतत्वमेंतंते एंबुदर्थं। कोर्थं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयमिगळोळु त्रयोदशविधत्वदिदं पेळल्पट्टुवु। तत्सामायिक संयमनियतक्षेत्रद्विविधकालप्रमाद-कृतानर्थप्रबंधविलोपनदोळु सम्यक्प्रतिक्रिये च्छेदोपस्थापनमें बुदु विकल्पनिवृत्ति मेणु छेदोप-स्थापनमक्कुं।

परिहरणं परिहारः। प्राणिवध निवृत्ति यें बुदर्थं। परिहारेण विशिष्टा विशुद्धिर्यस्मिन्स परिहारविशुद्धिस्संयमः। एंदितु प्राणिपीडानिवृत्ति विशिष्ट विशुद्धियुताचरणं परिहारविशुद्धि-संयममें बुदक्कुं॥ सूक्ष्मः सांपरायः कषायो यस्मिन्स सूक्ष्मसांपरायस्संयमः एंदितु संज्वलन लोभ सूक्ष्मकृष्टघनुभागानुभवयुताचरणं सूक्ष्मसांपरायसंयममें बुदु॥ मोहनीयस्य निरवशेषस्योपशमात् क्षयाच्चात्मस्वभावावस्थोपेक्षालक्षणं यथाख्यातं चारित्रमित्याख्यायते। पूर्व्वंचारित्रानुष्ठायि-भिर्म्मोहक्षयोपशमाभ्यां प्राप्तं यथाख्यातं। न तथाख्यातं। यथाशब्दस्यानंतर्य्यात्थर्यवृत्तित्वान्निखशेष-मोहक्षयोपशमानंतरमाविर्भ्भवतीत्यर्थः। तथाख्यातमिति वा। यथात्मस्वभावोऽवस्थितः तथैवा-ख्यातत्वात्। एंदितु प्रमत्तसंयताद्यनुष्ठातृगळिदं दर्शनचारित्रमोहक्षयोपशमंगळिवमनुष्ठिसल्पट्टुदेंदु पेळल्पट्टुदंतल्लिदु मोहनीयनिरवशेषोपशम क्षयंगळिदमाचरिताचरणं यथाख्यातचारित्रमें बुदक्कुं। यथाशब्दक्कानंतर्य्यात्थंवृत्तित्वमुंटप्पुदरिदं। न तथाख्यातं यथाख्यातं यें दितिल्लि न तथाख्यातमें-बुदें तु पडेयल्बक्कुमें दोडे यथाख्यातशब्दसामर्त्थ्यदिदं पडेयल्बक्कुं। तथाख्यातमें दितु मेणु यथात्मस्वभावमवस्थितमंते पेळल्पट्टुदरत्तणिदं। यें दितु सिद्धस्वरूपंगळप्प पंचसंयमंगळोळु

सावद्याद्विरतोऽस्मीति स्वीकृतसामायिकेंऽतर्भवंति। तत एव श्रीवर्धमानस्वामिना प्रोक्तमोत्तमसंहननजिनकल्पा-चरणपरिणतेषु तदेकधा चरित्रं। पंचमकालस्थविरकल्पाल्पसंहननसंयमिषु त्रयोदशधोक्तं। तन्नियतक्षेत्रद्विधा-कालप्रमादकृतानर्थप्रबंधविलोपने सम्यक्प्रतिक्रिया विकल्पनिवृत्तिर्वा छेदोपस्थापनं। परिहरणं परिहारः प्राणि-वधनिवृत्तिरित्यर्थः। तेन विशिष्टा शुद्धिर्यस्मिन्स परिहारविशुद्धिः। सूक्ष्मः सांपरायः कषायो यस्मिन् स सूक्ष्मसांपरायः। मोहनीयस्य निरवशेषोपशमात् क्षयाद्वात्मस्वभावावस्थोपेक्षालक्षणः यथाख्यातः। पूर्वचारित्रा-नुष्ठायिभिर्मोहक्षयोपशमाभ्यां प्राप्तं यथाख्यातं न तथाख्यातं यथाशब्दस्यानंतर्यार्थवृत्तित्वान्निरवशेषमोहक्षयोप-

---

चारित्रमें गर्भित हैं। इसीसे श्रीवर्धमान स्वामीने पूर्वमें उत्तम संहननके धारी जिनकल्प आचरण परिणत मुनियोंके चारित्र सामायिकरूपमें एक प्रकारका कहा है। और पंचमकाल-के हीन संहननवाले स्थविरकल्पियोंमें वही चारित्र तेरह प्रकारका कहा है।

सामायिक संयममें निर्धारित क्षेत्र और नियत-अनियत कालमें प्रमादवश किये गये अनर्थको दूर करनेके लिए जो सम्यक् प्रतिक्रिया है अर्थात् उस दोषकी शुद्धिका उपाय वह छेदोपस्थापना चारित्र है। अथवा सर्वसावद्यके भेद करके त्याग करनेको छेदोपस्थापना चारित्र कहते हैं। प्राणिहिंसासे निवृत्ति परिहारका अर्थ है। उससे विशिष्ट शुद्धि जिसमें हो वह परिहारविशुद्धि चारित्र है। जिसमें सूक्ष्म कषाय है वह सूक्ष्म साम्पराय चारित्र है। समस्त मोहनीय कर्मके उपशमसे या क्षयसे आत्मस्वभावमें अवस्थिति, उपेक्षालक्षण-वाला यथाख्यात चारित्र है। पूर्वचारित्रके धारियोंने मोहका उपशम या क्षय करके जिसे प्राप्त किया वह यथाख्यात चारित्र है। यथा (अथ) शब्द अनन्तरवाची है। सो समस्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामायिकच्छेदोपस्थापन संयमद्वयं प्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वानिवृत्तिकरणगुणस्थान चतुष्टयदोळमक्कुमल्लि प्रमत्तगुणस्थानदोळु देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमुं देवगतितीर्त्थयुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुं बंधमक्कुमप्रमत्तसंयतगुणस्थानदोळमपूर्व्वकरणषष्ठभागपर्य्यंतं देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुं देवगतितीर्त्थयुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुं देवगत्याहारकयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं देवगतितीर्त्थहारयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं नाल्कुं बंधमप्पुवु। अपूर्व्वकरणचरमभागं मोदल्गोंडु अनिवृत्तिकरणनोळमेकप्रकृतिस्थानं बंधमक्कुं। यथाख्यातसंयमदोळं सूक्ष्मसांपरायसंयमदोळं मुंदे पेळ्दपरु।

परिहारविशुद्धिसंयमं प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरोळेयक्कुमप्पुदरिंदं परिहारे नास्ति चरमपदं येंदितु पेळल्पट्टुदु। अल्लि देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुं। देवगतितीर्त्थयुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमुं। परिहारविशुद्धिसंयमि प्रमत्तनोळक्कुं। देवगतियुताष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळप्रमत्तपरिहारविशुद्धिसंयमियोळक्कुं। २८। २९। ३०। ३१।

परिहारविशुद्धि संयमदोळु श्रेण्यारोहणमिल्लप्पुदरिंदं। चरमपदमेकप्रकृतिस्थानं बंधमिल्ल॥

अंतिमठाणं सुहुमे देसाविरदीसु हारकम्मं वा।
चक्खूजुगले सव्वं सगसग णाणं व ओहिदुगे॥५४८॥

अंतिमस्थानं सूक्ष्मे देशाविरत्योराहारकार्म्मणवत्। चक्षुर्य्युगळे सर्व्वं स्वस्वज्ञानवदवधिद्विके॥

शमानंतरमाविर्भवतीत्यर्थः। तथाख्यातमिति वा यथात्मस्वभावोऽवस्थितस्तथैवाख्यातत्वात्। तत्राद्यसंयमद्वये प्रमत्ते देवगतियुताष्टाविंशतिकदेवगतितीर्थयुतनवविंशतिके द्वे। अप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांते तद्द्वयं च देवगत्याहारकद्विकद्वययुतत्रिंशत्कदेवगतितीर्थाहारयुतैकत्रिंशत्के च सप्तमभागेऽनिवृत्तिकरणे चैककं। परिहारविशुद्धौ प्रमत्ताप्रमत्तयोः सामायिकोक्तानि द्वे चत्वारि, नात्र श्रेण्यारोहणाभावादेकैकमस्ति॥५४७॥

मोहका उपशम या क्षय होनेके अनन्तर प्रकट होनेसे उसे अथाख्यात कहते हैं। अथवा उसे तथाख्यात भी कहते हैं। क्योंकि जैसा आत्माका स्वभाव है वैसा ही इसका स्वरूप कहा है।

इनमेंसे सामायिक और छेदोपस्थापना संयममें प्रमत्त गुणस्थानमें देवगति सहित अठाईस और देवगति तीर्थंकर सहित उनतीस ये दो बन्धस्थान हैं। अप्रमत्त और अपूर्वकरणके षष्ठ भाग पर्यन्त उक्त दोनों तथा देवगति आहारकद्विक सहित तीस और देवगति, तीर्थंकर आहारकद्विक सहित इकतीस ये चार स्थान होते हैं। अपूर्वकरणके सातवें भाग और अनिवृत्तिकरणमें एक प्रकृतिक एक ही बन्धस्थान है इस तरह प्रथम दो संयमोंमें पाँच बन्धस्थान हैं।

परिहारविशुद्धिमें प्रमत्त और अप्रमत्तमें सामायिकमें कहे दो और चार स्थान हैं। यहाँ एकबन्धक स्थान नहीं है क्योंकि परिहारविशुद्धिवाला श्रेणिपर आरोहण नहीं कर सकता॥५४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मसांपरायसंयमदोळु अंतिमस्थानमों दे बंधमक्कुं । सू १ । य । सं । यथाख्यातचारित्रदोळु केवलज्ञानदोळु पेळ्दंते नामकर्म्मबंधं शून्यमक्कुं । देशविरत्यविरत्योराहारककार्म्मणवत् देशविरतियोळाहारकदोळ्पेळ्दंते देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुं देवगतितीर्थयुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमुं बंधमप्पुवु । देश । २८ । २९ ॥ तिर्य्यक्संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तकर्म्मभूमिजदेशसंयतनोळु देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमों देयक्कुं । दे । तिर्य्य । २८ ॥ अविरतियोळु कार्म्मणकाययोगदोळु पेळ्दंते अद्यतन षट्स्थानंगळु बंधमप्पुवु । अविरति । २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ई अविरति चतुर्ग्गतिजरोळमक्कुमप्पुदरिदं । नारकमिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतरोळं तिर्य्यंचमिथ्यादृष्टि सासादन मिश्रासंयतरोळं मनुष्यमिथ्यादृष्टि सासादनमिश्रासंयतरोळं देवमिथ्यादृष्टि सासादनमिश्रासंयतरोळमसंयममेयप्पुदरिदमल्लि नारकमिथ्यादृष्टियोळु पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं । मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमुं बंधमप्पुवु । सासादननारकासंयमियोळु मिथ्यादृष्टियोळें तंता स्थानद्वयमुं बंधमप्पुवु । मिश्रनारकासंयमियोळु मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमोंदे बंधमप्पुदु । नारकासंयतासंयमियोळु घर्म्मादिमेघावसानमाद त्रिभूमिजरोळु मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुं मनुष्यगतितीर्त्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं बंधमप्पुवु । शेषपृथ्वीज नारकासंयतासंयमिगळोळु मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमों दे बंधमक्कुं । तिर्य्यग्गतिय मिथ्यादृष्टि सर्व्वतिर्य्यंचासंयमिगळोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधमप्पुवल्लि विशेषमुंटदाउदें दोडे पृथ्वीकायैकेंद्रियबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तंगळु मोदलागि सर्व्वैकेंद्रियंगळुं विकलत्रयपर्य्याप्तापर्य्याप्तरुं पंचेंद्रियापर्य्याप्तजीवंगळु नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमं कट्टरेकें दोडे पुण्णिदरं इगिविगळे ये बितेकेंद्रिय-

सूक्ष्मसांपरायसंयमे अंतिमस्थानं बध्यते । यथाख्याते केवलज्ञानवन्नामबंधशून्यं । देशविरते आहारकवद्देवगतियुताष्टाविंशतिकदेवगतितीर्थयुतनवविंशतिके द्वे । तत्तिरश्चि देवगतियुताष्टाविंशतिकमेव । अविरतौ कार्मणवदाद्यानि षट् । अत्र नारके मिथ्यादृष्टौ सासादने च पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे । मिश्रे मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव । असंयते घर्मादित्रये तच्च मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं च । शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव । तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ त्रयोविंशतिकादीनि षट् । तत्र पर्याप्तापर्याप्तसर्वैकविकलेंद्रियेष्वपर्याप्तपंचेंद्रिये च, न च नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकं 'पुण्णिदरं विगि-

सूक्ष्मसाम्पराय संयममें अन्तका ही स्थान बँधता है। यथाख्यातमें केवलज्ञानकी तरह नामकर्मके बन्धका अभाव है। देशविरतमें आहारकवत् देवगति सहित अठाईस और देवगति तीर्थंकर सहित उनतीस ये दो स्थान हैं। देशसंयमी तिर्यंचमें देवगति सहित अठाईसका ही बन्ध स्थान है। अविरतमें कार्माणकी तरह आदिके छह स्थान हैं। नारकी मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यग्दृष्टीके पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहित या मनुष्यगति सहित उनतीस, उद्योत सहित तीस ये दो स्थान हैं। मिश्रमें मनुष्यगति सहित उनतीसका ही बन्धस्थान है। असंयतमें घर्मादि तीनमें मनुष्यगति सहित उनतीस और मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीस ये दो हैं। शेष नरकोंमें मनुष्यगति सहित उनतीसका ही स्थान है। तिर्यंचगतिमें मिथ्यादृष्टिमें तेईस आदि छह हैं। किन्तु वहां पर्याप्त-अपर्याप्त सब एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रियोंमें और अपर्याप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विकलत्रयसर्व्वजीवंगळोळं बंधयोग्यमल्तप्पुदरिदं। तेजोवायुकायिकबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तजीवंगळु मनुष्यगत्यपर्य्याप्तपंचविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टरु। पर्य्याप्तमनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टरु। कारणमेनें दोडे "मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं ण हि तेउवाउम्मि" एंदितु जिनदृष्टमप्पुदरिदं। शेषमिथ्यादृष्ट्यसंयमितिर्य्यंचरुगळु तिर्य्यग्गति मनुष्यगतियुतमागि यथायोग्यं षट्स्थानंगळं कट्टुवरु। तिर्य्यंचसासादनासंयमिगळु नियमदिदं संज्ञिपंचेंद्रिय पर्य्याप्ततिर्य्यंचनेयक्कुमा जीवं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि असंयतनक्कुमथवा देशव्रतमुमं प्रथमोपशम सम्यक्त्वमुमं युगपत्स्वीकरिसि देशव्रतियक्कुमागियुमा ईर्व्वरुमनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सासादननक्कुमा जीवनोळु तिर्य्यग्गतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं मनुष्यगतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुं देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमुं बंधमप्पुवु। मी सासादनासंयमिजीवंगे मरणमादोडे नरकगतिवर्ज्जितमागि शेषतिर्य्यग्गतियोळं मनुष्यगतियोळं देवगतियोळं सासादनासंयमियुत्कृष्टदिदं समयोनषडावलिकालपर्य्यंतमुं जघन्यदिमेकसमयं सासादनासंयमिगळप्परल्लि तिर्य्यंचसासादनरप्पोडे 'ण हि सासणो अपुण्णे साहारण सुहुमगेसु तेउदुगे' यें दितिनितुं स्थानंगळोळु पुट्टुवरल्लं। शेषैकेंद्रियविकलत्रयपंचेंद्रियसंज्ञ्यसंज्ञिजीवंगळोळु पुट्टुवु। अल्लि एकेंद्रियविकलत्रय पंचेंद्रियसंज्ञ्यसंज्ञिजीवंगळोळु पुट्टिदसासादननुं नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमं कट्टुवनल्लं। शरीरपर्य्याप्ति नेरेयद मुन्नमा सासादनत्वं पोगि नियमदि मिथ्यादृष्टियेयक्कु। मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु पर्य्याप्तियिदं मेलल्लदे नरकगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानं बंधमिल्ल।

विगले' इति तेषु तदबंधात्। नापि बादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ततेजोवायुषु मनुष्यगत्यपर्याप्तयुतपंचविंशतिकपर्याप्तमनुष्यगतियुतनवविंशतिके 'मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं णहि तेउ वाउम्मीति तेषु तद्बंधनिषेधात्। प्रथमोपशमसम्यक्त्वं तद्युतदेशव्रतं वा विराध्य जातसासादनस्तिर्यङ् तिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कदेवगतियुताष्टाविंशतिकानि बध्नाति। मरणे नरकवर्जितगतिषूत्कृष्टेन समयोनषडावलिकालं जघन्येनैकसमयं सासादनस्तिर्यङ् तदा 'णहि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे' इति शेषैकेंद्रियविकलत्रयसंज्ञ्यसंज्ञ्येव नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकमबध्नन् शरीरपर्याप्तेः प्राक् सासादनत्वं त्यक्त्वा नियमेन मिथ्यादृष्टि-

---

पंचेन्द्रियमें नरकगति, देवगति सहित अट्ठाईसका स्थान नहीं है; क्योंकि 'पुण्णिदरं विगिविगले'के अनुसार वहाँ उसका बन्ध नहीं होता। तथा बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त-तेजकाय, वायुकायमें मनुष्यगति अपर्याप्त सहित पच्चीसका और पर्याप्त मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध नहीं होता। क्योंकि उनमें उनके बन्धका निषेध है।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व और उससे युक्त देशव्रतकी विराधना करके सासादन हुआ तिर्यंच, तिर्यंचगति या मनुष्यगति सहित उनतीस और उद्योत सहित तीसका तथा देवगति सहित अठाईसका बन्ध करता है। मरण होनेपर नरकगतिके बिना अन्य गतियोंमें उत्कृष्टसे एक समय हीन छह आवली और जघन्यसे एक समय पर्यन्त अपर्याप्तदशामें सासादन होता है। अतः सासादन तिर्यंच 'ण हि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे' इस वचनके अनुसार एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, संज्ञी-असंज्ञी जीव ही अपर्याप्त सासादन होता है। सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञिसंज्ञिजीवंगळगे देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमेके बंधमिल्लेंदु पेळ्वरेकेंदोडे "मिच्छ दुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि एंदिता असंज्ञिसंज्ञितिर्य्यंचसासादननोळं देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुं बंधमिल्लेंदितु निश्चइसुवुदु। संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यंचने मिश्रतिर्य्यंचासंयमियप्पुदरिदं। देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुगुमेकेंदोडे सासादनगुणस्थानदोळे तिर्य्यग्गतिगं मनुष्यगतिगं बंधव्युच्छित्तियक्कुमेंतेंदोडे "उवरिमछण्णं च छिदी सासणसम्मे हवे णियमा" एंदितु पेळल्पट्टुदरिदं। असंयततिर्य्यंचासंयमियोळु देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमोंदे बंधमक्कुमेकेंदोडे 'तिरिये ओघो तित्थाहारूणा' येंदु तीर्त्थाहारकद्वयबंधं निषेधिसल्पट्टुदप्पुदरिदं। मिथ्यादृष्टिमनुष्याऽसंयमियोळु अपर्य्याप्तमनुष्या संयमियेंदुं पर्य्याप्तमनुष्यासंयमियेंदितु मनुष्यमिथ्यादृष्ट्यसंयमिगळु द्विविधमप्परल्लि लब्ध्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्ट्यसंयमिगळु नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानं पोरगागि शेषतिर्य्यग्मनुष्यगतियुत त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळं कट्टुवरु। पर्य्याप्तमनुष्य मिथ्यादृष्ट्यसंयमिगळुमा अष्टाविंशति प्रकृतिस्थानयुतमागि यथायोग्यं त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळं चतुर्गतियुतमागि कट्टुवरु। सासादनमनुष्यासंयमिगळेववरुगळु "चदुगदिमिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भजविसुद्धसागारो। पढमुव-

भूत्वा पर्याप्तेरुपरि बध्नाति। संज्ञ्यसंज्ञिनावपि तत्कथं न बध्नतः? 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहीति अस्मिन् सासादने तयोरपि तदघटनात्। तिर्यग्मिश्रोऽसंयतो वा संज्ञिपर्याप्त एव तन्मिश्रे देवगतियुताष्टाविंशतिकमेव 'उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे' इति तिर्यग्मनुष्यगत्योरस्य बंधाभावात्। तदसंयतेऽपि तदेव तिर्यग्जीवे तीर्थाहाराणामबंधात्। मनुष्ये मिथ्यादृष्टौ लब्ध्यपर्याप्ते नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकवर्जिततिर्यग्मनुष्यगतियुतत्रयोविंशतिकादीनि षट्। पर्याप्ते चतुर्गतियुतानि तानि षट्, चदुगदिमिच्छो सण्णीत्यादिसामग्रीसंपन्नः

नरकगति या देवगति सहित अट्ठाईसका बन्ध न करके शरीर पर्याप्तिके पूर्व ही सासादनपनेको छोड़ नियमसे मिथ्यादृष्टि होकर पर्याप्त होनेपर ही नरकगति अथवा देवगति सहित अट्ठाईसके स्थानको बाँधता है।

शंका— संज्ञी और असंज्ञी भी अठाईसके स्थानको क्यों नहीं बाँधते?

समाधान—'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि' इस आगम वचनके अनुसार सासादनमें संज्ञी-असंज्ञीके भी अठाईसका बन्ध नहीं होता।

मिश्र और असंयत गुणस्थानवर्ती तिर्यंच संज्ञी पर्याप्त ही होता है। सो मिश्रमें तो देवगति सहित अठाईसको ही बाँधता है। क्योंकि 'उवरिम छण्हं च छिदी' इत्यादि वचनके अनुसार तिर्यंचगति और मनुष्यगतिमें उसके बन्धका अभाव है। तथा असंयतमें भी वही स्थान बँधता है क्योंकि तिर्यंचके तीर्थंकर और आहारकका बन्ध नहीं होता। मनुष्यगतिमें मिथ्यादृष्टि लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यके तो नरकगति देवगति सहित अठाईसके बिना तेईस आदि छह स्थानोंका बन्ध होता है। और पर्याप्त मनुष्यके चारों गति सहित छहों स्थान बँधते हैं।

तथा 'चदुगति मिच्छो सण्णी' इत्यादि सामग्रीसे सम्पन्न जीव करणलब्धिके अन्तिम समयमें दर्शनमोहका उपशम करके प्रथमोपशम सम्यक्त्वी हुआ या प्रथमोपशम सम्यक्त्व

सम्मं गेण्हदि पंचमवरलद्धि चरिमम्हि ॥" एंदितो सामग्री विशेषविशिष्ट मनुष्यमिथ्यादृष्टिकरण-त्रयस्वरूपपंचम लब्धिपरिणतननिवृत्तिकरणचरमसमयदोळु दर्शनमोहनीयमनुपशमिसि प्रथमोप-शमसम्यक्त्वमनसंयतादि चतुर्ग्गुणस्थानंगळोळाउदानुमोंदु गुणस्थानदोळु यथायोग्यमप्पुदरोळ् स्वीकरिसि कथंचिदनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सम्यक्त्वमुमं सम्यक्त्वदेशव्रतमुमं सम्यक्त्व-महाव्रतमुमं केडिसि सासादनसम्यग्दृष्ट्यसंयमियक्कु मेकेंदोडनंतानुबंधिकषायक्के दर्शन-मोहक्केंतु प्रशस्तोपशम विधानमुंटंतदक्किल्लप्पुदरिंदं प्रशस्तोपशमदिनिरुत्तिर्द्दनंतानुबंधि-कषायोदयमुभयप्रतिबंधियप्पुदरिंदं । अंतप्प मनुष्यसासादनासंयमि पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुत-मागि नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमनुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमनितु तिर्य्यग्गतियुतमागि द्विस्थान-मनेकट्टुगुमेकेंदोडे मिथ्यादृष्टियोळेकेंद्रियविकलत्रयंगळगे बंधव्युच्छित्तियादुदप्पुदरिंदं । मत्तमा मनुष्यसासादनासंयमिमनुष्यगति पर्य्याप्तयुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुगुमी मनुष्यसासादनासंयमिगे मरणमादुदादोडे नरकगति पोरगागि मूरुं गतिगळोळु पुट्टुगुमल्लि तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळोळु पुट्टुवडे "ण हि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे" एंदितिनितुं स्थानंगळोळु पुट्टनप्पुदरिमवं बिट्टु शेष तिर्य्यग्मनुष्य गतिगळोळु पुट्टुगुमा तिर्य्यग्मनुष्यसासादनासंयमिगळु नरकगतियुताष्टाविंशतिस्थानमं "मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि" एंदितु देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमुमं कट्टरप्पुदरिंदमा स्थानं पोर-गागि स्वगुणस्थान कालमेन्नेवर मंनेवरं नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळने कट्टुवरु । मनुष्यतिर्य्यंच-सासादनासंयमिगळिगे मरणमागि देवगतियोळपुट्टिदरादोडमल्लियुमा नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळने कट्टुवरु । स्वगुणस्थानकालं पोदि बळिक्क मिथ्यादृष्टिगळागि शेषमिश्रकालदोळु अष्टाविंशति

करणलब्धिचरमसमये दर्शनमोहमुपशमय्य प्रथमोपशमसम्यक्त्वं तत्सहितदेशव्रतं तत्सहितमहाव्रतं वा प्राप्य तत्कालांतर्मुहूर्ते एकसमयतः षडावल्यंतेषु कालेष्वेकस्मिन्नवशिष्टेऽनंतानुबंधिनामप्रशस्तोपशांतानामन्यतमोदयेन लब्धगुणं हत्वा जातसासादनः एकविकलेंद्रियाणां मिथ्यादृष्टावेव बंधात् पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनव-विंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कदेवगतियुताष्टाविंशतिकानि बध्नाति । मरणे तिर्यङ् मनुष्यो देवो वा सासादनकाले नवविंशतिकादिद्वयं, न च नरकगतिदेवगत्यष्टाविंशतिकं । तत्काले परिसमाप्ते मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा शेषमिश्रकाले

सहित देशव्रती या महाव्रती हुआ । उसके उपशम सम्यक्त्वके अन्तर्मुहूर्त कालमें एक समयसे लेकर छह आवली काल शेष रहते अनन्तानुबन्धी कषायका अप्रशस्त उपशम हुआ था सो उसमें-से किसी एक क्रोधादि कषायका उदय होनेसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वका घात करके सासादन गुणस्थानवर्ती हुए मनुष्यके एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियका बन्ध तो मिथ्यादृष्टिमें ही होता है अतः पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति अथवा मनुष्यगति सहित उनतीसका स्थान या उद्योत सहित तीसका स्थान या देवगति सहित अठाईसका स्थान बँधता है । मरनेपर तिर्यंच, या मनुष्य या देव जबतक अपर्याप्त दशामें सासादन रहते हैं तबतक तो उनतीस या तीस दोका ही बन्ध करते हैं, नरकगति या देवगति सहित अठाईसको नहीं बाँधते । सासादनका काल पूर्ण होनेपर मिथ्यादृष्टि होकर जबतक निर्वृत्यपर्याप्त रहते हैं तबतक अठाईसके बिना पच्चीस आदि पाँच स्थानोंको बाँधते हैं । और पर्याप्त होनेपर अठाईस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिस्थानं पोरगागि पंचविंशत्यादिपंचस्थानंगळं पर्य्याप्तियोळमंते कट्टुवरु। मनुष्यगतिय मिश्रासंयमि देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुगु मेकें दोडुवरिम "छण्हं च छिदी सासण सम्मे हवे णियमा" एंदितु मनुष्यद्विकमुं सासादनासंयमियोळें बंधव्युच्छित्तियादुदप्पुदरिदं।

मनुष्यासंयतासंयमिगळोळु देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमं सामान्यमनुष्यासंयतासंयमिगळप्प कर्म्मभूमिजमनुष्यरुं चरमांगरुगळुं भोगभूमिजा संयतासंयमिगळुं कट्टुवरु। देवगतियुत तीर्त्थयुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमं गर्ब्भावतरण जन्माभिषेककल्याणद्वययुततीर्त्थकर कुमाररुगळुं तृतीयभवदोळु तीर्त्थंकररुगळप्प मनुष्यासंयतरुगळु केवलिद्वय श्रीपादोपांतदोळु षोडशभावनाबलदिदं तीर्त्थंकरनामकर्म बंधमं प्रारंभिसिद्दं बद्धनरकायुर्द्देवायुष्यरुगळुं मत्तं गर्ब्भावतरण कल्याणमुं जन्माभिषेककल्याणमुं रहितमागि तद्भवदोळे तीर्त्थंकरागल्वेडिद्दं चरमांगरु गळप्प तीर्त्थसत्कर्म्मासंयतासंयमिगळुं कट्टुवरु। गर्ब्भावतरणकल्याणपुरःसरं नरकगति देवगतिगळिदं बरुत्तिर्द्दं तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळु विग्रहगतियोळं मिश्रकालदोळं देवगतियुत नवविंशतिस्थानमं कट्टुवरु। तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळप्प नारकदेवासंयतरुगळु स्वायुः क्षयमागुत्तं विरलु तीर्त्थंकरल्लदन्यमनुष्यरल्लरप्पुदरिदं। देवासंयमिगळु चतुर्ग्गुणस्थानवर्त्तिगळप्परल्लि मिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळु पर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिदेवासंयमिगळें दु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळें दुं द्विविधमप्परल्लि भवनत्रयसौधर्म्मद्वयपर्य्याप्तमिथ्यादृष्ट्यसंयमिगळु एकेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुत पंचविंशतिस्थानमुमं आतपोद्योतयुतषड्विंशतिप्रकृतिस्थानमुमं पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुतमुं मनुष्यगतियुतमुमप्प नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं तिर्य्यग्गतियुद्योतयुत मागि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। सानत्कु-

---

विनाष्टाविंशतिकं पञ्चविंशतिकादीनि पंच। पर्याप्तौ तु अष्टाविंशतिकमपि। कर्मभोगभूमिमिश्रासंयतौ देवगत्यष्टाविंशतिकमेव नरकतिर्यग्गत्योः सासादने बंधच्छेदात्। विग्रहगतितीर्थंकृत् मिश्रतीर्थंकृत् गर्भतीर्थंकृत् जन्मतीर्थकृत् कुमारतीर्थकृत् बद्धदेवनरकायुः प्रारब्धतद्बंधः तत्सत्त्वचरमांगश्च देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकं, देवः पर्याप्तो मिथ्यादृष्टिः भवनत्रयसौधर्मद्वयजः एकेन्द्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतपंचविंशतिकातपोद्योतयुतषड्विंशतिकपंचेन्द्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतयुतत्रिंशत्कानि, सानत्कुमारादिदशकल्पजः मनुष्य-

---

सहित छह स्थानोंको बांधते हैं। कर्मभूमिकी मनुष्य मिश्र और असंयत गुणस्थानमें देवगति सहित अठाईसका ही बन्ध करता है क्योंकि नरकगति और तिर्यंचगतिके बन्धकी व्युच्छित्ति सासादनमें ही हो जाती है।

तीर्थंकर यदि विग्रहगतिमें हों, या निर्वृत्यपर्याप्त अवस्थामें हों, या गर्भावस्थामें हों, या जन्म अवस्थामें हों या कुमार अवस्थामें हों, या जिसके पूर्वमें नरकायु या देवायुका बन्ध हुआ है और पीछे तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ किया है ऐसा जीव, या तीर्थंकरकी सत्ताका धारी चरम शरीरी मनुष्य असंयत गुणस्थानमें देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसका ही स्थान बाँधता है।

देवगतिमें भवनत्रिक और सौधर्म युगलका पर्याप्त मिथ्यादृष्टि देव एकेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहित पचीसका या आतप उद्योत सहित छब्बीसका या पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका, इस प्रकार चार स्थानों-

मारादि दशकल्पज मिथ्यादृष्टिदेवासंयमिगळु नवविंशतियं मनुष्यतिर्य्यग्गतियुतमागियुं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं तिर्य्यग्गत्युद्योतयुतमागि कट्टुवरु। आनतादिकल्पज मिथ्यादृष्टिगळुं नवग्रैवेयक मिथ्यादृष्टिगळुं मनुष्यगतियुत नवविंशतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु। निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिदेवक्कळगे पेळल्पडुगुमें तें दोडे—मनुष्यलोकप्रतिबद्धजघन्यमध्यमोत्कृष्ट त्रिंशद्भोगभूमिसमुद्भूततिर्य्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळुं मानुषोत्तराचलापरभागार्द्धपुष्करद्वीपमादियागि स्वयंप्रभाचलार्व्वाचीनभागस्वयंभूरमणद्वीपार्द्धपर्य्यंतमाद जघन्यतिर्य्यग्भोगभूमिसंज्ञिपंचेंद्रिय तिर्य्यग्मिथ्यादृष्टिजीवंगळु षण्णवतिकुमानुष्यद्वीपंगळ कुमानुष्यरुगळुं नियमदिदं देवायुष्यमं स्वस्थितिनवमासावशेषमादागळष्टापकर्षंगळोळे येल्लियानुमों दु त्रिभागावशेषमादागळु कट्टि भुज्यमानायुःस्थितिक्षयवशदिदं भवनत्रयदेवक्कंळोळं कल्पस्त्रीयरोळं मिथ्यादृष्टिगळागि पुट्टि यावच्छरीरमपूर्ण्णं तावत्कालं निर्व्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टिदेवासंयमिगळप्परु। इल्लिगे प्रस्तुतगाथासूत्रमिदु :—

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा।
सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं॥—त्रि० सा० ५४६ गा०।

एंदितु भोगभूमिजमिथ्यादृष्टिगळं तापसरुगळुं वरमुत्कृष्टदिदं भवनत्रयदोळु पुट्टुवरप्पुदरिदं शेषत्रिगतिजरागरें बुदत्थं। मत्तं मनुष्यक्षेत्रप्रतिबद्धकर्म्मभूमिभरतैरावतविदेहंगळ संज्ञि-

---

र्यग्गतियुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतयुतत्रिंशत्के। आनतादिकल्पनवग्रैवेयकजः मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव। मनुष्यलोकप्रतिबद्धत्रिंशद्भोगभूमितिर्यग्मनुष्यः मानुषोत्तरात्स्वयंप्रभाचलांतरालवर्तिजघन्यतिर्यग्भोगभूमिसंज्ञितिर्यङ्षण्णवतिकुमानुष्यद्वीपकुमानुष्यश्च नियमेन देवायुष्यं स्वस्थितिनवमासावशेषेऽष्टापकर्षेषु क्वचित्त्रिभागावशेषे बद्ध्वा भुज्यमानायुःस्थितिक्षयवशेन भवनत्रये कल्पस्त्रीषु वा मिथ्यादृष्टिर्भूत्वोत्पद्य यावच्छरीरमपूर्णं तावत् निर्वृत्त्यपर्याप्तो भवति। अत्र प्रस्तुतगाथा—

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा। सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं॥१॥

को बाँधते हैं। और सानत्कुमार आदि दस स्वर्गोंके देव मनुष्य या तिर्यंचगति सहित उनतीसका या तिर्यंचगति उद्योत सहित तीसका बन्ध करते हैं। आनतादि स्वर्ग और नौ ग्रैवेयकोंके देव मनुष्यगति सहित उनतीसके स्थानको बाँधते हैं।

आगे देवोंके निर्वृत्यपर्याप्त अवस्थामें बन्ध कहते हैं। अतः देवोंमें कौन कैसे उत्पन्न होता है यह कहते हैं—

मनुष्यलोक सम्बन्धी तीस भोगभूमियोंके तिर्यंच और मनुष्य तथा मानुषोत्तर और स्वयंप्रभ पर्वतके मध्यवर्ती असंख्यात द्वीप समुद्र सम्बन्धी जघन्य तिर्यंच भोगभूमिके संज्ञी तिर्यंच तथा लवण और कालोद समुद्रोंके छियानबे द्वीपवासी कुमनुष्य नियमसे अपनी आयुके नौ महीने शेष रहनेपर आठ अपकर्षोंमें-से किसी एकमें त्रिभाग शेष रहनेपर देवायुको बाँधकर भुज्यमान आयुकी स्थितिका क्षय होनेसे भवनत्रिकमें अथवा कल्पवासी स्त्रियोंमें मिथ्यादृष्टि होकर उत्पन्न होते हैं और जबतक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तबतक निर्वृत्यपर्याप्त रहते हैं। इस विषयमें प्रासंगिक गाथा कहते हैं—

महाव्रती सम्यग्दृष्टी सर्वार्थसिद्धि तक उत्पन्न होते हैं। भोगभूमिया सम्यग्दृष्टी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यंच भद्रमिथ्यादृष्टि जीवंगळु स्वयंभूरमणद्वीप स्वयंप्रभाचलापरभागार्द्धद्वीपदोळ स्वयंभूरमणसमुद्रदोळ लवणकाळोदसमुद्रंगळोळ केलवु संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तस्थलचरखचर जलचरभद्रमिथ्यादृष्टितिर्य्यंचरुगळु मत्तं मनुष्यक्षेत्रप्रतिबद्धकर्म्मभूमिभरतैरावतविदेहंगळोळु-पशमब्रह्मचर्य्यसमन्वितरप्प वानप्रस्थरुगळेक जटिशतजटि सहस्रजटि नग्नांड कांजिभिक्षु कंदमूल पत्रपुष्पफलभोजिगळु मकामनिर्ज्जरावालपांसि दैवस्य "एंवितेकदंडि त्रिदंडि मिथ्यातपश्चरण-परिणतरुगळु कायक्लेशाचरणंगळिदं केलंबरु स्वस्व विशुध्यनुसारदिदं देवायुष्यमं कट्टि भुज्य-मानमनुष्यायुष्यक्षयवशदिदं मृतरागि भवनत्रयं मोदलगोंडुत्कृष्टदिदमच्युतकल्पपर्य्यंतं पुट्टि यावच्छरीरमपूर्ण्णं तावत्कालपर्य्यंतं मिथ्यादृष्टिनिर्वृत्यपर्य्याप्तदेवासंयमिगळप्परु । इल्लि अकाम-निर्ज्जरे येंबुदु बंधनदिदं चार निरोधमकाममें बुदु । बंधनंगळोळु क्षुत्पिपासानिरोधब्रह्मचर्य्य भूशयन मलधारणपरितापादिगळें बुदर्थमदरिदं बयसुव वेदनाविपाकलक्षणनिर्ज्जरणमल्तप्पु-दरिदमकामनिर्ज्जरेयें दु पेळल्पट्टुदु । बालपंगळें बुवु मिथ्यादर्शनोपेतंगळु—। मनुपायकायक्लेश-प्रचुरंगळु निष्कृतिबहुलव्रतधारणंगळुमप्पुवो बालतपंगळें तप्परोळें दोडिल्लिगे प्रस्तुतगाथा-सूत्रंगळु :—

चरया य परिव्वाजा बह्मोंतच्चुदपदोत्ति आजीवा ।
अणुदिस अणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जांति ॥—[त्रि. सा. ५४७ गा.]

मिथ्यादृष्टयो भोगभूमिजास्तापसाश्च वरमुत्कृष्टेन भवनत्रये उत्पद्यंते नान्यत्र । भरतैरावतविदेहजाः स्वयंभूरमणद्वीपापरार्धतत्समुद्रलवणोदकालोदजाश्च केचित् जलस्थलखचरसंज्ञिपर्याप्तभद्रमिथ्यादृष्टयः उपशमब्रह्म-चर्यांकितवानप्रस्थाः एकजटिशतजटिसहस्रजटिनग्नांडकांजीभिक्षुकंदमूलपत्रपुष्पफलभुजः अकामनिर्जरा एकदंडि-त्रिदंडिमिथ्यातपश्चरणपरिणताश्च कायक्लेशाचरणैः केचित् स्वस्वविशुद्धयनुसारेण भवनत्रयाद्यच्युतांत-मुत्पद्यंते । अकामैः अनभिलषितैः बंधनेन क्षुत्पिपासानिरोधब्रह्मचर्यभूशयनमलधारणपरितापादिभिर्निर्जरा अकामनिर्जरेत्युच्यते । मिथ्यादर्शनोपेताः अनुपायकायक्लेशप्रचुराः निकृतिबहुलव्रतधराः बालतपसः । तदुत्पत्ति-प्रस्तुतगाथासूत्रं—

सौधर्मयुगलमें उत्पन्न होते हैं। और मिथ्यादृष्टि भोगभूमिया तथा उत्कृष्ट तापसी भवनत्रिकमें उत्पन्न होते हैं । अन्यत्र उत्पन्न नहीं होते ।

भरत-ऐरावत-विदेहमें उत्पन्न हुए, तथा स्वयंभूरमण द्वीपके अपरार्ध, स्वयंभूरमण, लवणोद कालोद समुद्रोंके वासी कोई जीव थलचर, नभचर, संज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टि, तथा उपशम ब्रह्मचर्य सहित वानप्रस्थ, तथा एकजटी, शतजटी, सहस्रजटी, नग्नाण्डक, कांजी भक्षण करनेवाले, कन्दमूल पत्र पुष्प फलके खानेवाले, अकामनिर्जरा करनेवाले, एकदण्डी, त्रिदण्डी, मिथ्यातपश्चरण करनेवाले कायक्लेशरूप आचरणके द्वारा अपनी-अपनी विशुद्धि-के अनुसार भवनत्रयसे लेकर अच्युत स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न होते हैं। अकाम अर्थात् अपनी इच्छाके विना वन्धनमें पड़नेपर भूख-प्यासको सहना, ब्रह्मचर्य धारण करना, पृथ्वीपर सोना, मलधारण, परिताप आदिके द्वारा जो निर्जरा होती है वह अकाम निर्जरा है । मिथ्यादर्शन सहित और मोक्ष उपायरहित, बहुत कायक्लेश पूर्वक कपटरूप व्रत धारण करना बालतप है । इनसे भी देवगतिमें जन्म होता है । इस विषयमें प्रासंगिक गाथा कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरकरेंदडे नग्नांडरु। परिव्राजकरें दोडेकदंडित्रिदंडिगळिवर्गळुत्कृष्टदिदं भवनत्रयं मोदल्गोंडु ब्रह्मकल्पपरियंतं पुट्टुवरु। आजीवा कांजिभिक्षुगळुत्कृष्टदिदं भवनत्रयं मोदल्गोंडु अच्युतकल्पपर्य्यंतं पुट्टुवरु। अनुदिशानुत्तरविमानंगळिदं बंदवर्गळु नव वासुदेव प्रतिवासुदेवरागि पुट्टरेकें दोडवर्गळु द्विचरमांगरप्पुदरिदमा नरकगामिगळागि पुट्टरेंबुदत्थं। मत्तं सादि अनादि अभव्यरेंब त्रिविधमिथ्यादृष्टिगळु अर्हच्छ्रुतमर्हल्लिंगधरंतरुगळु अनशनावमोदर्य्यवृत्तिपरिसंख्यान रसपरित्याग विविक्तशयनासन कायक्लेशमेंब बाह्यषड्विधतपश्चरणनिरतरुं त्रिकालदेववंदनादि समेतरुगळप्परुं दर्शनमोहचारित्रमोहघातिकर्म्मोदयसद्भावमुळ्ळवर्गळु उपशमब्रह्मचर्य्यादि समेतरुमप्प केलंबरु मनुष्यरुगळु मिथ्यादृष्टि द्रव्य महाव्रतिगळुपरिमग्रैवेयकपर्य्यंतमुत्कृष्टदिद मेकत्रिंशत्सागरोपमदेवायुःस्थितिबंधमं माडि भुज्यमानमनुष्यायुःक्षयवशदिदं मृतरागि पोगि नवग्रैवेयकंगळोळु यथायोग्याहमिंद्ररुगळ् मागियुं पुट्टि यावच्छरीरमपूर्णं तावत्कालं निर्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळप्परल्लिदं मेलणनुदिशानुत्तरविमानंगळोळ् मिथ्यादृष्टिगळ् पोगि पुट्टुवरु मिल्लल्लियुं मिथ्यात्वकर्म्मोदयमुमिल्ल मिल्लगुपयोगिगाथासूत्रमिदु :—

णरतिरिय देसअयदा-उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा।
ण अयददेस मिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥—[त्रि. सा. ५४५ गा.]

चरया य परिव्वाजा बह्मोत्तच्चुदपदोत्ति आजीवा।
अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥१॥

चरकाः नग्नांडाः परिव्राजकाः एकत्रिदंडिनः एते उत्कृष्टेन भवनत्रयादिब्रह्मकल्पांतमुत्पद्यंते। आजीवाः कांजीभिक्षवः उत्कृष्टेन भवनत्रयाद्यच्युतांतमुत्पद्यंते। अनुदिशानुत्तरविमानागताः द्विचरमांगत्वात् वासुदेवप्रतिवासुदेवेषु नरकगामिषु नोत्पद्यंते। साद्यनाद्यभव्यमिथ्यादृष्टयः अर्हच्छ्रुतलिंगधराः बाह्यषड्विधतपोनिरतास्त्रिकालदेववंदनादिसमेताः दर्शनचारित्रमोहघातिकर्मोदयाः उपशमब्रह्मचर्यादिसमेताः केचिद् द्रव्यमहाव्रताः उपरिमग्रैवेयकांतमुत्पद्यंते न तत उपरि। अत्रोपयोगिगाथा सूत्रं—

णरतिरियदेसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा।
णरअयददेसमिच्छा गेवज्जंतोत्ति गच्छंति ॥१॥

चरक अर्थात् नग्नाण्डक, परिव्राजक अर्थात् एकदण्डी त्रिदण्डी संन्यासी, ये उत्कृष्टसे ब्रह्मोत्तर स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न होते हैं। आजीवक अर्थात् कांजीका आहार करनेवाले भिक्षु उत्कृष्टसे अच्युत स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न होते हैं। अनुदिश अनुत्तर विमानवासी देव द्विचरम शरीरी होते हैं अतः मरकर नरकगामी नारायण प्रतिनारायण आदि नहीं होते। सादि वा अनादि अभव्य मिथ्यादृष्टि जो अर्हन्तके द्रव्यलिंगके धारी होते हैं, छह प्रकारके बाह्य तपमें मग्न रहते हैं, त्रिकाल देववन्दना आदि क्रिया करते हैं, किन्तु जिनके दर्शनमोह चारित्रमोह नामक घातिकर्मका उदय रहता है, उपशम ब्रह्मचर्य आदि सहित होते हैं ऐसे द्रव्यलिंगी उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न होते हैं उससे ऊपर नहीं। यहाँ उपयोगी गाथा कहते हैं—

देशसंयत अथवा असंयत तिर्यंच मनुष्य उत्कृष्टसे अच्युत स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न होते हैं।

मनुष्यतिर्य्यंचरुगळप्प देशसंयतरुगळुमसंयतरुगळुमुत्कृष्टदिदमच्युतकल्पपर्य्यंतं पुट्टुवरु। द्रव्यदिदं जिनरूप महाव्रतिगळु भावदिदमसंयतदेशसंयतरुं मिथ्यादृष्टिजीवंगळुमुपरिमग्रैवेयकपर्य्यंतं पोगि पुट्टुवरु। इंतप्प निर्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळोळु भवनत्रय कल्पजस्त्री सौधर्म्मद्वय निर्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळुमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतपंचविंशति प्रकृतिस्थानमुमनातपोद्योतयुत पर्य्याप्त तिर्य्यंग्गत्येकेंद्रिययुत षड्विंशतिस्थानमुमं पंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यंग्गतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं उद्योतयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। सानत्कुमारादि दशकल्पज मिथ्यादृष्टि निर्वृत्यपर्य्याप्त देवासंयमिगळु पंचेंद्रियपर्य्याप्त तिर्य्यंग्गतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमनुद्योतयुततिर्य्यंचपंचेंद्रिययुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरेकेंदोडे "आईसाणोत्ति सत्त वाम छिदी" एंदिल्लि येकेंद्रियपर्य्याप्तयुतादि बंधस्थानंगळिल्लप्पुदरिदं। आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद कल्पजरुगळु कल्पातीतजरुगळप्प निर्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टि देवासंयमिगळु मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थान मनोंदने कट्टुवरेकेंदोडे "सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगं। तिरियाऊ उज्जोओ अत्थि तदो णत्थि सदरचऊ।" एंदितु तिर्य्यग्गतियुत नवविंशतित्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळ बंधमिल्लप्पुदरिदं॥ यितु संक्षेपदिदं देवगत्यसंयमिमिथ्यादृष्टिगळगे नामकर्म्मबंध

तिर्यग्मनुष्या देशसंयता असंयताश्चोत्कृष्टेनाच्युतांतमुत्पद्यंते। द्रव्यतो जिनरूपमहाव्रताः भावतोऽसंयतदेशसंयतमिथ्यादृष्टयः उपरिमग्रैवेयकांतमुत्पद्यंते। सोऽयं निर्वृत्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिः भवनत्रयकल्पस्त्रीसौधर्मद्वयजः तदा एकेंद्रियपर्याप्तयुतपंचविंशतिकातपोद्योतयुतपर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतषड्विंशतिकपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कानि बध्नाति। सानत्कुमारादिदशकल्पजस्तदा पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुततिर्यक्पंचेंद्रिययुतत्रिंशत्के एव, आईसाणोत्ति सत्तवामछिदीत्येकेंद्रियपर्याप्तादियुतस्थानानामबंधात्। आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतजस्तदा मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव। तिरियदुगं तिरियाऊ उज्जोओ णत्थीति तिर्यग्गतियुतनवविंशतिकत्रिंशत्कयोरबंधात्।

तथा द्रव्यसे जिनरूप महाव्रतके धारी और भावसे असंयत अथवा देशसंयत अथवा मिथ्यादृष्टि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न होते हैं।

इन उत्पन्न हुए देवोंमें निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक देव, वा कल्पवासिनी स्त्री और सौधर्म युगलके देव, एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित पच्चीसका, आतप उद्योतके साथ पर्याप्त तिर्यंचगति एकेन्द्रिय सहित छब्बीसका, अथवा पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहित या मनुष्यगति सहित उनतीसका अथवा उद्योत सहित तीसका बन्ध करते हैं; सानत्कुमार आदि दस कल्पोंमें उत्पन्न हुए देव पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति या मनुष्यगति सहित उनतीसका अथवा उद्योत तिर्यंचगति पंचेन्द्रिय सहित तीसका बन्ध करते हैं। क्योंकि 'आईसाणोत्ति सत्तवामछिदी' इस कथनके अनुसार एकेन्द्रिय पर्याप्त आदि सहित स्थानोंका बन्ध उनके नहीं होता। आनतादि उपरिम ग्रैवेयकोंमें उत्पन्न हुए देव मनुष्यगति सहित उनतीसका ही बन्ध करते हैं। क्योंकि इनमें तिर्यंचगति सहित उनतीस और तीसका बन्ध नहीं होता। इस प्रकार संक्षेपसे देवगतिमें असंयमी मिथ्यादृष्टियोंके नामकर्मके बन्धस्थान कहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानंगळु योजिसल्पट्टुविल्लि जीवसमासपर्य्याप्तिप्राणादिगळु विवक्षितमागि बंधस्थानंगळु योजिसल्पडवेकेंदोडे ग्रंथगौरवभयमुंटप्पुदरिदं । परमागम प्रवीणरुगळु योजिसि कोंबुदेंबुदर्थं ॥

यिन्नु देवासंयमिसासादनरुगळगे नामकर्म्मबंधस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमल्लि सासादनदेवासंयमिगळु द्विविधमप्परल्लि तिर्य्यंगतिमनुष्यगतिगळोळुपशमसम्यक्त्वमननंतानुबंधिकषायोदयदिदं केडिसि सासादनरागि स्वस्वभुज्यमानायुःस्थितिक्षयवशदत्तणिदं मृतरागि बंदिल्लि सासादननिर्वृत्यपर्य्याप्तदेवासंयमिगळप्परदेंतेंदोडे संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तगर्भजविशुद्धसाकारोपयोगयुततिर्य्यंचमिथ्यादृष्टि तिर्य्यग्जघन्यभोगभूमिजनादनादोडे जातिस्मरणदिदं मेणु देवप्रतिबोधनदिदं गृहीतप्रथमोपशमसम्यक्त्वनसंयतनेयक्कुं । मत्तं मनुष्यलोकभोगभूमिप्रतिबद्ध त्रिंशज्जघन्यमध्यमोत्तमभोगभूमिगळोळु मिथ्यादृष्टितिर्य्यंचरुगळु केलंबरु जातिस्मरणंदिदं केलंबर्द्देवप्रतिबोधदिदं केलंबर्च्चारण प्रतिबोधदिदं मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसियसंयतसम्यग्दृष्टिगळप्परु । मत्तं मनुष्यलोकदिदं पोरगण चरमस्वयंभूरमणद्वीपार्द्धापरभागकर्म्मभूमिप्रतिबद्ध द्वीपदोळं स्वयंभूरमणसमुद्रदोळं यथासंभवमागि केलंबर्त्तिर्य्यंचरुगळु जातिस्मरणदिदं केलंबद्देवप्रतिबोधनदिदं मिथ्यात्वमं पत्तु विट्टु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि असंयतरु केलंबरु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं देशव्रतमुमं युगपत्कैकोंडु देशसंयतरप्परु । मत्तं मनुष्यलोकप्रतिबद्धकर्म्मभूभरतैरावतविदेहंगळोळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्त गर्भजविशुद्धि साकारोपयोगयुततिर्य्यग्मिथ्यादृष्टिगळु केलंबज्जातिस्मरणदिदं केलंबर्म्मनुष्यदेवप्रतिबोधनदिदं केलंबर्जिजनबिंबदर्शनदिदं मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु केलंबर्प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि असंयतरप्परु । केलंबरु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमुमं

एवं संक्षेपाद् देवगत्यसंयमि मिथ्यादृष्टीनां नामबंधस्थानानि योजितानि । अत्र जीवसमासपर्याप्तिप्राणादिविवक्षया ग्रंथगौरवभयान्न योजितानि परमागमप्रवीणैर्योजयितव्यानि ।

अथ संज्ञिपर्याप्तो गर्भजो विशुद्धः साकारोपयोगो मिथ्यादृष्टिः तिर्यग्भोगभूमिजस्तदा जातिस्मरणाद्देवप्रतिबोधनाद्वा त्रिंशद्भोगभूमिजस्तदा तद्द्वयाच्चारणप्रतिबोधनाद्वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वं गृहीत्वा संयतः स्यात् । स्वयंप्रभाचलबाह्यकर्मभूमिजस्तदा तद्द्वयात्तथा स्यात् । कश्चिच्च प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन समं देशव्रतं गृहीत्वा देशसंयतः स्यात् । पंचदशकर्मभूमिजस्तदा जातिस्मरणाद्देवमनुष्यप्रतिबोधनाज्जिनबिंबदर्शनाद्वा तथा

यहाँ ग्रन्थके विस्तारके भयसे जीवसमास, पर्याप्ति प्राणादिकी विवक्षासे बन्धस्थान नहीं कहे हैं । परमागममें प्रवीण पाठकोंको स्वयं लगा लेना चाहिए ।

संज्ञी पर्याप्तक गर्भज विशुद्धता सहित साकार उपयोगवाला मिथ्यादृष्टि तिर्यंच भोगभूमिमें उत्पन्न हुआ जीव जातिस्मरण या देवोंके सम्बोधनेसे, और तीस भोगभूमियोंमें उत्पन्न हुआ तिर्यंच जातिस्मरण, देव सम्बोधन अथवा चारणऋद्धिके धारक मुनियोंके सम्बोधनसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करके असंयत सम्यग्दृष्टी होता है । स्वयंप्रभाचल पर्वतके बाहरकी कर्मभूमिमें उत्पन्न हुआ, तिर्यंच जातिस्मरण या देवसम्बोधनसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करके असंयत सम्यग्दृष्टि होता है । प्रथमोपशम सम्यक्त्वके साथ देशव्रत ग्रहण करके देशसंयत होता है । पन्द्रह कर्मभूमियोंमें उत्पन्न हुआ तिर्यंच जातिस्मरणसे अथवा देव और मनुष्यके सम्बोधनसे अथवा जिनबिम्बके दर्शनसे असंयत सम्यग्दृष्टी

देशव्रतमुमं युगपत्स्वीकरिसि देशसंयतरप्परु। मत्तं मनुष्यलोकप्रतिबद्धत्रिंशद्भोगभूमिगळोळु केलंबर्म्मिथ्यादृष्टिमनुष्यरुगळु जातिस्मरणदिदं केलंबर्च्चारणदेवप्रतिबोधनदिदं मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि असंयतरप्परु। मत्तं मनुष्यलोककर्म्मभूमिभरतैरावतविदेहंगळोळु चरमांगरल्लद केलंबर्म्मिथ्यादृष्टिगळु जातिस्मरणदिदं केनचित्स्वसंभवसाधनदिदं मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु केलंबर्प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि असंयतरप्परु। केलंबर्प्रथमोपशमसम्यक्त्वमुमं देशव्रतमुमं युगपत्स्वीकरिसि देशसंयतरप्परु। केलंबरु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं महाव्रतमुमं युगपत्स्वीकरिसि अप्रमत्तरप्परु। बळिक्कलवर्प्रमत्तरप्परु। केलंबर्श्रेण्यारोहणमं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमं कैकोंडुमाडि बळिक्कवतरणदोळु क्रमदिनिळिदु अप्रमत्तप्रमत्त देशसंयतासंयतगुणस्थानंगळं चारित्रमोहोदयंगळिदं पोर्द्दिदवर्ग्गळु केलंबरु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वयुतासंयतरुं केलंबरु द्वितीयोपशमसम्यक्त्वयुतदेशसंयतरुं। केलबर्द्वितीयोपशमसम्यक्त्वयुतप्रमत्तरुगळप्परु। अप्रमत्तरनिल्लि ग्रहिसिसल्वेडेकेंदोडवर्स्सम्यक्त्वमं विराधिसि सासादनरागरप्पुवरिदं।

यें दिनितुं प्रकारद प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळुं द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिगळुं तंतम्म भवचरमकालदोळादवर्ग्गळु केलकेलंबरुगळु। अनंतानुबंधिकषायोदयदिदं प्राग्बद्धदेवायुष्यरादोडे केलंबर्म्मृतरागि अनंतरसमयदोळुत्तरभवदेवसासादनासंयमिगळप्परा सासादननिर्वृत्यपर्य्याप्तकर कालमुत्कृष्टदिदं षडावलिप्रमितमक्कुं। केलंबरुगळनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सम्यक्त्वमं केडिसि सासादनरागि भुज्यमानायुः स्थितिक्षयवशदिदं मृतरागि पोगि निर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादनदेवासंयमिगळप्परु। केलंबरबद्धायुष्यरुगळनंतानुबंधिकषायोदयदिदं तद्भवदोळु सासादनरागि देवायुष्यमं कट्टि मृतरागि सासादननिर्वृत्यपर्य्याप्तदेवासंयमिगळप्परु। अंतागुत्तं केलंबरु भवनत्रयदोळं

द्विविधः स्यात्। तादृक्मनुष्यस्तदा तथा द्विविधः, कश्चित्प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन समं महाव्रतं स्वीकृत्याऽप्रमत्तोऽपि स्यात्। अयमप्रमत्तः कश्चित्प्रमत्तः स्यात्। कश्चिच्च द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं स्वीकृत्य श्रेणिमारुह्य क्रमेणावतरन्नसंयतः देशसंयतः प्रमत्तो वा स्यात्। अमी प्रथमद्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टयः स्वभवचरमे स्वसम्यक्त्वकाले जघन्येनैकसमये उत्कृष्टेन षडावलिमात्रेऽवशिष्टेऽनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन सासादना भूत्वा प्राग्बद्धदेवायुष्का मृत्वा अबद्धायुष्काः केचिद्देवायुर्बद्ध्वा च देवनिर्वृत्यपर्याप्तसासादनाः स्युः। ते च भवनत्रयकल्पस्त्रीसौधर्म-

अथवा देशसंयत होता है। इसी प्रकार मनुष्य भी असंयत अथवा देशसंयत होता है। कोई मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्वके साथ महाव्रत धारण करके अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती भी होता है। यह अप्रमत्त उतरकर प्रमत्त गुणस्थानवर्ती होता है। कोई मनुष्य द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको धारण करके श्रेणीपर चढ़ तथा क्रमसे उतरकर असंयत या देशसंयत या प्रमत्त गुणस्थानवर्ती होता है।

ये प्रथमोपशम और द्वितीयोपशम सम्यक्त्वके धारी जीव अपने भवके अन्तमें जघन्यसे एक समय और उत्कृष्टसे छह आवली शेष रहनेपर अनन्तानुबन्धी कषायके उदयसे सासादन गुणस्थानवर्ती होकर जिन्होंने पूर्वमें देवायुका बन्ध किया है वे मरकर और जिन्होंने पूर्वमें देवायुका बन्ध नहीं किया वे अन्त समयमें देवायुका बन्ध करके मरकर सासादन गुणस्थानवर्ती निर्वृत्यपर्याप्त देव होते हैं। वे यदि भवनत्रिक या कल्पवासी स्त्री

केलंबक्कल्पजस्त्रीयरोळं केलंबरसौधर्म्मकल्पद्वयदोळं केलंबर्सानत्कुमारादिदशकल्पदोळं केलंबरानतादिकल्पंगळोळं नवग्रैवेयकंगळोळं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादनदेवासंयमिगळप्परल्लि । भवनत्रयकल्पजस्त्रीसौधर्म्मद्वयनिर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनदेवासंयमिगळु एकेंद्रियपर्य्याप्तयुतपंचविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं उद्योतातपैकेंद्रियपर्य्याप्तयुतषड्विंशतिप्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवुविल्लेकेंदोडे सासादनकालं परिसमाप्तियागुत्तं विरलु नियमदिदं मिथ्यादृष्टिगळागि तत्प्रथमसमयं मोदल्गोंडु यावच्छरीरमपूर्णं तावत्कालं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिदेवासंयमियागि कट्टुगुमप्पुदरिदमा सासादनं पंचेंद्रियतिर्य्यग्गतिपर्य्याप्तयुतनवविंशतिस्थानमुमं पर्य्याप्तमनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमनुद्योतपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुगुं । सानत्कुमारादिदशकल्पंगळ सासादनरुगळुमंते द्विस्थानंगळं कट्टुवरु । आनतादिकल्पजरुं नवग्रैवेयकंगळहमिंद्रसासादनरुगळुं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । सासादनत्वं पोगुत्तिरलु मिथ्यादृष्टिगळागि यावच्छरीरमपूर्णं तावत्कालपर्य्यंतं मिथ्यादृष्टिनिर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळगे पेळदंते नामकर्म्मबंधस्थानंगळं कट्टुवरु । भवनत्रयं मोदल्गोंडुपरिमग्रैवेयकावसानमाद कल्पजरुं कल्पातीतजरुगळप्पमिश्ररुचिगळप्पऽसंयमिगळु मनुष्यगतिपर्य्याप्तयुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । देवासंयतासंयमिगळु द्विविधमप्परेंतेंदोडे निर्व्वृत्यपर्य्याप्तासंयतदेवासंयमिगळेंदुं पर्य्याप्तासंयतदेवासंयमिगळेंदितल्लि भवनत्रयकल्पजस्त्रीयरोळं तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळु पुट्टरप्पुदरिदं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तकालदोळं पर्य्याप्तकालदोळं तीर्त्थमनुष्यगतियुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानं बंधमिल्ल । केवलं मनुष्यगतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमनोंदने पर्य्याप्तकरु कट्टुवरु । सौधर्म्मकल्पद्वयादि सर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमाद कल्पजरुं कल्पातीत जरुगळुं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तकालदोळं पर्य्याप्तकालदोळं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं तीर्त्थसत्कर्म्मरल्लदवर्गळेल्लरुगळु मोंदने कट्टुवरु । तीर्त्थसत्कर्म्मरु-

---

द्वयजास्तदा पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तयुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतपर्याप्तयुतत्रिंशत्के बध्नंति । सासादनकालमतीत्य मिथ्यादृष्टय एव भूत्वा तद्द्वयं यावच्छरीरमपूर्णं तावदेकेंद्रियपर्याप्तयुतपंचविंशतिकोद्योतातपैकेंद्रियपर्याप्तयुतषड्विंशतिके च सानत्कुमारादिदशकल्पजास्तदा तद्द्वयमेव आनतादिकल्पनवग्रैवेयकजास्तदा मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । सासादनत्वेऽतीते तन्निर्वृत्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिवद्बध्नंति । भवनत्रयाद्युपरिमग्रैवेय-

---

या सौधर्म युगलमें उत्पन्न हुए हैं तो पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति या मनुष्यगति सहित उनतीसका या तिर्यंचगति उद्योत सहित तीसका बन्ध करते हैं। सासादनका काल पूरा होनेपर मिथ्यादृष्टि होकर उन दोनों स्थानोंको और जबतक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित पचीसको अथवा उद्योत आतप एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित छब्बीसको बाँधते हैं।

सानत्कुमार आदि दस कल्पवाले उन उनतीस और तीस दो ही स्थानोंको बाँधते हैं। आनतादि स्वर्ग और नौ ग्रैवेयकोंके देव मनुष्यगति सहित उनतीसका ही बन्ध करते हैं। सासादनका काल बीतनेपर निर्वृत्यपर्याप्त मिथ्यादृष्टिके समान स्थान बाँधते हैं। भवनत्रिकसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मिश्रगुणस्थानवर्ती और पर्याप्त भवनत्रिक तथा कल्पवासी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळादवर्गळेल्लरुगळं तीर्त्थमनुष्यगतियुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरेके वोडे सम्यक्त्वयुतमागि देवगतियोळं नरकगतियोळं पुट्टुव तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळेल्लं तीर्त्थयुतमनुष्यगतिपर्य्याप्तदोडने कट्टुव त्रिंशत्प्रकृतिस्थानं तत्तद्भवचरमसमयपर्य्यंतं बंधमप्पुवु। एके दोडे अंतर्म्मुहूर्त्ताधिकाष्टवर्षन्यूनपूर्व्वकोटि द्वयाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमकालं तीर्त्थबंध निरंतराद्धेयप्पुवरिदं। चक्षूजुगळे सर्व्वं चक्षुर्द्दर्शनदोळमचक्षुर्द्दर्शनदोळं सर्व्वनामकर्म्मबंधस्थानंगळु बंधमप्पुवु। संदृष्टि। चक्षु। अच। २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १। यिल्लि चक्षुर्द्दर्शनं सर्व्वनारकरोळं चतुरिंद्रियादि सर्व्वतिर्य्यंचरोळं सर्व्वमनुष्यरोळं सर्व्वदेवरोळमक्कु–। मल्लि नारकरुगळगे नवविंशति त्रिंशत्प्रकृति बंधस्थानद्वयं यथायोग्यं बंधमप्पुवु। तिर्य्यंचचतुरिंद्रियादिगळोळु चतुरिंद्रियंगळगष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि शेषतिर्य्यग्गतिमनुष्यगतियुत त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळु बंधमप्पुवु। शेष पंचेंद्रिय चक्षुर्द्दर्शनिगळोळु त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळु बंधमप्पुवु। मनुष्यचक्षुर्द्दर्शनिगळोळु सर्व्वमुमष्टस्थानंगळु बंधमप्पुवु। देवचक्षुर्द्दर्शनिगळोळु यथायोग्यं पंचविंशति षड्विंशति नवविंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळु नाल्कुं बंधयोग्यंगळप्पुवु। अचक्षुर्द्दर्शनं शेषेंद्रियोपयोगमप्पुदरिदं नारकरेल्लरोळं एकेंद्रियादिसर्व्वतिर्य्यंचरोळं सर्व्वमनुष्यरोळं सर्व्वदेवक्कळोळमक्कुमप्पुदरिदमल्लिनारकरोळु चक्षुर्द्दर्शनिगळगे पेळ्दंते बंधस्थानद्वयं बंधमक्कु। तिर्य्यंचरोळु येकेंद्रियं मोदलागोंडु चतुरिंद्रियतिर्य्यंचरु पर्य्यंतं नरकगति देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानं पोरगागि त्रयोविंशत्यादि तिर्य्यग्गतिमनुष्यगति युतमागि यथायोग्यं षट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। पंचेंद्रियंगळोळु नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिस्थानयुतमागि त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। मनुष्याचक्षुर्द्दर्शनिगळगे सर्व्वत्रयोविंशत्यादि यष्टस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। देववर्कळु गळोळ-

कांतमिश्ररुचयः पर्याप्तभवनत्रयकल्पस्त्र्यसंयताश्च मनुष्यगतियुतनवविंशतिकं वैमानिकास्तीर्थरहितास्तदेव सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमेव।

चक्षुर्दर्शनेऽचक्षुर्दर्शने च सर्वाणि। तत्र चक्षुर्दर्शने नारकाः नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे। चतुरिंद्रिया विनाष्टाविंशतिकं तिर्यग्गतिमनुष्यगतियुतत्रयोविंशतिकादीनि षट्। पंचेंद्रियाः त्रयोविंशतिकादीनि षट्। मनुष्याः सर्वाणि। देवा यथायोग्यपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि। अचक्षुर्दर्शने नारकाः चक्षुर्दर्शनोक्ते

स्त्री असंयत गुणस्थानवर्ती मनुष्यगति सहित उनतीसके स्थानको बांधते हैं। तीर्थंकर प्रकृतिसे रहित वैमानिक देव उसी उनतीसके स्थानको बाँधते हैं, और तीर्थंकर सहित वैमानिकदेव मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसके स्थानको बांधते हैं।

चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शनमें सब बन्धस्थान हैं। चक्षुदर्शन सहित नारकी उनतीस और तीस दो स्थानोंको बांधता है। चौइन्द्रिय जीव अठाईसके बिना तिर्यंचगति या मनुष्यगति सहित तेईस आदि छह स्थानोंको बांधते हैं। पंचेन्द्रिय तेईस आदि छह स्थानोंको बाँधते हैं। मनुष्य सब स्थानोंको बाँधते हैं। देव यथायोग्य पच्चीस, छब्बीस, उनतीस तीस चार स्थानोंको बाँधते हैं।

अचक्षुदर्शन सहित नारकी चक्षुदर्शनमें कहे दो स्थानोंको बांधते हैं। एकेन्द्रिय आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चक्षुर्द्दर्शनिगळप्प भवनत्रयादि सर्व्वार्थसिद्धिपर्य्यंतं तत्तद्योग्यंगळप्प पंचविंशति षड्विंशति नवविंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळु बंधंगळप्पुवु । २५ । ए प । २६ । ए प । अ उ । २९ । ति । म । ३० । ति । उ । म । ति । "सग सग णाणं व ओहिदुगे" अवधिदर्शनदोळं केवलदर्शनदोळं क्रमदिंदवधिज्ञानदोळं केवलज्ञानदोळं पेळ्दंते चरमपंचस्थानंगळुं शून्यमुमप्पुवु । अव । दर्शनं । २८ । दे । २९ । म । दे ति । ३० । मति । आ । २ । दे ३१ । दे । आ २ । ति । १ । के ० । दर्श । ० । इल्लि अवधिज्ञानदोळु पेळ्वंतवधिदर्शनदोळें दु पेळ्दुदरिदं देशावधि परमावधि सर्व्वावधि भेददि नवधिज्ञानं त्रिविधमक्कुमल्लि देशावधिज्ञानं नारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळोळं पंचेंद्रियसंज्ञिपर्य्याप्तासंयतदेशसंयत तिर्य्यंचरोळं देवासंयतरोळं असंयतादि क्षीणकषायावसानमाद मनुष्यरोळं देशावधिज्ञानमक्कुं । प्रमत्तसंयतादि क्षीणकषायावसानमाद चरमांगररोळे परमावधि सर्व्वावधिज्ञानंगळप्पुवप्पुदरिदं मिवरोळेल्लमवधिदर्शनमक्कुमेंबुदत्थं । अल्लि धर्म्मे वंशे मेघेगळ नारकासंयतावधिदर्शनिगळु तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळल्लद सम्यग्दृष्टिगळु मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । तीर्त्थसत्कर्म्मरप्प सम्यग्दृष्ट्यवधिदर्शनिगळु तीर्त्थमनुष्यगतियुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । अंजने मोदलाद चतुःपृथ्विगळ नारकासंयतावधिदर्शनिगळु मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानम नों दने कट्टुवरु । संज्ञिपंचेंद्रिय तिर्य्यंगसंयत देशसंयतरुमवधिदर्शनिगळु देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुमनों दने कट्टुवरु । मनुष्यगतियोळु तीर्त्थंकर कुमाररुं चक्रवर्त्तिगळुं त्रिकल्याणभाजनरप्प तीर्त्थसत्कर्म्मरुं चरमांगरुं केळंबरचरमांगरुगळप्प असंयत देशसंयतरुं प्रमत्तादि महाव्रतिगळुं देशावधिज्ञानिदर्शनिगळु यथायोग्यं देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुमं देवगतितीर्त्थयुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु । २८ । दे । २९ । दे ति । परमावधि

द्वे । एकेंद्रियादिचतुरिंद्रियांताः नरकदेवगत्यष्टाविंशतिकं विना योग्यत्रयोविंशतिकादीनि षट् । पंचेंद्रियास्तद्युतानि षट् । मनुष्याः सर्वाणि । देवाः चक्षुर्दर्शनोक्तानि चत्वारि । अवधिदर्शनेऽवधिज्ञानवच्चरमाणि पंच । असंयतदेवनारके असंयतदेशसंयतसंज्ञिपर्याप्ततिरश्च्यसंयतादिक्षीणकषायांतमनुष्ये च देशावधिः प्रमत्तादिक्षीणकषायांतचरमांगे च परमावधिसर्वावधी, तथावधिदर्शनमपि । तत्र धर्मादित्रयजाः सतीर्थाः तीर्थमनुष्यगतित्रिंशत्कं तन्नातीर्थाः अंजनादिजाश्च मनुष्यगतिनवविंशतिकं । तिर्यंचः देवगतियुताष्टाविंशतिकं । मनुष्यास्तदा-

चौइन्द्रिय पर्यन्त जीव नरकगति देवगति सहित अठाईसके बिना अपने योग्य तेईस आदि छह स्थानोंको बाँधते हैं । पञ्चेन्द्रिय अठाईस सहित छह स्थानोंको बाँधते हैं । मनुष्य सब स्थानों को बाँधते हैं । देव चक्षुदर्शनमें कहे चार स्थानोंको बाँधते हैं ।

अवधिदर्शनमें अवधिज्ञानकी तरह अन्तके पाँच स्थानोंका बन्ध होता है । असंयत देव नारकियोंमें असंयत, देश संयत संज्ञी पर्याप्त तिर्यञ्चोंमें और असंयतादि क्षीणकषाय पर्यन्त मनुष्योंमें देशावधि ज्ञान होता है । प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यन्त चरम शरीरी मनुष्योंमें परमावधि सर्वावधि ज्ञान होते हैं । तथा इनमें अवधिदर्शन भी होता है ।

अवधिदर्शनवाले घर्माआदि तीन नरकोंके नारकी, जिनके तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध हुआ है, तीर्थंकर मनुष्यगति सहित तीसके स्थानको बाँधते हैं । तथा तीर्थंकरकी सत्तासे रहित धर्मादि तीन नरकोंके नारकी और अंजना आदिके नारकी मनुष्यगति सहित उनतीस-

सर्व्वावधिज्ञानिगळप्प चरमांगमहाव्रतिगळु पंचकल्याण द्विकल्याण भाजन तीर्त्थंकर महाव्रतिगळु गणधरदेवरुगळु केळंबरु श्रुतकेवलि चरमांगरुगळप्प एल्ला महाव्रत्यवधिदर्शनिगळु प्रमत्ताप्रमत्तरुगळु मुपशमक्षपकश्रेण्यारूढापूर्व्वानिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय संयमिगळु यथायोग्यमागि देवगतियुताष्टाविंशत्यादि पंचस्थानंगळं कट्टुवरु । २८ । दे । २९ । दे ति । ३० । आ । २ । दे । ३१ । दे आ २ । ति १ । सौधर्म्मकल्पादि सर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमाद देवाऽसंयतावधिदर्शनिगळु तीर्त्थसत्कर्म्मरेल्लं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं मनुष्यगतितीर्त्थयुतमागुवनों दने कट्टुवरु । ३० । म । ति । भवनत्रयादि सर्व्वार्त्थसिद्धि पर्य्यंतमाद तीर्त्थरहितासंयतसम्यग्दृष्ट्यवधि दर्शनिगळेल्लं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २९ । म । उपशांतादिचतुर्गुणस्थानंगळोळु नामकर्म्मबंधमिल्ल ॥

कम्मं वा किण्हतिये पणवीसा छक्कमट्ठवीस चऊ ।
कमसो तेऊजुगले सुक्काए ओहिणाणव्वा ॥५४९॥

कार्म्मणवत् कृष्णतिसृषु पंचविंशतिषट्कमष्टाविंशति चत्वारि क्रमशस्तेजोयुगळे शुक्लायामवधिज्ञानवत् ॥

कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रयदोळु कार्म्मणकाययोगदोळु पेळदाद्यतनषट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । कृ । नी । क । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि । ति । च । अ सं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न । दे । २९ । म । ति । दे ति । ३० । ति उ । तेजोलेश्येयोळु पंचविंशति षट्कं बंधयोग्यमप्पुवु । तेजो ले । २५ । ए प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न । दे । २९ । ति । म । दे ति । ३० । ति उ । म ति । दे । आ । २ । ३१ । दें । आ २ । ती । अष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु पद्मलेश्येयोळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । पद्म २८ । दे २९ । दे ति । म ति । ३० । ति उ । म ति दे । आ २ । ३१ । दे आ २ । ति । शुक्ललेश्येयोळवधिज्ञानदोळु पेळदंते चरमपंचस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । शु । ले । २८ । दे । २९ । दे ति । म ३० । दे आ २ । म ती । ३१ । दे आ २ । ती । १ । यिल्लि :—

दीनि पंच । सौधर्मादयस्तीर्थसत्त्वा मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं । भवनत्रयादयस्तदसत्त्वाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं । केवलदर्शने केवलज्ञानवच्छून्यं ॥५४८॥

कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रये बंधस्थानानि कार्मणयोगवदाद्यानि षट् । तेजोलेश्यायां पंचविंशतिकादीनि षट् ।

के स्थानको बाँधते हैं । तिर्यंच देवगति सहित अठाईसके स्थानको बाँधते हैं । मनुष्य देवगति सहित अठाईससे लेकर एक पर्यन्त पाँच स्थानोंको बाँधते हैं। तीर्थंकरकी सत्तावाले सौधर्मादि देव मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसका स्थान बाँधते हैं। तीर्थंकरकी सत्तासे रहित भवनादिदेव मनुष्यगति सहित उनतीसके स्थानको बाँधते हैं। केवलदर्शनमें केवलज्ञानकी तरह नामकर्मके बन्धस्थान नहीं हैं ॥५४८॥

कृष्ण आदि तीन अशुभ लेश्याओंमें कार्मणयोगकी तरह आदिके छह बन्धस्थान हैं। तेजोलेश्यामें पच्चीस आदि छह हैं। पद्मलेश्यामें अठाईस आदि चार हैं। शुक्ललेश्यामें अवधिज्ञानकी तरह अन्तके पाँच बन्धस्थान होते हैं।

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

णामोवयसंपादिद सरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा ।
मोहुदयखओवसमोवसमक्खयजजीवफंदणं भाओ ॥

येंदितु मोहोदय मोहक्षयोपशम मोहोपशम मोहक्षयज जीवस्पंदन लक्षण भावलेश्ये विवक्षितल्पट्टुवु । वर्णनामकर्म्मोदयजनित शरीरवर्णमविवक्षितमप्पुदरिंदमी भावलेश्येयशुभलेश्यात्रयमें दुं शुभलेश्यात्रयमेंदित्तेरनप्पुदल्लि कृष्णनीलकपोतभेवदिंदमितशुभलेश्ये त्रिविधमक्कुं । तेजः पद्मशुक्ललेश्याभेददिदं शुभलेश्येयुं त्रिविधमक्कुमसंयतांतचतुर्ग्गुणस्थानंगळोळारु लेश्येगळुं देशविरतत्रयदोळु शुभलेश्यात्रयमुमपूर्व्वकरणादिषट्स्थानंगळोळु शुक्ललेश्येयक्कुमप्पुदरिंदं नारकरोळं तिर्य्यंचरोळं मनुष्यरोळं देवक्कंळोळमसंयतांत चतुर्ग्गुणस्थानंगळोळं कृष्णनीलकपोतंगळु संभविसुगुमल्लि नारकरोळु 'काऊ काऊ तह काऊ णीळणीळा य णील किण्हा य । किण्हा य परमकिण्हा ळेस्सा पढमादिपुढवीणं ॥" एंदितु प्रथमनरकदोळु सीमंत । नरक । रौरव । भ्रांत । उद्भ्रांत । संभ्रांत । तप्त । असंभ्रांत । विभ्रांत । त्रसित । वक्रांत । अवक्रांत । विक्रांतमेंदितु पदिमूरिंद्रकंगळप्पुवु । १३ ॥ द्वितीयपृथ्वियोळु ततक । स्तनक । वनक । मनक । खडा । खडिग । जिह्वा । जिह्विका । लोलिक । लोलवत्स । स्तनलोले येंदितु पन्नोंदिंद्रकंगळप्पुवु । ११ ॥ तृतीयनरकदोळु तप्त । तपित । तपन । तापन । दाघ । उज्वलित । प्रज्वलित । संज्वलित । संप्रज्वलितमेंदितिंद्रकनवकमक्कुं । ९ ॥ चतुर्त्थनरकदोळु आरा । मारा । तारा । चर्च्चा । तमकी । घाटा । घटा एंदितवेळुमिंद्रकंगळप्पुवु । ७ ॥ पंचमनरकदोळु तमका । भ्रमका । झषक । अंधेंद्रक । तिमिश्र एंदितैदिंद्रकंगळप्पुवु । ५ ॥ षष्ठनरकदोळु हिम । वर्द्दल । लल्लकि येंदितिवु मूरिंद्रकंगळप्पुवु । ३ ॥ सप्तमनरकदोळु अवधिस्थानमें बुदोंदे यिंद्रकमप्पुदु । १ ।

प्रथम नरकद सीमंतेंद्रकदोळु कपोतलेश्याजघन्यमक्कु । मुत्कृष्टं तृतीयनरकद संज्वलितेंद्रकदोळक्कुं । नीललेश्याजघन्यमदर केळगण संप्रज्वलितेंद्रकदोळक्कुं । तदुत्कृष्टं पंचमनरकदंध्रें-

पद्मलेश्यायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि । शुक्ललेश्यायामवधिज्ञानवच्चरमाणि पंच । वर्णनामोदयसंपादितशरीरवर्णो द्रव्यलेश्या सा नात्र विवक्षिता । मोहोदयोपशमक्षयक्षयोपशमजनितजीवस्पंदनं भावलेश्या, सा च कृष्णादिभेदेन षोढा । प्रथमनरकप्रथमेंद्रके कपोतजघन्यांशः । तृतीयनरकद्विचरमेंद्रके तदुत्कृष्टांशः । तच्चरमेंद्रके नीलजघन्यांशः । पंचमनरकद्विचरमेंद्रके तदुत्कृष्टांशः । तच्चरमेंद्रके कृष्णजघन्यांशः । सप्तमनरकावधिस्थानेंद्रके तदुत्कृष्टांशः । तयोस्तयोर्मध्ये स्वस्वमध्यमांशो भवति । तत्रोत्पत्तियोग्यमिथ्यादृष्टिजीवाः घर्मायां कर्मभूमिषट्-

वर्णनाम कर्मके उदयसे उत्पन्न शरीरका वर्ण द्रव्यलेश्या है उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है। मोहके उदय, उपशम, क्षय या क्षयोपशमसे उत्पन्न जीवकी चंचलता भावलेश्या है। वह कृष्ण आदिके भेदसे छह प्रकारकी है। प्रथम नरकके प्रथम इन्द्रकमें कपोत लेश्याका जघन्य अंश है। तीसरे नरकके द्विचरम इन्द्रकमें कपोतका उत्कृष्ट अंश है। तीसरे नरकके अन्तिम इन्द्रकमें नीलका जघन्य अंश है। पंचम नरकके द्विचरम इन्द्रकमें नीलका उत्कृष्ट अंश है। पंचम नरकके अन्तिम इन्द्रकमें कृष्णका जघन्य अंश है। सप्तम नरकके अवधिस्थान इन्द्रकमें कृष्णका उत्कृष्ट अंश है। इन जघन्य उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रकदोळक्कु। मदर केळगण तिमिश्रेंद्रकदोळु कृष्णलेश्याजघन्यमक्कु। अवरुत्कृष्टमवधिस्थानेंद्रकदोळक्कु। मी कपोतनीलकृष्णलेश्या मध्यंगळु तंतम्म जघन्योत्कृष्टंगळ मध्यंगळोळप्पुवु। अल्लि घर्म्मेय निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळु मिथ्यादृष्टिगळुमसंयतसम्यग्दृष्टिगळुमोळरुळिवारुं नरकंगळोळं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तनारकरेल्लरुं मिथ्यादृष्टिगळेयप्परं। घर्म्मेय निर्व्वृत्यपर्य्याप्तनारकमिथ्यादृष्टिगळोळु कर्म्मभूमिजषट्संहनन युतासंज्ञिपंचेंद्रियंगळुं सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं सिंहंगळुं वनितेयरुगळुं मत्स्यमनुष्यरुगळुं पुट्टुवरु। वंशेय निर्व्वृत्यपर्य्याप्तनारकमिथ्यादृष्टिगळोळु असंज्ञिजीवगळ्पोरगागि सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं सिंहंगळुं स्त्रीयरुं मत्स्यमानुषरुगळु षट्संहननरुगळु पुट्टुवरु। मेघेय नारकनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळोळु असंज्ञिगळुं सरीसृपंगळुं पोरगागि पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं केसरिगळुं वामेयरुं मत्स्यमनुष्यरुगळुं षट्संहननरुगळुं पुट्टुवरु। अंजनेयोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिनारकरोळु असंज्ञिगळुं सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं पोरगागि शेषभुजंगमंगळुं केसरिगळुं नितंबिनियरुं मत्स्यमनुष्यरुगळुं असंप्राप्तसृपाटिकासंहननहीनप्रथमपंचसंहननजीवंगळु पुट्टुवरु। अरिष्टेय नारकनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळोळु असंज्ञिगळुं सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं पोरगागि शेषकेसरिगळुं वनितेयरुं मत्स्यमर्त्यरुगळुं चरमसंहननहीन प्रथमपंचसंहननजीवंगळु पुट्टुवरु। मघविय निर्व्वृत्यपर्य्याप्त नारकमिथ्यादृष्टिगळोळु असंज्ञिगळुं सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं केसरिगळुं पोरगागि शेषवनितेयरुं मत्स्यमनुष्यरुगळुं कीलितासंप्राप्तसृपाटिकासंहननद्वयरहिताद्यचतुःसंहननजीवंगळुं पुट्टुवरु। सप्तममाघवियोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिनारकरोळु असंज्ञिगळुं सरीसृपंगळुं पक्षिगळुं भुजंगमंगळुं केसरिगळु स्त्रीयरुगळुं पोरगागि वज्रऋषभनाराचसंहननतिर्य्यग्मत्स्यमनुष्यरुगळुं पुट्टुवरंतु पुट्टियावच्छरीरमपूर्णं तावत्कालं तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतद्विस्थानंगळने कट्टुवरु॥ २९। ति म ३०। ति उ॥

शरीरपर्य्याप्तिविदं मेलेयुं मिथ्यादृष्टिगळा द्विस्थानमने कट्टुवरु। २९। ति। म। ३०। ति उ॥

संहननाः असंज्ञिसरीसृपपक्षिभुजंगसिंहवनितामत्स्यमनुष्या एव। तत्रापि वंशायां सरीसृपादय एव। मेघायं पक्ष्यादय एव। अंजनायां आद्यपंचसंहनना एव भुजंगादय एव। अरिष्टायां केसर्यादय एव। मघव्यां आद्यचतुःसंहनना एव वनितादय एव। माघव्यामाद्यसंहनना एव मत्स्यमनुष्या एव। ते च तत्रोत्पन्नाः शरीरे पूर्णेऽपूर्णे

अंशोंके मध्यमें उन-उन लेश्याओंका मध्यम अंश होता है। उन नरकोंमें उत्पन्न होनेके योग्य मिथ्यादृष्टि जीव इस प्रकार जानना—घर्मामें कर्मभूमिया छहों संहननधारी असंज्ञी सरीसृप, पक्षी, सर्प, सिंह, स्त्री, मच्छ और मनुष्य ही मरकर उत्पन्न होते हैं। उनमेंसे भी वंशामें सरीसृप आदि ही जन्म लेते हैं, असंज्ञी जन्म नहीं लेते। मेघामें पक्षी आदि ही जन्म लेते हैं। अंजनामें आदिके पाँच संहननके धारी सर्प आदि ही मरकर उत्पन्न होते हैं। अरिष्टामें सिंह आदि ही मरकर उत्पन्न होते हैं। मघवीमें आदिके चार संहननके धारी स्त्री आदि ही जन्म लेते हैं। माघवीमें प्रथम संहननके धारी मच्छ और मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपर्य्याप्तसप्तमपृथ्विय नारकरुं पर्य्याप्तनारकरुं मिथ्यादृष्टिगळु तिर्य्यग्गतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमुमं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु। २९। ति। ३०। ति उ॥

सर्व्वपृथ्विगळ सासादनरुं तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतद्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। ति। म ३०। ति उ॥

मिश्ररुगळेल्लं मनुष्यगतियुतस्थानमनों दने कट्टुवरु। २९। म॥ सर्व्वपृथ्विगळ पर्य्याप्तासंयतनारकरुगळुं मनुष्यगतियुतस्थानमनों दने कट्टुवरु। असं। २९। म॥ घर्म्मेय निर्व्वृत्यपर्य्याप्तासंयतरु क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळुं वेदकसम्यग्दृष्टिगळु कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिगळुं नवविंशतिस्थानमं मनुष्यगतियुतमनों दने कट्टुवरु। २९। म। सतीर्त्थरुगळु मनुष्यगतितीर्त्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु ३०। म ति॥ शरीरपर्य्याप्तियोळमी प्रकारदिंदमे कट्टुवरु। घना २९। म ३० म तो। वंशे मेघेगळोळु मिथ्यादृष्टिगळागिदृंऽपर्य्याप्तसतीर्त्थनारकरुगळुं

च तिर्य्यमनुष्यगतिनवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे बध्नंति। सप्तम्यां ते द्वे तिर्यग्गतियुते एव। तत्सासादनाः ते तिर्यग्मनुष्यगतियुते। मिश्रा असंयताश्च मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव। घर्मायां निर्वृत्त्यपर्याप्ताः पर्याप्ताश्च क्षायिकवेदककृतकृत्यवेदकास्तदेव, सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमेव। वंशामेघयोः सतीर्थाः पर्याप्तत्वे

ही मरकर उत्पन्न होते हैं।

उन नरकोंमें उत्पन्न हुए वे नारकी शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने या पूर्ण न होनेपर तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीस और तीस दो ही स्थान बाँधते हैं। किन्तु सातवें नरकमें ये दोनों स्थान तिर्यंचगति सहित ही बँधते हैं। वहाँ सासादन गुणस्थानवाले भी तिर्यंच या मनुष्यगति सहित दो स्थानोंको बाँधते हैं। मिश्र और असंयत गुणस्थानवाले मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधते हैं।

घर्मामें निर्वृत्यपर्याप्त या पर्याप्त क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टी तथा कृतकृत्य वेदक मनुष्यगति सहित उनतीसका स्थान बाँधते हैं। जिनके तीर्थंकरकी सत्ता होती है वे मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसको बाँधते हैं। वंशा और मेघामें उत्पन्न हुए नारकी जिनके तीर्थंकरकी सत्ता होती है वे पर्याप्ति पूर्ण होनेपर नियमसे मिथ्यात्वको त्याग सम्यग्दृष्टी होकर तीसका ही बन्ध करते हैं।

---

१. यिल्ली घर्म्मेय नारकापर्य्याप्तिनोळु वेदकसम्यक्त्वं घटिसदु। "उत्पद्यते हि वेदक दृष्टिः स्वमरेषु कर्मभूमिनृषु।" एंदाराधनासारदोळु नियमं पेळल्पट्टुदप्पुदरिं यिल्लि आगमकोविदरु विचारिसिकोंबुदु, वेदकसम्यग्दृष्टिगळोळु येंदादरू पठिसूदु॥ (इतरटिप्पण):—लब्ध्यपर्याप्त लब्ध्यपर्य्याप्तिपर्य्याप्त—निर्व्वृत्यपर्य्याप्ति-अपर्य्याप्तासंयतत्वं भोगभूम्यपेक्षयिदल्लदे कर्म्मभूमियोळु घटियिसदु। अल्लि कपोतलेश्याजघन्यमेंब नियमं षड्लेश्यासंभवं घटियिसदागि विचारिसिकोंबुदु॥

मुंपेळ्द एकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु तिर्य्यग्गतिसंबंध्यपर्य्याप्तपदंगळु पदिनारु। अवरोळु साधारणबादरसूक्ष्मप्रत्येकपदंगळमूरुं कळेदोडे पदिमूरु। अवरोळु आ कळेद मूरं नित्यचतुर्ग्गतिनिगोदप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठित प्रत्येक भेददि भेदिसि आर ६ कूडुत्तिरलु १९—पृथ्व्यप्तेजोवायुबादरसूक्ष्मलब्ध्यपर्य्याप्तंगळ कूडियेंटु ८ द्वींद्रिय त्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिया संज्ञिसंज्ञि अंतु १३ साधारणबादरसूक्ष्म प्रत्येक १६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु नियमदिदं सम्यग्दृष्टिगळागि तोरथंपुतस्थानमनोंदने कट्टुवरु । ३० । म तो । तिर्य्यंग्गतियोळु ॥ "णरतिरियाणं ओघो यिगिविगळे तिण्णि चउ असण्णिस्स । सण्णि अपुण्णगमिच्छे सासणसम्मे वि असुहतियं ॥" तिरियंचरोळु षड्लेश्येगळप्पुवादोडमेकेंद्रिय भेदंगळोळं विकलत्रयंगळोळेल्ला लब्ध्यपर्य्याप्त निर्वृत्यपर्य्याप्त पर्य्याप्तरोळमशुभलेश्यात्रयमक्कुं । संज्ञ्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळोळं नरकगत्याविर्गाळिवंदु पुट्टिद सासादनरोळमशुभलेश्यात्रयमेयक्कुं । अपर्य्याप्तासंयतरोळं पर्य्याप्तासंयतरोळं पर्य्याप्तसासादनरोळं षड्लेश्येगळप्पुवु । असंज्ञिपंचेंद्रिय लब्ध्यपर्य्याप्तनिर्वृत्यपर्य्याप्तजीवंगळोळमशुभलेश्यात्रितयमेयक्कुं । पर्य्याप्तासंज्ञिमिथ्यादृष्टियोळु कृष्णादि चतुर्लेश्येगळप्पुवु ।

भोगा पुण्णग सम्मे काउस्स जहण्णयं हवे णियमा ।
सम्मे वा मिच्छे वा पज्जत्ते तिण्णि सुहलेस्सा ॥

एंदितु भोगभूमिनिर्वृत्यपर्य्याप्तासंयतसम्यग्दृष्टिगळोळु कपोतलेश्याजघन्यमेयक्कुं । नियमदिदं । मत्तमा भोगभूमिजमिथ्यादृष्टिगळोळं मेणु सम्यग्दृष्टिगळोळं शरीरपर्य्याप्तिपरिपूर्णमागुत्तं विरलेल्ला जीवंगळं तेजः पद्मशुक्लंगळेंब शुभलेश्यात्रयमेयक्कु—। मिल्लि एकान्नविंशतिविधतिर्य्यंचलब्ध्यपर्य्याप्तरोळपुट्टुव जीवंगळवावुवेंदोडे पृथ्व्यप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदबादरसूक्ष्मजीवंगळु प्रतिष्ठितप्रत्येक अप्रतिष्ठितप्रत्येक द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिया संज्ञि संज्ञि लब्ध्यपर्य्याप्त पर्य्याप्त मिथ्यादृष्टिगळं मनुष्यलब्ध्यपर्य्याप्तपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळुमितु

नियमेन मिथ्यात्वं त्यक्त्वा सम्यग्दृष्टयो भूत्वा तत्त्रिशत्कमेव । तिर्यग्गतौ पर्याप्तादित्रिविधसर्वैकद्वित्रिचतुरिंद्रियेषु लब्ध्यपर्याप्तनिर्वृत्यपर्याप्तासंज्ञिनि मिथ्यादृष्टिनरकाद्यागतसासादनापर्याप्तसंज्ञिनि च लेश्या अशुभा एव तिस्रः । पर्याप्तमिथ्यादृष्ट्यसंज्ञिनि कृष्णाद्याश्चतस्रः । पर्याप्तसासादनमिश्रपर्याप्तापर्याप्तासंयतसंज्ञिनि षट् भोगभूमौ निर्वृत्यपर्याप्तासंयते कापोतजघन्यं । मिथ्यादृष्टौ सम्यग्दृष्टौ वा तत्पर्याप्ते शुभा एव तिस्रः । तत्रत्यानां शरीरपर्याप्तौ पूर्णायां तत्त्रये एवागमनात् । एषामुक्ततिर्यग्जीवानां मध्ये ये बादरसूक्ष्मपृथिव्यप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकद्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तास्ते च तेभ्यो वा तदेकान्नविंशतिविधपर्याप्तेभ्यो वा

तिर्यंचगतिमें पर्याप्त आदि तीन प्रकारके सब एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रियोंमें तथा लब्ध्यपर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त असंज्ञीमें, नरकसे आये मिथ्यादृष्टियोंमें और सासादन अपर्याप्त संज्ञीमें तीन अशुभलेश्या ही होती हैं। पर्याप्त मिथ्यादृष्टि असंज्ञीमें कृष्ण आदि चार लेश्या होती हैं। पर्याप्त सासादन और मिश्र तथा पर्याप्त अपर्याप्त असंयत संज्ञीमें छह लेश्या होती हैं। भोगभूमिमें निर्वृत्यपर्याप्त असंयतमें कापोतका जघन्य होता है। और पर्याप्त अवस्थामें मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टीके तीन शुभलेश्या होती हैं। क्योंकि भोगभूमिमें उत्पन्न हुए जीव शरीर पर्याप्ति पूर्ण होनेपर तीन शुभलेश्याओंमें ही आते हैं।

इन ऊपर कहे तिर्यंच जीवोंमें-से बादर, सूक्ष्म, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद, चतुर्गति निगोद, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित, प्रत्येक, दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय उन्नीस प्रकारके तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक और इन उन्नीस प्रकारके लब्ध्यपर्याप्तकोंसे अथवा तिर्यंच पर्याप्तकोंसे और पर्याप्त अथवा अपर्याप्त कर्मभूमियोंसे, इन सब मिथ्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाल्वत्तुं तेरद मिथ्यादृष्टिगळु यथायोग्य तिर्य्यंगायुष्यंगळं कट्टि मृतरागि बंदु एकान्नविंशतिविध-तिर्य्यंचलब्ध्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळागि नरकगति देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानं पोरगागि त्रयोविंशत्यादिस्वस्वयोग्य पंचस्थानंगळं कट्टुवरु। २३। ए अ २५। ए प। बि ति च। अ। सं। म। अ प २६। ए प। आ। उ २९। बि। ति। च। पं। म। प ति। ३०। बि ति च। अ। सं। प ति। उ॥ तेजोवायुकायिकंगळु तिर्य्यंगतियुतमागिये कट्टुवरु। मत्तमी एकान्नविंशतिविधमप्प तिर्य्यंचलब्ध्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टि जीवंगळुं मत्तमेकान्नविंशति विधपर्य्याप्त तिर्य्यंचमिथ्यादृष्टिगळुं लब्ध्यपर्य्याप्तमनुष्यरुं पर्य्याप्तकर्म्मभूमि मनुष्यरुगळुं मिथ्यादृष्टिगळु तिर्य्यंगायुष्यमं स्वयोग्यंगळं कट्टि मृतरागि बंदो एकान्नविंशतिविधमिथ्यादृष्टि निर्व्वृत्यपर्य्याप्ततिर्य्यंचरप्परु। अल्लिविशेषमुंटदावुदें दोडे तेजोवायुकायंगळोळु पुट्टुव जीवंगळुं अशुभत्रयलेश्या मध्यमांशदिदं पुट्टुवरु। मत्तं भवनत्रयादि सौधर्म्मकल्पद्वय पर्य्यंतमाद मिथ्यादृष्टिदेवर्क्कळोळु केलंबरु तिर्य्यंगायुष्यमनेकेंद्रियसंबंधियं कट्टि तेजोलेश्यामध्यमांशदिदं मृतरागि बंदु पृथ्व्यब्बादरप्रतिष्ठितप्रत्येकवनस्पतिनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळु मिथ्यादृष्टिगळागि पुट्टुवरु। तिर्य्यंग्मनुष्यरुगळा त्रिस्थानकंगळोळु पुट्टुवडे कृष्णादि चतुर्म्मध्यम लेश्यांशंगळिदं पुट्टुवरु। मत्तं भवनत्रयं मोदल्गोंडु सहस्रारकल्पपर्य्यंतमाद मिथ्यादृष्टिदेवर्क्कळु मत्तं प्रथमनरकं मोदल्गोंडु सप्तमनरकपर्य्यंतमाद नारकमिथ्यादृष्टिगळुं तिर्य्यंगायुष्यमं स्वस्वयोग्यमं कट्टि मृतरागि बंदो कर्म्मभूमिसंज्ञिगर्भजनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळु स्वस्वलेश्येगळिदं मिथ्यादृष्टितिर्य्यंचरागि पुट्टुवरु। यितेकान्नविंशतिविधनिर्व्वृत्यपर्य्याप्ततिर्य्यंचरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुमसंयतसम्यग्दृष्टिगळुमें दितु त्रिविधमप्परल्लि

पर्याप्तापर्याप्तकर्मभूमिमनुष्येभ्यश्च मिथ्यादृष्टिभ्य एवागत्याशुभलेश्यात्रयेणोत्पद्यंते ते च विनाष्टाविंशतिकं त्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति। तेजोवायुकायिकास्तु तिर्यग्गतियुतान्येव। ते चत्वारिंशद्विध मिथ्यादृष्टयः, अशुभलेश्यात्रयेण मृतास्तदेकान्नविंशतिविधपर्याप्ततिर्यग्मिथ्यादृष्टिषूत्पद्यंते। तत्र तेजोवायुषु त्वशुभलेश्यामध्यमांशैरेव, भवनत्रयसौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टयः तेजोमध्यमांशेन तिर्यग्मनुष्या अशुभत्रयमध्यमांशेन च मृताः केचिद्बादरपृथ्व्यप्रतिष्ठितप्रत्येकेषूत्पद्यंते। भवनत्रयादिसहस्रारांतदेवसर्वनारकमिथ्यादृष्टयः बद्धतिर्यगायुषः स्वस्वलेश्याभिर्मृताः

दृष्टियोंसे आकर जो तीन अशुभ लेश्या सहित तिर्यंच जीव उत्पन्न होते हैं वे अठाईसके बिना तेईस आदि पाँच स्थानोंका बन्ध करते हैं। तेजकाय, वायुकायके जीव तो तिर्यंचगतिके साथ ही उन पाँच स्थानोंको बाँधते हैं। उन्नीस प्रकारके लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच, उन्नीस प्रकारके पर्याप्त तिर्यंच और दो प्रकारके मनुष्य ये सब चालीस प्रकारके मिथ्यादृष्टि तीन अशुभ लेश्याओंसे मरकर पूर्वोक्त उन्नीस प्रकारके पर्याप्त तिर्यंच मिथ्यादृष्टियोंमें उत्पन्न होते हैं। इतना विशेष है कि तेजकाय, वायुकायमें तो अशुभ लेश्याओंके मध्यम अंशसे ही उत्पन्न होते हैं। भवनत्रिक और सौधर्मयुगलके मिथ्यादृष्टि देव तेजोलेश्याके मध्यम अंशसे तथा तिर्यंच और मनुष्य तीन अशुभलेश्याओंके मध्यम अंशसे मरकर कोई बादर पृथ्वी, अप्रतिष्ठित प्रत्येकोंमें उत्पन्न होते हैं।

भवनत्रिकसे लेकर सहस्रार पर्यन्त देव और सब नारकी मिथ्यादृष्टि जिन्होंने तिर्यंचायुका बन्ध किया है वे सब अपनी-अपनी लेश्यासे मरकर कर्मभूमिया गर्भज संज्ञी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाल्कुं गतिगळिवं बंदु पुट्टुव निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टितिर्य्यंचरुगळु पेळल्पट्टरु–। मवर्गळेल्लरु-मष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि शेषत्रयोविंशत्यादि पंचस्थानंगळं कट्टुवरु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि ति च प म । अ प २६ । ए प । आ उ । २९ । बि ति च प म । अ प । ३० । बि ति च प । प उ ॥

सासादनरुगळावाव गतिगळिंद बंदी कर्म्मभूमिय एकान्नविंशतिविधनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळेल्लेल्लि पुट्टुवरें दोडे तिर्य्यंग्गतियोळु संज्ञिपर्य्याप्तगर्ब्भजकर्म्मभूमितिर्य्यग्मिथ्यादृष्टियुं मनुष्यपर्य्याप्तकर्मभूमिमिथ्यादृष्टियुं तिर्य्यगायुष्यंगळं कट्टि मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसियनंतानुबंधिकषायोदयदिंद सम्यक्त्वमं केडिसि मृतरागि बंदी पृथ्व्यब्बादर प्रत्येकवनस्पतिविकलत्रयासंज्ञिसंज्ञिनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तजीवंगळोळु सासादनरागि पुट्टुवरु । मत्तमा तिर्य्यग्मनुष्यप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळऽबद्धायुष्यरुगळाव पक्षदोळु मरणकालदोळनंतानुबंधिकषायोदयदिंदं सम्यक्त्वमं केडिसि सासादनरागि तिर्य्यगायुष्यंगळं कट्टि मृतरागि बंदी निर्व्वृत्यपर्य्याप्ततिर्य्यग्जीवंगळोळु मुंपेळ्दें टुं स्थानंगळोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्त सासादनरप्परु। मत्तमीशानकल्पावसानमाद देवर्क्कळुं मिथ्यात्वपरिणामदिंदं तिर्य्यगायुष्यमुमनुपार्ज्जिसि प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि अनंतानुबंधिकषायोदयदिंदं सम्यक्त्वमं केडिसि सासादनरागि मृतरागि बंदी पृथ्व्यब्बादरप्रत्येकवनस्पतिगळोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरप्परु । बद्धायुष्यरल्लद पक्षदोळवर्गळुं सासादनरागि तिर्य्यगायुष्यमं कट्टि मृतरागि बंदु मुंपेळ्देकेंद्रियंगळोळु किरिदुपाळ्तु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरप्परु । मत्तमा भवनत्रयादि सहस्रार कल्पावसानमाद सुररुं प्रथमनरकमादियागि षष्ठनरकपर्य्यंतनारकरुगळु मिथ्यात्व परिणामंगळिंदं तिर्य्यगायुष्यमनुपार्ज्जिसि प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि अनंतानुबंधिकषायोदयदिंदं सम्यक्त्वमं केडिसि स्वस्वलेश्येगळिंदं मृतरागि बंदु यी कर्म्मभूमि-

कर्मभूमिगर्भसंज्ञितिर्यक्षूत्पद्यंते । ते च एकान्नविंशतिधाचतुर्गत्यागतनिर्वृत्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टयः सर्वेप्यष्टाविंशतिकोनत्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । अनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन प्रथमोपशमसम्यक्त्वं विराध्य सासादना भूत्वा प्राग्बद्धतिर्यगायुष्का मृत्वा अबद्धायुष्काः केचित्तदैव तिर्यगायुर्बध्वा मृत्वा च कर्मभूमितिर्यग्मनुष्यास्तदा बादरपृथ्व्यप्प्रत्येकविकलत्रयसंज्ञ्यसंज्ञिषु देवास्तदा स्वस्वलेश्याभिरीशानांता बादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु भवनत्रयादिसहस्रारांता षष्ठनरकांतनारकाश्च कर्मभूमिगर्भजसंज्ञितिर्यक्षु च सासादना भूत्वा तिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तनवविंश-

तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं। वे चारों गतिसे आकर उत्पन्न हुए उन्नीस प्रकारके तिर्यंच निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि सब अठाईसके बिना तेईस आदि पाँचका बन्ध करते हैं।

अनन्तानुबन्धीमें-से किसी एक कषायके उदयसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी विराधना करके सासादन होकर जिन्होंने पूर्वमें तिर्यंचायुका बन्ध किया है वे जीव मरकर, और जिनके पूर्वमें आयुबन्ध नहीं हुआ वे अन्त समयमें तिर्यंचायुको बाँध मरकर तिर्यंचमें उत्पन्न होते हैं। कर्मभूमिया तिर्यंच मनुष्य तो बादर, पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पति, विकलत्रय, और संज्ञी-असंज्ञीमें उत्पन्न होते हैं। ईशान पर्यन्त देव अपनी-अपनी लेश्याके साथ मरकर बादर, पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पतिमें उत्पन्न होते हैं। भवनत्रिकसे लेकर सहस्रार पर्यन्त देव तथा छठे नरक तकके नारकी कर्मभूमिया गर्भज संज्ञी तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं। वे सासादन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचेंद्रिय संज्ञिगर्ब्भजनिर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरागि पुट्टुवरु। बद्धायुष्यरल्लद पक्षदोळल्लियं सासादनरागि तिर्य्यगायुष्यंगळं कट्टि मृतरागि बंदु किरिदु पोळ्तु मुंपेळद संज्ञिनिर्वृत्यपर्य्याप्त तिर्य्यंचरोळु सासादनरप्परु। यी सासादनरुगळुं तिर्य्यग्गतिमनुष्यगतिपर्य्याप्त नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। बि ति च प। ति। म। ३०। बि। ति। च। प। ति। प। दि। उ॥ यी सासादनरुगळेल्लरुगळुं तंतम्म सासादनकालं पोदि बळिक्कल्लरुगळुं नियमदिदं मिथ्यादृष्टिगळागि यावच्छरीरमपूर्णं तावत्कालं मिथ्यादृष्टिनिर्वृत्यपर्य्याप्तरागि मिथ्यादृष्टिगळोळु पेळ्दंते त्रयोविंशत्यादि यथायोग्यमागि नामप्रकृतिबंधस्थानंगळं कट्टुवरु। इल्लि चोदकनेंदपं—सासादनकालमुत्कृष्टदिदं षडावलिकालमक्कु–। मायुर्ब्बंधाद्धे जघन्यदिनुत्कृष्टदिनंतर्म्मुहूर्त्तप्रमितमक्कु मदरिनेंती सासादनतिर्य्यग्मनुष्यदेवनारकरोळमुत्तरभवदोळं सासादनत्व संभवमेंदोडे विरोधमिल्लेंतेंदोडे जघन्यदिदमंतर्म्मुहूर्त्तमेकावलि कालप्रमितमक्कुमवर मेले समयोत्तर क्रमदिदमंतर्म्मुहूर्त्तविकल्पंगळागुत्तं पोगि समयोनैकमुहूर्त्तमुत्कृष्टांतर्म्मुहूर्त्तमक्कुमप्पुदरिदमंतर्म्मुहूर्त्तंगळसंख्यात विकल्पंगळप्पुवप्पुदरिदं—

२ | १ | २ | विक २ १ | २७–२। २७–१ मत्तमी निर्वृत्यपर्य्याप्त संज्ञि पंचेंद्रियगर्ब्भजा-
| २ | २ | ७ |

संयत सम्यग्दृष्टिगळोळावाव गतिगळिदं बंदु पुट्टुवरेंदोडे नरकगतिदेवगतिद्वयदिदमे बंदु सम्यग्दृष्टिगळ्पुट्टुवरेकेंदोडितरतिर्य्यग्मनुष्यगतिजरुगळप्प बद्धतिर्य्यगायुष्यसम्यग्दृष्टिगळी तिर्य्यग्गतियोळ्पुट्टुवरवर्गळ्गे भोगभूमिजतिर्य्यंचरोळे जनन नियममुंटप्पुदरिदं। आ नारकामरवेदकसम्यग्दृष्टिगळु बद्धतिर्य्यगायुष्यरुगळु मरणकालदोळु सम्यक्त्वमं पत्तुविडदे स्वस्वलेश्येगळिदं मृतरागि बंदो कर्म्मभूमि संज्ञिपंचेंद्रिय गर्ब्भज निर्वृत्यपर्य्याप्त तिर्य्यंचासंयतसम्यग्दृष्टिगळोळे

तिर्कत्रिंशत्के बध्नंति। स्वस्वसासादनकालमतीत्य नियमेन मिथ्यादृष्टयो भूत्वा यावच्छरीरमपूर्णं तावन्निर्वृत्त्यपर्याप्ताः मिथ्यादृष्टयुक्तत्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति। ननूत्कृष्टः सासादनकालः षडावलिः आयुर्बंधाद्धा जघन्याप्यंतर्मुहूर्तमात्री तर्हि पूर्वोत्तरभवयोः कथं सासादनत्वमिति ? तन्न, आवलितः समयाधिकक्रमेण समयोनमुहूर्तपर्यंतानां कालविशेषाणां अंतर्मुहूर्तत्वेन विरोधाभावात्। तिर्यगसंयते प्राग्बद्धतिर्यगायुर्देवनारकवेदकसम्यग्-

अवस्थामें तिर्यंच या मनुष्यगति पर्याप्त सहित उनतीस अथवा तीसका बन्ध करते हैं। और अपना-अपना सासादन काल पूरा होनेपर नियमसे मिथ्यादृष्टि होकर जबतक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तबतक निर्वृत्यपर्याप्त रहकर मिथ्यादृष्टिमें कहे तेईस आदि पाँच स्थानोंको बाँधते हैं।

शंका—सासादनका उत्कृष्ट काल छह आवली है और आयुबन्धका जघन्य भी काल अन्तर्मुहूर्तमात्र है। तब पूर्व और उत्तर दो भवोंमें सासादनपना कैसे सम्भव है ?

समाधान—एक आवलीसे लगाकर एक-एक समय बढ़ते-बढ़ते, एक समयहीन मुहूर्त पर्यन्त जितने कालभेद हैं वे सब अन्तर्मुहूर्त हैं। इससे कोई विरोध नहीं है।

तिर्यंच असंयतमें जिन्होंने पहले तिर्यंचायुका बन्ध किया है, ऐसे देव नारकी वेदक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुट्टुवरप्पुदरिंदं मूरुं लेश्येगळप्पुवु । आ देवनारकरुगळु क्षायिक सम्यग्दृष्टिगळिल्लि पुट्टु ᳚ वोड-वर्गळु तिर्य्यगायुष्यमं कट्टुवुदुमिल्ल । मनुष्यायुष्यमं कट्टि मृतरागि बंदी पंचदशमनुष्यलोक प्रतिबद्धार्य्यखंडंगळोळु चरमांगरागि पुट्टि घातिकर्मंगळं केडिसुवरप्पुदरिंदं । सप्तमपृथ्विय नारकासंयत सम्यग्दृष्टिगळं बंदिल्लि पुट्टरेकें दडवर्गा सम्यग्दृष्टि गुणस्थानदोळु मरणमिल्लप्पु-दरिंदं । मरणकालदोळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमं पोर्द्दि मृतरप्परु मंते सासादननुं मिश्रनुमागिर्द्द नारकरुं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमने पोर्द्दि मृतरप्परु । तिर्य्यंचनिर्वृत्यपर्य्याप्तासंयतरिगे देवगति-युताष्टाविंशतिस्थानमों दे बंधमप्पुदु । ई तिर्य्यंचनिर्वृत्यपर्य्याप्तरल्लरुगळं पर्य्याप्तियिदं मेले मिथ्यादृष्टिगळं सासादनरुं मिश्ररुं असंयतसम्यग्दृष्टिगळं देशसंयतरुगळुमेंब पंचगुणस्थानवर्त्ति-गळप्परा मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमादियागि असंयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानपर्य्यंतं षड्लेश्येगळु मप्पुवु । देशसंयतरोळु शुभलेश्यात्रयमेयक्कु मी शुभाशुभलेश्येगळु मेकजीवनोळु क्रमदिदं संभविसुगुमो मेणक्रमदिदं संभविसुगुमो येंदितु प्रश्नमादोडे क्रमदिदं संभविसुगुमदें तें दोडे—

असुहाणं वरमज्झिम अवरंसे किण्हणीळ काउतिये ।
परिणमदि कमेणप्पा परिहाणीदो किळेसस्स ॥
काऊ णीळं किण्हं परिणमदि किळेसवड्ढिदो अप्पा ।
एवं किळेसहाणीवड्ढीदो होदि असुहतियं ॥

येंदितु कृष्णनीलकपोतमेंब मूरुं लेश्येगळु कषायानुभागस्थानोदयानुरंजित कायवाग्मन-स्कर्म्मलक्षणंगळु कृष्णलेश्योत्कृष्टं मोदल्गोंडु संक्लेशहानियिंदं कपोतलेश्याजघन्यपर्य्यंतमप्पु-ववरोळ् जीवंक्रमदिदमसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानपतित लेश्यास्थानंगळोळु परिणमिसुगुं । मत्तं संक्लेशवृद्धियिंदं क्रमदिदं कपोतलेश्याजघन्य मोदल्गोंडुत्कृष्ट कृष्णलेश्यास्थानपर्य्यंतमसंख्यात-

दृष्टयः स्वस्वलेश्याभिरुत्पद्यंते । तेऽपि न सप्तमपृथ्वीजाः मिथ्यादृष्टित्वे एवैषां मरणात् । ते चोत्पन्नतिर्यगसंयता देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नंति । पर्याप्तेरुपरि देशसंयतांतगुणस्थाना भवंति । तत्र असंयतांतं षड्लेश्याः, देशसंयते शुभत्रिलेश्याः ।

ननु शुभाशुभलेश्यास्वेकजीवः क्रमेण परिणमेदक्रमेण वा ? उच्यते—आत्मा संक्लेशहान्या कृष्णोत्कृष्टादाक-

सम्यग्दृष्टी अपनी-अपनी लेश्याके साथ मरकर उत्पन्न होते हैं। किन्तु सातवें नरकके नारकी तिर्यंच असंयतमें उत्पन्न नहीं होते, क्योंकि वे मिथ्यादृष्टि अवस्थामें ही मरते हैं। वे उत्पन्न हुए असंयत सम्यग्दृष्टी तिर्यंच देवगति सहित अठाईसका बन्ध करते हैं। पर्याप्ति पूर्ण होनेपर देशसंयत गुणस्थान पर्यन्त होते हैं। उनमें असंयत पर्यन्त छह लेश्या होती हैं और देशसंयतमें तीन शुभलेश्या होती हैं।

शंका—शुभ और अशुभ लेश्यामें एक जीव क्रमसे परिणमन करता है या एक साथ ?

समाधान—संक्लेशकी हानिसे आत्मा कृष्णलेश्याके उत्कृष्ट अंशसे लेकर कपोत लेश्याके जघन्य अंश तक और संक्लेशकी वृद्धिसे कपोतके जघन्य अंशसे लेकर कृष्णके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकमात्रषट्स्थानपतित लेश्यास्थानंगळोळु परिणमिसुगुं । मत्तमंते :—

तेऊ पम्मे सुक्के सुहाण अवरादि अंसगे अप्पा ।
सुद्धिस्स य वड्ढीदो हाणीदो अण्णहा होदि ॥

तेजोलेश्येयोळं पद्मलेश्येयोळं शुक्ललेश्येयोळमिवरजघन्याद्यंशंगळोळु विशुद्धिवृद्धियिदं जीवंगे परिणमनमक्कुं । विशुद्धिहानियिदमन्यथा परिणमनमक्कुमदर विपरीतपरिणमनमक्कुमें बुदर्थं । मी शुभाशुभलेश्येगळनितुं भावलेश्येगळप्पुवी भावलेश्यासाधनमुं मोहोदय मोहक्षयोपशम मोहोपशम मोहक्षयजनितजीवप्रदेशपरिस्पंदमक्कुमा मोहमुं दर्शनमोहमें दुं चारित्रमोहमें दुं द्विविधमक्कुमा दर्शनमोहोदयदिदमुं चारित्रमोहोदयदिदमुं दर्शनचारित्रमोहक्षयोपशमदिदमु दर्शनचारित्रमोहोपशमनदिदमुं दर्शनचारित्रमोहक्षयदिदमुं यथायोग्यमागि संभविसुव मिथ्यादृष्टयादि पतिंगुणस्थानंगळोळु पुट्टुव शुभाशुभलेश्येगळगे मूलकारणं । कषायानुभागस्थानोदयंगळिदमनुरंजिसल्पट्ट योगप्रवृत्तियक्कुमप्पुदरिंदमा कषायंगळु चतुव्विधंगळप्पुववरोळु विवक्षितक्रोधकषायानुभागस्थानोदयं जीवनं नरकतिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिगळोळुत्पादकमक्कुमा शक्तियुं शिलाभेदपृथ्वीभेद धूलीराजि जलराजिसमानमप्पुदल्लि :— सर्व्वघातिशक्तियुतोदयस्थानंगळिदं केळगण प्रमत्ताप्रमत्तादिसंयमिगळोळे संभविसुव देशघातिस्पर्द्धकंगळगे पूर्व्वस्पर्द्धकंगळें ब पेसरक्कुमा पूर्व्वस्पर्द्धकंगळिदं केळगे केळगे अपूर्व्वस्पर्द्धकबादरकृष्टिपर्य्यंतमप्पुवु । लोभकषायदोळु सूक्ष्मसांपरायंगे सूक्ष्मकृष्टिगळप्पुवितशेषक्रोधकषायानुभागोदयस्थानंगळुमसंख्यातलोकमात्रं षड्ढानि षड्वृद्धिपतितासंख्यातलोकमात्रानुभागोदयस्थानंगळप्पुववरोळु

पीतजघन्यं संक्लेशवृद्धया कपोतजघन्यादाकृष्णोत्कृष्टं चासंख्यातलोकमात्रषट्स्थानपतितलेश्यास्थानेषु क्रमेण परिणमति । विशुद्धवृद्धया तेजःपद्मशुक्लजघन्याद्यंशेषु विशुद्धिहान्या तेऽन्यथा च परिणमति । तासां च लेश्यानां मूलकारणं कषायोदयानुभागस्थानानुरंजितयोगप्रवृत्तिः । ते कषायाश्चत्वारः । तेषु विवक्षितक्रोधकषायानुभागस्थानोदयः जीवनरकतिर्यग्मनुष्यदेवगतिषूत्पादकः । तच्छक्तिः शिलाभेदपृथ्वीभेदधूलिराजिजलराजिसमाना । तत्र सर्वघातिशक्तियुतोदयस्थानेभ्योऽधस्तनी प्रमत्तादिसंयमिष्वेव संभविनी देशघातिनी पूर्वस्पर्धकनामा । तदधोधः अपूर्वस्पर्धकनामा बादरकृष्टिनामा लोभकषाये सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मकृष्टिनामापि । तान्यशेषक्रोधकषायानुभागोदयस्थानान्यसंख्यातलोकमात्रषड्ढानिवृद्धिपतितासंख्यातलोकमात्राणि तेऽवसंख्यातलोकभक्तबहुभागमा-

---

उत्कृष्ट अंश तक असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानपतित वृद्धि-हानिको लिये लेश्यास्थानोंमें क्रमसे परिणमन करता है । तथा विशुद्धताकी वृद्धिसे तेज-पद्म-शुक्लके जघन्यादि अंशोंमें और विशुद्धताकी हानिसे शुक्ल-पद्म-तेजोलेश्याके उत्कृष्ट आदि अंशोंमें क्रमसे परिणमन करता है । उन लेश्याओंका मूल कारण कषायोंके उदयरूप अनुभागस्थानोंसे अनुरंजित योगोंकी प्रवृत्ति है । वे कषाय चार हैं । उनमें-से विवक्षित क्रोधकषायके अनुभाग स्थानका उदय जीवको नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगतिमें उत्पन्न कराता है । उस क्रोधकी शक्ति शिलाभेद, पृथ्वीभेद, धूलरेखा और जलरेखाके समान है । उनमेंसे सर्वघाती शक्तिसे युक्त उदयस्थानोंसे नीचे, प्रमत्त आदि संयमियोंमें ही होनेवाली देशघाती शक्तिको पूर्वस्पर्धक कहते हैं । उसके नीचे-नीचे अपूर्वस्पर्द्धक नामवाली, बादरकृष्टि नामवाली, लोभकषायमें सूक्ष्मसाम्पराय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संक्लेशस्थानंगळुमसंख्यातलोकभक्तासंख्यातबहुभागंगळप्पुवेकभागमात्रंगळु विशुद्धिकषायोदयस्थानंगळप्पुवा संक्लेशविशुद्धिसर्व्वक्रोधकषायोदयस्थानंगळोळु पदिनाल्कुं लेश्यापदंगळप्पुवा पदिनाल्कुं लेश्यापदंगळोळु लेश्यांशंगळिप्पत्तारप्पुवु । अवरोळु मध्यमाष्टांशंगळायुर्बंधनिबंधनंगळक्कुं । संदृष्टि :

≡२८ । शि । भे । तीव्रतर ९	नरक	पुं भे ।≡२८ । तीव्र । तिर्यग्गति धू । रा । ९९
उ ० ० ० १	० ० ० ज	१ २ ३ ४ ५ ६
कृ १ १ १ १ १ १ १ १ ० ० ० ० ० ० ० ०		नी क ते प शु ११११।२२२२।३३३३३३३३३३ ४४४४।५५५५।६६६६ ०००० ००००।०००००००००० ०००० ०००० ०००० →
० ० ० न १ १ १ १ उ		११११।११११।११११।३३३।४४४ ४४४४४४४४४४४ उ उ ज ज

मंद । मनुष्यगतिनिबंधनंगळु ≡ ० ८ ९ ९ ९	जल । रा । देव । मंदतर। ≡ ० १ ९९९
६ ५ ४ ३ २ १	१
← कृ नी का ते प ६६६६६६६६६६।५५५।४४४४।३३३३३३३। २२२२। ११११११ ००००००००००।०००।००००।०००००००।००००। ०००००	शु १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० ०
४४४। ३३३३।२२२२।११११११।००००००० ००००० ज ज उ उ	० ० ० ० ० ० ० ० उ

त्राणि संक्लेशस्थानानि तदेकमात्रभागमात्राणि विशुद्धिस्थानानि। तेषु लेश्यापदानि चतुर्दश लेश्यांशाः षड्विंशतिः । तत्र मध्यमा अष्टौ आयुर्बंधनिबंधनाः । संदृष्टिः—

≡०८ शि । भे । तीव्रतर । नर ९	पू । भे≡०८ तीव्र । तिर्यग्गतिनिबंधनानि ९।९
उ ० ० ० १ ० ० ० ज	१ २ ३ ४ ५ ६
कृ १ १ १ १ १ १ १ १ ० ० ० ० ० ० ० ०	ते क शु प नी १११२२२२३३३३३३३३३३३४४४४५५५५६६६६ ०००००००००००००००००००००००००००००००० →
० ० ० ० न १ १ १ १ उ	११११११११११११२२२२३३३३४४४४४४४४४४४४ उ उ ज ज ज

धू । रा । मंद । मनुष्यगतिनिबंधनानि ≡ ० । ८ ९ । ९ । ९	जल = रा । देव । मंदतर≡०१ ९।९।९
५ ४ ३ २ १	१
← कृ नी क ते प ६६६६६६६६६६६६५५५५४४४४३३३३२२२२११११ ००००००००००००००००००००००००००००००००००	शु ११११ ११११ ०००० ००००
४४४४३३३३२२२२११११११११११११०००००००० ज ज ज उ उ	०००००००० उ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इल्लि चतुर्गत्यायुर्ब्बंधनिबंधनंगळप्प लेश्यामध्यमाष्टांशंगळावुवें दोडे तेजोजघन्यस्थानानंतर स्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानं मोदल्गोंडु कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतर स्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानपर्य्यंतमथवा कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतर स्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानं मोदल्गोंडु तेजोलेश्याजघन्यस्थानानंतर स्वमध्यमानंत गुणवृद्धिस्थानपर्य्यंतमप्प पद्मशुक्लकृष्णनीललेश्याजघन्यांशंगळु नाल्कुं शेषचतुर्गत्यायुर्ब्बंधनिबंधनंगळप्प मध्यमांशंगळ् नरकायुर्व्वर्ज्जितायुस्त्रितयबंधनिबंधनंगळप्प मध्यमांशंगळुं नरकतिर्य्यगायुर्व्वर्ज्जितायुर्द्वयबंधनंगळप्पमध्यमांशंगळुं केवलं देवायुर्ब्बंधनिबंधनंगळप्प मध्यमांशंगळुमितु मध्यमांशंगळुं नाल्कुं कूडियष्टांशंगळप्पुवु। यिल्लि पद्मशुक्लकृष्णनीलजघन्यांशंगळ्गे मध्यमत्वमें तें दोडे शुभाशुभलेश्येगळविभागापेक्षेइनवक्कें मध्यमांशत्वं पेळल्पट्टुदु। शेषाष्टादशांशंगळ् चतुर्गतिगमनकारणंगळप्पुववरोळ अशुभलेश्यात्रयनवांशंगळु नरकगतियोळं तिर्य्यग्गतियोळमुत्पादकंगळु पेळल्पट्टुवु। मुंदें तिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिगमनकारण शुभाशुभांशंगळु पेळल्पट्टुवु। इल्लि लेश्यासंक्रमणं पेळल्पडुगुमेकें दोडे मोहो-

---

ते मध्यमांशास्तु तेजोलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानमादिं कृत्वा कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानपर्यंतं वा कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानमाद्यं कृत्वा तेजोलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानपर्यंतं पद्मशुक्लकृष्णनीलजघन्यांशाश्चत्वारः चतुर्गत्यायुर्बंधनिबंधननरकवर्जितत्र्यायुर्बंधनिबंधननरकतिर्यग्वर्जिततद्द्वयायुर्बंधनिबंधनकेवलदेवायुर्बंधनाश्चत्वारः एवमष्टौ। अत्र पद्मशुक्लकृष्णनीलजघन्यांशानां मध्यमत्वं तु शुभाशुभलेश्याविभागापेक्षं शेषाष्टादशांशाः चतुर्गति-

---

गुणस्थानमें सूक्ष्मकृष्टि नामवाली शक्तियाँ हैं। इस प्रकार समस्त क्रोधकषायके अनुभागरूप उदयस्थान असंख्यात लोकमात्र षट्स्थान पतित वृद्धि हानिको लिये असंख्यात लोकप्रमाण हैं। उनमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण तो संक्लेश स्थान हैं और एक भाग प्रमाण विशुद्धिस्थान हैं। उनमें लेश्यापद चौदह हैं और लेश्याके अंश छब्बीस हैं। उनमेंसे मध्यके आठ अंश आयुके बन्धके कारण हैं। (यहाँ संदृष्टि आदि जीवकाण्डके कषायमार्गणा अधिकारमें पहले कहा है वही जानना।)

वे मध्यम अंश तेजोलेश्याके जघन्यस्थानके अनन्तर अपने अनन्त गुणवृद्धिरूप मध्यमस्थानसे लगाकर कपोतलेश्याके जघन्यस्थानके अनन्तर अनन्तगुणवृद्धियुक्त उसीके मध्यमस्थान पर्यन्त जानना। अथवा कपोतलेश्याके जघन्यस्थानके अनन्तर उसीके अनन्तगुणवृद्धिरूप मध्यमस्थानसे लगाकर तेजोलेश्याके जघन्यस्थानके अनन्तर उसीके अनन्तगुणवृद्धिरूप मध्यमस्थान पर्यन्त पद्म, शुक्ल, कृष्ण, नीलके जघन्य अंश चार और चार गति सम्बन्धी आयुके कारण अथवा नरक बिना तीन आयुके अथवा नरकतिर्यंच बिना दो आयुके या केवल देवायुके बन्धके कारण चार अंश इस प्रकार आठ मध्यम अंश आयुबन्धके कारण हैं।

यहाँ जो पद्म, शुक्ल, कृष्ण, नील लेश्याके जघन्य अंशोंको मध्यम अंश कहा है उसका कारण यह है कि शुभ-अशुभ लेश्याके भेदकी अपेक्षा ये बीचके अंश हैं इसलिए इन्हें मध्यम अंश कहा है। शेष अठारह अंश, जो कृष्णादिके जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेदरूप हैं, चारों गतियोंमें गमनके कारण हैं। इन अठारह अंशोंमें मरण होता है। उनमेंसे तीन अशुभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दयादिजनितगुणस्थानंगळोळ् चतुर्गतिजीवंगळोळु संभविसुव शुभाशुभलेश्यगळं साधिसल्वक्कुमप्पुदरिदं ।

संकमणं संठाण परट्ठाणं होदि किण्हसुक्काणं ।
वड्ढीसु हि संठाणं उभयं हाणिम्मि सेसउभयेवि ॥

यिल्लि लेश्यगळगे स्वस्थानपरस्थानसंक्रमणमेंदु संक्रमणमेरडुप्रकारमप्पुवल्लि कृष्णलेश्येगं शुक्ललेश्येगं वृद्धिगळोळु स्वस्थानसंक्रमणमेयक्कुं । स्वस्थानसंक्रमणमुं परस्थानसंक्रमणमुंमेंबुभयसंक्रमणमा कृष्णलेश्येगं शुक्ललेश्येगं हानियोळक्कुं । शेषनीलकपोततेजःपद्मंगळ स्वजघन्यमादियागि स्वस्वोत्कृष्टपर्य्यंतमप्प वृद्धियोळं स्वोत्कृष्टं मोदल्गोंडु स्वजघन्यपर्य्यंतमप्प हानियोळं स्वस्थानसंक्रमणमुं परस्थानसंक्रमणमक्कुमदेंतेंदोडे कृष्णशुक्लंगळगे स्वजघन्यं मोदल्गोंडु स्वोत्कृष्टपर्य्यंतं स्वस्थानसंक्रमणमेयक्कुमेकेंदोडे शुक्लपद्मतेजःकपोतनीलंगळोळं कृष्णनीलकपोततेजःपद्मंगळोळं संकरमिल्लेकेंदोडे लक्षणतः सिद्धंगळप्पुदरिदं । मत्तं हानियोळमा कृष्णशुक्लंगळगे स्वोत्कृष्टं मोदल्गोंडु स्वजघन्यपर्य्यंतं स्वस्थानसंक्रमणमुं मुंदण नीलकपोततेजःपद्मशुक्ललेश्योत्कृष्टपर्य्यंतमुं पद्मतेजःकपोतनीलकृष्णोत्कृष्टपर्य्यंतमुं परस्थानसंक्रमणमुमक्कुं शेषनीलकपोतंगळ पद्मतेजंगळ स्वस्वोत्कृष्टं मोदल्गोंडु स्वस्वजघन्यपर्य्यंतंहानियोळु स्वस्थानसंक्रमणमुं स्वस्वजघन्यंगळिदं मुंदण लेश्यगळोळु शुक्ललेश्योत्कृष्टपर्य्यंतमुं कृष्णलेश्योत्कृष्टपर्य्यंतमुं परस्थानसंक्रमणमुमक्कुं । मत्तमा नाल्कर वृद्धियोळु स्वस्वजघन्यं मोदल्गोंडु स्वस्वोत्कृष्टपर्य्यंतं स्वस्थानसंक्रमणमुं स्वस्वोत्कृष्टंगळ मुंदण कृष्णोत्कृष्ट पर्य्यंतमुं शुक्ललेश्योत्कृष्टपर्य्यंतमुं परस्थानसंक्रमणमुमक्कुं । सर्व्वत्र परस्थानसंक्रमणंगळोळु परलेश्यापरिणमनमप्पंतु

गमनकारणानि तेषु सुभगत्रयस्य नवांशाः नरकगतौ तिर्यग्गतौ चोत्पादकाः । अग्रतनाः शुभाशुभलेश्यांशास्तु तिर्यग्मनुष्यदेवगतिगमनकारणानि । लेश्यासंक्रमणं तु कृष्णशुक्लयोर्वृद्धावप्रेऽन्यलेश्याभावात्स्वस्थाने एव हानौ स्वोत्कृष्टात्स्वजघन्यपर्यंतं स्वस्थाने कृष्णायाः नीलकपोततेजःपद्मशुक्लोत्कृष्टपर्यंतं शुक्लायाः पद्मतेजःकपोतनीलकृष्णोत्कृष्टपर्यंतं च परस्थाने स्यात् । शेषाणां हानौ स्वस्वोत्कृष्टादास्वस्वजघन्यं स्वस्थाने परस्थाने तु नील-

लेश्याओंके नौ अंश तो नरकगति और तिर्यंचगतिमें उत्पन्न कराते हैं। आगेके शुभ-अशुभ लेश्याओंके अंश तिर्यंच, मनुष्य और देवगतिमें गमनके कारण हैं।

आगे लेश्याओंका संक्रमण कहते हैं—

एक स्थानसे दूसरे स्थानको प्राप्त होनेका नाम संक्रमण है। वृद्धिमें कृष्ण और शुक्ललेश्याका संक्रमण स्वस्थानमें ही है क्योंकि संक्लेश या विशुद्धिकी वृद्धि होनेपर कृष्ण या शुक्लको छोड़ अन्य लेश्याको प्राप्त नहीं होता। हानिमें अपने-अपने उत्कृष्टसे अपने-अपने जघन्य अंश पर्यन्त स्वस्थानमें और कृष्णका नील, कपोत, तेज, पद्म, शुक्लके उत्कृष्ट पर्यन्त तथा शुक्लका पद्म, तेज, कपोत, नील, कृष्णके उत्कृष्ट पर्यन्त परस्थानमें संक्रमण होता है। शेष लेश्याओंका संक्लेश या विशुद्धताकी हानि होनेपर अपने-अपने उत्कृष्टसे अपने-अपने जघन्य पर्यन्त तो स्वस्थान संक्रमण है। और नील तथा कपोतका अपने-अपने जघन्यसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्थानसंक्रमणदोळ् परलेश्यासदृशशक्तिस्थानगळोळ् संक्रमणमिल्लेके दोडे स्वस्वलेश्यालक्षणत्याज्यमिल्लप्पुदरिंदं ।

लेस्साणुक्कस्सादोवरहाणो अवरगादवरवड्ढी ।
सट्ठाणे अवरादो हाणो णियमा परट्ठाणे ॥

सर्व्वलेश्येगळ स्वस्थानदोळुत्कृष्टदिदमनंतरस्वस्वमध्यमस्थानदोळु अवरहानियवकुमेके दोडे उत्कृष्टलेश्यास्थानंगळनितुं वुर्व्वंकंगळप्पुदरिंदमनंतभागहानियेयक्कुं । सर्व्वलेश्येगळ जघन्यस्थानानंतरमध्यमस्थानदोळु वृद्धियुमनंतभागवृद्धियेयक्कुमेके दोडेल्ला लेश्येगळ जघन्यंगळाविगळष्टांकंगळप्पुदरिंदमनंतरमध्यमवृद्धिस्थानदोळमवरवृद्धियक्कुमप्पुदरिंदं । सर्व्वलेश्येगळजघन्यवर्त्तणिदं परस्थानसंक्रमणदोळु नियमदिदं अनंतगुणहानियेक्कुमेके दोडितरलेश्यापेक्षेयिंदमा जघन्यंगळेल्लमष्टांकंगळेयप्पुवप्पुदरिंदं । "छट्ठाणाणं आदी अट्ठंकं होदि चरिममुव्वंकं" एंदितुदरिंदं लेश्येगळेल्लव उत्कृष्टदत्तणिदं हानियुं जघन्यदत्तणिदं वृद्धियुं स्वस्थानसंक्रमणदोळुमनंतभागहानियुमनंतभागवृद्धियुमक्कुमेल्ला लेश्येगळ जघन्यस्थानदत्तणिदं परस्थानसंक्रमणदोळमनंतगुणहानियेयक्कुमें बुदु तात्पर्य्यं ॥

यितु तिर्य्यग्गति पर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळोळु मिथ्यात्वमनंतानुबंध्यप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानसंज्वलन सर्व्वघातिक्रोधचतुष्कमुं मानचतुष्कमुं मायाचतुष्कमुं लोभचतुष्कमुमें बी कषायचतुष्ट-

कपोतयोः स्वस्वजघन्यादाशुक्लोत्कृष्टं पद्मतेजसोराकृष्णोत्कृष्टं च स्यात् । वृद्धौ स्वस्थाने स्वस्वजघन्यादास्वस्वोत्कृष्टं । परस्थाने तु नीलकपोतयोः स्वस्वोत्कृष्टादाकृष्णोत्कृष्टं पद्मतेजसोराशुक्लोत्कृष्टं च स्यात् । न च स्वस्थाने परस्थानवत्परलेश्यासदृशशक्तिस्थानं संक्रामति स्वस्वलक्षणस्यात्यजनात् । स्वस्थानसंक्रमणे सर्वलेश्यानामुत्कृष्टानंतरस्वमध्यमस्थाने हानिरनंतभागात्मिका तदुत्कृष्टस्योर्वं कृत्वा च तासां जघन्यादनंतरस्वमध्यमस्थाने वृद्धिरपि सैव तज्जघन्यस्याष्टांकत्वात् । परस्थानसंक्रमणे तासां जघन्याद्धानिरनंतगुणा इतरलेश्या-

शुक्लके उत्कृष्ट पर्यन्त तथा पद्म और तेजका अपने-अपने जघन्यसे कृष्णके उत्कृष्ट पर्यन्त परस्थान संक्रमण है। वृद्धिमें अपने-अपने जघन्यसे अपने-अपने उत्कृष्ट पर्यन्त तो स्वस्थान संक्रमण है। नील और कपोतका अपने-अपने उत्कृष्टसे कृष्णके उत्कृष्ट पर्यन्त तथा पद्म और तेजका अपने-अपने उत्कृष्टसे शुक्लके उत्कृष्ट पर्यन्त परस्थान संक्रमण है। स्वस्थानमें संक्रमण होनेपर परस्थानकी तरह अन्य लेश्याके समान शक्तिरूप स्थानको प्राप्त नहीं होते; क्योंकि अपने-अपने लक्षणको नहीं छोड़ते।

स्वस्थान संक्रमणमें सब लेश्याओंके उत्कृष्टसे अनन्तर अपने-अपने मध्यमस्थानमें कृष्णादि तीनमें संक्लेशकी और पीतादि तीनमें विशुद्धताकी हानि अनन्तभागरूप है क्योंकि लेश्याओंका उत्कृष्ट स्थान अपने अनन्तरवर्ती मध्यमस्थानसे उर्वंक अर्थात् अनन्तभागरूप कहा है। तथा उन लेश्याओंके जघन्यके अनन्तर अपने मध्यम स्थानमें वृद्धि भी अनन्तभागरूप है; क्योंकि उन लेश्याओंका जघन्य स्थान अष्टांकरूप है अर्थात् अपने अनन्तरवर्ती स्थानसे अनन्तगुणरूप है। परस्थान संक्रमणमें उन लेश्याओंके जघन्यसे अनन्तगुणहानि पायी जाती है क्योंकि अन्य लेश्याकी अपेक्षा उनका जघन्य अष्टांकरूप है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योदयमक्कुं ।। सासादननोळु मिथ्यात्वोदयरहितमागि अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यान संज्वलन-सर्व्वघाति क्रोधमानमायालोभचतुष्टयोदयमक्कुं ।। मिश्रनोळु मिथ्यात्वानंतानुबंधिकषायरहिता-प्रत्याख्यानप्रत्याख्यान संज्वलन सर्व्वघातिक्रोधत्रितयादि कषायचतुष्टयोदयमुं जात्यंतरसर्व्वघाति दर्शनमोह सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्युदयमुमक्कुं ।। असंयतसम्यग्दृष्टियोळु मिथ्यात्वानंतानुबंधि कषायोदय रहितमागि दर्शनमोहक्षयोपशमदोळाद देशघातिसम्यक्त्वप्रकृत्युदयदोडनप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलनसर्व्वघातिक्रोधत्रितयादिकषायचतुष्कोदयमुं मेणु दर्शनमोहोपशमनमुं क्षयमुम-प्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलनसर्व्वघातिक्रोधत्रिययादि चतुःकषायोदयमुमक्कुं । तिर्य्यग्देशसंयत-नोळु मिथ्यात्वानंतानुबंधि अप्रत्याख्यानरहितमागि दर्शनमोहक्षयोपशमदेशघातिसम्यक्त्वप्रकृत्यु-दयमुं प्रत्याख्यान संज्वलनसर्व्वघातिक्रोधद्वितयादि चतुःकषायोदयमुं मेणु दर्शनमोहोपशमयुत प्रत्याख्यान संज्वलन सर्व्वघातिक्रोधद्वयादि चतुष्कषायोदयमुमक्कुमादोडमी तिर्य्यग्देशसंयतनोळु संक्लेशहानियोळाद शुभलेश्यात्रयकारणंगळप्प कषायोदयस्थानंगळसंख्यातेकभागमात्रंगळागियु-मसंख्यात लोकमात्रंगळप्पुवु । ई साधनंगळिनुपलक्षिसल्पट्ट षड्लेश्योदयस्थानंगळु मिथ्यादृष्टि-योळं सासादननोळं मिश्रनोळमसंयतनोळमप्पुवा पर्य्याप्ततिर्य्यंचसामान्य मिथ्यादृष्टियोळु यथायोग्यं नामकर्म्मबंधस्थानंगळोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधमप्पुवु । २३ । ए अ । २५ ।

पेक्षया तज्जघन्यानामष्टांकत्वात् । तत्तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वेन सहानंतानुबंध्यादिसर्वघातिक्रोधचतुष्कं वा मानचतुष्कं वा मायाचतुष्कं वा लोभचतुष्कमुदेति । सासादने तदेव बिना मिथ्यात्वं । मिश्रे पुनरनंतानुबंध्यूनं युतं जात्यंतरसर्वघातिसम्यग्मिथ्यात्वेन । असंयते सम्यग्मिथ्यात्वोनं दर्शनमोहस्य क्षयोपशमे युतं देशघातिसम्य-क्त्वप्रकृत्या वियुतमुपशमे क्षये च । देशसंयते पुनरप्रत्याख्यानोनं युतं दर्शनमोहस्य क्षयोपशमे तथा वियुतमुपशमे तथापि तिर्यग्देशसंयते संक्लेशहानौ जातानि (त्रिशुभ-)लेश्याकारणकषायोदयस्थानान्यसंख्यातैकभागत्वेऽप्यसंख्या-तलोकमात्राणि शेषबहुभागाः षड्लेश्योदयस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादिचतुष्के भवंति । तत्र मिथ्यादृष्टौ त्रयो-

तिर्यंच मिथ्यादृष्टिमें मिथ्यात्वके साथ अनन्तानुबन्धी आदि सर्वघाती क्रोध-चतुष्क, मानचतुष्क, मायाचतुष्क अथवा लोभचतुष्कका उदय होता है। सासादनमें मिथ्यात्वके बिना अनन्तानुबन्धी चतुष्कोंका उदय होता है। मिश्रमें अनन्तानुबन्धी बिना जात्यन्तर सर्वघाती सम्यग्मिथ्यात्वके साथ कषायका उदय होता है। असंयतमें सम्यग्-मिथ्यात्वके बिना दर्शनमोहके क्षयोपशममें देशघाती सम्यक्त्व प्रकृतिके साथ और दर्शन मोहके उपशम और क्षयमें सम्यक्त्व मोहनीयके बिना कषायका उदय होता है। देशसंयतमें अप्रत्याख्यान रहित तथा दर्शनमोहके क्षयोपशममें सम्यक्त्व मोहनीय सहित और उपशममें उससे रहित उदय होता है। किन्तु तिर्यंच देशसंयतमें संक्लेशकी हानिसे हुए तीन शुभ लेश्याओंके कारण कषायोंके उदयस्थान सब कषायोंके उदयस्थानोंके असंख्यातवें भाग प्रमाण होनेपर भी असंख्यात लोक प्रमाण हैं। शेष बहुभाग प्रमाण कषायोंके उदयस्थान, जो छह लेश्याओंके कारण हैं, मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें होते हैं।

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें तेईस आदि छह स्थान बँधते हैं। सासादनमें अठाईस आदि तीन बँधते हैं। मिश्र आदि तीन गुणस्थानोंमें एक अट्ठाईसका ही स्थान बँधता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ए प । बि । ति । च । अ । सं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न । दे । २९ । बि । ति । च । अ । सं । म । परि । ३० । बि । ति । च । अ । सं । परि । उ ॥ पर्य्याप्तसासादनरोळु त्रिस्थानंगळु बंधमप्पुवु । २८ । दे । २९ । पं ति । म । परि । ३० । सं । परि । उ । मिश्रनोळु देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमों दे बंधमप्पुवु । २८ । दे । एकें बोडुवरिमछण्णं च छिदी सासणसम्मे हवे णियमा एंदिंतिदरिनरियल्पडुगुमप्पुदरिंदं ॥ असंयतनोळु देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमों दे बंधमक्कुं । २८ । दे ॥ देशसंयतनोळमष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमुमदे बंधमक्कुं । २८ । दे ॥ भोगभूमिसंज्ञिपंचेंद्रिय गर्भजतिर्य्यंचरुगळ् निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरुगळुमें दु द्विविधमप्परल्लि निर्व्वृत्यपर्य्याप्ततिर्य्यंचरुगळं मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतरुगळें दु त्रिविधमप्परल्लि निर्व्वृत्यपर्य्याप्त-मिथ्यादृष्टिजीवंगळावाव गतिगळिंदं बंदु पुट्टिदवर्गळें बोडे मनुष्यगतिय मिथ्यादृष्टिजीवंगळु विधिपूर्व्वकमागि योग्यद्रव्यंगळं दातृगुणसमन्वितरागियुत्तममध्यमजघन्य पात्रंगळाहारदानदानानु-मोदंगळिंदं । तिर्य्यंचरुगळु दानानुमोदंगळिंदं बद्धतिर्य्यग्मनुष्यायुष्यरुगळु मेणबद्धायुष्यरुगळु तिर्य्यगायुष्यक्के त्रिद्वयेकपल्योपमस्थितिबंधमं माडि मृतरागि बंदुत्तममध्यमजघन्य भोगभूमिगळोळु त्रिद्वयेकपल्योपमायुष्यन्निर्व्वृत्यपर्य्याप्तशुभलेश्यात्रितयमिथ्यादृष्टितिर्य्यंचरागि पुट्टुवरेकें बोडे "सण्णि अपुण्णगमिच्छे सासणसम्मे वि असुहतियमें दु संज्ञिलब्ध्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टितिर्य्यंचनोळे अशुभलेश्यात्रयमल्लदे निर्व्वृत्यपर्य्याप्तनोळु शुभाशुभलेश्येगळु संभविसुगु मप्पुदरिंदं नरकादिगति-गळिंदं बंदु पुट्टिद संज्ञिनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादननोळमशुभलेश्येगळेयक्कुमा मिथ्यादृष्टिगे—

भोगेसुरट्ठवीसं सम्मो मिच्छो य मिच्छगअपुण्णो ।
तिरिउगुतीसं तीसं णरउगुतीसं च बंधदि हु ॥

विंशतिकादीनि षट् बध्यंते । सासादनेऽष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि मिश्रादित्रये उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे इत्यष्टाविंशतिकमेव । मनुष्यपूर्वभवे योग्यद्रव्यदातृगुणस्त्रिधा पात्रदानेन तदनुमोदेन वा तिर्यङ् दानानुमोदेनैव मिथ्यादृष्टित्वेन तिर्यगायुर्बद्ध्वा अशुभलेश्याभिर्भोगभूमितिर्यग्मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा अपुण्णे तिरियुगुतीसं तीसं णरउ-गुतीसं च बंधदि । बद्धतिर्यगायुर्मरणे प्रथमोपशमसम्यक्त्वमनंतानुबंध्युदयेन विराध्य तिर्यग्मनुष्यो वा भोगभूमौ नारकादिकर्मभूमौ च अशुभलेश्याभिस्तिर्यक्सासादनो भूत्वा तद्द्वयमेव । मिच्छदुगे देव चऊ तित्थं णेति

मनुष्य पूर्वभवमें योग्यद्रव्य दाताके गुणसहित तीन प्रकारके पात्रोंको दान देकर अथवा उसकी अनुमोदना करके और तिर्यंच दानकी अनुमोदना ही करके मिथ्यादृष्टि होनेके कारण तिर्यंचायुको बाँध, तीन अशुभ लेश्याओंके साथ मरकर भोगभूमिमें तिर्यंच मिथ्यादृष्टि उत्पन्न होता है । वह अपर्याप्त दशामें तिर्यंचगति सहित उनतीस या तीसका और मनुष्य-गति सहित उनतीसका स्थान बाँधता है । जिसके तिर्यंचायुका बन्ध हुआ है और मरते समय अनन्तानुबन्धीके उदयसे प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी विराधना करके तिर्यंच और मनुष्य तो भोगभूमिमें और नारक आदि कर्मभूमिमें तीन अशुभ लेश्याओंके साथ सासादन तिर्यंच उत्पन्न होकर उनतीस और तीसको ही बाँधते हैं । क्योंकि 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि' इस आगम वचनके अनुसार देवगति सहित अट्ठाईसका बन्ध पर्याप्तदशामें ही होता है । कर्मभूमिका वेदक सम्यग्दृष्टी तिर्यंच या मनुष्य वा क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्य, जिसने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येंदितु भोगभूमिनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टियोळु नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळु बंधमप्पुवु । २९ । ति । म । ३० । ति । उ ॥ भोगभूमिनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तसासादनतिर्य्यंचरुगळं मनुष्यतिर्य्यग्गतिगळोळु बद्धतिर्य्यग्मनुष्यायुष्यरुगळु गृहीतप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळु मरणकालदोळु अनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सम्यक्त्वमं केडिसि बंदु भोगभूमिसासादननिर्व्वृत्यपर्य्याप्ततिर्य्यंचरुमशुभलेश्यात्रितयिगळक्कु–। मवर्गळगेयुं नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळे बंधमक्कु २९ । ति म ३० । ति उ । मेके दोडे "मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि" येंब नियममुंटप्पुदरिदं । सुराष्टाविंशतिस्थानं पर्य्याप्तरोळे बंधमक्कुमें बुदत्थं । भोगभूमितिर्य्यंचनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तवेदकसम्यग्दृष्टि क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळाव गतियिदं बंदु पुट्टिदवर्गळप्परें दोडे कर्म्मभूमिय तिर्य्यग्मनुष्यरु वेदकक्षायिक सम्यग्दृष्टिगळु प्राग्बद्धतिर्य्यग्मनुष्यायुष्यरुगळुत्तममध्यमजघन्यपात्रदान दानानुमोदंगळिदं तिर्य्यग्मनुष्यायुष्यंगळगे त्रिद्वचेकपल्योपमस्थितिगळं माडि मृतरागि बंदी उत्तममध्यमजघन्य भोगभूमिगळोळु कपोतलेश्याजघन्यांशदिदं पुट्टिदवर्गळें बुदत्थं–। मिल्लि कृतकृत्यवेदकरुं वेदकरुगळुं क्षायिकरुगळुं देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरेके दोडे 'भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो' येंदितु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरुं पर्य्याप्तरुं कट्टुगुमप्पुदरिदं । पर्य्याप्तियिदं मेलेल्लरुगळुं चतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळुं शुभलेश्यात्रितयिगळुमक्कुमल्लि मिथ्यादृष्टिगळगे सुराष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । ति म । ३० । ति उ ॥ सासादनरुगळगेयुमष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळुं बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । ति । म । ३० । ति । उ ॥ मिश्ररुगळगे देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमों दे बंधयोग्यमक्कुं । २८ । दे । एके दोडे तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळोळु "उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मो हवे णियमा" येंदितु तिर्य्यग्गतियुत स्थानबंधंगळु सासादननोळे बंधव्युच्छित्तिगळादुवप्पुदरिदं ॥

सुराष्टाविंशतिकं पर्याप्तेष्वेवेत्यर्थः । कर्मभूमेस्तिर्यग्मनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टिः मनुष्यक्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा प्राग्बद्धतिर्यगायुस्त्रिधापात्रदानतदनुमोदेन त्रिद्वयेकपल्यप्रमाणं कृत्वा त्रिधाभोगभूमौ कपोतलेश्याजघन्यांशेनोत्पन्न वेदकसम्यग्दृष्टिः कृत्यकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिः क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा देवगत्यष्टाविंशतिकमेव । भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो इति नियमात् । पर्याप्तेरुपरि चतुर्गुणस्थानवर्ती शुभत्रिलेश्य एव । तत्र मिथ्यादृष्टिः सासादनश्च सुराष्टाविंशतिकादित्रयं २८ दे २९ ति म ३० ति उ । मिश्रोऽसंयतश्च देवगत्यष्टाविंशतिकमेव तिर्यग्मनुष्यगतियुतस्थान-

पहले तिर्यंचायुका बन्ध किया है, तीन प्रकारके पात्रोंको दान देकर या उसकी अनुमोदना करके तीन भोगभूमियोंमें तीन-दो-एक पल्यकी आयु धारण करके कपोतलेश्याके जघन्य अंशके साथ उत्पन्न हुआ। उस अपर्याप्त दशामें वेदक सम्यग्दृष्टी, कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी अथवा क्षायिक सम्यग्दृष्टी देवगति सहित अट्ठाईसके ही स्थानको बाँधते हैं। क्योंकि कहा है कि भोगभूमिमें सम्यग्दृष्टी देवगति सहित अट्ठाईसका स्थान बांधता है। पर्याप्त होनेपर चारों गुणस्थानवर्ती भोगभूमिया तीन शुभलेश्यायुक्त होते हैं। उनमें-से मिथ्यादृष्टी और सासादन देवगति सहित अठाईसका अथवा तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीसका या उद्योत सहित तीसका स्थान बांधते हैं। तथा मिश्र और असंयत देवगति सहित अठाईसका ही स्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंयतंगर्मितें मनुष्यगतियोळु लब्ध्यपर्य्याप्तरुगळेल्लमशुभलेश्यात्रितयिगळप्परु । निर्व्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिसासादनासंयतरुगळोळु षड्लेश्येगळप्पुवें तें दोडे चतुर्गतिजरुं मिथ्यादृष्टिसासादनरोळं नरकदेवगतिजवेदकसम्यग्दृष्टिगळुमसंयतनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळु पुट्टुवरप्पुदरिदं । यिल्लि बंधस्थानंगळु मिथ्या २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । सासादन । २९ । ३० । असंय । २८ । दे २९ । दे ति । पर्य्याप्तियिदं मेलेयुमसंयतगुणस्थानपर्य्यन्तं षड्लेश्यायुतरप्परल्लि मिथ्यादृष्टियोळुत्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २३ । ए अ २५ । ए प । बि । ति । च । पं । म । अ प । २६ । ए प । आ । उ । २८ । न । दे । २९ । ति । बि । ति । च । पं । म । ३० । बि । ति । च । पं । ति । उ । सासादननोळु अष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ मिश्रनोळु देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमों दे बंधयोग्यमप्पुदु । २८ । दे ॥ असंयतनोळु देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानद्वयं बंधयोग्यमप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे ति ॥ देशसंयतन शुभलेश्यात्रयदोळु देवगतियुताष्टाविंशतिद्विस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे ति । प्रमत्तरोळं द्विस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे ति । अप्रमत्तरुगळ शुभलेश्यात्रयदोळु अष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे ति । ३० । दे आ ३१ । दे । आ । ति ॥ अपूर्व्वकरणन शुक्ललेश्येयोळु अष्टाविंशत्यादि पंचस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे ति । ३० । दे

योस्सासादने एवच्छेदात् ।

मनुष्यगतौ लब्ध्यपर्याप्ते त्र्यशुभलेश्ये निर्वृत्यपर्याप्ते च षड्लेश्ये मिथ्यादृष्टौ २३, २५, २६, २९, ३० । सासादने २९, ३० । असंयते २८, २९ दे ति । पर्याप्तेरुपरि षड्लेश्ये मिथ्यादृष्टौ त्रयोविंशतिकादीनि षट्, सासादनेऽष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि २८, दे २९ ति म ३० ति उ । मिश्रे देवगत्यष्टाविंशतिकमेव । असंयते शुभलेश्यात्रये देशसंयतादिद्वये च तदादिद्वयं २८ दे २९ दे ती । अप्रमत्ते ते चेमे च ३० दे आ २ ३१ दे आ २

बाँधते हैं। क्योंकि तिर्यंचगति और मनुष्यगति सहित स्थानोंकेबन्धकी व्युच्छित्ति सासादनमें ही हो जाती है।

इस प्रकार लेश्यासहित तिर्यंचोंमें नामकर्मके बन्धस्थान कहे, अब मनुष्यगतिमें कहते हैं—

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यमें तीन अशुभ लेश्या होती है। और निर्वृत्यपर्याप्तकमें छह लेश्या होती है। सो मिथ्यादृष्टिमें तो तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस और तीसके स्थान बँधते हैं। सासादनमें उनतीस, तीसके स्थान बँधते हैं। असंयतमें देवगति सहित अठाईस या देवगति तीर्थंकर सहित उनतीसके स्थान बँधते हैं। पर्याप्तदशामें छहों लेश्या होती हैं। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें तेईस आदि छह स्थान बँधते हैं। सासादनमें अठाईस आदि तीन स्थान बँधते हैं—देवगति सहित २८, तिर्यञ्चगति या मनुष्यगति सहित २९ और तिर्यञ्च गति उद्योत सहित तीस। मिश्रमें देवगति सहित अठाईसका ही स्थान बँधता है। असंयतमें और तीन शुभलेश्या सहित देशसंयत तथा प्रमत्तमें देवसहित अठाईस और देव तीर्थ सहित उनतीसके स्थान बँधते हैं। अप्रमत्तमें वे दोनों तथा आहारक सहित तीस, इकतीसके स्थान

आ ३१। दे आ ति। १ ॥ बादरानिवृत्तिकरणनोळं सूक्ष्मसांपरायनोळं शुक्ललेश्येयोळु अगतिस्थानमों दे बंधमप्पुदु। १। केवलं मोहोपशमक्षयजनितयोगप्रवृत्तिलक्षणशुक्ललेश्येयोळु नामबंधमिल्लप्पुदरिंदमुपशांतकषायक्षीणकषाय सयोगभट्टारकरोळु नामबंधमिल्ल। भोगभूमिज-मनुष्यरुगळगे भोगभूमितिर्य्यग्गतियोळे पेळल्पट्टुदु। देवगतियोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरु पर्य्याप्तरु-मप्परल्लि निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरुगळोळु मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतगुणस्थानत्रयमक्कुं। पर्य्याप्तरोळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतगुणस्थानचतुष्टयमक्कुमल्लि "तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च। एत्तो य चोद्दसण्हं लेस्सा भवणादि देवाणं॥" "तेऊ तेऊ तह तेऊ पम्म पम्माय पम्मसुक्का य। सुक्का य परमसुक्का भवणतिया पुण्णगे असुहा॥" यें दितु भवनत्रयदोळु कृष्णादि चतुर्ल्लेश्येगळक्कुं। सौधर्म्मैशानकल्पद्वयद ऋतु। विमल। चंद्र। वल्गु। वीर। अरुण। नंदन। नलिन। कांचन। रोहित। चंचत्। मरुत्। ऋद्धीश। वैडूर्य्य। रुचक। रुचिर। अंक। स्फटिक। तपनीय। मेघ। अभ्र। हारिद्र। पद्म। लोहित। वज्र। नंद्यावर्त्त। प्रभंकर। पृष्ठक। गज। मित्रक। प्रभाविमानमें बेकत्रिंशदिंद्रकंगळोळु ऋत्विंद्रकदोळमदर दिक्चतुष्टय श्रेणिबद्धविमानं-गळोळं प्रकीर्णकविमानंगळोळं समुद्भूत दिविजरुगळनिबर्गं तेजोलेश्याजघन्यांशमेयक्कुं। विमल विमानं मोदल्गोंडु सानत्कुमार माहेंद्रकल्पद्वयदोळु संभविसुव नंदन। वनमाला। नाग। गरुड। लांगल। बलभद्र। चक्रमें ब सप्तपटलमध्यस्थितंगळप्प सप्तेंद्रकंगळोळु बलभद्रविमानपर्य्यंतं तेजो-लेश्यामध्यमांशंगळप्पुवु। आ चरमचक्रेंद्रकश्रेणीबद्धंगळोळु तेजोलेश्योत्कृष्टांशमक्कुमा चक्रेंद्रकदोळु पद्मलेश्याजघन्यांशमक्कुं। ब्रह्मब्रह्मोत्तरकल्पद्वयद अरिष्ट। सुर+समिति। ब्रह्मब्रह्मोत्तरमें ब नाल्कुमिंद्रकंगळोळं लांतवकापिष्ठद्वयदब्रह्महृदय। लांतवमें बिंद्रकद्वयदोळं शुक्रमहाशुक्रमें ब

ती। अपूर्वकरणे शुक्ललेश्ये तानि चेदं च। बादरानिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये चैककमेव। नोपशांतादिषु नामबंधः। भोगभूमौ तत्तिर्यग्वक्तव्यं। देवगतौ भवनत्रये अपर्याप्ते त्र्यशुभलेश्याः। पर्याप्ते तेजोजघन्यांशः। पर्याप्तापर्याप्तवैमानिकेषु सौधर्मद्वयस्याद्येंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकेषु तेजोजघन्यांशः। द्वितीयेंद्रकादासनत्कुमारद्वयस्य षष्ठेंद्रकं तेजोमध्यमांशः सप्तमेंद्रकश्रेणीबद्धेषु तदुत्कृष्टपद्मजघन्यांशौ ब्रह्मद्वयस्येंद्रकेषु चतुर्षु लांतवद्वयस्य द्वयोः

बँधते हैं। अपूर्वकरणमें शुक्ल लेश्या ही होती हैं। वहाँ उक्त चारों तथा अन्तमें एक इस प्रकार पाँचका बन्ध है। बादर अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्म साम्परायमें एकका ही बन्ध है। उपशान्त आदिमें नामकर्मके बन्धका अभाव है। भोगभूमिमें भोगभूमियाँ तिर्यञ्चवत् जानना।

देवगतिमें कहते हैं—

देवगतिमें भवनत्रिकमें अपर्याप्तदशामें तीन अशुभ लेश्या होती हैं। पर्याप्तदशामें तेजोलेश्याका जघन्य अंश होता है। पर्याप्त-अपर्याप्त वैमानिकोंमें सौधर्मयुगलके प्रथम इन्द्रक श्रेणिबद्ध और प्रकीर्णकोंमें तेजोलेश्याका जघन्य अंश होता है। दूसरे इन्द्रकसे सानत्कुमारयुगलके षष्ठम इन्द्रक पर्यन्त तेजोलेश्याका मध्यम अंश है। सप्तम इन्द्रक और श्रेणीबद्धोंमें तेजोलेश्याका उत्कृष्ट अंश और पद्मलेश्याका जघन्य अंश है। ब्रह्मयुगलके चार

---

१. निरवशेष।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कल्पद्वयद शुक्रेंद्रकमों देयक्कुमल्लियुं पद्मलेश्यामध्यमांशमक्कुं । शतारसहस्रारकल्पद्वयद ओंदेंद्र-तारेंद्रकमक्कुमदरोळु पद्मलेश्योत्कृष्टमुं शुक्ललेश्याजघन्यांशमुमक्कुं । आनतप्राणतारणाच्युतकल्पचतुष्टयद आनत । प्राणत । पुष्पक । सातक । आरण । अच्युतमें बीयारुमिंद्रकंगळोळं अधोग्रैवेयकद सुदर्शन । अमोघ । सुप्रबुद्धमें ब मूरुमिंद्रकंगळोळं मध्यमग्रैवेयकदयशोधर । सुभद्र । सुविशालमें ब मूरु मिंद्रकंगळोळु उपरिमग्रैवेयद सुमनस । सौमनस । प्रीतिकरमें ब मूरुमिंद्रकंगळोळं अनुदिशविमानंगळ आदित्येंद्रकमों दरोळं अनुत्तरविमानंगळादियागिद्दं विजयादिश्रेणीबद्धंगळोळं शुक्ललेश्यामध्यमांशमक्कुं । अनुत्तरविमानंगळ सर्व्वार्त्थसिद्धींद्रकदोळु शुक्ललेश्योत्कृष्टांशमक्कुं । "भवणतियापुण्णगे असुहा" अशुभलेश्यात्रयं भवनत्रयापर्य्याप्तरोळेयक्कुमन्यत्र देवगत्यपर्य्याप्तरोळं पर्य्याप्तरोळं तंतम्म लेश्येगळेयक्कुमें बुदु तात्पर्यं ॥

यितु पूर्णापूर्णवैमानिकरुगळगे जन्मावासंगळरुवत्त मूरु पटलंगळप्पुवु । भावनरुगळावासंगळु रत्नप्रभावनियखरभागदोळगेळु कोटियुमेप्पत्तेरडु लक्षभवनंगळप्पुवु । व्यंतरवासंगळुमसंख्यातद्वीपसागरंगळोळु यथायोग्यंगळप्पुवु । ज्योतिष्करावासंगळु मनुष्यलोकद सुदर्शनमेरुवं सासिरद नूरिप्पत्तों दु योजनमं तोलगि चित्रावनियप्रभागदिदं मेलेळुनूरतों भत्तु योजनमं नेगेदु नूरपत्तु योजनबाहल्यदिदं संख्यातपण्णट्ठि प्रतरांगुलभक्तप्रतरप्रमितचंद्रसूर्य्यग्रहनक्षत्रतारकाविमानंगळु लोकांतपर्य्यंतमिप्पुवी भवनत्रयंगळ निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळु कर्म्मभूमिमनुष्यरुं संज्ञिगर्भजतिर्य्यंचरुगळुं कृष्णादिचतुर्लेश्यामिथ्यादृष्टिजीवंगळु मृतरागि पोगि भवनत्रयनिर्वृत्यपर्य्याप्तरोळु मिथ्यादृष्टिगळागि पुट्टुवरु । मत्तमा कर्म्मभूमिगर्भजपर्य्याप्तपंचेंद्रियासंज्ञिमिथ्यादृष्टिजीवं तेजो-

शुक्रद्वयस्यैकस्मिश्च पद्ममध्यमांशः । शतारद्वयस्यैकस्मिंस्तदुत्कृष्टशुक्लजघन्यांशौ । आनतचतुष्कस्य षट्सु नवग्रैवेयकानां नवस्वनुदिशानामेकस्मिन्ननुत्तरश्रेणीबद्धेषु च शुक्लमध्यमांशः सर्वार्थसिद्धावुत्कृष्टांशः । जन्मावासास्तु वैमानिकानां त्रिषष्टिपटलानि । भावनानां रत्नप्रभाखरभागे द्वासप्ततिलक्षाधिकसप्तकोटिभवनानि । व्यंतराणामसंख्यातद्वीपसमुद्राः । ज्योतिष्काणां सुदर्शनमेरुं तिर्यगेकविंशत्येकादशशतयोजनानि मुक्त्वा चित्रात उपरि नवत्यग्रसप्तशतयोजनानि गत्वा दशाग्रशतयोजनबाहुल्येन लोकांतं स्थितानि संख्यातपण्णट्ठिप्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरमात्रविमानानि । मिथ्यादृष्टीनामुत्पत्तिः कर्मभूमिमनुष्यसंज्ञिगर्भजतिरश्चोः कृष्णादिचतुर्लेश्ययोर्भवनत्रये

इन्द्रकमें लान्तव युगलके दो इन्द्रकों-में और शुक्रयुगलके एक इन्द्रकमें पद्मलेश्याका मध्यम अंश है । शतारयुगलके एक इन्द्रकमें पद्मका उत्कृष्ट और शुक्लका जघन्य अंश है । आनतादि चार स्वर्गोंके छह इन्द्रकोंमें नौ ग्रैवेयकों और अनुदिशोंके एक इन्द्रकमें तथा अनुत्तरोंके श्रेणीबद्ध विमानोंमें शुक्लका मध्यम अंश है । सर्वार्थसिद्धिमें शुक्लका उत्कृष्ट अंश है । वैमानिक देवोंके जन्मावास—जहाँ उनका जन्म होता है ऐसे आवास-तरेसठ पटल हैं । भवनवासियों के रत्नप्रभा पृथिवीके खर पंक भागमें सात कोटि बहत्तर लाख भवन हैं । व्यन्तरोंके असंख्यात द्वीप समुद्र हैं । ज्योतिषियोंके सुदर्शन मेरुसे तिर्यक् ग्यारह सौ इक्कीस योजन छोड़कर चित्रासे ऊपर सात सौ नब्बे योजन जाकर एक सौ दस योजनकी मोटाईमें लोकपर्यन्त संख्यात पण्णट्ठी प्रमाण प्रतरांगुलोंसे भाजित जगत प्रतर प्रमाण विमान हैं । मिथ्यादृष्टी कर्मभूमिया मनुष्य और संज्ञी गर्भज तिर्यञ्च, जिनके कृष्णादि चार लेश्या होती हैं,

लेश्यापरिणतनागि देवायुष्यमं पल्यासंख्यातैकभागस्थितिबंधयुतमं कट्टि मृतनागि बंदु भावन-व्यंतरिगरुगळोळ् निर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टियक्कुमेके ज्योतिष्करोळ् पुट्टनें दोडसंज्ञिजीवंगळ्-त्कृष्टदिंद देवायुष्यवके स्थितिबंधमं पल्यासंख्यातैकभागमात्रमने कट्टुगुमदु कारणमागि "तदष्ट भागोऽवरा" एंदितु ज्योतिष्करोळ् सर्व्वजघन्यायुष्यं पल्याष्टमभागदिदं किरिदिल्लप्पुदरिंदमा ज्योतिष्करोळसंज्ञिजीवंगळपुट्टरेंबुदु सिद्धमक्कुं । मत्तमा भवनत्रयनिर्वृत्यपर्य्याप्तरोळ् तिर्य्यग्-जघन्यभोगभूमिजरुगळं मनुष्यलोकस्थितोत्तममध्यमजघन्यभोगभूमितेजोलेश्यामिथ्यादृष्टि तिर्य्यग्-मनुष्यरुगळं कुमानुष्यरुगळुं देवायुष्यमं तद्योग्यमं कट्टि "भवणतिगामी मिच्छा" एंदितु मृतरागि बंदी भवनत्रयनिर्वृत्यपर्य्याप्तररपरागि मिथ्यादृष्टिगळ पंचविंशत्यादिचतुःस्थानंगळं कट्टुवरु । २५ । ए प २६ । ए प । आ उ । २९ । ति । म । ३० । ति । उ ॥ भवनत्रयनिर्वृत्य-पर्य्याप्तसासादनरुगळावाव गतियिदं बंदु पुट्टिदवग्गेळें दोडे तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळबद्धदेवायुष्यरु-गळप्प प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिजीवंगळनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सम्यक्त्वमं केडिसि कृष्णादि-चतुर्लेश्याजीवंगळु मृतरागि बंदु पुट्टुवरु । सम्यग्दृष्टिगळारुं भवनत्रयदोळु पुट्टरु । अदु कारण-मागि निर्वृत्यपर्य्याप्तरोळु सम्यग्दृष्टिगळिल्ल । आ सासादनरुगळु द्विस्थानमने कट्टुवरु । २९ । ति म । ३० । ति उ । वैमानिकरोळं निर्वृत्यपर्य्याप्तरु पर्य्याप्तरुगळुमप्परल्लि निर्वृत्यपर्य्याप्तरु-

गर्भजासंज्ञिनस्तेजोलेश्यस्य भावनव्यंतरयोरेव तद्देवायुरुत्कृष्टस्थितिबंधस्य पल्यासंख्येयभागमात्रत्वात् । तिर्य-ग्जघन्यभोगभूमित्रिविधमनुष्यभोगभूमिषण्णवतिकुभोगभूमिजानां तेजोलेश्यानां भवनत्रये, न च सम्यग्दृष्टीनां बद्धदेवायुस्तिर्यग्मनुष्यप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टेरप्यनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन तत्सम्यक्त्वं हृत्वैव कृष्णादिचतुर्लेश्याभि-स्तत्रोत्पत्तेः । तेन निर्वृत्यपर्याप्ता मिथ्यादृष्टयोऽष्टाविंशतिकं विना पंचविंशतिकादीनि चत्वारि बध्नंति २५ ए प २६ ए प आ उ २९ ति म ३० ति उ । सासादने द्वे २९ ति म ३० ति उ । सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टिषु

मरकर भवनत्रिकमें जन्म लेते हैं । गर्भज असंज्ञी तेजोलेश्यावाले भवनवासी और व्यन्तरोंमें ही जन्म लेते हैं, क्योंकि असंज्ञीके उत्कृष्ट देवायुका स्थितिबन्ध पल्यके असंख्यातवें भाग ही होता है । तिर्यंच सम्बन्धी जघन्य भोगभूमि, जो मानुषोत्तर और स्वयंप्रभाचलके मध्यमें है, तीन प्रकारकी मनुष्य भोगभूमि, और छियानवे कुभोग भूमिमें उत्पन्न हुए तेजोलेश्यावाले जीव मरकर भवनत्रिकमें जन्म लेते हैं । किन्तु सम्यग्दृष्टि भवनत्रिकमें जन्म नहीं लेते हैं । क्योंकि जिसने देवायुका बन्ध किया है ऐसा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी तिर्यंच या मनुष्य भी अनन्तानुबन्धी कषायमें से किसी एकके उदयके द्वारा उस सम्यक्त्वका घात करके ही अर्थात् सासादन सम्यग्दृष्टी होकर कृष्ण आदि चार लेश्याओंके साथ भवनत्रिकमें उत्पन्न होता है ।

अतः भवनत्रिकके निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि देव अठाईसके बिना पच्चीस आदि चारका बन्ध करते हैं—एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित २५ एकेन्द्रिय पर्याप्त आतप उद्योत सहित २६, तिर्यंच या मनुष्यगति सहित २९, तिर्यंचगति उद्योत सहित ३० । सासादन उनतीस-तीस दो-को बाँधता है । सौधर्मयुगल सम्बन्धी मिथ्यादृष्टियोंमें मनुष्य अथवा तिर्यग्लोक सम्बन्धी कर्मभूमियाँ तिर्यंच, चरक, परिव्राजक आदि तथा द्रव्य जिनलिंगी आदि तेजोलेश्याके साथ मरकर उत्पन्न होते हैं । वे निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्थामें पच्चीस, छब्बीस, उनतीस और तीस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळोळु मिथ्यादृष्टिगळु सासादनरुं असंयतसम्यग्दृष्टिगळुमोळरल्लि सौधर्म्मकल्पद्वयद ऋतुविमानमादियागि प्रभाविमानावसानमाद मूवत्तोंदुं पटलंगळोळिद्रकश्रेणिबद्धप्रकीर्णकविमानंगळोळमावेल्ल उत्तरद क्षीणकल्पजदिविजर्ग्गे तेजोलेश्येयेयक्कुमप्पुदरिदं । तत्रत्य निर्वृ त्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळोळावावगतिगळिदं बंदु पुट्टुवरें बोडे तिर्य्यग्लोकसंबंधिकर्म्मभूमितिर्य्यंचमिथ्यादृष्टिगळुं मनुष्यलोककर्म्मभूमितिर्य्यंचमिथ्यादृष्टिगळं चरकपरिव्राजादिमिथ्यादृष्टिगळुं द्रव्यजिनलिंगधारिगळुमादियागि तेजोलेश्यामिथ्यादृष्टिगळु बद्धदेवायुष्यर्म्मृतरागि बंदी सौधर्म्मकल्पद्वयनिर्वृ त्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळागि पुट्टुवरवर्ग्गळुं पंचविंशतिषड्विंशतिनवविंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळं कट्टुवरु । २५ । ए प । २६ । ए प । आ । उ । २९ । ति म । ३० । ति । उ ॥

आ सौधर्म्मकल्पद्वयसासादनरोळु तिर्य्यग्मनुष्यासंयतादिगुणस्थानत्रितयवर्त्तिगळु प्रथमोपशम द्वितीयोपशम सम्यक्त्वंगळननंतानुबंधि कषायोदयदिदं किडिसि बद्धदेवायुष्यरुगळु मृतरागिबंदिल्लि सासादनरागि पुट्टवरवर्ग्गळु स्वयोग्यनवविंशत्यादि द्विस्थानमं कट्टुवरु । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ आ सौधर्म्मकल्पद्वयनिर्व्वत्यपर्य्याप्तासंयत सम्यग्दृष्टिगळोळु सर्व्वभोगभूमिगळवेदकसम्यग्दृष्टिगळु कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिगळागिद्दु क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळप्प जीवंगळं क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळुं कर्म्मभूमितीर्थरहिततिर्य्यग्मनुष्यासंयतदेशसंयतरुगळुं मनुष्यप्रमत्ताप्रमत्तसंयतरुगळुं सतीर्थासंयतादिचतुर्ग्गुणस्थानवर्त्तिगळु बद्धदेवायुस्तेजोलेश्यासम्यग्दृष्टिगळु मृतरागि बंदी सौधर्म्मकल्पद्वयद निर्वृ त्यपर्य्याप्तासंयतसम्यग्दृष्टिगळागि पुट्टुवर-अवर्ग्गळु सतीर्थरादवर्ग्गळेल्लं मनुष्यगतितीर्थयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । ३० । म । ती । तीर्त्थरहितरेल्लं मनुष्य-

नरतिर्यग्लोककर्मभूमितिर्यंचः चरकपरिव्राजादयः द्रव्यजिनलिंग्यादयश्च तेजोलेश्ययोत्पद्यंते । ते निर्वृत्यपर्याप्तकपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि २५ ए प २६ ए प आ उ २९ ति म ३० ति उ । तत्सासादनेषु देशसंयतांततिर्यंचः प्रथमोपशमसम्यक्त्वं प्रमत्तांतमनुष्या उभयोपशमसम्यक्त्वे च विराध्य बद्धदेवायुषः तेजोलेश्ययोत्पद्यंते ते स्वयोग्यनवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ । तदसंयतेषु सर्वभोगभूमिवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टयः कर्मभूम्यसंयततिर्यंचः सतीर्थातीर्थासंयताद्यप्रमत्तांतमनुष्याश्च बद्धदेवायुष्कास्तेजोलेश्ययोत्पद्यन्ते

का बन्ध करते हैं । जिनके देवायुका बन्ध हुआ है ऐसे देशसंयत पर्यन्त तिर्यञ्च प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी और प्रमत्तगुणस्थान पर्यन्त मनुष्य प्रथम और द्वितीय उपशमसम्यक्त्वकी विराधना करके तेजोलेश्याके साथ सौधर्मयुगलमें सासादन सम्यग्दृष्टी होकर उत्पन्न होते हैं । वे निर्वृत्यपर्याप्तक दशामें उनतीस और तीसका बन्ध करते हैं । जिन्होंने देवायुका बन्ध किया है ऐसे सब भोग-भूमियोंके वेदक और क्षायिक सम्यग्दृष्टी, कर्मभूमिके देशसंयत पर्यन्त तिर्यञ्च, तीर्थंकर प्रकृतिकी सत्तासे सहित और रहित असंयतसे लेकर अप्रमत्त पर्यन्त मनुष्य तेजोलेश्याके साथ सौधर्मयुगलमें असंयत सम्यग्दृष्टी होकर उत्पन्न होते हैं। उनमें जिनके तीर्थंकरकी सत्ता होती है वे मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसका बन्ध करते हैं और जिनके नहीं होती वे मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध करते हैं । पद्म-शुक्ललेश्या सहित भोगभूमिया असंयत भी मरते समय तेजोलेश्यावाले होकर सौधर्मयुगलमें उत्पन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २९ । म ॥ भोगभूमिजरोळ् पद्मशुक्ललेश्याऽसंयतरुगळेल्लमेल्लि पुट्टुवरें दोडे अवर्गळु मी सौधर्म्मकल्पद्वय निर्वृत्यपर्य्याप्तासंयतसम्यग्दृष्टिगळागिये पुट्टुवरेकें दोडे "सोहम्म दु जाइणो सम्मा" यें दु त्रिलोकसारदोळु अवर्गे युमिल्लिये जननियमं पेळल्पट्टुदप्पुदरिंदमा पद्मशुक्ललेश्या जीवंगळु मरणकालदोळु पद्मशुक्लंगळं परिहरिसि परस्थानसंक्रमणदिदं तेजोलेश्येयोळु परिणमिसि मृतरागि बंदु पुट्टुवरप्पुदरिंदं । पद्मशुक्ललेश्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळगमपूर्व्वकरणादि शुक्ललेश्यासंयमिगळगमिल्लि जननमिल्लेकें दोडिल्लितल्लेश्येगळऽभावमप्पुदरिंदं । परस्थानलेश्यासंक्रमणदिदं तेजोलेश्या परिणतरादोडे पुट्टुवरु । यिल्लि सौधर्म्मैशानकल्पविभागमें तें दोडे—

'उत्तरसेढीबद्धा वायव्वीसाण कोणगपइण्णा ।
उत्तरइंदणिबद्धा सेसा दक्खिणदिसिंदपडिबद्धा ॥' —त्रि. सा. ४७६ गा. ।

एंदितेल्ला उत्तरदक्षिणेंद्रप्रतिबद्धकल्पविभागमरियल्पडुगुं । सानत्कुमारकल्पद्वयद नंदनेंद्रकं मोदल्गों डु सप्तमचक्रेंद्रकश्रेणीबद्धविमानादिगळोळं तेजोलेश्यासंभवमुंटादोडं भोगभूमिजरुगळगा कल्पद्वयनिर्वृत्यपर्य्याप्तरोळु जननमिल्ल । शेषरुगळगे जननमुंटु । आ निर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळगे तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतस्थानद्वयमे बंधमप्पुवु । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ सासादनरुगळगमंते बंधमक्कुं । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ तत्रत्यासंयतसम्यग्दृष्टिनिर्वृत्यपर्य्याप्तरुगळु मनुष्यगति मनुष्यगतितीर्त्थयुतद्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ । म ३० । म ति । आ सानत्कुमारकल्पद्वय चरमचक्रेंद्रकं मोदल्गों डु शतारेंद्रकावसानमादें टुं पटलंगळोळें टुं कल्पंगळ निर्वृत्य-

ते सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं, अतीर्थाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं, भोगभूमिपद्मशुक्ललेश्यासंयता अपि सोहम्मदुजाइणो सम्मेति मरणे तेजोलेश्यां प्राप्य तत्रोत्पद्यन्ते । असंयतादिपद्मशुक्ललेश्या अपूर्वकरणादिशुक्ललेश्या अपि तामेव प्राप्य तत्रोत्पद्यन्ते

उत्तरसेडीबद्धा वायव्वीसाणकोणगपइण्णा ।
उत्तरइंदणिबद्धा सेसा दक्खिणदिसिंदपडिबद्धा ॥१॥

इति सौधर्मैशानविभागः । सानत्कुमारद्वये चक्रेंद्रकश्रेणीबद्धादिपर्यंतं तेजोलेश्यास्त्वपि न भोगभूमिजानां तत्रोत्पत्तिः, शेषाणां स्यात् । तन्निर्वृत्यपर्याप्ताः मिथ्यादृष्टिसासादनाः तिर्यग्मनुष्यगतियुते द्वे २९ ति म ३० ति उ । असंयताः मनुष्यगतियुतमनुष्यगतितीर्थयुते द्वे २९ म ३० म ति । उपर्यष्टकल्पेषु नरकादिकर्म-

होते हैं। पद्म-शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टी और शुक्ललेश्यावाले अपूर्वकरण आदि भी मरते समय तेजोलेश्यावाले होकर ही सौधर्मयुगलमें उत्पन्न होते हैं।

उत्तर दिशाके श्रेणीबद्ध और वायव्य तथा ईशान कोनेके प्रकीर्णक विमान तो उत्तरेन्द्रके अधीन होते हैं। और शेष दक्षिणेन्द्र सौधर्मके अधीन होते हैं। यह सौधर्म और ईशानका विभाग है।

सानत्कुमारयुगलमें चन्द्र इन्द्रक श्रेणिबद्ध पर्यन्त तेजोलेश्या है फिर भी वहाँ भोगभूमिजोंकी उत्पत्ति नहीं है, शेष जीवोंकी उत्पत्ति है। वहाँ निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि और सासादन तिर्यञ्च या मनुष्यगति सहित उनतीस और तीसके स्थानको बाँधते हैं। असंयत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्य्याप्तदिविजरोळेल्लं पद्मलेश्येयेयक्कुमप्पुदरिंदं । तत्रत्य निर्व्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टिजीवंगळोळु पूर्वोक्तचरकादि पद्मलेश्यामिथ्यादृष्टिगळं कर्म्मभूमितिर्य्यग्मनुष्यपद्मलेश्याजीवंगळु बद्धदेवायुष्यर्म्मृतरागि बंदु पुट्टुवरु । पुट्टि तिर्य्यग्गतिमनुष्यगतियुतद्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ ति । म । ३० । ति । उ । तत्रत्यसासादनरुगळुमाद्विस्थानंगळने कट्टुवरु । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ तत्रत्यासंयतनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तरुगळुं स्वयोग्यनवविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ । म । ३० । म ति ॥ शतारेंद्रकं मोदलगोंडु प्रीतिकरविमानावसानमाद पदिनय्दुं पटलंगळ चतुष्कल्पजरुगळुं नवग्रैवेयकसमुद्भूतरुगळुमप्पहमिंद्ररुगळुं शुक्ललेश्यरुगळेयप्पुदरिंदं मिथ्यादृष्टिगळु मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । २९ । म । तत्रत्य सासादनरुगळु मा स्थानमनोंदने कट्टुवरु । २९ । म । तत्रत्यासंयतसम्यग्दृष्टिगळुं मनुष्यगतियुतनवविंशतिस्थानमुमं तीर्त्थमनुष्यगतियुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु । २९ । म । ३० । म ती ॥ आदित्येंद्रकं मोदलगोंडु सर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमाद दिविजरोळेल्लरुगं शुक्ललेश्येयेयक्कुमसंयतसम्यग्दृष्टिगळेयप्परवर्गळोळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळु बंधमप्पुवु । २९ । म । ३० । म ति ॥

इल्लिगे प्रस्तुतगाथासूत्रंगळु —

'णरतिरिय देस अयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा ।
णर अयददेसमिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥
सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा ।
सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥

भूमितिर्यग्मनुष्या बद्धदेवायुषः पद्मलेश्ययोत्पद्यंते । तन्मिथ्यादृष्टिसासादनाः तिर्यग्मनुष्यगतियुते द्वे २९ ति म ३० ति उ । असंयताः स्वयोग्ये द्वे २९ म ३० म ती । आनतादिचतुःकल्पनवग्रैवेयकशुक्ललेश्यामिथ्यादृष्टिसासादनाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं । तदसंयताः नवानुदिशपंचानुत्तरशुक्ललेश्यासंयताश्च तच्च तीर्थमनुष्यगतित्रिंशत्कं च । अत्र प्रस्तुतगाथा—

णरतिरिय देसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा । णर अयददेसमिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥५४५॥

सम्यग्दृष्टि मनुष्यगति सहित उनतीस और मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसका बन्ध करते हैं। ऊपरके आठ कल्पोंमें जिन्होंने देवायुका बन्ध किया है ऐसे चरक आदि कर्मभूमिया तिर्यंच मनुष्य पद्मलेश्याके साथ उत्पन्न होते हैं। वे मिथ्यादृष्टि और सासादन तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीस-तीसका बन्ध करते हैं। और असंयत मनुष्यगति सहित उनतीस या मनुष्यगति तीर्थ सहित तीस का बन्ध करते हैं। आनत आदि चार कल्प, और नौ ग्रैवेयकोंमें शुक्ललेश्या है। वहाँ मिथ्यादृष्टि और सासादन मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध करते हैं। तथा वहाँके असंयत और नौ अनुदिश पाँच अनुत्तरवासी असंयत मनुष्यगति सहित उनतीस और मनुष्यगति तीर्थ सहित तीसको बाँधते हैं। यहाँ प्रासंगिक गाथा कहते हैं—

देशव्रती और असंयत मनुष्य तथा तिर्यञ्च उत्कृष्टसे अच्युत स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न होते हैं। द्रव्यसे निर्ग्रन्थ और भावसे असंयत, देशसंयत या मिथ्यादृष्टि ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरया य परिव्वाजा बम्भो त्तच्चुद पदोत्ति आजीवा ।
अणुदिस अणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जांति ॥
सोहम्मो वर देवी सलोगवाला य दक्खिणमरिंदा ।
लोयंतियसव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुदिं जांति ॥
णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा ।
ण लहंते ते पदविं तेसट्ठि सलागपुरिसाणं ॥
सुहसयणग्गे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे ।
अंतोमुहुत्तपुण्णा सुगंधि सुहफास सुचिदेहा ॥
आणंदतूर जयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ संपत्तं ।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा ॥
धम्मं पसंसिदूण ण्हादूण दहेभिसेयलंकारं ।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी ॥

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा । सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥५४६॥
चरया य परिव्वाजा बह्मोत्तरचुदपदोत्ति आजीवा । अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥
सोहम्मो वरदेवी सलोगवाला य दक्खिणमरिंदा । लोयंतिय सव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुदिं जंति ॥
णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा । ण लहंते ते पदविं तेसट्ठिसलागपुरिसाणं ॥
सुहसयणग्गे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे । अंतोमुहुत्तपुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥
आणंदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ संपत्तं । दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा ॥
धम्मं पसंसिदूणं ण्हादूण दहेभिसेयलंकारं । लद्धा जिणाभिसेयं पुज्जं कुव्वंति सुदिट्ठी ॥८॥

होते हैं। सम्यग्दृष्टी महाव्रती सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त उत्पन्न होते हैं। भोगभूमिया सम्यग्दृष्टी सौधर्मयुगलमें और मिथ्यादृष्टी भवनत्रिकमें जन्म लेते हैं। उत्कृष्ट तापसी भवनत्रिकमें जन्म लेते हैं। चरक और परिव्राजक ब्रह्मोत्तर पर्यन्त जन्म लेते हैं। आजीवक अच्युत-पर्यन्त जन्म लेते हैं। अनुदिस अनुत्तरसे च्युत हुए जीव नारायण-प्रतिनारायण नहीं होते।

सौधर्मदेवकी इन्द्राणी शची, लोकपाल सहित दक्षिण दिशाके सौधर्म आदि इन्द्र, लौकान्तिक देव और सर्वार्थसिद्धिके देव च्युत होनेपर मनुष्य होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। मनुष्यगति, तिर्यंचगति, और भवनत्रिकसे निकले हुए जीव तरेसठ शलाका पुरुषोंकी पदवीको प्राप्त नहीं करते।

सुख शय्या पर—उपपाद शय्याको प्राप्त हुए देव ऐसे जन्म लेते हैं जैसे पूर्व दिशामें उदयाचलपर सूर्य उगता है। अन्तर्मुहूर्तमें ही उनका शरीर पूर्ण होकर सुगन्ध, शुभ स्पर्शसे पवित्र हो जाता है।

आनन्दके वादित्र और जयकारकी ध्वनिके शब्दसे अपने प्राप्त जन्मको जान परिवार सहित सबको देख अवधिज्ञानके द्वारा अपने विगत जन्मको जानता है। तब धर्मकी प्रशंसा करके सरोवरमें स्नान कर और वस्त्राभूषणसे भूषित हो सम्यग्दृष्टी देव जिनदेवके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुरबोहिया वि मिच्छा पच्छा जिणपूजणं पकुव्वंति ।
सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥
महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा ।
अहमिंदा तत्थ ठिया णमंति मणि मौलिघडिदकरा ॥
विविहतवरयणभूसा णाणसुचीसीलवत्थसोम्मंगा ।
जे तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥'—त्रि. सा. ५४५-५५४ गा. ।

ई सूत्रार्त्थंगळेल्लं सुगमंगळु । यिल्लि चतुर्गतिसाधारणमिथ्यादृष्ट्यादि चतुर्गुणस्थानंगळु ।

अयदोत्तिछलेस्साओ सुहतियलेस्सा हु देसविरदतिये ।
तत्तो सुक्का लेस्सा अजोगिठाणं अलेस्संतु ॥

एंदितु मिथ्यादृष्टि गुणस्थानदोळु षड्लेश्येगळुं सासादनमिश्रासंयतरु गळोळं षड्लेश्येगळुं तिर्य्यग्मनुष्यापेक्षेयिदं देशसंयतनोळु त्रिलेश्येगळु शेषगुणस्थानंगळोळेल्लं मनुष्यापेक्षेयिदं शुक्ललेश्येयुं पेळल्पट्टुविंतु अशुभलेश्यात्रयदोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळुं तेजोलेश्येयोळु पंचविंशत्यादिषट्स्थानंगळं पद्मलेश्येयोळु अष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु शुक्ललेश्येयोळु अष्टाविंशत्यादिपंचस्थानंगळु मिथ्यादृष्ट्यादि सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं यथासंभवंगळप्पुवंते पेळल्पट्टुवु ॥

सुरबोहियावि मिच्छा पच्छा जिणपूजणं पकुव्वंति । सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥
महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा । अहमिंदा तत्थ ठिया णमंति मणिमौलिघडिदकरा ॥
विविहतवरयणभूसा णाणसुचीसीलवत्थसोम्मंगा । जे तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥
अत्र— अयदोत्ति छल्लेस्साओ सुहतियलेस्सा हु देसविरदतिये । तत्तो सुक्का लेस्सा अजोगठाणं अलेस्सं तु॥१॥
इत्यशुभलेश्यात्रये बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट्, तेजोलेश्यायां पंचविंशतिकादीनि षट्, पद्मलेश्यायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि, शुक्ललेश्यायां तदादीनि पंच, सूक्ष्मसांपरायांतं यथासंभवं ॥५४९॥

अभिषेकपूर्वक पूजन करते हैं ।

जो मिथ्यादृष्टि देव होते हैं वे भी अन्य देवोंके द्वारा समझाये जानेपर जिनपूजन करते हैं। सुख-सागरमें निमग्न देव बीते कालको नहीं जान पाते—इतना समय कैसे बीत गया यह उन्हें पता नहीं चलता ।

कल्पवासी देव जिन-भगवान्‌की महापूजाओंमें तथा तीर्थंकरोंके कल्याणकमहोत्सवोंमें सम्मिलित होते हैं। किन्तु अहमिन्द्र देव अपने स्थानपर रहकर ही दोनों हाथ मणिजटित शिरोमुकटसे लगाकर नमस्कार करते हैं।

जो विविध प्रकारके तपश्चरणसे भूषित हैं, ज्ञानसे पवित्र हैं, शीलरूपी वस्त्रसे जिनके सौम्य अंग वेष्टित हैं, देवलक्ष्मी और मुक्तिलक्ष्मी उन्हींके वशमें होती है । अस्तु ।

चतुर्थ असंयत गुणस्थान तक छह लेश्या तथा देशविरत आदि तीन गुणस्थानोंमें तीन शुभलेश्या होती है। उसके पश्चात् शुक्ललेश्या होती है। अयोगी लेश्यारहित हैं ।

तीन अशुभ लेश्याओंमें तेईस आदि छह बन्धस्थान होते हैं। तेजोलेश्यामें पचीस आदि छह बन्धस्थान होते हैं। पद्मलेश्यामें अठाईस आदि चार बन्धस्थान होते हैं। शुक्लमें अठाईस आदि पांच बन्धस्थान होते हैं। ये बन्धस्थान सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान पर्यन्त यथायोग्य जानना ॥५४९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भव्वे सव्वमभव्वे किण्हं वा उवसमम्मि खइए य ।
सुक्कं वा पम्मं वा वेदगसम्मत्त ठाणाणि ॥५५०॥

भव्ये सर्वमभव्ये कृष्णवत् उपशमे क्षायिके च । शुक्लवत् पद्मवद्वेदकसम्यक्त्वस्थानानि ॥

भव्यमार्ग्गणेयोळु सर्व्वमुं बंधयोग्यंगळप्पुवेकेंदोडे चतुर्गतिसाधारणमप्पुदरिदं । मिथ्यादृष्टियोळु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि ति च । अ । सं । म । अ प २६ । ए प । आ उ । २८ । न । दे । २९ । बि ति च अ । सं । म ३० । बि ति च अ । सं । प उ ॥ सासादननोळु २८ । दे । २९ । म । ति । ३० । ति उ ॥ मिश्रनोळु । २८ । दे २९ । म ॥ असंयतनोळु । २८ । दे । २९ । दे ति । म ३० । मति ॥ देशसंयतनोळु । २८ । दे २९ । दे । ति ॥ प्रमत्तनोळु २८ । दे २९ । दे ति ॥ अप्रमत्तनोळु २८ । दे २९ । दे । ति । ३० । दे । आ । २ । ३१ । दे आ ति ॥ अपूर्व्वकरणनोळु २८ । दे । २९ । दे ति । ३० । दे आ । २ । ३१ । दे । आ । ती । १ ॥

अनिवृत्तिकरणनोळु । १ ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळु । १ ॥ अभव्यनोळु कृष्णलेश्येयोळु पेळद चतुर्गतियुतत्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळप्पुवु । मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमों देयक्कुं । २३ । ए आ २५ । ए प । बि ति । च । अ । सं । म । अ प । २६ । ए प । आ । उ । २८ । न । दे । २९ । म । ति । ३० । ति । उ ॥ सम्यक्त्व मार्ग्गणेयोळु उपशमसम्यक्त्वदोळं क्षायिकसम्यक्त्वदोळं शुक्ललेश्येयोळु पेळदंते अष्टविंशत्यादि पंचस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । उपशमदोळु २८ । दे । २९ । दे ति । म । ३० । दे । आ । म । ती । ३१ । दे । आ । ति । १ ॥ क्षायिकसम्यक्त्वदोळु २८ । दो २९ । म । दे । ति । ३० । दे आ । म । ति । ३१ । दे आ ती । १ ॥ वेदकसम्यक्त्वदोळु पद्मलेश्येयोळु पेळद अष्टाविंशत्यादिचतुःस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २८ । दे । २९ । दे । ति । म ३० । दे आ । मति । ३१ । दे आ ती ॥ इल्लि सम्यक्त्वमें बुदें तेंदोडे सम्यग्भावः सम्यक्त्वमेंदितु संसारविच्छेदकारणजीवादिपदार्त्थयाथात्म्यप्रतिपत्तिश्रद्धानलक्षणभव्यजीवपरिणामविशेषमें बुदर्त्थं । अंतप्प सम्यक्त्वमुपशमक्षायिकवेदकभेददिदं त्रिविधमक्कुमल्लियुपशमसम्यक्त्वं प्रथमोपशम-द्वितीयोपशम भेददिदं द्विविधमक्कुमल्लिप्रथमोपशमसम्यक्त्वं चतुर्गतिजपर्य्याप्तरोळल्लदे अपर्य्याप्तरोळु संभविसदेकेंदोडे :—

भव्यमार्गणायां सर्वाणि सर्वगुणस्थानसंभवात् । अभव्ये कृष्णलेश्यावच्चतुर्गतियुतत्रयोविंशतिकादीनि षट् मिथ्यादृष्टिसंबंधीन्येव । सम्यक्त्वमार्गणायामुपशमक्षायिकयोः शुक्ललेश्यावदष्टाविंशतिकादीनि पंच । वेदके पद्मलेश्यावत्तदादीनि चत्वारि । सम्यक्त्वं सम्यग्भावः, संसारछेदकारणजीवादिपदार्थयाथात्म्यप्रतिपत्तिश्रद्धा-

भव्यमार्गणामें सब बन्धस्थान हैं क्योंकि उसमें सब गुणस्थान होते हैं। अभव्यमें कृष्णलेश्याकी तरह चार गति सहित तेईस आदि छह बन्धस्थान मिथ्यादृष्टि सम्बन्धी ही होते हैं। सम्यक्त्व मार्गणामें उपशम और क्षायिकमें शुक्ललेश्याकी तरह अठाईस आदि पाँच बन्धस्थान होते हैं। वेदकमें पद्मलेश्याकी तरह अठाईस आदि चार होते हैं। सम्यक्-भावको सम्यक्त्व कहते हैं। वह संसारके छेदका कारण है। जीवादि पदार्थोंकी यथार्थ प्रतिपत्तिपूर्वक श्रद्धान उसका लक्षण है। वह भव्यजीवका परिणाम विशेष है। उसके तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंसणमोहक्खवणा खवगा चढमाण पढमपुव्वा य।

पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ॥

येंदितु प्रथमोपशमसम्यक्त्वदोळु मरणमिल्लप्पुदरिंदं। द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं मनुष्यपर्य्याप्तरोळं निर्वृत्यपर्य्याप्तदिविजरोळं संभविसुगुं। क्षायिकसम्यक्त्वं चतुर्गतिजपर्य्याप्तरोळं घर्म्मेय निर्वृत्यपर्य्याप्तरोळं भोगभूमितिर्य्यग्मनुष्यनिर्वृत्यपर्य्याप्तरोळं सौधर्म्मादिसर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमाद दिविजरोळमक्कुं। वेदकसम्यक्त्वं चतुर्गतिजपर्य्याप्तरोळं निर्वृत्यपर्य्याप्तरोळमक्कुमल्लि प्रथमोपशमसम्यक्त्वमेंतप्प पर्य्याप्तरोळमक्कुमेंदोडे :—

चदुगदिमिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भजविसुद्धसागारो।

पढमुवसम्मं गेण्हदि पंचमवरलद्धिचरिमम्मि ॥

एंदितु नारकतिर्य्यग्मनुष्यदेवपर्य्याप्तरोळमक्कुमल्लि। तिर्य्यंचरोळसंज्ञिजीवव्यवच्छेदार्त्थं संज्ञिजीवंगळेंदु पेळल्पट्टुवा संज्ञिजीवंगळोळु लब्ध्यपर्य्याप्त निर्वृत्यपर्य्याप्तरं व्यवच्छेदिसल्वेडि पूर्णरुं अपर्य्याप्तरोळु संमूर्च्छिमरंगळं कळेयल्वेडि गर्ब्भजरुमा गर्ब्भजरोळु संक्लिष्टरं परिहरिसल्वेडि विशुद्धरुमा विशुद्धरोळु अनाकारोपयोगरं परिहरिसल्वेडि साकारोपयोगयुक्तरुमप्प

नलक्षणभव्यजीवपरिणामविशेषः। तच्चौपशमिकं क्षायिकं वेदकमिति त्रेधा। तत्राद्यं प्रथमद्वितीयभेदाद्द्वेधा। तत्र प्रथमं—

दंसणमोहक्खवणा खवगा चडमाणपढमपुव्वा य।

पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ॥

इति चतुर्गतिपर्याप्तेष्वेव नापर्याप्तेषु। द्वितीयं पर्याप्तमनुष्यनिर्वृत्त्यपर्याप्तवैमानिकयोरेव। क्षायिकं घर्मानारकभोगभूमितिर्यग्भोगकर्मभूमिमनुष्यवैमानिकेष्वेव पर्याप्तापर्याप्तेषु। वेदकं चातुर्गतिपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तेषु। तत्र तत्प्रथमं कीदृग्जीवो गृह्णीयात् ?

चदुगदिमिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भज विसुद्धसागारो।

पढमुवसम्मं गेण्हदि पंचमवरलद्धिचरिमम्मि ॥

भेद हैं—औपशमिक, क्षायिक और वेदक। औपशमिकके दो भेद हैं— प्रथम और द्वितीय। 'दर्शनमोहकी क्षपणा करनेवाले, क्षपकश्रेणीवाले, चढ़ते अपूर्वकरणके प्रथम भागवाले, प्रथमोपशम सम्यक्त्ववाले, और सातवें नरकमें सासादन आदि गुणस्थानोंमें चढ़े जीव मरते नहीं हैं।' अतः उन दोनोंमें-से प्रथमोपशम सम्यक्त्व चारों गतिमें पर्याप्त जीवोंमें ही होता है, अपर्याप्त अवस्थामें नहीं होता। द्वितीयोपशम सम्यक्त्व पर्याप्त मनुष्य और निर्वृत्यपर्याप्त वैमानिक देवोंमें होता है।

क्षायिक सम्यक्त्व घर्मापृथिवीके नारकी, भोगभूमिया तिर्यञ्च, भोगभूमि और कर्मभूमिके मनुष्य और वैमानिक देवोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त दशामें होता है। वेदक सम्यक्त्व चारों गतिके पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक जीवोंके होता है। प्रथमोपशम सम्यक्त्वको कैसा जीव ग्रहण करता है, यह कहते हैं—

१. मिस्सा आहारस्सय इति पूर्व्वपाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्गतिय सादिमिथ्यादृष्टिजीवंगळ्गे मिथ्यात्वानंतानुबंधिकषायोदयंगळिदं जिनोक्तजीवादिपदार्त्थयाथात्म्यप्रतिपत्तिश्रद्धानलक्षणसम्यक्त्वपराङ्मुखरुगळें दोरेकोंड क्षयोपशमविशुद्धिदेशनाप्रायोग्यताकरणलब्धि प्रभावंगळिदं सम्यक्त्वपराङ्मुखत्वहेतु मिथ्यात्वानंतानुबंधिघातिकर्म्मंगळुदयभागदंतु प्रशस्तोपशमनविधानदिदमुपशमिसि एकचत्वारिंशद्दुरितंगळ बंधमं कडिसुत्तमसंयतदेशसंयताप्रमत्तरोळुदयिसिद प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालांतर्म्मुहूर्त्तप्रमाणदोळप्रमत्तसंयतंगे प्रमत्ताप्रमत्तपरावर्त्तसहस्रंगळक्कुमप्पुदरिदं प्रमत्तसंयतनोळं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमक्कुमें बुदर्थं ॥ मेणी प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं सम्यक्त्वप्रकृतियुमं मिश्रप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं माडिद चतुर्गतिय सादिमिथ्यादृष्टियुमनादिमिथ्यादृष्टियुं मेणा करणत्रयपरिणामंगळिदमनंतानुबंधिकषायंगळनु मिथ्यात्वप्रकृतियुमनेयुपशमिसि स्वीकरिसि सम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयं मोदलगोंडु सादिमिथ्यादृष्टिचरनें तु गुणसंक्रमणदिदं प्रथमोपशमसम्यक्त्वपरिणामयंत्रदिदं कोद्रवदोळें तंते मिथ्यात्वद्रव्यक्के त्रिधाकरणमक्कुमप्पुदरिदं सम्यक्त्वप्रकृतियुं मिश्रप्रकृतियुं सत्वमप्पुवु । अल्लि नारकरुगळ्गे घर्म्में वंशें मेघेगळोळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळु बंधमप्पुवु । २९ । म । ३० । म ती । शेष पृथ्विगळ नारकरुगळोळु मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमों दे बंधमक्कु । २९ । म । मो पर्य्याप्तविषयप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळोळु तीर्त्थयुतबंधस्थानमें तु संभविसुगुमेंदोडे :—

> पढमुवसमिये सम्मे सेसतिये अविरदादि चत्तारि ।
> तित्थयरबंधपारंभया णरा केवलिदुगंते ॥

एंदितु केवलिद्वयश्रीपादोपांतदोळिद्र्दु मनुष्यं षोडशभावनाप्रभावदिदं तीर्त्थबंधमं प्रारंभिसुगुमल्लदी पर्य्याप्तनारकप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियोळु तीर्त्थयुतनामबंधस्थानं विरुद्धमक्कुमें केंदोडे विरुद्धमिल्लेकें दोडे नोनें दंते केवलिद्वय श्रीपादोपांतदोळु तीर्त्थंकरपुण्यबंधमं प्रारंभिसिद वेदकप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिमनुष्यरुगळु प्राग्बद्धनरकायुष्यरुगळु मरणकालदोळु मिथ्यात्वकर्म्मोदयदिदं सम्यक्त्वमं कडिसि घर्म्मादित्रयदोळु पुट्टिशरीरपर्य्याप्तिगळिदं मेलेयुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि तत्तीर्त्थयुतस्थानमं नियमदिदं कट्टुवरप्पुदरिदं । सम्यक्त्वग्रहणकालदोळु साकारोपयोगयुक्तनागल्वेळकुमें ब नियमनुंटप्पुदरिनिल्लि नारकर्गेतत्त्वावबोधमें तक्कुमें दोडे तृतीयपृथ्वीवरं

इति चतुर्गतिमिथ्यादृष्टिरेव, सोऽपि नासंज्ञी ततः संज्ञेव, सोऽपि न लब्ध्यपर्याप्तः निर्वृत्यपर्याप्तश्च ततः पूर्ण एव । सोऽपि न संमूर्छिमस्ततो गर्भज उपपादजो वा । सोऽपि न संक्लिष्टस्ततो विशुद्ध एव, सोऽपि न

चारों गतिका मिथ्यादृष्टि ही प्रथमोपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करता है। वह भी असंज्ञी नहीं ग्रहण करता। अतः संज्ञी ही ग्रहण करता है। संज्ञी भी लब्ध्यपर्याप्त या निर्वृत्यपर्याप्त ग्रहण नहीं करता। अतः पर्याप्तक ही ग्रहण करता है। पर्याप्तक भी सम्मूर्छन-

---

१. ज्ञानोपयोगः । २. तत्त्वज्ञानं-नैसर्गिकसम्यक्त्वमपि तत्त्वबोधपूर्वकमेव तथापि सम्यक्त्वग्रहणकाले परोपदेशाभावात्तस्य सम्यक्त्वस्य व्यपदेशः तदुक्तं:—विना परोपदेशेन सम्यक्त्वग्रहणक्षणे । तत्त्वबोधो निसर्गः स्यात्तद्धृतोधिगमश्च सः ॥ इति ॥ जिनबिंबावलोकादिनिसर्गोऽल्पप्रयासतः । ज्ञेयस्त्वाधिगमस्तत्त्वविचारचतुरा मतिः ॥ इत्याचारसारे ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवप्रतिबोधनमुंटप्पुदरिदं । अथवा तन्निसर्गादधिगमाद्वा सम्यक्त्वमुत्पद्यते एंदितु पेळल्पट्टुदिल्लि निसर्गमेंबुदु स्वभावमक्कुमधिगममेंबुदर्त्थावबोधमक्कुमल्लि निसर्गजदोळर्त्थावबोधमुंटो मेणिल्लमो येत्तलानुमर्त्थावबोधमुंटक्कुमप्पोडदुवुमधिगमजमक्कुमर्त्थांतरमल्तेत्तलानुमर्त्थावबोधरहितमक्कुमप्पोडें तनवबुद्धतत्वंगळर्त्थश्रद्धानमेंदितें बोडदु दोषमल्तेकें दोडे निसर्गजदोळमधिगमजदोळमंतरंगकारणं समानमक्कुमदाउदें दोडे दर्शनमोहोपशममुं दर्शनमोहक्षयमुं दर्शनमोहक्षयोपशममुमें दीयंतरंगकारणमुंटागुत्तिरलावुदों दाचार्य्यादिगळुपदेशमिल्लदेयुं सम्यक्त्वं पुट्टुगुमदु नैसर्गिकमक्कुमावुदों दाचार्य्यादिगळिनर्त्थोपदेशपूर्व्वकं जीवाद्यधिगमनिमित्तमदधिगमजमें दितें रडरोळमिदु भेदमक्कुमदुकारणदिदं । दर्शनमोहोपशमदिनादुदुपशमसम्यक्त्वमक्कुमप्पुदरिदं । नैसर्गिकं देशनानिरपेक्षकमुमक्कुमें बुदर्त्थं ॥

तिर्य्यंचरोळु संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तगर्भजविशुद्धसाकारोपयोगयुक्तं मिथ्यादृष्टिप्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसुत्तमप्रत्याख्यानावरणोदयदिंदमसंयतनक्कुं । प्रत्याख्यानावरणोदयदिंदं देशसंयतनुमक्कुमा प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालांतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २८ । दे ॥ मनुष्यगतियोळं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमक्कुमप्पोडं :—

चत्तारि वि छेत्ताइं आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।
अणुवदमहव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥

एंदितु मनुष्यरुगळुं नाल्कुं गतिगळोळ् बद्धायुष्यरादोडं सम्यक्त्वमं स्वीकरिसुवरु । तत्रापि देवायुष्यमल्लदितरायुस्त्रितयं सत्वमुळ्ळ जीवनोळु अणुव्रतमहाव्रतंगळागवु । एंदितु चतुर्गतिबद्धायुष्यरुमबद्धायुष्यरुगळुमप्प विशुद्धसाकारोपयोगयुक्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळु सप्तप्रकृतिगळनुपशमिसि अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यानावरणसंज्वलन-देशघातिस्पर्द्धकोदयंगळिंदमसंयतनुं देशसंयतनुम-

---

अनाकारोपयोगस्ततः साकारोपयोग एव, सोऽपि—

चत्तारि वि खेत्ताइं आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।
अणुवदमहव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥

इत्यबद्धायुष्को बद्धायुष्को वा, सोऽपि सादिरनादिर्वा । तत्र सादिर्यदि सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिसत्त्वस्तदा सप्तप्रकृतीः तदसत्त्वस्तदा सोऽप्यनादिरपि मिथ्यात्वानंतानुबंधिनः पंचैव क्षयोपशमविशुद्धिदेशनाप्रायोग्यता-

---

जन्मवाला ग्रहण नहीं करता । अतः गर्भज या उपपाद जन्मवाला होना चाहिए । वह भी संक्लेशी न हो, अतः विशुद्ध परिणामी होना चाहिए । वह भी दर्शनोपयोग अवस्थामें न हो, ज्ञानोपयोगकी अवस्थामें हो । कहा है—

'पूर्वमें चारों गतिकी आयु बाँधी हो फिर भी सम्यक्त्व हो सकता है । किन्तु अणुव्रत और महाव्रत देवायुको छोड़ अन्य आयुका बन्ध जिसके हुआ है उसके नहीं होते ।'

इस वचनसे वह बद्धायुष्क हो या अबद्धायुष्क हो, सादि मिथ्यादृष्टि हो या अनादि मिथ्यादृष्टि हो । यदि वह सादि मिथ्यादृष्टि है और उसके सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीयका सत्व है तो उसके तीन दर्शनमोह और चार अनन्तानुबन्धी ये सात प्रकृतियाँ हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमत्तप्रमत्तरुगळुमप्परल्लि असंयतदेशसंयतप्रमत्तसंयतरुगळु देवगतियुताष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुवरेकें दोडे २८। दे २९। दे ती। प्रथमोपशमसम्यक्त्वदोळं तीर्त्थबंध प्रारंभमुंटप्पुदरिदं। अप्रमत्तसंयतनोळु अष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळुं बंधमप्पुवु। २८। दे। २९। दे ति। ३०। दे आ। ३१। दे आ ती। देवगतियोळु भवनत्रयं मोदलागियुपरिमग्रैवेयकावसानमाद्विविजमिथ्यादृष्टिगळुं विशुद्धसाकारोपयोगयुक्तरुगळुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वमं स्वीकरिसि तत्कालांतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं मनुष्यगतियुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु। २९। म। यिल्लि तीर्त्थयुतस्थानबंधमिल्लेकें दोडे विविजमिथ्यादृष्टिगळोळु तीर्त्थसत्वं खपुष्पोपमानमक्कुमदें तें दोडे तीर्त्थबंधप्रारंभकमनुष्यं बद्धदेवायुष्यनादोडमबद्धायुष्यनादोडं सम्यक्त्वविराधकनल्लप्पुदरिंद तद्बंधस्थानाभावमक्कुं। द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं मनुष्यपर्य्याप्तरोळं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तविविजरोळं संभविसुगुमदें तें दोडे :—

इगिवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहि।
पढमं अधापवत्तं करणं तु करेदि अपमत्तो॥

करणलब्धिपरिणामैः प्रशस्तोपशमनविधानेन युगपदेवोपशमय्यांतर्मुहूर्तकालं प्रथमोपशमसम्यक्त्वं स्वीकुर्वन् कश्चिदप्रत्याख्यानकषायोदयादेकचत्वारिंशद्दुरितबंधं निवारयन्नसंयतः, कश्चित्प्रत्याख्यानकषायोदयादेकपंचाशद्बन्धमपाकुर्वन् देशसंयतः, कश्चित्संज्वलनोदयादेकषष्टिबंधं निराकुर्वन्नप्रमत्तसंयतो वा स्यात्। सोऽप्रमत्तः प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसंख्यातसहस्राणि करोति। तत्सम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयाद्गुणसंक्रमणेन तत्परिमाणेन यंत्रेण कोद्रववन्मिथ्यात्वद्रव्यं त्रिधा करोति। तत्र नारकस्तदा असंयत एव भूत्वा घर्मादित्रये नवविंशतिकादिद्वयं बध्नाति २९ म ३० म ती। शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव। नन्वविरतादिचतारितिर्थयरबंधारंभया

और यदि सम्यक्त्वमोहनीय मिश्रमोहनीयका सत्त्व नहीं है तो पाँच प्रकृतियाँ हैं। अनादिमिथ्यादृष्टिके भी पाँच ही प्रकृतियाँ होती हैं। इन प्रकृतियोंको क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य और करणलब्धिरूप परिणामोंके द्वारा प्रशस्तोपशम विधानसे एक साथ उपशमाकर अन्तर्मुहूर्त कालके लिए प्रथमोपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके कोई जीव अप्रत्याख्यान कषायके उदय होनेसे इकतालीस पाप प्रकृतियोंके बन्धको रोकता हुआ असंयत सम्यग्दृष्टी होता है। अथवा कोई जीव प्रत्याख्यान कषायके उदयसे इकावन प्रकृतियोंके बन्धको रोककर देशसंयत होता है। कोई संज्वलनके उदयसे इकसठ प्रकृतियोंके बन्धको रोकता हुआ अप्रमत्त संयत होता है। वह अप्रमत्त संख्यात हजार बार अप्रमत्तसे प्रमत्त और प्रमत्तसे अप्रमत्तमें आवागमन करता है। उस प्रथमोपशम सम्यक्त्वके ग्रहणके प्रथम समयसे गुणसंक्रमणके द्वारा उस सम्यक्त्वरूप परिणामसे मिथ्यात्वके द्रव्यको तीन रूप करता है। जैसे चाकीसे दलनेपर कोदोंके तीन रूप हो जाते हैं।

नारकी तो असंयत ही रहकर घर्मा आदि तीन नरकोंमें उनतीस और तीसका बन्ध करता है। शेष नरकोंमें मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध होता है।

शंका—आगममें कहा है कि अविरत आदि चार गुणस्थानवाले मनुष्य ही केवली

---

१. गुडखंडशर्कराऽमृत—विषहालाहलशक्तियं निबकांजीरंगळ सदृशमप्पंतु।

एंदितु एकविंशतिचारित्रमोहोपशमननिमित्तमागि वेदकसम्यग्दृष्टियप्प महात्म्यप्रमत्तसंयतं मुंनं करणत्रयपरिणामदिदं सप्तप्रकृतिगळनुपशमिसि द्वितीयोपशमसम्यक्त्वस्वीकारमं माडि वळिक्कमंतर्म्मुहूर्त्तं प्रमितमप्प तद्द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकालप्रथमसमयदोळु देवगतियुताष्टाविंशत्यादिचतुःस्थानंगळं कट्टुगुं। २८। दे। २९। दे ति। ३०। दे आ। ३१। दे आ ती।

यितु कट्टुत्तलुमुपशमश्रेण्यारोहणनिमित्तमागि मूरुप करणत्रयंगळोळु मोदल अधःप्रवृत्तकरणमनी सातिशयाप्रमत्तसंयतं माळ्कुमा करणदोळु नाल्कावश्यकंगळं माळ्कुमवावुवेंदोडे प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धिसातादिप्रशस्तप्रकृतिगळगे प्रतिसमयमनंतगुणवृद्धियिं चतुःस्थानानुबंधअसाताद्यप्रशस्तप्रकृतिगळगे प्रतिसमयमनंतगुणहानियिं द्विस्थानानुभागबंध स्थितिबंधापसरणमें बिवं प्रवर्त्तिसुत्तमपूर्व्वकरणगुणस्थानमं पोद्दुगुमा गुणस्थानप्रथमसमयं मोदल्गोंडु तद्गुणस्थानषष्ठभागपर्य्यंतमा चतुःस्थानंगळं कट्टुवरु। २८। दे। २९। दे ति ३०। दे। आ ३१। दे आ ती॥ सप्तमचरमभागदोळु एकप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु ॥१॥ तदनंतरसमयदोळनिवृत्ति-

---

णरा केवलिद्वयंते इत्युक्तं तदा नारकेषु तद्युतस्थानं कथं बध्नाति? तन्न। प्राग्बद्धनरकायुषां प्रथमोपशमसम्यक्त्वे वेदकसम्यक्त्वे वा प्रारब्धतीर्थबंधानां मिथ्यादृष्टित्वेन मृत्वा तृतीयपृथ्व्यंतं गतानां शरीरपर्याप्तेरुपरि प्राप्ततदन्यतरसम्यक्त्वानां तद्बंधस्यावश्यंभावात्। तत्प्राप्तौ खलु साकारोपयोगेन भाव्यं तत्र स कथं संभवेत्? तन्न, तृतीयपृथ्व्यंतं देवप्रतिबोधनान्निसर्गाद्वा तत्रापि तत्संभवात्। तर्हि निसर्गजेऽर्थावबोधः स्यान्न वा? यदि स्यात्तदा तदप्यधिगमजमेव। यदि न स्यात्तदानवगततत्त्वः श्रद्धधीतेति? तन्न। उभयत्रांतरंगकारणे दर्शनमोहस्योपशमे क्षये क्षयोपशमे वा समाने च सत्याचार्याद्युपदेशेन जातमधिगमजं तद्विना जातं नैसर्गिकमिति भेदस्य सद्भावात्। स चायं प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिर्यदि तिर्यङ् तदा असंयतो देशसंयतो वा मृत्वा देवगत्यष्टाविंशतिकं

द्विकके निकट तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करते हैं, तब नरकमें तीर्थंकरसहित स्थानका बन्ध कैसे सम्भव है?

समाधान—जिस मनुष्यके पूर्वमें नरकायुका बन्ध हुआ, पीछे प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा वेदक सम्यक्त्वमें तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करे तो मरते समय मिथ्यादृष्टि होकर तीसरे नरक तक जाता है वहाँ शरीर पर्याप्ति पूर्ण होनेपर दोनों सम्यक्त्वोंमें-से एक सम्यक्त्व प्राप्त करके तीर्थंकरका भी बन्ध करने लगता है।

शंका—सम्यक्त्वकी प्राप्तिके लिए साकारोपयोग होना चाहिए। वह वहाँ कैसे होता है?

समाधान—तीसरी पृथ्वी पर्यन्त देवोंके सम्बोधनेसे अथवा सहज स्वभावसे साकारोपयोग होता है।

शंका—निसर्गज सम्यग्दर्शनमें पदार्थोंका ज्ञान होता है या नहीं? यदि होता है तो वह भी अधिगमज ही हुआ। यदि पदार्थोंका ज्ञान नहीं है तो तत्त्वोंके ज्ञानके बिना श्रद्धान कैसा?

समाधान—निसर्गज और अधिगमज सम्यग्दर्शनमें अन्तरंग कारण दर्शनमोहका उपशम, क्षय, क्षयोपशम समान है। उसके होते हुए जहाँ आचार्यादिके उपदेशसे तत्त्वज्ञान होता है वह अधिगमज है और जहाँ उसके बिना तत्त्वज्ञान होता है वह निसर्गज है। यह इन दोनोंमें भेद है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करणगुणस्थानप्रथमसमयं मोदल्गोंडु चरमसमयपर्य्यंतमा येकप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । १ । तदनंतर समयदोळु सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानमं पोद्दि तद्गुणस्थानचरमसमयपर्य्यंतमा एकप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । १ । तदनंतरसमयदोळुपशांतकषायगुणस्थानमं पोद्दि तद्गुणस्थानचरमसमयपर्य्यंतमा एकप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । १ । तदनंतरसमयदोळुपशांतकषायगुणस्थानमं पोद्दि तद्गुणस्थानचरमसमयपर्य्यंतं नामकर्म्मबंधरहितरागिर्द्दु मत्तमवतरणदोळं क्रमदिंदमिळिवु अप्रमत्तगुणस्थानमं पोद्दि मुंनिनंते अष्टाविंशत्यादि चतुस्थानंगळं कट्टुवरु । अंतु कट्टुत्तलुं प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्रंगळं माडुत्तं प्रमत्तगुणस्थानदोळु प्रमत्ताष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुत्तं । २८ । दे २९ । दे ति । संक्लेशवशदिदं प्रत्याख्यानावरणोदयदिदं देशसंयतगुणस्थानमं पोद्दि प्रमत्तसंयतनंते द्विस्थानंगळं कट्टुत्तं । २८ । दे । २९ । दे ती ॥ अप्रत्याख्यानावरणोदयदिदमसंयतसम्यग्दृष्टिगळागियुं देशसंयतनंते द्विस्थानंगळं कट्टुवरिलु । २८ दे । २९ ॥ दे ती ॥ उपशमश्रेण्यारोहणावरोहणविवक्षेयिदं । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वदोळसंयतादिगुणस्थानाष्टकं संभविसुवबु । बद्धदेवायुष्यरुगळगोत्तलानुमपूर्व्वकरणारोहकप्रथमभागमं बिट्टु शेषभागशेषगुणस्थानंगळोळेल्लियादोडं मरणं संभविसुगु । अंतु मरणमागुत्तं विरलु सौधर्म्मकल्पं मोदल्गोंडु

बध्नाति । मनुष्यस्तदा असंयतः देशसंयतः प्रमत्तश्च तदादिद्वयं । अस्मिन् सम्यक्त्वेऽपि तीर्थबंधप्रारंभात् । अप्रमत्तस्तदादीनि चत्वारि २८ दे २९ दे ती ३० दे आ ३१ दे आ ती । देवस्तदा असंयत एव भूत्वा उपरिमग्रैवेयकावसानः मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव न तीर्थयुतं प्रारब्धतीर्थबंधस्य बद्धदेवायुष्कवदबद्धायुष्कस्यापि सम्यक्त्वप्रच्युत्यभावात् । तद्द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं वेदकसम्यग्दृष्ट्यप्रमत्त एव करणत्रयपरिणामैः सप्तप्रकृतीरुपशमय्य गृह्णाति । तत्कालांतर्मुहूर्तप्रथमसमये देवगत्यष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि बध्नाति । अयं चोपशमश्रेणिमारोढुं करणत्रयं कुर्वन्नधःप्रवृत्तकरणं सातिशयाप्रमत्त एव करोति । तत्र प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धवृद्धि सातादि-

वह प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी यदि तिर्यञ्च है तो असंयत या देशसंयत होकर देवगति सहित अठाईसका बन्ध करता है। यदि मनुष्य है तो असंयत, देशसंयत या प्रमत्त होकर देवगति सहित अठाईसका या देवगति तीर्थसहित उनतीसका बन्ध करता है। इस सम्यक्त्वमें भी तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ होता है। यदि अप्रमत्त है तो अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीस चारका बन्ध करता है।

प्रथमोपशम सम्यक्त्वी देव असंयत ही होता है और वह उपरिमग्रैवेयक पर्यन्त ही होता है। वह मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधता है, तीर्थंकर सहित तीसको नहीं, क्योंकि जिसने देवायुका बन्ध करके तीर्थंकरका बन्ध प्रारम्भ किया है जैसे वह सम्यक्त्वसे च्युत नहीं होता वैसे ही जिसने देवायुका बन्ध नहीं किया है वह भी तीर्थंकरका बन्ध प्रारम्भ करके देवायुका बन्ध करनेपर मरते समय सम्यक्त्वसे च्युत नहीं होता। और सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वमें आये बिना प्रथमोपशम सम्यक्त्व नहीं होता।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व वेदक सम्यग्दृष्टी अप्रमत्तके ही तीन करणरूप परिणामोंके द्वारा सातों प्रकृतियोंका उपशम होनेपर होता है। उसका काल अन्तर्मुहूर्त है। उसके प्रथम समयमें देवगति सहित अठाईस आदि चारका बन्ध होता है।

यह द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी उपशम श्रेणिपर आरोहण करनेके लिए तीन करण करता

सर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतं यथासंभवमागि निर्व्वृत्यपर्य्याप्तदिविजासंयतसम्यग्दृष्टिगळागि मनुष्यगति-युत नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ । म ३० । म ती ॥ इल्लियुभयोपशमसम्यक्त्वदोळु एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमसत्वमुळ्ळ प्रमत्तसंयतनोळु मिथ्यात्वकर्मोदयमिल्ले[1]। तीर्त्थंकरसत्वमुमा-हारकसत्वमुमुळ्ळ प्रमत्तदेशसंयतासंयतरोळनंतानुबंधिकषायोदयमिल्ल । तीर्त्थसत्वमुळ्ळरोळ मिश्रप्रकृत्युदयमिल्लेकें दोडे :—

तित्थाहारं जुगवं सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिये ।
तं सत्तकम्मियाणं तग्गुणठाणं ण संभवइ ॥—गो. क. ३३३ गा.

एंदितु निषेधिसल्पट्टुदप्पुदरिदं । क्षायिकसम्यक्त्वग्रहणकालदोळु सामग्रीविशेषमुंटदावुदें-दोडे :—

प्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनंतगुणवृद्ध्या चतुःस्थानानुभागबंधं असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनंतगुणहान्या द्विस्थानानुभागबंधं स्थितिबंधापसरणं च कुर्वन्नपूर्वकरणगुणस्थानं गतः । तत्प्रथमसमयादाषष्ठभागं तान्येव चत्वारि बध्नन् सप्तमभागेऽनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये चैकमेव बध्नाति ।

उपशांतकषाये आ तच्चरमसमयं नामकर्माबध्नन् क्रमेणावतरन् प्राग्वद्बध्नन् अप्रमत्तगुणस्थानं गतः । प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्राणि कुर्वन् संक्लेशवशेन प्रत्याख्यानावरणोदयाद्देशसंयतो भूत्वा पुनः अप्रत्याख्याना-वरणोदयादसंयतो भूत्वा च प्रमत्तोक्ते द्वे बध्नाति इत्यसावसंयताद्यष्टगुणस्थानः स्यात् । स च बद्धदेवायुष्क

हुआ सातिशय अप्रमत्त अवस्थामें ही अधःकरण करता है। वहाँ प्रतिसमय अनन्तगुण विशुद्धिको करता हुआ साता आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका गुड़, खण्ड, शर्करा, अमृतरूप चार प्रकारके अनुभागबन्धको प्रतिसमय अनन्तगुणा बढ़ाता है और असाता आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभाग बन्धको प्रतिसमय घटाते हुए नीम और कांजीरूप दो प्रकारका बाँधता है। तथा सब प्रकृतियोंके स्थितिबन्धको घटाता हुआ अपूर्वकरण गुणस्थानको प्राप्त होता है। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लगाकर छठा भाग पर्यन्त उन्हीं चार स्थानोंको बांधता है। सातवें भागमें, अनिवृत्तिकरणमें और सूक्ष्मसाम्परायमें एक प्रकृतिक बन्धस्थानको बांधता है।

उपशान्तकषाय गुणस्थानमें अन्तिम समय पर्यन्त नामकर्मको नहीं बांधता। क्रमसे उतरते हुए पहलेकी तरह नामकर्मके बन्धस्थानोंका बन्ध करते हुए अप्रमत्त गुणस्थानको प्राप्त होता है। फिर अप्रमत्तसे प्रमत्तमें और प्रमत्तसे अप्रमत्तमें हजारों बार आवागमन करता हुआ संक्लेशवश प्रमत्तसे प्रत्याख्यानावरणके उदयसे देशसंयत होकर पुनः अप्रत्या-ख्यानावरणके उदयसे असंयत होकर प्रमत्तकी तरह दो स्थानोंका बन्ध करता है। इस प्रकार द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें असंयत आदि आठ गुणस्थान होते हैं। उसने यदि पूर्वमें

---

१. एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानसत्वमुळ्ळ प्रमत्तंगे मिथ्यात्वोदयदिं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानप्राप्तियागदेंबुदर्त्थं । येकें-दोडे तीर्त्थसत्कर्मंगे प्राग्बद्धनरकायुष्यंगल्लदे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानप्राप्तियिल्ल । बद्धनरकायुष्यंगे अप्रमत्तगुणस्थानप्राप्तिपूर्व्वकाहारकद्वयबंधमुं प्रमत्तगुणस्थानप्राप्तियुं घटियिसदु एकेंदोडे "चत्तारि वि खेत्ताइं आउगबंधेण होइ सम्मत्तं । अणुवदमहव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥" एंबागमवचन-मुंटप्पुदरिं । मिथ्यात्वोदयरहितानंतानुबंधिकषायोदयो नास्ति । सासादनगुणस्थानप्राप्तिर्नास्तीत्यर्थः ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंसणमोहक्खवणा पट्ठवगो कम्मभूमिजो मणुजो ।
तित्थयरपादमूळे केवळिसुदकेवळीमूळे ॥
णिट्ठवगो तट्ठाणे विमाण भोगावणीसु धम्मे य ।
कदकरणिज्जो चदुसु वि गदीसु उप्पज्जदे जम्हा ॥—लब्धि. ११०–१११ गा.

एंदिती सामग्रीविशेषयुतप्रस्थापक मनुष्यासंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळु मुंनमनंतानुबंधिकषायमं विसंयोजिसुवल्लि उदयावलिबाह्योपरितनस्थितियोळिद्दं निषेकंगळेल्लमनपकर्षिसि विसंयोजिसुत्तमनिवृत्तिकरणचरमसमयदोळु निरवशेषमागि विसंयोजिसुगुं। द्वादशकषाय नव नोकषायस्वरूपदिदं परिणमनमप्पंतु माळ्कुमें बुदर्थं। इंतप्प विसंयोजनमं वेदकसम्यग्दृष्टि असंयतनुं देशसंयतनुं प्रमत्तसंयतनुमप्रमत्तसंयतनुमधःप्रवृत्तकरणप्रथमसमयं मोदल्गोंडु प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धियिदं वर्द्धमानरागुत्तं सातादिप्रशस्तप्रकृतिगळ्गे प्रतिसमयमनंतगुणवृद्धियि चतुःस्थानानुभागबंधमनसाताद्यप्रशस्तप्रकृतिगळ्गे प्रतिसमयमनंतगुणहानियिं

आरोहणेऽपूर्वकरणप्रथमभागादन्यत्रावतरणे सर्वत्र क्वचिद्यदि म्रियते तदा वैमानिकेषु यथासंभवं निर्वृत्यपर्याप्तो भूत्वा मनुष्यगतिनवविंशतिकादिद्वयं बध्नाति २९ म ३० म ती। उभयोपशमसम्यक्त्वे एकत्रिंशत्कसत्त्वप्रमत्ते मिथ्यात्वं तीर्थसत्त्वाहारकसत्त्वासंयतादित्रयेऽनंतानुबंधी तीर्थसत्त्वे मिश्रं च नोदेति, तत्तत्कर्मसत्त्वजीवानां तत्तद्गुणस्थानस्य संभवाभावात्।

दंसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजो मणुजो। तित्थयरपादमूले केवलिसुदकेवलीमूले ॥
णिट्ठवगो तट्ठाणे विमाणभोगावणीसु धम्मे य। कदकरणिज्जो चदुसु वि गदीसु उप्पज्जदे जम्हा ॥

देवायुका बन्ध किया है तो वह चढ़ते अपूर्वकरणके प्रथम भाग बिना अन्यत्र और उतरते सर्वत्र यदि कहीं मरण करता है तो यथासम्भव वैमानिक देव होता है। वहाँ निर्वृत्यपर्याप्त अवस्थामें मनुष्यगति सहित उनतीस और तीसका बन्ध करता है।

दोनों ही प्रकारके उपशम सम्यक्त्वमें इकतीस प्रकृतिरूप नामकर्मके बन्धस्थानका सत्त्ववाला अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती प्रमत्तसे मिथ्यात्वमें नहीं आता। तीर्थंकर और आहारककी सत्तावाले असंयत आदि तीनमें अनन्तानुबन्धीका उदय नहीं होता। अतः वे उन गुणस्थानोंसे च्युत होकर सासादनमें नहीं आते। तथा तीर्थंकरके सत्त्वमें मिश्र मोहनीयका उदय नहीं होता। अतः वह तीसरे गुणस्थानमें नहीं आता। क्योंकि उस उस कर्मकी सत्तावाले जीवोंके वह वह गुणस्थान नहीं होता।

विशेषार्थ—एक जीवके तीर्थंकर और आहारकका सत्त्व होनेपर मिथ्यादृष्टि गुणस्थान नहीं होता। आहारकका सत्त्व होते सासादन गुणस्थान नहीं होता और तीर्थंकरका सत्त्व होते मिश्रगुणस्थान नहीं होता।

अब क्षायिक सम्यक्त्वमें कहते हैं। यहां प्रासंगिक कहते हैं—

"दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारम्भ तो कर्मभूमिया मनुष्य तीर्थंकर केवली या श्रुतकेवलीके पादमूलमें करता है। और निष्ठापक वहीं, या वैमानिक देवोंमें या भोगभूमिमें या प्रथम नरकमें होता है क्योंकि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी चारों गतिमें जन्म लेता है॥"

वही कहते हैं—

---

१. प्रारंभक इत्यर्थः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विस्थानानुभागबंधमं शुभाशुभकर्म्मंगळगे स्थितिबंधापसरणमं प्रवर्त्तिसुत्तलुमधःप्रवृत्तकरण-परिणतियं मीरि तदनंतरसमयदोळपूर्व्वकरणपरिणाम-परिणतरागियुमा नाल्कु मावश्यकंगळवेरसु गुणश्रेणीगुणसंक्रमस्थितिकांडकघातानुभागकांडकघातंगळुमं प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तिगुणश्रेणि-द्रव्यमं नोडलुं देशसंयतगुणश्रेणिद्रव्यमसंख्यातगुणमदं नोडलुं सकलसंयतगुणश्रेणीद्रव्यमसंख्यात-गुणमदं नोडलुमसंख्यातगुणद्रव्यमनीयनंतानुबंधिकषायविसंयोजकनपकर्षिसि अपूर्व्वकरणानिवृत्ति-करणकालद्वयमं नोडलु साधिकमागियुं संयतरगुणश्रेण्यायाममं नोडलु संख्यातगुणहीनमुं समयं-प्रतिगलितावशेषमुमप्प गुणश्रेण्यायामदोळु द्रव्यनिक्षेपणमुमननुभागकांडकायाममं पूर्व्वमं नोडल-नंतगुणमुमं स्थितिकांडकायाममुमं पूर्व्वमं नोडलुं संख्यातगुणायाममुमं अनंतानुबंधिगळगे गुण-संक्रममुंटप्पुदरिदं गुणसंक्रमद्रव्यमुमं पूर्व्वमं नोडलुमसंख्यातगुणमुमनितु संख्यातसहस्रस्थिति-कांडकंगळिदं तावन्मात्रस्थितिबंधापसरणंगळिदमुमोंदु स्थितिकांडकं बीळ्व कालदोळु संख्यात-सहस्रानुभागकांडकंगळ प्रमाणविव संख्यातसहस्रानुभागकांडकघातंगळं प्रवर्त्तिसुत्तमपूर्व्वकरण-

इति सामग्रीविशेषविशिष्टोऽसंयतादिचतुर्गुणस्थानान्यतमवेदकसम्यग्दृष्टिरधःप्रवृत्तकरणप्रथमसमयात्प्रा-गुक्तचतुरावश्यकानि कुर्वन् तं करणं नीत्वानंतरसमयेऽपूर्वकरणं गतः तैः समं प्रतिसमयं प्रथमोपशमसम्यक्त्वो-त्पत्तिदेशसंयतसकलसंयतगुणश्रेणिद्रव्येभ्यः असंख्यातासंख्यातगुणमनंतानुबंधिद्रव्यमनंतानुबंधिविसंयोजकः, अप-कृष्यापूर्वकरणानिवृत्तिकरणकालद्वयात्साधिकेऽपि संयतगुणश्रेण्यायामात् संख्यातगुणहीने गलितावशेषगुणश्रेण्या-यामे निक्षिपन् अनंतानुबंधिनः गुणसंक्रमणसद्भावात् पूर्वतोऽसंख्यातगुणं गुणसंक्रमणद्रव्यं संक्रामन् पूर्वतः

सामग्रीविशेषसे विशिष्ट वेदक सम्यग्दृष्टी असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें-से किसीमें तीन करण करता है। अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर पूर्वोक्त चार आवश्यक करता है—विशुद्धताका बढ़ाना, साता आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध बढ़ाना, असाता आदि अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभागबन्ध घटाना, सब प्रकृतियोंका स्थिति-बन्ध घटाना। अधःप्रवृत्तको पूर्ण करके अनन्तर समयमें अपूर्वकरणको करता है। वहाँ पूर्वोक्त चार आवश्यकोंके साथ प्रतिसमय जो प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिमें, देशसंयतमें, वा सकलसंयतमें असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा गुणश्रेणीरूप द्रव्य है उससे असंख्यातगुणा अनन्तानुबन्धीका द्रव्य अपकर्षण करके पृथक् रखता है। अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे यहाँ गुणश्रेणी आयामका काल कुछ अधिक है तथापि सकलसंयमके गुणश्रेणीके कालसे संख्यातगुणा हीन है। गलितावशेष उस गुणश्रेणीके कालमें उस अपकर्षण किये हुए द्रव्यको देता है।

विशेषार्थ—सत्तारूप मोहनीय कर्मके परमाणुओंमें जितने अनन्तानुबन्धीके परमाणु हैं, उनमें-से पूर्वोक्त गुणश्रेणीमें देनेके लिए अपकर्षण करके जितने परमाणु पृथक् किये, उतने परमाणु पूर्वोक्त गुणश्रेणी कालके जितने समय हों, उनमें प्रतिसमय असंख्यात-असंख्यात गुणे होकर निर्जरारूप परिणत करता है।

अनन्तानुबन्धीमें गुणसंक्रम होनेसे पूर्वसे असंख्यात गुणे संक्रम द्रव्यको संक्रमाता है। अर्थात् अनन्तानुबन्धीके द्रव्यको अन्य कषायरूप परिणमाता है।

१. असंज्ञिजीवमिथ्यात्वकर्म्मक्के स्थितियनिष्टुप्रमाणमं सा १००० माळ्पनप्पुदरिं तत्प्रतिमितमक्कुमें बुदर्थं ॥

परिणाममं मीरि तदनंतरसमयदोळनिवृत्तिकरणपरिणाममं पोद्दि तत्प्रथमसमयं मोदलगोंडु क्रियमाणविशेषमुंटदाउदें दोडे :—

अणियट्टी अद्धाए अणस्स चत्तारि होंति पव्वाणि ।
सायरलक्खपुधत्तं पल्लं दूरावकिट्टि उच्छिट्टं ॥—लब्धि. ११३ गा.

अनिवृत्तिकरणप्रथमसमयदोळनंतानुबंधिगळ्गे स्थितिसत्वं सागरोपमलक्ष पृथक्त्वमक्कुं । स्थितिकांडकायाममुं स्थित्यनुसारमप्पुदरिंद पूर्व्वमं नोडलु संख्यातगुणहीनमागियुं पल्यासंख्यातैकभागमागि लक्षिसल्पडुर्गुमितप्प स्थितिकांडकंगळनिवृत्तिकरणदोळु संख्यातबहुभागकालं पोगुत्तं विरलेकभागावशेषमादागळु संख्यातसहस्रंगळप्पुववर्रिदं कुंदि स्थितिसत्वमसंज्ञिजीवस्थितिबंधसमानमप्प सागरोपमसहस्रप्रमितमक्कुमल्लिदं मेलेयुं पल्यसंख्यातैकभागमात्रायामस्थितिकांडक-

---

संख्यातगुणायामानि संख्यातसहस्राणि स्थितिकांडकानि घातयन् तावंति स्थितिबंधापसरणानि कुर्वन् एकैकस्मिन् स्थितिकांडकघातकाले पूर्वतोऽनंतगुणायामानि तावंत्यनुभागकांडकानि घातयंश्चापूर्वकरणं नीत्वानंतरसमयेऽनिवृत्तिकरणं गच्छति ।

अणियट्टे अद्धाए अणस्स चत्तारि होंति पव्वाणि ।
सायरलक्खपुधत्तं पल्लं दूरावकिट्टिउच्छिट्ठं ॥

तत्प्रथमसमयेऽनंतानुबंधिनां स्थितिसत्त्वं सागरोपमलक्षपृथक्त्वमात्रं । तत उपरि तत्कालसंख्यातबहुभागे गते पल्यसंख्यातैकभागायामैः संख्यातसहस्रस्थितिकांडकैर्हीनमसंज्ञिस्थितिबंधसमं सहस्रसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं चतुरिंद्रियस्थितिबन्धसमं शतसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं त्रींद्रियं स्थितिबन्धसमं पंचाशत्सागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं द्वींद्रियस्थितिबन्धसमं पंचविंशतिसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनमेकेंद्रियस्थितिबन्धसममेकसागरोपममात्रं ।

पूर्वसे असंख्यातगुणे आयाम—समयोंका प्रमाण—को लेकर संख्यात हजार स्थिति काण्डकोंका घात करता है अर्थात् जो पूर्वमें कर्मोंकी स्थिति सत्तामें थी उसको घटाता है। उतने ही नये कर्मोंके स्थितिबन्धका अपसरण करता है—स्थितिबन्धको घटाता है। एक-एक स्थितिकाण्डकके घात करनेके कालमें पूर्वसे अनन्तगुणे अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेदादि रूप आयामको लिये अनुभागकाण्डकोंका नाश करता है। ऐसा करते हुए अपूर्वकरणको पूर्ण करता है। उसके अनन्तर समयमें अनिवृत्तिकरण करता है।

अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्त्व या सत्त्वरूप स्थिति पृथक्त्व लाख सागर प्रमाण है। उसके ऊपर—उस अनिवृत्तिकरणके कालमें संख्यातका भाग देकर, एक भाग बिना शेष बहुभाग प्रमाण काल बीतनेपर—पल्यके संख्यातवें भाग प्रमाण एक-एक काण्डक–एक-एक बार इतनी स्थिति घटाना, ऐसे संख्यात हजार स्थितिके काण्डकोंके द्वारा एक हजार सागर प्रमाण स्थिति रहती है जो असंज्ञीके स्थितिबन्ध जितनी है। उसके ऊपर उतने ही प्रमाण उतने ही काण्डकोंके द्वारा चौइन्द्रियके बन्धके समान सौ सागरकी स्थिति रहती है। उससे ऊपर उतने ही प्रमाणवाले उतने ही काण्डकों द्वारा तेइन्द्रियके स्थितिबन्धके समान पचास सागरकी स्थिति रहती है। उसके ऊपर उतने ही प्रमाणवाले उतने ही काण्डकोंके द्वारा दोइन्द्रियके स्थितिबन्धके समान पच्चीस सागरकी स्थिति रहती है। उसके ऊपर उतने ही आयामको लिये काण्डकोंके घटानेपर एकेन्द्रियके बन्धके समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहस्रंगलिदं कुंदि चतुरिंद्रियजीवस्थितिबंधसमानशतसागरोपमस्थितिसत्वमक्कुमल्लिदं मेलेयुं पल्यासंख्यातैकभागायामस्थितिकांडक सहस्रायामंगळिदं कुंदित्रींद्रियजीवस्थितिबंध समान पंचाशत् सागरोपमप्रमितस्थितिसत्वमक्कुमल्लिदं मेलेयुं पल्यासंख्यातैकभागायामस्थितिकांडकसहस्रंगळिवं कुंदि द्वींद्रियजीवस्थितिबंधसमानपंचविंशतिसागरोपमस्थितिसत्वमक्कुमल्लिदं मेलेयुं पल्यासंख्यातैकभागायामस्थितिकांडकसहस्रंगळिवं कुंदि एकेंद्रियजीवस्थितिबंधसमानैकसागरोपमस्थितिसत्वमक्कुमल्लिदं मेलेयुं तावन्मात्रायामसंख्यातसहस्रस्थितिकांडकंगळिवं कुंदि पल्यप्रमितस्थितिसत्वमक्कुमी द्वितीयपर्व्वपल्यप्रमितस्थितिसत्वदिदं मेले पल्यासंख्यातैकभागमात्रदूरापकृष्टिस्थितिपर्य्यंतं पल्यासंख्यातबहुभागायामस्थितिकांडकसहस्रंगळिवं कुंदि दूरापकृष्टि येंब तृतीयपर्व्वस्थितिमितपल्यासंख्यातैकभागमात्रस्थितिसत्वमक्कुमल्लिदं मेले उच्छिष्टावलिपर्य्यंतं पल्यासंख्यातबहुभागायामस्थितिकांडकंगळु संख्यातसहस्रंगळिवं कुंदि अनंतानुबंधिस्थितिसत्वमावलिप्रमितमक्कुमिदुच्छिष्टावलियें बुदक्कुमिदक्के पेसरें तक्कुमे दोडा-

तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं पल्यमात्रं। (अत उपरि पल्यमात्रं) अत उपरि पल्यासंख्यातबहुभागायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं दूरापकृष्टिसंज्ञं पल्यासंख्यातैकभागमात्रं। तत उपर्येतदायामैस्तावद्भिर्हीनमुच्छिष्टावलिसंज्ञमावलिमात्रं। एतावत्स्थितावशिष्टायां विसंयोजनोपशमनक्षपणाक्रिया नेतीदमुच्छिष्टावलिनाम। ते निषेकाः आवलिकाले परप्रकृतिरूपेण भूत्वा गलंति इत्येवं तच्चतुष्कं तच्चरमसमये सर्वं विसंयोजितं द्वादशकषायनवनोकषायरूपं नीतं।

अंतो मुहुत्तकालं विस्समिय पुणोवि तिकरणं करिय।
अणयट्टीए मिच्छं मिस्सं सम्मं कमेण णासेई॥

तदनंतरमंतर्मुहूर्तं विश्रम्यानंतानुबंधिचतुष्कं विसंयोज्यांतर्मुहूर्तानंतरं करणत्रयं कृत्वानिवृत्तिकरणकाले संख्यातबहुभागे गते शेषैकभागे मिथ्यात्वं ततः सम्यग्मिथ्यात्वं ततः सम्यक्त्वप्रकृतिं च क्रमेण क्षपयति, दर्शन-

एक सागरकी स्थिति रहती है। उसके ऊपर उतने ही आयामको लिये उतने ही काण्डकोंके घटानेपर पल्यप्रमाण स्थिति रहती है। उसके ऊपर पल्यके असंख्यातवें भागमें-से एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण आयामको लिये उतने ही काण्डकोंके द्वारा स्थितिको घटानेपर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थिति रहती है उसे दूरापकृष्टि कहते हैं। उसके ऊपर उतने ही आयामको लिये उतने ही काण्डकोंके द्वारा आवली प्रमाण स्थिति रहती है। उसे ही उच्छिष्टावली कहते हैं; क्योंकि उतनी स्थिति शेष रहनेपर विसंयोजन या उपशमन या क्षपणा क्रिया नहीं हो सकती। ये शेष रहे आवलीकालके निषेक उस आवलीकालमें एक-एक निषेक रूपसे अन्य प्रकृति रूप परिणमन करके गल जाते हैं। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क उस उच्छिष्टावलीके अन्तिम समयमें विसंयोजनरूप होकर अन्य बारह कषाय और नव नोकषाय रूप हो जाता है।

उसके पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त तक विश्राम लेता है। अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेके बाद एक अन्तर्मुहूर्त बीतनेपर पुनः तीन करण करता है। उनमें-से अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात भागोंमें-से बहुभाग बीतकर एक भाग शेष रहनेपर पहले मिथ्यात्वका, फिर सम्यग्मिथ्यात्वका, फिर सम्यक्त्व प्रकृतिका क्षय करता है। दर्शनमोहकी क्षपणाके प्रारम्भके प्रथम समयसे लेकर सम्यक्त्वमोहनीयकी प्रथम स्थितिके कालमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने तक तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वलिमात्रावशिष्टमावागळाव कर्म्मंगळगावोडं विसंयोजनक्रियेयुमुपशमनक्रियेयुं क्षपणेयुमिल्लप्पुदरिंदमुच्छिष्टावळियेंदु पेसरक्कुमा उच्छिष्टावलिमात्र निषेकंगळुं तावन्मात्रकालक्के परप्रकृतिस्वरूपदिदं परिणमिसि पोपुवप्पुवक्के स्वमुखोदयमिल्लप्पुदरिदं । यितनंतानुबंधिविसंयोजनमनिवृत्तिकरणपरिणामचरमसमयदोळु क्रोधमानमायालोभंगळनक्रमदिदं विसंयोजिसि किडिसियंतर्म्मुहूर्त्तकालमं विश्रमिसि कळेदु :—

अंतोमुहुत्तकाळं विस्समिय पुणोवितिकरणं करिय ।
अणियट्टीए मिच्छं मिस्सं सम्मं कमेण णासेदी ॥

एंवितु करणत्रयमं माडि अनिवृत्तिकरणकालदोळु संख्यातबहुभागं पोगि एकभागावशेषमावागळु मिथ्यात्वप्रकृतियुमं बळिक्कं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतियुमं बळिक्कं सम्यक्त्वप्रकृतियुमं क्रमदिव केडिसि दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभप्रथमसमयदोळु सम्यक्त्वप्रकृतियोळु स्थापिसिद प्रथमस्थित्यायाममंतर्म्मुहूर्त्तमात्रावशेषमावागळु चरमसमयप्रस्थापकनक्कुमनंतरसमयं मोदल्गोंडु आ प्रथमस्थितिचरमनिषेकपर्य्यंतं निष्ठापकनक्कुमीदर्शनमोहक्षपकरुगळु, प्रस्थापकरुगळुं निष्ठापकरुगळुमेंदु द्विविधरप्परल्लि । प्रस्थापकर्मनुष्यासंयतादि चतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळक्कुं । निष्ठापकरुगळु बद्धायुष्यरुगळपेक्षेयिदं वैमानिकनिर्व्वृत्यपर्य्याप्त सत्तीर्त्थातीर्त्थकृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिगळुं भोगभूमिजनिर्व्वृत्यपर्य्याप्ताऽतीर्त्थकृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि मनुष्यतिर्य्यंचरुगळुं । घर्म्मेय निर्वृत्य-

मोहक्षपणाप्रारंभप्रथमसमयस्थापितसम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थित्यायामांतर्मुहूर्तावशेषे चरमसमयप्रस्थापकः । अनंतरसमयादाप्रथमस्थितिचरमनिषेकं निष्ठापकः, प्रस्थापकोऽयमसंयतादिचतुर्ष्वन्यतमो मनुष्य एव । निष्ठापकस्तु बद्धायुष्कापेक्षया वैमानिकघर्मानारकभोगभूमितिर्यग्मनुष्यनिर्वृत्यपर्याप्तः । अबद्धायुष्कापेक्षया मनुष्य एव स च निष्ठापकः । कृतकृत्यवेदककालांतर्मुहूर्ते गते क्षायिकसम्यग्दृष्टिः स्यात् । अयं कश्चित्कर्मभूमिमनुष्यः तीर्थबंधं प्रारभ्य न प्रारभ्य वा चरमांगः तस्मिन्नेव भवे क्षपकश्रेणिमारुह्य घातीनि हत्वा सातिशयनिरतिशयकेवली

प्रस्थापक कहाता है। उसके अनन्तर समयसे लेकर प्रथम स्थितिके अन्तिम निषेक पर्यन्त निष्ठापक कहाता है। सो प्रस्थापक तो असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें-से किसी एक गुणस्थानवर्ती मनुष्य होता है। निष्ठापक बद्धायुकी अपेक्षा वैमानिक देव या प्रथम नरकका नारकी या भोगभूमिका मनुष्य या तिर्यंच निर्वृत्यपर्याप्तक भी होता है। किन्तु अबद्धायुकी अपेक्षा मनुष्य ही निष्ठापक होता है। कृतकृत्यवेदकका काल अन्तर्मुहूर्त बीतनेपर क्षायिक सम्यग्दृष्टी होता है।

यह क्षायिक सम्यग्दृष्टी कोई कमभूमिका मनुष्य तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ कर अथवा न प्रारम्भ कर चरमशरीरी उसी भवमें क्षपकश्रेणि चढ़ घातिया कर्मोंको नष्ट कर सातिशय या निरतिशय केवली होता है। और जो तीसरे भवमें मुक्त होना होता है तो देवायुको बाँध

१. तित्थयरसत्तकम्मा तदियभवे तब्भवे हु सिज्झेइं । खाइयसम्मत्तो पुण उक्कस्सेण चउत्थभवे ॥ देवेसु देवमणुवे सुरणरतिरिये चउग्गईसुंपि । कदकरणिज्जुप्पत्ति कमेण अन्तोमुहुत्तेण ॥ अस्या गाथाया विवरणं—कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वकाले चतुर्भागीकृते प्रथमसमयादारभ्यांतर्म्मुहूर्त्तप्रथमभागे मृतो देवेषूत्पद्यते । नान्यगतिजेषु । तत्कालमितरगतित्रयगमनकारणसंक्लेशपरिणामाभावात् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्य्याप्त सतीर्त्थं तीर्त्थंकृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिगळुमप्पुदरिदं चतुर्ग्गतिजरुगळप्परु । आ चतुर्ग्गतिजरुगळेल्लरुगळु तंतम्म कृतकृत्यवेदक कालमंतर्म्मुहूर्त्तमात्रं पोगुत्तं विरलु क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळप्परु । अबद्धायुष्कापेक्षेयिदं मनुष्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिगळु निष्ठापकरुगळु तंतम्म कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वकालं पोगुत्तं विरलु असंयतादि नाल्कुं गुणस्थानवर्त्तिगळु सतीर्त्थरुमतीर्त्थरुगळु क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळप्परंता अतीर्त्थाबद्धायुष्करुगळु तीर्त्थंकरश्रीपादमूलदोळमितरकेवलिश्रुतकेवलिद्वयश्रीपादोपांतदोळु षोडशभावनाबलदिदं तीर्त्थंबंधप्रस्थापकरप्परंतप्प क्षायिकसम्यग्दृष्टि सतीर्त्थातीर्त्थरुगळु कलंबच्चरंगळागरादोडा भवदोळे क्षपकश्रेण्यारोहणं गेय्दु घातिगळं किडिसुवक्कं डिसि अतिशयकेवलिगळु निरतिशयकेवलिगळुमप्पवक्कं लंबतृतीयभवदोळु घातिगळं किडिसुव पक्षदोळु देवायुष्यमनोंदने कट्टि सौधर्मकल्पं मोदल्गोंडु सर्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतं पुट्टि दिव्यभोगंगळननुभविसि बंदु पंचदशकर्म्मभूमिगळोळुत्तमसंहननरुगळागि पुट्टि कलंबप्पंचकल्याणयुतरुं कलंबर्क्षायिक सम्यग्दृष्टिगळु चरमांगरुगळागिए घातिगळं किडिसुवरा क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळेल्लं बंधयोग्यमप्प नामकर्म्मं बंधस्थानंगळु यथासंभवंगळु अष्टाविंशत्यादि पंचस्थानंगळप्पुवेंदु पेळल्पट्टुवु सुघटमक्कुं २८ । दे । २९ । दे ति म ३० । दे आ २ । म ती ३१ । दे आ २ । ती । १ ॥ वेदकसम्यक्त्वं द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिगळप्प असंयतादि नाल्कुं गुणस्थानवर्त्तिगळप्प मनुष्यरुगळोळु तत्सम्यक्त्वकालांतर्म्मुहूर्त्तं चरमसमयानंतरसमयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि तत्सम्यक्त्वप्रथमसमयं मोदल्गोंडु मनुष्यासंयतनष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुगुं । २८ । दे २९ । दे ति । मनुष्यदेशसंयतनुं प्रमत्तसंयतनुं द्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २८ । दे २९ । दे ति । अप्रमत्तसंयतनुमा द्विस्थानंगळुमं देवगत्याहारद्विकयुतमागि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं देवगत्याहारकतीर्त्थंयुत एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुवरु । २८ । दे । २९ । दे ति ।

स्यात् । तृतीयभवे सेत्स्यन् देवायुरेव बध्वा वैमानिकेष्वेवावतीर्य दिव्यभोगाननुभूयागत्य पंचदशकर्मभूमिषूत्तमसंहननो भूत्वा घातीनि हंति । एते क्षायिकसम्यग्दृष्टयो यथा संभवमष्टाविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिमनुष्यद्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टयः केचिन्मृत्वा वैमानिकासंयतेषूत्पन्नास्ते च कर्मभूमिमनुष्यप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयश्च स्वस्वांतर्मुहूर्तकाले गते सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो जायंते । कर्मभूमिमनुष्यसादिमिथ्यादृष्टयः सम्यक्त्वप्रकृत्युदयेन मिथ्यात्वोदयनिषेकानुत्कृष्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा तीर्थं बध्नीयुः । केचिन्न बध्नीयुः ।

वैमानिक देवोंमें उत्पन्न हो दिव्य भोगोंको भोग, वहाँसे चयकर पन्द्रह कर्मभूमियोंमें उत्तम संहननका धारी होकर घातिकर्मोंको नष्ट करता है। ये क्षायिकसम्यग्दृष्टी यथासम्भव अठाईस आदि पाँचका बन्ध करते हैं। आगे वेदकमें कहते हैं—

असंयतादि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्य द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टी कोई मरकर वैमानिक देवोंमें असंयतसम्यग्दृष्टी रूपमें जन्म लेते हैं वे वेदकसम्यग्दृष्टी होते हैं। तथा कर्मभूमिया मनुष्य प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी अपने उपशम सम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्तकाल बीतनेपर सम्यक्त्व मोहनीयके उदयसे वेदकसम्यग्दृष्टी होता है। तथा कर्मभूमिया मनुष्य सादिमिथ्यादृष्टि सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयसे मिथ्यात्वके उदयरूप निषेकोंका अभाव कर असंयतादि चार गुणस्थानोंमें वेदक सम्यग्दृष्टी होकर तीर्थंकर प्रकृतिको बाँधता है, कोई नहीं बाँधता है।

३०। दे आ २। ३१ दे आ ती ॥ आ द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टिगळ्गे मरणमाद पक्षदोळु सौधर्म्मादि सर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यवसानमाद देवासंयतरुगळोळु तदुपशमसम्यक्त्वकाल चरमसमयानंतर समयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि तत्प्रथमसमयं मोदल्गोंडु मनुष्यगतितीर्त्थयुतद्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। म ३०। म ती॥ अथवा मनुष्यगतिय कर्म्मभूमि सादि मिथ्यादृष्टिजीवंगळु मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं मिथ्यात्वप्रकृत्युदयनिषेकंगळनुत्कर्षिसि वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि असंयतादि नाल्कुं गुणस्थानमं पोद्दुवरवर्गळुं केवलिद्वयश्रीपादोपांतदोळु षोडशभावनेगळं भाविसि तीर्त्थकरपुण्यबंधमं प्रारंभिसिदवर्गंगळोळसंयतनोळं देशसंयतनोळं प्रमत्तसंयतनोळमष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळु बंधमप्पुवु। २८। दे २९। दे ति॥ अप्रमत्तसंयतनोळु अष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु बंधमप्पुवु। २८। दे २९। दे ती। ३०। दे आ २। ३१। दे आ ती॥ प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळप्प नाल्कुं गुणस्थानवर्त्तिकर्म्मभूमिमनुष्यरुगळोळसंयतं तत्प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालमंतर्मुहूर्त्तमात्रमदु पोगुत्तिरलु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टियक्कुमा प्रकारदिदं देशसंयतनुं प्रमत्तनुं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि देवगतियुताष्टाविंशत्यादिद्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २८। दे २९। दे ती॥ अप्रमत्तप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टियुं तत्सम्यक्त्वकालं पोदि बळिक्के सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टियागियुं तद्द्विस्थानंगळुमं देवगत्याहार देवगत्याहारतीर्त्थयुतस्थानमनंतु नाल्कुं स्थानमं कट्टुवं। २८। दे २९। दे ती। ३०। दे आ ३१। दे आ ती॥ मत्तमी मनुष्यगतिय कृतकृत्यवेदकरुगळं नाल्कुं गुणस्थानवर्त्तिगळुमी प्रकारदिदं कट्टुवरु। नरकगतियोळु नारकप्रथमोपशमसम्यक्त्वकाल चरमसमयानंतरसमयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि मोदल मूरुं नरकंगळोळु असंयतरुगळु सतीर्त्थातीर्त्थमनुष्यगतियुतनवविंशति आदि द्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। म। ३०। म ती॥

एते वेदकाः कृतकृत्यवेदकाश्चाष्टाविंशतिकादीन्यसंयतादित्रयो द्वे अप्रमत्तश्चत्वारि बध्नंति। नरकगतौ प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयः स्वकालानंतरसमयं प्राप्य सम्यग्मिथ्यादृष्टिसादिमिथ्यादृष्टयः मिश्रमिथ्यात्वप्रकृत्युदयनिषेकानुत्कृष्य च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा घर्मादित्रये सतीर्थातीर्थनवविंशतिकादिद्वयं बध्नंति। शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव। कर्मभोगभूमितिर्यंचो भोगभूमिमनुष्याश्च प्रथमोपशमसम्यक्त्वं त्यक्त्वा सादिमिथ्यादृष्टितिर्यंचो मिथ्यात्वोदयनिषेकानुत्कृष्य च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो जायंते ते च भोगभूमिकृतकृत्यवेदकाश्च देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नंति देवकृतकृत्यवेदका नवविंशतिकादिद्वयं २९ म ३० म ती।

ये वेदकसम्यक्त्वी और कृतकृत्य वेदकसम्यक्त्वी असंयत आदि तीन तो अठाईस, उनतीस दोको और अप्रमत्त अठाईस आदि चारको बाँधते हैं।

नरकगतिमें प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टी अपने कालके अनन्तर समयको प्राप्त होकर जो मिश्रगुणस्थानी या सादि मिथ्यादृष्टी होते हैं वे मिश्रप्रकृति वा मिथ्यात्व प्रकृतिके उदय निषेकोंको मिटाकर सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयसे वेदकसम्यग्दृष्टी होकर घर्मा आदि तीन नरकोंमें तो तीर्थंकर सहित या तीर्थंकर रहित उनतीस और तीसके स्थानको बाँधते हैं। शेष नरकोंमें मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधते हैं। कर्मभूमिया या भोगभूमिया तिर्यंच और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिगळु घर्म्मेयोळे संभविसुगुमप्पुर्दारदमा जीवंगळोळमा द्विस्थानंगळु बंधमप्पुवु । २९ । म ३० । म ती ।। शेषचतुःपृथ्विगळोळु प्रथमोपशमसम्यक्त्वचरमसमयानंतर समयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि मनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थान-मनों दने कट्टुवरु । २९ । म ।। सर्व्वपृथ्विगळ नारकरुगळोळु मिश्ररुगळु सादिमिथ्यादृष्टिगळु मिश्रमिथ्यात्वप्रकृत्युदयनिषेकंगळनुत्कर्षिसि सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि मोदल मूरुं नरकंगळ नारकरुगळु सतीर्थ्यातीर्थंनवविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ । म ३० । म ती ।। शेष पृथ्विगळ मिश्ररुं सादिमिथ्यादृष्टिजीवंगळु वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि मनुष्यगतियुतनव-विंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २९ म ।। तिर्य्यंचप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळु तत्सम्यक्त्व-काल चरमसमयानंतरसमयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि तत्सम्यक्त्व-प्रथमसमयं मोदल्गो डु मुंनिनंते देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २८ । दे ।। सादिमिथ्यादृष्टिगळप्प तिर्य्यंचरुगळु मिथ्यात्वप्रकृत्युदयनिषेकंगळनुत्कर्षिसि सम्यक्त्वप्रकृत्युदय-दिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागियुमा स्थानमने कट्टुवरु । २८ । दे ।। भोगभूमितिर्य्यग्मनुष्यरुगळु प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिगळु तत्सम्यक्त्वचरमसमयानंतर समयदोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदक-सम्यग्दृष्टिगळागि देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवर । २८ दे ।। कृतकृत्यवेदक-सम्यग्दृष्टिगळुमा स्थानमनों दने कट्टुवरु । २८ । दे ।। दिविजनिर्व्वृत्यपर्य्याप्तकृतकृत्यवेदक-सम्यग्दृष्टिगळु नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळं कट्टुवरु । २९ । म । ३० ।। म ती । प्रथमोपशमसम्य-ग्दृष्टिसुररुगळु तत्सम्यक्त्वकालचरमसमयपर्य्यंतं मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुत्तिद्दु अनंतरसमयदोळु [सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळागियुमा स्थानमनों दने कट्टुवरु । २९ म ।। सादिमिथ्यादृष्टिदिविजरुगळु भवनत्रयाद्युपरिमग्रैवेयकावसानमादवर्गळु करणत्रयमं माडियुं मेण्माडदेयुं यथासंभवमागि सम्यक्त्वप्रकृत्युदयदिदं मिथ्यात्वमं पत्तुविट्टु वेदकसम्यग्दृष्टिगळागि मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु । २९ । म ।।

प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयस्तत्र जातवेदकसम्यग्दृष्टयश्च तन्नवविंशतिकमेव । भवनत्रयाद्युपरिमग्रैवेयकांतसादि-मिथ्यादृष्टयः करणत्रयमकृत्वा कृत्वा वा यथासंभवं सम्यक्त्वप्रकृत्युदयान्मिथ्यात्वं त्यक्त्वा वेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा तदेव बध्नंति ।।५५०।।

भोगभूमिया मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्वको छोड़ सादिमिथ्यादृष्टि होकर मिथ्यात्वके उदय निषेकोंको मिटाकर सम्यक्त्वमोहनीयके उदयसे वेदकसम्यग्दृष्टी होते हैं। वे जीव और भोगभूमिया कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टी देवगति सहित अठाईसको ही बाँधते हैं। देव कृत-कृत्यवेदकसम्यग्दृष्टी उनतीस और तीसको बाँधते हैं। प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टी देव तथा देवपर्यायमें ही जिन्हें वेदकसम्यक्त्व हुआ है ऐसे देव मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधते हैं। भवनत्रिकसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त सादिमिथ्यादृष्टि जीव तीन करणों को (करके) या न करके यथासम्भव सम्यक्त्वमोहनीयके उदयसे मिथ्यात्वको त्याग सम्यग्दृष्टी होकर मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधते हैं ।।५५०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अडवीसतिय दु साणे मिस्से मिच्छे दु किण्हुलेस्सं वा।
सण्णी आहारिदरे सव्वं तेवीसछक्कं तु ॥५५१॥

अष्टाविंशतित्रिकं द्वे सासादने मिश्रे मिथ्यादृष्टौ तु कृष्णलेश्येव। संज्ञ्याहारयोरितरयोः सर्वं त्रयोविंशतिषट्कं तु ॥

सासादनरुचिगळ्गेल्लमष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पु। २८। दे। २९। ति। म। ३०। ति उ॥ मिश्ररुचिगळ्गेल्ल मष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळे बंधयोग्यंगळप्पुवु। २८। दे। २९। म॥ मिथ्यारुचिगळोळु मत्ते कृष्णलेश्येयोळु पेळ्द त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। २३ ए अ २५। ए प। बि ति च अ। सं। म। अ प। २६। ए प। आ उ। २८। न दे। २९। बि। ति। च। अ। सं। म। ३०। बि। ति। च। अ। सं। प उ॥ यिल्लि सासादनरुगळु निर्वृत्यपर्य्याप्तपर्य्याप्तरुमें दु द्विविधमप्परल्लि नरकगतियोळु निर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरुगळु खपुष्पोपमानमें तें दोडे "णिरयं सासणसम्मो ण गच्छदि" एंदितु नरकगतियोळु सासादनरु पुट्टरप्पुदरिदं। पर्य्याप्तसासादननारकरुगळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळ कट्टुवरु। २९। ति। म। ३०। ति उ॥ तिर्य्यग्गतियोळु पृथ्व्यब्बादरप्रत्येकवनस्पति द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञि पंचेंद्रियनिर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरुगळु मष्टाविंशति प्रकृतिस्थानं पोरगागि नवविंशति द्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। ति म। ३०। ति उ॥ पृथ्वीकायादि असंज्ञिपर्य्यंतं पर्य्याप्तसासादनरुगळु शशशृंगोपमानरप्परु। संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तसासादनं देवगतियुताष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळं कट्टुगुं

सासादनरुचावष्टाविंशतिकादित्रयमेव। तत्र निर्वृत्यपर्याप्तबादरपृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येषु पर्याप्तनारकोभयभवनत्रयादिसहस्रारांतदेवेषु च नवविंशतिकादिद्वयमेव। २९ ति म ३० ति उ। पर्याप्तसंज्ञितिर्यग्मनुष्ययोर्देवगत्यष्टाविंशतिकादित्रयं २८ दे २९ ति म ३० ति उ। उभयानताद्युपरिमग्रैवेयकांतेषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव। अनुदिशानुत्तरयोः सासादनो नास्ति। मिश्ररुचावष्टाविंशतिकादिद्वयं बध्नाति। तत्र पर्याप्तयोर्देवनारकयोर्मनुष्यगतिनवविंशतिकं। तिर्यग्मनुष्ययोश्च देवगत्यष्टाविंशतिकं। अनुदिशानुत्तरयोर्मिश्रो नास्ति। मिथ्यारुचौ कृष्णलेश्यावत्त्रयोविंशतिकादीनि षट् बध्नंति। तत्र निर्वृत्यपर्याप्तपर्याप्त-

---

सासादन सम्यक्त्वमें अठाईस आदि तीनका ही बन्ध होता है। वहाँ निर्वृत्यपर्याप्तक बादर, पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पति, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, संज्ञी असंज्ञी तिर्यंच मनुष्योंमें, पर्याप्त नारकियोंमें, और पर्याप्त-अपर्याप्त भवनत्रिकसे लेकर सहस्रार पर्यन्त देवोंमें उनतीस आदि दोका ही बन्ध होता है—तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीस अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका। पर्याप्त संज्ञी तिर्यंच मनुष्योंमें देवगतिसहित अठाईस आदि तीनका बन्ध होता है। पर्याप्त अपर्याप्त आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्यगति सहित उनतीसका ही बन्ध होता है। अनुदिश और अनुत्तर विमानोंमें सासादन नहीं होता।

मिश्ररुचि अर्थात् सम्यक्मिथ्यादृष्टि अवस्थामें अठाईस आदि दोका ही बन्ध होता है। वहाँ पर्याप्त देव नारकी मनुष्यगति सहित उनतीसको ही बाँधते हैं। तिर्यंच और मनुष्य देवगति सहित अठाईसको ही बाँधते हैं। अनुदिश अनुत्तरोंमें मिश्र गुणस्थान नहीं होता।

मिथ्यारुचि अर्थात् मिथ्यात्वमें कृष्णलेश्याकी तरह तेईस आदि छह स्थानोंको बाँधते हैं। वहाँ निर्वृत्यपर्याप्त और पर्याप्त नारकी छह नरकोंमें तिर्यंच या मनुष्यगतिसहित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८। दे २९। ति म। ३०। ति उ॥ मनुष्यगतिनिर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरुगळ्ं नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळने कट्टुवरु। २९। ति। म। ३०। ति उ॥ मनुष्यपर्य्याप्तसासादनरुगळ् मष्टाविंश-त्यादि त्रिस्थानंगळं कट्टुवरु। २८। दे। २९। ति म। ३०। ति उ॥ एकें दोडे निर्वृत्यपर्य्याप्त-तिर्य्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टिसासादनरुगळोळ् 'मिच्छदुगेदेवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि' एंदितु पर्य्याप्तरोळ् देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानबंधमक्कुमप्पुदरिदं। देवगतिय भवनत्रयादिसहस्रार-कल्पावसानमाद निर्वृत्यपर्य्याप्तसासादनरोळं पर्य्याप्तसासादनरोळं नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळ् बंधमप्पुवु। २९। ति म। ३०। ति उ॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद निर्वृत्यपर्य्याप्त-सासादनसुररुगळं पर्य्याप्तसुरसासादनरुगळं मनुष्यगतियुतनवविंशतिस्थानमनों दने कट्टुवरु। २९। म॥ अनुदिशानुत्तर विमानंगळोळ् सासादनरिल्ल। चतुर्गतिय मिश्ररुगळेल्लं पर्य्याप्तरुगळे-यप्परु। निर्वृत्यपर्य्याप्तरुगळिल्लल्लि। नरकदेवगतिद्वयद मिश्ररुगळेल्लं मनुष्यगतियुतनवविंशति-प्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु। अनुदिशानुत्तरविमानंगळोळ् मिश्ररुगळिल्ल। तिर्य्यग्मनुष्यगतिय मिश्ररुगळ् देवगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमनों दने कट्टुवरु। २८। दे॥ मिथ्यारुचिगळोळ् नरकगतिय निर्वृत्यपर्य्याप्तरुं पर्य्याप्तरुं मिथ्यादृष्टिगळ् नवविंशतिद्विस्थानंगळं सप्तमपृथ्विय मिथ्यादृष्टिगळ्पोरगागि शेषनारकरेल्लं कट्टुवरु। २९। ति म। ३०। ति उ॥ सप्तमपृथ्विय निर्वृत्यपर्य्याप्तरुं पर्य्याप्तरुं मिथ्यादृष्टिगळ् तिर्य्यग्गतियुतद्विस्थानंगळने कट्टुवरु। २९। ति ३०। ति उ॥ तिर्य्यग्गतिय पृथ्व्यप्तेजोवायु साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मप्रत्येकवनस्पति द्वींद्रियत्रींद्रिय-चतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्य्याप्तनिर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळ् मष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानं पोरगागि शेषत्रयोविंशत्यादि पंचस्थानंगळं कट्टुवरु। २३। ए अ। २५। ए प। वि। ति। च। अ। सं म। अ प २६। ए प। आ उ। २९। वि। ति। च। अ। सं। म। ३०। वि।

नारकेषु नवविंशतिकादिद्वयं। षट्पृथ्वीषु तिर्यग्मनुष्यगतियुतं। २९ ति म ३० ति उ। सप्तम्यां तिर्यग्गतियुतमेव २९ ति म ३० ति उ। तिर्यग्गतौ लब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्तबादरसूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणप्रत्येकवनस्पतिद्वित्रि-चतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येष्वष्टाविंशतिकं विना त्रयोविंशतिकादीनि पंच। तेजोवायुषु तु—'मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं णेति मनुष्यगतियुतपंचविंशतिकनवविंशतिके न स्तः। पर्याप्तासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येषु त्रयोविंश-

उनतीस और तीसको ही बाँधते हैं। सातवें नरकमें तिर्यंचगतिसहित ही उनतीस, तीसको बाँधते हैं। तिर्यंचगतिमें लब्ध्यपर्याप्तक, निर्वृत्त्यपर्याप्तक, बादर, सूक्ष्म, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण, प्रत्येक वनस्पति, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी, तिर्यंच और मनुष्योंमें अठाईसके बिना तेईस आदि पाँच स्थान बँधते हैं। इतना विशेष है कि तेजकाय और वायुकायमें मनुष्यगति सहित पचीस और उनतीसका बन्ध नहीं होता। पर्याप्त, संज्ञी, असंज्ञी, तिर्यंच मनुष्योंमें तेईस आदि छहका बन्ध होता है। लब्ध्यपर्याप्त, निर्वृत्त्यपर्याप्त मनुष्योंमें अठाईसके बिना पाँचका ही बन्ध है।

१. ओराळे वा मिस्से ण हि सुरणिरयाउ हारणिरय दुगं। मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थी॥ कम्मे उराळमिस्सं वेत्युक्तत्वात्। मनुष्य तिर्यग्निर्वृत्यपर्य्याप्तसासादने अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानं नास्ति॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ति । च । अ सं । प उ ॥ इल्लि विशेषमुंटदाउदें दोडे तेजोवायुकायिकंगळोळ् मनुष्यगतियुत-पंचविंशति नवविंशतिस्थानद्वितयमा बादरसूक्ष्मलब्ध्यपर्य्याप्त निर्वृत्यपर्य्याप्तरोळं संभविसवेकें दोडे "मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं ण हि तेउवाउम्मि" एंदितु बंधयोग्यंगळल्लें[1]पुदरिंदं। पंचेंद्रियासंज्ञिसंज्ञिपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळु त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळं कट्टुवरु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि । ति । च । अ । सं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न दे । २९ । बि । ति । च । अ । सं । म । ३० । बि । ति । च । अ । सं । प उ ॥ मनुष्यगतिय लब्ध्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळुमष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानं पोरगागि शेषपंचत्रयोविंशत्यादि स्थानंगळं कट्टुवरु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि । ति । च । अ । सं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २९ । बि । ति । च । अ । सं । म । ३० । बि । ति । च । अ । सं । प उ ॥ निर्वृत्यपर्य्याप्तमनुष्यमिथ्यादृष्टिगळुमा पंचस्थानंगळने कट्टुवरु । पर्य्याप्तमनुष्यमिथ्यादृष्टिजीवंगळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळं कट्टुवरु । २३ । ए । अ । २५ । ए प । बि । ति । च । पं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न दे । २९ । बि । ति । च । पं । म । ३० । बि । ति । च । पं । प उ ॥ देवगतियोळु भवनत्रयादि सौधर्म्मकल्पद्वयपर्य्यंतमाद निर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळं पर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळं पंचविंशति षड्विंशति नवविंशतित्रिंशत्प्रकृतिस्थानचतुष्टयमं कट्टुवरु । २५ । ए प । २६ । ए प । आ । उ । २९ । ति । म । ३० । ति । उ ॥ मत्तं सानत्कुमारादिदशकल्पनिर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळं पर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिजीवंगळं नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळ कट्टुवरु । २९ । ति । म । ३० । ति उ ॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद निर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळं पर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळं मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमनोंदने कट्टुवरु । २९ । म ॥ अनुदिशानुत्तरविमानंगळोळ् मिथ्यादृष्टिगळिल्ल । यितु सम्यक्त्वमार्ग्गणेयोळु नामकर्म्मबंधस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवु ॥

इल्लिगे प्रस्तुतमप्प गाथासूत्रमिदु :—

तिकादीनि षट् । लब्धिनिर्वृत्यपर्याप्तमनुष्येषु तान्यष्टाविंशतिकं विना पंच । देवगतौ निर्वृत्यपर्याप्तापर्याप्तयोर्भवनत्रयादीशानांतेषु पंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि चत्वारि । सानत्कुमारादिदशकल्पेषु नवविंशतिकादिद्वयं । आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतेषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । अनुदिशानुत्तरेषु मिथ्यादृष्टिर्नास्ति । अत्र प्रस्तुतगाथासूत्रं—

देवगतिमें निर्वृत्यपर्याप्त और पर्याप्त में भवनत्रिकसे ईशानपर्यन्त तो पचीस, छब्बीस, उनतीस, तीस ये चार स्थान बँधते हैं । और सानत्कुमार आदि दस स्वर्गोंमें उनतीस, तीस दो स्थान बँधते हैं । आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्यगति सहित उनतीसका ही बन्ध होता है । अनुदिश अनुत्तरोंमें मिथ्यादृष्टि नहीं होते । यहाँ प्रासंगिक गाथा—अपना गुणस्थान त्यागकर अनन्तर समयमें किस-किस गुणस्थानको जीव प्राप्त होता है, यह कहते हैं—

---

१. पृथ्वीकायादिचतुरिंद्रियावसानमाद पर्य्याप्तजीवंगळ्गेयुं तदपर्य्याप्तजीवंगळ्गे पेळ्द त्रयोविंशत्यादि पंचस्थानंगळे बंधयोग्यंगळप्पुदरिं बेरे पेळल्पट्टुदिल्ल ॥

चदुरेक्कदु पण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता।
तिण्णुवसमगा सत्ता तियतियतियदोण्णि गच्छंति ॥

मिथ्यादृष्टिजीवंगळु त्रयोविंशत्यादि मिथ्यात्वमं बिट्टनंतरसमयदोळु नाल्कुं गुणस्थानं पोद्दुवरें तें दोडे मिश्ररुमसंयतरुं देशसंयतरुमप्रमत्तरुगळुमप्परप्पुदरिंदं ॥ सासादनरुगळु सासादनकालावसानदनंतरसमयदोळु नियमदिदं मिथ्यात्वगुणस्थानमनों दने पोद्दुवरु ॥ मिश्ररुगळु मिश्रपरिणामदिदं परिच्युतरादनंतरसमयदोळु असंयतरुगळु मेणु मिथ्यादृष्टिगळक्कुमप्पुदरिंदं गुणस्थानद्वयप्राप्तरप्परु ॥ असंयतसम्यग्दृष्टिगळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रदेशसंयताप्रमत्तगुणस्थानपंचकमं पोद्दुवरप्पुदरिंदं पंचगुणस्थानप्राप्तरप्परु ॥ देशसंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रअसंयताप्रमत्तरुगळप्परप्पुदरिंदं पंचगुणस्थानप्राप्तरप्परु ॥ प्रमत्तसंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुगळुं मिश्ररुगळुमसंयतरुगळु देशसंयतरुगळुमप्रमत्तसंयतरुगळुमक्कुमप्पुदरिंदं। षड्गुणस्थानप्राप्तरप्परु ॥ अप्रमत्तसंयतरुगळु प्रमत्तरुमपूर्वकरणरुगळुं मरणमादोडे देवासंयतरुगळुमप्परप्पुदरिं। गुणस्थानत्रयप्राप्तरप्परु ॥ अपूर्वकरणरुगळुमनिवृत्तिकरणरुगळुं सूक्ष्मसांपरायसंयमिगळ मुपशमश्रेण्यारोहणावरोहणदोळु क्रमदिदमारोहणमुमवरोहणमुमप्पुदरिंदं। गुणस्थानद्वयमं मरणमादोडे देवासंयतरुगळप्परप्पुदरिनसंयतगुणस्थानमुमनितु मूरुं गुणस्थानंगळं पोद्दुगुमप्पुदरिंदं गुणस्थानत्रयप्राप्तरप्परु ॥ उपशांतकषायरुगळु गुणस्थानद्वयप्राप्तरुगळेयप्परें तें दोडे अवरवतरणदोळु सूक्ष्मसांपरायरुं मरणमादोडे देवासंयतरुगळेयप्परप्पुदरिंदं ॥ गत्यनुवाददोळु नारकमिथ्यादृष्टिगळु मिश्ररुमसंयतरुमप्परु।

चतुरेक्कदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता।
तिण्णुवसमगे संतेत्ति य तियतियदोण्णि गच्छंति ॥१॥

स्वगुणस्थानं त्यक्त्वानंतरसमये मिथ्यादृष्टयः सासादनप्रमत्तं वर्जित्वा मिश्राद्यप्रमत्तांतानि चत्वारि गुणस्थानानि गच्छंति। सासादनाः मिथ्यात्वमेव। मिश्रा मिथ्यात्वासंयताख्ये द्वे। असंयता देशसंयताश्च प्रमत्तहीनान्यप्रमत्तांतानि पंच पंच। प्रमत्ताः अप्रमत्तांतानि षट्। अप्रमत्ताः प्रमत्तापूर्वकरणे मरणे देवासंयतं च। अपूर्वकरणादित्र्युपशमकाः आरोहंत्यवरोहंति मरणे देवासंयतं चेति त्रीणि त्रीणि त्रीणि। उपशांतकषाया अवतरणे सूक्ष्मसांपरायं मरणे देवासंयतं चेति द्वे।

मिथ्यादृष्टी सासादन और प्रमत्त गुणस्थानको छोड़ अप्रमत्त पर्यन्त चार गुणस्थानोंको प्राप्त होता है। सासादन एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थानको ही प्राप्त होता है। मिश्र मिथ्यादृष्टि और असंयत इन दोको प्राप्त होता है। असंयत और देशसंयत प्रमत्तको छोड़ अप्रमत्त पर्यन्त पाँच गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं। प्रमत्त अप्रमत्त पर्यन्त छहको प्राप्त होता है। अप्रमत्त प्रमत्त और अपूर्वकरण गुणस्थानको प्राप्त होता है। मरण होनेपर असंयत देव होता है। अपूर्वकरण आदि तीन उपशमश्रेणिवाले ऊपरके गुणस्थानमें चढ़ते हैं, नीचेके गुणस्थानमें उतरते हैं और मरनेपर देव असंयत होते हैं। इस तरह तीनों तीन-तीन गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं। उपशान्तकषाय गिरनेपर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानको और मरनेपर देव असंयत होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सासादनरु मिथ्यादृष्टिगळेयप्परु । मिश्ररुगळ् मिथ्यादृष्टिगळुमसंयतरुगळुमप्परु । असंयतरु मिश्ररुं सासादनरुं मिथ्यादृष्टिगळुमप्परु । तिर्य्यंचरुगळोळु मिथ्यादृष्टिगळ् मिश्ररुमसंयतरु देशसंयतरुमप्परु । सासादनरुमिथ्यादृष्टिगळेयप्परु । मिश्ररुगळु मिथ्यादृष्टिगळुमसंयतरुमप्परु । असंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुं मिश्ररुं देशसंयतरुमप्परु । देशसंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुं मिश्ररुमसंयतरुमप्परु । मनुष्यगतिजरुगळोळ् मिथ्यादृष्टिगळ् मिश्ररुमसंयतरुं देशसंयतरुमप्रमत्तगळुमप्परु । सासादनरुगळु मिथ्यादृष्टिगळेयप्परु । मिश्ररुगळु मिथ्यादृष्टिगळुमसंयतरुमप्परु । असंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुं मिश्ररुं देशसंयतरुमप्रमत्तरप्परु ॥ देशसंयतरु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुं मिश्ररुमसंयतरुमप्रमत्तरुमप्परु ॥ प्रमत्तसंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुमिश्ररुमसंयतरुं देशसंयतरुमप्रमत्तरुमप्परु । अप्रमत्तसंयतरु केळगे प्रमत्तरुं मेले अपूर्व्वकरणरुं मरणमादोडे देवासंयतरुमप्परु । अपूर्व्वकरणरु आरोहणदोळनिवृत्तिकरणरुमवरोहणदोळप्रमत्तसंयतरुं मरणरहितारोहणप्रथमभागमल्लदतम्म गुणस्थानदोळारोहणावरोहणदोळ्ल्लियानुं मरणमादोडे देवासंयतरप्परु ॥ अनिवृत्तिकरणरारोहणदोळु सूक्ष्मसांपरायनुमवरोहणदोळपूर्व्वकरणनुं मरणमादोडे देवासंयतनुमप्परु । सूक्ष्मसांपरायनु आरोहणदोळुपशांतकषायनुमवरोहणदोळनिवृत्तिकरणनुं मरणमादोडे देवासंयतनुमक्कुं ॥ उपशांतकषायनु अवरोहणदोळु सूक्ष्मसांपरायनुं मरणमादोडे देवासंयतनुमक्कुं ॥ क्षपकश्रेणियोळारोहकरल्लदवरोहकरिल्लप्पुदरिंदं । मरणरहितरप्पुदरिंदमुमपूर्व्वकरणननिर्वृत्तिकरणनक्कु । मनि-

---

गत्यनुवादे तु नारकमिथ्यादृष्टयः मिश्रमसंयतं च । सासादनाः मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमेव । मिश्रा मिथ्यादृष्टयसंयतं च । असंयता मिश्रांतानि त्रीणि । तिर्यग्मिथ्यादृष्टयः मिश्रादिदेशसंयतांतानि । सासादना मिथ्यादृष्टिं । मिश्रा मिथ्यादृष्टयसंयतं च । असंयतांता देशसंयतांतानि । देशसंयता असंयतांतानि । मनुष्यमिथ्यादृष्टयः विना सासादनप्रमत्तमप्रमत्तांतानि । सासादना मिथ्यादृष्टिं । मिश्रा मिथ्यादृष्टयसंयतं च । असंयता विना प्रमत्तमप्रमत्तांतानि पंच । देशसंयताश्च तथा । प्रमत्ता अप्रमत्तांतानि । अप्रमत्ताः प्रमत्तमपूर्वकरणं मरणे देवासंयतं च । अपूर्वकरणाः आरोहणेऽनिवृत्तिकरणमवरोहणे अप्रमत्तं, आरोहकापूर्वकरणप्रथमभागादन्यत्र मरणे देवासंयतं च । अनिवृत्तिकरणा आरोहणे सूक्ष्मसांपरायमवरोहणेऽपूर्वकरणं मरणे देवासंयतं च । सूक्ष्मसांपराया आरोहणे उपशांतकषायमवरोहणेऽनिवृत्तिकरणं मरणे देवासंयतं च । उपशांत-

---

गतिकी अपेक्षा नारकी मिथ्यादृष्टि मिश्र और असंयतको, सासादन एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थानको, मिश्र मिथ्यादृष्टि और असंयत गुणस्थानको, असंयत मिश्र पर्यन्त तीन गुणस्थानोंको प्राप्त होता है। तिर्यंच मिथ्यादृष्टि मिश्रसे लेकर देशसंयत गुणस्थान तक प्राप्त होता है। सासादन मिथ्यादृष्टिको, मिश्र मिथ्यादृष्टि और असंयतको, असंयत देशसंयतपर्यन्त चारको, देशसंयत असंयत पर्यन्त चार गुणस्थानोंको प्राप्त होता है। मनुष्य मिथ्यादृष्टि सासादन और प्रमत्तको छोड़ अप्रमत्तपर्यन्त चारको, सासादन मिथ्यादृष्टिको, मिश्र मिथ्यादृष्टि और असंयतको, असंयत प्रमत्त बिना अप्रमत्त पर्यन्त पाँचको, देशसंयत प्रमत्त बिना अप्रमत्त पर्यन्त पाँचको, प्रमत्त अप्रमत्त पर्यन्त छहको, अप्रमत्त प्रमत्त और अपूर्वकरणको तथा मरण होनेपर देवअसंयतको, अपूर्वकरण चढ़नेपर अनिवृत्तिकरण-,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृत्तिकरणं सूक्ष्मसांपरायनक्कुं । सूक्ष्मसांपरायं क्षीणकषायनक्कुं । क्षीणकषायं सयोगकेवलियक्कुं । सयोगिकेवलि अयोगिकेवलियक्कुमयोगकेवलि सिद्धपरमेष्ठियक्कुं ।। देवगतिजरोळु मिथ्यादृष्टिगळु मिश्ररुमसंयतरुमप्परु । सासादनरु मिथ्यादृष्टिगळेयप्परु । मिश्ररुगळु मिथ्यादृष्टिगळुमसंयतरुगळुमप्परु । असंयतरुगळु मिथ्यादृष्टिगळुं सासादनरुं मिश्ररुमप्परु ।।

संज्ञिमार्ग्गणेयोळमाहारमार्ग्गणेयोळं सर्व्वनामकर्म्मबंधस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु ।। असंज्ञ्यनाहारमार्ग्गणेगळोळु त्रयोविंशत्यादिषट् स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । अल्लि सर्व्वपृथ्वीगळ नारकरुं संज्ञिपंचेंद्रिय तिर्य्यंचरुं सर्व्वमनुष्यरुं सर्व्वदिविजरुं संज्ञिगळप्परल्लि नरकगतियोळु नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २९ । ति म । ३० । ति । उ । म ति । तिर्य्यग्गतियोळु तीर्त्थाहारयुतबंधविकल्पस्थानंगळं कळेदु शेषतिर्य्यग्मनुष्यगतियुतबंधस्थानंगळु त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि । ति । च । पं । म । अ प । २६ । ए प । आ । उ । २८ । न दे । २९ । बि । ति । च । पं । म । ३० । बि । ति । च । पं । प उ ।। मनुष्यगतियोळु सर्व्वस्थानंगळुं बंधयोग्यंगळप्पुवु । २३ । ए अ । २५ । ए प । बि । ति । च । पं । म । अ प । २६ । ए प । आ उ । २८ । न । दे । २९ । बि । ति । च । पं । म । दे । ति । ३० । बि । ति । च । पं । प उ । म ति । दे । आ २ । ३१ । दे । आ ति । १ ।। देवगतियोळु पंचविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु । २५ । ए प । २६ । ए प । आ उ । २९ । ति म । ३० । ति उ । म ती । असंज्ञिमार्ग्गणे तिर्य्यग्गतियोळेयक्कुमल्लि । पृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मप्रत्येकवनस्पतिद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियमिनितुमसंज्ञिजीवंगळप्पुदरिंदमी असंज्ञिलब्ध्यपर्य्याप्तनिवृत्यपर्य्याप्तपर्य्याप्तजीवंगळ्गे बंधयोग्यंगळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळप्पुवु । २३ । ए अ । २५ । ए प ।

कषायमवरोहणेऽनिवृत्तिकरणं मरणे देवासंयतं च । उपशांतकषाया अवरोहणे सूक्ष्मसांपरायं मरणे देवासंयतं च । क्षपकश्रेण्यामारोहणमेव नावरोहणमरणे तेनापूर्वकरणोऽनिवृत्तिकरणमनिवृत्तिकरणः सूक्ष्मसांपरायं, सूक्ष्मसांपरायः क्षीणकषायं, क्षीणकषायः सयोगकेवलिनं, सयोगकेवली अयोगकेवलिनं, अयोगकेवली सिद्धं ।

देवमिथ्यादृष्टयः मिश्रमसयतं च, सासादनाः मिथ्यादृष्टिं, मिश्रा मिथ्यादृष्ट्यसंयतं च, असंयता मिश्रांतानि, संज्ञ्याहारमार्गणयोर्नामबंधस्थानानि सर्वाणि, असंज्ञ्यनाहारयोस्त्रयोविंशतिकादीनि षट् । तत्र

को उतरनेपर अप्रमत्तको और मरनेपर देवअसंयतको, अनिवृत्तिकरण चढ़नेपर सूक्ष्मसाम्पराय को, उतरनेपर अपूर्वकरणको, मरनेपर देवअसंयतको, सूक्ष्मसाम्पराय चढ़नेपर उपशान्तकषायको, उतरनेपर अनिवृत्तिकरणको मरनेपर देव असंयतको, उपशान्तकषाय उतरनेपर सूक्ष्मसाम्परायको और मरनेपर देवअसंयतको प्राप्त होता है। क्षपकश्रेणिमें चढ़ना ही है, उतरना या मरण नहीं होता। अतः अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणको, अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसाम्परायको, सूक्ष्मसाम्पराय क्षीणकषायको, क्षीणकषाय सयोगीको, सयोगी अयोगीको और अयोगी सिद्धपदको प्राप्त होता है।

देवमिथ्यादृष्टि मिश्र और असंयतको, सासादन मिथ्यादृष्टिको, मिश्र मिथ्यादृष्टि और असंयतको, असंयत मिश्र पर्यन्त तीनको प्राप्त होता है। संज्ञी और आहारमार्गणामें नामकर्मके सब बन्धस्थान होते हैं। असंज्ञी और अनाहारकमें तेईस आदि छह होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बि। ति। च। पं। म। अ प। २६। ए प। आ। उ। २८। न। दे। २९। बि। ति। च। पं। म। ३०। बि। ति। च। पं। प उ॥ आहारमार्ग्गणे [1]नोकर्म्महारविवक्षेयिनप्पुदरिंदं चतुर्ग्गतिसाधारणमक्कुमल्लि। नारकरोळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। २९। ति। म। ३०। ति उ। म ती॥ तिर्य्यग्गतियोळु पृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणवनस्पति-बादरसूक्ष्मप्रत्येकवनस्पतिविकलत्रयपंचेंद्रियासंज्ञिसंज्ञिगळिविनितुमाहारिगळप्पुदरिंदं त्रयोविंश-त्यादिषट्स्थानंगळुं बंधयोग्यंगळप्पुवु। २३। ए अ। २५। ए प। बि। ति। च। पं। म। अ प। २६। ए प। आ। उ। २८। न। दे। २९। बि। ति। च। प। म। ३०। बि। ति। च। पं। प उ॥ मनुष्यगतियोळु मनुष्यरेल्लरुगळुमाहारिगळु यथायोग्यमागि त्रयोविंशत्यादि सर्व्वस्थानंगळं कट्टुवरु। २३। ए अ। २५। ए प। बि। ति। च। पं। म। अ प। २६। ए प। आ उ। २८। न। दे। २९। बि। ति। च। पं। म। दे ती। ३०। बि। ति। च। पं। प उ। दे आ। ३१। दे आ। २। ती। १॥ देवगतियोळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळं कट्टुवरु। २९। ति। म। ३०। ति। उ। म ती॥ अनाहारमार्ग्गणे चतुर्ग्गतिसाधारणमप्पुदरिंदं विग्रहगतिय नारकानाहारकरोळु नवविंशत्यादिद्विस्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। २९। ति। म। ३०। ति उ। म ती। एकान्नविंशतिविधतिर्य्यंचानाहारकरोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। २३। ए अ। २५। ए प। बि। ति। च। पं। म। अ प। २६। ए प। आ उ। २८। दे। इदु असंयता-

संज्ञिनि नारके नवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ म ती। तिरश्चि तीर्थाहारवर्जिताद्यानि षट्, मनुष्ये सर्वाणि, देवेऽष्टाविंशतिकं विना पंचविंशतिकादीनि चत्वारि २५ ए प २६ ए प आउ २९ ति म ३० ति उ म ती। असंज्ञिमार्गणायां लब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्तपर्याप्तबादरसूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणप्रत्येकद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियेषु तीर्थाहारवर्जिताद्यानि षट्। आहारमार्गणायां देवनारकेषु तन्नवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ म ती। तिर्यक्षु त्रयोविंशतिकादीनि षट्। मनुष्येषु सर्वाणि। अनाहारमार्गणायां विग्रहगतौ देवनारकेषु ते द्वे २९ ति म ३० ति उ म ती। एकान्नविंशतिविधतिर्यक्षु त्रयोविंशतिकादीनि षट् २३ ए अ, २५ ए प बि ति च पं म

संज्ञी मार्गणामें नारकीमें उनतीस, तीस दो बन्धस्थान हैं। तिर्यंचमें तीर्थंकर और आहारकसे रहित छह बन्धस्थान हैं। मनुष्यमें सब बन्धस्थान हैं। देवोंमें अठाईसके बिना पच्चीस आदि चार बन्धस्थान हैं—एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित पच्चीस और छब्बीस, तिर्यंच मनुष्यगति सहित उनतीस, तिर्यंच उद्योत सहित या मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीस।

असंज्ञी मार्गणामें लब्ध्यपर्याप्त, निर्वृत्त्यपर्याप्त, पर्याप्त, बादर, सूक्ष्म, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण, प्रत्येक, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियमें तीर्थंकर आहारक रहित आदिके छह स्थान होते हैं।

आहारमार्गणामें देवों और नारकियोंमें उनतीस और तीस दो स्थान हैं। तिर्यंचोंमें तेईस आदि छह हैं। मनुष्योंमें सब हैं। अनाहारमार्गणामें, विग्रहगतिमें, देवों और नारकियोंमें उनतीस और तीस दो स्थान हैं। उन्नीस प्रकारके तिर्यंचोंमें तेईस आदि छह हैं। उनमें-से

1. °कर्म्माहार°।

पेळ्वेयिवक्कुं। २९। बि। ति। च। पं। म। ३०। बि। ति। च। पं। प उ॥ मनुष्यानाहारकरोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधयोग्यंगळप्पुवु। २३। ए अ। २५। ए प। बि। ति। च। पं। म। अ। प। २६। ए प। आ उ। २८। दे। २९। बि। ति। च। पं। म। दे ती। ३०। बि। ति। च। पं। प उ॥ देवानाहारकरोळु नवविंशत्यादि द्विस्थानंगळ बंधयोग्यंगळप्पुवु। २९। ति। म। ३०। ति। उ। म ती। यितु नामकर्म्मबंधस्थानंगळु गत्यादिमार्ग्गणेगळोळु योजिसल्पट्टुवु॥

तत्वदरुचि सम्यक्त्वं तत्वंगळनोळिळ्ळतागियरिउदु बोधं। तत्वं तन्नोळु नेरदिरे सत्वंगळ नोविनंगळडदुवे चरित्रं॥

अनंतरं नामबंधस्थानंगळोळु पुनरुक्त भंगंगळं तोरिदपरु :—

> णिरयादिजुदट्ठाणे भंगेणप्पप्पणम्मि ठाणम्मि।
> ठविदूण मिच्छभंगे सासणभंगा हु अत्थित्ति॥५५२॥

नरकादियुतस्थानानि भंगेनात्मात्मनि स्थाने स्थापयित्वा मिथ्यादृष्टि भंगे सासादन भंगाः खलु संतीति॥

नरकगत्यादि युतस्थानंगळनु तंतम्म भंगगळु सहितमागि तंतम्म गुणस्थानदोळु स्थापिसि नोडुत्तं विरलु मिथ्यादृष्टिय बंधस्थानंगळ भंगंगळोळुसासादनबंधस्थानंगळ भंगंगळु टें दितु मत्तं :—

> अविरदभंगे मिस्स य देसपमत्ताण सव्वभंगा हु।
> अत्थित्ति ते दु अवणिय मिच्छाविरदापमादेसु॥५५३॥

अविरतभंगे मिश्रदेशसंयतप्रमत्तानां सर्व्वभंगाः खलु संतीति तान् स्थापनीय मिथ्यादृष्ट्य-विरताप्रमादेषु॥

अ, २६ ए प आ उ, २८ दे। इदमेकसंयतं प्रति २९ वि ति च पं म। ३० विति च पं प उ। मनुष्येषु त्रयोविंशतिकादीनि षट् २३ ए अ २५ ए अ २५ ए प वि ति च पं म अ २६ ए प आउ २८ दे २९ वि ति च पं म दे ती ३० वि ति च पं उ। तत्त्वरुचिः सम्यक्त्वं। तत्त्वानां सम्यग्ज्ञानं बोधः। तद्द्वयपूर्वकं जीवाविराधनं चारित्रं॥५५१॥ अथापुनरुक्तभंगानाह—

नारकादिगतियुतस्थानानि स्वस्वभंगैः सह स्वस्वगुणस्थाने संस्थाप्य तन्मिथ्यादृष्टिबंधस्थानभंगेषु

अठाईस (देवगति सहित) असंयतमें ही होता है। मनुष्योंमें तेईस आदि छह हैं। तत्त्व-रुचि सम्यक्त्व है। तत्त्वोंका सम्यक्ज्ञान बोध है। उन दोनोंके साथ जीवोंकी विराधना न करना चारित्र है॥५५१॥

आगे अपुनरुक्त भंग कहते हैं—

नरक आदि गति सहित स्थानोंको अपने-अपने भंगोंके साथ अपने-अपने गुणस्थानमें स्थापित करो। तो मिथ्यादृष्टिके बन्धस्थानोंके भंगमें सासादनके बन्धस्थानोंके भंग आ

---

१. यिल्लियनाहारदोळु कार्म्मणकाययोगमक्कुं। कम्मे उरालमिस्सं वा॥ ओराळे वा मिस्से ण हि सुरणिर-याउहारणिरयदुगं। मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थी॥ एंदु पेळवुदरिं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंयतनभंगंगळोळु मिश्रदेशसंयत प्रमत्तरुगळ बंधस्थानंगळ सर्व्वभंगंगळमुंटें दितु तान् आ सासादनमिश्रदेशसंयतप्रमत्तरुगळ बंधस्थानंगळ भंगंगळं कळेदु मिथ्यादृष्टि अविरताप्रमादरुगळ बंधस्थानंगळोळु भुजाकारादिबंधंगळप्पुवें दरियल्पडुगुं । संदृष्टि :—मिथ्यादृष्टिय नरकगतियुतस्थानं २८/१ न तिर्य्यग्गतियुतस्थानंगळु २३/१ २५/८ २६/८ २९/४६०८ ३०/४६०८ मनुष्यगतियुतस्थानंगळु— २९/४६०८ २५/१ देवगतियुतस्थानं २८/८ सासादनंगे नरकगतियुतस्थानबंधं शून्यमक्कुं । तिर्य्यग्गतियुतस्थानंगळु २९/३२०० ३०/३२०० मनुष्यगतियुतबंधस्थानं २९/३२०० म देवगतियुतबंधस्थानं २८/८ यितु सासादनन मूरुं गतियुतबंधस्थानंगळोळु संभविसुव भंगंगळनितुं मिथ्यादृष्टिय चतुर्ग्गतिय बंधस्थानंगळ भंगंगळोळु संभविसुववु । मत्तमसंयतंगे नरकगतियुतबंधस्थानमुं तिर्य्यग्गतियुतबंधस्थानंगळुं संभविसवु । मनुष्यगतियुतबंधस्थानंगळु २९/८ ३०/८ देवगतियुतस्थानंगळु २८/८ २९/८ मिवरोळु मिश्रंगे नरकगतियुतबंधस्थानंगळुं शून्यंगळु । मनुष्यगतियुतबंधस्थानं २९/८ म देवगतियुतबंधस्थानं २८/८ ई मिश्रनगतिद्वययुतद्विस्थानंगळ भंगंगळु देशसंयतंगे नरकगतियुतबंधस्थानंगळुं तिर्यग्गतियुतबंधस्थानंगळुं मनुष्यगतियुतबंधस्थानंगळु

सासादनबंधस्थानभंगाः खलु संतीति कारणात् । पुनः असंयतबंधस्थानभंगेषु मिश्रदेशसंयतप्रमत्तबंधस्थानसर्वभंगाः खलु संतीति कारणाच्च तान् सासादनभंगान् मिथ्यादृष्टिभंगेषु मिश्रदेशसंयतप्रमत्तभंगान् असंयतभंगेषु चापनीय मिथ्यादृष्टचविरताप्रमत्तेषु बंधस्थानभंगा भवंति ।

संदृष्टिः—मिथ्यादृष्टेर्नरक २८/१ तिर्यग् २३/१ २५/८ २६/८ २९/४६०८ ३०/४६०८ मनुष्य २९/४६०८ २५/१ देवगतियुतानि २८/८ । सासादनस्य नरकगतियुतं नास्ति । तिर्यग् २९/३२०० ३०/३२०० मनुष्य २९/३२०० देवगतियुतानि

जाते हैं। और असंयतके बन्धस्थानोंके भंगोंमें मिश्र, देशसंयत और प्रमत्तके भंग आ जाते हैं। क्योंकि उनमें परस्परमें समानता है। अतः मिथ्यादृष्टिके भंगोंमें सासादनके भंगोंको और असंयतके भंगोंमें मिश्र, देशसंयत और प्रमत्तके भंगोंको घटाकर मिथ्यादृष्टि अविरत और अप्रमत्तमें बन्धस्थानोंके भंग होते हैं। मिथ्यादृष्टिमें नरकगतियुक्त अठाईसके स्थानका भंग एक है। तिर्यंचगतियुक्त तेईसका एक, पचीसके आठ, छब्बीसके आठ, उनतीसके छियालीस सौ आठ और तीसके छियालीस सौ आठ भंग हैं। मनुष्यगतियुक्त पच्चीसमें एक और उन्तीसमें छियालीस सौ आठ भंग हैं। देवगति सहित अठाईसमें आठ भंग हैं। सासादनमें नरकगति सहित भंग नहीं हैं। तिर्यंचगति सहित उनतीसमें बत्तीस सौ, तीसमें बत्तीस सौ, मनुष्यगति सहित उनतीसमें बत्तीस सौ, देवगति सहित अठाईसमें आठ भंग

शून्यमक्कुं । देवगतियुतबंधंगळु २८ २९ ई देशसंयतन देवगतियुतबंधद्विस्थानंगळ
८ ८

भंगंगळुं प्रमत्तसंयतंगमा देशसंयतनंते नरकगत्यादि गतित्रययुतबंधस्थानंगळु शून्यमक्कुं । देवगतियुतबंधस्थानंगळु २८ २९ ई प्रमत्त देवगतियुत द्विस्थानभंगंगळुमसंयतन बंधस्थानंगळोळु
८ ८

संभविसुगुमदु कारणमागियासासादन बंधस्थानंगळ भंगंगळुमनी मिश्रदेशसंयतप्रमत्तरुगळ बंधस्थानभंगंगळुमं कळेदु मिथ्यादृष्टिय असंयतन प्रमादरहितर बंधस्थानंगळोळु भुजाकारादि चतुर्ब्बंधस्थानंगळोळु भंगंगळप्पुवेंबुदत्थं ॥

आ भुजाकारादिबंधंगळु स्वस्थानपरस्थान सर्व्वपरस्थानंगळोळु संभविसुगुमेंदु पेळदपरु :—

भुजगारा अप्पदरा अवट्ठिदावि य सभंगसंजुत्ता ।
सव्वपरट्ठाणेण य णेदव्वा ठाणबंधम्मि ॥५५४॥

भुजाकारा अल्पतरा अवस्थिता अपि च स्वभंगसंयुक्ताः । सर्व्वपरस्थानेन च नेतव्याः स्थानबंधे ॥

भुजाकारबंधंगळुं अल्पतरबंधंगळु अवस्थितबंधंगळुं चशब्ददिंदमवक्तव्यबंधंगळुं स्वस्वभंगसंयुक्तंगळागियें नामस्थानबंधदोळु स्वस्थानबंधदोडनेयुं परस्थानबंधदोडनेयुं सर्व्वपरस्थानबंधदोडनेयुं नडेसल्पडुववु ॥

स्वस्थानपरस्थानसर्व्वपरस्थानंगळेंबुवें तें दोडे पेळदपरु :—

---

२८ । मिश्रासंयतयोर्न च नरकतिर्यग्गतियुतानि । मिश्रस्य मनुष्य २९ देवगतियुते २८ असंयतस्य मनुष्य
८ ८ ८

२९ ३० देव २८ २९ गतियुतानि । देशसंयतस्य प्रमत्तस्य च केवलदेवगतियुते २८ २९ ॥५५२-५५३॥
८ ८ ८ ८ ८ ८

तद्बंधा भुजाकारा अल्पतरा अवस्थिताः, चशब्दादवक्तव्याश्चेति चत्वारः, स्वस्वभंगसंयुक्ता नामस्थानबंधविषये स्वस्थानेन परस्थानेन सर्वपरस्थानेन च सह नेतव्याः ॥५५४॥ तानि स्वस्थानादीनि लक्षयति—

हैं । मिश्र और असंयतमें नरकगति और तिर्यञ्चगति सहित स्थान नहीं हैं । मिश्रमें मनुष्यगति सहित उनतीस और देवगति सहित अठाईसके आठ-आठ भंग हैं । असंयतमें मनुष्यगति सहित उनतीस, तीस और देवगति सहित अठाईस, उनतीसके आठ-आठ भंग हैं । देशसंयत और प्रमत्तमें केवल देवगति सहित अठाईस, उनतीसके आठ-आठ भंग हैं ॥५५२-५५३॥

विशेष—पं. टोडरमलजीने अपनी टीकामें मिश्रमें मनुष्यगतियुत् उनतीसके तथा असंयतमें मनुष्ययुत् उनतीस-तीसके और देवगतियुत् अठाईस-उनतीसके चार-चार भंग लिखे हैं । और देवगतियुत् अठाईस, उनतीस, उनतीस, तीस इन चारोंके आठ-आठ भंग लिखे हैं । कलकत्तासे मुद्रित संस्करणमें इसपर टिप्पणी भी है कि कुछ पाठ संस्कृत टीकाके पाठसे अधिक प्रतीत होता है ।

पूर्वोक्त बन्धके भुजकार अल्पतर अवस्थित और 'च' शब्दसे अवक्तव्य इस तरह चार प्रकार हैं । अपने-अपने भंगोंसे संयुक्त नामकर्मके बन्धस्थानोंमें स्वस्थान, परस्थान और सर्वपरस्थानके साथ लाने चाहिए ॥५५४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पपरोभयठाणे बंधट्ठाणाण जो दु बंधस्स ।
सट्ठाण परट्ठाणं सव्वपरट्ठाणमिदि सण्णा ॥५५५॥

आत्मपरोभयस्थाने बंधस्थानानां यस्तु बंधस्य । स्वस्थानपरस्थानं सर्व्वपरस्थान मिति संज्ञा ॥

आत्मपरोभयस्थाने मिथ्यादृष्टयसंयताप्रमादरुगळ आत्म स्वस्वगुणस्थानदल्लियुं, पर स्वस्व-गुणस्थानमं त्यजिसि परगुणस्थानदल्लियुं, उभयस्थाने परगति परगुणस्थानदलियुमितु त्रिस्थान-दोळमा मिथ्यादृष्टयसंयताप्रमादरुगळ त्रयोविंशत्यादिबंधस्थानंगळसंबंधि भुजाकाराल्पतरावस्थि-तावक्तव्यरूपमप्प यस्तु बंधस्तस्य आउदोंदु बंधमा बंधक्कें क्रमदिदं स्वस्थान भुजाकारादिबंधमें दुं परस्थानभुजाकारादिबंधमें दुं सर्व्वपरस्थानभुजाकारादिबंधमें दुं संज्ञेयक्कुं ॥

अनंतरं मिथ्यादृष्टयादि स्वस्वगुणस्थानस्थित जीवंगळगे स्वस्वगुणस्थानच्युतियागुत्तं विरलें नितें नितु गुणस्थानप्राप्तियक्कुमें दोडे पेळदपरु :—

चदुरेक्कदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता ।
तिसु उवसमगे संतेति य तिय तिय दोण्णि गच्छंति ॥५५६॥

चतुरेकद्वि पंच पंच च षट् त्रिक स्थानान्यप्रमत्तांतानि । त्रिषूपशमकेषु शांते त्रिक त्रिक त्रिक द्वि गच्छंति ॥

मिथ्यादृष्टि जीवं नाल्कु गुणस्थानंगळं पोद्दुगुं । सासादननोंदे गुणस्थानमनेय्दुगुं । मिश्रनेरडे गुणस्थानमनेय्दुगुं । असंयतनुं देशसंयतनुमय्दु मय्दु गुणस्थानंगळनेय्दुवरु । प्रमत्तनारु गुणस्थानंगळनेय्दुगुं । अप्रमत्तं मूरुं गुणस्थाननंगळनेय्दुगुं । अपूर्व्वकरणादि मूवरुमुपशमकरुं प्रत्येकं मूरुं मूरुं गुणस्थानंगळं पोद्दुगुं । उपशांतकषायनेरडे गुणस्थानंगळं पोद्दुगुं ॥

आत्मस्थानं स्वगुणस्थानं, परस्थानं परगुणस्थानं, उभयस्थानं परगतिपरगुणस्थानं । अस्मिंस्त्रये यस्तु मिथ्यादृष्टचसंयताप्रमत्तबंधस्थानसंबंधी भुजाकारादिबंधः स क्रमेण स्वस्थानभुजाकारादिः परस्थानभुजाकारादिः सर्वपरस्थानभुजाकारादिरितिसंज्ञः स्यात् ॥५५५॥

मिथ्यादृष्टयः स्वस्वगुणस्थानं त्यक्त्वा अप्रमत्तांताः क्रमेण चत्वार्येकं द्वे पंच पंच षट् त्रीणि गुण-स्थानानि गच्छंति । अपूर्वकरणादित्र्युपशमकास्त्रीणि त्रीणि, उपशांतकषाया द्वे । ॥५५६॥

स्वस्थान आदिका लक्षण कहते हैं—

आत्मस्थान अर्थात् विवक्षित अपना गुणस्थान और परस्थान अर्थात् विवक्षित गुणस्थानसे अन्य गुणस्थान तथा उभयस्थान अर्थात् अन्यगति और अन्यगुणस्थान, इन तीनोंमें जो मिथ्यादृष्टि, असंयत और अप्रमत्तके बन्धस्थान सम्बन्धी भुजकारादि बन्ध हैं उनकी क्रमसे स्वस्थान भुजकार आदि परस्थान भुजकार आदि और सर्वपरस्थान भुजकारादि संज्ञा है ॥५५५॥

मिथ्यादृष्टि आदि अपने-अपने गुणस्थानको छोड़कर अप्रमत्त गुणस्थान पर्यन्त क्रमसे चार, एक, दो, पाँच, पाँच, छह और तीन गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं। अपूर्वकरण आदि तीन उपशमश्रेणिवाले तीन-तीनको और उपशान्त कषायवाले दो गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं ॥५५६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई संख्याविषयगुणस्थानंगळं पेळदपरु :—

सासणपमत्तवज्जं अपमत्तंतं समल्लियइ मिच्छो ।
मिच्छत्तं बिदियगुणो मिस्सो पढमं चउत्थं च ॥५५७॥

सासादनप्रमत्तवर्ज्याप्रमत्तांतं समाश्रयति । मिथ्यादृष्टिर्म्मिथ्यात्वं द्वितीयगुणः मिश्रः प्रथमं चतुर्थं च ॥

सासादनप्रमत्तगुणस्थानद्वयवर्ज्जितमप्प मिश्राद्यप्रमत्तांतगुणस्थानचतुष्टयमं मिथ्यादृष्टि-जीवं समाश्रयिसुगुं । द्वितीयो गुणो यस्य स द्वितीयगुणः सासादनः सासादनं मिथ्यात्वमं समाश्रयि-सुगुं । मिश्रः मिश्रपरिणामिजीवं प्रथमं मिथ्यात्वमं चतुर्थं असंयतगुणस्थानमुमं समाश्रयिसुगुं ॥

अविरदसम्मो देसो पमत्तपरिहीणमप्पमत्तंतं ।
छट्ठाणाणि पमत्तो छट्ठगुणं अप्पमत्तो दु ॥५५८॥

अविरतसम्यग्दृष्टिर्द्देशविरतः प्रमत्तपरिहीनमप्रमत्तांतं । षट्स्थानानि प्रमत्तः षष्ठगुणम-प्रमत्तस्तु ॥

अविरतनुं देशविरतनुं प्रमत्तपरिहीनमप्रमत्तांतं पंचगुणस्थानंगळं समाश्रयिसुवरु । प्रमत्तसंयतनप्रमत्तांतं षट्स्थानंगळं समाश्रयिसुगुं । अप्रमत्तस्तु अप्रमत्तनुं षष्ठगुणस्थानमुमं तु शब्ददिदमुपशमक्षपकश्रेण्यारोहणदोळ पूर्व्वकरणगुणस्थानमुमं मरणमादोडे देवासंयतगुणस्थानमु-मनंतु गुणस्थानत्रितयमं समाश्रयिसुगुं ॥

उवसामगा दु सेढिं आरोहंति य पडंति य कमेण ।
उवसामगेसु मरिदो देवतमत्तं समल्लियइ ॥५५९॥

उपशमकास्तु श्रेणिमारोहंति च पतंति च क्रमेण । उपशमकेषु मृतो देवतमत्वं समाश्रयति ॥

तानि गुणस्थानानि कानीति चेदाह—

मिथ्यादृष्टिः सासादनप्रमत्तं वजित्वा मिश्राद्यप्रमत्तांतानि चत्वारि गुणस्थानानि समाश्रयति । द्वितीयगुणः सासादनः मिथ्यात्वं । मिश्रः प्रथमं चतुर्थं च । अविरतो देशविरतश्च प्रमत्तपरिहीनाप्रमत्तांतानि पंच । प्रमत्तः—अप्रमत्तांतानि षट् । अप्रमत्तः षष्ठं । तुशब्दात् उपशमकक्षपकापूर्वकरणं देवासंयतं च ॥५५७-५५८॥

उन गुणस्थानोंको कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि सासादन और प्रमत्तको छोड़ मिश्रसे अप्रमत्त पर्यन्त गुणस्थानोंको प्राप्त होता है। दूसरे सासादन गुणस्थानवर्ती मिथ्यादृष्टि गुणस्थानको ही प्राप्त होता है। मिश्र पहले और चौथे गुण स्थानको प्राप्त होता है। असंयत और देशसंयत प्रमत्त बिना अप्रमत्त पर्यन्त पाँच-पाँच ही गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं। प्रमत्त अप्रमत्त पर्यन्त छह गुण-स्थानोंको प्राप्त होता है। अप्रमत्त छठेको और 'तु' शब्दसे उपशमक क्षपक अपूर्वकरणको और मरण होनेपर देव असंयतको प्राप्त होता है ॥५५७-५५८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपूर्व्वकरणाद्युपशमकरुगळुपशमश्रेणियनारोहणमुमनवरोहणमुमं क्रमदिदं माळ्परु । उपशमकरोळु मृतनादातं देवमहर्द्धिकत्वमं समाश्रयिसुगुमंतादोडे मरणमुपशमश्रेणियोळेल्लेडेयोळं संभविसुगुमें'देंदोडे पेळदपरु :—

मिस्सा आहारस्स य खवगा चडमाण पढमपुव्वा य ।
पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ॥५६०॥

मिश्रा आहारस्य च क्षपका आरुह्यमाण प्रथमाऽपूर्व्वाश्च । प्रथमोपशमसम्यक्त्वास्तमस्तमोगुणप्रतिपन्नाश्च न म्रियंते ॥

मिश्राः मिश्रगुणस्थानर्वात्तिगळुं आहारस्य च नोकर्म्माहार[1] मिश्रकाययोगिगळं क्षपकाः क्षपकरुगळुं आरोहत्प्रथमापूर्व्वाश्च उपशमश्रेण्यारूढप्रथमभागापूर्व्वकरणरुं प्रथमोपशमसम्यक्त्वाः प्रथमोपशमसम्यक्त्वमनुळ्ळवरुं तमस्तमोगुणप्रतिपन्नाश्च महातमःप्रभेयोळाद सासादनमिश्रासंयतरें'ब गुणप्रतिपन्नरुगळुं न म्रियंते सायरु ।

अणसंजोजिदमिच्छे मुहुत्त अंतोत्ति णत्थि मरणं तु ।
कदकरणिज्जं जाव दु सव्वपरट्ठाण अत्थपदा ॥५६१॥

अनंतानुबंधीनि विसंयोज्य मिथ्यात्वं गते अंतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं नास्ति मरणं तु । कृतकरणीयं यावत्सर्व्वपरस्थानाऽर्थपदानि ॥

अनंतानुबंधिकषायंगळं विसंयोजिसि मिथ्यात्वमं पोर्द्दिदंतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं मरणमिल्ल । दर्शनमोहक्षपकंगमें'न्नेवरं कृतकृत्यनल्लन्नेवरं मरणमिल्ल । कृतकृत्यंगे बद्धायुष्यनपेक्षेयिदं सर्व्वपर-

अपूर्वकरणाद्युपशामका उपशमश्रेणि क्रमेणारोहंत्यवरोहंति च । उपशामकेषु मृता देवमहर्धिकत्वं समाश्रयंति ॥५५९॥ उपशमश्रेण्यां क्व म्रियंते ? इति चेदाह—

मिश्रगुणस्थानवर्तिन आहारकमिश्रकाययोगिनः क्षपका आरुह्यमाणोपशमकापूर्वकरणप्रथमभागाः प्रथमोपशमसम्यक्त्वाः महातमःप्रभोत्पन्नसासादनमिश्रासंयताश्च न म्रियन्ते ॥५६०॥

विसंयोज्यानन्तानुबन्धिचतुष्कं मिथ्यात्वं प्राप्तोऽन्तर्मुहूर्तं यावत् दर्शनमोहक्षपकश्च कृतकृत्यत्वं यावत्तावन्न

अपूर्वकरण आदि उपशमश्रेणिवाले उपशमश्रेणिपर क्रमसे चढ़ते हैं और क्रमसे उतरते हैं। उपशमश्रेणिमें मरे हुए महर्द्धिक देव होते हैं ॥५५९॥

उपशमश्रेणिमें कहाँ मरण होता है, यह कहते हैं—

मिश्रगुणस्थानवर्ती, निर्वृत्यपर्याप्त अवस्थारूप मिश्रकाययोगी, क्षपक श्रेणिवाले, चढ़ते अपूर्वकरणके उपशमकके प्रथम भागवाले और प्रथमोपशम सम्यक्त्वके धारी तथा सातवे नरकमें सासादन, मिश्र और असंयत नारकी मरणको प्राप्त नहीं होते ॥५६०॥

अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन कर जो मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसका एक अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त मरण नहीं होता। दर्शनमोहका क्षय करनेवाला जबतक कृतकृत्य नहीं होता तबतक मरण नहीं होता ॥५६१॥

---

१. नोकर्म्मवेनिसिद आहारकमिश्रकाययोगिगळेंबुदर्थं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानार्त्थंवंगळु सर्व्वपरस्थानप्रयोजनस्थानंगळु पेळल्पडुगुमवावुवें दोडे :—

देवेसु देवमणुवे सुरणरतिरिये चउग्गईसुंपि ।
कदकरणिज्जुप्पत्ती कमसो अंतोमुहुत्तेण ॥५६२॥

देवेषु देवमनुष्ययोः सुरनरतिर्य्यक्षु चतुर्गतिष्वपि । कृतकरणीयोत्पत्तिः क्रमशोऽतर्म्मुहूर्त्तेन ॥

कृतकृत्यवेदककालमंतर्म्मुहूर्त्तप्रमितमक्कुमा कालमं चतुर्भागमं माडिदल्लि क्रमदिदं प्रथमभागांतर्म्मुहूर्त्तदिदं मरणमादोडे दिविजरोळुत्पत्तियक्कुं । द्वितीयभागांतर्म्मुहूर्त्तदिदं मरणमादोडे दिविजरोळुत्पत्तियक्कुं । द्वितीयभागांतर्म्मुहूर्त्तदिदंमरणमादोडे देवमनुष्ययोः देवमनुष्यरोळपुट्टुगुं । तृतीयभागांतर्म्मुहूर्त्तदोळु मरणमादोडे देवमनुष्यतिर्य्यक्षु देवमनुष्यतिर्य्यग्गतिगळोळु पुट्टुगुं । चतुर्त्थभागांतर्म्मुहूर्त्तस्थानदोळमरणमादोड चतुर्ग्गतिगळोळपुट्पत्तियक्कुं ॥

अनंतरं भुजाकारादिस्थानबंधमं पेळ्दपरु :—

तिविहो दु ठाणबंधो भुजगारप्पदरवट्ठिदो पढमो ।
अप्पं बंधंतो बहुबंधे बिदियो दु विवरीयो ॥५६३॥

त्रिविधस्तु स्थानबंधो भुजाकारात्पतरावस्थितः प्रथमः । अल्पं बध्नन् बहुबंधे द्वितीयस्तु विपरीतः ॥

तु मत्ते स्थानबंधः नामकर्म्मप्रकृतिस्थानबंधं त्रिविधः त्रिविधमक्कुमें तें दोडे भुजाकाराल्पतरावस्थितात् भेदात् भुजाकारादिगळ बंधभेदवत्तणिदमल्लि प्रथमः मोदल भुजाकारबंधमाव प्रकारदिदमें दोडे अल्पं बध्नन् बहुबंधे अल्पप्रकृतिगळं कट्टुत्तं बहुप्रकृतिबंधमागुत्तं विरलु संभविसुगुं ।

म्रियते ॥५६१॥ कृतकृत्यं बद्धायुष्कं प्रति सर्वपरस्थानानामर्थवन्ति पदान्याह—

कृतकृत्यवेदककालोऽन्तर्मुहूर्तः । तस्मिंश्चतुर्भागीकृते क्रमेण प्रथमभागान्तर्मुहूर्तेन मृतो दिविजे जायते । द्वितीयभागान्तर्मुहूर्तेन मृतो देवमनुष्ययोः, तृतीयभागान्तर्मुहूर्तेन मृतो देवमनुष्यतिर्यक्षु, चतुर्थभागान्तर्मुहूर्तेन मृतश्चतुर्गतिष्वप्येकत्र ॥६२॥

तु—पुनः नामस्थानबन्धस्त्रिधा । भुजाकारोऽल्पतरोऽवस्थितश्चेति । तत्र प्रथमोऽल्पप्रकृतिकं बध्नतो

कृतकृत्य होनेके पश्चात् मरता है सो बद्धायु कृतकृत्यके प्रति पूर्वोक्त तीन स्थानोंमें सर्व परस्थानोंके अर्थवान पद कहते हैं —

कृतकृत्यवेदकका काल अन्तर्मुहूर्त है। उसके चार भाग करें। क्रमसे अन्तर्मुहूर्तके प्रथम भागमें मरकर देवगतिमें उत्पन्न होता है। दूसरे भागमें मरा देवों या मनुष्योंमें उत्पन्न होता है। तीसरे भागमें मरा देव, मनुष्य या तिर्यंचोंमें उत्पन्न होता है। चौथे भागमें मरा देव, मनुष्य, तिर्यंच या नारकी होता है ॥५६२॥

नामकर्मके बन्धस्थानके तीन प्रकार हैं—भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित। पहले थोड़ी प्रकृतियोंको बाँधकर बहुत प्रकृतियोंको बाँधनेपर भुजकार बन्ध होता है। पहले बहुत

१. नाल्कु गतिगळु सर्व्वपरस्थानंगळें बुदु । कृतकृत्यवेदककालचतुर्भागंगळु अवने प्रयोजनंगळागुळळ पदंगळें बुदर्थ ॥

द्वितीयः अल्पतरबंधमें बुदुमदर विपरीतमक्कुमदें तें दोडे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानादित्रयोविंशतिपर्य्यंतं बहुप्रकृतिगळं कट्टुत्तमल्पप्रकृतिगळं कट्टुवेडेयोळक्कुमप्पुदरिदं :—

तदियो सणामसिद्धो सव्वे अविरुद्धठाणबंधभवा ।

ताणुप्पत्तिं कमसो भंगेण समं तु वोच्छामि ॥५६४॥

तृतीयः स्वनामसिद्धः सर्व्वेऽविरुद्धस्थानबंधभवाः । तेषामुत्पत्ति क्रमशो भंगेन समं तु वक्ष्यामि ॥

तृतीयं अवस्थितबंधं स्वनामसिद्धमक्कुमवस्थितरूपबंधनप्पुदरिंद । सर्व्वंभुजाकारविबंधंगळुमविरुद्धस्थानबंधसंभूतंगळप्पुववरुत्पत्तियं क्रमदिदं भंगदोडने कूडि तु मत्ते वक्ष्यामि पेळ्वपेनु । अदें तें दोडे :—

भूवादर तेवीसं बंधंतो सव्वमेव पणुवीसं ।

बंधदि मिच्छाइट्ठी एवं सेसाणमाणेज्जो ॥५६५॥

भूबादरत्रयोविंशति बध्नन् सर्व्वमेव पंचविंशति । बध्नाति मिथ्यादृष्टिरेवं शेषाणामानेतव्यः॥

पृथ्वीकायिकबादरादिबंधनामकर्म्मपदंगळेकचत्वारिंशत्प्रमितंगळोळु मुंनं स्थापिसल्पट्ट त्रयोविंशत्यादिस्थानंगळु भंगंगळु वेरसिद्दुववल्लि त्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानंगळु पन्नोंदु ११ । अष्ट भंगयुत पंचविंशतिगळय्दु ५ । चतुर्भंगयुतंगळुमारु ६ एकभंगयुतंगळुमारु ६ अन्तु १७ स्थानंगळं

बहुप्रकृतिकबन्धे स्यात् । तु-पुनः द्वितीयः बहुप्रकृतिकं बध्नतोऽल्पप्रकृतिकबन्धे स्यात् । तृतीयः स्वनामतः सिद्धः स्यात् अवस्थितरूपत्वात् । ते सर्वे भुजाकारादयः अविरुद्धस्थानसंभूता भवन्ति ॥५६३–५६४॥ तदुत्पत्ति पुनः पुनः क्रमेण भंगैः सह वक्ष्यामि तद्यथा—

भूबादराद्येकचत्वारिंशन्नामपदयुतस्थानेषु त्रयोविंशतिकान्येकादश । $\frac{२३}{११}$ पंचविंशतिकान्यष्टधापंचषतु-

---

प्रकृतियोंको बाँधकर थोड़ी प्रकृति बाँधनेपर दूसरा अल्पतर बन्ध होता है। तीसरा अपने नामसे ही सिद्ध है। जितनी प्रकृति पूर्वसमयमें बाँधी उतनी ही दूसरे समयमें बाँधे तो उसे अवस्थित कहते हैं। ये सब भुजकार आदि अविरुद्ध बन्धस्थान द्वारा होते हैं। आगे उनकी उत्पत्तिको क्रमसे भंगोंके साथ कहते हैं ॥५६३–५६४॥

पूर्वमें बादर पृथ्वीकायादिक इकतालीस पद कहे थे। उनमें भंगसहित स्थान कहते हैं—

अपर्याप्त पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण ये बादर और सूक्ष्म तथा प्रत्येक वनस्पति, इन एकेन्द्रियके ग्यारह भेदोंके द्वारा तेईसका बन्धस्थान ग्यारह प्रकारका है। उनमें भंग एक-एक होनेसे ग्यारह हुए। पचीसके स्थानमें बादर पर्याप्त, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येकके भेदसे पाँच प्रकार हुए। इनमें स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यश-अयशके विकल्पसे आठ-आठ भंग पाये जाते हैं। अतः चालीस हुए। तथा पर्याप्त साधारण, बादर और सूक्ष्म, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण इन छहमें स्थिर और शुभके युगलसे चार-चार भंग होनेसे चौबीस हुए। तथा अपर्याप्त दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य इन छहमें अप्रशस्तका ही बन्ध होनेसे एक-एक ही भंग होता है। अतः उनके छह भंग हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगंगळु ७० । षड्विंशतिप्रकृतिस्थानंगळुमष्टभंगयुतंगळु २६ । ४ नाल्करोळं मूवत्तेरडु भंगंगळु
८
अष्टाविंशतिस्थानंगळेरडरोळ २ भंगंगळु ओंभत्तु २८ नवविंशतिस्थानंगळष्टभंगयुतंगळु नाल्कु
९
२९ । ४ नाल्कु साविरवरु नूरेंटु भंगंगळ स्थानंगळेरडु २९ । २ अंतु नवविंशतिप्रकृतिस्थानंगळा-
८ ४६०८
ररोळं भंगंगळु ९२४८ । अप्पुवु । त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळुमष्टभंगयुतगळु नाल्कु ३०।४ नाल्कु
८
सासिरवरुनूरेंटु भंगंगळ स्थानमोंदु १ अंतु ३०।५ त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळोळय्वरोळं भंगंगळु
४६०८ ४६४०

षषिडेकधाषडिति सप्तति: २५ षड्विंशतिकान्यष्टधा चत्वारीति द्वात्रिंशत् २६ अष्टाविंशतिकादीन्यष्टधैकमिति
७० ३२
नव २८ नवविंशतिकान्यष्टधा चत्वारि चतुःसहस्रषट्शद्छताष्टधा द्वे इत्येतावन्ति २९ त्रिंशत्कान्यष्टधा चत्वारि
९ ९२४८

इस प्रकार पचीसके बन्धस्थानमें सत्तर भंग होते हैं। छब्बीसके स्थानमें बादर, पृथ्वीकाय, आतप और उद्योत सहित दो और उद्योत सहित अप्काय, वनस्पतिकाय इन चारोंमें स्थिर शुभ और यशके युगलसे आठ-आठ भंग होते हैं। इस तरह छब्बीसके स्थानमें बत्तीस भंग होते हैं। अठाईसके स्थानमें देवगति सहितमें तीन युगलोंके आठ भंग होते हैं। और नरकगति सहितमें अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही बन्ध होनेसे एक ही भंग होता है अतः अठाईसके स्थानमें नौ भंग होते हैं।

उनतीसके स्थानमें पर्याप्त दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय और पंचेन्द्रियमें तीन युगलोंके आठ-आठ भंग होनेसे बत्तीस हुए। और तिर्यंचगति सहित तथा मनुष्यगति सहित दो स्थानोंमें प्रत्येकके छह संस्थान, छह संहनन और सात युगलोंसे (६×६×२×२×२×२×२×२×२) छियालीस सौ आठ भंग होनेसे बानबे सौ सोलह हुए। सब मिलाकर उनतीसके स्थानमें बानबे सौ अड़तालीस भेद हुए।

तीसके स्थानमें उद्योत सहित पर्याप्त दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय और पंचेन्द्रिय इन चारोंमें उन ही तीन युगलोंके आठ-आठ भंग होनेसे बत्तीस हुए। और संज्ञी तिर्यंच उद्योत सहितमें छियालीस सौ आठ भंग हुए। सब मिलाकर तीसके स्थानमें छियालीस सौ चालीस भेद हुए। ये बन्धस्थान मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके हैं। इनके भुजकार आदि कहते हैं—

तेईसके स्थानको बाँधनेके अनन्तर पचीस आदिको बाँधनेपर भुजकार बन्ध होता है। सो बादर पृथ्वीकाय सहित तेईसको बाँधकर पीछे पचीस आदि स्थानोंके सब भेदोंको बाँधे तो तेईसके ग्यारह भेदोंको बाँधते हुए कितने भेदोंको बाँधता है? इस प्रकार पाँच त्रैराशिक करना। उन पांच त्रैराशिकोंमें प्रमाणराशि तो सर्वत्र तेईसका एक भंग ही है। फलराशि क्रमसे पचीसके सत्तर भंग, छब्बीसके बत्तीस भंग, अठाईसके नौ भंग, उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस, और तीसके छियालीस सौ चालीस भंग हुए। इच्छाराशि सर्वत्र तेईसके ग्यारह भंग। सो फलको इच्छासे गुणा करके प्रमाण राशिका भाग देनेपर सब भंगोंका प्रमाण होता है। सर्वत्र इच्छाराशि ग्यारह ही है। अतः सर्व फलराशियोंको ७०+३२+९+९२४८+४६४० जोड़नेपर तेरह हजार नौ सौ निन्यानबे १३९९९ हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाल्कु सासिरदरुनूरनाल्वत्तप्पुविवेल्लमुं मिथ्यावृष्टि बंधयोग्यस्थानभंगंगळप्पुवल्लि त्रैराशिकं माडल्प-डुगुमें तें दोडे—भूबादरयुतत्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानमनेकविधमं कट्टुवातं सप्रतिविध सर्व्वपंच-विंशतिस्थानंगळं कट्टुगुमा मिथ्यादृष्टि पन्नों दुं तेरद त्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानंगळवेनितु पंच-विंशतिस्थानंगळं कट्टुगुमें दितो प्रकारदिदं शेषषड्विंशत्याविस्थानंगळोळमानेतव्यमक्कुं । त्रैराशि-कंगळगे संदृष्टि :—

२३ / १	३० / ४६४०	२३ / ११	२५ / १	३० / ४६४०	२५ / ७०	२६ / १	३० / ४६४०	२६ / ३२	२८ / १	३० / ४६४०	२८ / ९	२९ / १	३० / ४६४०	२९ / ९२४८
२३ / १	२९ / ९२४८	२३ / ११	२५ / १	२९ / ९२४८	२५ / ७०	२६ / १	२९ / ९२४८	२६ / ३२	२८ / १	२९ / ९२४८	२८ / ९	प्र	फ	इ
२३ / १	२८ / ९	२३ / ११	२५ / १	२८ / ९	२५ / ७०	२६ / १	२८ / ९	२६ / ३२	प्र	फ	इ			
२३ / १	२६ / ३२	२३ / ११	२५ / १	२६ / ३२	२५ / ७०	प्र	फ	इ						
२३ / १	२५ / ७०	२३ / ११	प्र	फ	इ									
प्र	फ	इ												

चतुःसहस्रषट्छताष्टाधिकमित्येतावन्ति ३० ४६४० अमूनि मिथ्यादृष्टिबन्धस्थानानि, अत्रैकं भूत्वा बादरयुतत्रयोविंशतिकं बध्नन् सप्तति पंचविंशतिकानि बध्नाति तदैकादशत्रयोविंशतिकानि बध्नन् कति पंचविंशतिकानि बध्नाति ? । एवं शेषषड्विंशतिकादिष्वप्यानेतव्यं । तत्संदृष्टिः—

२३ / १	३० / ४६४०	२३ / ११	२५ / १	३० / ४६४०	२५ / ७०	२६ / १	३० / ४६४०	२६ / ३२	२८ / १	३० / ४६४०	२८ / ९	२९ / १	३० / ४३४०	२९ / ९२४८
२३ / १	२९ / ९२४८	२३ / ११	२५ / १	२९ / ९२४८	२५ / ७०	२६ / १	२९ / ९२४८	२६ / ३२	२८ / १	२९ / ९२४८	२८ / ९	प्र	फ	इ
२३ / १	२८ / ९	२३ / ११	२५ / १	२८ / ९	२५ / ७०	२६ / १	२८ / ९	२६ / ३२	प्र	फ	इ			
२३ / १	२६ / ३२	२३ / ११	२५ / १	२६ / ३२	२५ / ७०	प्र	फ	इ						
२३ / १	२५ / ७०	२३ / ११	प्र	फ	इ									
प्र	फ	इ												

अत्र पञ्चस्थानेषु पृथक्पृथक्स्वस्वफलभूतभंगराशीनेकीकृत्य स्वस्वैकैकेच्छाराशिभंगसंख्यया गुणिते आद्यत्रैराशिकपंचके गुणिते आद्यत्रैराशिकपंचके गुण्यं त्रयोदशसहस्रनवशतनवनवतयः, गुणकारः एकादश १३९९९ ।११। तदनन्तरत्रैराशिकचतुष्के गुण्यं त्रयोदशसहस्रनवशतैकान्नत्रिंशतः, गुणकारः सप्ततिः

इनको इच्छाराशि ग्यारहसे गुणा करनेपर एक लाख तरेपन हजार नौ सौ नवासी १५३९८९ भंग हुए। इसे प्रमाणराशि एकसे भाग देनेपर उतने ही रहे। अतः तेईसके भुजाकार इतने हुए।

तथा पचीसका बन्ध करके छब्बीस आदि सब स्थानोंके सब भेदोंको बाँधनेपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिल्लि त्रयोविंशत्यादि भुजाकारंगळ त्रैराशिकंगळोळु प्रथमत्रयोविंशतिस्थान भुजाकार गुण्यंगळु पंचविंशतिस्थानं मोदलगोंडु मेले मेले त्रिंशत्प्रकृतिस्थानपर्य्यंतमाद फलभूतस्थानंगळोळु सप्तत्यादि भंगंगळं कूडिदोडे पदिमूरु सासिरदोंदु गुंदे सासिरमक्कुमल्लि गुणकारं पन्नोंदक्कुं। १३९९९। ११। पंचविंशतिभुजाकारगुण्यंगळु फलभूतभंगंगळु पदिमूरुसासिरदों भैनूरिप्पत्तों भत्तक्कुमल्लि गुणकारंगळु एप्पत्तप्पुवु। १३९२९। ७०। षड्विंशतिस्थान भुजाकारगुण्यंगळु। पदिमूरुसासिरदें टुनूरतों भत्तेळक्कु मल्लि। गुणकारंगळु मूवत्तेरडक्कुं। १३८९७। ३२॥ अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानद भुजाकारंगळ गुण्यंगळु पदिमूरुसासिरदें टु नूरेंभत्तें टक्कुमल्लि गुणकारंगळुमोंभत्तक्कुं। १३८८८। ९॥ नवविंशतिस्थानद भुजाकारंगळ गुण्यंगळु नाल्कु सासिरदरुनूर नाल्वत्तक्कुमल्लि गुणकारंगळु मों भत्तु सासिरदिन्नूरनाल्वत्तें टक्कुं। ४६४०। ९२४८। आ गुण्यगुणकारंगळं गुणिसिदोडे त्रयोविंशति प्रकृतिस्थानद भुजाकारंगळु लक्षमुमय्वत्तमूरु सासिरदों भैनूरें भत्तों भत्त-

१३९२९।७०। तदनन्तरत्रैराशिकत्रये त्रयोदशसहस्राष्टशतसप्तनवतयः। गुणकारो द्वात्रिंशत्।१३८९७।३२। तदनन्तरत्रैराशिकद्वये गुण्यं त्रयोदशसहस्राष्टशताष्टाशीतयः। गुणकारो नव।१३८८८।९। नवविंशतिके गुण्यं चतुःसहस्रषट्छतचत्वारिंशतः। गुणकारो नवसहस्रद्विशताष्टचत्वारिंशतः ४६४०।९२४८। गुण्यगुणकारे गुणिते

भुजाकार होता है। सो एक भेदरूप पच्चीसका बन्ध करके छब्बीस आदि सब स्थानोंके सब भेदोंको बांधे तो पच्चीसके सत्तर भंगोंके कितने भंग होंगे। इस प्रकार चार त्रैराशिक करो। यहाँ प्रमाणराशि सर्वत्र पच्चीसका एक भेद। फलराशि छब्बीसके बत्तीस भेद, अठाईसके नौ भेद, उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस, तीसके छियालीस सौ चालीस। इच्छाराशि सर्वत्र पच्चीसके सत्तर भेद। सब फलराशियोंको जोड़नेपर ३२+९+९२४८+४६४० = तेरह हजार नौ सौ उनतीस १३९२९ हुए। उसको इच्छाराशि सत्तरसे गुणा करनेपर नौ लाख पिचहत्तर हजार तीस ९७५०३० हुए। इतने पच्चीसके भुजाकार होते हैं।

छब्बीसका बन्ध करके अठाईस आदिका बन्ध करनेपर भुजाकार होता है। सो छब्बीसके एक भेदका बन्ध करके सब अठाईस आदिके सब भेदोंका बन्ध करे तो छब्बीसके बत्तीस भेदोंके द्वारा कितने बन्धभेद हों, इस प्रकार यहाँ तीन त्रैराशिक करना। उनमें प्रमाणराशि तो सर्वत्र छब्बीसका एक भेद। फलराशि क्रमसे अठाईसके नौ भेद, उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस भेद, तीसके छियालीस सौ चालीस भेद। इच्छाराशि सर्वत्र छब्बीसके बत्तीस भेद। सर्व फलराशिको जोड़नेपर ९+९२४८+४६४० = तेरह हजार आठ सौ सतानबे हुए। उनको इच्छाराशि बत्तीससे गुणा करनेपर चार लाख चवालीस हजार सात सौ चार ४४४७०४ होते हैं। इतने छब्बीसके भुजाकार जानना।

अठाईसका बन्ध करके उनतीस-तीसका बन्ध करनेपर भुजाकार होता है। सो एक प्रकार अठाईसका बन्ध कर उनतीस-तीसके सब भेदोंका बन्ध करे तब नौ प्रकार अठाईसका बन्ध करनेपर कितने भेद हों, इस प्रकार दो त्रैराशिक करना। उनमें सर्वत्र प्रमाणराशि अठाईसका एक भेद। फलराशि क्रमसे उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस भेद और तीसके छियालीस सौ चालीस भेद। इच्छाराशि सर्वत्र अठाईसके नौ भेद। फलराशिको जोड़नेपर ९२४८–४६४० = १३८८८ तेरह हजार आठ सौ अठासी हुए। उसे इच्छाराशि नौसे गुणा करनेपर एक लाख चौबीस हजार नौ सौ बानबे १२४९९२ हुए। इतने अठाईसके स्थान-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्पुवु । २३ पंचविंशतिस्थानद भुजाकारंगळु मों भत्तुलक्षमुमैप्पत्तय्दु सासिरद मूवत्प्पुवु–
१५३९८९

२५ षड्विंशतिप्रकृतिस्थानद भुजाकारंगळु नाल्कुलक्षमुं नाल्वत्त नाल्कुसासिरदेळुनूरनाल्क-
९७५०३०

प्पुवु २६ अष्टाविंशतिस्थानद भुजाकारंगळुमेकलक्षमुमिप्पत्तनाल्कु सासिरद ओंभैनूर
४४४७०४

तोंभत्तेरडक्कुं २८ नवविंशतिस्थानद भुजाकारंगळु नाल्कु कोटियुमिप्पत्तोंभत्तु लक्षमुं
१२४९९२

पत्तुसासिरदेळु नूरिप्पत्तु अक्कुं २९ ई भुजाकारबंधंगळेल्लं मिथ्यादृष्टिगळगप्पुवेंदु
४२९१०७२०

पेळल्पट्टु :—

त्रयोविंशकस्यै कलक्षत्रिपंचाशत्सहस्रनवशतैकान्ननवतयः २३ पंचविंशतिकस्य नवलक्षसप्तसप्ततिसह-
१५३९८९

स्रत्रिशतः २५ षड्विंशतिकस्य चतुर्लक्षचतुश्चत्वारिंशत्सहस्रसप्तशतचत्वारि २६ अष्टाविंशतिकस्यै-
९७५०३० ४४४७०४

कलक्षचतुर्विंशतिसहस्रनवशतद्वानवतयः २८ नवविंशतिकस्य चतुष्कोट्येकान्नत्रिंशल्लक्षदशसहस्रसप्तशत-
१२४९९२

विंशतयः २९ ॥५६५॥
४२९१०७२०

के भुजाकार होते हैं। उनतीसका बन्ध करके तीसका बन्ध करनेपर भुजाकार होता है। सो उनतीसके एक भेदको बन्ध करके तीसके सब भेदोंको बन्ध करे तो उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस भेदोंका बन्ध करनेके साथ कितने भेद हों। इस प्रकार एक त्रैराशिक हुआ। उसमें प्रमाणराशि उनतीसका एक भेद, फलराशि तीसके छियालीस सौ चालीस भेद। इच्छाराशि उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस भेद। सो फलराशि छियालीस सौ चालीसको इच्छाराशि बानबेसौ अड़तालीससे गुणा करनेपर चार कोटि उनतीस लाख दस हजार सात सौ बीस भेद होते हैं। इतने उनतीसके भुजकार हुए ॥५६५॥

नामकर्मके स्थानोंके भुजाकार बन्ध लानेका त्रैराशिक यन्त्र

२३ १	३० ४६४०	२३ ११	२५ १	३० ४६४०	२५ ७०	२६ १	३० ४६४०	२६ ३२	२८ १	३० ४६४०	२८ ९	२९ १	३० ४६४०	२९ ९२४८
२३ १	२९ ९२४८	२३ ११	२५ १	२९ ९२४८	२५ ७०	२६ १	२९ ९२४८	२६ ३२	२८ १	२९ ९२४८	२८ ९	प्र.	फल	इच्छा
२३ १	२८ ९	२३ ११	२५ १	२८ ९	२५ ७०	२६ १	२८ ९	२६ ३२	प्रमा.	फल	इच्छा			
२३ १	२६ ३२	२३ ११	२५ १	२६ ३२	२५ ७०	प्रमा.	फल	इच्छा						
२३ १	२५ ७०	२३ ११	प्रमा.	फल	इच्छा									
प्रमा.	फल	इच्छा												

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेवीसट्ठाणादो मिच्छत्तीसोत्ति बंधगो मिच्छो ।
णवरि हु अट्ठावीसं पंचिंदियपुण्णगो चेव ॥५६६॥

त्रयोविंशतिस्थानात्प्रभृति मिथ्यादृष्टि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानपर्यंतं बंधको मिथ्यादृष्टिर्न्नवमस्ति खल्वष्टाविंशति पंचेंद्रिय पूर्ण्णकश्चैव ॥

त्रयोविंशतिस्थानंमोदल्गो डु मिथ्यादृष्टिय त्रिंशत्प्रकृति स्थानपर्य्यंतं मिथ्यादृष्टिजीवं भुजाकारबंधमं बंधकनक्कु—मल्लि विशेषमुंटदाउदें दोडे अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानमं पंचेंद्रिय पर्य्याप्तकने कट्टुगुं खलु स्फुटमागि । मिथ्यादृष्टिय भुजाकारंगळु संदृष्टि—

२३	१५३९८९
२५	९७५०३०
२६	४४४७०४
२८	१२४९९२
२९	४२९१०७२०

मत्तं भोगभूमियमिथ्यादृष्टिगे भुजाकारबंधविशेषमुमं सम्यग्दृष्टिगं पेळ्दपरु :—

भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो मिच्छो य मिच्छगअपुण्णो ।
तिरि उगुतीसं तीसं णर उगुतीसं च बंधदि हु ॥५६७॥

भोगभूमौ सुराष्टाविंशतिं सम्यग्दृष्टिर्म्मिथ्यादृष्टिश्च मिथ्यादृष्टिरपूर्ण्णः तिर्य्यगेकान्न त्रिंशतं त्रिंशतं मनुष्यैकान्नत्रिंशतं च बध्नाति खलु ॥

भोगभूमियोळु पंचेंद्रियपर्य्याप्त सम्यग्दृष्टियुं मिथ्यादृष्टियुं सुराष्टाविंशतिस्थानमं कट्टुवरु । च शब्ददिं भोगभूमिजसम्यग्दृष्टि निर्व्वृत्यपर्य्याप्तनुं कट्टुगुं । भोगभूमिनिर्वृत्यपर्य्याप्त मिथ्यादृष्टिजीवं तिर्य्यग्गतियुतनवविंशतिस्थानमुमं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमं मनुष्यगतियुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुगुं स्फुटमागि ।

एतान् त्रयोविंशतिकादितः मिथ्यादृष्टि त्रिंशत्कान्तं उक्तभुजाकारान्मिथ्यादृष्टिर्बध्नाति, किन्तु खलु तत्राष्टाविंशतिकं पर्याप्तपंचेन्द्रिय एव बध्नाति ॥५६६॥ तथा भोगभूमेस्तानाह—

भोगभूमौ पर्याप्तपंचेन्द्रियः सम्यग्दृष्टिर्मिथ्यादृष्टिश्च चशब्दान्निर्वृत्यपर्याप्तसम्यग्दृष्टिश्च सुराष्टाविंशतिकं बध्नाति । निर्वृत्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिः खलु तिर्यग्गतिनवविंशतिकत्रिंशत्के मनुष्यगतिनवविंशतिकं च बध्नाति ॥५६७॥

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें तेईससे लेकर तीस पर्यन्त कहे भुजाकारोंको मिथ्यादृष्टि जीव बाँधता है । किन्तु उनमें-से अट्ठाईसको पर्याप्त पंचेन्द्रिय ही बाँधता है ॥५६६॥

भोगभूमियोंमें कहते हैं—

भोगभूमिमें पर्याप्त पंचेन्द्रिय सम्यग्दृष्टी अथवा मिथ्यादृष्टि और 'च' शब्दसे निर्वृत्यपर्याप्त सम्यग्दृष्टी देवगति सहित अठाईसको ही बाँधता है । और निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि तिर्यंचगतिसहित उनतीस या तीसको और मनुष्यगतिसहित उनतीसको बाँधता है ॥५६७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं मिथ्यादृष्टिय स्थानंगळ भंगंगळं पेळवपरु :—

मिच्छस्स ठाणभंगा एयारं सदरि दुगुण सोल णवं ।
अडदालं बाणउदी सदाल छादाल चत्तधियं ॥५६८॥

मिथ्यादृष्टेः स्थानभंगा एकादश सप्तति द्विगुण षोडश नवाष्टचत्वारिंशद् द्वानवतिशतानां षट्चत्वारिंशच्चत्वारिंशदधिकाः ॥

मिथ्यादृष्टिय त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळ सर्व्वभंगंगळु क्रमदिदं एकादश । २३ । ११ । सप्ततिः । २५ । ७० । द्विगुण षोडश । २६ । ३२ । नव । २८ । ९ । अष्टचत्वारिंशद्द्वानवति । २९ । ९२ । ४८ । शतानां षट्चत्वारिंशच्चत्वारिंशदधिका ३० । ४६४० । येंदितु संख्याप्रमितंगळप्पुवु । मिथ्यादृष्टिगे—

३०		
२९		
२८		
२६		
२५		
२३		

अनंतरमल्पतर भंगंगळं पेळ्दपरु :—

विवरीयेणप्पदरा होंति हु तेरासिएण भंगा हु ।
पुव्वपरट्ठाणाणं भंगा इच्छा फलं कमसो ॥५६९॥

विपरीतेनाल्पतरा भवंति खलु त्रैराशिकेन भंगाः खलु । पूर्व्वपरस्थानानां भंगाः इच्छा फलं क्रमशः ॥

अल्पतरा भंगाः अल्पतरबंधस्थानभंगंगळु भुजाकारबंधभंगंगळ्गे माडिद त्रैराशिकंगळ्गे विपरीतत्रैराशिकंगळिदमप्पुवें तें दोडल्लि त्रयोविंशत्यादि मिथ्यादृष्टिबंधस्थानंगळोळु पूर्व्वस्थान

प्रागुक्ता मिथ्यादृष्टेः स्थानभेदाः—त्रयोविंशतिकस्यैकादश, पंचविंशतिकस्य सप्ततिः, षड्विंशतिकस्य द्विगुणषोडश, अष्टाविंशतिकस्य नव, नवविंशतिकस्य द्वानवतिशताष्टचत्वारिंशः, त्रिंशत्कस्य षट्चत्वारिंशच्छतचत्वारिंशतः ॥५६८॥ अथाल्पतरभंगानाह—

अल्पतरभंगाः खलु भुजाकारभंगार्थंकृतत्रैराशिकेभ्यो विपरीतत्रैराशिकैर्भवन्ति । कुतः ? तत्पूर्वस्थान-

पूर्वोक्त प्रकारसे मिथ्यादृष्टिके स्थानभेद तेईसके ग्यारह, पचीसके सत्तर, छब्बीसके बत्तीस, अठाईसके नौ, उनतीसके बानवे सौ अड़तालीस और तीसके छियालीस सौ चालीस होते हैं ॥५६८॥

आगे अल्पतर भंगोंको कहते हैं—

भुजाकार भंग लानेके लिए जो त्रैराशिक किये थे उनको विपरीत करनेसे अल्पतर

१. यी संदृष्टियोळु फलराशिगळ भंगंगळं ९३७० । इवक्के इच्छाराशिगळ भंगंगळं ४६४० गुणकारंगळं माळ्पुदेल्लेडेयोळमिंते तत्तद्योग्यमागि योजिसिकोंबुदु ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगंगळु इच्छाराशिगळागि परस्थानभंगंगळु फलराशिगळागि क्रमदिदं त्रैराशिकंगळु माडल्पडुव-वप्पुदरिदं । संदृष्टि—[1]

प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ
३० / १	२३ / ११	३० / ४६४०	प्र	फ	इ									
३० / १	२५ / ७०	३० / ४६४०	२९ / १	२३ / ११	२९ / ९२४८	प्र	फ	इ						
३० / १	२६ / ३२	३० / ४६४०	२९ / १	२५ / ७०	२९ / ९२४८	२८ / १	२३ / ११	२८ / ९	प्र	फ	इ			
३० / १	२८ / ९	३० / ४६४०	२९ / १	२६ / ३२	२९ / ९२४८	२८ / १	२५ / ७०	२८ / ९	२६ / १	२३ / ११	२६ / ३२	प्र	फ	इ
३० / १	२९ / ९२४८	३० / ४६४०	२९ / १	२८ / ९	२९ / ९२४८	२८ / १	२६ / ३२	२८ / ९	२६ / १	२५ / ७०	२६ / ३२	२५ / १	२३ / ११	२५ / ७०

भंगानामिच्छाराशित्वेन परस्थानभंगानां फलराशित्वेन च क्रमशो विधानात् । संदृष्टिः—

प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ	प्र	फ	इ
३० / १	२३ / ११	३० / ४६४०	प्र	फ	इ									
३० / १	२५ / ७०	३० / ४६४०	२९ / १	२३ / ११	२९ / ९२४८	प्र	फ	इ						
३० / १	२६ / ३२	३० / ४६४०	२९ / १	२५ / ७०	२९ / ९२४८	२८ / १	२३ / ११	२८ / ९	प्र	फ	इ			
३० / १	२८ / ९	३० / ४६४०	२९ / १	२६ / ३२	२९ / ९२४८	२८ / १	२५ / ७०	२८ / ९	२६ / १	२३ / ११	२६ / ३२	प्र	फ	इ
३० / १	२९ / ९२४८	३० / ४६४०	२९ / १	२८ / ९	२९ / ९२४८	२८ / १	२६ / ३२	२८ / ९	२६ / १	२५ / ७०	२६ / ३२	२५ / १	२३ / ११	२५ / ७०

भंग होते हैं । अर्थात् पहले स्थान रूप भंगोंको इच्छाराशि और पिछले स्थानके भंगोंको फलराशि करनेपर क्रमसे अल्पतर भंग होते हैं । यथा—

तीसका बन्ध करके उनतीस आदिका बन्ध करनेपर अल्पतर होता है । सो तीसके एक भेदका बन्ध करके उनतीस आदिके सब भेदोंका बन्ध करे तो तीसके छियालीस सौ चालीस भेदोंका बन्ध करके उनका बन्ध करनेपर कितने अल्पतर बन्ध होंगे । यहाँ पाँच त्रैराशिक करना । उनमें सर्वत्र प्रमाणराशि तीसका एक भेद । फलराशि क्रमसे उनतीसके

---

१. भुजाकारबंधत्रैराशिकस्य प्र २३/१ । फ २५/७० । इ २३/११ । चरमराशि प्रति पूर्व्वभूतफलराशि २५ रल्पतरबंधे इच्छाराशिः स्यात् । तत्फलराशि प्रति परभूते २३/११ च्छाराशिरल्पतरबंधे फलराशिः स्यात् । तदेवमल्पतरबंधे प्र २५/१ । फ २३/११ । इ २५/७० ॥ (चतुर्थपंक्तौ) मेले मेले मिलितंगळु ।

इल्लि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळल्पतर गुण्यंगळु ९३७० । गुणकारंगळु ४६४० । नवविंशतिस्थानाल्पतर-गुण्यंगळु १२२ । गुणकारंगळु ९२४८ । अष्टाविंशतिस्थानदोळु गुण्यंगळु ११३ । गुणकारंगळु ९ । षड्विंशतिस्थानदोळु गुण्यंगळु ८१ । गुणकारंगळु ३२ । पंचविंशतिस्थानदोळु गुण्यंगळु ११ । गुणकारंगळु ७० । गुण्यगुणकारंगळं गुणिसिद लब्धं त्रिंशत्प्रकृत्यादिगळोळु क्रमदिदं संदृष्टि भंगंगळु मिथ्यादृष्टचल्पतर भंगंगळु

३०	४३४७६८००
२९	११२८२५६
२८	१०१७
२६	२५९२
२५	७७०

अत्र त्रिंशत्के गुण्यं ९३७० । गुणकारः ४६४० । नवविंशतिके गुण्यं १२२ गुणकारः ९२४८ । अष्टाविंशतिके गुण्यं ११३ गुणकारः ९ । षड्विंशतिके गुण्यं ८१ गुणकारः ३२ । पंचविंशतिके गुण्यं ११ गुणकारः ७० गुण्यगुणकारे गुणिते त्रिंशत्कादिषु क्रमेण संदृष्टिः—

३०	४३४७६८००
२९	११२८२५६
२८	१०१७
२६	२५९२
२५	७७०
	४६४०९४३५

बानबे सौ अड़तालीस भेद, अठाईसके नौ, छब्बीसके बत्तीस, पचीसके सत्तर, तेईसके ग्यारह। इच्छाराशि सर्वत्र तीसके छियालीस सौ चालीस भेद। फलराशिको जोड़नेपर तेरानबे सौ सत्तर हुआ। उसको इच्छारूप छियालीस सौ चालीससे गुणा करनेपर चार कोटि चौंतीस लाख छियत्तर हजार आठ सौ हुए। सो इतने तीसके स्थानके अल्पतर हुए।

उनतीसका बन्ध करनेके पश्चात् अठाईस आदिका बन्ध करने पर अल्पतर होता है। सो उनतीसके एक भेदका बन्ध करके सब अठाईस आदिके भेद बाँधे तो बानबे सौ अड़तालीस भेदरूप उनतीसका बन्ध करके सबको बाँधे तो कितने भेद हुए इस प्रकार यहाँ चार त्रैराशिक करना। उनमें प्रमाणराशि सर्वत्र उनतीसका एक भेद, फलराशि क्रमसे अठाईसके नौ, छब्बीसके बत्तीस, पचीसके सत्तर, तेईसके ग्यारह। इच्छाराशि सर्वत्र उनतीसके बानबे सौ अड़तालीस भेद। फलराशिको जोड़नेपर एक सौ बाईस हुए। उसको इच्छाराशि बानबे सौ अड़तालीससे गुणा करनेपर ग्यारह लाख अठाईस हजार दो सौ छप्पन हुए। इतने उनतीसके अल्पतर हैं।

अठाईसका बन्ध करके छब्बीस आदिका बन्ध करनेपर अल्पतर होता है। सो अठाईसके एक भेदका बन्ध करके सब छब्बीस आदिके भेदोंका बन्ध करे तो अठाईसके नौ भेदोंके द्वारा कितना बन्ध हो इस प्रकार यहाँ तीन त्रैराशिक करना। उनमें प्रमाणराशि सर्वत्र अठाईसका एक भेद, फलराशि क्रमसे छब्बीसके बत्तीस, पचीसके सत्तर, तेईसके ग्यारह। इच्छाराशि सर्वत्र अठाईसके नौ। फलराशिको जोड़नेपर एक सौ तेरह हुए। इच्छाराशि नौसे गुणा करनेपर एक हजार सतरह हुए। इतने अठाईसके अल्पतर भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं भुजाकाराल्पतरादि भंगंगळं मिथ्यादृष्टिगे लघुकरणदिंदं पेळदपरु :—

लहुकरणं इच्छंतो एयारादीहि उवरिमं जोग्गं ।
संगुणिदे भुजगारा उवरीदो होंति अप्पदरा ॥५७०॥

लघुकरणमिच्छत एकादशादिभिरुपरिमं योगं, संगुणिते भुजाकारा उपरितो भवंत्यल्पतराः ॥

मिथ्यादृष्टिय भुजाकारबंधभंगंगळुमनल्पतरबंधभंगंगळुमंतरल्पडुवल्लि लघुकरणमनिच्छयिपंगे एकादशाद्यंकंगळिंदमुपरिमांकंगळ योगमं संगुणं माडुत्तिरलु भुजाकारबंधभंगंगळप्पुवु । मेगणिदं केळगण अंकयोगमं संगुणं माडुत्तं विरलल्पतरबंधभंगंगळुमप्पुवु । अदेंतें दोडे संदृष्टि :

३०	४६४०
२९	९२४८
२८	९
२६	३२
२५	७०
२३	११

यिल्लि त्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानभंगंगळेकादश प्रमितंगळप्पुववर मेगण सप्तत्याद्यंकंगळ-

---

इयत्प्रमाणका अल्पतरभंगाः सर्वे ॥५६९॥ अथ भुजाकाराल्पतरादिभंगान् मिथ्यादृष्टेर्लघुकरणेनाह—

लघुकरणमिच्छन् एकादशाद्यंकैरुपरितनांकयोगे संगुणिते भुजाकारबन्धभंगा भवन्ति । तद्यथा संदृष्टिः—

३०	४६४०
२९	९२४८
२८	९
२६	३२
२५	७०
२३	११

छब्बीसका बन्ध करके पश्चात् पचीस आदिका बन्ध करनेपर अल्पतर होता है। सो छब्बीसके एक भेदका बन्ध करके पचीस-तेईसके सब भेदोंको बाँधे तो छब्बीसके बत्तीस भेदोंके द्वारा कितने बन्धके भेद होंगे। इस तरह यहाँ दो त्रैराशिक करना। उनमें सर्वत्र प्रमाणराशि छब्बीसका एक भेद, फलराशि क्रमसे पचीसके सत्तर और तेईसके ग्यारह भेद। इच्छाराशि सर्वत्र छब्बीसके बत्तीस भेद। फलराशिके जोड़ इक्यासीको इच्छाराशि बत्तीससे गुणा करनेपर पचीस सौ बानबे हुए। इतने छब्बीसके अल्पतर हैं।

पचीसको बाँधकर तेईस बाँधनेपर अल्पतर होता है। सो पचीसके एक भेदको बाँधकर तेईसके ग्यारह भेदोंको बाँधे तो पचीसके सत्तर भेदोंके द्वारा कितने बन्धके भेद होंगे। यहाँ एक ही त्रैराशिक है। उसमें प्रमाणराशि पचीसका एक भेद। फलराशि तेईसके ग्यारह भेद। इच्छाराशि पचीसके सत्तर भेद। सो फल ग्यारहको इच्छा सत्तरसे गुणा करनेपर सात सौ सत्तर हुए। इतने पचीसके अल्पतर जानना ॥५६९॥

आगे मिथ्यादृष्टिके भुजाकार अल्पतर आदि भंगोंको लघु प्रक्रियाके द्वारा कहते हैं—

थोड़ेमें जानने की इच्छावालेको ग्यारह आदि अंकोंके द्वारा ऊपरके अंकोंके जोड़को गुणा करनेपर भुजाकार होते हैं। सो सत्तर, बत्तीस, नौ, बानबेसौ अड़तालीस, छियालीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नय्दुं राशिगळं कूडि पन्नोंदरिदं गुणिसिदोड १३९९९।११। लब्धमिदु। २३।१५३९८९ ॥ मत्तं पंचविंशतिस्थानभंगंगळु सप्ततिप्रमितंगळप्पुववर मेगण द्वात्रिंशदादि चतुःस्थानांकंगळ योगमं सप्तत्यंकदिदं संगुणं माडुत्तिरलु १३९२९।७०। लब्धमिदु २५।९७५०३०। मत्तं षड्विंशतिप्रकृतिस्थानभंगंगळु द्वात्रिंशत्प्रमितंगळप्पुववर मेगण नवादि त्रिस्थानांकंगळ योगमं द्वात्रिंशद्गुणकारदिदं गुणिसुत्तं विरलु १३८९७।३२। लब्धमिदु। २६।४४४७०४। मत्तमष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानभंगंगळु नवप्रमितंगळप्पुववर मेलण अष्टचत्वारिंशदुत्तरद्वानवतिशतादि द्विस्थानांकंगळ योगमं नवांकदिदं संगुणं माडुत्तं विरलु १३८८८।९। लब्धमिदु। २८।१२४९९२॥ मत्तं नवविंशतिस्थानभंगंगळुमष्टचत्वारिंशदुत्तरद्वानवतिशतप्रमितंगळप्पुववरिं मेलण चत्वारिंशदुत्तरषट्चत्वारिंशच्छतमंगुणिसुत्तं विरलु। ४६४०।९२४८। लब्धमिदु। २९।४२९१०७२० ॥ यितोयय्दुं राशिगळयुति मिथ्यादृष्टिय सर्व्वभुजाकार भंगंगळप्पुवु। ४४६०९४३५। अल्पतरंगळुमंते मेगणिदं त्रिंशत्प्रकृत्यादिगळ भंगंगळिंदमधस्तनाधस्तनांकंगळ युतियं गुणिसुत्तं विरलु लब्धराशिगळु मिथ्यादृष्टिय सर्व्वाल्पतरभंगंगळप्पुवु। संदृष्टि :

गुण्य	गुणकार		
९३७०	४६४०	लब्ध ३०	४३४७६८००
१२२	९२४८	लब्ध २९	११२८२५६
११३	९	लब्ध २८	१०१७
८१	३२	लब्ध २६	२५९२
११	७०	लब्ध २५	७७०

एकादशभिः सप्तत्यादीनेकीकृत्य १३९९९ गुणिते त्रयोविंशतिकस्य २३। १५३९८९। द्वात्रिंशदादीनेकीकृत्य १३९२९ सप्तत्या गुणिते पंचविंशतिकस्य २५। ९७५०३०। नवादीनेकीकृत्य १३८९७ द्वात्रिंशता गुणिते षड्विंशतिकस्य २६।४४४७०४। उपरिमस्थानद्वयभंगानेकीकृत्य १३८८८ नवभिर्गुणितेऽष्टाविंशतिकस्य २८।१२४९९२। अष्टचत्वारिंशदग्रद्वानवतिशतेऽपरितनचत्वारिंशदग्रषट्चत्वारिंशच्छतेषु गुणितेषु नवविंशति-

---

सौ चालीसको ७०+३२+९+९२४८+४६४०=जोड़नेपर १३९९९ तेरह हजार नौ सौ निन्यानबे हुए। उसे ग्यारहसे गुणा करनेपर तेबीसके भुजाकार एक लाख तरेपन हजार नौ सौ नवासी १५३९८९ होते हैं। बत्तीस आदि ३२+९+९२४८+४६४० को जोड़नेपर तेरह हजार नौ सौ उनतीस १३९२९ होते हैं। उसे सत्तरसे गुणा करने पचीसके नौ लाख पिचहत्तर हजार तीस ९७५०३० भंग होते हैं। नौ आदि ९+९२४८+४६४० को जोड़नेपर तेरह हजार आठ सौ सतानबे होते हैं, उसे बत्तीससे गुणा करनेपर छब्बीसके चार लाख चवालीस हजार सात सौ चार होते ४४४७०४ हैं। ऊपरके दो स्थानोंके भंगों ९२४८+४६४० को जोड़ने पर १३८८८ तेरह हजार आठ सौ अठासी होते हैं। उसे नौ से गुणा करनेपर अठाईसके एक लाख चौबीस हजार नौ सौ बानबे होते हैं १२४९९२। ऊपरके छियालीस सौ चालीसको बानवे सौ अड़तालीससे गुणा करनेपर उनतीसके चार करोड़ उनतीस लाख दस हजार सात सौ बीस ४२९१०७२० होते हैं। ये सब मिलकर मिथ्यादृष्टिके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यितीयय्दुं राशिगळं कूडुत्तं विरलु मिथ्यादृष्टिय सर्व्वाल्पतर बंधभंगंगळप्पुवु । ४४६०९४३५ । उभययोगं मिथ्यादृष्टिय सर्व्वावस्थितबंधभंगप्रमाणमक्कुं । ८९२१८८७० ॥

अनंतरमितु साधितंगळप्प मिथ्यादृष्टिय भुजाकारालपतरभंगसमासमं पेळ्वपरु :—

भुजगारप्पदराणं भंगसमासो समो हु मिच्छस्स ।
पणतीसं चउणवदी सट्ठी चोदालमंककमे ॥५७१॥

भुजाकारालपतराणां भंगसमासः समोहमिथ्यादृष्टेः । पंचत्रिंशच्चतुर्न्नवतिः षष्टिश्चश्चत्वारिंशदंकक्रमे ॥

मिथ्यादृष्टिय सर्व्वभुजाकारालपतरंगळ भंगयुतिसदृशमक्कुं स्फुटमागि । एनितु प्रमाणंगळें-दोडे अंकक्रमदोळु पंचत्रिंशच्चतुर्न्नवतियुं षष्टियुं चतुश्चत्वारिंशत्प्रमितंगळप्पुवु । ४४६०९४३५ ॥

अनंतरमसंयतन भुजाकारादिगळं पेळ्वपरु :—

कस्य २९।४२९१०७२० । मिलित्वा मिथ्यादृष्टेः सर्वभुजाकारभंगा भवन्ति ४४६०९४३५ । तदल्पतरभंगास्तु उपरितः त्रिंशत्कादिभंगैरधस्तनाधस्तनांकसंयोगैर्गुणिते सति भवन्ति । संदृष्टिः—

गुण्यं	गुणकारः	लब्धं	
९३७०	४६४०	३०	४३४७६८००
१२२	९२४८	२९	११२८२५६
११३	९	२८	१०१७
८१	३२	२६	२५९२
११	७०	२५	७७०

अमी पंच राशयो मिलिताः ४४६०९४३५ उभययोगः मिथ्यादृष्टेः सर्वावस्थितबन्धभंगाः ८९२१८८७० ॥५७०॥

मिथ्यादृष्टेरुक्तो भुजाकारभंगसमासोऽल्पतरभंगसमासश्च खलु सदृशः । तर्हि किंसंख्यः ? अंकक्रमेण पंचत्रिंशच्चतुर्नवतिषष्टिचतुश्चत्वारिंशन्मात्रः ४४६०९४३५ ॥५७१॥ असंयतस्य तानाह—

भुजाकार भंग ४४६०९४३५ होते हैं। उसके अल्पतर भंग लानेके लिये ऊपरके तीस आदि स्थानोंके भंगोंसे नीचेके सब भंगोंको जोड़-गुणा करनेपर अल्पतर होते हैं। यह कथन ऊपर कर आये हैं। उसकी संदृष्टि ऊपर संस्कृत टीकासे जानना। उसका जोड़ भी ४४६०९४३५ होता है। भुजाकार और अल्पतर दोनोंको जोड़नेपर मिथ्यादृष्टिके अवस्थित भंग ८९२१८८७० होते हैं ॥५७०॥

मिथ्यादृष्टिके कहे भुजाकार और अल्पतर भंगोकी संख्या समान है उसकी संख्या अंकोके क्रमसे पैंतीस चौरानवे साठ चवालीस है। इन्हें क्रमसे लिखने पर चार करोड़ छियालीस लाख नौ हजार चार सौ पैंतीस ४४६०९४३५ होती है। इतने भुजाकार है और इतने ही अल्पतर हैं। इन दोनोंको मिलानेपर आठ करोड़ बानवै लाख अठारह हजार आठ सौ सत्तर ८९२१८८७० होते हैं इतने ही अवस्थित भंग हैं; क्योंकि भुजाकार या अल्पतर भंगोमें जिस जिस प्रकृति भंगका बन्ध होता है उस ही का बन्ध द्वितीयादि समयमें होनेपर अवस्थित बन्ध होता है ॥५७१॥

आगे असंयतमें कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवट्ठवीस णरदेउगुतीस मणुस्स तीस बंधयदे ।
ति छ णव णव दुग भंगा तित्थविहीणा हु पुणरुत्ता ॥५७२॥

देवाष्टाविंशति नरदेवैकान्नत्रिंशन्मनुष्यत्रिंशद्बंधासंयते । त्रिषड्नवनवद्विभंगास्तीर्त्थविहीनाः खलु पुनरुक्ताः ॥

देवाष्टाविंशति नरदेवैकान्नत्रिंशत् मनुष्यत्रिंशद्बंधा संयतनोळु २८ २९ २९ ३० (दे म दे म) त्रिषड्नव नवद्वि ३६९९२ । प्रमित भुजाकारंगळप्पुवदें तें दोडे :—

देवट्ठवीसबंधे देउगुतीसंमि भंग चउसट्ठी ।
देउगुतीसे बंधे मणुवत्तीसे वि चउसट्ठी ॥५७३॥

देवाष्टाविंशति बंधे देवैकान्नत्रिंशत्प्रकृतौ भंग चतुःषष्टिः । देवैकान्नत्रिंशद्बंधे मनुष्य त्रिंशत्प्रकृतावपि चतुःषष्टिः ॥

देवाष्टाविंशति प्रकृतिस्थानबंधमं माडुत्तिर्द्द मनुष्यासंयतसम्यग्दृष्टि तीर्त्थकरपुण्यबंधमं प्रारंभिसि तीर्त्थयुत देवैकान्न त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिरलल्लि चतुःषष्टि भंगंगळप्पुवु । मत्तं मनुष्यासंयतसम्यग्दृष्टितीर्त्थयुत देवैकान्नत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तिर्द्दु मरणमादोडे देवासंयतं मेणु नारकासंयतनुमागि तीर्त्थयुतमनुष्य त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं विरलल्लियुं चतुष्षष्टि भंगंगळप्पुवु । मत्तं :—

देवाष्टाविंशतिकनरदेवैकान्नत्रिंशत्कमनुष्यत्रिंशत्कबन्धासंयते २८।२९।२९।३० (दे म दे म) त्रिषट्नवनवद्वि ३६९९२ मात्रभुजाकारा भवन्ति ॥५७२॥ तद्यथा—

देवाष्टाविंशतिकं बध्वा मनुष्यासंयतः तीर्थबन्धं प्रारभ्य तद्युतदेवैकान्नत्रिंशत्कं बध्नाति तदा चतुःषष्टिः । पुनः तीर्थयुतदेवैकान्नत्रिंशत्कं बध्वा मनुष्यासंयतो देवासंयतो नरकासंयतो वा भूत्वा तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नाति तदापि चतुष्षष्टिः ॥५७३॥ पुनः—

देवगति सहित अठाईस, मनुष्यगति सहित उनतीस, देवगति सहित उनतीस और मनुष्यगति सहित तीसमें तीन छह नौ नौ दो इन अंकोके अनुसार छत्तीस हजार नौ सौ बानवे भुजाकार होते हैं ॥५७२॥

इनमें तीर्थंकर रहित भंग पुनरुक्त हैं वे मिथ्यादृष्टिके भंगोंमें आ जाते हैं। यही आगे कहते हैं—

देवगति सहित अठाईसको बाँधकर असंयत मनुष्य तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करे तो तीर्थंकर सहित उनतीसको बाँधता है। तब दोनोंके आठ आठ भंगको परस्परमें गुणा करने पर चौसठ भंग हुए। पुनः तीर्थंकर और देवगति सहित उनतीसको बाँधकर मनुष्य असंयत पीछे देव या नारकी असंयत होकर वहाँ तीर्थंकर और मनुष्यगति सहित तीसको बाँधता है। वहाँ भी दोनोंके आठ आठ भंगोको परस्परमें गुणा करनेपर चौसठ होते हैं ॥५७३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थयरसत्तणारयमिच्छ णरऊण तीसबंधो जो ।
सम्ममि तीसबंधो तियछक्कडछक्कचउभंगा ॥५७४॥

तीर्थंकरसत्त्व नारक मिथ्यादृष्टिर्नरैकान्नत्रिंशद्बंधको यः । सम्यग्दृष्टिः त्रिंशत्प्रकृतिबंधक त्रिकषट्काष्टषट्कचतुर्भंगाः ॥

यः आवनानोर्व्वं तीर्त्थंकरसत्वनारकमिथ्यादृष्टि जीवन्नेन्नेवरं शरीरपर्य्याप्तिरहितनन्नेवरमष्टोत्तरषट्चत्वारिंशच्छतभंगयुत नर नवविंशति प्रकृतिस्थानबंधकनक्कुमातं शरीरपर्य्याप्तियिंदं मेले सम्यक्त्व स्वीकार मागुत्तं विरलु तीर्त्थयुतमनुष्यत्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधकनक्कुमल्लि । भुजाकार भंगंगळु चतुःषष्टयुत्तराष्टशतयुत षट्त्रिंशत्सहस्रप्रमितंगळप्पुवु । ३६८६४ ॥ १२८ कूडि असंयतन भुजाकार भंगंगळु पूर्व्वोक्त त्रिक षट्क नव नव द्वि प्रमितंगळप्पुवु । ३६९९२ ॥

अनंतरमसंयतंगल्पतर बंधभंगंगळं पेळ्दपरु :—

बावत्तरि अप्पदरा देउगुतीसा दु णिरय अडवीसं ।
बंधंत मिच्छभंगेणवगयतित्था हु पुणरुत्ता ॥५७५॥

द्वासप्ततिरल्पतरा देवैकान्नत्रिंशत्प्रकृतेस्तु नारकाष्टाविंशतिं । बध्नतो मिथ्यात्वभंगेनापगततीर्त्थाः खलु पुनरुक्ताः ॥

प्राग्बद्ध नरकायुर्म्मनुष्यासंयतं तीर्त्थंकरदेवगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं नरकगतिगमनाभिमुखं मिथ्यात्वकर्म्मोदयदिदमंतर्म्मुहूर्त्तकालपर्य्यंतं मनुष्यमिथ्यादृष्टियागि नरकगतियुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानबंधमं माडुत्तमिर्प्पातंगे अष्टभंगंगळप्पुवा अष्टभंगसहितमागि मत्तं

यस्तीर्थसत्त्वनारकमिथ्यादृष्टिः यावदपूर्णशरीरस्तावदष्टाग्रषट्चत्वारिंशच्छतधानरनवविंशतिकबन्धकः स शरीरपर्याप्तेरुपरि सम्यक्त्वं प्राप्य तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नाति तदा चतुःषष्ट्यग्राष्टशतषट्त्रिंशत्सहस्री ३६८६४ मिलित्वासंयतभुजाकारभंगास्तावन्तो भवन्ति । ३६९९२ ॥५७४॥ अथासंयतस्याल्पतरबन्धभंगानाह—

प्राग्बद्धनरकायुर्मनुष्यासंयतः तीर्थबन्धं प्रारभ्य तीर्थंकरदेवगतिनवविंशतिकं बध्नन्, नरकगतिगमनाभिमुखोऽन्तर्मुहूर्तं मनुष्यमिथ्यादृष्टिः सन् नरकगत्यष्टाविंशतिकं बध्नाति तदाष्टौ । पुनः देवो नारको वाऽसंयतः

तीर्थंकरकी सत्तावाला नारकी मिथ्यादृष्टी अपर्याप्त अवस्थामें छियालीस सौ आठ भंगके साथ मनुष्यगति सहित उनतीसको बाँधता है। पीछे शरीर पर्याप्ति पूर्ण होनेपर सम्यक्त्वको पाकर तीर्थंकर और मनुष्यगति सहित तीसको बाँधता है। तब उसके आठ भंगोंसे पूर्वके छियालीस सौ आठ भंगोंको गुणा करनेपर छत्तीस हजार आठ सौ चौंसठ भंग ३६८६४ होते हैं। इनमें पूर्वोक्त एक सौ अठाईसको मिलानेपर छत्तीस हजार नौ सौ बानबे असंयतमें भुजाकार भंग होते हैं ॥५७४॥

आगे असंयतमें अल्पतर कहते हैं—

जिसने पहले नरकायुका बन्ध किया है ऐसा असंयत मनुष्य तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करके तीर्थंकर और देवगति सहित उनतीसको बाँधता है। उसके आठ भंग हैं। पीछे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवनारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळु तीर्त्थयुतमनुष्यत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तलु मृतरागि पंचकल्याण-भाजन तीर्त्थंकर परमदेवासंयतसम्यग्दृष्टिगळु जिनजननीगर्भंवकवतरिसुत्तं तीर्त्थयुतदेव नवविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुवरल्लि अल्पतरभंगंगळरुवत्त नाल्कप्पुवंतु द्वासप्तत्यल्पतर भंगंगळ संयतरोळप्पुवु । ७२ । तीर्त्थरहितमनुष्यगतियुत नवविंशति प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं देवगतियुताष्टाविंशति प्रकृतिस्थानमुमं कट्टुगुमल्लि चतुःषष्टिवल्पतर भंगंगळप्पुवा भंगंगळु पुनरुक्तंगळप्पुवेंतें-वोडालन अल्पतरंगळोळु पेळल्पट्टुवप्पुदरिंदं । संदृष्टि :—

असंयतन भुजाकारंगळु			असंयतन अल्पतरंगळु		असंयत पुनरुक्तं	असंयत युति
६४	६४	३६८६४	८	६४	६४	भु ३६९९२
दे २९	म ३०	म ३०	न २८	दे २९	दे २८	
८	८	८	१	८	८	अल्पतर ७२
दे २९	दे २९	म २९	दे २९	म ३०	म २९	
८	८	४६०८	८	८	८	अवस्थि ३७०६४

अनंतरं प्रमादरहितरोळु भुजाकारबंधभंगंगळं पेळ्दपरु :

देवजुदेक्कट्ठाणे णरतीसे अप्पमत्त भुजगारा ।
पणदालिगिहारुभये भंगा पुणरुत्तगा होंति ।।५७६।।

देवयुतैकस्थाने नरत्रिंशत् स्थाने अप्रमत्त भुजाकाराः । पंचचत्वारिंशदेकहारोभये भंगाः पुनरुक्ता भवंति ।।

तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नन्मृत्वा तीर्थंकरत्वेन जननीगर्भेऽवतीर्य तीर्थयुतदेवनवविंशतिकं बध्नाति तदा चतुःषष्टिः । एवं द्वासप्ततिरल्पतरभंगा असंयते भवन्ति । तीर्थोनमनुष्यगतिनवविंशतिकं बध्वा देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नतः चतुःषष्टिरल्पतरभंगास्ते पुनरुक्ताः प्राग्मिथ्यादृष्टावुक्तत्वात् ।।५७५।। अथाप्रमत्तादिषु भुजाकारबन्धभंगानाह—

मरते समय जब नरक गतिमें जानेके अभिमुख हुआ तो एक अन्तर्मुहूर्तके लिए मिथ्यादृष्टि होकर नरकगति सहित अठाईसका बन्ध करता है उसका एक भंग है। दोनोंको परस्परमें गुणा करनेपर आठ भंग हुए। पुनः देव या नारकी असंयत तीर्थंकर मनुष्यगति सहित तीसको बाँधे तो उसके आठ भंग हुए। पीछे मरकर तीर्थंकरके रूपमें माताके गर्भमें अवतरण करके तीर्थंकर देवसहित उनतीसको बाँधता है उसके भी आठ भंग हुए। इनको परस्परमें गुणा करनेपर चौंसठ हुए। दोनोंको जोड़नेपर बहत्तर अल्पतर भंग असंयतमें होते हैं। तथा तीर्थंकर रहित मनुष्यगति सहित उनतीसको बाँधकर पीछे देवगति सहित अठाईसको बाँधनेपर चौंसठ भंग पुनरुक्त है, क्योंकि मिथ्यादृष्टिके भंगोंमें आ जाते हैं। इससे यहाँ नहीं कहा ।।५७५।।

आगे अप्रमत्त आदिमें भुजाकार कहते हैं—

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

देवगति युतैकभंगस्थानदोळं मनुष्यगतितीर्त्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळमप्रमादरुगळ भुजाकारभंगंगळु नाल्वत्तय्दुप्पुवु । ४५ । यिगिहारुभये तीर्त्थयुत तीर्त्थरहिताहारयुत तीर्त्थाहारोभय युतस्थानत्रयदोळु भंगगळु पुनरुक्तंगळप्पुवु । संदृष्टिः—

प्र २९ ८ अ २८ १	अ ३० १ प्र २८ ८	अ ३१ १ प्र २८ ८	म ३० ८ अ २९ १	अ ३१ १ प्र २९ ८	अ ३१ १ अ ३० १	२८ १ १ १	२९ १ १ १	३० १ १ २	३१ १ १ १	पुन २९ १ अ २८ १ अ	पुन ३० १ अ २८ १ अ	पुन ३१ १ अ २८ १ अ	अप्रमादरुगळ भुजाकारंग- ळ ४५ अल्पतर ३६

अनंतरमा नाल्वत्तय्दुं भुजाकारंगळुपपत्तियं पेळ्दपरु :—

इगि अड अड्डिगि अड्डिगिभेदड अट्ठड दु णव य वीस तीसेक्के ।
अडिगिगि अडिगिगिविह उण खिगि खिगि इगितीस देवचउ कमसो ॥५७७॥

एकाष्टाष्टैकाऽष्टैकभेदे अष्टाष्टाष्ट द्विनवविंशति त्रिंशदेकस्मिन्नष्टैकैकाष्टैकैकविधैकान्न चैक चैकैकत्रिंशद्देवचत्वारि क्रमशः ॥

देवगतियुतैकस्थाने मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कस्थाने चाप्रमत्तभुजाकारबन्धभंगा पंचचत्वारिंशत्स्युः ४५ । तीर्थेनाहारकद्वयेन तदुभयेन च युतस्थानत्रये भंगास्ते पुनरुक्ताः ॥५७६॥ तत्पंचचत्वारिंशत उपपत्तिमाह—

देवगति सहित एक स्थानमें और मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसके स्थानमें अप्रमत्त गुणस्थानमें पैंतालीस भुजाकार होते हैं। तथा तीर्थंकर सहित, आहारकद्वय सहित और तीर्थंकर आहारक दोनों सहित तीन स्थानोंमें जो भंग हैं वे पुनरुक्त हैं ॥५७६॥

उन पैंतालीस भुजाकारोंकी उपपत्ति कहते हैं—

1.

प्र २९ ८	अ ३० १	अ ३१ १	म ३० ८	अ ३१ १	अ ३१ १	२८ १	२९ १	३० १	३१ १	पुन अ २९ १	पुन अ ३० १	पुन अ ३१ १	अप्रमादानां भुजाकाराः ४५
प्र २८ १	प्र २८ ८	प्र २८ ८	अ २९ १	प्र २९ ८	अ ३० १	१ १	१ १	१ १	१ १	अ २८ १	अ २८ १	अ २८ १	

अधस्तनपंक्तिय एक अष्ट अष्ट एक अष्ट एक एक एक एक एकभेदे भेदंगळनुळ्ळ भंगंगळनुळ्ळ अष्ट अष्ट अष्ट नव नव विंशतिगळुं त्रिंशत् एक एक एक एक स्थानंगळोळु परितनपंक्तिय अष्ट एक एक अष्ट एक एक एक एक एक एक भंगंगळनुळ्ळ ओंदुगुंदियुं ख एक ख एक युत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळुं एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं देवचतुःस्थानंगळुं क्रमदिदमप्पुवप्पु दरिदमप्रमादरुगळोळु नाल्वत्तय्दे भुजाकारबंधभंगंगळप्पुवु। ई भुजाकारंगळभिप्रायं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे अप्रमत्तनेकभंगयुत देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमं कट्टुत्तं प्रमत्तनागि तीर्त्थबंधमं प्रारंभिसि सतीर्त्थदेवगतियुतस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८। मत्तं पमत्तसंयतनष्टभंगयुताष्टाविंशतिस्थानमं कट्टुत्तमप्रमत्तनागि देवगत्याहारद्वययुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८॥ मत्तं प्रमत्तगुणस्थानदोळु देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमनष्टभंगयुतमं कट्टुत्तमप्रमत्तनागि तीर्त्थाहारद्वययुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८॥ मत्तमप्रमत्तसंयतं तीर्त्थदेवगतियुतनवविंशतिस्थानमं कट्टुत्तं मरणमादोडे देवासंयतनागि मनुष्यगतितीर्त्थयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८॥ मत्तं प्रमत्तगुणस्थानदोळु तीर्त्थदेवगतियुतनवविंशतिस्थानमनष्टभंगयुतमं कट्टुत्तमप्रमत्तगुणस्थानमं पोर्द्दि तीर्त्थाहारद्वययुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमागि

अधस्तनपंक्तेरेकाष्टाष्टैकाष्टैकैकैकैकभंगाष्टाष्टाष्टनवनवविंशतित्रिंशदेकैकैककप्रकृतिकेषु, उपरितनपंक्तेरष्टैकैकाष्टैकैकैकैकैकैकर्धकोनखैकखैकयुतत्रिंशत्कान्येकत्रिंशत्कं देवचतुःस्थानानि च क्रमेणेति पंचचत्वारिंशद्भवन्ति । तद्यथा—

अप्रमत्तः देवगत्येकधाष्टाविंशतिकं बध्नन् प्रमत्ते गत्वा तीर्थबन्धं प्रारभ्य सतीर्थाष्टधादेवगतिनवविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तोऽष्टधाष्टाविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तो भूत्वा देवगत्याहारकद्वययुतैकधात्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तोऽष्टधाष्टाविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तो भूत्वैकधातीर्थाहारैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्तः तीर्थदेवगतिनवविंशतिकं बध्नन्मृत्वा देवासंयतो भूत्वाष्टधा मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तः

नीचेकी पंक्तिके एक आठ आठ एक आठ एक एक एक एक एक भंग सहित अठाईस अठाईस अठाईस उनतीस उनतीस तीस इकतीस इकतीस इकतीस इकतीस रूप स्थानोंको बाँधकर ऊपरकी पंक्तिके आठ एक एक आठ एक एक एक एक एक एक भंग सहित उनतीस तीस इकतीस तीस इकतीस इकतीस और देवगति सहित चार स्थानोंको क्रमसे बाँधे। तो एक एक ऊपरकी पंक्तिके स्थान भंगोंसे एक एक नीचेकी पंक्तिके स्थान भंगोंको गुणा करनेपर सब पैंतालीस भुजाकार होते हैं। वही कहते हैं—

अप्रमत्त गुणस्थानवाला एक भंग सहित देवगतियुक्त अठाईसका बन्ध करके, प्रमत्त गुणस्थानमें जाकर, तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करके, तीर्थंकर देवगति सहित उनतीसको आठ भंग सहित बाँधे तो उन दोनोंके भंगोंको परस्परमें गुणा करनेपर आठ हुए। पुनः प्रमत्त गुणस्थानवर्ती आठ भंग सहित देवगतियुत अठाईसको बाँधकर अप्रमत्त होकर देवगति आहारक द्विक सहित तीसको एक भंगके साथ बाँधे तो आठ भंग हुए। पुनः प्रमत्त आठ भंग सहित अठाईसको बाँध अप्रमत्त होकर तीर्थंकर आहारक सहित इकतीसको एक भंगके साथ बाँधे तो आठ भंग हुए। पुनः अप्रमत्त तीर्थंकर देवगति सहित उनतीसको एक भंगके साथ बाँधकर मरकर देव असंयत होकर आठ भंग सहित मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसको बाँधे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कट्टुगुं । ८ ॥ मत्तमप्रमत्तसंयतनाहारयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमं कट्टुत्तलुं तीर्त्थबंधमं प्रारंभिसि एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेक भंगयुतमागि कट्टुगुं । मत्तमुपशमश्रेण्यवतरणदोळु अपूर्व्वकरणनेकभंगयुतैकप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं देवगतियुतमागियुं देवगतितीर्त्थयुतमागियुं देवगत्याहारद्वययुतमागियुं देवगत्याहारद्वयतीर्त्थयुतमागियुं कट्टुगुमप्पुदरिंदमवु नाल्कु भंगंगळुमप्पुवु । ४ ॥ कूडि पंचचत्वारिंशद् भंगंगळप्पुवें बुदर्त्थं ॥

अनंतरं प्रमादरहितरुगळ अल्पतरभंगंगळं पेळ्दपरु :—

इगिविहिगिगिखखतीसे दस णव णवडधियवीसमट्ठविहं ।
देवचउक्केक्केक्कं अपमत्तप्पदरछत्तीसा ॥५७८॥

एकविधे एकैक खखाधिकत्रिंशत्के दशनव नवाष्टाधिकविंशतिरष्टविधा देवचतुष्के एकस्मिन्नेकोऽप्रमत्ताल्पतर षट्त्रिंशत् ॥

एकैकभंगंगळनुळ्ळ एक एक खखाधिक त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळोळु दश नव नव अष्टाधिकविंशतिप्रकृतिस्थानंगळु प्रत्येकमष्टाष्टभंगयुतंगळप्पुवु । देवचतुष्कदोळोंदरोळोंदु भंगमागुत्तं विरलु नाल्ककक्कं नाल्कु भंगंगळप्पु ४ वितप्रमत्ताल्पतर षट्त्रिंशद् भंगंगळप्पुवु । ३६ ॥ संदृष्टि :—

देवगत्यष्टधानवविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तो भूत्वा तीर्थाहारैकधैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्तः एकधाहारत्रिंशत्कं बध्नंस्तीर्थबन्धं प्रारभ्यैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्येकः । पुनरवरोहकापूर्वकरणः एकधैककं बध्नन् देवगतियुतं देवतीर्थयुतं देवगत्याहारकयुतं देवगत्याहारकतीर्थयुतं च बध्नातीति चत्वारः । एवं पंचचत्वारिंशदित्यर्थः ॥५७७॥ अथाप्रमत्तादीनामल्पतरभंगानाह—

एकैकधैकैकखखाधित्रिंशत्केष्वष्टाष्टधादशनवनवाष्टाधिकविंशतिकान्येकैकधादेवचतुष्कं चेत्यप्रमत्ताल्पतराः षट्त्रिंशत् । तद्यथा—

तो आठ भंग होते हैं। पुनः प्रमत्त देवगति तीर्थसहित उनतीसको आठ भंगोंके साथ बाँध अप्रमत्त होकर तीर्थ आहारक सहित इकतीसको एक भंगके साथ बाँधे तो आठ भंग हुए। पुनः अप्रमत्त आहारक सहित तीसको एक भंगके साथ बाँध तीर्थंकरके बन्धको प्रारम्भ कर एक भंग सहित इकतीसको बाँधे तो एक भंग हुआ। पुनः उतरता हुआ अपूर्वकरण एक भंग सहित एकको बाँधकर नीचे आकर देवगतियुत अठाईसको या देवगति तीर्थ सहित उनतीस को या देवगति आहारक सहित तीसको या देवगति आहारक तीर्थ सहित इकतीसको एक भंगके साथ बाँधनेपर चार भंग होते हैं। इस प्रकार पैंतालीस भुजाकार होते हैं ॥५७७॥

आगे अप्रमत्तमें अल्पतर भंग कहते हैं—

एक एक भंगसहित एक एक शून्य शून्य अधिक तीस प्रकृतिरूप स्थानोंको बाँधकर आठ आठ भंग सहित दस नौ नौ आठ अधिक बीस प्रकृतिरूप स्थान और एक एक भंगके साथ देवगति सहित चार स्थानोंको बाँधनेपर अप्रमत्तमें छत्तीस अल्पतर होते हैं। वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्रमादाल्पतर								अवक्तव्य भंग			
म ३०	२९	३६ २९	२८	१	१	१	१	१	म २९	म ३०	अल्पतर
८	८ प्र	८ प्र	८ प्र	१	१	१	१	१	८	८	३६
३१ १	३१ १	३० १	३० १	२८ १	२९ १	३० १	३१ १	०	०	०	अवक्तव्य १७

इल्लि रचनाभिप्रायं सूचिसल्पडुगुमें ते दोडे अप्रमत्तसंयतं देवगतितीर्थाहारयुत एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमागि कट्टुत्तं मरणमादोडे देवासंयतनागि मनुष्यगतितीर्थयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८ । मत्तमप्रमत्तसंयत नेकभंगयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं प्रमत्तसंयतनागि देवगतितीर्थयुतनवविंशतिस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८ ॥ मत्तमप्रमत्तसंयत नेकभंगयुत देवगत्याहारयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं प्रमत्तसंयतनागि तीर्थबंधप्रारंभमं माडि देवगतितीर्थयुत नवविंशतिस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८ ॥ मत्तमप्रमत्तसंयतनाहार देवगतियुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमनेकभंगयुतमं कट्टुत्तं प्रमत्तसंयतनागि देवगतियुताष्टाविंशतिस्थानमनष्टभंगयुतमागि कट्टुगुं । ८ ॥ मत्तमपूर्व्वकरणनारोहणदोळेक भंगयुत देवगतियुत चतुःस्थानंगळं कट्टुत्तं स्वसप्तम भागमं पोर्द्दि एकभंगयुतैकप्रकृतिस्थानमं कट्टुत्तं विरलु नाल्कुं स्थानंगळोळु नाल्कु भंगंगळप्पु—४ वितु प्रमादरहितनगळल्पतरभंगंगळु षट्त्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवें बुदर्थं ॥

अप्रमत्तः एकधा देवगतितीर्थाहारैकत्रिंशत्कं बध्नन् मृत्वा देवासंयतो भूत्वाष्टधा मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः अप्रमत्तः एकधैकत्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्तो भूत्वा देवगतितीर्थनवविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्त एकधा देवगत्याहारकत्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्तोभूत्वा तीर्थबन्धं प्रारभ्याष्टधा देवगतितीर्थनवविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्तः एकधाहारदेवगतित्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्तो भूत्वा अष्टधा देवगत्याष्टविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः अपूर्वकरणआरोहण एकैकधादेवगतिचतुःस्थानानि बध्नन् सप्तमभागं गत्वा एकधैककं बध्नातीति

देवगति आहारक तीर्थ सहित इकतीसको एक भंगके साथ बाँधकर अप्रमत्त मरकर देव असंयत होकर आठ भंगके साथ मनुष्यगति तीर्थ सहित तीसको बाँधे तो आठ भंग हुए। तथा अप्रमत्त एक भंगके साथ इकतीसको बाँध प्रमत्त होकर आठ भंगके साथ देवगति तीर्थ सहित उनतीसको बाँधे तो आठ हुए। अप्रमत्त एक भंगके साथ देवगति आहारक सहित तीसको बाँधकर तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करके आठ भंगके साथ देवगति तीर्थ सहित उनतीसको बाँधे तो आठ हुए। अप्रमत्त एक भंगके साथ आहारक देवयुत तीसको बाँध प्रमत्त होकर आठ भंगके साथ देवगति सहित अठाईसको बाँधे तो आठ हुए। अपूर्वकरण चढ़ता हुआ एक एक भंग सहित देवगति सहित अठाईस, देवगति तीर्थ सहित उनतीस, देवगति आहारक सहित तीस, देवगति आहारक तीर्थ सहित इकतीसके स्थानको बाँधकर सातवें भागमें एक भंग सहित एक प्रकृति रूप स्थानको बाँधे तो चार भंग होते हैं, इस प्रकार छत्तीस अल्पतर होते हैं ॥५७८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं मिथ्यादृष्टयसंयताप्रमादरुगळ भुजाकारादिगळं कूडिदोडे सर्व्वभुजाकारादिगळप्पुवेंदु पेळ्दपरु :—

सव्वपरट्ठाणेण य अयदपमत्तिदरसव्वभंगा हु।
मिच्छस्स भंगमज्झे मिलिदे सव्वे हवे भंगा ॥५७९॥

सर्व्वपरस्थानेन च असंयतप्रमत्तेतर सर्व्वभंगाः खलु। मिथ्यादृष्टेर्भंगमध्ये मिलिते सर्व्वे भवेयुर्भंगाः ॥

सर्व्वंपरस्थानवोडनेयुं च शब्दविदं स्वस्थानवोडनेयुं परस्थानदोडनेयुं कूडिद असंयता। प्रमादरुगळसर्व्वभुजाकारादिभंगंगळु मिथ्यादृष्टिय भुजाकारादिभंगमध्यदोळु कूडुत्तंविरलु नामकर्म्मसर्व्वभुजाकारादिभंगंगळप्पुवल्लि मिथ्यादृष्टयसंयतादिगळ भुजाकारादिगळगे संदृष्टि :

		मि अवस्थि ८९२१८८७०	उपशांतकषाया-
मि ४४६०९४३५	मि अल्पतर ४४६०९४३५	असंयताव ३७०६४	वक्तव्य भंग
असं भुजा ३६९९२	असंयताल्पतर ७२	अप्रमादावस्थितं ८१	१७ ॥
अप्रमाद भुजा ४५	अप्रमादाल्पतर ३६	उपशांतावस्थित १७	
युति ४४६४६४७२	युति ४४६०९५ ४३	युति ८९२५६० ३२	

अनंतरं भुजाकारादि भंगंगळुत्पत्तिसाधारणोपायमं गाथाद्वयदिदं पेळ्दपरु :—

भुजगारा अप्पदरा हवंति पुव्ववरठाणसंताणे।
पयडिसमोऽसंताणोऽपुणरुत्तोत्ति य समुद्दिट्ठो ॥५८०॥

भुजाकाराल्पतरा भवंति पूर्व्वापरस्थानसंताने। प्रकृतिसमोऽसंतानोऽपुनरुक्त इति समुद्दिष्टः ॥

चत्वारः। एवं षट्त्रिंशत् ॥५७८॥ अथ भुजाकारादीनेकीकरोति—

सर्वपरस्थानैः चशब्दात्स्वस्थानैः स्वपरस्थानैश्चाश्रिताः असंयताप्रमत्तादिसर्वभुजाकारादिभंगाः खलु मिथ्यादृष्टिभुजाकारादिभंगेषु मिलंति तदा नामकर्मणः सर्वे भुजाकारादिभंगाः स्युः संदृष्टिः—

भुजाकार	अल्पतर	अवस्थित	
मि ४४६०९४३५	मि ४४६०९४३५	मि ८९२१८८७०	
असं० ३६९९२	असं ७२	असं० ३७०६४	उपशान्त
अप्र० ४५	अप्र० ३६	अप्र० ८१	कषायावक्त-
युति ६४६४६४७२	युति ४४६०९५४३	उपशां० १७	व्यभंगाः
		युति ८९२५६०३२	१७

५७९। अथ तेषामुत्पत्तिसाधरणोपायं गाथाद्वयेनाह—

आगे भुजाकार आदिको एकत्र करते हैं—

सर्व परस्थान, स्वस्थान और स्व-परस्थानके आश्रयसे जो असंयत अप्रमत्त आदिके सब भुजकारादि बन्ध होते हैं उनको मिथ्यादृष्टिके भुजकारादि भंगोंमें मिलानेपर नामकर्मके सब भुजकारादि बन्ध होते हैं उनकी संदृष्टि ऊपर दी है ॥५७९॥

आगे उन भंगोंकी उत्पत्तिका साधारण उपाय दो गाथाओंसे कहते हैं—

पूर्व्वापरस्थानसंताने पूर्व्वापराऽपरपूर्व्वस्थानसमुदायदोळु २३।२५।२६।२८।२९।३०।३१।१। अनुसंधानकरणमागुत्तं विरलु भुजाकारंगळुमल्पतरंगळुमप्पुवु। प्रकृतिसमोऽसन्तानः सदृशाक्षापेक्षे इदं प्रकृतिसंख्यासममनुळ्ळुदादोडं असंतानः प्रकृतिसमुदायभेदमुळ्ळुदु अपुनरुक्त इति निर्दिष्टः अपुनरुक्तमें दु पेळल्पट्टुदु। अदें तें दोडे नर्वावंशतिप्रकृतिस्थानदोळु संहननभेददिदं तीर्त्थभेददिदं प्रकृतिसमुदायक्के समत्वमादोडमपुनरुक्तत्वं सिद्धमें तंते ॥

भुजगारे अप्पदरेऽवत्तव्वे ठाइदूण समबंधे।
होदि अवट्ठिदबंधो तब्भंगा तस्स भंगा हु ॥५८१॥

भुजाकारान् अल्पतरानवक्तव्यान् स्थापयित्वा समबंधे भवत्यवस्थितबंधः तद्भंगास्तस्य भंगाः खलु ॥

भुजाकारंगळनू अल्पतरंगळनू अवक्तव्यंगळनू बेरे बेरे स्थापिसि द्वितीयादि समयंगळोळु समानबंधमागुत्तं विरलु अवस्थितबंधमक्कुमवु कारणमागि तद्भंगाः तेषां भुजाकारादीनां भंगास्तद्भंगाः। आ भुजाकाराकारादिगळ भंगंगळु तस्य भंगाः खलु अवस्थितभंगगळप्पुवु। स्फुटमागि॥

अनंतरमवक्तव्य भंगंगळं पेळदपरु :—

पडिय मरिएक्कमेक्कूणतीस तीसं च बंधगुवसंते।
बंधो दु अवत्तव्वो अवट्ठिदो बिदियसमयादी ॥५८२॥

पतितमृतैकैकोनत्रिंशत्त्रिंशच्च बंधकोपशांते। बंधस्त्ववक्तव्योऽवस्थितो द्वितीयसमयादिः ॥

पूर्वस्थानस्याल्पप्रकृतिकस्य बहुप्रकृतिकेनानुसंधाने भुजाकारा भवंति। परस्थानस्य बहुप्रकृतिकस्याल्पप्रकृतिकेनानुसंधानेऽल्पतरा भवंति। प्रकृतिसंख्यासमानोऽपि यः असंतानः प्रकृतिसमुदायभेदयुक् सोऽपुनरुक्त इति निर्दिष्टः यथा—संहननेन तीर्थेन वा युते नवविंशतिके प्रकृतिसमुदायस्य समत्वेऽप्यपुनरुक्तत्वं ॥५८०॥

भुजकारानल्पतरानवक्तव्यांश्च संस्थाप्य द्वितीयादिसमयेषु समानं बध्नाति तदावस्थितबन्धः स्यात्। ततस्तेषां भंगा यावंतस्तावन्तः खल्ववस्थितभंगा भवन्ति ॥५८१॥ अथ तानवक्तव्यभंगानाह—

थोड़ी प्रकृतिरूप पूर्वस्थानको बहु प्रकृति रूप स्थानके साथ लगानेपर भुजाकार होता है। बहु प्रकृति रूप पिछले स्थानको थोड़ी प्रकृति रूप स्थानके साथ लगानेपर अल्पतर होता है। प्रकृतियोंकी संख्या समान होते हुए भी जो असन्तान है अर्थात् प्रकृति भेदयुक्त है वह अपुनरुक्त कहा है। जैसे तीर्थ बिना संहनन सहित भी उनतीसका बन्ध है और तीर्थ सहित संहनन बिना भी उनतीसका बन्ध है। इन दोनोंमें उनतीसकी संख्या समान होते हुए भी तीर्थंकर और संहनन प्रकृतिका भेद होनेसे अपुनरुक्तपना कहा है ॥५८०॥

भुजकार अल्पतर और अवक्तव्य भंगोंको स्थापित करके द्वितीयादि समयोंमें जब समान बन्ध होता है तब अवस्थित बन्ध होता है। अतः उन तीनोंके जितने भंग होते हैं उतने ही अवस्थित भंग होते हैं ॥५८१॥

आगे अवक्तव्य भंगोंको कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवरोहणपतितैकबंधकोपशांतकषायनोळं मृतेकोनत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधकोपशांतकषायनोळुमवक्तव्यबंधमक्कुं। तु मत्ते द्वितीयसमयादियागुळळ बंधमवस्थितबंधमक्कुमें दरियल्पडुगुं। भुजाकारादिगळें दु पेळल्पडदवक्तव्यंगळप्पुवु। एंतें दोडे उपशांतकषायनवतरणदोळु नामकर्म्मबंधकनल्लदिर्द्दैकप्रकृतिस्थानमं सूक्ष्मसांपरायनागि कट्टिदोडों दु भंगमुं मरणमादोडे देवासंयतनागि मनुष्यगतियुताष्टभंगयुतनवविंशतिस्थानमं कट्टिदोडें दु भंगंगळुं सतीर्त्थाष्टभंगयुतमनुष्यगतियुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टिदोडें दु भंगंगळुमंतु पदिनेळु भंगंगळप्पुवु १७॥ द्वितीयादिसमयंगळवस्थित भंगंगळोळवस्थित भंगंगळुमितुपदिनेळप्पुवें बुदर्त्थं ॥१७॥

घोरसंसारवाराशितरंगनिकरोपमैः। नामबंधपदैर्ज्जीवा वेष्टितास्त्रिजगद्भुवाः॥

अनंतरं नामकर्म्मोदयस्थानप्ररूपणप्रकरणमं द्वाविंशतिगाथासूत्रंगळिंद पेळलुपक्रमिसुत्तं नामकर्म्मोदयस्थानंगळगे पंचकालंगळप्पुवें दु पेळदपरु :—

विग्गहकम्मसरीरे सरीरमिस्से सरीरपज्जत्ते।
आणावचिपज्जत्ते कमेण पंचोदये काला ॥५८३॥

विग्रहकार्म्मणशरीरे शरीरमिश्रे शरीरपर्य्याप्तौ। आनापानवाक्पर्य्याप्त्योः क्रमेण पंचोदये कालाः॥

विग्रहगतिय कार्म्मणशरीरदोळं शरीरमिश्रदोळं शरीरपर्य्याप्तियोळं आनापानपर्य्याप्तियोळं भाषापर्य्याप्तियोळंमितो क्रमदिदं नामकर्म्मप्रकृतिस्थानोदयंगळगवसरकालंगळप्पुवु। यिल्लि विग्रहगतियोळें दोडे सालदुं। विग्रहगतिय कार्म्मणशरीरदोळें देनलेकें दोडे विग्रहगतियोळल्लदे

अवक्तव्यास्तु उपशान्तकषाये किमपि नामाबध्नन् पतितः सूक्ष्मसांपरायं गत एककं बध्नाति वा मरणे देवासंयतो भूत्वा मनुष्यगतिनवविंशतिकं मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कं चाष्टाष्टधा बध्नातीति सप्तदश भवन्ति। पुनः तद्द्वितीयादिसमयेष्ववस्थितबन्धः स्यात्तेन तेऽपि तावन्तः।

घोरसंसारवाराशितरंगनिकरोपमैः।
नामबन्धपदैर्जीवा वेष्टितास्त्रिजगद्भुवाः ॥१॥ ५८२।

अथ नामोदयस्थानानि द्वाविंशतिगाथाभिराह—

तेषां स्थानानामुदयस्य नियतकालत्वात्ते कालाः विग्रहगतिकार्मणशरीरे शरीरमिश्रे शरीरपर्याप्तौ

उपशान्त कषायमें किसी भी नामकर्म प्रकृतिको न बाँधकर पीछे सूक्ष्म साम्परायमें आकर एकको बाँधता है। अथवा मरनेपर देव असंयत होकर मनुष्यगति सहित उनतीस या मनुष्यगति तीर्थ सहित तीसको आठ-आठ भंग सहित बाँधता है। इस तरह सतरह अवक्तव्य बन्धके भंग होते हैं। द्वितीयादि समयमें भी उतना ही बन्ध होनेपर अवस्थित बन्ध भी उतने ही जानना ॥५८२॥

अब नामकर्मके उदयस्थान बाईस गाथाओंसे कहते हैं—

नामकर्मके उदय स्थानोंका काल नियत है। जिस-जिस कालमें उदय योग्य हैं वहाँ ही उनका उदय होता है वे काल पाँच हैं—विग्रहगति या कार्मण शरीर, मिश्रशरीर, शरीर पर्याप्ति, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, और भाषापर्याप्ति काल। कार्मण शरीर जब पाया जाये वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्म्मणकायावसरं समुद्घातकेवलियोळुंटप्पुदरिंदं तत्कालावसरग्रहणनिमित्तमागि विग्रहकार्म्मणशरीरग्रहणमक्कुमें दरियल्पडुगुमल्लि विग्रहगत्यादिगळ कालप्रमाणमं क्रमदिदं पेळदपरु :—

एक्कं व दो व तिण्णि व समया अंतोमुहुत्तयं तिसुवि ।
हेट्ठिमकालूणाओ चरिमस्स य उदयकालो दु ॥५८४॥

एको वा द्वौ वा त्रयो वा समया अंतर्म्मुहूर्त्तस्त्रिष्वपि । अधस्तनकालोनायुश्चरमस्य चोदयकालस्तु ॥

विग्रहगतिय कार्म्मणशरीरदोळु उदयकालमेकद्वित्रिसमयंगळप्पुवु । १ । २ । ३ । शरीरमिश्रदोळुदयकालमंतर्म्मुहूर्त्तप्रमितमक्कुमंते शरीरपर्य्याप्तियोळं उच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळमक्कुं । २१ । भाषापर्य्याप्तियोळमा नाल्कुं कालंगळ युतियुमंतर्म्मुहूर्त्तप्रमितमक्कु प ३२ / स ३ / २१ ३ मदरिंदमूनमप्प भुज्यमानायुष्यमाणमेनितनितुमुदयकालप्रमाणमक्कुं । विग्रहगतिशरीरमिश्रशरीरपर्य्याप्ति उच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्ति भाषापर्य्याप्तिगळोळु नियतोदयनामस्थानंगळोळवप्पुदरिनी कालप्रमाणं पेळल्पट्टुदु ।

ई पंचकालंगळं जीवसमासेयोळु योजिसिदपरु :

आनपानपर्याप्तौ भाषापर्याप्तौ च क्रमेण पंच भवन्ति । अत्र विग्रहगतावित्येतावत एव ग्रहणं समुद्घातकेवलिनः कार्मणकायस्य ग्रहणार्थं ॥५८३॥

तेषां कालानां प्रमाणं क्रमेण विग्रहगतेः कार्मणशरीरे एको वा द्वौ वा त्रयो वा समयाः, शरीरमिश्रे शरीरपर्याप्तौ उच्छ्वासनिश्वासपर्याप्तौ च प्रत्येकमन्तर्मुहूर्तः, भाषापर्याप्तौ उक्तचतुःकालोनं सर्वं भुज्यमानायुः प ३ / स ३ / २१ ३ ॥५८४॥ तान् पंचकालान् जीवसमासेषु योजयति—

कार्मण शरीरकाल है । जबतक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक मिश्रशरीर काल है । शरीर पर्याप्ति पूर्ण होनेपर जबतक श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक शरीर पर्याप्तिकाल है । श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण होनेपर जबतक भाषा पर्याप्ति पूर्ण न हो तबतक श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिकाल है । भाषा पर्याप्ति पूर्ण होनेपर सब आयु प्रमाण काल भाषापर्याप्तिकाल है । यहाँ विग्रहगति और कार्माण दोका ग्रहण समुद्घात केवलीके कार्माणको ग्रहण करनेके लिए किया है ॥५८३॥

उन पाँच कालोंका प्रमाण क्रमसे विग्रहगतिके कार्मणशरीरमें एक समय, दो समय या तीन समय है । मिश्र शरीर, शरीर पर्याप्ति, और उच्छ्वास-निश्वास पर्याप्तिमें प्रत्येकका अन्तर्मुहूर्त काल है । भाषापर्याप्तिमें उक्त चार कालोंका प्रमाण घटानेपर शेष सम्पूर्ण भुज्यमान आयु प्रमाण काल जानना ॥५८४॥

उन पाँच कालोंको जीव समासोंमें लगाते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वापज्जत्ताणं दोण्णिवि काला चउक्कमेयक्खे ।
पंच वि होंति तसाणं आहारस्सुवरिमचउक्कं ॥५८५॥

सर्व्वापर्य्याप्तानां द्वावपि कालौ चतुष्कमेकाक्षे । पंचापि भवंति त्रसानामाहार शरीरस्योपरितनचतुष्कं ॥

सर्व्वलब्ध्यपर्य्याप्तजीवंगळ्गे विग्रहगतिय कार्म्मणशरीरकालमुमौदारिकशरीरमिश्रकालमुमेरडेयप्पुवु । एकेंद्रियंगळगे विग्रहगतिशरीरमिश्रशरीरपर्य्याप्ति उच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तिगळेंब नाल्कुं कालंगळप्पुवु । त्रसजीवंगळ्गे पंचकालंगळुमप्पुवु । आहारकशरीरदोळु विग्रहगतिवर्ज्जितोपरितन चतुःकालंगळप्पुवु ।

अनंतरं समुद्घातकेवलियोळु संभविसुव कालंगळं पेळ्दपरु :—

कम्मोरालियमिस्सं ओरालुस्सासभास इदि कमसो ।
काला हु समुग्घादे उवसंहरमाणगे पंच ॥५८६॥

कार्म्मणौदारिकमिश्रमौदारिकोच्छ्वास भाषा इति क्रमशः । कालाः खलु समुद्घाते उपसंहरमाणे पंच ॥

कार्म्मणशरीरकालमुमौदारिकमिश्रकालमुमौदारिकशरीरपर्य्याप्तिकालमुमुच्छ्वासनिश्वास - पर्य्याप्तिकालमुं भाषा पर्य्याप्तिकालमुमेंब पंचकालंगळोळु समुद्घातोपसर्प्पणोपसंहरमाणरोळु क्रमदिदं मूरुमय्दुं कालंगळप्पुववाउवेंदोडे :

ओरालं दंडदुगे कवाडजुगले य तस्स मीसंतु ।
पदरे य लोगपूरे कम्मे व य होदि णायव्वो ॥५८७॥

औदारिक शरीरपर्य्याप्तिकालं दंडद्वयदोळक्कुं । कवाटयुगळदोळु तदौदारिकमिश्रकालमक्कुं ।

ते कालाः सर्वलब्ध्यपर्याप्तेष्वाद्यौ द्वौ । एकेन्द्रियेषु आद्याश्चत्वारः । त्रसेषु पंच । आहारकशरीरे आद्यं विनोपरितनाश्चत्वारो भवन्ति ॥५८५॥

समुद्घातकेवलिनि खलु कालाः कार्मणः औदारिकमिश्रः औदारिकशरीरपर्याप्तिः उच्छ्वासनिश्वासपर्याप्तिः भाषापर्याप्तिश्चेति क्रमेण पंच । अमी उपसंहरमाणके एव उपसर्पमाणके त्रयस्यैव संभवात् ॥५८६॥ तद्यथा—

दण्डद्वये कालः औदारिकशरीरपर्याप्तिः, कवाटयुगले तन्मिश्रः प्रतरयोर्लोकपूरणे च कार्मण इति

वे काल सब लब्ध्यपर्याप्तकोंमें आदिके दो ही हैं। एकेन्द्रियोंमें आदिके चार हैं। त्रसोंमें पाँचों हैं। आहारक शरीरमें पहलेके बिना ऊपरके चार काल हैं ॥५८५॥

समुद्घात केवलीमें कार्मण, औदारिक मिश्र, औदारिक शरीर पर्याप्ति, उच्छ्वासनिःश्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति ये क्रमसे पाँच काल होते हैं। ये पाँचों काल प्रदेशोंको संकोचते समय होते हैं। फैलाते समय तीन ही होते हैं ॥५८६॥

वही कहते हैं—

दण्ड रूप करने तथा समेटने रूप दोमें औदारिक शरीर पर्याप्तिकाल है। कपाट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतरद्वयलोकपूरणंगळोळु कार्म्मणशरीरकालमक्कुमें दरियल्पडुगुं मूलशरीरप्रवेशप्रथमसमयं मोडल्गोंडु संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तनोळें तंते पर्य्याप्तिगळु परिपूर्णंगळप्पुवु।

दंड	३०	३१
कवाट	२६	२७
प्रतर	२०	२१
लोकपू.	२०	२१

भाषा	३०	३१
उच्छ्वा	२९	३०
इंद्रि	२८	२९
शरीर	२८	२९
आहा	२८	२९
मूलश	२८	२९

लो १

प्रका क। मि दं औ		प्र क दं औ

अनंतरं नामकर्म्मोदयस्थानंगळगुत्पत्तिक्रममं गाथाचतुष्टयदिदं पेळदपरु :—

ज्ञातव्यः। मूलशरीरप्रथमसमयात्संज्ञिवत्पर्याप्तयः पूर्यन्ते—

दं	३०	३१
क	२६	२७
प्र	२०	२१
लो	२०	२१

भा	३०	३१
उ	२९	३०
इ	२८	२९
श	२८	२९
मू	२८	२९

लो १

प्र क दं		प्र क दं

॥५८७॥ अथ नामोदयस्थानानामुत्पत्तिक्रमं गाथाचतुष्टयेनाह—

रूप करने तथा समेटने रूप दोमें औदारिक मिश्रशरीर काल है। प्रतर रूप करने और समेटनेमें तथा लोकपूरणमें कार्मणकाल है। इस तरह फैलाते समय तो तीन ही काल हैं और समेटतेमें मूलशरीरमें प्रवेश करनेके प्रथम समयसे लगाकर संज्ञी पंचेन्द्रियकी तरह क्रमसे पर्याप्ति पूर्ण करता है अतः पाँचों काल होते हैं ॥५८७॥

आगे नामकर्मके उदय स्थानोंका क्रमसे उत्पन्न होनेका विधान चार गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाम धुओदय बारस गइजाईणं च तसतिजुम्माणं।
सुभगादेज्जजसाणं जुम्मेक्कं विग्गहे वाणू ॥५८८॥

नाम ध्रुवोदया द्वादश गतिजातीनां च त्रसत्रियुग्मानां सुभगादेययशसां युग्मैकं विग्रह एवानुपूर्व्यं ॥

"तेजदुगं वण्णचऊ थिरसुहजुगळ गुरुणिमिण धुवउदया" एंब नाम ध्रुवोदयप्रकृतिगळु पन्नेरडुं ·चतुर्गतिगळोळं पंचजातिगळोळं त्रसस्थावरबादरसूक्ष्मपर्य्याप्तापर्य्याप्तत्रियुग्मंगळोळं सुभगदुर्भगादेयानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्तिगळेंब युग्मत्रयदोळोंदोंदुगळुं विग्रहगतियोळे आनुपूर्व्यचतुष्कदोळोंदुदयक्कंबक्कुं। विग्रहगतियोळल्लदे ऋजुगतियोळानुपूर्व्योदयमिल्लेंबुदर्त्थमा ऋजुगतियोळु चतुर्व्विंशत्यादिगळक्कुं ॥

मिस्सम्मि तिअंगाणं संठाणाणं च एगदरगं तु।
पत्तेयदुगाणेक्को उवघादो होदि उदयगदो ॥५८९॥

मिश्रे त्र्यंगानां संस्थानानां चैकतरं तु। प्रत्येकद्वयोरेकमुपघातो भवत्युदयगतः ॥

त्रसस्थावरंगळ शरीरमिश्रकालदोळौदारिकवैक्रियिकाहारकगळेंब शरीरत्रयदोळं षट्संस्थानंगळोळमेकतरमुं तु मत्ते प्रत्येक साधारणद्वयदोळेक प्रकृतियुमुदयागतोपघातनामकर्म्ममुं—

तेजदुगं वण्णचऊ थिरसुहजुगलागुरुणिमिणेति नामध्रुवोदयाः द्वादश, चतुर्गतिषु पंचजातिषु त्रसस्थावरयोर्बादरसूक्ष्मयोः पर्याप्तापर्याप्तयोः सुभगदुर्भगयोरादेयानादेययोर्यशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्योः चतुरानुपूर्व्येषु चैकैकमित्येकविंशतिकं तदानुपूर्व्ययुतत्वाद्विग्रहगतावेवोदेति न ऋजुगतौ तस्यां चतुर्विंशतिकादीनामेवोदयात् ॥५८८॥

पुनस्तस्मिन्नेकविंशतिके आनुपूर्व्यमपनीय औदारिकादित्रिशरीराणां षट्संस्थानानां चैकतरं प्रत्येकसाधारणयोरेकं उपघातश्चेति चतुष्कमुदयगतं मिलितं तदा चतुर्विंशतिकं भवति। तच्च त्रसस्थावरमिश्रकाले एवोदेति ॥५८९॥

तैजस, कार्मण, वर्णादि चार, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, अगुरुलघु, निर्माण ये बारह नामकर्मकी ध्रुवोदयी प्रकृतियाँ हैं। इनका उदय सबके निरन्तर पाया जाता है। चार गतियोंमें, पाँच जातियोंमें, त्रसस्थावरमें, बादरसूक्ष्ममें, पर्याप्तअपर्याप्तमें, सुभगदुर्भगमें, आदेयअनादेयमें, यशःकीर्ति अयशःकीर्तिमें और चार आनुपूर्वीमें-से एक-एकका ही उदय होता है। ऐसे इक्कीस प्रकृति रूप स्थानका विग्रहगतिमें ही उदय होता है क्योंकि आनुपूर्वीका उदय विग्रह गतिमें ही होता है। ऋजुगतिमें इक्कीसके स्थानका उदय नहीं है उसमें चौबीस आदिका ही उदय है ॥५८८॥

उस इक्कीसके स्थानमें आनुपूर्वीको घटाकर औदारिक आदि तीन शरीरोंमें-से एक, छह संस्थानोंमें-से एक, प्रत्येक और साधारणमें-से एक, तथा उपघात ये चार मिलानेपर चौबीसका उदयस्थान होता है। यह त्रस और स्थावरके शरीरमिश्रकालमें उदय होता है ॥५८९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तसमिस्से ताणि पुणो अंगोवंगाणमेगदरगं तु ।
छण्हं संहडणाणं एगदरो उदयगो होदि ॥५९०॥

त्रसमिश्रे तानि पुनरंगोपांगानामेकतरं तु । षण्णां संहननानामेकतर उदयगो भवति ॥

त्रसमिश्रदोळु पूर्व्वोक्तप्रकृतिगळुं मत्ते अंगोपांगंगळोळेकतरमुं षट्संहननंगळोळेकतरमुमु दयागतमक्कुं ॥

परघादमंगपुण्णे आदावदुगं विहायमविरुद्धे ।
सासवची तप्पुण्णे कमेण तित्थं च केवलिणि ॥५९१॥

परघातोंगपूर्णे आतपद्वयं विहायोगतिरविरुद्धे । उच्छ्वासवाचौ तत्पूर्णे क्रमेण तीर्थं च केवलिनि ॥

परघातनामं त्रसस्थावरंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळुदयक्के बक्कुं । आतपोद्योतंगळुं प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगतिगळुं यथायोग्यं स्थावरत्रसंगळ पर्य्याप्तियोळविरुद्धमागुदयिसुगुं । उच्छ्वासमुं स्वरद्वयमुं स्वस्वपर्य्याप्तियोळुदयमनेय्दुगुं । तीर्त्थकरनामकर्म्ममुं केवलज्ञानियोळुदइसुगु मी प्रकृतिगळुदयक्रममुं कालक्रममुमी रचनाविशेषदोळरियल्पडुगु मप्पुदरिंदमवक्के संदृष्टि :—

विग्रह		शरीरमिश्र
ते । व । थि । सु । अ । णि	ग । जा । त । बा । प । सु । आ । ज । आ	श । सं । प्र । उ →
२ । ४ । २ । २ । १ । १	४ । ५ । २ । २ । २ । २ । २ । २ । ४	३ । ६ । २ । १
१२	१ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १

	त्रसमिश्र	शरीरपर्य्याप्ति	उच्छ्वा. पर्य्या.	भा. प.	केवलियोळु
←	अ । सं । हु ।	प । आ । वि ।	उच्छ्वास	स्वर	तीर्थं ॥
	३ । ६ ।	१ । २ । २ ।	१	२	१
	१ । १ ।	१ । १ । १ ।		१	

अनंतरमेकजीवनोळेकसमयदोळु नामकर्म्मप्रकृत्युदयस्थानंगळं नानापेक्षेयिदं पेळ्दपरु :—

तानि पूर्वोक्तानि चत्वारि, पुनः अंगोपांगेष्वेकतरं षट्संहननेष्वेकतरं चेति षट्कं त्रसमिश्रे उदयगतं स्यात् । परघातः त्रसस्थावराणां शरीरपर्याप्तावुदेति । आतपोद्योतौ प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगती चाविरुद्धं योग्यत्रसस्थावराणां पर्याप्तौ, उच्छ्वासः स्वरद्वयं च स्वस्वपर्याप्तौ, तीर्थं केवलिनि ॥५९०–५९१॥ अथैकैकस्मिन् जीवे एकैकसमये सम्भवन्ति नामोदयस्थानानि नानाजीवं प्रत्युक्तानि तान्येवाह—

पूर्वोक्त चार, तीन अंगोपांगमें-से एक, छह संहननमें-से एक, ये छह मिश्रशरीर त्रसमें उदय योग्य हैं। परघात त्रस और स्थावरोंमें शरीर पर्याप्तिकालमें उदय योग्य है। आतप-उद्योत और प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति अविरुद्ध योग्य त्रस-स्थावरोंके पर्याप्त कालमें ही उदययोग्य हैं। उच्छ्वास और स्वरद्विक अपने-अपने पर्याप्तिकालमें ही उदययोग्य हैं। तीर्थंकरका उदय केवलीमें ही होता है ॥५९०–५९१॥

आगे एक-एक जीवमें एक-एक समयमें सम्भव नामकर्मके उदयस्थान नाना जीवोंके प्रति कहे, उन्हींको कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीसं इगि चउवीसं तत्तो इगितीसओत्ति एयधियं ।
उदयट्ठाणा एवं णव अट्ठ य होंति णामस्स ॥५९२ ॥

विंशतिरेक चतुर्विंशतिस्ततः एकत्रिंशत्पर्यंतमेकाधिकान्युदयस्थानान्येवं नवाष्ट च भवंति नाम्नः ॥

विंशतियुमेकविंशतियुं चतुर्व्विंशतियुमल्लिंदत्तमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानपर्य्यंतमेकाधिकक्रमदिदं नामकर्म्मोदयस्थानंगळप्पुवु । मत्तमंते नवाष्टप्रकृतिस्थानद्वय मुमक्कुं । २० । २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ९ । ८ ॥

ई पन्नेरडुं नामकर्म्मोदयस्थानंगळगे यथाक्रमदिदं स्वामिगळं पेळदपरु :—

चदुगदिया एइंदी विसेसमणुदेवणिरय एइंदी ।
इगिबितिचपसामण्णा विसेससुरणारगेइंदी ॥५९३॥

चातुर्गतिकाः एकेंद्रियाः विशेषमनुष्यदेवनारकैकेंद्रियाः । एकद्वित्रिचपसामान्या विशेषसुरनारकैकेंद्रियाः ॥

सामण्णसयलवियलविसेसमणुस्ससुरणारया दोण्हं ।
सयलवियलसामण्णा सजोगपंचक्खवियलया सामी ॥५९४॥

सामान्यसकलविकल विशेषमनुष्यसुरनारका द्वयोः । सकलविकलसामान्याः सयोगपंचाक्षविकलकाः स्वामिनः ॥

एकविंशतिप्रकृतिगे चतुर्ग्गतिजरुं स्वामिगळप्परु । चतुर्व्विंशतिप्रकृत्युदयस्थानक्केकेंद्रियंगळे स्वामिगळप्परु । पंचविंशतिस्थानक्के विशेषमनुष्यदेवनारकैकेंद्रियजीवंगळु स्वामिकळप्परु । षड्विंशतिस्थानक्के एकेंद्रिय द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय सामान्यरुं स्वामिगळप्परु । सप्तविंशतिस्थानक्के विशेषपुरुषरुं सुररुं नारकरुमेकेंद्रियंगळुं स्वामिगळप्परु । अष्टाविंशतिस्थानक्कयुं नवविंशति प्रकृत्युदय स्थानक्कयुं सामान्यपुरुषरुं सकलंगळुं विकलंगळुं विशेषपुरुषरुं

विंशतिकमेकविंशतिकं चतुर्विंशतिकं ततः पंचविंशतिकाद्येकैकाधिकमेकत्रिंशत्कान्तं पुनः नवकमष्टकं चेति द्वादश नामोदयस्थानानि भवन्ति ॥५९२॥

तेषां स्थानानां स्वामिनः एकविंशतिकस्य चतुर्गतिजाः । चतुर्विंशतिकस्यैकेन्द्रियाः । पंचविंशतिकस्य विशेषमनुष्यदेवनारकैकेन्द्रियाः । षड्विंशतिकस्यैकद्वित्रिचतुःपंचेन्द्रियसामान्यजीवाः । सप्तविंशतिकस्य विशेष-

बीसका, इक्कीसका, चौबीसका आगे एक-एक अधिक इकतीस पर्यन्त तथा नौका, आठका ये बारह नामकर्मके उदय स्थान हैं ॥५९२॥

उन स्थानोंके स्वामी इस प्रकार हैं—इक्कीसके स्थानके स्वामी चारों गतिके जीव हैं। चौबीसके स्वामी एकेन्द्रिय हैं। पच्चीसके स्वामी विशेष मनुष्य, देव, नारकी और एकेन्द्रिय हैं। छब्बीसके एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय सामान्य जीव स्वामी हैं। सत्ताईसके विशेष मनुष्य, देव, नारकी और एकेन्द्रिय स्वामी हैं। अट्ठाईस-उनतीसके सामान्य पुरुष, सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, विशेष पुरुष, देव, नारकी स्वामी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुररं नारकरं स्वामिगळप्परु । त्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानक्के सकलंगळुं विकलंगळं सामान्यपुरुषरुगळुं स्वामिगळप्परु । एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानक्के सयोगिकेवलिगळुं पंचेंद्रियंगळुं द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रियजीवंगळु स्वामिगळप्परु । नवाष्टस्थानंगळगे अयोगिकेवलिगळु स्वामिगळप्परु ॥ संदृष्टि :—

८	अ	ति	के	अयोगि			
९		ति	के	अ	यो		
३	१	के	पं	बि	ति	च	
३	१	स	बि	ति	च	सा	
२	९	सा	स	वि	वि	सु	ना
२	८	सा	स	वि	वि	सु	ना
२	७	वि	सु	ना	ए		०
२	६	ए	बि	ति	च	पं	सा
२	५	विम	वे	ना	ए		
२	४	ए					
२	१	ना	ति	म	दे		
२	०	के					

इल्लि नामध्रुवोदय द्वादशप्रकृतिगळुं १२ । गतिचतुष्टयदोळोंदु १ । जातिपंचकदोळोंदु १ । त्रसद्वयदोळोंदु १ । बादरद्वयदोळोंदु १ । पर्य्याप्तद्वयदोळोंदु १ । सुभगद्वयदोळोंदु १ । आदेयद्वयदोळोंदु १ । यशस्कीर्त्तिद्वयदोळोंदु १ । आनुपूर्व्यचतुष्टयदोळु स्वस्वगतिसंबंधियोंदोंदुदयिसुत्तं

पुरुषाः सुरनारकैकेन्द्रियाश्च । अष्टाविंशतिकनवविंशतिकयोः सामान्यपुरुषाः सकला विकला विशेषपुरुषाः सुरा नारकाश्च । त्रिंशत्कस्य सकला विकला सामान्यपुरुषाश्च । एकत्रिंशत्कस्य सयोगकेवलिनः पंचद्वित्रिचतुरिन्द्रियाश्च, नवकाष्टकयोरयोगकेवलिनः ।

अत्र नामध्रुवोदया द्वादश, चतुर्गतिपंचजातिद्वित्रसबादरपर्याप्तसुभगादेययशस्कीर्तिचतुरानुपूर्व्योदयेष्वेकैकः मिलित्वैकविंशतिकं । तत्तु । कार्मणशरीरचतुर्गतिजविग्रहगत्योरेवोदेति नान्यत्र आनुपूर्व्ययुतत्वात् । तत्र

तीसके सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सामान्य पुरुष स्वामी हैं। इकतीसके सयोग केवली, पंचेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय स्वामी हैं। नौके और आठके स्वामी अयोगकेवली हैं। जिस स्थानका जो स्वामी है उसके उस स्थान सम्बन्धी प्रकृतियोंका उदय होता है।

आगे उन स्थानोंका कथन करते हैं—

नामकर्मकी ध्रुवोदयी १२, चार गतियोंमें-से एक, पाँच जातियोंमें-से एक, त्रस बादर पर्याप्त सुभग आदेय यशःकीर्ति और इनके प्रतिपक्षी छह युगल, उनमें-से एक-एक तथा चार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विरलितु विग्रहगतियकार्म्मणशरीरदोळे एकजीवनोळेकसमयदोळ् युगपदेकविंशतिप्रकृतिगळुदयिसुत्तं विरलु नारकतिर्य्यग्मनुष्यदेवगतिजरुगळगे प्रत्येकमेकविंशतिप्रकृत्युदयस्थानमक्कुमदुवुं विग्रहगतियोळल्लदेल्लियुं संभविसदेकें दोडानुपूर्व्यनामकर्म्मोदययुतमप्पुदरिदं । २१ । न । ति । म । दे ॥ मत्तमानुपूर्व्योदयरहितमाद विंशतिप्रकृतिगळुमौदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरंगळोळन्यतरमुं संस्थानषट्कदोळन्यतममुं प्रत्येकसाधारणशरीरद्वयद्वयदोळन्यतरमुं उपघातमुमितु चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळेकेंद्रियजीवन शरीरमिश्रकाल दोळल्लदेल्लियुमुदयमिल्लेकें बोडे एकेंद्रियंगळगेल्लंगोपांगसंहननोदयंगळिल्लप्पुदरिदं । मत्तमेकेंद्रियजीवन शरीरपर्य्याप्तियोळु परघातमं कूडिदोडे पंचविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २५ ए । मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु आहारकशरीरं विवक्षितमादोडे आहारकांगोपांगमं कूडिदोडाहारकशरीरमिश्रदोळं पंचविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २५ । विशेषमनुष्यमत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु वैक्रियिकशरीरं विवक्षितमादोडे वैक्रियिकांगोपांगमं कूडुत्तं विरलु देवनारकरुगळगे शरीरमिश्रकालदोळु पंचविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २५ । दे । ना । शरी० मिश्र । मत्तमेकेंद्रियंगळ शरीरपर्य्याप्तिय पंचविंशतिप्रकृत्युदयस्थानदोळु आतपनाममं मेणुद्योतनाममं कूडुत्तं विरलेकेंद्रियंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळ् षड्विंशति प्रकृतिस्थानोदयमुमक्कुं । २६ । ए । प । आ । उ । अथवा आतपोद्योतंगळं बिट्टुदुच्छ्वासमं कूडुत्तं विरलेकेंद्रियंगळगुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळं षड्विंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कु । २६ । ए । प । उ । मत्तमा चतुर्व्विंशति-

---

वानुपूर्व्यमपनीयौदारिकादित्रिशरीरेषु षट्संस्थानेषु प्रत्येकसाधारणयोश्चैकैकस्मिन्नुपघाते च क्षिप्ते चतुर्विंशतिकं, तत्तु एकेन्द्रियाणां शरीरमिश्रयोगे एवोदेति नान्यत्र, तेषामंगोपांगसंहननोदयाभावात् । पुनः एकेन्द्रियस्य शरीरपर्याप्तौ तत्र परघाते युते इदं २५ वा विशेषमनुष्यस्याहारकशरीरमिश्रकाले तदंगोपांगे युते इदं २५ । वा देवनारकयोः शरीरमिश्रकाले वैक्रियिकांगोपांगे युते इदं २५ ।

पुनः एकेन्द्रियस्य पंचविंशतिके तच्छरीरपर्याप्तौ आतपे उद्योते वा युते इदं २६ । वा तस्यैवोच्छ्वा-

---

आनुपूर्वियोंमें-से एक इस तरह इक्कीस प्रकृतिरूप स्थान होता है। इसका उदय कार्मणशरीर सहित चारों गति सम्बन्धी विग्रह गतिमें होता है, अन्यत्र नहीं, क्योंकि यह स्थान आनुपूर्वी सहित है। इसमें-से आनुपूर्वीको घटाकर औदारिक आदि तीन शरीरोंमें-से एक, छह संस्थानोंमें-से एक, प्रत्येक साधारणमें-से एक और उपघात इन चारोंको मिलानेपर चौबीस प्रकृतिरूप स्थान होता है। इस स्थानका उदय एकेन्द्रियोंके अपर्याप्त दशामें शरीर मिश्र योगमें ही होता है, अन्यत्र नहीं; क्योंकि एकेन्द्रियोंमें अंगोपांग और संहननका उदय नहीं होता। इसमें परघात मिलानेपर एकेन्द्रियके शरीरपर्याप्तिकालमें उदययोग्य पच्चीसका स्थान होता है। अथवा इसमें आहारक अंगोपांग मिलानेपर विशेष मनुष्यके आहारक शरीरके मिश्रकालमें उदययोग्य पच्चीसका स्थान होता है। अथवा वैक्रियिक अंगोपांग मिलानेपर देव नारकीके शरीर मिश्रकालमें उदययोग्य पच्चीसका स्थान होता है। इस तरह पच्चीसके तीन स्थान होते हैं।

एकेन्द्रियके उदययोग्य पच्चीसके स्थानमें आतप या उद्योत मिलानेपर एकेन्द्रियके शरीरपर्याप्तिकालमें उदययोग्य छब्बीसका स्थान होता है। अथवा एकेन्द्रियके पच्चीसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकृतिगळोळु त्रसौदारिकशरीरविवक्षेयादोडौदारिकांगोपांगं संहननं सहितमादोडे द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रिय पंचेंद्रियंगळ्गे शरीरमिश्रकालदोळु षड्विंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २६। द्वि। ति। च। प। मिश्र। मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु मनुष्यगति विवक्षितमादोडेयुमंगोपांगसंहननयुतमागि सामान्यमनुष्यसंसारिजीवनशरीरमिश्रदोळं निरतिशयकेवलिकवाटसमुद्घातद्वयदौदारिकशरीरमिश्रदोळं षड्विंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २६। सा। म। सा के। औ। मिश्रं। मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु आहारकशरीरं विवक्षितमादोडे अंगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगतिगळं कूडिदोडे आहारकशरीरपर्य्याप्तप्रमत्तनोळु सप्तविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २७। प्र। आ. श प। मत्तमा सामान्यकेवलिय औदारिकमिश्र षड्विंशतिप्रकृतिगळोळु तीर्त्थयुतमागुत्तिरलादोडमा कवाटद्वयसमुद्घातविशेषमनुष्यौदारिकमिश्रदोळं सप्तविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २७। ती के। श. मि। मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु नरकसुरगतिगळु विवक्षितमादोडे वैक्रियिकांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगतियुतमादोडे देवनारकशरीरपर्य्याप्तियोळु सप्तविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं २७। दे। ना। श. परि। मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु एकेंद्रियजातिनाममुं विवक्षितमादोडे परघातमुमातपमुं मेणुद्योतमुमुच्छ्वासमुं युतमागि एकेंद्रियोच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळु सप्तविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २७। ए उ. प। मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु मनुष्यगतिविवक्षितमादोडे अंगोपांगसंहननपरघाताविरुद्धविहायोगतियुतमागि सामान्यमनुष्यशरीरपर्य्याप्तियोळु अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। २८। सा। म। श। परि। मूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातसामान्य-

---

सनिःश्वासपर्याप्तौ उच्छ्वासे युते इदं २६। वा चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेन्द्रियाणां सामान्यमनुष्यस्य निरतिशयकेवलिकवाटद्वयस्य च औदारिकमिश्रकाले तदंगोपांगसंहनने युते इदं २६।

तत्रैवाहारकांगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्याहारकशरीरपर्याप्तिप्रमत्ते इदं २७। सामान्यकेवल्यौदारिकमिश्रषड्विंशतिके तीर्थे युते कवाटद्वयसमुद्घातविशेषमनुष्यौदारिकमिश्रे इदं २७। पुनः चतुर्विंशतिके प्रमत्तस्य शरीरपर्याप्तौ वैक्रियिकांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगतिषु युतास्विदं। २७। वा तत्रैवैकेन्द्रिय-

---

स्थानमें श्वासोच्छ्वास मिलानेपर एकेन्द्रियके उच्छ्वास निःश्वास पर्याप्तिमें उदय योग्य छब्बीसका स्थान होता है। अथवा चौबीसके स्थानमें औदारिक अंगोपांग और एक संहनन मिलानेपर दो-इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सामान्य मनुष्य, निरतिशय केवलीका कपाटयुगल, इनके औदारिक मिश्रकालमें उदय योग्य छब्बीसका स्थान होता है। इस प्रकार छब्बीसके तीन स्थान हुए।

चौबीसके स्थानमें आहारक अंगोपांग, परघात, प्रशस्त विहायोगति ये तीन मिलानेपर प्रमत्त गुणस्थानीके आहारक शरीर पर्याप्तिकालमें उदययोग्य सत्ताईसका स्थान होता है। अथवा पूर्वोक्त समुद्घातगत केवलीके छब्बीसके स्थानमें तीर्थंकर प्रकृति मिलनेपर तीर्थंकर समुद्घात केवलीके उदय योग्य सत्ताईसका स्थान होता है। अथवा पूर्वोक्त चौबीसके स्थानमें वैक्रियिक अंगोपांग, परघात तथा नारकीके अप्रशस्त विहायोगति और देवके प्रशस्त विहायोगति ये तीन मिलनेपर देव नारकीके शरीर पर्याप्तिकालमें उदय योग्य सत्ताईसका स्थान होता है। अथवा पूर्वोक्त चौबीसके स्थानमें परघात, और आतप उद्योतमें-से एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलिय शरीरपर्य्याप्तियोळमा अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २८ । सा । के । श । परि । मत्तमा चतुर्व्विंशति प्रकृतिगळोळु तिर्य्यग्गतित्रसंगळु विवक्षितमागुत्तं विरलु अंगोपांगसंहननपरघातविहायोगतिगळं कूडुत्तं विरलु द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रिय पंचेंद्रियजीवंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २८ ॥ द्वि । त्रि । च । पं । श. उ. परि ॥ मत्तमा चतुर्विंशतिप्रकृतिगळोळु आहारकांगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगतियुच्छ्वासगळं कूडुत्तं विरलु आहारक ऋद्धिप्राप्त प्रमत्तनोळु आहारकशरीरोच्छ्वासपर्य्याप्तियोळष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं २८ । प्र. आ. श. उ परि । मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु नरकदेवगतिगळु विवक्षितंगळादोडे वैक्रियिकांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगतियुच्छ्वासमुमं कूडुत्तं विरलु देवनारकोच्छ्वासपर्य्याप्तियोळु अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २८ । दे । ना । उ. परि ॥ मत्तमा सामान्यमनुष्यन शरीरपर्य्याप्तिय अष्टाविंशतिप्रकृतिगळोळुच्छ्वासमं कूडुत्तं विरलुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळु सामान्य-

स्योच्छ्वासपर्याप्तौ परघाते आतपोद्योतैकतरस्मिन्नुच्छ्वासे च युते इदं २७ ।

पुनः तत्रैव सामान्यमनुष्यस्य मूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातसामान्यकेवलिनः द्वित्रिचतुष्पंचेन्द्रियाणां च शरीरपर्याप्तौ अंगोपांगसंहननपरघाताविरुद्धविहायोगतिषु युतास्विदं ॥२८॥ वा प्राप्ताहारकर्धेस्तच्छरीरोच्छ्वासपर्याप्त्योस्तदंगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ॥२८॥ वा देवनारकयोरुच्छ्वासपर्याप्तौ वैक्रियिकांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ॥२८॥ पुनः तत्सामान्यमनुष्याष्टाविंशतिके तस्य च मूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातसामान्यकेवलिनश्चोच्छ्वासपर्याप्तौ उच्छ्वासे युते इदं ॥२९॥ वा तच्चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेन्द्रियाणां शरीरपर्याप्तावुद्योतेन समं, उच्छ्वासपर्याप्तौ च उच्छ्वासेन समं अंगोपांगसंहननपरघातविहायोगतिषु युतास्विदं ॥२९॥ वा समुद्घातकेवलिनः शरीरपर्याप्तावंगोपांगसंहनन-

तथा उच्छ्वास ये तीन मिलनेपर एकेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य सत्ताईसका स्थान होता है। ऐसे सत्ताईसके चार स्थान होते हैं।

चौबीसके स्थानमें औदारिक अंगोपांग, एक संहनन, परघात, यथायोग्य विहायोगति ये चार मिलनेपर सामान्य मनुष्य या मूल शरीरमें प्रवेश करता समुद्घातगत सामान्य केवली या दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य अठाईसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें आहारक अंगोपांग, परघात, प्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास ये चार मिलनेपर आहारक ऋद्धिसे सम्पन्न प्रमत्तके आहारक शरीरकी उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य अठाईसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें वैक्रियिक अंगोपांग, परघात, यथायोग्य विहायोगति, उच्छ्वास ये चार मिलानेपर देव नारकीके उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य अठाईसका स्थान होता है। ऐसे तीन अठाईसके स्थान हुए।

सामान्य मनुष्य या समुद्घात केवलीके अठाईसके स्थानमें उच्छ्वास प्रकृति मिलनेपर सामान्य मनुष्य या मूल शरीरमें प्रवेश करते समुद्घात केवलीके उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य उनतीसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें औदारिक अंगोपांग, एक संहनन, परघात, एक विहायोगति, उद्योत मिलानेपर दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य उनतीसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें एक अंगोपांग, एक संहनन, परघात, एक विहायोगति और उच्छ्वास मिलनेपर दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य उनतीसका स्थान होता है। अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्यंगे नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । सा म । उ. परि । समुद्घातसामान्यकेवलिय मूलशरीरप्रविष्टोच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळं नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । सा के । उ. परि । मत्तमा तिर्य्यग्गतित्रसंगळु विवक्षिसल्पडुत्तिरला चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु अंगोपांगसंहननपरघातोद्योतविहायोगतिगळं कूडुत्तं विरलु द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रिय पंचेंद्रियंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळु नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । बि । ति । च । प । श. परि । उ । मत्तमल्लियुद्योतरहितोच्छ्वासयुतमागियुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळु नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । बि । ति । च । प । उ. परि । मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु मनुष्यगति विवक्षितमागुत्तं विरलु अंगोपांगसंहननपरघातप्रशस्तविहायोगतितीर्त्थयुतमागि समुद्घातकेवलियोळु शरीरपर्य्याप्तियोळु नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । ती के । श. परि । मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळाहारकशरीरं विवक्षितमागुत्तं विरलु आहारकांगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगति उच्छ्वास सुस्वरयुतमागि विशेषमनुष्यप्रमत्तनोळाहारकशरीरभाषापर्य्याप्तियोळु नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । प्र । आ. भा. परि । मत्तं सुरनारकरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु अविरुद्ध स्वरमोंदं कूडिदोडे देवनारकरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । २९ । दे । ना । भा. परि । मत्तमा चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु अंगोपांगसंहननपरघातोद्योतविहायोगति उच्छ्वासमं कूडिदोडे द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रिय पंचेंद्रियंगळ उच्छ्वासपर्य्याप्तियोळु

परघातप्रशस्तविहायोगतितीर्थेषु युतेष्विदं ॥२९॥ वा प्रमत्तस्याहारकशरीरभाषापर्याप्तावस्तदंगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वाससुस्वरेषु युतेष्विदं ॥२९॥ वा देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ अविरुद्धैकस्वरे युते इदम् ॥२९॥

पुनः तत्रैव द्वित्रिचतुष्पंचेन्द्रियाणामुच्छ्वासपर्याप्तावुद्योतेन समं, सामान्यमनुष्यसकलविकलानां भाषापर्याप्तौ स्वरद्वयान्यतरेण समं चांगोपांगसंहननपरघातविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ॥३०॥ वा समुद्घाततीर्थंकरकेवलिनः उच्छ्वासपर्याप्तौ तीर्थेन समं, सामान्यसमुद्घातकेवलिनो भाषापर्याप्तौ स्वरद्वया-

---

चौबीसमें औदारिक अंगोपांग, संहनन, परघात, प्रशस्त विहायोगति, तीर्थंकर मिलनेपर समुद्घात तीर्थंकर केवलीके शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य उनतीसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें आहारक अंगोपांग, परघात, प्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास, सुस्वर मिलनेपर प्रमत्तके आहार शरीरकी भाषापर्याप्तिमें उदययोग्य उनतीसका स्थान होता है। अथवा देव नारकीके अठाईसके स्थानमें देवके सुस्वर, नारकीके दुःस्वर मिलानेपर देव नारकीके भाषा पर्याप्तिमें उदय योग्य उनतीसका स्थान होता है। इस तरह उनतीसके छह स्थान होते हैं।

चौबीसके स्थानमें अंगोपांग, संहनन, परघात, विहायोगति, उच्छ्वास मिलनेपर उनतीस हुए। इनमें उद्योत मिलनेपर दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्तिमें उदययोग्य तीसका स्थान होता है। अथवा दो स्वरोंमें-से एक मिलनेपर सामान्य मनुष्य अथवा पंचेन्द्रिय अथवा विकलत्रयमें भाषा पर्याप्तिमें उदययोग्य तीसका स्थान होता है। अथवा चौबीसमें औदारिक अंगोपांग, वज्रऋषभ नाराच संहनन, परघात, प्रशस्त विहायोगति और उच्छ्वास मिलनेपर उनतीस होते हैं, उसमें तीर्थंकर प्रकृति मिलानेपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । ३० । बि । ति । च । प । उ । परि । उद्यो । मत्तमा चतुर्विंशति प्रकृतिगळोळु सामान्यमनुष्यगतिविवक्षितमागुत्तं विरलु अंगोपांगसंहननपरघातविहायोगत्युच्छ्‌वास-स्वरद्वितयदोळन्यतरमं कूडुत्तं विरलु सामान्यमनुष्यरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळ त्रिंशत्प्रकृतिस्थानो-दयमक्कुं । ३० । साम । भा. परि ।

मत्तमुद्योतरहित सकलविकलंगळोळु स्वरद्वयदोळोंदं कूडिदोडे सकलविकलंगळ भाषा-पर्य्याप्तियोळु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । ३० । बि । ति । च । पं । भा.परि । मत्तं चतुर्विंशति-प्रकृतिगळोळु अंगोपांगसंहननपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्‌वासतीर्त्थमुमं कूडुत्तं विरलु तीर्त्थ-समुद्घातकेवलियुच्छ्‌वासपर्य्याप्तियोळ त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमक्कुं । ३० । ती के । उ. परि । मत्तं सामान्यसमुद्घातकेवलिय भाषापर्य्याप्तियोळु स्वरद्वयदोळन्यतरमं कूडुत्तं विरलु भाषापर्य्याप्ति-केवलियोळु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । ३० । सा के भा. परि । सयोगकेवलिय भाषापर्य्याप्ति-स्थानदोळु तीर्त्थमं कूडुत्तं विरलु भाषापर्य्याप्तियुततीर्त्थकेवलियोळु एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदय-मक्कुं । ३१ । ती के । भा. परि । मत्तं चतुर्व्विंशतिप्रकृतिगळोळु अंगोपांगसंहननपरघातोद्योत-विहायोगतियुच्छ्‌वासस्वरद्वितयदोळन्यतरमं कूडुत्तं विरलु द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिय जीवंगळ भाषापर्य्याप्तियोळेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं । ३१ । बि । ति । च । प । भा. परि । उद्यो ।

एगे इगिवीस पणं इगिछव्वीसट्ठवीस तिण्णि णरे ।
सयले वियलेवि तहा इगितीसं चावि वचिठाणे ॥५९५॥
सुरणिरयविसेसणरे इगि पण सगवीस तिण्णि समुघादे ।
मणुसं वा इगिवीसे वीसं रूवाहियं तित्थं ॥५९६॥
वीस दु चउवीसचऊ पण छव्वीसादि पंचयं दोसु ।
उगुतीस तिपण काले णयजोगे होंति णव अट्ठ ॥५९७॥

एकेंद्रियंगळोळक्कुं कालदोळु क्रमदिदमेकविंशत्यादिपंचस्थानंगळप्पुवु । २१ । २४ । २५ । २६ । २७ ॥

न्यतरेण समं चांगोपांगसंहननपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्‌वासेषु युतेष्विदं ॥३०॥

पुनः तत्सयोगकेवलिस्थाने भाषापर्याप्तौ तीर्थे युते इदं ॥३१॥ वा चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेन्द्रियाणां भाषापर्याप्तावंगोपांगसंहननपरघातोद्योतविहायोगत्युच्छ्‌वासस्वरद्वयान्यतरेषु युतेष्विदं ॥३१॥५९३–५९४॥

समुद्घात तीर्थंकर केवलीके उच्छ्‌वास पर्याप्तिमें उदययोग्य तीसका स्थान होता है। अथवा दो स्वरोंमें-से एक मिलनेपर सामान्य समुद्घात केवलीके भाषा पर्याप्तिमें उदययोग्य तीसका स्थान होता है। ऐसे तीसके चार स्थान हुए।

सामान्य सयोग केवलीके भाषा पर्याप्ति सम्बन्धी तीसके स्थानमें तीर्थंकर प्रकृति मिलानेपर तीर्थंकर केवलीके भाषा पर्याप्तिमें उदययोग्य इकतीसका स्थान होता है। अथवा पूर्वोक्त चौबीसमें अंगोपांग, संहनन, परघात, उद्योत, विहायोगति, उच्छ्‌वास, सुस्वर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्यरोळु एकविंशति षड्विंशत्यष्टाविंशत्यादि त्रितयमुमप्पुवु । २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ सकलेंद्रिय विकलेंद्रियंगळोमा प्रकारदिदमेकविंशति षड्विंशत्यष्टाविंशत्यादित्रितयः—

वाचि	०	२९	२९	३१ ३०	३०	३०	३१	२९
आणा	२७ २६	२८	२८	३० २९	२९	२९	३०	२८
शरी	२६ २५	२७	२७	२९ २८	२८	२८	२९	२७
स मो	२४	२५	२५	२६	२६	२६	२७	२५
वि का	२१	२१	२१	२१	२१	२७	२१	०
	एकेंद्रि	देव	नरक	तिर्य्य	मनु	सा केव	तीर्थ के	विशेष मनु

मुमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं भाषापर्य्याप्तियोळप्पुवु । २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ सुरनारकविशेषमनुष्यरोळु एकविंशति पंचविंशति सप्तविंशत्यादित्रयमक्कुं । २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ समुद्घातकेवलियोळु तीर्त्थरहितरोळु मनुष्यनोळें तंतक्कुमल्लि विशेषमुंटदावुदें दोडे इगिवीसे वीसं एकविंशतियोळु विंशतियक्कुं । २० । २६ । २८ । २९ । ३० । तीर्त्थसमुद्घातकेवलियोळु रूपाधिकस्थानंगळप्पुवु । २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ । इंतागुत्तं विरलु केवलि कार्म्मणंगळोळं विग्रहकार्म्मणशरीरदोळं । २० । २१ । २८ । विंशत्येकविंशतिगळुमेकविंशतिगळु मप्पुवु । शरीरमिश्रकालदोळु चउवीसचऊ चतुव्विंशति पंचविंशति षड्विंशतिगळप्पुवु । २४ । २५ । २६ । २७ । शरीरपर्य्याप्तिकालदोळं आनापानपर्य्याप्तियोळं यथासंख्येयिदं पंचविंशत्यादि पंचस्थानंगळु

पंचकालेषु क्रमेणैकेन्द्रियेष्वेकविंशतिकादीनि पंच । मनुष्येष्वेकविंशतिकं षड्विंशतिकमष्टाविंशतिकादित्रयं च । सकलेन्द्रिये विकलेन्द्रियेऽपि तथैवैकविंशतिकषड्विंशतिकाष्टाविंशतिकत्रयं । एकत्रिंशत्कं तु भाषापर्याप्तौ । सुरनारकविशेषमनुष्येष्वेकविंशतिकं पंचविंशतिकं सप्तविंशतिकादित्रयं च । समुद्घातकेवलिनि तीर्थोने मनुष्यवदप्येकोनविंशतिकस्थाने विंशतिकं स्यात् । तीर्थसमुद्घातकेवलिनि तान्येव रूपाधिकानि । एवं सति केवलिकार्मणे विंशतिकैकविंशतिके द्वे । विग्रहकाले एकविंशतिकं शरीरमिश्रकाले चतुर्विंशतिकादि-

दुःस्वरमें-से एक ये सात मिलनेपर दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके भाषा पर्याप्तिमें उदययोग्य इकतीसका स्थान होता है। ऐसे इकतीसके दो स्थान होते हैं ॥ ५९३–५९४॥

पूर्वोक्त पाँच कालोंमें क्रमसे एकेन्द्रियोंमें उदययोग्य इक्कीस आदि पाँच स्थान हैं। मनुष्योंमें इक्कीसका, छब्बीसका और अठाईस आदि तीन उदययोग्य हैं। सकलेन्द्रिय विकलेन्द्रिय तिर्यंचोंमें भी उसी प्रकार इक्कीस, छब्बीस, अठाईस आदि तीन उदययोग्य हैं। किन्तु इकतीसका स्थान भाषा पर्याप्तिमें उदययोग्य है। देव, नारकी और आहारक या केवल सहित विशेष मनुष्योंमें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस आदि तीन उदययोग्य हैं। तीर्थरहित समुद्घात केवलीमें मनुष्यकी तरह इक्कीसके स्थानमें आनुपूर्वी बिना बीसका ही उदय स्थान होता है, तीर्थंकर समुद्घात केवलीके तीर्थंकर सहित इक्कीसका उदयस्थान है। इस तरह केवलीके कार्माणमें बीस-इक्कीस दो उदयस्थान हैं। और विग्रहगति सम्बन्धी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षड्विंशत्यादि पंचस्थानंगळुमप्पुवु। शरीर प० २५। २६। २७। २८। २९। आनापान प २६। २७। २८।२९ ।३० ॥ भाषापर्य्याप्तिकालदोळु उगुतोसति नव विंशत्यादित्रिस्थानंगळप्पुवु। २९। ३०। ३१ ॥ यितु पंचकालंगळरियल्पडुगुं ॥ ययजोगे अयोगिकेवलियोळ् तीर्त्थंयुतमागि नवप्रकृतिस्थानमुं तीर्त्थरहितमागि अष्टप्रकृतिस्थानमुमक्कुं। ती। अयोगि। के ९। अति। अयोगि। के। ८॥

चतुष्कं। शरीरपर्याप्तिकाले पंचविंशतिकादि पंचकं। आनापानपर्याप्तौ षड्विंशतिकादिपंचकं, भाषापर्याप्तिकाले नवविंशतिकादित्रयं, अयोगे सतीर्थे नवकमतीर्थेऽष्टकं ॥५९५–५९७॥

वचि	०	२९	२९	३० ३१	३०	३०	३१	२९
आणु	२७ २६	२८	२८	३० २९	२९	२९	३०	२८
शरी	२६ २५	२७	२७	२९ २८	२८	२८	२९	२७
शमि	२४	२५	२५	२६	२६	२६	२७	२५
विका	२१	२१	२१	२१	२१	२०	२१	०
	एकेन्द्रिय	देव	नारक	तिर्यग्	मनुष्य	साके	तीर्थकेव	विशेष मनुष्य

अस्यायोगस्थानद्वयस्योपपत्तिमाह—

कार्माणमें इक्कीसका ही उदयस्थान है। शरीर मिश्रकालमें चौबीस आदि चार हैं। शरीर पर्याप्तिकालमें पच्चीस आदि पाँच हैं। श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकालमें छब्बीस आदि पाँच हैं। भाषा पर्याप्तिकालमें उनतीस आदि तीन हैं। अयोगीमें तीर्थंकरके नौ और सामान्यके आठका उदय होता है ॥५९५–५९७॥ अयोगीगुणस्थानके दो स्थानोंकी उपपत्ति कहते हैं—

नामकर्मके उदयस्थानोंका मन्त्र

बीसका स्थान एक १ समुद्घात केवलीके कार्माणमें उदययोग्य ।२०।	चौबीसका स्थान एक ॥१॥ एकेन्द्रियके मिश्र शरीरमें उदययोग्य ॥२४॥
इक्कीसके स्थान २ दो चारों ˊतिके विग्रहगतिमें उदययोग्य ।२१। तीर्थंकर केवलीके कार्माणामें ,, ॥२१॥	पच्चीसके स्थान तीन ॥३॥ एकेन्द्रियके शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य ॥२५॥ आहारकके मिश्रकालमें उदययोग्य ॥२५॥ देव नारकके शरीर मिश्रकालमें उदय ॥२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमयोगिकेवलिय नामस्थानद्वयक्कुपपत्तियं पेळ्दपरु :—

गयजोगस्स य बारे तदियाउगगोद इदि विहीणेसु ।
णामस्स य णव उदया अट्ठेव य तित्थहीणेसु ॥५९८॥

गतयोगिनो द्वादशसु तृतीयायुर्गोत्रमिति विहीनेषु । नाम्नो नवोदया अष्टैव च तीर्थहीनेषु ॥

अयोगिकेवलि भट्टारकनुदयप्रकृतिगळु पन्नेरडरोळु वेदनीयायुर्गोत्रत्रयमं कळेदोडे नामकर्म्मप्रकृतिगळु नवप्रमितंगळप्पुवु । ९ । तीर्थरहितरोळेंटे प्रकृतिगळप्पुवु । ८ ॥

अयोगकेवलिनः द्वादशोदयप्रकृतिषु वेदनीयायुर्गोत्रेष्वपनीतेषु नाम्नो नव भवन्ति । पुनः तीर्थेऽपनीतेऽष्टौ भवन्ति ॥५९८॥ अथ नामोदयस्थानेषु भंगानाह—

छब्बीसके स्थान तीन ॥३॥
एकेन्द्रियके शरीर पर्याप्ति कालमें ॥२६॥
एकेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्ति कालमें ॥२६॥
दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सामान्य मनुष्य, निरतिशय केवलीके औदारिक मिश्रकालमें उदययोग्य ॥२६॥

सत्ताईसके स्थान चार ॥४॥
आहारक शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य ॥२७॥
तीर्थंकर समु. केवलीके उदययोग्य ॥२७॥
देव नारकीके शरीर पर्याप्तिकालमें ॥२७॥
एकेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥२७॥

अठाईसके स्थान तीन ॥३॥
सामान्य मनुष्य, सामान्य केवली, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके शरीर पर्याप्तिमें उदययोग्य ॥२८॥
आहारकमें उच्छ्वास पर्याप्तिमें उ. ॥८२॥
देव नारकीके उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥२८॥

उनतीसके स्थान छह ॥६॥
समुद्घातकेवलीके उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥२९॥
↓
दोइन्द्रिय आदिके शरीर पर्याप्तिमें ॥२९॥
दोइन्द्रिय आदिके उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥२९॥
समुद्घात तीर्थंकरके शरीर पर्याप्तिमें ॥२९॥
आहारक शरीरके भाषा पर्याप्तिमें ॥२९॥
देव नारकीके भाषा पर्याप्तिमें ॥२९॥

तीसके स्थान चार ॥४॥
दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥३०॥
सामान्य मनुष्य, पंचेन्द्रिय, विकलत्रयके भाषा पर्याप्तिमें ॥३०॥
तीर्थं. समु. केवली उच्छ्वास पर्याप्तिमें ॥३०॥
सामान्य समु. केवलीके भाषा पर्याप्तिमें उदय. ॥३०॥

एकतीसके स्थान दो ॥२॥
तीर्थंकर केवलीके भाषा पर्याप्तिमें ॥३१॥
दोइन्द्रिय, आदि पंचेन्द्रियके भाषा पर्याप्तिमें ॥३१॥

नौका स्थान एक ॥१॥ अयोग केवलीके

आठका स्थान एक ॥१॥ अयोग केवलीके

अयोग केवलीके उदय प्रकृतियाँ बारह हैं। उनमें-से वेदनीय, आयु, गोत्र तीन प्रकृतियाँ घटानेपर नामकर्मका नौ प्रकृतिरूप उदय स्थान होता है। और तीर्थंकर बिना आठका उदयस्थान होता है ॥५९८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं नामकर्म्म प्रकृत्युदयस्थानंगळोळु भंगंगळं पेळ्वपरु :—

संठाणे संहडणे विहायजुम्मेव चरिमचदुजुम्मे ।
अविरुद्धेक्कदरादो उदयट्ठाणेसु भंगा हु ।।५९९।।

संस्थाने संहनने विहायोयुग्मे च चरम चतुर्युग्मे । अविरुद्धैकतरादुदयस्थानेषु भंगाः खलु ॥

संस्थानषट्कदोळं संहननषट्कदोळं विहायोगतिद्वयदोळं सुभगसुस्वरादेययशस्कीर्त्ति चरम-चतुर्य्युग्मदोळं अविरुद्धैकतरग्रहणदिदमुदयस्थानदोळु भंगंगळप्पुवु । स्फुटमागि । अल्लि संस्थान-षट्कमुमं संहननषट्कमुमं गुणिसिदोडे मूवत्तारुपंचयुगळं गुणिसिदोडे मूवत्तेरडु । ३२ । ३६ । आ येरडुं गुण्य गुणकारंगळं गुणिसिदोडे सासिरद नूरय्वत्तेरडुं :—

	य । अ		११
	आ । अ		११
	सु । दु		११
	सु । दु		११
	प्र । अ		११
सं	११	११	११
सं	११	११	११
युति	११५२ ॥		

ई भंगंगळोळु नारकाद्येकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु संभविसुव उदयस्थानंगळ्गे भंगंगळं गाथात्रयदिदं पेळ्वपरु :—

तत्थासत्था णारयसाहारणसुहुमगे अपुण्णे य ।
सेसेगविगलऽसण्णिजुदठाणे जसजुगे भंगा ।।६००।।

तत्राशस्ता नारकसाधारणसूक्ष्मेऽपूर्णे च । शेषैकविकलासंज्ञियुतस्थाने यशोयुग्मे भंगाः ॥

संस्थानषट्के संहननषट्के विहायोगतिद्वये सुभगद्वये सुस्वरद्वये आदेयद्वये यशस्कीर्तिद्वये च अविरुद्धैकतरग्रहणेन भंगा भवन्ति । ते खलु द्वापंचाशदधिकैकादशशतानि ।११५२। ।।५९९।। तेषु नारकाद्येकचत्वारिंशज्जीवसम्भविनो गाथात्रयेणाह—

नामकर्मके उदय स्थानोंमें भंग कहते हैं—

छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, सुभग-दुर्भग, सुस्वर-दुःस्वर, आदेय-अनादेय, यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति इनमें-से अविरुद्ध एक-एक ग्रहण करनेसे भंग होते हैं। सो ६×६×२×२×२×२×२ को परस्परमें गुणा करनेसे ग्यारह सौ बावन भंग होते हैं ।।५९९।।

उनमें-से नारक आदि इकतालीस जीवपदोंमें सम्भव भंगोंको तीन गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ स्थानोदय प्रकृतिगळोळु अप्रशस्तंगळु नारकरोळं साधारणवनस्पतिगळोळं सर्व्वसूक्ष्मंगळोळं सर्व्वलब्ध्यपर्य्याप्तकगळोळमक्कुमप्पुदरिंदमवर पंचकालंगळ सर्व्वोदयस्थानंगळोळेल्लमेकैकभंगमेयप्पुवु । शेषैकविकलासंज्ञिजीवंगळुदयस्थानंगळोळु यशस्कीर्त्तिद्वयोदयकृतद्विभंगंगळप्पुवु ॥

सण्णिम्मि मणुस्सम्मि य ओघेक्कदरं तु केवले वज्जं ।
सुभगादेज्जजसाणि य तित्थजुदे सत्थमेदीदि ॥६०१॥

संज्ञिनि मनुष्ये च ओघेष्वेकतरस्तु केवले वज्रं । सुभगादेययशांसि च तीर्त्थयुते शस्तमेतीति ॥

संज्ञिपंचेंद्रियदोळं मनुष्यनोळं संस्थानादिसामान्यभंगंगळेल्लमप्पुवु । केवलज्ञानदोळु वज्रऋषभनाराचसंहननमो देयक्कुं । सुभगादेययशस्कीर्त्तित्रयोदयमेयक्कुमेकें दोडे असंयतनोळु दुर्भगत्रयक्के व्युच्छित्ति यादुदप्पुदरिंदं । तीर्त्थयुतकेवलज्ञानदोळु प्रशस्तप्रकृतिगलुदयमेयप्पुदरिंदमल्लिय स्थानंगळोळेकैकभंगमेयक्कु मेकें दोडे चरमपंचसंस्थानमुमप्रशस्तविहायोगतियुं दुःस्वरमुमिल्लप्पुदरिंदं ॥

तत्रोदयप्रकृतिषु नारके साधारणवनस्पतौ सर्वलब्ध्यपर्याप्ते वाऽप्रशस्ता एवोद्यन्तीति तत्पंचकालसर्वोदयस्थानेषु भंग एकैकः । शेषैकेन्द्रियविकलासंज्ञ्युदयस्थानेषु यशस्कीर्तिद्वयकृतौ द्वौ द्वौ भंगौ भवतः ॥६००॥

संज्ञिजीवे मनुष्ये च संस्थानादिसामान्यकृताः सर्वे भंगा भवन्ति । केवलज्ञाने वज्रवृषभनाराचसंहननं सुभगादेययशस्कीर्तय एवोद्यन्ति, "दुर्भगत्रयादेरस्यासंयते छेदात् ।" सतीर्थे च प्रशस्तमेव तेन तत्स्थानेष्वेकैकः, चरमपंचसंस्थानाप्रशस्तविहायोगतिदुःस्वराणां तत्रानुदयात् ॥६०१॥

उन उदय प्रकृतियोंमें-से नारकी, साधारण वनस्पति, सब सूक्ष्म और सब लब्ध्यपर्याप्तकोंमें अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही उदय होता है। अतः उनके पाँच काल सम्बन्धी सब उदयस्थानोंमें एक-एक भंग है। शेष एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रियमें भी अप्रशस्त प्रकृतियोंका ही उदय है। किन्तु यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिमें-से किसी एकका उदय होता है अतः उनके उदयस्थानोंमें दो-दो भंग होते हैं एक यशःकीर्ति सहित और एक अयशःकीर्ति सहित उदयस्थान ॥६००॥

संज्ञी जीव और मनुष्यमें छह संस्थान, छह संहनन, विहायोगति आदि पाँच युगलोंमें-से एक-एकका ही उदय होनेसे सामान्यकी तरह सब ग्यारह सौ बावन भंग होते हैं। केवलज्ञान सम्बन्धी स्थानोंमें वज्रवृषभनाराचसंहनन, सुभग, आदेय, यशःकीर्तिका ही उदय होता है अतः उनमें छह संस्थान और दो युगलोंमें-से एक-एकका उदय होनेसे चौबीस भंग होते हैं। तीर्थंकर केवलीके अन्तके पाँच संस्थान, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका उदय भी नहीं होता। सब प्रशस्त प्रकृतियोंका ही उदय होता है। अतः उनके उदयस्थानोंमें एक-एक ही भंग होता है ॥६०१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवाहारे सत्थं कालवियप्पेसु भंगमाणेज्जो ।

वोच्छिण्णं जाणित्ता गुणपडिवण्णेसु सव्वेसु ।।६०२।।

देवाहारे शस्ताः कालविकल्पेषु भंगा आनेयाः । व्युच्छिन्नां ज्ञात्वा गुणप्रतिपन्नेषु सर्व्वेषु ।।

चतुर्न्निकायदेवक्कळोळं आहारकऋद्धिप्राप्तप्रमत्तसंयतरोळं प्रशस्तप्रकृत्युदयंगळप्पुदरिंदमा देवाहारकरुगळ सर्व्वकालोदयस्थानंगळोळु प्रशस्तप्रकृत्युदयंगळप्पुदरिंदमेकैकभंगंगळेयप्पुवु । सासादनादिगुणप्रतिपन्नरुगळोळु विग्रहकार्म्मणशरीरादिकालविकल्पंगळोळु व्युच्छिन्नप्रकृतिगळनरिदु भंगंगळु तरल्पडुवुवु । एकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळुदयस्थानभंगंगळपे संदृष्टिरचने : ५

०	नि	बा	सू	बा	अ सु	बा	ते सु	बा घा	सु	बा	सा सु	प्र	बि	ति	च	अ
भाष	२९ १	भं २	१	२	१	२	१	२	१	१	१	२	२ ३१ ३०	२ ३१ ३०	२ ३१ ३०	२ ३१ ३०
आ. प	२८ १	२७ २७ २६	२६	२७ २६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२७ २६	३० २९	३० २९	३० २९	३० २९
श. प	२७ १	२६ उ २६ अ २६	२५	२६ २५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२६ २५	२९ २८	२९ २८	२९ २८	२९ २८ →
श. मि	२५ १	२४	२४	२४	२४	२४	२१	२४	२४	२४	२४	२४	२६	२६	२६	२६
वि का	२१ १	२१	२१	२१	२१	२१	२४	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१
लब्ध प.	श. मि	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२४ १	२६ १	२६ १	२६ १	२६ १
पर्या प्तक	वि का	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १	२१ १

चतुर्निकायदेवेष्वाहारकर्धिप्राप्तप्रमत्ते च प्रशस्तमेवोदेतीति तत्सर्वकालोदयस्थानेष्वेकैको भंगः । सासादनादिगुणप्रतिपन्नेषु विग्रहकार्मणशरीरादिकालविकल्पेषु व्युच्छिन्नप्रकृतीर्ज्ञात्वा भंगा आनेतव्याः ।।६०२।।

चार निकायके देवोंमें, आहारक ऋद्धि प्राप्त प्रमत्तमें, प्रशस्त प्रकृतियोंका ही उदय होता है । अतः उनके सर्वकाल सम्बन्धी उदयस्थानोंमें एक-एक ही भंग है । सासादन आदि गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंमें तथा विग्रहगतिके कार्मण शरीर आदि कालोंमें व्युच्छिन्न हुई प्रकृतियोंको जानकर शेष प्रकृतियोंके भंग लाने चाहिए ।।६०२।। १०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सण्णि	मणु	सा के	ति के	स के सा	स के ती	आहा	दे
११५२ ३१ ३०	११५२ ३०	१ ८ २४ ३०	१ ९ ३१ १	२४ भं ३०	३१ १	२९ १	२९ १
५७६ ३० २९	५७६ २९	०	०	२९ १२	३० १	२८ १	२८ १
५७६ २९ २८	५७६ २८	०	०	२८ १२	२९ १	२७ १	२७ १
२८८ २६	२८८ २६	०	०	२६ ६	२७ १	२५ १	२५ १
२१ ८	२१ १	०	०	२० १	२१ १	०	२१ १
२६ १	२६ १						
२१ १	२१ १						

ई एकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु विंशत्यादिस्थानोदयभंगंगळं गाथात्रयदिदं पेळ्दपरु :—

वीसादीणं भंगा इगिदालपदेसु संभवा कमसो ।
एक्कं सट्ठिं चेव य सत्तावीसं च उगुवीसं ।।६०३।।

विंशत्यादिनां भंगा एकचत्वारिंशत्पदेषु संभवाः क्रमशः । एकः षष्टिश्चैव सप्तविंशतिरेकान्नविंशतिः ।।

वीसुत्तरछच्चसया बारसपण्णत्तरीहिं संजुत्ता ।
एक्कारससयसंखा सत्तरससयाहिया सट्ठी ।।६०४।।

विंशत्युत्तरषट् च शतं द्वादश पंचसप्ततिभिः संयुक्तैकादशशतसंख्यासप्तदशशतसमधिकषष्टिः ।।

ऊणत्तीससयाहिय एक्कावीसा तदो वि एकट्ठी ।
एक्कारससयसहिया एक्केक्कविसरिसगा भंगा ।।६०५।।

एकान्नत्रिंशच्छताधिकैकविंशति ततोप्येकषष्टिरेकादशशतसहिता एकैकविसदृशा भंगाः ।।

एंदितु विंशत्यादिस्थानंगळ भंगंगळु एकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु संभविसुवंतप्पुवु ।

विंशतिकादीनां स्थानानामेकचत्वारिंशज्जीवपदेषु सम्भवन्तो भंगाः क्रमेण विंशतिकं सामान्यसमुद्-

बीस आदि जो स्थान कहे हैं उनमें इकतालीस जीवपदोंकी अपेक्षा जो भंग होते हैं उन्हें क्रमसे कहते हैं—

बीसका उदय सामान्य समुद्घात केवलीके प्रतर और लोकपूरणके कार्माणकालमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रमशः क्रमदिदं पेळल्पडुगुमल्लि । विंशतिप्रकृतिस्थानं सामान्यसमुद्घातकेवलिय प्रतरलोकपूरणंगळोळ् सामान्य समुद्घातकेवलिय प्रतरलोकपूरणंगळोळ् कार्म्मणकायदोळ् दयिसुव तीर्त्थरहितोदयक्कुं । २०/१ ।। मत्तमेकविंशतिप्रकृत्युदयस्थानंगळ् देवगतिय विग्रहकार्म्मणदोळों दु २१/१ तीर्त्थसमुद्घात केवलियोळों दु २१/१ मनुष्यगतिविग्रहगतियोळ् सुभगादेययशस्कीर्त्तियुग्मत्रयदोळें टप्पुवु २१/८ संज्ञिपंचेंद्रियदोळमंते एंटप्पुवु २१/८ [विकलासंज्ञिजीवंगळोळ् प्रत्येकयशोयुग्मकृत भंगंगळिदमेरडेरडागल्वेंटप्पुवु वि २१/८ पृथ्व्यप्तेजोबादरवायुप्रत्येकवनस्पतिगळोळमा प्रकारदिदमेरडेरडु भंगंगळागळ् मवरोळ् पत्तप्पुवु २१/१० मत्तं पृथ्व्यप्तेजोवायुसूक्ष्मंगळोळं साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मंगळोळं प्रत्येकमेकैक भंगमप्पुवरिदमवरोळ् आरु भंगंगळप्पुवु २१/६ नारकरोळों दु २१/१ अंतु पर्य्याप्तरोळ् नाल्वत्तमूरु २१/४३ लब्ध्यपर्य्याप्तजीवंगळोळ् पदिनेळ् २१/१७ कूडि एकविंशतिस्थानदोळ् भंगंगळरुवत्तप्पुवु २१/६० पर्य्याप्तजीवंगळ शरीरमिश्रकालदोळ् पृथिव्यप्तेजोवायु-

---

घातकेवलिनः प्रतरलोकपूरणकार्मणकाये उदययोग्यमतीर्थमेकं २०/१ । एकविंशतिकानि पर्याप्तानां देवगतिविग्रहकार्मणे एकं, तीर्थसमुद्घाते एकं, मनुष्यगतिविग्रहगतौ सुभगादेययशस्कीर्तियुग्मकृतान्यष्टौ । संज्ञिन्यपि तथैवाष्टौ । विकलासंज्ञिषु प्रत्येकं यशोयुग्मकृते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ । बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेष्वपि तथा दश । सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुसूक्ष्मसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षट् । नारकेष्वेकं । लब्ध्यपर्याप्ते सप्तदशेति षष्टिः २१/६० ।

होता है। उसमें एक ही भंग है। इक्कीसके भंग कहते हैं–देवगतिमें विग्रहगतिरूप कार्माणमें एक ही भंग है। तीर्थंकरके समुद्घात सम्बन्धी कार्माणमें एक ही भंग है। मनुष्यगतिमें विग्रहगति सम्बन्धी कार्माणमें सुभग, आदेय, यशःकीर्ति इन तीन युगलोंमें-से एक-एकका उदय होनेसे आठ भंग हैं। संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्बन्धी कार्माणमें भी उसी प्रकार आठ भंग हैं। दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके कार्माणमें यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे आठ भंग होते हैं। बादर पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति इन पाँचोंके भी कार्माणमें यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे दस भंग होते हैं। सूक्ष्म पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, सूक्ष्म बादर साधारण इन छहोंके कार्माणमें एक-एक ही भंग होनेसे छह भंग होते हैं। नारकीके कार्माणमें एक ही भंग है। लब्ध्यपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायादिके भेदसे सतरह प्रकार है। उनके कार्माणमें एक-एक ही भंग होनेसे सतरह हुए। इस प्रकार इक्कीसके स्थानमें १+१+८+८+८+१०+६+१+१७=६० भंग होते हैं।

---

१. अत्र पर्याप्तशब्देन निर्वृत्यपर्याप्ता एव गृह्यंते। कथमिति चेत् पर्याप्तनामकर्मोदयसद्भावात्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येकबादरंगळोळु $\frac{२४}{१०}$ पृथ्व्यप्तेजोवायुसूक्ष्मंगळोळं साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मंगळोळमेकैकभंगंगळप्पुदरिंदमारु $\frac{२४}{६}$ लब्ध्यपर्य्याप्तकजीवंगळोळु पन्नोंदु $\frac{२४}{११}$ कूडि चतुर्व्विंशतिप्रकृतिस्थानदोळु सप्तविंशति भंगंगळप्पुवु $\frac{२४}{२७}$ पंचविंशति स्थानदोळु देवाहारकनारकरुगळ शरीरमिश्रकालदोळु प्रत्येकमेकैकभंगंगळप्पुदरिंदं मूरु $\frac{२५}{३}$ पृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकवनस्पतिगळ शरीरपर्य्याप्तियोळु बादरंगळोळेरडेरडु भंगंगळप्पुदरिंद पत्तु $\frac{२५}{१०}$ मत्तं पृथ्व्यप्तेजोवायुगळ सूक्ष्मंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळं साधारणवनस्पतिबादर सूक्ष्मंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळमेकैकभंगंगळप्पुदरिंदमारु $\frac{२५}{६}$ कूडि पंचविंशतिस्थानदोळु भंगंगळेकान्नविंशतिप्रमितंगळप्पुवु $\frac{२५}{१९}$ षड्विंशतिस्थानदोळु द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिजीवंगळ शरीरमिश्रकालदोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुदरिंद नाल्करोळुमेंटु $\frac{२६}{८}$ संज्ञिपंचेंद्रियदोळं मनुष्यनोळं शरीरमिश्रकालदोळु प्रत्येकं षट् संहनन षट्संस्थानसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मत्रयकृत भंगंगळु २६। ८। इन्नूरेंभत्तेंटागुत्तं विरळेरडरोळ मेनूरेप्पत्तारु

चतुर्विंशतिकानि पर्याप्तानां शरीरमिश्रकाले बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेषु द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायूभयसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षट्। लब्ध्यपर्याप्तेष्वेकादशेति सप्तविंशतिः $\frac{२४}{२७}$।

पंचविंशतिकानि देवाहारकनारकाणां शरीरमिश्रकाले एकैकं भूत्वा त्रीणि, शरीरपर्याप्तौ बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकानां द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायूनामुभयसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षडित्येकान्नविंशतिः $\frac{२५}{१९}$।

षड्विंशतिकानि शरीरमिश्रकाले द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिनां द्वे द्वे भूत्वाष्टौ। संज्ञिनि मनुष्ये च प्रत्येकं षट्संहननषट्संस्थानसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मकृताष्टाशीत्यग्रद्विशती भूत्वा षट्सप्तत्यग्रपंचशती, अतीर्थसमुद्घात-

---

अब चौबीसके स्थानमें भंग कहते हैं—चौबीसका उदय मिश्रकालमें है सो बादर, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक इन पाँचमें यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे दस हुए। सूक्ष्म पृथ्वी अप् तेज वायु बादर सूक्ष्म साधारण इनमें एक-एक भंग होनेसे छह हुए। ग्यारह लब्ध्यपर्याप्तकोंके शरीर मिश्रकालमें एक-एक भंग होनेसे ग्यारह हुए। इस प्रकार चौबीसके स्थानमें १० + ६ + ११ = सत्ताईस भंग होते हैं।

पच्चीसके स्थानमें देव, आहारक नारकोंके एक-एक भंग होनेसे तीन हुए। शरीर पर्याप्तिमें बादर, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, सूक्ष्म बादर साधारणके एक-एक भंग होनेसे छह हुए। इस प्रकार पच्चीसके स्थानमें ३ + १० + ६ = उन्नीस भंग होते हैं।

छब्बीसके स्थानमें शरीर मिश्रकालमें दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे आठ हुए। संज्ञी तिर्यंच और मनुष्योंमें छह संहनन, छह संस्थान, सुभग, आदेय, यशःकीर्तिके युगल द्वारा दो सौ अठासी, दो सौ अठासी भंग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६/५७६ तीर्त्थरहितसमुद्घातकेवळिय शरीरमिश्रकालदोळु संस्थानषट्कदिंदमारु २६/६ लब्ध्यपर्य्याप्तरुगळ शरीरमिश्रकालदोळारु २६/६ पृथ्वीकायबादरशरीरपर्य्याप्तियोळु आतपोद्योतयुतद्विस्थानंगळोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुदरिदं नाल्कप्पुवु २६/४ अप्कायप्रत्येकवनस्पतिगळ बादरंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळं प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुदरिदं नाल्कु २६/४ पृथ्व्यप्तेजोवायुबादरोच्छ्वासनिःश्वासपर्य्याप्तियोळु प्रत्येकवनस्पतियोळं प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुदरिदं पत्तु २६/१० पृथ्व्यप्तेजोवायुगळ सूक्ष्मंगळोळानापानपर्य्याप्तियोळं साधारणवनस्पतिबादरसूक्ष्मंगळोळनापानपर्य्याप्तियोळं प्रत्येकमेकैकभंगंगळप्पुदरिदमारु २६/६ अंतु षड्विंशति प्रकृतिस्थानदोळु सर्व्वभंगंगळु मरुनूरिप्पत्तप्पुवु। २६/६२० सप्तविंशत्युदयस्थानदोळु भंगंगळु पेळल्पडुगुं :—

सतीर्त्थसमुद्घातकेवलिय शरीरमिश्रकालदोळोंदु २७/१ देवाहार नारकरुगळ शरीरपर्य्याप्तियोळु प्रत्येकमेकैकमागलु मूरु २७/३ पृथ्वीकायबादरदोळानापानपर्य्याप्तियोळातपोद्योतयुतस्थानद्वयदोळं नाल्कु २७/४ अप्कायिकप्रत्येकवनस्पतिगळ बादरंगळोळानापानपर्य्याप्तियोळु प्रत्येकमेरडे-

---

केवलिनः संस्थानषट्केन षट्। लब्ध्यपर्याप्तेष्वपि षट्। शरीरपर्याप्तौ बादरपृथ्वीकायस्यातपोद्योतस्थानद्वये द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। बादराप्कायप्रत्येकयोर्द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। उच्छ्वासपर्याप्तौ बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेषु द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायूभयसाधारणेष्वेकैकं भूत्वा षडिति विंशत्यग्रषट्छती २६/६२०।

सप्तविंशतिकानि सतीर्थसमुद्घातशरीरमिश्रकाले एकं देवाहारकनारकशरीरपर्याप्तावेकैकं भूत्वा त्रीणि। आनापानपर्याप्तौ बादरपृथ्वीकायस्यातपोद्योतस्थानयोर्द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। बादराप्प्रत्येकयोर्द्वे द्वे

होते हैं। मिलकर पांच सौ छिहत्तर हुए। तीर्थरहित सामान्य समुद्घात केवलीके छह संस्थानोंके बदलनेसे छह भंग होते हैं। छह लब्ध्यपर्याप्तकोंके एक-एक भंग होनेसे छह होते हैं। शरीर पर्याप्ति कालमें बादर-पृथ्वीकायके आतप या उद्योतपनेसे दो स्थान हैं। उनमें यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे चार होते हैं। बादर, अप्काय, प्रत्येक वनस्पतिमें भी दो-दो भंग होनेसे चार हुए। उच्छ्वास पर्याप्तिकालमें बादर पृथ्वी, अप्, तेज, वायु प्रत्येकमें यशःकीर्तिके युगल द्वारा दो दो भंग होनेसे दस होते हैं। सूक्ष्म पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, सूक्ष्म बादर साधारणमें एक-एक भंग होनेसे छह हुए। इस प्रकार छब्बीसके स्थानमें ८ + ५७६ + ६ + ६ + ४ + ४ + १० + ६ = ६२० छह सौ बीस भंग होते हैं।

सत्ताईसके स्थानमें तीर्थंकर समुद्घात केवलीके शरीर मिश्रकालमें एक भंग होता है। देवनारक आहारकके शरीर पर्याप्तिकालमें एक-एक भंग होनेसे तीन भंग होते हैं। उच्छ्वास पर्याप्तिकालमें बादर-पृथ्वीकायके आतप-उद्योतसे दो स्थान, उनमें दो-दो भंगसे चार भंग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रडु भंगंगळप्पुवरिवं नाल्कु २७/४ अंतु सप्तविंशति प्रकृत्युदयस्थानदोळ् पन्नेरडे भंगंगळप्पुवु २७/१२

अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानदोळ् भंगंगळ् पेळल्पडुगुं :—

निरतिशयसमुद्घातकेवलियशरीरपर्य्याप्तियोळ् विहायोगतिद्वयगुणितसंस्थान षट्कमप्पुदरिवं पन्नेरडु २८/१२ मनुष्यनोळं संज्ञिपंचेंद्रियदोळं प्रत्येकं शरीरपर्य्याप्तिकालदोळ् सुभगादेययशस्कीर्त्तिविहायोगतिचतुर्द्वयगुणितसंस्थानसंहननषट्कमप्पुदरिवं ३६ । १६ । अय्नूरेप्पत्तागलु मेरडरोळं सासिरद नूरय्वत्तेरडप्पुवु २८/११५२ द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेंद्रियंगळोळ् शरीरपर्य्याप्तियोळ् प्रत्येकमेरडेरडुभंगंगळ यप्पुदरिंदमा नाल्करोळ् मेंटु २८/८ मत्तं देवाहारक नारकरुगळोळानापानपर्य्याप्तियोळ् प्रत्येकमेकैकभंगंगळप्पुदरिवं मूरु २८/३ कूडि अष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानदोळ् सर्व्वभंगंगळ् सासिरद नूरेप्पत्तय्दप्पुवु । २८/११७५ नवविंशतिप्रकृतिस्थानदोळ् भंगंगळ् पेळल्पडुगुं ।

भूत्वा चत्वारीति द्वादश २७/१२ ।

अष्टाविंशतिकानि शरीरपर्याप्तौ निरतिशयसमुद्घातकेवलिनः द्विविहायोगतिषट्संस्थानकृतानि द्वादश । मनुष्ये संज्ञिनि च प्रत्येकं सुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतियुग्मषट्संस्थानषट्संहननकृतानि षट्सप्तत्यग्रपंचशती भूत्वा द्वापंचाशदग्रैकादशशती । द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु द्वे द्वे भूत्वाष्टौ । देवाहारकनारकानापानपर्याप्तावेकैकं भूत्वा त्रीणीति पंचसप्तत्यग्रैकादशशती २८/११७५ ।

हुए। बादर-अप् प्रत्येकके दो दो भंग होनेसे चार हुए। इस तरह सत्ताईसके स्थानमें १ + ३ + ४ + ४ = १२ बारह भंग होते हैं।

अठाईसके स्थानमें शरीर पर्याप्तिकालमें निरतिशय समुद्घात केवलीके विहायोगति युगल और छह संस्थानके बदलनेसे बारह भंग होते हैं। मनुष्य और संज्ञी तिर्यंचमें सुभग, आदेय, यशःकीर्ति और विहायोगति युगल, छह संस्थान, छह संहनन द्वारा प्रत्येकके पाँच सौ छिहत्तर भंग होनेसे दोनोंके ग्यारह सौ बावन हुए। दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीमें यशःकीर्तिके युगलसे दो-दो भंग होनेसे आठ हुए। देव नारकी आहारकमें श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिकालमें एक-एक भंग होनेसे तीन हुए। इस प्रकार अठाईसके स्थानमें १२ + ११५२ + ८ + ३ = ११७५ ग्यारह सौ पचहत्तर भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्त्थसमुद्घातकेवलिय शरीरपर्य्याप्तियोळोंदु २९/१ संज्ञिपंचेंद्रियदोळुद्योतयुतशरीरपर्य्याप्तियोळु मुंपेळ्दंतय्नूरेप्पत्तारु २९/५७६ द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिगळोळु शरीरपर्य्याप्तियोळुद्योतयुतदोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुवरिंदमेंटु २९/८ मत्तं निरतिशयसमुद्घातकेवलियोळानापानपर्य्याप्तियोळु संस्थानविहायोगतिकृत भंगंगळु २९/१२ मनुष्यसंज्ञिपंचेंद्रियंगळोळु प्रत्येकमानापानपर्य्याप्तियोळु संहननसंस्थानसुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतिकृत–३६ । १६ । अय्नूरेप्पत्तारु भंगंगळागुत्तं विरलु एरडरोळं सासिरदनूरय्वत्तेरडु २९/११५२ द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिगळोळानापान पर्य्याप्तियोळुद्योतरहित स्थानदोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुवरिंदमेंटु २९/८ मत्तं देवाहारकनारकरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु प्रत्येकमेकैकस्थानमप्पुदरिंदं मूरु। २९/३ अंतु नवविंशतिप्रकृतिस्थानदोळु सर्व्वभंगंगळु सासिरदेळु नूररुवत्तु भंगंगळप्पुवु २९/१७६० त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु भंगंगळु पेळल्पडुगुं :—

नवविंशतिकानि शरीरपर्याप्तौ तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं । संज्ञिनि प्राग्वत् सोद्योतषट्सप्तत्यग्रपंचशती । द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ । उच्छ्वासपर्याप्तौ निरतिशयसमुद्घातकेवलिनः संस्थानविहायोगतिकृतानि द्वादश । मनुष्ये संज्ञिनि प्रत्येकं प्राग्वत् षट्सप्तत्यधिकपंचशती भूत्वा द्वापंचाशदग्रैकादशशती । द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वनुद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ । भाषापर्याप्तौ देवाहारकनारकाणामेकैकं भूत्वा त्रीणीति षष्ट्यग्रसप्तदशशती २९/१७६० ।

उनतीसके स्थानमें शरीर पर्याप्तिकालमें तीर्थंकर समुद्घात केवलीके एक भंग है। संज्ञी तिर्यंच उद्योत सहितके पूर्वोक्त प्रकारसे पाँच सौ छिहत्तर भंग हैं। उद्योत सहित दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके दो-दो भंग होनेसे आठ भंग हैं। उच्छ्वास पर्याप्तिमें निरतिशय समुद्घात केवलीके छह संस्थान और विहायोगति युगलके बदलनेसे बारह भंग होते हैं। मनुष्य और संज्ञी पंचेन्द्रियमें पूर्वोक्त प्रकारसे प्रत्येकके पाँच सौ छिहत्तर भंग होनेसे ग्यारह सौ बावन होते हैं। उद्योत रहित दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके दो-दो भंग होनेसे आठ भंग होते हैं। भाषा पर्याप्तिकालमें देव आहारक नारकीके एक-एक भंग होनेसे तीन भंग होते हैं। इस प्रकार उनतीसके स्थानमें १+५७६+८+१२+११५२+८+३ = १७६० सतरह सौ साठ भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्त्थसमुद्घातकेवलिय आनापानपर्य्याप्तियोळु ओंदु ३०/१ संज्ञिपंचेंद्रियतिर्य्यंचरोळुद्योतयुतानापानपर्य्याप्तियोळु संस्थानसंहननसुभगादेययशस्कीर्त्तिविहायोगतियुग्मचतुष्टयकृत ३६। १६ भंगंगळु—मय्नूरेप्पत्तारु ३०/५७६ द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिगळोळानापानपर्य्याप्तियोळुद्योतयुतस्थानदोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळागुत्तं विरलु नाल्करोळमेंदु भंगंगळप्पुवु ३०/८ तीर्त्थरहितकेवलिय भाषापर्य्याप्तियोळु संस्थानषट्कविहायोगतिद्वयस्वरद्वयकृत ६। ४। भंगंगळिप्पत्तनाल्कु ३०/२४ मत्तं मनुष्यभाषापर्य्याप्तियोळु संस्थानषट्क-संहननषट्क-सुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतिस्वरमेंब युग्मपंचकमें बिर्वरि ३६। ३२। भंगंगळु सासिरद नूरय्वत्तेरडु ३०/११५२ संज्ञिपंचेंद्रियदोळुद्योतरहित भाषापर्य्याप्तियोळु मनुष्यनोळेंतंते सासिरद नूरय्वतेरडप्पुवु ३०/११५२ द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिजीवंगळोळु भाषापर्य्याप्तियोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळागलु नाल्करोळमेंदु भंगंगळप्पुवु ३०/८ अंतु कूडि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु सर्व्वभंगंगळुमेरडु सासिरदों भैनूरिप्पत्तोंदप्पुवु ३०/२९२१ तीर्त्थरहितसमुद्घातकेवलिय भाषापर्य्याप्तियोळु चतुर्विंशति भंगंगळु पुनरुक्तंगळप्पुवु।

त्रिंशत्कान्युच्छ्वासपर्याप्तौ तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं संज्ञिनि प्राग्वत्सोद्योतषट्सप्तत्यग्रपंचशती। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ। भाषापर्याप्तौ तीर्थोनकेवलिनः संस्थानविहायोगतिस्वरकृतानि चतुर्विंशतिः। मनुष्ये संस्थानसंहननसुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतिस्वरकृतानि द्वापंचाशदग्रैकादशशती। संज्ञिनोऽपि तथा उद्योतरहितानि भवन्ति। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु ते द्वे द्वे भूत्वाष्टाविरयेकविंशत्यग्रैकान्नत्रिंशच्छती ३०/२९२१ तीर्थोनसमुद्घातकेवलिभाषापर्याप्तौ चतुर्विंशतिभंगास्ते पुनरुक्ताः।

तीसके स्थानमें उच्छ्वास पर्याप्ति कालमें तीर्थंकर समुद्घात केवलीके एक भंग है। उद्योत सहित संज्ञीके पूर्वोक्त पाँच सौ छिहत्तर भंग हैं। उद्योत सहित दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रियके दो-दो भंग होनेसे आठ भंग हैं। भाषापर्याप्तिकालमें तीर्थरहित सामान्य केवलीके छह संस्थान, विहायोगति युगल, स्वर युगलके चौबीस भंग हैं। मनुष्यमें छह संस्थान, छह संहनन, सुभग आदेय, यशःकीर्ति, विहायोगति और स्वरके युगल द्वारा ग्यारह सौ बावन भंग हैं। उद्योत सहित संज्ञी पंचेन्द्रिय तियंचमें भी उसी प्रकार ग्यारह सौ बावन भंग होते हैं। दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके दो-दो भंग होनेसे आठ भंग होते हैं। ऐसे तीसके स्थानमें १+५७६+८+२४+११५२+११५२+८=२९२१ उनतीस सौ इक्कीस भंग होते हैं।

तीर्थ रहित समुद्घात केवलीके भाषा पर्याप्ति कालमें चौबीस भंग हैं। वे पुनरुक्त हैं क्योंकि पूर्वमें कहे भंगोंसे इनमें भेद नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु सतीर्थकेवलिय भाषापर्य्याप्तियोळुओंदु ३१/१ संज्ञिपंचेंद्रिय भाषापर्य्याप्तियोळुद्योतसहितस्थानदोळु षट्संस्थानषट्संहननयुग्मपंचककृत ३६। ३२ भंगंगळु सासिरद नूरय्वत्तेरडप्पुवु ३१/११५२ द्वींद्रियत्रींद्रिय चतुरिंद्रियासंज्ञिजीवंगळोळुद्योतयुतस्थानंगळोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळ संभविसुत्तं विरलु नाल्करोळु मेंटु भंगंगळप्पुवु ३१/८ अंतु कूडि एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु भाषापर्य्याप्तियोळु सासिरद नूरख्वत्तोंदु भंगंगळप्पुवु ३१/११६१ तीर्त्थसमुद्घातकेवलियोळोंदु भंगं पुनरुक्तभंगमक्कुमयोगिकेवलियोळु सतीर्त्थरोंभत्तरोळोंदुमतीर्त्थरेंटरोळोंदु भंगंगळप्पु ९ ८/१ १ इंतुक्तस्थानभंगंगळगे संदृष्टि :—

२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८
१	६०	२३	१९	६२०	१२	११७५	१७६०	२९२१	११६१	१	१

इंतिवेल्लमुमपुनरुक्तभंगंगळप्पुवु । सर्व्वभंगंगळु ७७५८

अनंतरं समुद्घातकेवलिय तीर्त्थरहितरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानद चतुर्विंशतिभंगंगळुं तीर्त्थयुतरोळेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळोंदुं स्थानमुं पुनरुक्तमेंदु पेळ्दपरु :—

सामण्णकेवलिस्स समुग्घादगदस्स तस्स वचि भंगा ।
तित्थस्सवि सगभंगा समेदि तत्थेक्कमवणिज्जो ॥६०६॥

सामान्ये केवलिनः समुद्घातगतस्य तस्य वाग्भंगास्तीर्थस्यापि स्वकभंगौ समाविति तत्रैकमपनेयः ॥

एकत्रिंशत्कानि भाषापर्याप्तौ सतीर्थकेवलिन्येकं । संज्ञिनि सोद्योतानि तथा द्वापंचाशदग्रैकादशशती । द्विन्त्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टावित्येकषष्ट्यग्रैकादशशती ३१/११६१ । तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं पुनरुक्तं । अयोगकेवलिनि सतीर्थनवकमेकं, अतीर्थाष्टकमेकं ९/१ । ८/१ मिलित्वा सर्वाणि ७७५८ ॥६०३–६०५॥ तानि पुनरुक्तान्याह—

इकतीसके स्थानमें भाषा पर्याप्तिमें तीर्थंकर केवलीके एक है। उद्योत सहित संज्ञी पंचेन्द्रियके पूर्वोक्त प्रकारसे ग्यारह सौ बावन भंग हैं। उद्योत सहित दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रियके दो-दो भंग होनेसे आठ होते हैं। इस प्रकार इकतीसके स्थानमें १+११५२+८=११६१ ग्यारह सौ इकसठ भंग होते हैं।

तीर्थ सहित समुद्घात केवलीका एक भंग पुनरुक्त है। अयोग केवलीमें तीर्थंकर सहित नौका एक भंग है। तीर्थंकर रहित आठका एक भंग है। इस प्रकार सब मिलकर सात हजार सात सौ अठावन भंग होते हैं ॥६०३–६०५॥

पुनरुक्त भंगोंको कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामान्यकेवलियोळं समुद्घातसामान्यकेवलियोळं भाषापर्य्याप्तिय त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु चतुर्व्विंशतिभंगंगळु तीर्त्थकेवलियोळं समुद्घाततीर्त्थकेवलियोळमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानद्वयमुं सममें दों दों दं पुनरुक्तमें दु बिड्डुत्तं विरलिप्प २५ लव्वु भंगंगळु कळेयल्पड्डुवु ।

अनंतरं गुणस्थानदमेले नामोदयस्थानभंगंगळं योजिसिदपरु :—

णारयसण्णिमणुस्ससुराणं उवरिमगुणाण भंगा जे ।
पुणरुत्ता इदि अवणिय भणिया मिच्छस्स भंगेसु ॥६०७॥

नारकसंज्ञिमनुष्यसुराणामपरितनगुणानां भंगा ये । पुनरुक्ता इत्यपनीय भणिताः मिथ्यादृष्टेर्भंगेषु ॥

नारकरुगळ संज्ञिपंचेंद्रिय जीवंगळ मनुष्यरुगल सुररुगळ उपरितनगुणस्थानंगळोळावुवु केलवु भंगंगळपु पुनरुक्तंगळें दितु मिथ्यादृष्टिय भंगंगळोळु कळेदु पेळल्पट्टुवु । अवें तें दोडे संदृष्टि :—

मिथ्यादृष्टिगे	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१
	५९	२७	१८	६१४	१०	११६२	१७४६	२८९६	११६०

सासादनंगे	२१	२४	२५	२६	२९	३०	३१	मिश्रंगे	२९	३०	३१
	३१	६	१	५८४	२	२३०४	११५२		२	२३०४	११५२

असंयतंगे	२१	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	देश संयतंगे	३०	३१
	४	२	३७	२	७५	७६	२३९५	११५२		२८८	१४४

भाषापर्याप्तौ सामान्यकेवलिसमुद्घातसामान्यकेवलिनस्त्रिंशत्कस्य चतुर्विंशतिश्चतुर्विंशतिः । तीर्थकेवलिसमुद्घाततीर्थकेवलिनोरेकत्रिंशत्कस्यैकैकश्च भंगाः समाना इति पंचविंशतिरपनेतव्याः ॥६०६॥ अथ गुणस्थानेषु तान् भंगानाह—

नारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यसुराणामुपरितनगुणस्थानेषु ये भंगास्ते पुनरुक्ता इति मिथ्यादृष्टिभंगेष्वपनीय भणिताः । तद्यथा—

भाषापर्याप्तिकालमें सामान्य केवली और समुद्घात सहित सामान्य केवलीके तीसके स्थानके चौबीस-चौबीस भंग समान हैं। तथा तीर्थंकर केवली और समुद्घात तीर्थंकर केवलीके इकतीसके स्थानमें एक-एक भंग समान है। अतः ये पच्चीस भंग पुनरुक्त होनेसे नहीं लेना चाहिए ॥६०६॥

आगे गुणस्थानोंमें उन भंगोंको कहते हैं—

नारकी, संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य, देव इनके ऊपरके सासादन आदि गुणस्थानोंमें जो भंग हैं वे पुनरुक्त हैं क्योंकि मिथ्यादृष्टिके भंगोंके समान हैं। अतः उन पुनरुक्त भंगोंको दूर कर मिथ्यादृष्टिके भंगोंसे ही उन्हें भी कहा है। वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमत्तंगे	२५	२७	२८	२९	३०	अप्रमत्तंगे	३०	अपूर्व्व-करणंगे	३०	३०	अनिवृत्ति-करणंगे	३०	३०
	१	१	१	१	१४४		१४४		७२	२४		७२	२४

सूक्ष्म-सांपरायंगे	३०	३०	उपशांत-कषायंगे	३०	क्षीण-कषायंगे	३०	सयोग केवलिगे	२०	२१	२६	२७	२८
	७२	२४		७२		२४		१	१	६	१	१२

→

←

२९	३०	३१	अयोगि-केवलियोळ्	९	८
१३	२५	१		१	१

इंतागुत्तं विरलेकविंशतिस्थानसर्व्वभंगंगळरुवत्तरोळ् तीर्त्थयुतभंगमोंदं कळेदु शेषमोंदु-
गुंदिदरुवत्तुभंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २१ चतुर्व्विंशतिप्रकृत्युदयस्थानदोळिप्पत्तेळु भंगंगळ-
५९
प्पुववनितुं मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २४ पंचविंशतिस्थानभंगंगळु पत्तोंभत्तरोळ् आहारकशरीरमिश्र-
२७
भंगमोंदं कळेदु शेषपदिनें टु भंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २५ षड्विंशतिस्थानभंगंगळुमरुनूरि-
१८
प्पत्तरोळु सामान्यसमुद्घातकेवलिय संस्थानभेदषड्भंगंगळं कळेदु शेषमरुनूर पदिनाल्कु
भंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २६ सप्तविंशतिस्थानंगळ पन्नेरडुं भंगंगळोळ् आहारतीर्त्थसंबंधि-
६१४
भंगंगळेरडं कळेदु शेषपत्तुं भंगंगळुं मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २७ अष्टाविंशतिस्थानभंगंगळु साविरद
१० ११
नूर येप्पत्तय्दरोळु ११७५ सामान्यसमुद्घातकेवलिय पन्नेरडुमनाहारकदोंदुमनंतु पदिमूरं कळेदु
शेष सासिरद नूररुवत्तेरडु भंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २८ नवविंशतिस्थानभंगंगळु साविरदेळ्-
११६२

एकविंशतिकस्य षष्टौ तीर्थजो नेत्येकान्नषष्टिः। चतुर्विंशतिकस्य सप्तविंशतिः। पंचविंशतिकस्यैकान्नविंशतावाहारकशरीरमिश्रजो नेत्यष्टादश। षड्विंशतिकस्य विंशत्यग्रषट्छत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिसंस्थानजाः षड्नेति चतुर्दशाग्रषट्छती। सप्तविंशतिकस्य द्वादशस्वाहारकतीर्थजौ नेति दश। अष्टाविंशतिकस्य पंचसप्तत्यग्रैकादशशत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिनो द्वादश, आहारकस्यैकश्च नेति द्वाषष्ट्यग्रैकादशशती।

मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके साठ भंगोंमें तीर्थंकर सम्बन्धी एक भंगके बिना उनसठ भंग हैं। चौबीसके सत्ताईस भंग हैं। पच्चीसके उन्नीस भंगोंमें-से आहारक शरीरमिश्र सम्बन्धी एक भंगके बिना अठारह हैं। छब्बीसके छह सौ बीसमें-से सामान्य समुद्घात केवलीके संस्थानजन्य छह भंग बिना छह सौ चौदह हैं। सत्ताईसके बारह भंगोंमें आहारक और तीर्थंकरके दो बिना दस भंग हैं। अठाईसके ग्यारह सौ पचहत्तरमें-से सामान्य समुद्घात

नूरुवत्तरोळु सामान्यसमुद्घातकेवलिय पन्नेरडुमं तीर्त्थसमुद्घातकेवलियोळोंदुमं आहारकदोंदुमनंतु पदिनाल्कुमं कळेदु शेष सासिरदेळुनूर नाल्वत्तारु भंगंगळुमिथ्यादृष्टियोळप्पुवु २९/१७४६ त्रिंशत्प्रकृतिस्थानभंगंगळु एरडुसासिरदोंभैनूरिप्पत्तोंद २९२१ रोळु सामान्यकेवलियं चतुर्व्विंशतिभंगंगळुमं तीर्त्थकेवलियदोंदुमनंतु पंचविंशतिभंगंगळं कळेदु शेषमेरडु सासिरवेंटुनूर तोंभत्तारु भंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु ३०/२८९६ एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानभंगंगळु ११६१ रोळु तीर्त्थभंगमोंदं कळेदु शेषमेकसासिरद नूररुवत्तु भंगंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु ३१/११६० सासादनगुणस्थानदोळु एकविंशतिस्थानभंगंगळु बादरपृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिगळोळारुं द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियाऽसंज्ञिगळोळेंटुं संज्ञिपंचेंद्रियंगळोळेंटुं मनुष्यरोळेंटुं देवगतियदोंदुमंतु सासादनंगेकविंशतिस्थान भंगंगळु मूवत्तोंदप्पुवु २१/१३ सासादनंगे चतुर्व्विंशतिस्थानंगळु पृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिगळ बादरंगळोळारेयप्पुवु २४/६ सासादनंगे पंचविंशतिस्थानंळोळु देवगतियदोंदेयक्कुं २५/१ सासादनंगे षड्विंशतिस्थानंगळोळु द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियासंज्ञिगळोळेंटुं २६/८ संज्ञिपंचेंद्रियदोळिन्नूरेंभत्तेंटु २६/२८८ मनुष्यनोळिन्नूरेंभत्तेंटुं २६/२८८ कूडि षड्विंशतिप्रकृत्युदयस्थानभंगंगळैन्नूरेंभत्तनाल्कप्पुवु २६/५८४ सासादनंगे सप्तविंशतिस्थानमुमष्टाविंशतिस्थानमुमिल्लेकेंदोडे शरीरमिश्रकालदोळल्ल-

---

नवविंशतिकस्य षष्ट्यग्रसप्तदशशत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिनो द्वादश, तीर्थसमुद्घातकेवलिन एकः, आहारकस्यैकश्च नेति षट्चत्वारिंशदग्रसप्तदशशती। त्रिंशत्कस्यैकविंशत्यग्रैकान्नत्रिंशच्छत्यां सामान्यकेवलिनश्चतुर्विंशतिः तीर्थकेवलिन एकश्च नेति षण्णवत्यग्राष्टाविंशतिशती। एकत्रिंशत्कस्यामीषु ११६१ तीर्थजो नेति षष्ट्यग्रैकादशशती। सासादने एकविंशतिकस्य बादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु षट्। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वष्टौ। संज्ञिन्यष्टौ। मनुष्येऽष्टौ। देवगतावेकः इत्येकत्रिंशत्। चतुर्विंशतिकस्य बादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु षट्। पंचविंशतिकस्य देवगतेरेकः। षड्विंशतिकस्य द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वष्टौ। संज्ञिमनुष्ययोः प्रत्येकमष्टाशीत्यग्रद्विशती इति चतुरशीत्यग्रपंचशती।

केवलीके बारह, आहारकका एक, इन तेरहके बिना ग्यारह सौ बासठ भंग हैं। उनतीसके सतरह सौ साठ भंगोंमें-से सामान्य समुद्घात केवलीके बारह, तीर्थंकर समुद्घात केवलीका एक, आहारकका एक, इन चौदहके बिना सतरह सौ छियालीस भंग हैं। तीसके उनतीस सौ इक्कीस भंगोंमें सामान्य केवलीके चौबीस, तीर्थंकर केवलीका एक, इन पच्चीस बिना अठाईस सौ छियानबे भंग हैं। इकतीसके ग्यारह सौ इकसठ भंगोंमें तीर्थंकरका एक बिना ग्यारह सौ साठ भंग हैं।

सासादन गुणस्थानमें इक्कीसके बादर, पृथ्वी, अप् प्रत्येकके छह, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके आठ, संज्ञीके आठ, मनुष्यके आठ, देवका एक इस प्रकार इकतीस भंग हैं। चौबीसके बादर, पृथ्वी, अप् प्रत्येकके ही छह भंग होते हैं। पच्चीसका देवगतिका एक भंग है। छब्बीसके दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञीके आठ, संज्ञी पंचेन्द्रियके दो सौ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दन्यशरीरपर्य्याप्त्यादिकालंगळोळु सासादनरुगळु मिथ्यादृष्टिगळागि पोपरप्पुदरिंदमातंगे शरीरपर्य्याप्त्यादिकालस्थानंगळु संभविसवु। सासादनंगे नवविंशतिप्रकृतिस्थानंगळ देवनारकरुगळोळोंदोंदागलेरडे भंगंगळप्पुवु २९/२ सासादनंगे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु तिर्य्यग्मनुष्यरुगळ भाषापर्य्याप्तिस्थानभंगंगळु प्रत्येकं सासिरदनूरय्वत्तेरडागलेरडरोळमेरडु सासिरद मूनूर नाल्कुं ३०/२३०४ सासादनंगे एकत्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानदोळु संज्ञिजीवनुद्योतयुतभाषापर्य्याप्तियोळु सासिरदनूरय्वत्तेरडु भंगंगळप्पुवु ३१/११५२ मिश्रंगे देवनारकरुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु नवविंशतिस्थानंगळेरडेयप्पुवु २९/२ दे। ना। मिश्रंगे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु संज्ञिपंचेंद्रियमनुष्यरुगळोळेरडु सासिरद मूनूर नाल्कु भंगंगळप्पुवु ३०/२३०४ मिश्रंगे एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळु संज्ञिपंचेंद्रियतिर्य्यंचनोळुद्योतयुतस्थानभंगळु सासिरद नूरय्वत्तेरडप्पुवु ३१/११५२ असंयतनोळु चतुर्गतिजरोळं प्रत्येकमोंदोंदु स्थानमागलु नाल्कुगतिगळ्गमेकविंशतिस्थानंगळु नाल्कप्पुवु २१/४ मत्तमसंयतंगे पंचविंशतिस्थानदोळु धर्म्मेयनारक सौधर्म्मादिदेवक्कळ संबंधिद्विभंगंगळप्पुवु २५/२ असंयतंगे षड्विंशतिस्थानदोलु संज्ञिभोगभूमितिर्य्यंचंगे सर्व्वमुं शुभप्रकृत्युदयमप्पुदरिंदमल्लियोंदुं २६/१ कर्म्मभूमिसंज्ञि-

---

नात्र सप्तविंशतिकाष्टविंशतिकोदयः शरीरपर्याप्त्यादिकालेषु मिथ्यादृष्टित्वसंभवात्। नवविंशतिकस्य देवनारकयोरेकैक इति द्वौ। त्रिंशत्कस्य तिर्यग्मनुष्ययोर्भाषापर्याप्तौ प्रत्येकं द्वापंचाशदग्रैकादशशतीति चतुरग्रत्रयोविंशतिशती। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनो भाषापर्याप्तावुद्योतयुतद्वापंचाशदग्रैकादशशती। मिश्रे देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ नवविंशतिके द्वौ। त्रिंशत्कस्य संज्ञिमनुष्ययोश्चतुरग्रत्रिंशद्विसहस्रो। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनि सोद्योतद्वापंचाशदग्रैकादशशती। असंयते एकविंशतिकस्य चतुर्गतिजेष्वेकैको भूत्वा चत्वारः। पंचविंशतिकस्य घर्मानारकवैमा-

---

अठासी, मनुष्यके दो सौ अठासी इस प्रकार पाँच सौ चौरासी भंग होते हैं। इस गुणस्थानमें सत्ताईस-अठाईसके उदयस्थान नहीं होते। क्योंकि शरीरपर्याप्ति आदि कालोंमें एकेन्द्रिय आदिमें मिथ्यादृष्टिपना ही सम्भव है। उनतीसके देवनारकीके एक-एक मिलकर दो भंग हैं। तीसके भाषापर्याप्तिमें संज्ञी तिर्यंचके ग्यारह सौ बावन, मनुष्यके ग्यारह सौ बावन इस तरह तेईस सौ चार भंग हैं। इकतीसके संज्ञीके भाषापर्याप्तिमें उद्योत सहित स्थानके ग्यारह सौ बावन भंग हैं।

मिश्र गुणस्थानमें उनतीसके देवनारकीके भाषापर्याप्तिमें एक-एक मिलकर दो भंग हैं। तीसके संज्ञी और मनुष्यके मिलाकर तेईस सौ चार भंग हैं। इकतीसके उद्योत सहित संज्ञीके ग्यारह सौ बावन भंग हैं।

असंयत गुणस्थानमें इक्कीसके चारों गतिकी अपेक्षा चार भंग हैं। पच्चीसके घर्मानारक और वैमानिक देवके एक-एक मिलकर दो भंग हैं। छब्बीसके भोगभूमि तिर्यंचके छह

पंचेंद्रियंगल संस्थान संहननभेवयुत षट्त्रिंशद्भंगंगलु मंतु सप्तत्रिंशद्भंगंगलप्पुवु २६/३७ मत्तमसंयतंगे सप्तविंशतिस्थानदोलु धर्म्मेय नारक सौधर्म्मादिकल्पजरुगल संबंधि द्विभंगंगलप्पुवु २७/२ मत्तम-संयतंगे अष्टाविंशति प्रकृत्युदयस्थानदोलु भोगभूमि संज्ञिपंचेंद्रियजीवसंबंधि शरीरपर्य्याप्तियोलु धर्म्मेय नारक सौधर्म्मादिकल्प कल्पातीतजरुगल संबंध्यानापान पर्य्याप्तियोलु त्रिभंगंगलु २८/३ मनुष्यरोलु संस्थान संहननविहायोगति कृत भंगंगलेप्पत्तेरडुं २८/७२ कूडि २८/७५ मत्तमसंयतंगे नवविंशतिस्थानदोलु भोगभूमिसंज्ञिपंचेंद्रिय मनुष्यरुगलानापानपर्य्याप्तियोलु द्विभंगंगलुं देवनारक-रुगळ भाषापर्य्याप्तियोळु द्विभंगंगळु कर्म्मभूमिमनुष्य संस्थानसंहननविहायोगतिकृतानापानपर्य्याप्ति-योळु एप्पत्तेरडु भंगंगळुं कूडि एप्पत्तारु भंगंगळप्पुवु २९/७६ मत्तमसंयतन त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु भोगभूमि संज्ञिपंचेंद्रियोद्योतयुतानापानपर्य्याप्तियोळोंदुं भाषापर्य्याप्तियुत संज्ञिपंचेंद्रियतिर्य्यग्मनुष्य-रुगळ भंगंगळु मेरडु सासिरद मूनूर नाल्कु कूडि येरडु सासिरद मूनूरय्दप्पुवु ३०/२३०५ मत्तमसंयत-नेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु संज्ञिपंचेंद्रिय तिर्य्यंचन सासिरद नूरय्वत्तेरडु भंगंगळप्पुवु। ३१/११५२ देशसंयतंगे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु संज्ञिपंचेंद्रियतिर्य्यग्मनुष्यरुगल संस्थानसंहननविहायोगतिस्वरकृत

निकदेवयोरेकैक इति द्वौ। षड्विंशतिकस्य भोगभूमितिरश्चां शुभोदयादेक:। कर्मभूमि संज्ञिनां संस्थानसंहननजा: षट्त्रिंशदिति सप्तत्रिंशत्। सप्तविंशतिकस्य घर्माजवैमानिकयोर्द्वौ। अष्टाविंशतिकस्य भोगभूमिजघर्माजवैमानिकानामुच्छ्वासपर्याप्तौ त्रय:। मनुष्ये संस्थानसंहननविहायोगतिजा द्वासप्ततिरिति पंचसप्तति:। नवविंशतिकस्य भोगभूमितिर्यग्मनुष्ययोरानापानपर्याप्तौ द्वौ। देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ द्वौ। कर्मभूमिमनुष्यस्यानापानपर्याप्तौ प्राग्वद्द्वासप्ततिरिति षट्सप्तति:। त्रिंशत्कस्य भोगभूमितिर्यक्ष्वानापानपर्याप्तौ सोद्योत एक:। संज्ञितिर्यग्मनुष्ययोर्भाषापर्याप्तौ चतुरग्रत्रयोविंशतिशती पंचाग्रत्रिंशतद्विसहस्री। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनो

शुभका ही उदय होनेसे एक और कर्मभूमियाँ संज्ञी तिर्यंचके छह संस्थान, छह संहननके बदलनेसे छत्तीस, इस प्रकार सैंतीस भंग हैं। सत्ताईसके और घर्मानारक वैमानिक देवका एक-एक भंग मिलाकर दो भंग हैं।

अठाईसके भोगभूमिया तिर्यंच, धर्मा नारकी, वैमानिक देवोंमें उच्छ्वास पर्याप्तिमें एक-एक भंग मिलकर तीन, मनुष्यके छह संस्थान छह संहनन विहायोगति युगलसे बहत्तर, इस प्रकार पचहत्तर भंग हैं। उनतीसके भोगभूमिया तिर्यंच मनुष्यके प्रशस्तका ही उदय होनेसे एक-एक, उनके श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिमें दो, देव नारकीके भाषापर्याप्तिमें एक-एक भंग मिलकर दो, और कर्मभूमिया मनुष्यके श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिमें पूर्वोक्त प्रकारसे बहत्तर इस तरह छिहत्तर भंग हैं। तीसके भोगभूमियाँ तिर्यंच उद्योत सहितके श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिमें एक संज्ञीतिर्यंच व कर्मभूमिया *मनुष्य इन दोनोंके मिलाकर तेईस सौ चार इस तरह तेईस सौ पाँच भंग हैं। इकतीसके संज्ञीतिर्यंचके ही ग्यारह सौ बावन भंग हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगंगळि नूरेंभत्तें टु ३०/२८८ संज्ञिपंचेंद्रियोद्योतयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळ् नूरनाल्वत्तनाल्कु-मप्पुवु। ३१/१४४ प्रमत्तसंयतनोळाहारक शरीरमिश्रदोळ् पंचविंशति प्रकृतिस्थानमों दु २५/१ आशरीरपर्य्याप्तियोळु सप्तविंशति प्रकृतिस्थानमों दु २७/१ आनापानपर्य्याप्तियोळष्टाविंशतिप्रकृति-स्थानमों दु २८/१ आ भाषापर्य्याप्तियोळु नवविंशति प्रकृत्युदयस्थानमों दु २९/१ औदारिकशरीर भाषापर्य्याप्तियोळुसंस्थानसंहननविहायोगतिस्वरभेदसंजनितचतुश्चत्वारिंशदुत्तरैकशतभंगयुतत्रिंशत्प्र-कृतिस्थानमुमक्कुं ३०/१४४ अप्रमत्तसंयतनोळ चतुश्चत्वारिंशदुत्तरैकशतभंगयुतत्रिंशत्प्र-कृतिस्थानमुदयमक्कु। ३०/१४४ मपूर्व्वकरणोपशमंगे संस्थानषट्क संहननत्रय विहायोगतिस्वरभेद संजनित द्विसप्ततिभंगयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमक्कु ३०/७२ मा क्षपकंगे संस्थानषट्कसंहननैकविहायो-गतिद्वयस्वरद्वयसंजनितचतुर्व्विंशतिभंगयुतत्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानमक्कु ३०/२४ मी प्रकारदिंद-मनिवृत्तिकरणनोळं सूक्ष्मसांपरायनोळमक्कुं। अनि उ ३०/७२ क्ष ३०/२४ सूक्ष्म— उ ३०/७२ क्ष ३०/२४ उपशांतकषायनोळु द्वासप्ततिभंगयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमक्कुं। ३०/७२ क्षीणकषायनोळ् चतुर्व्विंशति

द्वापंचाशदग्रैकादशशती। देशसंयते त्रिंशत्कस्य संज्ञितिर्यग्मनुष्ययोः संस्थानसंहननविहायोगतिस्वरप्रकृता अष्टाशीत्यग्रशतो। सोद्योतैकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनः चतुश्चत्वारिंशदग्रशतं। प्रमत्ते आहारकशरीरमिश्रपंच-विंशतिकस्यैकः। शरीपर्याप्तौ सप्तविंशतिकस्यैकः। आनापानपर्याप्तावष्टाविंशतिकस्यैकः, भाषापर्याप्तौ नवविंशतिकस्यैकः। त्रिंशत्कस्यौदारिकशरीरभाषापर्याप्तौ संस्थानसंहननविहायोगतिस्वरजाश्चतुश्चत्वारिंशदग्रैक शतं। अप्रमत्ते त्रिंशत्कस्य तथा तावंतः। उपशमकेषु चतुर्षु प्रत्येकं संस्थानत्रिसंहननस्वरविहायोगतिजा

देश संयत गुणस्थानमें तीसके संज्ञोतिर्यंचके संस्थान छह, संहनन छह, विहायोगति-युगल और स्वरयुगलसे एक सौ चवालीस, इसी प्रकार मनुष्यके एक सौ चवालीस मिलकर दो सौ अठासी भंग हैं। उद्योत सहित इकतीसके संज्ञी पंचेन्द्रियके पूर्वोक्त प्रकार एक सौ चवालीस भंग हैं।

प्रमत्तमें आहारकके शरीर मिश्रमें पच्चीसका एक, शरीर पर्याप्तिमें सत्ताईसका एक, श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिमें अठाईसका एक, भाषापर्याप्तिमें उनतीसका एक भंग है। औदारिक शरीरके भाषा पर्याप्ति सम्बन्धी तीसके छह संस्थान, छह संहनन, विहायोगति युगल, स्वर-युगलसे एक सौ चवालीस भंग हैं।

अप्रमत्तमें तीसके उसी प्रकार एक सौ चवालीस भंग हैं। उपशम श्रेणिके चार गुण-स्थानोंमेंसे प्रत्येकके छह संस्थान, तीन संहनन, स्वरयुगल, विहायोगति युगलसे बहत्तर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं ३०/२४ सयोगकेवलि भट्टारकतीर्त्थरहितसमुद्घातकेवलियोळु कार्म्मणशरीरदोळेक भंगयुत विंशति प्रकृतिस्थानमुं तीर्त्थयुतैकविंशतिस्थानमक्कुं २०/१ २१/१ तीर्त्थरहित कवाटसमुद्घातकेवलियोळ् औदारिकशरीरमिश्रकालदोळु संस्थानषट्कसंजनित षड्भंगयुत षड्विंशति प्रकृतिस्थानोदयमक्कु— २६/६ मा कालदतीर्त्थयुतरोळु सप्तविंशति प्रकृतिस्थानोदयमक्कुं २७/१ मूलशरीरप्रवेशदोळु तीर्त्थरहितशरीरपर्य्याप्तियोळु संस्थानषट्कविहायोगतिद्वयजनितद्वादशभंगयुताष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं २८/१२ आ शरीरपर्य्याप्तियोळु तीर्त्थयुतमागि नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं २९/१ तीर्त्थरहितरोळानापानपर्य्याप्तियोळु द्वादश भंगयुत नवविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमुमक्कु २९/१२ मंतु त्रयोदशभंगयुतनवविंशति प्रकृतिस्थानमक्कुं २९/१३ मत्तमानापानपर्य्याप्तियोळु तीर्त्थयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमों दक्कुं ३०/१ तीर्त्थरहितभाषापर्य्याप्तियोळु संस्थानषट्कविहायोगतिद्वयस्वरद्वयसंजनितचतुर्व्विंशतिभंगयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमुमक्कु ३०/२४ मंतु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानदोळु पंचविंशति भंगंगळप्पुवु ३०/२५ मत्तं तीर्त्थयुतैकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयं भाषापर्य्याप्तियोळक्कु ३१/१ सयोगिकेवलि भट्टारकरोळु तीर्त्थयुतनवप्रकृतिस्थानोदयमों दक्कुं ९/१ तीर्त्थरहिताष्टप्रकृतिस्थानोदयमुमों दक्कु ८/१

द्वासप्ततिः। क्षपकेषु चतुर्षु तथा संस्थानैकसंहननविहायोगतिस्वरजाः चतुर्विंशतिः। सयोगे समुद्घाते कार्मणे विंशतिकस्यैकः। सतीर्थे एकविंशतिकस्यैकः। औदारिकमिश्रे षड्विंशतिकस्य संस्थानजाः षट्। सतीर्थे सप्तविंशतिकस्यैकः। अष्टविंशतिकस्य मूलशरीरप्रवेशे पर्याप्तौ संस्थानविहायोगतिजा द्वादश, सतीर्थे नवविंशतिकस्यैकः, आनापानपर्याप्तौ द्वादशेति त्रयोदश। सतीर्थे त्रिंशत्कस्यैकः। भाषापर्याप्तौ संस्थानस्वरविहायोगतिजाश्चतुर्विंशतिरिति पंचविंशतिः। सतीर्थे एकत्रिंशत्कस्यैकः। अयोगे नवकस्यैकोऽष्टकस्यैकः ॥६०७॥

बहत्तर भंग हैं। क्षपणश्रेणिके चार गुणस्थानोंमें छह संस्थान, एक संहनन, विहायोगति युगल, स्वरयुगलसे चौबीस-चौबीस भंग हैं। सयोगीमें समुद्घात रूप कार्माणमें बीसका एक ही भंग है। तीर्थ सहित इक्कीसका एक भंग है। औदारिक मिश्रमें छब्बीसके छह संस्थानोंके छह भंग हैं। तीर्थ सहित सत्ताईसका एक ही भंग है। अठाईसका मूल शरीरमें प्रवेश करते हुए शरीर पर्याप्तिमें छह संस्थान और विहायोगति युगलसे बारह भंग हैं। तीर्थ सहित उनतीसका एक तथा सामान्य केवलीके श्वासोच्छ्वास पर्याप्तिमें बारह ऐसे तेरह भंग हैं। तीर्थ सहित तीसका एक, भाषापर्याप्तिमें सामान्य केवलीके छह संस्थान, स्वरयुगल, विहायोगति युगलके चौबीस इस तरह पच्चीस भंग हैं। तीर्थ सहित इकतीसका एक भंग है। अयोगीमें नौका एक और आठका एक भंग है ॥६०७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं विंशत्यादिनामकर्म्मोदयस्थानंगळु पन्नेरडरोळमपुनरुक्तभंगंगळेनितेंदु युतियं पेळ्दपरु :—

अडवण्णा सत्तसया सत्तसहस्सा य होंति पिंडेण ।
उदयट्ठाणे भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥६०८॥

अष्टपंचाशत्सप्तशतानि सप्तसहस्राणि च भवंति पिंडेन। उदयस्थाने भंगा असहायपराक्रमोद्दिष्टाः ॥

नामकर्म्मोदयस्थानंगळोळु सर्व्वसंयोगदिदं असहायपराक्रमनुळ्ळ श्रीवीरवर्द्धमानस्वामिगळिं पेळल्पट्ट भंगंगळेळु सासिरमुमेळुनूरुमय्वत्तेंटप्पुवु । ७७५८ यिल्लि नारकसंज्ञिपंचेंद्रियतिर्य्यंचमनुष्यदेवक्कळुगळोळु तंतम्म मिथ्यादृष्टियभंगंगळोळु तंतम्म गुणप्रतिपन्नरुगळ भंगंगळु पडेयल्वक्कुमप्पुदरिंदमा गुणप्रतिपन्नरुगळ भंगंगळु पुनरुक्तंगळप्पुवेंदरियल्पडुवुवु ।

कं। येनितक्कुं भंगंगळुमनितुदयस्थानसंख्येयक्कुममोघं । इनितेनवेडिद्दु चित्रमवनितुं त्रिजगच्छरीरिनिवहाक्रमिगळु ।

अनंतरं नामसत्त्वस्थानप्रकरणमनेकान्नविंशति गाथा सूत्रंगळिवं पेळलुपक्रमिसि मोदलोळु नामकर्म्मसत्त्वस्थानंगळु पदिमूरप्पुवेंदु पेळ्दपरु :—

तिदुइगिणउदी णउदी अडचउदोअहियसीदि सीदी य ।
ऊणासीदट्ठत्तरि सत्तत्तरि दस य णव सत्ता ॥६०९॥

त्रिद्वयेकनवतिर्न्नवतिरष्टचतुर्द्व्यधिकाशीतिरशीतिश्च । ऊनाशीत्यष्टसप्ततिसप्तसप्ततिदशकनवसत्त्वानि ॥

त्रिनवति द्विनवत्येकनवति नवतिगळुमष्टाधिकाशीतियुं चतुरधिकाशीतियुं द्व्याधिकाशीतियुमशीतियुमेकोनाशीतियुमष्टसप्ततियुं सप्तसप्ततियुं दशकमुं नवकमुमितु नामकर्म्मसत्त्वस्थानंगळु पदिमूरप्पुवु । संदृष्टि :—

९३	९२	९१	९०	८८	८४	८२	८०	७९	७८	७७	१०	९

असहायपराक्रमेण श्रीवर्धमानस्वामिना विंशतिकादिद्वादशनामोदयस्थानेष्वपुनरुक्तभंगाः पिंडेनाष्टपंचाशदग्रसप्तशतसप्तसहस्री समुद्दिष्टा भवंति ।७७५८। अत्र नारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टिभंगेषु स्वस्वगुणप्रतिपन्नभंगोपलब्धेः पुनरुक्तत्वं ज्ञातव्यं ॥६०८॥ अथ नामसत्त्वस्थानप्रकरणमेकान्नविंशतिगाथाभिराह—

त्रिनवतिर्द्वानवतिरेकनवतिर्नवतिरष्टाशीतिश्चतुरशीतिर्द्व्यशीतिरशीतिरेकोनाशीतिरष्टसप्ततिः सप्त-

सहायरहित पराक्रमवाले वर्धमान स्वामीने बीस आदि बारह नामकर्मके उदयस्थानोंमें अपुनरुक्त भंग मिलकर सात हजार सात सौ अठावन कहे हैं ७७५८ । यहाँ नारकी, संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, देवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें जो भंग कहे हैं उनमें अपने-अपने सासादन आदिमें कहे भंगोंके जो समान हैं उन्हें पुनरुक्त जानना ॥६०८॥

आगे नामकर्मके सत्त्वस्थानका प्रकरण उन्नीस गाथाओंसे कहते हैं—

तिरानबे, बानबे, इक्यानबे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासी, अस्सी, उन्यासी, अठहत्तर, सतहत्तर, दस और नौ प्रकृतिरूप तेरह सत्त्वस्थान नामकर्मके हैं ॥६०९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं नामसत्वस्थानंगळगे प्रकृतिसंख्योपपत्तियं तोरिदपरु :—

सव्वं तित्थाहारुभऊणं सुरणिरयणरदुचारिदुगे ।
उव्वेल्लिदे हदे चउ तेरेऽजोगिस्स दस णवयं ॥६१०॥

सर्व्वं तीर्त्थाहारोभयोनं सुरनारकनरद्विचतुर्द्विके । उद्वेल्लिते हते चत्वारि त्रयोदशसु अयोगिनो दशनवकं ॥

सर्व्वं समस्तनामप्रकृतिस्थानं मोदलवक्कुं । मत्तं क्रमदिवं तीर्त्थहीनमादोडे तों भत्तेरडर स्थानमक्कुं । तीर्त्थयुतमाहारकहीनमागि तों भत्तों दर स्थानमक्कुं । तीर्त्थाहारोभयहीनमादोडे तों भत्तरस्थानमक्कुं । अल्लि सुरद्विकमनुद्वेल्लनमं माडिदोडे अष्टाशीतिस्थानमक्कुं । अल्लि नारकचतुष्टयमनुद्वेल्लमं माडिदोडॆंभत्तनाल्कर स्थानमक्कुं । अल्लि मनुष्यद्विकमनुद्वेल्लनमं माडिदोडॆंभत्तेरडर स्थानमक्कु । मत्तमा त्रिनवतिस्थानदोळु णिरयतिरिक्ख दु वियळमित्यादि त्रयोदशप्रकृतिगळु क्षपितंगळागुत्तं विरलशीतिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं । द्वानवतिस्थानदोळमा त्रयोदशप्रकृतिगळु क्षपितंगळागुत्तं विरलेकोनाशीति प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं । मत्तमेक नवतिस्थानदोळमा त्रयोदशप्रकृतिगळु क्षपितंगळागुत्तं विरलु अष्टसप्ततिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं । मत्तं नवतिस्थानदोळमा त्रयोदशप्रकृतिगळु क्षपितंगळागुत्तं विरलु सप्तसप्ततिप्रकृतिसत्वस्थानमक्कुं । ७७ । मत्तमयोगिकेवलियोळु दशनवप्रकृतिसत्वस्थानद्वयमक्कुं ।

अनंतरमयोगिय सत्वस्थानद्वयप्रकृतिगळं पेळदपरु :—

सप्ततिर्दश नव च प्रकृतयः नामकर्मसत्त्वस्थानानि त्रयोदश भवंति ॥६०९॥ तेषामुपपत्तिमाह—

सर्वनामप्रकृतयः प्रथमं तदेव तीर्थाहारकद्वयतदुभयैः क्रमेणोनितं द्वानवतिकैकनवतिकनवतिकत्वं प्राप्नोति । तन्नवतिकं पुनः सुरद्विके पुनः नारकचतुष्के पुनः मनुष्यद्विके चोद्वेल्लितेऽष्टाशीतिकचतुरशीतिकद्व्यशीतिकत्वं । पुनः तानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि 'णिरयतिरिक्खदुवियलमित्यादित्रयोदशसु क्षपितेषु अशीतिकैकान्नशीतिकाष्टासप्ततिकसप्तसप्ततिकत्वं दशकं, नवकं चायोगकेवलिनि ॥६१०॥ तयोः प्रकृतीराह—

उनकी उपपत्ति कहते हैं—

सब नामकर्मकी प्रकृतिरूप प्रथम तिरानवेका स्थान है। सब प्रकृतियोंमें-से तीर्थंकर घटानेपर बानबेका स्थान होता है। आहारकद्विक घटानेपर इक्यानबेका स्थान है। तीर्थंकर, आहारकद्विक दोनों घटानेपर नब्बेका है। उस नब्बेके स्थानमें देवगति और आनुपूर्वीकी उद्वेलना होनेपर अठासीका स्थान होता है। उसमें-से नारक चतुष्ककी उद्वेलना होनेपर चौरासीका स्थान होता है। उसमेंसे मनुष्यद्विककी उद्वेलना होनेपर बयासीका स्थान होता है। पुनः तिरानबेमें-से 'णिरयतिरिक्खदुवियलं' इत्यादि गाथामें अनिवृत्ति करण गुणस्थानमें क्षय हुई तेरह प्रकृति घटानेपर अस्सीका स्थान होता है। उन्हें बानबेमें-से घटानेपर उन्यासीका स्थान होता है। इक्यानबेमें-से घटानेपर अठहत्तरका स्थान होता है। नब्बेमें-से घटानेपर सतहत्तरका स्थान होता है। अयोग केवलीमें दस और नौका स्थान है। इस प्रकार नामकर्मके सब सत्त्वस्थान हैं ॥६१०॥

आगे दस और नौके स्थानकी प्रकृतियाँ कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गयजोगस्स दु तेरे तदियाउगगोद इदि विहीणेसु ।
दस णामस्स य सत्ता णव चेव य तित्थहीणेसु ॥६११॥

गतयोगस्यतु त्रयोदशसु तृतीयायुर्ग्गोत्रमिति विहीनेषु । दशनाम्नः सत्वानि नव चैव च तीर्त्थहीनेषु ॥

तु मत्ते गतयोगकेवलिय सत्वप्रकृतिगळु "उदयगतबारणराणू" एंब त्रयोदशप्रकृतिगळोळु तृतीयवेदनीयमों दुं आयुः मनुष्यायुष्यमुं गोत्र उच्चैर्ग्गोत्रमुमितु मूरुं प्रकृतिगळु हीनमागुत्तं विरलु शेषदशप्रकृतिगळ स्थानमयोगिकेवलियोळक्कुमल्लि तीर्त्थरहितमादोडे नवप्रकृतिस्थानमक्कुं ।

अनंतरमुद्वेल्लितस्थानविशेषमं पेळदपरु :—

गुणसंजादं पयडिं मिच्छे बंधुदयगंधहीणम्मि ।
सेसुव्वेल्लणपयडिं णियमेणुव्वेल्लदे जीवो ॥६१२॥

गुणसंजाता प्रकृतिर्म्मिथ्यादृष्टौ बंधोदयगंधहीने । शेषोद्वेल्लनप्रकृतिर्न्नियमेनोद्वेल्लयति जीवः ॥

मिथ्यादृष्टियोळु सर्व्वकालमुद्वेल्लनप्रकृतिगळ बंधोदयगंधमुमिल्लप्पुदरिंदमा गुणसंजाताहारसम्यक्त्वप्रकृतिसम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतियुमं शेषोद्वेल्लनप्रकृतिगळुमं मिथ्यादृष्टिजीवनुद्वेल्लनमं माडि किडिसुगुं नियमदिदं ।

अनंतरमुद्वेल्लनप्रशस्तप्रकृति मोदलगों डु क्रमविदमुद्वेल्लनमं माळकुमें दु पेळदपरु :—

सत्थत्तादाहारं पुव्वं उव्वेल्लदे तदो सम्मं ।
सम्मामिच्छं तु तदो एगो विगलो य सयलो य ॥६१३॥

प्रशस्तत्वादाहारं पूर्व्वमुद्वेल्लयति ततः सम्यक्त्वं । सम्यग्मिथ्यात्वं तु तत एको विकलश्च सकलश्च ।

तु—पुनः अयोगिवलिसत्त्वप्रकृतयः 'उदयगवारणराणू' इति त्रयोदशसु वेदनीयमनुष्यायुरुच्चैर्गोत्रेष्वपनीते दश स्युः । तत्र तीर्थेऽपनीते नव स्युः ॥६११॥ अथोद्वेल्लितस्थानविशेषमाह—

मिथ्यादृष्टौ सर्वदापि बन्धोदयगन्धो नेति सम्यग्दर्शनादिगुणसंजातसम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वाहारकद्वयप्रकृतोः शेषोद्वेल्लनप्रकृतीश्च नियमेन मिथ्यादृष्टिरेवोद्वेल्लयति ॥६१२॥ तत्क्रममाह—

अयोग केवलीकी सत्त्व प्रकृतियाँ 'उदयगवारणराण' इत्यादि गाथाके द्वारा तेरह कही हैं। उनमें-से वेदनीय, मनुष्यायु और उच्चगोत्र घटानेपर दस प्रकृतिका सत्त्वस्थान होता है। तथा उन दसमें-से तीर्थंकर घटानेपर नौ प्रकृतिरूप सत्त्व स्थान होता है ॥६११॥

आगे उद्वेलना स्थानोंका विशेष कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें जिनके बन्ध और उदयकी गन्ध भी सर्वदा नहीं होती और जो सम्यक्दर्शन आदि गुणोंके कारण उत्पन्न होती हैं ऐसी सम्यक्त्व मोहनीय, मिश्रमोहनीय, आहारद्विक प्रकृतियोंकी तथा शेष उद्वेलन प्रकृतियोंकी उद्वेलना नियमसे मिथ्यादृष्टि ही करता है ॥६१२॥

उनका क्रम कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रशस्तप्रकृतित्वदिदमाहारकमं मुन्नं चतुर्गतियमिथ्यादृष्टिजीवनुद्वेल्लनमं माळ्कुं। ततः पश्चात् सम्यक्त्वं सम्यक्त्वप्रकृतियनुद्वेल्लनमं माळ्कुं। तु बळिक्कं सम्यग्मिथ्यात्वं मिश्रप्रकृतियनुद्वेल्लनमं माडि किडिसुगुं। ततः बळिक्कं शेषसुरद्विकाद्युद्वेल्लनप्रकृतिगळुद्वेल्लनमनेकः एकेंद्रियमुं विकलश्च विकलेंद्रियंगळुं सकलश्च सकलेन्द्रियंगळुं माळ्कुं॥

अनंतरमुद्वेल्लनप्रकृतिगळगुद्वेल्लनावसरकालमं पेळ्वपरु :—

वेदगजोग्गे काले आहारं उवसमस्स सम्मत्तं।
सम्ममिच्छं चेगे वियले वेगुव्वछक्कं तु ॥६१४॥

वेदकयोग्ये काले आहारमुपशमस्य सम्यक्त्वं। सम्यग्मिथ्यात्वं चैकेंद्रियविकले वैक्रियिकषट्कं तु॥

वेदकयोग्यकालदोळाहारकमनुद्वेल्लनमं माडुगुमुपशमकालदोळु सम्यक्त्वप्रकृतियुमं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं माळ्कुं। एकेंद्रियवोळं विकलत्रयवोळं वैक्रियिकषट्कमुद्वेल्लनमक्कुं॥

अनंतरं वेदकयोग्यकालमुमनुपशमकालमुमं पेळ्वपरु :—

उदधिपुधत्तं तु तसे पल्लासंखूणमेगमेयक्खे।
जाव य सम्मं मिस्सं वेदगजोग्गो य उवसमस्स तदो ॥६१५॥

उदधिपृथक्त्वं च त्रसे पल्यासंख्योनमेकमेकाक्षे। यावत्सम्यक्त्वं मिश्रं वेदकयोग्यश्चोपशमस्य ततः॥

प्रशस्तत्वादाहारकद्वयं पूर्वं चतुर्गतिकमिथ्यादृष्टिः उद्वेल्लयति, ततः पश्चात् सम्यक्त्वप्रकृतिं, ततः पश्चात् सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिं, ततः पश्चात् शेषसुरद्विकादीन्येकेन्द्रियो विकलेन्द्रियसकलेन्द्रियश्च ॥६१३॥ तदुद्वेल्लनावसरकालमाह—

वेदकयोग्यकाले आहारकद्वयमुद्वेल्लयति। उपशमकाले सम्यक्त्वप्रकृतिं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिं च। एकविकलेन्द्रियेषु वैक्रियिकषट्कं ॥६१४॥ तौ कालौ लक्षयति—

आहारकद्विक प्रशस्त प्रकृति है अतः चारों गतिके मिथ्यादृष्टि पहले आहारकद्विककी उद्वेलना करते हैं। उसके पश्चात् सम्यक्त्व प्रकृतिकी, उसके पश्चात् सम्यक्मिथ्यात्व प्रकृतिकी उद्वेलना करते हैं। उसके पश्चात् शेष देवद्विक आदिकी उद्वेलना एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय करते हैं ॥६१३॥

उस उद्वेलनाके अवसरका काल कहते हैं—

वेदकयोग्यकालमें आहारकद्विककी उद्वेलना करता है। और उपशम कालमें सम्यक्त्व प्रकृति और सम्यक्मिथ्यात्व प्रकृतिकी उद्वेलना करता है। एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव वैक्रियिकषट्ककी उद्वेलना करते हैं ॥६१४॥

उन दोनों कालोंके लक्षण कहते हैं—

---

१. म °मनुद्वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रसे त्रसजीवनादोडे सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिगळ्गे स्थितिसत्वमेन्नेवरमुदधिपृथक्त्वमवशिष्टमक्कुमन्नेवरं वेदकयोग्यकालमें बुदक्कु । मेकाक्षे सति एकेंद्रियजीवमादोडे तत्सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिगळ्गे स्थितिसत्वमेन्नेवरं पल्यासंख्यातैकभागोनैकसागरोपममवशिष्टमक्कुमन्नेवरं वेदकयोग्यकालं मं बुदक्कुं । ततः अल्लिदं मेले उपशमस्य कालः । आ त्रसैकेंद्रियंगळ्गे उपशमकालंगळें दु पेळल्पट्टुदु ।

अनंतरं तेजोद्वयक्कुद्वेल्लनयोग्यप्रकृतियं पेळ्दपरु:—

तेउदुगे मणुवदुगं उच्चं उव्वेल्लदे जहण्णिदरं ।
पल्लासंखेज्जदिमं उव्वेल्लणकालपरिमाणं ॥६१६॥

तेजोद्विके मनुष्यद्विकमुच्चैर्गोत्रमुद्वेल्यते जघन्येतरं । पल्यासंख्यातैकभागमुद्वेल्लनकाल प्रमाणं ॥

तेजोवायुकायिकजीवंगळोळु मनुष्यद्विकमुमुच्चैर्गोत्रमुमुद्वेल्लनमं माडल्पडुवुवु । उद्वेल्लनमं माळ्पकालमुं जघन्योत्कृष्टदिदं पल्यासंख्यातैकभागमात्रमेयक्कुमदं पेळ्दपरु :—

पल्लासंखेज्जदिमं ठिदिमुव्वेल्लदि मुहुत्तअंतेण ।
संखेज्जसायरठिदिं पल्लासंखेज्जकालेण ॥६१७॥

पल्यासंख्यातैकभागां स्थितिमुद्वेल्लयत्यंतर्मुहूर्त्तकालेन । संख्येयसागरस्थितिं पल्यासंख्यातैकभागेन ॥

सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्याः स्थितिसत्वं यावत्त्रसे उदधिपृथक्त्वं एकाक्षे च पल्यासंख्यातैकभागोनसागरोपममवशिष्यते तावद्वेदकयोग्यकालो भण्यते । तत उपर्युपशमकाल इति ॥६१५॥ तेजोद्वयस्योद्वेल्लनप्रकृतीराह—

तेजोवातकायिकयोर्मनुष्यद्विकमुच्चैर्गोत्रं चोद्वेल्ल्यते । जघन्यमुत्कृष्टं चोद्वेल्लनकारणकालप्रमाणं पल्यासंख्यातैकभागः ॥६१६॥ तदेवाह—

सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीयका स्थिति सत्त्व अर्थात् पूर्वमें जो स्थिति बँधी थी वह सत्तारूप स्थिति जबतक त्रसके तो पृथक्त्व सागर प्रमाण शेष रहती है और एकेन्द्रियके पल्यके असंख्यातवें भाग हीन एक सागर प्रमाण शेष रहती है तबतकके कालको वेदक योग्य काल कहते हैं। उससे ऊपर उससे भी हीन स्थिति सत्त्व होनेपर उपशमयोग्य काल होता है ॥६१५॥

आगे तेजकाय, वायुकायके उद्वेलन योग्य प्रकृतियाँ कहते हैं—

तेजकाय, वायुकायमें मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र ये तीन उद्वेलन रूप होती हैं। उस उद्वेलनमें कारण कालका प्रमाण जघन्य और उत्कृष्ट पल्यके असंख्यातवें भाग हैं। इतने कालमें उनकी सब स्थितिके निषेकोंको उद्वेलनारूप करता है ॥६१६॥

वही कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतर्म्मुहूर्त्तकालक्के पल्यासंख्यातैकभागमं स्थितियनुद्वेल्लनमं माळ्कु । मार्त्त संख्यातसागरोपमस्थितियनेनितु कालक्कुद्वेल्लनमं माळ्कुमें बितु त्रैराशिकसिद्धमप्प पल्यासंख्यातैकभागमात्रकालदिदमाळ्कुमें बुदत्थं । आ त्रैराशिकमं माळ्प क्रममें तें दोडे उद्वेल्लनकालदोळ् संख्यातसागरस्थितिय अग्रभागदोळ् पल्यच्छेदासंख्यातैकभागं कांडकरूपमुं केळगधोगलनरूपमंतर्म्मुहूर्त्तमंतेरडुं कूडि प्रमाणराशियक्कुमंतागुत्तंविरलु फलराशियंतर्म्मुहूर्त्तकालमक्कुमिच्छाराशियं संख्यातसागरमप्पुदरिदं संख्यातपल्यप्रमितमक्कुमा त्रैराशिकमिदु :— प्र २ १ । फ २ १ । इ प १ लब्ध प

छे ३ ३

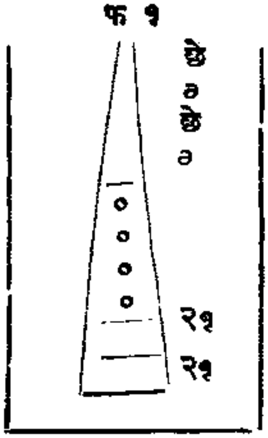

अन्तर्मुहूर्तकालेन पल्यासंख्यातैकभागस्थितिमुद्वेल्लयति । स संख्यातसागरोपमस्थितिं कियत्कालेनेति प्रश्ने पल्यासंख्यातैकभागेनेत्युत्तरं । तद्यथा—

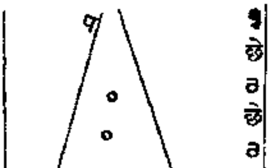

अस्याः स्थितेरग्रतनभागे पल्यच्छेदासंख्यातैकभागकांडक मधोगलनरूपान्तर्मुहूर्तेनाधिकं प्रमाणं २१ छे ३

पूर्वमें बँधी सत्तारूप स्थिति पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाणकी उद्वेलना एक अन्तर्मुहूर्तमें करता है तो वह संख्यात सागर प्रमाण मनुष्यद्विक आदिकी सत्तारूप स्थितिकी उद्वेलना कितने कालमें करेगा ? इसका उत्तर इस प्रकार है कि पल्यके असंख्यातवें भागकालमें उस सब स्थितिकी उद्वेलना करता है । उसका विवरण इस प्रकार है—

इस स्थितिके अग्रतन भागमें पल्यके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग प्रमाण काण्डक अधोगलनरूप अन्तर्मुहूर्तसे अधिक प्रमाण है। उसको प्रमाणराशि करो। उस काण्डकका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं सम्यक्त्वादि विराधनावारंगळं पेळ्वपरु :—

सम्मत्तं देसजमं अणसंजोजणविहिं च उक्कस्सं ।
पल्लासंखेज्जदिमं वारं पडिवज्जदे जीवो ॥६१८॥

सम्यक्त्वं देशयममनंतानुबंधिविसंयोजनविधिं चोत्कृष्टं पल्यासंख्यातैकभागान्वारान्प्रतिपद्यते जीवः ॥

प्रथमोपशमसम्यक्त्वमुमं वेदकसम्यक्त्वमुमं देशसंयमुमननंतानुबंधिविसंयोजनविधियुमनुत्कृष्टदिं पल्यासंख्यातैकभागवारंगळं जीवं पोद्दुगुं । मेले नियमदिदं सिद्धियनेय्दुगुं ।

चत्तारि वारमुवसमसेढिं समरुहदि खविदकम्मंसो ।
बत्तीसं वाराइं संजममुवलहिय णिव्वादि ॥६१९॥

चतुरो वारानुपशमश्रेणिमारोहति क्षपितकर्म्मांशः । द्वात्रिंशद्वारान्संयममुपलभ्य निर्व्वाति ॥

उत्कृष्टदिदमुपशमश्रेणियं नाल्कुवारमारोहणं माळ्कुं क्षपितकर्म्मांशनप्प जीवं मेले नियमदिदं क्षपकश्रेणियनल्लदेरनु द्वात्रिंशद्वारंगळं संयममनुत्कृष्टदिदं पोर्द्दिनियमदिदं मेले निर्व्वाणमनेय्दुगुं ।

तत्कांडकपतनकालोंतर्मुहूर्तः फलं २१ स्थितिः संख्यातसागरत्वात्संख्यातपल्यानि इच्छा प १ । लब्धं प / a

॥६१७॥ अथ सम्यक्त्वादिविराधनावारानाह—

प्रथमोपशमसम्यक्त्वं वेदकसम्यक्त्वं देशसंयमममनंतानुबन्धिविसंयोजनविधिं चोत्कृष्टेन पल्यासंख्यातैकभागवारान् प्रतिपद्यते जीवः । उपरि नियमेन सिद्ध्यत्येव ॥६१८॥

उपशमश्रेणिमुत्कृष्टेन चतुर्वारानेवारोहति । क्षपितकर्मांशो जीवः, उपरि नियमेन क्षपकश्रेणिमेवारोहति । संयममुत्कृष्टेन द्वात्रिंशद्वारान् प्राप्य ततो निर्वात्येव ॥६१९॥

पतनकाल अर्थात् उद्वेलनारूप होनेका काल अन्तर्मुहूर्त है । इसको फलराशि करो । सब स्थिति संख्यात सागर प्रमाणको इच्छाराशि करो । फलको इच्छासे गुणा करके प्रमाणका भाग देनेपर पल्यका असंख्यातवाँ भाग लब्धराशिका प्रमाण होता है ।

यहाँ अन्तर्मुहूर्तमें जितने स्थितिके निषेक उद्वेलनारूप किये उसका ही नाम काण्डक जानना ॥६१७॥

आगे सम्यक्त्व आदिकी विराधनाके बार कहते हैं कि कितनी बार विराधना होती है—

प्रथमोपशम सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व, देशसंयम और अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन विधान इन चारको एक जीव उत्कृष्ट रूपसे पल्यके असंख्यातवें भागमें जितने समय होते हैं उतनी बार छोड़कर ग्रहण करता है । उसके पश्चात् नियमसे मोक्ष प्राप्त करता है ॥६१८॥

उपशमश्रेणिपर उत्कृष्टसे चार बार ही चढ़ता है । पीछे क्षपितकर्मांश होकर अर्थात् कर्मोंका अंश क्षय करके नियमसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है । सकल संयमको उत्कृष्टसे बत्तीस बार ही धारण करता है । पश्चात् मोक्षको प्राप्त करता है ॥६१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थाहाराणुभयं सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिये।
तस्सत्तकम्मियाणं तग्गुणठाणं ण संभवइ ॥

तीर्त्थाहाराणामुभयं सर्व्वं तीर्त्थं न मिथ्यादृष्टित्रितये। तत्सत्वकर्म्मणां तद्गुणस्थानं न संभवति ॥

तीर्त्थाहारकोभयसत्वयुतस्थानं मिथ्यादृष्टियोळु सत्वमिल्ल। तीर्त्थयुतस्थानमुमाहारकयुलसत्वस्थानमुं नानामिथ्यादृष्टियोळु संभविसुगुं। सासादननोळु नानाजीवापेक्षेयिंदमुमाहारकमुं तीर्त्थसत्वस्थानंगळुं संभविसवु। मिश्रगुणस्थानदोळु तीर्त्थयुतसत्वस्थानं संभविसवु। आहारयुतस्थानं संभविसुगुमेकेंदोडे तत्सत्वकर्म्मंगळप्प जीवंगळगे तद्गुणस्थानंगळु संभविसुववल्लेकेंदोडे तीर्त्थाहारोभयसत्वयुतनोळु मिथ्यात्वकर्मोदयमिल्ल। तीर्त्थमुं मेणाहारकसत्वमुमुळ्ळ जीवनोळनंतानुबंधिगुदयमिल्ल। तीर्त्थसत्वमुळ्ळनोळु सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्युदयमिल्लप्पुदरिंदं ॥

अनंतरं चतुर्गतिविवक्षितमागि गुणस्थानंगळोळु नामकर्म्मसत्वस्थानंगळं योजिसिदपरु:—

सुरणरसम्मे पढमो सासणहीणेसु होदि वाणउदी।
सुरसम्मे णरणारयसम्मे मिच्छे य इगिणउदी ॥६२०॥

सुरनरसम्यग्दृष्टौ प्रथमं सासादनहीनेषु भवति द्वानवतिः। सुरसम्यग्दृष्टौ नरनारकसम्यग्दृष्टौ मिथ्यादृष्टौ चैकनवतिः ॥

-तीर्थाहारकयोरुभयेन युतं सत्त्वस्थानं मिथ्यादृष्टौ नास्ति। तीर्थयुतमाहारकद्वययुतं च नानाजीवापेक्षयास्ति। सासादने नानाजीवापेक्षयाप्याहारकतीर्थयुतानि न सन्ति। मिश्रगुणस्थाने तीर्थयुतं नाहारयुतं चास्ति। तत्र कारणमाह। तत्तत्कर्मसत्त्वजीवानां तत्तद्गुणस्थानं न सम्भवति। कुतः? तीर्थाहारोभयसत्त्वे मिथ्यात्वस्य तीर्थाहारयोरन्यतरसत्त्वेऽनंतानुबन्धिनां तीर्थसत्त्वे सम्यग्मिथ्यात्वस्य चानुदयात्। १। अथ चतुर्गतिविवक्षया गुणस्थानेषु नानासत्त्वस्थानानि योजयति—

मिथ्यादृष्टिमें एक जीवकी अपेक्षा तीर्थंकर और आहारकद्विक सहित स्थान नहीं है। एक मिथ्यादृष्टि जीवके या तो तीर्थंकरका ही सत्त्व होता है या आहारकद्विकका ही सत्त्व होता है। नाना जीवोंकी अपेक्षा तो दोनोंका सत्त्व होता है। सासादनमें नाना जीवोंकी अपेक्षा भी आहारक और तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान नहीं है। मिश्र गुणस्थानमें तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान है, आहारक सहित नहीं है। इसका कारण यह है कि जिन जीवोंके इन कर्मोंकी सत्ता होती है वे जीव इन गुणस्थानोंमें नहीं जाते। अर्थात् तीर्थंकर आहारकद्विककी सत्ता जिसके हैं उसके मिथ्यात्वका उदय नहीं होता। तीर्थंकर या आहारकद्विकमें-से एकका भी सत्त्व होते हुए मिथ्यात्वरहित अनन्तानुबन्धीका उदय नहीं होता। तीर्थंकरकी सत्ता रहते हुए सम्यग्मिथ्यात्वका उदय नहीं होता ॥६१९॥

आगे चार गतिकी विवक्षा करके गुणस्थानोंमें नामकर्मके सत्त्वस्थानोंकी योजना करते हैं—

१. केवल० अदु कारणदिं सासादननोळु नानाजीवैकजीवापेक्षेगळिंदमुं सत्वमिल्लेंबुदर्थं ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुरसम्यग्दृष्टियोळं मनुष्यासंयतादिसम्यग्दृष्टिगळोळं त्रिनवतिसत्वस्थानं संभविसुगुं। सासादनगुणस्थानरहितमाद चतुर्गतिजरोळं द्वानवतिसत्वस्थानं संभविसुगुं। सुरसम्यग्दृष्टियोळं मनुष्यनारकसम्यग्दृष्टियोळं मिथ्यादृष्टिगळोळमेकनवतिसत्वस्थानं संभविसुगुं।

णउदी चदुग्गदिम्मि य तेरस खवगोत्ति तिरियणरमिच्छे।
अडचउसीदी सत्ता तिरिक्खमिच्छम्मि बासीदी ॥६२१॥

नवतिश्चतुर्गतिजेषु च त्रयोदश क्षपकपर्य्यंतं तिर्य्यग्नरमिथ्यादृष्टावष्टचतुरशीतिसत्त्वे तिर्य्यग्मिथ्यादृष्टौ द्व्यशीतिः॥

चतुर्गतिजरोळं मनुष्यरोळत्रयोदश[1] क्षपकानिवृत्तिकरणपर्य्यंतं सर्व्वत्र नवतिसत्त्वस्थानं संभविसुगुं। तिर्य्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळोळे अष्टाशीतिसत्त्वस्थानमुं चतुरशीतिसत्त्वस्थानमुं संभविसुगुमें तें दोडे 'सपदे उप्पण्णट्ठाणेवि' एंदु संभवमुंटप्पुदरिंदं। तिर्य्यग्मिथ्यादृष्टिजीवनोळे द्व्यशीतिसत्त्वस्थानं संभविसुगुमेकें दोडे मनुष्यद्विकमुद्वेल्लनमं माडुव जीवंगळु तेजोवायुकायिकंगळप्पुदरिना जीवंगळगे तिर्य्यग्गतियोळल्लदन्यगतियोळु जननमिल्लप्पुदरिंदं।

सुरसम्यग्दृष्टौ मनुष्यासंयतादिसम्यग्दृष्टौ च त्रिनवतिकं सम्भवति। सासादनवर्जितचातुर्गतिकेषु द्वानवतिकं। सुरसम्यग्दृष्टौ मनुष्यनारकसम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टौ चैकनवतिकं ॥६२०॥

चतुर्गतिकेष्वात्रयोदशक्षपकानिवृत्तिकरणांतं सर्वत्र नवतिकं सम्भवति। तिर्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टावेवाष्टाशीतिकं चतुरशीतिकं च सपदे उप्पण्णठाणेवीत्युक्तत्वात्। तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ द्व्यशीतिकं। मनुष्यद्विकोद्वेल्लकतेजोवाय्वोस्तिर्यग्गतेरन्यत्रानुत्पत्तेः ॥६२१॥

तिरानवेका सत्त्वस्थान देव असंयत सम्यग्दृष्टि और मनुष्य असंयत आदि सम्यग्दृष्टिमें होता है। बानवेका सत्त्वस्थान सासादन रहित चारों गतिके जीवोंमें होता है। इक्यानवेका सत्त्वस्थान देव सम्यग्दृष्टीमें और मनुष्य नारकी सम्यग्दृष्टी या मिथ्यादृष्टिमें होता है ॥६२०॥

नब्बेका सत्त्वस्थान चारों गतिके जीवोंमें, क्षपक अनिवृत्तिकरणमें जहाँ तेरह प्रकृतियोंका क्षय होता है वहाँ तक सर्वत्र होता है। अठासी और चौरासीके सत्त्वस्थान तिर्यंच और मनुष्य मिथ्यादृष्टिमें ही होते हैं। क्योंकि 'सपदे उप्पणठाणेवि' के अनुसार एकेन्द्रिय आदिमें जहाँ देवद्विक आदिकी उद्वेलना होती है वहाँ भी वैसी सत्ता पायी जाती है और वह जीव मरकर तिर्यंच या मनुष्यमें जहाँ उत्पन्न होता है वहाँ भी वैसी सत्ता पायी जाती है।

बयासीका सत्त्वस्थान मिथ्यादृष्टि तिर्यंचमें ही होता है क्योंकि मनुष्यद्विककी उद्वेलना तेजकाय वायुकायमें होती है अतः वहाँ बयासीकी सत्ता पायी जाती है। तथा वह मरकर भी तिर्यंचमें ही उत्पन्न होता है, अन्यत्र नहीं, अतः वहाँ भी बयासीकी सत्ता पायी जाती है ॥६२१॥

---

१. नामकर्मसंबंधित्रयोदशप्रकृतयः साधारणचतुर्जात्यादय अनिवृत्तिकरणप्रथमभागे क्षपणायोग्या भवंत्यतः तत्प्रथमभागपर्यन्तमित्यर्थः। चदुगदिमिच्छे चउरो इगिविगळे छप्पि तिण्णि तेउदगे। सिय अत्थि णत्थि सत्तं सपदे उप्पण्णठाणेवि ॥ तेउदुगं तेरिच्छे इत्युक्तत्वात् ॥ (ताड॰ पंचमपंक्ति)—मनुष्यनारक।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सीदादि चउट्ठाणा तेरस खवगादु अणुवसमगेसु ।
गयजोगस्स दुचरिमं जाव य चरिमम्मि दसणवयं ॥६२२॥

अशीत्यादि चतुःस्थानानि त्रयोदश क्षपकादनुपशमकेषु । गतयोगस्य द्विचरमं यावच्चरमे दशनवकं ॥

त्रयोदशक्षपकाशीत्यादि चतुस्थानंगळा त्रयोदशक्षपकानिवृत्तिकरणं मोदल्गोंडु क्षपकश्रेण्यारूढरुगळोळयोगिद्विचरमसमयपर्य्यंतं संभविसुववयोगि चरमसमयदोळु दशनवकंगळप्पुविंतु गुणस्थानदोळु नामसत्वस्थानंगळु पेळल्पट्टुवु । चतुर्गतिगळगुणस्थानसंदृष्टि :—

नरकगतिय मिथ्यादृष्टियोळु ९२ । ९१ । ९० ॥ सासादननोळु ९० ॥ मिश्रनोळु ९२ । ९० ॥ असंयतनोळु ९० । ९१ । ९० ॥ तिर्य्यग्गतिय मिथ्यादृष्टियोळु ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ सासादननोळु ९० ॥ मिश्रनोळु ९२ । ९० ॥ असंयतनोळु ९२ । ९० ॥ देशसंयतनोळु ९२ । ९० ॥ मनुष्यगतिय मिथ्यादृष्टियोळु ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ ॥ सासादननोळु ९० ॥ मिश्रनोळु ९२ । ९० ॥ असंयतनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ देशसंयतनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ प्रमत्तसंयतनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अप्रमत्तसंयतनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अपूर्व्वकरणोपशमकनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुपशमकनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनिवृत्तिकरणोपशमकनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुपशमकनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सूक्ष्मसांपरायोपशमकनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुपशमकनोळु ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ उपशांतकषायनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ क्षीणकषायनोळु ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सयोगिकेवलियोळु ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ अयोगिद्विचरमसमयदोळु ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ चरमसमयदोळु १० । ९ ॥ देवगतिय मिथ्यादृष्टियोळु ९२ । ९० ॥ सासादननोळु ९० ॥ मिश्रनोळु ९२ । ९० ॥ असंयतनोळु ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

अनंतरं नामप्रकृतिसत्त्वस्थानंगळं एकचत्वारिंशज्जीवपदंगळोळु योजिसिदपरु :—

णिरए बाइगिणउदी णउदी भूवादिसव्वतिरिएसु ।
बाणउदी णउदी अडचउबासीदी य होंति सत्ताणि ॥६२३॥

नारके द्व्येकनवतिर्न्नवतिर्भूवादिसर्व्वतिर्य्यक्षु । द्वानवतिर्न्नवतिरष्ट चतुर्द्व्यशीतिश्च भवंति सत्त्वानि ॥

अशीतिकादीनि चत्वारि तत्त्रयोदशक्षपकानिवृत्तिकरणादा अयोगद्विचरमसमयं, चरमसमये दशकं नवकं च ॥६२२॥ अथैकचत्वारिंशज्जीवपदेष्वाह—

अस्सी आदि चार सत्त्वस्थान तेरह प्रकृतियोंके क्षयसहित अनिवृत्तिकरणसे लगाकर अयोगीके द्विचरम समय पर्यन्त होते हैं । तथा दस और नौका सत्त्वस्थान अयोगीके अन्त समयमें होता है ॥६२२॥

आगे इकतालीस जीव पदोंमें कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारकरोळु द्वानवतियुमेकनवतियुं नवतियुं सत्वंगळप्पुवु । ९२ । ९१ । ९० ॥ पृथ्वीकायिकादि सर्व्वतिर्य्यग्जीवंगळोळु द्वानवतिनवतियष्टाशीतिचतुरशीतिद्व्यशीतिपंचसत्वस्थानंगळप्पुवु । ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥

बासीदिं वज्जित्ता बारस ठाणाणि होंति मणुएसु ।
सीदादि चउट्ठाणा छट्ठाणा केवलिदुगेसु ॥६२४॥

द्व्यशीतिं वर्ज्जयित्वा द्वादशस्थानानि भवंति मनुष्येषु । अशीत्यादिचतुःस्थानानि षट्स्थानानि केवलिद्वयोः ॥

मनुष्यरोळु द्व्यशीतिस्थानमं वर्ज्जिसि शेषद्वादशस्थानंगळनितुं सत्वंगळप्पुवु ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥ अल्लि सयोगकेवलियोळशीत्यादि चतुःस्थानंगळप्पुवु ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ अयोगिकेवलियोळशीत्यादि षट्स्थानंगळु सत्वंगळप्पुवु ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥

अनंतरमा सयोगायोगिकेवलिगळ सत्वस्थानंगळोळु तीर्त्थकरकेवलिगळगमितरकेवलिगळगं संभवस्थानंगळं पेळ्वपरु :—

समविसमट्ठाणाणि य कमेण तित्थिदरकेवलीसु हवे ।
तिदुणउदी आहारे देवे आदिमचउक्कं तु ॥६२५॥

समविषमस्थानानि क्रमेण तीर्त्थेतरकेवलिनोर्भवेयुः । त्रिद्विनवतिराहारे देवे आद्यतन चतुष्कं तु ॥

सयोगायोगिगळोळु पेळ्द चतुःस्थानषट्स्थानंगळोळु समस्थानंगळु तीर्त्थकेवलियोळप्पुवु । ८०।७८ ॥ अतीर्त्थकेवलियोळु विषमस्थानंगळप्पुवु । ७९ ।७७ ॥ अयोगितीर्त्थकेवलियोळु समस्थानंगळु । ८०।७८ । १० ॥ अतीर्त्थायोगियोळु विषमस्थानंगळु मूरु ७९ । ७७ । ९ ॥

सत्त्वस्थानानि नारकेषु द्वानवतिकैकनवतिकनवतिकानि त्रीणि भवन्ति । पृथ्वीकायिकादिसर्वतिर्यक्षु द्वानवतिकनवतिकाष्टशीतिकचतुरशीतिकद्व्यशीतिकानि पंच ॥६२३॥

सत्त्वस्थानानि मनुष्ये द्व्यशीतिकं वर्जित्वा शेषाणि द्वादश भवन्ति । सयोगे अशीतिकादीनि चत्वारि । अयोगे च षट् ॥६२४॥

केवल्युक्तस्थानेषु सयोगायोगयोः चतुःषट्सु सतीर्थातीर्थयोः क्रमेण समविषमाणि स्युः । आहारके

नामकर्मके सत्त्वस्थान नारकियोंमें बानबे, इक्यानबे, नब्बे ये तीन होते हैं। पृथ्वीकाय आदि सब तिर्यंचोंमें बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासी ये पाँच होते हैं ॥६२३॥

मनुष्योंमें बयासीको छोड़कर शेष बारह सत्त्वस्थान होते हैं। सयोग केवलीमें अस्सी आदि चार स्थान होते हैं। अयोगीमें अस्सी आदि छह स्थान होते हैं ॥६२४॥

केवलीमें कहे सयोगीमें चार अयोगीमें छह स्थानोंमें-से तीर्थंकर सहितमें समरूप स्थान होते हैं और तीर्थंकर रहितमें विषमरूप स्थान होते हैं। अर्थात् तीर्थंकर सहित सयोगीमें अस्सी और अठहत्तर तथा तीर्थंकर सहित अयोगीमें वे दोनों और दस ये सत्त्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहारकवोळु त्रिद्विनवतिस्थानद्वयंगळप्पुवु। आ ९३। ९२॥ देवर्क्कळोळु सौधर्म्मादिगळोळु प्रथमतन चतुःस्थानंगळप्पुवु।९३।९२।९१।९०।

अनंतरं भवनत्रयभोगभूमिजरोळं सत्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

बाणउदि णउदिसत्ता भवणतियाणं च भोगभूमीणं।
हेट्ठिमपुढविचउक्कभवाणं च य सासणे णउदी ॥६२६॥

द्वानवति नवतिसत्वं भवनत्रयाणां च भोगभूमिजानामधस्तनपृथ्वीचतुष्कभवानां च च सासादने नवतिः॥

भवनत्रयदिविजरुगळगे द्वानवतियुं नवतियुं सत्वमक्कुं। सर्व्वभोगभूमिगळ मनुष्यतिर्य्यंचरुगळगेयुं द्वानवति नवति द्विस्थानसत्वमक्कुं। भवन ३। ९२। ९०॥ भो ९२। ९०॥ अंजनेमोदलगोंडु केळगण नाल्कुं पृथ्विगळोळाद नारकरुगळगेयुं द्वानवति नवतिद्वय सत्वमक्कं। ९२। ९०॥ सर्व्वसासादनरुगळगेल्लं नवतिसत्वस्थानमोंदेयक्कुं। सा ९०॥ संदृष्टि :—

		पृथि		अप्		तेज		वायु		साधारण							
प	नि	बा	सू	बा	सू	बा	सू	बा	सू	बा	सू	प्र	बि	ति	च	अ	सं
र्प्या	९०	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२
म	९१	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४
*	९२	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८
*	*	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०
*	*	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२
*	*	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२	८२
*	*	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४	८४
अप	*	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८	८८
र्प्या	*	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०	९०
म	*	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२	९२

→

त्रिनवतिकद्विनवतिके द्वे। वैमानिकेष्वाद्यानि चत्वारि ॥६२५॥

सत्त्वस्थानानि भवनत्रयदेवानां सर्वभोगभूमितिर्यग्मनुष्याणामंजनाद्यधस्तनचतुःपृथ्वीनारकाणां च

स्थान होते हैं। और तीर्थंकर रहित अयोगीमें उन्न्यासी, सत्तहत्तर तथा तीर्थंकर रहित अयोगीमें वे दोनों और नब्बे स्थान होते हैं। आहारकमें तिरानबे, बानबे दो सत्त्वस्थान हैं। वैमानिक देवोंमें आदिके चार सत्त्वस्थान हैं ॥६२५॥

भवनत्रिक देवोंके सब भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंचोंके और अंजना आदि नीचेकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

म के के के के

९ १०
७७
७८
७९
८०
८४
८८
९०
९१
९२
९३
८४
८८
९०
९२

सा	ति	ससा	तिस	अ	दे
९	१०	७७	७८	९२	९०
७७	७८	७९	८०	९३	९१
७९	८०				९२
					९३

अ	९२	९०
मि	९	९०
सा	९०	९०
मि	९२	९०
अं	अनादि	४
अ	९२	९०
मि	९२	९०
सा	९०	०
मि	९२	९०

←

बं	८	७	६	१	१	१	०
उ	८	८	८	७	७	४	४
स	८	८	८	८	७	४	४

अनंतरं बंधोदय सत्व संयोगदोळु भंगगळं पेळ्दपरु :—

मूलुत्तरपयडीणं बंधोदयसत्तठाणभंगा हु ।
भणिदा हु तिसंजोगे एत्तो भंगे परूवेमो ॥६२७॥

मूलोत्तरप्रकृतीनां बंधोदयसत्वस्थानभंगाः खलु । भणिताः खलु त्रिसंयोगे इतो भंगान् प्ररूपयामः ॥

मूलोत्तरप्रकृतिगळ बंधोदयसत्वस्थानभंगंगळु पेळल्पट्टुवु । स्फुटमागि । इतः प्रभृति यिल्लिदं मेले त्रिसंयोगे बंधोदयसत्वसंयोगदोळु भंगान् भंगंगळं प्ररूपिसिदपेवेंदु ते'दोडे :—

द्वानवतिकनवतिके द्वे । सर्वसासादनानां नवतिकमेव ॥६२६॥

मूलोत्तरप्रकृतीनां बन्धोदयसत्त्वस्थानभंगाः खलु भणिताः । इतोऽग्रे त्रिसंयोगे भंगान् प्ररूपयामः खलु ॥६२७॥ तद्यथा—

चार पृथिवियोंके नारकीके बानबे और नब्बे दो ही सत्त्वस्थान हैं। सब सासादन गुणस्थानवर्ती जीवोंके एक नब्बेका ही सत्त्वस्थान होता है ॥६२६॥

मूल प्रकृति और उत्तर प्रकृतियोंके बन्ध उदय और सत्त्वरूप स्थान तथा भंग कहे। यहाँसे आगे बन्ध, उदय, सत्त्वके त्रिसंयोगमें स्थान और भंगोंको कहेंगे ॥६२७॥

वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठविहसत्तछब्बंधगेसु अट्ठेव उदयकम्मंसा ।
एयविहे तिवियप्पो एयवियप्पो अबंधम्मि ॥६२८॥

अष्टविध सप्त षड् बंधकेष्वष्टैवोदयकर्म्मांशाः । एकविधे त्रिविकल्पः एकविकल्पोऽबंधे ॥

अष्टविध सप्तविधषड्विधबंधकरुगळोळु उदयमुं सत्वमुमष्टाष्टविधंगळप्पुवु । एकविधबंधकनोळु त्रिविकल्पमक्कुमें तें दोडे—एकविधबंध सप्ताष्टविधोदयसत्वमुमेकविधबंध चतुश्चचतुरुदय सत्वमुमितु त्रिविधमक्कु–। म बंधदोळु चतुश्चतुरुदयसत्वमेकविकल्पमेयक्कुं ।

ई त्रिसंयोगभंगंगळं गुणस्थानदोळु योजिसिदपरु । :--

मिस्से अपुव्वजुगले बिदियं अपमत्तवोत्ति पढमजुगं ।
सुहुमादिसु तदियादी बंधोदयसत्तभंगेसु ॥६२९॥

मिश्रे अपूर्व्वयुगळे द्वितीयमप्रमत्तपर्य्यंतं । प्रथमद्विकं सूक्ष्मादिषु तृतीयोदयो बंधोदयसत्वभंगेषु ॥

बंधोदयसत्वभंगंगळोळु द्वितीयविकल्पं मिश्रनोळमपूर्व्वकरणनोळमनिवृत्तिकरणनोळमक्कु मप्रमत्तपर्य्यंतं प्रथमद्विविकल्पंगळप्पुवु । सूक्ष्मसांपरायं मोदल्गों डयोगिकेवलिभट्टारकपर्य्यंतं क्रमादिदं तृतीयादिविकल्पंगळप्पुवु । संदृष्टिः—

अष्टविधसप्तविधषड्विधबंधकेषु उदयसत्त्वे अष्टाष्टविधे स्तः । एकविधबन्धके तु सप्ताष्टविधे सप्तसप्तविधे चतुश्चतुर्विधे च स्तः । अबन्धके चतुश्चतुर्विधे स्तः ॥६२८॥ अथ तत्त्रिसंयोगभंगान् गुणस्थानेषु योजयति—

तेषु बन्धोदयसत्त्वभंगेषु गुणस्थानं प्रति मिश्रेऽपूर्वानिवृत्तिकरणयोश्च सप्ताष्टाष्टबन्धोदयसत्त्वो द्वितीयभंगः स्यात् । शेषाप्रमत्तांतेषु षट्सु अष्टाष्टबन्धोदयसत्त्वप्रथमभंगो द्वितीयभंगश्च स्यात् । सूक्ष्मसांपरायाद्ययोगांतेषु

जिस जीवके मूल प्रकृतियोंका आठ प्रकार, सात प्रकार या छह प्रकारका बन्ध होता है उसके उदय और सत्त्व आठ प्रकारका ही होता है। जिसके एक प्रकारका मूल प्रकृतिबन्ध होता है उसके उदय सात प्रकार, सत्त्व आठ प्रकार अथवा उदय और सत्त्व दोनों सात-सात प्रकार अथवा उदय और सत्त्व दोनों चार-चार प्रकार होते हैं। जिसके एक भी मूलप्रकृतिका बन्ध नहीं है उसके उदय और सत्त्व दोनों चार-चार प्रकारके होते हैं ॥६२८॥

ब.	८	७	६	१	१	१	०
उ.	८	८	८	७	७	४	४
स.	८	८	८	८	७	४	४

आगे त्रिसंयोगी भंगोंको गुणस्थानोंमें जोड़ते हैं—

उन बन्ध, उदय और सत्त्वके भंगोंमें गुणस्थानोंके प्रति मिश्रमें और अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणमें सातका बन्ध, आठका उदय और आठका सत्त्वरूप दूसरा भंग पाया जाता है। मिश्रके बिना शेष मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्त पर्यन्त छह गुणस्थानोंमें आठका बन्ध, उदय सत्त्वरूप प्रथम भंग और सातका बन्ध, आठका उदय, आठका सत्त्वरूप दूसरा भंग पाया है। सूक्ष्म साम्परायसे अयोगीपर्यन्त गुणस्थानोंमें तीसरे आदि छहका बन्ध, आठका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मि	सासा	मि	असंय	देशसं	प्रमत्त	अप्रम
बं ८।७	बं ८।७	बं ।७	बं ८।७	बं ८।७	बं ८।७	बं ८।७
उ ८।८	उ ८।८	उ ८	उ ८।८	उ ८।८	उ ८।८	उ ८।८
स ८।८	स ८।८	स ।८	स ८।८	स ८।८	स ८।८	स ८।८

अपू	अनिवृ	सूक्ष्म	उपशां	क्षीणक	सयो	अयोगि
बं ७	बं ७	बं ६	बं १	बं १	बं १	बं ०
उ ८	उ ८	उ ८	उ ७	उ ७	उ ४	उ ४
स ८	स ८	स ८	स ८	स ७	स ४	स ४

यिल्लि आयुष्यकर्म्मसहितमागियष्टबंधकरु आयुर्व्वज्जितमागि सप्तविधबंधकरु आयुर्म्मोह-कर्म्मवर्ज्जितमागि षट्कर्म्मबंधकरु वेदनीयमों दरनंधमुमबंधस्थानमुमप्पुवु ।

अनंतरमुत्तरप्रकृतिगळ्गे त्रिसंयोगदोळु भंगंगळं पेळ्दपरः—

बंधोदयकम्मंसा णाणावरणंतराइये पंच ।
बंधोवरमे वि तहा उदयंसा होंति पंचेव ॥६३०॥

बंधोदयकर्म्मांशा ज्ञानावरणांतराययोः पंच । बंधोपरमे पि तथा उदयांशा भवंति पंचैव ॥

बंधोदयसत्वंगळु ज्ञानावरणांतरायंगळ्गे पंच पंच प्रकृतिगळेयप्पुवु । तद्बंधोपरतरोळं तथा

पंचसु क्रमेण तृतीयादयः षडष्टाष्टबन्धोदयसत्त्वैकसप्ताष्टबन्धोदयसत्त्वैकसप्तसप्तबन्धोदयसत्त्वैकचतुश्चतुर्बन्धोदय-सत्त्वशून्यचतुश्चतुर्विधोदयसत्त्वभंगाः स्युः ॥६२९॥ अथोत्तरप्रकृतिष्वाह—

ज्ञानावरणान्तराययोः सूक्ष्मसाम्परायपर्यंतं बन्धोदयसत्त्वानि पंच पंच प्रकृतयो भवन्ति । बन्धोपर-

उदय, आठका सत्त्व, एकका बन्ध, सातका उदय, आठका सत्त्व, एकका बन्ध, सातका उदय, सातका सत्त्व, एकका बन्ध, चारका उदय, चारका सत्त्व तथा बन्धका अभाव, चारका उदय, चारका सत्त्व ये भंग पाये जाते हैं ॥६२९॥

	मि.	सा.	मि	असं.	देश	प्र.	अप्र.	अप.	अनि.	सू.	उ.	क्षी.	स.	अ.
ब.	८।७	८।७	७	८।७	८।७	८।७	८।७	७	७	६	१	१	१	०
उ.	८।८	८।८	८	८।८	८।८	८।८	८।८	८	८	८	७	७	४	४
स.	८।८	८।८	८	८।८	८।८	८।८	८।८	८	८	८	८	७	४	४

आगे उत्तर प्रकृतियोंमें कहते हैं—

सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त ज्ञानावरण और अन्तरायकी पाँच-पाँच प्रकृतियाँ बन्ध, उदय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहंगे उदयांशंगळु पंच पंचप्रकृतिगळप्पुवु ।

	णाणा		अंतराय	
बं	५	५	०	०
उ	५	५	५	५
स	५	५	५	५

ज्ञानावरणांतरायंगळ्गे

गुणस्थानदोळु त्रिसंयोग रचने :—

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
बं	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	०	०
उ	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
स	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५

अनंतरं दर्शनावरणोत्तरप्रकृतिगळ्गे त्रिसंयोगभंगंगळं पेळदपरु :—

बिदियावरणे णवबंधगेसु चदु पंच उदय णवसत्ता ।
छब्बंधगेसु एवं तह चदुबंधे छडंसा य ॥६३१॥

द्वितीयावरणे नवबंधकेषु चतुःपंचोदयनवसत्त्वानि । षड्बंधकेष्वेवं तथा चतुर्बंधके षडंशाश्च ॥

उवरदबंधे चदु पंच उदय णव छच्च सत्त चदुजुगलं ।
तदियं गोदं आउं विभज्ज मोहं परं वोच्छं ॥६३२॥

उपरतबंधे चतुःपंचोदय नव षट्सत्त्व चतुर्युगलं । तृतीयं गोत्रमायुर्विभज्य मोहं वक्ष्यामि ॥

द्वितीयावरणदोळु नवबंधकरोळु चतुःपंचोदयंगळुं नवसत्वमुमक्कुं । षड्बंधकरोळुमंते चतुः पंचोदयंगळु नवसत्वमुमक्कुं । अहंगे चतुर्बंधकरोळु चतुःपंचोदयंगळुं चशब्ददिदं नवांशंगळुं

मेऽप्युपशान्तक्षीणकषाययोरुदयसत्त्वे तथा पंच पंच प्रकृतयः स्तः ॥६३०॥

दर्शनावरणे मिथ्यादृष्टिसासादनयोर्नवबन्धकयोश्चत्वारि पंच चोदयः । सत्त्वं नव । षड्बन्धकेषु मिश्राद्युभयश्रेण्यपूर्वकरणप्रथमभागांतेष्वप्युदयसत्त्वे एवमेव । चतुर्बंधके तद्द्वितीयभागादा उपशमकसूक्ष्म-

और सत्त्वरूप हैं । बन्धका अभाव हो जानेपर भी उपशान्तकषाय क्षीणकषायमें पाँच-पाँच प्रकृतिका उदय और पाँच-पाँचका सत्त्व है ॥६३०॥

दर्शनावरणमें मिथ्यादृष्टि और सासादनमें नौका बन्ध होता है किन्तु उदय चार या पाँचका है । सत्त्व नौका है । मिश्रसे लेकर दोनों श्रेणिरूप अपूर्वकरणके प्रथम भाग पर्यन्त बन्ध छहका है । उदय चार या पाँचका है और सत्त्व नौ है । अपूर्वकरणके दूसरे भागसे लेकर उपशमक सूक्ष्म साम्पराय पर्यन्त और सोलह प्रकृतिका जहाँ क्षय होता है क्षपक

१. उदय सत्वंगळु । (ताड. पंक्ति ३):—णोत्ति चरिमउदया पंचसु हद्दासु दोसु णिद्दासु । एक्के उदयं पत्ते खीणदुचरिमोत्ति पंचुदया ॥ (संबंधः कल्प्यतां) (ताड. पंक्ति ६):—अणुदयतदियं णीचमजोगि दुचरिमम्मि सत्त वोच्छिण्णा । येंदनुदयागतवेदनीयवक्के द्विचरमदोळु व्युच्छित्तियादुदरिंदुदयागतमे सत्त्व-मक्कु मी प्रकारदिंदमुंदे पेळवगोत्रक्कं योजिसिकोंबुदु ॥ चरमे (संबंधो न ज्ञायते) ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षडंशंगळुमप्पुवु । उपरतबंधकरोळु चतुःपंचोदयंगळुं नवषट्सत्वंगळुं चतुश्चतुरुदयसत्वंगळुमप्पुवु ।

संदृष्टि :— ई दर्शनावरणत्रिसंयोग

बं ९	६	४	४	०	०	०
उ ५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४
स ९	९	९	६	९	६	४

भंगंगळं गुणस्थानदोळु योजिसिद संदृष्टिरचना विशेषमिदु :—

	मि	सा	मि	असं	देश	प्र	अप्र	अ. उ. क्ष.	अनि.उक्ष	सू. उ	क्ष	उ	क्षी
बं।	९	९	६	६	६	६	६	६।४।६।४	४।४	४	४	०	०।०
उ।	५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५।४।५	४।५।४।५	४।५	४।५	४।५	४।५।४
स।	९	९	९	९	९	९	९	९।९	९।९।६	९	६	९	६।४

अनंतरं वेदनीयमुमं गोत्रमुमं आयुष्यमुमं त्रिसंयोगदोळु भंगंगळं विभाजिसि गुणस्थानंगळोळु योजिसि बळिक्कं मुंदे मोहनीयमं पेळदपेमेंदु वेदनीयमं पेळदपरु :—

सादासादेक्कदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे ।
दो सत्ता जोगित्ति य चरिमे उदयागदं सत्तं ॥६३३॥

सातासातैकतरौ बंधोदयौ भवंति संभवस्थाने । सत्त्वे अयोगिपर्य्यंतं चरमे उदयागतं सत्त्वं ॥

छट्ठोत्ति चारि भंगा दो भंगा होंति जाव जोगिजिणे ।
चउभंगाऽजोगिजिणे ठाणं पडि वेयणीयस्स ॥६३४॥

षष्ठपर्य्यंतं चतुर्भंगाः द्वौ भंगौ भवंति यावद्योगिजिने । चतुर्भंगा अयोगिजिने स्थानं प्रति वेदनीयस्य । द्वितयं ॥

सांपरायांतं, षोडशक्षपकानिवृत्त्यंतं चोदयस्तथैव, सत्त्वं नव, षोडशक्षपकादुपरि तत्सूक्ष्मसांपरायांतं च उदयस्तथैव सत्त्वं षट् । उपरतबन्धे उदयस्तथैव, सत्त्वं उपशान्ते नव क्षीणद्विचरमांते षट् । चरमे उभयमपि चत्वारि । वेदनीयगोत्रायुस्त्रिसंयोगभंगान् भक्त्वा गुणस्थानेषु संयोज्याग्रे मोहनीयं वक्ष्यामि ॥६३१–६३२॥

अनिवृत्तिकरणके उस भाग पर्यन्त उदय चार या पाँचका है। सत्त्व नौका है। सोलह प्रकृतिके क्षयसे ऊपर सूक्ष्म साम्पराय क्षपक पर्यन्त उदय तो वैसा ही है, सत्त्व छहका है। जिनके दर्शनावरणका बन्ध नहीं है उनके उदय तो चार या पाँचका है। सत्त्व उपशान्त कषायमें नौ और क्षीणकषायके द्विचरम समय पर्यन्त छहका है। क्षीणकषायके अन्त समयमें उदय और सत्त्व दोनों चार-चारका है। वेदनीय गोत्र और आयुके त्रिसंयोगी भंगोंको विभाग करके गुणस्थानोंमें उनकी योजना करेंगे। फिर मोहनीयमें कहेंगे ॥६३१-६३२॥

	मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अप्र.	अपूर्व.		अनि.		सूक्ष्म.		उ.	क्षी.
								उ.	क्ष.	उ.	क्ष.	उ.	क्ष.		
ब.	९	९	६	६	६	६	६	६।४	६।५	४	४	४	४	०	०
उ.	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५।४
स.	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९।६	९	६	९	६।४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सातासातैकतरं सातासातंगळोळु योग्यस्थानकदोळु बंधोदयंगळेकैकंगळप्पुवु । द्विप्रकृतिसत्वं सयोगकेवलिपर्य्यंतमप्पुदयोगिकेवलियोळु द्विप्रकृतिसत्वमुदयागतं सत्वमक्कुमंतागुत्तं विरलु षष्ठगुणस्थानपर्य्यंतं चतुर्भंगंगळप्पुवु । अप्रमत्तसंयतं मोदल्गोंडु सयोगकेवलिगुणस्थानपर्य्यंतं द्विभंगंगळप्पुवु । अयोगकेवलियोळु चतुर्भंगंगळप्पुवु । वेदनीयस्थानापेक्षेयिदं संदृष्टि :—

बं	सा	सा	अ	अ	०	०	०	०	*
उ	सा	अ	सा	अ	सा	अ	सा	अ	*
स	२	२	२	२	२	२	सा	अ	

यिल्लि प्रथमचतुर्भंगंगळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानंमोदल्गोंडु प्रमत्तसंयतपर्यंतमारुं गुणस्थानंगळोळक्कु

सा	सा	अ	अ
सा	अ	सा	अ
२	२	२	२

मेकेंदोडे सातासातबंधं प्रमत्तसंयतपर्य्यंतमुंटप्पुदरिंदं । अप्रमत्तगुणस्थानं मोदल्गोंडु सयोगकेवलिजिनरु पर्य्यंतं सातबंधमोंदेयप्पुदरिंदं प्रथम भंगद्वितयमक्कुं

सा	सा
सा	अ
२	२

अयोगिजिनरोळु चतुर्भंगंगळप्पुवेंतेंदोडे सातोदयोभयसत्वं । १ । सातोदयसातसत्वं १ । असातोदयोभयसत्वं १ । असातोदयासातसत्वं १ । मंतु नाल्कु भंगंगळप्पुवु

०	०	०	०
सा	अ	सा	अ
२	२	सा	अ

गुणस्थानसंदृष्टि :—

०	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
भं	४	४	४	४	४	४	२	२	२	२	२	२	२	४

सातासातैकतरमेव योग्यस्थाने बन्ध उदयो वा स्यात् । सत्वं सयोगांतं द्वे द्वे । अयोगे ते उदयागते, तेन वेदनीयस्य गुणस्थानं प्रति भंगाः षष्ठांतं । सातबन्धोदयोभयसत्वं सातबन्धासातोदकोभयसत्वं । असातबन्धसातोदयोभयसत्वं असातबन्धोदयोभयसत्वमिति चत्वारः । उपरि सयोगांतं केवलं सातस्यैव बन्धात् तद्बन्धतदुदयोभयसत्वं तद्बन्धासातोदयोभयसत्वमिति द्वौ । अयोगे सातोदयोभयसत्वं, असातोदयोभयसत्वं

साता और असातामें-से एकका ही बन्ध और उदय योग्य स्थानमें होता है किन्तु सत्त्व सयोगी पर्यन्त दोनोंका ही होता है । अयोगीमें जिसका उदय होता है उसीका सत्त्व होता है । इससे वेदनीयके गुणस्थानोंमें भंग छठे प्रमत्तपर्यन्त तो साताका बन्ध, साताका उदय, सत्त्व दोनोंका, अथवा साताका बन्ध, असाताका उदय सत्त्व दोनोंका, अथवा असाताका बन्ध साताका उदय, सत्त्व दोनोंका, अथवा असाताका बन्ध असाताका उदय सत्त्व दोनोंका इस प्रकार चार होते हैं । ऊपर सयोगी पर्यन्त केवल साताका ही बन्ध है । इसलिए साताका ही बन्ध, साताका ही उदय और सत्त्व दोनोंका अथवा साताका बन्ध, असाताका उदय, दोनोंका सत्त्व इस तरह दो भंग हैं । अयोगीमें बन्धका तो अभाव है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं गोत्रक्के पेळदपरु :—

णीचुच्चाणेक्कदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे ।
दो सत्ताऽजोगित्ति य चरिमे उच्चं हवे सत्तं ॥६३५॥

नीचोच्चयोरेकतरं बंधोदयौ भवतः संभवत्स्थाने । द्वे सत्त्वेऽयोगिपर्य्यंतं चरमे उच्चं भवेत्सत्वं ॥

उच्चनीचगोत्रंगळेरडुं बंधसंभविसुव स्थानदोळु उच्चनीचंगळोंदोंदु बंधोदयंगळप्पुवु । अयोगिद्विचरमसमयपर्य्यंतमुच्चनीचोभयसत्त्वमक्कुं । चरमसमयदोळु उच्चैर्गोत्रमोंदे सत्त्वमक्कुं

बं	नी	नी	उ	उ	०	०	नी
उ	नी	उ	उ	नी	उ	उ	नी
स	२	२	२	२	२	उ	नी

उच्चुव्वेल्लिदतेऊवाउम्मि य णीचमेव सत्तं तु ।
सेसिगिवियले सयले णीचं च दुगं च सत्तं तु ॥६३६॥

उच्चोद्वेल्लित तेजोवाय्वोश्च नीचमेव सत्त्वं तु । शेषैकविकले सकले नीचं च द्विकं च सत्त्वं तु ॥

सातोदयसत्त्वमसातोदयसत्त्वमिति चत्वारः ॥६३३-६३४॥ अथ गोत्रस्याह—

गोत्रद्वयबन्धसम्भवस्थाने उच्चनीचैकतरमेव बन्धोदयौ स्तः । सत्त्वमयोगिद्विचरमसमयपर्यन्तमुभयं स्यात् । चरमसमये सत्त्वमुच्चमेव ॥६३५॥

अतः साताका उदय दोनोंका सत्त्व या असाताका उदय दोनोंका सत्त्व अथवा साताका उदय साताका सत्त्व या असाताका उदय, साताका सत्त्व इस प्रकार चार भंग हैं ॥६३३-६३४॥

छठे गुणस्थान पर्यन्त भंग ४

बन्ध	सा.	सा.	अ.	अ.
उ.	सा.	अ.	सा.	अ.
स.	२	२	२	२

सयोगी पर्यन्त भंग २

सा	सा
सा	अ.
२	२

अयोगीमें भंग ४

०	०	०	०
सा	अ.	सा	अ.
२	२	सा	अ.

आगे गोत्रका कथन करते हैं—

जहाँ दोनों गोत्रोंके बन्धकी सम्भावना है वहाँ उच्च और नीचमें-से एकका ही बन्ध और उदय होता है । सत्त्व अयोगी के द्विचरम पर्यन्त दोनोंका है । अन्त समयमें उच्चका ही सत्त्व है ॥६३५॥

बं.	नी.	नी.	उ.	उ.	०	०
उ.	नी.	उ.	उ.	नी.	उ	उ
स.	२	२	२	२	२	उ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चैर्गोत्रमनुद्वेल्लनमं माडिद तेजस्कायिक जीवनोळं वायुकायिकजीवनोळं नीचैर्गोत्रमे सत्वमक्कुं। तु मत्ते शेषैकेंद्रियविकलेंद्रिय सकलेंद्रियंगळोळु नीचैर्गोत्र सत्वमुमुभयसत्वमुमक्कुमें दोडे :—

उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाऊ सेसे य वियलसयलेसु।
उप्पण्णपढमकाले णीचं एयं हवे सत्तं ॥६३७॥

उच्चोद्वेल्लिततेजोवायू शेषैकविकलसकलेषूत्पन्न प्रथमकाले नीचमेकं भवेत्सत्वं ॥

उच्चैर्गोत्रमनुद्वेल्लनमं माडिद तेजोवायुकायिकजीवंगळु शेषैकेंद्रियविकलेंद्रिय सकलेंद्रिय जीवंगळोळु जनियिसिद प्रथमकालमंतर्म्मुहूर्त्तपर्य्यंतं नीचैर्गोत्रमेकमे सत्वमक्कु–। मल्लिदं मेले उच्चैर्गोत्रमं कट्टिदोडुभयसत्वमक्कुमें बुदत्थं–। मी भंगंगळं गुणस्थानदोळु योजिसिदपरु :—

मिच्छादिगोदभंगा पण चदु तिसु दोण्णि अट्ठठाणेसु।
एक्केक्का जोगिजिणे दो भंगा होंति णियमेण ॥६३८॥

मिथ्यादृष्ट्यादिगोत्रभंगाः पंचचतुस्त्रिषु द्वावष्टस्थानेष्वेकैके योगिजिने द्वौ भंगौ भवतो नियमेन ॥

नीचबंधनीचोदयोभयसत्व १। नीचबंधोच्चोदयोभयसत्व १। उच्चबंधोच्चोदयोभयसत्व १। उच्चबंधनीचोदयोभयसत्व १। नीचबंधनीचोदयनीचसत्व १–। मितु मिथ्यादृष्टियोळु पंचगोत्र भंगंगळप्पुवु। सासादननोळमी पेळ्द मिथ्यादृष्टिय पंचभंगंगळोळु चरमभंगमं बिट्टु शेष-

---

उच्चोद्वेल्लिततेजोवाय्वोस्तु सत्वं नीचमेव स्यात्। तु-पुनः शेषैकविकलसकलेन्द्रियेषु सत्वं नीचं चोभयं च स्यात् ॥६३६॥ तद्यथा—

उच्चोद्वेल्लिततेजोवाय्वोस्तदागतशेषैकविकलेन्द्रियेषूत्पन्नप्रथमकालान्तमुहूर्ते चैकं नीचमेव सत्वं स्यात्। उपर्युच्चं बध्नाति तदोभयसत्वं स्यादित्यर्थः ॥६३७॥

गोत्रस्य भंगाः गुणस्थानेषु नियमेन मिथ्यादृष्टौ नीचबन्धोदयोभयसत्वं। नीचबन्धोच्चोदयोभयसत्वं, उच्चबन्धोदयोभयसत्वं, उच्चबन्धनीचोदयोभयसत्वं नीचबन्धोदयसत्वं चेति पंच भवन्ति। सासादने चरमो

जिनके उच्चगोत्रकी उद्वेलना हुई है उन तेजकाय, वायुकायमें नीच गोत्रका ही सत्त्व है। शेष एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, सकलेन्द्रियके सत्त्व नीचका अथवा दोनोंका है ॥६३६॥

उच्चगोत्रकी उद्वेलना करनेवाले तेजकाय, वायुकायमें एक नीच गोत्रका ही सत्त्व है। वे मरकर जहाँ उत्पन्न होते हैं उन एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, सकलेन्द्रिय तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम अन्तर्मुहूर्तमें एक नीचका ही सत्त्व होता है। आगे उच्चको बाँधनेपर दोनोंका सत्त्व होता है ॥६३७॥

नियमसे गुणस्थानोंमें गोत्रके भंग इस प्रकार हैं—

मिथ्यादृष्टिमें नीचका बन्ध, नीचका उदय, दोनोंका सत्त्व, १ नीचका बन्ध, उच्चका उदय, सत्त्व दोनोंका २, उच्चका बन्ध, उच्चका उदय, सत्त्व दोनोंका ३, उच्चका बन्ध, नीचका उदय, सत्त्व दोनोंका ४, अथवा नीचका ही बन्ध उदय सत्त्व ५, इस तरह पाँच भंग हैं। सासादनमें नीचका बन्ध उदय सत्त्वरूप अन्तिम भंग नहीं है, क्योंकि सासादन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्भंगंगळप्पुवेंतेंदोडे सासादनं तेजोवायुगळोळु पुट्टुवुदुमिल्लुच्चैर्ग्गोत्रोद्वेल्लनमुं घटियिसुदिल्लप्पुदरिदं। मिश्रासंयतदेशसंयतरुगळोळु द्विभंगंगळप्पुववावुवें दोडे उच्चबंधोच्चोदयोभयसत्त्व १। उच्चबंधनीचोदयोभयसत्त्व १। यितु द्विभंगंगळक्कुं। प्रमत्तसंयतं मोदलगोंडु सयोगकेवलि चरमसमयपर्य्यंतमें टु गुणस्थानंगळोळु उच्चबंधोच्चोदयोभयसत्त्वं ओंदे भंगमक्कुमदेंतेंदोडे सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतमुच्चबंधोच्चोदयोभयसत्त्वमिल्लं मेले सयोगिपर्य्यंतमुच्चोदयोभयसत्त्वमुमेंदितु अयोगिकेवलिगुणस्थानदोळु उपरतबंधरप्पुदरिदं उच्चोदयोभयसत्त्व–१। उच्चोदयोच्चसत्त्वमितेरडु भंगंगळप्पुवु। संदृष्टि :—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
३	४	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	२

अनंतरमायुष्यक्के त्रयोदश गाथासूत्रं गळिदं पेळदपरु :—

सुरणिरया णरतिरियं छम्मासवसिट्ठगे सगीउस्स।
णरतिरि । सव्वाउं तिभागसेसम्मि उक्कस्सा ॥६३९॥

सुरनारका नरतिर्य्यंचौ षण्मासावशिष्टे स्वकायुष्ये। नरतिर्य्यंचः सर्व्वायुंषि त्रिभागशेषे उत्कृष्टात् ॥

नेति चत्वारः तस्य तेजोद्वयेऽनुत्पत्तेरुच्चानुद्वेल्लनात्। मिश्रादित्रये उच्चबन्धोदयोभयसत्त्वं उच्चबन्धनीचोदयोभयसत्त्वं चेति द्वौ द्वौ। प्रमत्तादिसूक्ष्मसाम्परायान्तमुच्चबन्धोदयोभयसत्त्वमित्येकः। उपरि सयोगान्तमुच्चोदयोभयसत्त्वमित्येकः। अयोगिजिने उच्चोदयोभयसत्त्वं उच्चोदयसत्त्वं चेति द्वौ ॥६३८॥ अथायुषस्त्रयोदशगाथासूत्रैराह—

मरकर तेजकाय, वायुकायमें उत्पन्न नहीं होता और न वहां उच्चगोत्रकी उद्वेलना ही होती है। अतः चार ही भंग होते हैं। मिश्र आदि तीनमें उच्चका बन्ध, उच्चका उदय, दोनोंका सत्त्व अथवा उच्चका बन्ध, नीचका उदय, दोनोंका सत्त्व ये दो-दो भंग हैं। प्रमत्तसे सूक्ष्मसाम्पराय पर्यन्त उच्चका बन्ध, उच्चका उदय, दोनोंका सत्त्व यह एक ही भंग है। ऊपर सयोगी पर्यन्त बन्धका अभाव है अतः उच्चका उदय, सत्त्व दोनोंका ऐसा एक ही भंग है। अयोगीमें उच्चका उदय, दोनोंका सत्त्व और उच्चका ही उदय सत्त्व ये दो भंग हैं ॥६३८॥

गुणस्थानोंमें गोत्रकर्मके भंगका यन्त्र

	मिथ्यादृष्टि					सासादन				मिश्रा. तीन		प्रमत्तसे सू.	सयो.	अयोगी	
ब.	नी.	नी.	उ	उ	नी	नी.	नी.	उ	उ	उ	उ	उ	०	०	०
उ.	नी.	उ.	उ	नी.	नी	नी.	उ.	उ	नी.	उ	नी.	उ	उ	उ	उ
स.	२	२	२	२	नी	२	२	२	२	२	२	२	२	२	उ

आयुके भंग तेरह गाथाओंसे कहते हैं—

सुररुं नारकरुमुत्कृष्टदिदं स्वभुज्यमानायुष्यं षण्मासावशिष्टमागुत्तं विरलु परभवायुष्यंगळं नरतिर्य्यगायुष्यंगळं कट्टुवरु। नररुं तिर्य्यंचरुं भुज्यमानायुष्यमुत्कृष्टदिदं त्रिभागशेषमागुत्तं विरलु परभवायुष्यंगळ नाल्कुमं कट्टुवरु। सर्व्वायुष्यंगळुं बंधयोग्यंगळप्पुवें बुदर्थं।

भोगभुमा देवाउं छम्मासवट्ठिगे पबद्धंति।
इगिविगला णरतिरियं तेउदुगा सत्तमा तिरियं ॥६४०॥

भोगभौमा देवायुः षण्मासावशिष्टे प्रबध्नंति। एकविकलाः नरतिर्य्यक् तेजोद्वितयाः सप्तमास्तिर्य्यक् ॥

भोगभूमरुत्कृष्टदिदं भुज्यमानायुः षण्मासावशिष्टमादागळु देवायुष्यमनों दने कट्टुवरु। एकेंद्रियंगळु विकलेंद्रियंगळुं नरतिर्य्यगायुष्यमं कट्टुवरु। तेजस्कायिकंगळुं वायुकायिकंगळं सप्तमपृथ्विजरुं तिर्य्यगायुष्यमने कट्टुवरु ॥ इंतायुर्ब्बंधप्रकारं पेळल्पट्टुदनंतरमुदयसत्वप्रकारंगळं पेळ्दपरु :—

सगसगगदीणमाऊ उदेदि बंधे उदिण्णगेण समं।
दो सत्ता हु अबंधे एक्कं उदयागदं सत्तं ॥६४१॥

स्वस्वगतीनामायुरुदेति बंधे उदीर्णकेन समं। द्वे सत्वे खल्वबंधे एकमुदयागतं सत्त्वं ॥

नारकतिर्य्यग्मनुष्यदेविजरुगळगे स्वस्वगतिगळायुष्यमे नियमदिदमुदयिसुगुं। परभवायुर्ब्बंधमागुत्तं विरलु उदयागतायुष्यसहितमागि आयुर्द्वितयं सत्त्वमक्कुं। परभवायुर्ब्बंधमिल्लदिरुत्तिरलु उदयागतमायुष्यमों दे सत्वमक्कु—

परभवायुः स्वभुज्यमानायुष्युत्कृष्टेन षण्मासेऽवशिष्टे देवनारका नारं तैरश्चं च बध्नन्ति तद्बन्धे योग्याः स्युरित्यर्थः। नरतिर्यचस्त्रिभागेऽवशिष्टे चत्वारि। भोगभूमिजाः षण्मासेऽवशिष्टे दैवं, एकविकलेन्द्रिया नारं तैरश्चं च। तेजोवायवः सप्तमपृथ्वीजाश्च तैरश्चमेव ।६३९–६४०॥ एतमायुर्बन्धस्य प्रकारमुक्त्वोदयसत्त्वयोराह—

नारकादीनामेकं स्वस्वगत्यायुरेवोदेति सत्त्वं परभवायुर्बन्धे खलूदयागतेन समं द्वे स्तः। अबद्धायुष्ये सत्त्वमेकमुदयागतमेव ॥६४१॥

जिस आयुको वर्तमानमें भोगते हैं उस भुज्यमान आयुके उत्कृष्टसे छह मास शेष रहनेपर देव और नारकी परभव सम्बन्धी मनुष्यायु या तिर्यंचायुको बाँधते हैं अर्थात् उस कालमें उस आयुको बाँधनेके योग्य होते हैं। मनुष्य और तिर्यंच भुज्यमान आयुका तीसरा भाग शेष रहनेपर चारों आयुको बाँधते हैं। भोगभूमिया छह मास शेष रहनेपर देवायुको ही बाँधते हैं। एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय मनुष्यायु या तिर्यंचायुको ही बांधते हैं। तेजकायिक वायुकायिक और सातवें नरकके नारकी तिर्यंचायुको ही बाँधते हैं ॥६३९–६४०॥

इस प्रकार आयुबन्धके प्रकारको कहकर उदय और सत्त्वको कहते हैं—

नारकी आदिके अपनी-अपनी गति सम्बन्धी ही एक आयुका उदय होता है। सत्त्व परभवकी आयुका बन्ध होनेपर उदयागत आयुके साथ दोका होता है। एक जो भोग रहे हैं और एक जो बाँधी है। किन्तु जिसने परभवकी आयु नहीं बांधी है उसके एक भुज्यमान आयुका ही सत्त्व होता है ॥६४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक्के एक्कं आऊ एक्कभवे बंधमेदि जोग्गपदे ।
अडवारं वा तत्थवि तिभागसेसेव सव्वत्थ ॥६४२॥

एकस्मिन्नेकमायुरेकभवे बंधमेति योग्यपदे । अष्टवारान्वा तत्रापि त्रिभागावशेष एव सर्व्वत्र ॥

एकस्मिन् एकजीवनोळु एकमायुः ओंदायुष्यं एकभवे ओंदु भवदोळु योग्यपदे बंधयोग्यकालंगळोळ अष्टवारान्वा एंटु वारंगळनुमेणु बंधमेति बंधमनेय्दुगुं । तत्रापि आ बंधयोग्यस्थानकंगळेंटरोळु सर्व्वत्र एल्लेडेयोळं त्रिभागशेषे एव त्रिभागशेषमागुत्तं विरले बंधमनेय्दुगुं ॥

इगिवारं वज्जित्ता वड्ढी हाणी अवट्ठिदं होदि ।
ओवट्टणघादो पुण परिणामवसेण जीवाणं ॥६४३॥

एकवारं वर्ज्जयित्वा वृद्धिहान्यवस्थितं भवति । अपवर्त्तनघातं पुनः परिणामवशेन जीवानां ॥

एकवारं वर्ज्जयित्वा प्रथमापकर्षणायुर्ब्बंधमं वर्ज्जिसि शेषापकर्षणंगळोळु वृद्धिहान्यवस्थितं भवति बध्यमानायुष्यक्के वृद्धिहान्यवस्थितमक्कु–। मदेंतेंदोडे ओर्व्वंजीवं प्रथमापकर्षणदोळेक-सागरोपमायुः स्थितियं कट्टिदातं द्वितीयवारदोळा स्थितियं नोडलधिकमं मेणु हीनमं मेणवस्थितमं कट्टुगुमप्पुदरिंदमल्लि द्वितीयवारदोळु पूर्व्वमं नोडलधिकमं कट्टिदनादोडा द्वितीयदोळु कट्टिदधिकस्थितिये प्रधानमक्कुं । पूर्व्वहीनस्थितियप्रधानमक्कुं । द्वितीयादिस्थितियं नोडलु प्रथमवारं कट्टिद स्थितियधिकमादोडे द्वितीयादिवारंगळ हीनस्थितियप्रधानमक्कुमेंदरियल्पडुगुं । पुनः मत्तमायुर्ब्बंधकनप्प जीवन परिणामद वशदिदं बंधमाद परभवायुष्यक्कपवर्त्तनघातमक्कुमपवर्त्तनघातमेंतेंदोडे बध्यमानस्यापवर्त्तनमपवर्त्तनघातः । उदीयमानस्यापवर्त्तनं कदलीघातः एंदितु

एकजीव एकमेवायुः एकभवे योग्यकालेऽष्टवारमेव बध्नाति । तत्र सर्वत्रापि त्रिभागशेष एव ॥६४२॥

अपकर्षेषु मध्ये प्रथमवारं वर्जित्वा द्वितीयादिवारे बध्यमानस्यायुषो वृद्धिर्हानिरवस्थितिर्वा भवति । यदि वृद्धिस्तदा द्वितीयादिवारे बद्धाधिकस्थितेरेव प्राधान्यं । अथ हानिस्तदा पूर्वबद्धाधिकस्थितेरेव प्राधान्यं । पुनः आयुर्बन्धं कुर्वतां जीवानां परिणामवशेन बध्यमानस्यायुषोऽपवर्तनमपि भवति तदेवापवर्तनघात इत्युच्यते

एक जीव एक भवमें योग्यकालमें एक ही आयुको बाँधता है । योग्यकालमें भी आठ बार ही बाँधता है । तथा सर्वत्र तीसरा भाग शेष रहनेपर ही बाँधता है । ये त्रिभाग आठ बार होते हैं इसीसे आयुबन्ध भी आठ बार कहा है ॥६४२॥

आठ अपकर्षोंमें प्रथम बारको छोड़कर द्वितीयादि बारमें प्रथम बारमें बाँधी हुई आयुकी स्थितिमें या तो वृद्धि होती है या हानि होती है या अवस्थिति रहती है । यदि वृद्धि होती है तो द्वितीय आदि बारमें बाँधी गयी अधिक स्थितिकी ही प्रधानता रहती है । यदि हानि होती है तो पहले बाँधी हुई अधिक स्थितिकी ही प्रधानता रहती है । पुनः आयुबन्ध करनेवाले जीवोंके परिणामोंके वश अपवर्तन भी होता है । अपवर्तनका अर्थ है घटना । इससे उसे अपवर्तनघात कहते हैं । उदय प्राप्त आयुके अपवर्तनको ही कदलीघात कहते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेळल्पट्टुदरिंदं । त्रिभागशेषमागुत्तं विरलायुर्ब्बंधम माळ्कुमेंबेकांतमिल्लों दु दु बंधप्रायोग्यमक्कुमें दरियल्पडुगुं ॥

एवमबंधे बंधे उवरदबंधेवि होंति भंगा हु ।
एक्कस्सेक्कम्हि भवे एक्काउं पडि तये णियमा ॥६४४॥

एवमबंधे बंधे उपरतबंधेपि भवंति भंगाः खलु । एकस्यैकस्मिन्भवे एकायुः प्रति त्रयो नियमात् ॥

यितो प्रकारदिंदं आयुर्ब्बंधदोळमबंधदोळमुपरतबंधदोळं स्फुटमागि भंगंगळप्पुवु । एकस्य ओंदु जीवक्के एकस्मिन् भवे ओंदु भवदोळु एकायुः प्रति ओंदायुष्यमं कुरुत्तु त्रयो भंगाः नियमात् नियमदिदं मूरु भंगंगळप्पुवु । अंतागुत्तं विरलु त्रैराशिकं माडल्पडुगुमदें तें दोडे नरकदेवगतियोळों दोंदायुष्यक्के अबंध बंध उपरतबंधमेंब मूरुं भंगंगलागुत्तं विरलेरडायुष्यक्केनितु भंगंगळप्पुवें दितो त्रैराशिकदिंदं प्र १ । फ ३ । इ २ । बंद लब्धं प्रत्येकमारारु भंगंगळप्पुवु । नरक ६ । सुर ६ । तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळोळों दों दायुष्यंगळगे मूरु मूरु भंगंगळागुत्तं विरलु नाल्कु नाल्कायुष्यंगळगेनितेनितु भंगंगळप्पुवें दितु त्रैराशिकं माडल्पडुत्तिरलु प्र १ । फ ३ । इ ४ । बंद लब्ध भंगंगळु तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळगे प्रत्येकं पन्नेरडु पन्नेरडु भंगंगळप्पुवु । ति १२ । म १२ । यितु नरकदेवगतिगळोळु बंधयोग्यंगळप्प तिर्य्यग्मनुष्यायुष्यंगळगं । तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळोळु बंधयोग्यंगळप्प नाल्कु नाल्कायुष्यंगळगं भंगसंदृष्टि रचने :—

नरकगति							तिर्य्यग्गति												
बं	०	ति	उप	०	म	उ	०	न	उ	०	ति	उ	०	म	उ	०	दे	उ	→
उ	न	न	न	न	न	न	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	ति	
स	१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२	

उदीयमानायुरपवर्तनस्यैव कदलीघाताभिधानात् । त्रिभागशेषे त्रिभागशेषे सत्यायुर्बन्धनात्येकांतो नास्ति तत्र तत्र योग्यतास्तीति ज्ञातव्यं ॥६४३॥

एवमुक्तरीत्यायुर्बन्धे अबन्धे उपरतबन्धे च स्फुटं एकजीवस्यैकभवे एकायुः प्रति त्रयो भंगा नियमाद्भवन्ति ॥६४४॥

तथा प्रत्येक तीसरा भाग शेष रहनेपर आयुका बन्ध करता ही है ऐसा एकान्त नहीं है। तीसरा भाग शेष रहनेपर आयुबन्धकी योग्यता होती है। उस कालमें आयु बँधे, न भी बँधे। किन्तु त्रिभागके सिवाय अन्यत्र आयुबन्ध नहीं होता, यह नियम है ॥६४३॥

इस तरह पूर्वोक्त रीतिके अनुसार एक जीवके एक भवमें एक आयुके नियमसे तीन भंग (भेद) होते हैं—बन्ध, अबन्ध, उपरतबन्ध। वर्तमानमें जहाँ परभव सम्बन्धी आगामी आयुका बन्ध होता है और एक भुज्यमान तथा एक बध्यमान इस तरह दो आयु पाई जाती हैं उसे बन्ध कहते हैं। जो परभव सम्बन्धी आयुका बन्ध न पहले हुआ और न वर्तमानमें हो रहा है वहाँ अबन्ध है। वहाँ एक भुज्यमान आयु ही पायी जाती है। जहाँ परभव सम्बन्धी आयुका बन्ध पूर्वमें हो चुका है, वर्तमानमें नहीं हो रहा वहाँ पूर्वबद्ध और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

←

मनुष्यगति												देवगति					
०	न	उ	०	ति	उ	०	म	उ	०	दे	उ	०	ति	उ	०	म	उ
म	म	म	म	म	म	म	म	म	म	म	म	दे	दे	दे	दे	दे	दे
१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२	१	२	२

एक्काउस्स तिभंगा संभवआऊहि ताडिदे णाणा।
जीवे इगि भवभंगा रूऊण गुणूणमसरिच्छे ॥६४५॥

एकायुषस्त्रिभंगाः संभवायुर्भिस्ताडिते नानाजीवे एक भव भंगा रूपोन गुणोनमसदृशे ॥

ई रचनेयोळोंदोंदायुष्यंगळगे मूरु मूरु भंगंगळप्पुवरिदं तत्तद्गतिसंभवायुष्यंगळिदं गुणिसुत्तं विरलु नानाजीवदोळेकभवभंगंगळ संख्येगळप्पुववरोळ सदृशभंगापेक्षेयोळु रूपोनगुणकारोन प्रमित भंगंगळप्पुवेंतेंदोडे नारकरुगळगे ओंदु तिर्य्यगायुष्यबंधक्के मूरु भंगंगळागुत्तं विरला गतियोळु बंधसंभवायुष्यंगळु तिर्य्यग्मनुष्यायुष्यंगळेरडेयप्पुवरिदमेरडरिदं गुणिसिदो ३। २। डारु भंगंगळप्पुवु ६। अवरोळपुनरुक्त भंगंगळेनितेंदोडे आ सर्व्वभंगंगळोळु रूपोन गुणोन ६–२। प्रमितंगळय्दप्पुवु। ५। तिर्य्यग्गतियोळु त्रिभंगमं संभवायुष्यंगळु नाल्करिदं गुणिसिदोडे ३। ४। पन्नेरडु भंगंगळप्पुवु। १२। मनुष्यगतियोळमंते पन्नेरडु भंगंगळप्पुववरोळु १२। रूपोन गुणोनंगळावोडे—१२। ४ १२। ४ तिर्य्यग्गतियोळं मनुष्यगतियोळमसदृशभंगंगळों भत्तु मों भत्तुमप्पुवु। ९। ९॥ देवगतियोळु त्रिभंगंगळं संभवायुष्यंगळिदं गुणिसिदो ३। २। डारु भंगंळप्पु ६ ववरोळु रूपोनगुणकार प्रमितंगळं २। कळेदोडे पंचभंगंगळप्पुवु। ५। संदृष्टि :—

ते एकैकायुषस्त्रयस्त्रयो भंगा विवक्षितगतौ बध्यमानत्वेन सम्भवदायुःसंख्यया गुण्यन्ते तदा नानाजीवेष्वेकैकभवभंगा भवन्ति। देवनारकगत्योः प्रत्येकं षट्। नरतिर्यग्गत्योः प्रत्येकं द्वादश द्वादशामी। असदृशेष्वपुनरुक्तेषु विवक्षितेषु रूपोनेन सम्भवदायुःसंख्यागुणकारेणोना भवन्ति। देवनारकगत्योः प्रत्येकं पंच पंच।

भुज्यमान दो आयुकी सत्ता है उसे उपरतबन्ध कहते हैं। इस प्रकार एक-एक आयुके तीन भंग होते हैं ॥६४४॥

इन एक-एक आयुके तीन-तीन भंगोंको विवक्षित गतिमें जितनी आगामी आयुका बन्ध सम्भव है उनकी संख्यासे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतने नाना जीवोंकी अपेक्षा एक-एक भव सम्बन्धी भंग होते हैं। सो देव और नरकगतिमें तिर्यंच और मनुष्य दो ही आयुका बन्ध सम्भव होनेसे दोसे तीन भंगोंको गुणा करनेपर छह-छह भंग होते हैं। मनुष्य और तिर्यञ्चगतिमें चारों आयुका बन्ध सम्भव है अतः चारसे तीन भंगोंको गुणा करनेपर बारह-बारह भंग होते हैं। असदृश अर्थात् अपुनरुक्त भंगोंकी विवक्षा होनेपर बध्यमान आयुकी संख्यारूप गुणकारमें एक घटानेपर जो प्रमाण रहे उतना पूर्वोक्त भंगोंमेंसे घटानेपर अपुनरुक्त भंग होते हैं। सो देवगति नरकगतिमें बध्यमान आयु दो गुणकार था उसमें एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ना	ति	म	दे
पुन । अपु.			
६ । ५	१२ । ९	१२ । ९	६ । ५

अनंतरमसदृशभंगसंख्येगळं नरकादिगतिगतिगळोळु पेळ्द भंगंगळं गुणस्थानदोळु योजिसिदपरु :—

पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु होंति मिच्छम्मि ।
णिरयाउबंधभंगेणूणा ते चेव बिदियगुणे ॥६४६॥

पंचनव नवपंचभंगा आयुश्चतुर्षु भवंति मिथ्यादृष्टौ । नरकायुर्बंधभंगेनोनास्ते चैव द्वितीय-गुणे ॥

नरतिर्यग्गत्योर्नव नव ॥६४५॥

घटानेपर एक रहा। पूर्वोक्त छह-छह भंगोंमें-से एक-एक घटानेपर पाँच-पांच अपुनरुक्त भंग होते हैं। इसी प्रकार मनुष्यगति और तिर्यञ्चगतिमें नौ-नौ भंग होते हैं।

विशेषार्थ—नरकगतिमें बन्ध एक मनुष्यायु, सत्ता दो मनुष्यायु नरकायु, अथवा बन्ध एक तिर्यंचायु, उदय एक नरकायु, सत्ता दो नरकायु तिर्यंचायु, इस तरह दो बन्धकी अपेक्षा भंग हैं। इसी प्रकार देवगतिमें नरकायुकी जगह देवायु कहना। अबन्धकी अपेक्षा मनुष्यायु तिर्यंचायुका बन्ध न होनेसे दो भंग हैं किन्तु दोनों समान हैं क्योंकि दोनोंमें बन्धका अभाव, उदय अपनी भुज्यमान आयु, सत्ता एक अपनी भुज्यमान आयु ये दो भंग होते हैं। अतः समान होनेसे दोनोंमें एक लिया। उपरतबन्धकी अपेक्षा पूर्वमें मनुष्यायु या तिर्यंचायुका बन्ध हुआ। उसकी अपेक्षा दो-दो भंग होते हैं। दोनोंमें बन्धका अभाव, उदय एक अपनी भुज्यमान आयु, सत्ता एक भंगमें अपनी भुज्यमान आयु और मनुष्यायु, दूसरे भंगमें अपनी भुज्यमान आयु और तिर्यंचायु इस प्रकार दो भंग हुए। इस प्रकार देव और नारकियोंमें पाँच-पांच अपुनरुक्त भंग होते हैं। इसी प्रकार मनुष्यगति और तिर्यंचगतिमें बध्यमान आयुके प्रमाणरूप चार गुणकार हैं। उनमें एक घटानेपर तीन रहे। सो पूर्वोक्त बारह-बारह भंगोंमें तीन-तीन घटानेपर नौ-नौ अपुनरुक्त भंग होते हैं। उनमें आयुबन्धकी अपेक्षा नरक तिर्यंच मनुष्य देवकी आयुके बन्धरूप चार भंग हैं। उनमेंसे बन्ध तो क्रमसे नरक तिर्यंच मनुष्य देव आयुका जानना। उदय तिर्यंचगतिमें तिर्यंचायुका और मनुष्यगतिमें मनुष्यायुका जानना। सत्ता एक भुज्यमान आयु और एक बध्यमान आयु इस तरह दो-दोकी जानना। उनमें भी जो आयु भुज्यमान हुई वही बध्यमान हो तो वहाँ एक आयुकी ही सत्ता होती है। ऐसे भंग चार हैं। आयुके अबन्धमें चारों आयुका बन्ध नहीं, इस अपेक्षा चार भंग हुए। परन्तु ये चारों समान हैं; क्योंकि सबोंमें बन्धका अभाव, उदय तथा सत्ता अपनी भुज्यमान आयु एक। अतः चारोंमें-से एक लिया। उपरत बन्धका अभाव, उदय व सत्ता जैसे बन्धकी अपेक्षा कहे वैसे ही जानना। इस प्रकार चार भंग हैं। इस प्रकार मनुष्य और तिर्यंचमें नौ-नौ भंग होते हैं॥६४५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपुनरुक्तभंगंगळु नरकादिचतुर्गतिगळोळु क्रमदिदं पंच नव नव पंच प्रमितंगळप्पुव-वनितुं मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु । मि । ५ । ९ । ९ । ५ । ई मिथ्यादृष्टिय भंगंगळोळु नरकायुर्बंध-भंगंगळं कळेदोडे आ भंगंगळु सासादननोळप्पुवु । सा ५ । ८ । ८ । ५ ॥

सव्वाउबंधभंगेणूणा मिस्सम्मि अयदसुरणिरये ।
णरतिरिये तिरियाऊ तिण्हाउगबंधभंगूणा ॥६४७॥

सर्व्वायुर्ब्बंधभंगेनोनाः मिश्रे असंयतसुरनारके नरतिरश्चि तिर्य्यगायुस्त्रितयायुर्ब्बंध-भंगेनोनाः ॥

मिश्रगुणस्थानदोळु सर्व्वायुर्ब्बंधभंगरहित भंगंगळप्पुवु । मिश्र । ३ । ५ । ५ । ३ ॥ सुर-नारकासंयतरोळं नरतिर्य्यगसंयतरोळं क्रमदिदं तिर्य्यगायुर्ब्बंधभंगंगळु नरतिर्य्यग्मनुष्यायुष्य-बंधभंगंगळु रहितमाद भंगंगळप्पुवेकेंदोडे 'उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे हवे णियमा' येंदितु तिर्य्यग्मनुष्यसासादननोळे व्युच्छित्तियादुवप्पुदरिदं । मिथ्यादृष्टियोळु नरकायुष्यं निंदुदु सासादननोळु सुरनरकगतिजरोळु तिर्य्यगायुष्यमुं तिर्य्यग्मनुष्यगतिजरुगळपेक्षेयिदं मनुष्यतिर्य्यगा-युष्यंगळुं व्युच्छित्तियादुवप्पुदरिदं अबंधायुर्भंगमोंदोंदुं तिर्य्यगायुरुपरतभंगमोंदोंदुं मनुष्या-युर्ब्बंधोपरतभंगंगळेरडेरडुमंतु नाल्कुनाल्कु भंगंगळप्पुवु । ना । सु । असं । ४ । ० । ० । ४ । (ति म) तिर्य्यग्-मनुष्यासंयतनोळु अबंधायुष्य भंगमोंदोंदुं नरकायुष्योपरतभंगमोंदोंदुं तिर्य्यगायुष्योपरत-बंधभंगमोंदोंदुं मनुष्यायुष्योपरतबंधभंगमोंदोंदुं देवायुष्यबंधोपरतभंगंगळेरडेरडुमंताराऱु भंगं-गळप्पुवु । ० । ६ । ६ । ० । (० न, ० दे) कूडि असंयतनायुस्त्रिसंयोग भंगंगळ संदृष्टि :—४ । ६ । ६ । ४ ॥

ते असदृशभंगा गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ नरकादिगतिषु क्रमेण पंच नव नव पंच भवन्ति । सासादने ते नरकायुर्बन्धभंगेनोनाः पंचाष्टाष्टपंच भवन्ति ॥६४६॥

मिश्रे ते सर्वायुर्बन्धभंगेनोनास्त्रयः पंच पंच त्रयो भवन्ति । असंयते सुरनारकयोस्तिर्यगायुर्बन्धभंगेनोना-श्चत्वारश्चत्वारः तयोस्तस्य सासादने छेदात् । नरतिरश्चोस्तु नरकतिर्यग्मनुष्यायुर्बन्धभंगेनोनाः षट् षट् तयोर्नरकायुर्बन्धस्य मिथ्यादृष्टौ, नरतिर्यगायुर्बन्धयोः सासादने च छेदात् ॥६४७॥

वे अपुनरुक्त भंग मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें नरक आदि गतियोंमें क्रमसे पाँच नौ-नौ पाँच जानना। दूसरे सासादन गुणस्थानमें मनुष्य तिर्यंचमें आयुबन्धकी अपेक्षा जो चार भंग कहे थे उनमेंसे नरकायुका बन्धरूप भंग न होनेसे नरकादि गतिमें क्रमसे पाँच आठ-आठ पाँच भंग होते हैं ॥६४६॥

मिश्र गुणस्थानमें जो आयुबन्धकी अपेक्षा भंग कहे थे वे सब घटानेपर नरकादि गतियोंमें क्रमसे तीन, पाँच, पाँच, तीन भंग होते हैं। असंयतमें देवगति नरकगतिमें आयुबन्धकी अपेक्षा तिर्यंचायुका बन्धरूप भंग नहीं है अतः चार भंग हैं क्योंकि तिर्यञ्चायुकी बन्धव्युच्छित्ति सासादनमें हो जाती है। तथा मनुष्यगति तिर्यंचगतिमें आयुबन्धकी अपेक्षा नरक तिर्यंच मनुष्यायुके बन्धरूप तीन भंग नहीं हैं। अतः छह-छह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देसणरे तिरिये तिय तिय भंगा होंति छट्ठसत्तमगे।
तियभंगा उवसमगे दो दो खवगेसु एक्केक्को ॥६४८॥

देशसंयतनरे तिरश्चि त्रयः त्रयो भंगा भवंति षष्ठे सप्तमे। त्रि त्रि भंगा उपशमकेषु द्वौ द्वौ क्षपकेष्वेकैको भंगः॥

मनुष्यदेशसंयतनोळु अबंधायुभंगमोंदुं देवायुर्बंधोपरतभंगद्वयमुमंतु त्रिभंगंगळप्पुवु। म। देश। ०। ०। ३। ०। तिर्य्यंच देशसंयतनोळु अबंधायुभंगमोंदुं देवायुर्बंधोपरतभंगद्वयमुमंतु त्रिभंगंगळप्पुवु। ति। देश। ०। ३। ०। ०। कूडि देशसंयतंगे। दे। ०। ३। ३। ०॥ षष्ठनोळं सप्तमनोळं देवायुरबंध बंधोपरतमेंब मूरु मूरुं भंगंगळप्पुवु। प्र। ०। ०। ३। ०। अ प्र। ०। ०। ३। ०। उपशमकरोळु प्रत्येकं देवायुरबंधोपरतबंधभेददेरडेरडुं भंगंगळप्पुवु। अ। अ। सू। उ। ०। ०। २। ०॥ क्षपकरोळु देवायुरबंधभंगमेकैकमेयक्कुं। क्षप। अ। अ। सू। क्षी। ०। ०। १। ०। सर्व्व संदृष्टि :— मि। ५। ९। ९। ५। सा। ५। ८। ८। ५। मि। ३। ५। ५। ३। अ। ४। ६। ६। ४। दे। ०। ३। ३। ०। प्र। ०। ०। ३। ०। अ। ०। ०। ३। ०। अ। उ। ०। ०। २। ०। क्ष। ०। ०। १। ०। अनि उ। ०। ०। २। ०। क्ष। ०। ०। १। ०। सू। उ। ०। ०। २। ०॥ क्ष। ०। ०। १। ०। उप। ०। ०। २। ०॥ क्षी। ०। ०। १। ०॥ सयो। ०। ०। १। ०॥ अयो। ०। ०। १। ०॥

अनंतरं मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु सर्व्वायुर्भंगयुतियं पेळ्दपरु :—

अड छव्वीसं सोलस वीसं छत्तिगतिगं च चदुसु दुगं।
असरिस भंगा तत्तो अजोगिअंतेसु एक्केक्को ॥६४९॥

अष्ट षड्विंशतिः षोडश विंशतिः षट्त्रिकत्रिकं च चतुर्षु द्विकं। असदृशभंगास्ततोऽयोग्यंतेष्वेकैकः॥

देशसंयते तिर्यग्मनुष्ययोरेव देवायुरबन्धबन्धोपरतबन्धभंगास्त्रयस्त्रयः। षष्ठे सप्तमे च त एव त्रयस्त्रयः उपशमकेषु देवायुरबन्धोपरतबन्धौ द्वौ द्वौ। क्षपकेष्वायुरबन्धभंग एकैकः॥६४८॥ अथ गुणस्थानेषु सर्वायुर्बन्धभंगयुतिमाह—

भंग हैं। क्योंकि नरकायुके बन्धका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें और मनुष्यायु तिर्यंचायुके बन्धका सासादनमें ही व्युच्छेद हो जाता है॥६४७॥

देशसंयतमें तिर्यंच और मनुष्योंमें देवायुके अबन्ध, बन्ध और उपरतबन्धकी अपेक्षा तीन-तीन भंग होते हैं। छठे और सातवें गुणस्थानमें मनुष्यगतिमें देवायुके ही बन्ध अबन्ध और उपरतबन्धकी अपेक्षा तीन-तीन भंग होते हैं। उपशमश्रेणिमें देवायुका बन्ध भी नहीं है। अतः देवायुके अबन्ध और उपरतबन्धकी अपेक्षा दो-दो भंग हैं। क्षपकश्रेणिमें उपरतबन्ध भी नहीं है। अतः अबन्धकी अपेक्षा एक-एक ही भंग है॥६४८॥

आगे गुणस्थानोंमें सब आयुबन्धके भंगोंका जोड़ कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टिसासादनरुगळोळु क्रमदिदमष्टाविंशतियुं षड्विंशतियुमप्पुवु। मिश्रनोळु षोडश प्रमितंगळुमप्पुवु। असंयतनोळु विंशति भंगंगळप्पुवु। देशसंयतनोळु षड्भंगंगळप्पुवु। प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु प्रत्येकं मूरु मूरु भंगंग ळप्पुवु। उपशमकचतुष्टयदोळु प्रत्येकमेरडेरडु भंगंगळप्पुवु। ई भंगंगळिनितुमसदृशभंगंगळेयप्पुवु। मेलेल्लेडेयोळमेकैकभंगमेयक्कुं। संदृष्टि—
मि २८। सा २६। मि १६। अ २०। दे ६। प्र ३। अ ३। अ २। १। अ २। १। सू २। १। उ २। क्षी १। स १। अ। १॥

अनंतरं वेदनीयगोत्रायुष्कर्म्मंगळ मिथ्यादृष्टयादिगुणस्थानंगळोळु सर्व्वभंगयुतियं पेळ्दपरु :

बादालं पणुवीसं सोलस अधियं सयं च वेयणिये।
गोदे आउम्मि हवे मिच्छादिअजोगिणो भंगा ॥६५०॥

द्विचत्वारिंशत्पंचविंशतिः षोडशाधिकशतं च वेदनीये। गोत्रे आयुषि भवेत् मिथ्यादृष्टयाद्ययोगिनां भंगाः॥

मिथ्यादृष्टयादियागि अयोगिकेवलि गुणस्थानावसानमाद सर्व्वगुणस्थानंगळोळु वेदनीयत्रिसंयोग भंगंगळु द्विचत्वारिंशत्प्रमितंगळप्पुवु। ४२। गोत्रदोळु पंचविंशतिप्रमितंगळप्पुवु। गो २५। आयुष्यदोळु षोडशाधिक शतप्रमितंगळप्पुवु। आ। ११६॥

अनंतरं पूर्व्वोक्तवेदनीयगोत्रायुष्यंगळ सामान्यमूल भंगंगळ संख्येयं पेळ्दपरु :—

वेयणिये अडभंगा गोदे सत्तेव होंति भंगा हु।
पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु विसरिच्छा ॥६५१॥

वेदनीयेऽष्टभंगा गोत्रे सप्तैव भवंति भंगाः खलु। पंच नव नव पंच भंगाः आयुश्चतुर्षु विसदृशाः॥

मिलित्वा असदृशभंगा मिथ्यादृष्टावष्टाविंशतिः। सासादने षड्विंशतिः, मिश्रे षोडश। असंयते विंशतिः। देशसंयते षट्। प्रमत्ताप्रमत्तयोस्त्रयस्त्रयः। उपशमकेषु द्वौ द्वौ। क्षपकेष्वेकैकः॥६४९॥ अथ वेदनीयगोत्रायुषां मिथ्यादृष्टयादिसर्वभंगयुतिमाह—

प्राग्मिथ्यादृष्टयाद्ययोगांतेषूक्तास्ते भंगा वेदनीये द्वाचत्वारिंशत्। गोत्रे पंचविंशतिः। आयुषि षोडशाग्रशतं॥६५०॥ अथ पूर्वोक्तानां वेदनीयगोत्रायुःसामान्यमूलभंगानां संख्यां कथयति—

मिलकर अपुनरुक्त भंग मिथ्यादृष्टिमें अठाईस, सासादनमें छब्बीस, मिश्रमें सोलह, असंयतमें बीस, देशसंयतमें छह, प्रमत्त और अप्रमत्तमें तीन-तीन, उपशमश्रेणिके गुणस्थानोंमें दो-दो और क्षपकश्रेणिके गुणस्थानोंमें अयोगी पर्यन्त एक-एक भंग होता है ॥६४९॥

आगे वेदनीय गोत्र और आयुके मिथ्यादृष्टि आदि सब गुणस्थानोंमें सब भंगोंका जोड़ कहते हैं—

पूर्वमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगी पर्यन्त गुणस्थानोंमें जो भंग कहे हैं उनका जोड़ देनेपर वेदनीयके बयालीस, गोत्रके पच्चीस और आयुके एक सौ सोलह भंग होते हैं ॥६५०॥

आगे पूर्वमें कहे वेदनीय गोत्र आयुके सामान्यसे मूल भंगोंकी संख्या कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदनीयदोळे दुं ८। गोत्रदोळ् ७। आयुष्यदोळु विसदृशभंगंगळ् नाल्कुं गतिगळायुष्यंगळु नाल्करोळं क्रमदिदं पंच नव नव पंच भंगंगळप्पुवु ॥

अनंतरं मोहनीयत्रिसंयोगभंगंगळं पेळ्दपरु :—

मोहस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु ।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ॥६५२॥

मोहस्य च बंधोदयसत्त्वस्थानानां सर्व्वभंगाः खलु प्रत्येकोक्तवद्भवेत् त्रिसंयोगेवि सर्व्वत्र ॥

मोहनीयकर्म्मक्केयुं बंधोदयसत्त्वस्थानंगळ सर्व्वं भंगंगळु त्रिसंयोगदोळं सर्व्वत्र प्रत्येक बंधोदयसत्त्वस्थानंगळोळु पेळ्दंते भंगंगळप्पुवंतागुत्तं विरलु गुणस्थानदोळु बंधोदयसत्त्वस्थान संख्येयं पेळ्दपरु :—

अट्ठसु एक्को बंधो उदया चदुतिदुसु चउसु चत्तारि ।
तिण्णि य कमसो सत्तं तिण्णेगदु चउसु पणगतियं ॥६५३॥

अष्टस्वेको बंधः उदयाश्चत्वारस्त्रयो द्वयोश्चतुर्षु चत्वारस्त्रयश्च क्रमशः सत्वं त्रीण्येकं द्वेचतुर्षु पंचत्रिकं ॥

अणियट्टी बंधतियं पण दुग एक्कारसुहुमउदयंसा ।
इगि चत्तारि य संते सत्तं तिण्णेव मोहस्स ॥६५४॥

अनिवृत्तेर्बंधत्रयं पंच द्विकैकादशसूक्ष्मोदयांशाः । एकं चत्वारश्च शांते सत्वं त्रीण्येव मोहस्य ॥

तेषु खलु विसदृशभंगा वेदनीयेऽष्टौ भवन्ति। गोत्रे सप्त, चतुष्कायुस्सु क्रमेण पंच नव नव पंच ॥६५१॥
अथ मोहनीयत्रिसंयोगभंगानाह—

मोहनीयस्य बन्धोदयसत्त्वस्थानसर्वभंगाः खलु त्रिसंयोगेऽपि सर्वत्र प्रत्येकोक्तवद्भवन्ति ॥६५२॥
अथ गुणस्थानेषु स्थानसंख्यामाह—

उन पूर्वोक्त भंगोंमें अपुनरुक्त मूल भंग वेदनीयमें आठ, गोत्रमें सात, चारों आयुमें क्रमसे पाँच, नौ-नौ पाँच होते हैं ॥६५१॥

अब मोहनीयके त्रिसंयोगी भंग कहते हैं—

मोहनीयके बन्ध-उदय-सत्त्व स्थानोंमें सब भंग जैसे पहले पृथक् बन्ध उदय-सत्त्वका कथन करते हुए कहे थे, वैसे ही बन्ध-उदय-सत्त्वके संयोगरूप त्रिसंयोगमें भी होते हैं ॥६५२॥

आगे गुणस्थानोंमें मोहनीयके स्थानोंकी संख्या कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टियादियागि अपूर्व्वकरणगुणस्थानपर्य्यंतमें टुं गुणस्थानंगळोळेकैकबंधस्थानमक्कुमुदयस्थानंगळु क्रमदिदमा येंटुं गुणस्थानंगळोळु नाल्कुमेरडेडेयोळु मूरु मूरुं नाल्केडेयोळु नाल्कु नाल्कुमों देडेयोळु मूरुमप्पुवु। सत्त्वस्थानंगळु क्रमदिदं मूरुमों दुमेरडुं नाल्केडेयोळय्दुमय्दुगळप्पुवु। ओंदेडेयोळु मूरु सत्त्वस्थानंगळप्पुवु। अनिवृत्तिकरणन बंधोदयसत्वंगळु क्रमदिदं पंचकमुं द्विकमुमेकादश स्थानंगळप्पुवु। सूक्ष्मसांपरायनोळुदयसत्त्वंगळु क्रमदिदमेकस्थानमुं चतुःस्थानंगळुमप्पुवु। उपशांतकषायनोळु सत्त्वस्थानंगळ्मूरप्पुवु। संदृष्टि :—

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ
बं	१	१	१	१	१	१	१	१	५	०	०
उ	४	३	३	४	४	४	४	३	२	१	०
स	३	१	२	५	५	५	५	३	११	४	३

अनंतरमी गुणस्थानंगळोळु पेळ्द बंधोदय सत्त्वंगळुमवावुवें दोडे पेळ्वपरु :—

बावीसं दसयचऊ अडवीसतियं च मिच्छबंधादी।
इगिवीसं णवयतियं अडुवीसे च बिदियगुणे ॥६५५॥

द्वाविंशतिर्द्दशादि चत्वारि अष्टाविंशतित्रयं मिथ्यादृष्टिब्बंधादीनि एकविंशतिर्न्नवकत्रिकमष्टाविंशतिरेव द्वितीयगुणे ॥

मिथ्यादृष्टियोळु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमों दे बंधमक्कुं। उदयस्थानंगळु दशादि चतुःस्थानंगळप्पुवु। सत्त्वस्थानंगळुमष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळप्पुवु। मि बं २२। उ १०। ९। ८। ७॥ स २८। २७। २६। उ ७। स २८॥ सासादनंगे एकविंशतिप्रकृतिबंधस्थानमों देयक्कु-

---

तत्राद्येष्वष्टसु बन्धस्थानान्येकैकं। उदयस्थानान्याद्ये चत्वारि। द्वयोस्त्रीणि त्रीणि, चतुर्षु चत्वारि चत्वारि। एकस्मिंस्त्रीणि भवन्ति। सत्त्वस्थानानि क्रमेण त्रीण्येकं द्वे चतुर्षु पंच पंच, एकस्मिंस्त्रीणि भवन्ति। अनिवृत्तिकरणे बन्धादित्रयस्थानानि पंच द्वे एकादश। सूक्ष्मसाम्पराये उदयस्थानमेकं सत्त्वस्थानानि चत्वारि। उपशान्तकषाये सत्त्वस्थानान्येव त्रीणि ॥६५३-६५४॥ तानि कानीति चेदाह—

मिथ्यादृष्टौ बन्धस्थानं द्वाविंशतिकं। उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशति-

---

पहले जो मोहनीयके बन्धस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान कहे थे उनमेंसे आदिके आठ गुणस्थानोंमें बन्धस्थान एक-एक है। उदयस्थान आदिके गुणस्थानोंमें चार, उससे ऊपर दोमें तीन-तीन, चारमें चार-चार एकमें तीन होते हैं। सत्त्वस्थान क्रमसे मिथ्यादृष्टिमें तीन, सासादनमें एक, मिश्रमें दो, ऊपर चार गुणस्थानोंमें पाँच-पाँच और एकमें तीन होते हैं। अनिवृत्तिकरणमें बँध उदय सत्त्वस्थान क्रमसे पाँच दो ग्यारह होते हैं। सूक्ष्म साम्परायमें उदयस्थान एक, सत्त्वस्थान चार हैं। उपशान्त कषायमें सत्त्वस्थान तीन हैं। बन्ध और उदयस्थान नहीं हैं ॥६५३-६५४॥

वे स्थान कौन हैं? यह कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें बन्धस्थान एक बाईसका है। उदयस्थान दस आदि चार हैं। सत्त्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुदयस्थानंगळु नवादित्रिस्थानंगळप्पुवु । सत्त्वस्थानंगळु अष्टाविंशतिस्थानमों देयक्कुं । सा । बं २१ । उ ९ । ८ । ७ । स २८ ॥

सत्तरसं णवयतियं अडचउवीसं पुणोवि सत्तरसं ।
णवचउ अडचउवीस य तिवीसतियमंसयं चउसु ॥६५६॥

सप्तदश नव त्रयमष्ट चतुर्विंशतिः पुनरपि सप्तदश नव चतुरष्ट चतुर्विंशतिश्च त्रयोविंशतित्रयमंशकं चतुर्षु ॥

मिश्रगुणस्थानदोळु सप्तदशप्रकृतिबंधस्थानमों देयक्कु । मुदयस्थानंगळु नवादित्रयमक्कुं । सत्त्वस्थानंगळुमष्टाविंशतियुं चतुर्विंशतिस्थानमुमप्पुवु । मिश्र बं । १७ । उ । ९ । ८ । ७ । स । २८ । २४ । असंयतनोळु पुनरपि सप्तदशप्रकृतिबंधस्थानमों देयक्कु । मुदयस्थानंगळु नवादि चतुःस्थानंगळक्कुं । सत्त्वस्थानंगळुमष्ट चतुर्विंशतिगळुं त्रयोविंशतित्रयमुमक्कुं । असं । बं १७ । उ । ९ । ८ । ७ । ६ । स । २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ ई सत्त्वस्थानंगळय्दुं मुंदे अप्रमत्तपर्य्यंतमप्पुवु ॥

तेरट्ठचऊ देसे पमदिदरे णव सगादिचत्तारि ।
तो णवगं छादितियं अडचउरिगिवीसयंच बंधतियं ॥६५७॥

त्रयोदशाष्टचत्वारि देशसंयते प्रमत्तेतरयोर्न्नव सप्तादि चत्वारि ततो नवकं षडादित्रिकमष्ट चतुर्विंशतिरेकविंशतिश्च बंधत्रिकं ॥

देशसंयतनोळु त्रयोदशबंधस्थानमों देयक्कु- मुदयस्थानंगळुमष्टादि चतुःस्थानंगळप्पुवु । सत्त्वस्थानंगळु असंयतनोळु पेळ्द पंचस्थानंगळप्पुवु । दे । बं १३ । ऊ ८ । ७ । ६ । ५ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरुगळोळु नव नव प्रकृतिबंधस्थानंगळों दों देयप्पुवु ।

कादीनि त्रीणि । सासादने बन्धस्थानमेकविंशतिकं । उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि । सत्त्वस्थानमष्टाविंशतिकमेव ॥६५५॥

मिश्रे बन्धस्थानं सप्तदशकं । उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे । असंयते पुनः बन्धस्थानं सप्तदशकं । उदयस्थानानि नवकादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुर्दशविंशतिके द्वे, त्रयोविंशतिकादित्रयं च । इमान्येव पंचाप्रमत्तांतं ज्ञेयानि ॥६५६॥

देशसंयते बन्धस्थानं त्रयोदशकं । उदयस्थानान्यष्टकादीनि चत्वारि । प्रमत्ताप्रमत्तयोर्बंधस्थानं नवकं ।

स्थान अठाईस आदि तीन हैं। सासादनमें बन्धस्थान एक इक्कीसका ही है। उदयस्थान नौ आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान अठाईसका ही है ॥६५५॥

मिश्रमें बन्धस्थान एक सतरहका ही है। उदयस्थान नौ आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान अठाईस और चौबीस दो हैं। असंयतमें बन्धस्थान सतरहका एक ही है। उदयस्थान नौ आदि चार हैं। सत्त्वस्थान अठाईस चौबीस दो, और तेईस आदि तीन, इस तरह पाँच हैं। ये ही पाँच सत्त्वस्थान अप्रमत्त पर्यन्त जानना ॥६५६॥

देशसंयतमें बन्धस्थान तेरहका एक ही है। उदयस्थान आठ आदि चार हैं। सत्त्व-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदयस्थानंगळु सप्तादि चतुःस्थानंगळु प्रत्येकमप्पुवु । सत्त्वस्थानंगळु पूर्वोक्तासंयतन पंच पंच स्थानंगळप्पुवु । प्र । बं ९ । उ ७ । ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ अप्र बं ९ । उ ७ । ६ । ५ । ४ । सत्व २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ ततः अल्लिदत्त अपूर्वकरणगुणस्थानदोळु नवबंधस्थानमों देयक्कुं । उदयस्थानंगळु षडादित्रितयमक्कुं । सत्त्वस्थानंगळुमष्ट चतुरेकविंशतिगळक्कुं । अपू बं ९ । उ ६ । ५ । ४ । सत्व २८ । २४ । २१ ॥ क्ष २१ ॥

पंचादिपंचबंधो णवमगुणे दोण्णि एक्कमुदयो दु ।
अट्ठचदुरेक्कवीसं तेरादीअट्ठयं सत्तं ॥६५८॥

पंचादि पंचबंधो नवमगुणे द्वे एका उदयस्तु । अष्ट चतुरेकविंशतिस्त्रयोदशादीन्यष्ट सत्वं ॥

नवमगुणस्थानदोळु पंचप्रकृत्यादिपंचबंधस्थानंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळु द्विप्रकृतिस्थानमुमेकप्रकृतिस्थानमुमक्कुं । सत्वस्थानंगळुमष्ट चतुरेकविंशतिस्थानंगळप्पुवु क्षपकश्रेणियोळे त्रयोदशाद्यष्टस्थानं गळप्पुवु । अनि । बं । ५ । ४ । ३ । २ । १ । उ । २ । १ । सत्व २८ । २४ । २१ ॥ क्ष । २१ । १३ । १२ । ११ । ५ । ४ । ३ । २ । १ ॥

लोहेक्कुदओ सुहुमे अडचउरिगिवीसमेक्कयं सत्तं ।
अडचउरिगिवीसंसा संते मोहस्स गुणठाणे ॥६५९॥

लोभैकोदयः सूक्ष्मे अष्टचतुरेकविंशतिरेकं सत्वं । अष्टचतुरेकविंशत्यंशाः शांते मोहस्य गुणस्थाने ॥

सूक्ष्मसांपरायनोळु मोहनीयस्य मोहनीयद लोभैकोदयः सूक्ष्मैकलोभोदयमक्कुं । सत्वमष्ट चतुरेक विंशतिगळु मेकप्रकृतिस्थानमुमक्कुं । सूक्ष्म बं उ १ । सत्व २८ । २४ । २१ । १ ॥ उपशांते

उदयस्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि । ततोऽपूर्वकरणे बन्धस्थानं नवकं । उदयस्थानानि षट्कादीनि त्रीणि । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रीणि । क्षपकेऽप्येकविंशतिकं ॥६५७॥

नवमगुणे बन्धस्थानानि पंचकादीनि पंच । उदयस्थानानि द्विकैकके द्वे । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि । क्षपके त्रयोदशकादीन्यष्टौ । उपरि बन्धो नास्ति ॥६५८॥

सूक्ष्मसाम्पराये उदयस्थानं सूक्ष्मलोभः । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकान्येककं च । उपरि

स्थान पाँच हैं । प्रमत्त-अप्रमत्तमें बन्धस्थान एक नौका ही है । उदय स्थान सात आदि चार हैं । सत्त्वस्थान पाँच हैं । अपूर्वकरणमें बन्धस्थान एक नौका ही है । उदयस्थान छह आदि तीन हैं । सत्त्वस्थान अठाईस चौबीस इक्कीस तीन हैं ।

क्षपकमें भी इक्कीसका ही है ॥६५७॥

नवम गुणस्थानमें बन्धस्थान पाँच आदि पांच हैं । उदयस्थान दो और एक प्रकृतिरूप दो हैं । सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस इक्कीस तीन हैं । क्षपणश्रेणिवालेके तेरह आदि आठ सत्त्वस्थान हैं । ऊपर मोहके बन्धका अभाव है ॥६५८॥

सूक्ष्मसाम्परायमें उदयस्थान एक सूक्ष्मलोभ रूप ही है । सत्त्वस्थान अठाईस चौबीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणस्थाने उपशांतकषायगुणस्थानदोळु मोहस्य मोहनीयद सत्वस्थानंगळु अष्टचतुरेकविंशति त्रिस्थानंगळप्पुवु । बं । उ ० । सत्व । २८ । २४ । २१ ॥ संदृष्टि :—मि बं २२ । उ १० । ९ । ८ । ७ । स २८ । २७ । २६ ॥ उ ७ । स २८ ॥ सासा । बं २१ । उ ९ । ८ । ७ । स २८ ॥ मि बं १७ । उ ९ । ८ । ७ । स २८ । २४ ॥ असं बं १७ । उ ९ । ८ । ७ । ६ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ देश बं । १३ । उ ८ । ७ । ६ । ५ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ प्र बं ९ । उ ७ । ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ अप्र. बं । ९ । उ ७ । ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ अपू बं ९ । उ ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २१ ॥ क्ष २१ ॥ अनि बं ५ । ४ । ३ । २ । १ । उ २ । १ । स २८ । २४ । २१ ॥ क्ष २१ । १३ । १२ । ११ । ५ । ४ । ३ । २ । १ ॥ सू बं । ० । उ १ । सत्व २८ । २४ । २१ । क्ष १ । उपशांत बं । ० । उ ० । सत्व २८ । २४ । २१ ॥ क्षीणकषायादिगळोळु मोहबंधोदयसत्वं सर्व्वथाऽभावमक्कुं ॥

अनंतरं मोहनीयबंधोदयसत्वस्थानंगळगे त्रिसंयोग विशेषमं पेळदपरु :—

बंधपदे उदयंसा उदयट्ठाणेवि बंधसत्तं च ।
सत्ते बंधुदयपदं इगिअधिकरणे दुगादेज्जं ॥६६०॥

बंधपदे उदयांशाः उदयस्थानेपि बंध सत्वं च । सत्वे बंधोदयपदमेकाधिकरणे द्वयादेयं ॥

बंधस्थानदोळुदयसत्वस्थानंगळुमुदयस्थानदोळु बंधसत्वस्थानंळुं सत्वस्थानदोळु बंधोदयस्थानंगळु इंतु एकाधिकरणमागुत्तं विरलुद्वयादेयमक्कु—

बंध	उद	सत्व
उ । स	बं । स	बं । उ

अनंतरं यथोद्देशस्तथा निर्द्देश एंदितु बंधस्थानदोळु उदयसत्वस्थानंगळं योजिसिदपरु :—

मोहोदयो नास्ति । उपशान्तकषाये सत्त्वस्थानान्येवाष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि । उपरि मोहसत्त्वं नास्ति ॥६५९॥
अथ मोहनीयबन्धोदयसत्त्वस्थानानां त्रिसंयोगविशेषमाह—

बन्धस्थाने उदयसत्त्वस्थानद्वयं, उदयस्थाने बन्धसत्त्वस्थानद्वयं, सत्त्वस्थाने बन्धोदयस्थानद्वयमित्येकाधिकरणे द्वयमाधेयं भवति ॥६६०॥

इक्कीस और क्षपकके एक प्रकृतिरूप एक ही है। ऊपर मोहका उदय नहीं है। उपशान्तकषायमें सत्त्वस्थान ही अठाईस चौबीस इक्कीस तीन जानना। ऊपर मोहका सत्त्व नहीं है ॥६५९॥

आगे मोहनीयके बन्ध उदय सत्त्वस्थानोंके त्रिसंयोगमें जो विशेष है उसे कहते हैं—

बन्धस्थानमें उदयस्थान सत्त्वस्थान ये दो, उदयस्थानमें बन्धस्थान सत्त्वस्थान दो और सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान उदयस्थान दो, इस तरह एक अधिकरणमें दो आधेय हैं ॥६६०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बावीसयादिबंधेसुदयंसा चदु तितिगि चऊ पंच ।
तिसु इगि छद्दो अट्ठ य एक्कं पंचेव तिट्ठाणे ॥६६१॥

द्वाविंशत्यादिबंधेषूदयांशाश्चतुः त्रित्र्येकं चतुःपंच । त्रिष्वेक षट् द्व्यष्टौ च एक पंचैव त्रिस्थाने ॥

द्वाविंशत्यादि प्रकृतिबंधस्थानाधिकरणंगळोळु उदयांशंगळु क्रमदिदं चतुस्त्रितयंगळुं त्र्येकंगळं त्रिषु मूरेडेयोळु चतुःपंचस्थानंगळुं एकषट्स्थानंगळुं द्व्यष्टस्थानंगळं त्रिस्थानदोळु एकपंचस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि :—

बं	२२	२१	१७	१३	९	५	४	३	२	१
उ	४≡	३	४	४	४	१	२	१	१	१
सत्व	३	१	५	५	५	६	८	५	५	५

अनंतरमुदितादेयभूतोदयसत्त्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

दसयचऊ पढमतियं णवतियमडवीसयं णवादिचऊ ।
अडचउतिदुइगिवीसं अडचउ पुव्वंव सत्तं तु ॥६६२॥

दशकचतुः प्रथमत्रिकं नवत्रयमष्टाविंशतिः नवादिचतुरष्ट चतुस्त्रिद्व्येकविंशतिरष्टावि चत्वारि पूर्व्ववत्सत्वं तु ॥

द्वाविंशतिबंधकंगे दशादिचतुरुदयस्थानंगळु प्रथमत्रयसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु । बं २२ । उ १० । ९ । ८ । ७ । स ८ । २७ । २६ ॥ एकविंशतिबंधकंगे नवादित्रयोदयस्थानंगळुमष्टाविंशतिसत्त्वस्थानमों देयक्कुं । बं २१ । उ ९ । ८ । ७ । स २८ ॥ सप्तदशबंधकंगे नवादिचतुरुदयस्थानंगळु

तत्र तावद्बंधस्थानेषु द्वाविंशतिकादिषूदयसत्त्वस्थानान्यांशे चत्वारि त्रीणि, द्वितीये त्रीण्येकं, त्रिषु प्रत्येकं चत्वारि पंच, एकस्मिन्नेकं षट्, अन्यस्मिन् द्वे अष्टौ, त्रिष्वेकं पंच ॥६६१॥

तानि द्वाविंशतिके उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ।

प्रथम बन्धस्थानमें उदय और सत्त्वस्थान कहते हैं—बाईस आदि बन्धस्थानोंमें-से प्रथम बाईसके स्थानमें उदयस्थान आदिके चार सत्त्वस्थान तीन हैं। दूसरे बन्धस्थानमें उदयस्थान तीन सत्त्वस्थान एक है। आगे तीन बन्धस्थानोंमें-से प्रत्येकमें उदयस्थान चार सत्त्वस्थान पाँच हैं। आगे एक बन्धस्थानमें उदयस्थान एक सत्त्वस्थान छह हैं। अन्य एक बन्धस्थानमें उदयस्थान दो सत्त्वस्थान आठ हैं। तीन बन्धस्थानोंमें उदयस्थान एक, सत्त्वस्थान पाँच हैं ॥६६१॥

बाईसके बन्धस्थानमें उदयस्थान दस आदि चार हैं। सत्त्वस्थान अठाईस आदि तीन हैं। अर्थात् जिस जीवके जिस कालमें बाईसका बन्ध है उसके उदय दसका या नौका, या आठका या सातका होता है। और सत्त्व अठाईसका या सत्ताईसका या छब्बीसका

१. पूर्व्वस्मिन्मुक्तादेय—अनंतानुबंधिरहित सहितमिथ्यादृष्टिय उदयकूट ८ रोळगे संख्यासादृश्यककूटंगळु ४ । पुनरुक्तंगळ सासादनादिगळोळं यितु पुनरुक्तंगळंयोजिसि कोळ्कुवुदु ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मष्टचतुस्त्रिद्वयेकविंशतिसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु। बं १७। उ९।८।७।६॥ सत्त्व २८। २४। २३। २२। २१॥ त्रयोदशबंधकंगे अष्टादिचतुरुदयस्थानंगळु पूर्व्वोक्तसत्त्वस्थानपंचकमुमक्कुं। बं १३। उ।८।७।६।५। स २८। २४। २३। २२। २१॥

सगचउ पुव्वं वंसा दुगमडचउरेक्कवीस तेरतियं।
दुगमेक्कं च य सत्तं पुव्वं वा अत्थि पणगदुगं ॥६६३॥

सप्तचत्वारि पूर्व्ववदंशाः द्विकमष्ट चतुरेकविंशति त्रयोदश त्रयं द्विकमेकं च च सत्त्वं पूर्व्ववदस्ति पंचद्विकं॥

नवबंधकनोळु सप्तादिचतुरुदयस्थानंगळुं पूर्व्वोक्तसत्त्वस्थानगळे अप्पवु। बं ९। उ७। ६।५।४। स २८। २४। २३। २२। २१। पंचबंधकनोळु द्विप्रकृत्युदयस्थानमोंदेयक्कुं। अष्टचतुरेकविंशतित्रयोदशादित्रितयमुं सत्त्वस्थानंगळप्पुवु। बंध ५। उ २। स २८। २४। २१। १३। १२। ११॥ चतुर्बंधकनोळु द्विकैकप्रकृत्युदयस्थानंगळुं पूर्व्ववत्सत्त्वस्थानगळप्पुवु॥ मत्तं पंचादिद्विस्थानंगळुमुंटु। बं ४। उ २। १। स २८। २४। २१। १३। १२। ११। ५। ४॥

तिसु एक्केक्कं उदओ अडचउरिगिवीससत्तसंजुत्तं।
चदु तिदयं तिदयदुगं दो एक्कं मोहणीयस्स ॥६६४॥

त्रिष्वेकैकदयोष्टचतुरेकविंशतिसत्त्वसंयुक्तं। चतुस्त्रितयं त्रितयद्विकं द्वयेकं मोहनीयस्य॥

एकविंशतिके उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानमष्टाविंशतिकं। सप्तदशके उदयस्थानानि नवकादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुस्त्रिद्वयेकाग्रविंशतिकानि। त्रयोदशके उदयस्थानान्यष्टादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच ॥६६२॥

नवके उदयस्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच पंच। पंचके उदयस्थानं द्विकं। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च। चतुष्के उदयस्थानानि द्विकैकके द्वे। सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि षट्। पुनः पंचकादिद्वयं च ॥६६३॥

होता है। इक्कीसके बन्धस्थानमें उदयस्थान नौ आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान एक अठाईसका है। सतरहके बन्धस्थानमें उदयस्थान नौ आदि चार हैं। सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीस पाँच है। तेरहके बन्धस्थानमें उदयस्थान आठ आदि चार हैं। सत्त्वस्थान पूर्वोक्त पाँच हैं ॥६६२॥

नौके बन्धस्थानमें उदयस्थान सात आदि चार हैं। सत्त्वस्थान पूर्वोक्त पाँच हैं। पाँचके बन्धस्थानमें उदयस्थान दोका है। सत्त्वस्थान उपशमकके अठाईस, चौबीस, इक्कीस तीन और क्षपकके तेरह आदि तीन इस प्रकार छह हैं। चारके बन्धस्थानमें उदयस्थान दो और एक प्रकृतिरूप हैं, सत्त्वस्थान पूर्वोक्त छह तथा पाँच आदि दो, इस प्रकार आठ हैं ॥६६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिबंधकनोळं द्विबंधकनोळं एकबंधकनोळमितु त्रिस्थानकंगळोळु प्रत्येकमेकैकप्रकृत्युदयमेयक्कुं। प्रत्येकं सत्त्वस्थानंगळुमष्टचतुरेकविंशतिस्थानत्रययुतंगळप्प चतुस्त्रितयंगळुं त्रितयद्विकंगळुं द्वयेकसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु। बं ३। उ १। स २८। २४। २१। ४। ३॥ द्विबंधकनोळु बं २। उ १। स २८। २४। २१। ३। २। एकबंधकनोळु बं १। उ १। स २८। २४। २१।२।१॥

इंतु मोहनीयद बंधाधिकरणोदयसत्त्वादेयं प्रतिपादितमाय्तु। ई बंधस्थानाधिकरणदोळु गुणस्थानविवक्षेयिंदमी रचनाविशेषदिंदमरियल्पडुगे। बं २२। उ १०। ९। ८। ७। स २८। २७। २६॥ बं २१। उ ९। ८। ७॥ स २८॥ बं १७। उ ९। ८। ७। स २८। २४॥ बं १७। उ ९। ८। ७। ६। स २८। २४। २३। २२। २१॥ बं १३। उ ८। ७। ६। ५। स २८। २४। २३। २२। २१॥ बं ९। उ ७। ६। ५। ४। स २८। २४। २३। २२। २१॥ बं ९। उ ७। ६। ५। ४। स २८। २४। २३। २२। २१॥ बं ९। उ ६। ५। ४। स २८। २४। २१॥ बं ५। उ २। स २८। २४। २१। १३। १२। ११॥ बंध ४। उ २। १॥ स २८। २४। २१। १३। १२। ११। ५। ४॥ बं ३। उ। १। स २८। २४। २१। ४। ३॥ बं २। उ १। सत्त्व २८। २४। २१। ३। २॥ बं १। उ १। स २८। २४। २१। २। १। सू बं। ०। उ। सू। लो १। स २८। २४। २१। १॥ इल्लि बंधकूट

२
२। २
१ १ १
१६
१

उदयकूट

२
२। २
१ १ १
४। ४। ४। ४
१

ई बंधोदयकूटंगळोळु तत्तद्गुणस्थानदोळु व्युच्छित्तिगळनरिदु बंधस्थानंगळुमनुदयस्थानंगळुमं योजिसिकोंबुदु॥

अनंतरमुदयाधिकरणं बंधसत्त्वादेयप्रकारमं पेळ्दपरु :—

त्रिकद्विकैककेषूदयस्थानमेककं सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रीण्यपि त्रिके चतुष्कत्रिकाग्राणि। द्विके त्रिकाद्विकाग्राणि, एकके द्विकैककाग्राणि। अयं बन्धाधिकरणोदयसत्त्वाधेयभंगो गुणस्थानविवक्षयापि तत्प्रकृतीनां बन्धोदयव्युच्छित्तिक्षपणोद्वेल्लनाभ्यां सत्त्वव्युच्छित्तिं च स्मृत्वा वक्तव्यः ॥६६४॥ अथोदयाधिकरणबन्धसत्त्वाधेयभंगमाह—

तीन दो और एक प्रकृतिरूप तीन बन्धस्थानोंमें उदयस्थान एक प्रकृति रूप ही है। सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, इक्कीस ये तीन तथा तीनके बन्धस्थानमें चारका या तीनका इस तरह पांच हैं। दोके बन्धस्थानमें दोका और तीनका, इस तरह पाँच हैं। एकके बन्धस्थानमें दोका, एकका इस तरह पांच हैं।

यहाँ बन्धस्थान अधिकरण हैं और उदय सत्त्व आधेय हैं। उनका कथन गुणस्थान विवक्षाके द्वारा किया है। तथापि उन-उन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति, उदयव्युच्छित्ति, क्षपण और उद्वेलनाके द्वारा हुई सत्त्वव्युच्छित्तिको स्मृतिमें रखकर उनका कथन करना चाहिए ॥६६४॥

आगे उदयस्थानको अधिकरण और बन्ध तथा सत्त्वको आधेय बनाकर भंगोंका कथन करते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दसयादिसु बंधंसा इगितियतिय छक्क चारिसत्तं च ।
पण पण तिय पण दुग पणमिगितिग दुग छच्चऊ णवयं ॥६६५॥

दशादिषु बंधांशाः एक त्रिकत्रिकषट्कचतुः सप्त पंच पंच त्रिक पंच द्विक पंच एक त्रिक द्विक षट् चत्वारि नवकं ॥

उदयस्थानाधिकरणदोळु दशाद्युदयस्थानंगळोळु आदेयभूतबंधसत्त्वंगळु एक त्रिकमुं त्रिषट्कमुं चतुः सप्तकमुं पंच पंचकंगळं त्रिपंचकंगळुं द्विपंचकंगळुं एकत्रिकमुं द्विषट्कमुं चतुर्नव-बंधसत्त्वस्थानसंख्येगळु क्रमदिंदप्पुवु । संदृष्टि :—

उ	१०	९	८	७	६	५	४	२	१
बं	१	३	४	५	३	२	१	२	४
स	३	६	७	५	५	५	३	६	९

अनंतरमादेयभूतबंधसत्त्वसंख्याविषयस्थानंगळं पेळदपरु :—

पढमं पढमतिचउपण सत्तरतिगचदुसु बंधयं कमसो ।
पढमति छस्सगमडचउतिदुइगि बीसस्सयं दोसु ॥६६६॥

प्रथमं प्रथमत्रिचतुःपंचसप्तदशत्रिकं चतुर्षु बंधकं क्रमशः । प्रथमत्रिषट्सप्ताष्ट चतुस्त्रिद्वयेक-विंशतिर्द्वयोः ॥

प्रथमं द्वाविंशति प्रकृतिबंधस्थानमोदक्कुं । नवादि चतुरुदयस्थानंगळोळु क्रमदिदं बंधस्था-नंगळु प्रथमादि त्रिस्थानंगळुं प्रथमादिचतुःस्थानंगळुं प्रथमादिपंचस्थानंगळुं सप्तदशादित्रिस्थानंग-ळुमप्पुवु । सत्त्वस्थानंगळमल्लि क्रमदिदं प्रथमत्रिस्थानंगळुं प्रथमषट्स्थानंगळुं प्रथमसप्तस्थानंगळु अष्टचतुस्त्रिद्वयेकविंशत्यंशंगळुमेरडेडेयोळप्पुवु ॥

उदयस्थानेषु दशकादिषु क्रमेण बन्धसत्त्वस्थानानि एकत्रिकं त्रिकषट्कं चतुःसप्तकं पंचपंचकं त्रिपंचकं द्विपंचकं एकत्रिकं द्विषट्कं चतुर्नवकं ॥६६५॥ तानि कानीति चेदाह—

दशकादिषु पंचसु क्रमेण बन्धस्थानानि द्वाविंशतिकं तदादित्रयं तदादिचतुष्कं तदादिपंचक सप्त-दशकादित्रयं च भवन्ति । सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशतिकादित्रयं तदादिषट्कं तदादिसप्तकं अष्टचतुस्त्रिद्वयेकाग्रविंश-

दस आदि उदयस्थानोंमें क्रमसे बन्धस्थान और सत्त्वस्थान एक तीन, तीन छह, चार सात, पाँच-पाँच, तीन पाँच, दो पाँच, एक तीन, दो छह और चार नौ होते हैं ॥६६५॥

वे कौनसे हैं, यह कहते हैं—

दस आदि पाँच उदय स्थानोंमें-से पहलेमें बन्धस्थान बाईसका होता है अर्थात् जिस जीवके जिस कालमें दसका उदय होता है उसके उस कालमें बाईसका ही बन्ध है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना। दूसरेमें बन्धस्थान बाईस आदि तीन हैं। तीसरेमें बाईस आदि चार हैं। चौथेमें बाईस आदि पाँच हैं। पाँचवेंमें सतरह आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान पहले उदयस्थानमें अठाईस आदि तीन हैं। अर्थात् जिस समय दसका उदय है उस समय किसीके अठाईसका, किसीके सत्ताईसका और किसीके छब्बीसका सत्त्व पाया जाता है। दूसरेमें अठाईस आदि छहका सत्त्व है। तीसरेमें अठाईस आदि सातका सत्त्व है। चौथे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेरदु पुव्वंवंसा णवमडचउरेक्कवीससत्तमदो ।
पणदुगमडचउरेक्कावीसं तेरसतियं सत्तं ॥६६७॥

त्रयोदशद्वयं पूर्व्वंबदंशाः नवाष्टचतुरेकविंशतिसत्त्वमतः । पंचद्वयमष्टचतुरेकविंशति त्रयोदशत्रिकं सत्त्वं ॥

पंचोदयस्थानदोळु त्रयोदशादि द्विस्थानबंधमुं पूर्व्वोक्तांशंगळय्दुमप्पुवु । चतुरुदयस्थान-दोळु नवबंधस्थानमों दु अष्टचतुरेकविंशतिसत्वस्थानत्रितयमुमक्कु-। मतः परं द्विप्रकृत्युदयस्थान-दोळु पंचादिद्विबंधस्थानंगळुमष्टचतुरेकविंशतिसत्वस्थानंगळु त्रयोदशादित्रिस्थानसत्वंगळप्पुवु ॥

चरिमे चदुतिदुरेक्कं अट्ठ य चदुरेक्कसंजुदं वीसं ।
एक्कारादी सव्वं कमेण ते मोहणीयस्य ॥६६८॥

चरमे चतुस्त्रिद्वयेकमष्टचतुरेकसंयुता विंशतिरेकादशादि सर्व्वं क्रमेण तानि मोहनीयस्य ॥

चरमैकोदयस्थानदोळु चतुस्त्रिद्वयेकबंधस्थानचतुष्टयमुमष्टचतुरेकसंयुतविंशतिगळुं एकादशादि तन्मोहनीयद सर्व्वसत्वस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि । उ १० । बं २२ । स २८ । २७ । २६ । उ ९ । बं २२ । २१ । १७ । १३ । स २८ । २७ । २६ । २४ । २३ । २२ । २१ । उ ८ । बं २२ । २१ । १७ । १३ । स २८ । २७ । २६ । २४ । २३ । २२ । २१ । उ ७ । बं २२ । २१ । १७ । १३ । ९ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । उ ६ । बं १७ । १३ । ९ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । उ ५ । बं १३ । ९ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ ॥ उ ४ । बं ९ । स २८ । २४ । २१ । उ २ । बं ५ । ४ । स २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ । उ १ । बं ४ । ३ । २ । १ । सत्व २८ । २४ । २१ । ११ । ५ । ४ । ३ । २ । १ ॥ इंतुदयाधिकरणदोळु बंधसत्वादेयप्रकारं निरूपितमादुदु ॥

तिकानि पंच द्वयोर्भवन्ति ॥६६६॥

पंचके बन्धस्थानानि त्रयोदशकादिद्वयं सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच । चतुष्के बन्धस्थानं नवकं, सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि । अतः परं द्विकबन्धस्थानानि पंचकादिद्वयं सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च ॥६६७॥

एकके बन्धस्थानानि चतुष्कत्रिकद्विकैककानि । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि एकादशकादीनि

पाँचवेंमें अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस, इक्कीसके पाँच-पाँच सत्त्व है ॥६६६॥

पाँचके उदयस्थानमें बन्धस्थान तेरह आदि दो हैं। सत्त्वस्थान पूर्वोक्त पाँच हैं। चारके उदयस्थानमें बन्धस्थान नौका ही है। सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, इक्कीसके तीन हैं। आगे दोके उदयस्थानमें बन्धस्थान पाँच आदि दो हैं। सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, इक्कीस तथा तेरह आदि तीन, इस प्रकार छह हैं ॥६६७॥

अन्तिम एकके उदयस्थानमें बन्धस्थान चार तीन दो एक ये चार हैं। सत्त्वस्थान अठाईस चौबीस इक्कीस और ग्यारह आदि छह इस प्रकार नौ हैं वे सब मोहनीयके जानना ॥६६८॥

---

१. (ताड. पंक्ति :—९) एंबय्दु सत्वस्थानंगळु (इत्यस्य टिप्पणस्य संबंधो न ज्ञायते)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमाधारभूत सत्वस्थानंगळोळादेयभूतबंधोदयस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

सत्तपदे बंधुदया दस णव इगिति दुसु अडड तिपण दुसु ।
अडसगदुगि दुसु बिबिगिगि दुगि तिसु इगिसुण्णमेक्कं च ॥६६९॥

सत्वपदे बंधोदयाः दश नवैक त्रिद्वयोष्टाष्टत्रिपंचद्वयोः। अष्टसप्तद्वयेकं द्वयोर्द्विद्विरेकैकं द्वयेकं त्रिष्वेक शून्यमेकं च ॥

अष्टाविंशतिसत्वस्थानाधारदोळु आदेयबंधोदयस्थानंगळु क्रमदिदं दशनवबंधस्थानंगळु पत्तुं उदयस्थानंगळुमों भत्तुमप्पुवु

स	२८
बं	१०
उ	९

एक द्वित्रिद्वयोः सप्तविंशतिसत्वस्थानाधारदोळं षड्विंशतिसत्वस्थानाधारदोळं एकैक बंधस्थानंगळुं त्रित्र्युदयस्थानंगळुमप्पुवु

स	२७	२६
बं	१	१
उ	३	३

चतुर्विंशतिसत्वस्थानाधारदोळु अष्टाष्ट अष्टबंधस्थानंगळु मष्टोदयस्थानंगळुमप्पुवु

स	२४
बं	८
उ	८

त्रिपंचद्वयोः त्रयोविंशतिसत्वस्थानाधारदोळं द्वाविंशतिसत्वस्थानाधारदोळं प्रत्येकं त्रिपंचबंधोदयस्थानंगळप्पुवु।

स	२३	स	२२
बं	३	बं	३
उ	५	उ	५

अष्टसप्तएकविंशति सत्वस्थानाधारदोळु बंधोदयस्थानंगळेंटु मेळुमप्पुवु :—

स	२१
बं	८.
उ	७

द्वयेकं द्वयोः त्रयोदशसत्वस्थानाधारदोळं द्वादश सत्वस्थानाधारदोळं प्रत्येकं बंधोदयस्थानंगळु मेरडु मोंदुमप्पुवु

स	१३	स	१२
बं	२	बं	२
उ	१	उ	१

द्विद्विरेकैकं एकादशसत्वस्थाना-

च । तानि मोहनीयस्य सर्वाणि ॥ ६६८ ॥ एवमुदयाधिकरणबन्धसत्त्वाधेयमुक्त्वा सत्त्वाधिकरणबन्धोदयाधेयमाह—

सत्त्वस्थानेष्वष्टाविंशतिकादिषु क्रमेण बन्धोदयसत्त्वस्थानानि दशनव। द्वयोरेकत्रीणि, अष्टाष्टौ

आगे सत्त्वको अधिकरण और बन्ध उदयको आधेय बनाकर कथन करते हैं—

अठाईस आदि सत्त्वस्थानोंमें क्रमसे बन्धस्थान और उदयस्थान इस प्रकार हैं— पहले सत्त्वस्थानमें दस नौ, आगे दोमें एक तीन, एकमें आठ-आठ, दोमें तीन पाँच, एकमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धारदोळं पंचसत्वस्थानाधारदोळं क्रमदिदं बंधोदय स्थानंगळु द्विद्विरेकैकंगळप्पुवु

स	११	स	५
बं	२	बं	१
उ	२	उ	१

द्व्येकं त्रिषु चतुः सत्वस्थानाधारत्रिसत्वस्थानाधार द्विसत्वस्थानाधारंगळोळु बंधस्थानंगळेरडेरडु मुदयस्थानंगळो दोंदप्पुवु

स	४	स	३	स	२
बं	२	बं	२	बं	२
उ	१	उ	१	उ	१

एकशून्यमेकं च एकप्रकृतिसत्वस्थानाधारदोळु बंधस्थानमों दुं शून्यमुं उदयस्थानमों दुमक्कुं—

स	१
बं	१।०
उ	१

सर्व्व संदृष्टि—

स	२८	२७	२६	२४	२३	२२	२१	१३	१२	११	९	४	३	२	१
बं	१०	१	१	८	३	३	८	२	२	२	१	२	२	२	१।०
उ	९	३	३	८	५	५	७	१	१	२	१	१	१	१	१

ई संख्याविषयबंधोदयस्थानंगळं गाथात्रितयदिदं पेळ्दपरु :—

सव्वं सयलं पढमं दसतियदुसु सत्तरादियं सव्वं ।
णवयप्पहुडीसयलं सत्तरति णवादिपण दुपदे ॥६७०॥

सर्व्वं सकलं प्रथमं दशत्रयं द्वयोः सप्तदशादिसर्व्वं नवकप्रभृतिसर्व्वं सप्तदशत्रिनवादि पंच द्विपदे ॥

सर्व्वं सकलं अष्टाविंशति सत्त्वस्थानाधिकरणदोळु द्वाविंशत्यादि सर्व्वबंधस्थानंगळुं दशादिसकलोदयस्थानंगळुमप्पुवु। स २८। बं। २२। २१। १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १॥ उ १०। ९। ८। ७। ६। ५। ४। २। १॥ प्रथमं दशत्रयं द्वयोः। सप्तविंशति षड्विंशति सत्त्वस्थानाधिकरणद्वयदोळु द्वाविंशतिबंधस्थानमुं दशादित्रयोदयस्थानंगळुमप्पुवु। स २७। बं २२। उ १०। ९। ८॥ स २६। बं २२। उ १०। ९। ८॥ सप्तदशादि सर्व्वं नवादिसर्व्वं चतुर्व्विंशति-

---

द्वयोस्त्रिपंच अष्टसप्त द्वयोर्द्व्येकं द्विद्वि एकैकं त्रिषु द्व्येकं एकशून्यैकं ॥६६९॥

तान्यष्टाविंशतिके बन्धस्थानानि द्वाविंशतिकादीनि सर्वाणि, उदयस्थानानि दशकादीनि सकलानि। सप्तविंशतिकषड्विंशतिकयोर्बंधस्थानं द्वाविंशतिकं, उदयस्थानानि दशकादित्रयं च। चतुर्विंशतिके बन्धस्थानानि

आठ सात, दोमें दो एक, एकमें दो-दो, एकमें एक-एक, तीनमें दो एक, एकमें एक या शून्य और एक हैं ॥६६९॥

अठाईसके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान बाईस आदि सब हैं। अर्थात् जिनके जिस समय अठाईसका सत्त्व है उस समय उनमें-से किसीके बाईसका, किसीके इक्कीसका इस प्रकार सभी स्थानोंका बन्ध पाया जाता है। तथा उदयस्थान दस आदि सब हैं। यहाँ भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्त्वस्थानाधिकरणदोळु सप्तदशादिसर्व्वबंधस्थानंगळुं नवाद्युदयसर्व्वस्थानंगळुमप्पुवु। स २४। बं १७।१३।९।५।४।३।२।१॥ उ ९।८।७।६।५।४।२।१॥ सप्तदश त्रिनवादि पंचकं द्विपदे त्रयोविंशतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळं द्वाविंशतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळं सप्तदशादित्रिबंधस्थानंगळुं नवादिपंचोदयस्थानंगळुमप्पुवु। स २३। बं १७। १३। ९॥ उ ९। ८। ७। ६। ५। स २२। बं १७। १३। ९। उ ९। ८। ७। ६। ५॥

सत्तरसादि अडादी सव्वं पण चारि दोण्णि दुसु तत्तो।
पंचचउक्कदुगेक्कं चदुरिगि चदु तिण्णि एक्कं च ॥६७१॥

सप्तदशाद्यष्टादयः सर्व्वं पंचचतुर्द्वयं द्वयोः ततः। पंचचतुष्कद्वयेकं चतुरेकं चतुस्त्रीण्येकं च॥

सप्तदशाद्यष्टादयः सर्व्वं एकविंशतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु सप्तदशादिसर्व्वबंधस्थानंगळमष्टादिसर्व्वोदयस्थानंगळुमप्पुवु। स २१। बं १७।१३।९।५।४।३।२।१॥ उ ८।७।६।५।४।२।१॥ पंचचतुर्द्वयं द्वयोः त्रयोदशद्वादशसत्त्वस्थानाधिकरणंगळेरडरोळं पंचचतुर्ब्बंधस्थानंगळुं द्विप्रकृतिस्थानोदयमुमप्पुवु। स १३। बं ५।४। उ २। स १२। बं ५।४। उ २॥ ततः पंचचतुष्कद्वयेकं बळिक्कमेकादशप्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु पंचचतुःप्रकृतिबंधस्थानद्वयमुं द्वयेकप्रकृत्युदयस्थानद्वयमुमक्कुं। स ११। बं ५। ४। उ २। १॥ चतुरेकं पंचप्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु चतुःप्रकृतिबंधस्थानमुं एकप्रकृत्युदयस्थानमुमक्कुं। स ५। बं ४। उ १। चतुस्त्रीण्येकं च चतुः प्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु चतुःप्रकृतिबंधस्थानमुं त्रिप्रकृतिबंधस्थानमुमेकप्रकृत्युदयस्थानमुमक्कुं। स ४। बं ४। ३। उ १॥

सप्तदशकादीनि सर्वाणि। उदयस्थानानि नवकाद्यष्टकं। त्रयोविंशतिकद्वाविंशतिकयोर्बंधस्थानानि सप्तदशकादित्रयं, उदयस्थानानि नवकादिपंचकं ॥६७०॥

एकविंशतिके बन्धस्थानानि सप्तदशकादीनि सर्वाणि। उदयोऽष्टकादिः सर्वः। त्रयोदशकद्वादशकयोर्बंधः पंचकचतुष्के द्वे, उदयो द्विकं। ततः एकादशके बन्धः पंचकचतुष्के द्वे उदयः द्विकैके द्वे। पंचके बन्धश्चतुष्कं उदय एककं। चतुष्के बन्धश्चतुष्कत्रिके द्वे उदय एककं ॥६७१॥

अठाईसके सत्त्वमें किसी जीवके दसका, किसीके नौका आदि उदय पाया जाता है। सत्ताईस और छब्बीसके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान बाईसका ही है। उदयस्थान दस आदि तीन हैं। चौबीसके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान सतरह आदि सब हैं। उदयस्थान नौ आदि सब आठ हैं। तेईस और बाईसके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान सतरह आदि तीन हैं। उदयस्थान नौ आदि पाँच हैं ॥६७०॥

इक्कीसके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान सतरह आदि सब हैं। उदयस्थान आठ आदि सब हैं। तेरह और बारहके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान पाँच और चार दो हैं। उदय दोका ही है। ग्यारहके सत्त्वस्थानमें बन्ध पाँच और चार दोका है और उदय दो और एकका है। पाँचके सत्त्वस्थानमें बन्ध चारका और उदय एकका है। चारके सत्त्वस्थानमें बन्ध चार और तीनका तथा उदय एकका ही है ॥६७१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्तो तियदुगमेक्कं दुप्पयडी एक्कमेक्कठाणं च।
इगिणभबंधो चरिमे एक्कुदओ मोहणीयस्स ॥६७२॥

ततस्त्रयद्वयमेकं द्विप्रकृत्येकमेकस्थानं च। एक नभो बंधश्चरमे एकोदयो मोहनीयस्य ॥

ततस्त्रयद्वयमेकं बळिकं त्रिप्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु त्रिप्रकृतिबंधस्थानमुं द्विप्रकृतिबंधस्थानमुमक्कुमेकप्रकृत्युदयस्थानमुमक्कुं। स ३। बं ३। २। उ १॥ द्विप्रकृत्येकस्थानं च द्विप्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु द्विप्रकृतिबंधस्थानमुमेकप्रकृतिबंधस्थानमुमेकप्रकृत्युदयस्थानमुमक्कुं। स २। बं २। १। उ १॥ एकं नभोबंधश्चरम एकोदयो मोहनीयस्य मोहनीयद चरमैकप्रकृतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु एकप्रकृतिबंधस्थानमुं बंधशून्यमुमक्कु। मेकप्रकृत्युदयमक्कुं। स १। बं १। ०। उ १॥ समुच्चय संदृष्टि :—

स २८। बं २२। २१। १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १॥ उ १०। ९। ८। ७। ६। ५। ४। २। १॥ स २७। बं २२। उ १०। ९। ८॥ स २६। बं २२। उ १०। ९। ८। स २४। बं १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १॥ उ ९। ८। ७। ६। ५। ४। २। १॥ स २३। बं १७। १३। ९॥ उ ९। ८। ७। ६। ५॥ स २२। बं १७। १३। ९॥ उ ९। ८। ७। ६। ५। सं २१। बं १७। १३। ९। ५। ४। ३। २। १॥ उ ८। ७। ६। ५। ४। २। १॥ स १३। बं ५। ४। उ २॥ स १२। बं ५। ४। उ २। स ११। बं ५। ४। उ २। १॥ स ५। बंध ४। उ १। स ४। बं ४। ३॥ उ १। स ३। बं ३। २। उ १। स २। बं २। १। उ १। स १। बं १। ०। उ १॥

अनंतरं मोहनीयबंधोदयसत्त्वस्थानत्रिसंयोगदोळु द्विस्थानाधारमेकस्थानादेयमं पेळ्व प्रकारमं पेळ्वपरु :—

बंधुदये सत्तपदं बंधंसे णेयमुदयठाणं च।
उदयंसे बंधपदं दुट्ठाणाधारमेक्कमाधेज्जं ॥६७३॥

बंधोदये सत्त्वपदं बंधांशे ज्ञेयमुदय आदेयश्च उदयांशे बंधपदं द्विस्थानाधारमेकमाधेयं ॥

ततस्त्रिके बन्धः त्रिकद्विके द्वे उदय एककं, द्विके बन्धः द्विकैकके द्वे उदय एककं, मोहनीयस्यैकैके बन्ध एककं शून्यं च, उदय एककं ॥६७२॥ अथ मोहनीयस्य बन्धादित्रये द्वयमाधारमेकं वाधेयं कृत्वाह—

आगे तीनके सत्त्वस्थानमें बन्ध तीन और दोका और उदय एकका ही है। दोके सत्त्वस्थानमें बन्ध दो और एकका तथा उदय एकका ही है। मोहनीयके एकके सत्त्वस्थानमें बन्ध एकका अथवा शून्य (बन्धका अभाव) उदयस्थान एकका ही है ॥६७२॥

आगे मोहनीयके बन्धादि तीनमें-से दोको आधार और एकको आधेय बनाकर कथन करते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधोदयस्थानद्वयाधारदोळु सत्त्वस्थानादेयमुं बंधसत्त्वस्थानद्वयाधारदोळुदयमादेयमुं दय-सत्त्वस्थानाधारदोळु बंधस्थानादेयमुमितु द्विस्थानाधारमेकमादेयमुं ज्ञातव्यमक्कुं

बं उ	बं स	उ स
स	उ	बं

अनंतरमी त्रिप्रकारंगळोळु मोदल बंधोदयाधारसत्त्वादेय प्रकारमं गाथाषट्कदिदं पेळ्दपरु :

बावीसेण णिरुद्धे दसचउरुदये दसादिठाणतिये ।
अट्ठावीसतिसत्तं सत्तुदये अट्ठवीसेव ॥६७४॥

द्वाविंशत्या निरुद्धे दशचतुरुदये दशादिस्थानत्रितये । अष्टाविंशति त्रिसत्वं सप्तोदयेऽष्ट विंशतिरेव ॥

द्वाविंशतिबंधदिदोडने निरुद्धनागुत्तिर्द्द जीवनोळु उदयिसुत्तिर्द्द दशादिचतुरुदयस्थानंगळोळु दशाद्युदयस्थानत्रयदोळु अष्टाविंशत्यादित्रिस्थानसत्वमक्कुं । आ सप्तप्रकृत्युदयस्थानदोळष्टाविंश-तिसप्तसत्वस्थानमोदेयक्कुं । बं २२ । उ १० । ९ । ८ स २८ । २७ । २६ । मत्तं बंध २२ । उ ७ । स २८ ॥

इगिवीसेण णिरुद्धे णवयतिये सत्तमट्ठवीसेव ।
सत्तरसे णवचदुरे अडचउतिदुगेक्कवीसंसा ॥६७५॥

एकविंशत्या निरुद्धे नवत्रये सत्वमष्टाविंशतिरेव । सप्तदशसु नवचतुर्ष्वष्ट चतुस्त्रिद्वयेक विंशतिरंशाः ॥

बन्धोदये सत्वं बन्धसत्त्वे उदय उदयसत्त्वे बन्ध इति त्रिधा द्विस्थानाधारैकस्थानाधेयो ज्ञातव्यः ॥६७३॥ तत्र प्रथमं प्रकरणं गाथाषट्केनाह—

द्वाविंशतिकबन्धेन निरुद्धे जीवे सम्भविषु दशकादिचतुरुदयस्थानेषु मध्ये सत्त्वमष्टाविंशतिकादित्रयं । सप्तकेऽष्टाविंशतिकमेव ॥६७४॥

बन्धस्थान और उदयस्थानमें सत्त्वस्थान, बन्धस्थान और सत्त्वस्थानमें उदयस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान इस प्रकार दो स्थानोंको आधार और एक स्थानको आधेय बनानेके तीन प्रकार हैं ॥६७३॥

विशेषार्थ—इतनेका बन्ध और उदय जिसके होता है उसके इतनेका सत्त्व पाया जाता है । यहां बन्ध उदय आधार और सत्त्व आधेय होता है । जिसके इतनेका बन्ध और इतनेका सत्त्व होता है उसके इतनेका उदय होता है । यहाँ बन्ध सत्त्व आधार और उदय आधेय होता है । जिसके इतनेका उदय और इतनेका सत्त्व होता है उसके इतनेका बन्ध पाया जाता है । यहाँ उदय सत्त्व आधार और बन्ध आधेय होता है । इस तरह तीन प्रकार होते हैं ॥६७३॥

इनमें-से प्रथम प्रकारको छह गाथाओंसे कहते हैं—

बाईसके बन्ध सहित जीवके सम्भव दस आदि चार उदयस्थान हैं । उनमें-से दस आदि तीनमें तो सत्त्व अठाईस आदि तीनका है । किन्तु सातके उदयस्थानमें सत्त्व अट्ठाईस-का ही है ॥६७४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकविंशति प्रकृतिबंधस्थानदिदं सिक्कुत्तं विर्द्द जीवनोळुदयिसुत्तिर्द नवाद्युदयस्थानत्रय-दोळष्टाविंशतिसत्वस्थानमोंदेयक्कुं। बं २१। उ ९। ८। ७। स २८॥ सप्तदश प्रकृतिबंधस्थान-बोडनुदयिसुव नवाद्युदय चतुःस्थानंगळोळु अष्टचतुस्त्रिद्वयेकविंशति सत्वस्थानंगळप्पुवल्लि :—

इगिवीसं णहि पढमे चरिमे तिदुवीसयं ण तेरणवे ।
अडचउ सगचउरुदये सत्तं सत्तरसयं व हवे ॥६७६॥

एकविंशतिर्न्न हि प्रथमे चरमे त्रिद्विविंशतिर्न्नं त्रयोदशनवस्वष्ट चतुः सप्तचतुरुदये सत्वं सप्तदशवद्भवेत् ॥

एकविंशतिर्न्नं हि प्रथमे चरमे त्रिद्वि विंशतिर्न्नं सप्तदशप्रकृतिबंधकन प्रथम नवोदयस्थान-दोळु एकविंशतिप्रकृतिसत्वस्थानमिल्ला। चरम षट्प्रकृत्युदयस्थानदोळु त्रिद्वियुतविंशति सत्व-स्थानद्वयमिल्ल। बं १७। उ ८। ७। स २८। २४। २३। २२। २१। मत्तं बं १७। उ ९। स २८। २४। २३। २२। मत्तं बं १७। उ ६। स २८। २४। २१॥ त्रयोदशबंधक नवबंधकरु गळष्टाविसप्तादि चतुरुदयस्थानंगळोळु क्रमदिदं सत्वस्थानंगळु सप्तदशबंधकनोळु पेळ्दंतेयप्पुवु। बं १३। उ ८। स २८। २४। २३। २२॥ मत्तं बं १३। उ ७। ६ स २८। २४। २३। २२। २१। मत्तं बं १३। उ ५। स २८। २४। २१। बं ९। उ ७। स २८। २४। २३। २२। मत्तं बं ९। उ ६। ५। स २८। २४। २३। २२। २१। मत्तं बं ९। उ ४। स २८। २४। २१॥

णवरि य अपुव्व णवगे छादितियुदयेवि णत्थि तिदुवीसा ।
पणबंधे दोउदये अडचउरिगिवीसतेरसादितियं ॥६७७॥

नवीनं च अपूर्व्वनवके षडादित्र्युदयेपि नास्ति त्रिद्विविंशतिः। पंचबंधे द्व्युदयेऽष्टचतुरेक विंशतित्रयोदशादित्रिकं ॥

एकविंशतिकबन्धेन निरुद्धे जीवे उदयन्नवकादित्रये सत्त्वमष्टाविंशतिकमेव। सप्तदशकबन्धेनोदयन्नवका-दिचतुर्षु सत्वमष्टचतुस्त्रिद्वयेकाग्रविंशतिकानि ॥६७५॥ किन्तु

नवकोदये एकविंशतिकं नहि, षट्कोदये च न त्रयोविंशतिकद्वयं। त्रयोदशकबन्धेऽष्टकादिषु नवकबन्धे सप्तकादिषु च चतुर्षूदयस्थानेषु क्रमेण सत्त्वं सप्तदशबन्धवद्भवति ॥६७६॥

इक्कीसके बन्ध सहित जीवके नौ आदि तीनके उदयमें सत्व अठाईसका है। सतरह-के बन्ध सहित जीवमें नौ आदि चारके उदयमें सत्व अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईस और इकीसका है ॥६७५॥

किन्तु नौके उदयमें इक्कीसका सत्व नहीं होता। और छहके उदयमें तेईस-बाईसका सत्व नहीं होता। तेरहके बन्ध सहित आठ आदि चार उदयस्थानोंमें और नौके बन्ध सहित सात आदि चार उदयस्थानोंमें क्रमसे सत्व सतरहके बन्धसहितमें जैसे कहा है वैसे ही जानना ॥६७६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपूर्व्वकरण नवबंधकनोळु विशेषमुंटदाउदें दोडे षडादित्रिस्थानोदयदोळु त्रिद्वचुत्तर विंशतिसत्वस्थानद्वयमिल्ल । बं ९ । उ ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २१ ॥ पंचबंधकन द्विप्रकृतिस्थानोदयदोळु अष्टचतुरेकविंशतित्रयोदशादि त्रिस्थानसत्वमक्कुं । बं ५ । उ २ । स २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ ॥

चदुबंधे दोउदये सत्तं पुव्वं व तेण एक्कुदये ।
अडचउरेक्कावीसा एयारतिगं च सत्ताणि ॥६७८॥

चतुर्ब्बंधे द्वयुदये सत्वं पूर्व्ववत् तेनैकोदये अष्टचतुरेकविंशत्येकादश त्रयं च सत्वानि ॥

चतुर्ब्बंधकन द्विप्रकृत्युदयस्थानदोळु मुन्नं पंचबंधकनोळु पेळद सत्वस्थानंगळेयप्पुवु । बं ४ । उ २ । स २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ । तेन सह आ चतुर्ब्बंधस्थानदोळनुदयिसुत्तिर्द्देकप्रकृतिस्थानदोळु अष्टचतुरेकविंशति एकादशादित्रिस्थानंगळु सत्वमप्पुवु । बं ४ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ११ । ५ । ४ ॥

तिदुइगिबंधेक्कुदये चदुतियठाणेण तिदुगठाणेण ।
दुगिठाणेण य सहिदा अडचउरिगिवीसया सत्ता ॥६७९॥

त्रिद्वेकबंधेकोदये चतुस्त्रिकस्थानेन त्रिद्विकस्थानेन । द्व्येकस्थानेन च सहितान्यष्ट चतुरेकविंशति सत्वानि ॥

त्रिबंधद्विबंधएकबंधयुतरुगळ एकप्रकृत्युदयस्थानंगळोळु क्रमदिदं चतुस्त्रिस्थानद्वययुतंगळुं त्रिद्विस्थानद्वययुतंगळुं द्व्येकस्थानद्वययुतंगळुमप्प अष्टचतुरेकविंशतिसत्वस्थानत्रयंगळुमप्पुवु । बं ३ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ४ । ३ । बं २ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ३ । २ । बं १ ।

तत्रापूर्वकरणनवकबन्धे षट्कादित्रयोदयेन त्रयोविंशतिकद्वयमस्तीति (–र्य नास्तीति) विशेषः पंचकबन्धस्य द्विकोदये सत्वमष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च ॥६७७॥

चतुष्कबन्धस्य द्विकोदये सत्वं पंचबन्धवद्भवति । चतुष्कबन्धस्यैककोदये त्वष्टचतुरेकाग्रविंशतिकान्येकादशकादित्रयं ॥६७८॥

त्रिकद्विकैकबन्धिष्वेककोदये सत्वमष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि पुनः क्रमेण चतुष्कत्रिकाभ्यां त्रिकद्विकाभ्यां

किन्तु इतना विशेष है कि अपूर्वकरणमें नौके बन्धसहित छह आदि तीन उदयस्थानों-में तेईस और बाईसका सत्त्व नहीं है। पाँचके बन्धसहित दोके उदयमें सत्त्व अठाईस, चौबीस, इक्कीस तथा तेरह आदि तीनका होता है ॥६७७॥

चारके बन्धके साथ दोके उदयमें सत्त्व पाँचके बन्ध सहितमें जैसा कहा वैसा जानना। चारके बन्धके साथ एकका उदय होते सत्त्व अठाईस, चौबीस, इक्कीस तथा ग्यारह आदि तीनका जानना ॥६७८॥

तीन, दो, एकके बन्धके साथ एकके उदयमें सत्त्वस्थान अठाईस, चौबीस, इक्कीसका तथा तीनके बन्धसहितमें चार और तीनका, दोके बन्ध सहितमें तीन और दोका, एकके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ । १ । स २८ । २४ । २१ । २ । १ ॥ समुच्चय संदृष्टि—बं २२ । उ १० । ९ । ८ । स २८ । २७ । २६ । बं २२ । उ ७ । स २८ । बं २१ । उ ९ । ८ । ७ । स २८ । बं १७ । उ ९ । स २८ । २४ । २३ । २२ । बं १७ । उ ८ । ७ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । बं १७ । उ ६ । स २८ । २४ । २१ । बं १३ । उ ८ । स २८ । २४ । २३ । २२ । बं १३ । उ ७ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । बं १३ । उ ५ । स २८ । २४ । २१ । बं ९ । उ ७ । स २८ । २४ । २३ । २२ । बं ९ । उ ६ । ५ । स २८ । २४ । २३ । २२ । २१ । बं ९ । उ ४ । स २८ । २४ । २१ ॥ अपूर्व्वकरण बं ९ । उ ६ । ५ । ४ । स २८ । २४ । २१ । बं ५ । ४ । उ २ । स २८ । २४ । २१ । १३ । १२ । ११ । बं ४ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ११ । ५ । ४ । बं ३ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ४ । ३ । बं २ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । ३ । २ । बंध १ । उ १ । स २८ । २४ । २१ । २ । १ ॥

ई रचनाभिप्रायं पेळल्पडुगुमें तें दोडे मोहनीयबंधप्रकृतिगळु सर्व्वमुं षड्विंशतिप्रमितंगळप्पुववरोळु द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानमं मिथ्यादृष्टि कट्टुगु । मा मिथ्यादृष्टियुं चतुर्ग्गतिजनक्कुमातंगपुनरुक्तंगळुं मिथ्यात्वकर्म्मयुतदशादिचतुरुदयस्थानंगळप्पुववुमनंतानुबंधिकषायोदयसहितरहितभेददिनें दुमुदयकूटंगळोळु संभविसुगुमल्लि दशाद्युदयत्रिस्थानंगळेकजीवापेक्षेयिं क्रमदिंदमुदयिसुववु । नानाजीवापेक्षेयिं युगपदुदयिसुवा द्वाविंशतिप्रकृतिबंधमुं दशादित्रिस्थानोदयंगळोळेकतरस्थानोदयमनुळ्ळ जीवंगेकजीवापेक्षेयिंद अष्टाविंशतित्यादिसत्त्वस्थानत्रयदोळेकतरस्थानं सत्त्वमक्कुं । नानाजीवापेक्षेयिं त्रिस्थानंगळुं युगपत्सत्त्वंगळप्पुवु । मत्तमा द्वाविंशतिप्रकृतिबंधकमिथ्यादृष्टिगे अनंतानुबंधिरहितोदयसप्तप्रकृतिस्थानोदयमक्कुमा जीवनोळु अष्टाविंशतिप्रकृतिसत्त्वस्थानमों देयक्कुमदें तें दोडा मिथ्यादृष्टिजीवं पेरगसंयतादिचतुर्गुणस्थानंगळोळेल्लियानुमिर्द्दनंतानुबंधिकषायचतुष्टयमं मुंपेळ्द क्रमदिंदं विसंयोजिसि किडिसि मिथ्यात्वकर्म्मोदयदिंदं मिथ्यादृष्टियागि

द्विकैकाभ्यां च युतानि । अत्रायमर्थः—

मोहस्य सर्वबन्धप्रकृतिषु चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ द्वाविंशतिकबन्धे मिथ्यात्वयुतानन्तानुबन्धियुतवियुताष्टकूटसम्भूताऽपुनरुक्तदशकादिचतुरुदयस्थानेष्वेकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपत्सम्भवत्सु त्रिषु सत्त्वमेकजीवापेक्षयाष्टाविंशतिकादित्रयं क्रमेण, नानाजीवापेक्षया युगपत् । सप्तोदयस्थाने तु अष्टाविंशतिमेव न सप्तविंशतिकषट्विंशतिके । कुतः ? असंयतादिषु चतुर्ष्वेकत्रानन्तानुबन्धिनो विसंयोज्य मिथ्यात्वोदयान्मिथ्या-

---

बन्धसहितमें दो और एकका इस तरह पांच-पांच सत्त्वस्थान होते हैं। इसका अर्थ इस प्रकार है—

मोहनीयकी सर्वबन्ध प्रकृतियोंमें चारों गतिका मिथ्यादृष्टी जीव बाईसका बन्ध करता है। उसके मिथ्यात्व सहित और अनन्तानुबन्धी सहित तथा रहित आठ कूट कहे थे। उनसे उत्पन्न अपुनरुक्त दस आदि चार उदयस्थानोंमें एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे तथा नाना जीवोंकी अपेक्षा युगपत् सम्भव तीनमें तो सत्त्व एक जीवकी अपेक्षा तो क्रमसे और नाना जीवोंकी अपेक्षा युगपत् अठाईस आदि तीनका होता है। किन्तु सातके उदयस्थानमें अठाईसका ही सत्त्व है, सत्ताईस और छब्बीसका नहीं है; क्योंकि असंयत आदि चार गुणस्थानोंमें-से किसी एकमें अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करके मिथ्यात्वके उदयसे मिथ्या-

क–१२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्प्रथमसमयदोळु द्वाविंशतिप्रकृतिबंधकनप्पुदरिंदमनंतानुबंधियुमनल्लि एकसमयप्रबद्धमं कट्टुगुमंतु कट्टिद समयप्रबद्धक्कुदीरणेयं माळ्पडमों दचलावळि पर्य्यंतमाबाधकालमप्पुदरिनुदयावलियोळिक्कल्बारदु कारणमचलावलिकालपर्य्यंतमनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टियें दु पेळल्पट्टना मिथ्यादृष्टिगे वेदककालमं कळिदुपशमकालदोळल्लदे सम्यक्त्वप्रकृतियुमं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं माडल्बारदरिवं सप्तविंशति षड्विंशतिस्थानद्वयसत्वं संभविसदप्पुदरिंदं। एकविंशतिप्रकृतिबंधं सासादननोळेयक्कुमा सासादननुं चतुर्गतिजनक्कुमा जीवक्केकजीवापेक्षेयिं नवाद्युदयत्रिस्थानंगळोळन्यतरस्थानोदयमक्कुं। नानाजीवापेक्षेयिंद युगपत्त्रिस्थानोदयमक्कुमा सासादनंगष्टाविंशतिस्थानमों दे सत्वमक्कुमेकें दोडा सासादनं मुन्नं सादिमिथ्यादृष्टियादोडमनादिमिथ्यादृष्टियादोडं करणत्रयपरिणामदिदं दर्शनमोहनीयमनुपशमिसियसंयतादिचतुर्गुणस्थानमं यथायोग्यमं पोद्दि तत्सम्यक्त्वकालदोळु मिथ्यात्वप्रकृतियत्तणिदं गुणसंक्रमविधानदिदं मिश्रसम्यक्त्वप्रकृतिगळनुपार्जिसि तत्सम्यक्त्वकालमावलिषट्कमवशिष्टमादागळा कालप्रथमसमयं मोदल्गों डु षडावलिचरमसमयपर्य्यंतमेल्लियावोडमनंतानुबंधिकषायोदयदिदं सासादननक्कुमप्पुदरिदं सम्यक्त्वप्रकृत्युद्वेल्लितसप्तविंशतिसत्वमुं मिश्रप्रकृत्युद्वेल्लितषड्विंशतिसत्वमु संभविसवु। चतुर्व्विंशतिसत्वस्थानमु संभविसदेकें वोडनंतानुबंधिविसंयोजकरु असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्त्तिगळु नियमदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळेयप्पुदरिंदमवरोळेल्लानुं मिथ्यात्वकर्म्ममुदयिसि मिथ्यादृष्टिगळेयप्परप्पु-

दृष्टित्वं गतः तत्प्रथमसमये द्वाविंशतिकबन्धे बद्धानन्तानुबन्ध्येकसमयप्रबद्धस्य तदुदीरणाया अचलावलिकालमसम्भवात्तदुदयरहितस्य तस्य सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिवेदककालत्वादुपशमकालाभावात्सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्यनुद्वेल्लनात्।

चतुर्गतिसासादनैकविंशतिकबन्धे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयन्नवकादित्र्युदयस्थानेषु सत्त्वमष्टाविंशतिकमेव न सप्तविंशतिकषड्विंशतिके। कुतः? उपशमसम्यक्त्वादेव सासादने गमनात्तत्स्थितेश्चैकसमयात्षडावलिपर्यंतसमयोत्तरकालविकल्पात्मकत्वात्सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्युद्वेल्लनावसरस्योपशमकालस्यानवतारात्। नापि चतुर्विंशतिकं, अनन्तानुबन्धिविसंयोजकानां नियमेन वेदकसम्यग्दृष्टित्वात्सासादने नागम-

दृष्टि होकर वहाँ प्रथम समयमें बाईसका बन्ध किया। उसमें बाँधी गयी अनन्तानुबन्धीके एक समयप्रबद्धकी उदीरणा अचलावली काल पर्यन्त तो सम्भव नहीं है। और अनन्तानुबन्धीके उदयरहित उस जीवके सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्रमोहनीयका वेदककाल है, उपशम काल नहीं है। इससे उसके सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना नहीं होती। पूर्वमें वेदककाल और उपशमकालका लक्षण कह आये हैं और वेदककालमें इनकी उद्वेलनाका अभाव भी कह आये हैं।

चारों गतिके सासादनमें इक्कीसका बन्ध है। उसमें एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे और नाना जीवोंकी अपेक्षा युगपत् नौ आदि तीन उदयस्थान हैं। उनमें अठाईसका ही सत्त्व है, सत्ताईस या छब्बीसका नहीं है; क्योंकि उपशम सम्यक्त्वसे भ्रष्ट होकर सासादन होता है। उसकी स्थिति एक समयसे लगाकर एक-एक समय बढ़ते हुए छह आवली पर्यन्त होती है। और सम्यक्त्व मोहनीय मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना उपशमकालमें ही होती है वह यहाँ सम्भव नहीं है। तथा यहाँ चौबीसका भी सत्त्व सम्भव नहीं है; क्योंकि अनन्तानुबन्धीका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दरिदं सप्तदशप्रकृतिबंधं मिश्रनोळमसंयतनोळमक्कुमवर्ग्गळु चतुर्गतिजरप्परल्लि । मिश्रनोळु नवादित्रितयोदयस्थानंगळऽपुनरुक्तंगळेकजीवापेक्षेयिं क्रमदिनुदयिसुववु । नानाजीवापेक्षेयिंदं युगपदुदयंगळप्पुवल्लियष्टाविंशति चतुर्विंशतिस्थानद्वयं । नानाजीवापेक्षेयिंदं युगपत्सत्वंगळु-मप्पुवेकजीवापेक्षेयिनन्यतरत्सत्वमक्कुं । त्रयोविंशतिद्वाविंशतिस्थानद्वयं सत्वमिल्लेकेंदोडे मिश्र-प्रकृत्युदयमुळ्ळंगे दर्शनमोहनीयक्षपणाप्रारंभं संभविसदप्पुदरिदं ।

मत्तमा सप्तदशप्रकृतिबंधकासंयतनुं चतुर्ग्गतिजनक्कुमातनोळु नवादिचतुरुदयस्थानंगळेक-जीवापेक्षेयि नन्यतरप्रकृतिस्थानमुदयिसुगुं । नानाजीवापेक्षेयिं चतुरुदयस्थानंगळु युगपदुदयि-सुववु । अल्लि सप्तदशस्थानबंधमुं नवप्रकृत्युदयमुळ्ळं वेदकसम्यग्दृष्टियक्कुमप्पुदरिंद मल्लि येक-जीवापेक्षेयिंदमष्टाविंशति चतुर्विंशति त्रयोविंशति द्वाविंशति सत्वस्थानंगळोळन्यतरत्सत्वमक्कुं । नानाजीवापेक्षेयिं युगपत्सत्वंगळप्पुवल्लि । एकविंशतिस्थानं संभविसदेंबुदु सिद्धमक्कुमेकेंदोडा सत्वस्थानं क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळल्लदेल्लियुं घटियिसदप्पुदरिंदमोतं वेदकसम्यग्दृष्टियप्पुदरिंदं दर्शनमोहनीयक्षपणाप्रारंभकत्वं कर्म्मभूमिमनुष्यासंयतनोळु संभविसुगुमप्पुदरिंदमनंतानुबंधि-रहित सत्वस्थानमुं मिथ्यात्वरहितसत्वस्थानमुं मिश्रप्रकृतिरहितसत्वस्थानमुमिल्लि पेळल्पट्टुवु । मत्तमा सप्तदश प्रकृतिबंधकासंयतसम्यग्दृष्टिगष्टसप्तोदयस्थानद्वयं सम्यक्त्वत्रययुतजीवसाधारणो-दयस्थानंगळप्पुदरिंदमेकजीवापेक्षेयिंदमेकतरस्थानोदयमक्कुं । नानाजीवापेक्षेयिंदं युगपदुदयि-

---

नात् । चतुर्गतिमिश्रसप्तदशकबन्धे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयन्नवकादित्र्युदयस्थानेषु सत्वमष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके नानाजीवापेक्षया युगपदेकजीवापेक्षया क्रमेण न त्रयोविंशतिकद्वाविंशतिके । कुतः ? मिश्रोदये दर्शनमोहस्य क्षपणाप्रारम्भाभावात् । चतुर्गत्यसंयमसप्तदशकबन्धे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयचतुरुदयस्थानेषु नवकोदये सत्त्वं वेदकसम्यग्दृष्टित्वाद्दर्शनमोहक्षपणाप्रारम्भादनन्ता-नुबन्धिमिथ्यात्वमिश्रसहितरहितस्थानसम्भवात् । कर्मभूमिमनुष्ये एकजीवापेक्षयाष्टचतुस्त्रिद्वयग्रविंशतिकानि क्रमेण. नानाजीवापेक्षया युगपत् नैकविंशतिकं क्षायिकसम्यग्दृष्टावेव तत्सत्त्वात् । अष्टकसप्तकोदये सत्वं

विसंयोजन वेदकसम्यग्दृष्टीके ही होता है, और वेदक सम्यग्दृष्टी सासादनमें आता नहीं है । चारों गति सम्बन्धी मिश्रगुणस्थानमें सतरहका बन्ध होता है । वहाँ एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे और नाना जीवकी अपेक्षा युगपत् नौ आदि तीन उदयस्थान हैं । उनमें अठाईस और चौबीसका ही सत्त्व है तेईस या बाईसका नहीं; क्योंकि मिश्रमोहनीयके उदयमें दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारम्भ नहीं होता ।

चारों गतिके असंयतमें सतरहका बन्ध है । वहाँ एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे और नाना जीवोंकी अपेक्षा युगपत् चार उदयस्थान होते हैं । उनमें-से नौके उदय रहते वेदक सम्यग्दृष्टी होता है । अतः दर्शनमोहकी क्षपणाका प्रारम्भ होनेसे अनन्तानुबन्धी, मिथ्यात्व और मिश्रमोहनीयसे सहित तथा रहित सत्त्वस्थान हो सकते हैं । अतः कर्मभूमिया मनुष्यमें एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे और नाना जीवोंकी अपेक्षा युगपत् अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईसका सत्त्व सम्भव है । इक्कीसका सत्त्व क्षायिक सम्यग्दृष्टीके ही होता है अतः वह सम्भव नहीं है । तथा आठ और सातके उदयमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वमें अठाईसका ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुवल्लि प्रथमोपशमसम्यग्दृष्ट्यपेक्षेयिदमष्टाविंशतिस्थानमोंदे सत्वमक्कुं। द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्ट्यपेक्षेयिदमष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयं सत्वमक्कुं। वेदकसम्यग्दृष्ट्यपेक्षेयिदमष्टाविंशति चतुर्व्विंशति त्रयोविंशतिद्वाविंशतिस्थानंगळोळेक जीवापेक्षयिद मन्यतरत्सत्वमक्कुं। नानाजीवापेक्षेयिदं युगपत्सत्वंमप्पुवु। क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यपेक्षेयिदमेकविंशतिस्थानमों दे सत्वमक्कुं। मत्तमा सप्तदशस्थानबंधकंगे षट्प्रकृत्युदयस्थानमुदयिसिदोडातं क्षायिक सम्यग्दृष्ट्यसंयतनुमुपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतनक्कुमेकें दोडातनुदयकूटदोळु सम्यक्त्वप्रकृतिरहितमागि कषायत्रयमुमेकवेदमुं हास्यरत्यादिद्विकद्वयदोळों दु द्विकमुमंतु षट्प्रकृतिगळप्पुवप्पुदरिंदमल्लि एकविंशतिस्थानमों दे सत्वं क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयतनोळक्कु–। मुपशमसम्यग्दृष्ट्यसंयतनोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयसत्वमक्कुं। त्रयोदश प्रकृतिबंधकं देशसंयतनेयक्कुमा देशसंयतनुपशमसम्यग्दृष्टियुं वेदकसम्यग्दृष्टियुमप्प तिर्य्यंचनुमुपशमवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टियप्प मनुष्यनुमक्कु मातंगे अष्टप्रकृतिस्थानादि चतुरुदयस्थानंगळप्पुवल्लि–। यष्टप्रकृत्युदयस्थानं वेदकसम्यग्दृष्टितिर्य्यग्मनुष्यरोळक्कुमल्लि अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयं तिर्य्यंचदेशसंयतनोळु सत्वमक्कुमष्टाविंशति चतुर्व्विंशति त्रयोविंशति द्वाविंशति सत्वस्थानचतुष्टयं मनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टि देशसंयतनोळक्कुं। सप्तषट्प्रकृत्युदयस्थानद्वयमुपशमवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टिसाधारणोदयस्थानंगळप्पुदरिंदमुपशमसम्यग्दृष्टि तिर्य्यग्मनुष्यदेशसंयतरोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वय सत्वमक्कुं। तिर्य्यंचवेदकसम्यग्दृष्टियोळमा सत्वस्थानद्वयमेयक्कुं। मनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशतिचतुर्व्विंशतित्रयोविंशति द्वाविंशतिसत्वस्थानचतुष्टयमक्कुं। क्षायिकसम्यग्दृष्टि देशसंयतं मनुष्यमेयक्कु–। मातंगेकविंशतिसत्वस्थानमों देयक्कुं। मत्तमा त्रयोदश प्रकृतिबंधक देशसंयतनोळु पंचप्रकृत्युदय-

प्रथमोपशमसम्यक्त्वेऽष्टाविंशतिकं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वे तच्चतुर्विंशतिकं च, वेदकसम्यक्त्वे तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपत्, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव। षट्कोदये सम्यक्त्वप्रकृतिरहितत्वात् क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकं, उपशमसम्यक्त्वेऽष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके द्वे। त्रयोदशकबन्धे देशसंयते तिर्यग्मनुष्योपशमवेदकसम्यक्त्वे मनुष्यक्षायिकसम्यक्त्वे चाष्टकोदये सत्त्वं वेदकसम्यक्त्वे तिरश्च्यष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, मनुष्ये तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके च। सप्तकषट्कोदये तिर्यग्मनुष्योपशमसम्यक्त्वयोपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। वेदकसम्यक्त्वे तिरश्चि तद्द्वयं, मनुष्ये तद्द्वयं च

सत्त्व है। द्वितीयोपशम सम्यक्त्वमें अठाईस या चौबीसका सत्त्व है। और वेदक सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईसका सत्त्व एक जीवकी अपेक्षा क्रमसे और नाना जीवकी अपेक्षा युगपत् सम्भव है। क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीसका ही सत्त्व है। छहके उदयमें सम्यक्त्व मोहनीयके न होनेसे क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीसका ही सत्त्व है। उपशम सम्यक्त्वमें अठाईसका या चौबीसका सत्त्व है।

तेरहके बन्धसहित देशसंयतमें तियँच या मनुष्यके उपशम या वेदक सम्यक्त्व होता है। क्षायिक सम्यक्त्व मनुष्यके ही होता है। वहाँ आठके उदयमें सत्त्व वेदक सम्यक्त्वी तियँचमें तो अठाईस और चौबीसका तथा मनुष्यमें अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईसका है। सात अथवा छहके उदयमें तियँच और मनुष्यके उपशम सम्यक्त्वमें तो अठाईस, चौबीसका

स्थानमुपशमक्षायिकसम्यग्दृष्टिगळोळे संभविसुगुमल्लियुपशमसम्यग्दृष्टि तिर्य्यग्मनुष्य देशसंयतरोळष्टाविंशति चतुर्व्विंशति सत्वस्थानद्वय मक्कुं । क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्यनोळु एकविंशति सत्वस्थानमक्कुं । नवप्रकृतिबंधकरुगळु प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरुगळप्पवर्गळोळु सप्तादिचतुरुदयस्थानंगळप्पुववर्गळुमुपशमवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टि गळप्परल्लि वेदकसम्यग्दृष्टिगळोळे सप्तप्रकृतिस्थानोदयमक्कुमवरोळु अष्टाविंशति चतुर्विंशति त्रयोविंशति द्वाविंशतिप्रकृतिस्थानचतुष्टयं सत्वमक्कु मुपशमवेदक क्षायिकसम्यग्दृष्टिसाधारणोदयषट्पंचप्रकृतिस्थानद्वयमप्पुदरिदं मुपशमसम्यग्दृष्टिगळोळु मुन्नं त्रयोदशबंधकनोळु पेळ्दंते अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयं सत्वमक्कुं । वेदकसम्यग्दृष्टिगळोळु अष्टाविंशतिचतुर्व्विंशति त्रयोविंशति द्वाविंशति सत्वस्थानंगळप्पुवु । क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळोळु एकविंशतिस्थानमोंदे सत्वमक्कुं । मत्तमा नवबंधकचतुःप्रकृत्युदयस्थानमुमुपशम क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळक्कु मल्लियुपशमसम्यग्दृष्टिगळोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयमक्कुं । क्षायिकसम्यग्दृष्टिगळोळेकविंशतिसत्वस्थानमोंदेयक्कुं । नवबंधकापूर्व्वकरणनोळु षट्पंचचतुःप्रकृत्युदयस्थानत्रयमक्कु मल्लियुपशमसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयं सत्वमक्कुं । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळेकविंशतिस्थानमोंदेसत्वमक्कुं । पंचचतुःप्रकृतिबंधकननिवृत्तिकरणनेयक्कु मल्लि द्विप्रकृत्युदयस्थानमोंदे-

---

त्रिद्वचग्रविंशतिके च, क्षायिकसम्यक्त्वे देशसंयतस्य मनुष्यत्वादेकविंशतिकमेव । तत्पंचकोदये उपशमसम्यग्दृष्टितिर्यग्मनुष्येऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्ये एकविंशतिकमेव । नवकबन्धे प्रमत्ताप्रमत्ते चतुर्षूदयस्थानेषु सप्तकोदये वेदकसम्यक्त्वे सत्त्वमष्टचतुस्त्रिद्वचग्रविंशतिकानि । षट्कपंचकोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे । वेदकसम्यक्त्वे तद्द्वयं च त्रिद्वचग्रविंशतिके च । क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव । तच्चतुष्कोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे । क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव । नवकबन्धेऽपूर्वकरणे षट्कपंचकचतुष्कोदये सत्वमुपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे । क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव ।

तथा वेदक सम्यक्त्वी तिर्यंचमें भी वे ही दोनों तथा वेदक सम्यक्त्वी मनुष्यमें अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईसका सत्त्व है। क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्य ही होता है। उसके इक्कीसका सत्त्व है। पाँचके उदयमें उपशम सम्यग्दृष्टी तिर्यंच और मनुष्यमें अट्ठाईस और चौबीसका सत्त्व है। क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्यमें इक्कीसका सत्त्व है। नौके बन्धसहित प्रमत्त अप्रमत्तमें चार उदयस्थानोंमें-से सातके उदयमें वेदकसम्यक्त्वी ही होता है। अतः अठाईस, चौबीस, तेईस, बाईसके चार सत्त्व हैं। छह और पाँचके उदयमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस और चौबीसका सत्त्व है। वेदक सम्यक्त्वमें अठाईस चौबीस तेईस बाईसका सत्त्व है। क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीसका सत्त्व है। चारके उदयमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीसका सत्त्व है। क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीसका ही सत्त्व है।

नौके बन्ध सहित अपूर्वकरणमें छह पाँच या चारके उदयमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस चौबीसका सत्त्व है। क्षायिक सम्यक्त्वमें इकईसका सत्त्व है।

पाँच, चारका बन्ध और दोके उदय सहित अनिवृत्तिकरणमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीसका और क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीस, तेरह, बारह, ग्यारहका सत्त्व है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यक्कुमल्लि युपशमसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशति सत्वस्थानमक्कु । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळु येकविंशति त्रयोदशद्वादश एकादश प्रकृतिसत्वस्थान चतुष्टयमक्कुं । चतुर्ब्बंधकमेकप्रकृत्युदयानिवृत्तिकरणनोळुपशमसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशतिचतुर्व्विंशतिस्थानद्वयसत्वमक्कुं । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळेकविंशति एकादश पंच चतुः प्रकृतिसत्वस्थान चतुष्टयमक्कुं । त्रिःप्रकृतिबंधकमेकप्रकृत्युदयानिवृत्तिकरण नोळुपशमसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिसत्वस्थानद्वयमक्कं । शेष एकविंशति चतुस्त्रिप्रकृतिसत्वस्थानत्रितयं क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळक्कुं । द्विप्रकृतिबंधकमेकप्रकृत्युदयानिवृत्तिकरण नोळुपशमसम्यग्दृष्टियोळु अष्टाविंशति चतुर्व्विंशति सत्वस्थानद्वयमक्कुं । शेष एकविंशति त्रिद्विप्रकृतिसत्वस्थानत्रयं क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळक्कुं । एकप्रकृतिबंधमेकप्रकृत्युदयानिवृत्तिकरणनोळुपशमसम्यग्दृष्टियोळष्टाविंशति चतुर्व्विंशतिस्थानद्वयमक्कुं । शेष एकविंशतिद्वि एकप्रकृतिसत्वस्थान त्रयं क्षायिकसम्यग्दृष्टियोळक्कुं । यिल्लियुमोंदु विशेषमुंटदाउदेंदोडे क्षपकानिवृत्तिकरणनोळु चतुस्त्रिद्व्येकप्रकृतिबंधकनोळु क्रमदिदं पंच चतुश्चतुस्त्रित्रिद्विद्व्येकसत्वस्थानंगळोळु पूर्व्वपूर्व्वप्रकृतिनवकबंधसत्वमुमुच्छिष्टावलिसत्वं विवक्षिसल्पट्टुवेंदरियल्पडुगुं ॥

अनंतरं बंधसत्वस्थानद्वयाधिकरणमुदयस्थानादेयत्रिसंयोगप्रकारं गाथापंचकदिदं पेळल्पडुगुं :—

पंचचतुष्कबन्धद्विकोदयेऽनिवृत्तिकरणे सत्वमुपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकत्रिद्व्येकाग्रदशकानि । चतुष्कबन्धैककोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकैकादशकपंचकचतुष्काणि । त्रिकबन्धैककोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे; क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकचतुष्कत्रिकाणि । द्विकबन्धैककोदयानिवृत्तिकरणे उपशमसम्यक्त्वेष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे । क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकत्रिकद्विकानि । एकबन्धकोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकद्विकैकानि । अत्र क्षपकानिवृत्तिकरणे चतुस्त्रिद्व्येकबन्धे क्रमेण पंचचतुश्चतुस्त्रित्रिद्विद्व्येकसत्त्वेषु पूर्वपूर्वनवकबन्धोच्छिष्टावलिसत्त्वे विवक्षिते ज्ञातव्ये ॥६७९॥ अथ बन्धसत्त्वद्विस्थानाधारोदयैकस्थानाधेयं गाथापंचकेनाह—

चारका बन्ध और एकके उदय सहितमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीसका और क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीस, ग्यारह, पाँच, चारका सत्त्व है। तीनका बन्ध एकके उदयसहितमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस चौबीसका और क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीस, चार, तीनका सत्त्व है। दोका बन्ध एकके उदय सहित अनिवृत्तिकरणमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीसका और क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीस, तीन, दोका सत्त्व है। एकका बन्ध एकके उदयसहितमें उपशम सम्यक्त्वमें अठाईस, चौबीसका, क्षायिक सम्यक्त्वमें इक्कीस, दो, एकका सत्त्व है। यहाँ क्षपक अनिवृत्तिकरणमें चार, तीन, दो एकके बन्धमें क्रमसे पाँच चार, चार तीन, तीन दो, दो एकका सत्त्व है। उसमें पूर्वपूर्व वेद और कषायके नवकबद्ध समयप्रबद्धके जो उच्छिष्टावली मात्र निषेक रहते हैं उनकी विवक्षा जानना ॥६७९॥

आगे बन्ध-सत्त्वको आधार और उदयको आधेय मानकर पाँच गाथाओंसे कथन करते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बावीसे अडवीसे दसचउरुदओ अणे ण सगवीसे ।
छव्वीसे दस य तियं इगिअडवीसे दु णवयतियं ।।६८०।।

द्वाविंशतावष्टा विंशतौ दशचतुरुदयोऽनेन सप्तविंशत्यां। षड्विंशत्यां दशत्रिकं एकाष्टाविंशत्यां तु नवकत्रयं ।।

चतुर्गतिज द्वाविंशति प्रकृतिबंधक मिथ्यादृष्टियोळष्टाविंशति प्रकृतिसत्वस्थानमक्कुमप्पोडल्लि दशाद्युदयस्थानचतुष्टयमक्कुमेकें दोडे अल्लिये अनंतानुबंधिरहित मिथ्यादृष्टि संभविसुगुमप्पुदरिद–। मा द्वाविंशतिप्रकृतिबंधदोडने सप्तविंशति षड्विंशति सत्वस्थानंगळोळु दशादि त्रिस्थानंगळप्पुवा मिथ्यादृष्टिजीवं सम्यक्त्वप्रकृतियुमं मिश्रप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं क्रमदिदं माडिद संक्लिष्टचतुर्गतिजनं वरियल्पड्गुमप्पुदरि नल्लि अनंतानुबंधिरहितोदयचतुःकूटंगळु संभविसवें बुदर्थं । एकविंशतिबंधकं चतुर्गतिजसासादननक्कुमातनोळु अष्टाविंशतिसत्वस्थानमों देयक्कुमल्लि मिथ्यात्वप्रकृत्युदयरहितत्वदिदं नवाद्यपुनरुक्तोदय त्रिस्थानंगळप्पुवु ।।

सत्तरसे अडचउरिगिवीसे णवयचदुरुदयमिगिवीसे ।
णो पढमुदओ एवं तिदुवीसे णांतिमस्सुदओ ।।६८१।।

सप्तदशस्वष्टचतुरेकविंशत्यां नवकचतुरुदयः एकविंशत्यां । नो प्रथमोदयः एवं त्रिद्विविंशत्यां नांतिमस्योदयः ।।

सप्तदशप्रकृतिबंधं चतुर्गतिजनप्प मिश्रनोळमसंयतनोळमक्कुमवर्गळोळु अष्टचतुरेकविंशतिसत्त्वस्थानंगळु संभविसुगुमल्लि अष्टाविंशतिचतुर्विंशतिसत्त्वस्थानंगळु क्रमदिदमनंतानुबंधिसहितरहितस्थानगळप्पुवा सत्वस्थानयुतरोळु मिश्रप्रकृत्युदययुतचतुःकूटंगळोळ पुनरुक्तन-

---

द्वाविंशतिकबन्धके चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ अष्टाविंशतिकसत्त्वे उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि अनन्तानुबन्धिरहितस्याप्यत्र सम्भवात् । द्वाविंशतिकबन्धेन समं सप्तषडधिकविंशकसत्त्वे तु तदादीनि त्रीण्येव सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिकृतोद्वेल्लनत्वेनानन्तानुबन्ध्युदयरहितत्वाभावात् । एकविंशतिबन्धकचतुर्गतिसासादनेऽष्टाविंशतिकसत्त्वे मिथ्यात्वानुदयान्नवकादीनि त्रीणि ।।६८०।।

सप्तदशकबन्धे वा चतुर्गतिजेऽष्टचतुरग्रविंशतिकसत्त्वे उदयस्थानान्यपुनरुक्तानि नवकादीनि चत्वारि ।

बाईसके बन्धक चारों गतिके मिथ्यादृष्टी जीवके अठाईसके सत्वमें उदयस्थान दस आदि चार हैं; क्योंकि यहाँ अनन्तानुबन्धी रहित उदयस्थान भी सम्भव हैं। बाईसके बन्ध सहित सत्ताईस, छब्बीसका सत्त्व होनेपर दस आदि तीन ही उदयस्थान होते हैं क्योंकि यहाँ सम्यक्त्व मोहनीय मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना युक्त होनेसे अनन्तानुबन्धी रहितपना सम्भव नहीं है। इक्कीसके बन्धसहित चारों गतिके सासादनमें अठाईसके सत्वमें मिथ्यात्वका उदय न होनेसे नौ आदि तीन उदयस्थान हैं ।।६८०।।

सतरहके बन्ध सहित चारों गतिके जीवोंमें अठाईस और चौबीसके सत्वमें नौ आदि चार उदयस्थान हैं। किन्तु मिश्रमें मिश्रमोहनीय सहित चार कूटोंमें उत्पन्न हुए तीन ही उदयस्थान हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वादि त्रिस्थानंगळप्पुवसंयतनोळु सम्यक्त्वप्रकृत्युदययुतचतुःकूटंगळोळपुनरुक्तनवादित्रिस्थानंगळं तत्सम्यक्त्वप्रकृत्युदयरहितोपशमक्षायिकसम्यक्त्वयुतचतुर्ग्गतिजासंयतनोळष्टादिचतुःस्थानंगळोळपुनरुक्त षट्प्रकृत्युदयस्थानमुमंतु नवादिचतुरुदयस्थानंगळु पेळल्पट्टुवु । मत्तमेकविंशतिसत्त्वस्थानयुतसप्तदशबंधकं चतुर्ग्गतिजक्षायिकसम्यग्दृष्टियसंयतनप्पुदरिनातन विवक्षेयिदं सम्यक्त्वप्रकृत्युदयरहितचतुःकूटंगळोळपुनरुक्ताष्टादित्रिस्थानंगळे संभविसुगुमप्पुदरिंद मल्लि प्रथमनवोदयस्थानमिल्लें दितु पेळल्पट्टुदु । मत्तमा त्रिद्विविंशतिसत्त्वस्थानद्वयं मनुष्यसप्तदशबंधकासंयतनोळेयक्कुमातनुं वेदकसम्यक्त्वयुतदर्शनमोहक्षपकनेयक्कुमप्पुदरिंदं सम्यक्त्वप्रकृत्युदययुतनवादित्रिस्थानंगळे संभविसुगुमप्पुदरिंदमल्लिचरमषट्प्रकृतिस्थानोदयमिल्लें दितु पेळल्पट्टुदु ॥

तेरणवे पुव्वंसे अडादिचउ सगचउण्हमुदयाणं ।
सत्तरसंव वियारो पणगुवसंतंसगेसु दो उदया ॥६८२॥

त्रयोदशनवसु पूर्व्ववदंशेष्वष्टादि चतुःसप्तचतुर्णामुदयानां । सप्तदशवद्विकारः पंचकोपशांतांसकेषु द्वावुदयौ ॥

त्रयोदशप्रकृतिनवप्रकृतिबंधकरुगळु क्रमदिंदं तिर्य्यग्मनुष्यदेशसंयतरुगळुं प्रमत्ताप्रमत्तोपशमकक्षपकापूर्व्वकरणरुगळुमप्परवर्ग्गळोळु पूर्व्वं सप्तदशबंधकनोळु पेळ्द सत्त्वस्थानंगळेयप्पुवल्लि अष्टादिचतुरुदयस्थानंगळुं सप्तादिचतुरुदयस्थानंगळुं क्रमदिंदमष्टाविंशति चतुर्विंशतिसत्त्वस्थानद्वयंगळनुळ्ळ त्रयोदशबंधकनोळं नवबंधकनोळमप्पुवा अष्टादिचतुरुदयस्थानंगळोळु प्रथमाष्टप्रकृत्युदयस्थानमेकविंशतिसत्त्वस्थानयुतरुगळोळिल्ल, त्रिद्विशतिसत्त्वस्थानयुतरोळु अंतिम

मिश्रे मिश्रप्रकृतियुतचतुःकूटजानि त्रीणि । असंयते सम्यक्त्वप्रकृतियुतवियुतकूटाष्टकजानि चत्वारि । सप्तदशकबन्धैकविंशतिकसत्त्वे चतुर्गत्यसंयते क्षायिकसम्यग्दृष्टित्वात्सम्यक्त्वप्रकृतियुतचतुष्कूटाभावान्न प्रथमं नवोदयस्थानं तेनाष्टकादीनि त्रीणि । सप्तदशकबन्धत्रिद्व्यधिकविंशतिकसत्त्वे दर्शनमोहक्षपकमनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टयसंयते सम्यक्त्वप्रकृत्युदययुतत्वादन्तिमं षडुदयस्थानं नेति नवकादीनि त्रीणि ॥६८१॥

त्रयोदशकबन्धे तिर्यग्मनुष्यदेशसंयते नवकबन्धे प्रमत्ताप्रमत्तोभयापूर्वकरणे च सप्तदशकबन्धोक्तमेव सत्त्वं, तत्राष्टकादीनि सप्तकादीन्युदयस्थानानि चत्वारि । किन्तु एकविंशतिकसत्त्वे त्रयोदशकबन्धे प्रथमं अष्टोदय-

असंयतमें सम्यक्त्व प्रकृति सहित और रहित आठ कूटोंसे उत्पन्न हुए चार उदयस्थान हैं। सतरहके बन्ध सहित इक्कीसके सत्त्वमें चारों गतिके असंयतमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि होनेके कारण सम्यक्त्व प्रकृति सहित चार कूट न होनेसे पहला नौका उदयस्थान नहीं है, अतः आठ आदि तीन उदयस्थान हैं। सतरहके बन्धसहित तेईस, बाईसके सत्त्वमें दर्शन मोहकी क्षपणासे युक्त मनुष्य वेदक सम्यग्दृष्टी असंयतमें सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयसहित कूट होनेसे अन्तिम छहका उदयस्थान नहीं है, अतः नौ आदि तीन ही उदयस्थान हैं ॥६८१॥

तेरहके बन्धसहित तिर्यंच और मनुष्य देशसंयतमें तथा नौके बन्धक प्रमत्त, अप्रमत्त और दोनों श्रेणीके अपूर्वकरणमें, सतरहके बन्धकमें जो सत्त्व कहा है उस सत्त्वके होनेपर देशसंयतमें आठ आदि चार, और शेषमें सात आदि चार उदयस्थान हैं। किन्तु इक्कीसके सत्त्व सहित तेरहके बन्धकमें तो पहला आठका उदयस्थान नहीं है। और नौके बन्धकमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचप्रकृतिस्थानोदयमिल्ल। सप्तादिचतुरुदयस्थानंगळोळ् नवबंधकन एकविंशतिसत्त्वस्थानदोळ् प्रथमसप्तप्रकृतिस्थानोदयमिल्ल। त्रिद्विविंशतिसत्त्वनवबंधकनोळ् चरमचतुःप्रकृतिस्थानोदयं संभविसदेंबी पल्लटमरियल्पडुगुं। पंचप्रकृतिबंधमुमुपशांतकषायन सत्त्वस्थानंगळप्प अष्टचतुरेकविंशतिसत्त्वस्थानंगळनुळ्ळनिवृत्तिकरणनोळ् द्विप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। मत्तमा पंचप्रकृतिबंधकनोळं चतुःप्रकृतिबंधकनोळं द्विप्रकृत्युदयमक्कुमा बादरनोळ् सत्त्वस्थानसंभवविशेषमं पेळ्दपरु:—

तेणेवं तेरतिये चदुबंधे पुव्वसत्तगेसु तहा।
तेणुवसंतंसेयारतिये एक्को हवे उदओ ॥६८३॥

तेनैवं त्रयोदशत्रये चतुर्बंधे पूर्वसत्त्वकेषु तथा। तेनोपशांतांशैकादशत्रये एको भवेदुदयः॥

तेन सह आ पंचप्रकृतिबंधदोडने कूडिदनिवृत्तिक्षपकनोळ् त्रयोदशद्वादशैकादशप्रकृतिस्थानत्रयसत्त्वदोळ् एवं इंतुगे द्विप्रकृत्युदयस्थानमक्कुं। चतुर्बंधे पूर्वसत्त्वकेषु तथा मत्तं चतुःप्रकृतिबंधकमष्टाविंशत्यादि एकादशप्रकृतिस्थानावसानमाद पूर्वसत्त्वस्थानंगळनुळ्ळ बादरनोळमंते द्विप्रकृतिस्थानोदयमक्कुं। तेनोपशांतांशैकादशत्रये मत्तमा चतुर्बंधयुतोपशांतकषायाष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानसत्त्वमुमेकादशादित्रिस्थानसत्त्वबादरनोळ् एको भवेदुदयः एकप्रकृत्युदयस्थानमक्कुं॥

स्थानं न। नवकबन्धे सप्तकोदयस्थानं न। त्रिद्वयधिकविंशतिकसत्त्वे त्रयोदशकबन्धे अन्तिमं पंचकोदयस्थानं न। नवकबन्धे चतुष्कोदयस्थानं न तत्सप्तकोद्योदयस्थानानां चतुर्णां सप्तदशकबन्धवद्विचार इति प्रतिपादनात्। पंचकबन्धे उपशान्तकषायोक्ताष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वेऽनिवृत्तिकरणे द्विकोदयः। पुनः तत्पंचकबन्धे चतुष्कबन्धे च द्विकोदयः स्यात् ॥६८२॥

तत्पंचकबन्धेन सहितेऽनिवृत्तिक्षपके त्रिद्वयेकाग्रदशकसत्त्वे तथा चतुष्कबन्धेऽष्टाविंशतिकाद्येकादशकांतपूर्वसत्त्वेऽप्येवं द्विकोदयः स्यात्। पुनः तच्चतुर्विधे उपशान्तकषायाष्टाविंशतिकादित्रिसत्त्वे एकादशकादित्रिसत्त्वे च बादरे एककोदयः स्यात् ॥६८३॥

सातका उदयस्थान नहीं है। तेईस, बाईसके सत्त्वके साथ तेरहके बन्धमें अन्तिम पाँचका उदयस्थान नहीं है तथा नौके बन्ध सहितमें चारका उदयस्थान नहीं है; क्योंकि अपने चार उदयस्थानोंमें सतरहके बन्धकी तरह विचार है ऐसा कहा है अर्थात् सतरहके बन्धमें जैसे क्षायिक और दर्शनमोहके क्षपक वेदक सम्यग्दृष्टीकी अपेक्षा कहा है वैसा ही जानना। पाँचके बन्धक अनिवृत्तिकरणमें उपशान्त कषायमें कहे अठाईस चौबीस इक्कीसके सत्त्वमें दोका उदय है। पुनः पाँचके और चारके बन्ध सहितमें भी दोका उदय है ॥६८२॥

वही कहते हैं—

पाँचके बन्धसहित क्षपक अनिवृत्तिकरणमें तेरह बारह ग्यारहके सत्त्वमें तथा चारके बन्ध सहित अठाईस आदि तीन और तेरह आदि तीनका सत्त्व होते हुए भी दोका उदयस्थान होता है। चारके बन्धसहित अनिवृत्तिकरणमें उपशान्त कषायमें कहे अठाईस आदि तीन व ग्यारह आदि तीनके सत्त्वमें एकका उदय है ॥६८३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिदुइगिबंधे अडचउरिगिवीसे चदुतियेण तिदुगेण ।
दुगिसत्तेण य सहिदे कमेण एक्को हवे उदओ ॥६८४॥

त्रिद्वयेकबंधेऽष्टचतुरेकविंशत्यां चतुस्त्रयेण त्रिद्विकेन द्वयेकसत्त्वेन च सहिते क्रमेणैको भवेदुदयः ॥

त्रिद्वयेकबंधे त्रिबंधकद्विबंधक एकबंधकबादरनोळष्टचतुरेकविंशत्यां अष्टचतुरेकाधिकविंशतिसत्त्वस्थानत्रयंगळु प्रत्येकमप्पुववरोळु क्रमेण क्रमदिंद चतुस्त्रयेण चतुःप्रकृतित्रिःप्रकृतिस्थानद्वयदोडनयुं त्रिद्विकेन त्रिप्रकृतिद्विप्रकृतिस्थानद्वयदोडनेयुं द्वयेकसत्त्वेन च द्विप्रकृत्येकप्रकृतिसत्त्वस्थानद्वयदोडनेयुं कूडि सत्त्वंगळप्पुवल्लि त्रिस्थानकदोळं एको भवेदुदयः एकप्रकृत्युदयस्थानमोंदेयक्कुं। संदृष्टि :—

बं २२। स २८। उ १०।९। ८।७॥ बं २२। स २७। २६। उ १०। ९।८। बं २१। स २८। उ ९।८।७। बं १७। स २८। २४। उ९।८। ७।६। बं १७। स २१। उ ८।७।६॥ बं १७। स २३। २२। उ९।८।७। बं १३। स २८। २४॥ उ ८।७।६। ५। बं। १३। स २१। उ ७।६।५। बं १३। स २३। २२। उ ८। ७।६। बं ९। स २८। २४। उ ७।६।५।४॥ बं ९। स २१। उ ६।५।४। बं ९। स २३। २२। उ ७।६।५। बं।५।४। स २८। २४। २१। १३। १२। ११। उ २। बं ४। स २८। २४। २१। ११।५। ४। उ १। बं ३। स २८। २४। २१। ४। ३। उ १। बं २। स २८। २४। २१। ३। २। उ १। बं १। स २८। २४। २१। २। १। उ १॥

अनंतरमुदयसत्त्वाधिकरणबंधाधेयत्रिसंयोगप्रकारमं गाथासप्तकदिंदं पेळ्दपरु :—

दसगुदये अडवीसतिसत्ते बावीसबंध णव अट्ठे ।
अडवीसे बावीस तिचउबंधो सत्तवीसदुगे ॥६८५॥

दशकोदयेऽष्टाविंशतित्रिसत्त्वे द्वाविंशतिबंधो नवाष्टस्वष्टाविंशतौ द्वाविंशतित्रिचतुर्बंधः सप्तविंशतिद्वये ॥

त्रिकद्विकैकबन्धबादरेषु अष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वेषु चतुष्कत्रिकसत्त्वाभ्यां त्रिकद्विकसत्त्वाभ्यां द्विकैकसत्त्वाभ्यां च क्रमेण सहितेष्वेकोदयः स्यात् ॥६८४॥ अथोदयसत्त्वाधारबन्धाधेयं गाथासप्तकेनाह—

तीन दो और एकके बन्धक अनिवृत्तिकरणमें अठाईस चौबीस इक्कीसके सत्त्वमें व चार और तीनके सत्त्वमें, तीन और दोके सत्त्वमें तथा दो और एकके सत्त्वमें एक-एकका ही उदय है ॥६८४॥

आगे उदय और सत्त्वको आधार तथा बन्धको आधेय बनाकर सात गाथाओंसे कथन करते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशप्रकृतिस्थानोदयमप्पागळु अष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानसत्त्वसंभवमक्कुमल्लि द्वाविंशतिप्रकृतिबंधमक्कुमी मिथ्यादृष्टि सर्वमोहनीयसत्त्वयुतनुं सम्यक्त्वप्रकृतियनुद्वेल्लनमं माडि किडिसिदातनुं मिश्रप्रकृतियुमनुद्वेल्लनमं माडि केडिसिदातनुमक्कुमें बुदत्थं। नवाष्टसु नवप्रकृतिस्थानोदयमुमष्टप्रकृतिस्थानोदयमुमुळ्ळरोळु मष्टाविंशतिप्रकृतिसत्त्वस्थानदोळु क्रमदिदं नवप्रकृत्युदययुतमिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतनोळं अष्टप्रकृत्युदयमिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयतदेशसंयतनोळं द्वाविंशत्यादिबंधस्थानत्रयमुं द्वाविंशत्यादिचतुर्ब्बंधस्थानंगळुमप्पुवु। मत्तमा नवाष्टप्रकृत्युदयंगळोळु क्रमदिदं सप्तविंशत्यादिद्विस्थानंगळं सप्तविंशत्यादिद्विस्थानंगळुमप्पुवल्लि द्वाविंशतिस्थानमुं द्वाविंशतिस्थानमुं बंधमक्कुमेके दोडवर्म्मिथ्यादृष्टिगळं सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्युद्वेल्लकरप्पुदरिंदमें दु पेळदपरु :–

बावीसबंधचदुतिदुवीसंसे सत्तरसयददुगबंधो ।
अट्ठुदये इगिवीसे सत्तरबंधं विसेसं तु ॥६८६॥

द्वाविंशतिबंध चतुस्त्रिद्विविंशत्यंशे सप्तदशासंयतद्विकबंधः। अष्टोदये एकविंशत्यां सप्तदशबंधो विशेषस्तु ॥

द्वाविंशतिप्रकृतिबंधमेयक्कुं। मत्तमा नवाष्टोदयंगळोळु प्रत्येकं चतुस्त्रिद्विविंशतित्रिस्थानंगळप्पुवल्लि नवोदयसंबंधि त्रिस्थानसत्त्वंगळोळु चतुर्व्विंशतिस्थानं मिश्रनोळु संभविसुगुमसंयतनोळु चतुर्व्विंशत्यादित्रिस्थानंगळुं संभविसुगुमप्पुदरिदं सप्तदशप्रकृतिबंधस्थानमेयक्कु। मष्टप्रकृत्युदयसंबंधि चतुर्ब्बंधस्थानंगळप्पुवल्लियु मिश्रनोळमसंयतनोळं मुं पेळ्द प्रकारदिदं देशसंयतनोळं चतुर्व्विंशत्यादित्रिस्थानंगळुं संभविसुगुमप्पुदरिदं सप्तदशबंधस्थानमुं त्रयोदशबंधस्थानमु-

---

दशकोदयेऽष्टाविंशतिकादित्रिसत्त्वे द्वाविंशतिकबन्धः। अयं मिथ्यादृष्टिकः सर्वमोहनीयसत्त्वोपरोवोद्वेल्लितसम्यक्त्वप्रकृतिकोऽन्यो वोद्वेल्लितसम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिको ज्ञातव्यः। नवकोदयेऽसंयतान्तेषु अष्टकोदये देशसंयतान्तेषु चाष्टाविंशतिकसत्त्वे क्रमेण बन्धस्थानानि द्वाविंशतिकादीनि त्रीणि चत्वारि। पुनस्तयोरेव सप्तविंशतिकादिद्वयसत्त्वे तु—

द्वाविंशतिकबन्धः स्यात्। पुनस्तयोरेवोदययोर्मिश्रस्य चतुर्विंशतिकसत्त्वे, असंयतस्य तदादित्रयसत्त्वे च सप्तदशकबन्धः, अष्टकोदये तत्त्रयसत्त्वे देशसंयते त्रयोदशकबन्धः, एकविंशतिकसत्त्वे क्षायिकसम्यग्दृष्ट्य-

---

दसके उदयसहित अठाईस आदि तीनके सत्त्वमें बाईसका बन्ध है। यह मिथ्यादृष्टिके होता है तथा वह सर्वमोहनीयके सत्त्व सहित, या सम्यक्त्व मोहनीयकी उद्वेलना सहित अथवा सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना सहित जानना। नौके उदयसहित असंयत पर्यन्त तथा आठके उदय सहित देशसंयत पर्यन्त अठाईसके सत्त्वमें क्रमसे बाईस आदि तीन तथा चार बन्धस्थान होते हैं ॥६८५॥

उन्हीं दोनोंमें सत्ताईस और छब्बीसका सत्त्व होनेपर बाईसका बन्ध है। पुनः उन्हीं नौ और आठके उदयमें मिश्रमें चौबीसका सत्त्व रहते और असंयतमें चौबीस आदि तीनका सत्त्व रहते सतरहका बन्ध है। आठके उदयके साथ चौबीस आदि तीनका सत्त्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मप्पुवु। मष्टोदयमुमेकविंशतिसत्वस्थानं क्षायिकसम्यग्दृष्टियसंयतनोळ् संभविसुगुमप्पुदरिदं सप्तदशबंधं विशेषदिदमक्कुं ॥

> सत्तुदये अडवीसे बंधो बावीसपंचयं तेण ।
> चउवीसतिगे अयदतिबंधो इगिवीसगयददुगबंधो ॥६८७॥

सप्तोदयेऽष्टविंशत्यां बंधो द्वाविंशतिपंचकं तेन। चतुर्विंशतित्रिकेऽसंयतत्रिबंधः एकविंशतिके असंयतद्विकबंधः ॥

सप्तप्रकृत्युदयमष्टाविंशति प्रकृतिसत्वयुतनोळ् द्वाविंशत्यादिपंचस्थानंगळु बंधमप्पुवें तेंदोडा अष्टाविंशतिसत्वस्थानमुं सप्तप्रकृत्युदयस्थानमनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टियोळं भयजुगुप्साद्वयरहितसासादननोळं भयजुगुप्सान्यतरोदययुतमिश्रनोळं वेदकसम्यग्दृष्ट्यसंयतनोळं देशसंयतवेदकोपशमसम्यग्दृष्टिगळोळं वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्ताप्रमत्तरोळं संभविसुगुमप्पुदरिदं। मत्तमा सप्तप्रकृत्युदयस्थानमुं चतुर्विंशत्यादित्रिस्थानसत्वयुतरोळ् सप्तदशप्रकृत्यादि त्रिस्थानबंधंगळप्पुवें तेंदोडा सप्तप्रकृत्युदयमुं चतुर्विंशतिसत्वमुं भयजुगुप्साद्वयोदयरहित मिश्रनोळमसंयतनोळं मत्तं दर्शनमोहनीयक्षपणाप्रारंभकमनुष्यासंयतनोळु त्रयोविंशतिस्थानमुं द्वाविंशतिस्थानमसंयतचतुर्गतिजरोळं अनंतानुबंधिसत्वरहितदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरोळु चतुर्विंशतिस्थानमुं दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकमनुष्य देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळं त्रयोविंशत्यादि द्विस्थानंगळं संभविसुगुमप्पुदरिदं। मत्तमा सप्तप्रकृत्युदयमेकविंशतिसत्वयुतरुगळु चतुर्गतिजासंयतक्षायिकसम्यग्दृष्टिगळं मनुष्य-

---

संयते सप्तदशकबन्धः विशेषेण ॥६८६॥

सप्तकोदयेऽष्टाविंशतिकसत्त्वे द्वाविंशतिकादिपंचबन्धः। अनन्तानुबन्धिरहितमिथ्यादृष्टौ भयजुगुप्सारहितसासादने तदन्यतरयुतमिश्रे वेदकसम्यग्दृष्टचसंयते वेदकोपशमसम्यग्दृष्टिदेशसंयते वेदकसम्यग्दृष्टिप्रमत्ताप्रमत्तयोश्च तदुदयसत्त्वसद्भावात्। पुनः सप्तकोदये चतुर्विंशतिकादित्रिसत्त्वे सप्तदशकादित्रिबन्धः। कुतः? चतुर्विंशतिकसत्त्वभयजुगुप्सोनमिश्रासंयतयोस्त्रिद्व्यधिकविंशतिकसत्त्वदर्शनमोहक्षपणाप्रारम्भकचतुर्विंशतिकसत्त्वा-

---

होते देशसंयतमें तेरहका बन्ध है। इक्कीसके सत्त्वमें क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंयतमें सतरहका बन्ध है ॥६८६॥

सातके उदय सहित अठाईसके सत्त्वमें बाईस आदि पाँच बन्धस्थान हैं; क्योंकि अनन्तानुबन्धी रहित मिथ्यादृष्टिमें, भयजुगुप्सा रहित सासादनमें, भय जुगुप्सामेंसे एक सहित मिश्रमें, वेदक सम्यग्दृष्टी असंयतमें, वेदक उपशम सम्यदृष्टी देशसंयतमें, वेदक सम्यग्दृष्टी प्रमत्त अप्रमत्तमें सातका उदय और अठाईसका सत्त्व सम्भव है। पुनः सातके उदयसहित चौबीस आदि तीनके सत्त्वमें सतरह आदि तीन बन्धस्थान हैं; क्योंकि चौबीसके सत्त्वसे युक्त भय जुगुप्सा रहित मिश्र और असंयतमें, तेईस चौबीसके सत्त्व युक्त दर्शनमोहकी क्षपणाके प्रारम्भमें और चौबीसके सत्त्वयुक्त अनन्तानुबन्धी रहित मनुष्य असंयतादि चार गुणस्थानवर्तियोंमें सातका उदय सम्भव है। सातके उदय और इक्कीसके सत्त्वमें

---

१. म °प्सान्यतरद्वयरहित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षायिकसम्यग्दृष्टि देशसंयतनोळ् संभविसुगुमप्पुदरिंदं सप्तदशप्रकृतिबंधमुं त्रयोदशप्रकृतिबंधमुमप्पुवु ॥

छप्पण उदये उवसंतंसे अयदतिगदेसदुगबंधो ।
तेण तिदोवीसंसे देसदु णवबंधयं होदि ॥६८८॥

षट्पंचोदये उपशांतांशे असंयतत्रय देशसंयतद्वयबंधस्तेन त्रिद्विविंशत्यंशे देशसंयतद्वयं नवबंधो भवति ॥

षट्प्रकृत्युदयदोळं पंचप्रकृत्युदयदोळमुपशांतकषायन सत्वस्थानत्रयमक्कु मल्लि क्रमदिदं सप्तदशादित्रिस्थानबंधमुं त्रयोदशादिदेशसंयतनंथादिद्विस्थानंगळुं बंधमप्पुवेंतेंदोडल्लि षट्प्रकृत्युदयमुमष्टाविंशति चतुर्विंशत्येकविंशतित्रयमसंयतदेशसंयत प्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणरोळुपशमक्षायिकसम्यक्त्ववेदकसम्यक्त्वभेददिदं यथासंभवमागियप्पुवप्पुदरिंदं सप्तदश त्रयोदश नवप्रकृतिबंधस्थानत्रयसंभवं पेळल्पट्टुदु । पंचप्रकृत्युदयसंबंधियप्पष्टाविंशति चतुर्विंशत्येकविंशतिसत्वस्थानंगळु देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणरुगळोळुपशमक्षायिकसम्यक्त्वभेददिदं त्रयोदशनवप्रकृतिबंधस्थानद्वयं संभविसुगुमें बुदत्थं । तेन त्रिद्विविंशत्यंशे मत्तमा षट्पंचप्रकृत्युदयंगळोळु कूडिद त्रिद्विविंशति सत्वस्थानयुतरोळु क्रमदिदं देशसंयतत्रयोदशादि द्विस्थानबंधमुं नवप्रकृतिबंधमुमक्कुमें तें दोडा षट्प्रकृत्युदयमुं त्रयोविंशतिस्थानसत्वमुं दर्शनमोहक्षपकदेशसंयतं सम्यक्त्वप्रकृत्युदययुतंग मिथ्यात्वमं क्षपिसि त्रयोविंशतिसत्वस्थानयुतंगे त्रयोदशप्रकृतिबंधमक्कुं । मिश्रप्रकृतियं क्षपिसि द्वाविंशतिसत्वस्थानयुतंगेयुं त्रयोदशप्रकृतिबंधमेयक्कुं । प्रमत्ताप्रमत्तरुगळुमा प्रकारदिदं वेदकसम्यग्दृष्टिगळु मिथ्यात्वमिश्रप्रकृतिगळं क्रमदिदं क्षपिसि त्रयोविंशति द्वाविंशतिसत्वयुतरंगे नवबंधकसत्वं संभविसुगुं । मत्तं पंचप्रकृत्युदयमुं त्रयोविंशतिसत्वस्थानमुं द्वाविंशतिसत्वस्थानमुं मिथ्यात्वमिश्रप्रकृतिगळं क्षपिसि प्रमत्ताप्रमत्तरुगळ्गे सत्वमक्कुमप्पुदरिंदं नवबंधकरप्परु :—

नन्तानुबन्धिरहितमनुष्यासंयतादिचतुर्षु च सप्तकोदयसम्भवात् । पुनः सप्तकोदयैकविंशतिकसत्त्वक्षायिकसम्यग्दृष्टौ चतुर्गत्यसंयते सप्तदशकबन्धः, मनुष्यदेशसंयते च त्रयोदशकबन्धः ॥६८७॥

षट्कोदयेऽष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वे सप्तदशकादित्रिबन्धः । पंचकोदये तत्सत्त्वे त्रयोदशकादिद्विबन्धः । असंयतादिपंचसु षट्कोदयस्य उपशमक्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतादिचतुर्षु पंचकोदयस्य च सद्भावात् । पुनः षट्कोदयवेदकसम्यग्दृष्टौ मिथ्यात्वं क्षपित्वा त्रयोविंशतिकसत्त्वे मिश्रं क्षपित्वा द्वाविंशतिकसत्त्वे च देशसंयते

क्षायिक सम्यग्दृष्टि चारों गतिके असंयतमें सतरहका बन्ध है। देशसंयत मनुष्यमें तेरहका बन्ध है ॥६८७॥

छहके उदयसहित अठाईस चौबीस इकईसके सत्त्वमें सतरह आदि तीन बन्धस्थान हैं। पाँचके उदयके साथ उक्त तीनोंके सत्त्वमें तेरह आदि दो बन्धस्थान हैं, क्योंकि असंयत आदि पाँचमें छहका उदय और उपशम तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टी देशसंयत आदि चारमें पाँचका उदय पाया जाता है। छहके उदयसहित वेदक सम्यग्दृष्टीमें मिथ्यात्वको क्षयकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउरुदयुवसंतंसे णवबंधो दोण्णि उदयपुव्वंसे ।
तेरसतियसत्तेवि य पणचउठाणाणि बंधस्स ॥६८९॥

चतुरुदयोपशांतांशे नवबंधो द्व्युदयपूर्व्वांशे । त्रयोदशत्रयसत्वेऽपि च पंचचतुःस्थानानि बंधस्य ॥

चतुःप्रकृत्युदयमुमुपशांतकषायसत्वस्थानंगळोळु नवप्रकृतिबंधमक्कुमेंतेंदोडा चतुःप्रकृत्युदयापूर्व्वकरणोपशमकक्षपकरुगळ्गे उपशमश्रेणियोळा त्रिस्थानंगळुं क्षपकश्रेणियोळेकविंशति सत्वस्थानं संभविसुगुमल्लि नवबंधकनक्कुमें बुदत्थं । द्विप्रकृत्युदयमुमष्टाविंशत्याविषट्स्थानंगळुमनिवृत्तिकरणोपशमकक्षपकरुगळोळु संभविसुगुमल्लि पंचप्रकृतिबंधस्थानमुं चतुःप्रकृतिबंधस्थानमक्कुमेंतेंदोडे उपशमश्रेणियोळु सवेदभागानिवृत्तिकरणरोळु पुंवेदोदय चरमसमयपर्य्यंतं अष्टाविंशति आदि त्रिस्थानंगळ सत्वमुं पंचप्रकृतिबंधमुमक्कुं । षंडस्त्रीवेदोदयंगळिंदमुपशमश्रेण्यारूढरुगळोळा त्रिस्थानसत्वमुं चतुर्ब्बंधकत्वमुमक्कुं । क्षपकश्रेणियोळु द्विप्रकृत्युदयमुमेकविंशतिसत्वस्थानमुं त्रयोदशसत्वस्थानमुं द्वादशसत्वस्थानमुमेकादशसत्वस्थानमुं क्रमदिंदमष्टकषाय नपुंसकवेद स्त्रीवेदंगळं क्षपिसि पुंवेदानिवृत्तिकरणनोळु सत्वमप्पुवल्लि सर्व्वत्र पंचबंधकनेयक्कु--। मितरवेदोदययुतत्रयोदशादि द्विस्थानसत्वयुतरोळु चतुर्ब्बंधमुमक्कुमें बुदत्थं ।

एक्कुदयुवसंतंसे बंधो चतुरादिचारि तेणेव ।
एयारदु चदुबंधो चदुरंसे चदुतियं बंधो ॥६९०॥

एकोदयोपशांतांशे बंधश्चतुरादिबंधश्चतुर्णां तेनैवैकादशद्वये चतुर्ब्बंधश्चतुरंशे चतुस्त्रिकं बंध ॥

त्रयोदशकबन्धः । पंचकोदयप्रमत्ताप्रमत्ते च नवकबन्धः स्यात् ॥६८८॥

चतुष्कोदयोभयापूर्वकरणे उपशांतकषायसत्वे नवबन्धः । द्विकोदये सवेदानिवृत्तिकरणे तत्सत्वे पुंवेदोदयचरमसमयपर्यंतं पंचकबन्धः । षंढस्त्रीवेदोदयारूढे तु चतुष्कबन्धः । क्षपकेऽष्टकषायषंढस्त्रीपुंक्षपणाभागेष्वेकविंशतिकत्रिद्वयेकाग्रदशकसत्वेषु पंचकबन्धः । इतरवेदोदययुतत्रयोदशकादिद्वितत्वे तु चतुष्कबन्धः ॥६८९॥

तेईसका सत्त्व होनेपर, मिश्रमोहनीयको क्षयकर बाईसका सत्त्व होनेपर देशसंयतमें तेरहका बन्धस्थान है। पाँचके उदय सहित प्रमत्त अप्रमत्तमें नौका बन्ध है ॥६८८॥

चारके उदयसहित दोनों श्रेणिके अपूर्वकरणमें उपशान्त कषायमें पाये जानेवाले अठाईस चौबीस इक्कीसके सत्त्वमें नौका बन्ध है। दोके उदय सहित सवेद अनिवृत्तिकरणमें उक्त तीनका सत्त्व होते पुरुषवेदके उदयके चरम समय पर्यन्त पाँचका बन्ध है। नपुंसक और स्त्रीवेदके उदयके साथ श्रेणी चढ़नेवालेके चारका बन्ध है। क्षपकश्रेणीमें आठ कषाय, नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, पुरुषवेदके क्षपणरूप भागोंमें इक्कीस तेरह बारह ग्यारहका सत्त्व होते पाँचका बन्ध है। अन्यवेदके उदयसहित तेरह बारहका सत्त्व होते चारका बन्ध है ॥६८९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकप्रकृत्युदयमुमुपशांतसत्त्वस्थानत्रययुतानिवृत्तिकरणनोळुपशमश्रेणियोळु चतुःप्रकृतिस्थानादिचतुर्बंधस्थानंगळप्पुवु। मत्तं तदेकोदययुतनोळु एकादशपंचप्रकृतिसत्त्वस्थानद्वयं संभविसुगुमल्लि चतुःप्रकृतिस्थानबंधमेयक्कुं। मत्तमेकोदयं चतुःप्रकृतिसत्त्वमुमुळ्ळनिवृत्तिकरणनोळु चतुस्त्रिप्रकृतिस्थानद्वयं बंधमक्कुं।

तेण तिये तिदुबंधो दुगसत्ते दोण्णि एक्कयं बंधो।
एक्कंसे इगिबंधो गयणं वा मोहणीयस्स ॥६९१॥

तेन त्रये त्रिद्विबंधः द्विकसत्त्वे द्वयेकबंधः। एकांशे एकबंधो गगनंवा मोहनीयस्य ॥

आ येकोदयमुं त्रिप्रकृतिसत्त्वमुमुळ्ळनोळु अनिवृत्तिकरणनोळु त्रिप्रकृतिबंधस्थानमुं द्विप्रकृतिबन्धस्थानमु मक्कुं। द्विप्रकृतिसत्त्वयुतनोळु द्विप्रकृतिबंधमुमेकप्रकृतिबंधमुमक्कुमेकप्रकृत्युदयमुमेकप्रकृतिसत्त्वमुमुळ्ळनोळु अनिवृत्तिकरणनोळु एकप्रकृतिबंधमु अबंधस्थानमुमक्कुमितु उदयसत्त्वाधारबंधादेयत्रिसंयोगप्रकारं पेळल्पट्टुदर संदृष्टि। उ १०। स २८। २७। २६। बं २२। उ ९। स २८। बं २२। २१। १७। उ ९। स २७। २६। बं २२। उ ९। स २४। २३। २२। बं १७। उ ८। स २८। बं २२। २१। १७। १३। उ। ८। स २७। २६। बं २२। उ ८। स २४। २३। २२। बं १७। उ ७। स २८ बं २२। २१। १७। १३। ९। उ ७। स २४। २३। २२। बंध १७। १३। ९। उ ७। स २१। बं १७। १३। उ ६। स २८। २४। २१। बं १७। १३। ९। उ ६। स २३। २२। बं १३। ९। उ ५। स २८। २४। २१॥ बं १३। ९। उ ५। स २३। २२। बं ९। उ ४। स २८। २४। २१। बं ९। उ २। स २८। २४। २१। १३। १२। ११। बं ५। ४। उ १। स २८। २४। २१। बंध ४। ३। २। १। उ १। स ११। ५। बं ४। उ १। स ४॥ बं ४। ३। उ १। स ३। बं ३। २। उ १। स २। बं २। १। उ १। स १। बं १॥

एककोदयानिवृत्तिकरणोपशमके उपशांतकषायसत्त्वे चतुष्कादिचतुःस्थानबन्धः। पुनः तदेककोदयैकादशकपंचकसत्त्वे चतुष्कबन्धः। पुनः तदेककोदयैकादशकपंचकसत्त्वे चतुष्कबन्धः। पुनरेककोदयचतुष्कसत्त्वे चतुष्कत्रिकबन्धः ॥६९०॥

तदेककोदयानिवृत्तिकरणे त्रिकसत्त्वे त्रिकद्विकबन्धः द्विकसत्त्वे द्विकैककबन्धः। एककोदयसत्त्वैककबन्धः

एकके उदयसहित अनिवृत्तिकरण उपशमकमें उपशान्त कषायमें कहे अठाईस चौबीस इक्कीसके सत्त्वमें चार आदि चार बन्धस्थान हैं। एकके उदय सहित ग्यारह और पाँचके सत्त्वमें चारका बन्ध है। एकके उदयसहित चारके सत्त्वमें चार और तीनका बन्ध है ॥६९०॥

एकके उदयसहित अनिवृत्तिकरणमें तीनका सत्त्व रहते तीनका व दोका बन्ध है। एकके उदयसहित दोके सत्त्वमें दोका व एकका बन्ध है। एक ही का उदय और सत्त्व रहते एकका ही बन्ध है। अथवा बन्धका अभाव है। इस प्रकार मोहनीयके तीन संयोगी भंग कहे ॥६९१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं नामकर्म्मस्थानंगळगे त्रिसंयोगप्रकारमं पेळवपरु :—

णामस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु ।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ॥६९२॥

नाम्नश्च बंधोदयसत्त्वस्थानानां सर्व्वभंगाः खलु प्रत्येकोक्तवद्भवे त्रिसंयोगेपि सर्व्वत्र ॥

नामकर्म्मदर्कयुं बंधोदयसत्वस्थानंगळ सर्व्वभंगंगळं यथास्वरूपंगळु। अवुं प्रत्येकदोळु पेळल्पट्टंते ई पेळल्पडुत्तिर्द्द त्रिसंयोगदोळं सर्व्वत्रमक्कुमेंदु स्फुटमागरियल्पडुगु—। मिल्लि केवलं बंधोदयसत्त्वस्थानंगळे पेळल्पट्टपुवु। भंगंगळु विवक्षिसल्पडवु। मोहनीयदोळु पेळदंते त्रिसंयोग-दोळु तदंतर्ब्भावमरियल्पडुगुमेंबुदर्त्थं ॥

अनंतरं बंधोदयसत्त्वस्थानंगळं मिथ्यादृष्टि आदि चतुर्द्दशगुणस्थानंगळोळु नानाजीवापेक्षेयिदं युगपत्संभविसुव स्थानंगळ संख्येगळं पेळवपरु :—

छण्णवछत्तियसगइगिदुगतिगदुगतिण्णि अट्ठ चत्तारि ।
दुगदुगचदुदुगपणचदु चदुरेयचदू पणेयचदू ॥६९३॥

षड्नवषट्त्रिकसप्तैकद्विकत्रिकद्विकत्र्यष्टचत्वारि। द्विकद्विकचतुर्द्विक पंचचतुश्चतुरेकचतुः पंचैकचत्वारि ॥

एगेगमट्ठ एगेगमट्ठ छदुमट्ठकेवलिजिणाणं ।
एगचदुरेगचदुरो दोचदु दोछक्कउदयंसा[2] ॥६९४॥

एकैकमष्टैकैकमष्टछद्मस्थ केवलिजिनानामेकचतुरेकचतुर्द्विचतुर्द्विषट्कमुदयांशाः ॥ गाथाद्वयं ॥

षड्नवषट् मिथ्यादृष्टियोळु बंधोदयसत्त्वस्थानंगळु क्रमदिदं षट्नवषट् प्रमितंगळप्पुवु। मिथ्या बं ६। उ ९। स ६। त्रिकसप्तैक सासादननोळु बंधोदयसत्वस्थानंगळु त्रिक सप्त एक प्रमितं-

---

शून्यं च। मोहनीयस्य त्रिकसंयोग उक्तः ॥६९१॥ अथ नामकर्मस्थानानां त्रिसंयोगमाह—

नाम्नः बन्धोदयसत्वानां सर्वभंगाः प्रत्येकोक्तरीत्यैवास्मिस्त्रिसंयोगेऽपि सर्वत्र स्युरिति स्फुटं ज्ञातव्यं ॥६९२॥

तद्बन्धोदयसत्त्वस्थानानि गुणस्थानेषु क्रमेण मिथ्यादृष्टौ षट् नव षट्। सासादने त्रीणि सप्तैकं। मिश्रे द्वे त्रीणि द्वे। असंयते त्रीण्यष्टौ चत्वारि। देशसंयते द्वे द्वे चत्वारि। प्रमत्ते द्वे पंच चत्वारि। अप्रमत्ते

आगे नामकर्मके स्थानोंके त्रिसंयोगी भंग कहते हैं—

नामकर्मके बन्ध उदय सत्त्व स्थानोंके सब भंग जैसे प्रत्येक पृथक्-पृथक् कहे थे वैसे ही त्रिसंयोगमें भी सर्वत्र जानना ॥६९२॥

नामकर्मके बन्धस्थान उदयस्थान सत्त्वस्थान गुणस्थानोंमें क्रमसे मिथ्यादृष्टिमें छह नौ छह, सासादनमें तीन सात एक, मिश्रमें दो तीन दो, असंयतमें तीन आठ चार, देशसंयतमें

---

१. चदुम. मु.। २. दो छक्क बंध उ. मु.।

गळप्पुवु । सासा बं ३ । उ ७ । स १ । द्विक त्रिक द्विक । मिश्रनोळु क्रमदिदं द्विक त्रिक द्विकप्रमितंगळप्पुवु । मिश्र बं २ । उ ३ स २ । असंयतनोळु क्रमदिदं त्र्यष्टचतुःप्रमितंगळप्पुवु । असं । बं ३ । उ ८ । स ४ । देशसंयतनोळु क्रमदिदं द्विकद्विकचतुप्रमितंगळप्पुवु । देश । बं २ । उ २ । स ४ । प्रमत्तसंयतनोळु द्विकपंच चतुःप्रमितंगळप्पुवु । प्रम । बं २ । उ ५ । सत्व ४ । अप्रमत्तसंयतनोळु चतुरेक चतुः प्रमितंगळप्पुवु । अप्र । बं ४ । उ १ । स ४ ॥

अपूर्व्वकरणनोळु पंचैकचतुःप्रमितंगळप्पुवु । अपू । बं ५ । उ १ । स ४ ॥ अनिवृत्तिकरणनोळु एकैकमष्टप्रमितंगळप्पुवु । अनिवृत्ति । बं १ । उ १ । स ८ ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळमेकैकाष्टप्रमितंगळप्पुवु । सूक्ष्म बं १ । उ १ । स ८ ॥ छद्मस्थरप्पुपशांतकषाय क्षीणकषायवीतरागरोळु एकचतुरेकचतुःस्थानंगळु क्रमदिनप्पुवु । उपशांत बं । ० । उ १ । स ४ ॥ क्षीणकषायनोळु बंध । ० । उ १ । स ४ ॥ केवलिजिनरुगळोळु द्वि चतुर्द्विषट्कप्रमितोदयसत्वस्थानंगळु क्रमदिदमप्पुवु । सयोगिबं । ० । उ २ । स ४ ॥ अयोगि बं । ० । उ २ । स ६ । ० ॥

णामस्स य बंधोदयसत्ताणि गुणं पडुच्च उत्ताणि ।
पत्तेयादो सव्वं भणिदव्वं अत्थजुत्तीए ॥६९५॥

नाम्नश्चबंधोदयसत्वानि गुणं प्रतीत्योक्तानि । प्रत्येकात्सर्व्वं भणितव्यमर्त्थयुक्त्या ॥

नामकर्म्मक्के प्रत्येकबंधोदयसत्वस्थानंगळु मुन्नं गुणस्थानदोळु पेळल्पट्टु वप्पुवरिवमवरत्तणिदमर्त्थयुक्तियिदमदेल्लमिल्लि पेळल्पडुगु- मा मिथ्यादृष्ट्यादियागि पेळल्पट्ट षड्नव षड्बंधोदयसत्वस्थानादिगळ संख्याविषयस्थानंगळवावुवें दोडे पेळ्दपरु :—

तेवीसादी बंधा इगिवीसादीणि उदयठाणाणि ।
बाणउदादी सत्तं बंधा पुण अट्ठवीसतियं ॥६९६॥

त्रयोविंशत्यादिबंधाः एकविंशत्याद्युदयस्थानानि । द्वानवत्यादिसत्वं बंधाः पुनरष्टाविंशतित्रिकं ॥

चत्वार्येकं चत्वारि । अपूर्वकरणे पंचैकं चत्वारि । अनिवृत्तिकरणे एकमेकमष्टौ । सूक्ष्मसांपरायेऽप्येकमेकमष्टौ । उपरि बन्धे शून्यं । उदयसत्त्वयोरेव उपशान्तकषाये एकं चत्वारि । क्षीणकषायेऽप्येकं चत्वारि । सयोगे द्वे चत्वारि । अयोगे द्वे षट् ॥६९३॥६९४॥

नाम्नो बन्धोदयसत्त्वस्थानानि गुणस्थानेषूक्तानि तान्येव प्रत्येकतोऽर्थयुक्त्या सर्वाण्युच्यंते ॥६९५॥

दो-दो चार, प्रमत्तमें दो पाँच चार, अप्रमत्तमें चार एक चार, अपूर्वकरणमें पाँच एक चार, अनिवृत्तिकरणमें एक-एक आठ, सूक्ष्मसाम्परायमें भी एक-एक आठ हैं। ऊपर बन्धका तो अभाव है केवल उदय और सत्त्व ही है। सो उपशान्तकषायमें एक चार, क्षीणकषायमें भी एक चार, सयोगीमें दो चार और अयोगीमें दो छह जानना ॥६९३-६९४॥

नामकर्मके बन्ध उदय सत्त्वस्थान गुणस्थानोंमें कहे उन सबको पृथक्-पृथक् अर्थकी युक्तिसे कहते हैं ॥६९५॥

क-१२९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टियोळु पेळ्द षड्बंधस्थानंगळु त्रयोविंशत्यादिगळप्पुवु । उदयस्थानंगळुमेकविंशत्यादि नवकंगळप्पुवु । सत्वस्थानषट्कमुं द्वानवत्यादिगळप्पुवु । मिथ्या । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उद २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । सत्व ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । सासादननोळु पेळ्द बंधस्थानत्रयमष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळप्पुवु ॥

इगिवीसादी एक्कत्तीसंता सत्त अट्ठवीसूणा ।
उदया सत्तं णउदी बंधा पुण अट्ठवीसदुगं ॥६९७॥

एकविंशत्याद्येकत्रिंशदंताः सप्ताष्टाविंशत्यूनाः उदयाः सत्वं नवतिः बंधौ पुनरष्टाविंशति द्वौ ॥

उदयस्थानंगळुमेकविंशत्याद्येकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानावसानमाद स्थानंगळोळु सप्तविंशत्यष्टाविंशतिप्रकृतिस्थानद्वयरहित सप्तोदयस्थानंगळप्पुवु । नवति सत्वस्थानमोंदेयक्कुं । सासा । बं २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २९ । ३० । ३१ । स ९० । तु मत्ते मिश्रनोळा द्विबंधस्थानंगळावुवेंदोडे अष्टाविंशतिद्वयमक्कुं ॥

एगुणतीसंतिदयं उदयं बाणउदिणउदियं सत्तं ।
अयदे बंधट्ठाणं अट्ठावीसत्तियं होदि ॥६९८॥

एकोनत्रिंशत् त्रितयः उदयः द्वानवतिर्नवतिश्च सत्वं । असंयते बंधस्थानमष्टाविंशतित्रिकं भवति ॥

आ मिश्रनोळेकोनत्रिंशत् त्रितयमुदयमक्कुं । द्वानवतिनवति स्थानद्वयं सत्वमक्कुं । मिश्र बं । २८ । २९ । उ २९ । ३० । ३१ । सत्व ९२ । ९० ॥ असंयतनोळु पेळ्द बंधस्थानंगळुमष्टाविंशतित्रितय मक्कुं ॥

मिथ्यादृष्टौ बन्धस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट् । उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव । सत्वस्थानानि द्वानवतिकादीनि षट् । सासादने बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥६९६॥

उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि सप्ताष्टाविंशतिकोनान्येकत्रिंशत्कान्तानि सप्त, सत्वस्थानं नवतिकं, तु—पुनः मिश्रे बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादिद्वयं ॥६९७॥

उदयस्थानान्येकोनत्रिंशत्कादीनि त्रीणि सत्वस्थाने द्वानवतिकादिद्वयं । असंयते बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥६९८॥

मिथ्यादृष्टिमें बन्धस्थान तेईस आदि छह हैं। उदयस्थान इक्कीस आदि नौ हैं। सत्त्वस्थान बानबे आदि छह हैं। सासादनमें बन्धस्थान अठाईस आदि तीन हैं ॥६९६॥

उदयस्थान सत्ताईस अठाईसके बिना इक्कीस आदि इकतीस पर्यन्त होते हैं। सत्त्वस्थान नब्बेका है। मिश्रमें बन्धस्थान अठाईस आदि दो हैं ॥६९७॥

उदयस्थान उनतीस आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान बानबे-नब्बे दो हैं। असंयतमें बन्धस्थान अठाईस आदि तीन हैं ॥६९८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदया चउवीसूणा इगिवीसप्पहुडि एक्कतीसंता ।
सत्तं पढमचउक्कं अपुव्वकरणोत्ति णायव्वं ॥६९९॥

उदयाश्चतुर्व्विशत्यूनाः एकविंशतिप्रभृति एकत्रिंशदंताः । सत्त्वं प्रथमचतुष्कमपूर्व्वकरणपर्य्यंतं ज्ञातव्यं ॥

आ असंयतनोळु उदयस्थानंगळु चतुर्व्विंशतिस्थानं पोरगागि एकविंशतिस्थानप्रभृत्येकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानांतमादष्टस्थानंगळप्पुवु । एते दोडा चतुर्व्विंशतिस्थानमेकेंद्रियदोळल्लदेल्लियुं संभविसदप्पुदरिंदमा उदयस्थानं कळेयल्पट्टुदें दरियल्पडुगुं । सत्वस्थानंगळु प्रथम चतुःस्थानंगळप्पुवु । मेलेयुमपूर्व्वकरणगुणस्थानपर्य्यंतमी प्रथमचतुःस्थानंगळे सत्वंगळप्पुवें दरियल्पडुगुं । असंयत बं । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

अडवीसदुगं बंधो देसे पमदे य तीसदुगमुदओ ।
पणुवीससत्तवीसप्पहुडी चत्तारि ठाणाणि ॥७००॥

अष्टाविंशतिद्विकं बंधो देशसंयते प्रमत्ते च त्रिंशद्द्विकमुदयः । पंचविंशतिः सप्तविंशत्यादि चत्वारि स्थानानि ॥

देशसंयतनोळष्टाविंशतिद्विस्थानबंधमक्कुं । त्रिंशत्प्रकृतिस्थानद्विकमुदयमक्कुं । सत्वस्थानंगळसंयतनोळु पेळ्द प्रथमचतुःस्थानंगळप्पुवु । देश । बं २८ । २९ । उ ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । प्रमत्तसंयतनोळं बंधस्थानंगळु देशसंयतंगे पेळ्दंते अष्टाविंशत्यादिद्विस्थानंगळुं उदयस्थानंगळु पंचविंशतियुं सप्तविंशत्यादिचतुःस्थानंगळुमप्पुवु । सत्वस्थानंगळसंयतनोळु पेळ्द प्रथमचतुःस्थानंगळप्पुवु । प्रमत्त बं २८ । २९ । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । सत्व ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि चतुर्विंशतिकोनान्येकत्रिंशत्कान्तान्यष्टौ तस्यैकेन्द्रियेष्वेवोदयात् । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि । इमान्येवापूर्वकरणांतं ज्ञातव्यानि ॥६९९॥

देशसंयते बन्धस्थानेऽष्टाविंशतिकादिद्वयं च उदयस्थाने त्रिंशत्कादिद्वयं । सत्त्वमसंयतोक्तं । प्रमत्ते बन्धस्थाने देशसंयतोक्ते द्वे । उदयस्थानानि पंचविंशतिकं सप्तविंशतिकादीनि चत्वारि च । सत्त्वस्थानान्यसंयतोक्तानि ॥७००॥

उदयस्थान चौबीसके बिना इक्कीससे इकतीस पर्यन्त आठ हैं। चौबीसका उदयस्थान एकेन्द्रियके होता है इससे वह असंयतमें नहीं होता। सत्त्वस्थान तिरानवे आदि चार हैं। ये चार सत्त्वस्थान अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यन्त जानना ॥६९९॥

देशसंयतमें बन्धस्थान अठाईस आदि दो हैं। उदयस्थान तीस आदि दो हैं। सत्त्वस्थान असंयतके समान चार हैं। प्रमत्तमें बन्धस्थान देशसंयतमें कहे दो हैं। उदयस्थान पच्चीस तथा सत्ताईस आदि चार हैं। सत्त्वस्थान असंयतमें कहे चार हैं ॥७००॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपमत्ते य अपुव्वे अडवीसादीण बंधमुदओ दु ।
तीसमणियट्टिसुहुमे जसकित्ती एक्कयं बंधो ॥७०१॥

अप्रमत्ते चापूर्व्वेऽष्टाविंशत्यादीनां बंधः उदयस्तु । त्रिंशदनिवृत्तिसूक्ष्मयोर्य्यशस्कीर्त्तिरेकको बंधः ॥

अप्रमत्तनोळमपूर्व्वकरणनोळमष्टाविंशत्यादिचतुःस्थानंगळु पंचस्थानंगळु बंधमप्पुवु । तु मत्तमुदयस्थानंगळु प्रत्येकं त्रिंशत् त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमक्कुं । सत्वस्थानंगळु मुंपेळ्द प्रथमचतुःस्थानंगळेयप्पुवु । अप्रमत्त बं २८ । २९ । ३० । ३१ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अपूर्व्वकरण बं २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अनिवृत्ति सूक्ष्मयोः अनिवृत्तिकरणनोळं सूक्ष्मसांपरायनोळं प्रत्येकं यशस्कीर्त्तिनाममों दे बंधमक्कुं ॥

उदओ तीसं सत्तं पढमचउक्कं च सीदिचउसंत्ते[1] ।
खीणे उदओ तीसं पढमचऊ सीदिचउ सत्तं ॥७०२॥

उदयः त्रिंशत्सत्वं प्रथमचतुष्कं चाशीति चत्वारि । उपशांते क्षीणकषाये उदयस्त्रिंशत्प्रथमचतुरशीति चतुःसत्वं ॥

अनिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायरुगळोळुदयस्थानमों दे त्रिंशत्प्रकृतिकमक्कुं । सत्वस्थानंगळु प्रत्येकं प्रथमचतुष्कमुमशीति चतुष्कमुमक्कुं । अनिवृत्ति । बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । सूक्ष्मसांपराय बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । उपशांतकषायनोळं क्षीणकषायनोळं उदयस्थानं प्रत्येकं त्रिंशत्प्रकृतिकमक्कुं । सत्वस्थानंगळु यथाक्रमं प्रथमचतुःस्थानंगळुमशीतिचतुःस्थानंगळुमप्पुवु । उपशांतबंध । ० । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । क्षीणकषाय बं । ० । उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

अप्रमत्तापूर्वकरणयोर्बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि पंच । तु पुनः उदयस्थानं त्रिंशत्कं । सत्त्वमसंयतोक्तं । अनिवृत्तिकरणसूक्ष्मसाम्पराययोर्बन्धस्थानं यशस्कीर्तिनाम ॥७०१॥

उदयस्थानं त्रिंशत्कं, सत्त्वस्थानानि प्रत्येकं त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि चत्वारीत्यष्टौ । उपशान्तक्षीणकषाययोरुदयस्थानं त्रिंशत्कं सत्त्वस्थानान्युपशान्तकषाये त्रिनवतिकादीनि चत्वारि, क्षीणकषायेऽशीतिकादीनि चत्वारि ॥७०२॥

अप्रमत्त और अपूर्वकरणमें बन्धस्थान अठाईस आदि चार तथा पाँच क्रमसे जानना। उदयस्थान तीसका ही है। सत्त्वस्थान असंयतमें कहे चार जानना। अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें बन्धस्थान एक यशस्कीर्तिरूप ही है ॥७०१॥

उदयस्थान तीसका ही है। सत्त्वस्थान तिरानवे आदि चार और अस्सी आदि चार इस तरह आठ हैं। उपशान्तकषाय और क्षीणकषायमें उदयस्थान तीसका ही है। सत्त्वस्थान उपशान्तकषायमें तिरानवे आदि चार और क्षीणकषायमें अस्सी आदि चार हैं ॥७०२॥

---

१. मु. सत्तं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जोगिम्मि अजोगिम्मि य तीसिगितीसं णवट्ठयं उदओ ।
सीदादिचऊ छक्कं कमसो सत्तं समुद्दिट्ठं ॥७०३॥

योगिन्ययोगिनि च त्रिंशदेकत्रिंशत् नवाष्टकमुदयः । अशीत्यादि चतुः षट्कं क्रमशः सत्वं समुद्दिष्टं ॥

सयोगकेवलिजिनरोळं अयोगिजिनरोळं क्रमदिनुदयं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं--

बं	उ	स
१	८	९
३१	९	१०
३०	३१	७७
२९	३०	७८
२८	२९	७९
२६	२८	८०
२५	२७	८२
२३	२६	८४
	२५	८८
	२४	९०
	२१	९१
	२०	९२
		९३

तुदयस्थानद्वयमुमयोगिकेवलियोळु नवप्रकृतिस्थानमुमंतुदयस्थानद्वयमुं सत्वस्थानंगळुमशीत्यादिचतुःस्थानंगळु । मशीत्यादि षट्स्थानंगळु मप्पुवु । सयोग बं । ० । उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । अयोगि बं । ० । उ ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥

यितु चतुर्द्दशगुणस्थानंगळोळु नामकर्म्मबंधोदय सत्वस्थानंगळ त्रिसंयोगप्रकारमं पेळ्दनंतरं चतुर्द्दशजीवसमासंगळोळु अपर्य्याप्तजीवसमासंगळेल्लरोळं पर्य्याप्तजीवसमासंगलोळेल्लरोळु सूक्ष्मंगळोळं बादरंगळोळं विकलत्रयंगळोळमसंज्ञिगळोळं संज्ञिगलोलं त्रिसंयोगस्थानसंख्येगळं पेळ्दपरु :—

सयोगायोगयोः क्रमेणोदयस्थाने त्रिंशत्कैकत्रिंशत्के द्वे, नवकाष्टके द्वे । सत्त्वस्थानान्यशीतिकादीनि चत्वारि षट् । सयोग बं., उ ३० ३१ । स ८० ७९ ७८ ७७ । अयोगि बं., उ ९ । ८, स ८० ७९ ७८ ७७ १० । ९ ॥७०३॥ अथ चतुर्दशजीवसमासेष्वाह—

सयोगीमें उदयस्थान तीस-इकतीसके दो और अयोगीमें नौ-आठ ये दो हैं। सत्त्वस्थान सयोगीमें अस्सी आदि चार और अयोगीमें अस्सी आदि छह हैं।—सयोगीमें बन्ध उदय ३०, ३१। सत्त्व ८०, ७९, ७८, ७७। अयोगीमें बन्ध शून्य, उदय ९, ८। सत्त्व ८०, ७९, ७८, ७७, १०, ९ ॥७०३॥

आगे चौदह जीव समासोंमें कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पण दो पणगं पण चदु पणगं बंधुदयसत्त पणगं च ।
पण छक्क पणग छच्छक्कपणगमट्ठट्ठमेयारं ॥७०४॥

पंच द्वे पंचकं पंचचतुः पंचकं बंधोदय सत्व पंचकं च । पंच षट् पंच षट् षट्कपंचकमष्टाष्टैकादश ॥

अपर्याप्तकसप्तकदोळु बंधोदयसत्वस्थानंगळु क्रमदिदं पंचक द्वे पंचकंगळप्पुवु । सर्व्वसूक्ष्मंगळोळु पंचचतुः पंचकंगळप्पुवु । सर्व्वबादरंगळोळु बंधोदयसत्वस्थस्थानंगळु पंचकंगळप्पुवु । विकलत्रयदोळु पंचषट्पंचकंगळं क्रमदोळप्पुवु । असंज्ञिगळोळु षट्षट्पंचकंगळप्पुवु । संज्ञिगळोळु अष्टअष्टएकादशस्थानंगळु क्रमदिदमप्पुवु ।

ई पेळ्द संख्याविषयभूतस्वामिगळं पेळ्दपरु :—

सत्तेव अपज्जत्ता सामी सुहुमो य बादरो चेव ।
वियलिंदिया य तिविहा होंति असण्णी कमा सण्णी ॥७०५॥

संदृष्टि :—

	अप	सू	बा	वि ३	असं	संज्ञि
बं	५	५	५	५	६	८
उद	२	४	५	६	६	८
सत्व	५	५	५	५	५	११

ई पेळ्द संख्याविषयभूतस्थानंगळावुवें दोडे पेळ्दपरु :—

बंधा तिय पण छण्णव वीसं तीसं अपुण्णगे उदओ ।
इगिचउवीसं इगिछव्वीसं थावरतसे कमसो ॥७०६॥

बंधः त्रिकपंच षण्णवति विंशति त्रिंशदपूर्णके उदयः । एकचतुर्विंशतिरेक षड्विंशतिः स्थावरे त्रसे क्रमशः ॥

अपर्य्याप्तसप्तककदोळु त्रयोविंशति पंचविंशति षड्विंशति नवविंशतिगळुं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुमितु पंचबंधस्थानंगळप्पुवु । २३ ॥ ए अ २५ । ए प । बि । ति । च । प । म । अ प २६ । ए प । अ । उ २९ । बि । ति । च । पं । म । परि । ३० । बि । ति । च । पं । परि । उ ॥ एकविंशतियुं

अपर्याप्तसप्तके बन्धोदयसत्वस्थानानि पंच द्वे पंच । सर्वसूक्ष्मेषु पंच चत्वारि पंच । सर्वबादरेषु पंच पंच पंच । विकलत्रये पंच षट् पंच । असंज्ञिषु षट् षट् पंच । संज्ञिष्वष्टाष्टैकादश ॥ ७०४ ॥ ७०५ ॥ तानि कानीति चेदाह—

अपर्याप्तसप्तके बन्धस्थानानि त्रिपंचषट्नवाग्रविंशतिकत्रिंशत्कानि पंच । उदयस्थानानि स्थावरलब्ध्य-

---

अपर्याप्त सात जीव समासोंमें बन्ध उदय सत्त्वस्थान क्रमसे पाँच, दो, पाँच हैं। सब सूक्ष्मजीवोंमें पाँच, चार, पाँच हैं। सब बादर जीवोंमें पाँच, पाँच, पाँच हैं। विकलत्रयमें पाँच, छह, पांच हैं। असंज्ञीमें छह, छह, पाँच हैं। संज्ञीमें आठ, आठ, ग्यारह हैं ॥७०४-७०५॥

वे कौन हैं ? यह कहते हैं—

अपर्याप्त सात जीवसमासोंमें बन्धस्थान तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीस ये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्विंशतियुं स्थावरलब्ध्यपर्य्याप्तंगळोळुदयस्थानद्वयमक्कुं । त्रसलब्ध्यपर्य्याप्तंगळोळु एकविंशतियुं षड्विंशतियुमुदयस्थानद्वयमक्कुं । स्थावर २१ । ति ।। विग्रहगति २४ । ए । त्रस २१ । ति म । विग्रहगति । २६ । बि । ति । च । पं । सा । म । सत्वस्थानंगळुं ।

बाणउदी णउदिचऊ सत्तं एमेव बंधयं अंसा ।
सुहुमिदरे वियलतिये उदया इगिवीसयादिचउपणयं ।।७०७।।

द्वानवतिर्नवति चत्वारि सत्वमेवमेव बंधांशाः । सूक्ष्मेतरस्मिन्विकलत्रये उदयाः एकविंशत्यादिचतुः पंच ।।

आ लब्ध्यपर्य्याप्तजीवंगळगे तीर्त्थरहितद्वानवतियुं तीर्त्थाहाररहितनवत्यादिसुरद्विकनारकचतुष्कमनुष्यद्विकरहितंगळप्प नाल्कुं सत्वंगळप्पुवु । ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ।। समुच्चय संदृष्टि :—

लब्ध्य प.	७	बं ५	उ २	स ५	०
बंध	२३	२५	२६	२९	३०
उद	२१	२४	त्रस२१	२६	०
सत्व	९२	९०	८८	८८	८२

एकमेव इह्निगेये सूक्ष्मंगळोळं बादरंगळोळं विकलत्रयदोळं बंधांशंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळोळु सूक्ष्मंगळोळु एकविंशत्यादिचतुःस्थानंगळप्पुवु । बादरंगळोळु एकविंशत्यादि पंचस्थानंगळप्पुवु । सत्वस्थानंगळु मुपेळ्दुवक्कु ।

इगिछक्कडणववीसं तीसिगितीसं च वियलठाणं वा ।
बंधतियं सण्णिदरे भेदो बंधदि हु अडवीसं ।।७०८।।

एकषडष्टनवविंशतिस्त्रिशदेकत्रिंशच्च विकलस्थानवद्बंधत्रयं संज्ञोतरस्मिन् भेदो बध्नाति खल्वष्टविंशति ।।

विकलत्रयदोळु बंधांशंगळु सूक्ष्मगळोळु पेळ्दुवेयप्पुवु । उदयस्थानंगळु पेळल्पडुगुमेकविंशतियुं षड्विंशतियुमष्टाविंशतियुं नवविंशतियुं त्रिंशदेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळप्पुवु ।

पर्याप्तेष्वेकचतुरग्रविंशतिके द्वे । त्रसलब्ध्यपर्याप्तेष्वेकषडग्रविंशतिके द्वे ।।७०६।।

सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च । एवमेव सूक्ष्मेषु बादरेषु विकलेन्द्रियेषु च बंधांशौ स्यातां । उदयस्थानानि सूक्ष्मेष्वेकविंशतिकादीनि चत्वारि बादरेषु पंच । सत्त्वं प्रागुक्तमेव ।।७०७।।

विकलत्रये बन्धांशौ सूक्ष्मोक्तावेव । उदयस्थानान्येकषडष्टनवदशैकादशाग्रविंशतिकानि । असंज्ञिषु

पाँच हैं। उदयस्थान स्थावर लब्ध्यपर्याप्तकोंमें इक्कीस-चौबीस दो हैं। त्रस लब्ध्यपर्याप्तकोंमें इक्कीस-छब्बीस ये दो हैं ।।७०६।।

सत्त्वस्थान बानवे और नब्बे आदि चार हैं। इसी प्रकार सूक्ष्म बादर और विकलेन्द्रियोंमें बन्धस्थान और सत्त्वस्थान अपर्याप्तवत् होते हैं। उदयस्थान सूक्ष्मजीवोंमें इक्कीस आदि चार हैं, बादरोंमें पाँच हैं सत्त्वस्थान पूर्वोक्त ही हैं ।।७०७।।

विकलत्रयमें बन्ध और सत्त्व सूक्ष्मजीवोंके समान जानना। उदयस्थान इक्कीस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्मंगळ्गे बं ५ । उ ४ । स ५	बादरंगळ्गे बं ५ । उ ५ । स ५	विकलत्रयंगळ्गे बं ५ । उ६ । स ५
बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३०	बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३०	बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ।
उ २१ । २४ । २५ । २६	उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७	उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ ।
स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२	स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२	स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ।

मत्तमसंज्ञियोळं विकलेंद्रियंगळोळ् पेळ्द बंधोदयसत्वस्थानंगळेयप्पुवावोडं भेदमुंटदावुदें वोडे अष्टाविंशतिं बध्नाति अष्टाविंशतिस्थानमुमं कट्टुगुं ।

सण्णिम्मि सव्वबंधो इगिवीसप्पहुडि एक्कतीसंता ।

चउवीसूणा उदओ दस णवपरिहीणसव्वयं सत्तं ॥७०९॥

संज्ञिनि सर्व्वबंधः एकविंशतिप्रभृत्येकत्रिंशदंताश्चतुर्विंशत्यूना उदयाः दशनवपरिहीन सर्व्वं सत्वं ॥

संज्ञियोळु सर्व्वबंधस्थानंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळुमेकविंशत्यादि एकत्रिंशत्कपर्य्यंतमाद चतुर्विंशतिस्थानं पोरगागि शेषाष्टस्थानंगळप्पुवु । एकें दोडे चतुर्विंशतिस्थानमेकेंद्रियसंबंधियप्पुदरिंदमिल्लिगुदययोग्यमल्लप्पुदरिंदं । सत्वस्थानंगळु दशनवपरिहीनमागि सर्व्वमुं सत्वमक्कुं ।

संदृष्टि :—

संज्ञिगे	बंध ८ ।	उदय	८ ।	सत्व	११ ॥					
बं	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१	*	*	*
उद	२१	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	*	*	*
सत्व	९३	९२	९१	९०	८८	८४	८२	८०	७९	७८	७७

अनंतरं चतुर्द्दशमार्गणेगळोळु नामकर्म्मबंधोदय सत्वत्रिसंयोगमं पेळलुपक्रमिसि मोदल गतिमार्ग्गणेयोळु बंधोदय सत्वस्थानसंयोगळं पेळ्दपरु :—

दोछक्कट्ठचउक्कं णिरयादिसु णामबंधठाणाणि ।

पण णव एगार पणयं तिपंचबारसचउक्कं च ॥७१०॥

द्विषडष्टचतुष्कं नरकादिषु नामबंधस्थानानि । पंचनवैकादश पंचकं त्रिपंचद्वादश चतुष्कं च ॥

बन्धोदयसत्त्वस्थानानि विकलेन्द्रियोक्तानि । किन्तु अष्टाविंशतिकमपि बध्नाति ॥७०८॥

संज्ञिषु बन्धस्थानानि सर्वाणि । उदयस्थानान्येकविंशतिकाद्येकत्रिंशत्कान्तानि चतुर्विंशतिकोनान्यष्टौ । सत्त्वस्थानानि दशनवकपरिहीनसर्वाणि ॥७०९॥ अथ चतुर्दशमार्गणास्वाह—

छब्बीस, अठाईस, उनतीस, इकतीसके पाँच हैं। असंज्ञीमें बन्ध उदय सत्त्वस्थान विकलत्रयवत् जानना। किन्तु असंज्ञी अठाईसको भी बाँधता है अतः बन्धस्थान छह हैं ॥७०८॥

संज्ञीमें बन्धस्थान सब हैं। उदयस्थान चौबीसके बिना इक्कीससे इकतीस पर्यन्त आठ हैं। सत्त्वस्थान दस और नौ बिना सब हैं ॥७०९॥

आगे चौदह मार्गणामें कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरकादिगतिगळोळु क्रमदिदं नामबंधस्थानंगळु द्विषडष्टचतुष्कंगळप्पुवु। उदयस्थानंगळु पंचनवैकादशपंचकंगळप्पुवु। सत्वस्थानंगळु त्रिपंचद्वादशचतुष्कंगळप्पुवु यथाक्रमदिदं। संदृष्टि :—

नरकगति	बंध २	उदय ५	सत्व ३
तिर्यग्गति	बंध ६	उदय ९	सत्व ५
मनुष्यगति	बंध ८	उदय ११	सत्व १२
देवगति	बंध ४	उदय ५	सत्व ४

इंद्रियमार्गणेयोळु पेळ्दपरु :—

एगे वियले सयले पण पण अड पंच छक्केगारपणं।
पण तेरं बंधादी सेसादेसेवि इदि णेयं ॥७११॥

एकेंद्रिये विकले सकले पंच पंचाष्टपंचषट्कैकादश पंच। पंच त्रयोदशबंधादयः शेषादेशेऽपि इति ज्ञेयं॥

एकेंद्रियदोळं विकलत्रयदोळं पंचेंद्रियदोळं क्रमदिदं बंधस्थानंगळु पंचपंचाष्ट प्रमितंगळप्पुवु। उदयस्थानंगळुमंते पंचषट्कैकादशप्रमितंगळप्पुवु। सत्वस्थानंगळुमंते पंच पंच त्रयोदश स्थानंगळप्पुवु। शेषादेशे उळिद कायादिमार्गणेगळोळमी प्रकारदिदमे कथनमरियल्पडुगुं। संदृष्टि—

एकेंद्रिय	बं ५	उ ५	सत्व ५
विकलेंद्रिय	बं ५	उ ६	सत्व ५
पंचेंद्रिय	बं ८	उ ११	सत्व १३

इंतु नरकादिगतिमार्गणेगळोळमेकेंद्रियविकलेंद्रियपंचेंद्रियंगळोळं पेळल्पट्ट बंधोदय सत्वस्थानंगळ संख्येगे विषयस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

नरकादिगतिषु क्रमेण नाम्नो बन्धस्थानानि द्वे षडष्टौ चत्वारि। उदयस्थानानि पंचनवैकादशपंच। सत्त्वस्थानानि त्रीणि पंच द्वादश चत्वारि ॥७१०॥ इन्द्रियमार्गणायामाह—

एकेन्द्रिये विकलत्रये पंचेन्द्रिये च क्रमेण बन्धस्थानानि पंचपंचाष्टौ। उदयस्थानानि पंचषडेकादश। सत्त्वस्थानानि पंच पंच त्रयोदश। एवं शेषकायादिमार्गणास्वपि ज्ञातव्यं ॥७११॥ तानि कानीति चेदाह—

नरक आदि गतियोंमें नामकर्मके बन्धस्थान दो, छह, आठ, चार; उदयस्थान पाँच, नौ, ग्यारह, पांच और सत्त्वस्थान तीन, पाँच, बारह, चार क्रमसे जानना ॥७१०॥

इन्द्रियमार्गणामें कहते हैं—

एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रियमें क्रमसे बन्धस्थान पाँच, पाँच, आठ हैं। उदयस्थान पाँच, छह, ग्यारह हैं। सत्त्वस्थान पांच, पाँच, तेरह हैं। इसी प्रकार शेष कायादि मार्गणाओंमें भी जानना ॥७११॥

वे कौन हैं? यह कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिरयादिणामबंधा उगुतीसं तीसमादिमं छक्कं ।
सव्वं पणछक्कुत्तरवीसुगतीसं दुगं होदि ॥७१२॥

नरकादिनामबंधाः एकान्नत्रिंशस्त्रिंशदाद्यतन षट्कं । सर्व्वं पंच षट्कोत्तरविंशत्येकान्नत्रिंशद्द्वयं भवति ॥

नरकादिगतिगळोळमेके ंद्रियादींद्रियंगळोळं बंधस्थानंगळु पेळल्पडुगुमल्लि नरकगतियोळेकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळप्पुवु । तिर्य्यंग्गतियोळु आद्यतनत्रयोविंशत्यादिषट्कं बंधमक्कुं । मनुष्यगतियोळु सर्व्व बंधस्थानंगळु बंधमप्पुवु । देवगतियोळु पंचविंशति षड्विंशत्येकान्नत्रिंशत्त्रिंशच्चतुःस्थानंगळु बंधमप्पुवु ॥

उदया इगिपणसगअडणववीसं एक्कवीसपहुडि णवं ।
चउवीसहीणसव्वं इगिपणसगअट्ठणववीसं ॥७१३॥

उदया एकपंच सप्ताष्ट नवविंशतिरेकविंशतिप्रभृति नव चतुर्व्विंशति हीन सर्व्वं एक पंच सप्ताष्टनवविंशतिः ॥

आ पेळद बंधस्थानंगळं कट्टुव नरकादिगतिजरुगळोळुदयस्थानंगळु पेळल्पडुगुमल्लिनरकगतिजरोळु एक पंच सप्ताष्ट नवोत्तरविंशत्युदयस्थानपंचकमक्कुं । तिर्य्यंग्गतियोळु एकविंशतिप्रभृतिनवोदयस्थानंगळप्पुवु । मनुष्यगतियोळु चतुर्व्विंशत्युदयस्थानं पोरगागि सर्व्वोदयस्थानंगळप्पुवु । देवगतियोळेकविंशति पंचविंशति सप्तविंशति अष्टाविंशति नवविंशति उदयस्थानपंचकमक्कुं :—

सत्ता बाणउदितियं बाणउदीणउदिअट्ठसीदितियं ।
बासीदिहीणसव्वं तेणउदिचउक्कयं होदि ॥७१४॥

सत्वानि द्वानवतित्रयं द्वानवतिनवत्यष्टाशीति त्रिकं । द्व्यशीतिहीनसर्व्वं त्रिनवतिचतुष्कं भवति ॥

नाम्नो बन्धस्थानानि नरकगतावेकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्के द्वे । तिर्यग्गतावाद्यानि त्रयोविंशतिकादीनि षट् । मनुष्यगतौ सर्वाणि । देवगतौ पंचषण्णवाग्रविंशतिकानि त्रिंशत्कं च ॥७१२॥

उदयस्थानानि नरकगतावेकपंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि पंच । तिर्यग्गतावेकविंशतिकादीनि नव । मनुष्यगतौ चतुर्विंशतिकं विना सर्वाणि । देवगतावेकपंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि पंच ॥७१३॥

नामकर्मके बन्धस्थान नरकगतिमें उनतीस-तीस ये दो हैं । तियँचगतिमें आदिके तेईस आदि छह हैं । मनुष्यगतिमें सब हैं । देवगतिमें पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीस ये चार हैं ॥७१२॥

उदयस्थान नरकगतिमें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसके पाँच हैं । तियँचगतिमें इक्कीस आदि नौ हैं । मनुष्यगतिमें चौबीसके बिना सब हैं । देवगतिमें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसके पाँच हैं ॥७१३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ पेळ्द बंधोदयस्थानंगळनुळ्ळ नारकादिगळगे सत्वस्थानंगळपेळल्पडुगु—। मल्लि नरकगतिजरोळु द्वानवतिमुमेकनवति त्रिनवति त्रिस्थानंगळु सत्वमक्कुं। तिर्य्यग्गतिजरोळु द्वानवति नवत्यष्टाशीत्यादित्रिकमुं सत्वमक्कुं। मनुष्यगतियोळु द्व्यशीति हीनमागि सर्व्वद्वादशस्थानंगळुं सत्वमक्कुं। देवगतियोळु त्रिनवत्यादिचतुःस्थानंगळं सत्वमप्पुवु। संदृष्टि :—

नरकगति बंध २ उ ५ सत्व ३	तिर्य्यग्गति बंध ६। उद ९।स५।
बंध २९।३०।	बं २३।२५।२६।२८।२९।३०
उद २१।२५।२७।२८।२९	उ २१।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१
सत्व ९२।९१।९०	सत्व ९२।९०।८८।८४।८२।

→

मनुष्य बं ८।उ ११।स १२	देवग बं ४ उ ५।सत्त्व ४
बं २३।२५।२६।२८।२९।३०।३१	बं २५।२६।२९।३०।
← उ २०।२१।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१।९ ८	उ २१।२५।२७।२८।२९।
स ९३।९२।९१।९०।८८।८४।८०।७९।७८।७७	स९३।९२।९१।९०
सत्त्व ९३।९२।९१।९०।८८।८४।८०।७९।७८।७७।१०।९।	

इगिविगलबंधठाणं अडवीसूणं तिवीसछक्कं तु।
सयलं सयले उदया एगे इगिवीसपंचयं वियले ॥७१५॥

एकविकलं बंधस्थानमष्टाविंशत्यूनं त्रिविंशतिषट्कं तु। सकलं सकले उदयाः एकेंद्रिये एकविंशति पंचकं विकले ॥

इंद्रियमार्ग्गणेयोळु पेळ्द संख्येय बंधस्थानंगळु पेळल्पडुगुमल्लि एकेंद्रियंगळोळं विकलत्रयंगळोळं प्रत्येकमष्टाविंशत्यूनत्रयोविंशत्यादि षड्बंधस्थानंगळप्पुवु। सकलेंद्रियदोळु सकलबंधस्थानंगळप्पुवु। उदयाः आ एकविकल सकलंगळुदयं पेळल्पडुगुमल्लि एकेंद्रियदोळु एकविंशतिपंचकमुदयमक्कुं। विकलेंद्रियसकलेंद्रियंगळगे पेळदपरु :—

सत्त्वस्थानानि नरकगतौ द्व्येकत्राधिकनवतिकानि। तिर्यग्गतौ द्वानवतिकनवतिके द्वे, अष्टाशीतिकादित्रयं च। मनुष्यगतौ द्व्यशीतिकोनसर्वाणि। देवगतौ त्रिनवतिकादिचतुष्कं ॥७१४॥

इन्द्रियमार्गणायां बन्धस्थानान्येकेन्द्रिये विकलत्रये चाष्टाविंशतिकोनत्रयोविंशतिकादीनि षट्। पंचेन्द्रियेषु सर्वाणि। उदयस्थानान्येकेन्द्रिये एकविंशतिकादीनि पंच ॥७१५॥

सत्त्वस्थान नरकगतिमें बानबे, इक्यानबे, नब्बे ये तीन हैं। तिर्यंचगतिमें बानबे, नब्बे और अठासी आदि तीन इस प्रकार पाँच हैं। मनुष्यगतिमें बयासीके बिना सब हैं। देवगतिमें तिरानबे आदि चार हैं ॥७१४॥

इन्द्रिय मार्गणामें बन्धस्थान एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रियमें अठाईसके बिना तेईस आदि छह हैं। पंचेन्द्रियमें सब हैं। उदयस्थान एकेन्द्रियमें इक्कीस आदि पाँच हैं ॥७१५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इगिछक्कडणववीसं तीसदु चउवीसहीणसव्वुदया।
णउदिचऊ बाणउदी एगे वियले य सव्वयं सयले ॥७१६॥

एकषडष्टनवविंशतित्रिंशद्द्वयं चतुर्विंशतिहीन सर्व्वोदयाः। नवति चत्वारि द्वानवतिरेकेंद्रिये विकले च सर्व्वं सकलेंद्रिये ॥

विकलेंद्रियदोळुदयस्थानंगळु एकषडष्टनवविंशति प्रकृतिस्थानंगळं त्रिंशदेकत्रिंशत्कंगळु कूडि षडुदयस्थानंगळप्पुवु। सकलेंद्रियंगळोळु चतुर्व्विंशतिहीनसर्व्वोदयस्थानंगळप्पुवु। सत्वस्थानंगळोळेकेंद्रियंगळोळं विकलेंद्रियंगळोळं प्रत्येकं द्वानवति नवत्यष्टाशीतिचतुरशीति द्व्यशीति-सत्वस्थानंगळप्पुवु। पंचेंद्रियंगळोळु सर्व्वसत्वस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि :—

एके	बं	२३	२५	२६	२९	३०				उ	२१	२४	२५	२६	२७	०				
विकलें	बं	२३	२५	२६	२९	३०				उ	२१	२६	२८	२९	३०	३१				
सकल	बं	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१	उ	२०	२१	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८

सत्त्व	९२	९०	८८	०	८४	८२								
सत्त्व	९२	९०	८८	०	८४	८२								
सत्त्व	९३	९२	९१	०	९०	८८	८४	८२	८०	७९	७८	७७	१०	९

अनंतरं कायमार्ग्गणेयोळु नामत्रिसंयोगमं पेळदपरु :—

पुढवीयादीपंचसु तसे कमा बंधउदयसत्ताणि।
एयं वा सयलं वा तेउदुगे णत्थि सगवीसं ॥७१७॥

पृथिव्यादिपंचसु त्रसे क्रमाद्बंधोदयसत्त्वान्येकेंन्द्रियवत् सकलेंद्रियवत्तेजोद्विके नास्ति सप्त-विंशतिः ॥

पृथ्व्यप्तेजोवायुवनस्पतिगळेंब पंचकायिकंगळोळं त्रसकायिकदोळं क्रमात् क्रमदिदं बंधोदय-सत्वस्थानंगळेकेंद्रियदोळु पेळदंतेयुं पंचेंद्रियदोळ्पेळदंतेयुमप्पुवु। तेजोद्विकदोळु सप्तविंशति-प्रकृत्युदयस्थानमिल्लेकेंदोडा सप्तविंशतिस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तंगळोळनातपोद्योतंगळोळन्यतरोदय-

विकलेन्द्रियेषु एकषडष्टनवाग्रविंशतिकादीनि त्रिंशत्कैकत्रिंशत्के च। सकलेन्द्रियेषु चतुर्विंशतिकोन-सर्वाणि। सत्वस्थानान्येकेन्द्रिये विकलत्रये च द्वानवतिकनवतिकाष्टचतुर्द्व्यग्राशीतिकानि। पंचेन्द्रियेषु सर्वाणि ॥७१६॥

कायमार्गणायां पृथ्व्यादिपंचसु बन्धोदयसत्त्वस्थानान्येकेन्द्रियवत्। त्रसे पंचेन्द्रियवत्। न तेजोद्विके

विकलेन्द्रियमें इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीस ये छह हैं। पंचेन्द्रियमें चौबीसके बिना सब हैं। सत्त्वस्थान एकेन्द्रिय और विकलत्रयमें बानवे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासी हैं। पंचेन्द्रियमें सब हैं ॥७१६॥

कायमार्गणामें पृथ्वी आदि पाँच स्थावरोंमें बन्ध उदय सत्त्वस्थान एकेन्द्रियके समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युतस्थानमप्पुदरिंदमा जीवंगळोळु "तेउतिगूणतिरिच्छेसुज्जोओ बादरेसु पुण्णेसु" एंदितुदय-निषेधमुंटप्पुदरिंदं 'भूपुण्णबादरेताओ' एंदितु आतपनामोदययुतमाद सप्तविंशत्युदयस्थानमुमा-जीवंगळोळु संभविसदप्पुदरिंदं। संदृष्टि :—पृथ्वी बं ५। उ ५। स ५। बं २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७॥ स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ अप्कायिक बं ५। उ ५। स ५। बं २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७॥ स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२। तेजस्कायिक बं ५। उ ४। स ५। बं २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ वायुकायिकंगळ्गे बं ५। उ ४। सत्त्व ५। बंध २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। सत्त्व ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ वनस्पति-कायिकंगळ्गे बं ५। उ ५। सत्त्व ५। बं २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ त्रसकायिकंगळ्गे बं ८। उ ११। स १३। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १। उ २०। २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। ९। ८। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२। ८०। ७९। ७८। ७७। १०। ९॥

अनंतरं योगमार्गणेयोळु नामत्रिसंयोगमं गाथाचतुष्टयदिंदं पेळ्दपरु :—

मणवचि बंधुदयंसा सव्वं णववीसतीसइगितीसं।
दसणवदुसीदिवज्जिद सव्वं ओरालतम्मिस्से ॥७१८॥

मनोवाग्बंधोदयांशाः सर्व्वं नवविंशतित्रिंशदेकत्रिंशद्दश नव द्व्यशीतिवर्ज्जित सर्व्वमौदारिक-तन्मिश्रयोः ॥

मनोवाग्योगंगळ बंधोदयसत्त्वस्थानंगळ्पेळल्पडुववल्लि बंधस्थानंगळु प्रत्येकं सर्व्वम-मक्कुमुदयस्थानंगळु नवविंशतित्रिंशदेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानत्रितयमक्कुं। सत्त्वस्थानंगळु दशनव-द्व्यशीतिवर्ज्जितसर्व्वसत्त्वस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि—मनोयोगक्के बं ८। उ ३। स १०। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १॥ उ २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८०। ७९। ७८। ७७॥ वाग्योगचतुष्टयदोळु। बं ८। उ ३। स १०। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १। उ २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८०। ७९। ७८। ७७॥

सप्तविंशतिकं तस्यैकेन्द्रियपर्याप्तयुतातपोद्योतान्यतरयुतत्वात् तत्रानुदयात् ॥७१७॥

योगमार्गणायां मनोवाक्षु बंधस्थानानि प्रत्येकं सर्वाणि। उदयस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्कैक-त्रिंशत्कानि। सत्त्वस्थानानि दशकनवकद्व्यशीतिकोनसर्वाणि ॥७१८॥

होते हैं। त्रसमें पंचेन्द्रियके समान हैं। किन्तु तेजकाय वायुकायमें सत्ताईसका उदय नहीं है; क्योंकि सत्ताईसका उदयस्थान एकेन्द्रिय पर्याप्तके साथ आतप या उद्योत सहित होता है और वायुकाय तेजकायमें इनका उदय नहीं है ॥७१७॥

योगमार्गणामें मन वचनयोगमें बन्धस्थान सब हैं। उदयस्थान उनतीस, तीस, इकतीस तीन हैं। सत्त्वस्थान दस, नौ और बयासीके बिना सब हैं ॥७१८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औदारिककाययोगदोळं तन्मिश्रकाययोगदोळं त्रिसंयोगमं पेळ्दपरु :—

सव्वं तिवीसछक्कं पणुवीसादेक्कतीसपेरंतं ।
चउछक्कसत्तवीसं दुसु सव्वं दसयणवहीणं ॥७१९॥

सर्वं त्रयोविंशतिषट्कं पंचविंशतेरेकत्रिंशत्पर्य्यंतं । चतुष्षट्सप्तविंशतिर्द्वयोस्सर्व्वं दशनव परिहीनं ॥

औदारिककाययोगदोळु सर्व्वमुं बंधस्थानंगळप्पुवु । तन्मिश्रकाययोगदोळु त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळौदारिककाययोगदोळु पंचविंशतिस्थानमोदल्गोंडेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानपर्य्यंतमाद सप्तस्थानंगळप्पुवु । तन्मिश्रकाययोगदोळु चतुर्व्विंशतियुं षड्विंशतियुं सप्तविंशतियुमितु त्रिस्थानंगळुदयमप्पुवु । सत्त्वस्थानंगळौदारिककाययोगदोळं तन्मिश्रकाययोगदोळं दशनवपरिहीनसर्व्वसत्वस्थानंगळप्पुवु । संदृष्टि—औदारिककाययोगदोळु बं ८ । उ ७ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । उ २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ औदारिकमिश्रकाययोगदोळु बं ६ । उ ३ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २४ । २६ । २७ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

वेगुव्वे तम्मिस्से बंधंसा सुरगदीव उदयो दु ।
सगवीसतियं पणजुदवीसं आहारतम्मिस्से ॥७२०॥

वैक्रियिके तन्मिश्रे बंधांशाः सुरगतिरिवोदयस्तु । सप्तविंशतित्रिकं पंचयुतविंशतिराहारतन्मिश्रयोः ॥

वैक्रियिककाययोगदोळं तन्मिश्रकाययोगदोळं बंधस्थानंगळुं सत्त्वस्थानंगळुं देवगतियोळु पेळ्दंतेयप्पुवु । तु मत्ते उदयस्थानंगळु सप्तविंशतित्रिकमुं पंचविंशतिस्थानमक्कुं । संदृष्टि :—वैक्रियिककाययोगदोळु बं ४ । उ ३ । स ४ । बं २५ । २६ । २९ । ३० ॥ उ २७ । २८ । २९ ।

औदारिके बन्धस्थानानि सर्वाणि । तन्मिश्रे त्रयोविंशतिकादीनि षट् । उदयस्थानान्यौदारिके पंचविंशतिकाद्येकत्रिंशत्कांतानि सप्त । तन्मिश्रे चतुःषट्सप्ताग्रविंशतिकानि । सत्त्वस्थानान्यौदारिके तन्मिश्रे च दशकनवकोनसर्वाणि ॥७१९॥

वैक्रियिके तन्मिश्रे च बन्धस्थानानि सत्त्वस्थानानि च देवगत्युक्तानि । तु—पुनः उदयस्थानानि

औदारिकमें बन्धस्थान सब हैं । औदारिक मिश्रमें तेईस आदि छह हैं । उदयस्थान औदारिकमें पच्चीससे इकतीस पर्यन्त सात हैं । औदारिक मिश्रमें चौबीस, छब्बीस, सत्ताईस ये तीन उदयस्थान हैं । सत्त्वस्थान औदारिक औदारिक मिश्रमें दस और नौके बिना सब हैं ॥७१९॥

वैक्रियिक और वैक्रियिकमिश्रमें बन्धस्थान सत्त्वस्थान तो देवगतिकी तरह जानना।

स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । वैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळु बं ४ । उ १ । स ४ । बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २५ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

आहारक तन्मिश्रयोगंगळोळं कार्म्मणकाययोगदोळं पेळ्दपरु :—

बंधतियं अडवीसदु वेगुव्वं वा तिणउदिबाणउदी ।
कम्मे वीसदुगुदओ ओरालियमिस्सयं व बंधंसा ॥७२१॥

बंधत्रयमष्टाविंशतिद्वि वैक्रियिकवत् त्रिनवतिर्द्वानवतिश्च कार्म्मणे विंशतिद्विउदयः औदारिक मिश्रवद्बंधांशाः ॥

आहारककाययोगदोळं तन्मिश्रकाययोगदोळं बंधोदयसत्त्वस्थानंगळपेळल्पडुगुमल्लि बंधस्थानंगळु प्रत्येकमष्टाविंशति नवविंशतिद्वयमक्कुं । वैक्रियिककाययोगदोळु पेळ्दंते सप्तविंशत्यादित्रिस्थानोदयंगळुं मिश्रदोळु पंचविंशतिस्थानमक्कुं । सत्त्वस्थानंगळु प्रत्येकं त्रिनवतियुं द्वानवतियुमप्पुवु । संदृष्टि—आहारककाययोगदोळु बं २ । उ ३ । स २ । बं २८ । २९ । उ २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९२ ॥ आहारकमिश्रदोळु बं २ । उ १ । स २ । बं २८ । २९ । उ २५ । स ९३ । ९२ ॥ कार्म्मणकाययोगदोळु विंशतियुमेकविंशतियुमुदयंगळप्पुवु । बंधांशंगळौदारिकमिश्रदोळु पेळ्दंतेयप्पुवु । संदृष्टि—कार्म्मणकाययोगदोळु बं ६ । उ २ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २० । २१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

अनंतरं वेदमार्ग्गणेयोळं कषायमार्ग्गणेयोळं नामत्रिसंयोगमं पेळ्दपरु :—

वेदकसाये सव्वं इगिवीसणवं तिणउदि एक्कारं ।
थीपुरिसे चउवीसं सोददसदरी ण थी संढे ॥७२२॥

वेदकषाययोः सर्व्वमेकविंशति नव त्रिनवत्येकादश स्त्रीपुरुषयोश्चतुर्विंशतिरशीत्यष्टसप्ततिर्न्न स्त्रीषंडयोः ॥

सप्तविंशतिकादित्रिकं पंचविंशतिकं च ॥७२०॥

आहारके तन्मिश्रे च बंधस्थानान्यष्टनवाग्रविंशतिके द्वे द्वे । उदयस्थानानि वैक्रियिकवत् सप्तविंशतिकादीनि त्रीणि । मिश्रे पंचविंशतिकमेव । सत्त्वस्थानान्युभयत्र त्रिद्व्यग्रनवतिके द्वे । कार्मणे उदयस्थानानि विंशतिकैकविंशतिके द्वे बंधांशौ औदारिकमिश्रोक्तावेव ॥७२१॥

उदयस्थान सत्ताईस आदि तीन हैं । किन्तु मिश्रमें पच्चीसका ही है ॥७२०॥

आहारक आहारक मिश्रमें बन्धस्थान अठाईस-उनतीसके दो-दो हैं । उदयस्थान वैक्रियिकवत् सत्ताईस आदि तीन हैं । आहारक मिश्रमें पच्चीसका ही है । सत्त्वस्थान दोनोंमें तिरानवे-बानवे दो हैं । कार्माणमें उदयस्थान बीस-इक्कीस ये दो हैं । बन्ध और सत्त्व औदारिक मिश्रवत् हैं ॥७२१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदमार्ग्गणेयोळं कषायमार्ग्गणेयोळं प्रत्येकं सर्व्वबंधस्थानंगळप्पुवु । एकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळप्पुवु । त्रिनवत्याद्येकादश सत्त्वस्थानंगळप्पुवु ।

इल्लि विशेषमुंटदावुदें दोडे स्त्रीवेददोळं पुरुषवेददोळं चतुर्व्विंशतिप्रकृतिस्थानमुदयमिल्लेकें दोडवक्केकेंद्रियदोळल्लदुदयमिल्ल । स्त्रीपुरुषवेदोदयं पंचेंद्रियदोळल्लदेल्लियुं संभविसदप्पुदरिदं स्त्रीवेददोळं षंडवेददोळमशीत्यष्टसप्ततिस्थानद्वयं सत्त्वमिल्लेकें दोडा स्त्रीषंडवेदोदयंगळिदं क्षपकश्रेण्यारोहणमिल्लप्पुदरिंदं । आ तीर्त्थयुतद्विस्थानसत्वं संभविसदें बुदत्थं । संदृष्टि :—

पुंवेदक्के बं ८ । उ ८ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ स्त्रीवेदक्के बं ८ । उ ८ । स ९ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ७९ । ७७ ॥ षंडवेदक्के बं ८ । उ ९ । स ९ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ७९ । ७७ ॥ कषायमार्ग्गणेयोळु कषायचतुष्टयदोळं बं ८ । उ ९ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

अनंतरं ज्ञानमार्ग्गणेयोळु नामत्रिसंयोगमं सार्द्धगाथात्रयदिदं पेळ्दपरु :—

अण्णाणदुगे बंधो आदी छ णउंसयं व उदओ दु ।
सत्तं दुणउदिछक्कं विभंगबंधा हु कुमदिंव ॥७२३॥

अज्ञानद्विके बंधः आदिषट् नपुंसकवदुदयस्तु । सत्त्वं तु नवतिषट्कं विभंगबंधाः खलु कुमतिवत् ॥

कुमतिकुश्रुतज्ञानंगळोळु त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळु बंधमक्कुं । तु मत्ते उदयः उदयं नपुंसकवत् नपुंसकवेददोळु पेळ्द स्थानंगळप्पुवु । सत्त्वं सत्त्वमुं द्विनवतिषट्कं द्वानवत्यादिषट्क-

---

वेदकषायमार्गणयोर्बंधस्थानानि सर्वाणि । उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीन्येकादश । अत्र स्त्रीपुंसोर्नवचतुर्विंशतिकं तस्यैकेन्द्रियेष्वेवोदयात् । स्त्रीषंढयोर्नाशीतिकाष्टसप्ततिके । तीर्थसत्त्वस्य पुंवेदोदयेनैव क्षपकश्रेण्यारोहात् ॥७२२॥

ज्ञानमार्गणायां कुमतिकुश्रुतयोर्बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट् । तु—पुनः उदयस्थानानि

वेद और कषायमार्गणामें बन्धस्थान सब हैं उदयस्थान इक्कीस आदि नौ हैं। सत्त्वस्थान तिरानवे आदि ग्यारह हैं। इतना विशेष है कि स्त्रीवेद पुरुषवेदमें चौबीसका उदय नहीं है क्योंकि उसका उदय एकेन्द्रियमें ही होता है। तथा स्त्रीवेद नपुंसकवेदमें अस्सी और अठहत्तरका सत्त्व नहीं है; क्योंकि तीर्थंकरकी सत्तावाला पुरुषवेदके उदयसे ही क्षपक श्रेणी चढ़ता है ॥७२२॥

ज्ञान मार्गणामें कुमति कुश्रुत ज्ञानमें बन्धस्थान तेईस आदि छह हैं। उदयस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मक्कुं। संदृष्टि—कु। कु। बं ६। उ ९। स ६। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ स ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२॥ विभंग-बंधाः खलु विभंगज्ञानदोळु बंधस्थानंगळु कुमतिवत् कुमतिज्ञानदोळु पेळ्द त्रयोविंशत्यादिषट्कमक्कुं स्फुटमागि॥ आ विभंगदोळुदयसत्वंगळ पेळ्दपरु। —

उदया उणतीसतियं सत्ता णिरयं व मदिसुदोहीए।
अडवीसपंचबंधा उदया पुरिसव्व अट्ठेव ॥७२४॥

उदयाः एकान्नत्रिंशत्त्रयः सत्वानि नरकवत् मतिश्रुतावधिष्वष्टाविंशतिपंचबंधाः उदयाः पुरुषवदष्टैव॥

विभंगज्ञानदोळुदयस्थानंगळु एकान्नत्रिंशत् त्रिस्थानंगळप्पुवु। सत्वस्थानंगळु नरकगति-योळु पेळ्द द्वानवतित्रितयमक्कुं। संदृष्टि। विभंग। बं ६। उ ३। स ३। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ उ २९। ३०। ३१। स ९२। ९१। ९०॥ मतिश्रुतावधिषु मतिश्रुतावधिज्ञानं-गळोळु अष्टाविंशत्यादि पंचबंधस्थानंगळप्पुवु उदयस्थानंगळु पुंवेददोळ्पेळ्देकविंशत्याद्यष्ट स्थानंगळेयप्पुवु॥ सत्वस्थानंगळोळ् पेळ्दपरु :—

पढमचऊ सीदिचऊ सत्तं मणपज्जवम्हि बंधंसा।
ओहिव्व तीसमुदयं ण हि बंधो केवले णाणे ॥७२५॥

प्रथमचतुरशीति चतुः सत्त्वं मनःपर्य्यये बंधांशाः। अवधिवत् त्रिंशदुदयः नास्ति बंधः केवले ज्ञाने॥

आ मतिश्रुतावधिज्ञानंगळोळु प्रथमत्रिनवत्यादि चतुःस्थानंगळुमशीत्यादिचतुः स्थानंगळु-मप्पुवु॥ संदृष्टि—म। श्रु। अ बं ५। उ ८। स ८। बं २८। २९। ३०। ३१। १। उ २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८०। ७९। ७८। ७७॥ मनःपर्यये मनःपर्य्ययज्ञानदोळु बंधस्थानंगळुं सत्वस्थानंगळुमवधिज्ञानदोळु पेळ्दष्टाविंशत्यादि-पंचस्थानंगळुं त्रिनवत्यादि चतुःस्थानंगळुमशीत्यादि चतुःस्थानंगळुमप्पुवु। त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमों-

षंढवन्नव। सत्त्वं द्वानवतिषट्कं। विभंगे बन्धस्थानानि कुमतिवत्खलु ॥७२३॥

उदयस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानानि नरकगत्युक्तानि। मतिश्रुतावधिषु बन्धस्था-नान्यष्टाविंशतिकादीनि पंच। उदयस्थानानि पुंवेदवदष्टौ ॥७२४॥

सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादिचतुष्कमशीतिकादिचतुष्कं च। मनःपर्यये बन्धसत्त्वस्थानान्यवधिवत्।

नपुंसकवेदकी तरह नौ हैं। सत्त्वस्थान बानबे आदि छह हैं। विभंगमें बन्धस्थान कुमतिकी तरह जानना ॥७२३॥

उदयस्थान उनतीस आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान नरकगतिवत् हैं। मति-श्रुत-अवधिमें बन्धस्थान अठाईस आदि पाँच हैं। उदयस्थान पुरुषवेदकी तरह आठ हैं ॥७२४॥

सत्त्वस्थान तिरानबे आदि चार और अस्सी आदि चार मिलकर आठ हैं। मनः-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेयुदयमक्कुं । संदृष्टि—मनःपर्य्ययज्ञान बं ५ । उ १ । स ८ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ नास्ति बंधः केवलज्ञाने केवलज्ञानदोळ् नामकर्म्मबंधमिल्लुदयसत्वंगळं पेळ्वपरु :—

उदओ सव्वं चदुपणवीसूणं सीदिछक्कयं सत्तं ।
सुदमिव सामायियदुगे उदओ पणवीस सत्तवीसचऊ ॥७२६॥

उदयः सर्व्वश्चतुःपंचविंशत्यूनोऽशीतिषट्कं सत्त्वं । श्रुतमिव सामायिकद्विके उदयाः पंचविंशतिः सप्तविंशति चत्वारि ॥

केवलज्ञानदोळुदयस्थानंगळु चतुर्व्विंशतियुं पंचविंशतियुं रहितमप्प विंशत्यादिसर्व्वमुमक्कुं । सत्त्वस्थानंगळुमशीत्यादिषट्स्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि :—केवलज्ञान बं । ० । उ १० । स ६ । बं । ० । उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥ श्रुतमिव सामाइकद्विके संयममार्ग्गणेयोळु त्रिसंयोगपेळल्पड्डुमल्लि सामायिकच्छेदोपस्थापनसंयमद्विकदोळु बंधस्थानंगळं सत्त्वस्थानंगळं श्रुतज्ञानदोळु पेळ्दष्टाविंशत्यादिपंचस्थानंगळु त्रिनवत्यादि चतुःस्थानंगळुमशीत्यादिचतुःस्थानंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळु पंचविंशतिस्थानमं सप्तविंशत्यादि चतुःस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि :—सा । छे । बं ५ । उ ५ । स ८ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

परिहारे बंधतियं अडवीसचऊ य तीसमादिचऊ ।
सुहुमे एक्को बंधो मणं व उदयंसठाणाणि ॥७२७॥

परिहारे बंधत्रयमष्टाविंशतिचतुष्कं त्रिंशत् आदि चत्वारि । सूक्ष्मे एको बंधः मनःपर्य्ययवदुदयांशस्थानानि ॥

उदयस्थानं त्रिंशत्कं । केवलज्ञाने नामबन्धो नास्ति ॥७२५॥

उदयस्थानानि चतुःपंचाग्रविंशतिकोनसर्वाणि । सत्त्वस्थानान्यशीतिकादीनि षट् । संयममार्गणायां सामायिकछेदोपस्थापनयोर्बन्धसत्त्वस्थानानि श्रुतज्ञानवत् । उदयस्थानानि पंचविंशतिकं, सप्तविंशतिकादिचतुष्कं च ॥७२६॥

पर्ययज्ञानमें बन्धस्थान और सत्त्वस्थान अवधिज्ञानकी तरह हैं । उदयस्थान तीस हीका है । केवलज्ञानमें नामकर्मका बन्ध नहीं है ॥७२५॥

उदयस्थान चौबीस-पच्चीसके बिना सब हैं । सत्त्वस्थान अस्सी आदि छह हैं । संयममार्गणामें सामायिक छेदोपस्थापनामें बन्धस्थान सत्त्वस्थान श्रुतज्ञानकी तरह हैं । उदयस्थान पच्चीसका और सत्ताईसका आदि चार हैं ॥७२६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिहारविशुद्धिसंयमदोळ् बंधादित्रितयं यथाक्रमदिंदमष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळुं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमुं त्रिनवत्यादि चतुःस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि—परिहारविशुद्धि बं ४ । उ १ । स ४ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ सूक्ष्मे सूक्ष्मसांपरायसंयमदोळु एको बंधः एकप्रकृतियं बंधमक्कुं । उदयस्थानमुं मनःपर्य्ययज्ञानदोळ् पेळ्द त्रिंशदुदयस्थानमुं त्रिनवत्यादिचतुःसत्त्वस्थानंगळुमशीत्यादिचतुःस्थानंगळुं सत्त्वमप्पुवु । संदृष्टि—सूक्ष्मसांपरायसंयम बं १ । उ १ । स ८ । बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९०।८० । ७९ । ७८ ।७७॥

जहखादे बंधतियं केवलयं वा तिणउदिचउ अत्थि ।
देसे अडवीसदुगं तीसदु तेणउदिचारि बंधतियं ॥७२८॥

यथाख्याते बंधत्रयं केवलवत् त्रिनवतिचत्वारि संति । देशसंयमेऽष्टाविंशतिद्वयं त्रिंशद्वयं त्रिनवतिचत्वारि बंधत्रिकं ॥

यथाख्यातसंयमदोळ् बंधोदयसत्त्वंगळु केवलज्ञानदोळ् पेळ्दुवेयप्पुवादोडं त्रिनवत्यादिचतुःस्थानंगळुं सत्त्वमप्पुवु । संदृष्टि :—यथाख्यातसंयम बं । उ १० । स १० । बं ० । उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ९ । ८ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥ देशसंयमे देशसंयमदोळु अष्टाविंशतिद्वयमुं त्रिंशद्वितयमुं त्रिनवतिचतुष्टयमुं बंधादित्रितयमक्कुं । संदृष्टि—देशसंयत बं २ । उ २ । स ४ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

अविरमणे बंधुदया कुमदिं व तिणउदिसत्तयं सत्तं ।
पुरिमं वा चक्खिदरे अत्थि अचक्खुम्मि चउवीसं ॥७२९॥

अविरमणे बंधोदयाः कुमतिवत् त्रिनवतिसप्तकं सत्त्वं । पुरुषवच्चक्षुरितरयोरस्त्यचक्षुषि चतुर्व्विंशतिः ॥

परिहारविशुद्धौ बन्धादित्रयं क्रमेणाष्टाविंशतिकादिचतुष्कं त्रिंशत्कं त्रिनवतिकादिचतुष्कं, सूक्ष्मसांपराये बन्ध एककं । उदयांशौ मनःपर्ययवत् ॥७२७॥

यथाख्याते बन्धोदयसत्त्वानि केवलज्ञानवदपि सत्त्वं त्रिनवतिकादिचतुष्कमप्यस्ति । देशसंयते बन्धादित्रयं अष्टाविंशतिकादिद्वयं त्रिंशत्कादिद्वयं त्रिनवतिकादिचतुष्कं ॥७२८॥

परिहारविशुद्धिमें बन्ध उदय सत्त्व क्रमसे अठाईस आदि चारका बन्ध, तीसका उदय और तिरानवे आदि चारका सत्त्व है । सूक्ष्मसाम्परायमें बन्ध एकका है । उदय सत्त्व मनःपर्ययज्ञानकी तरह हैं ॥७२७॥

यथाख्यातमें यद्यपि बन्ध उदय सत्त्व केवलज्ञानकी तरह हैं किन्तु तिरानवे आदि चारका भी सत्त्व है । देशसंयतमें अठाईस आदि दोका बन्ध, तीस आदि दोका उदय और तिरानवे आदि चारका सत्त्व है ॥७२८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंयमदोळु बंधस्थानंगळुमुदयस्थानंगळु कुमतिज्ञानदोळु पेळ्द त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळुमेकविंशत्याद्यष्टस्थानंगळु चतुर्विंशतिस्थानमुमुंटु । सत्त्वस्थानंगळु त्रिनवत्यादिस्थानंगळप्पुवु । संदृष्टि—असंयमदोळु बं ६ । उ ९ । स ७ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ दर्शनमार्गणेयोळु त्रिसंयोगं पेळल्पडुगुमल्लि चक्षुरितरयोः चक्षुर्द्दर्शनदोळमचक्षुर्द्दर्शनदोळं बंधोदयसत्त्वंगळु पेळल्पडुगुमल्लि पुंवेददोळु पेळ्दंते बंधोदयसत्त्वस्थानंगळप्पुवादोडं अचक्षुर्द्दर्शनदोळु चतुर्विंशतिप्रकृतिस्थानोदयमुमुंटु । संदृष्टि :—चक्षुर्द्दर्शन बं ८ । उ ८ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ अचक्षुर्द्दर्शन बं ८ । उ ९ । स ११ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

ओहिदुगे बंधतियं तण्णाणं वा किलिट्ठलेस्सतिये ।
अविरमणं वा सुहजुगलुदओ पुंवेदयं व हवे ॥७२०॥

अवधिद्विके बंधत्रयस्तद्ज्ञानवत् क्लिष्टलेश्यात्रिके । अविरमणवत् शुभयुगळोदयः पुंवेदवद्भवेत् ॥

अडवीसचउबंधा पणछब्बीसं च अत्थि तेउम्मि ।
पढमचउक्कं सत्तं सुक्के ओहिंव वीसयं चुदओ ॥७२१॥

अष्टाविंशति चतुर्बंधाः पंच षट्विंशतिश्चास्ति तेजसि । प्रथमचतुष्कं सत्त्वं शुक्लेऽवधिवद्विंशतिश्चोदयः ॥

अवधिद्विके अवधिदर्शनदोळं केवलदर्शनदोळं बंधत्रिकं बंधोदयसत्त्वंगळु तद्ज्ञानवत् तंतम्म ज्ञानमार्गणेयोळु पेळ्दष्टाविंशत्यादि पंचबंधस्थानंगळु अबंधमुं एकविंशतिपंचविंशत्याद्यष्टोदयस्थानंगळुं विंशत्येकविंशतिषड्विंशत्यादिदशोदयस्थानंगळुं त्रिनवतिचतुष्कमुमशीतिचतुष्कमुमंतेंदु सत्त्वस्थानंगळु मशीत्यादि षट्स्थानंगळु सत्त्वमप्पुवु । संदृष्टि—अवधिदर्शन बं ५ ।

असंयमे बन्धोदयस्थानानि कुमतिज्ञानवत् । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि सप्त । दर्शनमार्गणायां चक्षुरचक्षुषोर्बन्धोदयसत्त्वानि पुंवेदवदप्यचक्षुर्दर्शने चतुर्विंशतिकमप्युदयोऽस्ति ॥७२९॥

अवधिकेवलदर्शनयोर्बंधोदयसत्त्वानि तज्ज्ञानवत् । लेश्यामार्गणायां कृष्णादित्रये बन्धोदयसत्त्वस्थानान्य-

असंयतमें बन्ध और उदयस्थान कुमतिज्ञानकी तरह हैं। सत्त्वस्थान तिरानबे आदि सात हैं। दर्शनमार्गणामें चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शनमें बन्ध उदय सत्त्व पुरुषवेदकी तरह है किन्तु अचक्षुदर्शनमें चौबीसका भी उदयस्थान है ॥७२९॥

अवधिदर्शन केवलदर्शनमें बन्ध उदय सत्त्व अवधिज्ञान और केवलज्ञानकी तरह हैं। लेश्यामार्गणामें कृष्ण आदि तीनमें बन्ध उदय सत्त्व असंयतकी तरह हैं। तेज और पद्म-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ ८ । स ८ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । केवलदर्शन बं । ० । उ १० । स ६ । बं । ० । उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ९ । ८ ॥ स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥ विलष्टलेश्यात्रिके कृष्णनीलकपोतलेश्येगळोळसंयमदोळ् पेळ्द त्रयोविंशत्यादिषड्बंधस्थानंगळुमेकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळं त्रिनवत्यादिसप्तस्थानंगळुमप्पुवु । संदृष्टि :—कृ । नी । क । बं ६ । उ ९ । स ७ । बं । २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ शुभयुगळोदयः पुंवेदवद्भवेत् । तेजोलेश्येयोळं पद्मलेश्येयोळमुदयस्थानंगळु पुंवेददोळु पेळ्द एकविंशति पंचविंशत्यादि अष्टोदयस्थानंगळप्पुवु ।

बंधसत्त्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

अडवोसचऊबंधा यित्यादिबंधस्थानंगळुमष्टाविंशत्यादि चतुःस्थानंगळु पद्मलेश्येयोळु बंधमप्पुवु । तेजोलेश्येयोळु पंचविंशतिषड्विंशतियुमंतु षड्बंधस्थानंगळं प्रथमचतुष्कमेयुभयदोळ् सत्त्वमक्कुं । संदृष्टि :—तेजोलेश्ये बं ६ । उ ८ । स ४ । बं २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ पद्मलेश्ये बं ४ । उ ८ । स ४ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ शुक्ललेश्येयोळु अवधिज्ञानदोळु पेळ्द बंधोदयसत्त्वस्थानंगळप्पुवु । विंशतिश्चोदयः विंशत्युदयस्थानमुमुंटु । संदृष्टि—शुक्ललेश्ये बं ५ । उ ९ । स ८ । बं २८ । २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २० । २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

> **भव्वे सव्वमभव्वे बंधुदया अविरदिव्व सत्तं तु ।**
> **णउदिचउ हारबंधणदुगहीणं सुदमिदुवसमे बंधो ॥७३२॥**

भव्ये सर्वमभव्ये बंधोदया अविरतिवत् सत्त्वं तु । नवतिचतुराहारबंधनद्विकहीनं श्रुतमिवोपशमे बंधः ॥

संयमवत् । तेजःपद्मोदयस्थानानि पुंवेदवत्, बन्धस्थानानि पद्मायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि । तैजस्यां तानि च पंचविंशतिकषड्विंशतिके च । उभयत्र सत्त्वं प्रथमं चतुष्कं स्यात् । शुक्लायां बन्धोदयसत्त्वान्यवधिवद्विंशतिकोदयश्च ॥७३०॥७३१॥

लेश्यामें उदयस्थान पुरुषवेदके समान हैं । बन्धस्थान पद्मलेश्यामें अठाईसका आदि चार हैं । तेजोलेश्यामें बन्धस्थान अठाईस आदि चार तथा पचीस-छब्बीसके इस प्रकार छह हैं । दोनोंमें सत्त्वस्थान प्रथम चार हैं । शुक्ललेश्यामें बन्ध उदय सत्त्व अवधिज्ञानकी तरह है, किन्तु बीसका भी उदय है ॥७३०-३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भव्यमार्गणेयोळु सर्व्वबंधस्थानंगळुं सर्व्वोदयस्थानंगळुं सर्व्वसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु। संदृष्टि :—भव्य बं ८। उ १२। स १३। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १। उ २०। २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। ९। ८। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२। ८०। ७९। ७८। ७७। १०। ९॥

अभव्यमार्गणेयोळु बंधोदयस्थानंगळविरतियोळ् पेळ्द त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळुमेकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळुमप्पुवु। तु मत्ते सत्त्वं सत्त्वस्थानंगळु नवत्यादि चतुःस्थानंगळप्पुवु। बंधदोळु आहारद्वययुतत्रिंशत्प्रकृतिबंधभेदमनिल्लुद्योतयुतत्रिंशत्प्रकृतिस्थानमे संभविसुगुमेंबुदत्थं॥ संदृष्टि—

अभव्य बं ६। उ ९। स ४। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ स ९०। ८८। ८४। ८२॥ श्रुतमिवोपशमे बंधः उपशमसम्यक्त्वदोळु बंधस्थानंगळु श्रुतज्ञानदोळ्पेळ्दष्टाविंशत्यादिपंचस्थानंगळप्पुवु॥ उदयसत्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

उदया इगिपणवीसं णववीसतियं च पढमचउसत्तं।
उवसम इव बधंसा वेदगसम्मे ण इगिबंधो॥ ७३३॥

उदयाः एकपंचविंशतिर्न्नवविंशतित्रिकं प्रथमचतुःसत्वमुपशमवद्बंधांशाः वेदकसम्यक्त्वेकैकबंधः॥

आ उपशमसम्यक्त्वदोळुदयस्थानंगळेकविंशतियुं पंचविंशतियुं नवविंशतित्रितयमुमक्कुं। सत्वस्थानंगळु त्रिनवत्यादिचतुःस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि—उपशमसम्यक्त्व बं ५। उ ५। स ४। बं २८। २९। ३०। ३१। १॥ उ २१। २५। २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ वेदकसम्यक्त्वे वेदकसम्यक्त्वदोळु उपशमवद्बंधांशाः उपशमसम्यक्त्वदोळु पेळ्द अष्टाविंशत्यादि पंचबंधस्थानंगळप्पुवु। अवरोळेक प्रकृतिबंधस्थानमिल्ल। शेषचतुर्ब्बंधस्थानंगळप्पुवु। त्रिनवत्यादिचतुःसत्वस्थानंगळप्पुवु॥ उदयस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

भव्यमार्गणायां बन्धोदयसत्त्वस्थानानि सर्वाणि। अभव्यमार्गणायां बन्धोदयस्थानान्यविरतयुक्तानि। तु—पुनः सत्त्वस्थानानि नवतिकादीनि चत्वारि। बन्धे नाहारद्वययुतं, त्रिंशत्कमुद्योतयुतमेव स्यादित्यर्थः। सम्यक्त्वमार्गणायां उपशमे बन्धस्थानानि श्रुतज्ञानवत् ॥७३२॥

उदयस्थानान्येकपंचाग्रविंशतिके द्वे नवविंशतिकादित्रयं च। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि,

---

भव्यमार्गणामें बन्ध उदय सत्त्वस्थान सब ही हैं। अभव्य मार्गणामें बन्ध और उदयस्थान तो असंयतकी तरह हैं सत्त्वस्थान नब्बे आदि चार हैं। बन्धमें आहारकद्विक सहित तीसका बन्ध नहीं है, उद्योत सहित तीसका बन्ध है इतना विशेष है। सम्यक्त्वमार्गणामें उपशम सम्यक्त्वमें बन्धस्थान श्रुतज्ञानवत् हैं ॥७३२॥

उदयस्थान इक्कीस, पच्चीस ये दो और उनतीस आदि तीन हैं। सत्त्वस्थान तिरानबे आदि चार हैं। वेदक सम्यक्त्वमें बन्ध और सत्त्व तो उपशम सम्यक्त्वके समान हैं किन्तु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदया मदिव्व खयिये बं ादी सुदमिवत्थि चरिमदुगं ।
उदयंसे वीसं च य साणे अडवीसतियबंधो ॥७३४॥

उदयाः मतिवत् क्षायिके बंधोदयश्रुतमिवास्ति चरमद्वयमुदयांशे विंशतिश्च च सासादनेऽष्टाविंशतित्रितयबंधः ॥

उदयाः आ वेदकसम्यक्त्वदोळुदयस्थानंगळु मतिवत् मतिज्ञानदोळु पेळ्देकविंशत्याष्टस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि—वेदकसम्यक्त्व बं ४। उ ८। स ४। बं २८। २९। ३०। ३१। उ २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ क्षायिकसम्यक्त्वदोळु बंधोदयांशंगळु श्रुतमिव श्रुतज्ञानदोळ्पेळ्दे तंते[1] अष्टाविंशत्यादि पंचबंधस्थानंगळुमेकविंशत्याद्यष्टोदयस्थानंगळं त्रिनवत्यशीत्याद्यष्टसत्वस्थानंगळुमप्पुवल्लि। उदयांशे उदयदोळं सत्वदोळं तंतम्म चरमद्विस्थानंगळुमुंटु। उदयदोळु विंशतिस्थानमुमुंटु। संदृष्टि—क्षायिकसम्यक्त्व बं ५। उ ११। स १०। बं २८। २९। ३०। ३१। १॥ उ २०। २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। ९। ८॥ स ९३। ९२। ९१। ९०। ८०। ७९। ७८। ७७। १०। ९॥ सासादने सासादनरुचियोळु अष्टाविंशत्यादित्रिस्थानबंधमक्कुं॥

उदयसत्वंगळं पेळ्दपरु :—

उदया इगिवीसचऊ णववीसतियं च णउदियं सत्तं ।
मिस्से अडवीसदुगं णववीसतिय च बंधुदया ॥७३५॥

उदयाः एकविंशति चत्वारि नवविंशतित्रिकं च नवतिकं सत्वं। मिश्रेऽष्टाविंशतिद्विकं नवविंशतित्रितयं च बंधोदयाः ॥

उदयाः आ सासादनरुचियोळुदयस्थानंगळुमेकविंशत्यादि चतुःस्थानंगळं नवविंशत्यादित्रितयमुमंतु सप्तोदयस्थानंगळप्पुवु। सत्वं नवतिकमक्कुं। संदृष्टि—सासादन बं ३। उ ७। स १।

वेदके बन्धांशानुपशमसम्यक्त्ववदप्येककबन्धो नास्ति ॥७३३॥

उदयस्थानानि मतिज्ञानवदष्टौ। क्षायिके बन्धोदयांशाः श्रुतज्ञानमिव पंचाष्टाष्टौ। पुनः उदयसत्त्वयोः स्वस्वचरमस्थानद्वयं उदये विंशतिकमप्यस्ति। सासादनरुचौ बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥७३४॥

उदयस्थानान्येकविंशतिकादिचतुष्कं नवविंशतिकादित्रयं च। अत्र सप्ताष्टाग्रविंशतिके तु अनयोरुदय-

---

एकका बन्धस्थान नहीं है ॥७३३॥

उदयस्थान मतिज्ञानकी तरह आठ हैं। क्षायिकमें बन्ध उदय सत्त्व श्रुतज्ञानकी तरह पाँच, आठ, आठ हैं। इतना विशेष है कि उदय और सत्त्वमें अपने-अपने अन्तके दो स्थान भी होते हैं तथा उदयमें बीसका भी स्थान होता है। सासादन सम्यक्त्वमें बन्धस्थान अठाईस आदि, तीन हैं ॥७३४॥

उदयस्थान इक्कीस आदि चार और उनतीस आदि तीन हैं। यहाँ सत्ताईस-अठाईस

---

1. म °दोळेंतंते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं २८। २९। ३०। उ। २१। २४। २५। २६। २९। ३०। ३१ ॥ इल्लि सप्तविंशतिस्थानमुमष्टाविंशतिस्थानोदयपर्य्यंतं सासादनगुणावस्थानमिल्लप्पुदरिंदमवक्कसंभवमक्कुं। स ९० ॥ मिश्रे मिश्ररुचियोळु बंधस्थानंगळु मुदयस्थानंगळु क्रमदिंदमष्टाविंशत्यादि द्विस्थानंगळुं नवविंशत्यादित्रितयमुमक्कुं ॥ सत्वस्थानंगळं पेळ्वपरु :—

बाणउदिणउदिसत्तं मिच्छे कुमदिव्व होदि बंधतियं।
पुरिसं वा सण्णीये इदरे कुमदिव्व णत्थि इगिणउदि ॥७३६॥

द्वानवति नवतिसत्वं मिथ्यारुचौ कुमतिवद्भवति बंधत्रिकं। पुंवेदवत्संज्ञिनीतरस्मिन्कुमतिवन्नास्त्येकनवतिः ॥

द्वानवति नवतिसत्वं आ मिश्ररुचियोळु द्वानवतियुं नवतियुं सत्वमक्कुं। संदृष्टि—मिश्ररुचि बं २। उ ३। स २। बं २८। २९ ॥ उ २९। ३०। ३१ ॥ स ९२। ९० ॥ मिथ्यारुचौ मिथ्यारुचियोळु कुमतिज्ञानदोळु पेळ्द त्रयोविंशत्यादि षड्बंधस्थानंगळु मेकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळुं द्वानवत्यादिषट्सत्वस्थानंगळुमप्पुवु। संदृष्टि—मिथ्यारुचि बं ६। उ ९। स ६। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२ ॥ पुंवेदवत्संज्ञिनि संज्ञियोळु पुंवेददोळपेळ्द त्रयोविंशत्याद्यष्टबंधस्थानंगळुमेकविंशत्याद्यष्टोदयस्थानंगळुं त्रिनवत्याद्येकादश सत्वस्थानंगळुमप्पुवु। संदृष्टि—संज्ञि बं ८। उ ८। स ११। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १। उ २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१ ॥ स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२। ८०। ७९। ७८। ७७ ॥ इतरस्मिन् असंज्ञियोळ् कुमतिवन्नास्त्येकनवतिः कुमतिज्ञानदोळ् पेळ्द त्रयोविंशत्यादि षड्बंधस्थानंगळुमेकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळुमेकनवतिसत्वस्थानरहित द्वानवत्यादिपंचसत्वस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि :—

कालगमनपर्यन्तं सासादनत्वासंभवान्नोक्ते। सत्त्वं नवतिकमेव। मिश्ररुचौ बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादिद्वयं। उदयस्थानानि नवविंशतिकादित्रयं ॥७३५॥

सत्त्वं द्वानवतिकनवतिके द्वे। मिथ्यारुचौ बन्धोदयसत्त्वस्थानानि कुमतिवत्। संज्ञिनि पुंवेदवत्। असंज्ञिनि कुमतिवत् किन्तु नास्त्येकनवतिकसत्त्वं ॥७३६॥

न कहनेका कारण यह है कि इनके उदयमें आनेके काल तक सासादनपना सम्भव नहीं है। सत्त्व नब्बेका है। मिश्ररुचिमें बन्धस्थान अठाईस आदि दो हैं। उदयस्थान उनतीस आदि तीन हैं ॥७३५॥

सत्त्वस्थान बानवे और नब्बेके दो हैं। मिथ्यारुचिमें बन्ध उदय सत्त्वस्थान कुमतिज्ञानकी तरह हैं। संज्ञीमार्गणामें बन्ध उदय सत्त्व पुरुषवेदके समान हैं। असंज्ञीमें कुमतिज्ञानकी तरह हैं। किन्तु इक्यानबेका सत्त्व नहीं है ॥७३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंज्ञि बं ६। उ ९। स ५। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स। ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥

आहारमार्ग्गणेयोळ् त्रिसंयोगमं पेळ्दपरु :—

आहारे बंधुदया संढं वा णवरि णत्थि इगिवीसं।
पुरिसं वा कम्मंसा इदरे कम्मंव बंधतियं ॥७३७॥

आहारे बंधोदयाः षंडवन्नवीनमस्ति नास्त्येकविंशतिः। पुंवेदवत्कर्म्मांशाः इतरस्मिन्कार्म्मणवद् बंधत्रयं॥

आहारे आहारमार्ग्गणेयोळ् बंधस्थानंगळुमुदयस्थानंगळुं षंडवेददोळ् पेळ्द त्रयोविंशत्याद्यष्टबंधस्थानंगळुमेकविंशतिस्थानरहितमादमष्टोदयस्थानंगळुमप्पुवु। सत्वस्थानंगळु पुंवेददोळु पेळ्द त्रिनवत्याद्येकादशसत्वस्थानंगळुमप्पुवु। संदृष्टि—आहार बं ८। उ ८। स ११। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। १॥ उ २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२। ८०। ७९। ७८। ७७॥ इतरस्मिन् अनाहारमार्ग्गणेयोळु कार्म्मणकाययोगदोळ पेळ्द त्रयोविंशत्यादि षट्स्थानंगळुं विंशत्येकविंशत्युदयस्थानद्वयमुं त्रिनवत्याद्येकादशसत्त्वस्थानंगळुं मत्तं—

अत्थि णवट्ठपदुदओ दस णवसत्तं च विज्जदे एत्थ।
इदि बंधुदयप्पहुडी सुदणामे सारमादेसे ॥७३८॥

अस्ति नवाष्टपदोदयो दश नवसत्त्वं च विद्यते अत्र। इति बंधोदयप्रभृतिर्विश्रुतनाम्नि सारमादेशे॥

अनाहारकत्वमयोगिकेवलियोळुमुंटप्पुदरिंदं तदुदयनवाष्टस्थानद्वयमुं दशनवसत्त्वस्थानद्वयमुमिल्लियुंटु। इंतु बंधोदयसत्त्वत्रिसंयोगं विश्रुतनामकर्म्मदोळ आदेशे आदेशदोळु मार्ग्गणेयोळु

आहारमार्गणायां बन्धोदयस्थानानि षंढवत् किन्तु एकविंशतिकमुदयस्थानं नास्ति सत्त्वस्थानानि पुंवत्, अनाहारे कार्मणयोगवत् ॥७३७॥ पुनः—

तत्रानाहारे अयोगिन उदयो नवाष्टके द्वे स्तः। सत्त्वं दशकनवके द्वे विद्येते। एवं बन्धोदयसत्त्वत्रिसंयोगो विश्रुते नामकर्मणि मार्गणायां सार उक्तः ॥७३८॥

चारुसम्यग्दर्शनधरणे कुवलयसंतोषणे च समर्थेन माधवचन्द्रेण महावीरेण परमार्थतो विस्तरितः

आहार मार्गणामें बन्ध और उदयस्थान नपुंसकवेदके समान हैं किन्तु इक्कीसका उदयस्थान नहीं है। सत्त्वस्थान पुरुषवेदके समान हैं। अनाहारमें बन्ध उदय सत्त्व कार्माणकाययोगकी तरह है ॥७३७॥

किन्तु अनाहारमें अयोगीके उदय नौ और आठका है तथा सत्त्व दस और नौका है। इस प्रकार प्रसिद्ध नामकर्ममें चौदह मार्गणामें बन्ध उदय सत्त्वका त्रिसंयोग साररूपमें कहा ॥७३८॥

उत्कृष्ट सम्यग्दर्शनको धारण करनेमें और पृथ्वीमण्डलको आनन्द देनेमें समर्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारमादुदु कथितमादुदु । संदृष्टि :— अनाहार वं ६ । उ ४ । स १३ । वं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २० । २१ । ९ । ८ ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥

चारुसुदंसणधरणे कुवलयसंतोसणे समत्थेण ।
माधवचंदेण महावीरेणत्थेण वित्थरिदो ॥७३९॥

चारुसुदर्शनधरणे कुवलयसंतोषणे समर्थेन । माधवचंद्रेण महावीरेणार्थेन विस्तरितः ॥

चारु सम्यग्दर्शनधरणदोळं कुवलयसंतोषणदोळं समर्थनप्प माधवचंद्रदिदं महावीरनिंदं परमार्थदिदं विस्तरिसल्पट्टुदु ।

अनंतरं नामस्थानत्रिसंयोगमनेकाधिकरणद्व्याधेयरूपदिदं पेळदपरल्लि मोदलोळु बंधस्थानमनाधारमं माडि उदयसत्त्वस्थानंगळनाधेयंगळं माडि गाथाद्वयदिदं पेळदपरु :—

णवपंचोदयसत्ता तेवीसे पण्णुवीसछब्बीसे ।
अट्ठचदुरट्ठ वीसे णवसत्तुगु तीस तीसम्मि ॥७४०॥

नवपंचोदयसत्त्वानि त्रयोविंशतौ पंचविंशतौ षड्विंशतौ अष्टचतुरष्टविंशतौ नवसप्तैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्सु ॥

एगेगं इगितीसे एगे एगुदयमट्ठसत्ताणि ।
उवरदबंधे दस दस उदयंसा होंति णियमेण ॥७४१॥

एकैकमेकत्रिंशत्सु एकस्मिन्नेकोदयोऽष्टसत्त्वानि । उपरतबंधे दशदशोदयांशा भवंति नियमेन ॥

त्रयोविंशतिपंचविंशति षड्विंशतिस्थानैकबंधाधिकरणदोळु प्रत्येकमुदयस्थानंगळु सत्त्वस्थानंगळु नवस्थानंगळुं पंचस्थानंगळुमप्पुवु । अष्टविंशतिबंधस्थानाधिकरणदोळुदयस्थानंगळुं सत्त्वस्थानंगळुमष्टचतुःस्थानंगळप्पुवु । एकान्नत्रिंशत्त्रिंशद्बंधाधिकरणंगळोळु प्रत्येकमुदयसत्त्व-

---

॥७३९॥ अथोक्तत्रिसंयोगस्यैकाधिकरणो द्व्याधेयं ब्रुवन्स्तावद्बन्धाधारे उदयसत्त्वाधेयं गाथाद्वयेनाह—

त्रिपंचषडग्रविंशतिकेषूदयस्थानानि नव । सत्त्वस्थानानि पंच । अष्टाविंशतिके उदयस्थानान्यष्टौ । सत्त्वस्थानानि चत्वारि । एकान्नत्रिंशत्के त्रिंशत्के चोदयस्थानानि नव । सत्त्वस्थानानि सप्त । एकत्रिंशत्के

माधवचन्द्र और महावीरने परमार्थसे विस्तार किया ॥७३९॥

विशेषार्थ—माधवचन्द्र तो नेमिनाथ तीर्थंकर और महावीर वर्धमान तीर्थंकरका नाम जानना । तथा माधवचन्द्र नेमिचन्द्राचार्यके शिष्य और सहयोगी थे । पं. टोडरमलजीने महावीरसे वीरनन्दि आचार्यका ग्रहण किया है जो नेमिचन्द्रजीके गुरुजनोंमें थे । इन दोनोंका पूर्ण सहयोग इस ग्रन्थकी रचनामें था ।

ऊपर कहे इस त्रिसंयोगमें एकको आधार और दोको आधेय बनाकर कथन करते हुए प्रथम बन्धको आधार और उदय सत्त्वको आधेय करके दो गाथाओंसे कहते हैं—

तेईस, पच्चीस, छब्बीसके बन्धस्थानमें उदयस्थान नौ और सत्त्वस्थान पाँच हैं । अठाईसके बन्धस्थानमें उदयस्थान आठ और सत्त्वस्थान चार हैं । उनतीस और तीसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानंगळु नवसप्तप्रमितंगळप्पुवु । एकत्रिंशद्बंधाधिकरणदोळु एकैकमुदयसत्त्वस्थानंगळप्पुवु । एकप्रकृतिबंधाधिकरणदोळुदयसत्त्वंगळुमेकाष्टस्थानंगळप्पुवु । उपरतबंधाधिकरणदोळु दशदशोदय-सत्त्वस्थानंगळप्पुवु नियमदिदं । संदृष्टि :—

बं	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१	०
उ	९	९	९	८	९	९	१	१	१०
स	५	५	५	४	७	७	१	८	१

अनंतरमुक्तोदयसत्त्वसंख्याविषयस्थानंगळं पेळदपरु :—

तियपण छव्वीसबंधे इगिवीसा देक्कतीस चरिमुदया ।
बाणउदीणउदिचऊ सत्तं अडवीसगे उदया ॥७४२॥

त्रिपंचषड्विंशतिबंधे एकविंशतिरेकत्रिंशच्चरमोदयः । द्वानवतिन्नवतिचतुःसत्त्वं अष्टाविंशता उदयाः ॥

त्रिपंचषड्विंशतिबंधाधिकरणदोळु पेळ्द नवोदयस्थानंगळेकविंशति मोदलागि एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानं चरमोदयस्थानमक्कुं । द्वानवतियुं नवत्यादिचतुःस्थानंगळुमप्पुवु ।

अष्टाविंशतिबंधाधिकरणदोळुदयंगळु पेळल्पडुगुं :—

पुव्वंव ण चउवीसं बाणउदिचउक्कसत्तमुगुतीसे ।
तीसे पुव्वं उदया पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ॥७४३॥

पूर्व्ववन्न चतुर्विंशतिर्द्वानवतिचतुष्कसत्त्वमेकान्नत्रिंशत्सु । (त्रिंशत्सु) पूर्व्ववदुदयाः प्रथमतनसप्तकं सत्त्वं ॥

उदयस्थानमेकं सत्त्वस्थानमेकं । एकके उदयस्थानमेकं सत्त्वस्थानान्यष्टौ । उपरतबन्धे दशदशोदयसत्त्वस्थानानि नियमेन भवन्ति ॥७४०॥७४१॥

त्रिपंचषडग्रविंशतिकबन्धेषूदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्येकत्रिंशत्कांतानि नव । सत्त्वस्थानं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥७४२॥

बन्धस्थानमें उदयस्थान नौ और सत्त्वस्थान सात हैं। इकतीसके बन्धस्थानमें उदयस्थान एक और सत्त्वस्थान एक है। एकके बन्धस्थानमें उदयस्थान एक सत्त्वस्थान आठ हैं। बन्धरहित स्थानमें दस उदयस्थान और दस सत्त्वस्थान नियमसे होते हैं। इसका आशय है कि जिस जीवके जिस कालमें इतनी-इतनी प्रकृतियोंका बन्ध होता है उस कालमें उस जीवके किसीके कोई, किसीके कोई, इस तरह नाना जीवोंकी अपेक्षा उक्त उदयस्थान और सत्त्वस्थान पाये जाते हैं ॥७४०-७४१॥

वे कौन-से हैं ? यह कहते हैं—

तेईस, पच्चीस, छब्बीसके बन्धस्थानोंमें इक्कीससे इकतीस पर्यन्त नौ उदयस्थान हैं। सत्त्वस्थान बानबे और नब्बे आदि चार हैं ॥७४२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ अष्टविंशतिबंधाधिकरणदोळु पूर्व्वोक्तैकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळोळु चतुर्व्विंशति-स्थानमं बिट्टु शेषाष्टस्थानंगळुदयमक्कुमल्लि द्वानवतिचतुःसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु । एकान्नत्रिंशद्बंधदोळं त्रिंशद्बंधदोळं पूर्व्वोक्तैकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळं मोदल त्रिनवत्यादिसप्तसत्त्व-स्थानंगळुमप्पुवु ।

इगितीसे तीसुदओ तेणउदी सत्तयं हवे एगे ।
तीसुदओ पढमचऊ सीदादिचउक्कमवि सत्तं ॥७४४॥

एकत्रिंशत्सु त्रिंशदुदयः त्रिनवतिः सत्त्वं भवेत् एकस्मिन् एकत्रिंशदुदयः प्रथमचतुष्कम-शीत्यादिचतुष्कमपि सत्त्वं ॥

एकत्रिंशद्बंधस्थानाधिकरणदोळु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमुं त्रिनवतिसत्त्वस्थानमेकमे सत्त्व-मक्कुं । एकप्रकृतिबंधाधिकरणदोळु त्रिंशदेकस्थानोदयमुं प्रथमत्रिनवत्यादिचतुःस्थानंगळु अशीत्यादिचतुःस्थानंगळु सत्त्वमक्कुं ।

उवरदबंधेसुदया चउपणवीसूण सव्वयं होदि ।
सत्तं पढमचउक्कं सीदादीछक्कमवि होदि ॥७४५॥

उपरतबंधेषूदयाः चतुःपंचविंशत्यून सर्वं भवति । सत्त्वं प्रथमचतुष्कमशीत्यादिषट्कमपि भवति ॥

उपरतबंधाधिकरणदोळुदयस्थानंगळु चतुः पंचविंशतिस्थानद्वयरहितमाद दशोदयस्थानंगळुं त्रिनवत्यादि चतुःस्थानंगळुमशीत्यादि षट्स्थानंगळु सत्वमप्पुवु । संदृष्टि—बं २३ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं २ । ५ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं २६ । उ २१ । २४ ।

अष्टाविंशतिके उदयस्थानानि पूर्ववन्नव न चतुर्विंशतिकं । सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकचतुष्कं । एकान्न-त्रिंशत्के त्रिंशत्के चोदयस्थानानि तान्येव नव । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि सप्त ॥७४३॥

एकत्रिंशत्के उदयस्थानं त्रिंशत्कं । सत्त्वस्थानं त्रिनवतिकं । एकके उदयस्थानं त्रिंशत्कं । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि चत्वारि च ॥७४४॥

७४५ तमाया गाथाया अधोलिखितपाठः अभयचन्द्रनामांकितायां टीकायामधिकः समुपलब्धस्तद्यथा—

अठाईसके बन्धस्थानमें उदयस्थान पूर्ववत् नौ हैं किन्तु उनमें चौबीसका न होनेसे आठ हैं। सत्त्वस्थान बानवे आदि चार हैं। उनतीस और तीसके बन्धस्थानमें उदयस्थान पूर्ववत् नौ हैं और सत्त्वस्थान तिरानबे आदि सात हैं ॥७४३॥

इकतीसके बन्धस्थानमें उदयस्थान तीसका है। सत्त्वस्थान तिरानबेका है। एकके बन्धस्थानमें उदयस्थान तीसका है। और सत्त्वस्थान तिरानबे आदि चार तथा अस्सी आदि चार इस प्रकार आठ हैं ॥७४४॥

बन्धरहितमें उदयस्थान चौबीस-पच्चीसके बिना सब दस हैं। सत्त्वस्थान तिरानबे आदि चार और अस्सी आदि छह इस तरह दस हैं। अब इनको स्पष्ट करते हैं—

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

२५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ बं २८ । उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९१ । ९० । ८८ । बं २९ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं १ । उ ३० । स ९३ ॥ बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । बं । ० । उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ९ । ८ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । ० । ९ ॥ इल्लि त्रयोविंशति बंधस्थानैधिकरणदोळु एकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळुं द्वानवतिनवतिचतुष्टयं सत्त्वस्थानंगळुमाधेयमप्प त्रिसंयोगदोळु बं २३ / उ ९ / स ५ त्रयोविंशतिस्थानबंधस्वामिगळु मिथ्यादृष्टिगळेयप्परें तें दोडा त्रयोविंशतिबंधस्थानमेकेंद्रियापर्य्याप्तयुतमप्पुदरिंदमा प्रकृतिद्वयक्के मिथ्यादृष्टियोळे बंधव्युच्छित्तियप्पुदरिंदमा त्रयोविंशतिस्थानमं मिथ्यादृष्टिगळे कट्टुवुवु सिद्धमक्कु । मामिथ्यादृष्टिगळुं चतुर्गतिजरुगळरप्परल्लि देवनारकमिथ्यादृष्टिगळु आ त्रयोविंशतिस्थानमं कट्टुवरल्लरवर्गळगे बंधयोग्यस्थानमल्तें तें दो "डुवरिम बारससुरचउसुराउआहारयमबंधा" यें दितु नारकरुगळु कट्टुवरल्लरु । "आइसाणोत्ति सत्तवामछिदी" यें दितु भवनत्रितय सौधर्म्मद्वय संभूतरुगळुं कट्टुवरल्लवु कारणमागि त्रसस्थावरमिथ्यादृष्टिगळुं मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळु पुट्टुवरा त्रयोविंशति स्थानमंकट्टुवागळु नानाजीवापेक्षेयिंदमा नवोदयस्थानंगळुं पंचसत्त्वस्थानंगळुं युगपत्संभविसुववु । एकजीवापेक्षेयिंदमेकैकस्थानंगळागि क्रमदिदं संभविसुववल्लि एकविंशति-

[उपरतबन्धे चतुर्विंशतिकपंचविंशतिकोनदशोदयस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकानि षट् सत्त्वानि । अत्र चाद्ये त्रिसंयोगे बं २३ / उ ९ / स ५ त्रयोविंशतिकं बन्धस्थानमेकेन्द्रियापर्याप्तयुतं । तत्प्रकृतिद्वयं मिथ्यात्वहेतुकबन्धं तेन मिथ्यादृष्टय एव बध्नंति तेऽपि न देवनारकाः । 'उवरिमबारससुरचउ सुराउ आहारयमबंधा, इति नारकाणां, आ ईसाणोत्तिसत्तवामछिदीति भवनत्रयसौधर्मद्वयजानां च निषेधात् । शेषत्रसस्थावरमनुष्या एव बध्नंतीत्यर्थः । त्रयोविंशतिकबन्धकाले नानाजीवापेक्षया तानि नवोदयस्थानानि पंच सत्त्वस्थानानि च युगपत्संभवंत्येकजीवा-

विशेष—कलकत्तासे प्रकाशित संस्करणमें छपा है कि ७४५वीं गाथाकी अभयचन्द्र नामसे लिखित टीकामें आगेका पाठ अधिक पाया जाता है। हमने उस पाठका मिलान कन्नड टीकासे किया तो उससे भी वह मिल गया। अतः उसका अर्थ यहाँ दिया जाता है जो पं. टोडरमलजीकी टीकामें नहीं है। और ब्रेकेटमें उस टीकाको भी दिया है—

उपरतबन्ध अर्थात् जो नामकर्मके बन्धसे रहित हैं उनमें उदयस्थान चौबीस-पचीसके बिना दस हैं। सत्त्वस्थान तिरानबे आदि चार और अस्सी आदि छह हैं। यहाँ प्रथम त्रिसंयोगमें तेईसका बन्धस्थान एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित है। एकेन्द्रिय और अपर्याप्त प्रकृतियोंका बन्ध मिथ्यात्व हेतुक होनेसे मिथ्यादृष्टि ही उनका बन्ध करते हैं। वे भी देव और नारकी नहीं करते क्योंकि आगममें उनके उनका बन्धका निषेध है। अतः शेष त्रस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानोदयं क्षेत्रविपाकितिर्य्यग्मनुष्यानुपूर्व्योदययुतस्थानमप्पुदरिदं विग्रहगतियोळल्लदेल्लियुमुदय-मिल्ला विग्रहगतियोळु प्रथमसमयदोळु वर्त्तिसुत्तिर्प्पनाहारकत्रसस्थावरतिर्य्यग्मनुष्यपर्य्यायकार्य्य-क्कुपादानकारणभूतनारकतिर्य्यग्मनुष्यदेवाहारकचरमसमयपर्य्यायमदु द्रव्यार्त्थिकनयदिंदमा चरम-समयदोळुंटु । पर्य्यायार्त्थिकनयदिदमनंतरसमयदोळेयनाहारकत्रसस्थावरतिर्य्यग्मनुष्यपर्य्यायो-त्पत्तिरूपदिदं क्षयमावुदु । अदुकारणदिदं कारणक्के प्रध्वंसाभावमुं कार्य्यक्के प्रागभावमुमोडंब-डल्पट्टुवंते पेळल्पट्टुदु ॥

कार्य्योत्पादः क्षयो हेतोर्नियमाल्लक्षणात् पृथक् ।
न तौ जात्याद्यवस्थानादनपेक्षाः खपुष्पवत् ॥५८—आ. मी. ।

कार्य्योत्पत्तियें बुदुपादानकारणक्षयमेयक्कुं नियमदिदमंतादोडा कारणकार्य्यंगळगे पृथग्भाव-में तेंदोडे लक्षणदिदमक्कुं । जातिद्रव्यगुणस्थानदिदमेकत्वमुंटागुत्तं विरलु तौ न भवतः कारणकार्य्यंगळें बुदिल्लदु कारणदिदं कारणकार्य्यंगळनपेक्षेयें बुदु गगनकुसुमोपममक्कुं नारकादि-नोकर्म्माहारकचरमपर्य्यायक्षयदोळमनाहारकत्रसस्थावरतिर्य्यग्मनुष्यपर्य्यायदोळं द्रव्यगुणच्युति-

---

पक्षयैककमेव । तत्रैकविंशतिकमुदयस्थानं क्षेत्रविपाकितिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्ययुतत्वात् विग्रहगतावेवोदेति । तत्प्रथम-समयवर्त्यनाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्यपर्यायकार्यस्योपादानकारणभूतो नारकतिर्यग्मनुष्यदेवाहारकचरमसमय-पर्यायो द्रव्यार्थिकनयेन तच्चरमसमये स्यात् । पर्यायार्थिकनयेनानंतरसमये स एवानाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्य-पर्यायोत्पत्तिरूपेण क्षीणस्ततः कारणात् कारणस्य प्रध्वंसाभाव एव कार्यस्य प्रागभावः । तथैवोक्तं—

कार्योत्पादः क्षयो हेतोर्नियमाल्लक्षणात्पृथक् ।
न तौ जात्याद्यवस्थानादनपेक्षाः खपुष्पवत् ॥५८॥ आ. मी.

कार्योत्पत्तिः उपादानकारणक्षय एव स्यान्नियमेन । तर्हि तयोः पृथग्भावः कथं स्यात् ? लक्षणात्स्यात् । जातिद्रव्यगुणाद्यवस्थानेनैकत्वे कारणकार्ये न स्यातामिति कारणात्तदनपेक्षा गगनकुसुमोपमा स्यात् । नारका-

---

स्थावर और मनुष्य ही उनको बाँधते हैं । तेईसके बन्ध कालमें भी नाना जीवोंकी अपेक्षा नौ उदयस्थान और पाँच सत्त्वस्थान सम्भव होते हैं । एक जीवकी अपेक्षा तो एक-एक ही होता है । उनमेंसे इक्कीस प्रकृतिक उदयस्थान क्षेत्रविपाकी तिर्यगानुपूर्वी या मनुष्यानुपूर्वी सहित होनेसे विग्रहगतिमें ही होता है । विग्रहगतिके प्रथम समयवर्ती अनाहारक त्रस, स्थावर, तिर्यंच और मनुष्य पर्याय रूप कार्यका उपादानकारणभूत नारक, तिर्यंच, मनुष्य या देव आहारककी चरम समयवर्ती पर्याय है । वह पर्याय द्रव्यार्थिकनयसे उसके चरम समयमें होती है । पर्यायार्थिकनयसे अनन्तर समयमें वही अनाहारक त्रस, स्थावर, तिर्यंच या मनुष्य पर्यायकी उत्पत्ति रूपसे क्षयको प्राप्त हुआ । अतः कारणका प्रध्वंसाभाव ही कार्यका प्रागभाव है । कहा भी है—

'उपादानका पूर्व आकाररूपसे क्षय ही कार्यका उत्पाद है अर्थात् मिट्टीकी पिण्डपर्याय-का विनाश घटका उत्पाद है, दोनोंका एक ही कारण है । जो घटकी उत्पत्तिका कारण है वही मिट्टीकी पिण्डपर्यायके विनाशका कारण है । फिर भी लक्षणके भेदसे दोनोंमें भेद है । सामान्यरूपसे दोनों भिन्न नहीं हैं । निरपेक्ष माननेपर उनका सत्त्व नहीं हो सकता ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिल्लप्पुदरिदं जीवं ध्रौव्योत्पत्तिव्ययात्मकनक्कुमें बुदर्त्थमल्लि एकजीवक्केकसमयदोळेकवृत्तियप्पुदरिदमेकसमयवर्त्ति त्रसस्थावरविवक्षिततिर्य्यग्मनुष्यानाहारकंगा त्रयोविंशतिस्थानबंधमुमेकविंशतिप्रकृतिस्थानोदयमुमप्पुदुं योग्यसत्वस्थानंगळोळु यथायोग्यमोंदु सत्वस्थानमक्कुमंते पेळल्पट्टुदु ॥

एकस्यानेकवृत्तिर्न्न भागाभावाद्बहूनि वा ।
भागित्वाद्वास्य नैकत्वं दोषो वृत्तेरनार्हते ॥ आ. मी. ६२ ।

एकस्यानेकवृत्तिर्न्न ओंदु जीवक्कनेकवृत्तियिल्लदेकें दोडे भागाभावात् विभागक्कभावदत्तणिदं बहूनिवा एतलानुमेकनिगोदशरीरस्थितानंतानंतजीवंगळु भागित्वात् सुखदुःखानुभवनस्वातंत्र्यलक्षणविभागित्वदत्तणिदमा जीवसमूहक्कनेकत्वमुमिल्ल वृत्तिगं दोषमनार्हतदोळेयक्कुं । सर्व्वथैकांतदोळल्लदे अर्हन्मतदोळिल्लें बुदर्थं । इल्लि चोदकनें दपं—जीवक्कस्तिकायत्वं परमागमप्रसिद्धमप्पुदरिदं प्रदेशप्रचयसद्भावमक्कुमा प्रदेशप्रचयसद्भावदत्तणिदं । एकजीवनोळं भागित्वमक्कुमाविभागित्वदिदमनेकवृत्तित्वमक्कुमें दोडंतल्तेकें दोडे धर्म्माधर्म्माकाश एकजीवद्रव्यंगळगे अस्तिकायत्वमुंटागुत्तिर्दोडमखंडद्रव्यंगळप्पुदरिदं विभागिगळल्तें दोडे अणुवत् अणुविगेंतु विभागित्वमिल्लतें अखंडैकद्रव्यक्के एकवृत्तित्वं सिद्धमक्कुं । अदुकारणमागि अखंडद्रव्यमप्पुदरिद-

---

दिनोकर्माहारकचरमपर्यायक्षयेऽनाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्यपर्याये च द्रव्यगुणप्रच्युतिर्नेति जीवो ध्रौव्योत्पत्तिव्ययात्मक इत्यर्थः । तत्रैकजीवः एकसमये एकवृत्तिः तेनैकसमयवर्तित्रसस्थावरविवक्षिततिर्यग्मनुष्यानाहारकस्य तत्त्रयोविंशतिकबंधः, एकविंशतिकोदयः, पंचसत्त्वस्थानेषु योग्यैकसत्त्वं च स्यात् तथैवोक्तं—

'एकस्यानेकवृत्तिर्न भागाभावाद्बहूनि वा ।
भागित्वाद्वास्य नैकत्वं दोषो वृत्तेरनार्हते ॥६२॥'

एकजीवस्यानेकवृत्तिर्न स्यात् भागाभावात् । वा पुनः एकनिगोदशरीरस्थितानन्तानन्तजीवानां सुखदुःखानुभवनस्वातंत्र्यलक्षणविभागित्वादेकत्वं न स्यात् तद्वृत्तेर्दोषः अनार्हते एव सर्वथैकान्तमते एव नार्हन्मते । ननु जीवस्यास्तिकायत्वं परमागमप्रसिद्धं तेन प्रदेशप्रचयत्वं स्यात् ततश्चैकस्मिन्नपि भागित्वादनेकवृत्तिः स्यादिति तन्न धर्माधर्माकाशैकजीवानां तथात्वेऽप्यखंडद्रव्यत्वेनाणुवदविभागित्वादेकवृत्तित्वसिद्धेः । न च तत

अतः नारक आदि नोकर्म आहारक रूप अन्तिम पर्यायका क्षय होकर अनाहारक त्रसस्थावर रूप तिर्यंचपर्याय या मनुष्यपर्यायके उत्पन्न होनेपर द्रव्यगुणका विनाश नहीं होता। अतः जीव उत्पाद, व्यय, ध्रौव्यात्मक है। इससे एक समयवर्ती त्रसस्थावररूप तिर्यंच या मनुष्य अनाहारकके विग्रहगतिमें तेईसका बन्ध, इक्कीसका उदय और पाँच सत्त्वस्थानोंमें यथायोग्य एकका सत्त्व होता है। कहा भी है—एक जीवकी अनेकत्र वृत्ति नहीं होती क्योंकि वह अखण्ड है। यदि एक निगोदशरीरमें स्थित अनन्तानन्त जीवोंका सुखदुःखके अनुभवनरूप स्वातन्त्र्य लक्षण विभाग होनेसे एकत्व न माना जाये तो यह दोष सर्वथा एकान्त मतमें ही सम्भव है, जैनमतमें नहीं।

शंका—जीव अस्तिकाय है यह परमागममें प्रसिद्ध है। अस्तिकाय होनेसे वह बहुप्रदेशी हुआ। तब एक जीव अपने अनेक प्रदेशोंमें रहनेसे अनेकवृत्ति हुआ ?

---

१. म मुंटादोडमं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुविन्तंते अविभागियप्प जीवद्रव्यमणुवेंदु व्यवहरिसल्पडुगुमल्लदे अणुमात्रमल्तेके वोडे स्वोपात्तशरीरप्रमितमुं लोकमात्रमप्पुदरिंदं पूर्व्वभवचरमसमयदोळ् वर्त्तिसुत्तिर्द्देकनिगोदशरीरस्थितानंतानंतजीवंगळ्गे नोकर्म्माहारं साधारणमादोडं कर्म्माहारं पृथक्-पृथगेयमक्कु मल्लि साधारणैकशरीरदोळ् संस्थितानंतानंतजीवंगळोळ् विवक्षितैकजीवक्के स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षेयिदं कथंचित्सत्त्वमक्कुमी कथंचिच्छब्दमा विवक्षितजीवक्कये अस्तित्वमुमं तच्छरीरावगाहस्थितशेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्म्माधर्म्माकाशकालद्रव्यंगळ्गविवक्षितमप्प गौणमुमं पेळ्वुमा स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षेयिदं कथंचित्सद्रूपमप्प विवक्षितैकजीवमदक्कये मत्तं तत्साधारणैकनिगोदशरीरस्थितशेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्म्माधर्म्माकाशकालद्रव्यंगळ परस्पादिचतुष्टयापेक्षेयिदं कथंचिदसत्वमक्कुमविवक्षितक्के गौणत्वमुंटप्पुदरिंदमहंगे पेळल्पट्टुदु ।

कथंचित्ते सदेवेष्टं कथंचिदसदेव तत् ।
तथोभयमवाच्यं च नययोगान्न सर्व्वथा ॥१४॥ आ. मी.

इष्टं विवक्षितमप्प वस्तु स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षेयिदं कथंचित्सत्त्वमेयक्कुं । तदेव वस्तु परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षेयिदं कथंचिदसत्वमेयक्कुं । जिनमतदोळे तथा अहंगे उभयं सदसद्रूपमुं अवाच्यमुं च शब्ददिदं सदवक्तव्यमुमसदवक्तव्यमुं सदसदवक्तव्यमुं वस्तु कथंचिदप्पुदु । नय-

---

एवाणुमात्रः स्वोपात्तशरीरप्रमितत्वेऽपि लोकमात्रत्वात् । पूर्वभवचरमसमयवर्तिनामेकनिगोदशरीरस्थानन्तानन्तजीवानां नोकर्माहारस्य साधारण्येऽपि कर्माहारः पृथक् पृथगेव । तेषु जीवेषु विवक्षितैकजीवः स्वद्रव्यादि चतुष्टयापेक्षया कथंचित्सन् । अयं कथंचिच्छब्दो विवक्षितस्यैवास्तित्वं तच्छरीरावगाहस्थशेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालानामविवक्षितानां गौणं कथयति । स एव जीवः पुनस्तच्छेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालानां पररूपादिचतुष्टयापेक्षया कथंचिदसन् अविवक्षितस्य गौणत्वात् । तथा चोक्तं—

कथं चित्तत् सदेवेष्टं कथंचिदसदेव तत् ।
तथोभयमवाच्यं च नययोगान्न सर्वथा ॥१४॥

इष्टं विवक्षितं वस्तु स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया सत्तदेव परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया असत्स्यात् । जिनमते

समाधान—नहीं, धर्म-अधर्म, आकाश और एक जीवके बहुप्रदेशी होनेपर भी अणुके समान अखण्ड द्रव्य होनेसे विभाग नहीं है अतः वह एकवृत्ति है। किन्तु इससे वह अणुरूप नहीं है यद्यपि वह अपने प्राप्त शरीर प्रमाण है फिर भी लोकमात्र प्रदेशी है। पूर्वभवके चरम समयवर्ती एक निगोद शरीरमें स्थित अनन्त जीवोंका नोकर्मरूप आहार समान होनेपर भी कर्मरूप आहार भिन्न-भिन्न है। उन जीवोंमेंसे विवक्षित एक जीव स्व-द्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा कथंचित् सत् है। यह कथंचित् शब्द विवक्षित जीवका ही अस्तित्व कहता है और उस शरीरकी अवगाहनामें स्थित शेष अनन्त जीव पुद्गल धर्म, अधर्म, आकाश, काल जिनकी विवक्षा नहीं है उनको गौणता देता है। वही जीव शेष अनन्त जीव पुद्गल धर्म, अधर्म, आकाश, कालकी पररूपादि चतुष्टयकी अपेक्षा कथंचित् असत् है। जिसकी विवक्षा नहीं होती वह गौण होता है। कहा भी है—

इष्ट अर्थात् विवक्षित वस्तु स्वद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा सत् ही है और वही परद्रव्यादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयमेकांतमादोडल्लियुं कथंचिदप्पुदु । नयविषयमप्पेकांतमुं कथंचिदिल्लदोडदक्कनेकांतत्याग-मक्कुमनेकांतत्यागमागुत्तं विरलु तदेकांतमनन्यमेयक्कुं । सर्व्वथैकांतमेयक्कुमें बुदर्त्थं । मदक्का धर्म्ममल्लदे परिणामांतराभावमक्कुमप्पुदरिंदमवस्तुमक्कुमप्पुदरिंदं ई कथंचिच्छब्दमुं स्याच्छब्दार्त्थप्रतिपादनमक्कुमंते पेळल्पट्टुदु ।

कथंचित्केनचित्कश्चित्कुतश्चित्कस्यचित् क्वचित् ।
कदाचिच्चेति पर्य्यायाः स्यादर्त्थप्रतिपादकाः ॥

ये दितीविनितुं शब्दपर्य्यायंगळु स्यादर्त्थप्रतिपादकंगळेयप्पुवेंदितु । यितु सदसद्रूपंगळागि-पूर्व्वभवचरमसमयदोळु वर्त्तिसुत्तिर्द्द त्रसस्थावरसंबंधिबद्धतिर्य्यग्मनुष्यायुष्यरुगळप्प साधारण-शरीरमोंदरोळु संस्थितानंतानंतसाधारणजीवंगळगे मरणमागुत्तं विरलुत्तरभवप्रथमसमयदोळु त्रसस्थावरसंबंधितिर्य्यग्मनुष्यायुष्यं तद्गत्यानुपूर्व्यंयुतनामकर्म्मैकविंशतिप्रकृतिस्थानमुदयिसि विग्रहगतियोळु नोकर्म्मानाहारकरागि साधारणत्वक्कं समवायत्वक्कं कारणभूतसाधारणशरीर-नामकर्म्मोदयमिल्लप्पुदरिंदमा विग्रहगतियोळु साधारणत्वमुं समवायत्वमुं पिंगि पृथक् पृथग्रूपंग-ळागि कार्म्मणशरीरोदयदिं कार्म्मणकाययोगदोळ्कूडि कर्म्माहारिगळप्पनंतानंतजीवंगळु लब्ध्य-

एव । तथा सदसत् अवाच्यं चशब्दात्सदवक्तव्यं असदवक्तव्यं सदसदवक्तव्यं च स्यात् । नयविषयैकान्तेऽपि कथंचित् स्यात् । अन्यथा तस्यानेकान्तत्यागे तदेकान्तोऽनन्य एव स्यात् । सर्वथैकान्त एवेत्यर्थः । तस्य तद्धर्माभावे परिणामांतराभावः ततोऽवस्तु स्यात् । तत एवायं कथंचिच्छब्दोऽपि स्याच्छब्दार्थप्रतिपादकः । तथा चोक्तं—

कथंचित्केनचित्किंचित्कश्चित्कस्यचित्क्वचित् ।
कदाचिच्चेति पर्यायाः स्यादर्थप्रतिपादकाः ॥१॥

इति सदसद्रूपपूर्वभवचरमसमयवर्तित्रसस्थावरसंबन्धिबद्धतिर्यग्मनुष्यायुष्कसाधारणैकशरीरस्थानंतानंत-जीवाः मरणे उत्तरभवप्रथमसमये त्रसस्थावरसंबंधितिर्यग्मनुष्यायुस्तद्गत्यानुपूर्व्ययुतैकविंशतिकोदया विग्रहगतौ नोकर्मनाहारका भूत्वा साधारणत्वसमवायत्वकारणसाधारणानामनुदयात्तद्द्वयं त्यक्त्वा पृथक् पृथग्भूत्वा

चतुष्टयकी अपेक्षा असत् है। तथा दोनोंकी क्रमशः विवक्षामें कथंचित् सत् कथंचित् असत् है। दोनोंकी युगपत् विवक्षामें अवक्तव्य है। 'च' शब्दसे स्यात् सदवक्तव्य, स्यादसदवक्तव्य और स्यात् सदसदवक्तव्य है। ऐसा कथन नयदृष्टिसे है सर्वथा नहीं है। अन्यथा अनेकान्तका त्याग कर देनेपर सर्वथा एकान्त आ जायेगा। एकान्तरूप वस्तुको माननेपर उसमें परिणमन न होनेसे वह अवस्तु हो जायेगी। इसीसे यह कथंचित् शब्द स्यात् शब्दके अर्थका प्रतिपादक है। कहा है—'कथंचित्, केनचित्, किंचित्, कश्चित्, कस्यचित्, क्वचित्, और कदाचित् ये पर्याय शब्द स्यात् अर्थके प्रतिपादक हैं।'

इस प्रकार सत्-असत्‌रूप पूर्वभवके चरमसमयवर्ती त्रस स्थावर सम्बन्धी तिर्यंचायु या मनुष्यायुका जिनने बन्ध किया है वे साधारण शरीरमें स्थित अनन्तानन्त जीव मरनेपर उत्तरभवके प्रथम समयमें, जिनके त्रसस्थावर सम्बन्धी तिर्यंचायु या मनुष्यायु और तद्गति-सम्बन्धी आनुपूर्वीसे युक्त इक्कीस प्रकृतियोंका उदय होता है, वे विग्रहगतिमें नोकर्म अनाहारक होकर साधारणत्वके साथ समवायत्वके कारण साधारण नामका उदय न होनेसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्य्याप्तपर्य्यायसहकारिकारणत्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळा जीवंगळोळ् यथायोग्यपंच-सत्वस्थानंगळोळेकैकसत्वस्थानयुतरागिप्पुवु । पेळल्पट्टुदु :—

सामान्यं समवायश्चाप्येकैकत्र समाप्तितः ।
अंतरेणाश्रयं न स्यान्नाशोत्पादिषु को विधिः ॥ —६५ आ. मी. ।

सामान्यमुं समवायमुमों दों दरोळ् समाप्तियप्पुदरिदं सामान्यसमवायंगळगनंतरमक्कुम-दरिदं साधारणरूपदिदं समवायरूपदिनिर्द्द नाशोत्पादिद्रव्यंगळोळ् को विधिः सामान्यसमवाय-प्रमाणविषयमावुदु ? अवरोळों दु जीवद्रव्यमुं साधारणत्वक्कं समवायत्वक्कं विषयमल्ते बुदर्त्थं एकें दोडवु विशेषरूपदिदं पृथग्रूपदिनिर्द्दुवप्पुदरिदं । विधिशब्दमें तु प्रमाणवाचकमक्कुमें दोडे :—

सदेक नित्यवक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।
सर्व्वथेति प्रदूष्यंति पुष्यंति स्यादितीहते ॥—स्वयंभू स्तो. १०१ श्लो.

सदेकनित्यवक्तव्यंगळुमवर विपक्षंगळु असदनेकानित्यावक्तव्यंगळुं नयंगळप्पवें तें दोडे नयविषयत्वदिदं इह ई नयविषयंगळल्लि सर्व्वथेति सर्व्वथा यें दितु प्रदुष्यंति दुर्न्नयंगळप्पुवु । स्यादिति स्यात्तें दितु पुष्यंति सुनयंगळप्पुवु ते तव मते जिनागमदोळ् ।

कार्मणशरीरोदयात्तत्काययोगेन जातकर्माहारा लब्ध्यपर्याप्तपर्यायसहकारिकारणत्रयोविंशतिकबन्धकाले योग्य-पंचसत्त्वस्थानेष्वेकतरसत्वाः स्युः । उच्यते—

सामान्यं समवायश्चाप्येकैकत्र समाप्तितः ।
अंतरेणाश्रयं न स्यान्नाशोत्पादिषु को विधिः ॥६५॥

सामान्यं समवायश्च एकैकस्मिन् समाप्तत्वात्तयोरंतरं स्यात् तेन साधारणरूपेण समवायरूपेण स्थिति-नाशोत्पादिद्रव्येषु सामान्यसमवायप्रमाणाविषयकः । तयोरेकजीवद्रव्यं साधारणत्वस्य समवायत्वस्य च विषयो न स्यादित्यर्थः । कुतः ? तयोर्विशेषरूपेण पृथगवस्थानात् । विधिशब्दः कथं प्रमाणवाचक इति चेत् ।

सदेकनित्यवक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।
सर्वथेति प्रदुष्यंति पुष्यंति स्यादितीहते ॥१॥ स्वयंभू स्तोत्र १०१ श्लोक ।

सदेकनित्यवक्तव्याः तद्विपक्षा असदनेकानित्यावक्तव्याश्च नयाः स्युः नयविषयत्वात् । इह नयविषये सर्वथेति प्रदुष्यंति दुर्णया भवंति । स्यादिति पुष्यंति सुनया भवंति तवागमे । तेषां सदसदादीनां प्रमाणनय-

---

उन दोनोंको त्याग पृथक्-पृथक् होकर कार्मण शरीरका उदय होनेसे कार्मणकाययोगके द्वारा आहारक होकर लब्ध्यपर्याप्त पर्यायके सहकारि कारण तेईस प्रकृतियोंके बन्धकालमें उसके योग्य पाँच सत्त्वस्थानोंमें-से किसी एककी सत्तावाले होते हैं। कहा भी है—

सामान्य और समवाय एक-एक व्यक्तिमें ही समाप्त हो जाते हैं। अतः आश्रयके बिना जो द्रव्य नष्ट और उत्पन्न होते हैं उनमें सामान्य और समवाय कैसे रहेंगे।

आशय यह है कि एक जीवद्रव्य साधारणत्व और समवायत्वका विषय नहीं हो सकता। क्योंकि दोनों विशेषरूपसे पृथक् रहते हैं। विधि शब्द प्रमाणका वाचक कैसे है ?

सत्, एक, नित्य, वक्तव्य और इनके विपक्षरूप असत्, अनेक, अनित्य, अवक्तव्य ये जो नयपक्ष हैं वे सर्वथा रूपमें तो अतिदूषित होते हैं अर्थात् दुर्नय होते हैं। और स्यात् पद-पूर्वक सुनय होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई सदसदादिगळे प्रमाणविषयमुं नयविषयमुमप्पुवें दु पेळदपरु :—

विधिर्व्विषक्तप्रतिषेधरूपः प्रमाणमत्रान्यतरत्प्रधानम् ।
गुणोऽपरो मुख्यनियामहेतुर्न्नयः सदृष्टांतसमर्त्थनस्ते ॥—स्वयंभू. श्लो. ५२ श्लो. ।

विषक्तं युक्तं प्रतिषेधरूपं येन सः युक्तप्रतिषेधरूपः विधिः विधिः स्यात्स एव विधिः प्रमाणविषयत्वात्प्रमाणं भवति । अत्र अनयोर्व्विधिनिषेधयोर्म्मध्ये अन्यतरत्प्रधानं स्यात् । अपरोऽन्यो गुणः गौणः स्यात् । तथापि गुणो मुख्यनियामहेतुः स्यात् मुख्यव्यवस्थाहेतुरित्यर्थः । न निरात्मकः न निःस्वभावः स्यात् । विधिनिषेधयोरन्यतरत्प्रधानं यत्तद्वस्तु नयविषयत्वान्नयः स्यात् । सदृष्टांतसमर्त्थनः प्रमाणविषयो नयविषयो वा दृष्टांते समर्त्थनं दृष्टांतसमर्त्थनं तेन सह वर्त्तत इति सदृष्टांतसमर्त्थनस्तव मते एंदितु प्रमाणविषयं नयविषयं मेणु दृष्टांतसमर्त्थनदोडने वर्त्तिसुगु-। मा नयविषयविधिनिषेधंगळगे प्रधानाप्रधानत्वलक्षणमं पेळदपरु :—

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।
तथारिमित्रानुभयादिशक्तिर्द्वयावधेः कार्य्यंकरं हि वस्तु ॥

—स्वयंभू. स्तो. ५३ श्लो. ।

विषयत्वं व्यनक्ति—

विधिर्विषक्तप्रतिषेधरूपः प्रमाणमत्रान्यतरत्प्रधानम् ।
गुणोऽपरो मुख्यनियामहेतुर्नयः सदृष्टान्तसमर्थनस्ते ॥१॥ स्वयंभू ५२ श्लोक ।

विषक्तं युक्तं प्रतिषेधरूपं येन स विधिः स्यात् । स एव प्रमाणविषयत्वात्प्रमाणं । अत्रानयोर्विधिप्रतिषेधयोरन्यतरत्प्रधानं, अपरो गुणः । तथापि गुणो मुख्यनियामहेतुः मुख्यव्यवस्थाहेतुरित्यर्थः । न निरात्मकः न निःस्वभावः स्यात् । विधिप्रतिषेधयोरन्यतरत्प्रधानं यत्तद्वस्तु नयविषयत्वान्नयः स्यात् । सदृष्टान्तसमर्थनः प्रमाणविषयो नयविषयो वा दृष्टान्ते समर्थनेन सहितो वर्तते तव मते । तन्नयविषयविधिनिषेधयोः प्रधानाप्रधानत्वलक्षणमाहुः—

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।
तथारिमित्रानुभयादिशक्तिर्द्वयावधेः कार्यकरं हि वस्तु ॥ स्वयंभू ५३ ।

वे सत्-असत् आदि प्रमाण और नयको व्यक्त करते हैं। कहा है—हे भगवन्, आपके मतमें प्रतिषेधसे युक्त विधि प्रमाणका विषय होनेसे प्रमाण है। इन विधि और प्रतिषेधमें-से एक मुख्य और एक गौण है तथापि गौण मुख्यकी व्यवस्थामें हेतु होता है। वह निःस्वभाव नहीं है। विधि और प्रतिषेधमें-से जो कोई प्रधान होता है वह नयका विषय होनेसे नय है। तथा वह दृष्टान्तमें समर्थनसे सहित होता है।

जो विधि और निषेधमें-से प्रधान और गौण होते हैं उनका लक्षण कहते हैं—

जो कथनके लिए इष्ट होता है चाहे वह विधि हो या प्रतिषेध वही मुख्य कहाता है। जिसकी विवक्षा नहीं होती वह विधि और निषेधमें-से कोई एक गौण होता है। किन्तु वह निरात्मक-निःस्वभाव नहीं होता। इस प्रकार एक ही वस्तु शत्रु, मित्र और अनुभय आदि शक्तियोंको लिये हुए होती है। वास्तवमें विधि-निषेध, सामान्य-विशेष, द्रव्य-पर्याय इस तरह दो-दो सापेक्ष धर्मोंका आश्रय लेकर ही वस्तु अर्थक्रियाकारी होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वक्तुमिष्टो विवक्षितः आ विधि निषेधंगळोळु नुडियल्किष्टमप्पुदु विवक्षितमक्कुमदु मुख्यमेंदु पेळल्पट्टुदु । अन्यः आ विवक्षितविकतरमप्प विधियुं निषेधमुं मेणु अविवक्षितमप्पुदु गुणः गौणमक्कुं । न निरात्मकः निस्स्वभावमल्तु । जिन ! निन मतदोळु । तथा तथा हि अन्तेयल्ते । अरिमित्रानुभयाविशक्तियनुळळ वस्तु द्वयावधेः सदसदेकानेकनित्यानित्यवक्तव्यावक्तव्यंगळ सीमेयत्तणिदित्तलु कार्य्यंकरमक्कु—। मितो प्रमाणनयविषयंगळप्प विग्रहगतिय प्रथमसमयदोळु वर्त्तिसुत्तिप्पं नोकर्म्मानाहारकानंतानंततिर्य्यग्मनुष्यजीवसमूहं लब्ध्यपर्य्याप्तपर्य्यायक्के सहकारिकारणत्रयोविंशतिप्रकृतिस्थानस्थितापर्य्याप्तनामकर्म्मोपार्ज्जनमोंदु देशकालदोळु तदुदयसंजनित कार्य्यरूपलब्ध्यपर्य्याप्तकत्वमोंदु देशकालदोळु संभविसुगुमेंबुदु विरुद्धमल्तेंतेंदोडे वस्तुवृत्तियंतुटप्पुदरिंदं पेळल्पट्टुदु :—

> देशकालविशेषेऽपि स्याद्वृत्तिर्य्युतसिद्धिवत् ।
> समानदेशता न स्यान्मूर्त्तिः (र्त-) कारणकार्य्ययोः ॥ —आप्तमी. ६३ श्लो. ।

देशकालविशेषदोळं कार्य्यकारणंगळ व्यक्ति कथंचित्समानदेशतेयागदु । एंतागदेंदोडे स्याच्छब्दवृत्तियुतसिद्धि सुसिद्धमेंतक्कुमंते कार्य्यकारणंगळ व्यक्ति याव प्रकारदिंदक्कु मा प्रकारदिंदमक्कुमेंबुदर्थमदु कारणमागि सयोगिकेवलिभट्टारकनोळु इंद्रियविषयसुखकारणसातवेदबंधमुदयात्मकमप्पुदरिंदं कारण कार्य्यंगळ्गे समानदेशतेयादुदंतादोडा सयोगभट्टारकनोळु विषय-

वक्तुमिष्टो विधिर्निषेधो वा विवक्षितः स मुख्य इत्युच्यते । अन्यो विधिर्निषेधो वा अविवक्षितो गौणः स्यान्न निरात्मको निःस्वभावो जिन ! तव मते । तथाहि—अरिमित्रानुभयादिशक्तिविशिष्टं वस्तु सदसदेकानेकनित्यानित्यवक्तव्यावक्तव्यद्वयस्यावधेः सीमांतोऽर्वाक् कार्यकरं स्यात् इत्येतत्प्रमाणनयविषयस्य विग्रहगतिप्रथमसमये नोकर्मानाहारकानंतानंततिर्यग्मनुष्यजीवसमूहस्य लब्ध्यपर्याप्तपर्यायसहकारिकारणत्रयोविंशतिकस्थानस्थितापर्याप्तनामोपार्जनं तदुदयकार्यलब्ध्यपर्याप्तकत्वं चैकदेशकाले न संभवतीति न विरुद्धं तथात्वाद्वस्तुवृत्तेः उच्येत—

> देशकालविशेषेऽपि स्याद्वृत्तिर्युतसिद्धिवत् ।
> समानदेशता न स्यान्मूर्तकारणकार्ययोः ॥६३॥

देशकालविशेषेऽपि कार्यकारणव्यक्तिः कथंचित्समानदेशता न स्यात् । कथं न स्यादिति चेत् स्याच्छब्दवृत्तिर्युतसिद्धिवत्तथादिति । ततः कारणात्सयोगकेवलिनोन्द्रियविषयसुखकारणसातवेदनीयबन्ध उदयात्मकः स्यादिति कारणकार्ययोः समानदेशता स्यात् । तर्हि तत्र विषयसुखसंवेदनं स्यादिति न वाच्यं तत्र मोहनीय-

अतः विग्रहगतिके प्रथम समयमें नोकर्म अनाहारक अनन्तानन्त तिर्यञ्च मनुष्य जीव समूहका लब्ध्यपर्याप्त पर्यायका सहकारिकारण तेईस प्रकृतिरूप बन्धस्थानमें स्थित अपर्याप्त नामकर्मका उपार्जन और उसके उदयका कार्य लब्ध्यपर्याप्तपना एकदेश एक कालमें होना विरुद्ध नहीं है; क्योंकि वस्तुका स्वरूप ही ऐसा है। कहा है—'देशकालका भेद होनेपर भी युतसिद्धवत् वृत्ति होती है । मूर्तिमान अवयव और अवयवी समानदेशमें नहीं रह सकते । अतः सयोगकेवलीमें इन्द्रिय सुखका कारण वेदनीय कर्मका बन्ध उदयात्मक होता है अतः कारण और कार्यका समानदेश हो सकता है ।

शायद कहा जाये कि तब तो केवलीमें विषयसुखवेदन होना चाहिए। किन्तु ऐसा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुखसंवेदनं यक्कुमें देनल्वेडेके दोडा सयोगकेवलिभट्टारकंगे मोहनीयकर्म्मनिरवशेषप्रक्षयदिदं स्वात्मोत्थानंतानंताक्षयसुखसंवेदनं निरंकुशवृत्तियिदं वर्त्तिसुत्तं विरलु कवलाहारादिविषयसुख-संवेदनं विरोधिसल्पडुगुमें तें दोडे मोहनीयकर्म्मोदयबलाधानरहितसातवेदोदययक्कं बहिर्व्विषय सन्निधीकरण सामर्त्थमल्लदे तद्विषयसुखसंवेदनेयं पुट्टिसुव सामर्त्थमिल्ल । पेळल्पट्टुदु :—

"घादिव्व वेदणीयं मोहस्स बळेण घाददे जीवमें दितु ॥

अथवा मतिश्रुतावधिमनःपर्य्ययज्ञानावरणंगळ क्षयंबेरे काणल्पट्टुदिल्ल । क्षीणकषाय-गुणस्थानचरमसमयदोळे "णाणंतरायदसयं दंसण चत्तारि चरिमम्मि" एंदितु ज्ञानावरणपंचकांत-रायपंचकंगळुं दर्शनावरणचतुष्टयमुं युगपत्प्रणष्टंगळादुवप्पुदरिदं जीवस्वभावगुणंगळप्प केवल-ज्ञानदर्शनोपयोगोपयुक्तसयोगिकेवलिभट्टारकंगक्षयानंतशक्तिसंयुक्तंगे क्षयोपशमिकविभाव-गुणंगळप्प मत्यादिज्ञानोपयोगंगळ संभवमप्पुदरिदमुमथवा सातवेदनीयोदयसंजनितेंद्रियविषय-कवलाहारादिगळत्तणिदं विषयसुखसंवेदने केवलज्ञानदिदमो ? मेणिंद्रियज्ञानदिंदमो ? इंद्रियज्ञान-दिदु में दोडे केवलज्ञानोपयोगक्कभावमागि बक्कुमें तें दोडे "एकस्यानेकवृत्तिर्न्न भागाभावात्"

कर्मनिरवशेषप्रक्षयात्स्वात्मोत्थानंतानंताक्षयसुखसंवेदनं निरंकुशवृत्त्या वर्तमाने सति कवलाहारादिविषयसुख-संवेदनं विरुध्यते । मोहनीयोदयबलाधानरहितसातवेदोदयस्य बहिर्विषयसंनिधीकरणसामर्थ्यमेव स्यान्न तद्विषय-सुखसंवेदनोत्पादकसामर्थ्यं । तथा चोक्तं—

घादि व वेदणीयं मोहस्स बलेण घाददे जीवं । इति

अथवा मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणानां क्षयः पृथगेव न दृश्यते क्षीणकषायचरमसमये एव णाणंतरायदसयं दंसणचत्तारीति चतुर्दशानां युगपत्प्रणष्टत्वाज्जीवस्वभावगुणकेवलज्ञानदर्शनोपयोगोपयुक्त-सयोगस्याक्षयानंतशक्तेः क्षयोपशमिकविभावगुणमत्यादिज्ञानोपयोगानामसंभवात् । अथवा सातवेदनीयोदय-संजनितेन्द्रियविषयकवलाहारादिभ्यो विषयसुखसंवेदनं केवलज्ञानेनेन्द्रियज्ञानेन वा । इन्द्रियज्ञानेन चेत् केवल-

कहना ठीक नहीं है। क्योंकि केवलीमें मोहनीय कर्मका सम्पूर्ण क्षय हो चुका है। अतः अपनी आत्मासे उत्पन्न अनन्तानन्त अक्षय सुखका संवेदन रहते हुए केवलीमें कवलाहार आदि जन्य विषयसुखका संवेदन सम्भव नहीं है।

मोहनीयकी उदयकी सहायतासे रहित सात वेदनीयके उदयमें बाह्य विषयोंको लानेकी सामर्थ्य ही होती है। विषयसुखका संवेदन उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य नहीं होती। कहा भी है—

वेदनीय कर्म मोहका बल पाकर जीवका घात करता है।

अथवा मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ज्ञानोंके आवरणोंका क्षय पृथक्-पृथक् नहीं होता। क्षीणकषायके अन्तिम समयमें ही पाँचों ज्ञानावरण, पाँच अन्तराय और चार दर्शनावरणोंका एक साथ विनाश होता है। अतः जीवके स्वाभाविक गुण केवलज्ञान और केवलदर्शनरूप उपयोगसे उपयुक्त तथा अक्षय अनन्तशक्तिसे सम्पन्न सयोगकेवलीके क्षायोपशमिक वैभाविक गुण मति आदि ज्ञानोपयोगका होना असम्भव है।

अथवा सातावेदनीयके उदयसे उत्पन्न इन्द्रियविषय कवलाहार आदि सम्बन्धी विषयसुखका संवेदन केवली केवलज्ञानसे करते हैं या इन्द्रिय ज्ञानसे। यदि इन्द्रिय ज्ञानसे

एंदितेककालदोळेकजीवनोळेकवृत्तियल्लदनेकवृत्ति संभविसदप्पुदरिंदमुं वीतरागभट्टारकंगे क्षायोपशमिकज्ञानप्रसंगमक्कुं। केवलज्ञानदिदमें बोडे अनंताक्षयसुखतृप्तंगे अशुचिवस्तुदर्शनांतरायपरिवर्जिताहारप्रवृत्ति गगनकुसुमोपममक्कुमप्पुदरिंदं। अंता त्रयोविंशतिबंधमेकेंद्रियापर्य्याप्तयुतबंधस्थानमप्पुदरिंदं तिर्य्यग्गतिजमिथ्यादृष्टिगळुं मनुष्यगतिजमिथ्यादृष्टिगळुं बंधस्वामिगळप्परल्लि तिर्य्यंचरुगळोळेकेंद्रियादि सर्व्वतिर्य्यंच मिथ्यादृष्टिगळुं बंधयोग्यस्थानमप्पुरिंदमा त्रयोविंशतिस्थानमं कट्टुवागळु जीवंगळगे बं २३। ए अ। उ द २१।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१। स ९२।९०।८८।८४।८२॥ आ तिर्य्यंचसासादनादिगळोळारोळमी त्रयोविंशतिबंधस्थानमिल्ल। मनुष्यगतिय मनुष्यरोळु कर्म्मभूमिजमिथ्यादृष्टिगळे स्वामिगळप्पुदरिंदमा स्थानमं कट्टुवागळा जीवंगळगे बं २३। ए अ। उ २१।२६।२८।२९।३०। स ९२।९०।८८।८४॥ पंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतमुं त्रसापर्य्याप्तयुत बंधस्थानमप्पुदरिंदमा पंचविंशति प्रकृतिबंधस्वामिगळु तिर्य्यंचरुं मनुष्यरुं दिविजरुगळुमप्परल्लि तिर्य्यग्गतिजरोळु सर्व्वतिर्य्यंचरुगळु मिथ्यादृष्टिगळे कट्टुवरप्पुदरिंदमा जीवंगळु पंचविंशतिस्थानमं कट्टुवागळु

ज्ञानोपयोगस्याभावः प्रसज्यते एकस्यानेकवृत्तेरभावात्। अन्यथा क्षायोपशमिकज्ञानं प्रसज्यते। अथ केवलज्ञानेन तदाऽनंताक्षयसुखतृप्तस्याशुचिवस्तुदर्शनांतरायपरिवर्जिताहारप्रवृत्तिगगनकुसुमोपमा स्यादिति। तथा तत्त्रयोविंशतिकमेकेन्द्रियापर्याप्तयुतमिति तिर्यग्मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टय एव बध्नंति। तदा तेषामेकेन्द्रियादिसर्वतिरश्चामिति।]

उपरतबन्धे उदयस्थानानि चतुःपंचाग्रविंशतिकोनानि दश। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि षट् च। अत्राद्यत्रिसंयोगे—

बं	२३
उ	९
स	५

त्रयोविंशतिकमेकेन्द्रियापर्याप्तयुतत्वाद्देवनारकेभ्योऽन्ये त्रसस्थावरमनुष्यमिथ्यादृष्टय एव बध्नंति। तत्रैकेन्द्रियादिसर्वतिरश्चां बं २३ ए अ। उ २१ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ स ९२।९०।८८।

करते हैं तो केवल ज्ञानोपयोगका अभाव प्राप्त होता है क्योंकि एक जीवके एक समयमें अनेक उपयोग नहीं हो सकते। अन्यथा केवलीके क्षायोपशमिक ज्ञानका प्रसंग आता है। यदि केवलज्ञानसे करते हैं तो अक्षय अनन्तसुखसे तृप्त केवलीके अशुचि वस्तुको देखनेरूप अन्तरायके कारण त्यागे हुए आहारमें प्रवृत्ति असम्भव हो जायेगी।

तथा तिर्यंचगति और मनुष्यगतिमें एकेन्द्रिय अपर्याप्तसे सहित तेईस प्रकृतिक स्थानको मिथ्यादृष्टि ही बाँधते हैं।]

प्रथम त्रिसंयोगमें तेईसके बन्धस्थानमें नौ उदयस्थान और पाँच सत्त्वस्थान कहे। सो तेईसका बन्धस्थान एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित होनेसे उसे देवनारकियोंको छोड़ त्रस स्थावर और मनुष्य मिथ्यादृष्टि ही बाँधते हैं। सो एकेन्द्रिय आदि सब तिर्यंचोंके बन्ध एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित तेईसका होता है वहाँ उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस और इकतीसका। सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी,

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

आजीवंगळ्गे बं २५ । ए । प । त्र । अ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ तिर्य्यंचसासादनादिगळी पंचविंशतिस्थानमं कट्टरेकें दोडे-कें द्रियविकलत्रयापर्य्याप्तकम्मंगळु मिथ्यादृष्टियोळे बंधमप्पु वप्पुदरिं, मनुष्यगतियोळु मनुष्यमिथ्या-दृष्टिगळोळे पंचविंशतिस्थानबंधमप्पुदरिदमा जीवंगळा स्थानमं कट्टुवागळु बं। २५ । ए । प । त्र अ। उ २१। २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ ॥ मनुष्यसासादनादिगळोळे-ल्लियुं पंचविंशतिस्थानबंधमिल्ल । देवगतियोळु भवनत्रयसौधर्म्मकल्पद्वयदिविजमिथ्यादृष्टिगळोळे पंचविंशति प्रकृतिबंधस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तयुतमागि बंधं संभविसुगुमप्पुदरिना स्थानमं कट्टुवागळु दिविजमिथ्यादृष्टिगळ्गे बं २५। ए प। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ स ९२। ९०। विविजसासादनादिगळ्गेल्लियुं पंचविंशतिस्थानबंधमिल्ल । षड्विंशतिबंधस्थानमेकेंद्रियपर्य्याप्तो-द्योतातपोन्यतरयुतबंधस्थानमप्पुदरिदं । तिर्य्यंचरुं मनुष्यरुं दिविजरुं बंधस्वामिगळप्परल्लि सर्व्व-तिर्य्यंच मिथ्यादृष्टिगळोळु तेजोवायुसाधारणसूक्ष्मपर्य्याप्तंगळोळुदयमिल्लदे बंधमुंटप्पुदरिवं सर्व्व-तिर्य्यंचमिथ्यादृष्टिगळा स्थानमं कट्टुवागळु बं २६ । ए प । उ । आ । उ २१ । २४ । २५ । २६ ।

---

८४ । ८२ । मनुष्येषु कर्मभूमिजानामेव बं २३ । ए अ । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८।८४ । पंचविंशतिकमेकेन्द्रियपर्याप्तत्रसापर्याप्तयुतत्वात्तिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टय एव बध्नंति । तत्र सर्वतिरश्चां बं २५ ए प त्र अ उ। २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । मनुष्यगतौ बं २५ ए प । त्र अ । उ २१, २६, २८, २९, ३० । स ९२, ९०, ८८, ८४ । देवेषु भवनत्रयसौधर्मद्वयजानामेवैकेन्द्रियपर्याप्तयुतमेवं बं २५ ए प । उ २१, २५, २७, २८, २९, स ९२, ९० । षड्विंशतिकमेकेन्द्रियपर्याप्तोद्योतातपान्यतरयुतत्वात्तिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टय एव बध्नन्ति । तत्रापि तेजोवायु-साधारणसूक्ष्मापर्याप्तेषु तदुदय एव न, बन्धस्तु भवत्येव । तत्तिरश्चां—बं २६ । ए प उ आ । उ २१, २४,

---

बयासीका है । मनुष्योंमें कर्मभूमियोंके ही एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित तेईसका बन्ध होता है वहाँ उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका है ।

पच्चीसका बन्ध एकेन्द्रिय पर्याप्त या त्रस अपर्याप्त सहित होता है। अतः उसका बन्ध तिर्यंच मनुष्य देव मिथ्यादृष्टि ही करते हैं। उनमेंसे सब तिर्यंचोंके एकेन्द्रिय पर्याप्त या त्रस अपर्याप्त सहित पच्चीसका बन्ध होनेपर उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीका है। मनुष्यगतिमें एकेन्द्रिय पर्याप्त या त्रस अपर्याप्त सहित पच्चीसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका है। देवोंमें भवनत्रिक और सौधर्म युगलके देवोंके ही एकेन्द्रिय पर्याप्त सहित पच्चीसका बन्ध होता है। वहाँ उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है।

छब्बीसका बन्ध एकेन्द्रिय पर्याप्त और आतप उद्योतमें-से एक सहित है। अतः उसे तिर्यंच मनुष्य देव मिथ्यादृष्टि ही बाँधते हैं। उनमें भी तेजकाय, वायुकाय साधारण सूक्ष्म अपर्याप्तोंमें उसका उदय नहीं है बन्ध तो होता ही है। तिर्यंचोंके एकेन्द्रिय पर्याप्त उद्योत या आतप सहित छब्बीसका बन्ध होनेपर उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळा षड्विंशतिस्थानमं कट्टुवागळु बं २६। ए प। आ उ। उ २१। २६। २८। २२। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४॥ विविज्ञभवनत्रयसौधर्म्मद्वयमिथ्यादृष्टिगळा स्थानमं कट्टुवागळु बं २६। ए प। आ उ। उ २१। २५। २७। २८। २९। अष्टाविंशतित्रंबंधस्थानं नरकदेवगतियुतबंधस्थानमप्पुदरिदं तिर्य्यग्मनुष्यरुगळे बंधस्वामिगळप्परल्लि तिर्य्यग्गतियोळु शरीरपर्य्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियमिथ्यादृष्टियुं संज्ञियुं कट्टुवागळु बं २८। न। दे। उ २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। संज्ञितिर्य्यंचसासादनंगे बं २८। दे। उ। ३०। ३१। स ९०॥ तिर्य्यंच मिश्रंगे बं २८। दे। उ ३०। ३१। स ९२। ९०॥ तिर्य्यंग असंयतंगं बं २८। दे। उ २१। २६। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। देशसंयततिर्य्यंचंगे बं २८। दे। उ ३०। ३१। स ९२। ९०। ई तिर्य्यंग्गतियोळष्टाविंशतिबंधस्थानं मिथ्यादृष्टियोळु विग्रहगतियोळं शरीरमिश्रकालदोळं बंधमिल्लेके दोडे :—

"ओराळे वा मिस्से णहि सुरणिरयाउहारणिरयदुगं।
मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि।"

२५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१। स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२। तन्मनुष्याणां बं २६। ए प आ उ। उ २१, २६, २८, २९, ३०। स ९२, ९०, ८८, ८४। भवनत्रयसौधर्मद्वयजानां बं २६। ए प आ उ। उ २१, २५, २७, २८, २९। स ९२, ९०। अष्टाविंशतिकं नरकदेवगतियुतत्वादसंज्ञिसंज्ञितिर्यक्कर्मभूमिमनुष्या एव विग्रहगतिशरीरमिश्रकालावतीत्य पर्याप्तशरीरकाले एव बध्नंति। तत्तिरश्चां मिथ्यादृष्टेः बं २८ न। दे, उ २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। तत्सासादनस्य बं २८ दे। उ ३०। ३१। स ९०। मिश्रस्य बं २८ दे। उ ३०। ३१। स ९२। ९०। असंयतस्य बं २८ दे, उ २१। २६। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। देशसंयतस्य बं २८ दे, उ ३०। ३१। स ९२। ९०। द्व्यशीतिकं हि तत्सत्त्वयुततेजोवायुभ्यां पंचेन्द्रियेषूत्पद्य

अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका और सत्त्व बानबे नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीका होता है। मनुष्योंके उसी प्रकारका बन्ध होनेपर उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका है। भवनत्रिक और सौधर्मयुगलके देवोंके वैसा ही बन्ध होनेपर उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, सत्त्व बानबे, नब्बेका है।

अठाईसका बन्ध नरकगति या देवगति सहित होनेसे असंज्ञी संज्ञी तिर्यंच मनुष्य ही विग्रहगति और शरीर मिश्रकालको बिताकर पर्याप्त शरीरकालमें बाँधते हैं। वहाँ तिर्यंच मिथ्यादृष्टि नरक देवगति सहित अठाईसका बन्ध होनेपर उदय अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासीका है। सासादनमें देवगति सहित अठाईसका बन्ध होनेपर उदय तीस, इकतीस और सत्त्व नब्बेका होता है। मिश्रमें बन्ध होनेपर उदय तीस, इकतीस तथा सत्त्व बानबे, नब्बेका है। असंयतमें होनेपर उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका तथा सत्त्व बानबे नब्बेका है। देशसंयतमें देवगति सहित

---

१. (ताड पृ. २०६ पं. १)—अष्टाविंशतिबंधदोळु एकविंशतिषड्विंशति उदयमिल्लेंबुदु व्यक्तमाय्तु॥ (पृ. २०६, पं २)—कम्मे ओराळमिस्सं वा यी गाथाभिप्रायमं योजिसिकोंबुदु॥—(संबंधोऽत्र न ज्ञायते)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एंदिता विग्रहगतियोळं शरीरमिश्रकालदोळमा बंधस्थानं संभविसुवुदल्तें बुदर्त्थमल्लि-द्व्यशीतिचतुरशीतिसत्त्वस्थानंगळुं संभविसवें तें दोडे द्व्यशीतिसत्त्वस्थानमुळ्ळ तेजोवायुकायिक-जीवंगळा पंचेंद्रियासंज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्टिगळोळु पुट्टुवरंतु पुट्टिदोडमा विग्रहगतियोळं शरीरमिश्र-योगकालदोळमा सत्त्वस्थानं कथंचिदुंटु कथंचिदिल्लमदें तें दोडे आ विग्रहगतियोळं शरीरमिश्र-कालदोळं तिर्य्यग्गतियुतमागि त्रयोविंशतिपंचविंशति षड्विंशतिस्थानंगळुमं नवविंशतित्रिंशत्प्रकृति-स्थानंगळुमं तिर्य्यग्गतियुतमागि कट्टुवागळु मनुष्यद्विकं बंधमिल्लप्पुदरिंदं तत्सत्त्वस्थानं संभवि-सुगुमा विग्रहगतियोळं शरीरमिश्रयोगकालदोळं मनुष्यगतिद्वययुतपंचविंशतिस्थानमुमं नवविंशति-स्थानमुमं कट्टुवागळु तद्व्यशीतिसत्त्वस्थानं संभविसदप्पुदरिंदं। मत्तमा अष्टाविंशतिस्थानमं शरीरपर्य्याप्तियोळु कट्टुव पंचेंद्रियासंज्ञिसंज्ञिमिथ्यादृष्टिगळुमेकेंद्रियविकलत्रयभवदोळु नारक-चतुष्टयमनुद्वेल्लनमं माडि बंदी असंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्तरोळु पुट्टुवरंतु पुट्टिदोडमा विग्रह-गतियोळं शरीरमिश्रयोगकालदोळं नियमदिंदमा सत्त्वस्थानं संभविसुगुमें तें दोडा चतुरशीतिसत्त्व-स्थानयुतजीवंगळा कालदोळु मिथ्यादृष्टिगळप्पुदरिंदं देवद्विकमुं नारकचतुष्टयमुं बंधमागवप्पुदरिंदमी अष्टाविंशतिस्थानबंधकालं शरीरपर्य्याप्तियुतकालमप्पुदरिंदं नारकचतुष्टयमं कट्टिदोडमा जीवं-गळोळष्टाशीतिसत्त्वस्थानं संभविसुगुं मेणु सुरचतुष्टयमं कट्टिदोडमा जीवंगळोळु अष्टाशीतिप्रकृति-सत्त्वस्थानं संभविसुगुमप्पुदरिंदमा असंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियमिथ्यादृष्टिगळोळु द्वानवतिनवत्यष्टाशीति-सत्त्वस्थानत्रयसंभवं पेळल्पट्टुदु। मनुष्यगतियोळु मिथ्यादृष्टिजीवंगळगे अष्टाविंशतिस्थानं तिर्य्यक्पंचेंद्रियपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळ्गे पेळदंते शरीरपर्य्याप्तियोळु नरकगतियुतमागियुं देवगति-

नानाविग्रहगतिशरीरमिश्रकालयोस्तिर्यग्गतियुतत्रिपंचषड्नवदशाग्रविंशतिकानि बध्नतां संभवति। मनुष्यद्विक-युतपंचनवाग्रविंशतिके बध्नतां न संभवति। चतुरशीतिकं चैकविकलेन्द्रियभवे नारकचतुष्कमुद्वेल्य पंचेन्द्रिय-पर्याप्तेषूत्पन्नस्य तस्मिन्नेव कालद्वये संभवति ततोऽस्मिन्नष्टाविंशतिकबन्धकाले तयोः सत्त्वं नोक्तं।

मनुष्येषु मिथ्यादृष्टेः बं २८। न दे, उ २८। २९। ३०। स ९२। ९१। ९०। ८८। उद्वेल्लितानुद्वेल्लित-मनुष्यद्विकतेजोवायूनां मनुष्यायुरबन्धादत्रानुत्पत्तेर्न द्व्यशीतिकसत्त्वं, उद्वेल्लितनारकचतुष्कैकविकलेन्द्रियाणा-

सहित अठाईसका बन्ध होने पर उदय तीस, इकतीस, सत्त्व बानबे, नब्बेका है। बयासीके सत्त्वसहित तेजकाय वातकायसे मरकर पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो विग्रहगति और शरीर मिश्र-कालमें तिर्यंचग्गति सहित तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीसका बन्ध होनेपर बयासीका सत्त्व होता है। मनुष्यद्विक सहित पच्चीस और उनतीसका बन्ध होते बयासीका सत्त्व नहीं होता। चौरासीका सत्त्व एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियके भवमें नारक चतुष्ककी उद्वेलना करके पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न होनेपर पूर्वोक्त दोनों कालोंमें होता है। इसलिए अठाईसके बन्ध होनेके कालमें बयासी और चौरासीका सत्त्व नहीं कहा। मनुष्योंमें मिथ्यादृष्टिके नरक या देवगति सहित अठाईसके बन्धमें उदय अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बे और अट्ठासीका है। मनुष्यद्विककी उद्वेलना जिनकी हुई है या नहीं हुई है ऐसे तेजकाय, वायुकायके मनुष्यायुका बन्ध न होनेसे वे मनुष्योंमें उत्पन्न नहीं होते। इससे बयासीका सत्त्व नहीं होता। तथा जो नारक चतुष्ककी उद्वेलना सहित एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युतमागियुं बंधमक्कुमा विग्रहगतियोळ् शरीरमिश्रकालदोळं ओराळे वा मिस्से एंबित्यादि सूत्रेष्टदिंदं तद्बंध तत्कालदोळ् संभविसदप्पुदरिंदमा। मिथ्यादृष्टिमनुष्यरुंकर्म्मभूमिजरे शरीर-पर्य्याप्तियोळ्कूडितदष्टाविंशतिस्थानमं कट्टुवागळु बं २८। न। दे। उ २८। २९। ३०। स ९२। ९१। ९०। ८८। इल्लि तेजस्कायिकवायुकायिकंगळु मनुष्यद्विकमनुद्वेल्लनमं माडियुं माड-देयुमी मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळोळु पुट्टरें तें दोडे "मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं णहि तेउवाउम्मि" एंदितु मनुष्यायुर्बंधसंभवमिल्लप्पुदरिंदमा द्व्यशीतिसत्त्वस्थानमं संभविसदु। नारकचतुष्टयमनुद्-वेल्लनमं माडि वंदु एकेंद्रियतिर्य्यंचरुं विकलत्रयतिर्य्यंचरुं बंदु पुट्टुवप्पुदरिंदोडमा जीवंगळगमी मनुष्यशरीरमिश्रकालदोळं विग्रहगतियोळमा चतुरशीतिसत्त्वस्थानं नियमदिंदं संभविसुगुमेकें-दोडा जीवंगळगाकालदोळष्टाविंशतिबंधस्थानं नियमदिंदमिल्लें तें दोडोराळे वा मिस्से येंबित्यादि सूत्राभिप्रायदिंदमा कालदोळु तदष्टाविंशतिबंधनिषेधमुंटप्पुदरिंदमी शरीरपर्य्याप्तियोळष्टाविंशति-प्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळुमा चतुरशीतिसत्त्वस्थानमुभयप्रकारदिंदं संभविसदें तें दोडे शरीर-पर्य्याप्तियोळष्टाविंशतिस्थानमं नारकचतुष्टययुतमागि कट्टुवागळुमष्टाशीतिसत्त्वस्थानमक्कु-मथवा देवचतुष्टययुतमागि कट्टुवागळुमष्टाशीतिसत्त्वस्थानमे सत्त्वमक्कुमप्पुदरिंदं एकनवतिसत्त्व स्थानमी मनुष्यमिथ्यादृष्टियोळें तु संभविसुगुमेकें दोडे प्राग्बद्धनरकायुष्यनप्प असंयतसम्यग्दृष्टि-द्वितीयादिपृथ्विगळोळु पुट्टनभिमुखनप्पागळु सम्यक्त्वमं विराधिसि केडिसि मिथ्यादृष्टियागि नरकगतियुताष्टाविंशति स्थानमं कट्टुत्तमिप्पातंगे त्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानमुमेकनवतिसत्त्वस्थानमुं संभविसुगुमप्पुदरिंदं मनुष्यसासादनंगे बं २८। दे। उ ३०। स ९०। मनुष्यमिश्रंगे बं २८। दे। उ ३०। स ९२। ९०॥ मनुष्यासंयतंगे बं २८। दे। उ २१। २६। २८। २९। ३०॥ स ९२।

मत्रोत्पन्नानां विग्रहगतिमिश्रशरीरकालयोरष्टाविंशतिकाबन्धान्न चतुरशीतिकसत्त्वं। शरीरपर्याप्तौ तद्बन्धे तु नारकचतुष्केण देवचतुष्केण वाष्टाशीतिकसत्त्वमेव न तत् एकनवतिकसत्त्वं प्राग्बद्धनरकायुरसंयतस्य द्वितीयतृतीय-पृथ्व्युत्पत्त्यभिमुखस्य मिथ्यादृष्टित्वं गत्वा नरकगतियुताष्टाविंशतिं बध्नतस्त्रिंशत्कोदयेन सह संभवति। सासादनस्य बं २८ दे। उ ३०। स ९०। मिश्रस्य बं २८ दे। उ ३०। स ९२। ९०। असंयतस्य बं २८ दे। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। नात्रैकनवतिकसत्त्वं प्रारब्धतीर्थबन्धस्यान्यत्र बद्धनरकायुष्का-

---

मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं उनके विग्रह गति और मिश्रशरीर कालमें अठाईसका बन्ध न होनेसे चौरासीका सत्त्व नहीं होता। शरीर पर्याप्तिकालमें उसका बन्ध होनेपर नारकचतुष्क या देवचतुष्कके साथ अट्ठासीका ही सत्त्व होता है। पूर्वमें जिसने नरकायुका बन्ध किया है ऐसा असंयत सम्यग्दृष्टी जब दूसरी या तीसरी पृथिवीमें जानेके अभिमुख होता है तो मिथ्यादृष्टि होकर नरकगति सहित अठाईसका बन्ध करता है तब तीसके उदयके साथ इक्यानबेका सत्त्व होता है। मनुष्य सासादनके देवगति सहित अठाईसके बन्धमें उदय तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें देवगति सहित अठाईसका बन्ध करने पर उदय तीसका तथा सत्त्व बानबे और नब्बेका है। असंयतमें देवगति सहित अठाईसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व नब्बे, बानबेका है। यहाँ इक्यानबेका सत्त्व नहीं है; क्योंकि तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ होनेके पश्चात् सम्यक्त्वसे च्युत वही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९० ॥ तीर्थयुतैकनवतिसत्त्वस्थानमष्टाविंशतिबंधकनोळ् संभविसदें ते दोडे—सम्यग्दृष्टिगळोळ् तीर्थरहितबंधस्थानं संभविसदेकें दोडवर्गे स्सलानु नरकगतिगमनकालदोळ् तीर्थबंधप्रारंभप्राग्बद्धनरकायुष्यनप्प मनुष्यासंयतंगे मिथ्यात्वोदयदिदं मिथ्यादृष्टियादोडे तीर्थबंधं माण्बुदल्लदे अन्यत्र सम्यग्दृष्टिगळोळ् बंधमिल्लप्पुदिल्लें ते दोडे तीर्थनिरंतरबंधकालमुत्कृष्टदिदमंतर्म्मुहूर्त्ताधिकाष्टवर्षन्यूनपूर्व्वकोटिवर्षद्वयाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपमकालप्रमितमप्पुदरिंदं । अदुकारणमी सम्यग्दृष्टियोळष्टाविंशतिबंधकनोळेकनवतिसत्त्वस्थानं संभविसदु । मिथ्यादृष्टियोळ् संभविसुगुमेंबुदर्थं । मनुष्यदेशसंयतंगे बं २८ । दे । उ ३० । स ९२ । ९० ॥ मनुष्यप्रमत्तसंयतंगे बं २८ । दे । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० ॥ अप्रमत्तसंयतंगे बं २८ । दे । उ ३० । स ९२ । ९० ॥ अपूर्व्वकरणंगे बं २८ । दे । उ ३० । स ९२ । ९० ॥ नवविंशतिबंधं द्वींद्रियादित्रसपर्य्याप्तयुततिर्य्यग्गतियुतमुं मनुष्यगतियुतमुं देवगतितीर्थयुतमुमप्पुदरिंदमदक्के स्वामिगळ् नारकरुं तिर्य्यंचरुं मनुष्यरुं विविजरुमप्परल्लि नारकमिथ्यादृष्टिगळ्गे बं २९ । पं । ति । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९१ । ९० ॥ इल्लि एकनवतिस्थानं घर्म्मादित्रयावनिजापर्य्याप्तरोळे संभवमें दरियल्पडुगुं । नारकसासादनंगे बंध २९ । पं । ति । म । उ २९ । स ९० ॥ नारकमिश्रंगे बं २९ । म । उ २९ । स ९२ । ९० । नारकासंयतंगे बं २९ । म । उदयं घर्म्मेयोळु २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० ॥ वंशेय मेघेय नारकासंयतर्ग्गे बं २९ । उ २९ । सत्त्व ९२ । ९० ॥

सम्यक्त्वाप्रच्युतिर्नेति तीर्थबन्धस्य नैरंतर्यादष्टाविंशतिकाबन्धात् । देशसंयतस्य बं २८ दे । उ ३०, स ९२ । ९०, प्रमत्तस्य बं २८ दे । उ २५ । २७ । २८ । ६० । स ९२ । ९० । अप्रमत्तस्य बं २८ दे । ३० । स ९२ । ९० । अपूर्वकरणस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९२ । ९० । नवविंशतिकं द्वींद्रियादित्रसपर्याप्तेन तिर्यग्गत्या वा देवतीर्थेन वा युतत्वाच्चतुर्गतिजा बध्नंति । तत्र नारकमिथ्यादृशां बं २९ पं ति म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९१ । ९० । अत्रैकनवतिकं घर्मादित्रयापर्याप्तेष्वेव संभवति । सासादनस्य बं २९ पं ति म । उ २९ । स ९० । मिश्रस्य बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० । असंयतस्य घर्मायां बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । वंशामेघयोः बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९०

होता है जिसने पूर्वमें नरकायुका बन्ध किया है, और तीर्थंकरका बन्ध निरन्तर होता है इससे उसके अठाईसका बन्ध नहीं है। देशसंयतमें उदय तीसका और सत्त्व बानबे नब्बेका है। प्रमत्तमें उदय पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। अप्रमत्तमें उदय तीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। अपूर्वकरणमें उदय तीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। उनतीसका बन्ध दोइन्द्रिय आदि त्रसपर्याप्त सहित या तिर्यंचगति सहित या मनुष्यगति सहित या देवगति तीर्थंकर सहित होता है। इसे चारों गतिके जीव बांधते हैं। नारक मिथ्यादृष्टिके पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। यहाँ इक्यानबेका सत्त्व धर्मादि तीन नरकोंमें अपर्याप्तकालमें ही होता है। सासादनमें उसी प्रकारसे उनतीसके बन्धमें उदय उनतीसका सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें मनुष्यगति सहित ही उनतीसका बन्ध होता है। वहाँ उदय उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। असंयतमें भी मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध होता है। सो घर्मानरकमें उदय इक्कीस, पच्चीस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंजनादिचतुःपृथ्विगळोळु बं २९। ति। म। उदय २९। स ९२। ९०॥ तिर्य्यग्गतिय मिथ्यादृष्टियोळु बं २९। बि। ति। च। प। म। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ सत्त्व ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ तिर्य्यंचसासादनंगे बं २९। प। ति। म। उ। २१। २४। २६। ३०। स ९०। पंचविंशतिसप्तविंशत्यष्टाविंशतिनवविंशतिस्थानोदयंगळोळु सासादनगुणमिल्ल। तिर्य्यंचमिश्रगुणस्थानदोळु नवविंशतिबंधस्थानबंधं संभविसदेकेंदोडे "उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे हवे णियमा" येंदितु मनुष्यगतियुं सासादननोळु व्युच्छित्तियादुदप्पुदरिंदं। मिश्रंगे पेरगेपेळ्दष्टाविंशतिदेवगतियुतस्थानमे बंधमक्कुमेंबुदत्थं। तिर्य्यंचासंयतदेशसंयतरुगळोळी तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिप्रकृतिस्थानबंधं योग्यमल्लप्पुदरिंदं संभविसदु। मनुष्यगतियोळु मनुष्यमिथ्यादृष्टिगळ्गे बं २९। बि। ति। च। पं। ति। म। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। यिल्लि तेजोवायुकायिकंगळु पुट्टवप्पुदरिंदं द्व्यशीतिसत्त्वं संभविसदु। बद्धनरकायुष्यमनुष्यासंयतं तीर्त्थबंधमं केवलिद्वयोपांतदोळु प्रारंभिसि नरकगतिगमनाभिमुखनप्पागळु वेदकसम्यक्त्वमं कॆडिसि मिथ्यादृष्टियागि मनुष्यगतियुतनव-

(अंजनादिषु बं २९ म। उ २९। ९२) तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टेः बं २९ बि ति च पं ति म। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२। सासादनस्य बं २९ पं ति म। उ २१। २४। २६। ३०। स ९०। नात्र पंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकोदयः मिश्रादित्रये नास्य बन्धः। उपरिम छण्णं च छिदी सासण सम्मे हवे इति नियमात् तिर्यग्मनुष्यगत्योः सासादने छेदात्। देवगत्यष्टाविंशतिकमेव बध्नातीत्यर्थः। मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ बं २९ वि ति च पं ति म। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। अत्र तेजोवायूनामनुत्पत्तेर्न द्व्यशीतिकसत्त्वं। प्राग्बद्धनरकायुः प्रारब्धतीर्थबंधासंयतस्य नरकगमनाभिमुखमिथ्यादृष्टित्वे मनुष्यगतियुतं तत्स्थानं बध्नतः, त्रिंशत्कोदयेनैकनवतिकसत्त्वं।

सत्ताईस, अठाईस, उनतीस और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। वंशा मेघामें उदय उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। अंजनादिमें उदय उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है।

तिर्यंचोंमें मिथ्यादृष्टिमें दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका बन्ध होता है। वहाँ उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीका है। सासादनमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, चौबीस, छब्बीस, तीसका है सत्त्व नब्बेका है। यहाँ पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका उदय नहीं है। मिश्रादि तीन गुणस्थानोंमें उनतीसका बन्ध नहीं है क्योंकि तिर्यंचोंमें तिर्यंचगति और मनुष्यगतिकी बन्ध व्युच्छित्ति सासादनमें ही हो जाती है। वहाँ देवगति सहित अठाईसका ही बन्ध होता है।

मनुष्यगतिमें मिथ्यादृष्टिमें दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच व मनुष्य सहित उनतीसका बन्ध होता है। वहाँ उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है, सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका है। यहाँ तेजकाय, वायुकायकी उत्पत्ति मनुष्योंमें नहीं होती इससे बयासीका सत्त्व नहीं कहा। पूर्वमें नरकायुका बन्ध करके तीर्थंकरके बन्धका प्रारम्भ करनेवाला असंयत सम्यग्दृष्टी जब नरकमें जानेके अभिमुख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विंशतिस्थानमं कट्टुवागळातंगे त्रिंशत्प्रकृतिउदयस्थानमुमेकनवतिसत्त्वस्थानमुं संभविसुगुमें दरियल्पडुगुमेकें दोडे मिथ्यादृष्टिगळु संक्लिष्टरुं विशुद्धरुं मनुष्यगतियुमं कट्टुवरप्पुदरिंदं, मनुष्यसासादनंगे बंध २९। पं। ति। म। उ २१। २६। ३०। स ९०॥ मनुष्यमिश्रंगे नवविंशतिबंधस्थानबंधं संभविसदु। मनुष्यासंयतंगे बं २९। दे। ति। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९३। ९१॥ देशसंयतंगे बं २९। दे। ति। उ ३०। स ९३। ९१॥ प्रमत्तसंयतंगे बं २९। दे। ती। उ २५। २७। २८। २९। ३०। स ९३। ९१॥ अप्रमत्तसंयतंगे बं २९। दे। ती। उ ३०। स ९३। ९१। अपूर्व्वकरणंगे बं २९। दे। ती। उ ३०। स ९३। ९१। देवगतिय दिविजमिथ्यादृष्टिगळ्गे भवनत्रयं मोदल्गोंडु सहस्रारकल्पपर्य्यंतं संज्ञिपंचेंद्रियपर्य्याप्ततिर्य्यग्गतियुतमागियुं मनुष्यगतियुतमागियुं नवविंशतिस्थानमं कट्टुवरवर्ग्गळ्गे बं २९। पं। ति। म। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९२। ९०॥ तत्रत्यसासादनरुगळ्गे बं २९। प। ति। म। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९०। तत्रत्यदिविजमिश्रंगे बं २९। म। उ २९। स ९२। ९०। तत्रत्यदिविजासंयतंगे बं २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ भवनत्रयजासंयतंगे बं २९। म। उ २९। उभयत्र सत्त्वस्थानंगळु ९२। ९०। आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाददिविजमिथ्यादृष्टिगळ्गे बं २९। म।

सासादने बं २९ पं ति म। उ २१। २६। ३०। स ९०। मिश्रे नास्य बन्धः। असंयते बं २९दे ती। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९३। ९१। देशसंयते बं २९। दे ती। उ ३०। स ९३। ९१। प्रमत्ते बं २९ दे। तो। उ २५। २७। २८। २९। ३०। स ९३। ९१। अप्रमत्ते बं २९ दे ती। उ ३०। स ९३। ९१। अपूर्वकरणे बं २९। दे ती। उ ३०। स ९३। ९१। देवगतौ भवनत्रयादिसहस्रारान्ते मिथ्यादृष्टौ संज्ञिपंचेन्द्रियपर्याप्ततिर्यग्गत्या मनुष्यगत्या वा युतमेव बं २९ प ति। म उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९२। ९०। सासादने बं २९। पं। ति। म। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९०। मिश्रे बं २९ म। उ २९। स ९२। ९०। असंयते बं २९ म। उ २१। २५। २७। २८। २९।

मिथ्यादृष्टि होता है तब मनुष्यगति सहित उनतीसका बन्ध करता है उसके तीसका उदय और इक्यानबेका सत्त्व होता है। सासादनमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्यगति सहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, तीसका और सत्त्व नब्बेका होता है। मिश्रमें उनतीसका बन्ध नहीं है। असंयतमें देवगति तीर्थसहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व तेरानबे, इक्यानबेका होता है। देशसंयतमें देवगति तीर्थसहित उनतीसके बन्धमें उदय तीसका और सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका है। प्रमत्तमें देवगति तीर्थसहित उनतीसके बन्धमें उदय पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीसका, सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका होता है। अप्रमत्तमें देवगति तीर्थसहित उनतीसके बन्धमें उदय तीसका सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका है। अपूर्वकरणमें भी उदय तीसका सत्त्व तिरानबेका है।

देवगतिमें भवनत्रिकसे सहस्रार पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति या मनुष्यगति सहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें उसी प्रकारके बन्धमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें मनुष्यगति सहित उनतीसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ सत्वस्थानंगळु ९२ । ९० ॥ तत्रत्य सासादनरुगळ्गे बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९० ॥ तत्रत्यमिश्ररुगळ्गे बं २९ । म । उ २९ । स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यासंयतसम्यग्दृष्टिगळ्गे बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० ॥ अनुदिशानुत्तरत्रयोदशविमानजरुगळ्गे असंयतसम्यग्दृष्टिगळ्गे बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानं त्रसपर्य्याप्तोद्योततिर्य्यग्गतियुतमुं मनुष्यगतितीर्त्थयुतमुं देवगत्याहारकद्वययुतमुमप्पुदरिदं नारकरुं तिर्य्यंचरुं मनुष्यरुं दिविजरुं बंधस्वामिगळप्परु । अल्लि नारकरुगळोळु रत्नशर्कराबाळुकापंकधूमतमोमहातमःप्रभाभूमिसंभूतमिथ्यादृष्टिगळ्गे बं ३० । पं । ति । उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यनारकसासादनरुगळ्गे बं ३० । पं । ति । उ । उ २९ । स ९० ॥ तत्रत्यमिश्रनारकंगे तत्त्रिंशत्प्रकृतिबंधस्थानं संभविसदातंगे मुंपेळ्दनवविंशतिस्थानमे मनुष्यगतियुतमे बंधमक्कुं । घर्म्मेय नारकासंयतंगे मनुष्यगतितीर्त्थयुतमागि बंधमप्पागळु बं ३० । म । ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९१ । वंशेय मेघेय

भवनत्रयासंयते बं २९ म । उ २९ । सत्त्वमुभयत्र । ९२ । ९० । आनतादुपरिमग्रैवेयकान्ते मिथ्यादृष्टौ बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९० । मिश्रे बं २९ । स ९२ । ९० । असंयते बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । त्रिंशत्कं त्रसपर्याप्तोद्योतयुततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतितीर्थयुतदेवगत्याहारकद्वययुतत्वाच्चतुर्गतिजा बध्नंति ।

तत्र सर्वनारकमिथ्यादृष्टौ बं ३० पं ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने । बं ३० पं ति । उ २९ । स ९० । मिश्रे नास्य बन्धः । धर्मासंयते मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० म

बन्धमें उदय उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका होता है। असंयतमें मनुष्यगति सहित उनतीसके बन्धमें भवनत्रिकमें उदय उनतीसका ही है शेषमें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सत्त्व सबमें बानबे और नब्बेका है। आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्य सहित उनतीसके बन्धमें मिथ्यादृष्टिमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस और सत्त्व बानबे नब्बेका है। सासादनमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें उदय उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। असंयतमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। अनुदिश अनुत्तरमें असंयतमें मनुष्यगति सहित उनतीसके बन्धमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है।

तीसका बन्ध त्रसपर्याप्त उद्योत तिर्यंचगति सहित या मनुष्यगति तीर्थसहित या देवगति आहारकद्विक सहित होता है। इसे चारों गतिके जीव बाँधते हैं। उनमेंसे सब नारक मिथ्यादृष्टि और सासादनमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बन्ध होता है। मिथ्यादृष्टिमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें उदय उनतीसका सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें तीसका बन्ध नहीं है। असंयतमें मनुष्यगति तीर्थ सहित तीसका बन्ध होता है। घर्मामें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस,

नारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळगे बं ३०। म। ती। उ २९॥ स ९१। अंजनादिचतुःपृथ्विगळोळसंयतसम्यग्दृष्टिगळ्गनिवर्गं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधककसंभवमक्कुं मुंपेळ्द नवविंशतिमनुष्यगतियुतस्थानमेबंधमक्कुमें बुदर्थं। तिर्य्यग्गतियोळु सर्व्वतिर्य्यंचरुं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळु मिथ्यादृष्टिगळगे बंध ३०। ति। उ। उ। २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०॥ म ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ तत्रत्यसासादनंगे योग्यमनतिक्रमिसदे बं ३०। ति। उ। उ २१। २४। २६। ३०। ३१। स ९०। तिर्य्यंचमिश्रासंयतदेशसंयतरुगळगे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधं संभविसदु। तिर्य्यग्गतियुतमवरोळु संभविसदु। मनुष्यगतितीर्त्थयुतमुमसंभवमप्पुदरिंदं मुंपेळ्दष्टाविंशतिस्थानं देवगतियुतमदं कट्टुवरें बुदर्थं। मनुष्यगतियोळु मिथ्यादृष्टियोळु बं ३०। बि। ति। च। प। ति। उ। उ २१।२६।२८।२९।३०। स ९२।९०।८८।८४॥ सासादनंगे बं ३०। ति उ। उ २१। २६। ३०। स ९०॥ मिश्रनोळमसंयतनोळं देशसंयतनोळं प्रमत्तसंयतनोळं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानं संभविसदु। अप्रमत्तसंयतंगमपूर्व्वकरणंगं बं ३०। दे आ २। उ ३०। स ९२॥ देवगतियोळु भवनत्रयं मोदलगोंडु सहस्रारकल्पपर्य्यंतं मिथ्यादृष्टिगळुद्योततिर्य्यग्गतियुतमागि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुवागळा जीवंगळगे बं ३०। ति उ। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९२। ९०॥ तत्रत्यसासादन

ती। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९१। वंशामेघयोः बं ३०। म ती। उ २९। स ९१। अंजनादिषु नास्ति।

तिर्यग्गतौ सर्वमिथ्यादृष्टौ। बं ३० पं ति उ। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२। सासादने बं ३० ति उ। उ २१। २४। २६। ३०। ३१। स ९०। मिश्रादित्रये नास्य बन्धः। मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ बं ३० वि ति च पं ति। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। सासादने बं ३० ति उ। उ २१। २६। ३०। स ९०। मिश्रादिचतुष्के नास्य बन्धः। अप्रमत्तादिद्वये बं ३०। दे आ २। उ ३०। स ९२। देवगतौ भवनत्रयादि-

---

अठाईस, उनतीसका सत्त्व इक्यानबेका है। वंशा मेघामें उदय उनतीसका सत्त्व इक्यानबेका है। अंजना आदिमें यह बन्ध नहीं होता।

तिर्यंचगतिमें मिथ्यादृष्टिमें तिर्यंच उद्योत संहित तीसका बन्ध होता है। वहाँ उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है और सत्त्व बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीका है। सासादनमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच उद्योत सहित तीसके बन्धमें उदय इक्कीस, चौबीस, छब्बीस, तीस, इकतीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रादि तीन गुणस्थानोंमें इसका बन्ध नहीं होता।

मनुष्यगतिमें मिथ्यादृष्टिमें दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, तिर्यंच उद्योत सहित तीसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका होता है। सासादनमें तिर्यंच उद्योत सहित तीसके बन्धमें उदय इक्कीस, छब्बीस, तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रादि चार गुणस्थानोंमें इसका बन्ध नहीं है। अप्रमत्त अपूर्वकरणमें देवगति आहारकद्विक सहित तीसके बन्धमें उदय तीसका सत्त्व बानवेका है।

देवगतिमें भवनत्रिकसे सहस्रार पर्यन्त तिर्यंच उद्योत सहित तीसके बन्धमें मिथ्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुगळ्गे बं ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २९ । स ९० ॥ तत्रत्यमिश्रदिविजरुगळ्गे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधं संभविसदु । भवनत्रयासंयतसम्यग्दृष्टिगळोळं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधं संभविसदु । मुं पेळ्द नवविंशतिस्थानमा मिश्रासंयतरोळु मनुष्यगतियुतमागि बंधमक्कुं । सौधर्म्मादिसहस्रारकल्पपर्य्यंतमाद कल्पजासंयतरोळु मनुष्यगतितीर्त्थयुतमागि त्रिंशत्प्रकृतिस्थानबंधमक्कुमल्लि । बं ३० । म । ति उ । २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ ॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकपर्य्यंतं मिथ्यादृष्टिगळु सासादनरुं मिश्ररुं गतिस्वभावदिदं तिर्य्यग्गत्युद्योतयुतस्थानमं कट्टुरप्पुदरिदं तत्रत्य तद्दिविजरोळु तद्बंधस्थानबंधं संभविसदु । तदानतादिसर्व्वार्त्थसिद्धिपर्य्यंतमादऽसंयतसम्यग्दृष्टिगळु मनुष्यगतितीर्त्थयुत त्रिंशत्प्रकृतिस्थानमं कट्टुवरंतु कट्टुवागळवर्गळ्गे बं ३० । म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ ॥ एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानं देवगत्याहारद्वयतीर्त्थयुतबंधस्थानमप्पुदरिदं अप्रमत्तापूर्व्वकरण दिव्यसंयमिगळ्गे बंधस्थानमप्पुदरिदमा स्थानमं कट्टुवागळवरुगळ्गे बं ३१ । दे । आ २ । ती १ । उ ३० । स ९३ ॥ एकप्रकृतिबंधस्थानं निर्गतिस्थानमवुवुमपूर्व्वकरणंगे बंधमप्पागळु बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनिवृत्तिकरणोपशमक्षपकरोळु बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सूक्ष्मसांपरायंगे बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ उपशांतकषायंगे बं ० । उ ३०।

सहस्रारांतेषूद्योततिर्यग्गतियुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ बं ३० ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । सासादने बं ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २९ । स ९० । मिश्रे भवनत्रयासंयते च न त्रिंशत्कं । किं तर्हि ? तन्मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकमेव संभवति । सौधर्मादिसहस्रारांतासंयते मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ । आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतमिथ्यादृष्ट्यादित्रये नास्य बन्धः । आनतादिसर्वार्थसिद्ध्यंतासंयते तु मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० । म । ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ । एकत्रिंशत्कं देवगत्याहारद्वयतीर्थयुतत्वादप्रमत्तापूर्वकरणा एव बध्नंति । बं ३१ । दे आ २ ती । उ ३० । स ९३ । एककबन्धोविंगतिरपूर्वकरणे बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अनिवृत्तिकरणे बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । सूक्ष्मसांपराये

दृष्टिमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका है। सासादनमें उदय इक्कीस, पच्चीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें भवनत्रिकमें असंयतमें तीसका बन्ध नहीं है। मनुष्यगतियुत उनतीसका ही बन्ध है। सौधर्मसे सहस्रार पर्यन्त असंयतमें मनुष्य तीर्थ सहित तीसके बन्धमें उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका है। आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टि आदि तीनमें तीसका बन्ध नहीं है। आनतादि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त असंयतमें मनुष्य तीर्थ सहित तीसका बन्ध होता है, वहाँ उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका और सत्त्व तिरानबे, इक्यानबेका है।

इकतीसका बन्ध देवगति आहारकद्विक तीर्थंकर सहित होता है इससे उसको अप्रमत्त अपूर्वकरण ही बाँधते हैं। वहाँ उदय तीसका सत्त्व तिरानबेका है। अपूर्वकरणमें एकके बन्धमें उदय तीस सत्त्व तिरानबे, बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। अनिवृत्तिकरणमें एकके बन्धमें उदय तीसका, सत्त्व तिरानबे आदि चार तथा अस्सी आदि चारका है। सूक्ष्म-

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ क्षीणकषायंगे बं ० । उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सयोगकेवलिगे स्वस्थानदोळु बं । ० । उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ समुद्घातसयोगकेवलिगळ्गे बं ० । उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ अयोगिकेवलिगळ्गे बं । ० । उ ३० । ३१ । ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥

रंजिसि ति जगत्त्रयजनंगळ नेत्रमनेळ्वे होन्नु
हेम्मंजिन पुंजमिद्रपनु संजेयकेंपनेपोल्तुवंतवं ।
भुंजिप मूढरंतिरलि तद्गुणदर्शन दक्षनक्षि
मळ्गंजनमं जवाललितनृत्यमेनल्कडरें तु कान्तरो ॥

इंतु बंधैकाधिकरणदोळु उदयसत्वस्थानंगळु सयोगि सल्पट्टुवनंतरमुदयैकाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानसंख्येगळं पेळ्दपरु :—

वीसादिसु बंधंसा णभदुछणवपणपणं च छस्सत्तं ।
छण्णव छड दुसु छद्दस अट्ठदसं छक्कछक्क णमतिदुसु ॥७४६॥

विंशत्यादिसु बंधांशाः नभद्विषण्नवपंच पंच च षट्सप्त षण्णव षडष्ट द्वयोः षड्दशाष्टदशषट्क षट्कं नभस्त्रिद्वयोः ॥

विंशत्याद्युदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वंगळु पेळल्पडुगु—। मल्लि विंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळु यथाक्रमदिदं बंधस्थानमुं सत्त्वस्थानमुं नभमुं द्वितयमुमक्कुं । उ २० । बं । ० । स २ । एकविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळु षड्बंधस्थानंगळु नवसत्त्वस्थानंगळुमप्पुवु । उ २१ । बं ६ । स ९ ॥ चतुर्विंशतिस्थानाधिकरणदोळु पंच पंचबंध सत्त्वस्थानानंगळप्पुवु । उ २४ । बं ५ । स ५ ॥

बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । उपशान्तकषाये बं ० उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । क्षीणकषाये बं ० उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । सयोगे स्वस्थाने बं ० उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । समुद्घाते बं ० उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । अयोगे बं ० उ ३० । ३१ । ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥७४५॥ अथ द्वितीयभेदमाह—

विंशतिकाद्युदयस्थानेषु बन्धसत्त्वस्थानानि क्रमेण विंशतिके नभः द्विकं, एकविंशतिके षण्णव,

---

साम्परायमें एकके बन्धमें उदय तीसका, सत्त्व तिरानबे आदि चार तथा अस्सी आदि चारका है। अबन्धमें उपशान्त कषायमें उदय तीसका सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। क्षीणकषायमें उदय तीसका सत्त्व अस्सी आदि चारका है। सयोगीमें स्वस्थान केवलीके उदय तीस, इकतीसका सत्त्व अस्सी आदि चारका है। समुद्घातकेवलीमें उदय बीस, इक्कीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, इकतीसका और सत्त्व अस्सी आदि चारका है। अयोगीमें उदय तीस, इकतीस, नौ, आठका है। सत्त्व अस्सी आदि चार तथा दस, नौका है ॥७४५॥

आगे उदयको आधार और बन्ध सत्त्वको आधेय करके कथन करते हैं—

बीस आदि उदयस्थानोंमें बन्धस्थान और सत्त्वस्थान क्रमसे बीसमें शून्य दो, इक्कीसमें छह नौ, चौबीसमें पाँच-पाँच, पच्चीसमें, छह सात, छब्बीसमें छह नौ, सत्ताईस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळ् षट्सप्तबंधसत्वस्थानंगळप्पुवु । उ २५ । बं ६ । स ७ ॥ षड्विंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळ् षड्नवबंध सत्व स्थानंगळप्पुवु उ २६ । बं ६ । स ९ ॥ सप्तविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळमष्टाविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळं प्रत्येकं बंधसत्वस्थानंगळ् षडष्टंगळुमप्पुवु । उ २७ । बं ६ । स ८ । मत्तं उ २८ । बं ६ । स ८ ॥ नवविंशतिस्थानोदयाधिकरणदोळु षड् दश स्थानंगळप्पुवु । उ २९ । बं ६ । स १० । त्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानाधिकरणदोळष्टदश बंधसत्व-बंधसत्वस्थानंगळप्पुवु । उ ३० । बं ८ । स १० ॥ एकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयाधिकरणदोळु षट्कषट्कबंधसत्वस्थानंगळप्पुवु । उ ३१ । बं ६ । स ६ ॥ नवोदयस्थानाधिकरणदोळमष्टप्रकृत्युदयस्थानाधिकरणदोळं प्रत्येकं नभस्त्रिबंधसत्वस्थानंगळप्पुवु । उ ९ । बं । ० । स ३ ॥ मत्तं उ ८ । बं । ० । स ३ ॥ सर्व्वसमुच्चयसंदृष्टि :

उ	२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८
बं	०	६	५	६	६	६	६	६	८	६	०	०
सत्व	२	९	५	७	९	८	८	१०	१०	६	३	३

विंशत्याद्युदयस्थानंगळोळु पेळल्पट्ट बंधसत्वस्थानसंख्याविषयभूतस्थानंगळावाउवेंदोडे पेळ्वपरु ।

वीसुदये बंधो णहि उणसीदी सत्तसत्तरी सत्तं ।
इगिवीसे तेवीसं पहुडी तीसंतया बंधा ॥७४७॥

विंशत्युदये बंधो न ह्येकोनाशीति सप्तसप्ततिसत्वमेकविंशत्या त्रयोविंशतिप्रभृतित्रिंशदंतानि बंधाः ॥

विंशतिप्रकृतिस्थानोदयदोळुबंधमिल्ल । एकोनाशीतियुं सप्तसप्ततियुं सत्वंगळप्पुवु । उ २० । बं । ० । स ७९ । ७७ ॥ एकविंशतिस्थानोदयदोळु त्रयोविंशतिप्रभृति त्रिंशदंतमाद बंधस्थानंगळप्पुवु । सत्वस्थानंगळं पेळ्वपरु :—

चतुर्विंशतिके पंच पंच, पंचविंशतिके षट् सप्त, षड्विंशतिके षड्नव सप्ताष्टाविंशतिकयोः षडष्टौ । नवविंशतिके षड् दश, त्रिंशत्केऽष्टौ दश । एकत्रिंशत्के षट् षट् नवकाष्टकयोर्नभस्त्रीणि ॥७४६॥ तानि कानीति चेदाह—

विंशतिके बन्धो नहि । सत्त्वं नवसप्ताग्रसप्ततिके द्वे । एकविंशतिके बन्धः त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कान्तानि षट् ॥७४७॥

अठाईसमें छह आठ, उनतीसमें, छह दस, तीसमें आठ दस, इकतीसमें छह-छह, नौ और आठमें शून्य तीन जानना । अर्थात् इतनी-इतनी प्रकृतियोंके उदयमें उक्त प्रकारसे नानाजीवोंके बन्धस्थान और सत्त्वस्थान होते हैं ॥७४६॥

वे कौनसे हैं यह कहते हैं—

बीसके उदयस्थानमें बन्ध नहीं है । सत्त्व उन्यासी, सतहत्तर दो हैं । इक्कीसके उदयमें बन्धस्थान तेईस आदि तीस पर्यन्त छह हैं ॥७४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तं तिणउदिपहुडी सीदंता अट्ठसत्तरी य हवे ।
चउवीसे पढमतियं णववीसं तीसयं बंधो ॥७४८॥

सत्वं त्रिनवति प्रभृत्यशीति अंतान्यष्टसप्ततिश्च भवेत् । चतुर्व्विंशत्यां प्रथमत्रयं नवविंशतिस्त्रिंशच्च बंधः ॥

त्रिनवतिप्रभृत्यशीत्यंतमावष्टसप्ततियुं सत्वमक्कुं । उ २१ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । ८० । ७९ ॥ चतुर्व्विंशत्युदयस्थानदोळु बंधस्थानंगळु प्रथमत्रयमुं नवविंशतित्रिंशत्स्थानमुमप्पुवु ॥ सत्वस्थानंगळं पेळ्दपरः ।—

बाणउदीणउदिचऊ सत्तं पणछस्सगट्ठणववीस ।
बंधा आदिमछक्कं पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ॥७४९॥

द्वानवतिर्न्नवतिचतुःसत्वं पंचषट्सप्ताष्टनवविंशत्यां । बंधः आदिमषट्कं प्रथमतनसप्तकं सत्वं ॥ द्वानवतियुं नवतिचतुःस्थानंगळुं सत्वमक्कु । उ २४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । सत्व ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥

पंचविंशतिषड्विंशतिसप्तविंशति अष्टाविंशतिनवविंशत्युदयस्थानंगळोळु बंधस्थानंगळ त्रयोविंशत्यादिषट्स्थानंगळ प्रत्येकमप्पुवल्लि पंचविंशतिस्थानोदयदोळु प्रथमतनसप्तस्थानंगळु सत्वमक्कुं । उ २५ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ षड्विंशत्याद्युदयस्थानंगळोळु सत्वंगळं पेळ्दपरु ।—

ते णवसगसदरिजुदा आदिमछस्सीदि अट्ठसदरीहिं ।
णवसत्तसत्तरीहिं सीदिचउक्केहि सहिदाणि ॥७५०॥

तानि नवसप्तसप्ततियुतानि आदिमषडशीत्यष्टसप्तत्या । नवसप्तसप्तत्याऽशीतिचतुर्भिः सहितानि ॥

सत्त्वं त्रिनवतिकादीन्यशीतिकान्तान्यष्टसप्ततिकं च स्यात् । चतुर्विंशतिके बन्धः प्रथमत्रयं नवविंशतिकं त्रिंशत्कं च ॥७४८॥

सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च । पंचषट्सप्ताष्टनवाग्रविंशतिकेषु बन्धस्त्रयोविंशतिकादीनि षट्, सत्त्वं पंचविंशतिके आद्यसप्तकं ॥७४९॥

सत्त्व तिरानवेसे अस्सी पर्यन्त तथा अठहत्तरका होता है। चौबीसके उदयमें बन्ध प्रथम तीन, उनतीस, तीस ऐसे पाँच हैं ॥७४८॥

सत्त्व बानवे और नब्बे आदि चारका है। पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसके उदयमें बन्ध तेईस आदि छहका है। और सत्त्व पच्चीसमें आदिके सातका है ॥७४९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षड्विंशत्युदयस्थानदोळ् सत्वस्थानंगळ् तानि मुन्नं पंचविंशत्युदयस्थानदोळ् पेळ्द त्रिनवत्यादिसप्तस्थानंगळं नवसप्तति सप्तसप्ततिस्थानद्वययुतंगळप्पुवु। उ २६। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२। ७९। ७७॥ सप्तविंशत्युदयस्थानदोळ् सत्वस्थानंगळमा प्रथमतन षट्स्थानंगळमशीत्यष्टासप्ततिद्वयसहितंगळप्पुवु। उ २७। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८०। ७८॥ अष्टविंशत्युदयस्थानदोळ् सत्वस्थानंगळमा प्रथमतन षट्स्थानंगळं नवसप्तति सप्तसप्ततियुतंगळमप्पुवु। उ २८। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ७९। ७७॥ नवविंशत्युदयस्थानदोळ् प्रथमतन षट्स्थानंगळमशीत्यादिचतुःस्थानंगळं सत्वमक्कु। उ २९। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८०। ७९। ७८। ७७॥

तीसे अट्ठवि बंधो एउणतीसंव होदि सत्तं तु।
इगितीसे तेवीसप्पहुडी तीसंतयं बंधो ॥७५१॥

त्रिंशत्स्वष्टावपि बंधः एकान्नत्रिंशद्वद्भवति सत्वं तु। एकत्रिंशत्सु त्रयोविंशतिप्रभृति त्रिंशदंतो बंधः॥

त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयदोळ् अष्टबंधस्थानंगळप्पुवु। सत्वस्थानंगळेकान्नत्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानदोळ् पेळ्द त्रिनवत्यादि षट्स्थानंगळमशीत्यादिचतुःस्थानंगळमप्पुवु। उ ३०। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। ३१। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८०। ७९। ७८। ७७। एकत्रिंशत्प्रकृत्युदयस्थानदोळ् बंधंगळ् त्रयोविंशतिप्रभृतित्रिंशत्प्रकृत्यंतमाद षड्बंधस्थानंगळप्पुवु।

सत्त्वस्थानंगळं पेळ्वपरु :—

षड्विंशतिके तानि नवसप्ताग्रसप्ततिकयुतानि। सप्तविंशतिके आद्यानि षडशीतिकाष्टसप्ततिकयुतानि। अष्टाविंशतिके तान्येव षट् नवसप्ताग्रसप्ततिकयुतानि। नवविंशतिके तान्येव षडशीतिकादीनि चत्वारि च ॥७५०॥

त्रिंशत्के बन्धस्थानान्यष्टौ। सत्त्वस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कोदयोक्तानि दश। एकत्रिंशत्के बन्धः त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कान्तानि षट् ॥७५१॥

छब्बीसके उदयमें सत्त्व आदिके सात और उन्यासी-सतहत्तर ये नौ हैं। सत्ताईसके उदयमें सत्त्व आदिके छह तथा अस्सी, अठहत्तर ये आठका है। अठाईसके उदयमें सत्त्व आदिके छहका तथा उन्यासी सतहत्तर ऐसे आठका है। उनतीसके उदयमें सत्त्व आदिके छह और अस्सी आदि चारका है ॥७५०॥

तीसके उदयमें बन्धस्थान आठ और सत्त्वस्थान उनतीसके उदयमें कहे गये दस हैं। इकतीसके उदयमें बन्ध तेईससे तीस पर्यन्त छह हैं ॥७५१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तं दुणउदिणउदीतिय सीदडहत्तरी य णवगट्ठे ।
बंधो ण सीदिपहुडिसु समविसमं सत्तमुद्दिट्ठं ॥७५२॥

सत्त्वं द्वानवतिनवतित्रयमशीत्यष्टसप्ततिश्च नवाष्टसु बंधो न अशीति प्रभृतिषु समविषमं सत्त्वमुद्दिष्टं ॥

द्वानवतियुं नवतित्रयमुमशीतियुमष्टसप्ततियुं सत्त्वमक्कुं । उ ३१ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८० । ७८ ॥ नवप्रकृत्युदयस्थानदोळमष्टप्रकृत्युदयस्थानदोळं बंधस्थानमिल्ल । सत्त्वस्थानंगळु क्रमदिदमशीत्यादिषट्सत्त्वस्थानंगळोळु समत्रिस्थानंगळं विषमत्रिस्थानगळुं सत्वमक्कुं । उ ९ । बं ० । स ८० । ७८ । १० ॥ मत्तमुदय ८ । बं । ० । स ७९ । ७७ । ९ ॥ यिल्लि विंशतिप्रकृत्युदयस्थानं तीर्त्थरहितसमुद्घातकेवलियोळुमक्कुमल्लि नामकर्म्मबंधमिल्ल । सत्वस्थानंगळु तीर्त्थरहितनवसप्ततिस्थानमुं सप्तसप्ततिस्थानमुमप्पुवु । उ २० । बं ० । स ७९ । ७७ । एकविंशत्युदयस्थानमानुपूर्व्यरहिततीर्त्थसहितं प्रतरद्वयलोकपूरणसमुद्घातकेवलियोळं चतुर्गतिजरोळमप्पुदानुपूर्व्ययुतोदयस्थानमप्पुदरिदं विग्रहगतियोळुदयमक्कुमल्लि समुद्घातकेवलियोळु नामबंधमिल्ल । सत्वं तीर्त्थयुतंगळप्पशीतियुमष्टसप्ततियुमप्पुवु । उदय २१ । ती । बं । ० । स ८० । ७८ ॥ नारकरोळु रत्नप्रभादित्रितयदोळु नारकानुपूर्व्ययुतैकविंशतिस्थानोदयमिथ्यादृष्टियोळु उ २१ । बं २९ । पं । ति । म ३० । ति । उ । स ९२ । ९१ । ९० ॥

सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकत्रयमशीतिकमष्टसप्ततिकं च । नवकेऽष्टके च बन्धो नहि सत्त्वं क्रमेणाशीतिकादिषट्के समविषमाणि । विंशतिकं वितीर्थसमुद्घाते तत्र न नाम बन्धः । सत्त्वं नवसप्ताग्रसप्ततिके द्वे । एकविंशतिकं सतीर्थप्रतरद्वयलोकपूरणे तत्रापि न नाम बन्धः । सत्त्वं दशाष्टाग्रसप्ततिके द्वे, सानुपूर्व्यं चतुर्गतिविग्रहगतौ । तत्र नारकेषु घर्मादित्रये मिथ्यादृष्टौ—

उ २१ बं २९ पं, ति, म, ३० ति, उ, स, ९२, ९१, ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते घर्मायामेव

सत्त्व बानबे, नब्बे आदि तीन, अस्सी और अठहत्तर इस प्रकार छहका है। नौ और आठके उदयमें बन्ध नहीं है। सत्त्व क्रमसे अस्सी आदि छहमें-से समरूप अर्थात् अस्सी और अठहत्तर नौमें और विषमरूप उन्यासी, सतहत्तर आठमें जानने ॥७५२॥

आगे इनका विस्तारसे कथन करते हैं—

बीसका उदय तीर्थंकर रहित सामान्य केवलीके समुद्घातमें होता है वहाँ बन्धका अभाव है। सत्त्व उन्यासी, सतहत्तरका है। इक्कीसका उदय तीर्थंकर केवलीके प्रतरके विस्तार संकोचमें तथा लोकपूरणमें होता है। वहाँ भी बन्ध नहीं है। सत्त्व अस्सी और अठहत्तर दो हैं।

आनुपूर्वी सहित इक्कीसका उदय चारों गतिके विग्रहगति कालमें होता है। उसमें नरकगतिमें घर्मादि तीनमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। सासादन और मिश्रमें इक्कीसका उदय नहीं होता। असंयतमें घर्मामें ही इक्कीसका उदय है। वहाँ बन्ध मनुष्यगति सहित उनतीसका या तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व बानबे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ मोदल मूरुं पृथ्विगळ सासादननोळं मिश्रनोळमेकविंशत्युदयमिल्ल। घर्म्मेय असंयतंगे उ २१। बं २९। म ३०। म ती। सत्व ९२। ९१। ९०॥ वंशे मेघेगळोळसंयतरुगळोळेकविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। अंजनादिचतुःपृथ्विगळ मिथ्यादृष्टिगळोळु उ २१। बं २९। पं। ति। म ३०। ति। उ। स ९२। ९०॥ तदंजनादि नाल्कुं पृथ्विगळ सासादनमिश्रासंयतरोळेकविंशत्युदयमिल्ल। तिर्य्यग्गतिमिथ्यादृष्टिगळ्गे विग्रहगतियोळष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि पंचबंधस्थानंगळुमप्पुवु। सत्वस्थानंगळु द्वानवतिनवत्यादिचतुःस्थानंगळप्पुवु। उ २१। बं २३। २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ तिर्य्यंचसासादननोळु उ २१। बं २९। पं। ति। म ३०। ति। उ। स ९०॥ तिर्य्यंचमिश्रनोळेकविंशत्युदयं संभविसदु। तिर्य्यंचासंयतनोळु उ २१। बं २८। दे। स ९२। ९०॥ तिर्य्यंचदेशसंयतनोळेकविंशत्युदयं संभविसदु। मनुष्यगतिजमिथ्यादृष्टियोळु उ २१। बं २३। २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४॥ मनुष्यसासादनंगे उ २१। बं २९। पं ति। म ३०। ति उ। स ९०। मनुष्यमिश्रंगेकविंशत्युदयं संभविसदु। मनुष्यासंयतंगे उ २१। बं २८। दे २९। दे ती। स ९३। ९२। ९१। ९०। मनुष्यदेशसंयतादिगळोळेल्लियुं एक-

---

उ २१, बं २९, म ३० ती, स ९२, ९१, ९०। अंजनादौ मिथ्यादृष्टौ उ २१ बं २९ पं ति म ३० ति, उ, स, ९२, ९०। न सासादनादौ।

तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ उ २१, बं २३, २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२। सासादने उ २१ बं २९, पं, ति म, ३० ति, उ, स ९०। न मिश्रदेशसंयतयोः। असंयते उ २१, बं २८ दे, स ९२, ९०।

मनुष्ये मिथ्यादृष्टौ उ २१, बं २३, २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४। सासादने उ २१। बं २९ पं ति म। ३० ति। स ९०। न मिश्रे। असंयते उ २१ बं २८ दे। ती। स ९३, ९२, ९१ (९०) न देशसंयतादौ।

इक्यानबे, नब्बेका है। अंजनादिमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंचसहित या मनुष्यसहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, नब्बेका है। यहाँ सासादन आदिमें इक्कीसका उदय नहीं होता।

तिर्यंचगतिमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्यसहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्र और देशसंयतमें इक्कीसका उदय नहीं है। असंयतमें है वहाँ बन्ध देवसहित अठाईसका और सत्त्व बानबे नब्बेका है।

मनुष्योंमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्यसहित उनतीसका और तिर्यंच उद्योत सहित तीसका तथा सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें इक्कीसका, उदय नहीं। असंयतमें इक्कीसके उदयमें बन्ध देवसहित अठाईस, या देवतीर्थ सहित उनतीसका, सत्त्व तिरानबे, बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। देशसंयत आदिमें इक्कीसका उदय नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विंशत्युदयं संभविसदु । देवगतियोळु भवनत्रयकल्पजस्त्रीयर्ग्गे मिथ्यादृष्टिगळोळु उ २१ । बं २५ । २६ । २९ । ३० ॥ स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यसासादनंगे उ २१ । बं २९ । पं ति । म ३० । ति । उ । स ९० । तत्रत्यमिश्रनोळेकविंशत्युदयं संभविसदु । तद्भवनत्रयदिविजरोळं कल्पजस्त्रीयरोळ-संयतरोळेकविंशत्युदयमिल्ल । सौधर्म्मकल्पद्वयसुररोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २१ । बं २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० तत्सासादनंगे उ २१ । बं २९ । पं ति । म ३० । ति उ । स ९० । तत्रत्य-मिश्रनोळेकविंशत्युदयं संभविसदु । तत्सौधर्मद्वयाऽसंयतंगे उ २१ । बं २९ । म ३० । म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ सानत्कुमारादिदशकल्पजरोळु मिथ्यादृष्टिगळोळु उ २१ । बं २९ । पं ति । म ३० । ति उ । स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यसासादनंगे उ २१ । बं २९ । पं ति । म ३० । ति उ । स ९० । तत्रत्यमिश्ररोळेकविंशत्युदयं संभविसदु । तत्सानत्कुमारादि दशकल्पजासंयतंगे उ २१ । बं २९ । म ३० । म ती । सत्त्व ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद दिविजरोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २१ । बं २९ । म । स ९२ । ९० ॥ आ सासादनंगे उ २१ । बं २९ । म । स ९० । तत्रत्यमिश्रंगे तदेकविंशत्युदयं संभविसदु । तदानताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद-दिविजासंयतंगे उ २१ । बं २९ । म ३० । म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुदिशानुत्तरचतुर्द्दश-विमानवासिसम्यग्दृष्टिदिविजरोळु उ २१ । बं २९ । म ३० । म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

भवनत्रयकल्पस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २१, बं २५, २६ (२८) २९, ३०, स ९२, ९० । सासादने । उ २१ । बं २९ । पं ति म । ३० ति उ । स ९० । न मिश्रासंयतयोः । सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २५ । २६ (२८) २९, ३०, स ९२, ९० । सासादने उ २१ बं २९ पं ति म । ३० ति उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते उ २१ । बं २९ । म । ३० म ती । स ९३, ९२, ९१, ९० । उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २९ पं ति, म, ३० ति, उ, स ९२, ९० । सासादने उ २१ । बं २९ पं ति म । ३० । ति, उ, स ९० । न मिश्रे । असंयते । उ २१ । बं २९ म । ३० म । ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । उपरिमग्रैवेय-

---

भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंके मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका और तिर्यंच उद्योत सहित तीसका तथा सत्त्व नब्बेका है। मिश्र और असंयतमें यहाँ इक्कीसका उदय नहीं है। सौधर्मयुगलमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें इक्कीसका उदय नहीं है। असंयतमें इक्कीसके उदयमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका तथा सत्त्व तिरानबे, बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। ऊपरके दस स्वर्गोंमें मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध पंचेन्द्रिय-तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें इक्कीसका उदय नहीं है। असंयतमें इक्कीसके उदयमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका सत्त्व तिरानबे, बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। ऊपर ग्रैवेयक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतेकविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु चतुर्ग्गतिजरोळु योजिसल्पट्टुवनंतरं चतुव्विंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमें तें दोडे—चतुव्विंशत्युदयस्थानमेकेंद्रियलब्ध्यपर्य्याप्तरोळं निर्व्वृत्यपर्य्याप्तरोळमल्लदेल्लियुमुदयिसुवुदिल्लल्लि लब्ध्यपर्य्याप्तैकेंद्रियजीवंगळोळुमुदयिसुगुमा मिथ्यादृष्टिगळोळु उ २४। बं २३। २५। २६। २९। ३० स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ निर्वृत्यपर्य्याप्तैकेंद्रियमिथ्यादृष्टिगळोळु उ २४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥ स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ इल्लि तेजोवायुकायिकजीवंगळग मनुष्यगतियुतबंधस्थानभेदंगळु वज्जिसल्पडुवुवु। सर्व्वसूक्ष्मापर्य्याप्ततेजोवायुसाधारणंगळोडनातपोद्योतयुतबंधभेदं त्यजिसल्पडुगुं।

यितु चतुव्विंशत्युदयस्थानदोळु बंधसत्त्वंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं पंचविंशत्युदयस्थानाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमा पंचविंशति उदयं चतुर्ग्गतिजरोळुदयिसुगुमल्लि नारकमिथ्यादृष्टियोळु निर्व्वृत्यपर्य्याप्तकालदोळु उ २५। बं २९। पं ति। म ३०। ति उ। स ९२। ९१। ९०॥ नारकसासादननोळा पंचविंशतिस्थानोदयं संभविसदेकें दोडे "णिरयं सासणसम्मो ण गच्छदि" एंबी नियममुंटप्पुदरिंदं मिश्रगुणस्थानदोळमा पंचविंशतिस्थानोदयं संभविसदेकें दोडे

कान्तेषु मिथ्यादृष्टौ उ २१, बं २९, म, स ९२ ९०। सासादने उ २१। बं २९ म, स ९०, न मिश्रे। असंयते—उ २१, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०। उपरि चतुर्दशविमानेषु सम्यग्दृष्टौ—उ २१, बं २९, म ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०। चतुर्विंशतिकमपर्याप्तैकेन्द्रियमिथ्यादृष्टावेव तत्र लब्ध्यपर्याप्ते—

उ २४, बं २३, २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२। निर्वृत्त्यपर्याप्ते उ २४, बं २३ २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२। अत्र तेजोवायूनां मनुष्यगतियुतबन्धस्थानभेदाः सर्वसूक्ष्मापर्याप्ततेजोवायुसाधारणैः सहातपोद्योतयुतबन्धभेदाश्च त्याज्याः।

पंचविंशतिकं चतुर्गत्यपर्याप्तेषु पर्याप्तैकेन्द्रियेषु च। तत्र नारके मिथ्यादृष्टौ—उ, २५, बं २९ पं, ति, म, ३० ति, उ, स ९२, ९१, ९० न सासादनेऽत्र मृतस्य नरकेऽनुत्पत्तेः। नापि मिश्रे, अत्रामरणात्।

पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें इक्कीसके उदयमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें इक्कीसके उदयमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका, सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें इक्कीसका उदय नहीं। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका और सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। ऊपरके चौदह विमानोंमें सम्यग्दृष्टीमें इक्कीसके उदयमें बन्ध और सत्त्व इसी प्रकार दो और चारका है।

चौबीसका उदय अपर्याप्त एकेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिके ही है। वहाँ लब्ध्यपर्याप्तकमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासीका है। निर्वृत्यपर्याप्तमें भी ऐसा ही है। विशेष इतना है कि तेजकाय वातकाय जीवोंके मनुष्यसहित बन्धस्थानोंके भेद और सब सूक्ष्म अपर्याप्त तेजकाय वायुकाय साधारण सहित आतप उद्योत सहित बन्धभेद छोड़ देना।

पच्चीसका उदय चारों गतिके जीवोंके अपर्याप्तकालमें और पर्याप्त एकेन्द्रियमें होता है। सो पच्चीसके उदयमें सब नारकी मिथ्यादृष्टियोंमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ मिश्रंगे मिश्रपरिणामदोळु मरणमिल्लप्पुदरिंदमा निर्वृत्यपर्य्याप्तकालोदयस्थानोदयक्कसंभवमप्पुदरिंदं नारकासंयतसम्यग्दृष्टिगळोळु घर्म्मेय नारकासंयतंगे उ २५। बं २९। म ३०। म। ति। स ९१। ९२। ९०। वंशे मेघेगळोळऽसंयतंगे पंचविंशतिस्थानोदयं संभविसदेकेंदोडे शरीरपर्य्याप्तियिदं मेलल्लदे सम्यक्त्वग्रहणमिल्लप्पुदरिंदं। अंजने मोदलाद नाल्कुं पृथ्विगळोळसंयतंगे पंचविंशतिस्थानोदयमुमिल्ल। तिर्य्यग्गतियोळेकेंद्रियपर्य्याप्तरोळु परघातोदययुतपंचविंशतिस्थानोदयदोळु उ २५। ए प। बं। २३। २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ मत्तमा तिर्य्यग्गतिजलब्ध्यपर्य्याप्तनिर्वृत्यपर्य्याप्तत्रसजीवंगळोळु पंचविंशत्युदय संभविसदेंतेंदोडंगोपांगसंहननद्वययुतमागि षड्विंशत्युदयं संभविसुगुमल्लदे पंचविंशत्युदयस्थानं संभविसदप्पुदरिंदं॥ मनुष्यगतियोळमाहारकऋद्धियुतप्रमत्तसंयतंगाहारकशरीरदोळु संहननरहितांगोपांगयुतनिर्वृत्यपर्य्याप्तकालदोळाहारकशरीरदोळु उ २५। बं २८। दे। २९। दे ति। स ९३। ९२॥ देवगतियोळु भवनत्रयकल्पजस्त्रीयरुगळगे निर्वृत्यपर्य्याप्तकालदोळु उ २५। बं २५। २६। २९। ३०। सत्व ९२। ९०॥ आ सासादनंगे उ २५। बं २९। पं ति। म ३०। ति उ। स ९०॥ तन्मिश्ररुगळगे पंचविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तत्रत्यासंयतंगं तदुदयस्थानं संभविसदेंतेंदोडा भवनत्रयकल्पजस्त्रीयरोळु सम्यग्दृष्टिगळ्पुट्टरप्पुदरिंदं।

सौधर्म्मद्वयनिर्वृत्यपर्य्याप्तमिथ्यादृष्टिगळगे उ २५। बं २५। २६। २९। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ आ सासादनरुगळगे उ २५। बं। २९। पं ति। म ३०। ति उ। स। ९०। तत्रत्य

असंयते घर्मायां उ २५, बं २९ म, ३० म ती, स ९२, ९१, ९०, न वंशामेघयोः शरीरपर्याप्तेरुपर्येतत्सम्यक्त्वोत्पत्तेः, नांजनादौ। एकेन्द्रियेषु परघातयुतं उ २५, ए प, बं २३, २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२, न त्रसेषु तत्रांगोपांगसंहननयुतषड्विंशतिकोदयसंभवात्, प्रमत्तस्याहारकशरीरे संहननोनांगोपांगयुतं उ २५, बं २८ दे, २९ दे ती। स ९३, ९२।

भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०। सासादने उ २५, बं

सहित उनतीस या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व बानवे आदि तीनका है। सासादनमें नहीं है क्योंकि सासादनमें मरकर नरकमें उत्पन्न नहीं होता और मिश्रमें मरण नहीं होता। असंयतमें घर्मामें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थसहित तीसका सत्त्व बानबे आदि तीनका है। वंशा मेघा आदि नरकोंमें अपर्याप्त अवस्थामें असंयत गुणस्थान नहीं होता क्योंकि शरीर पर्याप्ति होनेपर ही वहाँ सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। एकेन्द्रियमें परघात सहित पच्चीसका उदय होता है। वहाँ बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानवे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासीका है। त्रसमें पच्चीसका उदय नहीं है क्योंकि उनमें अंगोपांग सहित छब्बीसका ही उदय होता है। प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मनुष्यके आहारक शरीरमें संहनन और अंगोपांग सहित पच्चीसका उदय होता है। वहाँ बन्ध देवसहित अठाईसका या देव तीर्थसहित उनतीसका और सत्त्व तिरानवे, बानबेका है। भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंमें मिथ्यादृष्टिमें पच्चीसके उदयमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें पचीसके उदयमें बन्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिश्ररोळु तत्पंचविंशत्युदयं संभविसदु। तत्सौधर्म्मद्वयासंयतंगे शरीरमिश्रकालदोळ् उ २५। बं। २९। म ३०। म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ सानत्कुमारादि दशकल्पजमिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २५। बं। २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ तद्दिविजसासादनंगे उ २५। बं २९। पं ति। म। ३०। ति उ। स ९०। तद्दिविजमिश्ररोळौ पंचविंशत्युदयं संभविसदु। तत्रत्यासंयतसम्यग्दृष्टिगे उ २५। बं २९। म। ३०। म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकपर्य्यंतमाद मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २५। बं २९। म। स ९२। ९०॥ तत्र भव सासादनंगे उ २५। बं २९। म। स ९०॥ तन्मिश्रनोळु तदुदयस्थानं संभविसदु। तत्सुरासंयतंगे शरीरमिश्रकालदोळु उ २५। बं २९। म ३०। म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ अनुदिशानुत्तरविमानंगळोळु शरीरमिश्रकालदोळु सम्यग्दृष्टिगळेयप्पुदरिंदं उ २५। बं। २९। म। ३०। म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०॥

यितु पंचविंशत्युदयस्थानदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं षड्विंशत्युदयस्थानदोळु बंधसत्त्वंगळु योजिसल्पडुगुमदें तें दोडे—षड्विंशत्युदयस्थानं तिर्य्यग्गतियोळं मनुष्यगतियोळमुदयिसुगुं। नरकदेवगतिजरोळुदयिसदेकें दोडे संहननयुतत्रसलब्ध्यपर्य्याप्तनिर्वृत्त्यपर्य्याप्तजीवंगळोळमेकेंद्रियंगळ शरीरपर्य्याप्तिकालदोळातपोद्योतयुतमागुदयिसुगुमप्पुदरिं नल्लि तिर्य्यग-

---

२९ पं ति म, ३० ति उ, स ९०। न मिश्रे नाप्यसंयते सम्यग्दृष्टेस्तत्रानुत्पत्तेः, सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २५, २६, २९, ३० ति उ। स ९२, ९०। सासादने उ २५, बं २९ पं ति म, ३०, ति उ, स ९०। न मिश्रे, असंयते उ २५, बं २९ म, ३० म ती। स ९, ३, ९२, ९१, ९०। उपरिमदशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २९ पं ति म, ३० ति उ। सासादने उ २५, बं २९ पं ति म, ३० ति उ, स ९०। न मिश्रे। असंयते उ २५। बं २९ म, ३० म ती। स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिमग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २५ बं २९ म, स ९२, ९०, सासादने उ २५, बं २९ म, स ९०। न तन्मिश्रे। असंयते उ २५ बं २९ म। ३० म ती। स ९३, ९२, ९१, ९०।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्र और असंयतमें वहाँ पचीसका उदय नहीं है क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर उनमें जन्म नहीं लेता। सौधर्मयुगलमें पचीसके उदयमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पचीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका सत्त्व बानवे, नब्बेका है। सासादनमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका तथा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थसहित तीसका और सत्त्व तिरानवे आदि चारका है। ऊपरके दस कल्पोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सासादनमें भी इसी प्रकार है। सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनष्यतीर्थ सहित तीसका, सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्यगति सहित उनतीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें भी ऐसा ही है। मिश्रमें नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका सत्त्व तिरानवे आदि चारका है।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तिय त्रसलब्ध्यपर्याप्तरोळं निर्वृत्यपर्याप्तरोळमुदयिसुवागळु मिथ्यादृष्टिगळोळु त्रयोविंश्यादि षड्बंधस्थानंगळोळष्टाविंशतिस्थानं पोरगागि शेषपंचस्थानंगळगे बंधसंभवमक्कुमागळु द्वानवति-नवत्यादिचतुःस्थानंगळ सत्वं संभविसुगुं। तिर्य्यग्मिथ्या उ २६। बंध २३। २५। २६। २९। । ३०। सत्व ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ एकेंद्रिय मिथ्यादृष्टिय शरीरपर्य्याप्तियोळातपोद्योत-युतमुं मेणुच्छ्वासनिश्वासयुतोदयषड्विंशतिस्थानदोळु उ २६। बं २३। २५। २६। २९। ३०। सत्व ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ ई एकेंद्रियंगळ षड्विंशत्युदयस्थानं सासादननोळु संभविसदे-केंदोडे तदुदयकालदिदं मुन्नमेतद्गुणस्थान पोपुदप्पुदरिदं। चतुर्विंशतिस्थानोदयदोळे सासादन गुणं संभविसुगुमें बुदु तात्पर्य्यं॥ तिर्य्यंचसासादनसम्यग्दृष्टियोळु षड्विंशतिस्थानोदयदोळु नव-विंशति त्रिंशत्प्रकृतिस्थानद्वय बंधमुं नवति सत्वस्थानमक्कुं। तिर्य्यंच सासादन उ २६। बं २९। म ति। ३०। ति उ। स ९०॥ ई सासादनंगष्टाविंशतिस्थानबंधमिल्लेकेंदोडे औदारिकनिर्वृत्य-पर्य्याप्तकालदोळु "मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि" येंदितु तद्बंधनिषेधमुंटप्पु-दरिदं मिश्रगुणस्थानदोळु षड्विंशत्युदयस्थानं संभविसदु। असंयतसम्यग्दृष्टितिर्य्यंचरोळु षड्विं-शतिस्थानोदयदोळु अष्टाविंशतिस्थानमोंदे बंधमक्कुं। सत्वं द्वानवति नवतिस्थानद्वयमे संभविसुगुं। तिर्य्यं. असंय.। उ २६। बंध। २८। दे। सत्व ९२। ९०॥ देशसंयततिर्य्यंचरोळु षड्विंशति-स्थानोदयं संभविसदु। मनुष्यगतिजमिथ्यादृष्टियोळु उ २६। बं २३। २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४॥ मनुष्यसासादनंगे उ २६। बं २९। ति म। ३०। ति उ। स ९०। मिश्रंगे

षड्विंशतिकं त्रसलब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्ते संहननयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ बन्धस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कांतान्यष्टाविंशतिकं विना पंच। सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च। एकेन्द्रिये मिथ्यादृष्टौ शरीरपर्याप्तावातपोद्योतयुतमुच्छ्वासनिश्वासयुतं च। उ २६, बं २३, २५, २६, २९, ३०। स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२। न सासादने तदुदयात्प्रागेव सासादनत्यजनादत्र चतुर्विंशतिकमुदेतीत्यर्थः। तिर्यक्सासादने बन्धो नवविंशतिकत्रिंशत्के। सत्त्वं नवतिकं। मिच्छदुगे देवचऊ णेति नाष्टाविंशतिकबंधः। न मिश्रे। असंयते बन्धोऽष्टाविंशतिकं। सत्त्वं द्वानवतिकनवतिके द्वे। न देशसंयते। मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ उ २६, बं २३, २५,

---

छब्बीसका उदय त्रस लब्ध्यपर्याप्तक निर्वृत्यपर्याप्तकके संहनन सहित होता है। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्धस्थान अठाईसके बिना तेईससे तीस पर्यन्त पाँच हैं। सत्त्वस्थान बानवे और नब्बे आदि चार हैं। एकेन्द्रिय मिथ्यादृष्टिमें शरीर पर्याप्तिमें आतप या उद्योत उच्छ्वास सहित छब्बीसका उदय है। वहाँ बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका है और सत्त्व बानवे, नब्बे, अठासी, चौरासी, बयासीका है। सासादनमें नहीं है क्योंकि छब्बीसका उदय होनेसे पहले ही सासादन छूट जाता है वहाँ चौबीसका उदय होता है। तिर्यंच पंचेन्द्रियके सासादनमें छब्बीसके उदयमें बन्ध उनतीस, तीसका और सत्त्व नब्बेका है। 'मिच्छदुगे देवचउ ण हि' इस वचनसे यहाँ अठाईसका बन्ध नहीं है। मिश्रमें छब्बीस-का उदय नहीं। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका सत्त्व बानवे, नब्बेका है। देशसंयतमें छब्बीसका उदय नहीं। मनुष्योंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानवे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादनमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षड्विंशतिस्थानोदयं संभविसदु। असंयतसम्यग्दृष्टिगे उ २६। बं २८। दे २९। दे। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ देशसंयतादिगळोळ् षड्विंशत्युदयस्थानं संभविसदु। तीर्त्थरहितकवाटसमुद्घातकेवलियोळौदारिकमिश्रकाययोगमुंटप्पुदरिंदमल्लि उ २६। बं। ०। स। ७९। ७७॥ षड्विंशतिस्थानोदयैकाधिकरणं पेळल्पट्टुदु॥

अनंतरं सप्तविंशतिस्थानोदयैकाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमदेंतेंदोडे—सप्तविंशतिस्थानोदयं चतुर्गतिजरोळक्कुमल्लि रत्नप्रभादियाद मूरुं पृथ्विगळोळु शरीरपर्याप्तिकालदोळु नारकरोळवयिसुगुमल्लि मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ। २७। बं २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ तीर्त्थयुतसत्त्वस्थानमिल्लि संभविसदेकेंदोडे शरीरपर्य्याप्तियिंदं मेले तीर्त्थसत्कर्म्मरुगळप्प मिथ्यादृष्टिगळ्गे सम्यक्त्वमक्कुमप्पुदरिंदं। सासादनंगे सप्तविंशत्युदयं संभविसदु। मिश्रंगं संभविसदु। आ असंयतंगे घर्म्मेयोळु उ २७। बं २९। म ३०। म। तीर्त्थं। ९२। ९१। ९०॥ वंशे मेघेगळ तीर्त्थसत्कर्म्ममिथ्यादृष्टिगळ्गे शरीरपर्य्याप्तिकालदोळु सम्यक्त्वमक्कुमप्पुदरिंदमा असंयतरुगळ्गे उ २७। बं। ३०। म। तीर्त्थ। सत्त्व। ९१। पंकप्रभादि मूरुं पृथ्विगळोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २७। बं २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ माघवियोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २७। बं। २९। ति। ३०। ति उ॥ ई पंकप्रभादि नाल्कुं पृथ्विगळ सासादनमिश्रासंयतरुगळोळु सप्तविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तिर्य्यग्गतिजरोळु एकेंद्रियंगळ्गे

२६, २९, ३०, स ९२ ९०, ८८, ८४। सासादने उ २६। बं २९ ति, म, ३०, ति उ। स ९० न मिश्रे। असंयते उ २६, बं २८ दे। २९ दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, न देशसंयतादौ। वितीर्थकवाटे उ २६, बं., स ७९, ७७।

सप्तविंशतिकं चतुर्गतिशरीरपर्याप्त्येकेन्द्रियोच्छ्वासपर्याप्तिकाले। तत्र घर्मादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २७, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, तीर्थयुतसत्त्वस्थानमत्र न सम्भवति शरीरपर्याप्तेरुपरि तत्सत्त्वमिथ्यादृष्टेः सम्यक्त्वोत्पत्तेः। न सासादनमिश्रयोः। असंयते घर्मायां—उ २७, बं २९ म, ३० म ती, स ९२, ९१ ९०।

सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें छब्बीसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका या देवतीर्थ सहित उनतीसका है सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। देशसंयत आदिमें छब्बीसका उदय नहीं है। तीर्थंकर रहित सामान्य केवलीके कपाट समुद्घातमें छब्बीसका उदय होता है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व उन्यासी और सतहत्तरका है।

सत्ताईसका उदय चारों गतिमें शरीर पर्याप्तिकालमें और एकेन्द्रियके उच्छ्वास पर्याप्ति कालमें होता है। सत्ताईसके उदयमें घर्मा आदि तीन नरकोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, नब्बेका है। यहाँ तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान सम्भव नहीं है; क्योंकि शरीर पर्याप्तिके ऊपर तीर्थसत्त्व सहित नारकी मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व उत्पन्न हो जाता है। सासादन और मिश्रमें सत्ताईसका उदय नहीं होता। असंयतमें घर्मामें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या तीर्थ मनुष्य सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। वंशा मेघामें बन्ध मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्छ्वासनिश्वासयुतातपनामं मेणुद्योतोदययुत जीवंगळोळे सप्तविंशतिस्थानमुदययिसुगुमल्लि उ २७। बं २३।। २५। २६। २९। ३०।। स ९२। ९०। ८८। ८४।। इल्लि द्व्यशीति सत्त्वस्थानं संभविसवेकें दोडे एकेंद्रियजीवंगळुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तिकालदिदं मुन्नमे शरीर-मिश्रकालदोळे संभविसुगु मल्लदोयवसरदोळु मनुष्यद्विकमुं तेजोवायुकायिकंगळल्लदुळि देकेंद्रियप्राणिगळु कट्टुवरप्पुदरिदं तत्सत्त्वस्थानं संभविसदप्पुदरिदं।

मनुष्यगतिजरोळु आहारकऋद्धियुतप्रमत्तसंयतरुगळाहारक शरीरपर्य्याप्तिकालदोळु सप्तविंशतिस्थानोदयमक्कुं। उ २७। बं २८। दे। २९। दे तीर्त्थं। स ९३। ९२।। तीर्त्थयुतकवाट-समुद्घातकेवलियोळु उ २७। बं। ०। स ८०। ७८।। देवगतिजरोळु भवनत्रयकल्पजस्त्रीयरुगळ्गे शरीरपर्य्याप्तिकालदोळु मिथ्या। उ २७। बं २५। २६। २९। ति म ३०। ति। उ। स ९२। ९०। तत्रत्यसासादनमिश्रासंयतरुगळोळो सप्तविंशतिस्थानोदयमिल्ल। सौधर्म्मकल्पद्वयजरुगळ्गे शरीरपर्य्याप्तिकालदोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २७ बं २५। २६। २९। ति। म। ३०। ति। उ। स ९२। ९०। तत्रत्यसासादन मिश्ररुगळ्गे सप्तविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तत्रत्यासंयतरुगळ्गे शरीर-

---

वंशामेघयोः उ २७, बं ३० म ती, स ९१, अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २७, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, माघव्यां उ २७, बं २९ ति, ३० ति उ, स ९२, ९०, न सासादनादौ। एकेन्द्रियेषूच्छ्वासनिश्वास-युतातपोद्योतान्यतरयुतं। उ २७, बं. २३, २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, द्व्यशीतिकं तु विकल्प्यं तेजोवायुभ्यः शेषैकेन्द्रियेषूच्छ्वासपर्याप्तिकाले मनुष्यद्विकस्य बन्धात्। आहारकर्द्धौ उ २७, बं २८ दे, २९ दे ती. स ९३, ९२, सतीर्थकवाटे उ २७, बं, स ८०, ७८, भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २७, बं २५, २६, २९ ति,म, ३० ति उ, स ९२, ९०, न सासादनादौ। सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २७ बं २५, २६, २९, ति

तीर्थसहित तीसका और सत्त्व इक्यानवेका है। अंजनादि तीनमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तियँच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तियँच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानवे, नब्बेका है। माधवीमें बन्ध तियँच सहित उनतीसका या तियँच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानवे, नब्बेका है। सासादन आदिमें सत्ताईसका उदय नहीं है।

एकेन्द्रियोंमें उच्छ्वास निःश्वास और आतप उद्योतमें-से एक सहित सत्ताईसका उदय होता है। वहाँ बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका है सत्त्व बानवे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। बयासीका सत्त्व हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता; क्योंकि तेजकाय, वायुकायको छोड़ शेष एकेन्द्रियोंमें उच्छ्वास पर्याप्तिकालमें मनुष्यद्विकका बन्ध होता है। आहारक शरीरवालेके सत्ताईसका उदय होता है। वहाँ बन्ध देवगतिके साथ अठाईसका या देवतीर्थ सहित उनतीसका है। सत्त्व तिरानबे, बानवेका है। तीर्थंकर सहित कपाट समुद्घातमें सत्ताईसका उदय होता है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व अस्सी, अठहत्तरका है।

देवगतिमें भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस तियँच या मनुष्य सहित उनतीस और तियँच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानवे या नब्बे-का है। सासादन आदिमें सत्ताईसका उदय नहीं है। सौधर्म युगलमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पच्चीस-छब्बीस, मनुष्य या तियँच सहित उनतीस या तियँच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानवे, नब्बेका है। सासादन और मिश्रमें सत्ताईसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्य्याप्तिकालदोळु उ २७। बं २९। म। ३०। म। तीर्त्थं। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ सानत्कुमा- मारादि दशकल्पजरुगळगे शरीरपर्य्याप्तिकालदोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २७। बं २९। ति म। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ तत्रत्यसासादनमिश्ररुगळोळु सप्तविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तदसंयतंगे उ। २७। बं २९। म। ३०। म। तीर्त्थं। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ आनतायुपरिम- ग्रैवेयकावसानमाद दिविजरुगळोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २७। बं २९। म। स ९२। ९०। तत्रत्यसासादनमिश्ररुगळोळु सप्तविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तत्रत्यासंयतरुगळगे उ २७। बं २९। म ३०। म। तीर्त्थं। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ अनुदिशानुत्तरविमानजासंयतरुगळगे उ २७। बं २९। म। ३०। म तीर्त्थं। स। ९३।। ९२। ९१। ९०॥

यितु सप्तविंशतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं अष्टाविं- शतिस्थानोदयैकाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगु-। मदें तें दोडष्टाविंशति- स्थानोदयं चतुर्गतिजरोळक्कुमल्लि घर्मेय नारकरोळुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तिकालदोळुदयिसुगु- मल्लि मिथ्यादृष्टियोळु उ २८। बं २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९२। ९०॥ यिल्लि तीर्त्थ- युतैकनवतिसत्त्वस्थानं संभविसदेकें दोडे युच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तिकालदोळु तीर्त्थसत्कर्म्म रुगळगे मिथ्यात्वकर्म्मोदयाभावदिदं सम्यक्त्वमक्कुमप्पुदरिदं मिथ्यादृष्टियोळु तत्सत्त्वस्थानं

म, ३० ति उ, स ९२, ९०, न सासादनमिश्रयोः, असंयते उ २७, बं २९ ति, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २७, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, न सासादनमिश्रयोः, असंयते उ २७, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०। उपरि ग्रैवेयकान्तेषु मिथ्यादृष्टौ उ २७, बं २९ म, स ९२, ९०, न सासादनमिश्रयोः। असंयते। उ २७ बं २९, म ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०। अनुदिशानुत्तरासंयते उ २७। बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०। अष्टाविंशतिकं तिर्यग्मनुष्यशरीरपर्याप्तिदेवनारकोच्छ्वासपर्याप्त्योः। तत्र नारके घर्मायां मिथ्यादृष्टौ उ २८। बं २९ ति म,

सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। ऊपर दस कल्पोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन मिश्रमें सत्ताईसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्यतीर्थ सहित तीसका सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन मिश्रमें नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। अनुदिश अनुत्तरमें असंयतमें भी इसी प्रकार हैं।

अठाईसका उदय तिर्यंच मनुष्यके शरीर पर्याप्ति कालमें और देव नारकियोंके उच्छ्वास पर्याप्तिमें होता है। वहाँ नारकियोंमें घर्मामें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। यहाँ इक्यानबेका सत्त्व नहीं है, क्योंकि इक्यानबेकी सत्तावाला यदि घर्मामें जाता है तो सम्यक्त्वसे च्युत नहीं होता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभविसवप्पुदरिदं । घम्मेंयोळसंयतंगे उ २८ । बं २९ । म । ३० । म तीर्थं । सत्त्व । ९२ । ९१ । ९० ॥ वंशे मेघेगळ मिथ्यादृष्टियोळ् उ २८ । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ । स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यसासादनमिश्ररुगळोळ् तदष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तत्रत्यासंयतसम्यग्दृष्टिगे उ २८ । बं ३० । म । तीर्थं । स ९१ ॥

अंजनारिष्टे मघविगळोळ् मिथ्यादृष्टिगळगे उ २८ । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । स ९२ । ९१ ॥ तत्रत्यसासादन मिश्रासंयतर्गोळयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । माघवियोळ् मिथ्यादृष्टिगे उ २८ । बं २९ । ति । ३० । ति उ । स ९२ । ९० ॥ तत्रत्यसासादनमिश्रासंयतरुगळोळी यष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तिर्य्यग्गतियोळ् मिथ्यादृष्टिगे शरीरपर्य्याप्तियोळ् उ २८ । बं । २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ ॥ तत्रत्यसासादन-मिश्ररुगळोळीयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तद्गतिजासंयतंगे उ २८ । बं २८ । दे । स ९२ । ९० । तिर्य्यग्देशसंयतंगोयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । मनुष्यगतियोळ् शरीरपर्य्याप्तिकालदोळ् मिथ्यादृष्टिगे उ २८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ ॥ तत्सासादनमोळं मिश्रनोळमष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तत्रत्यासंयतंगे उ २८ । बं २८ । दे । २९ । दे तीर्थं । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ मनुष्यदेशसंयतनोळीयष्टाविंशतिस्थानोदयं

३०, ति उ, स ९२, ९० । नारकैकनवतिकसत्त्वं तत्र गंतुस्तत्सत्त्वस्य सम्यक्त्वात्यजनात् । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २९ म, ३० म ती । स ९२, ९१, ९० । वंशामेघयोर्मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते । उ २८, ३० म, ती, स ९१ । अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २९, ति म, ३० ति उ, स ९२, ९० । न सासादनादौ । माघव्यां मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २३, २५, २६, २८ ति, ३० ति उ, स ९२ ९० । न सासादनादौ । तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २८ दे, स ९२, ९० । न देशसंयते । मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ९२,

---

सासादन मिश्रमें अठाईसका उदय नहीं होता। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थंयुत् तीसका है। सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। वंशा मेघामें मिथ्यादृष्टीमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन मिश्रमें नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य तीर्थयुत् तीसका और सत्त्व इकयानबेका है। अंजनादि तीनमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन आदिमें अठाईसका उदय नहीं है।

तिर्यंचमें अठाईसके उदयमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादन मिश्रमें ऐसा उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। देशसंयतमें अठाईसका उदय नहीं है।

मनुष्यगति मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। सत्त्व बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादन मिश्रमें उदय नहीं है। असंयतमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभविसवु । प्रमत्तसंयतंगाहारकशरीरोच्छ्‌वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळ् उ २८ । बं २८ । दे । २९ । दे ति । स ९३ । ९२ ॥ दंडसमुद्घात तीर्त्थरहित केवलिगौदारिककाययोगदोळ् उ २८ । बं । ० । स ७९ । ७७ ॥

देवगतिजरोळु भवनत्रयकल्पजस्त्रीयरुगळगे उच्छ्‌वासनिश्वासपर्य्याप्तिकालदोळु तदुच्छ्‌वासनिश्वासनामकर्म्मयुतमागि मिथ्यादृष्टिगे उ २८ । बं २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । तत्रत्यसासादनमिश्रासंयतरुगळोळी यष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । सौधर्म्मद्वयदिविजरुगळोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २८ । बं २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० ॥ सासादनमिश्ररोळीयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तत्रत्यासंयतंगे उ २८ । बं २९ । म ३० । तीर्त्थ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ सानत्कुमारादिदशकल्पजरोळ् मिथ्यादृष्टिगळगे उ २८ । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ । स ९२ । ९० । तत्रत्यसासादन मिश्ररुगळोळीयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तत्रत्यासंयतंगे उ २८ । बं २९ । म ३० । म तीर्त्थ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ आनतादुपरिमग्रैवेयकावसानमाद दिविजरोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २८ । बं २९ । म । स ९२ । ९० । तत्रत्यसासादन मिश्ररुगळोळीयष्टाविंशतिस्थानोदयं संभविसदु । तत्रत्यासंयतंगे उ २८ । बं २९ । म ३० । म ।

९०, ८८, ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २८ दे, ३० दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । न देशसंयते । आहारकद्वयुच्छ्‌वासपर्याप्तौ उ २८, बं २८ दे । २९ दे ती । स ९३, ९२ । वितीर्थदंडसमुद्घातस्यौदारिकयोगे उ २८, बं, स ७९, ७७ । भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९० । न सासादनादौ । सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २५, २६, ३०, स ९२, ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९० उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । आनताद्युपरिमग्रैवेयकान्तेषु मिथ्यादृष्टौ उ २८, बं २९ म, स ९२, ९० । न

बन्ध देवसहित अठाईसका या देवतीर्थ सहित उनतीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। देशसंयतमें ऐसा उदय नहीं है। आहारकमें उच्छ्‌वास पर्याप्तिमें अठाईसका उदय होता है। वहाँ बन्ध देवसहित अठाईसका या देवतीर्थ सहित उनतीसका है। सत्त्व तिरानबे-बानबेका है। तीर्थंकर रहित दण्ड समुद्घातमें औदारिक योगमें अठाईसका उदय होता है। वहाँ बन्ध नहीं होता। सत्त्व उनासी व सतहत्तरका है।

देवगतिमें भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका, सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादन आदिमें नहीं है। सौधर्म युगलमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन मिश्रमें अठाईसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थसहित तीसका है। सत्त्व तिरानवे आदि चारका है। ऊपर दस कल्पोंमें मिथ्यादृष्टीमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन मिश्रमें उदय नहीं। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व तिरानवे आदि चारका है। आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टीमें बन्ध मनुष्यगति सहित तीसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादन

तीर्त्थं । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुदिशानुत्तरविमानंगळोळऽसंयतरुगळेयप्परल्लि उ २८ । बं २९ । म ३० । म । तीर्त्थं । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥

यितष्टाविंशतिस्थानोदयाधिकरणदोळ् बंधसत्वस्थानंगळ् योजिसल्पट्टुवनंतरं नवविंशतिस्थानोदयाधिकरणदोळ् बंधसत्वस्थानंगळ् योजिसल्पडुगुमवे ते दोडे :—

नवविंशतिस्थानं चतुर्गतिजरोळुदयिसुगुमल्लि घर्म्मेय नारकरोळ् मिथ्यादृष्टिगळ्गे भाषापर्य्याप्तिकालदोळ् दुःस्वरयुतमागि उ २९ । बं २९ । ति म । ३० । ति । उ । स ९२ । ९० । सासादनंगे उ २९ । बं २९ । ति । म ३० । ति उ । स ९० ॥ मिश्रंगे उ २९ । बं २९ । म । स ९२ । ९० ॥ असंयतंगे । उ २९ । बं २९ । म ३० । म ति । सत्व ९२ । ९१ । ९० ॥ वंशे मेघेगळ मिथ्यागळ्गे उ २९ । बं २९ । ति । म ३० । ति उ । स ९२ । ९० ॥ सासादनंगे उ २९ । बं २९ । म ति । ३० । ति उ । स ९० ॥ मिश्रंगे उ २९ । बं २९ । म । सत्व ९२ । ९० ॥ असंयतंगे उ २९ । बं २९ । म ३० । म तीर्त्थं । स ९२ । ९१ । ९० ॥ अंजनारिष्टे मघविगळोळ् मिथ्यादृष्टिगळ्गे उ २९ । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । स ९२ । ९० ॥ सासादनंगे उ २९ । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ । स ९० ॥ मिश्रंगे उ २९ । बं २९ । म । स ९२ । ९० ॥ असंय-

---

सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते उ २८, बं २९ म, ३० म, ती, स ९३, ९२, ९१, ९० ।

नवविंशतिकं नारकेषु भाषापर्याप्तिकाले दुःस्वरयुतं । न घर्मायां मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति म, ३० ति, उ, स ९२, ९० । सासादने उ २९, बं २९ ति म, ३० ति, उ, स ९०, मिश्रे उ २९, बं २९ म, स ९२, ९० । असंयते उ २९, बं २९ म, ३० म ती, स ९२, ९१, ९० । वंशामेघयोर्मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२ । ९० । सासादने उ २९ । बं २९ म ति । ३० ति उ । स ९० । मिश्रे उ २९, बं २९ म, स ९२, ९० । असंयते । उ २९ म । ३० म ती । स ९२, ९१, ९० । अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति, उ, स ९२, ९० । सासादने उ २९,

---

मिश्रमें उदय नहीं। असंयतमें बंध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। अनुदिश अनुत्तरमें असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्त्व तिरानवे आदि चारका है।

उनतीसका उदय नारकियोंमें भाषापर्याप्तिकालमें दुःस्वर सहित होता है। घर्मामें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादनमें बन्ध इसी प्रकार है सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। वंशा मेघामें मिथ्यादृष्टि और सासादनमें बन्ध मनुष्य तिर्यंच सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व मिथ्यादृष्टिमें बानबे-नब्बेका और सासादनमें नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका या मनुष्य तीर्थ सहित तीसका है। सत्त्व बानबे, इक्यानबे, नब्बेका है। अंजनादि तीनमें मिथ्यादृष्टि और सासादनमें बन्ध पूर्ववत् उनतीस और तीसका है। सत्त्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तंगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ माघवियोळ् मिथ्यादृष्टिगे उ २९। बं २९। ति ३०। ति उ। सत्व ९२। ९०॥ सासादनंगे उ २९। बं २९। ति ३०। ति उ। स ९०॥ मिश्रंग उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ आ असंयतंगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥

तिर्य्यंगतिजरोळ् त्रसजीवंगळ्गे शरीरपर्य्याप्तियोळुद्योतयुतमागि उ। २९। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। सासादनमिश्ररुगळोळु नवविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तिर्य्यंगतिजतत्कालासंयतंगे उ २९। बं २८। दे। स ९२। ९०॥ देशसंयतंगे नवविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। मनुष्यगतिजरोळ् मिथ्यादृष्टिजीवंगळुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळु उच्छ्वासनिश्वासोदययुतमागि उ २९। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०॥ सासादनंगेयुं मिश्रंगेयु नवविंशतिस्थानोदयं संभविसदु। तत्कालासंयतंगे उ २९। बं २८। दे २९। दे ति। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ देशसंयतंगो कालदोळो नवविंशत्युदयं संभविसदु। प्रमत्तसंयतंगाहारकशरीरभाषापर्य्याप्तियोळ् सुस्वरनामयुतमागि उ २९। बं २८। दे। ती। स ९३। ९२॥ तीर्त्थयुतदंडसमुद्घातकेवलिगळगे उ २९। बं। ०। स ८०। ७८॥

बं २९ ति म। ३० ति उ, स ९०। मिश्रे। उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०। असंयते उ २९, बं २९ म, स ९२ ९०। माघव्यां मिथ्यादृष्टौ उ २९। बं २९ ति। ३० ति उ। स ९२, ९०। सासादने उ २९। बं २९ ति। ३० ति उ। स ९०। मिश्रे। २९। बं २९ म। स ९२। ९०। असंयते उ २९। बं २९ म। स ९२। ९०। तिर्यक्त्रसे शरीरपर्याप्तावुद्योतयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४। न सासादनमिश्रयोः। असंयते उ २९, बं २८ दे, स ९२, ९०। न देशसंयते। मनुष्येषूच्छ्वासपर्याप्तावुच्छ्वासयुते। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९ बं २३, २५, २६, २८ २९, ३०, स ९२, ९०। न सासादनमिश्रयोः। असंयते उ २९, बं २८ दे। २९ दे ती। स ९३, ९२, ९१, ९०। न देशसंयते। आहारकर्द्धिभाषापर्याप्तौ सुस्वरयुतं। उ २९, बं २८। दे २९ दे ती। स ९३, ९२

मिथ्यादृष्टिमें बानबे-नब्बेका और सासादनमें नब्बेका है। मिश्रमें असंयतमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। माघवीमें मिथ्यादृष्टि और सासादनमें बन्ध तिर्यंच सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है और सत्त्व मिथ्यात्वमें बानबे-नब्बेका तथा सासादनमें नब्बेका है। मिश्र और असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है।

त्रस तिर्यंचोंके शरीर पर्याप्तिकालमें उद्योत सहित उनतीसका उदय होता है। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बे अठासी, चौरासीका है। सासादन मिश्रमें उनतीसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका है। सत्त्व बानबे-नब्बेका है। देशसंयतमें उनतीसका उदय नहीं है।

मनुष्यमें उच्छ्वास पर्याप्तिकालमें उच्छ्वास सहित उनतीसका उदय है। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादन मिश्रमें उनतीसका उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईस या देवतीर्थ सहित उनतीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। देशसंयतमें उनतीसका उदय नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्त्थरहितमूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातकेवलिगळुच्छ्वासनिश्वासनामकर्म्मोदययुतमागि उ २९। बं। ०। स ७९। ७७॥ देवगतिजरोळु भवनत्रयदेवदेविकल्पजस्त्रीयरुगळगे भाषापर्य्याप्तियोळु सुस्वरनामकर्म्मोदययुतमागि उ २९। बं २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०॥ सासादनंगे उ २९। बं २९। ति म। ३०। ति उ। स ९०॥ आ मिश्रंगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ आ असंयतंगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ सौधर्म्मद्वयदिविजरोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २९। बं २९। ति। म। ३०। ति। उ। स ९२। ९०॥ आ सासादनंगे उ २९। बं २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९०। मिश्रंगे। उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ असंयतंगे उ २९। बं २९। म। ३०। म ति। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ सानत्कुमारादि दशकल्पजरोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २९। बं २९। ति। म ३०। ति। उ। ९२। ९०। आ सासादनरुगळगे उ २९। बं २९। ति। म। ३०। ति उ। स ९०॥ मिश्ररुगळगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०। तद्दशकल्पजासंयतरुगळगे उ २९। बं २९। म ३०। म ति। स ९३। ९२। ९१। ९०॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद दिविजरोळु मिथ्यादृष्टिगळगे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०॥ आ सासादनरुगळगे उ २९। बं २९। म। स ९०। मिश्ररुगळगे उ २९। बं २९।

सतीर्थदंडसमुद्घाते। उ २९। बं। स ८०। ७८। वितीर्थकेवलिनो मूलशरीरप्रविष्टोच्छ्वासपर्याप्तावुच्छ्वासयुतं। उ २९, बं ०, स ७९, ७७। भवनत्रयकल्पस्त्रीषु भाषापर्याप्तौ सुस्वरयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०। सासादने। उ २९ बं २९ ति म। ३० ति, उ, स ९०। मिश्रे उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०। असंयते। उ २९। बं २९ म। स, ९२, ९०। सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २९। बं २९, ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, सासादने उ २९, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९०, मिश्रे २९, बं २९ म, स ९२, ९०, असंयते। उ २९, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिदशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, सासादने उ २९, बं २९ ति म। ३० ति

आहार शरीरके भाषा पर्याप्तिकालमें सुस्वर सहित उनतीसका उदय है। बन्ध देव-सहित अठाईसका या देवतीर्थ सहित उनतीसका है। सत्त्व तिरानबे-बानबेका है। तीर्थंकर सहित दण्ड समुद्घातमें उनतीसका उदय है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व अस्सी-अठहत्तरका है। तीर्थरहित केवलीके मूल शरीरमें प्रविष्ट उच्छ्वास पर्याप्तिकालमें उच्छ्वास सहित उनतीसका उदय है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व उन्यासी-सतहत्तरका है।

देवगतिमें भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंमें भाषा पर्याप्तिमें सुस्वर सहित उनतीसका उदय है। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पचीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। असंयतमें भी इसी प्रकार है। सौधर्म युगलमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है, सत्त्व बानबे, नब्बेका है। सासादनमें बन्ध मिथ्यादृष्टिकी तरह उनतीस-तीसका सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या तीर्थ मनुष्य सहित तीसका है। सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। ऊपरके दस कल्पोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच मनुष्य सहित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

म । स ९२ । ९० ॥ असंयतरुगळ्गॆ उ २९ । बं २९ । म । ३० । म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनुदिशानुत्तरचतुर्द्दशविमानजरुगळनिबरं सम्यग्दृष्टिगळेयप्पुदरिदं तत्रत्यरुगळ्गॆ उ २९ । बं २९ । म ३० । म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ यितु नवविंशतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळ योजिसल्पट्टुवनंतरं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळं योजिसल्पडुगुमदॆंतॆंदोडॆ—त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयं तिर्य्यग्मनुष्यगतिद्वयजरोळेयक्कुं । नरकदेवगतिजरुगळोळुदययोग्यमल्तॆंतॆंदोडॆ संहननोदययुतस्थानमप्पुदरिंदमल्लि तिर्य्यग्गतिजरोळुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळुद्योतयुतमागियुमुद्योतरहित भाषापर्य्याप्तियोळु सुस्वरदुस्वरान्यतरोदययुतमागियुं मेणु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमक्कु । मल्लियुद्योतयुतमागि मिथ्यादृष्टियोळु उ ३० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । सासादनंगं मिश्रंगं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयं संभविसदु ॥ असंयतंगे उ ३० । बं २८ दे । स ९२ । ९० ॥ देशसंयतंगे तदुदयं संभविसदु । भाषापर्य्याप्तियोळुद्योतरहितमागि मिथ्यादृष्टियोळु उ ३० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ स ९२ । ९० । ८८ । ८४ ॥ इल्लियष्टाशीतिचतुरशीतिसत्त्वस्थानंगळु विकलत्रयजीवंगळपेक्षेयिदं सत्त्वसंभवमरि-

---

उ, स ९०, मिश्रे उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०, असंयते उ २९, बं २९ म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिमग्रैवेयकान्तेषु मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०, सासादने उ २९ बं २९ म, स ९० । मिश्रे उ २९, बं २९, म, स ९२, ९० । असंयते उ २९, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते उ २९, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१ ९० । त्रिंशत्कं तिर्यग्मनुष्ययोरेव संहननयुतत्वात् । तत्र तिर्यक्षूच्छ्वासपर्याप्तावुद्योतयुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ उ ३०, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ ३०, बं २८ दे, स ९२, ९० । न देशसंयते । भाषापर्याप्तौ उद्योतवियुतसुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ उ ३०, बं २३, २५, २६, २८, २९

उनतीस या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका सत्त्व बानवे, नब्बेका है। सासादनमें बन्ध मिथ्यादृष्टिके समान और सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थसहित तीसका सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। सासादनमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीस या मनुष्य तीर्थसहित तीसका और सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। अनुदिश अनुत्तरमें असंयतमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीस या मनुष्य तीर्थसहित तीसका है और सत्त्व तिरानबे आदि चारका है।

तीसका उदय तिर्यंच और मनुष्योंके ही है क्योंकि इसमें संहननका भी उदय सम्मिलित है। उनमें भी तिर्यंचोंमें उच्छ्वास पर्याप्तिमें उद्योत सहित तीसका उदय होता है। वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। सत्त्व बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादन मिश्रमें यह उदय नहीं है। असंयतमें बन्ध देव-सहित अठाईसका सत्त्व बानबे, नब्बेका है। देशसंयतमें यह उदय नहीं है। तिर्यंचोंमें भाषा पर्याप्तिमें उद्योत रहित और सुस्वर-दुःस्वरमेंसे एक सहित भी तीसका उदय होता है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

मल्पडुगुमें तें दोडा विकलत्रय जीवंगळु सुरद्विकमुं नारकचतुष्टयमुमनुद्वेल्लनमं माडि पुनर्ब्बंधमं माळ्प योग्यतेयिल्लिप्पुदरिंदं पेळल्पट्टुदु । "पुण्णिदरं विगिविगळे" एंदितल्लि "सुरणिरयाउ-अपुण्णे वेगुव्वियछक्कमवि णत्थि" एंबितु तज्जीवंगळोळु तद्बंधनिषेधमरियल्पडुगुं । भाषा-पर्य्याप्तियुत सासादनतिर्य्यंचंगे उ ३० । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । स ९० ॥ मिश्रंगे उ ३० । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ असंयतंगे उ ३० । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ देशसंयतंगे उ ३० । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ मनुष्यगतिजरोळु तीर्त्थयुतमूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातकेवलियोळुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळुच्छ्वासनिश्वासोदययुतमागि उ ३० । बं । ० । स ८० । ७८ । तीर्त्थरहितमूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातकेवलिगे भाषापर्य्याप्तियोळु सुस्वरदुस्वरान्यतरोदययुतमागि उ ३० । बं । ० । स ७९ । ७७ ॥ मनुष्यमिथ्यादृष्टिळगे भाषापर्य्याप्तियोळु सुस्वरदुस्वरान्यतरोदययुतमागि उ ३० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ स ९२ । ९१ । ९० ॥ इल्लि तीर्त्थयुत-सत्त्वस्थानं नरकगमनाभिमुखजीवनोळु संभविसुगुमें दरियल्पडुगुं । सासादनंगे उ ३० । बं २८ । दे । २९ । तिम । ३० । ति उ । स ९० ॥ मिश्रंगे उ ३० बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ असंयतंगे उ

३०, स ९२, ९०, ८८, ८४ । अत्राष्टाशीतिकचतुरशीतिकसत्त्वं विकलत्रयापेक्षं । एषामेव सुरद्विकनारकचतुष्कोद्वेल्लने कृते पुनर्बंधस्याभावात् । सासादने उ ३०, बं २९ ति म, ३० ति, उ, स ९० । मिश्रे उ ३०, बं २८ दे, स ९२, ९०, असंयते उ ३०, बं २८ दे, स ९२, ९० । देशसंयते उ ३०, बं २८ दे, स ९२, ९० । मनुष्येषु सतीर्थमूलशरीरप्रविष्टयोरुच्छ्वासयुतं । उ ३०, बं०, स ८०, ७८ । वितीर्थमूलशरीरप्रविष्टस्य भाषापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं । उ ३०, बं० । स ७९, ७७ । मिथ्यादृष्टौ भाषापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं उ ३०, बं २३, २५, २६, २८, २९ (३०) स ९२, ९१, ९० । अत्र सतीर्थसत्त्वं नरकगमनाभिमुखापेक्षं । सासादने उ ३० । बं २९ ति म । ३० ति उ । स ९० । मिश्रे उ ३० । बं २८ दे,

वहाँ मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है और सत्त्व बानवे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासीका है। यहाँ अठासी-चौरासीका सत्त्व विकलत्रयकी अपेक्षा कहा है। क्योंकि इन्हींके सुरद्विक और नारक चतुष्ककी उद्वेलना होनेपर पुनः बन्धका अभाव है। सासादनमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व नब्बेका है। मिश्र असंयत देशसंयतमें बन्ध देवगति सहित अट्ठाईसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है।

मनुष्योंमें तीर्थंकरके मूल शरीरमें प्रवेश करते हुए उच्छ्वास सहित तीसका उदय होता है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व अस्सी, अठहत्तरका है। तीर्थंकर रहितके मूल शरीरमें प्रविष्ट होनेपर भाषा पर्याप्तिमें सुस्वर या दुःस्वर सहित तीसका उदय होता है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व उन्यासी सतहत्तरका है। सामान्य मनुष्यके भाषा पर्याप्तिमें सुस्वर या दुःस्वर सहित तीसका उदय है। वहाँ बन्ध मिथ्यादृष्टिमें तेईस, पचीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व बानबे, इक्यानवे, नब्बेका है। यहाँ इक्यानबेका सत्त्व नरक जानेके अभिमुख तीर्थंकरकी सत्तावालेकी अपेक्षा कहा है। सासादनमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका और तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध देवसहित अठाईसका और सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतसे अपूर्वकरणके छठे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३० । वं २८ । दे ।२९। दे ति । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ देशसंयतंगे उ ३० । बं २८ । दे । २९ । दे । ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ प्रमत्तसंयतगे उ ३० । वं २८ । दे ।२९। दे ती । स ९३ । ९२ । ९१।९० ॥ अप्रमत्तसंयतंगे उ ३० । वं २८ । दे । २९ । दे । ती । ३० दे । आ । ३१ । दे ती । आ । स ९३ । ९२ ।९१ । ९० ॥ अपूर्व्वकरणंगुभयश्रेणियोळ् षष्ठभागपर्य्यंतं उ ३० । बं २८ । दे । २९ । दे । ती । ३० दे आ । ३१ । दे आ । ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अपूर्व्वकरणसप्तम भागदोळु उ ३० । वं ९१ स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ अनिवृत्तिकरणंगे उ ३० । वं १ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सूक्ष्म सांपरायंगे उ ३० । वं १ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ उपशांतकषायंगे उ ३० । वं । ० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ क्षीणकषायंगे उ ३० । वं । ० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ सयोगिकेवलि भट्टारकंगे उ ३० । वं ० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ अयोगिकेवलि भट्टारकंगे त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमिल्ल ॥

यितु त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमें तें दोडेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानं तिर्य्यंग्मनुष्यगतिजरोळे उदयिसुगुमल्लि तिर्य्यग्गतिजरोळु त्रसमिथ्यादृष्टिजीवंगळगे उद्योतयुतमागि भाषापर्य्याप्तियोळ् सुस्वरदुःस्वरान्यतरोदययुतमागि उ ३१ । बं २३ । २५ । २६ ।२८। २९ । ३० । स ९२ ९०। ८८। ८४ ॥ सासादनंगे उ ३१ । बं २८ । दे । २९ । ति । म । ३० । ति उ । स ९० ॥

स ९२, ९० । असंयते उ ३० बं २८ दे, २९ दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । देशसंयते उ ३०, बं, २८ दे, २९ दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९० । प्रमत्ते उ ३०, बं २८ दे, २९ दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, अप्रमत्ते उ ३०, बं २८ दे, २९ दे ती, ३० दे आ, ३१ दे ती आ, स ९३, ९२, ९१, ९०, उभयापूर्वकरणषष्ठभागे उ ३०, बं २८ दे, २९ दे ती, ३० दे आ, ३१ दे ती आ, स ९३, ९२, ९१, ९०, सप्तमभागे उ ३०, बं १, स ९३, ९२, ९१, ९०, अनिवृत्तिकरणसूक्ष्मसाम्परायथोः उ ३०, बं १, स ९३, ९२, ९१, ९०, ८०, ७९, ७८, ७७, उपशान्तकषाये उ ३०, बं०, स ९३, ९२, ९१, ९०, क्षीणकषाये उ ३०, बं०, स ८०, ७९, ७८, ७७, सयोगे उ ३०, बं०, ८०, ७९, ७८, ७७, नायोगे ।

एकत्रिंशत्कं तिर्यक्त्रसमिथ्यादृष्टावुद्योतयुतं । भाषापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं । उ ३१, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, सासादने उ ३१, बं २८ दे, २९, ति म, ३० ति उ,

भाग तक बन्ध देव सहित अठाईसका या देव तीर्थ सहित उनतीसका है । सत्त्व तिरानबे आदि चारका है । (अप्रमत्त और अपूर्वकरणके षष्ठ भाग पर्यन्त देव और आहारक सहित तीसका तथा देव आहारक तीर्थ सहित इकतीसका भी बन्ध होता है ।)

अपूर्वकरणके सातवें भागमें बन्ध एकका सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसाम्परायमें बन्ध एकका, सत्त्व तिरानबे आदि चारका और अस्सी आदि चारका है। उपशान्त कषायमें बन्ध शून्य, सत्त्व तिरानबे आदि चारका है। क्षीणकषाय और सयोगीमें बन्ध नहीं, सत्त्व अस्सी आदि चारका है। अयोगीमें तीसका उदय ही नहीं है। इकतीसका उदय त्रस उद्योत सहित भाषापर्याप्तिमें सुस्वर या दुःस्वरके साथ तिर्यंचोंके होता है, मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पचीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका और सत्त्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिश्ररुगळगें उ ३१ । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ असंयतरुगळगें उ ३१ । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ देशसंयतरुगळगें उ ३१ । बं २८ । दे । स ९२ । ९० ॥ मनुष्यगतिजरोळ मिथ्यादृष्टयादियागि क्षीणकषायगुणपर्य्यंत मेल्लियुमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयं संभविसदु । सयोगिकेवलि भट्टारकनोळु तीर्त्थयुतमागि भाषापर्य्याप्तियोळु उ ३१ । बं । ० । स ८० । ७८ ॥

यितेकत्रिंशत् प्रकृतिस्थानोदयाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं नवोदयस्थानदोळु बंध संभविसदु । सत्त्वस्थानंगळु योजिसल्पडुगुं मेंते दोडे अयोगिकेवलि भट्टारकनोळु "तदि एक्कं मणुवगदी पंचिदियसुभगतसतिगादेज्जं । जसतित्थं मणुवाऊ उच्चं च अजोगिचरिमम्मि ॥" यॆंदिती द्वादशोदय प्रकृतिगळोळु नामकर्म्मप्रकृतिगळोळु तीर्त्थयुतमागि नवप्रकृतिगळप्पुवल्लि उ ९ । बं । ० । स ८० । ७८ । १० ॥ तीर्त्थरहितमागि उ ८ । बं । ० । स ७९ । ७७ । ९ ॥

यिंतुदयस्थानैकाधिकरणदोळु बंधसत्त्वस्थानंगळु परमागमाऽविरोधदिदं योजिसल्पट्टुवनंतरं सत्त्वैकस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळु गाथासप्तकदिदं आचार्य्यरिंदं पेळल्पडुगुमदेंते दोडे —

सत्ते बंधुदया चदुसगस गणव चदुसगं च सगणवयं ।
छण्णव पणणव पणचदु चदुसिगिछक्कं णभेक सुण्णेगं ॥७५३॥

सत्वे बंधोदयाश्चतुः सप्त सप्त नव चतुः सप्त च सप्तनवकं । षण्णव पंचनव पंचचत्वारि चतुर्व्वेकषट्कं नभ एकं शून्यैकं ॥

स ९०, मिश्रे उ ३१, बं २८ दे, स ९२, ९०, असंयते उ ३१, बं २८ दे, स ९२, ९०, देशसंयते उ ३१, बं २८ दे, स ९२, ९०, मनुष्येषु न क्षीणकषायांतं । सयोगे सतीर्थं । भाषापर्याप्तौ उ ३१, बं०, स ८०, ७८ ।

नवकमयोगिचरमसमय एव । उ ९, बं०, स ८०, ७८, १०, अष्टकमपि तत्रैव तीर्थवियुते उ २८, बं०, स ७९, ७७, ९ ॥७५२॥ एवमुदयस्थानाधिकरणे बन्धसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेनागमाविरोधेन योजयित्वा सत्त्वस्थानाधिकरणे बन्धोदयसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेन गाथासप्तकेनाह—

बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासीका है। सासादनमें बन्ध देवसहित अठाईस, तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीस या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्त्व नब्बेका है। मिश्रमें बन्ध देव सहित अठाईस और सत्त्व बानबे-नब्बेका है। असंयतमें बन्ध देवगति सहित अठाईसका और सत्त्व बानबे नब्बेका है। देश संयतमें बन्ध देवगति सहित अठाईसका और सत्त्व बानबे नब्बेका है।

मनुष्योंमें क्षीणकषाय पर्यन्त इकतीसका उदय नहीं है। तीर्थंकरके भाषापर्याप्तिमें उदय है। वहाँ बन्ध नहीं है। सत्त्व अस्सी-अठहत्तरका है। नौका उदय अयोग केवलीके है। वहाँ सत्त्व अस्सी, अठहत्तर, दसका है। आठका उदय भी वहीं सामान्य केवलीके होता है। वहाँ सत्त्व उन्यासी, सतहत्तर, नौका है। दोनोंमें बन्ध नहीं है ॥७५२॥

इस प्रकार उदयस्थानरूप आधारमें बन्धस्थान और सत्त्वस्थानको आधेय बनाकर आगमानुसार कथन करके आगे सत्त्वस्थानको आधार और बन्धस्थान उदयस्थानको आधेय बनाकर सात गाथाओंसे कथन करते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिनवत्यादिसत्वस्थानंगळोळु क्रमदिदं बंधस्थानंगळं उदयस्थानंगळं चतुः सप्त सप्त नव चतुःसप्त सप्त नव षण्नव पंच नव पंच चतुः स्थानंगळं नाल्कॆडॆयोळेक षड्बंधोदयस्थानंगळुं नभ-एकमुं शून्यैकमुमप्पुवु । संदृष्टिः—

स	९३	९२	९१	९०	८८	८४	८२	८०	७९	७८	७७	१०	९
बं	४	७	४	७	६	५	१	१	१	१	१	०	०
उ	७	९	७	९	९	९	४	६	६	६	६	१	१

अनंतरमी त्रिनवत्यादिसत्वस्थानंगळोळु पेळल्पट्ट बंधोदयस्थान संख्याविषयस्थानंगळवाउव दोडे क्रमदिदं पेळदपरुः—

तेणउदीये बंधा उगुतीसादिचउक्कमुदओ दु ।
इगिपणछस्सग अट्ठ य णववीसं तीसयं णेयं ॥७५४॥

त्रिनवत्यां बंधाः एकान्नत्रिंशदादिचतुष्कमुदयस्तु । एक पंच षट्सप्ताष्ट नवविंशतिस्त्रिंशच्च ज्ञेयं ॥

त्रिनवतिसत्वस्थानाधिकरणदोळु नवविंशत्यादि चतुः स्थानंगळु बंधंगळप्पुवु । उदयस्थानंगळुमेक पंच षट् सप्ताष्ट नवविंशतिस्थानंगळं त्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयमुमरियल्पडुगुं ॥ संदृष्टिः—
सत्व ९३ । बं २९ । ३० । ३१ । १ ॥ उ २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० ॥

बाणउदीए बंधा इगितीसूणाणि अट्ठठाणाणि ।
इगिवीसादी एक्कत्तीसं ता उदयठाणाणि ॥७५५॥

द्वानवत्यां बंधाः एकत्रिंशदूनानि अष्टस्थानानि । एकविंशत्याद्येकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानां तान्युदयस्थानानि ॥

त्रिनवतिकादिसत्त्वस्थानेषु बन्धोदयस्थानानि क्रमेण चतुःसप्त सप्तनव चतुःसप्त सप्तनव षण्णव पंचनव पंचचत्वारि चतुर्ष्वेकषट् नभ एकं, शून्यैकं ॥७५३॥ तानि कानीति चेदाह—

त्रिनवतिके बन्धस्थानानि नवविंशतिकादीनि चत्वारि । उदयस्थानान्येकपंचषट्सप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि त्रिंशत्कं च ज्ञेयानि ॥७५४॥

तिरानबे आदि सत्त्वस्थानोंमें बन्धस्थान और उदयस्थान क्रमसे चार सात, सात नौ, चार सात, सात नौ, छह नौ, पाँच नौ, पाँच चार, एक छह, शून्य एक, शून्य एक होते हैं ॥ ७५३ ॥

वे कौन हैं ? यह कहते हैं—

तिरानबेके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान उनतीस आदि चार हैं और उदयस्थान इक्कीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीसके हैं ॥७५४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वानवतिसत्वस्थानाधिकरणदोळेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानं पोरगागि शेषसप्तस्थानंगळं बंधंगळप्पुवु। एकविंशतिस्थानमादियागेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानावसानमाद नवस्थानंगळुदयंगळप्पुवु। संदृष्टिः—सत्व ९२। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। १॥ उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥

इगिणउदीए बंधा अडवीसं तिदयमेक्कयं चुदओ।
तेणउदिं वा णउदीबंधा बाणउदीयं व हवे ॥७५६॥

एकनवत्यां बंधा अष्टाविंशति त्रितयमेककं चोदयस्त्रिनवतिवन्नवतिबंधा द्वानवतिवद् भवेत्॥

एकनवतिसत्वस्थानाधिकरणदोळष्टाविंशत्यादि त्रिस्थानंगळुमेकप्रकृतियुमितु चतुःस्थानंगळु बंधमप्पुवु। उदयस्थानंगळु त्रिनवतिसत्वस्थानदोळु पेळद सप्तस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टि—सत्व ९१। बं २८। २९। ३०। १॥ उ २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०॥ नवति सत्वस्थानाधिकरणदोळु बंधस्थानंगळु द्वानवतिसत्वस्थानदोळु पेळद त्रयोविंशत्यादिसप्तस्थानंगळप्पुवु॥ उदयस्थानंगळं मुंदण सूत्रदोळु पेळदपरु:—

चरिमदुवी सूणुदओ तिसु दुसु बंधा छ तुरियहीणं च।
चासीदी बंधुदया पुव्वं विगिवीसचत्तारि ॥७५७॥

चरमद्वयविंशत्यूनोदयास्त्रिषु द्वयोर्बंधाः षट्तुरीयहीनं च। द्व्यशीत्यां बंधोदयाः पूर्ववदेकविंशतिचत्वारि॥

नवतिसत्वस्थानदोळुदयस्थानंगळु चरमद्विस्थानोदयमुं विंशतिस्थानोदयमुमितु त्रिस्थानरहितमागि सर्व्वोदयस्थानंगळप्पुवु। संदृष्टिः—स ९०: बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। १। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ त्रिषु शब्दादिदमष्टाशीति चतुरशीतिसत्वस्थानद्वयदोळमी पेळदुदयस्थानंगळु नवनवंगळेयप्पुवु। वंधस्थानंगळु षट् त्रयोविंशत्यादि

द्वानवतिके बन्धस्थानान्येकत्रिंशत्कं बिना शेषाणि सप्त। उदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्येकत्रिंशत्कान्तानि नव॥७५५॥

एकनवतिके बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीण्येककं च। उदयस्थानानि त्रिनवतिकोक्तानि सप्त। नवतिके बन्धस्थानानि द्वानवतिकोक्तानि सप्त॥७५६॥

उदयस्थानानि चरमद्वयेन विंशतिकेन चोनसर्वाणि। त्रिषु शब्देनाष्टाशीतिकचतुरशीतिकयोरप्यमून्येव

बानबेके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान इकतीसके बिना शेष सात हैं। उदयस्थान इक्कीससे इकतीस पर्यन्त नौ हैं॥७५५॥

इक्यानबे के सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान अठाईस आदि तीन और एक ऐसे चार हैं। उदयस्थान तिरानबेकी तरह सात हैं। नौवेके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान बानबेकी तरह सात हैं॥७५६॥

उदयस्थान अन्तके दो और बीसके बिना सब नौ हैं। 'तिसु' अर्थात् अठासी और चौरासीके सत्त्वस्थानमें भी ये ही नौ उदयस्थान हैं। अठासी-चौरासीमें बन्धस्थान तेईस

षट्स्थानंगळुं चतुर्थाष्टाविंशतिबंधस्थानरहित शेषपंचबंधस्थानंगळप्पुवुक्रमदिदं। संदृष्टि:—सत्व ८८। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ स ८४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥ उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥॥ द्व्यशीतिसत्वस्थानाधिकरणदोळु बंधस्थानंगळुमुदयस्थानंगळुं क्रमदिदं पूर्व्ववच्चतुरशीति सत्वस्थानदोळु पेळदष्टाविंशत्यून त्रयोविंशत्यादि पंचस्थानंगळुमेकविंशत्यादि चतुरुदयस्थानंगळु मप्पुवु। सत्व ८२। बं २३। २५। २६। २९। ३०। उ २१। २४। २५। २६॥

सीदादिचउसु बंधा जसकित्ती समपदे हवे उदओ।
इगिसगणवधियवीसं तीसेक्कं तीसणवगं च ॥७५८॥

अशीत्यादिचतुर्षु बंधो यशस्कीर्त्तिः समपदे भवेदुदयः। एकसप्तनवाधिकविंशतिस्त्रिंशदेकत्रिंशं नवकं च॥

अशीत्यादि चतुःसत्वस्थानंगळोळु क्रमदिदं बंधं यशस्कीर्त्तिनामकर्म्म मेकमेयक्कु मा नाल्कुं स्थानंगळोळु समपदंगळोळे भत्तेप्पत्तेंटु गळें बेरडेडेगळोळुदयस्थानंगळुमेकविंशति सप्तविंशति नवविंशति त्रिंशदेकत्रिंशन्नवकमुमक्कुं॥

वीसं छडणववीसं तीसं छट्ठं च विसमठाणुदया।
दसणवगे णहि बंधो कमेण णव अट्ठयं उदओ ॥७५९॥

विंशतिः षडष्टनव विंशति त्रिंशच्चाष्ट च विषमस्थानोदयाः। दशनवके न हि बंधः क्रमेण नवाष्टकमुदयः॥

नवसप्तति सप्तसप्तति विषमसत्वस्थानद्वयदोळु क्रमदिदमुदयस्थानंगळु विंशतियुं षड्विंशतियुमष्टाविंशतियुं नवविंशतियुं त्रिंशत्प्रकृतिकमुमष्टप्रकृतिकमुमितु षट् षट् स्थानोदयंगळप्पुवु। संदृष्टि:—सत्व ८०। बं १। उ २१। २७। २९। ३०। ३१। ९॥ स ७९। बं १। उ २०। २६। २८। २९। ३०। ८॥ स ७८। बं १। उ २१। २७। २९। ३०। ३१। ९। स ७७। बं १।

नव। बन्धस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट्। अष्टाविंशतिकोनानि पंच। द्व्यशीतिके बन्धोदयस्थानानि क्रमेण चतुरशीतिकोक्तानि पंच। एकविंशतिकादीनि चत्वारि ॥७५७॥

अशीतिकादिषु चतुर्षु बंधो यशस्कीर्तिः। उदयस्थानानि समपदयोरेकसप्तनवाधिकविंशतिकानि त्रिंशत्कैकत्रिंशत्कनवकानि च ॥७५८॥

विषमयोर्विंशतिकषडष्टनवाग्रविंशतिकत्रिंशत्काष्टकानि षट्। दशकनवकयोर्नाम बन्धः शून्यं, उदयः

आदि छह और अठाईस बिना पाँच हैं। बयासीके सत्त्वस्थानमें बन्धस्थान चौरासीकी तरह पाँच हैं। उदयस्थान इक्कीस आदि चार हैं ॥७५७॥

अस्सी आदि चार सत्त्वस्थानोंमें बन्ध एक यशकीर्तिका होता है। उदयस्थान समगणनारूप अस्सी-अठहत्तरमें इक्कीस, सत्ताईस, उनतीस, तीस, इकतीस, नौके हैं ॥७५८॥

विषमगणनारूप उनासी-सतहत्तरके सत्त्वस्थानमें बीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ २० । २६ । २८ । २९ । ३० । ८ ॥ दश नव सत्त्वस्थानंगळोळु नामकर्म्मबंधशून्यं । उदयस्थानंगळु नवाष्टैकैकस्थानंगळेयप्पुवु । संदृष्टि :—स १० । बं । ० । उ ९ । स ९ । बं । ० । उ ८ ॥

अनंतरमी सत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळनुक्तंगळं चतुर्ग्गतिजरुगळ गुणस्थानंगळोळु योजिसल्पडुगुमें तें दोडे त्रिनवतिसत्त्वस्थानं मनुष्यदेवगतिजरोळक्कुमल्लि मनुजरोळु मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररोळु संभविसदें तें दोडे "तित्थाहारं जुगवं सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिये" एंदितु तद्गुणस्थानत्रयदोळु तत्सत्त्वक्कसंभवमप्पुदरिंदं । मनुष्यासंयतनोळु सत्त्व ९३ । बं २९ । दे । ती । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ देशसंयतंगे सत्त्व ९३ । बं २९ । दे ती । उ ३० । प्रमत्तसंयतंगे सत्त्व ९३ । उ २९ । दे ती । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० ॥ अप्रमत्तसंयतंगे सत्त्व ९३ । बं २९ । दे ती । ३१ । दे ती । आ । उ ३० ॥ अपूर्व्वकरणंगे स ९३ । बं २९ । दे ती । ३१ । दे ती । आ । उ ३० ॥ अनिवृत्तिकरणंगे स ९३ । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायंगे सत्त्व ९३ । बं १ । उ ३० । उपशांतकषायंगे सत्त्व ९३ । बं । ० । उ ३० ॥ क्षीणकषायादिगुणस्थानत्रितयदोळु त्रिनवतिसत्त्वं संभविसवु । अपूर्व्वकरणादिगळोळुपशमश्रेण्यपेक्षेयिंदं त्रिनवति सत्त्वं संभवमें दरियल्पडुगुं ॥ देवगतियोळु सौधर्मादिसर्व्वार्थसिद्धिपर्य्यंतमाद विविजासंयतरुगळ्गे स ९३ । बं ३० । म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ यी त्रिनवतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु अष्टाविंशतिबंध-

---

क्रमेण नवकमष्टकं । उक्ताधाराधेयं चतुर्गतिगुणस्थानं प्रति योजयति—

तत्र त्रिनवतिकं कर्मभूमिपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तमनुष्यवैमानिकयोरेव । तत्रापि तित्थाहारेत्यादिना न मिथ्यादृष्ट्यादित्रये । तत्र मनुष्येऽसंयते स ९३, बं २९ दे ती, उ २१, २६, २८, २९, ३०, देशसंयते स ९३, बं २९, दे ती, उ ३०, प्रमत्ते स ९३, बं २९ दे ती, उ २५, २७, २८, २९, ३०, अप्रमत्ते स ९३, बं २९ दे ती, ३१ दे ती आ, उ ३०, उपशमकेऽपूर्वकरणे स ९३, बं २९ दे ती, ३१ दे ती आ, उ ३०, अनिवृत्तिकरणे स ९३, बं १, उ ३०, सूक्ष्मसाम्पराये स ९३ । बं १ । उ ३० उपशान्तकषाये । स ९३, बं ०, उ

तीस, आठके उदयस्थान हैं। दस और नौके सत्त्वस्थानमें बन्ध नहीं है। उदय क्रमसे नौ और आठका है।

उक्त आधार-आधेयको चारों गतिके गुणस्थानोंमें लगाते हैं—

उक्त सत्त्वस्थानोंमें-से तिरानबेका सत्त्व कर्मभूमिया पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त मनुष्य और वैमानिक देवोंमें ही पाया जाता है। उनमें भी 'तित्थाहारा' इत्यादि वचनके अनुसार मिथ्यादृष्टि आदि तीन गुणस्थानोंमें तिरानबेका सत्त्व नहीं है। असंयत मनुष्यके तिरानबेके सत्त्वमें बन्ध देव तीर्थसहित उनतीसका और उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। देशसंयतमें बन्ध देव तीर्थ सहित उनतीसका, उदय तीसका है। प्रमत्तमें बन्ध देव तीर्थ सहित उनतीसका, उदय पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस तीसका है। अप्रमत्तमें बन्ध देव तीर्थ सहित उनतीसका या आहारक तीर्थ सहित इकतीसका और उदय तीसका है।

उपशमक अपूर्वकरणमें अप्रमत्तके समान है। अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म साम्परायमें बन्ध एकका, उदय तीसका है। उपशान्त कषायमें बन्ध नहीं, उदय तीसका है। क्षीणकषाय आदिमें तिरानबेका सत्त्व नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानमसंयतादिगळोळेकिल्लें दोडे नरकगमनाभिमुखनं बिट्टु मत्तेल्लियुं तीर्त्थबंधमुपरत मागदप्पुदरिंदमष्टाविंशतिस्थानबंधं संभविसदु । त्रिनवतिसत्त्वंगे विराधनेयुमिल्ल ।

इंतु त्रिनवतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं द्वानवतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळ् बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमदें तें दोडे :—

द्वानवतिस्थानसत्त्वं चतुर्ग्गतिजरोळवकुमल्लि नरकगतियोळ् घर्म्मेय मिथ्यादृष्टिगळ्गे सत्त्व ९२ । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । तत्रत्य सासादनंगे द्वानवतिसत्त्वं संभविसदु । मिश्रंगे स ९२ । बं २९ । म । उ २९ ॥ असंयतंगे स ९२ । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । वंशाविमघविपर्य्यंतमाद मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९२ । बं २९ । ति । म ३० । ति । उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । तत्रत्यसासादनंगे द्वानवति सत्त्वं संभविसदु ॥ मिश्रंगे स ९२ । बं २९ । म । उ २९ ॥ असंयतंगे स ९२ । बंध २९ । म । उ । २९ ॥ महातमःप्रभेय मिथ्यादृष्टिगळ्गे सत्त्व ९२ । बं २९ । ति । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ तत्रत्यसासादनंगे द्वानवतिसत्त्वं संभविसदु ॥ मिश्रंगे स ९२ । बं २९ । म । उ २९ ॥ असंयतंगे स ९२ । बं २९ । म । उ २९ ॥ तिर्य्यग्गतिजरोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९२ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ ।

३०, न क्षीणकषायादौ । वैमानिकासंयते स ९३, बं ३० म ती, उ २१, २५, २७, २८, २९, एतेष्वसंयतादिषु कुतोऽष्टाविंशतिकं न बध्नाति । नरकगमनाभिमुखं मुक्त्वा तीर्थं बध्नतां विश्रांत्यभावेन तद्घटनात् ।

द्वानवतिकं चतुर्गतिषु तत्र नरके धर्मायां मिथ्यादृष्टौ स ९२, बं २९ ति म, ३० ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने । मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९, असंयते स ९२ बं २९, म, उ २१, २५, २७, २८, २९, आमघव्यां मिथ्यादृष्टौ स ९२, बं २९ ति म, ३० ति उ । उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने । मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९, असंयते स ९२, बं २९ म, उ २९, माघव्यां मिथ्यादृष्टौ । स ९२, बं २९, ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने । मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९, असंयते

वैमानिक देवोंमें असंयतमें तिरानबेका सत्त्व होता है । वहाँ बन्ध मनुष्य तीर्थ सहित तीसका और उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । यहाँ असंयतादिमें अठाईसका बन्ध नहीं होता; क्योंकि नरक जानेके सम्मुख जीवको छोड़कर तीर्थंकरकी सत्तावाले अन्य जीव सदा तीर्थंकरका बन्ध करते हैं अतः अठाईसका बन्ध नहीं घटित होता ।

बानबेका सत्त्व चारों गतिमें पाया जाता है । नारकियोंके बानबेके सत्त्वमें घर्मामें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है । उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । सासादनमें बानबेका सत्त्व नहीं है । मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका और उदय भी उनतीसका है । असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । वंशासे मघवी पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें घर्माके समान बन्ध उदय है । सासादनमें बानबेका सत्त्व नहीं । मिश्रमें और असंयतमें बन्ध उदय उनतीसका है । माघवीमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है । उदय घर्माके समान है । सासादनमें नहीं है । मिश्र और असंयतमें बन्ध उदय उनतीसका है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३० ॥ उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ सासादनंगे द्वानवति सत्त्वमिल्ल ॥ मिश्रंगे स ९२ । बं २८ । दे उ ३० । ३१ ॥ असंयतंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ तिर्य्यग्देशसंयतंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ ३० । ३१ ॥ मनुष्यगतिजमिथ्यादृष्टिगे स ९२ । बंध २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ सासादनंगे द्वानवतिसत्त्वमिल्ल ॥ मिश्रंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ ३० ॥ मनुष्यासंयतंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ देशसंयतंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ ३० । प्रमत्तसंयतंगे स ९२ । बं २८ । दे । उ । द २५ । २७ । २८ । २९ । ३० ॥ अप्रमत्तसंयतंगे । स ९२ । बं २८ । दे । ३० । दे । आ । उ । ३० ॥ अपूर्व्वकरणंगे सत्त्व ९२ । बं २८ । दे ३० । दे । आ । १ । उ ३० ॥ अनिवृत्तिकरणंगे स ९२ । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायंगे सत्त्व ९२ । बं १ । उ ३० ॥ उपशांतकषायंगे स ९२ । बं । ० । उ ३० ॥ क्षीणकषायादिगळोळु द्वानवतिसत्त्वमिल्ल । देवगतियोळु भवनत्रयमिथ्यादृष्टिगळगे सत्त्व ९२ ॥ बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ ।

स २९, बं २९ म, उ २९, तिर्यक्षु मिथ्यादृष्टौ । स ९२, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, उ २१, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, न सासादने । मिश्रे स ९२, बं २८ दे, उ ३०, ३१, असंयते स ९२ । बं २८ दे, उ २१, २६, २८, २९, ३०, ३१, देशसंयते स ९२, बं २८, दे, उ ३०, ३१, मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ स ९२, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, उ २१, २६, २८, २९, ३०, न सासादने । मिश्रे स ९२, बं २८ दे, उ ३०, असंयते स ९२, बं २८, दे, उ २१, २६, २८, २९, ३०, देशसंयते । स ९२, बं २८, दे, उ ३०, प्रमत्ते स ९२, बं २८ दे, उ २५, २७, २८, २९ ३०, अप्रमत्ते स ९२, बं २८ दे, ३० दे आ, उ ३० । अपूर्वकरणे स ९२, बं २८ दे, ३० दे आ, उ ३०, अनिवृत्तिकरणे स ९२, बं १, उ ३०, सूक्ष्मसाम्पराये । स ९२, बं १, उ ३०, उपशान्तकषाये स ९२, बं ०, उ ३०, न क्षीणकषायादौ ।

तिर्यंचोंमें बानवेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है । सासादनमें नहीं है । मिश्रमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीस, इकतीसका है । असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है । देशसंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीस, इकतीसका है ।

मनुष्योंमें बानवेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका तथा उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । सासादनमें बानवेका सत्त्व नहीं होता । मिश्रमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीसका है । असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । देशसंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीसका है । प्रमत्तमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । अप्रमत्त अपूर्वकरणमें बन्ध देवसहित अठाईसका देव आहारक सहित तीसका और उदय तीसका । है । अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसाम्परायमें बन्ध एकका उदय तीसका है । उपशान्त कषायमें बन्ध नहीं, उदय तीसका है । क्षीणकषायमें बानवेका सत्त्व नहीं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८। २९॥ तत्रत्यसासादनंगे द्वानवतिसत्वमिल्ल। भवनत्रयमिश्रंगे स ९२। बं २९। म। उ २९। भाषा॥ भवनत्रयासंयतंगे स ९२। बं २९। म। उ २९। भाषा॥ सौधर्मकल्पद्वयमिथ्यादृष्टिगळ्गे सत्व ९२। बं २५। २६। २९। ३०। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ तत्रत्यसासादनंगे द्वानवतिसत्वं संभविसदु। मिश्रंगे स ९२। बं २९। म। उ २९। भाषा॥ असंयतंगे स ९२। बं २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ सानत्कुमारादिदशकल्पजमिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९२। बं २९। ति। म। ३०। ति उ॥ उ २१। २५। २७। २८। २९॥ सासादनंगे द्वानवतिसत्वमिल्ल॥ मिश्रंगे स ९२। बं २९। म। उ २९। भाषा॥ असंयतंगे स ९२। बं २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाददिविज मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९२। बं। २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ सासादनंगे द्वानवतिसत्वं संभविसदु। मिश्रंगे स ९२। बं २९। म। उद. २९। भाषा॥

असंयतंगे स ९२। बं २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥ अनुदिशानुत्तरचतुर्दशविमानजाऽसंयतरुगळ्गे स ९२। बं। २९। म। उ २१। २५। २७। २८। २९॥

देवगतौ भवनत्रये मिथ्यादृष्टौ स ९२, बं २५, २६, २९, ३०, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९ भाषा। असंयते स ९२, बं २९ म, उ २९ भाषा, सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ स २९, बं २५, २६, २९, ३०, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, बं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ स ९२, बं २९ ति म, ३० ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, बं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, बं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९। उपरि ग्रैवेयकान्तेषु मिथ्यादृष्टौ, स ९२, बं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे, स ९२, बं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, बं २९ म, उ २१, २१, २७, २८, २९, अनुदिशानुत्तरासंयते, स ९२, बं २९ म, उ २१, २५,२७,२८,२९।

देवोंमें बानबेके सत्वमें भवनत्रिक व सौधर्म युगलमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका, उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सासादनमें बानबेका सत्व नहीं। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय उनतीसका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका, उदय भवनत्रिकमें तो उनतीस ही का है। सौधर्मद्विकमें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। ऊपर दस कल्पोंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सासादनमें नहीं। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय उनतीसका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका, उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सासादनमें नहीं। मिश्रमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका उदय उनतीसका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। अनुदिश अनुत्तरमें असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिंतु द्वानवतिसत्वस्थानाधिकरणदोळ् बंधोदयंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरमेकनवतिसत्वस्थानाधिकरणदोळ् बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमवें ते दोडे पेळल्पडुगुं :—एकनवतिस्थानसत्वं नारकरोळु मनुष्यरोळु दिविजरोळमक्कुं । तिर्य्यग्गतिजरोळिल्लेकें दोडे तीर्त्थयुतसत्वस्थानमप्पुदरिंदं । "तिरिये ण तित्थसत्त" में दिंतु तिर्य्यग्गतिजरोळु तत्सत्वं विरुद्धमप्पुदरिंदं । नारकरोळु घर्म्मावनिजमिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९१ । बं २९ । म । उ २१ । २५ ।। सप्तविंशत्यादिस्थानोदयं संभविसदेकें दोडे शरीरपर्य्याप्तियिदं मेले तीर्त्थसत्कर्म्मरप्प मिथ्यादृष्टिगळ्गे सम्यक्त्वमक्कुमप्पुदरिंदं तदुदयस्थानोदयं संभविसदें बोदभयसूरिसिद्धांतचक्रवर्त्तिगळभिप्रायं ।। आ सासादनमिश्ररुगळोळेकनवतिस्थानसत्वं परमागमविरोधमप्पुदरिंद संभविसदु । घर्म्मावनिजासंयतंगे सत्व ९१ । बं ३० । म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। वंशेमेघेगळोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९१ । बं २९ । म । उ २१ । २५ ।। सासादनमिश्ररुगळोळेकनवतिस्थानसत्वं संभविसदु ।। असंयतरुगळ्गे स ९१ । बं ३० । म । ती । उद । २७ । २८ । २९ ।। अंजनादिगळ्कुं पृथ्विजरोळेकनवतिस्थानसत्वं संभविसदेकें दोडे तीर्त्थसत्कर्म्मंरुगळ्गे तत्पृथ्वीचतुष्टयदोळुत्पत्ति संभविसदप्पुदरिंदं ।। मनुष्यगतिजरोळु मिथ्यादृष्टिगे स ९१ । बं २८ न । २९ । म । उ ३० ।। मनुजसासादनमिश्ररुगळ्गेकनवतिसत्वं विरुद्धमप्पुदरिंदं संभविसदु ।। मनुष्यासंयतरुगळ्गे । स ९१ । बं २९ । दे ती । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ।। मनुष्यदेशसंयतंगे स ९१ । बं २९ । दे

एकनवतिकं तिरिये ण तित्थसत्तमिति देवनारकमनुष्येष्वेव । तत्र नारकेषु घर्मायां मिथ्यादृष्टौ स ९१, बं २९ म, उ २१, २५, नात्र सप्तविंशतिकाद्युदयः । शरीरपर्याप्तेरुपरि तीर्थसत्त्वमिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टित्वसम्भवात् । न सासादनमिश्रयोः । असंयते । स ९१, बं ३०, म ती, उ २१, २५, २७, २८, २९, वंशामेघयोर्मिथ्यादृष्टौ स ९१, बं २९ म, उ २१, २५, न सासादनमिश्रयोः । असंयते, स ९१, बं ३०, म ती, उ २७, २८, २९, नांजनादौ कुतः ? तीर्थसत्त्वस्य तत्रानुत्पत्तेः ।

मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ स ९१ । बं २८ न । २९ म । उ ३० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते स ९१ । बं २९ दे ती । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । देशसंयते । स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । प्रमत्ते

इक्यानबेका सत्त्व 'तिरिये ण तित्थसत्तं' इस वचनके अनुसार तिर्यंचमें नहीं होता नारकी मनुष्य और देवोंमें होता है । नारकियोंमें इक्यानबेके सत्त्वमें घर्मामें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीसका है । यहाँ सत्ताईस आदिका उदय नहीं है; क्योंकि शरीरपर्याप्ति होनेपर तीर्थंकरकी सत्तावाला मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टी हो जाता है । सासादन मिश्रमें इक्यानबेका सत्त्व नहीं है । असंयतमें बन्ध मनुष्य तीर्थ सहित तीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । वंशा मेघामें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय इक्कीस, पच्चीसका है । सासादन मिश्रमें नहीं । असंयतमें बन्ध मनुष्य तीर्थ सहित तीसका उदय सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । अंजनादिमें इक्यानबेका सत्त्व नहीं है क्योंकि तीर्थंकरकी सत्तावाला उनमें उत्पन्न नहीं होता । इक्यानबेके सत्त्वमें मनुष्योंमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध नरकगति सहित अठाईसका या मनुष्य सहित उनतीसका, उदय तीसका है । सासादन मिश्रमें नहीं है । असंयतमें बन्ध देवतीर्थ सहित उनतीसका उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । देश-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ती । उ ३० ।। प्रमत्तसंयतंगे स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० ।। अप्रमत्तसंयतंगे स ९१ । बं २९ । दे ती । उ ३० ।। अपूर्व्वकरणंगे स ९१ । बं २९ । दे ती । १ । उ ३० ।। अनिवृत्तिकरणंगे स ९१ । बं १ । उ ३० ।। सूक्ष्मसांपरायंगे स ९१ । बं १ । उ ३० ।। उपशांतकषायंगे स ९१ । बं । ० । उ ३० ।। देवगतिजमिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुगळोळी एकनवतिसत्त्वस्थानं संभविसदु । सौधर्म्मादि-सर्व्वार्त्थसिद्धिजपर्य्यंतमाद देवासंयतरुगळगे स ९१ । बं ३० । म । ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। यितेकनवतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं नवतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळु पेळल्पडुगुमदेंतें दोडे :—नवतिस्थानसत्त्वं चतुर्ग्गतिजरोळं संभविसुगुमल्लि नरकगतिरोळु घर्म्मेय नारकमिथ्यादृष्टिगळगे स ९० । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। घर्म्मेय सासादरुगळगे स ९० । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ २९ । भा ।। घर्म्मेय मिश्ररुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ।। घर्म्मावनिजासंयतंगे स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। वंशादिमघविपर्य्यंतमाद नारकमिथ्यादृष्टिगळगे स ९० । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ । २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। आ सासादनरुगळगे स ९० । बं २९ । ति । म । ३० । ति । उ । उ २९ । भा ।। आ मिश्ररुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ।। तत्रत्यासंयतरुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ । २९ । भा ।। माघविय मिथ्यादृष्टिगळगे स ९० । बं २९ । ति ३० । ति । उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।।

स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । अप्रमत्ते स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । अपूर्वकरणे स ९१ । बं २९ । दे ती । उ ३० । अनिवृत्तिकरणे स ९१ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसाम्पराये स ९१ । बं १ । उ ३० उपशान्तकषाये स ९१ । बं । उ ३० । देवेषु तु भवनत्रयकल्पस्त्रीवर्जितेष्वेव । तत्रापि न मिथ्यादृष्ट्यादित्रये । असंयते स ९१ । बं ३० । म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।

नवतिके घर्मामिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ । ति म । ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । असंयते । स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । वंशादिमघव्यंतमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ ति म । ३० ति । उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति । उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म उ २९ । भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । माघवी मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ ति । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने

संयतमें बन्ध देवतीर्थ सहित उनतीसका उदय तीसका है। प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरणके छठे भाग पर्यन्त इसी प्रकार है। अपूर्वकरणके सातवें भाग, अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म साम्पराय-में बन्ध एकका उदय तीसका है। उपशान्त कषायमें बन्ध नहीं, उदय तीसका है।

देवोंके इक्यानबेका सत्त्व भवनत्रिक और कल्पवासी स्त्रियोंको छोड़कर शेष वैमानिक देवोंमें असंयत गुणस्थानमें ही होता है। वहाँ बन्ध मनुष्य तीर्थ सहित तीसका उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है।

नब्बेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें सब नारकियोंमें बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है किन्तु माघवीमें मनुष्य सहित बन्ध नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ सासादनरुगळ्गे स ९० । बं २९ । ति । ३० । ति उ । उ २९ । भा ॥ आ मिश्ररुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ माघविजासंयतंगे स ९० ।'बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ तिर्य्यंग्गतिजरोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ सासादनरुगळ्गे स ९० । बं २८ । वे । २९ । ति । म । २० । ति । उ । उ २१ । २४ । २६ । ३० । ३१ ॥ तिर्य्यंग्मिश्ररुगळ्गे स ९० । बं २८ । वे । उ ३० । ३१ । तिर्य्यंगसंयतरुगळ्गे स ९१ । बं २८ । वे । उद २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ तिर्य्यंग्देशसंयतंगे स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । ३१ ॥ मनुष्यगतिजमिथ्यादृष्टिगे स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ आ सासादनरुगळ्गे स ९० । बं २८ । वे २९ । ति । म ३० । ति उ । उ २१ । २६ । ३० ॥ मिश्ररुगळगे स ९० । बं २८ । वे । उ ३० ॥ मनुष्यासंयतरुगळ्गे स ९० । बं २८ । दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ मनुष्यदेशसंयतरुगळगे स ९० । बं २८ । दे । उ ३० ॥ प्रमत्तसंयतरुगळ्गे स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । अप्रमत्तसंयतरुगळ्गे स ९० । बं २८ । दे । उ ३० ॥ अपूर्व्वकरणंगे सत्त्वं ९० । बं २८ । दे । १ । उ ३० ॥

स ९० । बं २९ ति । ३० ति उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । असंयते । स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । सासादने स ९० । बं २८ । दे २९ ति म । ३० ति उ । उ २१ । २४ । २६ । ३० । ३१ । मिश्रे स ९० । बं २८ दे । उ ३० । ३१ । असंयते । स ९० । बं २८ दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । देशसंयते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । ३१ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । सासादने स ९० । बं २८ दे । २९ ति । म । ३० ति । उ । उ २१ । २६ । ३० । मिश्रे स ९० । बं २८ ।

है। उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सासादनमें बन्ध मिथ्यादृष्टिकी तरह है उदय उनतीसका है। मिश्रमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका उदय उनतीसका है। असंयतमें बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका है। उदय घर्मामें इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। शेषमें उनतीसका है।

तिर्यंचोंमें नब्बेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है। सासादनमें बन्ध देवसहित अठाईस या तिर्यंच मनुष्य सहित उनतीस या तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। उदय इक्कीस, चौबीस, छब्बीस, तीस, इकतीसका है। मिश्रमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीस, इकतीसका है। असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका तथा उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है। देशसंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय तीस, इकतीसका है।

मनुष्योंके नब्बेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका, उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। सासादनमें बन्ध देवसहित अठाईसका या तिर्यंच वा मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। उदय इक्कीस, छब्बीस, तीसका है। मिश्रमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनिवृत्तिकरणंगे स ९० । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायंगे स ९० । बं १ । उ ३० ॥ उपशांतकषायंगे स ९० । बं । ० । उ ३० ॥ देवगतिजरोळु भवनत्रयमिथ्यादृष्टिगळगे स ९० । बं २५ । २६ । २९। ३० ॥ उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ आ सासादनरुगळगे स ९० । बं २९ । ति । उ । उ २१ । २५ । २९ ॥ भवनत्रयमिश्ररुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ भवनत्रितयासंयतरुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ सौधर्म्मद्वयमिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९० । बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सौधर्मद्वय सासादनरुगळगे स ९० । बं २९ । ति । म । ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २९ । भा ॥ आ मिश्ररुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ सौधर्म्मद्वयजासंयतरुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ सानत्कुमारादिदशकल्पजमिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९० । बं २९ । ति । म ३० । ति । उ । २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ सासादनरुगळगे स ९० । बं २९ । ति । म ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २९ । भा ॥ आ मिश्ररुगळगे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ तत्रत्यासंयतरुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ आनताद्युपरिमग्रैवेयकावसानमाद सुररोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ आ सासादनरुगळगे स ९० । बं २९ ।

दे । उ ३० । असंयते स ९० । बं २८ । दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । देशसंयते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । प्रमत्ते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । अप्रमत्ते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । अपूर्वकरणे स ९० । बं २८ दे १ । उ ३० । अनिवृत्तिकरणे स ९० । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसाम्पराये स ९० । बं १ । उ ३० । उपशान्तकषाये स ९० । बं० । उ ३० । भवनत्रयमिथ्यादृष्टौ स ९० बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ ति म । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २९ । मिश्रे स ९० । बं २९ म । उ २९ भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ ति म । ३० ति । उ । उ २१ । २५ । २९ । भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । उपरि दशकल्पमिथ्यादृष्टौ । स ९० । बं २९ ति म । ३० । ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति । उ । उ २१ ।

तीसका है । असंयतमें बन्ध देवसहित अठाईसका उदय इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है। देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्तमें बन्ध देवसहित अठाईसका, अपूर्वकरणमें देवसहित अठाईसका वा एकका है। अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसाम्परायमें बन्ध एकका, उपशान्तकषायमें बन्ध नहीं, उदय देशसंयतसे उपशान्त कषाय पर्यन्त तीसका ही है।

देवोंके नब्बेके सत्त्वमें मिथ्यादृष्टिमें भवनत्रिक और सौधर्म द्विकमें बन्ध पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका है। सहस्रार पर्यन्त बन्ध तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्य सहित उनतीसका ही बन्ध है। उदय ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है। सासादनमें बन्ध सहस्रार पर्यन्त तिर्यंच या मनुष्य सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त मनुष्य सहित तीसका है। उदय ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त इक्कीस, पच्चीस, उनतीसका है। मिश्रमें ऊपर ग्रैवेयक पर्यन्त बन्ध मनुष्य सहित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

म । उ २१ । २५ । २९ ॥ आ मिश्ररुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा ॥ तन्नत्यासंयतरुगळ्गे स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥ अनुदिशानुत्तरविमानंगळोळेल्लं सम्यग्दृष्टिगळेयप्परल्लि स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ॥

इंतु नवति सत्वस्थानाधिकरणदोळ् बंधोदयस्थानंगळ् योजिसल्पट्टुवनंतरं अष्टाशीतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळ् बंधोदयस्थानंगळु पेळल्पडुगुमवें तें दोडे :—अष्टाशीतिसत्त्वं तिर्य्यग्मनुष्यगतिद्वयदोळे संभविसुगु मितरनरकदेवगतिगळ देवनारकरोळु संभविसदे कें दोडे अष्टाशीतिसत्त्वस्थानमेकेंद्रियविकलत्रयजीवंगळ्गे देवगतिद्वयोद्वेल्लनस्थानमप्पुदरिंदं स्वस्थानदोळमुत्पन्नस्थानदोळं क्वचिदुंटु क्वचिदिल्लप्पुदरिंदमल्लि तिर्य्यग्गतिजरोळ् मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ आ सासादनमिश्रासंयत देशसंयतरोळष्टाशीतिसत्त्वं संभविसदु । मनुष्यगतिजरोळ् मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ सासादनादिगळोळी सत्वस्थानं संभविसदु । इल्लि तिर्य्यक्पंचेंद्रियजीवंगळोळं मनुष्यरोळं शरीरपर्य्याप्तिकालदोळष्टाशीति सत्त्वस्थानसंभवमें तें दोडे शरीरपर्य्याप्तियोळु नरकगतियुतमागष्टाविंशतिस्थानमुं मिथ्यादृष्टिगळु कट्टिदोडमष्टाशीतिसत्त्वस्थानं संभविसुगुमथवा तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतमागि कट्टिदोड-

२५ । २९ । भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । उपरि ग्रैवेयकान्तमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ म । उ २९ । भा । असंयते स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । अनुदिशानुत्तरासंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।

अष्टाशीतिकमुद्वेल्लितदेवद्विकैकविकलेन्द्रियाणां स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोः । तत्र तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । न सासादनादौ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । न सासादनादौ । इदमष्टाशीतिकं सत्त्वं तु पंचेन्द्रियतिर्यग्मनुष्यौ मिथ्यादृष्टी शरीरपर्याप्तावष्टाविंशतिकं नरकगतियुतं तिर्यग्मनुष्यगतियुतं वा बध्नतस्तदरा वा । विकलेन्द्रियो नारकचतुष्कमुद्वेल्य पंचेन्द्रिय-

उनतीसका उदय उनतीसका है । असंयतमें भवनत्रिकमें बन्ध मनुष्यसहित उनतीसका उदय उनतीसका है । सौधर्मादि अनुत्तर पर्यन्त बन्ध मनुष्य सहित उनतीसका है । उदय इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसका है । अट्ठासीका सत्त्व देवद्विककी उद्वेलना होनेपर एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियके होता है । वे मरकर जहाँ उत्पन्न होते हैं वहाँ भी होता है । सो तिर्यंच मनुष्य मिथ्यादृष्टिके अट्ठासीके सत्त्वमें बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है । उदय तिर्यंचोंके इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसका है । मनुष्योंके इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीसका है ।

यह अट्ठासीका सत्त्व पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य मिथ्यादृष्टिके शरीर पर्याप्तिकालमें नरकगति सहित अठाईसका या तिर्यंच मनुष्यगति सहित उनतीसका अथवा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बन्ध करता है तब पाया जाता है । अथवा एकेन्द्रिय विकलत्रय नारक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मष्टाशीतिसत्त्वं संभविसुगुमथवा नारकचतुष्टयमुमनुद्वेल्लनमं माडिद जीवंगळुत्पन्नतिर्य्यंक्पंचेंद्रियजीवंगळोळं मनुष्यरोळं शरीरपर्य्याप्तियोळु सुरचतुष्टयमं कट्टिदोडमष्टाशीतिसत्त्वं संभविसुगुमेंदरिवुदु ॥ इंतष्टाशीतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयंगळु पेळल्पट्टुवनंतरं चतुरशीतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयंगळु पेळल्पडुगुमदें तें दोडे :—

चतुरशीतिसत्त्वस्थानं तिर्य्यग्गतियोळं मनुष्यगतियोळं संभविसुवु । नरकगतिदेवगतिजरोळु संभविसदल्लि । तिर्य्यग्गतिजरोळेकेंद्रियविकलत्रयजीवंगळे नारकचतुष्टयमनुद्वेल्लनमं माडल्पट्ट सत्वस्थानमप्पुदरिदमवर स्थानदोळमुत्पन्नस्थानदोळं विवक्षिसल्पट्ट मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ सासादनादिगळोळेल्लियुमी चतुरशीति सत्त्वं संभविसदु । मनुष्यगतिजरोळुत्पन्नस्थानदोळु मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ इल्लि शरीरपर्य्याप्त्यादिगळोळु तिर्य्यग्मनुष्यगतियुतस्थानंगळं कट्टुवन्नवरं तत्सत्वस्थानं संभविसुगुं । नरकगतिदेवगतियुतमागि कट्टुवागळु तत्सत्वं पंचेंद्रियतिर्य्यंचरोळं मनुष्यरोळं संभविसदें दरियल्पडुगुं । सासादनादिगुणस्थानंगळोळेल्लियुमी चतुरशीतिसत्त्वं मनुष्यरोळु संभविसदु ॥

यितु चतुरशीतिसत्त्वस्थानदोळु बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पट्टुवनंतरं द्व्यशीतिसत्त्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयंगळु योजिसल्पडुगुमदें तें दोडे—द्व्यशीतिसत्त्वस्थानं तिर्य्यग्गतियोळे संभविसुगुमेकें दोडा सत्त्वस्थानं तेजोवायुकायिकजीवंगळु मनुष्यद्विकमनुद्वेल्लनमं माडिदसत्त्वस्थानमप्पुदरिदमा जीवंगळ विवक्षेयिदं स्वस्थानदोळमुत्पन्नस्थानदोळं तज्जीवंगळ विवक्षेयिदं मिथ्यादृष्टिगळ्गे स ८२ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ ॥ यिल्लि

तिर्यग्मनुष्येषूत्पन्नः शरीरपर्याप्तौ सुरचतुष्कं बध्नाति तदा च सम्भवति ।

चतुरशीतिकमुद्वेल्लितनारकचतुष्कस्य स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोः । तत्र तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । न सासादनादौ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । न सासादनादौ । इदं सत्त्वं शरीरपर्याप्त्यादौ तिर्यग्मनुष्यगतिबन्धे स्यान्न पंचेन्द्रियतिर्यग्मनुष्ययोर्देवनारकगतिबन्धे ।

द्व्यशीतिकमुद्वेल्लितमनुष्यद्विकतेजोवाय्वोः स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोर्मिथ्यादृष्टौ स ८२ । बं २३ । २५ ।

चतुष्ककी उद्वेलना कर मरकर पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य होकर शरीरपर्याप्तिकालमें देवचतुष्कका बन्ध करता है तब होता है ।

चौरासीका सत्त्व नारक चतुष्ककी उद्वेलना होनेपर एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियके होता है । वे मरकर तिर्यंच या मनुष्यमें जहाँ उत्पन्न होते हैं मिथ्यादृष्टि ही होते हैं । वहाँ बन्ध और उदय अठासीके सत्त्वमें कहे अनुसार ही जानना । विशेष इतना कि यहाँ अठाईसका बन्ध नहीं है । यह चौरासीका सत्त्व शरीर पर्याप्ति काल आदिमें तिर्यंच या मनुष्यगतिका बन्ध होनेपर ही होता है । पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्यके देव या नरकगतिका बन्ध होनेपर ऐसा सत्त्व नहीं होता ।

बयासीका सत्त्व मनुष्यद्विककी उद्वेलना होनेपर तेजकाय, वायुकायके होता है । वे

तेजोवायुकायिकंगळ शरीरपर्य्याप्तियोळमुच्छ्वासनिश्वासपर्य्याप्तियोळमातपोद्योतोदयमिल्लप्पुदरिदं पंचविंशतिषड्विंशतिस्थानोदयंगळे पेळल्पट्टुवें दरियल्पडुगुं । एकेंद्रियाद्यन्यतनतिर्य्यंचरोळुत्पत्ति-तेजोवायुकायिकंगळगे संभवमुळ्ळोडमदु विवक्षिसल्पडदेकें दोडा एकेंद्रियादिजीवंगळगे मनुष्यग-तियुतस्थानवंधमुंटप्पुदरिंदमा मनुष्यद्विकक्के सत्वमादुदावोडा द्व्यशीतिसत्वस्थानं संभविसदे पोकुमप्पुदरिंदं ॥

अनंतरमशीतिसत्वस्थानाधिकरणदोळु बंधोदयस्थानंगळु योजिसल्पडुगुमदें तें दोडे—अशीतिसत्वस्थानं मनुष्यगतिजरोळल्लदेल्लियुं संभविसदेकें दोडे क्षपकश्रेणियोळु क्षपकरोळं स्नातकरोळं संभविसुव सत्वस्थानमप्पुदरिंदमल्लियनिवृत्तिकरणक्षपकनोळु स ८० । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळु स ८० । बं १ । उ ३० ॥ क्षीणकषायनोळु स ८० । बं ० । उ ३० । स्वस्थान सयोगकेवलियोळु स ८० । बं । ० । उ ३० ॥ समुद्घातसयोगकेवलियोळु स ८० । बं । ० । उ २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ ॥ अयोगिकेवलियोळु स ८० । बं । ० । उ ९ ॥

मत्तमा क्षपकश्रेणियोळे अनिवृत्तिकरणदोळु तीर्त्थसत्वरहितमागि स ७९ । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळु स ७९ । बं १ । उ ३० ॥ क्षीणकषायनोळु स ७९ । बं । ० । उ ३० ॥ स्वस्थानसयोगकेवलियोळु स ७९ । बं । ० । उ ३० ॥ समुद्घातकेवलियोळु स ७९ । बं । ० । उ २० । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ अयोगिकेवलियोळु स ७९ । बं । ० । उ ८ ॥ मत्तमा क्षपक-श्रेणियोळे तीर्त्थसत्वयुतमागियाहारकद्वयसत्वरहितमागि अनिवृत्तिकरणक्षपकनोळु स ७८ । बं १ । उ ३० ॥ सूक्ष्मसांपरायनोळु स ७९ । बं १ । उ ३० ॥ क्षीणकषायनोळु स ७८ । बं । ० । उ ३० ॥ स्वस्थानसयोगकेवलियोळु स ७८ । बं । ० । उ ३१ ॥ समुद्घातकेवलियोळु स ७८ । बं । ० । उ २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ ॥ अयोगिकेवलियोळु स ७९ । बं । ० । उ ८ ॥ मत्तमा

---

२६ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । अत्र तेजोवाय्वोरातपोद्योतानुदयाच्छरीरपर्याप्तौ उच्छ्वास-पर्याप्तौ च पंचविंशतिकमेव । षड्विंशतिके न द्व्यशीतिकं । मनुष्यद्विकबन्धे तदन्यतिर्यक्षु ।

अशीतिकं क्षपकस्नातकयोरेव । तत्रानिवृत्तिकरणे स ८० । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसाम्पराये स ८० । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ८० । बं । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ८० । बं । उ ३० । समुद्घाते स ८ । बं० । उ २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ । अयोगे । स ८० । बं । उ ९ । अतीर्थेऽनिवृत्तिकरणे स ७९ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसाम्पराये स ७९ । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ७९ बं ० । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ७९ । बं ० । उ ३० । समुद्घाते स ७९ । बं ० । उ २० । २६ । २८ । २९ । ३० । अयोगे स ७९ । बं ० । उ ८ । आहारसत्त्वरहितेऽनिवृत्तिकरणे स ७८ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसाम्पराये

मरकर तिर्यंचमें उत्पन्न होते हैं वहाँ भी होता है । वहाँ बन्ध तेईस, पच्चीस, छब्बीस, उनतीस, तीसका है । उदय इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीसका है । तेजकाय, वातकाय-में आतप उद्योतका उदय न होनेसे शरीर पर्याप्ति और उच्छ्वास पर्याप्तिमें पच्चीसका ही उदय है छब्बीसका नहीं है ।

अस्सीका सत्त्व क्षपक श्रेणीवाले अनिवृत्तिकरण आदिमें तथा तीर्थंकर केवलीके होता है । अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्म साम्परायमें बन्ध एकका है । उससे ऊपर बन्ध नहीं है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षपकश्रेणियोळे तीर्त्थाहारसत्वरहितानिवृत्तिकरणनोळ् स ७७। बं। १। उ ३०॥ सूक्ष्मसांपरायक्षपकनोळ् स ७७। बं १। उ ३०। क्षीणकषायनोळ् स ७७। बं। ०। उ ३०॥ स्वस्थानसयोगकेवलियोळ् स ७७। बं। ०। उ ३०॥ समुद्घातकेवलियोळ् स ७७। बं। ०। उ २०। २६। २८। २९। ३०॥ अयोगिकेवलियोळ् स ७७। बं। ०। उ ८॥ मत्तं चरमसमयायोगिकेवलियोळ् तीर्त्थयुतमागि स १०। बं। ०। उ ९॥ तीर्त्थरहितायोगिकेवलिजिननोळ् स ९। बं। ०। उ ८॥

यितु सत्वस्थानैकाधिकरणदोळ् बंधोदयस्थानंगळ् योजिसल्पट्टुवनंतरं बंधोदयस्थानद्वयाधिकरणदोळ् सत्वस्थानंगळनाचार्य्यं गाथानवर्कादिदं निरूपिसिदपं :—

तेवीसबंधगे इगिवीसणवुदयेसु आदिमचउक्के।
बाणउदिणउदि अडचउबासीदी सत्तठाणाणि॥७६०॥

त्रयोविंशतिबंधके एकविंशति नवोदयेष्वादिमचतुष्के। द्वानवतिनवत्यष्टचतुर्द्व्यशीति सत्त्वस्थानानि॥

त्रयोविंशतिबंधकनोळे एकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळोळु आदिमस्थानचतुष्टयदोळु द्वानवतिनवत्यष्टाशीतिचतुरशीतिद्व्यशीतिसत्त्वस्थानंगळप्पुवु। बं २३। उ २१। २४। २५।

स ७८। बं १। उ ३०। क्षीणकषाये स ७८। बं ०। उ ३०। सयोगे स्वस्थाने स ७८। बं ०। उ ३१। समुद्घाते स ७८। बं ०। उ २१। २७। २९। ३०। ३१। अयोगे स ७८। बं ०। उ ९। तीर्थाहारासत्त्वेऽनिवृत्तिकरणे स ७७। बं १। उ ३०। सूक्ष्मसाम्पराये स ७७। बं १। उ ३०। क्षीणकषाये स ७७। बं ०। उ ३०। सयोगे स्वस्थाने स ७७। बं ०। उ ३०। समुद्घाते स ७७। बं ०। उ २०। २६। २८। २९। ३०। अयोगे स ७७। बं ०। उ ८। चरमसमये सतीर्थे स १०। बं ०। उ ९। वितीर्थे स ९। बं ०। उ ८॥७५९॥ ते सत्त्वस्थानाधारे बन्धोदयसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेन संयोज्य बन्धोदयद्वयाधारे सत्त्वस्थानान्याधेयतया गाथानवकेनाह—

उदय क्षीणकषाय पर्यन्त तीसका है। सयोगीमें स्वस्थान केवलीके तीसका और समुद्घात केवलीके इक्कीस, सत्ताईस, उनतीस, तीस, इकतीसका उदय है। अयोगीके नौका उदय है।

उन्यासीका सत्त्व तीर्थंकर रहित है। अठत्तरका सत्त्व तीर्थंकर सहित आहारक रहित है। सतहत्तरका सत्त्व तीर्थंकर और आहारकद्विक रहित है। इन तीनोंमें बन्ध उदय क्षपक अनिवृत्तिकरणसे क्षीणकषाय पर्यन्त तो जैसे अस्सीके सत्त्वमें कहे वैसे ही जानने। सयोगीमें उन्यासी और सतहत्तरके सत्त्वमें स्वस्थान केवलीके तीसका और समुद्घात केवलीके बीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीसका उदय है। अठत्तरके सत्त्वमें अस्सीके सत्त्वके समान जानना। अयोगीमें उन्यासी, सतहत्तरके सत्त्वमें आठका उदय है और अठत्तरके सत्त्वमें नौका उदय है। अयोगीके चरम समयमें दसका सत्त्व तीर्थरहित है। वहाँ बन्ध नहीं है। उदय क्रमसे नौ और आठका है॥७५९॥

इस प्रकार सत्त्वस्थानको आधार और बन्ध उदयको आधेय बनाकर व्याख्यान किया। आगे बन्ध उदयको आधार और सत्त्वको आधेय करके नौ गाथाओंसे कथन करते हैं। यहाँ इतनेके बन्ध और इतनेके उदयमें सत्त्व कितनेका पाया जाता है ऐसा कथन है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥

तेणुवरिमपंचुदये ते चेवंसा विवज्ज बासीदिं।
एवं पणछव्वीसे अडवीसे एक्कवीसुदये ॥७६१॥

तेनोपरिमपञ्चोदये ते चैवांशा विवर्ज्य द्व्यशीतिमेवं पंचषड्विंशत्यामष्टाविंशत्यामेकविंशत्युदये॥

तेन सह आ त्रयोविंशतिस्थानबंधयुतमागियुपरितनसप्तविंशत्यादि पंचस्थानोदयंगळोळु ते चैवांशाः आ पूर्व्वोक्तद्वानवत्यादि पंचसत्त्वस्थानंगळे यप्पुवावडं द्व्यशीतिस्थानं वर्ज्जिसल्पट्टुदक्कुं। बं २३। उ २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४॥ एवं पंच षड्विंशत्यां इंतु पंचविंशति षड्विंशतिस्थानद्वयबंधदोळुदयसत्वंगळरियल्पडुगुं। बं २५। २६॥ उ २१। २४। २५। २६। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥ उपरितनसप्तविंशत्यादि पंचोदयंगळोळु बं २५। २६। उ २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४॥ अष्टाविंशतिबंधमुमेकविंशत्युदयमु मुळ्ळरोळु सत्वंगळं पेळ्दपरु:—

बाणउदिणउदिसत्तं एवं पणुवीसयादिपंचुदये।
पणसगवीसे णउदी विगुव्वणे अत्थि णाहारे ॥७६२॥

द्वानवतिनवतिसत्त्वमेवं पंचविंशत्यादि पंचोदये पंच सप्तविंशत्यां नवतिर्व्विकुर्व्वणेऽस्ति नाहारे॥

द्वानवतियुं नवतियुं सत्त्वमक्कुं। बंध २८। उ २१। स ९२। ९०॥ इंतु पंचविंशत्यादि पंचोदयस्थानंगळोळमक्कुमादोडमल्लि पंचविंशति सप्तविंशतिस्थानोदयद्वयदोळु नवतिसत्त्वस्थानं

त्रयोविंशतिकबन्धे एकविंशतिकादिनवोदयेष्वादिमचतुष्के सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकनवतिकाष्टचतुर्द्व्यग्राशीतिकानि॥७६०॥

तेन त्रयोविंशतिकबन्धेन सहोपरितनसप्तविंशतिकादिपंचोदयेषु सत्त्वस्थानानि तान्येव पंच द्व्यशीतिकोनानि। पंचषड्ग्रविंशतिकबंधयोरुदयसत्त्वानि त्रयोविंशतिकबन्धोक्तप्रकारेण ज्ञातव्यानि॥७६१॥ अष्टाविंशतिकबन्धैकविंशतिकोदये तु—

द्वानवतिकनवतिकसत्त्वं स्यात्। एवं पंचविंशतिकादिपंचोदयेष्वपि। किंतु पंचसप्ताग्रविंशतिकयोर्नव-

---

तेईसके बन्धमें इक्कीस और नौ उदयस्थान होते हैं। उनमेंसे प्रथम चार उदयस्थानोंमें बानबे, नब्बे, अट्ठासी, चौरासी, बयासीके पाँच सत्त्वस्थान हैं॥७६०॥

ऊपरके सत्ताईस आदि पाँच उदयस्थानोंमें सत्त्वस्थान उक्त पाँचमें-से बयासीके बिना चार होते हैं। पच्चीस, छब्बीसके बन्धमें उदयस्थान और सत्त्वस्थान तेईसकी तरह ही हैं॥७६१॥

आगे अठाईसके बन्ध सहित इक्कीसके उदयमें कहते हैं—

अठाईसके बन्ध और इक्कीसके उदयमें बानबे और नब्बेका सत्त्व है। इसी प्रकार अठाईसके बन्धके साथ पच्चीस आदि पाँचके उदयमें सत्त्व होता है। इतना विशेष है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विक्रयर्द्धियुतरोळुंदु । आहारकर्द्धियुतरोळिल्ल । बं २८ । उ २६ । २८ । २९ । स ९२ । ९० ॥ आहारकर्द्धियुक्तरोळु बं २८ । उ २५ । २७ । स ९२ ॥

तेण णभिगितीसुदये बाणउदिचउक्कमेक्कतीसुदये ।
णवरि ण इगिणउदिपदं णववीसिगिवीसबंधुदये ॥७६३॥

तेन नभ एक त्रिंशदुदये द्वानवतिचतुष्कमेकत्रिंशदुदये । नवमस्ति नैक नवतिपदं नवविंशत्येकविंशति बंधोदये ॥

तेन सह आ अष्टाविंशतिस्थानबंधयुतमागि नभोयुतैकयुतत्रिंशदुदयंगळोळु क्रमदिदं द्वानवतिचतुष्कं सत्वमक्कुमल्लि एकत्रिंशदुदयदोळु शेषमुंटवागुवेंदोडे नैकनवतिपदं एकनवतिसत्वस्थानं संभविसदु । संदृष्टि । बं २८ । उ ३० । स ९२ । ९१ । ९० । ८८ ॥ मत्तं बंध २८ । उ ३१ । स ९२ । ९० । ८८ ॥ नवविंशतिबंधमुमेकविंशत्युदयदोळु सत्वस्थानंगळं पेळवपरु :—

तेणउदिसत्तसत्तं एवं पणछक्क वीसठाणुदये ।
चउव्वीसे बाणउदी णउदिचउक्कं च सत्तपदं ॥७६४॥

त्रिनवति सप्तसत्वमेवं पंच षड्विंशति स्थानोदये । चतुर्विंशत्यां द्वानवतिर्नवतिचतुष्कं च सत्वपदं ॥

नवविंशत्येकविंशति बंधोदयंगळोळु त्रिनवत्यादि सप्तसत्वस्थानंगळप्पुवु । बंध २९ । उ २१ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ एवं पंचविंशति षड्विंशतिस्थानोदयंगळोळक्कुं । बं २९ । उ २५ । २६ । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥ चतुर्विंशत्यां चतुर्विंशत्युदयस्थानदोळु द्वानवतियुं नवतिचतुष्कमुं सत्वमक्कुं । बं २९ । उ २४ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ ॥

तिकसत्त्वं सविक्रियर्द्धिषु नाहारकर्द्धिषु ॥७६२॥

तेनाष्टाविंशतिकबन्धनयुतशून्यैकाधिकत्रिंशत्कोदये सत्त्वं द्वानवतिकचतुष्कं किन्त्वेकत्रिंशत्कोदये नैकनवतिकं ॥७६३॥ नवविंशतिकबन्धैकविंशतिकोदये—

सत्त्वं त्रिनवतिकादीनि सप्त । एवं पंचषडग्रविंशतिकयोरपि । चतुर्विंशतिकोदये द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥७६४॥

पच्चीस और सत्ताईसके उदयमें जो नब्बेका सत्त्व है वह वैक्रियिक अपेक्षा है आहारक अपेक्षा नहीं है ॥७६२॥

अठाईसके बन्धके साथ तीस, इकतीसके उदयमें बानवे आदि चारका सत्त्व है। इतना विशेष है कि इकतीसके उदयमें इक्यानवेका सत्त्व नहीं है ॥७६३॥

उनतीसके बन्ध सहित इक्कीसके उदयमें तेरानवे आदि सातका सत्त्व है। इसी प्रकार उनतीसके बन्ध सहित पच्चीस छब्बीसके उदयमें भी सत्त्व है। उनतीसके बन्ध सहित चौबीसके उदयमें बानबे और नब्बे आदि चारका सत्त्व है ॥७६४॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

सगवीसचउक्कुदये तेणउदीछक्कमेवमिगितीसे ।
तिगिणउदी ण हि तीसे इगिपणसगअट्ठणवयवीसुदये ॥७६५॥

सप्तविंशतिचतुष्कोदये त्रिनवतिषट्कमेवमेकत्रिंशदुदये। त्र्येकनवतिर्नहि त्रिंशद्बंधे एक पंचसप्ताष्टनवविंशत्युदये ॥

नवविंशतिबंधमुं सप्तविंशत्यादिचतुःस्थानोदयंगळोळ् त्रिनवत्यादि षट्स्थानंगळ् सत्त्वमप्पुवु। बं २९। उ २७। २८। २९। ३०। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४॥ एवमेकत्रिंशदुदये इन्तेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानोदयदोळमक्कुमादोडं त्रिनवत्येकनवतिस्थानंगळ् सत्वमिल्ल। बंध २९। उ ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४॥

यिन्नु त्रिंशत्प्रकृतिबंधमुमेकविंशतिपंचविंशतिसप्तविंशत्यष्टाविंशतिनवविंशत्युदयंगळोळ् सत्वस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

तेणउदिछक्कसत्तं इगिपणवीसेसु अत्थि बासीदि ।
तेण छचउवीसुदये बाणउदी णउदिचउसत्तं ॥७६६॥

त्रिनवतिषट्कसत्वमेकपंचविंशत्यामस्ति द्व्यशीतिः। तेन षट्चतुर्विंशत्युदये द्वानवतिर्न्नवतिचतुः सत्वं ॥

त्रिनवत्यादिषट्कं सत्वमक्कुमवरोळेकविंशति पंचविंशत्युदयंगळोळ् द्व्यशीतिसत्वमक्कुमतरोदयंगळोळ् द्व्यशीतिसत्वं संभविसदेंदरियल्पडुगुं। बं ३०। उ २१। २५। २७। २८। २९। स ९३। ९२। ९१। ९०। ८८। ८४। ८२॥ तेन सह आ त्रिंशत्प्रकृतिबंधदोडने चतुर्विंशति षड्विंशत्युदयदोळ् द्वानवतियुं नवत्यादिचतुःस्थानसत्वमक्कुं। बंध ३०। उ २४। २६। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२॥

नवविंशतिकबन्धसप्तविंशतिकादिचतुर्षूदयेषु सत्त्वं त्रिनवतिकादिषट्कं। एवमेकत्रिंशत्कोदयेऽपि किंतु न त्रिनवतिकैकनवतिके द्वे ॥७६५॥ त्रिंशत्कबंधैकपंचसप्ताष्टनवाधिकविंशतिकोदयेष्वेवमाह —

सत्त्वं त्रिनवतिकादिषट्कं। तत्र द्व्यशीतिकं त्वेकपंचाधिकविंशतिकोदययोरेव नेतरोदयेषु। तेन त्रिंशत्कबन्धेन सह चतुःषडग्रविंशतिकोदययोः सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥७६६॥

उनतीसके बन्ध सहित सत्ताईस आदि चारके उदयमें सत्त्व तेरानबे आदि छहका है। इकतीसके उदयमें भी इसी प्रकार है। इतना विशेष है कि यहाँ तिरानबे, इक्यानबेका सत्त्व नहीं है ॥ ७६५॥

तीसके बन्धके साथ इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसके उदयमें सत्त्व तिरानबे आदि छहका है। इतना विशेष है कि बयासीका सत्त्व इक्कीस-पच्चीसके उदयमें ही होता है, अन्य उदयोंमें नहीं होता। अतः तीसके बन्ध सहित चौबीस, छब्बीसके उदयमें बानबे और नब्बे आदि चारका सत्त्व है ॥७६६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं खिगितीसे ण हि बासीदी एक्कतीसबंधेण ।
तीसुदये तेणउदी सत्तपदं एक्कमेव हवे ॥७६७॥

एवं खैयकत्रिंशदुदयेन न हि द्वयशीतिः एकत्रिंशद्बंधेन । त्रिंशदुदये त्रिनवतिः सत्वपदमेकमेव भवेत् ॥

एवमी प्रकारमे त्रिंशद्बंधमुं त्रिंशदेकत्रिंशदुदयमुमुळ्ळ जीवनोळु पूर्व्वोक्तसत्वस्थानंगळेयक्कुमादोडं द्वयशीतिसत्वमिल्ल । बं ३० । उ ३० । ३१ ॥ स ९२ । ८८ । ८४ ॥ एकत्रिंशद्बंधदोडने त्रिंशदुदयदोळु त्रिनवतिसत्वस्थानमेयक्कुं । बं ३१ । उ ३० । स ९३ ॥

इगिबंधट्ठाणेण दु तीसट्ठाणोदये णिरुद्धम्मि ।
पढमचऊसीदिचऊ सत्तट्ठाणाणि णामस्स ॥७६८ ॥

एकबंधस्थानेन तु त्रिंशत्स्थानोदये निरुद्धे । प्रथमचतुरशीतिचतुःसत्वस्थानानि नाम्नः ॥

एकबंधस्थानदोडने तु मत्ते त्रिंशत्स्थानोदयमवस्थानमागुत्तं विरलु नामकर्म्मद प्रथमचतुःसत्वस्थानंगळुमशीत्यादिचतुःसत्वस्थानंगळुं सत्वमप्पुवु । बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥

अनंतरं बंधसत्वस्थानद्वयाधिकरणदोळुदयस्थानंगळं गाथाषट्कदिदं पेळ्दपरु :—

तेवीसबंधठाणे दुखणउदडचदुरसीदिसत्तपदे ।
इगिवीसादीणउदओ बासीदे एक्कवीसचऊ ॥७६९॥

त्रयोविंशतिबंधस्थाने द्विखनवत्यष्टचतुरशीति सत्वपदे । एकविंशत्यादि नवोदयः द्वयशीत्यामेकविंशतिचत्वारि ॥

त्रिंशत्कबन्धत्रिंशत्कैकत्रिंशत्कोदये सत्त्वं प्राग्वन्न हि द्वयशीतिकं । एकत्रिंशत्कबन्धेन समं त्रिंशत्कोदये सत्त्वं त्रिनवतिकमेवैकं स्यात् ॥७६७॥

एकबन्धेनावस्थिते तु त्रिंशत्कोदये नाम्नः सत्त्वं प्रथमचतुष्कमशीतिकादिचतुष्कं च ॥७६८॥ अथ बन्धसत्त्वस्थानाधारे उदयस्थानान्याधेयत्वेन गाथाषट्केनाह—

तीसके बन्धके साथ तीस-इकतीसके उदयमें सत्त्व चौबीस आदिकी ही तरह है किन्तु बयासीका सत्त्व नहीं है। इकतीसके बन्धके साथ तीसके उदयमें सत्त्व तिरानबेका ही है ॥७६७॥

एकके बन्धके साथ तीसके उदयमें नामकर्मका सत्त्व तिरानबे आदि चार और अस्सी आदि चारका होता है ॥७६८॥

आगे बन्ध सत्त्वको आधार और उदयस्थानको आधेय बनाकर छह गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रयोविंशतिबंधस्थानदोळ् द्विनवतियुं खनवतियुं अष्टाशीतियुं चतुरशीतियुं सत्वस्थानंगळागुत्तं विरलेकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळप्पुवु। बं २३। स ९२। ९०। ८८। ८४। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ मत्तमा त्रयोविंशतिबंधकनोळु द्व्यशीतिसत्वस्थानमागुत्तं विरलेकविंशत्यादिचतुरुदयस्थानंगळप्पुवु। बं २३। स ८२। उ २१। २४। २५। २६॥

एवं पणछव्वीसे अडवीसे बंधगे दुणउदंसे।
इगिवीसादिणवुदया चउवीसट्ठाणपरिहीणा ॥७७०॥

एवं पंचषड्विंशत्यामष्टाविंशत्यां बंधके द्विनवत्यंशे। एकविंशत्यादिनवोदयाश्चतुर्विंशतिस्थानपरिहीनाः॥

एवं ई प्रकारदिदमे पंचविंशतिषड्विंशतिबंधस्थानद्वयदोळं सत्वोदयस्थानंगळप्पुवु। बं २५। २६। स ९२। ९०। ८८। ८४। उ २१। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥ मत्तमाद्विस्थानबंधदोळु द्व्यशीतिसत्वमागुत्तं विरलुदयंगळुमेकविंशत्यादिचतुःस्थानंगळप्पुवु। बं। २५। २६। स ८२। उ २१। २४। २५। २६॥ अष्टाविंशतिबंधकनोळ् द्विनवत्यंशदोळुदयस्थानंगळेकविंशत्यादि नवोदयस्थानंगळप्पुवादोडमल्लि चतुर्विंशत्युदयस्थानपरिहीनंगळप्पुवु। बं २८। स ९२। उ २१। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१॥

इगिणउदीए तीसं उदओ णउदीए तिरियसण्णिं वा।
अडसीदीए तीसदु णववीसे बंधगे तिणउदीए ॥७७१॥

एकनवत्यां त्रिंशदुदयो नवत्यां तिर्यक्संज्ञिवत्। अष्टाशीतौ त्रिंशद्द्वयं नवविंशत्यां बंधके त्रिनवत्यां॥

त्रयोविंशतिकबन्धस्थाने द्विकाधिकनवतिकाष्टचतुरधिकाशीतिकसत्त्वे उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव। तद्बंधद्व्यशीतिसत्त्वे एकविंशतिकादीनि चत्वारि ॥७६९॥

पंचषड्विंशतिकबंधयोरपि सत्त्वोदयस्थानान्येवं त्रयोविंशतिकवद्भवंति। अष्टविंशतिकबन्धे द्विनवतिकसत्त्वे एकविंशतिकादीनि नव चतुर्विंशतिकोनानि ॥७७०॥

तेईसके बन्धस्थानके साथ बानबे, नब्बे, अठासी, चौरासीके सत्त्वमें इक्कीस आदि नौ उदयस्थान होते हैं। तेईसके बन्धके साथ बयासीके सत्त्वमें इक्कीस आदि चार उदयस्थान हैं ॥७६९॥

पच्चीस-छब्बीसके बन्धके साथ सत्त्वस्थान और उदयस्थान तेईसके समान होते हैं। अठाईसके बन्ध सहित बानबेके सत्त्वमें चौबीसके बिना इक्कीस आदि नौ उदयस्थान होते हैं ॥७७०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टाविंशतिबंधमुमेकनवतिसत्वमुळ्ळनोळु त्रिंशदुदयमक्कुं । बं २८ । सत्व ९१ । उ ३० ॥ मत्तमष्टाविंशतिबंधमुं नवतिसत्वमुळ्ळनोळु तिर्य्यक्संज्ञियोळु पेळ्दुदयस्थानंगळप्पुवु । बं २८ । सत्व ९० । उ २१ । २६ । २८ । ३० । ३१ ॥ मत्तमष्टाविंशतिबंधमुमष्टाशीतिसत्वनोळु त्रिंशदेकत्रिंशदुदयंगळप्पुवु । बं २८ । स ८८ । उ ३० । ३१ ॥ नवविंशतिबंधकनोळु त्रिनवतिस्थानसत्वदोळु उदयस्थानंगळं पेळ्दपरु :—

इगिवीसादट्ठुदओ चउवीसूणो दुणउदिणउदितिये ।
इगिवीसणविगिणउदे णिरयं व छवीस तीसधिया ॥७७२॥

एकविंशत्याद्यष्टोदयः चतुर्विंशत्यूनः द्विनवतिनवतित्रय एकविंशति नव एकनवत्यां नरकवत् षड्विंशतित्रिंशदधिकाः ॥

एकविंशत्याद्यष्टोदयं गळप्पुवल्लि चतुर्विंशत्युदरहितंगळप्पुवु । बं २९ । स ९३ । उदय २१ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० ॥ मत्तमा नवविंशति बंधमुं द्विनवति नवतित्रयमुंसत्वमुळ्ळनोळु एकविंशत्यादिनवोदयस्थानंगळप्पुवु । बं २९ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ॥ मत्तं नवविंशतिबंधमुमेकनवतिसत्त्वयुतनोळु नरकगतियोळु पेळ्दुदयस्थानंगळुं मत्तं षड्विंशत्त्रिंशदुदयस्थानंगळुमधिकंगळप्पुवु । बंध २९ । सत्व ९१ । उदय २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । ३० ॥

बासीदे इगिचउपणछव्वीसा तीसबंधतिगिणउदे ।
सुरमिव दुणउदी णउदी चउसुदओ ऊणतीसं वा ॥७७३॥

द्व्यशीत्यामेकचतुःपंचषड्विंशतिः त्रिंशद्बंधत्र्येकनवत्यां सुरवत् द्विनवतिनवति चतुर्षूदय एकान्नत्रिंशद्वत् ॥

तद्बन्धैकनवतिकसत्त्वे उदयस्त्रिंशत्कं । तद्बन्धनवतिकसत्त्वे तिर्यक्संज्ञ्युक्तैकषडष्टनवदशैकादशाधिकविंशतिकानि । तद्बन्धाष्टाशीतिकसत्त्वे त्रिंशत्कैकत्रिंशत्के द्वे ॥७७१॥ नवविंशतिकबंधे त्रिनवतिकसत्त्वे आह—

उदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्यष्टौ चतुर्विंशतिकोनानि । पुनस्तद्बन्धद्विनवतिकनवतिकत्रयसत्त्वे एकविंशतिकादीनि नव । पुनः तद्बन्धैकनवतिकसत्त्वे नरकगत्युक्तैकपंचसप्ताष्टनवाधिकविंशतिकानि षट्विंशतिकत्रिंशत्काधिकानि ॥७७२॥

अठाईसके बन्धके साथ इक्यानबेके सत्त्वमें उदय तीसका होता है । अठाईसके बन्धके साथ नब्बेके सत्त्वमें संज्ञीतिर्यंचमें कहे इक्कीस, छब्बीस, अठाईस, उनतीस, तीस, इकतीसके उदयस्थान हैं । अठाईसके बन्धके साथ अठासीके सत्त्वमें तीस-इकतीसका उदय है ॥७७१॥

उनतीसके बन्धके साथ तिरानबेके सत्त्वमें चौबीसको छोड़ इक्कीस आदि आठ उदयस्थान हैं । उनतीसके बन्धके साथ बानबेका तथा नब्बे आदि तीनके सत्त्वमें इक्कीस आदि नौ उदयस्थान हैं । उनतीसके बन्धके साथ इक्यानबेके सत्त्वमें नरकगतिमें कहे इक्कीस, पच्चीस, सत्ताईस, अठाईस, उनतीसके तथा छब्बीस और तीसके उदयस्थान होते हैं ॥७७२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवविंशतिबंधमुं द्व्यशीतिसत्त्वमुळ्ळनोळुदयस्थानंगळुमेकविंशति चतुर्व्विंशति पंचविंशति-षड्विंशतिगळुमप्पुवु । बं २९ । स ८२ । उ २१ । २४ । २५ ।२६ ।। त्रिंशद्बंधमुं त्र्येकनवतिसत्त्व-मुळ्ळरोळुदयस्थानंगळु देवगतियोळु पेळ्दुवक्कुं । बं ३० । स ९३ । ९१ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।। मत्तं त्रिंशद्बंधमुं द्विनवतिनवति चतुःस्थानसत्वंगळनुळ्ळरोळुदयस्थानंगळु नवविंशति-बंधकनोळु पेळ्दुवक्कुं । बंध ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ।। मत्तं त्रिंशद्बंधकनोळु द्व्यशीतिसत्त्वस्थानदोळुदयंगळु नवविंशतिबंध-कनोळें तंतेकविंशत्यादि चतुःस्थानंगळप्पुवु । बं ३० । स ८२ । उ २१ । २४ । २५ । २६ ।।

इगितीसबंधठाणे तेणउदे तीसमेव उदयपदं ।
इगिबंधतिणउदिचऊ सीदिचउक्केवि तीसुदओ ।।७७४।।

एकत्रिंशद्बंधस्थाने त्रिनवत्यां त्रिंशदेवोदयपदं । एकबंधत्रिनवतिचतुरशीतिचतुष्केऽपि त्रिंशदुदयः ।।

एकत्रिंशद्बंधस्थानदोळु त्रिनवतिसत्वमागुत्तं विरलु त्रिंशदुदयस्थानमों देयक्कुं । बं ३१ । स ९३ । उ ३० ।। एकबंधमुं त्रिनवतिचतुष्कमु मशीति चतुष्कमुं सत्त्वमुळ्ळवर्ग्गळोळु त्रिंशदुदय-मों देयक्कुं । बं १ । सत्व ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ ।। उ ३० ।। नामबंधरहित-रोळु सत्त्वोदयंगळु विवक्षिसल्पडवेकें दोडे द्व्याधारैकाधेयं विवक्षितमप्पुदरिंदं ।।

अनंतरमुदयसत्त्वस्थानद्व्याधिकरणदोळु बंधस्थानंगळं गाथादशकदिंदं पेळ्दपरु :—

तद्बन्धद्व्यशीतिकसत्त्वे उदयस्थानान्येकचतुष्पंचषडधिकविंशतिकानि, त्रिंशत्कबंधत्र्येकनवतिकसत्त्वे देवगत्युक्तानि पंच । तद्बन्धद्विनवतिकनवतिकादिचतुष्कसत्त्वे नवविंशतिकबन्धोक्तानि नव । तद्बंधद्व्यशीतिक-सत्त्वे तु नवविंशतिकबन्धवच्चत्वारि ।।७७३।।

एकत्रिंशत्कबन्धस्थाने त्रिनवतिकसत्त्वे उदयस्थानं त्रिंशत्कं । एकबन्धत्रिनवतिकादिचतुष्काशीतिकादि-चतुष्कसत्त्वेऽपि तदेव । अग्रे बंधाभावे द्व्याधारैकाधेयत्वं न संभवति ।।७७४।। अथोदयसत्त्वस्थानाधारे बन्ध-स्थानान्याधेयत्वेन गाथादशकेनाह—

उनतीसके बन्धके साथ बयासीके सत्त्वमें इक्कीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीसके उदयस्थान हैं । तीसके बन्धके साथ तिरानबे-इक्यानबेके सत्त्वमें देवगतिमें कहे पाँच उदय-स्थान होते हैं । तीसके बन्धके साथ बानबे तथा नब्बे आदि चारके सत्त्वमें उनतीसके बन्धके साथ कहे नौ उदयस्थान होते हैं । तीसका बन्ध और बयासीके सत्त्वमें उनतीसके बन्धके साथकी तरह चार उदयस्थान होते हैं ।।७७३।।

इकतीसके बन्धके साथ तिरानबेके सत्त्वमें तीसका उदयस्थान होता है । एकके बन्ध-के साथ तिरानबे आदि चारका तथा अस्सी आदि चारका सत्त्व होनेपर उदयस्थान तीसका ही होता है । आगे बन्धका अभाव होनेसे दो आधार एक आधेय सम्भव नहीं है ।।७७४।।

आगे उदय और सत्त्वस्थानको आधार बन्धस्थानको आधेय बनाकर दस गाथाओंसे कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इगिवीसट्ठाणुदये तिगिणउदे णवयवीसदुगवंधो ।
तेण दुखणउदीसत्ते आदिमछक्कं हवे बंधो ॥७७५॥

एकविंशतिस्थानोदये त्र्येकनवत्यां नवविंशतिद्विकबंधः । तेन द्विखनवतिसत्वे आदिमषट्कं भवेद्बंधः ॥

एकविंशतिस्थानोदयदोळु त्रिनवत्येकनवतिसत्वंगळोळु नवविंशतियुं त्रिंशत्प्रकृतिबंधमक्कुं । उ २१ । स ९३ । ९१ । बं २९ । ३० ॥ मत्तमा एकविंशत्युदयदोडने द्विनवति खनवति सत्वद्वयमागलादिमषड्बंधस्थानंगळप्पुवु । उ २१ । स ९२ । ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥

एवमडसीदितिदये ण हि अडवीसं पुणो वि चउवीसे ।
दुखणउदडसीदितिये सत्ते पुव्वं व बंधपदं ॥७७६॥

एवमष्टाशीतित्रये नह्यष्टाविंशतिः पुनरपि चतुर्विंशत्यां । द्विखनवत्यष्टाशीतित्रये सत्वे पूर्ववद्बंधपदं ॥

एवं इंतेकविंशत्युदयदोळष्टाशीतित्रयसत्त्वदोळु अष्टाविंशतिस्थानबंधमिल्ल । उ २१ । स ८८ । ८४ । ८२ ॥ बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ॥ पुनरपि-चतुर्विंशत्युदयदोळु द्वानवति खनवत्यष्टाशीतित्रितयसत्त्वस्थानंगळोळु पूर्व्वोक्तत्रयोविंशत्यादि पंचस्थानंगळे बंधमप्पुवु । उ २४ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ॥

पणवीसे तिगिणउदे एगुणतीसं दुगं दुणउदीए ।
आदिमछक्कं बंधो णउदिचउक्केवि णडवीसं ॥७७७॥

पंचविंशत्यां त्र्येकनवत्यामेकान्नत्रिंशद्द्विकं द्विनवत्यामादिमषट्कं बंधो नवतिचतुष्केऽपि नाष्टाविंशतिः ॥

एकविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वयोर्बन्धस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे । पुनस्तदुदयेन द्विनवतिकनवतिकसत्त्वयोराद्यान्येव षट् ॥७७५॥

पुनः तदुदयाष्टाशीतिकादित्रयसत्त्वे बन्धस्थानानि तान्येव षट् न ह्यष्टाविंशतिकं । चतुर्विंशतिकोदये द्वानवतिकनवतिकाष्टाशीतिकादित्रयसत्त्वे पूर्वोक्तान्येव पंच ॥७७६॥

इक्कीसके उदयसहित तिरानवेके सत्त्वमें उनतीस, तीस दो बन्धस्थान हैं । इक्कीसके उदय सहित बानबे-नब्बेके सत्त्वमें आदिके छह बन्धस्थान हैं ॥७७५॥

इक्कीसके उदय सहित अठासी आदि तीनके सत्त्वमें बन्धस्थान अठाईसके बिना आदिके छहमें-से पाँच हैं । चौबीसके उदय सहित बानबे, नब्बे और अठासी आदि तीनके सत्त्वमें पूर्वोक्त पाँच बन्धस्थान हैं ॥७७६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचविंशतिस्थानोदयदोळु त्रिनवतियुमेकनवतियुं सत्त्वमागुत्तं विरलेकान्नत्रिंशत् त्रिंशद्बंधंगळप्पुवु । उ २५ । स ९३ । ९१ । बं २९ । ३० ॥ मत्तमा पंचविंशत्युदयदोळु द्विनवतिसत्त्वमागिरलु बंधस्थानंगळुमादिमषट्कमक्कुं । उ २५ । स ९२ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ मत्तमा पंचविंशत्युदयमुं नवत्यादि चतुःसत्त्वंगळोळु अष्टाविंशतिरहिताद्यषड्बंधस्थानंगळप्पुवु । उ २५ । स ९० । ८८ । ८४ । ८२ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ॥

छव्वीसे तिगिणउदे उणतीसं बंध दुगखणउदीए ।
आदिमछक्कं एवं अडसीदितिए ण अडवीसं ॥७७८॥

षड्विंशत्यां त्र्येकनवत्यामूनत्रिंशद्बंधः द्विकखनवत्यामाद्यषट्कमेवमष्टाशीतित्रये नाष्टाविंशतिः ॥

षड्विंशत्युदयदोळु त्रिनवत्येकनवति सत्त्वंगळोळु नवविंशतिबंधस्थानमोंदेयक्कुं ॥ उ २६ । स ९३ । ९१ ॥ बं २९ ॥ मत्तमा षड्विंशत्युदयदोळु द्विनवतियुं खनवतियुं सत्त्वमागलु त्रयोविंशत्यादियादादिम षड्बंधस्थानंगळप्पुवु । उ २६ । स ९२ । ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ एवं षड्विंशत्युदयदोळष्टाशीतित्रयसत्त्वदोळु अष्टाविंशतिबंधरहितत्रयोविंशत्यादिषट्कमक्कुं । उ २६ । स ८८ । ८४ । ८२ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ॥

सगवीसे तिगिणउदे णववीसदुबंधयं दुणउदीए ।
आदिमछण्णउदितिए एवं अडवीसयं णत्थि ॥७७९॥

सप्तविंशत्यां त्र्येकनवत्यां नवविंशतिद्विकबंध द्विनवत्यामादिम षट्नवतित्रये एवमष्टाविंशतिर्नास्ति ।

पंचविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बन्धस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्के द्वे । पुनः तदुदये द्विनवतिकसत्त्वे आदिमषट्कं । पुनस्तदुदयनवतिकादिचतुःसत्त्वेष्वपि तदेवादिमषट्कमष्टाविंशतिकोनं ॥७७७॥

षड्विंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वयोर्बंधस्थानानि नवविंशतिकं । पुनस्तदुदये द्विनवतिकनवतिकसत्त्वे आद्यानि षट् । पुनस्तदुदयेऽष्टाशीत्यादित्रयसत्त्वे तान्येव षट् नाष्टाविंशतिकं ॥७७८॥

पच्चीसके उदय सहित तिरानबे और इक्यानबेके सत्त्वमें उनतीस, तीस दो बन्धस्थान हैं। पच्चीसका उदय और बानबेके सत्त्वमें आदिके छह बन्धस्थान हैं। पच्चीसके उदय सहित नब्बे आदि चारके सत्त्वमें भी अठाईसके बिना आदिके छह बन्धस्थान हैं ॥७७७॥

छब्बीसके उदयसहित तिरानबे और इक्यानबेके सत्त्वमें उनतीसका बन्धस्थान है। छब्बीसके उदयसहित बानबे-नब्बेके सत्त्वमें आदिके छह बन्धस्थान हैं। छब्बीसके उदयके साथ अठासी आदि तीनके सत्त्वमें अठाईसके बिना आदिके छह बन्धस्थान हैं ॥७७८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तविंशत्युदयदोळु त्रिनवतियुमेकनवतियुं सत्त्वमागलु नवविंशतिद्वयं बंधमक्कुं। उद २७। स ९३। ९१। बं २९। ३०॥ मत्तमा सप्तविंशत्युदयमुं द्विनवतियुं सत्त्वमादोडे आद्य षड्बंधस्थानंगळप्पुवु। उ २७। स ९२। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ मत्तमा सप्तविंशत्युदयमुं नवतित्रयमुं सत्त्वमागलुमंते बंधंगळु मष्टाविंशतिपोरगागि आद्यषड्बंधस्थानंगळप्पुवु। उ २७। स ९०। ८८। ८४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥

अडवीसे तिगिणउदे उणतीसदु दुजुदणउदि णउदितिये।
बंधो सगवीसं वा णउदीए अत्थि [1]णडवीसं ॥७८०॥

अष्टाविंशत्यां त्र्येकनवत्यामेकान्नत्रिंशद्द्विकं द्वियुतनवतिनवतित्रये। बंधः सप्तविंशतिवत् नवत्यामस्त्यष्टाविंशतिः॥

अष्टाविंशतिस्थानोदयदोळु त्र्येकनवतिसत्त्वमागुत्तं विरलु नवविंशतियुं त्रिंशद्बंधमुमक्कुं। उ २८। स ९३। ९१। बं २९। ३०॥ मत्तमष्टाविंशत्युदयमुं द्वानवतियुं नवत्यादित्रयसत्त्वस्थानंगळोळु बंधस्थानंगळु सप्तविंशत्युदयदोळु पेळ्वंत संभविसुगुमल्लि नवतिस्थानदोळमष्टाविंशतिबंधमुंटु। उ २८। स ९२। ९०। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ मत्तं उ २८। स ८८। ८४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥

अडवीसमिवुणतीसे तीसे तेणउदिसत्तगे बंधो।
णववीसेक्कत्तीसं इगिणउदे अट्ठवीसदुगं ॥७८१॥

अष्टाविंशतिरिव नवविंशत्यां त्रिंशदुदये त्रिनवतिसत्त्वेकबंधो। नवविंशत्येकत्रिंशदेकनवत्यामष्टाविंशतिद्विकं॥

सप्तविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बन्धस्थानानि नवविंशतिकाद्विद्वयं। पुनस्तदुदये द्विनवतिकसत्त्वे आद्यानि षट्। पुनस्तदुदये नवतिकादित्रिसत्त्वे तान्येव षट् नाष्टाविंशतिकमस्ति ॥७७९॥

अष्टाविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बन्धस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे। तदुदये द्वानवतिकसत्त्वे नवतिकादित्रिसत्त्वे च सप्तविंशतिकोदयस्येव न नवतिकसत्त्वेऽष्टाविंशतिकबंधोऽस्ति ॥७८०॥

सत्ताईसके उदय सहित तिरानबे, इक्यानबेके सत्त्वमें उनतीस आदि दो बन्धस्थान हैं। सत्ताईसके उदय सहित बानबेके सत्त्वमें आदिके छह बन्धस्थान हैं। सत्ताईसका उदय नब्बे आदि तीनके सत्त्वमें अठाईसके बिना आदिके छह बन्धस्थानोंमें-से पाँच बन्धस्थान हैं ॥७७९॥

अठाईसके उदय सहित तिरानबे, इक्यानबेके सत्त्वमें उनतीस-तीस दो बन्धस्थान हैं। अठाईसका उदय बानबेके और नब्बे आदि तीनके सत्त्वमें सत्ताईसके उदय सहितमें कहे अनुसार ही बन्धस्थान होते हैं। इतना विशेष है कि नब्बेके सत्त्वमें अठाईसका बन्ध नहीं होता ॥७८०॥

---

१. अडवीसं [ता०]।

नवविंशत्युदयदोळु अष्टाविंशत्युदयदोळु पेळ्दंते सत्वस्थानंगळुं बंधस्थानंगळुमप्पुवु। उ २९। स ९३। ९१। बं २९। ३०॥ मत्तं उ २९। सत्व ९२। ९० बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ मत्तं उ २९। स ८८। ८४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥ त्रिंशत्प्रकृत्युदयदोळु त्रिनवतिसत्वमादोडे नवविंशतियुमेकत्रिंशत्प्रकृतिस्थानंगळु बंधमप्पुवु। उ ३०। स ९३। बं २९। ३१॥ मत्तं त्रिंशदुदयमुमेकनवतिसत्वमुमुळ्ळ नरकगमनाभिमुखनप्प मनुष्यमिथ्यादृष्टि तीर्त्थसत्कर्म्मंगे अष्टाविंशति नवविंशति बंधंगळप्पुवु। उ ३०। स ९१। बं २८। २९॥

तेण दुणउदे णउदे अडसीदे बंधमादिमं छक्कं।
चुलसीदेवि य एवं णवरि ण अडवीसबंधपदं ॥७८२॥

तेन द्विनवत्यां नवत्यामष्टाशीतौ बंध आद्यषट्कं। चतुरशीतावप्येवं नवमस्ति नाष्टाविंशतिबंधपदं॥

तेन सह आ त्रिंशत्प्रकृत्युदयदोडने द्विनवतियुं नवतियुमष्टाशीतियुं सत्वमागुत्तं विरलु बंधमाद्यषट्स्थानंगळप्पुवु। उ ३०। स ९२। ९०। ८८। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०॥ मत्तमा त्रिंशदुदयमुं चतुरशीतिसत्वपददोळमंते षड्बंधस्थानंगळप्पुवु। विशेषमुंटदाउदेंदोडे अष्टाविंशतिपदं बंधमिल्ल। उ ३०। स ८४। बं २३। २५। २६। २९। ३०॥

नवविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे द्वानवतिकसत्त्वे अष्टचतुरधिकाशीतिकसत्त्वे च बन्धस्थानान्यष्टाविंशतिकोदयस्येव ज्ञातव्यानि। त्रिंशत्कोदये त्रिनवतिकसत्त्वे नवविंशतिकैकत्रिंशत्के द्वे। तदुदयैकनवतिकसत्त्वे नरकगमनाभिमुखतीर्थसत्त्वमनुष्यमिथ्यादृष्टेरष्टनवाष्टाविंशतिके द्वे ॥७८१॥

तदुदयेन सह द्विनवतिकनवतिकाष्टाशीतिकसत्त्वे बन्धस्थानान्याद्यषट्कं। पुनस्तदुदये चतुरशीतिकसत्त्वेऽपि तदेव षट्कं। किंतु नाष्टाविंशतिकबन्धस्थानं ॥७८२॥

उनतीसके उदयके साथ तिरानबे-इक्यानबेके सत्त्वमें, बानबे-नब्बेके सत्त्वमें और अठासी-चौरासीके सत्त्वमें बन्धस्थान अठाईसके उदय सहितमें कहे अनुसार ही होते हैं। तीसके उदयसहित तिरानबेके सत्त्वमें उनतीस-तीस दो बन्धस्थान हैं। तीसके उदयके साथ इक्यानबेके सत्त्वमें नरकगमनके सम्मुख तीर्थंकर सत्त्ववाले मिथ्यादृष्टि मनुष्यके अठाईस, उनतीस दो बन्धस्थान होते हैं ॥७८१॥

तीसके उदयके साथ बानबे-नब्बे, अठासीके सत्त्वमें आदिके छह बन्धस्थान हैं। तीसके उदयके साथ चौरासीके सत्त्वमें भी अठाईसके बन्धस्थानके बिना वे ही छह बन्धस्थान होते हैं ॥७८२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीसुदयं विगितीसे सजोगबाणउदिणउदितियसत्ते ।
उवसंतचउक्कुदये सत्ते बंधस्स ण वियारो ॥७८३॥

त्रिंशदुदयवदेकत्रिंशदुदये स्वयोग्यद्वानवतिनवतित्रयसत्त्वे उपशांतचतुष्कोदये सत्त्वे बंधस्य न विचारः ॥

त्रिंशत्प्रकृत्युदयदोळु पेळ्दंते एकत्रिंशत्प्रकृत्युदयदोळं सत्वबंधस्थानंगळप्पुवादोडं मल्लि स्वयोग्यद्वानवतिनवतित्रयसत्वस्थानंगळोळ् बंधस्थानंगळरियल्पडुगुं । उ ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० ॥ मत्तं उ ३१ । स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० ॥ उपशांतकषायादिचतुर्गुणस्थानंगळोळुदयसत्वस्थानंगळरियल्पडुगुमा नाल्कु गुणस्थानंगळोळु बंधस्थानविचारं माडल्पडदेकेंदोडे नामकर्म्मबंधरहितरप्पुदरिंदं । उपशांतकषायंगे उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ॥ बंधशून्यं ॥ क्षीणकषायंगे उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ बंधशून्यं ॥ सयोगकेवलियोळु उ व ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ ॥ बंधशून्यं ॥

अयोगिकेवलियोळु उ । ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ । बंधशून्यं ॥

णामस्स य बंधादिसु दुतिसंजोगा परूविदा एवं ।
सुदवणवसंतगुणगणसायरचंदेण सम्मदिणा ॥७८४॥

नाम्नश्च बंधादिषु द्वित्रिसंयोगाः प्ररूपिता एवं । श्रुतवनवसंतगुणगणसागरचंद्रेण सन्मतिना ॥

एकत्रिंशत्कोदये स्वयोग्यद्वानवतिकनवतिकाष्टाशीतिकसत्त्वेषु चतुरशीतिकसत्त्वे च बन्धस्थानानि त्रिंशत्कोदयवदाद्यानि षडष्टाविंशतिकं विना पंच । उपशांतकषायादिचतुर्गुणस्थानानामुदयसत्त्वस्थानेषु नामबन्धस्थानविचारो नास्ति तेषु तदभावात् । तथाहि—

उपशान्तकषाये उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । बं० । क्षीणकषाये उ ३० । स ८० । ७९ ७८ । ७७ । बं. । सयोगे उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । बं. । अयोगे उ ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ । बं. ॥७८३॥

इकतीसके उदयमें अपने योग्य बानबे, नब्बे, अठासीके सत्त्वमें तथा चौरासीके सत्त्वमें बन्धस्थान क्रमसे तीसके उदय सहितमें कहे अनुसार आदिके छह तथा अठाईसके बिना पाँच होते हैं । उपशान्त कषाय आदि चार गुणस्थानोंमें जो उदयस्थान और सत्त्वस्थान हैं उनमें नामकर्मके बन्धस्थानोंका विचार नहीं है; क्योंकि उनमें नामकर्मका बन्ध नहीं है। उपशान्त कषायमें उदय तीसका और सत्त्व तिरानबे आदि चारका है । क्षीणकषायमें उदय तीसका सत्त्व अस्सी आदि चारका है । सयोगीमें उदय तीसका व इकतीसका और सत्त्व अस्सी आदि चारका है । अयोगीमें उदय नौ और आठका तथा सत्त्व अस्सी आदि चारका व दस और नौका है ॥७८३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु भगवदर्हत्परमेश्वरचारुचरणारविंदद्वंद्ववंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरुमंडलाचार्य्यं महावादवादीश्वररायवादीपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरिसिद्धांतचक्रवर्त्तिचारुचरणारविंदरजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्णविरचितमप्प गोम्मटसारकर्णाटवृत्ति-जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळ् कर्म्मकांडबंधोदयसत्वयुतस्थानप्ररूपणमहाधिकारं निरूपितमादुदु ॥

नाम्नश्च बन्धादिषु द्वित्रिसंयोगाः प्ररूपिताः एव श्रुतवनवसंतगुणगणसागरचंद्रेण सन्मतिना ॥७८४॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां
कर्मकांडे बन्धोदयसत्त्वस्थानप्ररूपणो नाम पंचमोऽधिकारः ॥५॥

इस प्रकार नामकर्मके बन्ध उदय सत्त्वस्थानोंमें द्विसंयोगी-त्रिसंयोगी भंग जैनागमरूपीवनको विकसित करनेमें वसन्तऋतुके समान और गुणसमूहरूपी समुद्रके लिए चन्द्रके समान भगवान् महावीरने कहे हैं ॥७८४॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव
परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य
महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्त चक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले
श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्व प्रदीपिकाकी
अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा
टीकामें कर्मकाण्डके अन्तर्गत बन्ध-उदय सत्त्वस्थान प्ररूपणा
नामक पाँचवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आस्रवाधिकारः ॥६॥

अनंतरं प्रत्ययाधिकारं पेळलुपक्रमिसि तदादियोळु निर्व्विघ्नदिदं तत्परिसमाप्तिनिमित्तमागि स्वेष्टगुरुजननमस्कारमं माडिदपं :—

णमिऊण अभयणंदिं सुदसायरपारगिंदणंदिगुरुं ।
वरवीरणंदिणाहं पयडीणं पच्चयं वोच्छं ॥७८५॥

नत्वाभयनंदिमुनिं श्रुतसागरपारगेंद्रनंदिगुरुं। वरवीरनंदिनाथं प्रकृतीनां प्रत्ययं वक्ष्यामि ॥

अभयनंदिमुनीश्वरनुमं । श्रुतसागरपारगेंद्रणंदिगुरुडमं । वरवीरणंदिनाथनुमं नमस्करिसि । प्रकृतिगळ प्रत्ययमं पेळदपें ॥

अनंतरं प्रकृतिगळ मूलोत्तरप्रत्ययंगळ नामनिर्द्देशमं माडुत्तलुमवरभेदमुमं पेळदपरु :—

मिच्छत्तं अविरमणं कसायजोगा य आसवा होंति ।
पण बारस पणुवीसं पण्णरसा होंति तब्भेया ॥७८६॥

मिथ्यात्वमविरमणं कषाययोगाश्चास्रवा भवंति । पंच द्वादश पंचविंशति पंचदश भवंति तद्भेदाः ॥

मिथ्यात्वमुमविरमणमुं कषायमुं योगमुमें दितु ई नाल्कुं ज्ञानावरणादिप्रकृतिगळगे आस्रवंगळप्पुवु । आस्रवमें देनें दोडे आस्रवंत्यागच्छंति ज्ञानावरणादिकर्म्मरूपतां कार्म्मणस्कंधा एभिरित्यास्रवा—एंबी निरुक्तिसिद्धंगळप्प मिथ्यात्वादिजीवपरिणामंगळु ज्ञानावरणादिकर्म्मागमकारणं-

---

अथ प्रत्ययाधिकारमुपक्रममाणो निर्विघ्नतत्परिसमाप्त्यर्थं स्वेष्टगुरून्नमस्यति—

अभयनन्दिमुनीश्वरं श्रुतसागरपारगेन्द्रनन्दिगुरुं वरवीरनन्दिनाथं च नत्वा प्रकृतीनां प्रत्ययं वक्ष्यामि ॥७८५॥

मिथ्यात्वमविरमणं कषायो योगश्चेति चत्वारो मूलप्रत्यया आस्रवा भवन्ति, आस्रवन्त्यागच्छन्ति

आगे प्रत्ययाधिकारको प्रारम्भ करते हुए उसकी निर्विघ्न समाप्तिके लिए अपने इष्ट गुरुको नमस्कार करते हैं। प्रत्यय अर्थात् कर्मोंके आनेमें कारण आस्रवके अधिकारको प्रारम्भ करते हैं—

अभयनन्दि नामक मुनीश्वर, शास्त्ररूप समुद्रके पारगामी इन्द्रनन्दि गुरु और उत्कृष्ट वीरनन्दि स्वामीको नमस्कार करके कर्मप्रकृतियोंका कारण जो आस्रव है उसको कहूँगा ॥७८५॥

मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग, ये चार मूल प्रत्यय अर्थात् आस्रव हैं। क्योंकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळिवक्कास्रवंगळें दुं प्रत्ययंगळुमें दु मन्वर्थनामंगळप्पुवु । तद्भेदाः अवरभेदंगळु यथाक्रमदिवं पंच द्वादशपंचविंशतिपंचदशप्रमितंगळप्पुउ । संदृष्टि । मि ५ । अ १२ । क २५ । यो १५ । कूडि ५७ ॥

अनंतरमी मूलप्रत्ययंगळु नाल्कुमं मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगळोळु संभवंगळं पेळदपरु :—

चदुपच्चइगो बंधो पढमेऽणंतरतिगे तिपच्चइगो ।
मिस्सगबिदियं उवरिमदुगं च देसेक्कदेसम्मि ॥७८७॥

चतुःप्रत्ययिको बंधः प्रथमे अनंतरत्रिके त्रिप्रत्ययिकः । मिश्रकद्वितीयमुपरितनद्विकं च देशैकदेशे ॥

प्रथमे मिथ्यादृष्टियोळु चतुःप्रत्ययिकमप्प बंधमक्कुं । चतुःप्रत्ययिकमें बुदें तें दोडे चत्वारः प्रत्ययाश्चतुःप्रत्ययास्ते संत्यस्मिन्निति ठप्रत्यये चतुःप्रत्ययिकः । मिथ्यात्वाऽविरमण कषाययोगमें ब नाल्कुं प्रत्ययंगळनुळ्ळ बंधमक्कुमें बुदर्थमनंतरत्रये सासादनमिश्रासंयतरुगळें ब अनंतरगुणस्थान-त्रयदोळु त्रिःप्रत्ययिको बंधः मिथ्यात्वभेदरहितमागि अविरमणकषाययोगमें ब त्रिप्रत्ययिकबंध-मक्कुं । देशैकदेशे देशसंयतनोळु देशसंयतंगे देशैकदेशत्वमें तें दोडे देशेन लेशेन एकमसंयमं दिशति परिहरतीति देशैकदेशस्तस्मिन्नें वितु ई निरुक्तिसिद्धमप्पुदरिंदमा देशसंयतनोळु त्रिप्रत्ययिक-

---

कर्मरूपतां कार्मणस्कन्धा एभिरिति कारणात् । तेषां भेदाः क्रमेण पंच द्वादश पंचविंशतिः पंचदश च भवन्ति । मिलित्वोत्तरप्रत्यया अमी सप्तपंचाशत् ॥७८६॥ अथ मूलप्रत्ययान् गुणस्थानेष्वाह—

मूलप्रत्यया गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ बन्धश्चतुष्प्रत्ययिकः । सासादनादित्रये मिथ्यात्वं विना त्रिप्रत्ययिकः । देशेन लेशेन एकमसंयमं दिशति परिहरतीति देशैकदेशः देशसंयतः । तत्रापि त्रिप्रत्ययिकः । ते प्रत्यया

इनके द्वारा कार्मणस्कन्ध 'आस्रवन्ति' अर्थात् कर्मरूपताको प्राप्त होते हैं। उनके भेद क्रमसे पाँच, बारह, पच्चीस, पन्द्रह होते हैं । सब मिलकर सत्तावन उत्तर प्रत्यय होते हैं ॥७८६॥

विशेषार्थ—एकान्त, विनय, संशय, विपरीत, अज्ञान ये पाँच मिथ्यात्व हैं। पाँच इन्द्रियों और छठे मनके वशीभूत होना तथा पाँच स्थावर और छठे त्रसकी दया नहीं करना बारह अविरत हैं। अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन, क्रोध, मान, माया, लोभ ये सोलह कषाय तथा हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद ये नौ नोकषाय इस प्रकार पच्चीस कषाय हैं। सत्य, असत्य, उभय, अनुभय रूप चार मनोयोग, सत्य असत्य, उभय अनुभयरूप चार वचनयोग, औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र, कार्मण ये सात काय-योग, इस तरह पन्द्रह योग हैं। ये सब सत्तावन उत्तर प्रत्यय हैं ॥७८६॥

आगे मूल प्रत्ययोंको गुणस्थानोंमें कहते हैं—

गुणस्थानोंमें मूलप्रत्यय इस प्रकार हैं—मिथ्यादृष्टिमें बन्धके चारों प्रत्यय हैं। सासादन आदि तीनमें मिथ्यात्वके बिना तीन प्रत्यय हैं। देश अर्थात् लेशरूपसे एक असंयमको जो 'दिशति' अर्थात् त्यागता है उसे 'देशैकदेश' या देशसंयत कहते हैं। उसमें भी बन्धके

बंधमक्कुमा प्रत्ययंगळवाउवें दोडे मिश्रकद्वितीयमुपरितनद्विकं च मिश्रं विरमणेन मिश्रकं मिश्रकं च। द्वितीयं चाविरमणं तन्मिश्रकद्वितीयं। विरतियोळ्कूडिदविरमणमुं कषायमुं योगमुमितु त्रिप्रत्ययंगळनुळ्ळ बंधं देशसंयतनोळक्कुमें बुदर्त्थं ॥

उवरिल्लपंचये पुण दु पच्चया जोगपच्चओ तिण्हं।
सामण्णपच्चया खलु अट्ठण्णं होंति कम्माणं ॥७८८॥

उपरितनपंचके पुनर्द्वौ प्रत्ययौ योगप्रत्ययस्त्रयाणां। सामान्यप्रत्ययाः खल्वष्टानां भवंति कर्म्मणां ॥

देशसंयतनिंदं मेलणवेदुं गुणस्थानंगळोळु कषाययोगगळें बी द्विप्रत्ययंगळेयप्पुवु। मेलणुपशांतकषायक्षीणकषायसयोगकेवलिगळें ब मूरुं गुणस्थानंगळोळु योगप्रत्ययमो देयक्कुमिंती सामान्यचतुष्प्रत्ययंगळें दुं कर्म्मंगळेयप्पुवु स्फुटमागि। संदृष्टि। मि ४। सा ३। मि ३। अ ३। दे ३। प्र २। अ २। अ २। अ २। सू २। उ १। क्षी १। स १। अ ०॥

अनंतरं गुणस्थानंगळोळुत्तरप्रत्ययंगळं गाथाद्वयदिदं पेळदपरु :—

पणवण्णा पण्णासा तिदालछादाल सत्ततीसा य।
चदुवीसा बावीसा बावीसमपुव्वकरणोत्ति ॥७८९॥

पंचपंचाशत् पंचाशत् त्रिचत्वारिंशत् षट्चत्वारिंशत् सप्तत्रिंशत् चतुर्विंशतिर्द्वाविंशतिर्द्वाविंशतिरपूर्व्वकरणपर्यंतं ॥

थूले सोलसपहुडी एगूणं जाव होदि दस ठाणं।
सुहुमादिसु दस णवयं णवयं जोगिम्मि सत्तेव ॥७९०॥

स्थूले षोडशप्रभृत्येकोनं यावद्भवति दशस्थानं। सूक्ष्मादिषु दशनवकं नवकं योगिनि सप्तैव ॥

विरमणेन मिश्रमविरमणं कषायो योगश्चेति ॥७८७॥

पुनः उपरितनेषु पंचसु द्वौ द्वौ प्रत्ययौ तौ योगकषायौ। उपशान्तकषायादिषु एको योगप्रत्ययः। इत्येवं खलु सामान्यप्रत्यया अष्टकर्मणां भवन्ति ॥७८८॥ अथोत्तरप्रत्ययान् गुणस्थानेषु गाथाद्वयेनाह—

तीन ही कारण हैं। इतना विशेष है कि योग कषायके साथ अविरति विरतिसे मिली हुई है ॥७८७॥

ऊपरके पाँच गुणस्थानोंमें योग और कषाय दो ही प्रत्यय हैं। उपशान्त कषाय आदि तीनमें एक ही प्रत्यय योग है। इस प्रकार गुणस्थानोंमें आठ कर्मोंके कारण सामान्य प्रत्यय हैं ॥७८८॥

मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अ.	अ.	अ.	सू.	उ.	क्षी.	स.	अ.
४	३	३	३	३	२	२	२	२	२	१	१	१	०

आगे उत्तर प्रत्ययोंको गुणस्थानोंमें कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टियोळाहारकद्विकं पोरगागि पंचपंचाशदुत्तरप्रत्ययंगळप्पु ५५ ववरोळु सासादनंगे मिथ्यात्वपंचकमं कळेदु शेषपंचाशदुत्तरप्रत्ययंगळप्पु ५० ववरोळु मिश्रंगौदारिकमिश्रयोगमुमं वैक्रियिकमिश्रयोगमुमं कार्म्मणकाययोगमुमनंतानुबंधिकषायचतुष्टयमुमंनितु सप्तप्रत्ययंगळं कळेदु शेषत्रिचत्वारिंशदुत्तर प्रत्ययंगळप्पु ४३ ववरोळु असंयतंगे औदारिकमिश्र वैक्रियिकमिश्रकार्म्मणकाययोगमेंबी मूरुं प्रत्ययंगळं कूडुत्तं विरलु षट्चत्वारिंशदुत्तरप्रत्ययंगळप्पुवु। ४६। अवरोळु देशसंयतंगे औदारिकमिश्र वैक्रियिकमिश्र वैक्रियिककाययोग कार्म्मणकाययोग त्रसासंयममप्रत्याख्यानावरणकषायचतुष्कमिंतु नवप्रत्ययंगळं कळेदु शेषसप्तत्रिंशदुत्तरप्रत्ययंगळप्पुवु। ३७॥ अवरोळु प्रमत्तसंयतंगे शेषासंयमैकादशंगळु प्रत्याख्यानावरणकषायचतुष्कमुमंनितुं पदिनय्दु प्रत्ययंगळं कळदु शेष द्वाविंशतिप्रत्ययंगळोळाहारकद्वयमं कूडिदोडे चतुर्व्विंशतिप्रत्ययंगळप्पु २४ ववरोळु अप्रमत्तसंयतंगाहारकद्विकं कळेदु शेषद्वाविंशति उत्तरप्रत्ययंगळप्पुवु २२। अपूर्वकरणंगमवेयुत्तरप्रत्ययंगळु द्वाविंशतिगळप्पु २२ ववरोळु स्थूलनोळु षण्णोकषायंगळं कळेदु शेष षोडशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १६ ववरोळु नपुंसकवेदमं कळेदोडातंगे पंचदशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १५ ववरोळु स्त्रीवेदमं कळेदोडातंगे चतुर्द्दशोत्तर प्रत्ययंगळप्पु १४। ववरोळु पुंवेदमं कळेदोडातंगे त्रयोदशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १३। ववरोळु क्रोधकषायमं कळेदोडातंगे द्वादशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १२। ववरोळु मानकषायमं कळेदोडातंगेकादशोत्तर प्रत्ययंगळप्पु ११ ववरोळु मायाकषायमं कळेदोडातंगे दशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १० ववरोळु सूक्ष्मसांपरायंगे बादरलोभमं कळेदु सूक्ष्मलोभमं कूडिदोडे दशोत्तरप्रत्ययंगळप्पु १०। ववरोळुपशांतकषायंगे सूक्ष्मलोभमं कळेदु नवोत्तरप्रत्ययंगळप्पु ९।

उत्तरप्रत्ययाः गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टावाहारकद्वयं नेति पंचपंचाशत्। सासादने मिथ्यात्वपंचकं नेति पंचाशत्। मिश्रे औदारिकमिश्रवैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगानन्तानुबन्धिनो नेति त्रिचत्वारिंशत्। असंयते मिश्रापनीतयोगत्रयमस्तीति षट्चत्वारिंशत्। देशसंयते तत्त्रयवैक्रियिकयोगत्रसासंयमाप्रत्याख्यानचतुष्कं नेति सप्तत्रिंशत्। प्रमत्ते शेषैकादशासंयमप्रत्याख्यानचतुष्कं नाहारकद्विकमस्तीति चतुर्विंशतिः। अप्रमत्तादिद्वये तद्द्विकं नेति द्वाविंशतिः। स्थूले षण्णोकषाया नेति षोडश। षंढवेदो नेति पंचदश। स्त्रीवेदो नेति चतुर्दश। पुंवेदो नेति त्रयोदश। क्रोधो नेति द्वादश। मानो नेत्येकादश। माया नेति दश। सूक्ष्मसाम्पराये बादरलोभो

गुणस्थानोंमें उत्तर प्रत्यय इस प्रकार हैं—मिथ्यादृष्टिमें आहारक, आहारक मिश्र न होनेसे पचपन प्रत्यय हैं। सासादनमें पाँच मिथ्यात्व न होनेसे पचास प्रत्यय हैं। मिश्रमें औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्मण योग, अनन्तानुबन्धी चतुष्क न होनेसे तैंतालीस प्रत्यय हैं। मिश्रमें घटाये तीन योगोंको मिलानेसे असंयतमें छियालीस प्रत्यय हैं। देशसंयतमें वे तीनों मिश्रयोग, वैक्रियिककाय योग, त्रसहिंसा रूप अविरति और अप्रत्याख्यान कषाय चार न होनेसे सैंतीस प्रत्यय हैं। प्रमत्तमें शेष ग्यारह अविरति और प्रत्याख्यानावरण चार न होनेसे तथा आहारकद्विकके होनेसे चौबीस प्रत्यय हैं। अप्रमत्त आदि दोमें आहारकद्विक न होनेसे बाईस प्रत्यय हैं। अनिवृत्तिकरणमें छह नोकषाय न होनेसे सोलह, नपुंसक वेद न होनेसे पन्द्रह, स्त्रीवेद न होनेसे चौदह, पुरुषवेद घटनेसे तेरह, संज्वलन क्रोध न रहनेसे बारह, मान न रहनेपर ग्यारह, माया न रहनेपर दस प्रत्यय हैं। सूक्ष्म साम्पराय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ववरोळ् क्षीणकषायंगेयुमा नवोत्तरप्रत्ययंगळप्पुवु। सयोगिकेवलि भट्टारकंगे सत्यानुभयमनो· वाग्योगंगळु नाल्कुं औदारिकयोगद्विकमुं कार्म्मणकाययोगमुमितु सप्तप्रत्ययंगळप्पुवु ।७। अयोगिजिनस्वामिगळोळ् प्रत्ययं शून्यमक्कुं। संदृष्टि :—मि ५५। सा ५०। मि ४३। अ ४६। दे ३७। प्र २४। अ २२। अ २२। अ १६। १५। १४। १३। १२। ११। १०। सू १०। उ ९। क्षी ९। स ७। अ ०॥ इंतु गुणस्थानदोळ् पेळल्पट्ट प्रत्ययंगळगे प्रत्ययव्युच्छित्ति प्रत्ययानुदयं- गळेंब भंगद्वयमुमना प्रत्ययंगळमुमं पेळ्वल्लियुपयोगिगाथाषट्कं केशववर्ण्णगळिंदं पेळल्पडुगुं।

पण चदुसुण्णं णवयं पण्णारस दोण्णि सुण्ण छक्कं च।
एक्केक्कं दस जाव य एक्कं सुण्णं च चारि सग सुण्णं॥
दोण्णि य सत्त य चोद्दसऽणुदएवि येगारवो स तेत्तीसं।
पणतीसद्दु सिगिदाळं सत्तेताळट्ठु दाळ दुसु पण्णं॥

प्रत्यय व्युच्छित्ति	मि ५	सा ४	मि	अ ९	दे १५	प्र २	अ	अ ६	अ १
प्रत्ययोदय	५५	५०	४३	४६	३७	२४	२२	२२	१६
प्रत्ययानुदय	२	७	१४	११	२०	३३	३५	३५	४१

१	१	१	१	बा १	सू	उ०	क्षी ४	स ७	अ०
१५	१४	१३	१२	११	१०	९	९	७	०
४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४८	५०	५७

न सूक्ष्मलोभोऽस्तीति दश। उपशान्तक्षीणकषाययोः सोऽपि नेति नव। सयोगे सत्यानुभयमनोवागौदारिकद्विक· कार्मणयोगाः सप्त। अयोगे शून्यं ॥७८९॥७९०॥ अत्र व्युच्छित्त्यनुदयोपयोगिगाथाषट्कं केशववर्णिभिरुच्यते—

में बादर लोभ नहीं है, सूक्ष्मलोभ है अतः दस प्रत्यय हैं। उपशान्त कषाय, क्षीणकषायमें सूक्ष्मलोभ न रहनेसे नव प्रत्यय हैं। सयोगीमें सत्य और अनुभय मनोयोग, सत्य और अनुभय वचनयोग औदारिक, औदारिक मिश्र, कार्माण ये सात प्रत्यय हैं। अयोगीमें कोई प्रत्यय नहीं ॥७८९-७९०॥

आगे प्रत्ययोंकी व्युच्छित्ति या अनुदयको बतलानेवाली छह गाथाएँ कर्णाटक वृत्तिके रचयिता केशववर्णीने अपनी टीकामें कही हैं उनका अर्थ इस प्रकार है—

	मि.	सा.	मि.	अ.	दे.	प्र.	अ.	अ.	सू.	नि.	बृ	ति	का	र	ण	सू.
प्रत्यय व्यु.	५	४	०	९	१५	२	०	६	१	१	१	१	१	१	१	१
प्रत्ययोदय	५५	५०	४३	४६	३७	२४	२२	२२	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	१०
प्रत्ययानुदय	२	७	१४	११	२०	३३	३५	३५	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४७

मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें क्रमसे पांच चार शून्य नव पन्द्रह दो, शून्य छह, पश्चात् जहाँ दस आश्रव रहते हैं वहाँ तक एक एक, पुनः एक, शून्य चार सात शून्य, इतने आस्रवोंकी व्युच्छित्ति होती है। उन गुणस्थानोंमें अनुदय अर्थात् आश्रवोंका अभाव क्रमसे दो, सात, चौदह, ग्यारह, बीस, तैंतीस; पैंतीस, पैंतीस, इकतालीस, सैंतालीस, अड़तालीस, अड़तालीस, पचासका होता है।

टिप्पणः—पूर्वोक्तपंचादि व्युच्छित्तिप्रत्ययानां रेगानी नाम कथ्यते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु प्रत्ययंगळगे भंगत्रममरियल्पडुगु। मिल्लि मिथ्यादृष्ट्यादिगळोळावुवु व्युच्छित्तिप्रत्ययंगळे दोडे गाथाचतुष्टयदिदं पेळल्पडुगुं :—

मिच्छे पण मिच्छत्तं पढमकसायं तु सासणे मिस्से।
सुण्णं अविरदसम्मे बिदियकसायं विगुव्वदुगकम्मं॥
ओराळमिस्सतसवह णवयं देसम्मि अविरदेक्कारा।
तदियकसायं पण्णर पमत्तविरदम्मि हारदुगछेदो॥
सुण्णं पमादरहिदेऽपुव्वे छण्णोकसाय वोच्छेदो।
अणियट्टिम्मि य कमसो एक्केक्कं वेदतिय कसायतियं॥
सुहुमे सुहुमो लोहो सुण्णं उवसंतगेसु खीणेसु।
अळियुभयवयणमणचउ जोगिम्मि य सुणह वोच्छामि॥
सच्चाणुभयं वयणं मणं च ओराळकायजोगं च।
ओराळमिस्सकम्मं उवयारेणेव सब्भाओ॥

इंतुक्त प्रत्ययंगळ्गे विशेषकथनाधिकारंगळं निर्देशिसिदपरुः—

अवरादीणं ठाणं ठाणपयारा पयारकूडा य।
कूडुच्चारणभंगा पंचविहा होंति इगिसमये॥७९१॥

जघन्यादीनां स्थानं स्थानप्रकाराः प्रकारकूटाश्च। कूटोच्चारणभंगाः पंचविधा भवंत्येकस्मिन्समये॥

ते के ?—

अथ विशेषं वक्तुमधिकारान्निर्दिशति—

मिथ्यात्वमें पाँच मिथ्यात्वकी व्युच्छित्ति होती है। अर्थात् ये पाँच ऊपरके गुणस्थानोंमें नहीं रहते। सासादनमें प्रथम चार कषाय, मिश्रमें शून्य, अविरतमें दूसरी चार कषाय, वैक्रियिकद्विक कार्माण औदारिक मिश्र त्रसहिंसा ये नौ, देशसंयतमें ग्यारह अविरति तीसरी चार कषाय ये पन्द्रह, प्रमत्तविरतमें आहारकद्विक, अप्रमत्तमें शून्य, अपूर्वकरणमें छह नोकषाय, अनिवृत्तिकरणमें क्रमसे एक-एक करके तीन वेद तीन कषाय, सूक्ष्म साम्परायमें सूक्ष्म लोभ, उपशान्त कषायमें शून्य, क्षीणकषायमें असत्य और उभय मनोयोग तथा वचनयोगकी व्युच्छित्ति होती है। सयोगीमें सत्य अनुभय वचन तथा मन और औदारिक औदारिक मिश्र कार्माण ये सात योग उपचारसे हैं॥७९०॥

आगे आस्रवोंका विशेष कथन करनेके लिए अधिकार कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानंगळुमा स्थानप्रकारंगळुमा स्थानगतप्रत्ययसंख्याहेतु कूटप्रकारंगळुं कूटोच्चारणविधानमुं भंगंगळुमेंब पंचप्रकारंगळु प्रत्ययंगळगे एककालदोळप्पुवु ॥

अनंतरमा पंचप्रकारंगळं क्रमदिदं मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु गाथाषट्कंदिदं पेळदपरु।

दस अट्ठारस दसयं सत्तर णव सोलसं च दोण्हंपि।
अट्ठय चोद्दस पणयं सत्ततिये दुतिदुगेगमेगमदो ॥७९२॥

दशाष्टावश दश सप्तदश नव षोडश द्वयोरपि। अष्ट चतुर्द्दश पंचसप्तत्रये द्वित्रिद्विकमेकमेकमतः ॥

मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगलोळु क्रमदिदं जघन्यादि स्थानंगळु दशाष्टावश मिथ्यादृष्टियोळु दशप्रत्ययस्थानं सर्व्वजघन्यमक्कुं। अल्लिदं मेलेकैकप्रत्ययाधिक क्रमदिदं नडदुत्कृष्टमष्टादशप्रत्ययस्थानमक्कुं। मिथ्यादृष्टि १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १७। १८॥ सासादनंगे दशसप्तदश दश प्रत्ययस्थानं जघन्यमक्कुमल्लिदं मेलेकैकप्रत्ययवृद्धिक्रमदिदं नडदुत्कृष्टं सप्तदश प्रत्ययस्थानमक्कुं। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १७॥ मिश्रंगे नव षोडश नव प्रत्ययस्थानं जघन्यमक्कुं। मेलेकैकवृद्धिक्रमदिदं नडदुत्कृष्टं षोडशप्रत्ययस्थानमक्कुं। मिश्र ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६॥ असंयतंगे द्वयोरपि शब्ददिदं नवप्रत्ययस्थानमादि यागि एकैकवृद्धिक्रमदिदं नडदुत्कृष्टं षोडशप्रत्ययस्थानमक्कुं। असंय ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६॥ देशसंयतनोळष्ट चतुर्द्दश अष्टप्रत्ययादि चतुर्द्दशप्रत्ययस्थानपर्य्यंतं सप्तस्थानंगळप्पुवु देशसंय ८। ९। १०। ११। १२। १३। १४॥ प्रमत्तसंयतादिगुणस्थानत्रयदोळु प्रत्येकं पंचसप्त पंच षट्

जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानानि स्थानप्रकाराः कूटप्रकाराः कूटोच्चारणविधानभंगाश्चेति पंचप्रकाराः प्रत्ययानामेककाले भवन्ति ॥७९१॥ तान् प्रकारान् क्रमेण गाथाषट्केनाह—

एकजीवस्यैकस्मिन् समये सम्भवत्प्रत्ययसमूहः स्थानं। तच्च गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ जघन्यं दशकं मध्यमं एकैकाधिकं यावदुत्कृष्टमष्टादशकं। सासादने दशकं जघन्यं तथा मध्यममुत्कृष्टं सप्तदशकं। मिश्रे नवकं जघन्यं तथा मध्यममुत्कृष्टं षोडशकं। तथाऽसंयमेऽपि द्वयोरपीति वचनात्। देशसंयतेऽष्टकं जघन्यं तथा मध्यमं

एक कालमें प्रत्ययोंके पाँच प्रकार होते हैं—जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट स्थान, स्थान प्रकार, कूट प्रकार और कूटोच्चारण विधान ॥७९१॥

उन प्रकारोंको क्रमसे छह गाथाओंके द्वारा कहते हैं—

एक जीवके एक समयमें होनेवाले प्रत्ययोंके समूहको स्थान कहते हैं। उन्हें गुणस्थानोंमें कहते हैं—मिथ्यादृष्टिमें जघन्य दसका, और उत्कृष्ट स्थान अठारहका है। दससे एक-एक अधिक उत्कृष्टसे पूर्व सब मध्यमस्थान हैं। इसका आशय यह है कि मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें एक जीवके एक कालमें सत्तावन प्रत्ययोंमें-से जघन्य दस होते हैं। मध्यम ग्यारहसे सतरह तक होते हैं, उत्कृष्ट अठारह होते हैं। इसी प्रकार आगे भी जानना। सासादनके जघन्य दस, मध्यम एक-एक अधिक उत्कृष्ट सतरह होते हैं। मिश्रमें जघन्य नव, मध्यम एक-एक अधिक उत्कृष्ट सोलह होते हैं। अविरतमें भी मिश्रकी तरह जघन्य नव और उत्कृष्ट सोलह होते हैं। देश संयतमें जघन्य आठ, मध्यम एक एक अधिक, उत्कृष्ट चौदह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तप्रत्ययस्थानत्रयमक्कुं प्रमत्त ५ । ६ । ७ ॥ अप्रमत्त ५ । ६ । ७ ॥ अपूर्व्वकरणंगे ५ । ६ । ७ ॥ अनिवृत्तिकरणनोळु द्वित्रिद्विप्रत्ययस्थानमुं त्रिप्रत्ययस्थानमुमक्कुं । अनिवृत्ति २ । ३ ॥ सूक्ष्मसाम्परायंगे द्विकं द्विप्रत्ययस्थानमक्कुं । सू २ ॥ उपशान्तकषायंगे एकं एकप्रत्ययस्थानमक्कुं । उपशान्तक १ ॥ क्षीणकषायंगे एकं एकप्रत्ययस्थानमक्कुं । क्षी १ ॥ सयोगकेवलिगळगे अत एकमेंदितेकप्रत्ययस्थानमक्कुं । स १ ॥ अयोगिकेवलिगळगे प्रत्ययं शून्यमक्कुं । अ० ॥ इंतु गुणस्थानदोळु जघन्यादिस्थानंगळु पेळल्पट्टुविवक्के स्थानव्यपदेशमेंतादुवें दोडे कस्य जीवस्यैकस्मिन्समये सम्भवप्रत्ययसमूहः स्थानमें दितक्कुमनन्तरं स्थानप्रकारंगळं पेळ्दपरु—

एक्कं च तिण्णि पंच य हेट्ठुवरीदो दु मज्झिमे छक्कं ।
मिच्छे ठाणपयारा इगिदुगमिदरेसु तिण्णि देसोत्ति ॥७९३॥

एकश्च त्रयः पंच च अधउपरितस्तु मध्यमे षट्कं । मिथ्यादृष्टौ स्थानप्रकारा एकद्विकमितरेषु त्रयो देशसंयतपर्य्यंतं ॥

मिथ्यादृष्टौ मिथ्यादृष्टियोळु अध उपरितः जघन्यं मोदलागि केळगणिंदमुमुत्कृष्टं मोदलागि मेगणिंदमुं स्थानप्रकाराः स्थानभेदंगळु क्रमदिदमेक त्रिपंच प्रमितंगळप्पुवु । मध्यमे शेषमध्यमंगळोळेल्लं षट् षट् स्थानभेदंगळप्पुवु—

तु मत्ते इतरसासादनादि देशसंयतपर्य्यंतमाद गुणस्थानंगळोळु स्थानप्रकारंगळुमध उपरितः जघन्यदत्तणिंदमुमुत्कृष्टदत्तणिंदमुमेकद्विकंगळुं मध्यमदोळु त्रिभेदंगळुमप्पुवु । संदृष्टि ॥

चतुर्दशकं उत्कृष्टं । प्रमत्तादित्रये प्रत्येकं पंचकसप्तकानि । अनिवृत्तिकरणे द्विकत्रिके । सूक्ष्मसाम्पराये द्विकं । उपशान्तकषायादित्रये एककं । अयोगे शून्यं ॥७९२॥ अथ स्थानप्रकारानाह—

मिथ्यादृष्टेः स्थानेष्वधस्तनानि दशकैकादशकद्वादशकानि त्रीणि उपरितनान्यष्टादशकसप्तदशकषोडशकानि त्रीणि च क्रमेण एकत्रिपंच भवन्ति । मध्यमानि त्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकानि षड् भवन्ति । सासादनादिदेशसंयतांतानां अधस्तनानि प्रथमद्वितीयानि उपरितनानि चरमद्विचरमाणि चैकद्विप्रकाराणि । मध्यमानि

हैं । प्रमत्त आदि तीनमें-से प्रत्येकमें जघन्य पाँच, मध्यम छह, उत्कृष्ट सात हैं । अनिवृत्तिकरणमें जघन्य दो । मध्यम नहीं है । उत्कृष्ट तीन है । सूक्ष्म साम्परायमें जघन्य आदि भेद बिना दोका एक ही स्थान है । उपशान्त कषाय आदिमें जघन्य आदि भेदके बिना एकका एक ही स्थान है । अयोगीमें शून्य है ॥७९२॥

इन स्थानोंके प्रकार कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें कहे स्थानोंमें-से नीचेके दस, ग्यारह, बारह तीन स्थान, और ऊपरके अठारह, सतरह, सोलह, तीन स्थान, इनमें क्रमसे एक तीन पाँच प्रकार हैं । अर्थात् दस और अठारहके स्थान तो एक-एक प्रकारके ही हैं । ग्यारह और सतरहके स्थान तीन-तीन प्रकारके हैं । बारह और सोलहके स्थान पाँच-पाँच प्रकारके हैं । मध्यके तेरह, चौदह, पन्द्रहके स्थान छह-छह प्रकारके हैं । सासादनसे देशसंयत पर्यन्त नीचेके पहला और दूसरा स्थान तथा ऊपरका अन्तका व अन्तसे नीचेका स्थान एक और दो प्रकारके हैं । अर्थात् पहला और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्या	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	सासा.	१०	११	१२
	१	३	५	६	६	६	५	३	१		१	२	३

१३	१४	१५	१६	१७	मिश्र ९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
३	३	३	२	१	१	२	३	३	३	३	२	१

असं	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	देश सं	८	९	१०	११	१२	१३	१४
	१	२	३	३	३	३	२	१		१	२	३	३	३	२	१

शेषप्रमत्त संयतादिगळोळेल्ल मेकैकभेदमेयक्कुं ॥

प्रमत्त	९	६	७	अप्रमत्त	५	६	७	अपूर्व	५	६	७	अनि	२	२	सू	२	उ १	क्षी १	सयो १
	१	१	१		१	१	१		१	१	१		१	१		१	१	१	१

अनंतरं कूटप्रकारंगळं पेळ्दपरु :—

भयदुगरहियं पढमं एक्कदरजुदं दुसहियमिदि तिण्णि ।

सामण्णा तियकूडा मिच्छा अणहीणतिण्णि वि य ॥७९४॥

भयद्विकरहितं प्रथमं एकतरयुतं द्विसहितमिति त्रीणि । सामान्यानि त्रिकूटानि मिथ्यादृष्टि-संबंधीनि अनंतानुबंधिहीन त्रीण्यपि च ॥

त्रित्रिप्रकाराणि । प्रमत्तादीनां सर्वस्थानान्येकैकप्रकाराणि ॥७९३॥ अथ कूटप्रकारानाह—

अन्तका स्थान तो एक-एक प्रकारका है तथा दूसरा और अन्तके-से लगता निचला स्थान दो-दो प्रकारका है। इनके मध्य जितने स्थान हैं वे सब तीन प्रकारके हैं। प्रमत्तादिके सब ही स्थान एक प्रकारके हैं ॥७९३॥

मिथ्यात्व—	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
	१	३	५	६	६	६	५	३	१

सासादन—	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
	१	२	३	३	३	३	२	१

मिश्र—	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	१	२	३	३	३	३	२	१

असंयत—	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	१	२	३	३	३	३	२	१

देशसंयत—	८	९	१०	११	१२	१३	१४
	१	२	३	३	३	२	१

प्रमत्तादि तीन	५	६	७
	१	१	१

अनिवृ.	२	३	सूक्ष्म	२	क्षी. स.	१
	१	१		१		१

इन स्थानोंके जाननेके लिए कूटोंके प्रकार कहते हैं—

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

भयजुगुप्साद्वयरहितं प्रथमकूटमक्कुं । भयजुगुप्सान्यतरयुतं द्वितीयकूटमक्कुं । भयजुगुप्साद्वययुतं तृतीयकूटमक्कुमितु सामान्यदिदं मूलकूटंगळु मूरप्पुवु ॥ मिथ्यादृष्टिगनंतानुबंधिसहित कूटंगळु मूरु मनंतानुबंधिरहितकूटंगळु मूरुमंतु षट्कूटंगळप्पुवु। सासादनंगे मिथ्यात्वपंचकरहित सामान्यत्रिकूटंगळु अप्पुवु। मिश्रंगे मिथ्यात्वपंचकमुमनंतानुबंधियुं मिश्रयोगत्रयमुं रहितमागि सामान्यमूलकूटंगळु मूरप्पुवु। असंयतंगे मिश्रनंते त्रिकूटंगळप्पुवादडं मिश्रयोगत्रयमुं संभविसुगुं। देशसंयतंगे पंचमिथ्यात्वमुमनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानकषायद्वयमुं त्रसासंयममुं वैक्रियिककाययोगमुं पोरगागि मिश्रयोगत्रयमुं पोरगागियुं त्रिकूटंगळप्पुवु। प्रमत्तसंयतंगे संज्वलनचतुष्टय वेदत्रय द्विकद्वय नवयोगंगळोळाहारद्वयमुं कूडि पन्नोंदुयोगयुत त्रिकूटंगळप्पुवु। अप्रमत्तकंगाहारकद्विकरहित प्रमत्तन त्रिकूटंगळेयप्पुवु। अपूर्वकरणंगमप्रमत्तन त्रिकूटं गलेयप्पुवु। अनिवृत्तिकरणंगे भागे पर्य्यंतमक्कुं। सूक्ष्मसांपरायंगे सूक्ष्मलोभमुं नवयोगंगळुमप्पुवु। उपशांत क्षीणकषायरुगळ्गे नव नव योगंगळेयप्पुवु। सयोगकेवलिगळ्गे सप्तयोगंगळप्पुवु। अयोगियोळु योगं शून्यमक्कुं। संदृष्टि :—

पंच मिथ्यात्वानि षडिंद्रियाण्येकद्वित्रिचतुष्पंचषट्कायवधान् चत्वारि क्रोधादिचतुष्काणि त्रीन्वेदान् हास्ययुग्मारतियुग्मे आहारकद्वयं विना त्रयोदशयोगांश्चोपर्युपरि तिर्यग्रचयित्वा इदं भयजुगुप्सारहितं प्रथमं, तदन्यतरयुतं द्वितीयं, तद्द्वययुतं तृतीयमिति सामान्यमूलकूटानि त्रीणि। अनन्तानुबन्ध्यूनानि च त्रीणि मिलित्वा मिथ्यादृष्टौ षड् भवन्ति। सासादने तानि सामान्यकूटानि पंच मिथ्यात्वोनानि। मिश्रे एतानि चतुरनन्तानुबन्धि-

---

कूटोंके आकार रचना करके सबसे नीचे पाँच मिथ्यात्व एक-एक करके बराबर स्थापित करो; क्योंकि एक जीवके एक कालमें एक ही मिथ्यात्व होता है। उनके ऊपर पाँच इन्द्रिय और एक मन इन छहमें-से एक जीवके एक कालमें एक ही की प्रवृत्ति होती है सो छह जगह एक-एक लिखो। उनके ऊपर छह कायकी हिंसामें-से एक जीव एक समयमें एक कायकी हिंसा करता है या दो-तीन, चार, पाँच, छहकायकी हिंसा करता है सो एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह के अंक क्रमसे बराबरमें लिखना। उनके ऊपर सोलह कषायोंमें-से एक जीवके एक कालमें अनन्तानुबन्धी आदि चार क्रोधोंका या चार मानोंका या चार मायाका या चार लोभोंका उदय पाया जाता है सो इनको स्थापित करना। अर्थात् चार जगह चारके अंक लिखो। उनके ऊपर तीन वेदोंमें-से एक जीवके एक समय एक वेदका ही उदय होता है सो तीन जगह एक-एक लिखो। उनके ऊपर एक जीवके एक समयमें हास्य रति या शोक अरतिका उदय होता है सो दो जगह दोके अंक लिखो। उनके ऊपर पन्द्रह योगोंमें-से आहारकद्विक मिथ्यादृष्टिके नहीं होता अतः तेरह योगोंमें-से एक जीवके एक समयमें एक ही योग पाया जानेसे तेरह जगह एक-एक का अंक लिखना। इस प्रकारसे तीन कूट करो। उनमेंसे पहला कूट भय जुगुप्सासे रहित है अतः ऊपर बिन्दी लिखो। दूसरा कूट भय जुगुप्सामें-से एक सहित है इससे ऊपर-ऊपर दो जगह एकका अंक लिखो। तीसरा कूट भय जुगुप्सा दोनोंसे सहित है अतः ऊपर दोका अंक एक जगह लिखो। क्योंकि किसी जीवके किसी कालमें भय जुगुप्सा दोनों नहीं होते, या दोनोंमें कोई एक होता है या दोनों ही होते हैं। यथा—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टि			
यो १३।	१३	१३	१३
भजु ।०।	१	१	२
हा ।२। अ २।	२।२।	२।२।	२।२
वे १।१।१।	१।१।१।	१।१।१।	१।१।१।
क ४।४।४।४।	४।४।४।४।	४।४।४।४।	४।४।४।४
प्र १।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६
इं १।१।१।१।१।१।	१।१।१।१।१।१।	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१
मि १।१।१।१।१।	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१

अनंतानुबंधिरहित मिथ्यादृष्टिकूट १०			
१०	१०	१०	१०
०	१	१	२
२।२	२।२	२।२	२।२
१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१
३।३।३।३	३।३।३।३	३।३।३।३	३।३।३।३
१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६
१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१
१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१

→

सासादन			मिश्र		
१३	१३	१३	१०	१०	१०
०	१	२	०	१	२
२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२
१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१
४।४।४।४	४।४।४।४	४।४।४।४	३।३।३।३	३।३।३।३	३।३।३।३
१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६
१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१
०	०	०	०	०	०

←

मिथ्यादृष्टिके अनन्तानुबन्धी सहित तीन कूट

	०	११	२
यो.	१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १	१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १	१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १
हा. र.	२ २	२ २	२ २
वे.	१ १ १	१ १ १	१ १ १
क.	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४
षट्काय	१ २ ३ ४ ५ ६	१ २ ३ ४ ५ ६	१ २ ३ ४ ५ ६
इन्द्रिय	१ १ १ १ १ १	१ १ १ १ १ १	१ १ १ १ १ १
मि.	१ १ १ १ १	१ १ १ १ १	१ १ १ १ १

इस प्रकार तीन कूट किये। ये तीन तो मूल कूट हुए। अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेवाला मिथ्यादृष्टी हो जाता है तो उसके एक आवली पर्यन्त अनन्तानुबन्धीका उदय नहीं होता। इससे तीन कूट अनन्तानुबन्धी रहित करना। उसमें चार जगह चार कषायोंके
५ स्थानपर तीन-तीन लिखना। यह अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनवाला मिथ्यादृष्टी पर्याप्त ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंयत			देशसंयत		
१३	१३	१३	९	९	९
०	१	२	०	०	२
२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२
१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१
३।३।३।३	३।३।३।३	३।३।३।३	२।२।२।२	२।२।२।२	२।२।२।२
१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५	१।२।३।४।५	१।२।३।४।५
१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१
०	०	०	०	०	०

प्रमत्तसंयत			अप्रमत्तसंयत			अपूर्वकरण		
११	११	११	९	९	९	९	९	९
०	१	२	०	१	२	०	१	२
२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२	२।२
१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१	१।१।१
१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१

त्रिमिश्रयोगोनानि । असंयते एतानि सत्रिमिश्रयोगानि । देशसंयते एतानि चतुरप्रत्याख्यानत्रसासंयमवैक्रियिककायत्रिमिश्रयोगोनानि । प्रमत्ते एतान्येकादश संयमचतुःप्रत्याख्यानोनं वाहारकद्वययुतानि । अप्रमत्तादिद्वये एतान्याहारकद्वयोनानि । अनिवृत्तिकरणे तत्तद्भागादुपरि तत्तद्वेदकषायहास्यादिषट्कं विना कूटमेकैकमेव भयद्विकाभावात् । सूक्ष्मसाम्पराये तदेव बादरलोभोनं । उपशान्तकषायादिद्वये एतदेव सूक्ष्मलोभोनं । सयोगे

होता है इससे तेरहके स्थानपर दस ही योग लिखना। इस तरह मिथ्यादृष्टिमें छह कूट होते हैं। सासादनके तीन कूटोंमें मिथ्यात्वके स्थानपर शून्य लिखो।

मिश्रमें अनन्तानुबन्धी नहीं है अतः चार-चार कषायोंके स्थानपर तीन-तीन ही लिखो। तथा तीन मिश्रयोग न होनेसे तेरहके स्थानपर दस योग लिखो। ऐसे तीन कूट करो। असंयतमें तीनों मिश्रयोग होते हैं अत: तेरह योग लिखकर तीन कूट करो। देशसंयतमें चार अप्रत्याख्यान कषाय नहीं है अतः चारके स्थान पर दो-दो कषाय लिखो। तथा त्रसहिंसा नहीं है इससे कायबधमें छहका अंक नहीं लिखना। तथा तीन मिश्रयोग और वैक्रियिक योग नहीं होता इससे तेरहके स्थानमें नौ योग लिखना। ऐसे तीन कूट करना। प्रमत्तमें बारह अविरति नहीं हैं अतः इन्द्रिय और कायबधके स्थानमें शून्य लिखना। प्रत्याख्यान कषाय भी नहीं अतः एक ही कषाय लिखना। आहारकद्विकके होनेसे योग ग्यारह लिखना। ऐसे तीन कूट बनाना। अप्रमत्तमें आहारकद्विक नहीं अतः योग नौ ही लिखना। ऐसे तीन कूट करना। अपूर्वकरणमें भी ऐसे ही तीन कूट करना।

अनिवृत्तिकरणमें जिस-जिस भागमें वेद, कषाय और हास्यादि छहका अभाव हुआ हो उस-उस भागमें उस-उस जगह शून्य लिखना। और एक-एक ही कूट करना, क्योंकि यहाँ भय-जुगुप्साका अभाव है। सूक्ष्म साम्परायमें बादर लोभ नहीं है, सूक्ष्म लोभ है। अतः कषायोंके स्थानमें तीन जगह शून्य और एक जगह एकका अंक लिखना। इस तरह एक कूट करना। उपशान्त कषाय क्षीण कषायमें सूक्ष्म लोभ भी नहीं है। अतः कषायोंके स्थानपर

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अनिवृत्तिकरण			सूक्ष्म			बादरसूक्ष्म			उपशांत क्षीण		
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	७	अयोगि
१।१।१	१।१	१									
१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१	१।१	१	सू १	०	०	सयोगि	०

ई मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु पेळव कूटप्रकारंगळोळु मिथ्यादृष्टियोळनंतानुबंधिरहिता पुनरुक्तमप्पं कूटंगळोळु मोदल भयद्विकरहितकूटदोळु दशैकादशद्वादशत्रयोदश चतुर्द्दशपंचदश-स्थानप्रकारंगळारप्पुवु। अदेंतेंदोडे पंचमिथ्यात्वंगळोळोंदु मिथ्यात्वमुमोंदिंद्रियासंयममोंदु पृथ्वीकायिकवधासंयममुमनंतानुबंधिक्रोधमानमायालोभरहितचतुस्त्रयंगळोळोंदु कषायत्रयमुं वेद-त्रयदोळोंदु वेदमुं हास्यरतिद्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुमनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टिपर्य्याप्तकनेयप्पुदरिदं दशपर्य्याप्तयोगंगळोळोंदु योगमुमिंतु दशप्रत्ययस्थानप्रकारमोंदेयक्कुं॥ मत्तमा कूटदोळे ओंदु-मिथ्यात्वमोंदिंद्रियासंयममुं पृथ्व्यप्कायिकद्वयवधासंयममुं कषायचतुस्त्रयंगळोळोंदु त्रयमुं वेदत्रय-दोळोंदु वेदमुं द्विकद्वयदोळोंदु द्विकमुं दशयोगंगळोळोंदु योगमुं इंतेकादश प्रत्ययस्थानप्रकार-मोंदक्कुं।

एतदेवासत्योभयमनोवचसी विना। अयोगे शून्यं।

अत्रानन्तानुबन्ध्यूनमिथ्यादृष्टिप्रथमकूटे मिथ्यात्वेऽप्येकं। इन्द्रियेष्वेकं पृथ्वीवधः अनन्तानुबन्धिभावा-चतुर्षु कषायत्रिकेष्वेकं वेदेष्वेकः। द्विकद्वये एकं पर्याप्तस्वादस्य दशपर्याप्तयोगेष्वेकः मिलित्वा दशकं स्यात्। अत्र पृथ्वीवधमपनीय पृथ्व्यादिचतुष्कवधे निक्षिप्ते एकादशकं। अत्र तमपनीय पृथ्व्यादित्रयवधे निक्षिप्ते द्वादशकं। अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिचतुष्कवधे निक्षिप्ते त्रयोदशकं। अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिपंचवधे निक्षिप्ते चतुर्दशकं। अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिषट्कवधे निक्षिप्ते पंचदशकं। एतानि षट्। एवं तद्द्वितीयकूटे एकादश-कादीनि षट्। तृतीयकूटे द्वादशकादीनि षट्। पुनः अनन्तानुबन्धिसहिततत्प्रथमकूटे एकादशकादीनि षट्। द्वितीयकूटे द्वादशकादीनि षट्। तृतीयकूटे त्रयोदशकादीनि षट्। एतेषु दशकमष्टादशकं चैकैकं एकादशकसप्त-दशकानि त्रीणि त्रीणि। द्वादशकषोडशकानि पंच पंच। त्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकानि षट् षट् मिलित्वा षट्त्रिंशत् तथा सासादनेष्वप्यनयैव दिशा तत्स्थानानि स्थानप्रकाराश्च ज्ञातव्याः। एतत्सर्वं मनसि धृत्वा प्राक्तनसूत्रद्वयमुक्तमाचार्यैः।

[एषु गुणस्थानकूटप्रकारेषु मिथ्यादृष्टावनंतानुबन्ध्यूनत्रिकूटेषु भयद्विकोनकूटे दशकैकादशकद्वादशक-त्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकस्थानानि भवन्ति। तद्यथा—एकं मिथ्यात्वं एक इन्द्रियासंयमः एकः पृथ्वीकायिक-वधासंयमः। अनन्तानुबन्ध्यूनकषायचतुस्त्रिकेष्वेकं। त्रिवेदेष्वेकः। हास्यरतिद्विकयोरेकं। अस्य मिथ्यादृष्टेः पर्याप्तत्वाद्दशपर्याप्तयोगेष्वेकः इति दशकं स्यात्। पुनस्तस्मिन्नेव कूटे एकं मिथ्यात्वमेक इन्द्रियासंयमः। पृथ्व्यप्कायिकवधासंयमौ। कषायचतुस्त्रयेष्वेकं। त्रिवेदेष्वेकः। द्विद्विकयोरेकं। दशयोगेष्वेकः इत्येकादशकं। पुनस्तत्रैव मिथ्यात्वेष्वेकं इन्द्रियेष्वेकं पृथ्व्यादित्रिवधासंयमाः। कषायचतुस्त्रयेष्वेकं। त्रिवेदेष्वेकः। द्विद्विक-

सर्वत्र शून्य लिखना। ऐसे एक-एक कूट बनाना। सयोगीमें असत्य और उभय मन वचन नहीं हैं। अतः सात योग लिखकर एक ही कूट करना। अयोगीमें सर्वत्र शून्य ही है।

इन कूटोंमें अनन्तानुबन्धी रहित मिथ्यादृष्टीके पहले कूटमें मिथ्यात्वोंमें-से एक, इन्द्रियविषयोंमें-से एक, षट्कायकी हिंसामें-से एक, अनन्तानुबन्धी बिना क्रोधादि चार कषायोंके त्रिकमें-से एक त्रिक, वेदोंमें-से एक, दो युगलोंमें-से एक युगल और पर्याप्त होनेसे दस योगोंमें-से एक योग, ये सब मिलकर दसका आस्रव है। इनमें एकके स्थानपर दो की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मत्तमा प्रथमकूटदोळे मिथ्यात्वंगळोळों दु इंद्रियंगळोळों दु पृथ्व्यप्तेजस्कायिकजीवत्रयवधासंयमत्रयमुं कषायचतुस्त्रयदोळु ओंदुत्रयमुं वेदत्रयदोळों दु वेदमुं द्विकद्वयदोळों दु द्विकमुं दशयोगंगळोळों दु योगमुं इंतु द्वादशप्रत्ययस्थानप्रकारमों दक्कुं। मत्तमा प्रथमकूटदोळे मिथ्यात्वंगळोळों दुमिंद्रियंगळोळों दुं पृथ्व्यप्तेजोवायुकायिकजीववधासंयमचतुष्टयमुं, चतुःकषायत्रयदोळों दु त्रयमुं वेदत्रयदोळों दु वेदमुं द्विकद्वयदोळों दु द्विकमुं दशयोगंगळोळों दुयोगमुमितु त्रयोदशप्रत्ययस्थानप्रकारमों देयक्कुं। मत्तमा प्रथमकूटदोळे मिथ्यात्वंगळोळों दुमिंद्रियंगळोळों दुं, पृथ्व्यप्तेजोवायुवनस्पतिकायिकजीववधासंयमपंचकमुं, चतुःकषायत्रयंगळोळों दु त्रयमुं, वेदत्रयदोळों दु वेदमुं, द्विकद्वयदोळों दु द्विकमुं, दशयोगंगळोळों दु योगमुमितु चतुर्दशप्रत्ययंगळस्थानप्रकारमों दक्कुं।

मत्तमा प्रथमकूटदोळे मिथ्यात्वंगळोळों दु मिथ्यात्वमुमिंद्रियंगळोळिंद्रियासंयममुं, पृथ्व्यप्तेजोवायुवनस्पतित्रसजीववधासंयमषट्कमुं, चतुःकषायत्रयदोळों दुकषायत्रयमुं, वेदत्रयंगळोळों दु वेदमुं, द्विकद्वयदोळों दु द्विकमुं दशयोगंगळोळों दु योगमुमितु पंचदशप्रत्ययंगळ स्थानप्रकारमोंदक्कुमिते सर्व्वगुणस्थानकूटंगळोळु स्थानप्रकारंगळु साधिसल्पडुवुवदु कारणदिदमनंतानुबंधिरहित मिथ्यादृष्टिय द्वितीयकूटदोळमेकादशादिषोडशावसानमाद षट्स्थानप्रकारंगळप्पुवु। आ तृतीयकूटदोळु द्वादशादिसप्तदशावसानमाद षट्स्थानप्रकारंगळप्पुवितनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टियोळपुनरुक्तकूटत्रयस्थानप्रकार संदृष्टि :— इवं कूडिदोडे दश-

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

योरेकं। दशयोगेष्वेकः, इति द्वादशकं। पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं। इन्द्रियेष्वेकं। पृथ्व्यादिचतुर्वधासंयमाः। चतुःकषायत्रयेष्वेकं। त्रिवेदेष्वेकः। द्विद्विकयोरेकं। दशयोगेष्वेकः इति त्रयोदशकं। पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं। इन्द्रियेष्वेकं। पृथ्व्यादिपंचवधासंयमाः। चतुःकषायत्रयेष्वेकं। त्रिवेदेष्वेकः। द्विद्विकयोरेकं। दशयोगेष्वेकः। इति चतुर्दशकं। पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं। इन्द्रियेष्वेकं। पृथ्व्यादिषट्कायवधासंयमाः। चतुःकषायत्रयेष्वेकं इति पंचदशकं। एवं द्वितीयकूटे एकादशकादिषोडशकांतानि षट्। तृतीयकूटे द्वादशकादिसप्तदशकांतानि षट्। संदृष्टिः—

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

हिंसा मिलानेसे ग्यारहका आस्रव होता है। दो के स्थानमें तीन कायकी हिंसा मिलानेसे बारहका आस्रव होता है। तीनके स्थानमें चार कायकी हिंसा मिलानेपर तेरहका आस्रव होता है। चारके स्थानमें पाँच कायकी हिंसा होनेपर चौदहका आस्रव होता है। पाँचके स्थानमें छह कायकी हिंसा होनेपर पन्द्रहका आस्रव है। इस तरह अनन्तानुबन्धी रहित प्रथम कूटमें दस आदि छह स्थान हुए। दूसरे कूटमें भय जुगुप्सामें-से एकके मिलानेसे ग्यारह आदि छह स्थान होते हैं। तीसरे कूटमें भयजुगुप्सा दोनोंके मिलनेसे बारह आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानप्रकारमोंदु १०/१ एकादशस्थानप्रकारंगळेरडु ११/२ द्वादशस्थानप्रकारंगळु मूरु १२/३ त्रयोदशस्थानप्रकारंगळु मूरु १३/३ चतुर्द्दशस्थानप्रकारंगळु मूरु १४/३ पंचदशस्थानप्रकारंगळु मूरु १५/३ षोडशस्थानप्रकारंगळु एरडु १६/२ सप्तदशस्थानप्रकारंगळु ओंदु १७/१ यितेल्लमं कूडि पदिनेंटु स्थानप्रकारंगळप्पुवु । १८ ॥ संदृष्टि :—

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
१	२	३	३	३	३	२	१

मत्तमिते मिथ्यादृष्टियोळनंतानुबंधियुतापुनरुक्तकूटत्रयदोळु प्रथमभयद्विरहितकूटदोळेकादशादिषट्स्थानंगळुं द्वितीयभयद्विकान्यतरयुतकूटदोळु द्वादशादिषट्स्थानप्रकारंगळप्पुवु । आ भयद्विकयुततृतीयकूटदोळु त्रयोदशादिषट्स्थानप्रकारंगळप्पुवु । संदृष्टि :—

११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७
१३	१४	१५	१६	१७	१८

यिती मूरुं कूटंगळ पदिनेंटु स्थानप्रकारंगळं माडुत्तं विरलेकादशस्थानप्रकारमोंदेयक्कु ११/१ द्वादशस्थानप्रकारंगळेरडु १२/२ त्रयोदशस्थाप्रकारंगळु मूरु १३/३ चतुर्द्दशस्थानप्रकारंगळु मूरु १४/३ पंचदशस्थानप्रकारंगळु मूरु १५/३ षोडशस्थानप्रकारंगळु मूरु १६/३ सप्तदशस्थानप्रकारंगळुमेरडु १७/२ अष्टादशस्थानप्रकारमोंदु १८/१ समुच्चय । संदृष्टि :—

अत्र दशकस्य प्रकार एकः १०/१ एकादशकस्य द्वौ ११/२ द्वादशकस्य त्रयः १२/३ त्रयोदशकस्य त्रयः १३/३ चतुर्दशकस्य त्रयः १४/३ पंचदशकस्य त्रयः १५/३ षोडशकस्य द्वौ १६/२ सप्तदशकस्यैकः १७/१ मिलित्वाऽष्टादश भवन्ति १८ । पुनः मिथ्यादृष्टावनन्तानुबंधियुतत्रिकूटेषु प्रथमे एकादशकादीनि षट् । द्वितीये द्वादशकादीनि षट् । तृतीये त्रयोदशकादीनि षट् । संदृष्टि :—

११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७
१३	१४	१५	१६	१७	१८

अत्रैकादशकस्य प्रकार एकः ११/१ द्वादशकस्य द्वौ १२/२ त्रयोदशकस्य त्रयः १३/३ चतुर्दशकस्य त्रयः १४/३

छह स्थान होते हैं। अनन्तानुबन्धी सहित तीन कूटोंमें एक अनन्तानुबन्धी कषाय बढ़ जाती है। इससे प्रथम कूटमें ग्यारह आदि छह स्थान हैं, दूसरे कूटमें बारह आदि छह स्थान हैं। तीसरे कूटमें तेरह आदि छह आस्रव स्थान हैं। इस तरह इन कूटोंमें दस और अठारहका आस्रव तो एक-एक ही प्रकार है क्योंकि दसका आस्रव तो अनन्तानुबन्धीरहित प्रथम कूटमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	२	३	३	३	३	२	१

मुन्नं पेळल्पट्ट अनंतानुबंधिरहितकूटत्रयद पदिनेंटु स्थानंगळुमनी पेळ्दनंतानुबंधियुतकूटत्रयद पदिनेंटुं स्थानप्रकारंगळुमं कूडुत्तं विरलु षट्त्रिंशत्प्रत्ययस्थानप्रकारंगळप्पुववनितक्कं संदृष्टि रचने :—

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	३	५	६	६	६	५	२	१

ई प्रकारदिंद सासादनप्रथमकूटदोळु दशादिषट्स्थानप्रकारंगळप्पुवु। द्वितीयकूटदोळु एकादशादिषट्स्थानंगळप्पुवु। तृतीयकूटदोळु द्वादशादिषट्स्थानप्रकारंगळप्पुविंतष्टदशस्थानप्रकारंगळप्पुवु।

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

इवं कूडिदोडे सासादनंगे

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
१	२	३	३	३	३	२	१

मिश्रन त्रिकूटंगळोळु

९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६

कूडि मिश्रंगे

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

असंयत सम्यग्दृष्टिगे

९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६

पंचदशकस्य त्रयः १५/३ षोडशकस्य त्रयः १६/३ सप्तदशकस्य द्वौ १७/२ अष्टादशकस्यैकः १८/१ एतेषु प्रागुक्ताष्टादशसु मिलितेषु षट्त्रिंशद्भवन्ति। तत्संदृष्टिः—

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	३	५	६	६	६	५	३	१

एवं सासादनस्य प्रथमकूटे दशकादीनि षट्। द्वितीये एकादशकादीनि षट्। तृतीये द्वादशकादीनि षट्।

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

मिलित्वाष्टादश

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
१	२	३	३	३	३	२	१

मिश्रस्य त्रिकूटेषु—

९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६

ही है और अठारहका आस्रव अनन्तानुबन्धीसहित अन्तिम कूटमें ही है। इसी तरह ग्यारह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूडि असंयतसम्यग्दृष्टिगे संदृष्टि

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

देशसंयतन कूटत्रयदोळु

८	९	१०	११	१२
९	१०	११	१२	१३
१०	११	१२	१३	१४

कूडि देशसंयतंगे

८	९	१०	११	१२	१३	१४
१	२	३	३	३	२	१

प्रमत्त संयतंगे मूरु कूटंगळु, प्रथमकूटदोळु पंचप्रत्ययस्थान मों देयक्कुं। द्वितीयकूटदोळु षट्प्रत्ययस्थान प्रकारपु मों देयक्कुं। तृतीयकूटदोळु सप्तप्रत्ययस्थानप्रकारमों देयक्कुं। अवक्के संदृष्टि ५ / ६ / ७ अप्रमत्तंगमी प्रकारदिदं त्रिकूटंगळोळुमक्कुं ५ / ६ / ७ अपूर्व्वकरणंगमिते त्रिकूटंगळोळमक्कुं ५ / ६ / ७ अनिवृत्तिकरणन सवेदभागेयोळु कूटंगळु मूररोळं त्रिप्रत्ययस्थानप्रकारमों देयक्कुं। अवेद भागेय कूट चतुष्टयदोळु द्विप्रत्ययस्थानप्रकारमों देयक्कुं। संदृष्टि ३।२ / १।१ सूक्ष्मसाम्परायंगेककूटदोळु द्विप्रत्ययस्थानप्रकार मों देयक्कुं २ / १

मिलित्वा—

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

असंयतस्य—

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

देशसंयतस्य—

८	९	१०	११	१२	१३
९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५

प्रमत्तसंयतस्य—

८	९	१०	११	१२	१३	१४
१	२	३	३	३	२	१

प्रथमकूटे पंचकमेकं द्वितीये षट्कं। तृतीये सप्तकमेव स्यात्। संदृष्टिः ५ / ६ / ७ तथाऽप्रमत्तापूर्वकरणयोरपि ५ / ६ / ७

और सतरहके आस्रव स्थान तीन-तीन प्रकार हैं। बारह-सोलहके पाँच-पाँच प्रकार हैं। तेरह, चौदह, पन्द्रहके छह-छह प्रकार हैं।

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	३	५	६	६	६	५	३	१

उपशान्तकषायंगेककूटदोळेकयोगप्रत्यय स्थानप्रकार मों देयक्कुं यो १/१ क्षीणकषायंगेकयोग प्रत्ययस्थानप्रकारमों देयक्कुं यो १/१ सयोगकेवलिभट्टारकंगेकयोगप्रत्ययस्थानमों देयक्कुं यो १/१ अयोगि केवलिभट्टारक नोळु प्रत्ययं शून्यमक्कु। मितिनितुं प्रक्रियेयं मनदोळिरिसि याचार्य्यनिदं दस अट्ठारसदसयं सत्तरेत्यादियिदं जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानंगळु एकं च तिण्णि पंचयेत्यादिस्थान-प्रकारंगळुं भयदुगरहियमित्यादिकूटप्रकारंगळुं पेळल्पट्टुवें दितु ज्ञातव्यमक्कुं॥

अनंतरं कूटोच्चारण प्रकारमं पेळदपरुः—

> मिच्छत्ताणण्णदरं एक्केणक्खेण एक्ककायादी।
> तत्तो कसायवेददुजुगलाणेक्कं च जोगाणं ॥७९५॥

मिथ्यात्वानामन्यतरत् एकेनाक्षेणैककायादयः। ततः कषायवेदद्वियुगलानामेकं च योगानां॥

मिथ्यात्वपंचकदोळन्यतरमुमिंद्रियषट्कदोडमेकाकायादिगळुमल्लिदं मेले कषायंगळोळों दु जातियुं वेदंगळोळों दु वेदमुं द्वियुगळंगळोळों दुयुगळमुं चशब्ददिदं संभविसुवेडेयोळु भयजुगुप्सा-द्वयदोळन्यतरमुमों देडेयोळु उभयमुंयोगंगळोळों दु मिदु कूटोच्चारण प्रकारमक्कुमदें तें दोडे येकांतमिथ्यादृष्टियोळं स्पर्शनेंद्रियदोळं पृथ्वीकायदोळं क्रोधत्रयदोळं षंडवेददोळं षंडवेददोळं

अनिवृत्तिकरणस्य सवेदभागे त्रिकूटेषु त्रिकमेकं। अवेदभागे चतुःकूटेषु द्विकमेकं स्यात् ३/१। २/१ सूक्ष्मसाम्पराय-स्यैककूटे द्विकमेकं २/१ उपशान्तकषायक्षीणकषायसयोगेष्वेकैकं योगप्रत्ययकमेव १/१ अयोगे प्रत्ययशून्यं इत्येतन्मनसि कृत्वाचार्यो दस अट्ठारस दसयं सत्तारेत्यादिना जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानानि, एकं च तिण्णि पंचयेत्यादिस्थान-प्रकारान् भयदुगरहियमित्यादि कूटप्रकारांश्चोक्तवान्। एवंविधः पाठभेदः, अभयचन्द्रनामांकितायां टीकायां]। ॥७९४॥ अथ कूटोच्चारणप्रकारमाह—

मिथ्यात्वानामन्यतरत् षडिंद्रियाणामेकेन सहैककायादि ततः कषायेष्वेका जातिः। वेदेष्वेकः। युगलद्वये एकं। चशब्दात्सम्भवस्थाने भयजुगुप्सयोरेकं, अन्यत्रोभयं च। योगेष्वेकः। इति कूटोच्चारणप्रकारः। तद्यथा—

सासादन आदिमें जो कूट कहे हैं उनमें भी इसी प्रकार विचार कर आस्रवोंके स्थान और उनके प्रकार जानना। ये सब मनमें रखकर आचार्यने पूर्वमें दो गाथाओंके द्वारा स्थान तथा स्थानोंके प्रकार कहे हैं ॥७९४॥

आगे कूटोच्चारणके प्रकार कहते हैं—

मिथ्यात्वोंमें-से कोई एक और छह इन्द्रियोंमें-से एकके साथ एक-दो कायादि, उनके पश्चात् कषायोंमें-से एक जाति, वेदोंमें-से एक तथा दो युगलोंमें-से एक, 'च' शब्दसे सम्भव स्थानमें भय जुगुप्सामें-से एक वा दोनों और योगोंमें-से एक। इस तरहसे कूटोंके उच्चारण करनेका विधान है। वही कहते हैं—

विशेषार्थ—जीवकाण्डके गुणस्थान अधिकारमें विकथा आदिके अक्षसंचार आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हास्यद्विकदोळं सत्यमनोयोगदोलमनंतानुबंधरहित मिथ्यादृष्टिय प्रथमकूटदोळि हंसपदाकाशमप्प अक्षवनिट्टुच्चरिसुवुदु । एकांतमिथ्यादृष्टिःस्पर्शनेन्द्रियवशंगतः पृथ्वीकायवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । मत्तमंते एकांतमिथ्यादृष्टिःस्पर्शनेन्द्रियवशंगतोऽप्कायवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । मत्तमंते एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेन्द्रियवशंगतः तेजस्कायिकवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेन्द्रियवशंगतो वायुकायिकवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेन्द्रियवशंगतो वनस्पतिकायिकवधकस्त्रिक्रोधि षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः त्रसकायिकवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । येंदितनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टिय प्रथमकूटदोळु पृथ्वीकायादित्रसकायिकपर्यंतं प्रत्येकं भेदाक्षसंचरणदोळुच्चारणषट्कमक्कुं

पृ	अ	ते	वा	व	त्र
१	१	१	१	१	१

मत्तमा कूटदोळु मुन्निनंते एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्व्यप्कायिकवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिःस्पर्शनेंद्रियवशंगतः पृथ्वीतेजस्कायिकद्वयवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । २ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीवायुकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ३ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतः पृथ्वीवनस्पतिकायिकद्वयवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ४ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिःस्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीत्रसकायिक-

अनन्तानुबन्ध्यूनप्रथमकूटे एकान्तमिथ्यात्वे स्पर्शनेन्द्रियपृथ्वीकाये क्रोधत्रये षंढवेदे हास्यद्विके सत्यमनोयोगे चाक्षे धृते एकान्तमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेन्द्रियवशगतः पृथ्वीकायवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगोत्येकः । अत्र पृथ्वीकायवधमुद्धृत्य पंचस्वप्कायादिवधेष्वेकैकस्मिन् मिलितेऽमी प्रत्येकभंगाः षट् । पंचदशसु पृथ्व्यादिद्विसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन् मिलितेऽमी द्विसंयोगभंगाः पंचदश । विंशतौ पृथ्व्यप्तेजस्कायत्रयादित्रिसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन्मिलितेऽमी त्रिसंयोगभंगा विंशतिः । पंचदशसु पृथ्व्यप्तेजोवायुचतुष्कादिचतुःसंयोगवधेष्वे-

द्वारा जैसे प्रमादोंके भंग किये हैं; उसी प्रकार पाँच मिथ्यात्व आदिके अक्षसंचार आदि द्वारा आस्रवके भंग होते हैं। वही कहते हैं—

अनन्तानुबन्धी रहित प्रथम कूटमें एकान्त मिथ्यात्व, स्पर्शन इन्द्रिय, पृथ्वीकायकी हिंसा, तीन प्रकारका क्रोध, नपुंसकवेद, हास्यरतिका युगल, सत्य मनोयोग (असत्यमनोयोग ?) में अक्ष रखनेपर एकान्त मिथ्यादृष्टि, स्पर्शन इन्द्रियके वशीभूत, पृथ्वीकायका हिंसक, तीन प्रकारके क्रोधका धारक, नपुंसकवेदी, हास्यरतियुक्त, सत्यमनोयोगी जीवके आस्रवका एक भंग होता है। इस भंगमें पृथ्वीकायकी हिंसाके स्थानमें पाँच जलकाय आदिमेंसे एक-एक मिलानेपर प्रत्येक भंग छह होते हैं। पृथ्वी, जल या पृथ्वी, अग्नि आदि दो संयोगरूप पन्द्रह भेदोंमें-से एक-एकका हिंसक मिलानेपर द्विसंयोगी भंग पन्द्रह होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि या पृथ्वी, जल, पवन आदि तीनके संयोगरूप बीस भेदोंमें-से एक-एक हिंसक मिलानेपर त्रिसंयोगी भंग बीस होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु या पृथ्वी, जल,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ५ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतोऽप्तेजस्कायिकद्वयकवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ६ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिःस्पर्शनेंद्रियवशंगतोऽब्वायुकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ७ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतोऽब्वनस्पति कायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ८ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतोऽप्त्रसकायिकद्वयवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदीहास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ९ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतः तेजोवातकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १० ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतस्तेजोवनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । ११ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतस्तेजस्त्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १२ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतो वातवनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १३ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतो वायुत्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १४ ॥ एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशंगतो वनस्पतित्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान् । १५ ॥ यें दितु षड्जीवनिकायद्विसंयोगाक्षसंचारविधानदिदं जीववधासंयमभंगंगलोडनुच्चरण भेदंगळु पदिनय्दप्पुवु ॥ यितु षड्जीवनिकायदोळु द्विसंयोगंगळप्पुवु ।

पृ	अ	ते	वा	व	त्र
+	+	|	|	|	|

केकस्मिन्मिलितेऽमी चतुःसंयोगभंगाः पंचदश । षट्सु पंचसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन्मिलितेऽमी पंचसंयोगभंगाः षट् । एकस्मिन् षट्संयोगवधे मिलिते षट्संयोगभंग एकः, मिलित्वा त्रिषष्टिः ।

पुनः तदेकान्तमिथ्यात्वाक्षे द्वितीये विपरीतमिथ्यात्वगतेऽपि त्रिषष्टिः । एवं पंचसु मिथ्यात्वेषु गत्वादावागते स्पर्शनेन्द्रियाक्षः रसनेन्द्रिये गच्छति । अयं च सर्वेन्द्रियेषु गत्वा मिथ्यात्वाक्षयुतः आदावागच्छति

अग्नि, वनस्पति आदि चार संयोगरूप पन्द्रह भेदोंमें-से एक-एकका हिंसक मिलानेपर चतुःसंयोगी भंग पन्द्रह होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति या पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, त्रस आदि पाँचके संयोगरूप छह भंगोंमें-से एक-एकका हिंसक मिलानेपर पंचसंयोगी भंग छह होते हैं। तथा पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, त्रस इन छहोंके संयोगरूप एकका हिंसक मिलानेपर छह संयोगी भंग एक होता है। ये सब मिलकर तिरसठ भंग होते हैं।

एकान्त मिथ्यात्वरूप अक्षकी तरह दूसरे विपरीत मिथ्यात्वरूप अक्षमें भी तिरसठ भंग होते हैं। इस तरह पाँचों मिथ्यात्वोंके तीन सौ पन्द्रह भंग होते हैं। इन सबोंमें स्पर्शन इन्द्रियके वशीभूतके स्थानमें रसना इन्द्रियके वशीभूत रखनेपर भी उतने ही भंग होते हैं। इस तरह पाँचों इन्द्रियों और छठे मनके अठारह सौ नब्बे भंग होते हैं। इन सबोंमें तीन प्रकार क्रोधके स्थानमें तीन प्रकारके मानको मिलानेपर भी उतने ही भंग होते हैं। इस तरह लोभपर्यन्त चार कषायोंके पचहत्तरसौ साठ भंग होते हैं। इन सबोंमें नपुंसकवेदके स्थानमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई प्रकारदिदं षड्जीवनिकायदोळ् मत्तं त्रिसंयोगवधासंयमदोडने विंशति विधोच्चरणंगळु चतुःसंयोगवधासंयमदोडने पंचदशोच्चरण भेदंगळं पंचसंयोगवधाऽसंयमदोडने षड्विधोच्चरणंगळु षट्संयोगवधासंयमदोडनेकविधोच्चरणमुमक्कुं। संदृष्टि—प्र ६। द्वि १५। त्रि २०। च १५। पं ६। ष १॥

इंतु त्रिषष्टिप्रमितवधासंयमदोडनुच्चरणंगळं मिथ्यादृष्टिय प्रथमकूट प्रथमांकिताक्ष सप्तकदोळु त्रिषष्टिप्रमितंगळप्पुवु। इल्लि मत्तमी प्रत्येकादिभंगंगळं साधिसुवुपायमोंदुंटदाउदेंदोडे प्रत्येक द्विसंयोग त्रिसंयोग चतुःसंयोग पंचसंयोग षट्संयोग वधंगळं क्रमदिदं स्थापिसियवर केळगेकद्वित्रिचतुः पंचषट् हारंगळं स्थापिसि

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

यिल्लि योंदरिदं मारं भागिसिदोडवु प्रत्येक भंगंगळारप्पुवु। ६। मत्तमा भाज्यराशियारुमं पंचसयोगमुमं गुणिसि हारमनवर केळगिर्दोंदुमनेरडुमं गुणिसि भागिसिदोडे लब्धं द्विसंयोग भंगंगळु पदिनय्दप्पुवु—

३०	४	३	२	१	+
२	३	४	५	६	+

मत्तमा मूवत्तुमं मुंदण नाल्कुमं गुणिसि केळगणेरडुं मूरुं हारंगळं गुणिसि भागिसिदंद लब्धं त्रिसंयोग भंगंगळिप्पत्तप्पुवु

१२०	३	२	१
६	४	३	६

मत्तमा नूरिप्पत्तुमं मुंदण त्रिसंयोगदिदं गुणिसिदोडे मूनूरवत्तक्कुमदं केळगण आरुं नाल्कुं हारंगळं गुणिसि भागिसिद लब्धं चतुःसंयोगभंगंगळु पदिनय्दप्पुवु

३६०	२	१
२४	५	६

मत्तं मूनूरवत्तं मुंदण द्विसंयोगदिदं गुणिसिदोडेळु नूरिप्पत्तक्कु—। मदं केळगण इप्पत्त नाल्कुमय्दु हारंगळं गुणिसिदोडे नूरिप्पत्तप्पुदरिदं भागिसिद लब्धं पंचसंयोग भंगंगळारप्पुवु

७२०	१
१२०	६

मत्तमा येळु नूरिप्पत्तं मुंदणेकवधदिदं गुणिसिदोडे राशि तावन्मात्रमे एळुनूरिप्पत्तक्कु—। मदं केळगण नूरिप्पत्तमारु हारंगळं गुणिसिदोडवुमेळुनूरिप्पत्तक्कु मदरिदं भागिसिद लब्धं षट्संयोग भंगमोंदेयक्कुं $\frac{७२०}{७२०}$

तदा क्रोधत्रयाक्षः मानत्रये गच्छति। अयं च प्राक्चरमलोभत्रयपर्यन्तं गत्वा इन्द्रियाक्षमिथ्यात्वाक्षाभ्यां सहादावागच्छति तदा षंढवेदाक्षः स्त्रीवेदे गच्छति। अयं च प्राक्चरमपुंवेदपर्यन्तं गत्वा कषायाक्षेन्द्रियाक्षमिथ्यात्वाक्षैः सहादावागच्छति तदा हास्यद्वयाक्षः अरतिद्वये गच्छति। अयं च वेदाक्षकषायाक्षेन्द्रियाक्षमिथ्या-

---

स्त्रीवेद मिलानेपर भी उतने ही भंग होते हैं। इस तरह तीनों वेदोंके बाईसहजार छह सौ अस्सी भंग होते हैं। इन सब भेदोंमें हास्यरति युगलके स्थानमें शोकअरति मिलानेपर भी उतने ही भंग होते हैं। तब दोनों युगलोंके पैंतालीसहजार तीनसौसाठ भंग होते हैं। इस कूटमें भयजुगुप्सा नहीं है। अतः इन सबमें सत्यमनोयोगके स्थानमें असत्यमनोयोग मिलानेपर भी उतने ही भंग होते हैं। ऐसा करनेसे अन्तिम वैक्रियिकयोगपर्यन्त दस योगोंके चारलाख तिरपनहजार छहसौ भंग होते हैं। मिथ्यात्वमें अनन्तानुबन्धीका अनुदय पर्याप्त दशामें ही होता है इससे औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणयोगका ग्रहण नहीं किया है। अनन्तानुबन्धीरहित मिथ्यादृष्टि कूटमें इतने भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मितिदों दु क्रममरियल्पडुगुं । प्र ६ । द्वि १५ । त्रि २० । च १५ । पं ६ । ष १ ॥ यितु त्रिषष्टि प्रमितभंगंगळों देकांतमिथ्यात्वस्पर्शनेंद्रियक्रोधत्रयषंडवेदहास्यद्विकसत्यमनोयोगमेंबिवरोळि-डल्पट्टक्षमों दक्कप्पुवल्लि प्रथमैकांतमिथ्यात्वाक्षं द्वितीयविपरीतमिथ्यात्वक्के संचरिसिदोडमिते त्रिषष्टिप्रमितोच्चरणभेदंगळप्पुवितेल्ला मिथ्यात्वंगळवरोळं संचरिसिदक्षं मोदलिंगे बंदागळु स्पर्शनेंद्रियदोळिर्द्द द्वितीयाक्षं स्वस्थानद्वितीयरसनेंद्रियक्कक्षं संचरिसुगु–। मा परस्थानद्वितीयेंद्रि-याक्षं तन्नेल्ला यिंद्रियंगळोळं संचरिसि तानुं मिथ्यात्वाक्षमुमेरडुं मोदलिंगे वरलोडं कोधत्रयदोळिर्द्द परस्थानतृतीयाक्षं स्वस्थानमानत्रयक्के संचरिसुगुमवुवुं पूर्व्वोक्तक्रमदिं चरमलोभत्रयपर्य्यंतं संच-रिसि तानुमिंद्रियमिथ्यात्वाक्षद्वययुतमागि मोदल्गे वरलोडं षंडवेददोळिर्द्द परस्थानचतुर्थाक्षं स्त्रीवेदक्के संचरिसुगुमदुवुं पूर्व्वोक्तक्रमदिदं चरमपुंवेद पर्य्यंतं पोगि तानुं क्रोधेंद्रियमिथ्यात्वाक्षत्रय-युतमागि मोदल्गे वरलोडं हास्यद्वयदोळिर्द्द परस्थानपंचमाक्षमरतिद्वयक्के संचरिसुगुमी रतिद्वय-दोळिर्द्द परस्थानपंचमाक्षं तानुं वेदक्रोधेंद्रियमिथ्यात्वाक्षचतुष्टययुतमागि मोदल्गे वरलोडनितु भयद्वयरहितप्रथमकूटमप्पुदरिदं सत्यमनोयोगदोळिर्द्द परस्थानषष्ठाक्षं स्वस्थानदोळु तन्न द्वितीय-भेदमप्प असत्यमनोयोगक्के संचरिसुगुमी परस्थानषष्ठयोगाक्षं पूर्व्वोक्तक्रमदिदं तन्न चरमवैक्रि-यिक काययोग पर्य्यंतं संचरिसि निंदोडागळा केळगणक्षंगळनितु तम्म तम्म चरम दोळिर्द्दोडागळा कूटोच्चरणं परिसमाप्तियक्कु–। मीयों दों दु परस्थानाक्षं संचरिपागळु पृथ्व्यादिगळ अधासंयम-भेदंगळु त्रिषष्टिप्रमितंगळागुत्तं बप्पुवें बिदरियल्पडुगु–। मितुळिद मिथ्यादृष्टिय सर्व्वकूटंगळोळं सासादनादिगुणस्थानंगळ कूटंगळोळं यथासंभवमुच्चरणविधानमिते यक्षसंचारविधानदिंदमरियल्प-डुगु– । मनंतरं भंगानयनप्रकारमं पेळदपरु :—

अणरहिदसहिदकूडे बावत्तरिसय सयाण तेणउदी ।
सट्ठी धुवा हु मिच्छे भयदुगसंजोगजा अधुवा ॥७९६॥

अनंतानुबंधितरहित सहितकूटे द्वासप्ततिशतं शतानां त्रिनवतिः । षष्टिध्रुवाः खलु मिथ्या-दृष्टौ भयद्विकसंयोगजा अध्रुवाः ॥

त्वाक्षैस्सहादावागच्छति तदा भयद्वयोनकूटत्वात्सत्यमनोयोगाक्षः असत्यमनोयोगे गच्छति । अयं च प्राग्वच्चर-मवैक्रियिकयोगपर्यन्तं गच्छति तदा तदग्रस्तनाक्षाः सर्वे स्वचरमे स्युरिति तत्कूटोच्चरणं समाप्तं । एवं शेष-मिथ्यादृष्टिकूटसासादनादिकूटेष्वपि ज्ञातव्यं ॥७९५॥ अथ भंगानयनप्रकारमाह—

यहाँ अक्षके अपने अन्ततक पहुँचनेपर उस सहित सब पहले अक्ष आदि स्थानमें आ जाते हैं। और उत्तर अक्ष दूसरे स्थानपर आ जाता है। जैसे पाँच मिथ्यात्वका अक्ष जब अज्ञान मिथ्यात्वतक पहुँचा तब मिथ्यात्वका अक्ष एकान्त मिथ्यात्वपर आ गया और उत्तर इन्द्रियअक्ष रसनारूप दूसरे स्थानको प्राप्त हुआ। ऐसा होते-होते सब अक्ष जब अन्त स्थान को प्राप्त होते हैं तब अक्ष संचार समाप्त होता है। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीरहित मिथ्यादृष्टीके प्रथम कूटके उच्चारणका विधान हुआ। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टिके शेष कूट तथा सासादन आदिके कूटके उच्चारणका विधान जानना ॥७९५॥

आगे भंगोंका प्रमाण लानेका प्रकार कहते हैं—

क–१४४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतानुबंधिरहित कूटदोळं सहितकूटदोळं यथासंख्यमागि द्वासप्ततिशतमुं त्रिनवतिशतयुतषष्टिप्रमितंगळुं मिथ्यादृष्टियोळु ध्रुवभंगंगळिवु गुण्यंगळप्पुवु। भयद्विकरहितसहितमेकतरयुतंगळें ब चतुःकूटगुणितपृथिव्यादिसंयोगजनितत्रिषष्टिभंगंगळवध्रुवभंगगुणकारंगळप्पुवदें तें दोडे अनंतानुबंधिरहितप्रथमकूटदोळु मिथ्यात्वपंचकमिंद्रियषट्कं कषायत्रिचतुष्टयं त्रिवेदद्विकद्वय दशयोग ५। ६। ४। ३। २। १०। मिवं परस्परं गुणिसिदोडेळु सासिरदिन्नूरु भंगंगळप्पुवु। ७२००॥ अनंतानुबंधिसहितकूटदोळु ५। ६। ४। ३। २। १३। यिवं परस्परं गुणिसिदोडे ओंभत्तुसासिरद मूनूररुवत्तु भंगंगळप्पुवु ९३६०॥ ई एरडुं राशिगळं कूडिदोडे पदिनारुसासिरदैनूररुवत्तु ध्रुवगुण्यभंगंगळु मिथ्यादृष्टिगळगप्पुवु १६५६०॥ इल्लि त्रैराशिकं माडल्पडुगु। मोंदु ध्रुवभंगक्कध्रुवभंगंगळु त्रिषष्टिप्रमितंगळागलुमिनितु ध्रुवभंगंगळगेनितध्रुवभंगंगळप्पुवें दिंतु त्रैराशिकमं माडि प्र १। फ ६३। इ १६५६०। बंद लब्धमुमिनितक्कु १६५६०। ६३॥ मतमोंदनंतानुबंधिरहितसहितकूटद्विकविकनितागुत्तं विरला द्विकचतुष्टयक्केनितु भंगंगळप्पुवें दितिल्लियुमो त्रैराशिकदिदं नाल्कुगुणाकारमक्कु। १६५६०। ६३। ४॥ मिवं परस्परं गुणिसिदोडे मिथ्यादृष्टियोळु सर्व्वप्रत्ययभंगंगळप्पुवु। अवुं नाल्वत्तोंदु लक्षमुमेप्पत्तमूरु सासिरद नूरिप्पत्तप्पुवु। ४१७३१२०॥ सासादनंगे अनंतानुबंधिसहितकूटंगळेयप्पुदरिंदं प्रथमकूटदोळु इंद्रियंगळारु। कषायगुणकारंगळु नाल्कु। वेदंगळु मूरु। द्विकद्वययोगंगळु पन्नेरडु ६। ४। ३। २। १२। इवं परस्परं गुणिसिदोडे सासिरदेळु नूरिप्पत्तेंटप्पुवु। १७२८॥ मत्तं सासादनंगे वैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळु षंडवेदमिल्लेकें दोडे

मिथ्यादृष्टौ ध्रुवभंगा अनन्तानुबन्ध्यूनकूटे सप्तसहस्रद्विशती, तद्युतकूटे खलु षष्ट्यग्रनवसहस्रत्रिशती। कायभंगवर्जितमिथ्यात्वादिसंख्यांकेषु परस्परं गुणितेषु तत्प्रमाणस्य सम्भवात्। उभये मिलित्वा षष्ट्यग्रपंचशतषोडशसहस्री गुण्यं, एकैकं प्रतिभयद्विकजोभयकूटचतुष्कं कायभंगजत्रिषष्टिश्चास्तोत्यनेन ६३। ४। अध्रुवगुणकारेण गुणितं सर्वप्रत्ययभंगा विंशत्यग्रैकशतत्रिसप्ततिसहस्रैकचत्वारिंशल्लक्षाणि भवन्ति ४१७३१२०। सासादने प्रथमकूटे षडिंद्रियचतुष्कषायजातित्रिवेदद्विकद्वादशयोगेषु परस्परं गुणितेष्वष्टाविंशत्यग्रसप्तदशशती, वैक्रियिक-

---

मिथ्यात्व आदिकी संख्याको परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण होता है वही भंगोंका प्रमाण है। अतः मिथ्यादृष्टिमें अनन्तानुबन्धीरहित कूटोंमें पाँच मिथ्यात्व, छह इन्द्रिय, चार कषायत्रिक, तीन वेद, हास्य और शोकका दो युगल, दस योग ५×६×४×३×२×१० को परस्पर गुणा करनेसे बहत्तर सौ होते हैं। अनन्तानुबन्धी सहित कूटमें पाँच मिथ्यात्व, छह इन्द्रिय, चार कषाय, तीन वेद, हास्य शोक दो युगल, तेरह योग ५×६×४×३×२×१३ को परस्परमें गुणा करनेसे तिरानबे सौ साठ होते हैं। दोनोंको मिलानेपर सोलह हजार पाँच सौ साठ तो ध्रुव गुण्य हुए। तथा एक भय जुगुप्सा रहित, एक भय सहित, एक जुगुप्सा सहित एक भय जुगुप्सा सहित ये चार भंग होते हैं। तथा कायहिंसाके तेरसठ भंग होते हैं। ये चार और तेरसठ अध्रुव गुणकार हैं। अतः उक्त ध्रुव गुण्यको चार और तेरसठसे गुणा करनेपर मिथ्यादृष्टिमें सब प्रत्ययोंके भंग इकतालीस लाख तिहत्तर हजार एक सौ बीस हैं।

सासादनमें छह इन्द्रिय, चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, वैक्रियिक मिश्र बिना बारह

आ सासादनं नरकं बुगनप्पुदरिदं पुंवेदमुं स्त्रीवेदमुं सासादनंगे देवगतियोळ् घटिसुगुमप्पुदरिंदमा वैक्रियिकमिश्रकाययोगदोळ् सासादनंगे इं ६। क ४। वे २। द्वि २। वै यो १। इवं परस्परं गुणिसिदोडे ध्रुवभंगंगळुतो भत्तारप्पुवु। ९६॥ उभयमुं ध्रुवं १८२४॥ अध्रुवगुणकारंगळ् चतुर्ग्गुणितत्रिषष्टियक्कु। १८२४। ६३। ४॥ मिवं परस्परं गुणिसिदोडे सासादनंगे सर्व्वभंगंगळु नाल्कुलक्षमुमय्वत्तों भत्तुसासिरदरुनूर नाल्वत्तें टप्पुवु। ४५९६४८॥ मिश्रंगे इं ६। क ४। वे ३। द्वि २। यो १०॥ यिवं परस्परं गुणिसिदोडे ध्रुवभंगगुण्यंगळु सासिरद नानूरनाल्वत्तक्कुं। १४४० अध्रुवगुणकारंगळ् चतुर्ग्गुणितत्रिषष्टिप्रमितमक्कु १४४०। ६३। ४॥ मिवं परस्परं गुणिसिदोडे मिश्रंगे सर्व्वभंगंगळु मूरुलक्षमुमरुवत्तेरडु सासिरदें टुनूरें भत्तक्कुं। ३६२८८०।

असंयतंगे इं ६। क ४। वे ३। द्वि २। यो १०। यिवं परस्परं गुणिसिदोडे सासिरदनानूर नाल्वत्तक्कुं १४४०॥ मत्तमसंयतंगे वैक्रियिकमिश्रकाययोगकार्म्मणकाययोगद्वयदोळं स्त्रीवेदोदयं घटिसदप्पुदरिंदं। इं ६। क ४। वे २। द्वि २। यो २। यिवं परस्परं गुणिसिदोडे ध्रुवगुण्यंगळु नूरतो भत्तेरडप्पुवु। १९२॥ मत्तमसंयतंगौदारिकमिश्रकाययोगदोळ् पुंवेदोदयमों देयप्पुदरिंदं। इं ६। क ४। वे १। द्वि २। यो १। इवं परस्परं गुणिसिदोडे नाल्वत्तें टु ध्रुवगुण्यंगळप्पुवी मूरुं राशिगळं कूडियध्रुवंगळिदं गुणिसिदोडे १६८०। ६३। ४ इवं परस्परं गुणिसिदोडे असंयतन सर्व्वप्रत्ययभंगंगळ् नाल्कुलक्षमुमिप्पत्तमूरु सासिरदमूनूररुवत्तु भंगंगळप्पुवु।

मिश्रे च इं ६। क ४। वे २ षंढोनं। द्वि २। यो १ गुणिते षण्णवतिः मिलित्वा चतुर्विंशत्यग्राष्टादशशती ध्रुवगुण्यं प्राक्तनाध्रुवगुणकारेण गुणितं सर्वभंगाश्चतुर्लक्षैकान्नषष्टिसहस्रषड्शताष्टचत्वारिंशतो भवन्ति। मिश्रे इं ६। क ४। वे ३। द्वि २। यो १० गुणिते ध्रुवगुण्यं चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती तेनाध्रुवकारेण गुणितास्त्रिलक्षद्वाषष्टिसहस्राष्टशताशीतयो भवन्ति। असंयते इं ६। क ४। वे ३। द्वि २। यो १० गुणिते चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती। वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोः स्त्री नेति इं ६। क ४। वे २। द्वि २। यो २। गुणिते द्वानवत्यग्रशतं। औदारिकमिश्रे पुमानेवेति इं ६। क ४। वे १। द्वि २। यो १। गुणितेऽष्टचत्वारिंशत्। मिलित्वा ध्रुवगुण्यमशीत्यग्रषोडशशती। अध्रुवगुणकारगुणितः सर्वभंगाश्चतुर्लक्षत्रयोविंशतिसहस्रत्रिशतषष्टयो भवन्ति।

योग, इनको परस्परमें गुणा करनेपर सत्तरह सौ अट्ठाईस होते हैं। वैक्रियिक मिश्रमें यहाँ नपुंसक वेद नहीं होता। अतः छह इन्द्रिय, चार कषाय, दो वेद, दो युगल एक योगको परस्परमें गुणा करनेसे छियानबे हुए। दोनों मिलकर अट्ठारह सौ चौबीस ध्रुव गुण्य हुआ। इसको चार और त्रेसठ अध्रुव गुणकारसे गुणा करनेपर सब भंग चार लाख उनसठ हजार छह सौ अड़तालीस होते हैं। मिश्र में छह इन्द्रिय, चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, दस योगको परस्पर गुणा करनेसे ध्रुव गुण्य चौदह सौ चालीस होता है, इसको अध्रुव गुणकार चार और तेरसठसे गुणा करनेपर तीन लाख बासठ हजार आठ सौ अस्सी भंग होते हैं, असंयतमें छह इन्द्रिय, चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, पर्याप्त सम्बन्धी दस योगोंको परस्परमें गुणा करनेपर चौदह सौ चालीस हुए। तथा वैक्रियिक मिश्र और कार्माण योगमें यहाँ स्त्रीवेद नहीं होता। अतः छह इन्द्रिय, चार कषाय, दो वेद, दो युगल, दो योगको गुणा करनेपर एक सौ बानबे हुए और औदारिक मिश्रमें एक पुरुषवेद ही है। अतः छह इन्द्रिय, चार कषाय, एक वेद, दो युगल, एक योगको गुणा करनेपर अड़तालीस हुए। इन तीनोंको जोड़नेपर ध्रुव गुण्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२३३६० ॥ देशसंयतंगे वैक्रियिककाययोगमुमिल्लप्पुदरिंदं इं ६ । क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ ॥ इवं परस्परं गुणिसिदोडे सासिरदिन्नूरतोंभत्तारप्पुविल्लि अध्रुवगुणकारंगळं त्रसवधासंयम-मिल्लप्पुदरिंदं

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

प्रत्येक भंगंगळैदु । द्विसंयोगंगळु पत्तु । त्रिसंयोगंगळं पत्तु । चतुःसंयोगंगळुमैदु । पंचसंयोगमोंदु । ५ । १० । १० । ५ । १ ॥ यितु देशसंयतंगध्रुवगुणकारंगळु चतुःकूटगुणितंगळेकत्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु । १२९६ । ३१ । ४ ॥ यिवं परस्परं गुणिसिदोडे लक्षमुमरुवत्तु सासिरदेळुनूर नाल्कप्पुवु । १६०७०४ ॥ प्रमत्तसंयतंगे क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । यिवं परस्परं गुणिसिदोडिन्नूरपदिनारप्पुवु । २१६ ॥ मत्तमाहारकशरीरदोळु क ४ । वे १ । द्वि २ । यो २ । इवं परस्परं गुणिसिदोडे पदिनारप्पुवु । कूडि ध्रुवंगळु २३२ ॥ अध्रुवंगळु चतुःकूटप्रकार नाल्करिंदं गुणिसिदोडे २३२ । ४ ॥ सर्व्वप्रत्ययभंगंगळु प्रमत्तंगो भैनूरिप्पत्तेंटप्पुवु । ९२८ ॥ अप्रमत्तंगे क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । इव परस्परं गुणिसि अध्रुवचतुष्कदिंदं गुणिसिदोडे २१६ । ४ । एंटुनूररुवत्तनाल्कप्पुवु । ८६४ ॥ अपूर्व्वकरणं क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । इवं परस्परं गुणिसियध्रुवचतुष्कदिंदं गुणिसिदोडे २१६ । ४ ॥ एंटुनूररुवत्तनाल्कु भंगंगळप्पुवु । ८६४ ॥ अनिवृत्तिकरणंगे सवेदभागेयोळु क ४ । वे ३ । यो ९ ॥ इवं परस्परं गुणिसिदोडे नूरयेंदु भंगंगळप्पुदु । १०८ ॥ मत्तमा भागेयोळु क ४ । वे २ । यो ९ । इवं परस्परं गुणिसिदोडप्पत्तेरडप्पुवु

देशसंयते वैक्रियिकयोगो नेति इं ६ । क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । गुणिते षण्णवत्यग्रद्वादशशती । अध्रुवगुणकारेण त्रसकायवधो नेत्येकत्रिंशच्चतुष्कात्मकेन गुणिते लक्षषष्टिसहस्रसप्तशतचत्वारो भवन्ति । प्रमत्ते क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । गुणिते षोडशाग्रद्विशतं । आहारकशरीरे क ४ । वे १ । द्वि २ । यो २ । गुणिते षोडश, मिलित्वा द्वात्रिंशदग्रद्विशती । अध्रुवकूटचतुष्केण गुणिता सर्वभंगा अष्टाविंशत्यग्रनवशती । अप्रमत्ते क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । संगुण्याध्रुवचतुष्केण गुणिते चतुःषष्टयग्राष्टशती । अपूर्वकरणेऽपि तथा

सोलह सौ अस्सी होता है। इसको अध्रुव गुण्य चार और तेरसठसे गुणा करनेपर सब भंग चार लाख तेईस हजार तीन सौ साठ होते हैं।

देशसंयतमें वैक्रियिक योग भी नहीं है। अतः छह इन्द्रिय, चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, नौ योगको परस्परमें गुणा करनेसे बारह सौ छियानबे हुए। यहाँ त्रसबध नहीं है अतः पाँच स्थावर बधकी अपेक्षा संयोगी भंग इकतीस तथा चार भय जुगुप्सा सम्बन्धी अध्रुव गुणकारोंसे उक्त ध्रुव गुण्यको गुणा करनेपर एक लाख साठ हजार सात सौ चार भंग होते हैं।

प्रमत्तमें चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, नौ योगको परस्परमें गुणा करनेपर दो सौ सोलह हुए। तथा आहारक योगमें चार कषाय, एक पुरुषवेद, दो युगल, दो योगको गुणा करनेपर सोलह मिलकर दो सौ बत्तीस हुए। इनको भय जुगुप्सा सम्बन्धी चार अध्रुव गुणकारोंसे गुणा करनेपर सब भंग नौ सौ अठाईस हुए।

अप्रमत्तमें चार कषाय, तीन वेद, दो युगल, नौ योगको परस्पर गुणा करनेपर दो सौ सोलह हुए। इसे अध्रुव गुणकार चारमें गुणा करनेपर आठसौ चौसठ भंग हुए। अपूर्वकरणमें भी इसी प्रकार आठसौ चौसठ होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२॥ मत्तमवेदभागेयोळु क ४। यो ९। गुणिसिदोडे मूवत्तारु ३६। मत्तं क्रोधरहितभागेयोळु क ३। यो ९। गुणिसिदोडे इप्पत्तेळप्पुवु २७। मत्तं मानरहितभागेयोळु क २। यो ९॥ गुणिसिदोडे पदिनें टप्पुवु। १८। मत्तं मायारहितभागेयोळु क १। यो ९। गुणिसिदोडे ओंभत्तप्पुवु। ९॥ इंतनिवृत्तिकरणनाद राशिगळु कूडिनूरेप्पत्तप्पुवु। २७०॥ सूक्ष्मसांपरायंगे क १। यो ९। गुणिसिदोडों भत्ते भंगंगळप्पुवु। ९॥ उपशांतकषायंगे योगभेददों भत्ते भंगंगळप्पुवु। ९॥ क्षीणकषायंगं योगभेद दों भत्ते भंगंगळप्पुवु। ९॥ सयोगकेवलि भट्टारकंगं योगभेदविंदं प्रत्ययभंगंगळेळेयप्पुवु। ७॥ अयोगिजिनस्वामियोळु प्रत्ययं शून्यमक्कुं॥

अनंतरमी भंगंगळनुच्चरिसि तोरिदपरु :—

चउवीसट्ठारसयं तालं चोद्दसयसीदिसोलसयं।
छण्णउदी बारसयं बत्तीसं बिसद सोल बिसदं च ॥७९७॥

चतुर्विंशत्यष्टादशशतं चत्वारिंशच्चतुर्द्दश अशीति षोडश। षण्णवतिद्वादशशतं द्वात्रिंशत् द्विशतं षोडश द्विशतं च॥

मिथ्यादृष्टियोळु मुंपेळदु पोदुवप्पुदरिंदं सासादनादिगळोळु पेळ्दपरु :—

सासादनंगे ध्रुवगुण्यंगळु चतुर्विंशत्युत्तराष्टादश शतमक्कुं। १८२४॥ मिश्रनोळु चत्वारिंशदुत्तरचतुर्द्दशशतमक्कुं। १४४०॥ असंयतनोळु अशीत्युत्तर षोडशशतकमक्कुं। १६८०॥ देश-

---

तावंतः। अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे क ४। वे ३। यो ९। गुणितेऽष्टोत्तरशतं। पुनस्तत्रैव क ४। वे २। यो ९। गुणिते द्वासप्ततिः। अवेदभागे क ४। यो ९। गुणिते षट्त्रिंशत्। अक्रोधभागे क ३। यो ९। गुणिते सप्तविंशतिः। अमानभागे क २। यो ९। गुणितेऽष्टादश। अमायभागे क १। यो ९। गुणिते नव। मिलित्वा सप्तत्यग्रद्विशती। सूक्ष्मसाम्पराये क १। यो ९। गुणिते नव। उपशान्तकषाये योगभेदेन नव। क्षीणकषायेऽपि नव। सयोगे सप्त। अयोगे प्रत्ययशून्यं॥७९६॥ उक्तभंगानाह—

ध्रुवगुण्यमपूर्वकरणांतं क्रमशो मिथ्यादृष्टौ प्रागुक्तं। सासादने चतुर्विंशत्यग्राष्टादशशती। मिश्रे

अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें चार कषाय, तीन वेद, नौ योगोंको परस्परमें गुणा करनेपर एक सौ आठ हुए। यहाँसे अध्रुव गुणकार नहीं है। उसी सवेद भागमें चार कषाय, दो वेद, नौ योगोंको गुणा करनेपर बहत्तर भंग होते हैं। अवेद भागमें चार कषाय और नौ योगोंको परस्परमें गुणा करनेपर छत्तीस भंग होते हैं। क्रोधरहित भागमें तीन कषाय और नौ योगोंका गुणा करनेपर सत्ताईस भंग होते हैं। मान रहित भागमें दो कषाय और नौ योगोंको गुणा करनेपर अठारह होते हैं। माया रहित भागमें एक कषाय और नौ योगोंको गुणा करनेपर नौ भेद होते हैं। सब मिलकर अनिवृत्तिकरणमें दो सौ सत्तर भंग होते हैं। सूक्ष्म साम्परायमें कषाय एक और नौ योगोंको गुणा करनेपर नौ भंग होते हैं। उपशान्त कषायमें केवल नौ योग ही होनेसे नौ भंग हैं। क्षीणकषायमें भी नौ भंग हैं। सयोगीमें भी योगोंसे ही सात भंग होते हैं। अयोगीमें कोई प्रत्यय नहीं होता॥७९६॥

उक्त भंगोंको कहते हैं—

ध्रुवगुण्य अपूर्वकरण पर्यन्त क्रमसे मिथ्यादृष्टीमें तो पूर्वोक्त है। सासादनमें अठारह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयतनोळु षण्णवत्युत्तरद्वादशशतमक्कुं। १२९६॥ प्रमत्तसंयतनोळु द्वात्रिंशदुत्तरद्विशतमक्कुं। २३२। अप्रमत्तनोल षोडशोत्तरद्विशतमक्कुं। २१६॥ अपूर्व्वकरणादिगळोळु पेळ्वपरु :—

सोलस बिसदं कमसो धुवगुणगारा अपुव्वकरणोत्ति।
अद्धुवगुणिदे भंगा धुवभंगाणं ण भेदादो ॥७९८॥

षोडश द्विशतं क्रमशो ध्रुवगुणकारा अपूर्व्वकरणपर्य्यंतं। अध्रुवगुणिते भंगा ध्रुवभंगानां न भेदात्॥

अपूर्व्वकरणनोळु ध्रुवगुण्यंगळु षोडशोत्तरद्विशतमक्कुं २१६॥ यितो क्रमदिदं मिथ्यादृष्ट्यादियागियपूर्व्वकरणपर्य्यंतं ध्रुवगुण्यभंगंगळुमध्रुवगुणकारंगळेंब भेदंगळुंटप्पुदरिदं ध्रुवगुण्यंगळप्पुविवं तम्म अध्रुवगुणकारं गळिदं गुणिसुत्तं विरलु तंतम्म भंगंगळप्पुविल्लि ध्रुवभंगानां ई पेळल्पट्ट ध्रुवभंगंगळनितु मेकैकंगळप्पुदरिदं न भेदात् आध्रुवभंगंगळिगन्ना प्राणासंयमदंते द्विसंयोगादि भेदंगळिल्लप्पुदरिदं मिथ्यात्वेंद्रियादिगळगे संभविसुव भंगंगळनितु ध्रुवभंगंगळेयप्पुवेंबुदत्थं॥

अनंतरमा प्राणासंयमगळगे प्रत्येकद्विसंयोगादिभेदंगळंटविरा भेदंगळं साधिसुवुपायमाउदेंदोडे अक्षसंचारं ज्ञातात्थंमदल्लविदों दु प्रकारदिदं प्रत्येक द्विसंयोगादिगळं साधिसुवुपायमं पेळ्वपरु :—

छप्पंचादेयंतं रूउत्तरभाजिदे कमेण हदे।
लद्धं मिच्छचउक्के देसे संजोगगुणगारा ॥७९९॥

षट्पंचाद्येकांतं रूपोत्तर भाजिते क्रमेण हते। लब्धं मिथ्यादृष्ट्यादि चतुष्के देशसंयते संयोगगुणकाराः॥

षट्पंचांकंगळादियागि एकांकावसानमागि स्थापिसिदुवं पूर्व्वोक्तक्रमदिदं एकाद्येकोत्तरमागवर केळगे हारंगळं स्थापिसि भागिसुत्तिरलु प्रथमलब्धं प्रत्येकभंगप्रमाणमारप्पुवु। ६। मत्तं

चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती। असंयतेऽशीत्यग्रषोडशशती। देशसंयते षण्णवत्यग्रद्वादशशती। प्रमत्ते द्वात्रिंशदग्रद्विशती। अप्रमत्ते द्वात्रिंशदग्रद्विशती। अप्रमत्ते षोडशाग्रद्विशती। अपूर्वकरणे षोडशाग्रद्विशती। अमीषु गुण्येषु स्वस्वाध्रुवगुणकारेण गुणितेषु तत्र भंगाः स्युः। उपरि केवलध्रुवभंगाणामेव भेदान्नाध्रुवगुणकारः द्विसंयोगादिजनितत्वाभावात्। ॥७९७॥७९८॥ प्रागुक्तप्रत्येकादिभंगसाधनेऽक्षसंचारो ज्ञातार्थः, इत्युपायान्तरमाह—

षडादीनेकपर्यंतानंकान् संस्थाप्य तदधोहारानेकादीनेकोत्तरान् संस्थाप्य—

सौ चौबीस, मिश्रमें चौदह सौ चालीस, असंयतमें सोलह सौ अस्सी, देशसंयतमें बारह सौ छियानबे, प्रमत्तमें दो सौ बत्तीस, अप्रमत्तमें दो सौ सोलह, अपूर्वकरणमें दो सौ सोलह हैं। इन ध्रुव गुण्योंको अपने-अपने अध्रुव गुणकारसे गुणा करनेपर अपने-अपने भंग होते हैं। ऊपरके गुणस्थानोंमें केवल ध्रुव भंग ही हैं; क्योंकि उनमें भय जुगुप्सा और अविरतिका अभाव है अतः अध्रुव गुणकार नहीं होते ॥७९७-७९८॥

पूर्वोक्त प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगोंके साधनेमें अक्षसंचार कहा। अब उनके साधनेके लिये अन्य उपाय कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षट् पंचांकंगळं गुणिसिव भाज्यमनेकद्विकमं गुणिसिदं कदिदं भागिसुत्तं विरला बंद लब्धं पदिनैदु द्विसंयोगंगळ भंगंगळप्पुविवु पूर्व्वोक्तक्रमविदं मुंदे मुंदे भाज्य भागहारांकंगळं गुणिसि गुणिसि भागिसुत्तं विरलु त्रिसंयोग चतुःसंयोग पंचसंयोगषट्संयोग भंगंगळ ध्रुवगुणकारंगळप्पुववरिदं मिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्ग्गुणस्थानंगळोळं देशसंयत नोळं गुणिसुत्तं विरलु सर्व्व प्रत्ययभंगंगळं तम्मलिल यप्पुवु। संदृष्टि :—

ध्रुव १६५६० । अध्रुव ६३ । ४ । भंगं ४१७३१२० ॥ सासादनंगे ध्रु १८२४ । अध्रुव ६३ । ४ ॥ भंगंगळु ४५९६४८ ॥ मिश्रंगे ध्रुव १४४० । अध्रुव ६३ । ४ । भंगंगळु ३६२८८० ॥ असंयतंगे ध्रुव १६८० । अध्रु ६३ । ४ । भंगंगळु ४२३३६० ॥ देशसंयतंगे ध्रुव १२९६ । अध्रु ३१ । ४ । भंगं १६०७०४ ॥ प्रमत्तसंयतंगे ध्रुव २३२ । अध्रु ४ । भंगंगळु ९२८ ॥ अप्रमत्तंगे ध्रुव २१६ ।

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

अत्र प्रथमहारेण स्वांशे भक्ते लब्धं प्रत्येकभंगाः षट् । पुनः परस्पराहतषट्पंचांशेऽन्योन्याहतैकद्विहारेण भक्ते लब्धं द्विसंयोगभंगाः पंचदश । पुनः परस्पराहतत्रिंशच्चतुरंशे तथाकृतद्विहारेण भक्ते लब्धं त्रिसंयोगा विंशतिः । पुनः तथाकृतविंशत्यधिकशतत्र्यंशे तथाकृतषट्चतुर्हारेण भक्ते लब्धं चतुःसंयोगाः पंचदश । पुनः

यदि प्रत्येक, द्विसंयोगी आदि भेद करने हों तो विवक्षितका जो प्रमाण हो उस प्रमाणसे लगाकर एक-एक घटाते हुए एक अंक तक क्रमसे लिखो। ये भाज्य हुए। इनके नीचे एकसे लेकर एक-एक बढ़ाते हुए उस विवक्षित प्रमाण अंक पर्यन्त क्रमसे लिखो। ये भागहार हुए। भाज्यको अंश और भागहारको हार कहते हैं। भिन्न गणितमें जो विधान है उसके द्वारा क्रमसे पूर्व अंशोंके द्वारा अगले अंशोंको और पूर्व हारके द्वारा अगले हारको गुणा करके जो जो अंशोंका प्रमाण हो उसको हार प्रमाणका भाग देनेसे जो प्रमाण आवे उतने-उतने भंग वहाँ जानना। सो मिथ्यादृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें कायवधका प्रमाण छह है। सो छह, पाँच, चार, तीन, दो एक अंश क्रमसे लिखो और उनके नीचे एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह ये हार लिखो—

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

यहाँ प्रथम अंश छहको हार एकका भाग देनेपर छह आये। सो प्रत्येक भंग छह हैं। फिर प्रथम छहसे अगले पाँचको गुणा करनेपर तीस अंश हुए, इसको एकसे अगले दोको गुणा करनेपर दो हारसे भाग दिया पन्द्रह आये। इतने द्विसंयोगी भंग हुए। पुनः तीससे आगेके चारको गुणा करनेपर एक सौ बीस अंश हुए। इनको पूर्व दो से आगे के तीनसे गुणा करनेपर हुए छह हारसे भाग देनेपर बीस आये। इतने त्रिसंयोग भंग हैं। पुनः पूर्व एक सौ बीससे अगले तीनको गुणा करनेपर तीन सौ साठ अंश हुए। उन्हें पूर्व छहसे अगले चारसे गुणा करनेपर हुए हार चौबीसका भाग देनेपर पन्द्रह आये। इतने चतुःसंयोगी भंग हैं। पुनः तीन सौ साठसे आगेके दो को गुणा करनेपर सात सौ बीस अंश हुए। उनको पूर्व चौबीससे आगेके पाँचसे गुणा करनेपर हुए हार एक सौ बीससे भाग देनेपर छह आये। इतने पंच-संयोगी भंग हैं। पुनः सात सौ बीससे आगेके एकको गुणा करनेपर सात सौ बीस अंश हुए।

अध्रु ४। भंगंगळु ८६४ ॥ अपूर्व्वकरणंगे ध्रु २९६। अध्रु ४। भंगंगळु ८६४ ॥ अनिवृत्तिकरणंगे १०८। ७२। ३६। २७। १८। ९। कूडि २७० ॥ सूक्ष्मसांपरायंगे भंगंगळु ९ ॥ उपशान्त कषायंगे भंगंगळु ९। क्षीणकषायंगे भंगंगळु ९ ॥ सयोगिकेवलि भट्टारकंगे भंगंगळु ७ ॥ अयोगिकेवलि-स्वामियोळु प्रत्ययं शून्यमक्कुं ॥

अनंतरमी प्रत्ययोदयकार्य्यभूतजीवपरिणामंगळु ज्ञानावरणादिकर्म्मंगळगे बंधकारणंगळें दु तत्प्रतिपत्त्यर्थमागि पेळदपरु :—

तथाकृतषष्ट्यधिकत्रिशतद्वयंशे तथाकृतचतुर्विंशतिपंचहारेण भक्ते लब्धं पंचसंयोगाः षट्। पुनः तथाकृत-विंशत्यधिकसप्तशतैकांशे तथाकृतविंशत्यधिकशतषट्हारेण भक्ते लब्धं षट्संयोगा एकः, मिलित्वा त्रिषष्टिः। प्रत्येकं मिथ्यादृष्ट्यादिचतुष्के संयोगगुणकारा भवन्ति। तथा पंचादीनेकपर्यंतानंकान् संस्थाप्य तदधोहारानेका-दीनेकोत्तरान् संस्थाप्य—

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

प्राग्वद् भक्त्वा लब्धं प्रत्येकभंगाः पंच। द्विसंयोगा दश। त्रिसंयोगा दश। चतुःसंयोगाः पंच। पंचसंयोग एकः, मिलित्वैकत्रिंशद्देशसंयते संयोगगुणकारः स्यात् ॥७९९॥ अथ प्रत्ययोदयकार्यजीवपरिणामानां ज्ञानावरणादिबंधकारणत्वे प्रतिपत्तिमाह—

उनको पूर्व एक सौ बीससे आगेके छहको गुणा करनेपर हुए हार सात सौ बीसका भाग देनेपर एक आया। छह संयोगी भाग एक हुआ। इस तरह सब मिलकर त्रेसठ भंग हुए।

देशसंयतमें त्रसवध न होनेसे पाँचकी ही हिंसा है। जो क्रमसे पाँचसे एक पर्यन्त लिखो। उनके नीचे एकसे पाँच पर्यन्त हार लिखो यहाँ भी पूर्वोक्त प्रकारसे पाँचको एक का

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

भाग देनेपर पाँच आये। सो इतने प्रत्येक भंग हैं। आगे पाँचसे चारको गुणा करनेपर बीस अंश हुए। उसको एकसे गुणित दो हारका भाग देने-पर दस आये। इतने द्विसंयोगी हुए। पुनः बीससे गुणित तीन अंशको दो से गुणित तीन हारका भाग देनेपर दस आये। इतने त्रिसंयोगी भंग हुए। पुनः साठसे गुणित दो अंशोंको छहसे गुणित चार हारका भाग देनेपर पाँच आये। इतने चतुःसंयोगी हुए। पुनः एक सौ बीससे गुणित एक अंशको चौबीससे गुणित पाँच भागहारका भाग देनेपर एक आया। एक पंचसंयोगी भंग हुआ। ये सब मिलकर देशसंयतमें कायबधके इकतीस भेद होते हैं। ये कायबध सम्बन्धी अध्रुव गुणकार हैं सो छह कायकी हिंसामें पृथ्वी अप् तेज वायु वनस्पति त्रसमेंसे एक-एक की हिंसा करनेसे प्रत्येक भेद छह हुए। पुनः पृथ्वी अप्की, पृथ्वी तेजकी, पृथ्वी वायुकी, पृथ्वी वनस्पतिकी, पृथ्वी त्रसकी, अप् तेजकी, अप् वायुकी, अप् वनस्पतिकी, अप् त्रसकी, तेज वायुकी, तेज वनस्पतिकी, तेज त्रसकी, वायु वनस्पतिकी, वायु त्रसकी, वनस्पति त्रसकी हिंसाके भेदसे द्विसंयोगी पन्द्रह हुए। इसी प्रकार आगे भी जानना ॥७९९॥

आगे प्रत्ययोंके उदयके कार्य जो जीवके परिणाम हैं उन्हें ज्ञानावरण आदिके बन्धका कारण बतलाते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पडिणीगमंतराये उवघादे तप्पदोसणिण्हवणे ।
आवरणदुगं भूयो बंधदि अच्चासणाए वि ॥८००॥

प्रत्यनीकेऽतराये उपघाते तत्प्रदोषे निह्नवे । आवरणद्वयं भूयो बध्नात्यत्यासादनेऽपि ॥

श्रुतश्रुतधराविष्वविनयवृत्तिः प्रत्यनीकं प्रतिकूलतेत्यर्थः । ज्ञानव्यवच्छेदकरणमंतरायः । प्रशस्तज्ञानदूषणमुपघातः । मनसा दूषणं वा उपघातः । अध्येतृषु क्षुद्रबाधाकरणं वा उपधातः । तत्त्वज्ञानेषु हर्षाभावः प्रद्वेषः । तत्त्वज्ञानस्य मोक्षसाधनस्य कीर्त्तने कृते कस्यचिदनभिव्याहरतोंतः पैशुन्यपरिणामः प्रदोषः । कुतश्चित्कारणाज्जानन्नपि नास्ति न वेद्मीति व्यपलपनं निह्नवः । अप्रसिद्धगुरूनपलप्य प्रसिद्धगुरुकथनं वा निह्नवः ॥ कायवाग्भ्यामननुमननमासादनं । कायेन वाचा च परप्रकाश्यज्ञानस्य वर्ज्जनमासादनं । इंतु प्रत्यनीकांतरायोपघात तत्प्रदोषनिह्नवात्यासादनंगळोळु जीवं ज्ञानदर्शनावरणद्वयमं कट्टुगुं । प्रचुरवृत्तियिंदं स्थित्यनुभागंगळं कट्टुगुमं बुदत्थं । मीप्रत्यनीकांतरायादिगळु ज्ञानदर्शनावरणद्वयक्कं युगपद्बंधकारणंगळप्पुवेके दोडा ज्ञानदर्शनावरणद्वयं युगपद्बंधंगळप्पुवप्पुदरिदं अथवा विषयभेदावास्रवभेदः एंदितो प्रत्यनीकादिगळु ज्ञानविषयंगळावोडे

श्रुततद्धरादिषु—अविनयवृत्तिः प्रत्यनीकं प्रतिकूलतेत्यर्थः । ज्ञानविच्छेदकरणमन्तरायः । मनसा वाचा वा प्रशस्तज्ञानदूषणमध्येतृषु क्षुद्रबाधाकरणं वा उपघातः । तत्प्रदोषः तत्त्वज्ञाने हर्षाभावः । तस्य मोक्षसाधनस्य कीर्तने कृते कस्यचिदनभिव्याहारतोऽन्तःपैशुन्यं वा प्रद्वेषः । कुतश्चित्कारणात् जानन्नपि नास्ति न वेद्मीति व्यपलपनमप्रसिद्धगुरूनपलप्य प्रसिद्धगुरुकथनं वा निह्नवः । कायवाग्भ्यामननुमननं कायेन वाचा वा परप्रकाश्यज्ञानस्य वर्जनं वेत्यासादना । एतेषु षट्सु सत्सु जीवो ज्ञानदर्शनावरणद्वयं भूयो बध्नाति—प्रचुरवृत्त्या स्थित्यनुभागौ बध्नातीत्यर्थः । ते च षडपि तद्द्वयस्य युगपद्बंधकारणानि तु तथा बन्धात् । अथवा विषयभेदादास्रव-

---

शास्त्र और शास्त्रके धारक आदिके विषयमें अविनयरूप प्रवृत्ति करना, उनके प्रत्यनीक अर्थात् प्रतिकूल होना। ज्ञानमें विच्छेद करना अन्तराय है। मनसे अथवा वचनसे प्रशस्त ज्ञानमें दूषण लगाना या पढ़नेवालोंमें छोटी-मोटी बाधा करना उपघात है। तत्त्वज्ञानके प्रति हर्ष प्रकट न करना अथवा मोक्षके साधनभूत तत्त्वज्ञानका उपदेश होनेपर किसीका मुखसे कुछ न कहकर अन्तरंगमें दुष्ट भाव होना प्रदोष है। किसी कारणसे जानते हुए भी मैं नहीं जानता ऐसा कहना अथवा अपने अप्रसिद्ध गुरुका नाम छिपाकर प्रसिद्ध व्यक्तिको अपना गुरु बतलाना निह्नव है। काय और वचनके द्वारा सम्यग्ज्ञानकी अनुमोदना न करना अथवा काय और वचनसे दूसरेके द्वारा प्रकाशित ज्ञानका तिरस्कार करना आसादन है। इन छह कार्योंके करनेपर जीव ज्ञानावरण और दर्शनावरणका बहुत बन्ध करता है अर्थात् उनमें स्थिति और अनुभाग अधिक बाँधता है।

इसका आशय यह है कि ज्ञानावरण-दर्शनावरणका बन्ध तो संसारी जीवके सदा होता है। उक्त कार्योंके करनेपर स्थिति अनुभाग विशेष पड़ता है। यही बात आगेके सम्बन्धमें भी जानना। उक्त छहों एक साथ ज्ञानावरण-दर्शनावरण दोनोंके बन्धके कारण हैं। अथवा विषय भेदसे आस्रवमें भेद है। ज्ञानके विषयमें उक्त छह बातें करनेसे ज्ञानावरणका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरणीयबंधकारणंगळप्पुवु । दर्शनविषयंगळादोडे दर्शनावरणीयबंधकारणंगळप्पुवु ॥

भूदाणुकंपवदजोगजुज्जिदो खंतिदाणगुरुभत्तो ।
बंधदि भूयो सादं विवरीयो बंधदे इदरं ॥८०१॥

भूतानुकंपाव्रतयोगयुक्तः क्षांतिदानगुरुभक्तः । बध्नाति भूयः सातं विपरीतो बध्नातीतरत् ॥

तासु तासु गतिषु कर्मोदयवशाद्भवंतीति भूतानि प्राणिन इत्यर्थः तेष्वनुकंपनमनुकंपा भूतानुकंपा । व्रतान्यहिंसादीनि योगः समाधिः सम्यक्प्रणिधानमित्यर्थः । भूतानुकंपा च व्रतानि च योगश्च भूतानुकंपाव्रतयोगास्तैर्युक्तः यें दितु भूतानुकंपनव्रतयोगंगळें दिवरोळकूडिदनुं क्रोधादिनिवृत्तिलक्षणक्षांतिचतुर्विधदानमुमें बिवनुळ्ळनुं पंचगुरुभक्तिसंपन्ननुमप्प जीवं सातवेदनीयप्रकृतिगे भागमं माळ्कुं । विपरीतं भूतानुकंपारहितनुं व्रतमिल्लदनुं चित्तसमाधानरहितनुं क्षांतिदानशून्यनुं पंचगुरुभक्तिरहितनुं असातवेदनीयबंधप्रकृतिगे तीव्रानुभागमं कट्टुगुं ।

अरहंतसिद्धचेदियतवसुदगुरुधम्मसंघपडिणीगो ।
बंधदि दंसणमोहं अणंतसंसारिओ जेण ॥८०२॥

अर्हत्सिद्धचैत्यतपोगुरुश्रुतधर्म्मसंघप्रत्यनीकः । बध्नाति दर्शनमोहमनंतसंसारी येन ॥

येन—आउदों दु दर्शनमोहनीयमिथ्यात्वकर्म्मोदयकारणविदमर्हत्सिद्धचैत्यतपोगुरुश्रुतधर्म्मं संघप्रतिकूलनप्प अनंतसंसारिजीवनु दर्शनमोहनीयकर्म्ममं कट्टुगुं ॥

भेदः ज्ञानविषयत्वेन ज्ञानावरणस्य दर्शनविषयत्वेन दर्शनावरणस्येति ॥८००॥

गतौ गतौ कर्मोदयवशाद्भवन्तीति भूताः प्राणिनः तेष्वनुकम्पा । व्रतानि हिंसादिविरतिः । योगः समाधिः सम्यक्प्रणिधानमित्यर्थः तैर्युक्तः । क्रोधादिनिवृत्तिलक्षणक्षांत्या चतुर्विधदानेन पंचगुरुभक्त्या च सम्पन्नः स जीवः सातं तीव्रानुभागं भूयो बध्नाति । तद्विपरीतस्तादृगसातं बध्नाति ॥८०१॥

योऽर्हत्सिद्धचैत्यतपोगुरुश्रुतधर्मसंघप्रतिकूलः स तद्दर्शनमोहनीयं बध्नाति येनोदयागतेन जीवोऽनन्तसंसारी स्यात् ॥८०२॥

प्रचुर बन्ध होता है और दर्शनावरणके सम्बन्धमें करनेसे दर्शनावरणका प्रचुर बन्ध होता है ॥८००॥

कर्मोदयवश नाना गतियोंमें जो होते हैं उन्हें भूत या प्राणी कहते हैं । उनमें दयाभाव, हिंसादिके त्यागरूप व्रत तथा योग अर्थात् समाधि सम्यक् एकाग्रता इनसे जो युक्त होता है तथा क्रोधादिकी निवृत्तिरूप क्षमा, चार प्रकारके दान और पंचपरमेष्ठीकी भक्तिसे सम्पन्न होता है वह जीव सातावेदनीयको तीव्र अनुभागके साथ बाँधता है । इसके विपरीत आचरण वाला असातावेदनीयको तीव्र अनुभागके साथ बाँधता है ॥८०१॥

जो व्यक्ति अरहन्त, सिद्ध, जिन प्रतिमा, तप, निर्ग्रन्थ गुरु, श्रुत, धर्म, संघके प्रतिकूल होता है, उनको झूठा दोष लगाता है वह जीव दर्शन मोहनीयका बन्ध करता है । उसके उदयसे जीवके संसारका अन्त नहीं होता ॥८०२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिव्वकसायो बहुमोहपरिणदो रागदोससंसत्तो ।
बंधदि चरित्तमोहं दुविहंपि चरित्तगुणघादी ॥८०३॥

तीव्रकषायो बहुमोहपरिणतो रागद्वेषसंसक्तः। बध्नाति चरित्रमोहं द्विविधमपि चरित्रगुणघाती ॥

कषाय नोकषायंगळ तीव्रोदयमनुळ्ळनुं बहुमोहपरिणतनुं रागद्वेषसंसक्तनुं चारित्रगुणमं किडिसुवशीलमनुळ्ळ जीवं कषायनोकषाय भेदर्दिदं द्विविधमप्प चारित्रमोहनीयकर्म्ममं कट्टुगुं ॥

मिच्छो हु महारंभो णिस्सीलो तिव्वलोहसंजुत्तो ।
णिरयाउवं णिबद्धइ पावमई रुद्दपरिणामो ॥८०४॥

मिथ्यादृष्टिः खलु महारंभो निःशीलस्तीव्रलोभसंयुक्तः। नरकायुर्न्निबध्नाति पापमतो रौद्रपरिणामः ॥

बह्वारंभमनुळ्ळनुं निःशीलनुं तीव्रलोभयुक्तनुं मिथ्यादृष्टियप्प जीवं रौद्रपरिणाममनुळ्ळनुं पापकारणबुद्धिगळनुं स्फुटमागि नरकायुष्यमं कट्टुगुं ॥

उम्मग्गदेसगो मग्गणासगो गूढहियय माइल्लो ।
सठसीलो य ससल्लो तिरियाउं बंधदे जीवो ॥८०५॥

उन्मार्ग्गदेशको मार्ग्गनाशको गूढहृदय मायावी। शठशीलश्च सशल्यस्तिर्य्यगायुर्ब्बध्नाति जीवः ॥

उन्मार्ग्गोपदेशकनुं सन्मार्ग्गनाशकनुं गूढहृदयमायावियुं शठशीलनुं सशल्यनुमप्प जीवं तिर्य्यगायुष्यमं कट्टुगुं ॥

यः तीव्रकषायनोकषायोदययुतः बहुमोहपरिणतः रागद्वेषसंसक्तः चारित्रगुणविनाशनशीलः स जीवः कषायनोकषायभेदं द्विविधमपि चारित्रमोहनीयं बध्नाति ॥८०३॥

यः खलु मिथ्यादृष्टिः बह्वारम्भः निश्शीलः तीव्रलोभसंयुक्तः रौद्रपरिणामः स जीवो नरकायुर्बध्नाति ॥८०४॥

यः उन्मार्गोपदेशकः सन्मार्गनाशकः गूढहृदयो मायावी शठशीलः सशल्यः स जीवस्तिर्यगायुर्बध्नाति ॥८०५॥

जिसके तीव्र कषाय और नोकषायका उदय है, बहुत मोह युक्त है राग द्वेषसे घिरा है, चारित्र गुणको नष्ट करनेका जिसका स्वभाव है वह जीव कषाय नोकषायके भेदसे दो रूप चारित्र मोहका बन्ध करता है ॥८०३॥

जो जीव मिथ्यादृष्टी है, बहुत आरम्भवाला है, शील रहित है, तीव्र लोभी है, रौद्र परिणामी है, जिसकी बुद्धि पाप कार्यमें रहती है वह जीव नरकायुको बाँधता है ॥८०४॥

जो विपरीत मार्गका उपदेशक है, सन्मार्गका नाशक है, गूढ़ हृदय है, मायाचारी है, स्वभावसे दुष्ट है, मिथ्यात्व आदि शल्योंसे युक्त है वह तिर्यंच आयुको बाँधता है ॥८०५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पयडीए तणुकसाओ दाणरदी सीलसंजमविहीणो ।
मज्झिमगुणेहि जुत्तो मणुवाउं बंधदे जीवो ॥८०६॥

प्रकृत्या तनुकषायो दानरतिः शीलसंयमविहीनः । मध्यमगुणैर्युक्तो मनुष्यायुर्बध्नाति जीवः ॥

स्वभावदिंदमंदकषायोदयनुं दानदोळु प्रीतियनुळ्ळनुं शीलंगळिदं संयमदिदं विहीननुं मध्यमगुणंगळिदं कूडिदनुमप्प जीवनुं मनुष्यायुष्यमं कट्टुगुं ।

अणुवदमहव्वदेहिं य बालतवाकामणिज्जराये य ।
देवाउवं णिबद्धइ सम्माइट्ठी य जो जीवो ॥८०७॥

अणुव्रतमहाव्रतैश्च बालतपोऽकामनिर्जरया च । देवायुर्बध्नाति सम्यग्दृष्टिश्च यो जीवः ॥

यो जीवः सम्यग्दृष्टिर्मिथ्यादृष्टिश्च आवनोर्व्वनुं सम्यग्दृष्टिजीवनुं मिथ्यादृष्टिजीवनुं आ जीवं अणुव्रतंगळिदमुं महाव्रतंगळिदमुं देवायुष्यमं कट्टुगुं । मिथ्यादृष्टिगे तणुव्रतमहाव्रतंगळे दोडे द्रव्यदिंदमुपचारमणुव्रतमहाव्रतंगळक्कुं । सम्यग्दृष्टिजीवं केवलं सम्यक्त्वदिदमुमनुपचाराणुव्रतमहाव्रतंगळिदमुं देवायुष्यमं कट्टुगुं । द्रव्यभावलिंगिमिथ्यादृष्टिजीवनज्ञानतपश्चरणदिंदमकामनिर्ज्जरेयिदमुं देवायुष्यमं कट्टुगुं ।

मणवयणकायवक्को माइल्लो गारवेहि पडिबद्धो ।
असुहं बंधदि णामं तप्पडिवक्खेहि सुहणामं ॥८०८॥

मनोवचनकायवक्रो मायावी गारवैः प्रतिबद्धः । अशुभं बध्नाति नाम तत्प्रतिपक्षैः शुभनाम ॥

यः स्वभावेन मन्दकषायोदयः दानप्रीतिः शीलैः संयमेन च विहीनः मध्यमगुणैर्युक्तः स जीवो मनुष्यायुर्बध्नाति ॥८०६॥

यः सम्यग्दृष्टिर्जीवः स केवलं सम्यक्त्वेन साक्षादणुव्रतैर्महाव्रतैर्वा देवायुर्बध्नाति । यो मिथ्यादृष्टिर्जीवः स उपचाराणुव्रतमहाव्रतैर्बालतपसा अकामनिर्जरया च देवायुर्बध्नाति ॥८०७॥

यः मनोवचनकायैर्वक्रः मायावी गारवत्रयप्रतिबद्धः स जीवो नरकतिर्यग्गत्याद्यशुभं नामकर्म बध्नाति ।

जो जीव स्वभावसे ही मन्द कषायवाला है, दान देनेका प्रेमी है, शील और संयमसे रहित है, मध्यम गुणोंसे युक्त है वह मनुष्यायुका बन्ध करता है ॥८०६॥

जो जीव सम्यग्दृष्टी है वह केवल सम्यक्त्वसे अथवा अणुव्रत महाव्रतोंके द्वारा देवायुका बन्ध करता है। जो मिथ्यादृष्टी होता है वह उपचार रूप अणुव्रत महाव्रतोंसे तथा बालतप और अकामनिर्जरासे देवायुका बन्ध करता है ॥८०७॥

जिसका मन, वचन, काय, कुटिल है, जो मायाचारी है, तीन प्रकारके गारवसे बँधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनोवचनकायंगळ वक्रमनुळ्ळनुं मायेयनुळ्ळनुं गारवत्रयप्रतिबद्धनुमप्प जीवं नरकतिर्य्यग्गत्याद्यशुभनामकर्म्मंगळं कट्टुगुं। तत्प्रतिपक्षंगळिवं ऋजुमनोवचनकायंगळिवमुं निर्म्मायत्वदिवमुं गारवत्रयरहितत्वदिवमुं शुभनामकर्म्मंमं कट्टुगुं जीवं।

अरहंतादिसु भत्तो सुत्तरुची पढणुमाणगुणपेही।
बंधदि उच्चागोदं विवरीयो बंधदे इदरं ॥८०९॥

अर्हदादिषु भक्तः सूत्ररुचिः पाठानुमानगुणप्रेक्षी। बध्नात्युच्चैर्गोत्रं विपरीतो बध्नातीतरत्॥

अर्हदादिगळोळु भक्तियनुळ्ळनुं गणधरप्रोक्ताद्यागम सूत्रंगळोळु श्रद्धानमुळ्ळनुं अध्ययनार्त्थविचारविनयादिगुणदर्शियुमप्प जीवनुच्चैर्गोत्रकर्म्मंमं कट्टुगुं। विपरीतः अर्हदादिगळोळु भक्तिरहितमं आगमसूत्रंगळोळु श्रद्धानमिल्लदनुं अध्ययनार्त्थविचारविनयादिगुणविवर्ज्जितनुमप्प जीवं नीचैर्गोत्रमं कट्टुगुं।

पाणवधादीसु रदो जिणपूजामोक्खमग्गविग्घयरो।
अज्जेइ अंतरायं ण लहइ जं इच्छियं जेण ॥८१०॥

प्राणवधादिषु रतः जिनपूजामोक्षमार्गविघ्नकरोऽर्ज्जयत्यंतरायं न लभते यदीप्सितं येन॥

येन आउदोंदंतरायकर्म्मोदयदिवं यदीप्सितार्त्थं न लभते आउदोंदु तन्नीप्सितार्त्थम पडेयलरियनंतप्पंतरायकर्म्मंमं प्राणवधादिषु रतः द्वित्रिचतुरिंद्रियाः प्राणाः गुळे जिगुळे मोदलाद द्वींद्रियंगळुमं पेनुं कूरेयुं तगुणे मिरुपेयुं मोदलाद त्रींद्रियंगळुं नोणं नोंजु मोदलाद चतुरिंद्रियजीवंगळुमं तां कोलुव कोलेगळोळं पेरवकोंलुव कोलेगळोळं प्रीतियनुळ्ळनुं जिनपूजेगळं मोक्षमार्गमप्प रत्नत्रयंगळ प्राप्तिगे तनगं पेरगं विघ्नकारियुमप्प जीवनंतरायकर्म्मंमनुपार्जिजसुगुं।

तत्प्रतिपक्षपरिणामैर्हि शुभं नामकर्म बध्नाति ॥८०८॥

यः अर्हदादिषु भक्तः गणधराद्युक्तागमेषु श्रद्धाध्ययनार्थविचारविनयादिगुणदर्शी स जीवः उच्चैर्गोत्रं बध्नाति। तद्विपरीतो नीचैर्गोत्रं बध्नाति ॥८०९॥

यः द्वित्रिचतुरिंद्रियवधेषु स्वपरकृतेषु प्रीतः। जिनपूजायां रत्नत्रयप्राप्तेश्च स्वान्ययोर्विघ्नकरः स जीवस्तदन्तरायकर्मार्जयति येनोदयागतेन यदीप्सितं तन्न लभते ॥८१०॥

है वह नरकगति तिर्यंचगति आदि अशुभ नामकर्मको बाँधता है। और इनसे विपरीत अर्थात् जो कपट रहित है, गारव रहित है वह शुभ नामकर्मको बाँधता है ॥८०८॥

जो अरहन्त आदिमें भक्ति रखता है, गणधर आदिके द्वारा कहे शास्त्रोंमें श्रद्धावान् है, उनके अध्ययनके लिए विचार विनय आदि गुणोंमें अनुरागी है वह उच्चगोत्रका बन्ध करता है। उससे विपरीत नीच गोत्रका बन्ध करता है ॥८०९॥

जो जीव अपने द्वारा अथवा दूसरेके द्वारा किये गये दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, जीवोंकी हिंसासे प्रेम करता है, जिनपूजा रत्नत्रयकी प्राप्तिमें अपने लिए भी दूसरोंके लिए भी बाधा डालता है। वह जीव अन्तराय कर्मका बन्ध करता है जिसके उदयसे जीव इच्छित वस्तुको प्राप्त नहीं कर सकता ॥८१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु भगवदर्हत्परमेश्वर चारुचरणारविंदद्वंद्ववंदनानंदितपुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरु मंडलाचार्य्यमहावाद वादीश्वररायवादीपितामह सकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिश्रीमदभयसूरिसिद्धांतचक्रवर्त्तिचारुचरणारविंदरजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्णविरचितमप्प गोम्मटसारकर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळु कर्म्मकांडप्रत्ययमहाधिकारं निगदितमादुदु ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ कर्मकाण्डे प्रत्ययप्ररूपणो नाम षष्ठोऽधिकारः ॥६॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें कर्मकाण्डके अन्तर्गत प्रत्ययप्ररूपणा नामक छठा अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथ भावचूलिकाधिकारः ॥७॥

अनंतरं भावचूळिकेयं पेळलुपक्रमिसि तदादियोळु निर्व्विघ्नपरिसमाप्तियं बयसि तन्निष्टविशिष्टदेवतानमस्कारमं माडिदपं :—

गोम्मटजिणिंदचंदं पणमिय गोम्मटपयत्थसंजुत्तं ।
गोम्मटसंगहविसयं भावगयं चूलियं वोच्छं ॥८११॥

गोम्मटजिनेंद्रचंद्रं प्रणम्य गोम्मटपदार्त्थसंयुक्तं । गोम्मटसंग्रहविषय भावगतां चूळिकां वक्ष्यामि ॥

गोम्मटजिनेंद्रचंद्रनं नमस्कारमं माडि समीचीनपदार्त्थसंयुक्तमप्प गोम्मटसंग्रहविषयमप्प भावगतचूळिकेयं पेळ्दपं :—

जेहि दु लक्खिज्जंते उवसमआदीसु जणिदभावेहिं ।
जीवा ते गुणसण्णा णिद्दिट्ठा सव्वदरिसीहिं ॥८१२॥

यैस्तु लक्ष्यंते उपशमादिषु जनितभावैर्ज्जीवास्ते गुणसंज्ञा निर्द्दिष्टाः सर्व्वदर्शिभिः ॥

यैः आवुवु केलवु उपशमादिषु जनितभावैः प्रतिपक्षकर्म्मोपशमादिगळोळु जनितभावंगळिदं जीवाः जीवंगळु लक्ष्यंते लक्षिसल्पडुवुवु, ते आ उपशमादिगळोळु जनितभावंगळु गुणसंज्ञाः गुणंगळेंब संज्ञेयनुळ्ळुवेंदु सर्व्वदर्शिभिर्न्निर्द्दिष्टाः सर्व्वज्ञरिदं पेळल्पट्टुवु ।

अथ भावचूलिकामुपक्रममाणो निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं स्वेष्टविशिष्टदेवतां नमस्यति—

गोम्मटजिनेन्द्रचन्द्रं नमस्कृत्य समीचीनपदार्थसंयुक्तां गोम्मटसंग्रहविषयां भावगतचूलिकां वक्ष्ये ॥८११॥

यैः प्रतिपक्षकर्मोपशमादिषु सत्सु संजनितभावैर्जीवाः लक्ष्यन्ते ते भावाः गुणसंज्ञाः सर्वदर्शिभिर्निर्दिष्टाः ॥८१२॥

भावचूलिकाको प्रारम्भ करते हुए उसकी निर्विघ्न समाप्तिके लिए अपने इष्ट देवताको नमस्कार करते हैं—

गोम्मटजिनेन्द्र अर्थात् महावीरस्वामी अथवा नेमिनाथके प्रतिबिम्बरूपी चन्द्रमाको नमस्कार करके समीचीन पद और अर्थसे युक्त अथवा समीचीन पदार्थोंके वर्णनसे युक्त भावचूलिकाको जो गोम्मटसारके अन्तर्गत है, कहूँगा ॥८११॥

जिन अपने प्रतिपक्षी कर्मोंके उपशम आदिके होनेपर उत्पन्न हुए भावोंसे जीव पहचाने जाते हैं, उन भावोंको सर्वज्ञ देवने गुणनामसे कहा है ॥८१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ मूलभावंगळ नामनिर्द्देशमं माडिदपरु :—

उवसमखइयो मिस्सो ओदइयो पारिणामियो भाओ।
भेदा दुगु णव तत्तो दुगुणिगिवीसं तियं कमसो ॥८१३॥

औपशमिकः क्षायिको मिश्रः औदयिकः पारिणामिको भावो। भेदा द्वयं नव ततो द्विगुण एकविंशतिस्त्रयः क्रमशः ॥

औपशमिकमुं क्षायिकमुं मिश्रमुमौदयिकमुं पारिणामिकमुमें दु भावंगळु पंचप्रकारंगळप्पु-विवर भेदंगळु द्वयमुं नवमुं नवद्विगुणमुमेकविंशतियुं त्रयमुमप्पुवु। क्रमदिदं औपशमिक २। क्षायिक ९। मिश्र १८। औदयिक २१। पारिणामिक ३ ॥

कम्मुवसमम्मि उवसमभाओ खीणम्मि खयियभावो दु।
उदओ जीवस्स गुणो खओवसमिओ हवे भाओ ॥८१४॥

कर्म्मोपशमे उपशमभावः क्षये क्षायिको भावः तु। उदयो जीवस्य गुणः क्षयोपशमिको भवेद्भावः ॥

प्रतिपक्षकर्म्मोपशमदिदमौपशमिकभावमक्कुं। प्रतिपक्षकर्म्मनिरवशेषक्षयदिदं क्षायिक-भावमक्कुं। तु मत्ते प्रतिपक्षकर्म्मोदयमुं जीवगुणमुमेरडुं मिश्रमागि क्षायोपशमिकभावमक्कुं ॥

कम्मुदयजकम्मिगुणो ओदइयो तत्थ होदि भावो दु।
कारणणिरवेक्खभवो समावियो होदि परिणामो ॥८१५॥

कर्म्मोदयजनितसंसारिजीवगुण औदयिकस्तस्मिन्भवति भावस्तु। कारणनिरपेक्षभवः स्वाभाविको भवति पारिणामिकः ॥

कर्म्मोदयजनितसंसारिजीवगुणं[1] मल्लि पुट्टिदुदु औदयिकभावमें बुदक्कु-। मुपशमक्षयक्षयोप-

तत्र मूलभावा औपशमिकः क्षायिकः मिश्रः औदयिकः पारिणामिकश्चेति पंच। ततः पश्चात्तेषां भेदाः क्रमशो द्वौ नवाष्टादशैकविंशतिस्त्रयो भवन्ति ॥८१३॥

प्रतिपक्षकर्मोपशमे सत्यौपशमिकभावः स्यात्। तन्निरवशेषक्षये क्षायिकभावः स्यात्। तु—पुनः तदुदयो जीवगुणश्चेति द्वयं मिश्रं क्षायोपशमिकभावः स्यात् ॥८१४॥

कर्मोदयजनितसंसारिजीवगुण उदयः, तत्र भव औदयिकभावः स्यात्। उपशमक्षयक्षयोपशमोदयनिर-

मूलभाव पाँच हैं—औपशमिक, क्षायिक, मिश्र, औदयिक, पारिणामिक। उनके भेद क्रमसे दो, नौ, अठारह, इक्कीस और तीन हैं ॥८१३॥

प्रतिपक्षी कर्मका उपशम होनेपर औपशमिकभाव होता है। प्रतिपक्षी कर्मका पूर्ण रूपसे क्षय होनेपर क्षायिकभाव होता है। तथा प्रतिपक्षी कर्मका उदय भी रहे और जीवका गुण भी प्रकट रहे इस तरह दोनोंके मिश्र रूप होनेपर क्षायोपशमिकभाव होता है ॥८१४॥

कर्मके उदयसे उत्पन्न संसारी जीवके गुणको उदय कहते हैं। उससे होनेवाला

१. म °गुणं औद°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शमोदयनिरपेक्षदोळादुदु पारिणामिकभावमें बुदक्कुं ।

उवसमभावो उवसमसम्मं चरणं च तारिसं खयिओ ।
खायियणाणं दंसण सम्मं चरित्तं च दाणादी ।।८१६।।

उपशमभाव उपशमसम्यक्त्वं चरणं च तादृशं क्षायिकः। क्षायिकज्ञानं दर्शनं सम्यक्त्वं चरित्रं च दानादयः ॥

आ पंचभावंगळोळु मोदलुपशमभावमदु उपशमसम्यक्त्वमुमुपशमचारित्रमें दितु द्विविधमक्कुमंते क्षायिकभावमुं क्षायिकज्ञानं क्षायिकदर्शनं क्षायिकसम्यक्त्वं क्षायिकचारित्रं क्षायिकदानादिपंचकमुमितु नवविधमक्कुं ।

खाओवसमियभावो चउणाण तिदंसणं तिअण्णाणं ।
दाणादिपंच वेदग-सरागचारित्त-दसंजमं ।।८१७।।

क्षायोपशमिकभावश्चतुर्ज्ञानत्रिदर्शनत्र्यज्ञानं । दानादिपंचवेदक सरागचारित्रदेशसंयमं ॥

क्षायोपशमिकभावं मतिश्रुतावधिमनःपर्य्ययमें ब चतुर्ज्ञानंगळुं चक्षुरचक्षुरवधिगळें ब त्रिदर्शनंगळुं कुमतिकुश्रुतविभंगमें ब त्र्यज्ञानंगळुं दानलाभभोगोपभोगवीर्य्यमें ब दानादिपंचकमुं वेदकसम्यक्त्वमुं सरागचारित्रमुं देशसंयममुमेंदितष्टादशभेदमक्कुं ।

ओदयिया पुण भावा गदिलिंगकसाय तह य मिच्छत्तं ।
लेस्सासिद्धासंजम अण्णाणं होंति इगिवीसं ।।८१८।।

औदयिकाः पुनर्भावाः गतिलिंगकषायास्तथा मिथ्यात्वं । लेश्याऽसिद्धासंयमाज्ञानं भवंत्येकविंशतिः ॥

पेक्षायां भवः पारिणामिकभावः स्यात् ॥८१५॥ उक्तोत्तरभेदसंख्याविषयभावान् व्यनक्ति—

उपशमभावाः—उपशमसम्यक्त्वं उपशमचारित्रं चेति द्वेधा, क्षायिकभावाः क्षायिकं ज्ञानं दर्शनं सम्यक्त्वं चारित्रं तादृक्दानादयश्चेति नवधा ॥८१६॥

क्षायोपशमिकभावाः—मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानानि, चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनानि, कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानानि, दानलाभभोगोपभोगवीर्याणि, वेदकसम्यक्त्वं, सरागचारित्रं देशसंयमश्चेत्यष्टादशधा ॥८१७॥

औदयिकभाव है। उपशम, क्षय, क्षयोपशम और उदयकी अपेक्षाके अभावमें होनेवाला भाव पारिणामिक है ॥८१५॥

आगे उत्तर भेदोंकी संख्याके विषयभूत भावोंको कहते हैं—औपशमिकभाव उपशमसम्यक्त्व और उपशमचारित्रके भेदसे दो प्रकार है। क्षायिकभाव क्षायिकज्ञान दर्शन सम्यक्त्व, चारित्र, दान, लाभ, भोग-उपभोग वीर्यके भेदसे नौ प्रकार हैं ॥८१६॥

क्षायोपशमिकभाव मतिश्रुत अवधि मनःपर्यय ये चार ज्ञान, चक्षु अचक्षु अवधि ये तीन दर्शन, कुमति कुश्रुत विभंग ये तीन अज्ञान, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, वेदक सम्यक्त्व, सरागचारित्र और देशसंयमके भेदसे अठारह प्रकार है ॥८१७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औदयिकभावंगळु गतिचतुष्कमुं लिंगत्रितयमुं कसायचतुष्टयमुं तथा मिथ्यात्वमुं लेश्याषट्कमुमसिद्धत्वमुमसंयममुमज्ञानमुमें दितेकविंशतिप्रमितंगळप्पुवु ॥

जीवत्तं भव्वत्तमभव्वत्तादी भवंति परिणामा ।
इदि मूलुत्तरभावा भंगवियप्पे बहु जाणे ॥८१९॥

जीवत्वं भव्यत्वमभव्यत्वादयो भवंति परिणामाः । इति मूलोत्तरभावा भंगविकल्पे बहून् जानीहि ॥

जीवत्वमुं भव्यत्वमुमभव्यत्वमुमेंबिउ मोदलादउ पारिणामिकंगळप्पुवितु मूलभावंगळैदक्कमुत्तरभावंगळु त्रिपंचाशत्प्रमितंगळप्पुवें दरियल्पडुगुं ।

मूलभावंगळगमुत्तरभावंगळगं संदृष्टि :—औपशमिक २ । क्षायिक ९ । क्षायोपशमिक १८ । औदयिक २१ । पारिणामिक ३ । इउ भंगविकल्पदोळु बहुविकल्पंगळप्पुवें दु नीनरि भव्य ।

ओघादेसे संभवभावं मूलुत्तरं ठवेदूण ।
पत्तेये अविरुद्धे परसगजोगेवि भंगा हु ॥८२०॥

ओघे आदेसे संभवभावं मूलोत्तरं स्थापयित्वा । प्रत्येकेऽविरुद्धे परसुगयोगेपि[1] भंगाः खलु ॥

ओघे गुणस्थानदोळं आदेशे मार्ग्गणास्थानदोळं संभवभावं संभविसुव भावमं मूलोत्तरं मलभावमनुत्तरभावेमं स्थापयित्वा स्थापिसि प्रत्येकेऽविरुद्धे आ स्थापिसिद मूलोत्तरभावदोळु

औदयिकभावाः पुनः चतुर्गतित्रिलिंगचतुःकषायाः, तथा च मिथ्यात्वं षड्लेश्या असिद्धासंयमाज्ञानानि इत्येकविंशतिर्भवन्ति ॥८१८॥

जीवत्वं भव्यत्वं अभव्यत्वादयश्च पारिणामिकभावा भवन्ति । इत्येवं मूलभावाः पंच उत्तरभावास्त्रिपंचाशत् भंगविकल्पा बहव इति जानीहि ॥८१९॥

गुणस्थाने मार्गणास्थाने च सम्भवतो मूलभावानुत्तरभावांश्च संस्थाप्याक्षसंचारक्रमेण प्रत्येके

औदयिकभाव चार गति, तीन वेद, चार कषाय, एक मिथ्यात्व, छह लेश्या, असिद्ध, असंयम, अज्ञानके भेदसे इक्कीस हैं ॥८१८॥

विशेषार्थ—सामान्यकर्मके उदयरूप सिद्ध पदका अभाव असिद्धत्व है। चारित्रमोहके सर्वघाती स्पर्द्धकोंके उदयसे चारित्रका अभाव असंयम है। ज्ञानावरणके उदयसे जो ज्ञान प्रकट नहीं वह अज्ञान है। मिथ्यादृष्टि छद्मस्थके जितना ज्ञान प्रकट होता है वह क्षयोपशम रूप अज्ञान है जिसे मिथ्याज्ञान कहते हैं। और जितना ज्ञान प्रकट नहीं है सब जीवोंके वह अज्ञान औदयिक है ॥८१८॥

जीवत्व भव्यत्व अभव्यत्व आदि पारिणामिक भाव होते हैं। इस प्रकार मूलभाव पाँच हैं उत्तरभाव तरेपन हैं इनके भंग विकल्प बहुत हैं ॥८१९॥

विशेषार्थ—जीवत्व तो द्रव्य स्वभाव है ही। भव्यत्व अभव्यत्व भी किसी कर्मके निमित्तसे नहीं होते, अनादि हैं। अतः इन्हें पारिणामिक कहा है ॥

---

१. म °परस्वयो° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परस्वयोगे परसंयोगदोळं स्वसंयोगदोळं भंगा हु भंगंगळप्पुवु स्फुटमागि । अदेंतेंदोडे अमेवरं गुणस्थानदोळु पेळल्पडुगुं । मिथ्यादृष्टियोळु संभविसुव मूलभावंगळु क्षायोपशमिकमुमौदयिमुं पारिणामिकमुमें बी मूरुं भावंगळु संभविसुगुमेंदु स्थापिसिमि । औ । पा । यितु स्थापिसिदी मूरुं प्रत्येकभंगमूरक्कुं ।३। द्विसंयोगभंगं मिश्रौदयिकमुं

मि	औ	पा
+	+	

मिश्रपारिणामिउमुं

मि	औ	पा
+		+

औदयिकपारिणामिकमं

मि	औ	पा
	+	+

अविरुद्धपरसंयोगे स्वसंयोगे च भंगा भवन्ति स्फुटं। तत्र गुणस्थानेषु यथा मिथ्यादृष्ट्यादित्रये मूलभावाः

ओघ अर्थात् गुणस्थान और आदेश अर्थात् मार्गणास्थानमें होनेवाले मूलभावों और उत्तरभावोंको स्थापित करके जैसे जीवकाण्डके गुणस्थान अधिकारमें प्रमादोंके कथनमें अक्षसंचारका विधान कहा है वैसे ही यहाँ अक्षसंचार विधानके द्वारा भावोंके बदलनेसे प्रत्येक भंग तथा विरोध रहित परसंयोगी स्वसंयोगी भंग होते हैं। जहाँ जुदे-जुदे भाव कहे जाते हैं वहाँ प्रत्येक भंग होते हैं। और जहाँ अन्य-अन्य भावके संयोग रूप भंग होते हैं उन्हें परसंयोगी कहते हैं। जैसे जहाँ औदयिकके किसी भेदके साथ औपशमिक आदिका कोई भेद पाया जाता है वहाँ परसंयोगी भंग कहाता है। और जहाँ अपने भावके भेदोंका संयोग रूप भंग होता है वहाँ स्वसंयोगी कहा जाता है। आगे गुणस्थानोंमें कहते हैं—

मूलभाव मिथ्यादृष्टि आदि तीन गुणस्थानोंमें औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक तीन होते हैं। असंयत आदि आठमें पाँचों भाव होते हैं। क्षीणकषायमें औपशमिक बिना चार हैं। सयोगी अयोगीमें औदयिक पारिणामिक क्षायिक तीन हैं। सिद्धोंमें क्षायिक पारिणामिक दो हैं। अब उत्तरभाव कहते हैं—

मिथ्यादृष्टिमें औदयिकके इक्कीस, क्षायोपशमिकके तीन अज्ञान दो दर्शन पांच लब्धि ये दस, और पारिणामिक तीन ये चौंतीस भाव हैं। सासादनमें मिथ्यात्व बिना औदयिकके बीस, क्षायोपशमिकके तीन अज्ञान दो दर्शन पाँच लब्धि ये दस, पारिणामिक जीवत्व भव्यत्व दो ये बत्तीस भाव हैं। मिश्रमें मिथ्यात्व बिना औदयिकके बीस, क्षायोपशमिकके मिश्र रूप तीन ज्ञान, तीन दर्शन, पाँच लब्धि ये ग्यारह, पारिणामिक दो जीवत्व भव्यत्व ये तैंतीस भाव हैं। असंयतमें मिथ्यात्व बिना औदयिकके बीस, क्षायोपशमिकके तीन ज्ञान तीन दर्शन पाँच लब्धि, सम्यक्त्व ये बारह, औपशमिक सम्यक्त्व क्षायिक सम्यक्त्व, दो पारिणामिक ये छत्तीस भाव हैं। देशसंयतमें औदयिकके मनुष्य तिर्यंच दो गति चार कषाय तीन लिंग तीन लेश्या असिद्धत्व अज्ञान ये चौदह, क्षायोपशमिकके तीन ज्ञान तीन दर्शन पाँच लब्धि सम्यक्त्व देशचारित्र ये तेरह, औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, दो पारिणामिक ये इकतीस भाव हैं। इनमें तिर्यंचगति और देशचारित्र घटाकर मनःपर्ययज्ञान सरागचारित्र मिलानेपर प्रमत्त अप्रमत्तमें इकतीस-इकतीस भाव होते हैं। इनमें पीत पद्म लेश्या, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व चारित्र घटाकर औपशमिक चारित्र क्षायिक चारित्र मिलानेपर अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणमें उनतीस-उनतीस भाव हैं। इनमें लोभ बिना तीन कषाय और तीन लिंग घटानेपर सूक्ष्म साम्परायमें तैंतीस भाव हैं। इनमें लोभ कषाय क्षायिक

१. म °यक्कु° ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एंदितु मूरु भंगमक्कुं ३। त्रिसंयोगमोंदे भंगमक्कु । १ ॥ मिंतु परसंयोग भंगमेळेयप्पुवु ।७॥ स्वसंयोगं मिश्रदॊळ् मिश्रमुं औदयिकदोळौदयिकमुं पारिणामिकदोळु पारिणामिकमुमिंतु स्वसंयोगंगळु मूरप्पुवु ।३॥ इंतु मूलभावंगळय्वरोळु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानदोळु संभविसुव मूरुं मूलभावंगळगॆ परसंयोग स्वसंयोगभंगंगळु पत्तप्पुवु । मिथ्या मू भा-३ । भं १०। सासादनंगॆयुमितॆयप्पुवु । सासा। मू भा ३। भं १०। मिश्रंगॆयुमितॆयक्कुं। मिश्र मू भा ३। भं १०। असंयतादिचतुर्ग्गुणस्थानदोळु मूलभावंगळय्दुं संभविसुगुं। औप। क्षा। मि। औ पा। इल्लि प्रत्येकभंगंगळु अय्दप्पुवु ।५॥

क्षायोपशमिकौदयिकपारिणामिकास्त्रयस्त्रयः। तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगास्त्रयस्त्रयः। द्विसंयोगास्त्रयः। त्रिसंयोगे एकः। स्वसंयोगे मिश्रे मिश्रः। औदयिके औदयिकः। पारिणामिके पारिणामिकः इति त्रयः मिलित्वा दश। असंयतादिचतुष्के मूलभावाः पंच पंच। तत्र प्रत्येकभंगाः पंच। द्विसंयोगा नवैव औपशमिकक्षायिकयोर-

---

चारित्र घटानेपर उपशान्त कषायमें इक्कीस भाव हैं। इनमें औपशमिक सम्यक्त्व चारित्र घटाकर क्षायिक चारित्र मिलानेपर क्षीण कषायमें बीस भाव हैं। सयोगीमें मनुष्यगति शुक्ललेश्या असिद्धत्व ये तीन औदयिक, क्षायिक नौ, दो पारिणामिक ये चौदह भाव हैं। इनमेंसे शुक्ललेश्या घटानेपर अयोगीमें तेरह भाव हैं। सम्यक्त्व ज्ञान दर्शन वीर्य ये चार क्षायिक और जीवत्व पारिणामिक ये पाँच भाव सिद्धोंमें हैं।

ये नाना जीव और नाना काल अपेक्षा जानना।

आगे एक जीवके एक कालमें जितने भाव सम्भव हैं वह कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि आदि तीन गुणस्थानोंमें मूल भाव तीन होते हैं। परसंयोगमें प्रत्येक भंग तीन औदयिक मिश्र पारिणामिक होते हैं। द्विसंयोगी भंग तीन हैं—औदयिक मिश्र, औदयिक पारिणामिक, मिश्र पारिणामिक। तीनोंका संयोगरूप त्रिसंयोगी भंग एक औदयिक मिश्र पारिणामिक। स्वसंयोगी भंग तीन—औदयिकमें औदयिक, मिश्रमें मिश्र, पारिणामिकमें पारिणामिक। इस प्रकार सब दस हुए।

विशेषार्थ—प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंग लानेकी विधि जैसे आस्रवाधिकारमें कहा था वैसे ही जानना। विवक्षित संख्याके प्रमाणरूप अंकसे लगाकर एक-एक हीन संख्या लिखो। वे तो अंश हुए। उनके नीचे एकसे लगाकर एक-एक अधिक अंक लिखो। उन्हें हार जानना। उनमें पहले अंशसे आगेके अंशको और पहले हारसे आगेके हारको गुणा करके अंशके प्रमाणमें हारके प्रमाणसे भाग देनेपर क्रमसे प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगोंका प्रमाण आता है। सो मिथ्यादृष्टि आदि तीनमें मूलभाव तीन हैं। सो तीनसे लेकर एक-एक हीन अंक लिखो—तीन दो एक। उनके नीचे एक दो तीन लिखो। पहले तीनको एकका

३	२	१
१	२	३

भाग देनेसे तीन आये। सो तीन प्रत्येक भंग हुए। तीनको दोसे गुणा करके उसे एकसे गुणित दोका भाग देनेपर तीन आये। तीन द्विसंयोगी भंग जानना। फिर छहको एकसे गुणा करके उसमें दो गुणित तीनका भाग देनेपर एक आया। सो एक त्रिसंयोगी भंग हुआ। इसी प्रकार मूलभावों और उत्तरभावोंमें प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी भंगोंकी विधि जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विसंयोगंगळो भत्तेयप्पुवे तें दोडे आ नाल्कुं गुणस्थानदोळु उपशमक्षायिकंगळ द्विसंयोगं विरुद्ध-मप्पुदरि ना भंगंकुंविदोडो भत्ते भंगंगळप्पुवप्पुदरिंदं, त्रिसंयोगभंगंगळुमंतेयुपशमक्षायिकयुत-त्रिसंयोगमं बिट्टु शेष सप्तभंगमप्पुवु । ७ ।। चतुःसंयोगभंगगळेरडेयप्पुवे तें दोडुपशमयुतमागियों दु

उ	क्षा	मि	औ	पा
+		+	+	+

क्षायिक भावदोडनों दक्कुं ।

उ	क्षा	मि	औ	पा
२	+	+	+	+

इंतेरडु ।।

पंचसंयोगभंग मीनाल्कुं गुणस्थानदोळु संभविसकें दोडे कारणं द्विसंयोगत्रिसंयोगदोळु पेळ्दुदेयक्कुं । ई परसंयोगभंगंगळगे संदृष्टि प्र ५ । द्वि ९ । त्रि ७ । च २ । स्वसंयोगभंगं मिश्रदोळमौदयिकदोळं पारिणामिकदोळं मूरे भंगमक्कु-३ । मिता नाल्कुं गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं मूलभावंगळय्दुं परस्व-संयोगभंगंगळुमिप्पत्तारप्पुवु । असं मू भा ५ । भं२६ । देशसंयतंगे मू । भा ५ । भं २६ । प्रमत्तसंमू । भा५ । भंग २६ । अप्रमत्त मू । भा ५ । भंग २६ । उपशमश्रेणियोळु मूलभावंगळय्दुं संभविसुववल्लि परसंयोग भंगं प्रत्येकं संयोगभंगंगळय्दु ५ । द्विसंयोगभंगंगळु पत्तु १० । त्रिसंयोगभंगंगळु १० । चतुःसंयोगभंगमय्दु ५ । पंचसंयोगभंगमों दु १ । स्वसंयोगभंगं क्षायिकदोळु क्षायिकभंगमं बिट्टु शेष नाल्कु ४ भंगमक्कु । यिंतु आ नाल्कु गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं मूलभावभंगमय्दुं । ५ । परस्व-संयोगभंगंगळु मूवत्तय्दप्पुवु ३५ । संदृष्टि—अपूर्व्वं मू भा ५ । भंग ३५ । अनिवृत्तिकरणंगे मू

संयोगात् । त्रिसंयोगाः सप्त । चतुःसंयोगा औपशमिकक्षायिकाभ्यां द्वौ । पंचसंयोगो नास्ति । स्वसंयोगा मिश्रौदयिकपारिणामिकास्त्रयः । एवं परस्वसंयोगाः षड्विंशतिः । उपशमकचतुष्के मूलभावाः पंच पंच । तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगाः पंच । द्विसंयोगा दश । त्रिसंयोगा दश । चतुःसंयोगाः पंच । पंचसंयोग एकः ।

असंयतादि चार गुणस्थानोंमें मूलभाव पाँच-पाँच होते हैं। पूर्वोक्त विधानसे प्रत्येक भंग तो पाँच ही हुए । द्विसंयोगी दस होते हैं । किन्तु यहाँ औपशमिक क्षायिकका संयोगरूप एक भंग नहीं है । अतः नौ हैं । त्रिसंयोगी भंग दस होते हैं । किन्तु यहाँ औपशमिक क्षायिक और एक औदयिक वा क्षायोपशमिक वा पारिणामिकमेंसे कोई एक इन तीनके संयोग रूप तीन भंग न होनेसे सात ही हैं । चतुःसंयोगी पाँच होते हैं किन्तु उनमेंसे औपशमिक क्षायिक और दो औदयिक क्षायोपशमिक अथवा क्षायोपशमिक पारिणामिक अथवा औदयिक पारिणामिकमें-से इनके संयोग रूप तीन भंग यहाँ नहीं होते । अतः दो ही हैं । यहाँ उपशम और क्षायिकका मिलन न होनेसे पंचसंयोगी भंग नहीं होता । स्वसंयोगी भंग तीन हैं—मिश्रमें मिश्र, औदयिकमें औदयिक, पारिणामिकमें पारिणामिक । यहाँ उपशम सम्यक्त्वमें उपशमचारित्र और क्षायिक सम्यक्त्वमें क्षायिकचारित्र सम्भव न होनेसे औपशमिकमें औपशमिक और क्षायिकमें क्षायिक ये दो भंग नहीं कहे । सब मिलकर छब्बीस भंग हुए ।

उपशमश्रेणीके चार गुणस्थानोंमें पाँच-पाँच मूलभाव हैं । उनमें परसंयोगीमें प्रत्येक भंग पाँच, द्विसंयोगी दस, त्रिसंयोगी दस, चतुःसंयोगी पाँच और पंचसंयोगी एक भंग होता है । यहाँ क्षायिक सम्यक्त्वके होते उपशमचारित्र होता है अतः उपशम और क्षायिक-का संयोग जानना । स्वसंयोगीमें क्षायिकमें क्षायिक सम्भव नहीं है; क्योंकि यहाँ क्षायिक सम्यक्त्वके साथ अन्य क्षायिकभाव नहीं होता । अतः चार ही भंग होते हैं । सब पैंतीस भंग हुए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भा ५। भंग ३५। सूक्ष्मसांपरायंगे मू भा ५। भंग ३५। उपशांतकषायंगे मू भा ५। भंग ३५। क्षपकश्रेणियोळु नाल्कुं गुणस्थानदोळु संभविसुव भावंगळु क्षायिकमुं मिश्रमुमौदयिकमुं पारिणामिकमुमितु नाल्कप्पुवु। क्षा। मि। औ। पा। इल्लि परसंयोगभंगंगळु प्रत्येकभंगंगळु नाल्केयप्पुवु। ४। द्विसंयोगभंगंगळारु। ६। त्रिसंयोगभंगंगळु नाल्कप्पुवु। ४। चतुःसंयोगभंगमोंदेयक्कुं। १। स्वसंयोगभंगंगळुं नाल्कप्पुवु। ४। कूडियपूर्व्वकरणनोळु मूलभा ४। भंग १९। अनिवृत्तिकरणनोळु मू भा ४। भं १९। सूक्ष्मसांपरायनोळु मू भा ४। भं १९॥ क्षीणकषायनोळु मू भा ४। भं १९। सयोगकेवलि भट्टारकनोळमयोगेकेवलिभट्टारकनोळं मूलभावंगळु क्षा। औ। पा। इल्लि प्रत्येक भंग ३। द्विसंयोगभंग ३। त्रिसंयोगभंग १। स्वसंयोगभंग ३। कूडि सयोगरिगें मू भा ३। भंग १०॥ अयोगरिगे मू भा ३। भंग १०। सिद्धपरमेष्ठियोळु मूलभावंगळु क्षा। पा। इल्लि प्रत्येक भंग २। द्विसंयोगभंगं स्वसंयोगभंग २ कूडि सिद्धपरमेष्ठियोळु मू भा २। भंग ५॥

अनंतरमितु गुणस्थानदोळु मूलभावसंख्येयुमं स्वपरसंयोग भंगसंख्येयुमं पेळ्दपरु।—

मिच्छतिये तिचउक्के दोसु वि सिद्धेवि मूलभावा हु।
तिगपणपणगं चउरो तिग दोण्णि य संभवा होंति ॥८२१॥

मिथ्यादृष्टित्रये त्रिचतुष्के द्वयोरपि सिद्धेपि मूलभावाः खलु। त्रिकपंचपंचचतुस्त्रिकद्वयं च संभवा भवंति॥

स्वसंयोगाः क्षायिके क्षायिकं विना चत्वारः। एवं परस्वसंयोगाः पंचत्रिंशत्। क्षपकचतुष्के क्षायिकमिश्रौदयिकपारिणामिका मूलभावाश्चत्वारश्चत्वारः। तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगाश्चत्वारः। द्विसंयोगाः षट्। त्रिसंयोगाश्चत्वारः। चतुःसंयोग एकः। स्वसंयोगाश्चत्वारः। मिलित्वैकान्नविंशतिः। सयोगायोगयोर्मूलभावास्त्रयस्त्रयः। तत्र प्रत्येकभंगास्त्रयः। द्विसंयोगास्त्रयः। त्रिसंयोग एकः। स्वसंयोगास्त्रयः मिलित्वा दश। सिद्धे मूलभावौ द्वौ। तत्र प्रत्येकभंगौ द्वौ। द्विसंयोग एकः स्वसंयोगौ द्वौ। मिलित्वा पंच ॥८२०॥ उक्तमूलभावसंख्यां स्वपरसंयोगसंख्यां चाह—

क्षपकश्रेणीके चार गुणस्थानोंमें क्षायिक, मिश्र, औदयिक, पारिणामिक, चार ही भाव होते हैं। परसंयोगमें प्रत्येक भंग चार, द्विसंयोगी छह, त्रिसंयोगी चार, चतुःसंयोगी एक भंग है। स्वसंयोगी चार होते हैं। सब मिलकर उन्नीस हुए।

सयोगी-अयोगीमें क्षायिक, औदयिक, पारिणामिक ये मूल तीन भाव हैं। उनमें प्रत्येक भंग तीन, द्विसंयोगी तीन और त्रिसंयोगी एक और स्वसंयोगी तीन मिलकर दस भंग होते हैं।

सिद्धोंमें मूलभाव दो हैं—क्षायिक, पारिणामिक। इनमें प्रत्येक भंग दो, द्विसंयोगी एक, स्वसंयोगी दो सब पाँच हुए ॥८२०॥

उक्त मूलभावोंकी संख्या और स्वपरसंयोगी भंगोंकी संख्या कहते हैं—

१. म °भंगमुं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टित्रये मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुगळें ब मूरुं गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकं मिश्रऔदयिकपारिणामिकमें ब मूरुं भावंगळु संभवंगळु असंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरुमुपशमकापूर्व्वानिवृत्तिसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषायरुगळु क्षपकापूर्व्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायक्षीणकषायरुगळुमें ब मूरेडेय नाल्करोळं सयोगकेवलिभट्टारकं अयोगकेवलिभट्टारकरुगळें बेरडेडेयोळं सिद्धपरमेष्ठियोळं क्रर्मादिदं मूलसंभवभावंगळु त्रिकमुं पंच पच चतुःत्रिद्विप्रमितंगळु मुंपेळ्दुवेयक्कुं। मिथ्यादृष्टित्रयदोळु मि। औ। पा। असंयतचतुष्टयदोळु उ। क्षा। मि। औ। पा। उपशमचतुष्कदोळु उ। क्षा। मि। औ। पा। क्षपकचतुष्कदोळु क्षा। मि। औ। पा। सयोगायोगरोळु क्षा। औ। पा। सिद्धरोळ क्षा। पा॥

तत्थेव मूलभंगा दस छव्वीसं कमेण पणतीसं।
उगवीसं दस पणगं ठाणं पडि उत्तरं वोच्छं॥८२२॥

तत्रैव मूलभंगा दश षड्विंशति क्रमेण पंचत्रिंशत्। एकान्नविंशतिः दश पंचकं स्थानं प्रत्युत्तरं वक्ष्यामि॥

तत्रैव तन्मिथ्यादृष्टित्रितयादिस्थानकंगळोळु मूलभंगा मूलभावंगळ परस्परसंयोगभंगंगळु मुंपेळ्दंते मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानत्रितयदोळु प्रत्येकं दश पत्तु। असंयतादिगुणस्थानचतुष्टयदोळु प्रत्येकं परस्परसंयोगजनितंगळु षड्विंशतिः षड्विंशतिगळप्पुवु। उपशमकचतुष्टयदोळु प्रत्येकं परस्परसंयोगभंगंगळु पंचत्रिंशत्। पंचत्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु। क्षपकचतुष्टयदोळु प्रत्येकं एकान्नविंशतिप्रमितंगळप्पुवु। सयोगायोगकेवलिद्वयदोळु प्रत्येकं परस्वसंयोगभंगगळु दश। दशप्रमितंगळप्पुवु। सिद्धपरमेष्ठियोळु परस्वसंयोगभंगंगळु पंच पंचप्रमितंगळप्पुवु॥

स्थानं प्रतिगुणस्थानमं कुरुत्तु भंगंगळनुत्तरं उत्तरभावंगळोळु पेळदपरुं :—

मिथ्यादृष्ट्यादित्रये असंयताद्युपशमकापूर्वकरणादित्रिचतुष्केषु सयोगद्वये सिद्धे च क्रमेण मूलसम्भवभावास्त्रयः पंच पंच चत्वारस्त्रय द्वौ भवन्ति॥८२१॥

तथैवोक्तषट्स्थलेषु क्रमेण मूलभंगाः दश षड्विंशतिः पंचत्रिंशत् एकान्नविंशतिः दश पंच भवन्ति॥८२२॥ अथ गुणस्थानं प्रति उत्तरभावान् वक्ष्ये—

मिथ्यादृष्टि आदि तीनमें, असंयत आदि चारमें, उपशमश्रेणीके चारमें, क्षपकश्रेणीके चारमें, सयोगी आदि दोमें, सिद्धोंमें क्रमसे मूलभाव तीन, पाँच, पाँच, चार, तीन, दो हैं॥८२१॥

उक्त छह स्थानोंमें क्रमसे मूल भंग दस, छब्बीस, पैंतीस, उनतीस, दस, पाँच हैं॥८२२॥

आगे गुणस्थानोंमें उत्तरभावोंको कहेंगे—

१. म °गलु पंच।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तरभंगा दुविहा ठाणगया पदगयात्ति पढमम्मि ।
सगजोगेण य भंगाणयणं णत्थित्ति णिद्दिट्ठं ॥८२३॥

उत्तरभंगा द्विविधाः स्थानगताः पदगताः इति प्रथमे स्वकयोगेन च भंगानयनं नास्तीति निर्दिष्टं ॥

उत्तरभंगगळु द्विविधंगळप्पुवे ते दोडे स्थानगतंगळेंदुं पदगतंगळुमें दितल्लि प्रथमदोळ् युगपत्संभवीभावसमूहविदमावुदों दुस्थानदोळ् स्थानांतराभावमप्पुदरिंदमल्लि पेरगे पेळ्वंते स्वसंयोगदिदं भंगानयनमिल्लें दु पेळल्पट्टुदु ।

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते य मिस्सठाणाणि ।
तिगदुगचउरो एक्कं ठाणं सव्वत्थ ओदइयं ॥८२४॥

मिथ्यादृष्टिद्वये मिश्रत्रये प्रमत्तसप्तके च मिश्रस्थानानि । त्रिक द्विक चत्वारि एकं स्थानं सर्व्वत्रौदयिकं ॥

मिथ्यादृष्टिसासादननें बी एरडुं गुणस्थानंगळोळं मिश्रासंयतदेशसंयतनें बी मूरुं गुणस्थानदोळं प्रमत्ताप्रमत्तापूर्व्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषायक्षीणकषायरें बी येळुं गुणस्थानदोळं मिश्रस्थानानि क्षायोपशमिकभावंगळु पदिनें टरोळं येकसमयदोळ् युगपत्संभविसुवभावंगळ समूहमं स्थानमें बुवा स्थानं यथाक्रमदिदं आ द्वि त्रि सप्तगुणस्थानंगळोळु त्रिस्थानंगळुं चतुःस्थानंगळुमप्पुवु । मि ३ । सा ३ । मि २ । अ २ । दे २ । प्र ४ । अ ४ । अ ४ । अ ४ । सू ४ । उ ४ । क्षी ४ ॥ सर्व्वत्र मिथ्यादृष्टियादियागि अयोगिगुणस्थानपर्यंतं पदिनाल्कुं गुणस्थानंगळोळु प्रत्येकमेकस्थानमौदयिकदोळक्कुं । औदयिक । मि १ । सा १ । मि १ । अ १ । दे १ । प्र १ । अ १ । अ १ । अ १ । सू १ । उ १ । क्षी १ । स १ । अ १ ॥

उत्तरभंगा द्विविधाः स्थानगताः पदगताश्चेति । तत्र प्रथमे युगपत्सम्भविभावसमूहरूपे स्थाने स्थानान्तरं नेति स्वसंयोगेन भंगानयनं नास्तीति निर्दिष्टं ॥८२३॥

क्षायोपशमिकभावस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये त्रीणि । मिश्रादित्रये द्वे । प्रमत्तादिसप्तके चत्वारि । (अग्रे त्रिषु शून्यं ।) औदयिकभावस्थानं चतुर्दशगुणस्थानेष्वेकमेव ॥८२४॥

उत्तरभावोंके भंगके दो प्रकार हैं—स्थानगत और पदगत । एक जीवके एक समयमें जितने भाव पाये जाते हैं उनके समूहका नाम स्थान है । उनकी अपेक्षासे हुए भंगोंको स्थानगत कहते हैं । एक जीवके एक कालमें जो भाव पाये जाते हैं उनकी एक जातिका अथवा जुदे-जुदेका नाम पद है । उसकी अपेक्षा किये गये भंग पदगत कहे जाते हैं । एक जीवके एक कालमें एक स्थानमें अन्य कोई स्थान सम्भव न होनेसे स्थानगत भंगोंमें स्वसंयोगी भंग नहीं होते, ऐसा कहा है ॥८२३॥

मिथ्यादृष्टि आदि दोमें, मिश्रादि तीनमें, प्रमत्तादि सातमें क्रमसे क्षायोपशमिकभावके स्थान तीन, दो, चार जानने । औदयिकभावका स्थान चौदह गुणस्थानोंमें एक-एक ही है ॥८२४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्थावरणजभावा पणछस्सत्तेव दाणपंचेव ।
अयदचउक्के वेदगसम्मं देसम्मि देसजयं ॥८२५॥

तत्रावरणजभावाः पंच षट्सप्तैव दानपंचैव । असंयतचतुष्के वेदकसम्यक्त्वं देशसंयते देशसंयमं ॥

मुं पेळ्द क्षायोपशमिक भावंगळ् ज्ञा ४। द ३। अ ३। दा ५ वे १। स रा १। देश १। यिती पदिनेंटुं भावंगळोळु युगपदेकसमयसंभविगळ् । तत्र आ मिथ्यादृष्टिद्वय मिश्रत्रयप्रमत्तसप्तकदोळ् क्रमदिदं मिथ्यादृष्टिसासादनरुगळोळ् अज्ञानत्रितयमुं चक्षुर्द्दर्शनमचक्षुर्द्दर्शनमेंब आवरणजभावंगलुपंचप्रमितंगळप्पुवु । मि ५। सा ५ ॥ मिश्रत्रयदोळ् मतिश्रुतावधित्रयमुं चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनत्रयमुमितावरणजभावंगळारप्पुवु । मि ६। अ ६। दे ६। प्रमत्तसप्तकदोळ् मत्यादिचतुर्ज्ञानंगळं दर्शनत्रितयमुमितावरणजभावंगळेळप्पुवु । प्र ७। अ ७। अ ७। अ ७। सू ७। उ ७। क्षी ७। दानपंचैव इल्लि मिथ्यादृष्ट्यादियागि क्षीणकषायगुणस्थानपर्य्यंतं दानादिपंचकमुमप्पुवप्पुदरिदं कूडिकोळुत्तं विरलु मि १०। सा १०। मि ११। मि १। अ ११। दे ११। प्र १२। अ १२। अ १२। अ १२। सू १२। उ १२। क्षी १२। असंयतचतुष्के वेदकसम्यक्त्वं देशसंयते देशसंयममेंदितु पेळल्पट्टुदप्पुदरिदं वेदकसम्यक्त्वमनसंयतादिनाल्कुं गुणस्थानंगळोळ् कूडिकोंबुदु । देशचारित्रमं देशसंयतनोळ् कूडिकोंबुदु ॥ मत्तं :—

रागजमं तु पमत्ते इदरे मिच्छादिजेट्ठठाणाणि ।
वेभंगेण विहीणं चक्खुविहीणं च मिच्छदुगे ॥८२६॥

रागयमस्तु प्रमत्ते इतरस्मिन् मिथ्यादृष्ट्यादिज्येष्ठस्थानानि । विभंगेन विहीनं चक्षुर्व्विहीनं च मिथ्यादृष्टिद्वये ॥

सरागचारित्रमं प्रमत्तसंयतनोळमप्रमत्तसंयतनोळं कूडिकोळुत्तं विरलु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानंगळोळेल्लं क्षायोपशमिकभावंगळोळेकसमयदोळ् युगपत्संभविसुव ज्येष्ठस्थानमेल्ला गुणस्थानं-

तत्र स्थानत्रये क्षायोपशमिकेष्वावरणजभावा मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये अज्ञानाद्यद्विदर्शनानि । मिश्रत्रये आद्यत्रिज्ञानत्रिदर्शनानि । प्रमत्तसप्तके तानि च मनःपर्ययश्च । क्षीणकषायान्तं दानादयः पंच । असंयतादिचतुष्के वेदकसम्यक्त्वं । देशसंयते देशसंयमः ॥८२५॥

तु—पुनः प्रमत्ते अप्रमत्ते च सरागचारित्रं तेन क्षायोपशमिकभावज्येष्ठस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादिष्वि-

उक्त तीनमें क्षायोपशमिकके ज्ञानावरण-दर्शनावरणके निमित्तसे होनेवाले भाव मिथ्यादृष्टि और सासादनमें तीन अज्ञान दो दर्शन ये पाँच हैं। मिश्रादि तीनमें आदिके तीन ज्ञान तीन दर्शन हैं। प्रमत्तादि सातमें मनःपर्यय सहित चार ज्ञान तीन दर्शन हैं। दानादि पाँच भाव मिथ्यादृष्टिसे क्षीणकषायपर्यन्त हैं। वेदकसम्यक्त्व असंयत आदि चारमें देशसंयम देशसंयत गुणस्थानमें है ॥८२५॥

सरागचारित्र प्रमत्त-अप्रमतमें है। इनको यथासम्भव मिलानेपर मिथ्यादृष्टिसे क्षीण-

१. गुणस्थानमं कुरुत्तु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गळोळमक्कुं । मि १० । सा १० । मि ११ । अ १२ । दे १३ । प्र १४ । अ १४ । अ १२ । अ १२ । सू १२ । उ १२ । क्षी १२ ।

ई ज्येष्ठस्थानंगळोळ मिथ्यादृष्टिद्वयदोळु विभंगविहीनमागळु नवस्थानमक्कुमल्लि चक्षुर्द्दर्शनविहीनमागलुमष्ट भावस्थानमुमक्कुं । मत्तं :—

अवधिदुगेण विहीणं मिस्सतिये होदि अण्णठाणं तु ।
मणणाणेणवधिदुगेणुभयेणूणं तदो अण्णे ॥८२७॥

अवधिद्वयेन विहीनं मिश्रत्रये भवत्यन्यस्थानं तु । मनःपर्ययज्ञानेनावधिद्वयेनोभयेनोनं ततोऽन्यस्मिन् ॥

मिश्रत्रये मिश्रासंयतदेशसंयतरुगळुत्कृष्टस्थानदोळवधिद्विकं हीनमागुत्तं विरलु क्रमदिदं मिश्रनोळो भत्तुं । असंयतनोळु पत्तु । देशसंयतनोळु पन्नों दुमप्पुवु । तु मत्ते अन्यस्थानं अन्येषां प्रमत्तादीनां स्थानं प्रमत्तादिगळुत्कृष्टस्थानं मनःपर्ययज्ञानेनोन मनःपर्ययज्ञानदिदमूनमागलु प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु पदिमूरु पदिमूरुस्थानंगळप्पुवु । अपूर्व्वानिवृत्तिसूक्ष्मसांपरायोपशांतकषाय-क्षीणकषायरुगळ ज्येष्ठस्थानदोळु मनःपर्ययमं कळेदोडे पन्नों दु भावस्थानं प्रत्येकमक्कु । मत्तं मनःपर्य्यय सहितमागियवधिद्विकहीनमादोडा प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु पन्नेरडरस्थानमुं शेषरुगळोळु दशभावस्थानमक्कुं ।

मानि—मि १० । सा १० । मि ११ । अ १२ । दे १३ । प्र १४ । अ १४ । अ १२ । अ १२ । सू १२ । उ १२ । क्षी १२ । पुनरपि मिथ्यादृष्टिद्वये तज्ज्येष्ठं विभंगेन हीनं तदा नवकं स्यात् । पुनरपि चक्षुर्दर्शनेन हीनं तदाष्टकं स्यात् ॥८२६॥

मिश्रत्रये स्वस्वोत्कृष्टं अवधिद्विकेन विहीनं तदा मिश्रे नवकं । असंयते दशकं । देशसंयते एकादशकं स्यात् । प्रमत्तद्वयुत्कृष्टं मनःपर्ययेनावधिद्विकेन तदुभयेन च पृथग्विहीनं तदा प्रमत्तद्वये त्रयोदशकद्वादशकैकादशकं,

---

कषायपर्यन्त क्रमसे क्षायोपशमिकके उत्कृष्ट स्थान दस, दस, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह, चौदह, बारह, बारह, बारह, बारह, बारह रूप जानना ।

मिथ्यादृष्टी और सासादनमें तीन अज्ञान, दो दर्शन, पाँच दानादि इस प्रकार दस-दसका उत्कृष्ट स्थान होता है । मिश्रमें तीन ज्ञान, तीन दर्शन, पाँच दानादि ऐसे ग्यारहका उत्कृष्ट स्थान है । असंयतमें वेदकसम्यक्त्व सहित बारहका है । देशसंयतमें देशसंयम सहित तेरहका है । प्रमत्त-अप्रमत्तमें देशसंयमके बिना सरागसंयम मनःपर्यय सहित चौदहका है । अपूर्वकरणसे क्षीणकषायपर्यन्त चार ज्ञान, तीन दर्शन, पाँच दानादि इस तरह बारह-बारह-का उत्कृष्ट स्थान है ।

मिथ्यादृष्टि आदि दोमें एक तो दसका उत्कृष्ट स्थान, एक विभंगरहित नौका स्थान, एक चक्षुदर्शन रहित आठका स्थान इस प्रकार तीन-तीन स्थान हैं ॥८२६॥

मिश्रादि तीनमें एक अपना-अपना उत्कृष्ट स्थान तथा अवधिज्ञान दर्शन रहित मिश्रमें नौका, असंयतमें दसका, देश संयतमें ग्यारहका, इस तरह दो-दो स्थान हैं । प्रमत्तादि सातमें एक-एक अपना उत्कृष्ट स्थान तथा एक-एक मनःपर्ययरहित, एक-एक अवधिज्ञान दर्शनरहित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मत्तं उभयोनं मनःपर्य्ययावधिद्वयमुमंतु भावत्रयं हीनमागलु प्रमत्ताप्रमत्तरोळु पन्नोंदर-स्थानमुं शेषरुगळोळु नवभावस्थानमुमक्कुं । संदृष्टि :—क्षायोपशमिकभावस्थानंगळु मि १० । ९ । ८ । सा १० । ९ । ८ । मि ११ । ९ । अ १२ । १० । दे १३ । ११ । प्र १४ । १३ । १२ । ११ । अ १४ । १३ । १२ । ११ । अपू १२ । ११ । १० । ९ । अ १२ । ११ । १० । ९ । सू १२ । ११ । १० । ९ । उ १२ । ११ । १० । ९ । क्षी १२ । ११ । १० । ९ । ततोऽन्यस्मिन् इल्लिवं मेलौदयिक-भावदोळु पेळ्दपरु :—

मुं पेळ्दौदयिकभावंगळु ग ४ । लि ३ । क ४ । मि १ । ले ६ । असि १ । असं १ । अज्ञा १ । यिती एकविंशतिभावंगळोळु ओंदु समयदोळु ओंदु जीवक्के युगपत्संभविसुवौदयिक-भावंगळु मिथ्यादृष्टियोळु गतिचतुष्टयदोळोंदु गतियुं १ वेदत्रयदोळोंदु वेदमुं १ कषायचतुष्टयदो ळोंदु कषायमुं १ । मिथ्यात्वमुं १ । षड्लेश्येगळोळोंदु लेश्येयुं १ । असिद्धत्वमुं १ । असंयममुं १ । अज्ञानमु १ । मितष्टभावंगळु मिथ्यादृष्टिगळप्पुवु । ८ ॥

सासादनंगे मिथ्यात्वं पोरगागि सप्तभावस्थानमक्कुं । ७ ॥ मिश्रंगेयुमंते सप्तभावस्थान-मक्कुं । ७ ॥ असंयतंगेयुमंते सप्तभावस्थानमक्कुं । ७ ॥ देशसंयतंगे असंयतमं पोरगागि षड्भाव-स्थानमक्कुं । ६ । प्रमत्तसंयतनोळमंते षड्भावस्थानमक्कुं । ६ ॥ अप्रमत्तनोळमंते षड्भावस्थान-मक्कुं । ६ । अपूर्व्वकरणनोळमंते षड्भावस्थानमक्कुं । ६ । अनिवृत्तिकरणंगे सवेदभागेयोळु षड्भावस्थानमक्कुं ६ । अवेद भागेयोळु लिंगरहितपंचभावस्थानमक्कुं । ५ । सूक्ष्मसांपरायनोळु-मंते पंचभावस्थानमक्कुं । ५ ॥ उपशांतकषायंगे कषायरहितमागि चतुर्भावस्थानमक्कुं । ४ ॥ क्षीणकषायंगमंते चतुर्भावस्थानमक्कुं । ४॥ सयोगकेवलिभट्टारकंगे अज्ञानरहितमागि त्रिभावस्थान-मक्कुं । ३ ॥ अयोगिकेवलिभट्टारकंगे लेश्यारहितमागि द्विभावस्थानमक्कुं २ । मदुवुं मनुष्यगति-भावमुमसिद्धत्वमुमेरडे यें बुदत्थं ॥

अपूर्वकरणादिपंचके एकादशकदशकनवकं स्यात् । औदयिकभावेष्वेकविंशतौ मिथ्यादृष्टौ एकजीवस्यैकसमये चतुर्गतित्रिवेदे चतुःकषायषट्लेश्यास्वेकैकः, मिथ्यात्वं असिद्धत्वं असंयमः अज्ञानं चेत्यष्टौ । सासादनादित्रये मिथ्यात्वं विना सप्त । देशसंयताद्यनिवृत्तिकरणसवेदभागे असंयमं विना षट् । अवेदभागे सूक्ष्मसाम्पराये च लिंगं विना पंच । उपशान्तक्षीणकषाययोः कषायं विना चत्वारः । सयोगे अज्ञानं बिना त्रयः । अयोगे लेश्यां

और एक-एक अवधिज्ञान अवधिदर्शन मनःपर्यय रहित स्थान होनेसे प्रमत्त अप्रमत्तमें तेरह बारह, ग्यारहके अपूर्वकरणादि पांचमें ग्यारह, दस, नौके तीन स्थान और होते हैं, इस तरह चार-चार स्थान होते हैं।

औदयिकके इक्कीस भावोंमें एक जीवके एक समयमें मिथ्यादृष्टिमें चार गति, तीन वेद, चार कषाय, छह लेश्याओंमें एक-एक तथा मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व ये आठ भाव होते हैं। सासादन आदि तीनमें मिथ्यात्वके बिना सात भाव होते हैं। देशसंयत-से अनिवृत्तिकरणके सवेद भाग पर्यन्त असंयमको छोड़ छह-छह भाव होते हैं। अवेद भाग और सूक्ष्म साम्परायमें वेद बिना पाँच भाव होते हैं। उपशान्तकषाय क्षीणकषायमें कषाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमी औदयिकभावस्थानंगळ भंगंगळं मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु पेळ्दपरु :—

लिंगकसाया लेस्सा संगुणिदा चदुगदीसु अविरुद्धा ।
बारस बावत्तरियं तत्तियमेत्तं च अडदालं ॥८२८॥

लिंगकषाया लेश्याः संगुणिताः चतुर्गतिष्वविरुद्धा । द्वादशद्वासप्ततिस्तावन्मात्रश्चाष्टचत्वारिंशत् ॥

चतुर्गतिषु नरकादिचतुर्ग्गतिगळोळु अविरुद्धाः अविरुद्धंगळप्प लिंगकषायलेश्येगळु संगुणिताः परस्परं गुणिसल्पट्टुवु । नरकादिगतिगळोळु क्रमदिदं द्वादश द्वासप्तति तावन्मात्राष्टाचत्वारिंशत्प्रमितभंगंगळप्पुवु । अवेंतेंदोडे नरकगतियोळविरुद्धमप्प लिंगकषायलेश्येगळु षंडवेदमोंदुं चतुःकषायंगळमशुभलेश्यात्रितयंगळुमप्पुवु । लिंग १ । कषाय ४ । ले ३ । यिवं परस्परं गुणिसिदोडे पन्नेरडु भंगंगळप्पुवु । १२ । तिर्य्यग्गतियोळविरुद्धमागि त्रिलिंगंगळं चतुःकषायंगळं षड्लेश्यगळुमप्पुवु । लि ३ । क ४ । ले ६ । इवं परस्परं गुणिसिदोडे द्वासप्ततिभंगंगळप्पुवु ७२ । मनुष्यगतियोळुमिते लि ३ । क ४ । ले ६ । यिवं परस्परं गुणिसिदोडे द्वासप्तति भंगंगळप्पुवु । ७२ । देवगतियोळु अविरुद्धमागि लि २ । क ४ । ले ६ । यिल्लि भवनत्रयापर्य्याप्तरं कुरुत्तु अशुभलेश्यात्रयमरियल्पडुगुं । इवं परस्परं गुणिसिदोडष्टाचत्वारिंशद् भंगंगळप्पुवु । ४८ । यी नाल्कुं गतिगळ भंगंगळं कूडि प्रत्येकं मिथ्यादृष्टियोळं सासादननोळु अप्पुवु । मि २०४ । सा २०४ । यी भंगंगळु गुण्यंगळप्पुवेंदरिवुदु । मिश्रंगमसंयतंगं नरकगतियोळु अविरुद्धमागि नपुंसकवेदमुं चतुःकषायंगळुमशुभलेश्यात्रयमुमप्पुवु । लिं १ । क ४ । ले ३ । इवं परस्परं गुणिसिदोडे द्वादशभंगंगळप्पुवु ।१२। तिर्य्यग्गतियोळु योग्यमप्प लि ३ । क ४ । ले ६ । यिवं परस्परं गुणिसिदोडे द्वासप्ततिभंगंगलप्पुवु ।

विना द्वौ, तौ हि मनुष्यगत्यसिद्धत्वे ॥८२७॥ अथौदयिकस्थानभंगान् गुणस्थानेष्वाह—

चतुर्गतिष्वविरुद्धाः लिंगकषायलेश्याः । तत्र नरकगतौ षंढवेदचतुःकषायत्र्यशुभलेश्याः, तिर्यग्मनुष्यगत्योस्त्रिलिंगचतुःकषायषड्लेश्याः, देवगतौ स्त्रीपुंलिंगचतुष्कषायत्रिशुभलेश्याः भवनत्रयापर्याप्ते त्र्यशुभलेश्याः अपि सर्वत्र गुणिताः क्रमेण द्वादश द्वासप्ततिः द्वासप्ततिरष्टचत्वारिंशद्भवन्ति । मिलित्वा २०४, मिथ्यादृष्टौ

बिना चार होते हैं । सयोगीमें अज्ञान बिना तीन होते हैं । अयोगीमें लेश्या बिना मनुष्यगति और असिद्धत्व ये दो होते हैं ॥८२७॥

आगे औदयिक स्थानोंके भंगोंको गुणस्थानोंमें कहते हैं—

चारों गतियोंमें अविरुद्ध लिंग कषाय लेश्याको परस्परमें गुणा करें । सो नरकगतिमें तो नपुंसक वेद, चार कषाय, तीन अशुभ लेश्याओंको परस्परमें गुणा करनेसे बारह होते हैं । तिर्यंच और मनुष्यगतिमें तीन वेद, चार कषाय, छह लेश्याओंको परस्परमें गुणा करनेसे बहत्तर-बहत्तर होते हैं । देवगतिमें स्त्री-पुरुष दो लिंग, चार कषाय, तीन शुभ लेश्याको और भवनत्रिकमें अपर्याप्त दशामें तीन अशुभ लेश्या भी होती हैं अतः छह लेश्याको परस्परमें गुणा करनेपर अड़तालीस होते हैं । सब मिलकर दो सौ चार हुए । सो इतना तो मिथ्यादृष्टि और सासादनमें गुण्य होता है ॥८२८॥

विशेषार्थ—जिसको गुणकारसे गुणा करते हैं उसे गुण्य कहते हैं । आगे इन्हें गुण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२। मनुष्यगतियोळु लि ३। क ४। ले ६। इवं परस्परं गुणिसिदोडे द्वासप्तति भंगंगळप्पुवु ॥७२॥ देवगतियोळु पेळ्दपरु। :—

णवरि विसेसं जाणे सुरमिस्से अविरदे य सुहलेस्सा।
चउवीस तत्थ भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥८२९॥

नवीनविशेषं जानीहि सुरमिश्रेऽविरते च शुभलेश्याश्चतुर्विंशतिस्तत्र भंगा असहायपराक्रमोद्दिष्टाः॥

देवगतियोळु मिश्रंगमसंयतंगं नवविशेषमुंटदाउदें दोडे शुभलेश्यात्रयमेयक्कुमें तें दोडे भवनत्रयापर्य्याप्तकरोळल्लदेल्लियुमशुभलेश्याऽसंभवमप्पुवरिंद अंते पेळल्पट्टुवु। 'भवणतिया पुण्णगे असुहा' यें दितु। अदु कारणमागि देवगतिय मिश्रासंयतरोळु चतुर्विंशतिभंगंगळप्पुवु। लि २। क ४। ले ३। लब्धभंगंगळु २४। चतुर्विंशतिप्रमितंगळप्पुवें वु श्रीवीरवर्द्धमान स्वामियिंदं पेळल्पट्टुवु। अंतु मिश्रंगे गुण्यभंगंगळु नूरें भत्तु १८०। असंयतंगं गुण्यभंगंगळु १८०। देशसंयतंगे तिर्य्यग्मनुष्यगतिगळोळु प्रत्येकं लि ३। क ४। ले ३। इवं गुणिसिदोडे देशसंयतंगे तिर्य्यग्गतियोळु ३६। मनुष्यगतियोलु ३६। कूडि भंगंगळु द्वासप्ततिप्रमितंगळप्पुवु। ७२। प्रमत्तसंयतंगे मनुष्यगतियोळे लि ३। क ४। ले ३। यिवनडरें गुणिसिदोडे गुण्यरूपभंगंगळु मूवत्तारु। ३६। अप्रमत्तसंयतन मनुष्यगतियोळु लि ३। क ४। लें ३। यिवं संगुणं माडिदोडे मूवत्तारु भंगंगळप्पुवु ३६। अपूर्व्वकरणन मनुष्यगतियोळु लि ३। क ४। ले १। शु। गुणिसिदोडे पन्नेरडु गुण्यरूप्पभंगंगळप्पुवु। १२॥ अनिवृत्तिकरणन मनुष्यगतियोळु सवेदभागेयोलु लि ३। क ४। ले १। इवं संगुणिसिदोडे

सासादने च गुण्यं स्याप्यं ॥८२८॥

मिश्रे असंयते च प्राग्वन्नरकगतौ द्वादश। तिर्यग्मनुष्यगत्योर्द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः। देवगतौ शुभलेश्यात्रयमेवेति नवीनं विशेषं जानीहि, भवनत्रयापर्याप्तस्यात्रासम्भवात्तेन भंगा स्त्रीपुंलिंगचतुष्कषायत्रिशुभलेश्याकृताश्चतुर्विंशतिः श्रीवर्धमानस्वामिना निर्दिष्टाः मिलित्वाशीत्यग्रशतं। देशसंयते लि ३ क ४ ले ३ गुणिते ३६। मिलित्वा तिर्यग्मनुष्यगत्योर्द्वासप्ततिः। प्रमत्तादिद्वये मनुष्यगतौ लि ३ क ४ ले ३ गुणिते षट्त्रिंशत्। अपूर्वकरणे सवेदानिवृत्तिकरणे च लि ३ क ४ ले १ गुणिते द्वादश। अवेदभागे मनुष्यगतौ चतुष्कषायशुक्ललेश्या-

---

कारसे गुणा करेंगे इससे इन्हें गुण्य कहा है। अक्षसंचारके द्वारा भावोंके बदलनेसे जितने भंग होते हैं उतने ही परस्परमें गुणा करनेसे होते हैं।

मिश्र और असंयतमें पूर्ववत् नरकगतिमें बारह, तिर्यंच और मनुष्यगतिमें बहत्तर-बहत्तर भंग होते हैं। किन्तु देवगतिमें यहाँ तीन शुभ लेश्या हैं, भवनत्रिकका अपर्याप्तपना इन गुणस्थानोंमें सम्भव नहीं है अतः स्त्रीवेद पुरुषवेद चार कषाय तीन शुभलेश्याको परस्परमें गुणाकरनेसे देवगतिमें चौबीस ही भंग होते हैं। ऐसा वर्धमान स्वामीने कहा। ये सब मिलकर एक सौ अस्सी हुए।

देशसंयतमें तीन लिंग, चार कषाय, तीन शुभलेश्याको परस्पर गुणा करनेसे तिर्यंच और मनुष्यगतिमें छत्तीस-छत्तीस होते हैं मिलकर बहत्तर हुए। प्रमत्त-अप्रमत्तमें मनुष्यगतिमें तीन लिंग, चार कषाय, तीन शुभलेश्याको गुणा करनेसे छत्तीस हुए। अपूर्वकरण और सवेद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुण्यरूपभंगंगळु पन्नेरडप्पुवु १२। मत्तमा गुणस्थानदोळवेदभागेयोळु वेदशून्यं मनुष्यगतियोळु कषायचतुष्टयमक्कुं। शुक्ललेश्येयो देयक्कुं। म मति १। क ४। ले शु १। ळब्धं नाल्केयक्कु ४। मानकषायभागेयोळु मनुष्यगतिकषायत्रय शुक्ललेश्येयों बु १ । मनुगति १। क ३। शुले १। लब्धभंग ३। मायाभागेयोळु मनुष्यगति १। क २। शुले १। गुणिसिदोडे लब्धगुण्यभंगं २ । लोभकषायभागेयोळु मनुष्यगति १। क लो १। शु ले १। गुणिसिदोडे भंगं १॥ सूक्ष्मसांपरायंगे मनुष्यगति १। क सू लो १। शु ले १। गुणिसिदोडे ळब्धभंगं १। उपशांतकषायंगे मनुष्यगतियों बु १। क शून्यं। शु ले। गुणिसिदोडे लब्ध १। क्षीणकषायंगे मनुष्यगति १। शु ले १। गुणिसिदोडे लब्धभंगं १। योगकेवलिभट्टारकंगे मनुष्यगति १। शु ले १। गुणिसिदोडे लब्धभं १। अयोगिभट्टारकंगे मनुष्यगति १॥

चक्खुण मिच्छसासणसम्मा तेरिच्छगा हवंति सदा।
चारिकसायतिलेस्साणब्भासे तत्थ भंगा हु ॥८३०॥

चक्षुरूनमिथ्यादृष्टिसासानसम्यग्दृष्टितिर्य्यंचौ भवतः। सदा चतुःकषायत्रिलेश्यानामभ्यासे तत्र भंगाः खलु॥ चक्षुर्दर्शनरहितमिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टिगळे बीर्व्वरुं सव्वदा तिर्य्यंचरुगळेयप्परु कारणदिदमा जीवंगळोळु षंडवेदमुं चतुष्कषायंगळुमशुभलेश्यात्रयंगळ परस्पराभ्यासदिदं द्वादशभंगंगळेयप्पुवु। १२। संदृष्टि—चक्षूरहितमिथ्यादृष्टिगे भंगंगळु गुण्यरूपंगळु १२। सासादनंगे भंगं १२।

कृताश्चत्वारः। मानभागे मनुष्यगतिकषायत्रयैकलेश्याकृतास्त्रयः। मायाभागे मनुष्यगति १ क २ शुभले १ गुणिते द्वौ। लोभभागे मनुष्य १ क १ लो शु ले १ गुणिते एकः। सूक्ष्मसाम्पराये मनुष्यगति १ क—सू, लो १ शु ले १ गुणिते १ उपशान्तकषायादित्रये मनुष्यगतिः १ क शून्यं, शु ले १ गुणिते एकैकः। अयोग मनुष्यगतिरिति १ ॥८२९॥

चक्षुर्दर्शनरहितमिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टयः सदा तिर्यंच एव स्युस्तेन तत्र भंगाः षंढवेदचतुःकषायत्र्यशुभलेश्यानां गुणने द्वादश द्वादश खलु ॥८३०॥

अनिवृत्तिकरणमें मनुष्यगतिमें तीन लिंग, चार कषाय, एक शुक्ललेश्याके गुणन करनेसे बारह हुए। अवेद अनिवृत्तिकरणमें मनुष्यगतिमें चार कषाय और शुक्ललेश्यासे चार हुए। अनिवृत्तिकरणके मान भागमें मनुष्यगति तीन कषाय शुक्ललेश्याके तीन हुए। मायाभागमें मनुष्यगति दो कषाय शुक्ललेश्याके दो हुए। लोभभागमें मनुष्यगति बादर लोभ शुक्ल लेश्यासे एक हुआ। सूक्ष्म साम्परायमें मनुष्यगति सूक्ष्म लोभ शुक्ललेश्याका एक ही हुआ। उपशान्त कषायादि तीनमें कषाय नहीं है अतः मनुष्यगति शुक्ललेश्याका एक ही हुआ। अयोगीमें मनुष्यगति रूप एक हुआ। इस प्रकार जो ये भंग हुए इन्हें गुण्यरूपमें स्थापित करें ॥८२९॥

चक्षुदर्शन रहित मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि सदा तिर्यंच ही होते हैं। अतः उनमें तिर्यंचगतिमें ही नपुंसक वेद, चार कषाय, तीन अशुभ लेश्याको परस्परमें गुणा करनेसे बारह-बारह भंग होते हैं ॥८३०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खाइय अविरदसम्मे चउ सोल विहत्तरी य बारं च ।
तद्देसो मणुसेव य छत्तीसा तब्भवा भंगा ॥८३१॥

क्षायिकाविरतसम्यग्दृष्टौ चत्वारः षोडश द्वासप्ततिश्च द्वादश च। तद्देशसंयतो मनुष्य एव च षट्त्रिंशत्तद्भवा भंगाः ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टिनरकगतियसंयतनोळु षंडलिंगमुं चतुष्कषायंगळं कपोतलेश्येयुमक्कुं। लिं १। क ४। ले १। लब्धभंगंगळु नाल्कु ४। तिर्य्यग्गतिय क्षायिकासंयतसम्यग्दृष्टिगे पुंवेदलिंगमुं कषायचतुष्टयमुं लेश्याचतुष्टयमुमक्कुमेंतेंदोडे "भोगा पुण्णगसम्मे काउस्स जहण्णियं हवे णियमा" येंदितु शुभलेश्यात्रयमुं कपोतलेश्येयुमंतु नाल्कप्पुवेंबुदर्थं। लिंग १ पुं। क ४। ले ४। इवं गुणिसुत्तं विरलु भंगंगळु षोडशप्रमितंगळप्पुवु। १६। मनुष्यगतियोळु क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयतंगे लिंगत्रितयमुं चतुःकषायंगळं षड्लेश्येगळुमप्पुवु। लिंग ३। क ४। ले ६। यिवं गुणं माडिदोडे द्वासप्तति भंगंगळप्पुवु। ७२॥ देवगतियोळु क्षायिकासंयत सम्यग्दृष्टिगे पुंवेदलिंगमुं चतुष्कषायमुं शुभलेश्यात्रयमुमक्कुं। लिं १। क ४। ले ३। इवं गुणिसिदोडे लब्धभंगंगळु द्वादशप्रमितंगळप्पुवु। १२॥ यितु चतुर्गतिय क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयतंगे गुण्यरूपभंगंगळु कूडि नूर नाल्कप्पुवु। १०४॥ तद्देशसंयतः क्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतं मनुष्य एव मनुष्यनेयक्कु। मप्पुदरिंद लिंग ३। क ४। लेश्यात्रयमुं शुभंगळेयक्कुं। लेंश्ये ३। इवं संगुणं माडुत्तिरलु क्षायिक देशसंयतंगे षट्त्रिंशत्तद्भवभंगाः मूवत्तारप्पुवु। भंगंगळु ३६॥ इंतुक्तगुणस्थानंगळोळु भंगसंदृष्टि—मिथ्या २०४। चक्षूरहितमिथ्यादृष्टियोळु १२। सासादनंगे २०४। चक्षूरहितंगे १२। मिश्रंगे १८०। असंयतंगे १८०। क्षायिकसम्यग्दृष्टिगे १०४। देशसंयतंगे ७२। क्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतंगे ३६। प्रमत्तसंयतंगे ३६। अप्रमत्तसंयतंगे ३६। अपूर्व्वकरणंगे १२। अनिवृत्तिकरणंगे १२। ४। ३। २। १। सू १। उ १। क्षी १। स १। अ १॥

अनंतरं पारिणामिकभावस्थानमं पेळ्दपरु :—

क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयते नारके षंढलिंगं कषायचतुष्कं कपोतलेश्येति भंगाश्चत्वारः। तिरश्चि पुंलिंगं कषायचतुष्कं लेश्याचतुष्कमिति षोडश। मनुष्ये लिंगत्रयं कषायचतुष्कं लेश्याषट्कमिति द्वासप्ततिः। देवे पुंलिंगं कषायचतुष्कं शुभलेश्यात्रयमिति द्वादश मिलित्वा चतुरग्रशतं। क्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतः मनुष्य एवेति तत्र लिं ३ क ४ शु ले ३ तद्भवभंगाः षट्त्रिंशत् ॥८३१॥

क्षायिक सम्यग्दृष्टि असंयतमें नारकीके नपुंसक वेद चार कषाय कपोत लेश्यासे चार भंग होते हैं। तिर्यंचमें पुरुषवेद, चार कषाय, चार लेश्यासे सोलह भंग होते हैं। मनुष्यमें तीन वेद, चार कषाय, छह लेश्यामें बहत्तर भंग होते हैं। देवगतिमें पुरुषवेद चार कषाय, तीन शुभलेश्यासे बारह भंग होते हैं। इस प्रकार मिलकर एक सौ चार भंग हुए। तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टि देशसंयत मनुष्य ही होता है वहाँ तीन वेद, चार कषाय, तीन शुभलेश्यासे छत्तीस भंग हुए ॥८३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणामो दुट्ठाणो मिच्छे सेसेसु एक्कठाणो दु ।
सम्मे अण्णं सम्मं चारित्ते णत्थि चारित्तं ॥८३२॥

परिणामो द्विस्थानो मिथ्यादृष्टौ शेषेष्वेकस्थानं तु । सम्यक्त्वेऽन्यत्सम्यक्त्वं चारित्रे नास्ति चारित्रं ॥

पारिणामिकभावं द्विस्थानमनुळ्ळुदप्पुदवें तें दोडे जीवत्वभव्यत्वमें दुं जीवत्वाभव्यत्वमें दितेरडुं स्थानंगळु मिथ्यादृष्टियोळप्पुवु । शेषगुणस्थानंगळोळं गुणस्थानातीतरप्प सिद्धपरमेष्टिगळोळं जीवभव्यत्वमें बुदों दे स्थानमक्कुं । संदृष्टि मि २ । सा १ । मि १ । अ १ । दे १ । प्र १ । अ १ । अ १ । अ १ । सू १ । उ १ । क्षी १ । स १ । अ १ । सि १ ॥

अनंतरं गुणस्थानंगळोळु संभवभावंगळ प्रत्येकद्विसंयोगादिभंगंगळं साधिसुवल्लि सम्यक्त्वमों दुळ्ळ स्थानदोळु सम्यक्त्वांतरमिल्ल । चारित्रमों दुळ्ळेडेयोळु चारित्रांतरमिल्लें बुदनवधरिसुउदु ॥। मत्तमा भंगंगळंतप्पलि विशेषमं पेळ्दपरु :—

मिच्छदुगयदचउक्के अट्ठट्ठाणेण खइयठाणेण ।
जुदपरजोगजभंगा पुध आणिय मेलिदव्वा हु ॥८३३॥

मिथ्यादृष्टिद्वयासंयतचतुष्केऽष्टस्थानेन क्षायिकस्थानेन । युतपरयोगजभंगाः पृथगानीय मेलयितव्याः खलु ॥

मिथ्यादृष्टियोळ सासादननोळं चक्षूरहिताष्टस्थानदोडने कूडिद परसंयोगजनित भंगंगळं बेरे तंदु बळिकं राशियोळु कूडिकोंबुदु । असंयतादि चतुर्गुणस्थानंगळोळु क्षायिकसम्यक्त्वस्थानदोडने कूडिद परसंयोगजनितभंगंगळं बेरे तंदु तंतंम राशिय भंगंगळोळु कूडिकोळल्पडुवुवु ॥

पारिणामिकभावो मिथ्यादृष्टौ जीवत्वभव्यत्वं जीवत्वाभव्यत्वमिति द्विस्थानः । शेषगुणस्थानेषु सिद्धे च जीवत्वभव्यत्वमित्येकस्थान एव । अग्रे गुणस्थानेषु प्रत्येकद्विसंयोगादीन् वक्तुमाह—सम्यक्त्वयुतस्थाने सम्यक्त्वांतरं चारित्रयुतस्थाने चारित्रांतरं च नास्ति ॥८३२॥ पुनः—

मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये चक्षुरूनाष्टस्थानयुतान् असंयतादिचतुष्के क्षायिकसम्यक्त्वस्थानयुतांश्च परसंयोगज-

मिथ्यादृष्टिमें पारिणामिक भावके दो स्थान हैं—जीवत्व भव्यत्व और जीवत्व अभव्यत्व । शेष गुणस्थानोंमें और सिद्धोंमें जीवत्व भव्यत्व रूप एक ही स्थान है । आगे गुणस्थानोंमें प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भेद कहनेके लिए कहते हैं—सम्यक्त्व सहित स्थानमें अन्य सम्यक्त्व नहीं होता । चारित्र सहित स्थानमें अन्य चारित्र नहीं होता । अर्थात् जहाँ उपशम सम्यक्त्व होता है वहाँ वेदक या क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता ॥८३२॥

मिथ्यादृष्टि सासादनमें चक्षुदर्शन रहित क्षायोपशमिकके आठके स्थानमें जो औदयिकके भंग कहे हैं उन सहित तथा असंयत आदि चारमें क्षायिक सम्यक्त्वके स्थानमें जो औदयिकके भंग कहे हैं उन सहित परसंयोगी भंगोंको पृथक्-पृथक् निकालकर अपनी-अपनी राशिमें मिलावें ॥८३३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं तंतम्म गुणस्थानदोळु संभवभावस्थानंगळोळक्षसंचारदिदं प्रत्येकद्विसंयोगादि-भंगंगळं साधिसि तंदा भंगगळु गुण्यभंगंगळगे गुणकारंगळु क्षेपंगळुमप्पुवेंदु पेळ्दपरु :—

उदयेणक्खे चडिदे गुणगारा एव होंति सव्वत्थ ।
अवसेसभावठाणेणक्खे संचारिदे खेवा ॥८३४॥

उदयेनाक्षे चलिते गुणकारा एव भवंति सर्व्वत्र । अवशेषभावस्थानेनाऽक्षे संचारिते क्षेपाः ॥

औदयिकभावस्थानदोडनक्षं संचलिसल्पडुत्तिरला भंगंगळनितुं सर्व्वत्र प्रत्येकद्विसंयोगत्रि-संयोगादिगळनितुं गुणकारभंगंगळप्पुवु । औदयिकस्थानमं बिट्टु अवशेषभावस्थानंगळोडनक्ष संचारमागुत्तं विरला प्रत्येकद्विसंयोगादि भंगगळनितु राशिगे क्षेपकंगळप्पुवु । अदेंतेंदोडे मिथ्या-दृष्टियोळु चतुर्गतिय लिंग कषायलेश्या संजनितगुण्यभावंगळगे पूर्व्वोक्तचतुरुत्तरद्विशतभंगंगळगे २०४ । इवक्के गुणकारंगळं क्षेपंगळुमेंतेंदोडे मिथ्यादृष्टिगे मिश्रभावस्थानंगळु पत्तुमोंभत्तुवुमितु द्विस्थानंगळु औदयिकभावदोळष्टस्थानमोंदु पारिणामिकभावस्थानमेरडुमप्पुविवं स्थापिसि

मि	औ	पा
१०	८	भ
९		अ २

यिल्लि औदयिकभावस्थानदोळिट्ट प्रत्येकभंगाक्षं गुणकारमक्कुं । शेष

भंगान् पृथगानीय स्वस्वराशौ निक्षिपेत् ॥८३३॥ उक्तगुण्यानां गुणकारक्षेपावुद्भावयति—

गुणस्थानं प्रति प्रागुक्तमिश्रौदयिकपारिणामिकभावस्थानानि भंगोत्पादनक्रमेण संस्थाप्य तत्र औदयिक-भावस्थानेनाक्षे चलिते सर्वत्र ये भंगास्ते गुणकारा एव स्युः । शेषभावस्थानैरक्षे संचारिते तु क्षेपाः स्युः । तद्यथा—

मिथ्यादृष्टौ तत्स्थानानीत्थं संस्थाप्य

मि	औ	पा
१०	८	भ
९	०	अ

अत्राष्टकस्य प्रत्येकभंगो गुणकारः शेषा-

उक्त गुण्योंके गुणकार और क्षेप कहते हैं—

गुणस्थानोंमें पूर्वमें कहे मिश्र औदयिक और पारिणामिक भावके स्थानोंको अक्ष संचार विधानके द्वारा भंग उत्पन्न करनेके लिए क्रमसे स्थापित करो। उनमें औदयिकभावके स्थान द्वारा अक्षका संचार करके जो भंग होते हैं उन्हें गुणकार जानो। और शेष भावोंके स्थानोंमें अक्ष संचार द्वारा जो भंग हों उन्हें क्षेपक जानो।

विशेषार्थ—भावोंके जो स्थान कहे हैं उनको यथासम्भव जुदा-जुदा कहना प्रत्येक भंग है। उनमें औदयिकके स्थान रूप प्रत्येक भंगको तो गुणकार जानना। शेष भावोंके स्थान रूप प्रत्येक भंगोंको क्षेप रूप जानना। जहाँ दो, तीन आदि भाव स्थानोंका संयोग किया जाये वहाँ दो संयोगी, तीन संयोगी आदि भंग होते हैं। उनमें भी जहाँ औदयिक भावके संयोग सहित दो संयोगी आदि भंग होते हैं उन्हें गुणकार रूप जानो। और जिनमें औद-यिक भावका संयोग न होकर अन्य भावोंके संयोगसे दो संयोगी आदि भंग हों उन्हें क्षेपक रूप जानो। जिससे गुणा किया जाता है उसे गुणकार कहते हैं और जिनको मिलाया जाता है उन्हें क्षेपक कहते हैं। सो पहले जो गुण्य कहे थे उनको कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिश्रभावस्थानंगळोळेरडुं पारिणामिकभावस्थानंगळोळेरडुमंतु प्रत्येकभंगंगळु नाल्कुं क्षेपंगळ-ळप्पुवु। प्र गु १। क्षे ४। द्विसंयोगभंगंगळुमंते औदयिकभावस्थानदोळिट्टक्षवोडने मिश्रभाव-स्थानंगळेरडुं पारिणामिकभावस्थानंगळेरडुमंतु द्विसंयोग भंगंगळु नाल्कुं गुणकारंगळप्पुवु शेषस्थानं-गळ द्विसंयोगभंगंगळु मिश्रभावदशस्थानदोळिट्टक्षवोडने पारिणामिकभावस्थानंगळोळेरडुं मत्तं मिश्रभावनवस्थानदोळिट्टक्षं पारिणामिकभावस्थानंगळेरडरोळेरडु मंतु द्विसंयोगक्षेपंगळु नाल्कप्पुवु। द्वि गु ४। क्षे ४। त्रिसंयोगदोळमंते मिश्रभावदशस्थानदोळं औदयिकभावाष्टस्थानदोळं पारिणामिकभाव जीवभव्यत्वदोळमिती मूरेडेयोळिट्टक्षमों दु भंगमक्कु–। मा जीवभव्यत्वदोळि-र्दक्षं जीवाभव्यत्वक्के संचरिसिदोडल्लियों दु भंगं द्वितीयमक्कुं। मत्तं मिश्रभावदशस्थानदोळिर्दक्षं नवस्थानक्के संचरिसिदोडदरोडनेयुमौदयिकाष्टस्थानदोळं पारिणामिकजीव भव्यत्वदोळु त्रिसंयोग-तृतीयभंगमक्कु मा जीवभव्यत्वदोळिर्दक्षं जीवाभव्यत्वक्के संचरिसिदोडे त्रिसंयोगचतुर्थभंगमक्कु-मितु त्रिसंयोगगुणकारभंगंगळु नाल्कप्पुवु। त्रिसंयोगक्षेपंगळु संभविसवितु मिथ्यादृष्टियोळु गुणकारभंगंगळों भत्तु क्षेपंगळे ट्टप्पुवु। गुण्य २०४। गु ९। क्षे ८। लब्धभंगंगळु १८४४। मत्तं चक्षरून मिथ्यादृष्टिगे

मि	औ	पा
८	८	भ अ २

इल्लि प्रत्येकभंगक्षेपमों देयक्कुमेक्के दोडे औदयिक-पारिणामिकंगळ प्रत्येक भंगंगळु पुनरुक्तंगळप्पुवु। अदुकारणमागि। मत्तं द्विसंयोगगुणकार

श्चत्वारः क्षेपाः। द्विसंयोगेऽष्टकेन दशकनवकयोर्द्वौ भव्यत्वाभव्यत्वयोर्द्वौ च गुणकाराः नवकदशकाभ्यां भव्य-त्वाभव्यत्वयोर्द्वौ द्वौ क्षेपाः। त्रिसंयोगे दशकेनाष्टकेनाष्टके भव्यत्वाभव्यत्वाभ्यां द्वौ नवकेन च द्वौ गुणकाराः। क्षेपो नास्ति मिलित्वा प्रागुक्तचतुरग्रद्विशत्याः गुणकारा नव क्षेपा अष्टौ। चक्षुरूने तु तत्स्थानानीमानि—

मिथ्यादृष्टिमें मिश्रके दस और नवके दो स्थान, औदयिकका आठका एक स्थान और पारिणामिकके जीवत्व सहित भव्य-अभव्य रूप दो स्थान इस तरह पाँच स्थान हैं। तथा प्रत्येक भंग पाँच हैं उनमें-से औदयिकका आठ स्थान रूप एक प्रत्येक भंग तो गुणकार है। शेष दो मिश्रके और दो पारिणामिकके ये चार भंग क्षेप रूप हैं। तथा दो संयोगी भंगोंमें औदयिकके आठके स्थान सहित मिश्रके दस और नौके स्थान रूप दो भंग और पारिणामिक-के दो भंग ये चार भंग तो गुणकार रूप हैं। मिश्रका दसके स्थान सहित पारिणामिकके भव्य-अभव्य रूप दो स्थानोंके दो भंग तथा मिश्रका नौके स्थान सहित उसी पारिणामिकके दो स्थानोंके संयोग रूप दो भंग ये चार क्षेप रूप हैं। त्रिसंयोगीमें औदयिकका आठका स्थान और मिश्रका दसके स्थान सहित पारिणामिकके दो स्थानोंके दो भंग तथा औदयिक-का आठका स्थान और मिश्रका नौका स्थान सहित पारिणामिकके दो स्थानोंके दो भंग, ये चार भंग गुणकार रूप हुए। यहाँ औदयिकके संयोगके बिना त्रिसंयोगी भंग नहीं बनता इससे त्रिसंयोगीमें क्षेप नहीं है। ये सब मिलकर नौ गुणकार और आठ क्षेप हुए। पूर्वमें औदयिक भावोंके भंगोंको लेकर मिथ्यादृष्टिमें दो सौ चार गुण्य कहा था। उसको गुणकार नौसे गुणा करनेपर अठारह सौ छत्तीस हुए। उसमें आठ क्षेप मिलानेपर अठारह सौ चौवालीस भंग हुए। चक्षुदर्शन रहित मिथ्यादृष्टिमें मिश्रका आठ रूप स्थान, औदयिकका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगमो देयक्कुं । शेषद्विसंयोगगुणकारभंगंगळु पुनरुक्तंगळु । मत्तं द्विसंयोग क्षेपंगळु मिश्रभावाष्ट-स्थानदोडने पारिणामिकभावस्थानद्वयदोळेरडप्पुवु । द्वि गु १ । क्षे २ । त्रिसंयोगगुणकार भंगमेरडे-यक्कुं । त्रि गु २ । कूडि चक्षुरून मिथ्यादृष्टियगुण्य पूर्व्वोक्तद्वादशभंगगळगे गुणकारभंगंगळ्मूरुं क्षेपंगळ्मूरप्पुवु । गुण्य भंग १२ । गु ३ । क्षे ३ । लब्धभंगंगळु ३९ । उभयमिथ्यादृष्टिय सर्व्वं भंगंगळु सासिरदें टु नूरें भत्तमूरप्पुवु । १८८३ ॥ सासादनंगे

मि	औ	पा
११	७	भ
९		

इल्लि प्र गु १ ।

मि	औ	पा
८	८	भ
		अ

अत्र मिश्राष्टस्यैव प्रत्येकभंगो ग्राह्यः । शेषाणां पुनरुक्तत्वात् । स च क्षेपः । द्विसंयोगेऽपि तथात्वाद् गुणकारः एकः । मिश्राष्टकस्य भव्यत्वाभव्यत्वाभ्यां द्वौ क्षेपौ । त्रिसंयोगे गुणकारावेव द्वौ । मिलित्वा प्रागुक्तद्वादशानां गुणकारास्त्रयः । क्षेपास्त्रयः । भंगा एकान्नचत्वारिंशत् । उभये मिलित्वा मिथ्यादृष्टौ सर्वभंगा त्र्यशीत्यग्राष्टादशशतानि ।

आठ रूप स्थान और पारिणामिकके दो स्थान ये चार स्थान हैं। यहाँ प्रत्येक भंग चार हैं। उनमें-से एक मिश्रका आठ स्थान रूप प्रत्येक भंग ग्रहण करना, क्योंकि अन्य तीन प्रत्येक भंग पुनरुक्त हैं—चक्षुदर्शन सहित मिथ्यादृष्टिमें कहे पूर्व भंगोंके समान है। अतः एकका ही ग्रहण किया। सो क्षेप रूप है। दो संयोगीमें मिश्रका आठका स्थान और औदयिकका आठका स्थान इन दोनोंके संयोग रूप एक भंग गुणकार है। यहाँ औदयिकके स्थान और भव्य-अभव्य रूप पारिणामिकके दो स्थानोंके संयोगसे जो दो-दो संयोगी भंग होते हैं वे पुनरुक्त हैं अतः उनका ग्रहण नहीं किया। मिश्रका आठका स्थान और भव्य-अभव्य रूप पारिणामिकके संयोगसे जो दो-दो संयोगी भंग होते हैं वे क्षेपरूप हैं। त्रिसंयोगीमें मिश्रका आठका स्थान, औदयिकका आठका स्थान, और पारिणामिकके भव्य-अभव्यरूप दो स्थानोंके संयोगसे जो दो भंग होते हैं वे गुणकार रूप हैं। इस तरह चक्षु दर्शन रहित मिथ्यादृष्टीके जो पहले बारह गुण्य कहा था उसका तीन गुणकार और तीन क्षेप हुए। गुण्यको गुणकारसे गुणा करके क्षेप मिलानेसे उनतालीस भंग हुए। इस प्रकार चक्षु दर्शन सहित और रहित मिथ्यादृष्टिके सब भंग मिलकर अठारह सौ तिरासी होते हैं।

विशेषार्थ—प्रत्येक गुणस्थानमें जितने भावोंके स्थान पाये जाते हैं उतने तो प्रत्येक भंग जानना। औदयिकके स्थान गुणकार जानना। अन्य भावोंके स्थान क्षेपरूप जानना। दो तीन आदि भावोंके संयोगसे होनेवाले भावोंको दो संयोगी त्रिसंयोगी जानना। उनमें भी औदयिक भाव और अन्य किसी भावके संयोगसे जो दो संयोगी आदि भंग हों उन्हें गुणकार रूप जानना। औदयिक भाव बिना अन्य भावोंके संयोगसे जो दो संयोगी आदि भंग हों उन्हें क्षेपरूप जानना। पहले कहे भंगोंके समान जो पीछे भंग हों उन्हें पुनरुक्त जानकर उनको ग्रहण नहीं करना। ऐसा करनेपर जो गुणकार हों उन्हें जोड़कर पूर्वमें कहे गुण्यसे उनका गुणा करके जो प्रमाण हो उसमें क्षेपको मिलाकर जितना प्रमाण हो उतने भंग जानना।

क्षे ३। द्वि गु ३। क्षे २। त्रि गु २॥ अंतु सासादनंगे गुण्यभंगंगळु २०४। गु ६। क्षे ५। लब्ध भंगंगळु १२२९। मत्तं चक्षुरूनसासादनंगे

मि	औ	पा
८	७	भ

प्र क्षे १। द्वि गु १। क्षे १ त्रि गु १। अंतु गुण्य १२। गु २ क्षे २। लब्ध भंगंगळु २६। उभयसासादन भंगंगळु १२५५। मिश्रंगे

मि	औ	पा
८	७	भ
९		

प्र गु १। क्षे ३। द्वि गु ३। क्षे २। त्रि गु २। अंतु मिश्रंगे पूर्व्वोक्त गुण्य भंगंगळु १८०। गु ६। क्षे ५। लब्धभंगंगळु १०८५। असंयतंगे

उ	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

प्र गु १। क्षे ४। द्वि गु ४।

सासादने—

मि	औ	पा
१०	७	भ
९		

अत्र प्र गु १ क्षे ३, द्वि गु ३ क्षे २, त्रि गु २, मिलित्वा गुण्यं २०४। गु ६ क्षे ५ भंगाः १२२९। पुनश्चक्षूरूने

मि	औ	पा
८	७	भ

अत्र प्र क्षे १ द्विगु १ क्षे १ त्रिगु १ मिलित्वा गुण्यं १२। गु २ क्षे २ भंगा २६ उभये १२५५।

मिश्रे—

मि	औ	पा
११	७	भ
९		

प्रगु १ क्षे ३। द्विगु ३ क्षे २। त्रिगु २ मिलित्वा गुण्यं १८० गु ६ क्षे ५ भंगाः १०८५।

सासादनमें मिश्रके दस और नौके दो स्थान; औदयिकका सातका एक स्थान, पारिणामिकका भव्यरूप एक स्थान, ऐसे चार स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगोंमें एक गुणकार तीन क्षेप हैं। दो संयोगीमें गुणकार तीन क्षेप दो, तीन संयोगीमें गुणकार दो। सब मिलकर गुणकार छह और क्षेप पाँच हुए। गुण्य दो सौ चारसे गुणा करनेपर बारह सौ उनतीस भंग हुए। चक्षुदर्शन रहित सासादनमें मिश्रका आठका स्थान, औदयिकका सातका स्थान, पारिणामिकका एक भव्यका स्थान ये तीन स्थान हैं। प्रत्येक भंगमें एक क्षेप है। शेष पुनरुक्त हैं। दो संयोगीमें गुणकार एक क्षेप एक, त्रिसंयोगीमें गुणकार एक मिलकर दो गुणकार हुए दो क्षेप हुए। गुण्य पूर्वोक्त बारहमें गुणा करनेसे सब भंग छब्बीस हुए। दोनों मिलानेपर सासादनमें सब भंग बारह सौ पचपन होते हैं। मिश्र गुणस्थानमें मिश्रके ग्यारह और नौके दो, औदयिकका सातका एक और पारिणामिकका एक भव्य ऐसे चार स्थान हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप तीन, दो संयोगीमें गुणकार तीन क्षेप दो, तीन संयोगीमें दो गुणकार, सब मिलकर छह गुणकार और पाँच क्षेप हुए। पूर्वोक्त गुण्य एक सौ अस्सीको छहसे गुणा करके, पाँच जोड़नेपर सर्व भंग एक हजार पचासी होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षे ५। त्रि गु ५। क्षे २। च गु २। अंतु असंयतंगे गुण्य पूर्व्वोक्तभंग १८०। गु १२। क्षे ११। लब्ध भंग २१७१। क्षायिक सम्यग्दृष्टिगे

क्षा	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

इल्लि प्रत्येकगुणकारं पुनरुक्तमक्कुं। प्र। क्षे १। द्वि गु १। शेषभंगंगळु पुनरुक्तंगळु। द्वि। क्षे ३। त्रि गु ३। क्षे २। च गु २। अंतु क्षायिकासंयतंगे पूर्व्वोक्तगुण्यंगळु १०४। गु ६। क्षे ६। लब्धभंगंगळु ६३०। उभयासंयतभंगंगळु २८०१॥ इल्लि उपशम सम्यक्त्वदोडनेयुं क्षायिकसम्यक्त्वदोडनेयुं मिश्रभावस्थानदोळिर्द्दं वेदकसम्यक्त्वं पोरगागि विवक्षितमें दु निश्चैसुवुदु॥ देशसंयतंगे

उ	मि	औ	पा
१	१३	६	भ
	११		०

इल्लि प्र गु १। क्षे ४। द्वि गु ४। क्षे ५। त्रि गु ५। क्षे २। च गु २। कूडि देशसंयतंगे गुण्यभंगंगळु पूर्व्वोक्तंगळु ७२। गु १२। क्षे ११। लब्धभंगंगळु ८७५। क्षायिकसम्यग्दृष्टि देशसंयतंगे

असंयते—

उ	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

प्र गु १ क्षे ४। द्विगु ४ क्षे ५। त्रिगु ५ क्षे २। च गु २ मिलित्वा गुण्यं १८० गु १२ क्षे ११ भंगाः २१७१।

क्षायिकसम्यग्दृष्टौ—

क्षा	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

अत्र प्रत्येकगुणकारः पुनरुक्तः। प्रक्षे १। द्विगु १ शेषाः पुनरुक्ताः। द्वि क्षे ३। त्रिगु ३ क्षे २। चगु २ मिलित्वा गुण्यं १०४। गु ६। क्षे ६ भंगाः ६३०। उभये भंगाः २८०१। अत्रोपशमक्षायिकसम्यक्त्वाभ्यां मिश्रभावस्थानं वेदकं विना विवक्षितं।

असंयतमें औपशमिकका उपशम सम्यक्त्व रूप एक, मिश्रके बारह और दस ये दो, औदयिकका सात रूप एक तथा पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक ऐसे पाँच स्थान हैं। वहाँ प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप चार, दो संयोगीमें गुणकार चार क्षेप पाँच, तीन संयोगीमें गुणकार पाँच क्षेप दो, चार संयोगीमें गुणकार दो। सब मिलकर गुणकार बारह और क्षेप ग्यारह हुए। पूर्वोक्त गुण्य एक सौ अस्सीको बारहसे गुणा करके ग्यारह जोड़नेपर सब भंग इक्कीस सौ इकहत्तर होते हैं। क्षायिक सम्यग्दृष्टीके क्षायिकका क्षायिक सम्यक्त्व रूप एक, मिश्रके बारह और दस ये दो, औदयिकका सात रूप एक, पारिणामिक का भव्यत्व एक इस प्रकार पाँच स्थान हैं। वहाँ प्रत्येक भंगमें एक क्षेप, दो संयोगीमें गुणकार एक क्षेप तीन, तीन संयोगीमें गुणकार तीन क्षेप दो, चार संयोगीमें गुणकार दो हैं। शेष गुणकार और क्षेप पुनरुक्त होते हैं। सब मिलकर गुणकार छह और क्षेप छह हुए। पूर्वोक्त गुण्य एक सौ चारको छहसे गुणा करके छह जोड़नेपर सब भंग छह सौ तीस होते हैं। दोनोंको मिलानेपर असंयतमें सब भंग अठाईस सौ एक होते हैं। यहाँ उपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्वके साथ मिश्र भाव स्थान वेदक सम्यक्त्वके बिना विवक्षित हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षा	मि	औ	पा
१	१३	६	भ
	११		

इल्लि प्रत्येकगुणकारं पुनरुक्तमक्कुं । क्षे १ । द्वि गु १ । शेषद्विसंयोगगुणकारंगळु पुनरुक्तंगळु । द्वि क्षे ३ । त्रि गु ३ । शेषगुणकार भंगंगळु पुनरुक्तंगळु । त्रि क्षे २ । च गु २ । कूडि क्षायिकदेशसंयतंगे गुण्यंगळु ३६ । गु ६ । क्षे ६ । लब्ध भंगंगळु २२२ । उभयभंगंगळु देशसंयतंगे १०९७ । प्रमत्तसंयतंगे

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

यिल्लि प्र गु १ । क्षे ७ । द्वि गु ७ । क्षे १४ । त्रि गु १४ । क्षे ८ । च गु ८ । कूडि गुण्यभंगंगळु ३६ । गु ३० ।

देशसंयते—

उ	मि	औ	पा
१	१३	६	भ
	११		

अत्र प्रगु १ क्षे ४ । द्विगु ४ क्षे ५ । त्रिगु ५ क्षे २ । चगु २ मिलित्वा गुण्यं ७२ गु १२ क्षे ११ भंगाः ८७५ ।

क्षायिकसम्यक्त्वे—

क्षा	मि	औ	प
१	१३	६	भ
	११		

अत्र प्रत्येकगुणेकारः पुनरुक्तः । क्षे १ । द्विगु १ शेषद्विसंयोगगुणकाराः पुनरुक्ताः । द्वि क्षे ३ । त्रिगु ३ शेषगुणकाराः पुनरुक्ताः । त्रि क्षे २ । चगु २ मिलित्वा गुण्यं ३६ गु ६ क्षे ६ भंगाः २२२ । उभयभंगाः १०९७ ।

देश संयतमें औपशमिक भावका उपशम सम्यक्त्व रूप एक, मिश्रके तेरह और ग्यारह के दो, औदयिकका छहका एक तथा पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक, ऐसे पाँच स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप चार, दो संयोगीमें गुणकार चार, क्षेप पाँच, तीन संयोगीमें गुणकार पाँच क्षेप दो, चार संयोगीमें गुणकार दो। सब मिलकर गुणकार बारह और क्षेप ग्यारह हुए। पूर्वोक्त गुण्य बहत्तरको बारहसे गुणा करके ग्यारह जोड़नेपर सब भंग आठ सौ पचहत्तर होते हैं।

क्षायिक सम्यक्त्वमें उपशमके स्थानमें क्षायिक सम्यक्त्व रूप क्षायिकका स्थान कहना। शेष पूर्ववत् है। वहाँ प्रत्येक भंगमें क्षेप एक, दो संयोगीमें गुणकार एक क्षेप तीन, तीन संयोगीमें गुणकार तीन क्षेप दो, चार संयोगीमें गुणकार दो। शेष गुणकार और क्षेप पुनरुक्त हैं। सब मिलकर गुणकार छह और क्षेप छह हुए। पूर्वोक्त गुण्य छत्तीससे गुणा करनेपर सब भंग दो सौ बाईस होते हैं। दोनोंको मिलाकर देशसंयतमें सब भंग एकहजार सत्तानबे होते हैं।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

क्षे २९। लब्ध भंगगळु ११०९। अप्रमत्तसंयतंगे

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

इल्लि प्र गु १। क्षे ७। द्वि गु ७। क्षे १४। त्रि गु १४। क्षे ८। चतु गु ८। कूडि अप्रमत्तंगे गुण्यभंगमूवत्तारु ३६। गु ३०। क्षे २९। लब्धभंगंगळु ११०९। अपूर्व्वकरणंगे क्षपकंगे

क्षा	मि	पा
२	१२	भ
	११	
	१०	
	९	

यिल्लि प्रगु १। क्षे ६। द्विगु ६। क्षे ९। त्रिगु ९। क्षे ४। च गु ४। कूडि क्षपकापूर्व्वकरणंगे गुण्य १२। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु २५९। अनिवृत्तिकरणक्षपकंगे सवेदभागेयोळु

प्रमत्ते—

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

अत्र प्रगु १ क्षे ७। द्विगु ७ क्षे १४। त्रिगु १४ क्षे ८। चगु ८। मिलित्वा गुण्यं ३६ गु ३० क्षे २९ भंगाः ११०९।

अप्रमत्ते—

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

अत्र प्रगु १ क्षे ७। द्विगु ७ क्षे १४। त्रिगु १४ क्षे ८। चगु ८। मिलित्वा गुण्यं ३६। गु ३० क्षे २९ भंगाः ११०९।

प्रमत्तमें औपशमिकका उपशम सम्यक्त्व रूप एक, क्षायिकका क्षायिक सम्यक्त्व रूप एक, मिश्रके चौदह, तेरह, बारह, ग्यारहके चार, औदयिकका छह रूप एक, पारिणामिकका भव्यत्व एक, ऐसे आठ स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप सात, दो संयोगीमें गुणाकार सात क्षेप चौदह, तीन संयोगीमें गुणाकार चौदह क्षेप आठ, चार संयोगीमें गुणाकार आठ। सब मिलकर गुणकार तीस और क्षेप उनतीस हुए। पूर्वोक्त गुण्य छत्तीससे गुणा करनेपर सब भंग ग्यारह सौ नौ होते हैं।

अप्रमत्तमें प्रमत्तकी तरह स्थान आठ, गुणकार तीस और क्षेप उनतीस होनेसे सब भंग ग्यारह सौ नौ होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गु १२। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगलोळु २५९। अवेवभागेयोळु—

क्षा	मि	औ	पा
२	१२	५	भ
	११		
	१०		
	९		

इल्लि गुण्यं ४। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ९९। क्रोधरहितभागेयोळु गुण्य ३। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ७९। मानरहितभागेयोळु गुण्य २। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ५९। मायारहितभागेयोळु गु १। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ३९। सूक्ष्मसांपरायंगे गुण्यभंग १। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ३९। क्षीणकषायंगे गुण्य १। गु २०। क्षे १९। लब्धभंगंगळु ३९। सयोगकेवलिभट्टारकंगे

क्षा	औ	पा
२	३	भ

इल्लि प्र गु १। क्षे २। द्वि २। क्षे १। त्रिसंगु १। कूडि गुण्य १।

क्षपकेऽपूर्वकरणे—

क्षा	मि	औ	पा
२	१२	६	भ
	११		
	१०		
	९		

अत्र प्रगु १ क्षे ६। द्विगु ६ क्षे ९। त्रिगु ९ क्षे ४। चगु ४ मिलित्वा गुण्यं १२। गु २० क्षे १९ लब्धभंगाः २५९।

अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे गुण्यं १२ गु २० क्षे १९ भंगाः २५९। अवेदभागे—

क्षा	मि	औ	पा
२	१२	५	भ
	११		
	१०		
	९		

अत्र गुण्यं ४ गु २० क्षे १९ भंगाः ९९। अक्रोधभावे गुण्यं ३

क्षपकश्रेणीमें अपूर्वकरण गुणस्थानमें क्षायिकका सम्यक्त्व चारित्ररूप एक स्थान, मिश्रके बारह, ग्यारह, दस, नौ ये चार स्थान, औदयिकका छहका एक स्थान, और पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक स्थान, इस प्रकार सात स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप छह, दो संयोगीमें गुणकार छह क्षेप नौ, तीन संयोगीमें गुणकार नौ क्षेप चार, चार संयोगीमें गुणकार चार। सब मिलकर गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस हुए। पूर्वोक्त गुण्य बारहसे गुणा करनेपर सब भंग दो सौ उनसठ होते हैं।

अनिवृत्तिकरणमें वेद सहित भागमें अपूर्वकरणकी तरह चार भावोंके सात स्थान हैं। तथा गुणकार बीस, क्षेप उन्नीस हैं। पूर्वोक्त गुण्य बारह हैं। अतः दो सौ उनसठ भंग होते हैं। वेद रहित भागमें भी उसी प्रकार चार भावोंके सात स्थान हैं। इतना विशेष है कि यहाँ औदयिकका पाँचका स्थान होता है। अपूर्वकरणकी तरह ही गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस होते हैं। किन्तु गुण्य चार होनेसे भंग निन्यानबे होते हैं। क्रोध रहित भागमें भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गु ४। क्षे ३। लब्धभंगंगळु ७। अयोगिभट्टारकंगेयुमिते प्र गु १। क्षें २। द्वि गु २। क्षे १। त्रि गु १ कूडि गुण्य १। गु ४। क्षे ३। लब्धभंगंगळु ७। सिद्ध परमेष्ठिगे

क्षा	पा
२	जी

इल्लि प्र क्षे २। द्विसंयोगक्षे १। कूडि भंगंगळु ३। उपशमकापूर्व्वकरणंगे

उ	क्षा	मि	औ	पा
२	१	१२	६	भ
		११		
		१०		
		९		

इल्लि प्र

गु २० क्षे १९ भंगाः ७९। अमानभागे गुण्यं २ गु २० क्षे १९ भंगाः ५९। अमायभागे गुण्यं १ गु २० क्षे १९ भंगाः ३९।

सूक्ष्मसाम्पराये गुण्यं १ गु २० क्षे १९ भंगाः ३९। क्षीणकषाये गुण्यं १ गु २० क्षे १९ भंगाः ३९।

सयोगे—

क्षा	औ	पा
१	३	भ

अत्र प्रगु १ क्षे २। द्विगु २ क्षे १। त्रिगु १। मिलित्वा गुण्यं १ गु ४ क्षे ३ भंगाः ७।

अयोगे—

क्षा	औ	पा
१	२	भ

अत्र प्रगु १ क्षे २। द्विगु २ क्षे १। त्रिगु १ मिलित्वा गुण्यं १ गु ४ क्षे ३ भंगाः ७।

सिद्धे—

क्षा	पा
१	जी

अत्र प्रक्षे २ द्विक्षे १ मिलित्वा भंगाः ३।

वेदरहित भागकी तरह जानना। अतः गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस हैं। किन्तु गुण्य तीन होनेसे उन्यासी भंग होते हैं। मानरहित भागमें भी उसी प्रकार गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस होते हैं। किन्तु गुण्य दो होनेसे भंग उनसठ होते हैं। मायारहित भागमें भी गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस होते हैं। किन्तु गुण्य एक होनेसे भंग उनतालीस होते हैं।

सूक्ष्मसाम्परायमें भी उसी प्रकार गुणकार बीस और क्षेप उन्नीस हैं तथा गुण्य एक होनेसे उनतालीस भंग होते हैं।

क्षीणकषायमें भी उसी प्रकार गुणकार बीस, क्षेप उन्नीस और गुण्य एक होनेसे भंग उनतालीस होते हैं। सयोगीमें क्षायिकका एक, औदयिकका तीनरूप एक और पारिणामिक एक, इस प्रकार तीन स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप दो, दो संयोगीमें गुणकार दो क्षेप एक, तीन सयोगीमें गुणकार एक। सब मिलकर गुणकार चार क्षेप तीन और एक गुण्य होनेसे सात भंग होते हैं। अयोगीमें क्षायिकका एक, औदयिकका दो रूप एक तथा पारिणामिक एक, इस प्रकार तीन स्थान हैं। उनमें सयोगीकी तरह गुणकार चार क्षेप तीन और गुण्य एक होनेसे सात भंग होते हैं।

सिद्धोंमें क्षायिकका एक, पारिणामिकका जीवत्वरूप एक इस तरह दो स्थान हैं। वहाँ प्रत्येक भंगमें क्षेप दो, दो संयोगीमें क्षेप एक मिलकर तीन भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गु १। क्षे ७। द्वि गु ७। क्षे १५। त्रि गु १५। क्षे १३। चतु गु १३। क्षे ४। पंच गु ४। कूडि गुण्य १२। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ५१९॥ अनिवृत्तिकरणंगे सवेदभागेयोळु गुण्य १२। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ५१९। अनिवृत्तिय अवेदभागेयोळु गुण्यंगळु ४। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु १९९। क्रोधरहितभागेयोळु गुण्य ३। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु १५९। मानरहितभागेयोळु गुण्य २। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ११९। मायारहितभागेयोळु गुण्य १। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ७९। सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे गुण्य १। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ७९। उपशांतकषायंगे गुण्य १। गु ४०। क्षे ३९। लब्धभंगंगळु ७९॥ अनंतरमी गुण्यादिभंगंगळनुच्चरिसितोरिदपरु—

उपशमकेष्वपूर्वकरणे—

उ	क्षा	मि	औ	पा
२	१	१२	६	भ
		११		
		१०		
		९		

अत्र प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १५। त्रिगु १५ क्षे १३। चगु १३ क्षे ४। पंगु ४। मिलित्वा गुण्यं १२ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ५१९।

अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे गुण्यं १२ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ५१९। अवेदभागे गुण्यं ४ गु ४० क्षे ३९ भंगाः १९९। अक्रोधभागे गुण्यं ३ गु ४० क्षे ३९ भंगाः १५९। अमानभागे गुण्यं २ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ११९। अमायभागे गुण्यं १ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ७९।

सूक्ष्मसाम्पराये गुण्यं १ गु ४९ क्षे ३९ भंगाः ७९। उपशान्तकषाये गुण्यं १ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ७९ ॥८३४॥ उक्तगुण्यादीनुच्चरति—

उपशमश्रेणीमें अपूर्वकरणसे लेकर उपशान्तकषायपर्यन्त उपशमका सम्यक्त्व चारित्र रूप एक स्थान है, मिश्रके बारह, ग्यारह, दस, नौके चार स्थान हैं, औदयिकका अपूर्वकरण और वेदसहित अनिवृत्तिकरणमें छहका तथा ऊपर उपशान्तकषायपर्यन्त पाँचका एक स्थान है, पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक स्थान है। ऐसे आठ-आठ स्थान हैं। उनमें प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप सात, दो संयोगीमें गुणकार सात, क्षेप पन्द्रह, तीन संयोगीमें गुणकार पन्द्रह क्षेप तेरह, चार संयोगीमें गुणकार तेरह क्षेप चार, पाँच संयोगीमें गुणकार चार। सब मिलकर गुणकार चालीस और क्षेप उनतालीस हुए। तथा अपूर्वकरणमें गुण्य बारह होनेसे भंग पाँच सौ उन्नीस हैं। अनिवृत्तिकरणके सवेद भागमें भी गुण्य बारह होनेसे भंग पाँचसौ उन्नीस होते हैं। वेदरहित भागमें गुण्य चार होनेसे भंग एक सौ निन्यानवे होते हैं। क्रोधरहित भागमें गुण्य तीन होनेसे भंग एक सौ उनसठ होते हैं। मानरहित भागमें गुण्य दो होनेसे भंग एक सौ उन्नीस होते हैं। मायारहित भागमें गुण्य एक होनेसे भंग उन्नासी होते हैं। सूक्ष्मसाम्परायमें भी उन्नासी होते हैं। उपशान्त कषायमें भी भंग उन्नासी होते हैं ॥८३४॥

आगे उन गुण्य आदिको कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुसु दुसु देसे दोसु वि चउरुत्तरदुसदमसीदिसहिदसदं ।
बावत्तरि छत्तीसा बारमपुव्वे गुणिज्जपमा ॥८३५॥

द्वयोर्द्वयोर्देशसंयतेद्वयोरपि चतुरुत्तरद्विशतमशीतिसहितशतं । द्वासप्ततिः षट्त्रिंशत् द्वादशा-पूर्व्वे गुण्यप्रमा ॥

बार चउतिदुगमेक्कं थूले तो इगि हवे अजोगित्ति ।
पुण बार बार सुण्णं चउसद छत्तीस देसोत्ति ॥८३६॥

द्वादश चतुस्त्रिद्व्येकं स्थूले तत एकं भवेदयोगि पर्य्यंतं । पुनर्द्वादश द्वादश शून्यं चतुरुत्तरशतं षट्त्रिंशद्देशसंयतपर्य्यंतं ॥

यों दितौदयिकभावगुणस्थानभंगंगळु द्वयोः मिथ्यादृष्टिसासादनरुगळोळु प्रत्येकं चतुरुत्तरद्विशतमक्कुं । मत्तं द्वयोः मिश्रासंयतरुगळोळु प्रत्येकमशीतिसहितशतमक्कुं । देशसंयते देशसंयतनोळु द्वासप्ततिगुण्यभंगंगळप्पुवु । द्वयोरपि प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरुगळोळु प्रत्येकं गुण्यभंगंगळु षट्त्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु । अपूर्व्वे अपूर्व्वकरणनोळु गुण्यप्रमा गुण्यसंख्ये द्वादश प्रमेरडप्पुवु । स्थूले अनिवृत्तिकरणनोळु क्रमदिदं भाग भागेगळोळु द्वादश चतुः त्रि द्वि एकगुण्यभंगंगळप्पुवु । ततः मेलयोगिगुणस्थानपर्य्यंतं प्रत्येकमेकगुण्यमेयक्कुं । पुनः मत्ते मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्रासंयत देशसंयतपर्य्यंतमिल्लि क्रमदिदं गुण्यभंगंगळु द्वादश द्वादश शून्यं चतुरुत्तरशतं षट्त्रिंशत्संख्येगळप्पुवु ॥ अनंतरमा गुणस्थानंगळोळु गुणकारक्षेपंगळं कंठोक्तं माडि संख्येयं पेळदपरु ।

वामे दुसु दुसु दुसु तिसु खीणे दोसुवि कमेण गुणगारा ।
णवछब्बारस तीसं वीसं वीसं चउक्कं च ॥८३७॥

वामे द्वयोर्द्वयोर्द्वयोस्त्रिषु क्षीणकषाये द्वयोरपि क्रमेण गुणकाराः । नवषड्द्वादश त्रिंशत् विंशतिर्व्विंशतिश्चतुष्कं च ॥

औदयिकस्य गुण्यभंगा मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये चतुरग्रद्विशती । मिश्रादिद्वयेऽशीत्यग्रशतं । देशसंयते द्वासप्ततिः । प्रमत्तादिद्वये षट्त्रिंशत् । अपूर्वकरणे द्वादश । अनिवृत्तिकरणभागभागेषु द्वादश चत्वारः त्रयः द्वौ एकः । तत उपर्यां अयोगांतमेकैकः । पुनरा देशसंयतांतं द्वादश द्वादश शून्यं चतुरग्रशतं षट्त्रिंशत् ॥८३५-८३६॥

औदयिकके गुण्यरूप भंग मिथ्यादृष्टि आदि दो गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें दो सौ चार हैं। मिश्र आदि दोमें-से प्रत्येकमें एक सौ अस्सी हैं। देशसंयतमें बहत्तर हैं। प्रमत्त आदि दोमें छत्तीस हैं। अपूर्वकरणमें बारह हैं। अनिवृत्तिकरणके भागोंमें क्रमसे बारह, चार, तीन, दो, एक हैं। उससे ऊपर अयोगीपर्यन्त एक-एक हैं। पुनः मिथ्यादृष्टिसे देश संयत पर्यन्त चक्षुदर्शन रहित और क्षायिक सम्यक्त्वकी अपेक्षा क्रमसे बारह-बारह, शून्य, एक सौ चार और छत्तीस गुण्यरूप भंग हैं ॥८३५-८३६॥

वामे मि। मिथ्यादृष्टियोळु गुणकारा नवगुणकारंगळो भत्तप्पुवु। द्वयोः सासादनमिश्ररुगळोळु प्रत्येकं गुणकारंगळु षट् आरप्पुवु। द्वयोः गुणकारा द्वादश असंयतदेशसंयतरुगळोळु द्वादशगुणकारंगळप्पुवु। द्वयोः प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु गुणकारभंगंगळु त्रिंशत् प्रत्येकं मूवत्तप्पुवु। त्रिषु अपूर्व्वकरणानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायरुगळोळु विंशतिः प्रत्येकं विंशतिगळप्पुवु। क्षीणकषाये क्षीणकषायनोळु गुणकारंगळु विंशतिः विंशतिगळप्पुवु। द्वयोरपि सयोगायोगिगुणस्थानंगळोळु गुणकारंगळु प्रत्येकं चतुष्कं च नाल्कप्पुवु।

पुणरवि देसोत्ति गुणो तिदुणभछच्छक्कयं पुणो खेवा।
पुव्वपदेसडपंचयमेगारमुगतीसमुगुवीसं ॥८३८॥

पुनरपि देशसंयतपर्य्यंतं गुणास्त्रिद्विनभः षट्षट्ककं पुनः क्षेपाः पूर्व्वपदेष्वष्ट पंचक एकादशैकान्नत्रिंशदेकान्नविंशतिः॥

पुनरपि मत्तं गुणकारंगळु मिथ्यादृष्टयादि देशसंयतपर्य्यंतं त्रि द्वि नभः षट्षट्कंगळप्पुवु। पुनः क्षेपाः मत्ते क्षेपंगळु पूर्व्वपदेषु पूर्व्वोक्तवामे दुसु दुसु इत्यादिस्थानकंगळोळु क्रमदिंद मिथ्यादृष्टियोळेंटु सासादनमिश्ररुगळोळैदप्पुवु। असंयतदेशसंयतरुगळोळु प्रत्येकं पन्नोंदप्पुवु। प्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु प्रत्येकमेकान्नत्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु। अपूर्व्वानिवृत्तिसूक्ष्मसांपरायरुगळोळु एकान्नविंशतियप्पुवु। क्षीणकषायादिगळोळु क्षेपमं पेळ्दपरु :—

उगुवीसतियं तत्तो तिदुणभछच्छक्कयं च देसोत्ति।
चउसुवसमगेसु गुणा तालं रूऊणया खेवा ॥८३९॥

एकान्नविंशतिः त्रयं ततस्त्रिद्विनभःषट् षट्कं च। देशसंयतपर्य्यंतं चतुर्षूपशमकेषु गुणाः चत्वारिंशद्रूपोनकाः क्षेपाः॥

तद्गुणकाराः क्रमेण मिथ्यादृष्टौ नव सासादनादिद्वये षट्। असंयतादिद्वये द्वादश। प्रमत्तादिद्वये त्रिंशत्। अपूर्वादित्रये क्षीणकषाये च विंशतिः। सयोगायोगयोश्चत्वारः॥८३७॥

पुनरप्यादेशसंयतांतं क्रमेण त्रयः द्वौ नभः षट् षट्। पुनः क्षेपाः पूर्वोक्तपदेषु मिथ्यादृष्टौ। सासादनमिश्रयोः पंच। असंयतादिद्वये एकादश। प्रमत्तादिद्वये एकान्नत्रिंशत्। अपूर्वकरणादित्रये एकान्नविंशतिः॥८३८॥

उन गुण्योंके गुणकार क्रमसे मिथ्यादृष्टिमें नौ, सासादन आदि दोमें छह, असंयत आदि दोमें बारह, प्रमत्त आदि दोमें तीस, अपूर्वकरण आदि तीनमें तथा क्षीण कषायमें बीस, सयोगी और अयोगीमें चार हैं ॥८३७॥

पुनः चक्षुदर्शन रहित और क्षायिक सम्यक्त्वकी अपेक्षा देशसंयत पर्यन्त गुणकार क्रमसे तीन, दो, शून्य, छह, छह जानना। पुनः गुण्यको गुणकारसे गुणा करके जो प्रमाण आवे उसमें मिलाये जानेवाले क्षेप पूर्वोक्त स्थानोंमें-से मिथ्यादृष्टिमें आठ, सासादन और मिश्रमें पाँच, असंयत आदि दोमें ग्यारह, प्रमत्त आदि दोमें उनतीस और अपूर्वकरण आदि तीनमें उन्नीस हैं ॥८३८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षीणकषायनोळ् एकान्नविंशतिक्षेपंगळप्पुवु । सयोगायोगिकेवलिगळोळु त्रयः क्षेपंगळ् मूरु मूरप्पुवु । ततः मत्ते मिथ्यादृष्टयादिदेशसंयतपर्य्यंतं क्रमदिदं क्षेपंगळ् त्रि द्वि नभः षट् षट्कंगळप्पुवु । नाल्कुमुपशमकगुणस्थानंगळोळु गुणकारंगळ् प्रत्येकं चत्वारिंशत्प्रमितंगळु एकोनचत्वारिंशत्क्षेपंगळप्पुवु ।

अनंतरमुक्तगुण्यगुणकारंगळं गुणिसि क्षेपंगळं कूडिकोंड मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगळोळ् भावस्थानभंगसमुच्चयसंख्येयं पेळदपरु ।

मिच्छादिठाणभंगा अट्ठारसया हवंति तेसीदा ।
बारसया पणुवण्णा सहस्ससहिया हु पणसीदा ॥ ८४०॥

मिथ्यादृष्टयादिस्थानभंगाः अष्टादशशतं च भवंति त्र्यशीतिः । द्वादशशतं पंचपंचाशत् सहस्रसहिताः खलु पंचाशीतिः ॥

मिथ्यादृष्टियोळु उत्तरस्थानभंगंगळु सासिरदेंदु नूरेंभत्तमूरप्पुवु । १८८३ । सासादनंगे सासिरदिन्नूरय्वत्तय्दप्पुवु । १२५५ । मिश्रंगे सासिरदेंभत्तय्दप्पुवु । १०८५ ।

असंयतादिगळोळु पेळदपरु :—

रूवहियडवीससया सगणउदा दससया णवेणहिया ।
एक्कारसया दोण्हं खवगेसु जहाकमं बोच्छं ॥८४१॥

रूपाधिकाष्टाविंशतिशतानि सप्तनवतिर्दशशतं नवभिरधिकमेकादशशतं द्वयोः क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥

असंयतसम्यग्दृष्टियोळु येरडु सासिरदेंटुनूरोंदु स्थानभंगंगळप्पुवु । २८०१ ॥ देशसंयतंगे सासिरद तोंभत्तेळु स्थानभंगंगळप्पुवु । १०९७ ॥ द्वयोः प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरुगळोळं प्रत्येकं सासिरदनूरोंभत्तु स्थानभंगंगळप्पुवु । प्र ११०९ । अप्र ११०९ ।

क्षीणकषाये एकान्नविंशतिः । सयोगायोगयोः त्रयः । पुनः आ देशसंयतान्तं पुनस्त्रयः द्वौ नभ षट् षट् चतुर्षूपशामकेषु प्रत्येकं गुणकाराः चत्वारिंशत् । क्षेपा एकोनचत्वारिंशत् ॥८३९॥

प्रागुक्तगुण्यगुणकारान् गुणयित्वा क्षेपेषु निक्षिप्तेषु उत्तरभावस्थानभंगा मिथ्यादृष्टौ त्र्यशीत्यग्राष्टादशशतानि । सासादने पंचपंचाशदग्रद्वादशशतानि । मिश्रे पंचाशीत्यग्रदशशतानि ॥८४०॥

असंयते एकाग्राष्टाविंशतिशतानि । देशसंयते सप्तनवत्यग्रदशशतानि । प्रमत्तादिद्वये नवाग्रैकादशशतानि ।

क्षीण कषायमें उन्नीस, सयोगी अयोगीमें तीन हैं। पुनः चक्षुदर्शनरहित और क्षायिक सम्यक्त्वकी अपेक्षा देशसंयत पर्यन्त तीन, दो, शून्य, छह, छह क्षेप हैं। उपशम श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें गुणकार चालीस तथा क्षेप उनतालीस हैं ॥८३९॥

पूर्वोक्त गुण्योंको गुणकारोंसे गुणा करके उनमें क्षेप मिलानेपर उत्तर भावोंके स्थानोंके भंग मिथ्यादृष्टीमें अठारह सौ तिरासी, सासादनमें बारह सौ पचपन तथा मिश्रमें एक हजार पच्चासी होते हैं ॥८४०॥

असंयतमें अठाईस सौ एक, देश संयतमें दस सौ सत्तानबे, प्रमत्त आदि दो में ग्यारह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षपकरोळु यथाक्रमदिदं पेळ्वपेमें बु पेळ्दपरु :—

पुव्वे पंचणियट्टी सुहुमे खीणे दहाण छव्वीसा ।
तत्तियमेत्ता दस अड छच्चदुचदु चदु य एगूणं ॥८४२॥

पूर्व्वे पंचानिवृत्तिषु सूक्ष्मे क्षीणकषाये दशानां षड्विंशतिः । तावन्मात्रं दशाष्टषट्चतुश्चतुश्चतुश्चैकोनं ॥

पूर्व्वे द्वितीयानिवृत्तिकरणापेक्षेयिदं पूर्व्वमप्पपूर्व्वकरणगुणस्थानदोळु क्षपकापूर्व्वकारणनोळु दशानां षड्विंशतिः इन्नूररवत्तु एकोनं वों बु गुंदुगुं । २५९ ॥ पंचानिवृत्तिषु अनिवृत्तिकरणगुणस्थानदोळु क्षपकानिवृत्तिकरणपंचभागंगळोळु प्रथमभागानिवृत्तिकरणनोळु तावन्मात्रमेकोनं दशषड्विंशतियोळों दुगुंदिदनितेयक्कुं । २५९ ॥ द्वितीयभागानिवृत्तिकरणक्षपकनोळु दशदशैकोनं दशप्रमितदशंगळोळों दुकुंदुगुं । ९९ ॥ तृतीयभागानिवृत्तिक्षपकनोळु दशाष्टैकोनं दशप्रमिताष्टकदोळों दुगुंदुगु । ७९ ॥ चतुर्थभागानिवृत्तिकरणक्षपकनोळु दशषडेकोनं दशप्रमितषट्कंगळोळों दुगुंदुगु । ५९ ॥ पंचमभागानिवृत्तिकरणक्षपकनोळ दशचतुरेकोनं दशप्रमितचतुष्कदोळों दुगुंदुगुं । ३९ ॥ सूक्ष्मसांपरायक्षपकनोळु दशचतुरेकोनं दशप्रमितचतुष्कमेकोनमक्कुं । ३९ । क्षीणकषायनोळु दशचतुश्चैकोनं दशप्रमितचतुष्कमों दुगुंदुगुं । ३९ ॥

उवसामगेसु दुगुणं रूवहियं होदि सत्त जोगिम्मि ।
सत्तेव अजोगिम्मि य सिद्धे तिण्णेव भंगा हु ॥८४३॥

उपशमकेषु द्विगुणं रूपाधिकं भवति सप्तयोगिनि । सप्तैवायोगिनि च सिद्धे त्रीण्येवं भंगाः खलु ॥

उपशमकापूर्व्वकरणादि नाल्कुं गुणस्थानंगळोळु क्षपकापूर्व्वादिचतुर्ग्गुणस्थानदोळु पेळ्द भंगंगळं द्विगुणिसि लब्धदोळेकरूपं कूडिदोडुपशमकरुगळु नाल्वर्गं स्थानभंगंगळप्पुवु । अल्लि अपूर्व्वकरणोपशमकंगे अपूर्व्वकरणक्षपकन भंग २५९ । मिव द्विगुणिसि २५९ । २ लब्धदोळेकरूपं

क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्ये ॥८४१॥

अपूर्वकरणे अनिवृत्तिकरणपंचभागेषु सूक्ष्मसाम्पराये क्षीणकषाये चेत्यष्टसु क्षपकेषु भंगाः क्रमेण दशगुणा षड्विंशतिरेकोना २५९ । पुनश्च तावन्तः २५९ । दशगुणा दशैकोनाः ९९ । दशगुणा अष्टावेकोनाः ७९ । दशगुणा षडेकोनाः ५९ । दशगुणाश्चत्वार एकोनाः । ३९ । दशगुणाश्चत्वार एकोनाः ३९ दशगुणाश्चत्वार एकोनाः ३९ भवन्ति ॥८४२॥

उपशामकेषु चतुर्षु खलु तदेव क्षपकचतुष्कोक्तं भंगप्रमाणं द्विगुणं रूपाधिकं स्यात् । सयोगे सप्त ।

सौ नौ होते हैं । क्षपक श्रेणीमें क्रमसे कहते हैं ॥८४१॥

अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरणके पाँच भाग, सूक्ष्म साम्पराय, और क्षीण कषाय इन आठ क्षपकोंमें भंग क्रमसे दो सौ उनसठ, दो सौ उनसठ, निन्यानबे, उन्यासी, उनसठ, उनतालीस, उनतालीस उनतालीस होते हैं ॥८४२॥

उपशम श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें, क्षपक श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें जितने भंग कहे हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूडिदोडे ५१९। इउ अपूर्व्वकरणोपशमकंगे भंगंगळप्पुवु। अहंगे अनिवृत्तिकरणोपशमकंगे ५१९। १९९। १५९। ११९। ७९॥ सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे भंगंगळेप्पत्तोंभत्तु ७९। उपशान्तकषायंगे भंगंगळेप्पत्तोंभत्तु ७९॥ समयोगिनि सयोगकेवलिभट्टारकंगे भंगंगळु ७। समैवायोगिनि च अयोगकेवलियोळु स्थानभंग ७। सिद्धे सिद्धरोळु त्रीण्येव भंगाः खलु मूरे भंगंगळप्पुवु। इंतुक्तगुण्यंगळ्गं गुणकारंगळ्गं क्षेपंगळ्गं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमनादियागि सर्व्वगुणस्थानंगळोळु पृथक्पृथग्रूपदिदं समुच्चयं संदृष्टि वृत्तिकाररिंं तोरल्पडुगुं :—

०	मि	च. रहि	सासा.	च. रहि	मिश्र	असं	क्षाइ	देश	क्षाइ
गुण्य	२०४	१२	२०४	१२	१८०	१८०	१०४	७२	३६
गुणकारा	९	३	६	२	६	१२	६	१२	६
क्षेप	८	३	५	२	५	११	६	११	६
भंग	१८	८३	१२	५९	१०८५	२८०	१	१०	९७

→

प्रम	अप्रम	अपूर्व	उपश	अनिवृ	क्षपकंगे —			
३६	३६	१२	१२	१२	४	३	२	१
३०	३०	२०	४०	२०	२०	२०	२०	२०
२९	२९	१९	३९	१९	१९	१९	१९	१९
११०९	११०९	२५९	५१९	२५९	९९	७९	५९	३९

→

अनिवृत्तिकरणोपशमकंगे					सूक्ष्म		उप.	क्षी	सयो	अयो	सिद्ध
१२	४	३	२	१	१	१	१	१	१	१	०
४०	४०	४०	४०	४०	२०	४०	४०	२०	४	४	०
३९	३९	३९	३९	३९	१९	३९	३९	१९	३	३	३
५१९	१९९	१५९	११९	७९	३९	७९	७९	३९	७	७	३

यितुत्तरभावस्थानगतभंगंगळं पेळदनंतरं पदगतभंगंगळं पेळदपरु :—

दुविहा पुण पदभंगा जादिगपदसव्वपदभवात्ति हवे।
जातिपदखयिगमिस्से पिंडेव य होदि सगजोगो ॥८४४॥

द्विविधाः पुनः पदभंगा जातिगपदसर्व्वपदभवा इति भवेत्। जातिपदक्षायिकमिश्रे पिंडे एव च भवति स्वसंयोगः॥

अयोगेऽपि सप्त। सिद्धे त्रय एव ॥८४३॥

उनके दूनेसे एक अधिक भंग होते हैं। सयोगीमें सात, अयोगीमें सात और सिद्धोंमें तीन ही भंग होते हैं ॥८४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुनः मत्ते पदभंगाः पदभंगंगळु द्विविधाः द्विविधंगळप्पुवु । एंतेदोडे जातिपदभंगंगळें दुं सर्व्वपदभवभंगंगळुमें दितल्लि जातिपदंगळप्प क्षायिकभावदोळं मिश्रभावदोळं पिंडपदभावंगळोळु स्वसंयोगो भवति स्वसंयोगमक्कुं ॥

अयदुवसमगचउक्के एक्कं दो उवसमस्स जातिपदो ।
खइयपदं तत्थेक्कं खवगे जिणसिद्धगेसु दुपणचदू ॥८४५॥

असंयतोपशमक चतुष्के एकं द्वे उपशमस्य जातिपदानि । क्षायिकपदं तत्रैकं क्षपके जिनसिद्धेषु द्विपंचचत्वारि ॥

असंयतादिचतुष्कदल्लियुमुपशमकचतुष्कदोळु मुपशमद जातिपदंगळु क्रमदिंदं असंयत चतुष्कदोळुपशमसम्यक्त्वजातिपदमेकमक्कु- । मुपशमकरोळुपशमसम्यक्त्वमुमुपशमचारित्रमुमें बेरडुं जातिपदंगळप्पुवु । तत्र आ अ संयतादिचतुष्कदोळ मुपसमक चतुष्कदोळं क्षायिक जातिपदमों दे क्षायिकसम्यक्त्वमक्कुं । क्षपकचतुष्कदोळं सयोगायोगिजिनरोळं सिद्धरोळं यथाक्रमदिदं क्षायिकजातिपदमेरडुं अय्दुं नाल्कुमप्पुवु ॥

पुनः अनन्तरं पदभंगा उच्यन्ते ते च जातिपदभंगाः सर्वपदभंगाश्चेति द्विविधाः । तत्र जातिपदरूपक्षायिकभावमिश्रभावपिंडपदभावेषु स्वसंयोगो भवति ॥८४४॥

उपशमस्य जातिपदान्यसंयतादिचतुष्के उपशमसम्यक्त्वमित्येकं । उपशमचतुष्के उपशमसम्यक्त्वचारित्रे द्वे । क्षायिकजातिपदानि तदुभयचतुष्के क्षायिकसम्यक्त्वं । क्षपकचतुष्के द्वे । सयोगायोगयोः पंच । सिद्धे चत्वारि ॥८४५॥

इस प्रकार स्थान भंगको कहकर पदभंग कहते हैं—पद भंगके दो भेद हैं-जातिपद भंग और सर्वपद भंग । जहाँ एक जातिका ग्रहण करके जो भंग किये जाते हैं उन्हें जातिपद भंग कहते हैं । जैसे मिश्र भावमें ज्ञानके चार भेद होते हुए भी एक ज्ञान जातिका ग्रहण करना । और जो जुदे-जुदे सब भावोंको ग्रहण करके भंग किये जायें उन्हें सर्वपद भंग जानना । उनमें जातिपद रूप क्षायिकभाव और मिश्रभावमें पिण्डपद रूप जो भाव हैं उनमें स्वसंयोगी भंग भी होते हैं । जैसे क्षायिक भावमें लब्धिके पाँच भेद हैं अतः लब्धि पिण्डपदरूप है । मिश्रभावमें ज्ञान अज्ञान दर्शन लब्धि पिण्डपदरूप हैं । सो इनमें जहाँ एक भेद होते अन्य भेद भी पाया जाता है जैसे दान होते लाभ पाया जाता है वहाँ स्वसंयोगी भी भंग होते हैं ॥८४४॥

औपशमिक भावका जातिपद असंयत आदि चारमें सम्यक्त्वरूप एक ही है । उपशम श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व और चारित्र दो जातिपद हैं । क्षायिक भावके जातिपद असंयत आदि चारमें क्षायिक सम्यक्त्व रूप एक है । क्षपक श्रेणीके चार गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व और चारित्र दो जातिपद हैं । सयोग और अयोगीमें सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, लब्धि ये पाँच हैं । सिद्धोंमें चारित्रके बिना चार हैं ॥८४५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिच्छतिए मिस्सपदा तिण्णि य अयदम्मि होंति चत्तारि ।
देशतिये पंचपदा तत्तो खीणोत्ति तिण्णि पदा ॥८४६॥

मिथ्यादृष्टित्रये मिश्रपदानि त्रीणि च असंयते भवंति चत्वारि । देशसंयतत्रये पंचपदानि ततः क्षीणकषायपर्य्यंतं त्रीणि पदानि ॥

मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुगळोळु प्रत्येकं मिश्रपदंगळु मूरुमूरप्पुवु । असंयतसम्यग्दृष्टियोळु नाल्कु मिश्रपदंगळप्पुवु । देशसंयतादि त्रयदोळु पंच पंच मिश्र पदंगळप्पुवु । अल्लिद मेले क्षीणकषायपर्य्यंतं प्रत्येकं मूरुं मूरु मिश्रपदंगळप्पुवु ॥

मिच्छे अट्ठुदयपदा तो तिसु सत्तेव तो सवेदोत्ति ।
छस्सुहुमोत्ति य पणगं खीणोत्ति जिणेसु चदुतिदुगं ॥८४७॥

मिथ्यादृष्टावष्टोदयपदानि ततस्त्रिषु सप्तैव ततः सवेदपर्य्यंतं षट् सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं पंचकं क्षीणकषाय पर्य्यंतं जिनयोश्चतुस्त्रिद्वयं ॥

मिथ्यादृष्टियोळौदयिकपदंगळे टप्पुवु । सासादनादित्रयदोळु प्रत्येकं सप्तपदंगळप्पुवु । मेले देशसंयतादि सवेदानिवृत्तिपर्य्यंतं प्रत्येकं षट्पदंगळप्पुवु । सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं पंचपंचपदंगळप्पुवु । क्षीणकषायपर्य्यंतं सयोगरोळमयोगरोळं क्रमदिवं नाल्कुं मूरुमेरडुमप्पुवु ॥

मिच्छे परिणामपदा दोणि य सेसेसु होदि एक्कं तु ।
जातिपदं पडि वोच्छं मिच्छादिसु भंगपिंडं तु ॥८४८॥

मिथ्यादृष्टौ परिणामपदे द्वे च शेषेषु भवत्येकं तु । जातिपदं प्रति वक्ष्यामि मिथ्यादृष्ट्यादिषु भंगपिंडं तु ॥

मिश्रपदानि मिथ्यादृष्ट्यादित्रये त्रीणि । असंयते चत्वारि । देशसंयतादित्रये पंच । तत उपरि क्षीणकषायान्तं त्रीणि ॥८४६॥

औदयिकपदानि मिथ्यादृष्टावष्टौ । सासादनादित्रये सप्त । उपरि सवेदानिवृत्त्यन्तं षट् । सूक्ष्मसाम्परायान्तं पंच । क्षीणकषायान्तं चत्वारि । सयोगे त्रीणि । अयोगे द्वे ॥८४७॥

मिश्रभावके जातिपद मिथ्यादृष्टि और सासादनमें अज्ञान, दर्शन, लब्धि ये तीन हैं। और मिश्र गुणस्थानमें ज्ञान, दर्शन, लब्धि ये तीन हैं। असंयतमें ज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व ये चार हैं। देशसंयत आदि तीनमें ज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व इन चारोंके साथ देशसंयतमें देशसंयम और प्रमत्त अप्रमत्तमें सरागसंयम होनेसे पाँच हैं। उससे ऊपर क्षीणकषायपर्यन्त ज्ञान, दर्शन, लब्धि तीन जातिपद हैं ॥८४६॥

औदयिकभावके जातिपद मिथ्यादृष्टिमें आठ हैं—गति, कषाय, लिंग, लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम और असिद्धत्व। सासादन आदिमें मिथ्यात्वके बिना सात हैं। ऊपर अनिवृत्तिकरणके सवेद भागपर्यन्त असंयमके बिना छह हैं। उससे ऊपर सूक्ष्मसाम्परायपर्यन्त वेदके बिना पाँच हैं। उससे ऊपर क्षीणकषायपर्यन्त कषायके बिना चार हैं। सयोगीमें अज्ञानके बिना तीन हैं तथा अयोगीमें लेश्या बिना दो हैं ॥८४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टियोळु परिणामपदंगळेरडप्पुवु। तु मत्ते शेषगुणस्थानदोळं गुणस्थानातीत सिद्धपरमेष्ठिगळोळ मेकपदमेयक्कुं। संदृष्टि :—

०	मि	सा	मिश्र	अ	दे	प्र	अप्र.	अपु उ	क्ष	अनि	क्ष	सू	क्ष	उ	क्षी	स	अ	सि
उप	०	०	०	१	१	१	१	२	०	२	०	२	२	२	०	०	०	०
क्षायि	०	०	०	१	१	१	१	१	२	१	२	१	०	१	२	५	५	४
मिश्र	३	३	३	४	५	५	५	३	३	३	३	३	३	३	३	०	०	०
औद	८	७	७	७	६	६	६	६	६	६	६	५	५	४	४	३	२	०
पारि	२	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१

तु मत्ते अनंतरं जातिपदं प्रति मिथ्यादृष्टयादि गुणस्थानंगळोळु भंगपिंडमं पेळ्दपनेंदु पेळ्दपन देंतेंदोडे—

उपशम		क्षाइक भावंगळु						क्षायोपशमिक भावंगळ						→
सं	चा	सं	चा	णा	दं	ल	५	णा ४	अ ३	द ३	ल ५	वे १	चा १	दे १

←	औदयिक भावंगळु							पारिणामिक		
	ग ४	क ४	लि ३	मि १	अ १	अ १	अ १	ले ६	भ १	अ १	जो १

इंतु जातिपदंगळु उपशमदोळेरडु २। क्षायिकजातिपदंगळु ५। क्षायोपशमिक जातिपदंगळु ७। औदायिक जातिपदंगळु ८। पारिणामिक जातिपदंगळु मूरु ३। ई सामान्यपदंगळोळु मिथ्या-

परिणामपदानि मिथ्यादृष्टौ द्वे। तु— पुनः शेषगुणस्थानेषु सिद्धे चैकैकं स्यात्। तु पुनः—अनन्तरं जातिपदं प्रति गुणस्थानेषु भंगपिंडं वक्ष्ये तद्यथा—

जातिपदेषु [1]द्व्युपशमकपंचक्षायिकसप्तक्षायोपशमिकाष्टौदयिकत्रिपारिणामिकेषु मिथ्यादृष्टौ

पारिणामिकभावके जातिपद मिथ्यादृष्टिमें भव्य-अभव्यरूप दो हैं। शेष गुणस्थानोंमें भव्यरूप एक ही है। सिद्धोंमें जीवत्वरूप एक ही है।

आगे जातिपदकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें भंगोंका समुदाय कहते हैं—जातिपद दो औपशमिकके, पाँच क्षायिकके, सात क्षायोपशमिकके, आठ औदयिकके और तीन पारिणामिकके हैं। उनमें-से औदयिकके जितने जातिपद होते हैं उतने तो गुण्य जानना। उनके गुणकार और क्षेप कहनेके लिए प्रत्येक भंगादि करनेमें मिश्रादिके जितने जातिपद हों नतने भेद ग्रहण करना। किन्तु औदयिकका जातिपदका समूहरूप एक ही भेद ग्रहण करना। ऐसा करके प्रत्येक भंगमें औदयिकका भेद तो गुणकार रूप जानना तथा अन्य भावोंके भेद क्षेपरूप जानना। तथा दो संयोगी आदि भंगोंमें औदयिकका भेद और अन्य भावोंके भेद सहित जो भंग हों उन्हें गुणकार जानना। तथा औदयिक बिना अन्य

1\.

उपशमभा	क्षायिकभाव	क्षायोपशमिकभाव
सं चा	सं। चा। णा। दं। ल ५	णा ४। अ ३। द ३। ल ५। वे १ चा १। दे १

औदयिकभाव	पारिणामिकभाव
ग ४। क ४। लि ३। मि १। अ १। अ १। अ १ ले ६।	भ १। अ १। जो १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टि

मिश्र			औ	पारि	
अ	दं	ल	८	भ	अ

यिल्लि औदयिक भावंगळेंटु जातिपदंगळु गुण्यंगळप्पुवु। गुण्य ८। प्र १। क्षे ५। द्वि गु ५। क्षे ६। त्रि गु ६। स्वसंयोगक्षेपंगळु ३। इल्लि स्वसंयोगमें तें-दोडे जातिपदत्वदिदं अज्ञानदोळं दर्शनदोळं लब्धिगळोळं संभविसुगुमें दरिउदु कूडि मिथ्यादृष्टिगे गुण्य ८। गु १२। क्षे १४। ई गुण्यगुणकारंगळं गुणिसि क्षेपंगळं कूडिद लब्धभंगंगळु ११०। सासादनंगे

मिश्र			औदइ	पारि
अ	द	ल	७	भ

इल्लि गुण्यंगळु ७। प्र गु १ क्षे ४। द्वि गु ४। क्षे ३। त्रि सं गु ३। स्व सं क्षे ३ कूडि सासादनंगे गुण्य ७। गु ८। क्षे १०। लब्ध भंग ६६। मिश्रंगे

मिश्र			औ	पारि	
अ	दं	ल	८	भ	अ

औदयिकान्यष्टौ गुण्यं ८। प्रगु १ क्षे ५। द्विगु ५ क्षे ६। त्रिगु ६। स्वसंयोगक्षेपाः कुज्ञानान्तरं दर्शने दर्शनान्तरं लब्धौ लब्ध्यन्तरमिति त्रयः ३। मिलित्वा गुण्यं ८ गु १२ क्षे १४ गुण्यगुणकारान् संगुण्य क्षेपेषु निक्षिप्तेषु लब्धभंगाः ११०।

सासादने

मिश्र			औ	पारि
अ	दं	ल	७	भ

गुण्यं ७ प्रगु १ क्षे ४। द्विगु ४ क्षे ३। त्रिगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ७। गु ८ क्षेप १० भंगाः ६६।

भावोंके संयोगसे जो दो संयोगी आदि भंग हों उन्हें क्षेपरूप जानना। तथा क्षायिक या मिश्रके एक जातिपदके भेदमें उसीके अन्य भेद जहाँ सम्भव हों वहाँ स्वसंयोगी भंग होते हैं उन्हें क्षेपरूप जानना। इस प्रकार गुण्यको गुणकारसे गुणा करके क्षेपको जोड़नेपर जितने हों, उतने भंग जानना।

सो मिथ्यादृष्टिमें मिश्रके अज्ञान, दर्शन, लब्धि ये तीन, औदयिकके आठ और पारिणामिकके भव्य-अभव्यरूप दो जातिपद हैं। उनमें-से औदयिकके आठ तो गुण्य जानना। प्रत्येक भंगमें औदयिकका आठका समूहरूप एक तो गुणकार जानना, और तीन मिश्रके, दो पारिणामिकके ये पाँच क्षेप जानना। दो संयोगीमें औदयिकके आठका समूहरूप एकका योग लिये तीन मिश्रके और दो पारिणामिकके ये पाँच तो गुणकार जानना। तथा तीन मिश्रके संयोग सहित दो पारिणामिकके भेदरूप छह दोसंयोगी क्षेप जानना। तीन संयोगीमें औदयिकके आठका समूहरूप एक और अभव्य पारिणामिकके इन दोनोंके साथ तीन मिश्रको मिलानेसे हुए छह भंग गुणकाररूप जानना। स्वसंयोगीमें एक अज्ञान होते दूसरा अज्ञान पाया जाता है जैसे कुमतिके साथ कुश्रुत आदि होते हैं। इसी तरह एक दर्शन होते अन्य दर्शन पाये जाते हैं। जैसे चक्षुदर्शन होते अन्य दर्शन होते हैं। इसी तरह एक लब्धि होते अन्य लब्धि होती है जैसे दान होते लाभादि होते हैं। ये तीन भंग क्षेप जानना। सब मिलकर गुण्य आठ, गुणकार बारह, क्षेप चौदह होते हैं। गुण्यको गुणकारसे गुणा करके क्षेपको जोड़नेपर एक सौ दस भंग होते हैं।

इसी प्रकार सासादनमें मिश्रभावके अज्ञान, दर्शन, लब्धि ये तीन, औदयिकके सात, पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक जातिपद है। उसमें गुण्य सात हैं। तथा प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप चार हैं। दो संयोगी भंगमें गुणकार चार क्षेप तीन हैं। तीन संयोगीमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिश्र			औदयि	पारिणा
णा	द	ल	७	भ

इल्लि गुण्य ७। प्र गु १। क्षे ४। द्वि गु ४। क्षे ३। त्रि गु ३। स्वसं क्षे ३। कूडि गुण्य ७। गु ८। क्षे १०। लब्ध भंग ६६॥ असंयतंगे

उपश	क्षायि	मिश्र				औ	पारि
सं १	सं १	ण	द	अ	ल	७	भ १

इल्लि गुण्य ७। प्र गु १। क्षे ७। द्वि गु ७। क्षे १२। त्रि गु १२। क्षे ६। चतु गु ६। स्वसंक्षे ३। कूडि असंयतंगे गुण्य ७। गु २६। क्षे २८। लब्धभंगंगळु असंयतंगे २१०॥ देशसंयतंगे

उ	क्षा	मि					औ	पा
सं	सं	णा	द	ल	वे	चा	६	भ

यिल्लिगुण्यंगळु ६। प्र गु १। क्षे ८। द्वि गु ८। क्षे १५। त्रि गु १५। क्षे ८। च गु ८। स्वसं

मिश्रे

मिश्र			औ	पारि
णा	दं	ल	७	भ

गुण्यं ७ प्रगु १ क्षे ४। द्विगु ४ क्षे ३। त्रिगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ७ गु ८। क्षे १० भंगाः ६६।

असंयते

बं	उप	क्षा	मिश्र			औ	पा
सं १	सं १	सं १	णा	दं	ल	७	भ

गुण्यं ७ प्रगु १ क्षे ७। द्विगु ७ क्षे १२। त्रिगु १२ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ७ गु २६ क्षे २८ भंगाः २१०।

देशसंयतादित्रये प्रत्येकं

उप	क्षा	मिश्र					औ	पा
सं	सं	णा	दं	ल	वे	चा	६	भ

गुण्यं ६ प्रगु १ क्षे

गुणकार तीन है। स्वसंयोगीमें क्षेप तीन हैं। सब मिलकर गुण्य सात, गुणकार आठ और क्षेप दस होनेसे भंग छियासठ हैं।

मिश्र गुणस्थानमें मिश्रभावके ज्ञान, दर्शन, लब्धि ये तीन, औदयिकके सात, पारिणामिकके भव्यत्वरूप एक जातिपद है। यहाँ गुण्य सात हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप चार, दो संयोगी भंगमें गुणकार चार क्षेप तीन, तीन संयोगीमें गुणकार तीन, स्वसंयोगीमें क्षेप तीन। सब मिलकर गुण्य सात, गुणकार आठ, क्षेप दस होनेसे भंग छियासठ होते हैं।

असंयतमें औपशमिकका एक सम्यक्त्व, क्षायिकका एक सम्यक्त्व, मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि, औदयिकके सात, पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक जातिपद है। यहाँ गुण्य सात हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप सात, दो संयोगीमें गुणकार सात क्षेप बारह, तीन संयोगीमें गुणकार बारह, क्षेप छह, चार संयोगीमें गुणकार छह। पाँच संयोगीका अभाव है क्योंकि क्षायिक सम्यक्त्व और उपशम सम्यक्त्वका संयोग नहीं होता। स्वसंयोगीमें क्षेप तीन। सब मिलकर गुण्य सात, गुणकार छब्बीस और क्षेप अठाईस होनेसे भंग दो सौ दस होते हैं।

देशसंयत आदि तीनमें औपशमिकका एक सम्यक्त्व, क्षायिकका एक सम्यक्त्व, मिश्रके चार—ज्ञान दर्शन लब्धि वेदक चारित्र, औदयिकके छह, पारिणामिक एक भव्यत्व जातिपद है। यहाँ गुण्य छह हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप आठ हैं। दो संयोगीमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षे ३ । कूडि देशसंयतंगे गुण्य ६ । गु ३२ । क्षे ३४ । लब्ध भंग २२६ ॥ प्रमत्तसंयतंगेयुं मिंते गुण्य ६ । गु ३२ । क्षे ३४ । लब्धभंग २२६ ॥ अप्रमत्तसंयतंगेयुमिंते गुण्य ६ । गु ३२ । क्षे ३४ । लब्ध भंग २२६ ॥ अपूर्व्वकरणोपशमकंगे

उपश	क्षायि	मिश्र			औदइ	पारि
स चा	सं १	णा	दं	ल	६	भ १

यिल्लि उपशमकापूर्व्वकरणंगे गुण्य ६ । प्र गु १ । क्षे ७ । द्वि गु ७ । क्षे १६ । त्रि गु १६ । क्षे १३ । च गु १३ । क्षे ३ । पं गु ३ । स्व सं क्षे ३ । कूडि अपूर्व्वकरणंगे गुण्य ६ । गु ४० । क्षे ४२ । लब्ध भंग २८२ । सवेदानिवृत्तिकरणोपशमकंगेयुमिंते गुण्य ६ । गु ४० । क्षे ४२ । लब्ध भंग २८२ ॥ अवेदानिवृत्तिकरणोपशमकंगे

उपश		क्षायि	मिश्र			औद	पारि
सं	चा	सं १	णा	दं	ल	५	भ

इल्लि अ वेदानिवृत्तिगे गुण्य ५ । प्र गु १ । क्षे ७ । द्वि गु ७ । क्षे २६ । त्रिगु १६ । क्षे १३ । च गु १३ । क्षे ३ । पं गु ३ । स्वसं क्षे ३ । कूडि गुण्य ५ । गु ४० । क्षे ४२ । लब्धभंग २४२ । इल्लि अनिवृत्तिकरणंगे कषाय-

---

८ द्विगु ८ क्षे १५ । त्रिगु १५ क्षे ८ चगु ८ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ६ गु ३२ क्षे ३४ भंगाः २२६ ।

उपशमकेऽपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः

उपश		क्षा	मिश्र			औ	पा
सं	चा	सं १	णा	दं	ल	६	भ

गुण्यं ६ । प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ पंगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ६ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २८२ ।

अवेदभागसूक्ष्मसाम्पराययोः

उपश		क्षा	मिश्र			औ	पा
सं	चा	सं १	णा	दं	ल	५	भ

गुण्यं ५ प्रगु १ क्षे

गुणकार आठ, क्षेप पन्द्रह हैं। तीन संयोगीमें गुणकार पन्द्रह क्षेप आठ हैं। चार संयोगीमें गुणकार आठ हैं। स्वसंयोगीमें क्षेप तीन हैं। सब मिलकर गुण्य छह, गुणकार बत्तीस, क्षेप चौंतीस होनेसे भंग दो सौ छब्बीस हैं।

उपशम श्रेणीमें अपूर्वकरण और वेद सहित अनिवृत्तिकरणमें औपशमिकके दो—सम्यक्त्व और चारित्र, क्षायिकका एक सम्यक्त्व, मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि, औदयिकके छह और पारिणामिकका एक भव्यत्व ये जातिपद हैं। यहाँ गुण्य छह हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप सात हैं। दो संयोगीमें गुणकार सात क्षेप सोलह हैं। तीन संयोगीमें गुणकार सोलह क्षेप तेरह हैं। चार संयोगीमें गुणकार तेरह क्षेप तीन हैं। पाँच औपशमिक संयोगीमें गुणकार तीन हैं। यहाँ क्षायिक सम्यक्त्वके साथ चारित्र होनेसे पाँच संयोगी भी होता है। स्वसंयोगीमें क्षेप तीन हैं। सब मिलकर गुण्य छह, गुणकार चालीस और क्षेप बयालीस होनेसे भंग दो सौ बयासी होते हैं।

वेद रहित अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें औपशमिक दो सम्यक्त्व और चारित्र, क्षायिक एक सम्यक्त्व, मिश्र तीन ज्ञान दर्शन लब्धि, औदयिक पाँच, पारिणामिक एक भव्यत्व ये जातिपद हैं। गुण्य पाँच हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप सात हैं। दो संयोगीमें गुणकार सात क्षेप सोलह हैं। तीन संयोगीमें गुणकार सोलह क्षेप तेरह हैं। चार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहितभागे संभविसदेके दोडे कषाय जातिपदं विवक्षिसल्पट्टुदप्पुदरिदं सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगेयु- मिते गुण्य ५ । गु ४० । क्षे ४२ । लब्धभंग २४२ ॥ उपशांतकषायंगे—

उपश		क्षायि	मिश्र			औदइ	पारि
सं	चा	स १	णा	दं	ल	४	भ १

यिल्लि गुण्य ४। प्र गु १ । क्षे ७ । द्वि गु ७ । क्षे १६ । त्रि गु १६ । क्षे १३ । चतु गु १३ । क्षे ३ । पं गु ३ । स्व सं क्षे ३ । कूडि उपशांतकषायं गुण्य ४ । गु ४० । क्षे ४२ । लब्धभंगगळु २०२ ॥ क्षपकापूर्व्वकरणंगे

क्षाइ	मिश्र भाव			औद	पारि
सं	चा	णा	दं	ल	६	भ १

यिल्लि अपूर्व्वकरणक्षपकंगे गुण्य ६ । प्र गु १ । क्षे ६ । द्वि गु ६ । क्षे ११ । त्रि गु ११ । क्षे ६ । च गु ६ । स्व सं क्षे ३ । कूडिअपूर्वकरणक्षपकंगे गुण्य ६ । गु २४ । क्षे २६ । लब्धभंगगळु १७० । क्षपकानिवृत्तिकरणसवेदभागेयोळुमिते गुण्य ६ । गु २४ । क्षे २६ । लब्ध भंग १७० । वेदरहित भागेयोळु

क्षायि	मिश्र भावंग			औ	पा
सं	चा	णा	दं	ल	५	भ १

गुण्य ५ ।

---

७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ प गु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ५ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २४२ । नात्राकषायभागः कषायजातिपदस्य विवक्षितत्वात् ।

उपशान्तकषाये—

उपश		क्षा	मिश्र			औ	पा
सं	चा	सं १	णा	दं	ल	४	भ १

गुण्यं ४ । प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ पंगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ४ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २०२ ।

क्षपकेष्वपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः

क्षायि		मिश्रभाव			औ	पारि
सं	चा	णा	दं	ल	६	भ १

गुण्यं ६ । प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ६ गु २४ क्षे २६ लब्धभंगाः १७० ।

संयोगीमें गुणकार तेरह क्षेप तीन हैं । पाँच संयोगीमें गुणकार तीन हैं । स्वसंयोगीमें क्षेप तीन हैं । सब मिलकर गुण्य पाँच, गुणकार चालीस, क्षेप बयालीस होनेसे भंग दो सौ बयालीस हैं । यहाँ कषायका जातिपद एक लिया है इससे कषायरहित भागोंके भेद नहीं किये हैं । उपशान्त कषायमें भी सूक्ष्म साम्परायकी तरह जातिपद हैं विशेष इतना है कि औदयिकके जातिपद चार हैं । अतः गुण्य चार होनेसे तथा गुणकार और क्षेप पूर्ववत् होनेसे भंग दो सौ दो होते हैं ।

क्षपकश्रेणीमें अपूर्वकरण और वेद सहित अनिवृत्तिकरणमें क्षायिक दो सम्यक्त्व और चारित्र, मिश्र तीन ज्ञान दर्शन लब्धि, औदयिक छह और पारिणामिक एक भव्यत्व ये जातिपद हैं । यहाँ गुण्य छह हैं । प्रत्येक भंगमें गुणकार एक, क्षेप छह, दो संयोगीमें गुणकार छह क्षेप ग्यारह हैं । तीन संयोगीमें गुणकार ग्यारह क्षेप छह हैं । चार संयोगीमें गुणकार छह है । स्वसंयोगीमें क्षेप तीन हैं । सब मिलकर गुण्य छह, गुणकार चौबीस और क्षेप छब्बीस होनेसे भंग एक सौ सत्तर होते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र गु १। क्षे ६। द्वि गु ६। क्षे ११। त्रि गु ११। क्षे ६। च गु ६। स्व सं क्षे ३। कूडि गुण्य ५। गु २४। क्षे २६। लब्ध भंग १४६। इल्लियुं क्षपकश्रेणियोळु अनिवृत्तिकरणक्षपकंगे कषायरहित भागे संभविसदु एकेंबोडे जातिपदविवक्षेयप्पुदरिदं। सूक्ष्मसांपराय क्षपकंगेयुमिते गुण्य ५। गु २४। क्षे २६। लब्ध भंग १४६। इल्लियुं क्षपक श्रेणियोळु अनिवृत्तिकरणक्षपंगे कषायरहित भागे संभविसदु। क्षीणकषायंगे कषायपदरहितमप्पुदरिदं

क्षायि		मिश्र भाव			औदयि	पारि
सं	चा	णा	दं	ल	४	भ १

यिल्लि गण्य ४। प्र गु १। क्षे ६। द्वि गु ६। क्षे ११। त्रि गु ११। क्षे ६। च ग ६। स्व सं क्षे ३। कूडि गुण्य ४। ग २४। क्षे २६। लब्ध भंग १२२॥

सयोगकेवलिभट्टारकंगे

क्षायिक भावंगळु					औद	पारि
णा	दं	सं	चा	ल	४	भ १

इल्लि गुण्य ३। प्र गु १। क्षे ६। द्वि गु ६। क्षे ५। त्रि गु ५। स्वसंयोगक्षेपं लब्धिगळोळोंदु १ कूडि गुण्य ३। गु १२। क्षे १२। लब्ध भंग ४८॥ अयोगिकेवलिभट्टारकंगे

क्षायिकभावं					औ	पा
णा	दं	सं	चा	ल	२	भ

इल्लि गुण्य २।

अवेदभागसूक्ष्मसाम्पराययोः

क्षा		मिश्रभाव			औ	पा
स	चा	णा	दं	ल	५	भ १

गुण्यं ५। प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ५ गु २४ क्षे २६ भंगाः १४६। नास्त्यकषायभागः।

क्षीणकषाये कषायपदं नेति

क्षायि		मिश्रभाव			औ	पा
स	चा	णा	दं	ल	४	भ १

गुण्यं ४। प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ४ गु २४ क्षे २६ भंगाः १२२।

सयोगे

क्षायिकभाव					औ	पा
णा	दं	सं	चा	ल	३	भ

गुण्यं ३ प्रगु १। क्षे ६। द्विगु ६ क्षे ५। त्रिगु ५। स्वसंयोगक्षेपो लब्धिष्वेकः मिलित्वा गुण्यं ३ गु १२ क्षे १२ भंगाः ४८।

वेदरहित अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्म साम्परायमें भी जातिपद अपूर्वकरणकी तरह है। विशेष इतना है कि औदयिकके पाँच जातिपद होनेसे गुण्य पाँच हैं तथा गुणकार चौबीस और क्षेप छब्बीस हैं। अतः भंग एक सौ छियालीस हैं। क्षीणकषायमें भी जातिपद इसी प्रकार है। किन्तु औदयिकके चार जातिपद होनेसे गुण्य चार हैं। गुणकार चौबीस और क्षेप छब्बीस हैं। अतः भंग एक सौ बाईस हैं। सयोगीमें क्षायिकके पाँच ज्ञान दर्शन सम्यक्त्व चारित्र लब्धि, औदयिकके तीन और पारिणामिकका एक जातिपद है। यहाँ गुण्य तीन हैं। प्रत्येक भंगमें गुणकार एक क्षेप छह हैं। दो संयोगीमें गुणकार छह क्षेप पाँच हैं। तीन संयोगीमें गुणकार पाँच हैं। स्वसंयोगीमें किसी एक क्षायिक लब्धिके साथ अन्य क्षायिक लब्धि पायी जानेसे क्षेप एक है। सब मिलकर गुण्य तीन, गुणकार बारह और क्षेप बारह होनेसे भंग अड़तालीस हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र गु १ । क्षे ६ । द्वि गु ६ । क्षे ५ । त्रि गु ५ । स्वसंक्षे १ । कूडि गुण्य २ । गुण १२ । क्षे १२ । लब्धभंग ३६ । सिद्धपरमेष्ठिगे

क्षायिक भा			
सं णा	द	ल	जो

इल्लि प्रक्षे ५ । द्विक्षे ४ । कूडि भंगंगळु ९ ॥ यितुक्त गुण्य गुणकारक्षेपभंगमिवर संख्येयं पेळ्वपरः—

अट्ठगुणिज्जा वामे तिसु सग छच्चउसु छक्क पणगं च ।
थूले सुहुमे पणगं दुसु चउ तियदुगमदो सुण्णं ॥८४९॥

अष्टौ गुण्यं वामे त्रिषु सप्त षट्चतुर्षु षट्कपंचकं च । स्थूले सूक्ष्मे पंचकं द्वयोश्चत्वारि त्रयं द्वयमतः शून्यं ॥

यितु गुण्यंगळु मिथ्यादृष्टियोळे‌ंटुं सासादनमिश्रसंयतरुगळोळेळुं देशसंयत प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत क्षपकोपशमकापूर्वक :

०	मिथ्या	सासा	मिश्र	असं	देश	प्रम	अप्रम	अपूक्ष	उपश
गुण्य	८	७	७	७	६	६	६	६	६
गुणका	१२	८	८	२६	३२	३२	३२	२४	४०
क्षेपग	१४	१०	१०	२८	३४	३४	३४	२६	४२
भंग	११०	६६	६६	२१०	२२६	२२६	२२६	१७०	२८२

अनिक्ष	अनि उ	सू क्ष	सू उ	उप क	क्षीण	सयो	अयो	सिद्ध
६।५	६।५	५	५	४	४	३	२	०
२४	४०	२४	४०	४०	२४	१२	१२	०
२६	४२	२६	४२	४२	२६	१२	१२	९
१७० १४६	२८२ २४२	१४६	२४२	२०२	१२२	४८	३६	९

अयोगे

क्षायिकभाव					औ	पा
णा	दं	स	चा	ल	२	भ

गुण्यं २ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ५ त्रिगु ५ स्वसंक्षे १ मिलित्वा गुण्यं २ गु १२ क्षे १२ भंगाः ३६ ।

सिद्धे

क्षायिक				पा
सं	णा	दं	ल	जो

प्र क्षे ५ । द्वि क्षे ४ । मिलित्वा भंगाः ९ ॥८४८॥ उक्तगुण्यादि-संख्या आह—

अयोगीमें भी जातिपद सयोगीकी तरह हैं । किन्तु औदयिकके दो ही जातिपद होनेसे गण्य दो हैं । और गुणकार बारह तथा क्षेप बारह होनेसे भंग छत्तीस हैं ।

सिद्धोंमें क्षायिकके चार—सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन और तीर्थरूप लब्धि तथा पारिणामिकका एक जीवत्व जातिपद हैं । प्रत्येक भंगमें क्षेप पाँच हैं । दो संयोगीमें क्षेप चार हैं । सब मिलकर नौ भंग होते हैं ॥८४८॥

आगे गुण्य आदिकी संख्या कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रणरुगळोळ् गुण्यंगळारारप्पुवु। अनिवृत्तिकरणक्षपकोपशमकरुगळोळ् प्रत्येकमारुमय्दुं गुण्यंगळप्पुवु। सूक्ष्मसांपरायक्षपकोपशमकरुगळोळ् प्रत्येकं पंचकं गुण्यमक्कुं। उपशांतकषायक्षीणकषायरुगळोळ् प्रत्येकं नाल्कु नाल्कु गुण्यंगळप्पुवु। सयोगरोळ् मूरुगुण्यंगळप्पुवु। अयोगिगळोळेरडु गुण्यंगळप्पुवु। मेले सिद्धरोळ् शून्यमक्कुं॥

बारट्ठट्ठ छव्वीसं तिसु तिसु बत्तीसयं च चउवीसं।
तो तालं चउवीसं गुणगारा बार बार णभं॥८५०॥

द्वादशाष्टाष्टषड्विंशतयः त्रिषु त्रिषु द्वात्रिंशच्च चतुर्विंशतिः ततश्चत्वारिंशत् चतुर्विंशतिः गुणकाराः द्वादशद्वादशनभः॥

गुणकारंगळु मिथ्यादृष्टियोळपन्नेरडुं सासादनमिश्ररुगळोळेंटेंटुं असंयतनोळिप्पत्तारुं देशसंयतादिगुणस्थानत्रयदोळ् प्रत्येकं मूवत्तेरडुगळु अपूर्व्वकरणादिक्षपकत्रयदोळ् प्रत्येकं चतुर्व्विंशतिगळु अल्लिद मेळे उपशमकचतुष्टयदोळ् प्रत्येकं नाल्वत्तुगळु क्षीणकषायनोळ् चतुर्व्विंशतियुं सयोगरोळ् पन्नेरडुमयोगिगळोळ् पन्नेरडुं सिद्धरोळ् शून्यमक्कुं॥

वामे चउदस दुसु दस अडवीसं तिसु हवंति चोत्तीसं।
तिसु छव्वीस दुदालं खेवा छव्वीस बार बारणवं॥८५१॥

वामे चतुर्द्दश द्वयोर्द्दश अष्टाविंशतिः त्रिषु भवंति चतुस्त्रिंशत्। त्रिषु षड्विंशतिर्द्विचत्वारिंशत् क्षेपाः षड्विंशतिर्द्वादश द्वादशनव॥

गुण्यानि मिथ्यादृष्टावष्टौ। सासादनादित्रये सप्त। देशसंयतादित्रये क्षपकोपशमकापूर्वकरणयोश्च षट्। तदनिवृत्तिकरणयोः षट्पंच। सूक्ष्मसाम्पराययोः पंच। उपशान्तक्षीणकषाययोश्चत्वारि। सयोगे त्रीणि। अयोगे द्वे। सिद्धे शून्यं॥८४९॥

गुणकारा मिथ्यादृष्टौ द्वादश। सासादनादिद्वये अष्टावष्टौ। असंयते षड्विंशतिः। देशसंयतादित्रये द्वात्रिंशत्। क्षपकापूर्वकरणादित्रये चतुर्विंशतिः। तत उपशमकचतुष्के चत्वारिंशत्। क्षीणकषाये चतुर्विंशतिः। सयोगायोगयोर्द्वादश। सिद्धे शून्यं॥८५०॥

मिथ्यादृष्टिमें आठ, सासादन आदि तीनमें सात, देशसंयत आदि तीनमें और क्षपक व उपशमक अपूर्वकरणमें छह, अनिवृत्तिकरणमें छह और पाँच, सूक्ष्मसाम्परायमें पाँच, उपशान्तकषाय और क्षीणकषायमें चार, सयोगीमें तीन और अयोगीमें दो गुण्यका प्रमाण है। सिद्धोंमें गुण्य नहीं है॥८४९॥

मिथ्यादृष्टिमें बारह, सासादन आदि दोमें आठ-आठ, असंयतमें छब्बीस, देशसंयत आदि तीनमें बाईस, क्षपक अपूर्वकरण आदि तीनमें चौबीस, उपशमश्रेणीके चार गुणस्थानोंमें चालीस-चालीस, क्षीणकषायमें चौबीस, सयोगी और अयोगीमें बारह गुणकार हैं। सिद्धोंमें गुणकार नहीं हैं॥८५०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेपंगळु मिथ्यादृष्टियोळु पदिनाल्कु । सासादनमिश्ररुगळोळु प्रत्येकं पत्तुं असंयतनोळु अष्टाविंशति देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु प्रत्येकं मूवत्तनाल्कु । अपूर्व्वकरणादि क्षपकत्रयदोळु प्रत्येकं षड्विंशतियुं उपशमकचतुष्टयदोळु प्रत्येकं नाल्वत्तेरडुगळुं क्षीणकषायनोळु षड्विंशतियुं सयोगरोळु द्वादशमुमयोगिगळोळु द्वादशमुं सिद्धरोळु नवंगळुमप्पुवु ॥

एक्कारं दसगुणियं दुसु छावट्ठि दसाहियं विसयं ।
तिसु छव्वीसं विसयं वेदुवसःमोत्ति दुसयबासीदी ॥८५२॥

एकादशदशगुणिताः द्वयो षट्षष्टिर्द्दशाधिकं द्विशतं । त्रिषु षड्विंशतिद्विशतं वेदकोपशमकपर्य्यंतं द्विशतद्व्यशीतिः ॥

मिथ्यादृष्टियोळु नूरपत्तु भंगंगळप्पुवु । सासादननोळं मिश्रनोळं प्रत्येकमरुवत्तारुगळप्पुवु । असंयतनोळु दशाधिकद्विशतभंगंगळप्पुवु । देशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तरुगळोळु प्रत्येकं इन्नूरिप्पत्तारुगळप्पुवु । उपशमकापूर्व्वकरण सवेदानिवृत्तिकरणरोळु प्रत्येकं यिन्नूरेण्भत्तेरडप्पुवु ॥

बादालं बिण्णिसया तत्तो सुहुमोत्ति दुसय दोसहियं ।
उवसंतम्मि य भंगा खवगेसु जहाकमं वोच्छं ॥८५३॥

द्विचत्वारिंशद्द्विशतं ततः सूक्ष्मपर्य्यंतं द्विशतं द्विशतसहितं उपशांते च भंगाः क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥

ततः आ सवेदानिवृत्तियुपशमकनिंदं मेले अवेदानिवृत्तियुपशमकनोळं सूक्ष्मसांपरायोपशमकनोळं प्रत्येकं द्विचत्वारिंशद्द्विशतभंगंगळप्पुवु । उपशांतकषायनोळु द्व्युत्तरद्विशत भंगंगळप्पुवु । क्षपकरोळु यथाक्रमविदं पेळ्दपेवेंदु पेळदपं :—

क्षेपा मिथ्यादृष्टौ चतुर्दश । सासादनमिश्रयोर्दश । असंयतेऽष्टाविंशतिः । देशसंयतादित्रये चतुस्त्रिंशत् । क्षपकापूर्वकरणादित्रये षड्विंशतिः उपशमकचतुष्के द्वाचत्वारिंशत् । क्षीणकषाये षड्विंशतिः । सयोगायोगयोर्द्वादश । सिद्धे नव भवन्ति ॥८५१॥

भंगा मिथ्यादृष्टौ दशाग्रशतं । सासादनमिश्रयोः षट्षष्टिः । असंयते दशाग्रद्विशती । देशसंयतादित्रये षड्विंशत्यग्रद्विशती । उपशमकापूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोर्द्व्यशीत्यग्रद्विशती ॥८५२॥

तत उपर्युपशमकावेदानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसाम्पराययोः द्विचत्वारिंशदग्रद्विशती । उपशांतकषाये

मिथ्यादृष्टिमें चौदह, सासादन और मिश्रमें दस, असंयतमें अट्ठाईस, देशसंयत आदि तीनमें चौंतीस, क्षपकश्रेणीके अपूर्वकरण आदि तीनमें छब्बीस, उपशमश्रेणीके चार गुणस्थानोंमें बयालीस, क्षीणकषायमें छब्बीस, सयोगी और अयोगीमें बारह तथा सिद्धोंमें नौ क्षेप होते हैं ॥८५१॥

अब भंगोंकी संख्या कहते हैं—मिथ्यादृष्टिमें एक सौ दस, सासादन और मिश्रमें छियासठ, असंयतमें दो सौ दस, देशसंयत आदि तीनमें दो सौ छब्बीस, उपशमक अपूर्वकरण और वेदसहित अनिवृत्तिकरणमें दो सौ बयासी भंग होते हैं ॥८५२॥

उससे ऊपर उपशमक वेदरहित अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें दो सौ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तरसं दसगुणिदं वेदित्ति सयाहियं तु छादालं ।
सुहुमोत्ति खीणमोहे बावीससयं हवे भंगा ॥८५४॥

सप्तदश दशगुणिताः सवेदानिवृत्तिपर्य्यंतं शताधिकं तु षट्चत्वारिंशत् सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंतं क्षीणमोहे द्वाविंशतिशतं भवेद्भंगाः ॥

अपूर्व्वकरणक्षपकनोळं सवेदानिवृत्तिकरणक्षपक नोळं प्रत्येकं नूरेप्पत्तु भंगंगळप्पुवु । अवेदानिवृत्तियोळं सूक्ष्मसांपरायक्षपकनोळं प्रत्येकं नूरनाल्वत्तारु भंगंगळप्पुवु । क्षीणकषायनोळ् नूरिप्पत्तेरडु भंगंगळप्पुवु ॥

अडदालं छत्तीसं जिणेसु सिद्धेसु होंति णव भंगा ।
एत्तो सव्वपदं पडि मिच्छादिसु सुणुह वोच्छामि ॥८५५॥

अष्टचत्वारिंशत् षट्त्रिंशत् जिनयोः सिद्धेषु भवंति नवभंगाः । इतः सर्व्वपदं प्रति मिथ्यादृष्ट्यादिषु शृणुत वक्ष्यामि ॥

सयोगजिनरोळष्टाचत्वारिंशद्भंगंगळप्पुवु । अयोगिजिनरोळु षट्त्रिंशद् भंगंगळप्पुवु । सिद्धपरमेष्ठिगळोळु नवभंगंगळप्पुवु । इल्लिंद मेले सर्व्वपदंगळं कुरुत्तु मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगळोळु पेळ्दपें केळि भव्यरुगळिरा ॥

अनंतरं सर्व्वपदंगळं पेळ्वल्लि पिंडपदंगळोळेकैकपदंगळेकसमयदोळु संभविसुवर्वेंदु पेळ्दपरु :—

भव्विदराणण्णदरं गदीण लिंगाण कोहपहुडीणं ।
इगिसमये लेस्साणं सम्मत्ताणं च णियमेण ॥८५६॥

भव्येतरयोरन्यतरत्पदं गतीनां लिंगानां क्रोधप्रभृतीनां एकसमये लेश्यानां सम्यक्त्वानां च नियमेन ॥

द्व्यग्रद्विशती । क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्ये ॥८५३॥

अपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः सप्तत्यग्रशतं । अवेदानिवृत्तिसूक्ष्मसाम्पराययोः षट्चत्वारिंशदग्रशतं । क्षीणकषाये द्वाविंशत्यग्रशतं ॥८५४॥

सयोगेऽष्टचत्वारिंशत्, अयोगे षट्त्रिंशत्, सिद्धे नव भवति । इतः उपरि सर्वपदान्याश्रित्य मिथ्यादृष्ट्यादिषु वक्ष्ये शृणुत ॥८५५॥

बयालीस, उपशान्तकषायमें दो सौ दो भंग होते हैं । आगे क्षपकमें क्रमानुसार कहते हैं ॥८५३॥

अपूर्वकरण और सवेद अनिवृत्तिकरणमें एक सौ सत्तर, वेदरहित अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्परायमें एक सौ छियालीस, क्षीणकषायमें एक सौ बाईस भंग हैं ॥८५४॥

सयोगीमें अड़तालीस, अयोगीमें छत्तीस और सिद्धोंमें नौ भंग होते हैं । यहाँसे आगे पदोंका आश्रय लेकर मिथ्यादृष्टी आदिमें भंग कहता हूँ तुम सुनो ॥८५५॥

सर्व्वंपदभंगंगळंतप्पल्लि पिंडपदंगळुं प्रत्येकपदंगळुमें दित्तेरनप्पुवदेकसमयदोळु भव्याभव्यद्विकदोळन्यतरत्पदमुमंते गतिगळोळोंदु लिंगंगळोळोंदुं क्रोधादिकषायंगळोळोंदुं लेश्याषट्कदोळोंदुं सम्यक्त्वंगळोळोंदुं मिथ्यादृष्टयादि चतुर्द्दशगुणस्थानंगळोळु यथायोग्यंगळागि नियमदिदं युगपत्संभविसुववु ॥

अनंतरं मिथ्यादृष्टियोळु प्रत्येकपदंगळं संभवंगळं पेळ्दपरु :—

पत्तेयपदा मिच्छे पण्णरसा पंच चेव उवजोगा ।
दाणादी ओदयिये चत्तारि य जीवभावो य ॥८५७॥

प्रत्येकपदानि मिथ्यादृष्टौ पंचदश पंच चैवोपयोगाः । दानादयः औदयिके चत्वारि च जीवभावश्च ॥

मिथ्यादृष्टियोळु पंचदश प्रमितंगळु प्रत्येकपदंगळप्पुवबाउवेंदोडे कुमतिकुश्रुतविभंगमेंबज्ञानंगळुं चक्षुरचक्षुर्द्दर्शनद्वयमुमेंदी युपयोगपंचकमुं दानलाभभोगोपभोग वीर्य्यंगळेंबी दानादिपंचकमुं मिथ्यादर्शनमुमज्ञानमुमसंयममुमसिद्धत्वमुमेंबौदयिकभावदोळु नाल्कुं जीवत्वमुमेंदितु प्रत्येकपदंगळु पदिनय्दप्पुवु । १५ ॥

पिंडपदा पंचेव य भव्विदरदुगं गदी य लिंगं च ।
कोहादी लेस्सावि य इदि वीसपदा हु उड्ढेण ॥८५८॥

पिंडपदानि पंचैव भव्येतरद्विकं गतिश्च लिंगं च । क्रोधादयो लेश्या अपि च इति विंशतिपदानि खलूर्ध्वेन ॥

तानि तु सर्वपदानि पिंडप्रत्येकभेदाद्द्विविधानि । तत्र पिंडपदेषु एकसमये भव्याभव्ययोः गतिषु लिंगेषु क्रोधादिषु लेश्यासु सम्यक्त्वेषु चैकैकमेव गुणस्थानेषु यथायोग्यं नियमेन युगपत् सम्भवति ॥८५६॥
युगपत्संभवानि प्रत्येकपदानि मिथ्यादृष्टौ पंचदशैव । तानि कानि ? त्र्यज्ञानाद्यद्विदर्शनान्येवं पंचोपयोगा दानादयः पंच औदयिके मिथ्यात्वाज्ञानासंयमासिद्धत्वानि चत्वारि जीवत्वं चेति ॥८५७॥

वे सर्वपद दो प्रकारके हैं—पिण्डपद और प्रत्येकपद। जिस भाव समूहमें-से एक समयमें एक जीवके एक-एक ही होता है सब नहीं होते उस भाव समूहको पिण्डपद कहते हैं। जैसे चारों गतियोंमें-से एक जीवके एक कालमें एक गति ही होती है, चारों नहीं होती। अतः गति पिण्डपद है। और जो भाव एक जीवके एक कालमें एक साथ भी होते हैं उनको प्रत्येकपद कहते हैं। सो भव्य, अभव्य, गति, लिंग, क्रोधादि चार, लेश्या और सम्यक्त्व ये पिण्डपद हैं। क्योंकि इनमें-से एक समयमें एक जीवके गुणस्थानोंमें यथायोग्य एक-एक ही नियमसे युगपद् होता है ॥८५६॥

एक साथ सम्भव प्रत्येकपद मिथ्यादृष्टिमें पन्द्रह होते हैं, वे इस प्रकार हैं—तीन अज्ञान, दो दर्शन, ये पाँच उपयोग, दान आदि पाँच लब्धियाँ, औदयिकमें-से मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व ये चार और जीवत्व पारिणामिक ॥८५७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिल्लि युगपत्संभविगळं प्रत्येकपदंगळेंबुदु सहानवस्थायिगळं पिंडपदंगळेंबुदु। अल्लि पूर्व्वोक्त पंचदश प्रत्येकपदंगळिंदं मेले मेले भव्याभव्यद्विकमुं गतियुं लिंगमुं क्रोधादियुं लेश्येगळु मेंबी विंशति पदंगळु मिथ्यादृष्टियोळु मेले मेलेयप्पुवु ॥

पत्तेयाणं उवरिं भव्विदरदुगस्स होदि गदिलिंगे।
कोहादिलेस्ससम्मत्ताणं रयणा तिरिच्छेण ॥८५९॥

प्रत्येकानामुपरि भव्येतरद्विकस्य भवति गतिलिंगक्रोधादिलेश्या सम्यक्त्वानां रचना तिर्य्यग्रूपेण ॥

प्रत्येकपदंगळु पदिनय्दर मेले तिर्य्यग्रूपदिदं भव्याभव्यद्वयमक्कुं। गतिलिंगक्रोधादि कषाय-लेश्या सम्यक्त्वंगळगे रचनेगळु तिर्य्यग्रूपदिदमेयक्कुं। संदृष्टि मिथ्यादृष्टिग—

कु	कु	वि	च	अ	दा	ला	भो	उ	वी	मि	अ	अ	अ	जी	भ	न	स्त्री	क्रो	कृ
															अ	ति	पु	मा	नी
																म	न	माया	क
																दे		लो	पो
																			प
																			शु

तदुपरि पिंडपदानि पंचैव। तानि तु भव्येतरद्वयं गतिः लिंगं क्रोधादिः लेश्या चेति। इत्येतानि विंशतिपदानि खलु मिथ्यादृष्टावूर्ध्वरूपेण स्थाप्यानि ॥८५८॥

सर्वत्र प्रत्येकपदानामुपरिस्थितानां भव्याभव्ययोः गतीनां लिंगानां क्रोधादिकषायाणां लेश्यानां सम्यक्त्वानां च रचना तिर्यग्रूपेण कार्या भवन्ति ॥८५९॥

उन पन्द्रह प्रत्येक पदोंके ऊपर मिथ्यादृष्टिमें पिण्डपद पाँच ही हैं, भव्य-अभव्य दोनों, गति, लिंग, क्रोधादि और लेश्या। ये बीस पद मिथ्यादृष्टिमें ऊपर-ऊपर स्थापित करो ॥८५८॥

सर्वत्र प्रत्येक पदोंके ऊपर स्थापित भव्य, अभव्य, गति, लिंग, क्रोधादि कषाय, लेश्या और सम्यक्त्वकी रचना तिर्यग् रूपसे बराबरमें करना चाहिए ॥८५९॥

विशेषार्थ—नीचे तो प्रत्येक पद ऊपर लिखना चाहिए। उनके ऊपर मूल पिण्डपद ऊपर-ऊपर लिखना चाहिए।

कु। कु। वि। च। अ। दा। ला। भो। उ। वी। मि। अ। अ। अ। जी।

भ	न	स्त्री	क्रो	कृ
अ	ति	पु.	मा	नी
	म	न.	मा.	क
	दे	०	लो	ते
				प
				शु.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक्कादी दुगुणकमा एक्केक्कं रुंधियूण हेट्ठम्मि ।
पदसंजोगे भंगा गच्छं पडि होंति उवरुवरिं ॥८६०॥

एकादयो द्विगुणक्रमादेकैकमवलंब्याऽधः पदसंयोगे भंगाः गच्छं प्रति भवंत्युपर्युपरि ॥

एकमादियागि द्विगुणद्विगुण क्रमदिंदमेकैकपदंगळमवलंबिसियधस्तनपदसंयोगदोळु गच्छं प्रति मेले मेले भंगंगळप्पुवु । अदें तें दोडे कुमतिज्ञानमों दु यिल्लि प्रत्येकभंगमों देयक्कुं १ ॥

कुश्रुतदोळु प्रत्येकभंगमों दुं १ । तदधस्तन कुमतिज्ञानदोडने संयोगमागुत्तं विरलु द्विसंयोगभंग १ कूगि भंगमेरडु २ । विभंगज्ञानदोळु प्रत्येक भंगमों दु १ । तदधस्तन कुश्रुतादिगळो-डने द्विसंयोगभंगमेरडु । २ । त्रिसंयोगभंगमों दु । १ । कूडि भंगंगळु नाल्कु ४ । चक्षुर्दर्शनदोळु प्रत्येकभंगमों दु । १ । तदधस्तनविभंगज्ञानादिगळोडने द्विसंयोगभंगंगळु मूरु ३ । त्रिसंयोगभंगंगळु मूरु ३ । चतुःसंयोगमों दु १ कूडि भंगमें टु ८ । अचक्षुर्द्दर्शनदोळु प्रत्येकभंगमों दु १ । तदधस्तनचक्षुर्द्दर्शनादिगलोडने द्विसंयोगभंगंगळु नाल्कु ४ । त्रिसंयोगभंगंगळारु ६ । चतुःसंयोगभंगंगळु नाल्कु । ४ । पंचसंयोग भंगमों दु १ । कूडि भंगंगळु पदिनारु १६ । दानलब्धियोळु

एकमादि कृत्वा द्विगुणद्विगुणक्रमाः एकैकपदमवलंब्याधस्तनपदसंयोगे गच्छं प्रत्युपर्युपरि भंगा भवन्ति । तद्यथा—

कुमतौ प्रत्येकभंग एकः । कुश्रुते प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनेन संयोगे द्विसंयोगेऽप्येकः मिलित्वा द्वौ । विभंगे प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनकुश्रुतादिना द्विसंयोगौ द्वौ । त्रिसंयोग एकः, मिलित्वा चत्वारः । चक्षुर्दर्शने प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनविभंगादिना द्विसंयोगास्त्रयः । त्रिसंयोगास्त्रयः । चतुःसंयोग एकः । मिलित्वाष्टौ । अचक्षुर्दर्शने प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनचक्षुरादिना द्विसंयोगाश्चत्वारः । त्रिसंयोगाः षट् । चतुःसंयोगाश्चत्वारः ।

एकसे लगाकर क्रमसे दूने-दूने एक-एक पदका अवलम्ब लेकर नीचे-नीचेके पदोंके संयोगसे जितनेवाँ पद हो उसके ऊपर-ऊपर भंग होते हैं । वही कहते हैं—

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें प्रत्येक पद सबमें नीचे कुमतिज्ञानका स्थापन किया । उसका प्रत्येक भंग एक ही है । उसके ऊपर कुश्रुत स्थापित किया । उसका प्रत्येक भंग एक और उसके नीचे स्थापित कुमतिके संयोगसे दो संयोगी भंग एक । इस प्रकार दो भंग हुए । उसके ऊपर विभंगको स्थापित किया । उसका प्रत्येक भंग एक और उसके नीचे स्थापित कुश्रुत और कुमतिके संयोगसे दो संयोगी भंग दो । तथा तीनोंके संयोगसे तीन संयोगी भंग एक । इस प्रकार चार भंग हुए । उसके ऊपर चक्षुदर्शन । उसका प्रत्येक भंग एक और उसके नीचे स्थापित विभंग कुश्रुत कुमतिके संयोगसे दो संयोगी भंग तीन । और चक्षु कुमति कुश्रुत अथवा चक्षु कुमति विभंग या चक्षु कुश्रुत विभंगके संयोगसे तीन संयोगी भंग तीन । चारोंके संयोगसे चार संयोगी भंग एक । ऐसे आठ हुए । उसके ऊपर अचक्षुदर्शन । उसमें प्रत्येक भंग एक । उसके नीचे चक्षुदर्शन, विभंग, कुश्रुत, कुमतिका संयोग क्रमसे होनेपर दो संयोगी भंग चार । तथा अचक्षु चक्षु कुमति, या अचक्षु चक्षु कुश्रुत, या अचक्षु चक्षु विभंग या अचक्षु कुमति कुश्रुत, या अचक्षु कुमति विभंग या अचक्षु कुश्रुत विभंगके संयोगसे तीन संयोगी भंग छह । तथा अचक्षु चक्षु कुमति कुश्रुत या अचक्षु चक्षु कुमति विभंग या अचक्षु चक्षु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येकभंगमोंदु १। तदधस्तन चक्षुर्द्दर्शनादिगळोडने द्विसंयोगभंगंगळय्दु ५। त्रिसंयोगंगळु पत्तु १०। चतुःसंयोगंगळु पत्तु १०। पंचसंयोगंगळय्दु ५। षट्संयोगमोंदु १। कूडि भंगंगळु ३२। यिंतु पदंपदं प्रति द्विगुणद्विगुण भंगंगळागुत्तं पोगि प्रत्येकपदंगळ पदिनैदनेय जीवपददोळु प्रत्येक भंगमोंदु १। पंचदशसंयोग भंगमुमोंदु १। द्विसंयोगंगळु चतुर्द्दशसंयोगंगळु प्रत्येकं पदिनाल्कु १४।१४। त्रिसंयोगभंगंगळु त्रयोदशसंयोगभंगंगळु प्रत्येकं द्विरूपोनगच्छेय एकबार संकलनमात्रंगळप्पुवु।

१३	१४
२	१

लब्ध ९१।९१। चतुसंयोगभंगंगळु द्वादश संयोग भंगंगळु प्रत्येकं त्रिरूपोनगच्छेय द्विकवारसंकलन मात्रंगळप्पुवु।

१२	१३	१४
३	२	१

लब्ध ३६४।३६४। पंचसंयोग भंगंगळुं एकादशसंयोगभंगंगळु प्रत्येकं चतूरूपोनगच्छेय त्रिवार संकलनमात्रंगळप्पुवु

११	१२	१३	१४
४	३	२	१

लब्ध १००१।१००१। षट्संयोभंगंगळु दश-

पंचसंयोग एकः। मिलित्वा षोडश। दानलब्धौ प्रत्येकभंग एकः। तदधस्तनाचक्षुरादिना द्विसंयोगाः पंच। त्रिसंयोगा दश। चतुःसंयोगा दश। पंचसंयोगाः पंच। षट्संयोग एकः। मिलित्वा द्वात्रिंशत्। एवं प्रतिपदं द्विगुणा भूत्वा पंचदशे जीवपदे प्रत्येकभंगः पंचदशसंयोगश्चैकः। द्विसंयोगाश्चतुर्दशसंयोगाश्च चतुर्दश। त्रिसंयोगा त्रयोदशसंयोगाश्च द्विरूपोनगच्छस्यैकवारसंकलनमात्राः १३ । १४ / २ १ । लब्धं ९१। ९१। चतुस्संयोगा द्वादशसंयोगाश्च त्रिरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलनमात्राः १२ । १३ । १४ / ३ । २ । १ । लब्धं ३६४। ३६४।

कुश्रुत विभंग, या अचक्षु कुमति कुश्रुत विभंगके संयोगसे चार संयोगी भंग चार। तथा अचक्षु चक्षु विभंग कुश्रुत कुमति इन पाँचोंके संयोगसे पंचसंयोगी भंग एक। ये मिलकर सोलह हुए। इसी प्रकार उसके ऊपर दान लब्धि रखो। उसका प्रत्येक भंग एक। और उसके नीचे चक्षुदर्शन आदि हैं। उनके संयोगसे दो संयोगी भंग पाँच। तीन संयोगी दस, चार संयोगी दस, पाँच संयोगी पाँच, छह संयोगी एक मिलकर बत्तीस हुए। इसी प्रकार ऊपर-ऊपर एक-एक पदको रखकर उनके भंग दूने-दूने होते हैं। उनमें प्रत्येक संयोगी भंग तो एक होता है। और दो संयोगी आदि भंग नीचेके भावोंके संयोगके बदलनेसे जितने-जितने हों उतने-उतने जानना। सो लाभ लब्धिमें चौंसठ, भोग लब्धिमें एक सौ अट्ठाईस, उपभोगमें दो सौ छप्पन, वीर्यमें पाँच सौ बारह, मिथ्यात्वमें एक हजार चौबीस, अज्ञानमें दो हजार अड़तालीस, असंयममें चार हजार छियानबे। असिद्धत्वमें इक्यासी सौ बानबे, जीवत्वमें सोलह हजार तीन सौ चौरासी भंग होते हैं। पन्द्रहवें जीवपदमें इतने भंग कैसे होते हैं यह स्पष्ट करते हैं—

प्रत्येक भंग एक। दो संयोगी और चौदह संयोगी चौदह-चौदह। तीन संयोगी और तेरह संयोगी भंग दो हीन गच्छ प्रमाणका एक बार जोड़ मात्र हैं। गच्छका प्रमाण पन्द्रह है। दो कम करनेसे तेरह रहे। एकसे तेरह तकका जोड़ इक्यानबे होता है सो इक्यानबे इक्यानबे भंग हैं। इसी तरह चार संयोगी और बारह संयोगी भंग तीन हीन गच्छका दो बार जोड़-मात्र हैं। सो तीन सौ चौंसठ तीन सौ चौंसठ भंग होते हैं। पाँच संयोगी और ग्यारह संयोगी भंग चार हीन गच्छका तीन बार जोड़मात्र होनेसे एक हजार एक, एक

संयोगभंगंगळु पंच रूपोनगच्छेय चतुर्वार संकलन मात्रंगळप्पुवु

१०	११	१२	१३	१४
५	४	३	२	१

लब्धं २००२। २००२। सप्तसंयोग भंगंगळु नवसंयोग भंगंगळु षड्रूपोनगच्छेय पंचवार संकलन मात्रंगळप्पुवु।

९	१०	११	१२	१३	१४
६	५	४	३	२	१

लब्धं ३००३।३००३। अष्टसंयोग भंगंगळु सप्तरूपोन गच्छेय षड्वारसंकलनमात्रंगळप्पुवु

८	९	१०	११	१२	१३	१४
७	६	५	४	३	२	१

लब्ध ३४३२। कूडि प्रत्येक पदंगळोळु पदिनय्दनेय जीवभावदोळु पदिनारु सासिरद मूनूरेंभत्तनाल्कु भंगंगळप्पुवु १६३८४।

पंचसंयोगा एकादशसंयोगाश्च चतूरूपोनगच्छस्य त्रिकवारसंकलनमात्राः ११। १२। १३। १४ लब्धं
४। ३। २। १

१००१। १००१। षट्संयोगा दशसंयोगाश्च पंचरूपोनगच्छस्य चतुर्वारसंकलनमात्राः १०। ११। १२।
५। ४। ३।

१३। १४ लब्धं २००२। २००२। सप्तसंयोगा नवसंयोगाश्च षड्रूपोनगच्छस्य पंचवारसंकलनमात्राः—
२। १

९। १०। ११। १२। १३। १४ लब्धं ३००३। ३००३। अष्टसंयोगाः सप्तरूपोनगच्छस्य षड्वारसंकलन-
६। ५। ४। ३। २। १

मात्राः ८। ९। १०। ११। १२। १३। १४ लब्धं ३४३२। मिलित्वा तत्र षोडशसहस्रत्रिशतचतुरशोति-
७। ६। ५। ४। ३। २। १

हजार एक हैं। छह संयोगी और दस संयोगी भंग पाँच हीन गच्छका चार बार जोड़मात्र होनेसे दो हजार दो, दो हजार दो हैं। सात संयोगी और नौ संयोगी भंग छह हीन गच्छका पाँच बार जोड़मात्र हैं अतः तीन हजार तीन, तीन हजार तीन हैं। आठ संयोगी भंग सात हीन गच्छका छह बार जोड़मात्र हैं अतः चौंतीस सौ बत्तीस हैं। ये सब मिलकर पन्द्रहवें जीवपदके सोलह हजार तीन सौ चौरासी भंग होते हैं। यह पण्णट्ठीका चौथा भाग है क्योंकि पैंसठ हजार पाँच सौ छत्तीसको पण्णट्ठी कहते हैं।

विशेषार्थ—यहाँ जीवपद पन्द्रहवाँ होनेसे गच्छका प्रमाण पन्द्रह है। दो हीन गच्छका एक बार जोड़ करनेके लिए पूर्वोक्त सूत्रके अनुसार तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करे। फिर दो और एकको परस्परमें गुणा करके उसका भाग देनेपर इक्यानवे होते हैं। तीन हीन गच्छका दो बार जोड़ करनेके लिए बारह, तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करके, फिर तीन, दो, एकको परस्परमें गुणा करके उससे भाग देनेपर तीन सौ चौंसठ होते हैं। चार हीन गच्छका तीन बार जोड़ करनेके लिए ग्यारह, बारह, तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करके और उसमें चार, तीन, दो, एकको परस्परमें गुणा करके उससे भाग देनेपर एक हजार एक होते हैं। पाँच बार गच्छका चार बार जोड़नेके लिए दस, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करके उसमें पाँच, चार, तीन, दो, एकको परस्परमें गुणा करके उससे भाग देनेपर दो हजार दो होते हैं। छह हीन गच्छका पाँच बार जोड़ करनेके लिए नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करके उसमें छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकको परस्परमें गुणा करके उससे भाग देनेपर तीन हजार तीन होते हैं। सात हीन गच्छका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इवु पण्णत्तिय चतुर्थांशमक्कुं ६५ = १ संदृष्टि :—
४

जी १ । १४ । ९१ । ३६४ । १००१ । | २००२ | ३००३ | ३४३२ | ३००३ | २००२ | १००१ | ३६४ | ९१ | १४ | १ |
०
०
१५
दा १ । ५ । १० । १० । ५ । १ । ३२ ।
अ १ । ४ । ६ । ४१ । १६ ।
च १ । ३ । ३ । १ । ८ ।
वि १ । २ । १ । ४ ।
कु १ । १ । २ ।
कुं १ । १ ।

इल्लि गुणयोगीयप्प संकलनसूत्रमं पेळ्दपरु—

इट्ठपदे रूऊणे दुगसंवग्गम्मि होदि इट्ठधणं ।
असरिच्छाणंतधणं दुगुणेगूणे सगीयसव्वधणं ॥८६१॥

इष्टपदे रूपोने द्विकसंवर्गे भवतीष्टधनं । असदृशानामंतधनं द्विगुणैकोने स्वकीयसर्व्वधनं ॥ इल्लि यिष्टपदं विवक्षितपदं जीवभावं पदिनय्दनेयदादोडा पदसंख्येयोळों दुरूपं कुंदिसि १५–१ । शेषमं पदिनाल्कं १४ । विरळिसि प्रतिरूपं द्विकमनित्तु संवर्गं माडल्पडुत्तिरलु बंद लब्धमिष्टधनं पदिनारुसासिरद मूनूरेण्भत्तनाल्कप्पुवक्कु । १६३८४ । पण्णट्ठिय चतुर्त्थांशमक्कुमें बुदर्थंमा असदृशानामंतनं ई प्रत्येकपदंगळोळपुट्टिद अवसानधनमना पण्णट्ठिय चतुर्त्थांशमं अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियमें दितु द्विगुणिसियों दु रूपं कळेयुत्तं विरलु स्वकीयेष्टस्थानदोळ् सर्व्वधनमक्कुं संदृष्टि
६५ = १
४
२ । ऋण १̊ इदनपवर्त्तिसिदोडे संदृष्टि
६५ = १
२
ऋण १̊

भंगाः १६३८४ । इदं पण्णट्ठिचतुर्थांशः ६५ = १ ॥८६०॥ अथोत्तरत्रयभंगसंकलनसूत्रमाह—
४

१—इष्टपदं विवक्षितभावः जीवत्वं तदा पंचदशसु रूपे ऊने १५ । शे १४ मात्रद्विकसंवर्गे कृते इष्टधनं स्यात्

छह बार जोड़ लानेके लिए आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदहको परस्परमें गुणा करके उसमें सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो, एकको परस्परमें गुणा करके उससे भाग देनेपर चौंतीस सौ बत्तीस होते हैं ॥८६०॥

आगे भंगोंको मिलानेके लिए सूत्र कहते हैं—

विवक्षित पदकी संख्या जितनी हो उसमें एक घटानेपर जितना रहे उतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर विवक्षितपदके भंगोंके प्रमाणरूप इष्ट धन होता है। जैसे जीवपदकी संख्या पन्द्रह है। उसमें एक घटानेपर चौदह रहे। सो चौदह जगह दोके अंक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमिल्लि मत्तों दु प्रकारदिदमा प्रत्येकद्विसंयोगत्रिसंयोगादिगळं साधिसुवुपायं तोरल्पडुगुमदें तें दोडे आ प्रथमकुमतिज्ञानदोळु प्रत्येक भंगमों देयक्कुं । १ । कुश्रुतभावदोळु कुमतिज्ञानदोळे तंतें प्रत्येकभंगमों देयक्कुं । १ । कुमतिज्ञानप्रत्येकसंयोगसंख्येयदु कुश्रुतज्ञानदोळुद्विसंयोगसंख्येयक्कुं १ । अंतु कुश्रुतदोळु भंगंगळेरडु २ । विभंगदोळु कुश्रुतदोळे तंतें प्रत्येक भंगमों दु १ । तदधस्तनकुश्रुतद प्रत्येकभंगमं द्विसंयोगभंगमुमं कूडिदोड द्विसंयोगभंगमेरडु २ । अधस्तनद्विसंयोगमों देयुपरितन त्रिसंयोगप्रमाणमक्कुं । १ । कूडि विभंगदोळु भंगंगळु नाल्कु ४ । चक्षुर्दर्शनदोळु तदधस्तनप्रत्येकसंयोगप्रमाणमे प्रत्येक भंगमों देयक्कुं । १ । आ विभंगज्ञान प्रत्येक भंगमुमं द्विसंयोगमुमं कूडिदोडे द्विसंयोगभंगंगळु मूरु ३ । विभंगद्विसंयोगमुमं त्रिसंयोगमुमं कूडिदोडे त्रिसंयोगप्रमाणमक्कु—३ । मी भंगत्रिसंयोगप्रमाणमे चतुःसंयोगप्रमाणमक्कुं १ । कूडि चक्षुर्द्दर्शनदोळु भंगमें टु ८ । अचक्षुर्द्दर्शनदोळु तदधस्तन प्रत्येकभंगमों देयक्कुं । १ । अहंगे चक्षुर्द्दर्शन प्रत्येक भंगमुमं द्विसंयोगभंगमुमं कूडिदोडे द्विसंयोगभंगंगळु नाल्कप्पुवु । ४ । मसमा चक्षुर्द्दर्शनद्विसंयोगमुमं त्रिसंयोगमुमं कूडिदोडे त्रिसंयोगभंगंगळारप्पुवु । ६ । आ त्रिसंयोगमुमं चतुःसंयोगमुमं कूडिदोडे चतुःसंयोगभंगंगळु नाल्कप्पुवु । ४ । आ चतुःसंयोगप्रमाणमे पंचसंयोगमक्कं । १ ॥ कूडियचक्षुर्द्दर्शनदोळु भंगंगळु पदिनारु १६ । दानलब्धियोळु अधस्तन प्रत्येकभंग प्रमाणमे प्रत्येकभंगप्रमाणमों देयक्कुं । १ । आ प्रत्येकभंगमुमं द्विसंयोगभंगमुमं कूडिदोडुपरितनदानलब्धिय द्विसंयोगप्रमाणमक्कुं । ५ । आ अधस्तनद्विसंयोगमुमं त्रिसंयोगमुमं कूडिदोडे त्रिसंयोगभंगंगळु पत्तप्पुवु । १० । अधस्तनत्रिसंयोगमुमं चतुःसंयोगमुमं कूडिदोडे चतुःसंयोगभंगंगळु पत्तप्पुवु । १० । आ चतुःसंयोगमं पंचसंयोगमुमं कूडिदोडे पंचसंयोगभंगंगळैदप्पुवु । ५ । पंचसंयोगप्रमाणमे षट्संयोगमों देयक्कुं । १ । कूडि दानलब्धियोळु भंगंगळु मूवत्तेरडप्पुवु । ३२ । लाभपददोळु प्रत्येकभंगमों दु १ । अधस्तन प्रत्येकभंगमं द्विसंयोगभंगमुमं कूडिदोडे द्विसंयोगभंगंगलारप्पुवु ६ । अधस्तन द्विसंयोगमुमं त्रिसंयोगमुमं कूडिदोडुपरितनत्रिसंयोगमक्कुमप्पुदरिदं त्रिसंयोगभंगंगळु पदिनय्दप्पुवुं । १५ । अधस्तनत्रिसंयोगमुमं चतुःसंयोगमुमं कूडिदोडुपरितन चतुःसंयोगप्रमाणमप्पुदरिदं चतुःसंयोग-

---

१६३८४ । इदमेव प्रत्येकपदानामन्तधनं द्वाभ्यां संगुण्यैकरूपेऽपनीते स्वेष्टस्थाने सर्वधनं स्यात् ६५ = १ । २ ।
० ० ४ ।

रखकर परस्परमें गुणा करनेपर सोलह हजार तीन सौ चौरासी होते हैं। इतने ही जीवपदके भंग हैं। उस इष्टधनको दूना करके उसमें-से एक घटानेपर जो प्रमाण रहे उतना प्रथमपदसे लेकर विवक्षितपदपर्यन्त सब पदोंके भंगोंका जोड़रूप सर्वधन होता है। जैसे विवक्षित जीवपद पन्द्रहका इष्टधन पणट्ठीका चौथा भाग है। उसको दूना करके उसमें-से एक घटानेपर प्रथमपदसे लेकर पन्द्रहवें पदपर्यन्त सब पदोंके भंगोंके जोड़का प्रमाण होता है। तथा जो जीवपदमें इष्टधन कहा उसका दूना आधा पणट्ठी प्रमाण होता है उतने भव्यभावके भंग हैं और उतने ही अभव्यभावके भंग हैं। दोनोंके मिलकर पणट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। उनको दूना करनेपर एक गतिके भंग होते हैं। सो नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देवगतिके इतने-इतने भंग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ळिप्पत्तु । २० । अधस्तनचतुःसंयोगमुमं पंचसंयोगमुमं कूडिदोडुपरितन पंचसंयोगमक्कुमप्पुदरिंदं पंचसंयोगंगळु पदिनय्दु । १५ । अधस्तनपंचसंयोगषट्संयोगमुमं कूडिदोडुपरितन षट्संयोगंगळार । ६ । अधस्तनषट्संयोगमेयुपरितन सप्तसंयोगप्रमाणमप्पुदरिंदमदों देयक्कुं । १ । इंतु लाभदवोळु कूडि भंगंगळु चतुःषष्टिप्रमितंगळप्पुवु । ६४ । संदृष्टि :

लाभ । १ । ६ । १५ । २० । १५ । ६ । १ । कूडि ६४ ।
दान । १ । ५ । १० । १० । ५ । १ । कूडि ३२ ।
अच० । १ । ४ । ६ । ४ । १ । कूडि १६ ।
चक्षु । १ । ३ । ३ । १ । कूडि ८ ।
विभं । १ । २ । १ । कूडि ४ ।
कुश्रु । १ । १ । कूडि २ ।
कुम । १ । कूडि १ ।

इंतु भोगोपभोगादिगळोळु तंतम्मधस्तन प्रत्येकभंगसे उपरितन प्रत्येकमुं अधस्तनप्रत्येकद्विसंयोगंगळुपरितनद्विसंयोगमुं अधस्तनद्विसंयोगत्रिसंयोगंगळुपरितन त्रिसंयोगंगळु अधस्तनत्रिसंयोग चतुःसंयोगंगळुपरितन चतुःसंयोगंगळं अधस्तनचतुःसंयोगंगळं पंचसंयोगंगळु मुपरितन पंचसंयोगंगळं अधस्तनपंचसंयोगंगळं षट्संयोगंगळुपरितनषट्संयोगंगळं अधस्तनषट्संयोगंगळं सप्तसंयोगंगळुपरितन सप्तसंयोगंगळागुत्तं पोपुवन्नेवरं पदिनय्दनेय जीवपदमक्कुमन्नेवरमल्लिंदंमेले पिंडभावंगळोळु भंगं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे—

अधस्तन प्रत्येकभाव पदंगळोळु द्विगुणसंकलनधनमनिदं ६५ = १/२ बेरों देडेयळु मुंदे स्थापिसि जीवभावपद सर्व्वधनमनिदं ६५ = १/४ द्विगुणिसिदोडे उपरितनपिंड भावंगळोळु प्रथमभव्य भावपदवोळु संभविसुव भंगंगळप्पुवु । संदृष्टि ६५ = १।२/४ अपवर्त्तितमिदु ६५ = १/२ मत्तमभव्यभाव पदवोळुमनिते भंगंगळप्पुवप्पुदरिंदं ६५ = १/२ कूडि द्विगुणितमप्पुवु ६५ = १।२/२ अपवर्त्तितमिदु ६५ = १ इदं द्विगुणिसिदोडे गतिप्पुवु चतुष्टयदोलों दु नरकगतियोळु भंगंगळ । ६५=१।२ वों दु गतिगिनितु भंगंग-

ऋण १ अपवर्तिते ६५ = १/२ ऋणं १ पुनस्तदेवेष्टधनं ६५ = १/४ द्विगुणितं उपरितनभव्यभावस्य भवति ६५ = १/२ तथा अभव्यभावस्य ६५ = १/२ मिलित्वेदं ६५ = १ इदं द्विगुणितमेकगतेर्भवति ६५ = १ । २ पुनश्चतुर्गुणितं चतुर्गतीनां ६५ = १ । ८ पुनस्तदेकगतिधनं ६५ = । १ । २ द्विगुणितमेकलिंगस्य ६५ = १ । २ । २

जानना। चारों गतिके भंग आठ पण्णट्ठीप्रमाण होते हैं। एक गतिके भंग दो पण्णट्ठीप्रमाण हुए। उनसे दूने एक लिंगके भंग होते हैं। उनको नरकगतिमें एक लिंग, तिर्यंचगतिमें तीन लिंग, मनुष्यगतिमें तीन लिंग और देवगतिमें दो लिंग मिलाकर नौसे गुणा करनेपर छत्तीस पण्णट्ठीप्रमाण भंग होते हैं। तथा एक लिंगके भंग पण्णट्ठीसे चौगुने होते हैं। उनको दूना करनेपर एक कषायके भंग होते हैं। उनको नरकगतिमें एक लिंग सहित चार कषाय होनेसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ळागळु नाल्कुं गतिगळगेनितप्पुवेंदु नाल्करिंदं गुणिसिदोडे लब्धमिदी राशियं ६५ = १।२।४ लब्ध ६५ = १।८ नरकगतियोळु षंढवेदमोंदु १। तिर्य्यंगतियोळु लिंगत्रयमक्कुं। ३। मनुष्यगतियोळ लिंगत्रयमक्कुं ३। देवगतियोळु लिंगद्वयमक्कु २। मंतु लिंगं नवप्रमितंगळप्पुवु। ९। अल्लियोंदु नरकगतिय भंगंगल निवं ६५ = १। २। द्विगुणिसिदोडोंदु नरकगतिय लिंगवोळिनितु भंगंगळप्पुवु। ६५ = १। २। २। ओंदु लिंगक्किनितु भंगंगळागुत्तं विरला नवलिंगंगळ्गेनितु भंगंगळप्पुवेंदु ओंभत्तरिदं गुणिसिदोडिनितप्पुवु। ६५ = १। २। २। ९। लब्धं ६५=१। २६। मत्तमोंद लिंगद भंगंगळनिदं ६५ = १। २। २। द्विगुणिसिदोडों कषाय भंगंगळप्पुवु ६५ = १। २। २। २॥ तितागुत्तं विरलु नरकगतियोलोंदु लिंगक्कें नाल्कु कषायंगळु ४ तिर्य्यंगतियमूरु लिंगंगळ्गे पन्नेरडुं कषायंगळु १२। मनुष्यगतिय मूरुं लिंगंगळगे पन्नेरडु कषायंगळु १२। देवगतिय लिंगद्वयक्कष्ट कषायंगळु। संदृष्टि

न	ति	म	दे
४	१२	१२	८

कूडि कषायंगळु मूवत्तारप्पुवोंदु कषायक्किनितु भंगंगळागळु। ६५=१। २। २। २। मूवत्तारक्केनितु भंगंगळप्पुवेंदु मूवत्तारिरिंदं गुणिसुत्तं विरलु ६५ = १। २। २। ३६। लब्धभंगंगळु ६५ = २८८॥ मत्तमा ओंदु कषाय भंगंगळं ६५ = १। २। २। २। द्विगुणिसिदोडोंदु लेश्या भंगंगळप्पुवु। ६५ = १। २। २। २। २। अंतागुत्तं विरलु नरकगतिय नाल्कु कषायंगळ्गे प्रत्येकमशुभलेश्यात्रयमागुत्तं विरलु द्वादशलेश्येगळप्पुवु। १२। तिर्य्यंगतिय पन्नेरडुं कषायंगळ्गे प्रत्येकमाराउ लेश्येगळागलु द्वासप्तति लेश्येगळप्पुवु ७२। मनुष्यगतियोळमन्ते लेश्येगळप्पुवु ७२। देवगतियोलेंटु कषायंगळ्गे प्रत्येकमाराउ लेश्येगळागळु नाल्वत्तेंटु लेश्येगळप्पुवु। ४८। संदृष्टि—नरकगति १। लिंग १। कषाय ४। लेश्ये ३। तिर्य्यंगति १। लिंग ३। क ४। ले ६। मनुष्यगति १। लिंग ३। कषाय ४। ले ६। देवगति १। लिंग २। क ४। ले ६। कूडि लेश्येगळु नरकगतियोळु १२। ति ७२। म ७२।

पुनः नरकादिगतीनामेकत्रित्रिद्विलिंगैर्नवभिर्गुणितं लिंगानां ६५ = १। २। २। ९ लब्धं ६५ = १। ३६। पुनस्तदेकलिंगधनं ६५ = १। २। २ द्विगुणितमेककषायस्य ६५ = १। २। २। २। एकैकलिंगस्य चत्वारश्चत्वारः कषाया इति षट्त्रिंशता गुणितं कषायाणां ६५ = १। २। २। २। ३६ लब्धं ६५ = १। २८८ पुनस्तदेककषायधनं ६५ = १। २। २। २। द्विगुणितमेकलेश्यायाः ६५ = १। २। २। २। २। पुनः नरकादिगतिषु लिंगाश्रयत्वाच्चतुर्द्वादशद्वादशाष्टकषायैः सह त्रिषड्लेश्याकृतचतुरग्रद्विशत्या गुणितं लेश्यानां

चारसे गुणा करो, तिर्यंचगतिमें तीन लिंग सहित चार कषाय होनेसे बारहसे गुणा करो, मनुष्यगतिमें भी तीन लिंग सहित चार कषाय होनेसे बारहसे गुणा करो। देवगतिमें दो लिंग सहित चार कषाय होनेसे आठसे गुणा करो। सो मिलकर छत्तीस हुए। उससे पणट्ठीसे आठ गुणे भंगोंको गुणा करनेपर दो सौ अट्ठासी पणट्ठीप्रमाण भंग होते हैं।

एक कषायके भंग आठ पणट्ठीप्रमाण होते हैं। उनसे दूने एक लेश्याके भंग होते हैं। उनको नरकगतिमें एक लिंग चार कषाय सहित तीन लेश्या होनेसे बारहसे गुणा करो। तिर्यंचमें तीन लिंग चार कषाय सहित छह लेश्या होनेसे बहत्तरसे गुणा करो। मनुष्यमें भी तीन लिंग चार कषाय सहित छह लेश्या होनेसे बहत्तरसे गुणा करो। देवगतिमें दो लिंग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे ४८। कूडि ३७४८७ ओंदु लेश्येगिनितु भंगंगळागुत्तं विरलु ६५ = १ । २ । २ । २ । २ । इन्नूर-नाल्कु लेश्येगळोळिनितु भंगंगळप्पुवें दिन्नूर नाल्करिंदं गुणिसिदोडिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = १ । २ । २ । २ । २ । २०४ । लब्ध ३२६४ । यितु पिंड भंगंगळु

६५=१	३२६४	लेश्या
६५=१	२८८	कषाय
६५=१	३६	लिंग
६५=१	८	गति
६५=१	१	भव्याभव्य

कूडि सर्व्वमुं पिंड भंगंगळु ६५ = १ । ३५९७ ॥ इवरोळु अधस्तन प्रत्येक भंगंगल सर्व्वधनमनिदं ६५ = १/२ कूडुवागळु द्विकविंदं समच्छेदमं माडिदोडे संदृष्टि ६५ = ७१९४/२ इव-रोला एकरूपं कूडि-दोडे मिथ्यादृष्टिय सर्व्वपद भंगंगळिनितप्पु । संदृष्टि ६५ = ७१९५/२ इल्लि मिथ्यादृष्टिय सर्व्वपद भंगंगळोळु पिंडभावपदंगळ तात्पर्य्यात्थं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे कुमतिभावपदं मोदलगोंडु जीवभाव-पदपर्य्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रमदिदं नडेव प्रत्येकपदद्विगुण संकलनधनमिदु ६५ = १/२ मेले पिंडभाव-पदंगळप्पुवल्लि भव्यभावपददोळु अधस्तन जीवभावपद भंगंगलं नोडलु द्विगुणमप्पुद रंद मिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = १।२/४ अपवर्त्तितमिदु ६५ = १/२ अभव्यभावदोळमिनिते भंगंगळप्पुवु ६५ = १/२ वुभयमुं कूडि ६५ = १ । उपरितन नरकगति भाव दोळु अधस्तनभव्यभावंगळ नोडलु द्विगुणमप्पुदरिंद मिनितप्पुवु । ६५ = २/२ अपवर्त्तितमिदु । ६५ = १ । नारकत्वदोळमभव्यत्वमुंटप्पु-दरिंदमदक्कमुमनिते भंगंगळप्पुवु । ६५ = १ । वुभयमुं नरकगतिगिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = १ । २ । ओंदु गतिगिनितु भंगंगळागुत्तं विरलु नाल्कुं गतिगळ्गे चतुर्गुणितमप्पुवु ।

---

६५ = १ । २ । २ । २ । २ । २०४ लब्धं ६५ = ३२६४ । सर्वे पिंडपदभंगाः—

६५ = १	३२६४	लेश्या
६५ = १	२८८	कषाय
६५ = १	३६	लिंग
६५ = १	८	गति
६५ = १	१	भव्याभव्य

मिलित्वामी ६५ = १ । ३५९७ । अत्राधस्तनप्रत्येकपदसर्वभंगेषु ६५ = १/२ मिलितेषु मिथ्यादृष्टौ

चार कषाय सहित छह लेश्या होनेसे अड़तालीससे गुणा करो सो सब मिलकर दो सौ चार हुए। दो सौ चारसे सोलह पण्णट्ठीको गुणा करनेपर बत्तीस सौ चौसठ पण्णट्ठीप्रमाण भंग होते हैं। सब मिलकर पिण्ड पदोंके भंग १+८+३६+२८८+३२६४=३५९७ पैंतीस सौ सत्तानबे पण्णट्ठीप्रमाण होते हैं। नीचेके प्रत्येक पदोंके भंग एक कम पण्णट्ठीसे आधे कहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५ = १ । २ । ४ ॥ गुणितलब्धमिदु । ६५ = ८ । तदुपरितनषंडभावपददोळु अधस्तन नरकगति भावपदभंगंगळं नोडलु द्विगुणमप्पुदरिंदमिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = १ । २ । नारकषंडभावदोळम-भव्यत्वमुंटप्पुदरिंदमदक्कमिनिते भंगंगळप्पुवु । ६५ = १।२। वुभयमुं कूडि नारकषंडभावदोळु भंगंगळिनितप्पुवु । ६५ = १२ । २ । इंतागुत्तं विरलु ओंदु षंडभावदिकनितागलु नवलिंगंगळ्गेनितु भंगंगळप्पुववेंदु नवगुणितमागुत्तं विरलु लिंगभावपदभंगंगळुमिनितप्पुवु । ६५ = १ । २।२।९। गुणितलब्धमिदु ६५ = ३६। तदुपरितनक्रोधकषायभावपददोळु तदधस्तन भव्याभव्यनारकषंडलिंग-नोडलुं द्विगुणमप्पुदरिंदमिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = २ । २ । २ ॥ लब्धभंग ६५ = ८। इंतागुत्तं विरलोंदु नारकभव्याभव्यषंडक्रोधभावदोळिनितु भंगंगळागुत्तं विरलु न ४। ति १२। म १२। दे ८। कूडि चतुर्गतिय षट्त्रिंशत्कषायंगळ्गेनितु भंगंगळप्पुवेंदु षट्त्रिंशद्गुणितमागुत्तं विरलिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = ८ । ३६ । लब्धकषायसर्व्वभंगंगळुमिनितप्पुवु । ६५ = २८८ । तदुपरितन कृष्णलेश्या भावदोळु तदधस्तन भव्याभव्य नारकषंडक्रोधभावपदभंग संख्येयं नोडलुं द्विगुणमप्पुदरिंदमिनितप्पुवु । ६५ = २ । २। २। २। इंतागुत्तं विरलु ओंदु लेश्येगिनितु भंगंगळागुत्तं विरलु न १२। ति ७२। म ७२। दे ४८। कूडि चतुर्गतिय इन्नूर नाल्कु लेश्येगळ्गेनितु भंगंगळप्पुवेंदिन्नूर नाल्करिंदं गुणिसिदोडिनितु भंगंगळप्पुवु । ६५ = १६। २०४॥ लब्धं लेश्याभावभंगंगळु ६५=३२६४। सर्व्वसंदृष्टि

६५ =	३२६४	लेश्या
६५ =	२८८	कषाय
६५ =	३६	लिंग
६५ =	८	गति
६५ =	१	भव्याभ

कूडि ६५ = ३५९७ ।

इवरोळु प्रत्येकपद भंगंगळनिदं ६५ = १ समच्छेदमं माडि कूडिदोडे मिथ्यादृष्टिय सर्व्वपद
२
भंगंगळिनितप्पुवु । ६५ = ७१९५ वेंबुदु तात्पर्य्यात्थं । अथवा कुमतिज्ञानभवं मोदलगोंडु पदि-
२
नय्दुं प्रत्येकभावपदंगळुमं मेलण भव्याभव्यादि पंचपिंड भावंगळुमनंतु विंशति पदंगळं क्रमदिदं द्विगुणद्विगुणद्विगुणमागि स्थापिसि पिंडशेषंगळुमं स्थापिसिदोडे इदु कु १ कु २। वि ४। च ८।

सर्वपदभंगा भवन्ति ६५ = ७१९५ । सासादने मिथ्यात्वाभव्यत्वे नेति प्रत्येकपदानि पंचदश । पिंडपदानि
२
चत्वारि, प्राग्वदानीतैषां भंगसंदृष्टिः—कु १ । कु २ । वि ४ । च ८ । अ १६ । दा ३२ । ला ६४ । भो

इनको मिलानेपर मिथ्यादृष्टिके सब पदभंग पणट्ठीको सात हजार एक सौ पंचानबेके आधे-से गुणा करके उसमें एक घटानेपर जो प्रमाण रहे उतने जानना । इसकी संदृष्टि नीचे दी जाती है । पणट्ठीका चिह्न ६५= ऐसा जानना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अ १६ । वा ३२ । का ६४ । भो १२८ । उ २५६ । वी ५१२ । मि १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी १६३८४ ।—

भव्य	६५=२	गति नरक	६५=१	लिंग षंड	६५=२	कषाय क्रो	६५=२।२	लेश्या कृष्ण	६५=२।२।२
अभ	६५=२	शेषगति	६५=७	शेषलिंग	६५=३४	शेष कषाय	६५=२८४	शेष लेश्या	६५=३२५६

१२८ । उ २५६ । वी ५१२ । म १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । जी ८१९२ । म १६३८४ ।[1]

नरक—लिंग १ क ४, ले. ३ भंग ६५ = १६	तिर्यंच लिं.३ क ले. ६ भंग ६५=१६	मनुष्य लिंग ३ क. ४, ले. ६ भंग ६५=१६	देव लिंग २ क. ४, ले. ६ भंग ६५=१६	भंग ६५=३२६४
नरक लिंग १ क. ४ भंग ६५=८	तिर्यंच लिं. ३ क ४ भंग ६५=८	मनुष्य लिं. ३ क. ४ भंग ६५=८	देव लिं. २ क. ४ भंग ६५=८	भंग ६५=२८८
नरक लिंग १ भंग ६५=४	तिर्यंच लिं. ३ भंग ६५=४	मनुष्य लिं.३ भंग ६५=४	देव लिं. २ भंग ६५=४	भंग ६५=३६
नरक गति ६५=२	तिर्यंच भंग ६५=२	मनुष्य भंग ६५=२	देव भंग ६५=२	भंग ६५=८
	भव्यत्व भंग ६५=२	अभव्य ६५=२	६५=भंग	

जीव १६३८४	अ. ८१९२	अ. ४०९६	अ. २०४८	मि. १०२४	वी. ५१२	उ २५६	भो. १२८	का. ६४	वा. ३२	अ. १६	च. ८	लि. ४	कृ. २	भ. १

१. इतः पुरस्सरं—तद्भंगसंकलनमिदं—इष्टे पंचदशे भव्यपदे १५ रूपेणोने १४ शेषमात्रद्विकसंवर्गे पण्णट्ठयाश्चतुर्थांशः ६५ = १/४ इष्टधनं भवति । इदं प्रत्येकपदांत्यधनं ६५ = १/४ द्विगुणितं रूपोनं ६५ = १/४ । २ । ऋ । १° स्वेष्टधनं स्यात् ६५ = १/२ ऋ १° एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं ६५ = १/२	
गतिधनं ६५ = २	
लिंगधनं ६५ = ९	श्रीमदभयचन्द्रनामांकितायामयं पाठोऽधिकः।
कषायधनं ६५ = ७२	
लेश्याधनं ६५ = ८१६	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यिल्लिप्पत्तनेय लेश्याभावमंत घनमिदु ६५ = ८। अंतप्पर्ण गुणगुणिय मे बितु संकलनमं तं वोडिदु ६५ = १६। इदरोळु अभव्यादि शेषभंगंगळं कूडिदोडिदु ६५ = ७१६३ ॥ ई राशियोळु पूर्व्वानीतसंकलितधनद पदिनारनेरडरिंद समच्छेदमं माडिदोडिदु ६५ = ३२/२ इदं कूडिदोडे मिथ्यादृष्टिय सर्व्वपदभंगंगळु मिनितप्पुवु। ६५ = ७१९५ = । इल्लिदं मेले सासादनंगे सर्व्वपदभंगंगळु तरल्पडुगुमदें तें दोडे सासादनंगे मिथ्यादृष्टिगे पेळ्दंते भंगंगळप्पुवादोडं विशेषमुंटदाउदें दोडे सासादनंगे मिथ्यात्वमुमभव्यत्वमुमिल्ल। प्रत्येकभावपदंगळु पदिनैदप्पुवु। पिंडभावंगळ पदंगळु नाल्कियप्पुवदें तें दोडा प्रत्येकभावंगळं पिंडभावपदंगळगं संदृष्टिरचने तोरल्पडुगुमदें तें दोडे कु १। कु २। वि ४। च ८। अ १६। वा ३२। ला ६४। भो १२८। उ प २५६। वी ५१२। अ १०२४। अ २०४८। अ ४०१६। जी ८१९२। भ १६३८४।

नरकगति ६५ = १/२	लिंगनरक १।६५ = १	कषा = नरक १। लिंग क ६५ = २
तिर्य्यग्गति ६५ = १/२	लिंगतिर्य्य ३।६५ = १	कषा = तिर्य्य १। लि ३। क ४।६५ = २
मनुष्यगति ६५ = १/२	लिंग मनु ३।६५ = १	कषा = मनु १। लि ३। क ४। ६५ = २
देवगति ६५ = १/२	लिंग देवगति २।६५ = १	कषा = देवग १। लि २। क ४।६५ = २
कूडि ६५ = १/२।४	कूडि ६५ = १।९। लिंग	कूडि कषाय ६५ = २।३६ लब्ध ६५ = ७२

नरक लिंग १ कषा ४ लेश्ये ३। ६५ = २। २
तिर्य्यग्ग लि ३ कषाय ४ लेश्ये ३। ६५ = २। २
मनुष्य लि ३। कषा ४। लेश्ये ६। ६५ = २। २
देवगति लि २। कषा ४ लेश्ये ६। ६५ = २। २
कूडि ६५ = २। २। २०४। लब्ध ६५ = ८१६

नरकगति ६५ = १/२	लिंगनरक १। ६५ = १	कषाय। नरक १ लि १ क ४। ६५ = २
तिर्यग्गति ६५ = १/२	लिंग। तिर्य्य ३। ६५ = १	कषाय। तिर्य्य १ लि ३ क ४। ६५ = २
मनुष्यगति ५६ = १/२	लिंग। मनुष्य ३। ६५ = १	कषाय। मनुष्य १ लि ३ क ४। ६५ = २
देवगति ६५ = १/२	लिंग। देवगति २। ६५ = १	कषाय। देवगति १ लि २ क ४। ६५ = २
मिलित्वा ६५ = १४/२।	मिलित्वा ६५ = १। ९ लिंग	मिलित्वा कषाय ६५ = २।३६। लब्ध ६५ = ७२

जैसे मिथ्यादृष्टिमें भंग और रचनाका विधान किया उसी प्रकार सासादन आदिमें भी [illegible] सासादनमें मिथ्यात्व नामक प्रत्येकपद नहीं है। तथा भव्य-अभव्य पिण्डपद कहा था। किन्तु सासादनमें अभव्यत्वका अभाव होनेसे भव्यत्वको भी प्रत्येकपदमें ले लेना। इस तरह प्रत्येकपद पन्द्रह और पिण्डपद चार रहे। पूर्वोक्त प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इल्लि प्रत्येकपदंगळ भंगसंकलनमं तंदोडे इट्टपदे रूऊणे इष्टपदं पविनैदनेय भव्यत्वपदं १५। रूपोनमादोडे। १४। दुगसंवग्गम्मि आ रूपोनपदमं विरळिसि द्विकसंवर्ग्गं माडुत्तिरलु पण्णट्ठियचतुर्त्थांशमक्कुं ६५ = १/४ होइ इट्ठधणं अवल्लिय इष्टधनमक्कुं। असरिच्छाणंतधणं आ असदृश पदंगळ प्रत्येकपदंगळ अवसानधनं ६५ = १/४ दुगुणेगूणे द्विगुणिसि रूपं कळेदोडिदु ६५ = १/४। २। ऋ १°। सगिट्ठधणं स्वकेष्टधनमक्कुं। ६५ = १/२। भ १°। ई राशिगळगे संकलना निमित्तवागि संदृष्टि

प्रत्येक धन ६५ = २ १°
गतिगळ ६५ = २
लिंग धन ६५ = ९
कषाय धन ६५ = ७२
लेश्या धन ६५ = ८१६

कूडि सर्व्वंमुं ६५ = १७९९/२। ऋ १° ॥

नरकलिंग १ क ४। ले ३। ६५ = २। २
तिर्य्यं। लिंग ३ क ४। ले ६। ६५ = २। २
← मनुष्य। लिंग ३ क ४। ले ६। ६५ = २। २
देवगति। लिंग २ क ४। ले ६। ६५ = २। २
मिलित्वा कषाय ६५ = २। २। २०४। लब्ध ६५ = ८१६

कुमति १, कुश्रुत २, विभंग ४, चक्षु ८, अचक्षु १६, दान ३२, लाभ ६४, भोग १२८, उपभोग २५६, वीर्य ५१२, अज्ञान १०२४, असंयम २०४८, असिद्धत्व ४०९६, जीवत्व ८१९२, भव्यत्व १६३२४ इस प्रकार इनके दूने-दूने भंग होते हैं।

इस प्रकार भव्यत्वके भंग पण्णट्ठीके चतुर्थ भाग हुए। उनको दूना करनेपर आधी पण्णट्ठी प्रमाण एक गतिके भंग होते हैं। उनको चौगुना करनेपर चारों गतिके भंग दो पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। एक गतिके भंग दूना करनेपर एक पण्णट्ठी प्रमाण भंग एक लिंगके होते हैं। उन्हें नरकगतिमें एकसे, तिर्यंचमें तीनसे, मनुष्यमें तीनसे और देवगतिमें दो लिंगोंसे गुणा करनेपर सब मिलकर नौ पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। एक लिंगके भंगसे दूने एक कषायके भंग पण्णट्ठीसे दूने होते हैं। उनको नरकमें एक वेदसहित चार कषायसे, तिर्यंचमें तीन वेदसहित चार कषायसे, मनुष्यमें भी तीन वेदसहित चार कषायसे, देवगतिमें दो वेदसहित चार कषायसे गुणा करनेपर सब मिलकर पण्णट्ठीसे दूनेको छत्तीससे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतने भंग होते हैं। एक कषायके भंगोंसे दूने एक लेश्याके भंग चार पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको नरकगतिमें एक लिंग चार कषाय तीन लेश्यासे, तिर्यंचमें तीन वेद चार कषाय छह लेश्यासे, मनुष्यमें भी तीन वेद चार कषाय छह लेश्यासे और देवमें दो वेद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं मिश्रगुणस्थानदोळ् सर्व्वपदभंगंगळ् तरल्पडुगुमदें तें दोडे मिश्रनोळ् मतिश्रुतावधिज्ञानंगळ् मिश्रंगळप्पुवु । चक्षुरचक्षुरवधिमिश्रदर्शनंगळ् दानलाभभोगोपभोगवीर्य्यभावंगळ्मज्ञानमसंयममसिद्धत्वमुं जीवत्वमुं भव्यत्वमुमें वितु पदिनारुं प्रत्येकपदंगळप्पुवु । मेले पिंडपदंगळ् गतिलिंगकषायलेश्येगळ् नाल्कु पदंगळप्पुवंतिप्पत्तु पदंगळ् द्विगुणभंगक्रमंगळप्पुवु । संदृष्टि मिश्रंगे म १ । श्रु २ । मिश्रावधि ४ । चक्षु ८ । अचक्षु १६ । अव ३२ । दा ६४ । ला १२८ । भो २५६ । उ ५१२ । वी १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी १६३८४ । भ ६५=१ ।
२

नरक गति ६५ =	नरक गति लिंग । १।६५ = २	नरक गति लिंग । १ । क ४ । ६५=२।२।
तिर्य्यग्गति ६५ =	तिर्य्यग्गति लिंग । ३।६५ = २	तिर्य्यग्गति लिंग । ३ । क ४ । ६५=२।२।
मनुष्यगति ६५ =	मनुष्यगति लिंग । ३।६५ = २	मनुष्यगति लिंग । ३ । क ४ । ६५=२।२।
देवगति ६५ =	देवगति लिंग । २ । ६५ = २	देवगति लिंग । २ । क ४ । ६५ = २। २।
कूडि ६५ = ४	कूडि लिंग । ९ । ६५ = २	कूडि ६५ = २ । २ । ३६ ।

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = १७९९ऋ १ ।
२

मिश्रे मिश्रमतिश्रुतावधिज्ञानदर्शनानि दानादयः पंचाज्ञानासंयमासिद्धत्वजीवत्वभव्यत्वानि प्रत्येकपदानि गतिलिंगकषायलेश्याः पिंडपदानि । एषां भंगसंदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ । ४ च ८ । अच १६ । अ ३२ । दा ६४ । ला १२८ । भो २५६ । उ ५१२ । वी १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी १६३८४ । भ ६५ = १ ।
२

चार कषाय छह लेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर ४×२०४=८१६ आठ सौ सोलह पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं । इस प्रकार प्रत्येक पद और पिण्डपदों के मिलकर सासादनमें पण्णट्ठीको सत्रहसे निन्यानबेके आधेमें गुणा करके उसमें एक घटानेपर सर्वपद भंग होते हैं ।

मिश्रगुणस्थानमें प्रत्येकपद मिश्ररूप मति १, श्रुत २, अवधि ४, चक्षु ८, अचक्षु १६, अवधिदर्शन ३२, दान ६४, लाभ १२८, भोग २५६, उपभोग ६१२, वीर्य १०२४, अज्ञान २०४८, असंयम ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, जीवत्व १६३८४ और भव्यत्व ३२७६८ इस प्रकार दूने-दूने भंग होते हैं । पिण्डपद गति, लिंग, कषाय, लेश्या हैं । सो भव्यत्वके भंग पण्णट्ठीसे आधे होते हैं । उनको दूना करनेपर एक गतिके भंग होते हैं । अतः नरक तिर्यंच मनुष्य

१. इतोऽग्रे अत्र प्रत्येकपदसंकलनधनमिदं ६५ = १ ऋ १ एषां राशीनां संकलनार्थं संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं ६५ = १	
गतिधनं ६५ = ४	
लिंगधनं ६५ = १८	
कषायधनं ६५ = १४४	इयान् पाठोऽधिकः ।
लेश्याधनं ६५ = १४४०	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नरकगति लिंग । १ । क ४	ले ३ । ६५ = २ । २ । २
तिर्य्यग्गति लिंग । ३ । क ४	ले ६ । ६५ = २ । २ । २
मनुष्यगति लिंग । ३ । क ४	ले ६ । ६५ = २ । २ । २
देवगति लिंग । २ । क ४	ले ३ । ६५ = २ । २ । २
कूडि ६५ = ८ । १८०	

इल्लि प्रत्येकपदसंकलनधनं तरल्पडुगुमदेंतेंदोडे इट्ठपदे रूऊणे इष्टपदं पदिनारनेय भंग्यत्वमक्कुं १६ । रूपोनमादोडे १५ । दुगसंवग्गम्हिआ रूपोनपदमं विरळिसि रूपं प्रति द्विकमनित्तु संवर्गं माडिदोडे लब्धं पण्णट्ठियर्द्धमक्कु । ६५ = १/२ । अदु होदि अंतधणं अंतधनमक्कुं । असरिच्छानंतधणं आ असदृशपदंगळ प्रत्येक पदंगळ अवसानधनमं दुगुणेगुणे द्विगुणिसि एकरूपं कळेयुत्तिरलु सगिट्ठधणं स्वकेष्टधनमक्कुं । ६५ = १/२ । २ ऋ १̊ । अपर्वातितं । ६५ = १ । ऋ १̊ ।

ई राशिगळगे संकलन निमित्तमागि संदृष्टि :—

प्रत्येक धन ६५ = १
गति धन ६५ = ४
लिंग धन ६५ = १८
कषाय धन ६५ = १४४
लेश्या धन ६५ = १४४०

कूडि मिश्रंगे सर्व्वपद भंगंगळु ६५ = १६०७ ॥

नरकगति । ६५ = १	नरकलिंग १ । ६५ = २	नरकलिंग १ । क ४ । ६५ = २ । २
तिर्यग्गति । ६५ = १	तिर्य्यलिंग ३ । ६५ = २	तिर्य्यलिंग ३ । क ४ । ६५ = २ । २
मनुष्यगति । ६५ = १	मनुष्यलिंग ३ । ६५ = २	मनुष्यलिंग ३ । क ४ । ६५ = २ । २
देवगति । ६५ = १	देवगलिंग २ । ६५ = २	देवगलिंग २ । क ४ । ६५ = २ । २
मिलित्वा । ६५ = ४	मिलित्वा ६५ = २ । ९	मिलित्वा ६५ = २ । २ । ३६

नरकलिंग १ । क ४ । ले ३ । ६५ = २ । २ । २
तिर्य्यलिंग ३ । क ४ । ले ६ । ६५ = २ । २ । २
मनुष्यलिंग ३ । क ४ । ले ६ । ६५ = २ । २ । २
देवगलिंग २ । क ४ । ले ३ । ६५ = २ । २ । २
मिलित्वा ६५ = ८ । १८०

देवगतिके मिलकर चार पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक गतिके भंगसे दूने एक लिंगके भंग होते हैं। उनको नरकमें एक, तिर्यंचमें तीन, मनुष्यमें तीन, देवमें दो लिंगोंसे गुणा करनेपर सब मिलकर अठारह पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। एक लिंगके भंगोंसे दूने एक कषायके भंग चार पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको नरकमें एक वेद सहित चार कषायसे, तिर्यंचमें तीन वेद सहित चार कषायसे, मनुष्यमें तीन वेद सहित चार कषायसे और देवगतिमें दो वेद सहित चार कषायसे गुणा करनेपर सब मिलकर ४ × ३६ = १४४ एक सौ चौवालीस पण्णट्ठी प्रमाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमसंयतंगे सर्व्वपदभंगंगळु पेळल्पडुगुमदेंते दोडे असंयतंगे प्रत्येकपदंगळु मतिश्रुतावधिचक्षुरचक्षुरवधिदर्शनदानादिपंचकमज्ञानासंयमासिद्धत्वजीवत्वभव्यत्वमें बितु पदिनारुमसदृशपदंगळप्पुवु। गतिलिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वमें ब पंचपदंगळु सदृशपदंगळप्पुवंतु एकविंशति पदंगळु द्विगुणद्विगुण क्रमंगळप्पुवु। संदृष्टिः—मति १। श्रु २। अ ४। च ८। अ १६। अ ३२। दा ६४। ला १२८। भो २५६। उ ५१२। वी १०२४। अ २०४८। अ ४०९६। अ ८१९२। जी ६५ = १। भ ६५ = १॥
४ २

नरकगति ६५ =	नरक लिंग १। ६५ = २	नरक लिंग १। क ४। ६५ = २।२
तिर्य्यंग्गति ६५ =	तिर्य्यंगलिंग ३। ६५ = २	तिर्य्य लिंग ३। क ४। ६५ = २।२
मनुष्यगति ६५ =	मनुष्य लिंग ३। ६५ = २	मनुष्य लिंग ३। क ४। ६५ = २।२ →
देवगति ६५ =	देव लिंग २। ६५ = २	देव लिंग। २। क ४। ६५ = २।२
कूडि ६५ = ४	कूडि ६५ = २।९	कूडि ६५ = ४। ३६

नरक लिंग २। क ४। ले ३। ६५ = ८	सम्यक्त्व उपश = ६५ = १६। १८०
तिरि लिंग ३। क ४। ले ६। ६५ = ८	वेदक ६५ = १६। १८०
← मनु लिंग ३। क ४। ले ६। ६५ = ८	क्षायि=नर लि १। क ४। ले। क १। ६५ = १६
देव लिंग। २। क ४। ले ३। ६५ = ८	तिरि लि क ४। ले ४। ६५ = १६
कूडि ६५ = ८। १८०	मनु लिंग ३। क ४। ले ६। ६५ = १६
	देव लिंग १। क ४। ले ३। ६५ = १६

मिलित्वा सर्वधनं ६५ = १६०७।

असंयते प्रत्येकपदान्युक्तान्येव षोडश, पिंडपदानि सम्यक्त्वेन समं पंच। संदृष्टिः—म १। श्रु २। अ ४। च ८। अ १६। अ ३२। दा ६४। ला १२८। भो २५६। उ ५१२। वी १०२४। अ २०४८।

भंग होते हैं। एक कषायके भंगोंसे दूने एक लेश्याके भंग आठ पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको नरकमें एक वेद चार कषाय सहित तीन लेश्यासे, तिर्यंचमें तीन वेद चार कषाय सहित छह लेश्यासे, मनुष्यमें भी तीन वेद चार कषाय सहित छह लेश्यासे, देवमें दो वेद चार कषाय सहित छह लेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर ८×१८० = १४४० चौदह सौ चालीस पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। इस प्रकार मिश्रमें प्रत्येकपद और पिण्डपद मिलकर पण्णट्ठीको सोलहसे सातसे गुणा करके उसमें-से एक घटानेपर जो प्रमाण हो उतने सर्वपद भंग होते हैं।

असंयतमें प्रत्येक पद सोलह—मति १, श्रुत २, अवधि ४, चक्षु ८, अचक्षु १६, अवधि ३२, दान ६४, लाभ १२८, भोग २५६, उपभोग ५१२, वीर्य १०२४, अज्ञान २०४८, असंयम ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, जीवत्व १६३८४, भव्यत्व ३२७६८ हैं। उनमें दूने-दूने भंग होते हैं। पिण्डपद चार पूर्वोक्त और एक सम्यक्त्व ये पाँच हैं। भव्यत्वमें आधी पण्णट्ठी प्रमाण भंग हुए। उनसे दूने एक पण्णट्ठी प्रमाण एक गतिके भंग होते हैं। प्रत्येक गतिके मिलानेपर चार पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। एक गतिके भंगोंसे दूने एक लिंगके भंग दो पण्णट्ठी हुए। उन्हें नरकमें एक लिंग, तिर्यंचमें तीन लिंग, मनुष्यमें तीन लिंग, देवमें दो लिंगसे गुणा करनेपर सब मिलकर अठारह पण्णट्ठी हुए। एक लिंगके भंगोंसे दूने एक कषायके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूडि क्षायिक ६५ = १६ । १०४ ॥ इल्लि असदृशपदसंकलनं पेळल्पडुगुं । इट्ठपदे रूऊणे इष्टं विवक्षितं पदं पदिनारनेय भव्यत्वपदमक्कु । १६ । रूपोनमादोडिदु १५ । इदं दुव संवग्गम्मि विरलिसि रूपं प्रति द्विकमनित्तु संवर्ग्गवं माडिद लब्धमदु पण्णट्ठिय अर्द्धपदमक्कुमदु ६५ = १/२ । होइ इट्ठधणं इष्टधनमक्कुमा असरिच्छाणंतधणं आ असदृशपदंगळ अंतधनमं दुगुणेगूणे द्विगुणिसि रूपोनमं माडिदोडे ६५ = १/२ । ऋ १̊ । सगिट्ठधणं स्वकेष्टधनमक्कुं । ६५ = १ । ऋ १ । ई राशिगळ्गे संदृष्टि

प्रत्येक धन	६५ =	१
गतिधन	६५ =	४
लिंगधन	६५ =	१८
कषाय धन	६५ =	१४४
लेश्या धन	६५ =	१४४०
उप=वेद=ध	६५ =	५७६०
क्षायि धन	६५ =	१६६४

कूडि असंयतंगे सर्व्वपदभंग ६५ = ७३६७ । ऋ १̊ क्षा =

अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी ६५ = १/४ म ६५ = १/२ ।[1]

नर = गति	६५ = १	नर = लिंग	१ । ६५ = २	नर = लि	१ । क ४ । ६५ = २ । २
तिरि = गति	६५ = १	तिरि = लि	३ । ६५ = २	तिरि = लि	३ । क ४ । ६५ = २ । २
मनुष्यगति	६५ = १	मनु = लि	३ । ६५ = २	मनु = लि	३ । क ४ । ६५ = २ । २
देवगति	६५ = १	देव = लि	२ । ६५ = २	देव = लि	२ । क ४ । ६५ = २ । २
मिलित्वा	६५ = ४	मिलित्वा	६५ । २ । ९	मिलित्वा	६५ = ४ । ३६

→

भंग चार पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको नरकमें एक लिंग सहित चार कषायसे, तिर्यंचमें तीन लिंग सहित चार कषायसे, मनुष्यमें तीन लिंग सहित चार कषायसे, देवमें दो लिंग सहित चार कषायसे गुणा करनेपर सब मिलकर ४×३६ = १४४ एक सौ चौवालीस पण्णट्ठी भंग होते हैं। कषायके भंगसे दूने लेश्याके भंग आठ पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको नरकमें एक लिंग चार कषाय सहित तीन अशुभ लेश्यासे, तिर्यंचमें तीन लिंग चार कषाय सहित छह लेश्यासे, मनुष्यमें तीन लिंग चार कषाय सहित छह लेश्यासे, देवमें दो लिंग चार

१. संदृष्टेरग्रे अत्रासदृशपदसंकलनमिदं ६५ = १ ऋ १̊ । एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं	६५ = १
गतिधनं	६५ = ४
लिंगधनं	६५ = १८
कषायधनं	६५ = १४४
लेश्याधनं	६५ = १४४०
उप = वेदधनं	६५ = ५७६
क्षायिकधनं	६५ = १६६४

इयान् पाठोऽधिकः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५ = १६६४। देशसंयतंगे सर्व्वपदभंगं तरल्पडुगुमदें तें दोडे—देशसंयतंगे असदृशपदंगळु मतिश्रुतावधिज्ञानचक्षुरचक्षुरवधिदर्शनदानादिपंचकमज्ञानदेशसंयममसिद्धत्वमं जीवत्वभव्यत्वमें दिवु पादिनारु पदंगळप्पुवु। सदृशपदंगळु गतिलिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वभेददिदमप्पुवंतु एकविंशतिपदंगळ द्विगुणद्विगुणक्रमदिदं भंगंगळप्पुवु। संदृष्टि। म १। श्रु २। अ ४। च ८। अ १६। अ ३२। दा ६४। लाभ १२८। भोग २५६। उप ५१२। वी १०२४। अ २०४८। दे ४०९६। अ ८१९२। जी १६३८४ भ ६५ = १ ॥—
२

नर = लिं १ क ४ ले। ३। ६५ = ८	सम्यक्त्व उपश　　६५ = १६। १८०
तिर्य्य = लिं ३ क ४। ले ६। ६५ = ८	वेदक ६५ = १६। १८०
← मनु = लिं ३ क ४। ले ६। ६५ = ८	क्षानर = लिं १ क ४ ले। १। ६५ = १६
देव = लिं २ क ४। ले ३। ६५ = ८	तिरि = लिं १ क ४ ले ४। ६५ = १६
मिलित्वा　　६५ = ८। १८०	मनु = लिं ३। क ४। ले ६। ६५ = १६
	देव = लिं १। क ४। ले ३। ६५ = १६
	मिलित्वा क्षायिक। ६५ = १६। १०४

०
मिलित्वा सर्वधनं ६५ = ७३६७ ऋ १। क्षायिक ६५ = १६६४।

देशसंयते पदानि तान्येवैकविंशतिः (?) किन्तु असंयमस्थाने देशसंयमः, न देवनरकगती। संदृष्टिः—म १। श्रु २। अ ४। च ८। अ १६। अ ३२। दा ६४। ला १२८। भो २५६। उ ५१२। वी १०२४।

कषाय सहित तीन शुभलेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर ८×१८०=चौदह सौ चालीस पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक लेश्याके भंगोंसे दूने एक सम्यक्त्वके भंग सोलह पण्णट्ठी होते हैं। उनको नरकमें एक लिंग चार कषाय तीन लेश्यासे, तिर्यंचमें तीन लिंग चार कषाय छह लेश्यासे, मनुष्यमें भी तीन लिंग, चार कषाय छह लेश्यासे और देवमें दो लिंग चार कषाय तीन लेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर १६×१८०=२८८० अट्ठाईस सौ अस्सी पण्णट्ठी प्रमाण भंग उपशम सम्यक्त्वके, इतने ही भंग वेदक सम्यक्त्वके होते हैं। क्षायिक सम्यक्त्वका कथन भिन्न है। सो एक लेश्याके भंगोंसे दूने सोलह पण्णट्ठी प्रमाण भंग क्षायिक सम्यक्त्वके हैं। इनको नरकमें एक लिंग चार कषाय एक लेश्यासे, तिर्यंचमें एक लिंग चार कषाय चार लेश्यासे, मनुष्यमें तीन लिंग चार कषाय छह लेश्यासे, देवमें एक लिंग चार कषाय तीन लेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर १६×१०४=१६६४ सोलह सौ चौंसठ पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। इस प्रकार असंयतमें प्रत्येक पद और पिण्डपदोंके भंगोंको जोड़नेपर पण्णट्ठीको तिहत्तर सौ अड़सठसे गुणा करके उसमें एक घटानेपर सर्वपद भंग होते हैं।

देशसंयतमें असंयमके स्थानपर देशसंयम रखना। तथा देवगति और नरकगति नहीं होतीं। सो प्रत्येक पद सोलह—मति १, श्रुत २, अवधि ४, चक्षु ८, अचक्षु १६, अवधि ३२, दान ६४, लाभ १२८, भोग २५६, उपभोग ५१२, वीर्य १०२४, अज्ञान २०४८, देशसंयम ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, जीवत्व १६३८४, भव्यत्व ३२७६८ हैं। भंग दूने-दूने होते हैं। भव्यत्वके भंग आधी पण्णट्ठी प्रमाण हैं। उनसे दूने एक पण्णट्ठी प्रमाण भंग एक गतिके हैं।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तिरि = गति । ६५ =	तिरि लि ३ । ६५ = २	तिरि लि ३ । क ४ । ६५ = २ । २	→
मनुगति ६५ =	मनु लि ३ । ६५ = २	मनु लि ३ । क ४ । ६५ = २ । २	
कूडि ६५ = २	कूडि ६५ = २ । ६	कूडि ६५ = ४ । २४	

←	तिरि = लि ३ । क ४ । ले ३ । ६५ = २।२।२	उपश ६५ = १६ । ७२
	मनु लि ३ । क ४ । ले ३ । ६५ = २।२।२	वेदक ६५ = १६ । ७२
	कूडि ६५ = ८ । ७२	क्षायि=मनु=लि ३ । क ४ । ले ३ । ६५=१६।३६
		कूडि ६५ = १६।१४४ । क्षा ६५ = ५७६

इंती प्रत्येकगतिलिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वभंगराशिगळगे संदृष्टि :—

प्रत्येकधन	६५ =	१
गतिधन	६५ =	२
लिंगधन	६५ =	१२
कषायधन	६५ =	९६
लेश्याधन	६५ =	५७६
सम्यक्त्वधन	६५ =	२३०४
क्षायि धन	६५ =	५७६

यितु कूडि देशसंयतंगे सर्व्वपदभंगंगळु ६५ = २९९१ । ऋ १ ।

अ २०४८ । दे ४०९६ । अ ८१९२ । जी १६३८४ । भ ६५ = १[1]
२

तिरगति ६५ = १	तिरि लि ३ । ६५ = २	ति लि ३ क ४ । ६५ = २ । २	→
मनुगति ६५ = १	म लि ३ । ६५ = २	मनु लि ३ क ४ । ६५ = २ । २	
मिलित्वा ६५ = २	मिलित्वा ६५ = २।६	मिलित्वा ६५ = २ । २ । २४	

उनको तिर्यंच और मनुष्यगतिसे गुणा करनेपर दो पण्णट्ठी भंग हुए। एक गतिसे दूने एक लिंगके भंग दो पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनको तिर्यंचगतिमें तीन लिंग और मनुष्यगतिमें तीन लिंगसे गुणा करनेपर बारह पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक लिंगके भंगोंसे दूने एक कषायके भंग चार पण्णट्ठी होते हैं। उनको तिर्यंचगतिमें तीन लिंग सहित चार कषाय और मनुष्यगतिमें तीन लिंग सहित चार कषायसे गुणा करनेपर मिलाकर ४×२४=९६ छियानबे पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक कषायके भंगोंसे दूने एक लेश्याके भंग आठ पण्णट्ठी होते हैं। उनको तिर्यंचमें तीन लिंग चार कषाय तीन लेश्या और मनुष्यमें तीन लिंग चार कषाय

१. संदृष्टेरग्रे—प्रत्येकपिंडपदभंगराशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकघनं	६५ = १
गतिघनं	६५ = २
लिंगघनं	६५ = १२
कषायघनं	६५ = ९६
लेश्या	६५ = ५७६
सम्य	६५ = २९९१
क्षायि	६५ = ५७६

ख्या ६५५७६ ॥ प्रमत्तसंयतंगे सर्व्वपदभंगं पेळल्पडुगुं। प्रमत्तंगे प्रत्येकपदंगळु मतिज्ञानादि मनुष्यगतिपर्य्यंतं पदिनेंटुं पदंगळप्पुवु। सदृशपदंगळु लिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वभेददिदं नाल्कप्पुवंतु द्वाविंशतिपदंगळु द्विगुणद्विगुणक्रमदिदमप्पुवु। संदृष्टि—म १। श्रु २। अ ४। म ८। च १६। अ ३२। अ ६४। दा १२८। ला २५६। भो ५१२। उ १०२४। वी २०४८। अ ४०९६। अ ८१९२। सकलसंय १६३८४। जो ६५ = १। भ ६५ = म गलि ६५ = २। पिंडपदं :
२

तिलि ३। क ४। ले ३। ६५ = २। २। २।	उ ६५ = १६।७२
← म लि ३। क ४। ले ३। ६५ = २। २। २	वे ६५ = १६।७२
मिलित्वा। ६५ = ८। ७२	क्षा मनुलि ३। क ४। ले ३। ६५ = १६। ३६
	मिलित्वा। उ। वे। ६५ = १६। १४४
	क्षा ३५ = ५७६

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = २९९१ ऋ १। क्षा ६५ = ५७६।

प्रमत्ते प्रत्येकपदानि मनुष्यगत्यंतान्यष्टादश सदृशपदानि लिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वानि संदृष्टिः—म १। श्रु २। अ ४। म ८। च १६। अ ३२। अ ६४। दा १२८। ला २५६। भो ५१२। उ १०२४। वी २०४८। अ ४०९६। अ ८१९२। सकलसंयम १६३८४। जो—६५ = १ भ ६५ = १। म गति
२

सहित तीन लेश्यासे गुणा करनेपर सब मिलकर ८×७२ = ५७६ पाँच सौ छिहत्तर पण्णट्ठी भंग हुए। एक लेश्याके भंगसे दूने एक सम्यक्त्वके भंग सोलह पण्णट्ठी होते हैं। उनको तिर्यंचमें तीन लिंग चार कषाय छह लेश्या और मनुष्यमें तीन लिंग चार कषाय छह लेश्यासे गुणा करनेपर १६×७२=११५२ ग्यारह सौ बावन पण्णट्ठी भंग होते हैं। इतने भंग उपशम सम्यक्त्वके और इतने ही वेदक सम्यक्त्वके जानना। क्षायिक सम्यक्त्वमें मनुष्यगतिमें तीन लिंग चार कषाय तीन लेश्यासे सोलह पण्णट्ठीको गुणा करनेपर १६×३६ = ५७६ पाँच सौ छिहत्तर पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। इस प्रकार देशसंयतमें सब मिलकर उनतीस सौ इक्यानबे गुणित पण्णट्ठीमें एक कम और क्षायिक सम्यक्त्वकी अपेक्षा पाँच सौ छिहत्तर पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं।

प्रमत्तमें मनःपर्ययज्ञान प्रत्येकपद बढ़ जाता है। तथा देशसंयम की जगह सरागसंयम हो जाता है। तथा दूसरी गति न होनेसे मनुष्यगति भी प्रत्येकपद हो जाता है। इस प्रकार प्रत्येकपद अठारह हुए—मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, सकलसंयम १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व पण्णट्ठी ६५= मनुष्य गति दो पण्णट्ठी, इस तरह दूने-दूने भंग होते हैं। पिण्डपद चार हैं—लिंग, कषाय, लेश्या, सम्यक्त्व। अन्तिम प्रत्येक पद मनुष्यगतिके भंग दो पण्णट्ठी प्रमाण हैं। उनसे दूने एक लिंगके भंग चार पण्णट्ठी हुए। उनको तीन लिंगसे गुणा करनेपर बारह पण्णट्ठी हुए। एक लिंगके भंगोंसे दूने एक कषायके भंग आठ पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन वेद सहित चार कषायसे गुणा करनेपर छियानबे पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं। एक कषायके भंगोंसे दूने एक लेश्याके भंग सोलह पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन लिंग चार कषाय सहित तीन लेश्यासे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनु लिंग ३।६५ = २।२	मनु लिंग ३ । क ४। ६५ = २।२।२
कूडि लब्ध । ६५ = १२	कूडि लब्ध ६५ = ९६

→

←

मनु लिंग ३ । क ४ । ले ३ । ६५ = २।२। २ । २	सम्यक्त्व ३ । ले ३६ । ६५ = ३२
कूडि लब्ध लेश्या धन ६५ = ५७६	गुणित लब्ध ६५ = ३४५६

ई राशिगळ्गे[1] संदृष्टि :

प्रत्येकधन	६५ =	४
लिंग धन	६५ =	१२
कषाय धन	६५ =	९६
लेश्या धन	६५ =	५७६
सम्यक्त्वधन	६५ =	३४५६

यितु प्रमत्तसंयतन सर्व्वपदभंग ६५ = ४१४४ । अप्रमत्तंगमिते ६५ = ४१४४ ॥

---

० २

६५ = २ ऋ १ ।[1]

म लि ३ । ६५ = २ । २	म । लि ३ । क ४ । ६५ = २ । २ । २
मिलित्वा लब्ध । ६५ = १२	मिलित्वा लब्ध ६५ = ९६

→

←

म । लि ३ । क ४ । ले ३ । ६५ = २।२।२।२	सम्य ३ । ले ३६ । ६५ = ३२
मिलित्वा लब्धलेश्याधनं ६५ = ५७६	गुणितलब्ध ६५ = ३४५६

० ०

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = ४१४४ ऋ १ । तथा अप्रमत्तेऽपि ६५ = ४१४४ ऋ १ ।

गुणा करनेपर १६ × ३६ = ५७६ पाँच सौ छिहत्तर पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक लेश्याके भंगोंसे दूने भंग एक सम्यक्त्वके बत्तीस पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन वेद चार कषाय तीन लेश्या सहित तीन सम्यक्त्वसे गुणा करनेपर ३२ × १०८ = ३४५६ चौंतीस सौ छप्पन पण्णट्ठी भंग होते हैं। सब मिलकर प्रमत्तमें एक कम इकतालीस सौ चौवालीस पण्णट्ठी प्रमाण सर्वपद भंग होते हैं।

अप्रमत्तमें भी प्रमत्तकी तरह ही एक कम इकतालीस सौ चौवालीस पण्णट्ठी भंग होते हैं।

---

१. इतः परं —एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं ६५ = ४	
लिंगधनं ६५ = १२	
कषायधनं ६५ = ९६	
लेश्याधनं ६५ = ५७६	इयान् पाठोऽधिकः ।
सम्यक्त्वधनं ६५ = ३४५६	

क–१५४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमुपशमापूर्व्वकरणंगे पेळल्पडुगु । :— उपशमकापूर्व्वकरणंग असदृशपदंगळ् शुक्ल-लेश्यापर्य्यंतं एकान्नविंशतिपदंगळप्पुवु । सदृशपदंगळ् लिंगकषायसम्यक्त्वभेददिदं पदत्रितय-मक्कुं मंतु द्वाविंशतिपदंगळ् द्विगुणद्विगुणक्रमदिदं नडेववु । संदृष्टि :—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ । भ ६५ = १ । म गति ६५ = २ । क शुक्ललेश्या ६५=२२ ।

मनुष्यगति लिंग ३ । ६५ = ८ लब्ध ६५ = २४	मनुष्यगति लिंग ३ । क ४ लब्ध ६५ = १९२	६५ = १६ ६५ = १९२ →

← उप—क्षा = २६५ = ३२१२ लब्ध ६५ = ७६८

यिल्ली प्रत्येक संकलन	६५ =	८
लिंग धन	६५ =	२४
कषाय धन	६५ =	१९२
सम्यक्त्व धन	६५ =	७६८

उपशमकेष्वपूर्वकरण असदृशपदानि शुक्ललेश्यांतान्येकान्नविंशतिः । सदृशपदानि लिंगकषाय-सम्यक्त्वानि । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १

म गति ६५ = २ । शु ले ६५ = २ । २ ।

मनुष्यगतिलिंग ३।६५ = ८ लब्ध ६५ = २४	मनुलिंग ३ । क ४ । ६५ = १६ लब्ध ६५ = १९२	उप = क्षायिक २-६५ = ३२।१२ लब्ध ६५ = ७६८

अत्र प्रत्येकसंकलनं ६५ = ८ लिंगधनं ६५ = २४ कषायधनं ६५ = १९२ सम्यक्त्वधनं ६५ = ७६८

उपशमश्रेणीमें अपूर्वकरणमें अन्य लेश्या न होनेसे शुक्ल लेश्या भी प्रत्येक पद है। वहाँ मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, औपशमिक चारित्र १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व पण्णट्ठी ६५=, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, ये प्रत्येक पद हैं उनके दूने-दूने भंग हैं। पिण्डपद लिंग, कषाय, सम्यक्त्व तीन हैं। अन्तिम प्रत्येक पद शुक्ललेश्याके भंग चार पण्णट्ठी प्रमाण होते हैं। उनसे दूने एक लिंगके पद आठ पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन लिंगसे गुणा करनेपर चौबीस पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक लिंगके भंगसे दूने एक कषायके भंग सोलह पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन लिंग सहित चार कषायसे गुणा करनेपर १६ × १२=१९२ एक सौ बानवे पण्णट्ठी भंग होते हैं। एक कषायके भंगसे दूने एक सम्यक्त्वके भंग बत्तीस पण्णट्ठी होते हैं। उनको तीन लिंग चार कषाय सहित दो सम्यक्त्वसे गुणा करनेपर ३२ × २४ = ७६८ सात सौ अड़सठ पण्णट्ठी भंग होते हैं। सब मिलकर अपूर्वकरणमें नौ सौ बानबे पण्णट्ठीमें-से एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यितुपशमापूर्व्वकरणन सर्व्वपद भंग ६५=९९२ ॥ ऋ $\overset{०}{१}$ । इन्तिगे सवेदानिवृत्तिकरणंगं भंगंगळप्पुवु । ६५ = ९९२ । ऋ $\overset{०}{१}$ । कषायानिवृत्तिकरणंगे म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = $\frac{१}{२}$ । भ ६५ = मनु = गति ६५ = २ । शुक्ललेश्या ६५ = २ । २ ।

मनुलिंग ३ । क ४।६५ = ८	उपशम ६५ = १६।४	इल्लि प्रत्येक पद संकलन धन ६५=८ ऋ $\overset{०}{१}$
कूडि ६५ = ३२	क्षायिक ६५ = १६।४	कषाय धन ६५ = ३२
यिल्लि प्रत्येक पद धन ६५=१६	लब्ध ६५ = १६।१२८	सम्यक्त्व ६५ = १२८
सम्यक्त्व घन ६५ = ३२		

यितु कूडि कषायानिवृत्तिकरणन सर्व्वपदभंग ६५ = १६८ ॥ सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे सर्व्वपदभंगंगळु पेळल्पडुगुमल्लि प्रत्येक पदंगळु इप्पत्तु । सम्यक्त्वमोंदे सदृशपदमक्कुमंतु एकविंशति-

---

मिलित्वा सर्वपदभंगाः—६५ = ९९२ ऋ $\overset{०}{१}$ । तथा सवेदावृत्तिकरणस्यापि ६५ = ९९२ ऋ $\overset{०}{१}$ । कषायनिवृत्तिकरणस्य म १ श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । मो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = $\frac{१}{२}$ । भ ६५ = १ । मनुष्यगति ६५ = २ । शुक्ललेश्या ६५ = २ । २ ।

म—लिंग० । क ४ । ६५ = ८ मिलित्वा लब्ध ६५ = ३२	उप—६५ = १६ । ४ क्षा ६५ = १६ । ४ लब्ध ६५ = १२८	अत्र प्रत्येकसंकलनधनं = ८ । ऋ $\overset{०}{१}$ कषायधनं ६५ = ३२ सम्यक्त्वधनं ६५ = १२८

मिलित्वा सर्वपदभंगाः ६५ = १६८ ।

सूक्ष्मसाम्परायस्य प्रत्येकपदानि विंशतिः सदृशपदं सम्यक्त्वं । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ ।

कम भंग प्रत्येकपद और पिण्डपदके होते हैं। वेदसहित अनिवृत्तिकरणमें भी अपूर्वकरणकी तरह एक कम नौ सौ बानवे पण्णट्ठी भंग होते हैं।

वेदरहित अनिवृत्तिकरणमें प्रत्येकपद मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, औपशमिकचारित्र १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी हैं इस प्रकार भंग दूने-दूने हैं। पिण्डपदोंमें-से शुक्ललेश्याके चार पण्णट्ठी प्रमाण भंगोंसे दूने एक कषायके भंग आठ पण्णट्ठी हैं। उनको चार कषायसे गुणा करनेपर बत्तीस पण्णट्ठी प्रमाण भंग हुए। एक कषायके भंगोंसे दूने सम्यक्त्वके भंग सोलह पण्णट्ठी होते हैं। उनको चार कषाय सहित दो सम्यक्त्वोंसे गुणा करनेपर १६×८=१२८ एक सौ अठाईस पण्णट्ठी प्रमाण भंग होते हैं इस प्रकार प्रत्येकपद और पिण्डपदके भंग एक कम एक सौ अड़सठ पण्णट्ठीमें होते हैं।

सूक्ष्मसाम्परायमें प्रत्येक पद मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदंगळु द्विगुणद्विगुणक्रमंगळप्पुवु । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३-८४ । जी ६५=१ । भ ६५=१ । मनु गति ६५=२ । शुक्ललेश्ये ६५=२ । २ । सू लो ६५=२ । २ । २ ।
२

सम्यक्त्व उपशम = ६५ = १६	
क्षायिक	६५ = १६

कूडि सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे सर्व्वपदभंगंगळु इनितप्पुवु ६५=४८ । ऋ १ ॥

उपशांतकषायंगे प्रत्येकपदंगळु कान्नविंशतिप्रमितंगळप्पुवु । सम्यक्त्वपदमों दे पिंडपद—मक्कुमंतु विंशति पदंगळु द्विगुणद्विगुणक्रमंगळप्पुवु । अदक्के संदृष्टि :—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । ४०९६ । अ ८१९२ । संय १६३८४ । जी ६५=१ । भ ६५=१ । म गति ६५=२ । शुक्ललेश्ये
२
६५=४ । सम्यक्त्व २ । ६५=८ । यितुपशांतकषायंगे प्रत्येक पद घन ६५=८ / सम्यक्त्व घन ६५=१६ कूडि सर्व्व-

च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५=१ भ ६५—मनुष्यगति ६५=२ । शुक्ललेश्या ६५=२ । २ ।
२

सूक्ष्मलोभ ६५=२ । २ । २ ।

सम्यक्त्व उपशम	६५=१६	प्रत्येकघनं	६५=१६
क्षायिक	६५=१६	सम्यक्त्वघनं	६५=३२

मिलित्वा सर्वपदघनं ६५=४८ ऋ १ ।

उपशान्तकषाये प्रत्येकपदान्येकान्नविंशतिः । सम्यक्त्वमेव पिंडपदं । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५=१ । भ ६५—१ । म ग ६५=२ शु ले ६५=४ । सम्यक्त्व २ । ६५=८ ।
२

३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, औपशमिकचारित्र १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व ६५= पण्णट्ठी, मनुष्य दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, सूक्ष्मलोभ आठ पण्णट्ठी हैं, इस तरह भंग दूने-दूने होते हैं। पिण्डपदमें सम्यक्त्वके भंग सूक्ष्मलोभके आठ पण्णट्ठीसे दूने होते हैं। उनको उपशम और क्षायिक सम्यक्त्वसे गुणा करनेपर बत्तीस पण्णट्ठी प्रमाण भंग हुए। प्रत्येक पद और पिण्डपदके मिलकर अड़तालीस पण्णट्ठीमें एक कम सर्वपद भंग होते हैं।

उपशान्तकषायमें प्रत्येक पद मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, औपशमिकचारित्र १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी होते हैं। इस प्रकार भंग दूने-दूने होते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पवभंगमुपशांतकषायंगिनितप्पुवु। ६५ = २४ ॥ क्षपकापूर्व्वानिवृत्तिगळगे प्रत्येकपदंगळु क्षायिक-सम्यक्त्वपर्य्यंतमिप्पत्तु लिंगकषायंगळेरडुं पिंडपदंगळप्पुवंतु द्वाविंशतिपदंगळु द्विगुणद्विगुण क्रमंगळप्पुवु। संदृष्टि :—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १ ।
२

भ ६५ = १ । म गति ६५ = २ । शुक्ललेश्ये ६५ = ४ । क्षायिकसम्यक्त्व ६५ = ८ ।

लिंग ३ । ६५ = १६		लिंग ३ । कषाय ४ । ६५ = ३२		यिल्लि प्रत्येक घन	६५ = १६
लब्ध	६५ = ४८	लब्ध	६५ = ३८४	लिंग धन	६५ = ४८
				कषाय धन	६५ = ३८४

प्रत्येकपदधनं	६५ = ८
सम्यक्त्वधनं	६५ = १६

०

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = ४८ ऋ १ ।

क्षपकेऽपूर्वकरणे प्रत्येकपदानि क्षायिकसम्यक्त्वांतानि विंशतिः । लिंगकषायौ पिंडपदे । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १ भ ६५ = १ । म ग २५ = २ । शुक्ल
२

ले ६५ = ४ । क्षा—सम्य—६५ = ८ । ० ०

लिंग ३ । ६५ = १६	लिंग ३ कषाय ४ । ६५ = २३	प्रत्येकधनं ६५ = १६
लब्ध ६५ = ४८	लब्ध ६५ = ३८४	लिंगधनं ६५ = ४८
		कषायधनं ६५ = ३८४

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = ४४८ । ऋ १ । तथा सवेदानिवृत्तिकरणेऽपि—६५ = ४४८ । ऋ १ ।

हैं। पिण्डपदमें शुक्ललेश्याके चार पण्णट्ठी प्रमाण भंगोंसे दूने एक सम्यक्त्वके भंग हैं इतने ही उपशमसम्यक्त्वके और इतने ही क्षायिकसम्यक्त्वके मिलकर सोलह पण्णट्ठी होते हैं। प्रत्येक पद और पिण्डपद मिलकर चौबीस पण्णट्ठीमें एक कम सर्वपद भंग होते हैं।

क्षपकश्रेणीमें अपूर्वकरणमें प्रत्येकपद और उनके भंग मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, क्षायिकचारित्र १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, क्षायिक-सम्यक्त्व आठ पण्णट्ठी हैं। क्षायिक सम्यक्त्वके भंग आठ पण्णट्ठीसे दूने एक लिंगके भंग हैं। उनको तीन लिंगोंसे गुणा करनेपर अड़तालीस पण्णट्ठी भंग हुए। एक लिंगके भंगोंसे दूने एक कषायके भंग बत्तीस पण्णट्ठी हैं। उनको तीन वेदसहित चार कषायोंसे गुणा करनेपर ३२ × १२ = ३८४ तीन सौ चौरासी पण्णट्ठी भंग हुए। सो प्रत्येकपद और पिण्डपदके मिलकर चार सौ अड़तालीस पण्णट्ठीमें एक कम सर्वपद भंग होते हैं। इसी प्रकार वेदसहित अनिवृत्तिकरणमें भी चार सौ अड़तालीस पण्णट्ठीमें एक कम सर्वपद भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूडि क्षपकापूर्व्वकरणंगे सर्व्वपदभंग ६५=४४८ ॥ सवेदानिवृत्तिकरणंगमुमिनिते सर्व्वपद-भंगंगळप्पुवु । ६५=४४८ ॥ कषायानिवृत्तिक्षपकंगे प्रत्येकपदंगळु क्षायिकसम्यक्त्वपर्य्यंत विंशतिपदंगळप्पुवु। कषाय पदमों दे सदृशपदमक्कुमितु एकविंशति पदंगळु द्विगुणद्विगुणक्रमंगळप्पुवु। आ पदंगळ्गे संदृष्टिरचने इदु । म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५=१ । भ ६५=१ । मनु=गति=६५=२ । शुक्ललेश्ये ६५=२ । २ । क्षायिक सम्य६५=८ ।

कषाय ४ । ६५=१६ । इल्लि प्रत्येक घन ६५=१६ । ऋ ०/१	
लब्ध ६५=६४ । कषाय घन	६५=६४

कूडि कषायानिवृत्ति सर्व्वपद-भंगंगळिनितप्पुवु । ६५=८० । ऋ ०/१ ॥

सूक्ष्मसांपरायक्षपकंगे सर्व्वपदभंगं तरल्पडुगुमल्लि असदृश पदंगळु सूक्ष्मसांपरायपर्य्यंत मिप्पत्तों दु पदंगळप्पुवु । संदृष्टि :—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सू सं १६३८४ ।

कषायानिवृत्तिकरणे प्रत्येकपदानि क्षायिकसम्यक्त्वांतानि विंशतिः । कषायाः सदृशपदं संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जो ६५=१ भ ६५=१ म-ग ६५=२ । शु-ले ६५=४/२ । क्षा-स ६५=८ ।

कषाय ४ ।	६५=१६
लब्ध	६५=६४

मिलित्वा सर्वपदघनं ६५=८० । ऋ ०/१ ।

सूक्ष्मसाम्पराये असदृशपदान्येव सूक्ष्मलोभांतान्येकविंशतिः । संदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ ।

वेदरहित अनिवृत्तिकरणमें प्रत्येक पद और उनके भंग इस प्रकार हैं—मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, क्षायिक संयम १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, क्षायिकसम्यक्त्व आठ पण्णट्ठी । पिण्डपदमें क्षायिकसम्यक्त्वके आठ पण्णट्ठी भंगोंसे दूने एक कषायके भंग होते हैं । उनको चार कषायोंसे गुणा करनेपर चौंसठ पण्णट्ठी होते हैं । प्रत्येक पद और पिण्डपदके मिलकर सर्वपद भंग अस्सी पण्णट्ठीमें एक कम होते हैं ।

आगे सूक्ष्म साम्पराय आदिमें प्रत्येक पद ही हैं, पिण्डपद नहीं हैं । सूक्ष्म साम्परायमें मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ

---

१. म सूक्ष्मलोभप० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जी ६५ = १ । भ ६५ = १ । म गति = ६५ = २ । शुक्लले ६५ = ४ । क्षा = सम्य ६५ = ८ ।
२

सूक्ष्मलोभ ६५ = १६ । इट्टुपवे रूऊणे इत्याद्यानीतसंकलनधनं सूक्ष्मसांपरायक्षपकन सर्व्वपद भंगंगळिनितप्पुवु । ६५ = ३२ ॠ १ ।। क्षीणकषायंगे सर्व्वपद भंगंगळु पेळल्पडुगुमल्लि प्रत्येकपदंगळु विंशति प्रमितंगळु द्विगुणक्रमविनप्पुवु । संदृष्टि :—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । संय १६३८४ । जी ६५ = १ । भ ६५ = १ । म गति ६५ = २ । शुक्लले ६५ = २ । २ । क्षायिक-
२

सम्यक्त्व ६५ = ८ । अंतधणं गुणगुणियमित्याद्यानीतसंकलनधनमिदु ६५ = १६ । ॠ १ ।।

सयोगकेवलिभट्टारकंगे असदृशपदंगळे पदिनाल्कप्पुवु । संदृष्टि :—केवलज्ञान १ । केवलदर्शन २ । क्षायिकसम्यक्त्व ४ । यथाख्यातचारित्र ८ । क्षा दान १६ । क्षा लाभ ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा उपभोग १२८ । अनंतवीर्यं २५६ । असिद्धत्व ५१२ । जीवत्व १०२४ । भव्यत्व २०४८ । मनुष्यगति ४०९६ । शुक्ललेश्ये ८१९२ । अंतधणं गुणगुणियं इत्याद्यानीतलब्धं सयोगकेवलि

अ ८१९२ । सू सं १६३८४ । जी ६५ = १ भ ६५ = १ म–ग ६५ = २ शु–ले ६५ = ४ । क्षा–सं ६५ = ८ ।
२

सू लो ६५ = १६ । भंगाः ६५ = ३२ । ॠ १ ।

क्षीणकषाये प्रत्येकपदान्येव विंशतिः । संदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । म १६३८४ । जी ६५ = १ भ ६५ = १ म–ग ६५ = २ । शु–ले ६५ = ४ । क्षा–सं ६५ = ८ । अन्तधणं
२

गुणगुणियमित्याद्यानीतभंगाः ६५ = १६ ॠ १ ।

सयोगे असदृशपदान्येव चतुर्दश । संदृष्टिः—के–ज्ञा १ के–द २ । क्षा–स ४ । य–चा ८ । क्षा–दा १६ । क्षा–ला ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा उ १२८ । अनन्तवी २५६ । असिद्धत्व ५१२ । जी १०२४ । भ २०४८ ।

२५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, संयम १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, क्षायिकसम्यक्त्व आठ पण्णट्ठी, सूक्ष्मलोभ सोलह पण्णट्ठी प्रत्येक पद और भंग हैं। सब भंग बत्तीस पण्णट्ठीमें एक कम होते हैं।

क्षीणकषायमें बीस प्रत्येक पद और भंग इस प्रकार हैं—मति १, श्रुत २, अवधि ४, मनःपर्यय ८, चक्षु १६, अचक्षु ३२, अवधि ६४, दान १२८, लाभ २५६, भोग ५१२, उपभोग १०२४, वीर्य २०४८, अज्ञान ४०९६, असिद्धत्व ८१९२, संयम १६३८४, जीवत्व ३२७६८, भव्यत्व एक पण्णट्ठी, मनुष्यगति दो पण्णट्ठी, शुक्ललेश्या चार पण्णट्ठी, क्षायिकसम्यक्त्व आठ पण्णट्ठी। ये सब भंग मिलकर सोलह पण्णट्ठीमें एक कम होते हैं। सयोगीमें प्रत्येक पद और उनके भंग इस प्रकार हैं—केवलज्ञान १, केवलदर्शन २, क्षायिकसम्यक्त्व ४,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भट्टारकंगे सर्व्वंपदभंगमिनितप्पुवु । २५६ । ६४ । ऋ १ गुणितलब्धमिदु १६३८४ । अयोगिकेवलिभट्टारकंगे असदृशपदंगळे पदिमूरप्पुवु । अवक्के संदृष्टि :—केवलज्ञान १ । केवलदर्शन २ । क्षायिकसम्यक्त्व ४ । यथाख्यातचारित्र ८ । क्षा दा १६ । क्षा ला ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा उपभोग १२८ । क्षा वी २५६ । असिद्धत्व २५६।२ । जीवत्व २५६ । २ । २ । भव्यत्व २५६ । २ । २ । २ । मनुष्यगति २५६ । १६ । अंतधणं गुणगुणियमित्याद्यानीतसंकलितधन मयोगिभट्टारकंगे सर्व्वपद भंगप्रमाणमिदु २५६ । ३२ । ऋ १ ॥ सिद्धपरमेष्ठिगळगे केवलज्ञान १ । केवलदर्शन २ । क्षायिकसम्यक्त्व नाल्कु ४ । अनंतवीर्य्य ८ । जीवत्व १६ । अंतु सिद्धपरमेष्ठिगळगे असदृश पदंगळय्दप्पुवु । तत्संकलितधनं मूवत्तो॑दु भंगंगळप्पुवु ३१ ॥

इंतुक्त मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु पिंडपदंगळु तिर्य्यग्रूपदिदं रचियिसल्पडुवुवु । अल्लि असंयत देशसंयतरुगळ क्षायिकसम्यक्त्वमं बिट्टु अन्यत्र संभवं कुरुत्तु गुणस्थानंगळोळु क्षायिकसम्यक्त्वक्कयुं भंगंगळु तरल्पडुवुवे॑दु पेळदपरु । :—

म—ग ४०९६ । शु—ले ८१९२ । भंगाः २५६ । ६४ । ऋ १ गुणिते १६३८४ ।

अयोगे असदृशपदान्येव त्रयोदश । संदृष्टिः—के—ज्ञा १ । के—द २ । क्षा—स ४ । य—चा ८ । क्षा—दा १६ । क्षा ला ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा—उ १२८ । क्षा—वी २५६ । असि २५६ । २ । जी २५६ । २ । २ । भ २५६ । २ । २ । २ । म—ग २५६ । १६ । भंगाः २५६ । ३२ । ऋ १ । ४०९६ × २ = ८१९२ ।

सिद्धे के—ज्ञा १ । के—दा २ । क्षा—स ४ । अ—वी ८ । जी १६ । इत्यसदृशपदानि पंच, भंगा एकत्रिंशत् ॥८६१॥

यथाख्यातसंयम ८, क्षायिकदान १६, लाभ ३२, भोग ६४, उपभोग १२८, वीर्य २५६, असिद्धत्व ५१२, जीवत्व १०२४, भव्यत्व २०४८, मनुष्यगति ४०९६, शुक्ललेश्या ८१९२ । सब मिलकर २५६ × ६४=दो सौ छप्पनसे चौंसठ गुणेमें एक कम भंग होते हैं ।

अयोगीमें केवलज्ञान १, केवलदर्शन २, क्षायिकसम्यक्त्व ४, यथाख्यात संयम ८, दान १६, लाभ ३२, भोग ६४, उपभोग १२८, वीर्य २५६, असिद्धत्व ५१२, जीवत्व १०२४ भव्यत्व २०४८, मनुष्यगति ४०९६, प्रत्येक पद और भंग हैं । सब मिलकर २५६ × ३२ दो सौ छप्पनसे बत्तीस गुनेमें एक कम भंग होते हैं ।

सिद्धोंमें केवलज्ञान १, केवलदर्शन २, क्षायिकसम्यक्त्व ४, अनन्तवीर्य ८, जीवत्व १६ प्रत्येक पद है । भंग सब मिलकर इकतीस हैं ।

प्रत्येक पदको असदृश पद भी कहते हैं क्योंकि इनका प्रतिपक्षी नहीं होता । पिण्डपदको सदृश पद भी कहते हैं । उनका समान प्रतिपक्षी होता है ॥८६१॥

आगे उक्त कथनको गाथा द्वारा कहते हैं—

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

तेरिच्छा हु सरिच्छा अविरददेसाण खयियसम्मत्तं ।
मोत्तूण संभवं पडि खयिगस्स वि आणए भंगे ॥८६२॥

तिर्यक्खलु सदृशा अविरतदेशव्रतानां क्षायिकसम्यक्त्वं मुक्त्वा संभवं प्रति क्षायिकस्यापि आनयेद्भंगान् । पिंडभावंगळं तिर्य्यग्रूपदिदं रचियिसुवुदु । अल्लि असंयत देशसंयतरुगळ क्षायिकसम्यक्त्ववके बेरे भंगंगळु तरल्पडुवुवप्पुदरिंदमवं बिट्टु संभवगुणस्थानदोळु क्षायिक सम्यक्त्ववक्कं भंगंगळंतप्पुवु ।

उड्ढतिरिच्छपदाणं सव्वसमासेण होदि सव्वधणं ।
सव्वपदाणं भंगे मिच्छादिगुणेसु णियमेण ॥८६३॥

ऊर्ध्वतिर्य्यक्पदानां सर्व्वसमासेन भवति सर्व्वधनं । सर्व्वपदानां भंगे मिथ्यादिगुणेषु नियमेन ॥

सर्व्वपदभंगानयनविधानदोळु मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानंगळोळु ऊर्ध्वपदंगळ धनमुमं तिर्य्यक्पदंगळ धनमुमं तंदु तद्धनंगळ सर्व्वसमासदिदं तत्तद्गुणस्थानद सर्व्वधननियमदिदक्कु ॥

अनंतरमुक्तगुणस्थानंगळ प्रत्येकपदसंख्येयं पेळ्वपरु :—

मिच्छादीणं दुति दुसु अपुव्वअणियट्टिखवगसमगेसु ।
सुहुमुवसमगे संते सेसे पत्तेयपदसंखा ॥८६४॥

मिथ्यादृष्ट्यादीनां द्वित्रिद्वयोः अपूर्व्वानिवृत्तिक्षपकोपशमकेषु । सूक्ष्मोपशमके शांते शेषे प्रत्येकपद संख्या वक्ष्यंते ॥

गुणस्थानोक्तपिंडभावान् खलु तिर्यग्रूपेण रचयित्वा तत्रासंयतदेशसंयतयोः क्षायिकसम्यक्त्वं पृथक्कथनात्त्यक्त्वा तत्संभवगुणस्थानान्याश्रित्य क्षायिकसम्यक्त्वस्यापि भंगानानयेत् ॥८६२॥

सर्वपदभंगानयने मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानेषु ऊर्ध्वपदधनं तिर्यक्पदधनं चानीय तयोः समासेन तत्तद्गुणस्थानस्य सर्वधनं भवति नियमेन ॥८६३॥

गुणस्थानोंमें कहे पिण्डपदरूप भावोंको तिर्यक् रूपसे बराबरमें रचकर गुणस्थानोंके आश्रयसे यथासम्भव भंग लाना चाहिए। उनमें-से असंयत और देशसंयतमें क्षायिक-सम्यक्त्वका कथन पृथक् होनेसे उसे छोड़ देना चाहिए। तथा क्षायिकसम्यक्त्वमें सम्भव गुणस्थानोंको लेकर क्षायिकसम्यक्त्वके भी अलगसे भंग लाना चाहिए ॥८६२॥

सर्वपदोंके भंग लानेके लिए मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें, जिनकी ऊर्ध्वरूप रचना है ऐसे प्रत्येकपदोंका भंगरूप धन तथा जिनकी तिर्यक्रूप रचना है ऐसे पिण्डपदोंका भंगरूप धन लाकर उन दोनोंको मिलाकर उस-उस गुणस्थानमें सर्वपदोंका भंगरूप सर्वधन नियमसे होता है ॥८६३॥

---

१. दव्वस० मु० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिथ्यादृष्टिसासादनगुणस्थानद्वयदोळं मिश्रासंयतदेशसंयतगुणस्थानत्रयदोळं प्रमत्ता-प्रमत्तगुणस्थानद्वयदोळं अपूर्व्वानिवृत्तिक्षपकोपशमकरुगळोळं सूक्ष्मसांपरायोपशमकनोळं उपशांत-कषायनोळं शेषसूक्ष्मसांपरायक्षपकक्षीणकषायादिगळोळं प्रत्येकपदंगळ संख्येयं मुंदण सूत्रदिदं पेळ्दपरु :—

पण्णर सोलट्ठारस वीसुगुवीसं च वीसमुगुवीसं ।
इगिवीस वीस चोद्दस तेरस पणगं जहाकमसो ॥८६५॥

पंचदश षोडशाष्टदश विंशत्येकान्नविंशतिश्च विंशतिरेकान्नविंशतिश्च । एकविंशतिर्व्विंश-तिश्चतुर्द्दश त्रयोदश पंचकं यथाक्रमशः ॥

मिथ्यादृष्टियोळं सासादननोळं प्रत्येकपदंगळु पदिनैदुं पदिनय्दुमप्पुवु । मिश्रासंयत देश-संयतरुगळोळु प्रत्येकं पदिनारु पदिनारु प्रत्येक पदंगळप्पुवु । प्रमत्ताप्रमत्तसंयतरोळु प्रत्येकं पदिनेंटुं पदिनेंटुं प्रत्येकपदंगळप्पुवु । अपूर्व्वकरणानिवृत्तिकरण क्षपकोपशमकरुगळोळु विंशतियुमेकान्न-विंशतियुं प्रत्येकं प्रत्येकपदंगळप्पुवु । सूक्ष्मसांपरायोपशमकनोळु प्रत्येकपदंगळिप्पत्तप्पुवु । उपशांत-कषायनोळु एकान्नविंशति प्रत्येकपदंगळप्पुवु । शेषसूक्ष्मसांपरायक्षपकनोळु प्रत्येकपदंगळेकविंश-तियुं क्षीणकषायनोळु विंशतियुं सयोगिकेवलिगळोळु पदिनाल्कुं अयोगिकेवलिगळोळु पदिमूरुं सिद्धपरमेष्ठिगळोळु पंचकमुं क्रमदिदमितु प्रत्येकपदंगळप्पुवु । संदृष्टिः—मि १५ । सा १५ । मि १६ । अ १६ । दे १६ । प्र १८ । अ १८ । अ = क्ष २० । उप १९ । अनि क्ष २० । उप १९ । सू उप २० । क्षप २१ । उपशांत कषाय १९ । क्षी २० । स १४ । अ १३ । सि ५ ॥

अनंतरं पूर्व्वोक्तमिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानंगळोळु क्षीणकषायपर्य्यंतमाद पन्नेरडुं गुणस्था-नंगळोळु सर्व्वपदभंगंगळगे गुण्य पण्णट्ठिप्रमितमें दु पेळ्दपरु ।

तानि प्रत्येकपदानि क्रमेण मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये प्रत्येकं पंचदश । मिश्रादित्रये षोडश । प्रमत्तादिद्वयेऽष्टादश । उभयश्रेण्यपूर्वकरणादिद्वये विंशतिरेकान्नविंशतिः उपशमकसूक्ष्मसाम्पराये विंशतिः । उपशान्तकषाये एकान्न-विंशतिः । क्षपकसूक्ष्मसाम्पराये एकविंशतिः क्षीणकषाये विंशतिः । सयोगे चतुर्दश । अयोगे त्रयोदश । सिद्धे पंच ॥८६४–८६५॥

वे प्रत्येकपद क्रमसे मिथ्यादृष्टि आदि दो गुणस्थानोंमें-से प्रत्येकमें पन्द्रह होते हैं। मिश्र आदि तीनमें सोलह-सोलह, प्रमत्त आदि दोमें अठारह, दोनों श्रेणियोंके अपूर्वकरण आदि दो गुणस्थानमें बीस और उन्नीस, उपशम सूक्ष्मसाम्परायमें बीस, उपशान्तकषायमें उन्नीस, क्षपक सूक्ष्मसाम्परायमें इक्कीस, क्षीणकषायमें बीस, सयोगीमें चौदह, अयोगीमें तेरह और सिद्धोंमें पाँच होते हैं ॥८६४–८६५॥

१. म सूत्रदोलु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिच्छाइट्ठिप्पहुडिं खीणकसाओत्ति सव्वपदभंगा ।
पण्णट्ठिं च सहस्सा पंचसया होंति छत्तीसा ।।८६६।।

मिथ्यादृष्टिप्रभृति क्षीणकषायपर्य्यंतं सर्व्वपदभंगाः । पंचषष्टिसहस्राणि पंचशतानि भवंति षट्त्रिंशत् ।।

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं मोदल्गोंडु क्षीणकषायगुणस्थानपर्य्यंतं सर्व्वपदभंगंगळु पंचषष्टिसहस्रंगळु पंचशतंगळु षट्त्रिंशत्प्रमितं गुण्यराशियक्कुं । ६५५३६ ।।

अनंतरमा गुण्यभंगंगळ्गे गुणकारभंगंगळं मिथ्यादृष्टियादियागि क्षीणकषायपर्य्यंतं क्रमदिदं पेळ्दपरु :—

तग्गुणगारा कमसो पणणउदेयत्तरीसयाण दलं ।
ऊणट्ठारसयाणं दलं तु सत्तहियसोलसयं ।।८६७।।

तद्गुणकाराः क्रमशः पंचनवतिरेकसप्ततिशतानां दलं ऊनाष्टादशशतानां दलं तु सप्ताधिकषोडशशतं ।।

मिथ्यादृष्टियोळु गुण्यभूत पण्णट्ठिगे गुणकारंगळु एळु सासिरद नूर तोंभत्तय्दु गळर्द्धमक्कुं । सासादनंगे गुण्यभूत पण्णट्ठिगे गुणकारभंगंगळं रूपोनाष्टादशशतंगळर्द्धमक्कुं ।। मिश्रंगे तु मत्ते पण्णट्ठिगे गुणकारंगळु सासिरदर्नूरेळप्पुवु ।।

तेवत्तरिं सयाइं सत्तावट्ठीय अविरदे सम्मे ।
सोलस चेव सयाइं चउसट्ठी खइयसम्मस्स ।।८६८।।

त्रिसप्ततिशतानि सप्तषष्टिश्चाविरतसम्यग्दृष्टौ षोडश चैव शतानि चतुःषष्टिः क्षायिकसम्यक्त्वस्य ।।

असंयतसम्यग्दृष्टियोळु एळु सासिरद मूनूररुवत्तेळु गुणकारंगळु क्षायिकसम्यक्त्वदोळु

मिथ्यादृष्टयादिक्षीणकषायांतसर्वपदभंगा उच्यन्ते । तत्र पंचषष्टिसहस्राणि पंचशतानि षट्त्रिंशच्च गुण्यं भवति ।।८६६।।

तस्य गुण्यस्य गुणकाराः क्रमेण मिथ्यादृष्टौ सप्तसहस्रैकशतपंचनवत्यर्द्धं, तु—पुनः सासादने रूपोनाष्टादशशतार्धं । मिश्रे सप्ताग्रषोडशशतानि ।।८६७।।

असंयतसम्यग्दृष्टौ सप्तषष्ट्यधिकत्रिशताग्रसप्तसहस्रा । तत्क्षायिकसम्यक्त्वे चतुःषष्ट्यग्रषोड-

---

मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषायपर्यन्त सर्वपदोंके भंग कहते हैं । उनमें पैंसठ हजार पाँच सौ छत्तीस गुण्य हैं । इसे ही पण्णट्ठी कहते हैं ।।८६६।।

आगे इस गुण्यके गुणकार कहते हैं—

उक्त गुण्यके गुणकार क्रमसे मिथ्यादृष्टिमें इकहत्तर सौ पंचानबेका आधा प्रमाण है । सासादनमें एक कम अठारह सौका आधा प्रमाण है । मिश्रमें सोलह सौ सात है ।।८६७।।

असंयतसम्यग्दृष्टीमें तिहत्तर सौ सड़सठ है । क्षायिकसम्यक्त्वमें गुणकार सोलह सौ

सासिरदरुनूररवत्तनाल्कु गुणकारंगळु गुण्यभूतपण्णट्ठिगळप्पुवु ।

ऊणत्तीससयाइं एक्काणउदी य देसविरदम्मि ।
छावत्तरि पंचसया खयियणरे णत्थि तिरियम्मि ॥८६९॥

एकोनत्रिंशच्छतानि एक नवतिश्च देशविरते । षट्सप्तति पंचशतानि क्षायिकनरे नास्ति तिरश्चि ॥

देशसंयतन गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु येरडु सासिरदो भैनूर तो भत्तो वप्पुवु । क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्यनोळु आ गुण्यक्के गुणकारंगळैनूरेप्पत्तारप्पुवु । नास्ति तिरश्चि तिर्य्यंच-क्षायिकसम्यग्दृष्टि देशसंयतरिल्लप्पुर्दरिंदमा तिर्य्यंचरोळु गुण्यगुणकार मिल्ल ॥

इगिदालं च सयाइं चउदालं च य पमत्त इदरे य ।
पुव्वुवसमगे वेदाणियट्टिभागे सहस्समट्ठूणं ॥८७०॥

एकचत्वारिंशच्छतानि चतुश्चत्वारिंशच्च च प्रमत्ते इतरस्मिंश्च अपूर्व्वोपशमके वेदानिवृत्तिभागे सहस्रमष्टोनं ॥

प्रमत्तसंयतरोळु गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु नाल्कु सासिरदनूर नाल्वत्त नाल्कप्पुवु । अप्रमत्तसंयतनोळमंते आ गुण्यक्के गुणकारंगळु मनिते यप्पुवु । अपूर्व्वकरणोपशमकंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु वो भैनूर तो भत्तेरडप्पुवु । वेदानिवृत्तिभागेयोळुपशमकंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु मो भैनूरतो भत्तेरडप्पुवु ॥

अडसट्ठी एक्कसयं कसायभागम्मि सुहुमगे संते ।
अडदालं चउवीसं खवगेसु जहाकमं वोच्छं ॥८७१॥

अष्टषष्टिरेकशतं कषायभागे सूक्ष्मसांपराये उपशांतकषाये अष्टचत्वारिंशत् चतुर्व्विंशतिः क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥

शतानि ॥८६८॥

देशसंयते एकनवत्यग्रनवशतद्विसहस्री । तत्क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्ये षट्सप्तत्यग्रपंचशतानि । तिरश्चि क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्देशसंयतो नेति गुण्यगुणकारौ न स्तः ॥८६९॥

प्रमत्ते अप्रमत्ते च चतुश्चत्वारिंशदग्रैकशतचतुःसहस्री । उपशमकेष्वपूर्वकरणे सवेदानिवृत्तिकरणे च द्वानवत्यग्रनवशती ॥८७०॥

चौंसठ है ॥८६८॥

देश संयतमें गुणकार दो हजार नौ सौ इक्यानबे हैं । यहाँ क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्यमें गुणकार पाँच सौ छिहत्तर है । तिर्यंचगतिमें देशसंयत क्षायिकसम्यग्दृष्टी नहीं होता । इसलिए वहाँ गुण्य-गुणकार दोनों नहीं हैं ॥८६९॥

प्रमत्त और अप्रमत्तमें इकतालीस सौ चौवालीस है । उपशमश्रेणीके अपूर्वकरण और सवेद अनिवृत्तिकरणमें गुणकार आठ कम एक हजार है ॥८७०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपशमकषायानिवृत्तिभागेयोळु गुण्यभूतपण्णद्ठिगे गुणकारंगळु नूररवत्तेंटप्पुव। सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु नाल्वत्तेंटप्पुवु। उपशांतकषायंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळिप्पत्तनाल्कप्पुवु॥ क्षपककर्गळोळु यथाक्रमदिदं गुण्यगुणकारंगळं पेळ्वें :—

अडदालं चारिसया अपुव्वअणियट्टिवेदभागे य।
सीदी कसायभागे तत्तो बत्तीस सोलं तु ॥८७२॥

अष्टचत्वारिंशच्चतुःशतानि अपूर्वानिवृत्तिभागवेदयोश्च अशीतिः कषायभागे ततो द्वात्रिंशत् षोडश तु ॥

अपूर्वकरण क्षपकनोळु गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु नानूर नाल्वत्तेंटप्पुवु। क्षपकानिवृत्तिवेदभागेयल्लियुं गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु नानूर नाल्वत्तेंटप्पुवु। क्षपककषायानिवृत्ति भागेयोळु गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळेंभत्तप्पुवु। ततः मेळे सूक्ष्मसांपरायक्षपकंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळेंभत्तप्पुवु। ततः मेळे सूक्ष्मसांपरायक्षपकंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु द्वात्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु। क्षीणकषायंगे गुण्यभूतपण्णट्ठिगे गुणकारंगळु पदिनारप्पुवु॥

जोगिम्मि अजोगिम्मि य बेसदछप्पणयाण गुणगारा।
चउसट्ठी बत्तीसा गुणगुणिदेक्कूणया सव्वे ॥८७३॥

योगिन्ययोगिनि च द्विशतषट्पंचाशतां गुणकाराः। चतुःषष्टि द्वात्रिंशत् गुणगुणितैकोनाः सर्वे ॥

सयोगकेवलिभट्टारकनोळु गुण्यं बेसदछप्पणगनवकुं। गुणकारंगळरवत्तनाल्कप्पुवु। अयोगिकेवलिभट्टारकनोळु बेसदछप्पण्णगुण्यक्कें गुणकारंगळु मूवत्तेरडप्पुवु। यिवेल्लमुं द्विगुणगुणकार-

---

कषायानिवृत्तिभागेष्वष्टषष्टचग्रशतं। सूक्ष्मसांपरायेऽष्टचत्वारिंशत्। उपशान्तकषाये चतुर्विंशतिः। क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥८७१॥

अपूर्वकरणेऽनिवृत्तिसवेदभागे चाष्टचत्वारिंशदग्रचतुःशती। कषायभागेऽशीतिः। तत उपरि सूक्ष्मसांपराये द्वात्रिंशत्। क्षीणकषाये तु षोडश ॥८७२॥

सयोगे बेसदछप्पण्णस्स गुणकाराः चतुःषष्टिः। अयोगे द्वात्रिंशत्। तत्तद्गुणकारेण गुण्ये गुणिते

वेदरहित किन्तु कषायसहित अनिवृत्तिकरणमें गुणकार एक सौ अड़सठ है। सूक्ष्मसाम्परायमें अड़तालीस है। उपशान्तकषायमें चौबीस है। अब क्रमसे क्षपकश्रेणीमें कहेंगे ॥८७१॥

अपूर्वकरण और वेदसहित अनिवृत्तिकरणमें गुणकार चार सौ अड़तालीस है। अनिवृत्तिकरणके वेदरहित कषायसहित भागमें गुणकार अस्सी है। उससे ऊपर सूक्ष्मसाम्परायमें बत्तीस है। क्षीणकषायमें सोलह है ॥८७२॥

सयोगी और अयोगीमें दो सौ छप्पन गुण्य हैं और गुणकार सयोगीमें चौंसठ तथा अयोगीमें बत्तीस है। अपने-अपने गुणकारसे गुण्यको गुणा करनेपर जो प्रमाण आवे, उसमें-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणितंगळागि रूपोनंगळ् हरियल्वडुगुं ॥

सिद्धेसु सुद्धभंगा एक्कतीसा हवंति णियमेण ।
सव्वपदं पडि भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥८७४॥

सिद्धेषु शुद्धभंगा एकत्रिंशद्भवंति नियमेन । सर्व्वपदं प्रति भंगाः असहायपराक्रमोद्दिष्टाः ॥

१ सिद्धपरमेष्ठिगळोळु शुद्धभंगंगळु गुण्यगुणकारभेदमिल्लदे मूवत्तोंदेयप्पुवु नियमदिंदं । यितु सर्व्वपदं प्रतिभंगंगळु असहायपराक्रमोद्दिष्टंगळु पेळल्पट्टुवु ॥ यितु सर्व्वपदं प्रति ऊर्ध्वतिर्य्यक्पद गुण्यगुणकारंगळगे गुणस्थानदोळु संदृष्टिः— मिथ्या० ऊर्ध्व १५ । तिर्य्य ५ । गुण्य ६५ । गुण $\frac{७१९५}{२}$ । ऋ $\overset{०}{१}$ ॥ सासा । ऊ १५ । ति ४ । गुण्य ६५ । गुण १७९९ । ऋ $\overset{०}{१}$ । मिश्र ऊ १६ । ति ४ । ति ४ । गुण्य ६५=गुण १६०७ । ऋ $\overset{०}{१}$ ॥ असं० ऊ १६ । ति ५ । गुण्य ६५= गुण ७३६७ । ऋ $\overset{०}{१}$ । क्षासं गुण्य ६५ । गुण १६६४ ॥ देश उ १६ । ति ५ । गुण्य ६५ = गुण- २९९१= ऋ $\overset{०}{१}$ क्षा गुण्य ६५ । गुण ५७६ । प्रम ऊ १८ । ति ४ । गुण्य ६५ = गुण ४१४४ । ऋ $\overset{०}{१}$ । अप्र ऊ=पद १८ । ति पद ४ । गुण्य ६५ । गुण ४१४४ । ऋ $\overset{०}{१}$ । अपूर्व्व उप । ऊ १९ । ति ३ । गुण्य ६५ । गुण ९९२ । ऋ $\overset{०}{१}$ ॥ अनिवृत्तिकरणोपशमक ऊ १९ । ति ३ । गु ६५ । गु ९९२ । ऋ $\overset{०}{१}$ ॥ कषायानिवृत्त्युपशम ऊ १९ । ति ३ । गुण्य ६५ । गु १६५ ॥ सूक्ष्मसांपरायोपशमकंगे

समुत्पन्नराशयः सर्वे एकैकोनाः कर्तव्याः ॥८७३॥

सिद्धेषु शुद्धाः गुण्यगुणकारभेदरहिता भंगा नियमेनैकत्रिंशद्भवन्ति इत्यसहायपराक्रमेण सर्वपदं प्रति भंगा उद्दिष्टाः ।

[१ एवं सर्वपदं प्रति ऊर्ध्वतिर्यक्पदगुण्यगुणकाराणां गुणस्थाने संदृष्टिः—मिथ्या–ऊर्ध्व १५ । तिर्य ५ । गुण्य ६५ =। गुण ७१९५ । ऋ $\overset{०}{१}$ । सासा ऊ १५ । ति ४ । गुण्य ६५ =। गु १७९९ । ऋ $\overset{०}{१}$ । मिश्र ऊ १६ । ति ४ । गुण्य ६५ =। गुण १६०७ ऋ $\overset{०}{१}$ । असं ऊ १६ । ति ५ । गु ६५ =। गुण ७३६७ । ऋ $\overset{०}{१}$ । क्षा–असं–गुण्य ६५ =। गुण १६६४ । ऋ $\overset{०}{१}$ । देश ऊ १६ । ति ५ । गुण्य ६५ = गुण २९९१ । ऋ $\overset{०}{१}$ । क्षा गुण्य ६५ =। गुण ५७६ । ऋ $\overset{०}{१}$ । प्रमत्त ऊ १८ । ति ४ गुण्य ६५ = गुण ४१४४ । ऋ $\overset{०}{१}$ । अप्र ऊ–पद १८ । ति–पद ४ । गुण्य ६५ =। गुण ४१४४ । ऋ $\overset{०}{१}$ । अपूर्व उप–ऊ १९ । ति ३ । गुण्य ६५ =। गुण ९९२ । ऋ $\overset{०}{१}$ । अनिवृत्तिकरणोपशम ऊ १९ । ति ३ । गुण्य ६५ =। गु ९९२ । ऋ $\overset{०}{१}$ । कषायानिवृत्त्युपशम

से सर्वत्र एक-एक घटा देना । ऐसा करनेसे सर्वपद भंगोंका प्रमाण आता है ॥८७३॥

सिद्धोंमें गुण्य-गुणकार दोनों न होनेसे शुद्ध भंग नियमसे इकतीस होते हैं । इस प्रकार असहाय पराक्रमी भगवान् महावीरने सर्वपदोंके भंग कहे हैं ॥८७४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊ २० । ति १ । गुण्य ६५ । गुण ४८ । ऋ १̊ ॥ उगशा. ऊ १९ । ति १ । गुण्य ६५ । गुण २४ । ऋ १̊ । अपूक्ष ऊ २० । ति २ । गु ६५ । गुण ४४८ । ऋ १̊ ॥

सवेदनिवृत्ति क्षप ऊ २० । ति २ । गुण्य ६५ । गुण ४४८ । ऋ १̊ ॥ कषायानिवृत्ति क्षउ २० । ति १ । गुण्य ६५ । गुण ८० ऋ १̊ । सूक्ष्मसांपरायक्षपक ऊ २१ । गुण्य ६५ । गुण ३२ । ऋ १̊ । क्षीण उ २० । गुण्य ६५ । गुण १६ । ऋ १̊ ॥ सयोग ऊ १४ । गुण्य २५६ । गुण ६४ । ऋ १̊ ॥ अयोग ऊ १३ । गुण्य २५६ । गु ३२ । ऋ १̊ ॥ सिद्धपरमेष्ठि ऊ ५ । शुद्धभंग ३१ ॥

आदेसेवि य एवं संभवभावेहि ठाणभंगाणि ।
पदभंगाणि य कमसो अव्वामोहेण आणेज्जो ॥८७५॥

आदेशेऽपि चैवं संभवभावैः स्थानभंगाः । पदभंगाश्च क्रमशोऽव्यामोहेनानेतव्याः ॥

मार्गणस्थानदोळमिंते संभवभावंगळिंदं स्थानभंगगळुं पदभंगगळुं क्रमदिदमव्यामोहदिदं तरल्पडुवुवु ॥ अनंतरमेकांतमतभेदंगळं पेळदपरु । :—

असिदिसदं किरियाणं अक्किरियाणं च आहु चुलसीदी ।
सत्तट्ठण्णाणीणं वेणयियाणं तु बत्तीसं ॥८७६॥

अशीतिशतं क्रियाणामक्रियाणां चाहुश्चतुरशीतिं सप्तषष्टिमज्ञानिनां वैनयिकानां तु द्वात्रिंशत् ॥

ऊ १९ । ति २ । गुण्य ६५ = । गुण १६८ । ऋ १̊ । सूक्ष्मसाम्परायोपशमकस्य ऊ २० । ति १ । गु ६५ = । गुण ४८ । ऋ १̊ । उपशान्त ऊ १९ । ति १ । गुण्य ६५ = । गुण २४ । ऋ १̊ । अपूर्व–क्षा ऊ २० । ति २ । गु ६५ = । गु ४४८ । ऋ १̊ । सवेदानिवृत्तिक्षपक ऊ २० । ति २ । गुण्य ६५ = । गु ४४८ । ऋ १̊ । कषायानिवृत्तिक्षपक ऊ २० । ति १ । गुण्य ६५ = । गु ८० । सूक्ष्मसाम्परायक्षप–ऊ २१ । गुण्य ६५ = । गुण ३२ । ऋ १̊ । क्षीण ऊ २० । गुण्य ६५ । गु १६ । ऋ १̊ । सयोग ऊ १४ गुण्य २५६ । गुण ६४ । ऋ १̊ । अयोगि स १३ । गुण्य २५६ गुण ३२ । ऋ १̊ । सिद्धपरमेष्ठि ऊ ५ । शुद्धभंग ३१ । अधिकः पाठः ।] ॥८७४॥

मार्गणास्थानेऽप्येवं सम्भवद्भिर्भावैरव्यामोहेन स्थानभंगाः पदभंगाश्च क्रमश आनेतव्याः ॥८७५॥ अथैकान्तमतभेदानाह—

जैसे गुणस्थानोंमें कहे ऐसे ही मार्गणास्थानमें भी यथासम्भव होनेवाले भावोंके द्वारा स्थानभंग और पदभंग क्रमसे मोह रहित होकर सावधानतापूर्वक जानना चाहिए ॥८७५॥

आगे एकान्त मतोंके भेद कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रियावादंगळशीतिशतप्रमकियावादंगळु चतुरशीतियुं अज्ञानवादंगळु सप्तषष्टिप्रमितमुं वैनेकवादंगळु द्वात्रिंशत्प्रमितंगळप्पुवु गणधरादिदिव्यज्ञानिगळु पेळवरल्लि क्रियावादंगळ नूरें भत्तर मूलभंगंगळं पेळ्वपर । :—

अत्थि सदो परदोवि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था ।
कालीसरप्पणियदिसहावेहि य तेहि भंगा हु ॥८७७॥

अस्ति स्वतःपरतोपि च नित्यानित्यत्वेन च नवार्थाः । कालेश्वरात्मनियतिस्वभावैस्तैश्चभंगाः खलु ॥

इल्लि अस्तित्वदमेले स्वतःपरतः नित्यत्वेनानित्यत्वेन एंदी नाल्कु तिर्य्यग्रूपदिदं बरेयल्पडुवुवु । अवरमेळे जीवाजीव पुण्यपाप आस्रवसंवरनिर्जराबंधमोक्षमें बी नवपदार्त्थंगळु तिर्य्यग्रूपदिदं रचियिसल्पडुवुवु । अवर मेले काल ईश्वर आत्म नियति स्वभावमें दिवय्दुं तिर्य्यग्रूपदिदं रचियिसल्पडुवुवु । इंतु रचिसल्पडुत्तिरलु :—

काल । ईश्व । आत्म । निय । स्वभा ५ ।
जी । अ । पु । पा । आ । सं । नि । बं । मो । ९ ।
स्वतः । परतः । नित्यत्वेन । अनित्यत्वेन ४ ।
अस्ति १ ।

अळिक्कमक्षसंचारदिदं नूरेण्भत्तु भंगंगळुच्चरिसल्पडुववें तें दोडे—स्वतः सन् जीवः काले नास्ति क्रियते परतो जीवः काले नास्ति क्रियते । (परतो जीवः काले नास्ति क्रियते ।) नित्यत्वेन जीवः काले नास्ति क्रियते । अनित्यत्वेन जीवः काले नास्ति क्रियते । (अनित्यत्वेन जीवः काले-

---

क्रियावादानामशीतिशतमाहुः, अक्रियावादानां चतुरशीतिं, अज्ञानवादानां सप्तषष्टिं, वैनयिकवादानां तु द्वात्रिंशं ॥८७६॥ तत्र क्रियावादानां मूलभंगानाह—

प्रथमतः अस्तिपदं लिखेत् । तस्योपरि स्वतः परतः नित्यत्वेन अनित्यत्वेन इति चत्वारि पदानि लिखेत् । तेषामुपरि जीवः अजीवः पुण्यं पापं आस्रवः संवरः निर्जरा बंधः इति नव पदानि लिखेत् । तदुपरि काल ईश्वर आत्मा नियतिः स्वभाव इति पंच पदानि लिखेत् । तैः खल्वक्षसंचारक्रमेण भंगा उच्यन्ते तद्यथा—

स्वतः सन् जीवः कालेनास्ति क्रियते । परतो जीवः कालेनास्ति क्रियते । नित्यत्वेन जीवः कालेनास्ति

क्रियावादियोंके एक सौ अस्सी, अक्रियावादियोंके चौरासी, अज्ञानवादियोंके सड़सठ और वैनयिकोंके बत्तीस भेद हैं ॥८७६॥

क्रियावादियोंके मूलभंग कहते हैं—

प्रथम तो 'अस्ति' पद लिखो। उसके ऊपर स्वतः, परतः, नित्य रूपसे, अनित्य रूपसे, ये चार पद लिखो। उसके ऊपर जीव-अजीव, पुण्य-पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध, मोक्ष, ये नौ पद लिखो। उनके ऊपर काल, ईश्वर, आत्मा, नियति, स्वभाव ये पाँच पद लिखो। उनको लेकर अक्षसंचार क्रमके द्वारा जैसे जीवकाण्डके गुणस्थान अधिकारमें प्रमादों के भंगोंका कथन किया था उसी प्रकार भंग कहते हैं—

स्वतः होते हुए जीव कालके द्वारा अस्ति किया जाता है। परतः जीव कालके द्वारा अस्ति किया जाता है। नित्य होते हुए जीव कालके द्वारा अस्ति किया जाता है। अनित्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नास्ति क्रियते) एंदितु जीवदोळने नाल्कु भंगंगळप्पुवु । बळिक्कं । पढमक्को अंतगदो आदिगदे संकमेवि विदियक्खो । दोण्णिवि गंतूणंतं आदिगदे संकमेदि तदियक्खो ॥ एंदितु अस्तित्वांकमोदं मेलण स्वतादिगळु नाल्करिदं गुणिसि मत्तमदं पदार्त्थनवकदिदं गुणिसि मत्तमदं कालादिपंचकदिदं गुणिसुत्तिरलु । १ । ४ । ९ । ५ । लब्धं क्रियावादंगळ नूरेण्भत्तु भेदंगळप्पुवु । १८० ॥ इल्लिः—

अत्थि सदो परदो वि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था ।
एसिं अत्था सुगमा कालादीणं तु वोच्छामि ॥८७८॥

अस्ति स्वतः परतोपि च नित्यानित्यत्वेन च नवार्त्थाः। एषामर्थाः सुगमाः कालादीनां तु वक्ष्यामि ॥

अस्ति स्वतः परतोपि च नित्यानित्यत्वेन नवार्त्था एंदितिवर अर्त्थंगळु सुगमंगळप्पुवु । तु मत्ते कालादिगळर्त्थमं क्रमदिदं पेळ्वमवरोळु कालवादमं बुदें तें दोडे पेळ्वपरु । :—

कालो सव्वं जणयदि कालो सव्वं विणस्सदे भूदं ।
जागत्ति हि सुत्तेसु वि ण सक्कदे वं चिदुं कालो ॥८७९॥

कालः सर्व्वं जनयति कालः सर्व्वं विनाशयति भूतं। जागर्त्ति खलु सुप्तेष्वपि न शक्यते वंचितुं कालः ॥

कालमे सर्व्वमं पुट्टिसुगुं । कालमे सर्व्वमं भूतमं किडिसुगुं । निद्रेगेय्दवरोळं कालमेच्चर्त्तिक्कुं ।

क्रियते । अनित्यत्वेन जीवः कालेनास्ति क्रियते । तथा अजीवादिपदार्थं प्रति चत्वारश्चत्वारो भूत्वा कालेनैकेन सह षट्त्रिंशत् । एवमीश्वरादिपदैरपि षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशद् भूत्वाऽशीत्यग्रशतं क्रियावादभंगाः स्युः ॥८७७॥

अस्ति स्वतः परतः नित्यत्वेनानित्यत्वेन नव पदार्थाश्चेत्येषां चतुर्दशानामर्थाः सुगमाः । तु—पुनः कालवादादीनामर्थं क्रमेण वक्ष्यामि ॥८७८॥

काल एव सर्वं जनयति । काल एव सर्वं विनाशयति । निद्रितेष्वपि काल एव स्फुटं जागर्ति । कालो

होते हुए जीव कालके द्वारा अस्ति किया जाता है। तथा जीवके स्थानपर अजीव आदि पदार्थोंको लेकर प्रत्येकके चार-चार भंग होनेसे कालके साथ छत्तीस भंग होते हैं। इसी प्रकार ईश्वर आदि पदोंको लेकर भी छत्तीस-छत्तीस भंग होते हैं। ऐसे पाँच पदोंके एक सौ अस्सी भंग क्रियावादके होते हैं ॥८७७॥

अस्ति, स्वतः, परतः, नित्यरूपसे, अनित्यरूपसे और नौ पदार्थ, इन चौदहका अर्थ तो सुगम है। आगे काल आदिका अर्थ क्रमसे कहते हैं।

विशेषार्थ—'अस्ति'का अर्थ 'है'। क्रियावादी वस्तुको अस्तिरूपसे अस्तिरूप मानकर क्रियाका विस्तार करता है। वह वस्तुको स्वरूपसे अस्ति मानता है। पररूपसे भी अस्ति मानता है। नित्य होते हुए अस्ति मानता है। अनित्य अर्थात् क्षणिक मानकर अस्तिरूप मानता है। इस प्रकार जीव आदि नौ पदार्थोंको मानता है और मानकर क्रियावादकी स्थापना करता है कि क्रियासे ही मोक्ष होता है ॥८७८॥

काल ही सबको उत्पन्न करता है और काल ही सबको नष्ट करता है। प्राणियोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्फुटमागि ।। कालमें तुं वंचिसल्पडदुं एंदितु बुद्धिभिप्रायं कालवादमक्कुं ।। ईश्वरवादमं पेळ्दपरः—

अण्णाणी हु अणीसो अप्पा तस्स य सुहं च दुक्खं च ।
सग्गं णिरयं गमणं सव्वं इसरकयं होदि ।।८८०।।

अज्ञानी खलु अनीशः आत्मा तस्य च सुखं च दुःखं च । स्वर्गं नरकं गमनं सर्वं ईश्वरकृतं भवति ।।

आत्मनज्ञानियुमनाथनुं स्फुटमागि आ आत्मंगे सुखमुं दुःखमुं स्वर्गमुं नरकमुं गमनमुमागमनादिगळु सर्व्वमुमीश्वरकृतमक्कुमें बिदीश्वरवादमें बुदक्कुं ।। आत्मवादमं पेळ्दपरु । :—

एक्को चेव महप्पा पुरिसो देवो य सव्ववावी य ।
सव्वंगणिगूढोवि य सचेयणो णिग्गुणो परमो ।।८८१।।

एक एव महात्मा पुरुषो देवश्च सर्व्वव्यापी च सर्व्वांगनिगूढोपि च सचेतनो निर्गुणः परमः ।। यितेंबभिप्रायमात्मवादमक्कुं । सुगमं ।। नियतिवादमं पेळ्दपरु । :—

जत्तु जदा जेण जहा जस्स य णियमेण होदि तत्तु तदा ।
तेण तहा तस्स हवे इदि वादो णियदिवादो दु ।।८८२।।

यत्तु यदा येन यथा यस्य च नियमेन भवति तत्तु तदा । तेन तथा तस्य भवेदिति वादो नियतिवादस्तु ।।

आउदों दु मत्तें आगळोम्में आउदों दरिंदमाउदों दु प्रकारदिंदमावनोर्व्वंगे नियमदिंदमक्कुमदु मत्तें आगळदरिंदमा प्रकारदिंदमातंगक्कुमें दितें बुदु नियतिवादमें बुदक्कुं ।

स्वभाववादमं पेळ्दपरु :—

वंचितुं न शक्यत एवेति कालवादार्थः ।।८७९।।

आत्मा अज्ञानी अनाथश्च स्फुटं । तस्यात्मनः सुखदुःखस्वर्गनरकगमनागमनादि सर्वमीश्वरकृतमिति ईश्वरवादार्थः ।।८८०।।

एक एव महात्मा पुरुषो देवः सर्वव्यापी सर्वांगनिगूढः सचेतनो निर्गुणः परमश्चेत्यात्मवादार्थः ।।८८१।।

यत्तु यदा येन यथा यस्य नियमेन भवति तत्तु तदा तेन तथा तस्यैव भवेदिति नियतिवादार्थः ।।८८२।।

सोनेपर भी काल जाग्रत् रहता है । कालको कोई नहीं ठग सकता, उसे धोखा देना सम्भव नहीं है । यह कालवादका अर्थ है ।।८७९।।

आत्मा अज्ञानी है, असमर्थ है—कुछ करनेमें समर्थ नहीं है । उसका सुख, दुःख, स्वर्ग या नरकमें जाना सब ईश्वरके अधीन है । ऐसा ईश्वरवादका अर्थ है ।।८८०।।

एक ही महान् आत्मा है । वही पुरुष है, देव है, सर्वव्यापी है, सर्वांगसे गुप्त है, चेतना सहित है, निर्गुण है, सर्वोत्कृष्ट है ऐसा मानना आत्मवाद है ।।८८१।।

जो, जब जिस द्वारा जैसे जिसका नियमसे होनेवाला है, वह उसी कालमें, उसीके द्वारा, उसी रूपसे नियमसे उसका होता है, ऐसा मानना नियतिवाद है ।।८८२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को करइ कंटयाणं तिक्खत्तं मियविहंगमादीणं।
विविहत्तं तु सहाओ इदि सव्वंपि य सहाओ त्ति ॥८८३॥

कः करोति कंटकानां तीक्ष्णत्वं मृगविहंगमादीनां विविधत्वं तु स्वभाव इति सर्व्वमपि च स्वभाव इति ॥

कंटकंगळगे तीक्ष्णत्वं मृगविहंगंगळ विविधत्वमुमनावं माळ्कुं। मति दुःस्वभावमें दिंतें सर्व्वमुं स्वभावमें दें बुदु स्वभाववादमें बुदक्कुं।

इंतु क्रियावादंगळु नूरेंभत्तुं पेळल्पट्टुवनंतरं चतुरशीतिप्रमितक्रियावादंगळ मूलभंगमं पेळदपरु :—

णत्थि सदो परदोवि य सत्तपयत्था य पुण्णपाऊणा।
कालादियादिभंगा सत्तरि चदुपंतिसंजादा ॥८८४॥

नास्ति स्वतः परतोपि च सप्तपदार्थाश्च पुण्यपापोनाः। कालादिका अपि भंगाः सप्ततिश्चतुः पंक्तिसंजाताः ॥

नास्तित्वद मेले स्वतः परतः एंदिदं स्थापिसि मेले मत्ते पुण्यपापोनंगळं सप्तपदार्थंगळं स्थापिसि मेले काल ईश्वर आत्म नियति स्वभावपंचकमं स्थापिसि इंतु चतुःपंक्तिगळोळक्षसंचार-संजातभंगंगळेप्पत्तप्पुवु। इदवके संदृष्टि :—

का ।	ई ।	आ ।	नि ।	स्व ५		
जी ।	अ ।	आ ।	सं ।	नि ।	बं ।	मो ७
स्वतः	परतः	२				
नास्ति १						

स्वतो जीवः काले नास्ति क्रियते इत्यादि १। २। ७। ५। लब्धभंगंगळु सप्ततिप्रमितंगळप्पुवु। ॥७०॥ मत्तं :—

को नाम कंटकादीनां तीक्ष्णत्वं मृगविहंगमादीनां च विविधत्वं करोतीति प्रश्ने स्वभाव एवेति सर्वं स्वभाववादार्थः ॥८८३॥ इति क्रियावादा उक्ताः। अथाक्रियावादानां मूलभंगानाह—

नास्ति। तस्योपरि स्वतः परतश्च। तदुपरि पुण्यपापोनपदार्थाः सप्त। तदुपरि कालादिकाः पंचेति चतसृषु पंक्तिषु प्राग्वत्संजाता भंगाः स्वतो जीवः कालेन नास्ति क्रियते इत्यादयः सप्ततिः ॥८८४॥

काँटे आदिको तीक्ष्ण किसने बनाया ? मृग, पशु-पक्षी नाना प्रकारके किसने बनाये। ऐसा पूछनेपर उत्तर देता है—स्वभावसे ही ऐसा है। उसमें अन्य कोई कारण नहीं है, ऐसा मानना स्वभाववाद है ॥८८३॥

इस प्रकार क्रियावादी मत कहे। अब अक्रियावादके मूलभंग कहते हैं।

पहले नास्ति पद लिखो। उसके ऊपर स्वतः और परतः लिखो। उसके ऊपर पुण्य और पापको छोड़ शेष सात पदार्थ लिखो। उसके ऊपर काल आदि पांच लिखो। इस प्रकार चार पंक्ति करके पूर्ववत् अक्ष संचार द्वारा भंग होते हैं। जैसे जीव स्वतः कालसे नहीं किया जाता। परतः जीव कालसे नहीं किया जाता। इसी प्रकार जीवके स्थानमें अजीवादि कहनेसे चौदह भंग कालसे होते हैं। इसी तरह ईश्वर आदि पाँचोंकी अपेक्षा चौदह भेद होनेसे सत्तर भंग होते हैं ॥८८४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि य सत्त पदत्था णियदीदो कालदो तिपंतिभवा ।
चोद्दस इदि णत्थित्ते अक्किरियाणं च चुलसीदी ॥८८५॥

नास्ति च सप्तपदार्थाः नियतितः कालतस्त्रिपंक्तिभवाः । चतुर्द्दश इति नास्तित्वे अक्रियाणां चतुरशीतिः ॥

नास्तित्वमं सप्तपदार्थंगळं नियतिकालंगळं मेलें मेलें त्रिपंक्तियं माडि स्थापिसि जीवो नियतितो नास्ति क्रियते इत्याद्यक्षसंचारसंजनिता

नियति । काल २ ।	
जी । अ । आ । बं । नि । बं । मो ७ ।	
नास्ति १ ।	

क्रियावादंगळु पदिनाल्कुं । १।७। २ । कूडि सर्व्वमुमक्रियावादंगळु चतुरशीति प्रमितंगळप्पुवु । ८४ ॥

अनंतरमज्ञानवाद भेदंगळं पेळ्दपरु :—

को जाणइ णवभावे सत्तमसत्तं दयं अवच्चमिदि ।
अवयणजुदसत्ततयं इदि भंगा होंति तेसट्ठी ॥८८६॥

को जानीते नव भावान् सत्वमसत्वं द्वयमवक्तव्यमिति । अवचनयुतसत्वत्रयमिति भंगा भवंति त्रिषष्टिः ॥

जीवाजीवपुण्यपापास्रवसंवरनिर्ज्जराबंधमोक्षंगळं अस्ति । नास्ति । अस्ति नास्ति । अवक्तव्यं । अस्त्यवक्तव्यं । नास्त्यवक्तव्यं । अस्तिनास्त्यवक्तव्यमें दिवनारिवरें वु नुडिव वादंगळु ९ । ७ । लब्ध भंग ६३ अप्पुवु । जीवोऽस्तीति को जानीते । जीवो नास्तीति को जानीते । जीवोऽस्ति नास्तीति को जानीते । जीवोऽवक्तव्य इति को जानीते । जीवोऽस्त्यवक्तव्य इति को जानीते ।

नास्तित्वं सप्तपदार्थान् नियतिकालौ चोपर्युपरिपंक्तीः कृत्वा जीवो नियतितो नास्ति क्रियते इत्यादयश्चतुर्दश स्युः । इत्येवमक्रियावादाश्चतुरशीतिः ॥८८५॥ अज्ञानवादस्य भेदानाह—

जीवादिनवपदार्थेष्वेकैकस्य अस्त्यादिसप्तभंगेष्वेकैकेन जीवोऽस्तीति को जानाति ? जीवो नास्तीति को

पहले नास्ति पद लिखो । उसके ऊपर सात पदार्थ लिखो । उसके ऊपर नियति, काल ये दो लिखो । जीव नियतिसे नहीं है, जीव कालसे नहीं है । जीवकी जगह अजीवादि रखनेसे चौदह भेद होते हैं । इस तरह सब चौरासी भेद होते हैं ।

विशेषार्थ—अक्रियावादियोंमें दो मत जान पड़ते हैं । एक जो काल आदि पाँचोंसे जीवादिको नास्तिरूप कहते हैं । और दूसरे जो केवल काल और नियतिसे नास्तिरूप कहते हैं ॥८८५॥

अज्ञानवादके भेद कहते हैं—

जीव और नौ पदार्थोंमें-से एक-एकके अस्ति आदि सात भंगोंमें-से एक-एकसे जीव है, ऐसा कौन जानता है । अर्थात् जीव है ऐसा कौन जानता है ? जीव नहीं है ऐसा कौन जानता है । जीव है भी और नहीं भी है ऐसा कौन जानता है । जीव अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है ? जीव अस्ति अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है । जीव नास्ति अवक्तव्य है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवो नास्त्यवक्तव्य इति को जानीते। जीवो अस्ति नास्ति अवक्तव्य इति को जानीते। एंदितेकजीवंगेऴु भंगमागलु नवपदार्थंगऴ्गमरुवत्तमूरु भंगंगळप्पुवें बुदत्थं। मत्तं :—

को जाणइ सत्तचऊ भावं सुद्धं खु दोण्णिपंतिभवा।
चत्तारि होंति एवं अण्णाणीणं तु सत्तट्ठी ॥८८७॥

को जानीते सत्वचतुर्भावं शुद्धं खलु द्विपंक्तिभवाश्चत्वारो भवंत्येवमज्ञानिनां तु सप्तषष्टिः॥ शुद्धभावमं पदार्त्थमनों दु पंक्तियागिरिसि मेले अस्ति। नास्ति। अस्ति नास्ति। अवक्तव्यंगळं तिर्य्यग्रूपदिंदं स्थापिसि :—

अस्थि।	नास्थि।	अस्थि नास्थि	अवक्तव्य। ४
शुद्ध पदार्त्थं १			

द्विपंक्तिभवंगळु शुद्धपदार्थोस्तीति को जानीते। पदार्थो नास्तीति को जानीते। पदार्थोस्ति नास्तीति को जानीते। पदार्थोवक्तव्य इति को जानीते एंदितु नाल्कु भंगंगळप्पुवु। उभयमुमरुवत्तेळुमज्ञानंगळ वादंगळप्पुवु। ६७॥

अनंतरं द्वात्रिंशद्वैनयिकवादंगळ मूलभंगंगळं पेळ्दपरु :—

मणवयणकायदाणगविणवो सुरणिवइणाणिजदिवुड्ढे।
बाले मादुपिदुम्मि य कायव्वो चेदि अट्ठचऊ ॥८८८॥

मनोवचनकायदानग विनयः सुरनृपतिज्ञानियतिवृद्धेषु। बाले मातरि पितरि च कर्त्तव्यश्चेत्यष्टचत्वारः॥

जानाति? इत्याद्यालापे कृते त्रिषष्टिर्भवंति ॥८८६॥ पुनः—

शुद्धपदार्था इति लिखित्वा तदुपरि अस्ति, नास्ति, अस्तिनास्ति, अवक्तव्यः इति चतुष्कं लिखित्वा एतत्पंक्तिद्वयसम्भवाः खलु भंगाः शुद्धपदार्थोऽस्तीति को जानीते? इत्यादयश्चत्वारो भवन्ति। एवं मिलित्वा अज्ञानवादाः सप्तषष्टिः ॥८८७॥ वैनयिकवादानां मूलभंगानाह—

ऐसा कौन जानता है? जीव अस्ति नास्ति अवक्तव्य है ऐसा कौन जानता है। इसी प्रकार जीवकी जगह अजीवादि रखनेसे तिरसठ भेद होते हैं ॥८८६॥

पहले शुद्ध पदार्थ लिखो। उसके ऊपर अस्ति, नास्ति, अस्ति-नास्ति, अवक्तव्य चार लिखो। इन दोनों पंक्तियोंके मेलसे चार भंग होते हैं। यथा शुद्ध पदार्थ है ऐसा कौन जानता है आदि। ये मिलकर अज्ञानवादके सड़सठ भंग होते हैं।

विशेषार्थ—अज्ञानवादी अज्ञानको ही पुरस्कृत करते हैं। ज्ञानके विषयभूत नौ पदार्थ हैं और उपायभूत सात तत्त्व हैं। उनके निषेधरूप तिरसठ भंग होते हैं। तथा ज्ञानका विषय शुद्ध पदार्थ है और मौलिक भंग चार होनेसे उनके निषेधरूप चार भंग होते हैं। शेष तीन भंग अवक्तव्यके साथ आद्य तीन भंगोंके मेलसे बनते हैं। इसलिए उन्हें छोड़ दिया है। शुद्ध द्रव्यमें उनका उपयोग सम्भव नहीं होता। इस तरह अड़सठ भंग होते हैं ॥८८७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देव नृपति ज्ञानि यतिवृद्ध बाल मातृपितृगळेंबी एंदु स्थानदोळु मनोविनय वचनविनय कायविनयदानविनयंगळु कर्त्तव्यंगळें बिंतु द्वात्रिंशद्वैनयिकवाद भेदंगळप्पुवु । ३२ ॥ देवे मनोवचनकायदानविनयः कर्त्तव्यः एंदिंतु देवनोळु नाल्कु विनयमागलु देवादिगळेंटरोळं मूवत्तेरडु भंगंगळप्पुवें बुदत्थं ॥

सच्छंददिट्ठिहि वियप्पियाणि तेसट्ठिजुत्ताणि सयाणि तिण्णि ।
पासंडिणं वाउलकारणाणि अण्णाणिचित्ताणि हरंति ताणि ॥८८९॥

स्वच्छंददृष्टिभिविकल्पितानि त्रिषष्टियुक्तानि शतानि त्रीणि । पाखंडिनां व्याकुलकारणानि । अज्ञानि चित्तानि हरंति तानि ॥

स्वच्छंददृष्टिगळिंदं विकल्पिसल्पट्ट मूनूररुवत्तमूरुं पाखंडिगळ व्याकुलकारणवचनंगळु अज्ञानिगळ चित्तंगळं मिथ्यात्वकर्म्मोदर्यादिदं कॆळमाडुववु ॥ मत्तं :—

आलससड्ढो णिरुत्थाहो फलं किंचिण्ण भुंजदे ।
थणं खीरादिपाणं वा पउरुसेण विणा ण हि ॥८९०॥

आलस्याढ्यो निरुत्साहः फलं किंचिन्न भुंक्ते । स्तन क्षीरादि पानवत् पौरुषेण विना न हि ॥ एंदिंतु पौरुषवादमक्कुं ।

देव–नृपति–ज्ञानि–यति–वृद्ध–बाल–मातृ–पितृष्वष्टसु मनोवचनकायदानविनयाश्चत्वारः कर्तव्याश्चेति द्वात्रिंशद्वैनयिकवादाः स्युः ॥८८८॥

स्वच्छन्ददृष्टिभिर्विकल्पितानि त्रिषष्टियुतत्रिशतानि पाखंडिनां व्याकुलकारणवचनानि तान्यज्ञानिचित्तानि हरंति मिथ्यात्वोदयात् ॥८८९॥ पुनः—

आलस्याढ्यो निरुत्साहः फलं किंचिन्न भुंक्ते स्तनक्षीरादिपानवत् पौरुषेण बिना न होति पौरुषवादः ॥८९०॥

वैनयिकवादके मूल भंग कहते हैं—

देव, राजा, ज्ञानी, यति, वृद्ध, बालक, माता-पिताकी मन, वचन, काय और दान-सम्मानसे विनय करना चाहिए। इस तरह आठ प्रकारके व्यक्तियोंकी चार प्रकारसे विनय करनेसे बत्तीस भेद होते हैं।

विशेषार्थ—सब देवों और सब धर्मोंको समान मानकर सबकी समान विनय करना वैनयिकवाद है। उक्त आठ व्यक्तियोंमें प्रायः सभी गर्भित हो जाते हैं। विनयवादमें विवेकको स्थान नहीं है ॥८८८॥

इस प्रकार स्वच्छन्द दृष्टिवालोंके द्वारा कल्पित तीन सौ तिरसठ मतोंके वचन जीवोंमें व्याकुलता पैदा करनेमें कारण हैं। मिथ्यात्वसे ग्रस्त अज्ञानीजन उन वचनोंको सुनकर मुग्ध हो जाते हैं ॥८८९॥

अन्य भी एकान्तवादोंको कहते हैं—

जो आलस्यसे भरपूर है, जिसे कुछ भी करनेका उत्साह नहीं है वह कुछ भी फल भोगनेमें नहीं है। बिना पौरुषके माताके स्तनसे दूध भी नहीं पिया जा सकता है। अतः पौरुषसे ही कार्य सिद्धि होती है। यह पौरुषवाद है ॥८९०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दइवमेव परं मण्णे घिप्पउरुसमण्णत्थयं ।
एसो सालसमुत्तुंगो कण्णो हण्णइ संगरे ॥८९१॥

दैवमेव परं मन्ये धिक्पौरुषमनर्थकं । एष सालसमुत्तुंगः कर्णो हन्यते संगरे ॥

एंबितु दैववादमक्कुं ।

संजोगमेवेत्ति वदंति तण्णा णेवेक्कचक्केण रहो पयादि ।
अंधो य पंगू य वणप्पविट्ठा ते संपजुत्ता णयरं पविट्ठा ॥८९२॥

संयोगमेवेति वदंति तज्ज्ञा नैवैकचक्रेण रथः प्रयाति । अंधश्च पंगुश्च वनं प्रविष्टौ तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टौ ॥

एंदितु संयोगवाद मक्कुं ॥

सइउट्ठिया पसिद्धी दुव्वारा मेलिदेहि वि सुरेहिं ।
मज्झिमपंडवखित्ता माला पंचसुवि खित्तेव ॥८९३॥

सकृदुत्थिता प्रसिद्धिर्दुर्वारा मिलितैरपि सुरैः । मध्यमपांडवक्षिप्ता माला पंचस्वपि क्षिप्तेव ॥

येंबितिदुलोकवादमक्कुं ॥ किं बहुना ।

जावदिया वयणवहा तावदिया चैव होंति णयवादा ।
जावदिया णयवादा तावदिया चेव होंति परसमया ॥८९४॥

यावंतो वचनमार्गा स्तावंत एव नयवादाः । यावंतो नयवादास्तावंत एव परसमयाः ॥

दैवमेव परं मन्ये धिक् पौरुषमनर्थकं एष सालसमुतुंगः कर्णो हन्यते संगरे इति दैववादः ॥८९१॥

संयोगमेवेति वदंति तज्ज्ञा नैवैकचक्रेण रथः प्रयाति । अन्धश्च पंगुश्च वनं प्रविष्टौ तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टाविति संयोगवादः ॥८९२॥

सकृदुत्थिता प्रसिद्धिर्दुर्वारा मिलितैरपि सुरैः, मध्यमपांडवक्षिप्ता माला पंचस्वपि क्षिप्तैवेति लोकवादः किं बहुना ॥८९३॥

यावन्तो वचनमार्गास्तावन्तो एव भवन्ति नयवादाः यावन्तो नयवादास्तावन्त एव भवन्ति परसमयाः ॥८९४॥ अथ परसमयिवचनानामसत्यत्वे कारणमाह—

मैं दैव—भाग्यको सर्वोत्कृष्ट मानता हूँ। पौरुष निरर्थक है उसे धिक्कार हो। देखो; सालवृक्षकी तरह ऊँचा कर्ण महाभारतके युद्धमें मारा गया। यह दैववाद है ॥८९१॥

दैव और पौरुषको जाननेवाले उन दोनोंके संयोगको ही मानते हैं। क्योंकि एक पहियेसे रथ नहीं चलता। उदाहरण है—एक अन्धा और एक लँगड़ा वनमें फँस गये। अचानक दोनोंका वहाँ मिलाप हुआ और अन्धेके ऊपर लँगड़ा पुरुष बैठ गया और इस तरह दोनों नगरमें आ गये। यह संयोगवाद है ॥८९२॥

एक बार जो बात लोकमें फैल जाती है उसे सब देव भी मिलकर मिटा नहीं सकते। जैसे द्रौपदीने अर्जुनके गलेमें वरमाला डाली थी। किन्तु लोकमें प्रसिद्ध हो गया कि पाँचों पाण्डवोंके गलेमें माला डाली है। अर्थात् लोकवाद भी एक मिथ्यावाद है ॥८९३॥

जितने वचनके मार्ग हैं उतने ही नयवाद हैं। और जितने नयवाद हैं उतने पर समय हैं ॥८९४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं परसमयिगळ वचनंगळ असत्यक्के कारणमं पेळ्दपरु :—

परसमयाणं वयणं मिच्छं खलु होइ सव्वहा वयणा ।
जइणाणं पुण वयणं सम्मं खु कहंचिवयणादो ॥८९५॥

परसमयानां वचनं मिथ्या खलु भवति सर्व्वथा वचनात् । जैनानां पुनर्व्वचनं सम्यक्खलु कथंचिद्वचनतः ॥

परसमयानां वचनं मिथ्या खलु भवति सर्वथा वचनात् । जैनानां पुनर्वचनं सम्यक् खलु कथंचिद्वचनात् ॥८९५॥

पर समय अर्थात् अन्य दर्शनोंका वचन मिथ्या है क्योंकि वे वस्तुको सर्वथा एकरूप ही मानते हैं। किन्तु जैनोंका वचन सत्य है; क्योंकि वे वस्तुको कथंचित् उस रूप कहते हैं ॥८९५॥

विशेषार्थ—जैनमतके अनुसार वस्तु अनेकान्तात्मक है। उसमें परस्परमें विरुद्ध प्रतीत होनेवाले अनेक धर्म रहते हैं। एक ही वस्तु नित्य भी है और अनित्य भी है। एक भी है अनेक भी है। भावरूप भी है और अभावरूप भी है। स्वरूपसे भावरूप है और पररूपसे अभावरूप है। जैसे घट घटरूपसे सत् है और पटरूपसे असत् है। यदि ऐसा न माना जाये और घटको केवल सत् ही माना जाये तो जैसे घट-घट रूपसे सत् है वैसे ही पटरूपसे भी सत् हो जायेगा, क्योंकि आप उसे सर्वथा सत् मानते हैं। सर्वथाका मतलब है सब रूपसे या सब प्रकारसे। अतः जो वस्तुको सर्वथा सत् कहते हैं उनका कथन मिथ्या है। प्रत्येक वस्तुका वस्तुत्व दो बातोंपर निर्भर है—स्वरूपका ग्रहण और पररूपका त्याग। स्वरूपका ग्रहण भावरूप है और पररूपका त्याग अभावरूप है। अतः वस्तु भावाभावात्मक है। इसलिए जैनदर्शन वस्तुको कथंचित् सत् और कथंचित् असत् कहता है। कथंचित्का मतलब है किसी अपेक्षासे, सर्वथा नहीं। इसी प्रकार वस्तु नित्य भी है और अनित्य भी है। द्रव्यरूपसे नित्य है और पर्यायरूपसे अनित्य है। अतः किसीको सर्वथा नित्य और किसीको सर्वथा अनित्य कहना भी मिथ्या है। वस्तुके इन अनेक धर्मोंमें-से एक धर्मको ग्रहण करनेका नाम नय है। नय सम्यक् भी होते हैं और मिथ्या भी। यदि एक धर्मको ग्रहण करके वस्तुको बस एक धर्मरूप ही सर्वथा कहा जाता है तो वह मिथ्या है। और यदि एक दृष्टिसे ही उसे उस रूप कहा जाता है तो वह सम्यक् है। इसलिए वस्तुको कथन करनेके जितने मार्ग हैं वे सब नयवाद हैं। और एक-एक नयको ही यथार्थ मानकर उसीका आग्रह करना एकान्तवाद है। प्रत्येक एकान्तवाद परसमय है—मिथ्यामत है। और सब एकान्तोंको सापेक्षरूपसे स्वीकार करना अनेकान्तवाद है। वही जैनमत है। अतः जैनदर्शन समस्त एकान्तवादी दर्शनोंका सापेक्ष समन्वयरूप है ॥८९५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु भगवदर्हत्परमेश्वर चारुचरणारविंदद्वंद्व वंदनानंदित पुण्यपुंजायमान श्रीमद्रायराजगुरु-मंडलाचार्य्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरि चारुचरणार-विंद रजोरंजितललाटपट्टं श्रीमत्केशवण्णविरचितमप्प गोम्मटसारकर्णाटवृत्तिजीवतत्वप्रदीपिके-योळु कर्म्मकांडभावचूळि नामहाधिकारं व्याकृतमादुदु ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे भावचूलिका नाम सप्तमोऽधिकारः ।

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंको वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी श्री अभयनन्दी सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमलरचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें कर्मकाण्डके अन्तर्गत भावचूलिका नामक सातवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥७॥

॥ छंद—कन्दपद्य ॥

देसेवळिगेय्यदे माण्बुवे विसटं वरिवेदु मिंद्रियंगळ् नररं ॥
असुगतिगे पोगवे दुर्व्यसनदिनोंदोंदरिंदमसुभृन्निवहम् ॥१॥
वसवागि वसेगे वनकरि बिसिलोळ् बंधनदिनिप्पं दुःस्थितियवु ।
दुर्व्यसन स्पर्शनमोंदरिमसुभृद्गणमैदुविषयदिं बदंपुदे ? ॥२॥
रसनविषयातिलंपट विसारभं बडिशगरण नेत्राश्रुगळि ।
गसणिगोळु तिप्पुंदं केळ्वेसनिग । भक्ष्यदिनुपस्थितं दुःस्थितियम् ॥३॥

पंचेन्द्रिय विषयवासनाएँ मानवको अपनी इच्छानुसार नचाकर दिग् भ्रमित कर देती हैं। संसारके सभी जीवराशि इन पाँचों में से एक-एक इन्द्रियवासनाके दुर्व्यसनोंमें फँसकर अनेक भव-भवान्तरोंमें उत्पन्न होकर दुःख अनुभव करते हैं तो पाँचों इन्द्रिय वासनाओंकी बात ही क्या बतावें ॥१॥

मदोन्मत्त जंगली हाथी धूपमें खड़ा है। चारों ओरसे दावाग्निके स्पर्शसे बन्धनमें फँसकर दारुण दुःखका अनुभव करता है। इस प्रकार एक स्पर्शनेन्द्रिय वासनामें फँसकर वह इतनी दुःस्थितिको प्राप्त करता है तो पाँचों इन्द्रियोंके वशीभूत होकर ये जीवराशि सुखसे जीवित रह सकता है क्या ? ॥२॥

मछुवा डोरी की एक ओर सूई और माँस का टुकड़ा बाँधकर पानीमें डाल देता है। रसनेन्द्रिय लालसासे आयी हुई मछली उसमें फँसकर आँसू बहाती है। और छटपटाती है। हे व्यसनि मानव ! देखो, खानेकी अभिलाषासे प्राप्त दुःस्थितिको। तुम्हारी भी यही दुःस्थिति होगी ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भरवोंद्रिय विषयकुरवणिसि निमग्ननागे वोःस्थित्यमवम् ।
खरकर किरणमे पेळ्गुं दुरक्षशिक्षा क्षमावलंम्बन वक्षा ॥ ४ ॥
ओंद्रिद्रियद पोंडप्पि बंदोलवि पाव्व शलभनिवहक्कावा– ॥
यंवव वोःस्थित्यमवं मंदिर मंदिरद दीपनिवहमे पेळ्गुम् ॥५॥
'स रि ग म प ध नि गळोळ् नगसरित्समं परिपुतिर्पुदोंविद्रियविम् ॥
शरहतिर्यि वोःस्थित्यमनरण्य पक्कणगणं समंतदे पेळ्गुम् ॥६ ।
कोले·पुसि·कळवु·सतीजननिळोलनतिकांक्षि जिनवचन रुचिरहितम् ॥
तोळल्वंते जगत्त्रयवोलु तोळल्गुं पंचाक्षनायकं मनमनिशम् ॥७।
विषयमशेषं विषयिगे विषदिंदं विषममेंदोडिनितरिनेना ॥
विषयमनुरवने जिनवाग्विषयं तानागदं दु विषयि दुरात्मम् ॥८॥
गोम्मटसारद वृत्तियवोम्मेयुमिद्रियचयक्के सुविषयमागलु ॥
धम्मनतींद्रिय–सौख्यद नेम्मुगेयं वुधर्गे माळ्पुदोंदच्चरिये ? ॥९॥

अब देखो, नासेन्द्रिय (घ्राणेन्द्रिय) विषय वासनाके परिणामको—एक नासेन्द्रियकी विषय वासनाकी ओर आकृष्ट होकर और उसमें तल्लीन रहकर प्राणी दुःस्थितिको प्राप्त करता है (यहाँ उदाहरण नहीं दिया गया है) इस दुष्ट इन्द्रिय वासनासे क्षमाशील समर्थ व्यक्ति ही शिक्षा पा सकता है यह बात सूर्य किरणकी तरह स्पष्ट है, सत्य है ॥४॥

अब नेत्रेन्द्रियकी वासना—प्रत्येक मन्दिरोंमें देदीप्यमान दीपमालाएँ जगमगाती हैं। उनपर नेत्रेन्द्रिय चपलतामें फँसे अनेकों शलभों (कीड़े-मकोड़ों) के समूह मुग्ध होकर आ गिरते हैं और प्राणार्पणकी दुःस्थितिको प्राप्त कर लेते हैं। नेत्रेन्द्रिय वासनाके परिणामोंको वे दीपमालाएँ ही साक्षी दे रही हैं ॥५॥

'स रि ग म प ध नि' नामक सप्त स्वरोंके लयबद्ध तालके अनुसार पर्वतोंसे नीचे कलकल करती नदियाँ बहती हैं। उस नादको अनुकरण करनेवाले व्याधोंके धनुषकी सिंजिनीके झंकारसे मुग्ध होकर शिकारी जीव उसके बाणाघातसे प्राणार्पणकी दुःस्थितिको प्राप्त कर लेते हैं। इन तमाशाओंका वर्णन उन अरण्यवासी शिकारीपुरके व्याधबंधुओंके मुखसे ही सुनें तो ठीक रहेगा ॥६॥

हिंसा, असत्य, चोरी, स्त्रीव्यामोह और अत्याशाके वशीभूत मानव श्रीजिनेश्वरके बताये पंचाणुव्रतों पर रुचि रखता नहीं है और जीवनमें अनेकों दुःख भोगता है। इसी प्रकार तीनों लोकमें स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु और श्रोत्रेन्द्रिय वासनामें फँसा यह मानव-मन सदा काल-भवभवान्तरमें दुःखोंका अनुभव करता रहता है ॥७॥

पंचेन्द्रियोंकी विषयवासनाएँ, इन विषयोंपर असक्त लम्पट व्यक्तिको कालकूट विषसे भी अत्यन्त विषमतर हैं। ऐसा कहनेपर भी जो भगवान् जिनेश्वरके बताये मार्गपर चलनेको उद्युक्त नहीं होता अर्थात् इन विषयवासनाओंको त्यागनेको तैयार नहीं होता तो इसके बराबर लम्पट और दुरात्मा और कौन होगा ? ॥८॥

इस गोम्मटसार (कर्मकाण्ड) की (केशवण्णकी रची) कर्नाटक भाषाकी वृत्तिको जो अपने पाँचों इन्द्रियोंके लिए अत्यन्त श्रेष्ठ वस्तु बना लेता है यानी एक बार मन-वचन-काय-से इसका स्वाध्याय कर लेता है ऐसे विद्वान् भव्योंको अतीन्द्रिय सुख-मुक्तिकी प्राप्ति हो, इसमें आश्चर्य क्या है। अर्थात् उन्हें मोक्ष प्राप्ति सुलभ है ॥९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथ त्रिकरणचूलिकाधिकारः ॥८॥

णमह गुणरयणभूसण सिद्धंतामियमहद्धिभवभावं ।
वरवीरणंदिचंदं णिम्मलगुणमिंदणंदिगुरुं ॥८९६॥

नमत गुणरत्नभूषण सिद्धांतामृतमहाब्धिभवभावं । वरवीरणंदिचंद्रं निर्म्मलगुणमिंद्रनंदिगुरुं ॥ सुगमं ॥

इगिवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं ।
पढमं अधापवत्तं करणं तु करेदि अपमत्तो ॥८९७॥

एकविंशतिमोहक्षपणोपशमननिमित्तानि त्रिकरणानि तत्र । प्रथममधःप्रवृत्तकरणं तु करोत्यप्रमत्तः ॥

अनंतानुबंधिरहित द्वादशकषाय नवनोकषायमें बेकविंशतिमोहनीयकर्म्मक्षपणोपशमननिमित्तंगळधःप्रवृत्तापूर्व्वकरणानिवृत्तिभेददिंदं त्रिकरणंगळप्पुववरोळु प्रथममधःप्रवृत्तकरणमनप्रमत्तसंयतं माळ्कुमातं सातिशयाप्रमत्तनें बोनक्कुं ।

जम्हा उवरिमभावा हेट्ठिमभावेहि सरिसगा होंति ।
तम्हा पढमं करणं अधापवत्तोत्ति णिद्दिट्ठं ॥८९८॥

यस्मादुपरिमभावा अधस्तनभावैः सदृशा भवंति । तस्मात्प्रथमं करणमधःप्रवृत्तमिति निर्द्दिष्टं ॥

नमत गुणरत्नभूषण सिद्धान्तामृतमहाब्धिभवभावं वरवीरनन्दिचन्द्रं निर्मलगुणमिद्रनन्दिगुरुं ॥८९६॥

अनन्तानुबन्धिभ्योऽन्यैकविंशतिचारित्रमोहनीयानां क्षपणाया उपशमस्य च कारणानि त्रीण्यधःप्रवृत्तापूर्वानिवृत्तिकरणानि तेषु प्रथममधःप्रवृत्तकरणं तु सातिशयाप्रमत्त एव करोति ॥८९७॥

गुणरूपी रत्नके आभूषणोंसे शोभित हे चामुण्डराय ! सिद्धान्तरूपी अमृतके महासमुद्रसे प्रकट होनेवाले आचार्य वीरनन्दिरूपी चन्द्रमाको तथा निर्मल गुणोंसे शोभित आचार्य इन्द्रनन्दि गुरुको नमस्कार करो ॥८९६॥

विशेषार्थ—आचार्य नेमिचन्द्रने चामुण्डरायके लिए गोम्मटसारकी रचना की थी। वीरनन्दि और इन्द्रनन्दि उनके गुरु थे। इस प्रकरणमें अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण इन तीन करणोंका कथन है जो जीवकाण्डके प्रारम्भमें आ चुका है। यहाँ आचार्य उनको लेकर एक पृथक् अधिकार द्वारा कथन करते हैं। जो बात यहाँ स्पष्ट न हो उसे जीवकाण्डसे जानना चाहिए ॥८९६॥

अनन्तानुबन्धी चारके बिना चारित्रमोहकी इक्कीस प्रकृतियोंकी क्षपणा और उपशमनामें कारण तीन प्रकारके परिणाम हैं। उन्हें अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण कहते हैं। उनमें-से प्रथम अधःप्रवृत्तकरणको अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती करता है ॥८९७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आउदों दु कारणदिंदमुपरितनसमयभावंगळुमधस्तनभावंगळोडने समानंगळप्पुवदु कारणदिद प्रथमकरणमधःप्रवृत्तमें दितन्वर्थनामं पेळल्पट्टुदु ।

अंतोमुहुत्तमेत्तो तक्कालो होदि तत्थ परिणामा ।
लोगाणमसंखपमा उवरुवरिं सरिसवड्ढिगया ॥८९९॥

अंतर्म्मुहूर्त्तमात्रस्तत्कालो भवेत्तत्र परिणामाः । लोकानामसंख्यप्रमा उपर्य्युपरि सदृशवृद्धिं गताः ॥

आ अधःप्रवृत्तकरणकालमंतर्म्मुहूर्त्तमात्रमक्कुमा कालदोळु संभविसुव विशुद्धिकषाय परिणामंगळुमसंख्यातलोकप्रमितंगळप्पुवल्लि प्रथमसमयानंतर द्वितीयसमयं मोदल्गोंडु मेले मेले सदृशप्रचययुतंगळप्पुवु । अदें तेंदोडे आ प्रथमादिसमयंगळोळु संभविसुव परिणामसंख्यानयनविधानमनंकसंदृष्टियिदं पेळ्वपरु :—

बावत्तरितिसहस्सा सोलसचउचारि एक्कयं चेव ।
धण अद्धाणविसेसे तियसंखा होइ संखेज्जे ॥९००॥

द्वासप्ततित्रिसहस्राणि षोडश चतुश्चत्वारि एकं चैव । धनमध्वानविशेषे त्रिकसंख्या भवति संख्येये ॥

अधःप्रवृत्तकरणसर्व्वपरिणामंगळं धनमें बुदा धनमंकसंदृष्टियोळु द्वासप्तत्युत्तरत्रिसहस्रंगळप्पुवु। ३०७२ ॥ अध्वानमें बुदेरडु तेरनक्कुमल्लि अधःप्रवृत्तकरणकालमूर्ध्वाध्वानमक्कुमदक्के षोडशांकसंदृष्टियक्कुं । ऊ १६ । अनुकृष्ट्यध्वानं तिर्य्यगध्वानमक्कुमवरल्लि संदृष्टि नाल्कुरूप-

यस्मात्कारणादुपरितनसमयभावा अधस्तनसमयभावैः सह समाना भवन्ति तस्मात्कारणात्तत्प्रथमं अधःप्रवृत्तमिति निर्दिष्टं ॥८९८॥

तस्याधःप्रवृत्तकरणस्य कालोऽन्तर्मुहूर्तमात्रो भवति । तत्र काले सम्भवन्तो विशुद्धिकषायपरिणामाः असंख्यातलोकमात्राः सन्ति । ते च तत्प्रथमसमयमादिं कृत्वा उपर्युपरि सर्वत्र सदृशप्रचयवृद्धया वर्धन्ते ॥८९९॥

तत्र तावदंकसंदृष्टया धनं द्वासप्तत्यग्रत्रिसहस्री ३०७२ । ऊर्ध्वाध्वानः षोडशांकः १६ । तिर्यगध्वानश्च-

क्योंकि इस अधःप्रवृत्तकरणमें ऊपरके समय सम्बन्धी भाव नीचेके समय सम्बन्धी भावोंके समान होते हैं। अर्थात् जैसे किसी जीवके दूसरे-तीसरे आदि समयोंमें जैसा भाव होता है वैसा ही भाव किसी जीवके पहले समयमें ही होता है। इससे इस पहले करणको अधःप्रवृत्त कहते हैं ॥८९८॥

उस अधःप्रवृत्तकरणका काल अन्तर्मुहूर्त मात्र होता है। उस कालमें होनेवाले विशुद्धतारूप कषायपरिणाम असंख्यात लोक प्रमाण हैं। वे परिणाम प्रथम समयसे लगाकर ऊपर-ऊपर सर्वत्र समान चयवृद्धिसे बढ़ते हुए होते हैं। अर्थात् पहले समयके परिणामोंसे दूसरे समयके परिणामोंमें जितनी वृद्धि होती है, दूसरे समयके परिणामोंसे तीसरे समयके परिणामोंमें भी उतनी ही वृद्धि होती है। इस प्रकार अन्तिम समय पर्यन्त वृद्धि होती जाती है ॥८९९॥

उन्हें प्रथम अंकसंदृष्टिसे दर्शाते हैं। सर्वधन तीन हजार बहत्तर है। ऊर्ध्वरूप गच्छका

गळवकुं। ४। विशेषमों बुदु प्रचयमक्कुमा प्रचयं ऊर्ध्वप्रचयमें दुं तिर्य्यक्प्रचयमों दु मेरडु भेदमक्कुमल्लि ऊर्ध्वविशेषदोळु संदृष्टि नाल्कु रूपुगळप्पुवु। ४॥ तिर्य्यग्विशेष दोळेकरूपं संदृष्टियक्कुं। १। प्रचयम साधिसुवल्लि त्रिसंख्ये संख्यातक्के संदृष्टियक्कुं। ३१॥ यितागुत्तं विरलु :—

आदिधणादो सव्वं पचयधणं संखभागपरिमाणं।
करणे अधापवत्ते होदि त्ति जिणेहि णिद्दिट्ठं॥९०१॥

आदिधनात्सर्व्वं प्रचयधनं संख्यभागपरिमाणं। करणे अधःप्रवृत्ते भवेदिति जिनैर्न्निर्द्दिष्टं॥

यिल्लियधःप्रवृत्तकरणदोळु आदिधनमें दं प्रचयधनमें दु धनमित्तेरनक्कुमल्लि आदिधनमं नोडलु सर्व्वं प्रचयधनं सप्तविंशतिपंचभागमप्पुदरिदं संख्यातैकभागप्रमाणमक्कु

आदि धन
२५९२
२७
५

एंदितु जिनरिंदं पेळल्पट्टुदु। अदें तें दोडे इल्लि प्रचय धनमंतप्पल्लि मुन्नं प्रचयप्रमाणमरियल्पडुगुमप्पुदरि पदकदिसंखेण भाजिदे पचयमेंदितिल्लि पदमेंबुदधःप्रवृत्तकरणकालप्रमाणमक्कुमदक्के पदिनारें दु संदृष्टियप्पुदरिंदमदर कृतियनिदं १६। १६। पूर्व्वोक्त त्रिकसंख्यासंख्यातदिंदं

तुरंकः ४। ऊर्ध्वविशेषोऽपि चतुरंकः ४। तिर्यग्विशेषो रूपं १। प्रचयसाधनसंख्यातस्त्र्यंकः ३॥९००॥

अधःप्रवृत्तकरणे सर्वं प्रचयधनं आदिधनतः संख्यातैकभागमात्रं स्यात् २५९२ तद्यथा—पद १६।
२७
५

प्रमाण सोलह। तिर्यग्रूप गच्छ चार। ऊर्ध्वरूप विशेष चार। तिर्यग्रूप विशेष एक। चयके साधनके लिए संयातका चिह्न तीन है॥९००॥

विशेषार्थ—करणके सब समय सम्बन्धी परिणामोंकी संख्या सर्वधन तीन हजार बहत्तर है। करणके कालमें जितने समय हों, उनकी रचना ऊपर-ऊपर होती है अतः उसके समयोंके प्रमाणको ऊर्ध्व गच्छ कहा है। एक समयवर्ती किसी जीवके कितने परिणाम होते हैं, किसीके कितने होते हैं। इस प्रकार एक समयमें जितने खण्ड हों उनकी रचना बराबरमें करना। अतः उन खण्डोंका जो प्रमाण हो उसे अनुकृष्टिका तिर्यग् गच्छ कहते हैं। प्रति समय जितने परिणाम क्रमसे बढ़ते हैं उनको ऊर्ध्वरूप अनुकृष्टिको विशेष या चय कहते हैं। आगे चयका प्रमाण जाननेके लिए संख्यातसे भाग दिया जायेगा इससे अंक संदृष्टिमें संख्यातका चिह्न तीनका अंक रखा है। तीनसे संख्यात जानना॥९००॥

अधःप्रवृत्तकरणमें सर्व चयधन आदिधनके संख्यातवें भाग है। सब समयोंके चयके जोड़का जो प्रमाण होता है उसे चयधन कहते हैं। और जितना-जितना चय बढ़ता है उसको छोड़कर सब समयोंके आदिधनको जोड़नेपर जो प्रमाण हो उसे आदिधन कहते हैं। करण सूत्रके अनुसार पदकी कृति और संख्यातसे सर्वधनमें भाग देनेपर ऊर्ध्वचयका प्रमाण होता है। पद अर्थात् सोलहके कृति अर्थात् वर्ग दो सौ छप्पन और संख्यातका चिह्न तीनका भाग सर्वधन तीन हजार बहत्तरमें देनेपर चार पाये। यही ऊर्ध्वचयका प्रमाण जानना। तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणिसि १६। १६। ३। उभयधनमं ३०७२। भागिसुत्तं विरलु ३०७२/१६।१६।३ बंद लब्धं नाल्कप्पुवु ४। तदूर्ध्वप्रचयमेंबुदक्कुं। व्येकपद १६। १। अर्द्धं १५/२। छ्नचय १५/२। ४। गुणो गच्छ १५/२। ४। १६ उत्तर धनमेंदिवधःप्रवृत्तकरणदोळुत्तरधनमेंबुदक्कु। ४८०॥ मी प्रचयधनमं सर्व्वधनदोळु कळेदोडे शेषमिदादिधनमक्कु २५९२। मिदर संख्यातैकभागं सर्व्वप्रचयधनप्रमाणमक्कुमेंबुदु तात्पर्य्यार्त्थं २५९२।५/२७ अपवर्त्तितमिदु ९६।५। गुणित लब्धमिदु ४८०। अदेंतें दोडे प्र ४८०। फ श १। इ २५९२। लब्धशलाके २७/५ मत्तं प्र श २७/५ फ २५९२। इ १। लब्धधन—९६।५। गुणितलब्ध ४८०। ई प्रचयधनमादि धनद संख्यातैकभागमेंदु जिनरिंदं पेळल्पट्टुदु। एकें दोडादिधनद सप्तविंशतिपंचभागमप्पुदरिंदं।

उभयधणे सम्मिलिदे पदकदिगुणसंखरूवहदपचयं ।
सव्वधणं तं तम्हा पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ॥९०२॥

उभयधने सम्मिलिते पदकृतिगुणसंख्यरूपहतप्रचयः। सर्व्वधनं तत् तस्मात्पदकृतिसंख्येन भाजिते प्रचयः स्यात् ॥

कृत्या १६। १६। संख्यातेन च ३ सर्वधने ३०७२। भक्ते ३०७२/१६।१६।३ ऊर्ध्वप्रचयप्रमाणं स्यात् ४। व्येकपद १६—१। अर्ध १५/२ छ्नचय १५/२। ४ गुणो गच्छ १५/२। ४। १६ उत्तरधनं ४८०। एतस्मिन् सर्वधनादपनीते शेषमादिधनं स्यात् २५९२। प्र ४८०। फ श १। इ २५९२। लब्धशलाकाः २७/५ पुनः प्र श २७/५ फ २५९२। इ १ लब्ध ४८०। इति प्रचयधनमादिधनस्य संख्यातैकभागः इति जिनैर्निर्दिष्टं, आदिधनस्य सप्तविंशतिपंचभागमात्रत्वात् ॥९०१॥

एक कम पदके आधेको चयसे और पदसे गुणा करनेपर चयधन होता है। सो एक कम पद पन्द्रहके आधे साढ़े सातको चयसे गुणा करनेपर तीस हुए। उसे पद सोलहसे गुणा करनेपर चार सौ अस्सी चयधन या उत्तरधनका प्रमाण होता है। इसको तीन हजार बहत्तरमें घटानेपर पचीस सौ बानबे रहे, यही आदिधन है। तथा प्रमाण राशि ४८०, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि पच्चीस सौ बानबे। फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणसे भाग देनेपर सत्ताईसका पाँचवाँ भागमात्र शलाका हुई। तथा प्रमाण राशि सत्ताईस शलाकाका पाँचवाँ भाग, फलराशि पच्चीस सौ बानबे, इच्छा एक शलाका। फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणका भाग देनेपर चार सौ अस्सी पाये। ऐसे त्रैराशिक करके सर्वधन तीन हजार बहत्तरको सत्ताईसके पाँचवें भागसे भाग देनेपर चयधन चार सौ अस्सी होता है। अतः चयधन या उत्तरधन आदिधनके संख्यातवें भाग कहा है ॥९०१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिधनमनुत्तरधनमुमं कूडुत्तं विरलवर प्रमाणमेनितक्कुमेंते दोडे पदकृतिगुणितसंख्यरूपविंदं १६। १६। ३। हतप्रचयप्रमाणमक्कुम । ४। २५६। ३। दु सर्व्वधनं द्विसहस्रत्युत्तरत्रिसहस्रप्रमितमक्कुमेंबुदर्थमवु कारणमागि पदकृति । २५६ । संख्ये न । ३ । भाजिते । $\frac{३०७२ ।}{२५६ । ३}$ प्रचयः लब्धं प्रचयप्रमाणमेंदु पेळल्पट्टुदु । ४ ।

चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं ।
आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणं ॥९०३॥

चयधनहीनं द्रव्यं पदभाजिते भवत्यादिपरिमाणं । आदौ चये वृद्धे प्रतिसमयधनं तु भावानां ॥

चयधन ४८० । रहित द्रव्य सर्व्वधनं ३०७२ । आदिधनं शेषमदं २५९२ । पदभजिदे अध्वानदिंदं भागिसुत्तिरलु $\frac{२५९२}{१६}$ आदिधनं भवेत् आदि धनमक्कु १६२ । मादौ ई आदिधनद मेले मेलो प्रतिसमयं चयं पेच्चुंत्तविरलु तु मत्तो प्रतिसमय धनं स्याद् भावानां एंदितु अधः प्रवृत्त करणप्रथमसमयं मोदल्गोंडु चरमसमयपर्य्यंतमाद विशुद्धपरिणामंगळ प्रतिसमयधनमक्कुं । १६२ । १६६ । १७० । १७४ । १७८ । १८२ । १८६ । १९० । १९४ । १९८ । २०२ । २०६ । २१० । २१४ । २१८ । २२२ ॥

आद्युत्तरधने सम्मिलिते पदकृतिगुणितसंख्यरूप १६ । १६ । ३ । हतप्रचयप्रमाणं ४ । २५६ । ३ । भवति तत्सर्वधनं तस्मात्कारणात् पदकृति २५६ । संख्येन ३ भाजिते $\frac{३०७२}{२५६।३}$ प्रचयः स्यादित्युक्तं ॥९०२॥

तत्सर्वधनं ३०७२ चयधनेन ४८० हीनं कृत्वा २५९२ पदेन भक्तं सत् $\frac{२५९२}{१६}$ आदेः प्रथमसमयधनस्य परिमाणं स्यात् १६२ । तस्योपर्येकैकस्मिन् चये ४ वृद्धे सति तु-पुनः अधःप्रवृत्तकरणस्य विशुद्धपरिणामाना प्रतिसमयधनं समागच्छति । १६२ । १६६ । १७० । १७४ । १७८ । १८२ । १८६ । १९० । १९४ । १९८ । २०२ । २०६ । २१० । २१४ । २१८ । २२२ ॥९०३॥

आदिधन और उत्तरधनको मिलानेपर सर्वधन होता है। वह सर्वधन पद या गच्छके वर्गको संख्यातसे और चयसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना है। सो गच्छ सोलहके वर्ग दो सौ छप्पनको संख्यात तीनसे गुणा करनेपर सात सौ अड़सठ होता है और उसे चारसे गुणा करनेपर तीन हजार बहत्तर होता है। इतना ही आदिधन और उत्तरधनको मिलानेपर होता है। अतः पदके वर्ग और संख्यातका भाग सर्वधनमें देनेपर चयका कहा है ॥९०२॥

सर्वधन तीन हजार बहत्तरमें चयधन चार सौ अस्सी घटानेपर पच्चीस सौ बानबे रहते हैं। उसको गच्छ सोलहका भाग देनेपर एक सौ बासठ आते हैं। यही प्रथम समय सम्बन्धी विशुद्ध परिणामोंका प्रमाण है। उसमें एक चय चार मिलानेपर एक सौ छियासठ दूसरे समय सम्बन्धी परिणाम होते हैं। उसमें एक चय मिलानेपर एक सौ सत्तर तीसरे समय सम्बन्धी परिणाम होते हैं। इस प्रकार ऊपर-ऊपर रचना करके एक-एक चय बढ़ाते-बढ़ाते अधःप्रवृत्तकरणके परिणामोंका प्रमाण आता है। यथा—१६२ । १६६ । १७० । १७४ । १७८ । १८२ । १८६ । १९० । १९४ । १९८ । २०२ । २०६ । २१० । २१४ । २१८ । २२२ ॥९०३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पचयधणस्साणयणे पचयप्पभवं तु पचयमेव हवे।
रूऊण पदं तु पदं सव्वत्थ वि होइ णियमेण॥९०४॥

प्रचयधनस्यानयने प्रचयः प्रभवस्तु प्रचय एव भवेत्। रूपोनपदंतु पदं सर्व्वत्रापि भवति नियमेन॥

प्रचयधनमंतप्पल्लि धेल्लोडेयोळं प्रचयमुं प्रभवमुं प्रच
१५
०
०
०
४।४।४
४।४
४।उ
आ।
यमेयक्कुं। तु मत्तो रूपोनपदमे पदमक्कुं नियमदिदं। आ ४। उ ४। ग १५। एकें दोडे प्रथमदय हानिर्व्वा नास्ति वृद्धिर्व्वा नास्ति यें दु प्रथमदोळ् प्रचयमिल्लप्पुदरिदं॥ पदमेगेण विहीणं दुभाजिदं उत्तरेण संगुणिदं। पभवजुदं पदगुणिदं पदगणिदं होइ सव्वत्थ॥ एंदु। पद १५ मेगेण विहीणं १४ दुभाजिदं १४/२। उत्तरेण संगुणिदं १४/२। ४। पभवजुदं २४८। कूडि ३२। पदगुणिदं ३२। १५। पदगूणिदं होइ सव्वत्थ एंदु लब्धं नानूरें भत्तक्कुं। ४८०॥

अनंतरमनुकृष्टि प्रथमखंडप्रमाणमं पेळ्दपरु :—

प्रचयधनस्यानयने सर्वत्रापि प्रचयप्रभवौ तु प्रचय एव स्यात्। गच्छस्तु प्रथमे प्रचयाभावाद्रूपोनतत्पदमेव स्यान्नियमेन। आ ४। उ ४। ग १५। पद १५। मेगेणविहीणं १४ दुभाजिदं १४/२ उत्तरेण संगुणिदं १४/२। ४। पभवजुदं ३२ पदगुणिदं ३२। १५ पदगुणिदं होदि सव्वत्थेति लब्धमशीत्यग्रचतुःशतानि ४८० ॥९०४॥ अथानुकृष्टिप्रथमखंडप्रमाणमाह—

प्रचयधन लानेके लिए विधान कहते हैं—जितनी-जितनी वृद्धि होती है उसे प्रचय कहते हैं। और जो आदिमें होता है उसे प्रभव कहते हैं। ये दोनों यहाँ प्रचयके जोड़का जो प्रमाण है उतना जानना। प्रथम स्थानमें तो चयका अभाव है। अतः यहाँ गच्छका प्रमाण विवक्षित गच्छके प्रमाणसे एक कम जानना। यहाँ ऊर्ध्व रचनामें चयका प्रमाण चार है। अतः आदि चार और उत्तर चार और गच्छके प्रमाण सोलहमें एक घटानेपर गच्छ पन्द्रह रहा। सो करणसूत्रके अनुसार एक हीन पदको दोसे भाग दो, चयसे गुणा करो, और प्रभव अर्थात् आदिको मिलाकर गच्छसे गुणा करो तो गच्छका जोड़ होता है। यह करणसूत्रका अर्थ है। सो यहाँ गच्छ पन्द्रहमें एक घटानेपर चौदह रहे। उसमें दोका भाग देनेपर सात रहे। उसमें चय चारसे गुणा करनेपर अठाईस हुए। उसमें आदि चार मिलानेपर बत्तीस हुए। उसे गच्छ पन्द्रहसे गुणा करनेपर चार सौ अस्सी हुए। यही चयधनका प्रमाण है॥९०४॥

आगे अनुकृष्टि (नीचे और ऊपरके समयोंमें समानता) के प्रथम खण्डका प्रमाण कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पडिसमयधणेवि पदं पचयं पभवं च होइ तेरिच्छे ।
अणुकड्डिपदं सव्वद्धाणस्स य संखभागो दु ॥९०५॥

प्रतिसमयधने पि पदं प्रचयं प्रभवश्च भवति तिरश्चि। अनुकृष्टिपदं सर्व्वाध्वानस्य च संख्यभागस्तु ॥

प्रतिसमयधनदोळं पदमुं प्रचयमुं प्रभवमुं तिर्य्यग्रूपदोळक्कु माद्युत्तरगच्छेगळक्कुमें बुदर्त्थं । तु मत्ते आ तिर्य्यगनुकृष्टि गच्छे सर्व्वाध्वानद संख्यातैकभागमक्कु । मदक्के संदृष्टि $\frac{१६}{४}$ नाल्कु रूपु लब्धमक्कुं । ४ ॥ इंतनुकृष्टिपदं ज्ञातमागुत्तं विरलु :—

अणुकड्डिपदेण हिदे पचये पचयो दु होइ तेरिच्छे ।
पचयधणूणं दव्वं सगपदभजिदं हवे आदी ॥९०६॥

अनुकृष्टिपदेन हृते प्रचये प्रचयस्तु भवेत्तिरश्चि। प्रचयधनोनं द्रव्यं स्वकपदभक्तं भवेदादिः ॥ ऊर्ध्वचयमननुकृष्टिपददिदं भागिसुत्तं विरलु अनुकृष्टिप्रचयमक्कु $\frac{४}{४}$ मी प्रचयमं मुन्निनंते व्येकपद $\frac{\overset{\circ}{४}}{२}$ र्द्धं $\frac{\overset{\circ}{४}}{२}$ घ्नचयमं माडि $\frac{३}{२}$ । १ मत्तदरिदं गुणो गच्छ $\frac{३}{२}$ । १ । ४ । उत्तरधनमिदु ६ । चयधनमक्कुमंतु चयधनमागुत्तं विरलु चयधनहीनं द्रव्यं १६२ । शेषमिदु १५६ । यिदं पदभजिदे १५६ ।

अपि पुनः अनुकृष्टेः प्रतिसमयधनानयने तद्गच्छचयादयः तिर्यगेव स्युः । तत्र गच्छः सर्वाध्वानस्य संख्यातैकभागोंकसंदृष्ट्या $\frac{१६}{४}$ चतुरंकः ४ ॥९०५॥

अनुकृष्टिपदेनोर्ध्वचये भक्ते तत्प्रचयः स्यात् $\frac{४}{४}$ ततः व्येकपदा $\frac{\overset{\circ}{४}}{२}$ र्द्धं $\frac{\overset{\circ}{४}}{२}$ घ्नचयः $\frac{३}{२}$ । १ गुणो गच्छ

अनुकृष्टिका प्रतिसमय धन लानेके लिए अनुकृष्टिका गच्छ आदि सब तिर्यक् रूप ही है । अर्थात् पहले समय सम्बन्धी परिणाम जहाँ लिखे हैं उसीके बराबरमें पहले समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके खण्डोंके परिणाम लिखना चाहिए । इसी प्रकार सब समयोंकी तिर्यक् रचना करना चाहिए । उनमेंसे अनुकृष्टिका गच्छ ऊर्ध्वगच्छके संख्यातवें भाग है । अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा ऊर्ध्व गच्छ सोलह है । उसमें संख्यातके चिह्न चारसे भाग देनेपर अनुकृष्टिका गच्छ चार होता है ॥९०५॥

अनुकृष्टिके गच्छका भाग ऊर्ध्व चयमें देनेपर जो प्रमाण हो उसे अनुकृष्टिका चय जानना । सो अनुकृष्टिके गच्छ चारका भाग ऊर्ध्वचय चारमें देनेपर एक आया । वही अनुकृष्टिका चय है । तथा करणसूत्रके अनुसार एक कम गच्छ तीनका आधा डेढ़को चय एकसे गुणा करनेपर भी डेढ़ रहा । उसे गच्छसे गुणा करनेपर छह हुए । यह अनुकृष्टिमें चयधन जानना । सो प्रथम समय सम्बन्धी परिणाम एक सौ बासठ है । यही प्रथम समय-सम्बन्धी अनुकृष्टिका सर्वधन है । उसमें चयधन छह घटानेपर एक सौ छप्पन रहे । उसमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होदि आदि परिमाणं मं दु लब्धमादि मूवत्तो भत्तक्कुं । ३९ ।।

इंतनुकृष्टियोळादियरियल्पड्त्तिरलु :—

आदिम्मि कमे वड्ढदि अणुकड्ढिस्स य चयं तु तेरिच्छे ।
इदि उड्ढतिरियरयणा अधापवत्तम्मि करणम्मि ।।९०७।।

आदौ क्रमेण वर्द्धतेऽनुकृष्टेश्च चयस्तु तिरश्चि । इत्यूर्ध्वतिर्यग्रचनाऽधःप्रवृत्ते करणे ।।

तदनुकृष्ट्यादियिदं मेले द्वितीयादिखंडंगळोळ क्रमदिदं तिर्य्यगनुकृष्टिचयं पेर्च्चुगुमितूर्ध्व-तिर्य्यग्रचनाद्वयमधाप्रवृत्तकरणपरिणामदोळक्कु । संदृष्टि :—

१६२	१६६	१७०	१७४	१७८	१८२	१८६	१९०	१९४	१९८	२०२	२०६	२१०	२१४	२१८	२२२
३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४
४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५ →
४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६
४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७

अंकसंदृष्टि द्रव्य	३०७२	अर्थ संदृष्टि द्रव्य	≡ ∂
परिणामाध्वान	१६	अध्वान	२ । ११ १ ।
अनुकृष्ट्यध्वान	४	अनुकृष्टि	२ । १ १ ।
← परिणाम विशेष	४	परिणाम विशेष	≡∂ । २ । १ १ १ । २ । १ १ १ । १ ∂
अनुकृष्टि विशेष	१	अनुकृष्टि विशेष	≡ ∂ १ १ १ १ १ । २ १ १ १ । २ १ १ १ ।
संख्यात रूप	१	संख्यात	१

---

३ । १ । ४ इति चयधनेन ६ द्रव्यं १६२ हीनं कृत्वा १५६ । पदेन भक्ते १५६ तदादि भवति ३९ ।।९०६।।
४

तदादेरुपरि द्वितीयादिखंडेषु क्रमेण तिर्यगनुकृष्टिचयो वर्धते इत्येवमूर्ध्वतिर्यग्रचनाद्वयमधःप्रवृत्तपरिणामे स्यात् ।

अनुकृष्टि गच्छ चारसे भाग देनेपर उनतालीस आये । यही प्रथम समय सम्बन्धी अनुकृष्टिका प्रथम खण्ड है ।।९०६।।

उस प्रथम खण्डसे दूसरे आदि खण्डोंमें क्रमसे तिर्यक् रूपसे अनुकृष्टिका एक-एक चय बढ़ानेपर उनतालीस, चालीस, इकतालीस, बयालीस प्रमाण होता है । इसी प्रकार दूसरे समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके खण्डोंमें चालीस, इकतालीस, बयालीस, तैंतालीस प्रमाण होता है । यहाँ दूसरे समयसम्बन्धी और प्रथम समयसम्बन्धी चालीस, इकतालीस और बयालीस-में समानता हुई । इसी प्रकार तीसरे आदि समयोंमें अनुकृष्टि रचना करके नीचेके समय-सम्बन्धी परिणामोंमें समानता जानना चाहिए । इस तरह अधःकरणमें ऊर्ध्वरूप और तिर्यग् रूप रचना जानना । जैसा ऊपर संदृष्टिमें बताया गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्त्थसंदृष्टियोळधःप्रवृत्तकरणपरिणाम रचनाविशेषं तोरल्पडुगुमदें तें दोडे सर्व्वद्रव्यमिदु। ≡a इदं पदकदिसंखेण भाजिदे पचयमें दिदु प्रचयमक्कुं ≡a १ / २१११२११११।१ व्येकप-दार्द्धघ्नचयगुणोगच्छ उत्तरधनमेंबिदिदु चयधनमक्कु। ≡a२१११।−१।२१११ मिदनप- / २१११।२१११।१।२ वर्त्तिसिदोडे ≡a २१११—१ / २१११।१।२ ई उत्तरधनमं चयधणहीणं दव्वं कळेदुळिद शेषमिदु

≡a २१११।१।२ / २१११।१।२ इदं पदभजिदे होदि आदि परिमाण में विदु प्रथमसमयादि धनमक्कुं

≡a २१११।१।२ / २ १११।१।२१११।२ यिदरोळोंदु चयम ≡a १ / a १११।२१११।१ निदं कूडि-दोडे द्वितीयसमयधनमिनितक्कुं ≡a २११११।२ / २१११।१।२।२१११ (धन……३) प्रतिसमय प्रथमधनदोळु

अर्थसंदृष्टौ तु सर्वद्रव्यमिदं ≡ a । पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ≡ a । १ / २१११।२१११।१
व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं ≡ a।२१११−१।२१११ / २१११।२१११।१।२ अपवर्तितं

≡ a २१११−१ / २१११।१२ अनेन हीणं दव्वं— ≡ a।−२१११।१।२ / २ १ १ १ । १।२ पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं

≡ a।२१११।१।२ / २१११।२१११।१।२ अनेकचये ≡ a।१ / २१११।२१११।१ निक्षिप्ते द्वितीयसमयधनं—

इस प्रकार अंकोंके द्वारा दृष्टान्त रूप कथन किया है। इसी प्रकार अर्थसंदृष्टि रूपमें जानना। जो इस प्रकार है—अधःप्रवृत्तकरणके सब परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण है। यह सर्वधन जानना। अधःप्रवृत्तकरणका काल अन्तर्मुहूर्त है उसके समयोंका प्रमाण गच्छ जानना। गच्छके वर्गको संख्यातसे गुणा करके उसका भाग सर्वधनमें देनेपर जो प्रमाण आवे उसे ऊर्ध्वचय जानना। एक कम गच्छके आधेको चयसे गुणा करके फिर गच्छसे गुणा करनेपर चयधन आता है। उसको सर्वधनमें घटानेपर जो शेष रहे उसमें गच्छका भाग देनेपर जो प्रमाण आये वह प्रथम समयसम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण है। उसमें एक चय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विरूपोनगच्छमात्र चयंगळं ≡a २ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ यिवं द्विकदिंदं समच्छेदमं माडिकूडिदोडो

द्विचरमसमयधनमिनितक्कुं ≡a २ १ १ १ । १ २ ऋ ३̊ / २ १ १ १ । १ । २ १ १ १ । २ यिदरोळोंदु चयमं :—

≡a १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ द्विकदिंदं समच्छेदमं माडि कूडिदोडिदु चरमसमयधनमक्कुं—

≡a २ १ १ १ १ । २ ऋ १̊ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २

अनंतरमनुकृष्टिरचनाविशेषं तोरल्पडुगुमदेंतेंदोडे अणुकड्ढिपदेण हिदे पचये पचयं तु होदि तेरिच्छे एंदितनुकृष्टिपददिदमूर्ध्वचयमं भागिसुत्तं विरलु आ अनुकृष्टिप्रचयमक्कुं ≡a १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ । १ १ यितनुकृष्टिप्रचयं सिद्धमागुत्तं विरलु व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनमेंदितनुकृष्टिचयधनमं तरुत्तिरलिनितक्कुं ≡a २ १ १ १ । २ १ १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ २

≡a । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ द्विरूपोनगच्छमात्रचये ≡ a । २ १ १ १—२ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १

निक्षिप्ते द्वाभ्यां समच्छेदेन द्वितीयचरमसमयधनं ≡ a । २ १ १ १ । १ । २ । ऋ ३̊ / २ १ १ १ । १ । २ १ १ १ । २

पुनरेकचये ≡ a । १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ वृद्धे चरमसमयधनं स्यात् ≡ a २ १ १ १ । १ । २ ऋ १̊ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ २

अनुकृष्टिरचना तु अनुकृष्टिपदेनोर्ध्वचये भक्तेऽनुकृष्टिप्रचयः स्यात् ≡ a । १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १

व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ इत्यनुकृष्टिचयधनमानीय ≡ a । २ १ १–१ । २ १ १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ २

मिलानेपर दूसरे समयसम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण होता है। इस प्रकार एक-एक चय मिलानेसे दो कम गच्छ प्रमाण चय मिलनेपर द्विचरम समय सम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण होता है। उसमें एक चय मिलानेपर अन्तसमयसम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण होता है। अब अनुकृष्टि रचना कहते हैं—

जिस समय सम्बन्धी अनुकृष्टि हो, उस समयके परिणामोंका समूह उस अनुकृष्टिका सर्वधन होता है। अधःप्रवृत्तकरणके कालके जितने समय हैं उनमें संख्यातका भाग देनेपर जो प्रमाण हो उसे अनुकृष्टिका गच्छ जानो। अनुकृष्टिके गच्छका भाग ऊर्ध्वचयमें देनेपर अनुकृष्टिके चयका प्रमाण होता है। एक कम अनुकृष्टिके गच्छके आधेको अनुकृष्टिके चयसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपवर्तितमिदु ≡ a २ १ १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ ई धनमं प्रतिसमयदादिधन दोळिदरोळु

≡ a २ १ १ १ १ २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ कळेदोडे शेषमितुटक्कु ≡ २ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २

मिदननुकृष्टिय पददिदं भागिसुत्तं विरलु अनुकृष्टियादि धनमक्कु ≡ a २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ । १ १ २

मिदरोळु रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचयंगळं द्विकदिदं समच्छेदमं माडि ≡ a २ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ २ ।

यिदरोळु गुणकारभूतऋणरूपिनेरडुं चयंगळं धनरूपदेरडुं चयक्के सरिगळेवु शेषानुकृष्टि द्विगुण-

पदमात्रचयंगळं कूडिदोडिदु प्रथमानुकृष्टि चरमखंडधनमक्कुं ≡ a २ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ २

अपवर्त्य ≡ a । २ १ १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २

आदिधने ≡ a । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २

अपनीते शेषं ≡ a । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २

अनुकृष्टिपदेन भक्तमनुकृष्टयादिधनं स्यात्— ≡ a । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ a । २ १ १ - १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

गुणा करके गच्छसे गुणा करनेपर अनुकृष्टिके चयधनका प्रमाण होता है। उसको प्रथम समय सम्बन्धी परिणामोंमें-से घटानेपर जो शेष रहे उसमें अनुकृष्टिके गच्छसे भाग देनेपर जो प्रमाण हो वही प्रथम समय सम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डका प्रमाण होता है। उसमें एक चय मिलानेपर दूसरे खण्डका प्रमाण होता है। इस प्रकार एक-एक चय मिलाते हुए एक कम अनुकृष्टिके गच्छ प्रमाण चय मिलानेपर प्रथम अनुकृष्टिके

मत्तमा प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधनदोळेकानुकृष्टिचयमं द्विकदिदं समच्छेदमं माडिदिदं ≡ ० । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ २ कूडिदोडे द्वितीयसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधनमक्कुं ।

≡ ० २ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ २ मिदरोळु रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचयंगळं द्विकदिदं समच्छेदमं माडि ≡ ० २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ । २ इदरऋणरूपं गुणकारसहित तेगवेरडु रूपुगळं धनद नाल्कुं रूपुगळोळगेरडु धनरूपुगळं सरिगळेदु द्विगुणपदमात्रंगळं कूडिदोडेरडु धनरूपुगळु सहितमागिदु तच्चरमानुकृष्टिखंडधनमक्कुं ≡ ० २ १ १ १ १ २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ । २ मत्तमा

ऋणरूपद्वयं धनरूपद्वयेन समानमिति दत्वा वृद्धे प्रथमानुकृष्टिचरमखण्डधनं स्यात् ।

≡ ० । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

पुनः तत्प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डधने एकानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ ० । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

वृद्धे द्वितीयसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डधनं स्यात् ≡ ० । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ ० । २ १ १ १—१ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

ऋणरूपं सगुणाकारं गृहीत्वा धनचतुष्कस्य रूपद्वयं समानमिति दत्वा शेषे द्विगुणपदमात्रे निक्षिप्ते रूपद्वयसहितं भूत्वा तच्चरमानुकृष्टिखण्डधनं स्यात् ≡ ० । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

अन्तिम खण्डका प्रमाण होता है। उस प्रथम समय सम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डके प्रमाणमें अनुकृष्टिका एक चय मिलानेपर दूसरे समय सम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डका प्रमाण होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि खण्डोंमें एक-एक चय मिलाते-मिलाते एक कम अनुकृष्टिके गच्छ प्रमाण चय मिलानेपर दूसरे समय सम्बन्धी अनुकृष्टिके अन्तिम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथमसमयानुकृष्टि प्रथमखंडधनदोळु द्विरूपोनोर्ध्वपदमात्रानुकृष्टिचयंगळं द्विकर्विदं समच्छेदमं माडिदो राशियं = a २ १ १ १—२।२ / २ १ १ १। २ १ १ १ १। २ १।१ २ कूडिदोडधःप्रवृत्तकरणद्विचरमसमयानु-

कृष्टि प्रथमखंडधनमक्कुं। = a २। २ १ १ १ १। २ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २ यो राशियोळु रूपोनानु-

कृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचयंगळं द्विकर्विदं समच्छेदमं माडि = a २ १ १। १। २ / २ १ १ १ १।२ १ १।१।२ १ १। २

दी राशियं कूडिदोडे तद्द्विचरमसमयानुकृष्टि चरमखंडधनमक्कुं = a। २ १ १ १ १। २ ऋ ४ / २ १ १ १।२ १ १ १।१।२ १ १। २

मत्तमा द्विचरमसमयानुकृष्टि प्रथमखंडदोळेकानुकृष्टिचयमं द्विकर्विदं समच्छेदमं माडि = a १। २ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २ दी राशियं कूडिदोडे चरमसमयानुकृष्टि प्रथम-

---

पुनस्तत्प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डधने द्विरूपोनोर्ध्वपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन—

= a। २ १ १ १–२। २
२ १ १ १। २ १ १ १। २ १ १। २

वृद्धे द्विचरमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डधनं स्यात् = a। २ १ १ १। १। २ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन = a। २ १ १–१। २ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २

वृद्धे द्विचरमसमयानुकृष्टिचरमखण्डधनं स्यात्— = a। २ १ १ १। १। २ ऋ ४ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २

पुनस्तद्द्विचरमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डे एकानुकृष्टिचये समच्छेदेन = a–१। २ / २ १ १ १। २ १ १ १। १। २ १ १। २

खण्डका प्रमाण होता है। तथा प्रथम समय सम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डके प्रमाणमें दो कम ऊर्ध्वगच्छ प्रमाण अनुकृष्टिके चय मिलानेपर द्विचरम समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डका प्रमाण होता है। उसके द्वितीयादि खण्डोंमें एक-एक चय मिलाते हुए एक कम अनुकृष्टिके गच्छ प्रमाण चय मिलानेपर उसके अन्तिम खण्डका प्रमाण होता है। द्विचरम समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डके प्रमाणमें एक अनुकृष्टि चय मिलानेपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खंडधनमक्कुं । ≡ a २ १ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २ मी धनदोळु रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानु-चयंगळं द्विकदिदं समच्छेदमं माडि ≡ a २ १ १ — १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २ दो राशियं कूडि दोडिदु चरमसमयानुकृष्टि चरमखंडधनप्रमाणमक्कुं ≡ a २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

यितर्थसंदृष्टियोळाद्यंतद्विसमयद्विसमयंगळ ऊर्ध्वतिर्यग्रचना संदृष्टि :—

≡ a २ १ १ १ । १ । २ ऋ १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २	≡ a २ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । २ १ । २	≡ a २ १ १ १ १ । २ ऋ २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २
≡ a २ १ १ १ १ । २ ऋ ३ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २	≡ a १ १ १ १ । २ ऋ २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ २	≡ a २ १ १ १ १ । २ ऋ ४ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ । १ १ । २
≡ a २ १ १ १ १ । २ धन ३ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २	≡ a २ १ १ १ १ । २ धन ४ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ । २ १ १ २	≡ a २ १ १ १ १ । २ धन २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ १ २ १ १ २
≡ a २ १ १ १ १ । २ धन १ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २	≡ a २ १ १ १ १ । २ धन २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २	≡ a २ १ १ १ १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

वृद्धे चरमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डधनं स्यात् ≡ a २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन— ≡ a । २ १ १ — १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

वृद्धे चरमसमयानुकृष्टिचरमखण्डधनं स्यात्[1] ≡ a । २ १ १ १ । १ । २ / २ १ १ १ । २ १ १ १ । १ । २ १ १ । २

अन्त समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके प्रथम खण्डका प्रमाण होता है। उसके द्वितीयादि खण्डोंमें एक-एक चय मिलाते-मिलाते एक कम अनुकृष्टिके गच्छ प्रमाण चय मिलानेपर अधःप्रवृत्तकरणके अन्त समयसम्बन्धी अनुकृष्टिके अन्तिम खण्डका प्रमाण होता है।

१. अत्रोपकारिणी रचना जीवकाण्डे ४९ तमगाथायां दृष्टव्या।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक जीव	एक जीव	नाना जीव	नाना जीव	अनि २ १
ए । का	नाना	ए । का	ना का	अपू २११
१	२१ १ १	१०८	≡ ०	अधः २ १ १ १

अनंतरमधःप्रवृत्तकरणरचनाभिप्रायं पेळल्पडुगुं । अदें तें दोडे अप्रमत्तसंयतनुपमश्रेण्यारोहण-निमित्तमागियुं मेणु क्षपकश्रेण्यारोहणनिमित्तमागियुमधःप्रवृत्तकरणमं माळ्कुमा करणकालमुं अंतर्म्मुहूर्त्तं प्रमाणमक्कुमादोडमनिवृत्तिकरणकालमनिदं । २१ । नोडलपूर्व्वकरणकालमिदु । २११ । संख्यातगुणितमक्कु–। मदं नोडलधःप्रवृत्तकरणकालं संख्यातगुणितमक्कु–। २१११ । मा कालदोळु संभविसुव संज्वलनदेशघातिस्पर्द्धकक्रोधादिकषायविशुद्धिपरिणामस्थानंगळुमसंख्यातलोकमात्रं-गळप्पुववुं संज्वलनक्रोधादिकषायंगळ सर्व्वघातिस्पर्द्धककषायसंक्लेशस्थानंगळं नोडलसंख्यातैक भागमात्रंगळप्पुवु । आ संज्वलनसर्व्वघाति स्पर्द्धकोदयस्थानंगळगनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यान-क्रोधादिकषायंगळोडनल्लदुदयमिल्लप्पुदरिनी यप्रमत्तसंयतनोळुदयमिल्ल–। मधःप्रवृत्तकरण

अप्रमत्तसंयतः उपशमश्रेणिं क्षपकश्रेणिं वाऽऽरुह्मधःप्रवृत्तकरणं करोति । तस्य कालोऽन्तर्मुहूर्तोऽप्यनिवृत्ति-करणकालात्संख्यातगुणापूर्वकरणकालात्संख्यातगुणः २ १ १ १ तत्र संज्वलनदेशघातिस्पर्धकविशुद्धिपरिणाम-स्थानानि शेषकषायसहचरिततत्सर्वघातिस्पर्धकसंक्लेशस्थानेभ्योऽसंख्यातैकभागमात्राण्यप्यसंख्यातलोकमात्राणि । तत्राप्यनुकृष्टिजघन्यखण्डस्य जघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानं जिनदृष्टोऽष्टांकः । ततस्तदुत्कृष्टमनंतगुणं । कुतः ? तस्योपर्यनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्य सकृदसंख्यातभागवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमेऽसंख्यातभागवृद्धिस्थाने संख्यातभागवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमे संख्यातभागवृद्धिस्थाने संख्यातगुणितवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमे संख्यातगुणवृद्धिस्थाने असंख्यातगुणवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमेऽसंख्यातगुणवृद्धिस्थानेऽनंतगुणवृद्धिस्थानानि । मिलित्वेमानि रूपाधिक-सूच्यंगुलासंख्यातस्य घनगुणितवर्गमात्राण्येकं षड्वृद्धिस्थानं एतानि तत्रासंख्यातलोकाः सन्तीति कारणात् । ततस्तद्द्वितीयखण्डस्य जघन्यविशुद्धिस्थानमनन्तगुणं अष्टांकत्वात् । एवं सर्वखण्डेषु स्वस्वजघन्यस्थानात्स्वस्वो-त्कृष्टस्थानं ततोऽनंतरखण्डस्य जघन्यस्थानं चानन्तगुणमनन्तगुणं ज्ञातव्यं । तत्प्रथमखण्डस्य प्रथमखण्ड-चरमखण्डस्य चरमखण्डं च विनोपरितनखण्डपरिणामाः अधस्तनखण्डपरिणामैः सह यथासम्भवं सदृशा इत्ययं करणोऽधःप्रवृत्तसंज्ञः स्यात् ॥

[अप्रमत्तसंयतः उपशमश्रेण्यारोहणनिमित्तं वा क्षपकश्रेण्यारोहणनिमित्तमधःप्रवृत्तकरणं करोति । तस्य कालोऽतर्मुहूर्तोऽप्यनिवृत्तिकरणकालतः २ १ संख्यातगुणापूर्वकरणकालात् २ १ १ संख्यातगुणः २ १ १ १ तत्र सम्भविसंज्वलनदेशघातिस्पर्धकक्रोधादिकषायविशुद्धिपरिणामस्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि । तानि च संज्वलनक्रोधादिकषायसर्वघातिस्पर्धककषायसंक्लेशस्थानेभ्योऽसंख्यातैकभागमात्राणि । तत्संज्वलनसर्वघाति-

तथा अप्रमत्त संयत गुणस्थानवर्ती उपशमश्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी चढ़नेके लिए भी अधःप्रवृत्तकरण करता है। उसका भी काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। फिर भी अनिवृत्तिकरणके कालसे संख्यातगुणा काल अपूर्वकरणका है और उससे भी संख्यातगुणा काल अधःप्रवृत्तकरण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथमसमयप्रथमानुकृष्टिखंडजघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानं जिनदृष्टमष्टांकमक्कु–। मदं नोडलु तदुत्कृष्टविशुद्धिस्थानमनंतगुणमक्कु मेकें दोडा खंड जघन्याष्टांकस्थानदमेले अनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडेवु ओमें असंख्यातभागवृद्धिस्थानमक्कुमदर मेले मुन्निनंते अनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रस्थानंगळु नडेदु मत्तोम्में यसंख्यातभागवृद्धिस्थानमक्कु–। मितनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडेवोम्में यसंख्यातैकभागवृद्धिस्थानंगळागुत्तं विरलु मा असंख्यातभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रवृद्धिस्थानंगळप्पुवंतागुत्तं विरलु मत्तमनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडदोम्में संख्यातभागवृद्धिस्थानमक्कु–। मदर मेले मुन्निनंतेयनंतभागवृद्धिस्थानंगळागि योम्मोम्में यसंख्यातभागवृद्धिस्थानंगळागुत्तमुमा असंख्यातभागवृद्धिस्थानंगळुं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळागि मुंदनंतभागवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडदु मत्तमोम्में संख्यातभागवृद्धिस्थानमक्कुमी प्रकारदिदमी संख्यातभागवृद्धिस्थानंगळुं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळागुत्तं विरलु मुंदे मत्तमनंतभागादिवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडनडदोम्में संख्यातगुणवृद्धिस्थानमक्कु–। मितु मुन्निनंते अनंतभागवृद्धिस्थानंगळुं असंख्यातैकभागवृद्धिस्थानंगळुं संख्यातैकभागवृद्धिस्थानंगळु मावर्त्तिसि यावर्त्तिसि योम्मोम्में संख्यातगुणवृद्धिस्थानंगळागुत्तमा संख्यातगुणवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागवृद्धिस्थानंगळप्पुवु।

स्पर्धकोदयस्थानानामनंतानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधादिकषायैरेवोदयादत्राप्रमत्ते उदयो नास्ति। अधःप्रवृत्तकरणप्रथमसमयप्रथमानुकृष्टिखण्डस्य जघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानं जिनदृष्टोऽष्टांकः। ततस्तदुत्कृष्टमनन्तगुणं। कुतः? तस्योपर्यनन्तभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्य सकृदसंख्यातभागवृद्धिस्थानं। तस्योपरि पूर्ववदनन्तभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा पुनरेकवारमसंख्यातभागवृद्धिस्थानं। एवमसंख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि स्युस्तदा पुनरनन्तभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वैकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानं स्यात् तस्योपरि पूर्ववदनन्तभागवृद्धिसहचरितासंख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि। तदग्रेऽनन्तभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा पुनरेकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानं। एवं संख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि नीत्वाग्रे पुनरनन्तभागादिवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्यैकवारं संख्यात-

---

का है। उसमें जो संज्वलन कषायके देशघातिस्पर्धकोंके उदयरूप विशुद्धिपरिणामोंके स्थान हैं वे अन्य प्रत्याख्यानादि कषायोंके साथ उदयमें आनेवाले संज्वलन कषायके सर्वघाती स्पर्द्धकोंके उदयरूप संक्लेश स्थानोंके असंख्यातवें भाग हैं फिर भी वे असंख्यात लोकप्रमाण हैं। वहाँ भी अनुकृष्टिका जघन्य पहले खण्डका जघन्य विशुद्धिपरिणाम स्थान सर्वज्ञके द्वारा देखे गये अष्टांक प्रमाण अनन्त गुण वृद्धिको लिये हुए है। अर्थात् पूर्व परिणामके अविभाग प्रतिच्छेदोंके प्रमाणसे अनन्तगुणे अविभाग प्रतिच्छेदोंका समूहरूप स्थान है। कषायोंके उदयरूप स्थान असंख्यात हैं। उनमें अविभाग प्रतिच्छेदोंके रूपमें परिणामोंका प्रमाण अनन्त हैं। सो जैसे-जैसे निर्मलता होती है वैसे-वैसे विशुद्धताके अविभाग प्रतिच्छेद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुंदेयुमंते अनंतभागादिवृद्धिस्थानंगळ् सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडदु ओम्मे असंख्यातगुणवृद्धिस्थानमक्कु मी असंख्यातगुणवृद्धिस्थानंगळ् मुन्निनंते अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि स्थानंगळु क्रमदिद सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रस्थानंगळावर्त्तिसियावर्त्तिसियोम्मोम्मे असंख्यातगुणवृद्धिस्थानमागुत्तलु मी यसंख्यातगुणवृद्धिस्थानंगळ् सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रवृद्धिस्थानंगळागुत्तं विरलु मुंदे मतमनंतभागादिवृद्धिस्थानंगळु सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रंगळु नडनडदु ओम्मे अनंतगुणवृद्धिस्थानमक्कु मितोंदु षड्वृद्धिस्थानंगळु रूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातैकभागदघनमुं वर्गमुंगुणिसिदनितप्पुवु—

१— १— १— १— १—
२ २ २ २ २
ə ə ə ə ə

अंकसंदृष्टि :—

८	१				
७	२				
	१—				
६	२	२			
	१—	१—			
५	२	२	२		
	१—	१—	१—		
४	२	२	२	२	
	१—	१—	१—	१—	
३	२	२	२	२	२

गुणवृद्धिस्थानं। एवं पूर्ववदनन्तभागवृद्धिस्थानानि असंख्यातैकभागवृद्धिस्थानानि संख्यातैकभागवृद्धिस्थानानि चापवर्त्यापवर्त्यैकैकवारं संख्यातगुणवृद्धिस्थानं भूत्वा-भूत्वा संख्यातगुणवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि स्युः। अग्रे तथैवानन्तभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा एकवारमसंख्यातगुणवृद्धिस्थानं स्यात्। एतानि पूर्ववदनन्तभागवृद्धयसंख्यातभागवृद्धिसंख्यातभागवृद्धिसंख्यातगुणवृद्धिस्थानानि क्रमेण सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यपवर्त्यापवर्त्यैकैकवारमसंख्यातगुणवृद्धिस्थानं इतीमान्यपि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि नीत्वा अग्रे पुनरनन्तभागादिवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा एकवारमनंतगुणवृद्धिस्थानं। एवमेकषड्वृद्धिस्थानानि रूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातैकभागस्य घनवर्गगुणितमात्राणि भवन्ति।

१— १— १— १— १—
२ २ २ २ २
ə ə ə ə ə

बढ़ते हैं। इससे यहाँ अनन्त गुणापन सम्भव होता है। उस पहले खण्डके जघन्यसे उसका ही उत्कृष्ट अनन्तगुणा है। क्योंकि उस जघन्यके ऊपर सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण अनन्त भागवृद्धिरूप स्थान होनेपर एक बार असंख्यात भागवृद्धि स्थान होता है। इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग असंख्यात भागवृद्धि स्थान होनेपर पुनः एक बार पूर्ववत् करनेपर अन्तिम असंख्यात भागवृद्धिके स्थानपर संख्यात भागवृद्धि होती है। इसी प्रकार सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण संख्यात भाग वृद्धि स्थान होनेपर पुनः एक बार पूर्ववत् करनेपर अन्तमें संख्यात भागवृद्धिके स्थानपर संख्यात गुणवृद्धि होती है। इसी प्रकार उतने ही संख्यात गुणवृद्धि स्थान होनेपर पुनः एक बार पूर्ववत् करनेपर अन्तमें संख्यात गुणवृद्धिके स्थानपर असंख्यात गुणवृद्धि होती है। इसी प्रकार उतने ही असंख्यात गुणवृद्धि स्थान होनेपर पुनः एक बार पूर्ववत् करनेपर अन्तमें असंख्यात गुणवृद्धिके स्थानपर अनन्त गुणवृद्धि होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व्वमेलने एवं भवति–$\frac{१}{२}$ $\frac{१}{२}$ $\frac{१}{२}$ $\frac{१}{२}$ $\frac{१}{२}$ इंतागुत्तं विरलु इंतप्प षट्स्थानंगळा प्रथमसमयप्रथमानुकृष्टि खंडदोळु असंख्यातलोकमात्रंगळप्पुवप्पुदरिंदमनंतगुणित्वं सिद्धमक्कु मदं नोडलु तत्प्रथमसमयद्वितीयानुकृष्टिखंडजघन्यवृद्धिस्थानमष्टांकमप्पुदरिंदमनंतगुणमक्कुमेके दोडे छट्ठाणाणं आदी अट्ठंकं होदि चरिममुव्वंकमें दितेल्ला प्रथमसमयसमस्तानुकृष्टिखंडंगळजघन्यंगळष्टांकंगळप्पुवु। उत्कृष्टमुव्वंकंगळेयप्पुववितु स्वजघन्यमं नोडलु स्वोत्कृष्टस्थानंगळुमनंतगुणंगळप्पुवु पूर्व्वखंडोत्कृष्ट मुव्वंकमदं नोडलुत्तरखंडजघन्यस्थानमनंतगुणमें ब व्याप्ति एल्लेडेयोळमरियल्पडुगुं। इल्लि प्रथमसमयानुकृष्टि प्रथमखंड सर्व्वस्थानंगळुमसदृशंगळु। द्वितीयसमयप्रथमखंडं मोदल्गोंडु द्विचरमखंडपर्य्यंतमाद सर्व्वस्थानंगळु प्रथमसमयद्वितीयखंडमोदल्गोंडु चरमखंडपर्य्यंतमाद समस्तस्थानंगळोडने समानंगळप्पुवु। इंतु निर्व्वर्गणकांडकपर्य्यंतमुपरितनोपरितनखंडविशुद्धिस्थानंगळ-

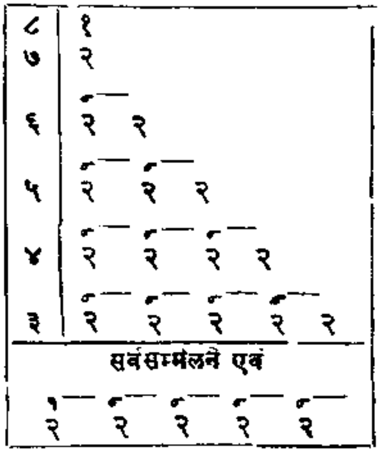

इतीदृशषट्स्थानानि तत्प्रथमसमयानुकृष्टिखण्डे असंख्यातलोकमात्राणि संतीत्यनन्तगुणत्वं सिद्धं। ततस्तत्प्रथमसमयद्वितीयानुकृष्टिखण्डजघन्यवृद्धिस्थानं अष्टांकत्वादनन्तगुणं। कुतः? छट्ठाणाणं आदी अट्ठंकं होदि चरममुव्वंकमिति स्वजघन्यात्स्वोत्कृष्टस्थानमनन्तगुणं पूर्वखण्डोत्कृष्टादुत्तरखण्डजघन्यस्थानमनन्तगुणमिति व्याप्तिसद्भावात्। अत्र प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखण्डसर्वस्थानानि द्वितीयसमयप्रथममादि कृत्वा द्विचरमखण्डपर्यंतसर्वस्थानानि प्रथमसमयद्वितीयखण्डमादि कृत्वा चरमखण्डपर्यंतसमस्तस्थानैः सह समानि एवं निर्वर्गणकाण्डक-

इस प्रकार एक अधिक सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागके घनसे उसीके वर्गको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतने प्रमाण वृद्धियोंके होनेपर एक षट्स्थान पतित वृद्धिरूप स्थान होता है। जीवकाण्डके ज्ञानमार्गणाधिकारमें पर्यायसमास श्रुतज्ञानके वर्णनमें षट्स्थान वृद्धिका जैसा कथन किया है वैसा ही यहाँ भी जानना। ये षट्स्थान उन कषाय स्थानोंमें असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं इससे जघन्यसे उत्कृष्टको असंख्यात गुणा कहा है।

प्रथम खण्डके उत्कृष्टसे दूसरे खण्डका जघन्य अनन्तगुणा है क्योंकि षट्वृद्धिस्थानमें अनन्तगुण वृद्धि—जिसका चिह्न आठका अंक है, पीछे ही पीछे होती है तब दूसरे खण्डका जघन्य स्थान होता है। उससे उसीका उत्कृष्ट अनन्तगुणा है। इस प्रकार सब खण्डोंमें अपने-अपने जघन्यसे अपना-अपना उत्कृष्ट अनन्तगुणा है। और उस उत्कृष्टसे उससे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धस्तनाधस्तनखंडस्थानंगळोडने यथासंभवमागि समानंगळप्पुवप्पुदरिनिु अधःप्रवृत्तपरिणामस्थानंगळप्पुदरिंदमी करणक्कधःप्रवृत्तकरणमें ब पेसरन्वर्थमक्कुं। इंतु ॥

अंतोमुहुत्तकालं गमियूण अधापवत्तकरणं तं।
पडिसमयं सुज्झंतो अपुव्वकरणं समल्लियइ ॥९०८॥

अंतर्मुहूर्त्तकालं नीत्वातदधः प्रवृत्तकरणकालं तं। प्रतिसमयं शुध्यन्नपूर्वकरणं समाश्रयति ॥

तदधः प्रवृत्तकरणकालावसानमागियंतर्म्मुहूर्त्तकालमधः प्रवृत्तकरणकालमं प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धियिदं पेच्चुत्तं कळिदु सातिशयाप्रमत्तनपूर्व्वकरणगुणस्थानमं पोद्दुगु। मा परिणामदोळु धनाध्वानपरिणामविशेषसंख्यातरूपुगळंकसंदृष्टियं पेळदपरु। :—

छण्णउदिचउसहस्सा अट्ठ य सोलसधणं तदद्धाणं।
परिणामविसेसो वि य चउ संखापुव्वकरणम्मि ॥९०९॥

नाल्कु सासिरद तोंभत्तारु ४०९६ धनमुं अध्वानमेंदु ८। परिणामविशेषं पदिनारु १६। संख्यातरूपुगळु नाल्कु। ४। मपूर्व्वकरणपरिणामदोळप्पुवु ॥

पर्यंतमुपरितनोपरितनखण्डविशुद्धिस्थानानि अधस्तनाधस्तनस्थानैर्यथासम्भवसमानानीत्यधःप्रवृत्तत्वादस्याधःप्रवृत्तकरणमित्यन्वर्थनाम। पाठोऽयं कथंचिद्विशेषमादधानः अभयचन्द्रीयटीकायां।] ॥९०७॥

तमधःप्रवृत्तकरणमन्तर्मुहूर्तकालं प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धया वर्धमानः सातिशयाप्रमत्तो नीत्वाऽपूर्वकरणं समाश्रयति ॥९०८॥

तत्रापूर्वकरणेऽङ्कसंदृष्टिधनं षण्णवत्यग्रचतुःसहस्रो। अध्वानोऽष्टौ। परिणामविशेषः षोडश। संख्यातरूपाणि चत्वारि ॥९०९॥

अनन्तर स्थानका जघन्य अनन्तगुणा है। यहाँ प्रथम समयके प्रथम खण्ड और अन्तिम समयके अन्तिम खण्डको छोड़ सब ऊपरके खण्ड सम्बन्धी परिणाम और नीचेके खण्ड सम्बन्धी परिणाम परस्परमें यथासम्भव समानता रखते हैं। इसीसे इसे अधःप्रवृत्तकरण कहते हैं ॥९०७॥

प्रति समय अनन्तगुण विशुद्धिसे बढ़ता हुआ सातिशय अप्रमत्त उस अधःप्रवृत्तकरणके अन्तर्मुहूर्त कालको बिताकर अपूर्वकरणको करता है ॥९०८॥

उस अपूर्वकरणमें अंक संदृष्टिके रूपमें सर्वधन चार हजार छियानबे है। कालका प्रमाण आठ है। परिणाम विशेष सोलह हैं। और संख्यातका प्रमाण चार है। आशय यह है कि अपूर्वकरणके सब स्थानोंके प्रमाण तो सर्वधन है जो चार हजार छियानबे हैं। अपूर्वकरणके कालके समयोंका प्रमाण आठ है। प्रति समय जितनी वृद्धि हो वह परिणाम विशेष सोलह है। इसीका नाम चय है। चय लानेके लिए संख्यातका प्रमाण चार है ॥९०९॥

---

१. ण °संदिट्ठी मु.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतोमुहुत्तमेत्ते पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।
कमउड्ढापुव्वगुणे अणुकड्ढी णत्थि णियमेण ॥९१०॥

अंतर्म्मुहूर्तमात्रे प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामाः । क्रमवृद्धा अपूर्व्वगुणे अनुकृष्टिर्न्नास्ति नियमेन ॥

अपूर्व्वकरणगुणस्थानदोळु अंतर्म्मुहूर्त्तकालमक्कु । २ १ १ । मा कालदोळु प्रतिसमयमसंख्यातलोकमात्रपरिणामंगळप्पुवादोडं प्रथमसमयं मोदलगोंडु द्वितीयादिसमयंगळोळेल्लं चरमसमयपर्य्यंतं सदृशचयदिदं पेच्चुंववोयपूर्व्वकरणपरिणामंगळोळनुकृष्टि येंब भेदमिल्लेकेंदोडुपरितन परिणामस्थानंगळुमधस्तनसमयपरिणामंगळोडनोरसंगळल्ल वप्पुदरिदं । इल्लि धनमिदु ४०९६ । इदं पदकदिसंखेण भाजिदे पचयमेंदितु $\frac{४०९६}{८।८।४}$ इदर लब्धं प्रचयं १६ । व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणोगच्छ उत्तरधनमेंदितु $\frac{\overset{०}{८}}{२}$ । १६ । ८ लब्धमुत्तरधनमिदु । ४४८ । इदु चयधनहीनं द्रव्यं पदभजिते भवत्यादिप्रमाणमेंदितु चयधनरहितद्रव्यमिदु ३६४८ । यिदं पदर्दि भागिसिदोडादिप्रमाणमक्कुं $\frac{३६४८}{८}$ लब्धमादिधनमिदु । ४५६ ॥ आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणंतु भावाणमेंदिदु प्रतिसमय धनमक्कुं

५६८
५५२
५३६
५२०
५०४
४८८
४७२
४५६

अर्त्थसंदृष्टियिदु :—

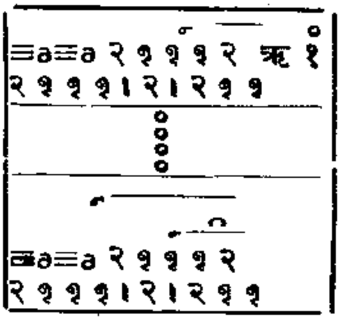

तस्यापूर्वकरणस्य कालेऽतर्मुहूर्तं २ १ १ मात्रे प्रतिसमयं परिणामा असंख्याततलोकमात्रा अत्र प्रथमसमयाच्चरमसमयपर्यंतं सदृशचयवृद्धाः सन्ति । तेषु चानुकृष्टिरचना नास्ति । उपरितनपरिणामानामधस्तनपरिणामैरसादृश्यात् ।

उस अपूर्वकरणका काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उसमें प्रति समय असंख्यात लोक परिणाम होते हैं। वे प्रथम समयसे लेकर अन्त समय पर्यन्त समान चयको लिये हुए बढ़ते जाते हैं। यहाँ अनुकृष्टि रचना नहीं है, क्योंकि ऊपर समयके परिणामोंकी नीचेके समयोंके परिणामोंके साथ समानता नहीं पायी जाती है। किसी जीवका प्रथम समयमें उत्कृष्ट परिणाम हो और किसीका दूसरे समयमें जघन्य परिणाम हो, फिर भी उसके उससे अधिकता ही पायी जाती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदकदिसंखेण भाजिदे पचयमें बिदु प्रचयमक्कं । ≡a≡a 	 व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणो-
२११।२११।१

गच्छउत्तरधनमें दिदुत्तरधनमक्कुं 	२११ – १। ≡a≡a११ 	अपवर्त्तितोत्तरधनमिदु
२११।२११।१।२

≡a≡a२११ – १ 	चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणमें बिदु प्रथमसमयधन-
२११।१।२

मक्कुं ≡a≡a२११२ 	चरमसमय धनमें नितक्कुमें बोडादिधनदोळु रूपोनगच्छमात्र-
२११।१२११।२

५६८
५५२
५३६
५२०
५०४
४८८
४७२
४५६

तद्धनं ४०९६ । पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ४०९६ । लब्धं १६ । व्येकपदार्धघ्नचयगुणो
८।८।४

गच्छ उत्तरधनं ८।१६।८ लब्धं ४४८ । चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदि-
२

परिमाणं ३६४८ । लब्धं ४५६ आदिम्मि चये वड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणमिति ।
८

अर्थसंदृष्टी धनं ≡a≡a पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ≡a≡a
२११।२११।१

व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं २११≡a≡a।२११ अपवर्तितं ≡a≡a२११—१
२११।२११।१।२ 	२११।१।२

चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं— ≡a≡a२११।१।२
२११।२११।१।२

जिन जीवोंको अपूर्वकरण करे पहला समय है उन अनेक जीवोंके परिणाम समान भी होते हैं और असमान भी होते हैं। परन्तु जिनको अपूर्वकरण करे द्वितीयादि समय हुए हैं उनके परिणामोंमें कभी भी समानता नहीं होती। इसी प्रकार जिनको अपूर्वकरण करे द्वितीयादि समय हुआ है उनके परस्परमें समानता भी होती है और असमानता भी होती है, किन्तु ऊपरके तथा नीचेके समयवालोंके साथ परिणामोंकी असमानता ही होती है। इसीसे इसका नाम अपूर्वकरण है। प्रति समय अपूर्व-अपूर्व—जो पहले नहीं हुए ऐसे परिणाम होते हैं।

वहाँ सर्वधन चार हजार छियानवे है। तथा करण सूत्रके अनुसार पद या गच्छ आठका वर्ग चौंसठ तथा संख्यातका चिह्न चारसे सर्वधनमें भाग देनेपर चयका प्रमाण सोलह आता है। और दूसरे सूत्रके अनुसार एक कम गच्छके आधे साढ़े तीनको चय सोलह-से गुणा करके गच्छ आठसे गुणा करनेपर चार सौ अड़तालीस होते हैं। यही चयधन है। तथा तीसरे सूत्रके अनुसार चयधन चार सौ अड़तालीसको सर्वधन चार हजार छियानबेमें-से घटानेपर छत्तीस सौ अड़तालीस रहे। उसमें गच्छ आठसे भाग देनेपर चार सौ छप्पन

चयंगळं ≡a≡a २ १ १ / २ ११ । १ २ । ११ द्विकविंदं समच्छेदमं माडि ≡a≡a । २ १ १ – १ । २ / २ ११ १ । २ ११ । २ कूडिदोडे

चरमसमय धनमिदु ≡a≡a । २ १ १ १ । २ ऋ १ / २ ११ १ । २ ११ । २ ई अपूर्व्वकरणरचनाभिप्रायं पेळल्पडुगुम-

दें तें दोडे अधःप्रवृत्तकरणपरिणाम धनमं नोडलु ≡a । अपूर्व्वकरणपरिणामधनमसंख्यातलोकगुणमक्कु ≡a≡a मी परिणामंगळोळपूर्व्वकरणप्रथमसमयविशुद्धिपरिणामंगळसंख्यातलोकमात्रंगळप्पुववं नोडलु द्वितीयादिसमयविशुद्धिपरिणामंगळु मसंख्यातलोकमात्रंगळेयप्पुवादोडं प्रतिसमयं चयाधिकंगळप्पुवल्लि अपूर्व्वकरणप्रथमसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानमधःप्रवृत्तकरणचरमसमयचरमानुकृष्टिखंडसर्व्वोत्कृष्टविशुद्धिपरिणामस्थानमं नोडलनंतगुणविशुद्धिपरिणामस्थानमक्कुमा जघन्यविशुद्धिस्थानमं नोडलुं तत्प्रथमसमयसर्व्वोत्कृष्टापूर्व्वकरण विशुद्धिस्थानमनंतगुणमक्कुमेकें दोडल्लियसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानंगळप्पुवप्पुदरिंदमा प्रथमसमय सर्वोत्कृष्टविशुद्धिपरिणामस्थानमं नोडलु द्वितीयसमयापूर्व्वकरणसर्व्वजघन्यविशुद्धिस्थानमनंतगुणमक्कु । मा जघन्यमं नोडलु द्वितीयसमयसर्व्वोत्कृष्टविशुद्धिस्थानमनंतगुणमक्कुमेकें दोडा द्वितीयसमयजघन्यस्थानं

अत्र रूपोनगच्छमात्रचयेषु ≡a≡a २ १ १ / २ ११ । १ । २ ११ द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡a≡a २ १ १ – १ । २ / २ ११ । १ । २ ११ । २

वृद्धेषु चरमसमयधनं स्यात् ≡a≡a २ १ १ १ २ । ऋ १ / २ ११ । १ । २ ११ । २ । अत्रायमर्थः—अपूर्वकरणधनमधःप्रवृत्तकरणधनादसंख्यातलोकगुणं ≡a≡a तत्र प्रथमसमयपरिणामाः असंख्यातलोकमात्राः । तेभ्यो द्वितीयादिसमयेषु तदालापा अपि प्रतिसमयं चयाधिकाः सन्ति । तत्प्रथमसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामोऽधःप्रवृत्तकरणचरमखण्डोत्कृष्टविशुद्धिपरिणामादनंतगुणः । ततस्तदुत्कृष्टोऽनन्तगुणः कुतः ? तत्राप्यसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानसम्भवात् । ततो

पाये। यही प्रथम समयसम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण है। तथा चतुर्थ सूत्रके अनुसार आदिके प्रमाणमें एक-एक चयका प्रमाण सोलह-सोलह क्रमसे मिलानेपर आगेके समयोंमें परिणामोंका प्रमाण होता है। जैसे प्रथम समयमें चार सौ छप्पन है। उनमें एक चय मिलानेपर दूसरे समयमें चार सौ बहत्तर होते हैं। उनमें एक चय मिलानेपर तीसरे समयमें चार अट्ठासी होते हैं। इसी प्रकार अन्त समयपर्यन्त जानना। यह तो दृष्टान्त मात्र है।

यथार्थमें अधःप्रवृत्तकरणके परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण हैं। उनको असंख्यात लोकसे गुणा करनेपर अपूर्वकरणका सर्वधन होता है। अपूर्वकरणके कालके समयोंका प्रमाण गच्छ है। गच्छके वर्गको संख्यातसे गुणा करके उसका भाग सर्वधनमें देनेपर चयका प्रमाण होता है। एक कम गच्छके आधेको चयसे गुणा करके फिर गच्छसे गुणा करनेपर चयधनका प्रमाण होता है। चयधनको सर्वधनमें-से घटाकर शेषको गच्छका भाग देनेपर प्रथम समयके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोदल्गोंडसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानंगळु नडदु पुट्टिदप्पुवरिंद। मितु अधस्तनपूर्व्वपूर्व्वसमयोत्कृष्ट-विशुद्धिस्थानमं नोडलुपरितनोपरितनसमयसर्व्वजघन्यविशुद्धिस्थानमनंतगुणमक्कुं। स्वजघन्यमं नोडलु स्वोत्कृष्टमनंतगुणमक्कु। मीयपूर्व्वकरणप्रतिसमयविशुद्धिस्थानंगळोळुपरितनोपरितन-समयविशुद्धिस्थानंगळधस्तनाधस्तनविशुद्धिपरिणामस्थानंगळोडनों दुं समानमल्लप्पुदरिंदमी करणमपूर्व्वकरणमें ब पेसरनुळ्ळुदागुवु। अदुकारणदिंदमपूर्व्वकरणपरिणामंगळ्गनुकृष्टि विशेष-मिल्लेंदु पेळल्पट्टुदपूर्व्वकरणकाल प्रथमसमयं मोदल्गोंडु चरमसमयपर्य्यंतमेकजीवापेक्षेयिं प्रति-समयमनंतगुण विशुद्धिस्थानंगळप्पुवु। नानाजीवापेक्षेयिदं त्रिकालगोचरंगळप्प विशुद्धिस्थानंगळु सदृशंगळुं मेणनंतभागासंख्यातभागसंख्यातभागसंख्यातगुणासंख्यातगुणानंतगुणविशुद्धिस्थानंग-ळप्पुवें बुदपूर्व्वकरणरचनाभिप्रायमक्कु। मनंतरमनिवृत्तिकरणपरिणामस्वरूपमं पेळदपरु।:—

एक्कम्मि कालसमये संठाणादीहि जह णिवट्टंति।
ण णिवट्टंति तहंवि य परिणामेहिं मिहो जे हु॥९११॥

एकस्मिन्कालसमये संस्थानादिभिर्य्यथा निवर्त्तंते। न निवर्त्तंते तथैव च परिणामैर्म्मिथो ये खलु॥

द्वितीयसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामोऽनन्तगुणः। ततस्तदुत्कृष्टोऽनन्तगुणः एवमाचरमसमयं ज्ञातव्यं। यत उपरितनसमयपरिणामा अधस्तनसमयपरिणामैः सदृशा न ततोऽयमपूर्वकरण इत्याख्यायते॥९१०॥ अथानि-वृत्तिकरणस्वरूपमाह—

परिणामोंका प्रमाण होता है। द्वितीयादि समयोंमें परिणामोंका प्रमाण लानेके लिए एक-एक चय मिलाना चाहिए। इस प्रकार एक कम गच्छ प्रमाण चय मिलानेपर अन्त समय सम्बन्धी परिणामोंका प्रमाण होता है।

ऊपर टीकामें जो संदृष्टि दी है उसका अर्थ इस प्रकार है—

अपूर्वकरणका सर्वधन अधःप्रवृत्तकरणके सर्वधनसे असंख्यात लोक गुणा है। उसमें प्रथम समयसम्बन्धी परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण है। उससे द्वितीयादि समयोंमें भी असंख्यात लोक प्रमाण ही परिणाम है। तथापि एक-एक चय बढ़ते-बढ़ते हुए हैं। प्रथम समयसम्बन्धी जघन्य विशुद्धि परिणाम अधःप्रवृत्तकरणके अन्तसमयके अन्तिम अनुकृष्टि खण्डके विशुद्धि परिणामसे अनन्तगुणे हैं। उससे प्रथम समयसम्बन्धी उत्कृष्ट विशुद्धि परिणाम अनन्तगुणा है। क्योंकि अपूर्वकरणमें भी असंख्यात लोक प्रमाण षट्स्थान होते हैं। उससे दूसरे समय सम्बन्धी जघन्य विशुद्धि परिणाम अनन्तगुणा है। इसी प्रकार अन्तिम समय पर्यन्त जानना। यहाँ ऊपरके समयोंमें होनेवाले परिणाम नीचेके समयमें होनेवाले परिणामोंके समान कभी भी नहीं होते इसीसे इसका नाम अपूर्वकरण है॥९१०॥

आगे अनिवृत्तिकरणका स्वरूप कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ये खलु जीवाः आउवु केलवु जीवंगळु स्फुटमागि विवक्षितैकसमयदोळु संस्थानवर्णवयोवेषभावादिगळिंदमें तु ओरोव्वरोळु विसदृशरप्परंते परिणामंगळिदं मिथः परस्परं विसदृशरप्परल्तु विशुद्धिपरिणामंगळिदं विवक्षितैकसमयदोळधःप्रवृत्तापूर्व्वकरणंगळोळु विसदृशविशुद्धियुक्तरें तोळरंतेयनिवृत्तिकरणरोळिल्लें बुदर्त्थं । न विद्यते निवृत्तिः परिणामभेदो एषु करणेषु परिणामेषु तेऽनिवृत्तयः । अनिवृत्तयः करणाः परिणामा एषां तेऽनिवृत्तिकरणाः । एंदितनिवृत्तिकरणरें ब पेसरन्वर्त्थमक्कुं । ई यर्त्थमनें स्फुटीकरिसिदपरु :—

होंति अणियट्टिणो ते पडिसमयं जस्सि एक्कपरिणामा ।
विमलयरझाणहुदवहसिहाहिणिद्दड्ढ कम्मवणा ॥९१२॥

भवेयुरनिवृत्तयस्ते प्रतिसमयं यस्मिन्नेकपरिणामाः । विमलतरध्यानहुतवहशिखाभिर्निर्द्दग्धकर्म्मवनाः ॥

यस्मिन्ननिवृत्तिकरणे प्रतिसमयमेकपरिणामाः । विमलतरध्यानहुतवहशिखाभिर्निर्द्दग्धकर्म्मवनास्तेनिवृत्तयो भवेयुः ॥ सुगमं ।

अनिवृत्तकरणपरिणामाध्वानक्कंकसंदृष्टि नाल्कु ४ । अर्त्थसंदृष्टियंतर्म्मुहूर्त्तं २ १ १
१
१
१

ईयनिवृत्तिकरणरचनाभिप्रायं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे :—अपूर्व्वकरणकालमंतर्म्मुहूर्त्तमदं कळिदु अनिवृत्तिकरणपरिणाममं पोद्दि तत्कालप्रथमसमयं मोदल्गों डु चरमसमयपर्य्यंतं प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धिपरिणामयुतरप्परादोडं विवक्षितसमयदोळें निबर जीवंगळिर्द्दों डमनिबर्गं वर्णादि-

---

ये जीवा अनिवृत्तिकरणकालस्य विवक्षितैकसमये संस्थानवर्णवयोवेषभाषादिभिर्मिथो यथा निवर्तन्ते भिद्यन्ते तथा परिणामैः खल्वधःप्रवृत्तापूर्वकरणवन्न निवर्तन्ते ॥९११॥ अमुमेवार्थं स्फुटीकरोति—

यस्मिन्करणे प्रतिसमयमेकैकपरिणामास्ते विमलतरध्यानहुतवह्निशिखाभिर्निर्दग्धकर्मवना अनिवृत्तयो

जो जीव अनिवृत्तिकरण कालके विवक्षित एक समयमें परस्परमें शरीरके आकार, रूप, वय, वेष, भाषा आदिसे भिन्न-भिन्न होते हैं अर्थात् किसी जीवका आकार आदि किसी प्रकारका होता है किसी जीवका किसी प्रकारका होता है, उनमें समानता नहीं होती। उस प्रकार अधःकरण अपूर्वकरणकी तरह उनमें परिणामोंका भेद नहीं होता अर्थात् जिनको अनिवृत्तिकरणमें आये पहला समय है उन सब त्रिकालवर्ती अनन्त जीवोंके परिणाम समान ही होते हैं, अन्य-अन्य रूप नहीं होते, इसी तरह द्वितीयादि समयवर्ती जीवोंके परिणामोंमें भी समानता पायी जाती है ॥९११॥

इसी अर्थको स्पष्ट करते हैं—

जिस करणमें प्रतिसमय जीवोंके एक-एक ही परिणाम होता है और वह परिणाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेदमुळ्ळोडमेकप्रकारविशुद्धिपरिणामयुतरप्परेकें दोडनिवृत्तिकरणसमयवर्त्तिगळ्गे परिणामांतरं संभविसदें बुदु तात्पर्य्यं ॥

इंतु भगवदर्हत्परमेश्वर चारुचरणारविंदद्वंद्ववंदनानंदित पुण्यपुंजायमानश्रीमद्रायराजगुरुमंडलाचार्य्यमहावादवादीश्वररायवादिपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्ति श्रीमदभयसूरिचारुचरणारविंदरजोरंजितललाटपट्टश्रीमत्केशवण्णविरचितमप्प गोम्मटसारकर्ण्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकेयोळु कर्म्मकांड त्रिकरणचूलिकामहाधिकारं व्याख्यातमादुदु ॥

उरियोळ् शैत्यमनुष्णनोळिवनयमं वुद्धवृत्तनोळसत्यमं
दुरहंकारनोळिज्येयं जरठनोळ्दक्षत्वमं पंदियो- ।
ळधुरघोरत्वमनार्हतागमसुधासंतृप्तनोळ्दोषमं
घोरेगट्टोडुपयोगशून्यने वलं पेळ्गुं बुधं पेळ्गुमे ॥

भवन्ति । तस्याद्धानोऽकसंदृष्टया चतुरंकः । अर्थसंदृष्ट्यांतर्मुहूर्तः ॥९१२॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकाण्डे त्रिकरणचूलिकानाम अष्टमोऽधिकारः ॥८॥

अतिशय निर्मल ध्यानरूप आगकी शिखाके द्वारा कर्मरूपी वनको जला देनेवाले होते हैं उन्हें अनिवृत्ति कहते हैं। उसका काल अंकसंदृष्टिसे चार है और अर्थ रूपसे अन्तर्मुहूर्त है ॥९१२॥

इस प्रकार आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार अपर नाम पंचसंग्रहकी भगवान् अर्हन्त देव परमेश्वरके सुन्दर चरणकमलोंकी वन्दनासे प्राप्त पुण्यके पुंजस्वरूप राजगुरु मण्डलाचार्य महावादी श्री अभयसूरि सिद्धान्तचक्रवर्तीके चरणकमलोंकी धूलिसे शोभित ललाटवाले श्री केशववर्णीके द्वारा रचित गोम्मटसार कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिकाकी अनुसारिणी संस्कृतटीका तथा उसकी अनुसारिणी पं. टोडरमल रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक भाषाटीकाकी अनुसारिणी हिन्दी भाषा टीकामें त्रिकरणचूलिका नामक आठवाँ अधिकार सम्पूर्ण हुआ ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धे विसुद्धनिलये पणट्ठकम्मे विणट्ठसंसारे ।
पणमिय सिरसा वोच्छं कम्मट्ठिदिरयणसब्भावं ॥९१३॥

सिद्धान्शुद्धात्मप्रदेशान् प्रणष्टकर्म्मणो विनष्टसंसारान् । प्रणम्य शिरसा वक्ष्यामि कर्म्मस्थितिरचनासद्भावं ॥

प्रणष्टघात्यघातिकर्म्मरुं विनष्टसंसाररुं शुद्धात्मप्रदेशरुमप्प सिद्धपरमेष्ठिगळ्गं तले एरकदिदं नमस्कारमं माडि कर्म्मस्थितिरचनासद्भावमं पेळ्वेमें दिताचार्य्यंरु प्रतिज्ञेयं माडि पेळ्दरु ।

कम्मसरूवेणागयदव्वं ण य एदि उदयरूवेण ।
रूवेणुदीरणस्स य आबाहा जाव ताव हवे ॥९१४॥

कर्म्मस्वरूपेणागतद्रव्यं न चैत्युदयरूपेण । रूपेणोदीरणायाश्चाबाधा यावत्तावद्भवेत् ॥

कर्म्मस्वरूपदिदं परिणमिसिद कार्म्मणद्रव्यमुदयरूपदिदमुदीरणारूपदिदमुमेन्नेवरं परिणमनमनेय्ददन्नेवरमवक्का कालमाबाधेयें दु पेळल्पट्टुदु । इल्लि उदयापेक्षेयिनाबाधेयं पेळ्दपरु :—

उदयं पडि सत्तण्हं आबाहा कोडकोडिउवहीणं ।
वाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ॥९१५॥

उदयं प्रति सप्तानामाबाधा कोटीकोटघुदधीनां । वर्षशतं तत्प्रतिभागेन च शेषस्थितीनां च ॥

प्रणष्टघात्यघातिकर्मणः विनष्टसंसारान् शुद्धात्मप्रदेशान् सिद्धपरमेष्ठिनः शिरसा प्रणम्य कर्मस्थितिरचनासद्भावं वक्ष्ये ॥९१३॥

कर्मस्वरूपेण परिणतकार्मणद्रव्यं यावदुदयरूपेण उदीरणारूपेण वा नैति न परिणमति तावदाबाधेत्युच्यते ॥९१४॥

जिनके घाती और अघाती कर्म पूर्ण रूपसे नष्ट हो गये हैं अतएव जिन्होंने संसारको विशेषरूपसे नष्ट कर दिया है, तथा विशुद्ध आत्मप्रदेश ही जिनका वासस्थान है उन सिद्ध परमेष्ठीको मस्तकसे नमस्कार करके कर्मस्थिति रचनाके सद्भावको कहते हैं ।

विशेषार्थ—कर्मोंकी स्थितिमें प्रतिसमय निषेकोंमें कितना-कितना कार्माण द्रव्य पाया जाता है ऐसी रचनाके अस्तित्वका कथन करते हैं । यह कथन पहले भी जीवकाण्डके योगमार्गणाधिकारमें तथा कर्मकाण्ड बन्ध उदय सत्त्व अधिकारमें कहा है ॥९१३॥

कर्मरूपसे परिणमा कार्माण द्रव्य जबतक उदयरूपसे या उदीरणारूपसे परिणमन नहीं करता तबतक उस कालको आबाधाकाल कहते हैं ॥९१४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुर्व्वर्जितसप्तमूल प्रकृतिगळ स्थिति कोटीकोटिसागरोपमंगळ्गे शतवर्षमाबाधेयक्कुमंतागुत्तं विरलु तत्प्रतिभागदिंदं शेषस्थितिगळ्गेयुमाबाधाप्रमाणमरियल्पडुगु–। मदेंतेंदोडों दु कोटीकोटिसागरोपमस्थितिगे उदयमं कुरुत्ताबाधे वर्षशतप्रमितमागुत्तिरलु ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयांतरायंगळ मूवत्तु कोटीकोटिसागरोपमंगळ्गेनिताबाधेयक्कुमेंदितु त्रैराशिकं माडल्पडुत्तिरला कोटीकोटिसागरोपमंगळु प्रतिभागमप्पुवु। भागहारंगळप्पुवेंबुदर्त्थं। प्र = सा को २। फ। आ = वर्ष १००। इ=सा ३०। को २। लब्धमाबाधे मूरु सासिर वर्षंगळप्पुवु। ३०००। ई प्रकारदिंदं मोहनीयदेप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपमंगळाबाधे सप्तसहस्रवर्षंगळप्पुवु। व ७०००। नामगोत्रंगळिप्पत्तुकोटीकोटिसागरोपमंगळगाबाधे येरडु सासिरवर्षंगळप्पुवु। व २०००॥ मत्तमाबाधाविशेषमं पेळ्दपरु :—

अंतो कोडाकोडिट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा।
संखेज्जगुणविहीणं सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ॥९१६॥

अंतःकोटीकोटिस्थितेरंतर्म्मुहूर्त्त आबाधा। संख्येयगुणविहीना सर्व्वजघन्यस्थितेर्भवेत् ॥

अंतःकोटीकोटिसागरोपमस्थितिगे आबाधेयंतर्म्मुहूर्त्तं प्रमितमक्कु–। मंतागुत्तं विरलु सर्व्वजघन्यस्थितियुं संख्यातगुणहीनांतःकोटीकोटिसागरोपमंगळप्पु ववक्काबाधेयुं संख्यातगुणहीनांतर्म्मुहूर्त्तमक्कुमदेंतेंदोडे—ओंदु वर्षक्के दिनंगळु मूनूररुवत्तु ३६०। ओंदु दिनक्के मूवत्तु मुहूर्त्तंगळु। ३०। नूरु वर्षंगळ्गे पत्तुलक्षमु मेण्भत्तुसासिर मुहूर्त्तंगळप्पुवु। १०८००००॥ इन्नु त्रैराशिकं

आयुषः पृथग्वक्ष्यतीति सप्तमूलप्रकृतीनामुदयं प्रत्याबाधा कोटिकोट्यब्धिस्थितेर्वर्षशतं स्यात्। शेषस्थितीनामपि तत्प्रतिभागेन ज्ञातव्या। तद्यथा—एककोटीकोट्यब्धीनां वर्षशतमाबाधा तदा द्व्यावरणवेदनीयांतरायाणां त्रिंशत्कोटीकोट्यब्धीनां कियतीति लब्धा त्रिसहस्रवर्षाणि व ३०००। एवं मोहनीयस्य सप्ततिकोटीकोट्यब्धीनां सप्तसहस्रवर्षाणि व ७०००। नामगोत्रयोर्विंशतिकोटीकोट्यब्धीनां द्विसहस्रवर्षाणि व २००० ॥९१५॥ पुनर्विशेषमाह—

सागरोपमानां कोटेरधिकायाः कोटाकोटेर्हीनायाः स्थितेरंतःकोटाकोटित्वादेककांडकायाम ७४०७४०७

आयुकर्मका कथन अलगसे करेंगे। अतः सात मूलकर्मोंकी आबाधा उदयकी अपेक्षा एक कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिमें सौ वर्ष है। शेष स्थितियोंकी भी आबाधा इसी प्रतिभागके अनुसार जानना। जो इस प्रकार है—

एक कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिकी आबाधा सौ वर्ष है तो ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय अन्तरायकी तीस कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिकी कितनी आबाधा होगी? यहाँ प्रमाणराशि एक कोड़ाकोड़ी सागर, फलराशि सौ वर्ष, इच्छाराशि तीस कोड़ाकोड़ी सागर। फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणका भाग देनेपर तीन हजार वर्षकी आबाधा होती है। इसी प्रकार मोहनीयकी सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिकी सात हजार वर्ष आबाधा होती है। नाम और गोत्रकी बीस कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिकी दो हजार वर्ष आबाधा होती है ॥९१५॥

कुछ विशेष कहते हैं—

एक कोटिसे ऊपर और कोड़ाकोड़ीसे नीचेको अन्तःकोटाकोटी कहते हैं। अन्तःकोटा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माडल्पडुगु। प्र मुं १०८००००। फ = स्थि सा को २। इ मु १। लब्धमेकमुहूर्त्ताबाधेगे स्थिति एककांडकायामन्यून पत्तु कोटिसागरोपमंगळप्पुवु। सा ९२५९२५९२। १६/२७ ऊनकांडकायाममिदु। ७४०७४०७ भा ११/२७ कूडि पत्तु कोटि सागरोपमंगळेबुवत्थं। ई स्थितिगाबाधेयुमुत्कृष्टांतर्मुहूर्त्तमु-मक्कुमदुवुमेकसमयोनमुहूर्त्तमात्रमक्कुमदु कारणमागि एकसमयोनत्वमनवगणिसि संपूर्णैकमुहूर्त्ताबाधेगे एककांडकायामन्यूनपत्तु कोटिसागरोपमस्थिति येंदु ज्ञातव्यमक्कुमेकेंदोडा एककांडकायामन्यूनमेकमुहूर्त्ताबाधास्थितिकोटियिदं मेले कोटिकोटियिदं केळगेयप्पुदरिदं मंतः कोटिकोटि येंदु पेळल्पडुगु–। मी स्थितिय ९२५९२५९२ १६/२७ संख्यातैकभागं ९२५९२५९२ १६/२७ सर्व्वजघन्य-स्थिति येंदु पेळल्पट्टुदवक्काबाधेयुमुत्कृष्टांतर्मुहूर्त्तद संख्यातैकभागमेंदु पेळल्पट्टुदु। मु २७/४ उत्कृष्टांतःकोटीकोटिगे संदृष्टि :—९२५९२५९२ १६/२७ आबाधे मु २१॥ जघन्यांतःकोटि कोटि ९२५९२५९२ १६/२७ आबाधे मु २१/४

अनंतरमायुष्यकर्म्मस्थितिगाबाधेयं पेळदपरु :—

पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेपअद्धओत्ति हवे।
आउस्स य आबाहा ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ॥९१७॥

पूर्व्वाणां कोटि त्रिभागादासंक्षेपाद्धा पर्य्यंतं भवेदायुषश्चाबाधा न स्थितिप्रतिभागमायुषः॥

सा ११/२७ न्यूनदशकोटेः सा ९२५९२५९२ १६/२७ आबाधा उत्कृष्टांतर्मुहूर्तः २ १ ततः संख्यातगुणहीनायाः सर्वजघन्यस्थितेः असंख्यातेन सा ९२५९२५९२ १६/२७ गुणहीना स्यात् २ १/४ ॥९१६॥ आयुष आह—

कोटी सागरकी स्थितिकी आबाधा अन्तर्मुहूर्त मात्र होती है। एक काण्डकका प्रमाण चौहत्तर लाख सात हजार चार सौ सात तथा ग्यारहका सत्ताईसवाँ भाग ७४०७४०७ ११/२७ है। इसको दस कोड़ाकोड़ी सागरमें-से घटानेपर नौ कोटि पच्चीस लाख बानबे हजार पाँच सौ बानबे और सोलहका सत्ताईसवाँ भाग रहा। इतनी स्थितिकी आबाधा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है। उससे संख्यातगुणी हीन जघन्य स्थितिकी आबाधा उससे संख्यातगुणी हीन है अर्थात् उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्तके संख्यातवें भाग है ॥९१६॥

आयुकी आबाधा कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुषश्च आयुष्य कर्म्मक्कयं पूर्व्वकोटिवर्ष त्रिभागं मोदल्गोंडु आ संक्षेपाद्धं पर्य्यंतं समयोन-क्रमविनेनितु विकल्पंगळप्पुवनितु विकल्पाबाधेगळप्पुवु । आयुषः आयुष्यकर्म्मक्के स्थितिप्रतिभाग-मिल्लमनुपातत्रैराशिकं माडल्पड दें बुदर्त्थमें तें दोडे पूर्व्वकोटिवर्षायुष्यक्के पूर्व्वकोटिवर्षत्रिभाग-मुत्कृष्टाबाधेयागलु त्रिपल्योपमाद्यायुष्यंगळगेनिताबाधेयक्कुमें बुदु मोदलाद प्रतिभागमायुष्य कर्म्मदोळिल्लें बुदर्त्थं । असंक्षेपाद्धेयें बुदें तें दोडे न विद्यते अस्मादन्यः संक्षेपोऽसंक्षेपः । स चासावद्धा चाऽसंक्षेपाद्धा एंदितावलिय असंख्यातैकभागं सर्व्वजघन्याबाधेयायुष्कर्म्मदोळक्कु मिल्लिदं किरिदि-ल्लें बुदर्त्थं ॥

अनंतरमुदीरणेयं कुरुत्तु आबाधेयं पेळदपरु :—

आवलियं आबाहा उदीरणमासेज्ज सत्तकम्माणं ।
परभविय आउगस्स य उदीरणा णत्थि णियमेण ॥९१८॥

आवलिका आबाधोदीरणामाश्रित्य सप्तकर्म्मणां । परभवायुषश्चोदीरणा नास्ति नियमेन ॥

उदीरणेयं कुरुत्तु आयुर्व्वर्ज्जसप्तकर्म्मंगळगेल्लमेकावलिमात्रमाबाधेयक्कु । परभवायुष्यक्के नियमदिदमुदीरणे यिल्लेकें दोडुदीरणेयुदयप्रकृतिगळगल्लदिल्लप्पुदरिंदमी परभवायुष्यमें बुदु बध्यमानायुष्यमप्पुदरिंदं भुज्यमानायुष्यक्कुदीरणेयुं तिर्य्यग्मनुष्यायुष्यंगळगल्लदिल्लल्लियुमोप-

---

आयुष्कर्मणः आबाधा पूर्वकोटिवर्षत्रिभागादा असंक्षेपाद्धांताः एकैकसमयोनाः सर्वे विकल्पा भवन्ति, न खलु स्थितिप्रतिभागमाश्रित्यायुषः साध्याः, पूर्वकोटिवर्षस्य तत्त्रिभाग आबाधा तदा त्रिपल्यस्य कियती-त्यादिना तदसिद्धेः । न विद्यतेऽस्मात्पर आयुराबाधायां संक्षेपः असंक्षेपः स चासावद्धा चासंक्षेपाद्धा ॥९१७॥ अथोदीरणां प्रत्याह—

उदीरणामाश्रित्यायुर्वर्जितसप्तकर्मणामाबाधा आवलिमात्री स्यात् । परभवायुषो नियमेनोदीरणा नास्ति

आयुकर्मकी आबाधा एक कोटि पूर्व वर्षके तीसरे भागसे लगाकर आसंक्षेपाद्धापर्यन्त एक-एक समय हीन सब भेद लिये हुए है । आयुकी आबाधा स्थितिके प्रतिभागके अनुसार साध्य नहीं है । एक पूर्वकोटि वर्षकी आबाधा उसका त्रिभाग है तो तीन पल्यकी स्थितिकी आबाधा कितनी होगी । इस प्रकारसे स्थितिके प्रतिभागसे आयुकी आबाधाका प्रमाण सिद्ध नहीं होता; क्योंकि जितनी भुज्यमान आयु शेष रहनेपर परभवकी आयु बँधती है उतनी ही उसकी आबाधाका प्रमाण होता है । सो कर्मभूमिमें आयुका त्रिभाग शेष रहनेपर, भोगभूमि-में नौ मास और देव नारकीमें छह मास आयु शेष रहनेपर परभवकी आयुके बन्धकी योग्यता होती है । अतः उत्कृष्ट आबाधा पूर्वकोटि वर्षका त्रिभाग है। जिससे आयुकी आबाधाका संक्षेप—हीनपना नहीं पाया जाता ऐसे अद्धा अर्थात् कालको 'आसंक्षेपाद्धा' कहते हैं । सो जघन्य आबाधा आसंक्षेपाद्धा प्रमाण होती है । यह उदयकी अपेक्षा आबाधा कही । बँधनेके बाद यदि उदय हो तो इतना काल बीतनेपर ही होगा ॥९१७॥

आगे उदीरणाकी अपेक्षा कहते हैं—

उदीरणाकी अपेक्षा आयु बिना सात कर्मोंकी आबाधा आवली मात्र है । बँधनेके बाद यदि उदीरणा हो तो आवलीकाल बीतनेपर हो जाती है । किन्तु परभवकी बाँधी हुई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोनपवर्त्यायुषः। देवनारकभुज्यमानायुष्यदोळं तिर्य्यग्मनुष्यरुगळ असंख्यातवर्षायुष्यदोळं संख्यातवर्षायुष्यरप्प कर्म्मभूमिय भोगभूमिकालद तिर्य्यग्मनुष्यरायुष्यंगळोळं चरमोत्तमदेहरुगळप्प तीर्त्थंकररुगळ् गणधरदेवरुगळ भुज्यमानायुष्यदोळमुदीरणे संभविसदु।

आबाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं।
आउस्स णिसेगो पुण सगट्ठिदी होदि णियमेण ॥९१९॥

आबाधोनितकर्म्मस्थितिर्न्निषेकस्तु सप्तकर्म्मणां। आयुषो निषेकः पुनः स्वस्थितिर्भ्भवेन्नियमेन ॥

आयुष्कर्म्मवर्जितंगळप्प ज्ञानावरणादिसप्तकर्म्मंगळ तंतम्मुत्कृष्टस्थितिगळोळगे तंतम्मुत्कृष्टाबाधास्थितियं कळेदु शेषस्थितियनितुं निषेकस्थितियक्कुं $\dfrac{\triangle \text{ नि}}{\text{आ}}$ अहंगे जघन्यस्थितियोळं जघन्याबाधेयं कळेदु शेषस्थितियनितुं निषेकस्थितियक्कु $\dfrac{\triangle \text{ नि}}{\text{आ}}$ मायुष्यकर्म्मदोळं तल्तु मत्तेन्ते दोडे आयुष्यकर्म्मस्थिति येनितनितुं निषेकस्थितियक्कुं नियमदिदेके दोडायुष्यकर्म्मदाबाधे भुज्यमानायुष्यस्थितियल्लप्पुदरिदं।

अंतागुत्तं विरलु :—

आबाहं बोलाविय पढमणिसेगम्मि देइ बहुगं तु।
तत्तो विसेसहीणं बिदियस्सादिमणिसेओत्ति ॥९२०॥

आबाधामतिक्रम्य च प्रथमनिषेके ददाति बहुकं तु। ततो विशेषहीनं द्वितीयस्याद्यनिषेकपर्यंतं ॥

उदयागतस्यैवौपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुर्भ्योऽन्यत्र तत्सम्भवात् ॥९१८॥

आयुर्वर्जितसप्तकर्मणामुत्कृष्टादिस्थितौ तत्तदाबाधायामपनीतायां शेषस्थितिर्निषेकः स्यात् $\dfrac{\triangle \text{ न}}{\text{अ}}$ आयुःकर्मणो निषेकः पुनः यावती स्वकीया सर्वस्थितिस्तावानेव स्यान्नियमेन तदाबाधायाः पूर्वभवायुष्येव गतत्वात् ॥९१९॥

आयुकी उदीरणा इस भवमें नहीं होती यह नियम है। उदयमें आयी हुई भुज्यमान आयुकी ही उदीरणा होती है वह भी देव, नारकी, चरम शरीरी और असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्यों और तिर्यंचोंको छोड़कर ही होती है। क्योंकि ये सब पूरी आयु भोगकर ही मरते हैं। इनकी अकालमृत्यु नहीं होती ॥९१८॥

आयुको छोड़ शेष सात कर्मोंकी उत्कृष्ट आदि स्थितिमें आबाधाकाल घटानेपर जो शेष रहे उस कालके समयोंका जितना प्रमाण हो उतने ही निषेक सात कर्मोंके होते हैं। किन्तु आयुकर्मकी जितनी स्थिति हो उसके समयोंका जो प्रमाण हो उतना ही निषेकोंका प्रमाण होता है। क्योंकि आयुकर्मकी आबाधा पूर्वभवकी आयुके साथ ही बीत जाती है ॥९१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञानावरणादिकर्म्मंगळ आबाधास्थितियनतिक्रमिसि प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेकदोळु द्रव्यमं बहुकमं कुडुगुमल्लिदं मेलेकैकविशेषहीनक्रमदिदं द्रव्यमं द्वितीयगुणहानिप्रथमनिषेकपर्य्यंतं कुडुगुमी द्रव्यनिक्षेपदोळु द्रव्यहानियं पेळ्दपरु :—

बिदिये बिदियणिसेये हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु ।
एवं गुणहाणिं पडिं हाणी अद्धद्धयं होदि ॥९२१॥

द्वितीयायां द्वितीयनिषेकहानिः पूर्व्वहान्यर्द्धं तु । एवं गुणहानिं प्रति हानिरर्द्धार्द्धं स्यात् ॥

द्वितीयगुणहानिद्वितीयनिषेकदोळु हानियेनितक्कुमें दोडे पूर्व्वहान्यर्द्धमक्कुं । यितु गुणहानिं गुणहानिं प्रति हानियर्द्धार्द्धमक्कु ।

मनंतरमा द्रव्यनिक्षेपदोळु द्रव्यादिगळ नामनिर्द्देशमं माडिदपरु :—

दव्वट्ठिदिगुणहाणीणद्धाणं दलसलाणिसेयछिदी ।
अण्णोण्णगुणसलावि य जाणेज्जो सव्वठिदिरयणे ॥९२२॥

द्रव्यस्थितिगुणहान्योरध्वानं दलशलाकानिषेकच्छेदोन्योन्यगुणशलाका अपि च ज्ञातव्याः सर्व्वस्थितिरचनायां ॥

सर्व्वकर्म्मंगळ स्थितिरचनेयोळु द्रव्यमं स्थित्यायाममुं गुणहान्यायाममुं दलशलाकेगळें बुदु नानागुणहानिशलाकेगळप्पुववुं । निषेकच्छेदमें बुदु दोगुणहानियप्पुददुवुं अन्योन्यगुणशलाकेगळें बवु अन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुमदुवुं । यितारुं राशिगळु ज्ञातव्यंगळप्पुवु ।

ज्ञानावरणादिकर्मणामाबाधामतीत्य प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके द्रव्यं बहुकं ददाति तत उपरि द्वितीयगुणहानिप्रथमनिषेकपर्यंतमेकैकचयहीनं ददाति ॥९२०॥

ततो द्वितीयगुणहानिद्वितीयनिषेके हानिः पूर्वहानेरर्धं स्यात् । एवमुपर्यपि गुणहानिं गुणहानिं प्रति हानिरर्धार्धं स्यात् ॥९२१॥

सर्वकर्मस्थितिरचनायां द्रव्यं स्थित्यायामः गुणहान्यायामः दलशलाकाः—नानागुणहानिः निषेकच्छेदः—दोगुणहानिः अन्योन्याभ्यस्तश्चेति षड्राशयो ज्ञातव्याः ॥९२२॥

ज्ञानावरण आदि कर्मोंकी स्थितिमेंसे आबाधाकाल बीतनेके बाद प्रथम गुणहानि सम्बन्धी प्रथम निषेकमें बहुत द्रव्य दिया जाता है उससे ऊपर द्वितीय गुणहानिके प्रथम निषेक पर्यन्त एक-एक चय घटता हुआ द्रव्य दिया जाता है ॥९२०॥

दूसरी गुणहानिके दूसरे निषेकमें उसीके पहले निषेकमें जितनी हानि हुई थी उससे आधी हानि होती है । इस तरह पहली गुणहानिमें जो प्रत्येक निषेकमें हानिरूप चयका प्रमाण था उससे दूसरी गुणहानिमें हानिरूप चयका प्रमाण आधा होता है । इसी प्रकार ऊपर भी प्रत्येक गुणहानिमें हानिरूप चयका प्रमाण आधा-आधा होता है ॥९२१॥

सब कर्मोंकी स्थिति रचनामें छह राशि ज्ञातव्य हैं—द्रव्य, स्थिति आयाम, गुणहानि आयाम, दल शलाका अर्थात् नाना गुणहानि, निषेकच्छेद अर्थात् दो गुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि ।

विशेषार्थ—कर्मरूप परिणमे पुद्गल परमाणुओंके प्रमाणको द्रव्यराशि कहते हैं ।

क–१६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अल्लि द्रव्यादिगळंकसंदृष्टियं पेळ्दपरु :—

तेवट्ठिं च सयाइं अडदाला अट्ठ छक्क सोलसयं ।
चउसट्ठिं च विजाणे दव्वादीणं च संदिट्ठी ॥९२३॥

त्रिषष्टिं च शतानामष्टचत्वारिंशदष्टौ षट्कं षोडशचतुःषष्टिं चापि जानीहि द्रव्यादीनां च संदृष्टिं ।

त्रिशतोत्तर षट्सहस्रंगळु नाल्वत्तेंटुमेंटुमारुं पदिनारुमरुवत्तनाल्कुं क्रमदिदं द्रव्यादिगळिगे संदृष्टियप्पुवेंदु नीनरि शिष्या ? येंदिताचार्य्यनिदं संबोधिसल्पट्टं ।

अंकसंदृष्टि	द्रव्य ६३००	स्थिति ४८	गुणहा ८	नाना गुणहा ६	दोगुणहा १६	अन्योन्याभ्यस्त ६४
अर्थसंदृष्टि	द्रव्य स a / १	स्थिति प १	गुण=प १ छे व छे	नाना गुणहा = छे व छे	दोगुणहा प १२ छे व छे	अन्योन्याभ्यस्त प / व

अनंतरमर्थसंदृष्टिय द्रव्यादिगळ प्रमाणमं पेळ्दपरु :—

दव्वं समयपबद्धं उत्तपमाणं तु होदि तस्सेव ।
जीवसहत्थणकालो ठिदि अद्धासंखपल्लमिदा ॥९२४॥

द्रव्यं समयप्रबद्धः उक्तप्रमाणस्तु भवेत् तस्यैव जीवसहावस्थानकालस्थित्यद्धा संख्यपल्यमिता ॥

तत्रांकसंदृष्टौ द्रव्यं त्रिषष्टिशतानि जानीहि स्थितिमष्टचत्वारिंशतं गुणहानिमष्टौ नानागुणहानिं षट् दोगुणहानिं षोडश अन्योन्याभ्यस्तं चतुःषष्टिं ॥९२३॥

कर्मोंकी स्थितिके समयोंके प्रमाणको स्थिति आयाम कहते हैं । जिसमें दूना-दूना घटता हुआ द्रव्य दिया जाये वह गुणहानि है । उस एक गुणहानिके समयोंका प्रमाण गुणहानि आयाम है । सब स्थितियोंमें जितनी गुणहानियाँ हों उनका प्रमाण नाना गुणहानि है । गुणहानि आयामके प्रमाणके दूनेको दो गुणहानि कहते हैं । नाना गुणहानि प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर जो प्रमाण हो वह अन्योन्याभ्यस्त राशि है ॥९२२॥

अंकसंदृष्टिके रूपमें द्रव्य तिरसठ सौ, स्थिति अड़तालीस, गुणहानि आयाम आठ, नानागुणहानि छह, दो गुणहानि सोलह और अन्योन्याभ्यस्तराशि चौंसठ जानना ॥९२३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यमं बुदु समयप्रबद्धमक्कुमदुवुं द्रव्यविभंजनदोळुक्तप्रमाणमनुळ्ळदक्कुमा द्रव्यक्के जीव-नोडने सहावस्थानकालं स्थित्यद्धे यें दु पेळल्पट्टुदवुवुं संख्यातपल्यमितमक्कुं ।

मिच्छे वग्गसलायप्पहुडिं पल्लस्स पढममूलोत्ति ।
वग्गहदी चरिमो त्तच्छिदिसंकलिदं चउत्थो य ॥९२५॥

मिथ्यात्वकर्म्मणि वर्गशलाका प्रभृति पल्यस्य प्रथममूलपर्य्यंतां । वर्गहतिश्चरमस्तच्छेद-संकलितं चतुर्थी च ॥

इल्लि द्रव्यस्थितिगुणहानि दोगुणहानि यें ब नाल्करु संदृष्टिगळु सप्तकर्म्मंगळगे साधारण-मक्कुं । नानागुणहानिशलाकेगळुमन्योन्याभ्यस्तराशियुं साधारणंगळल्तदु कारणमागि तद्विशेष-कथनदोळु मिथ्यात्वकर्म्मणि एंदितु पेळल्पट्टुदु । मिथ्यात्वकर्म्मदोळु अन्योन्याभ्यस्तराशियुं नानागुणहानिशलाकेगळुमेनितेनितप्पुवें दोडे चरमराशियप्प अन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणं पेळल्प-डुगुमदें तें दोडे :—द्विरूपवर्गधारेयं पल्यपर्य्यंतं स्थापिसि अवर केळगे तत्तद्राशिगळ अर्द्धच्छेदंगळं स्थापिसि अवर केळगे तत्तद्वर्गशलाकेगळं स्थापिसि संदृष्टि :—

२	४	१६	२५६	६५=	४२=	१८=	०००	व	व व	छे	छे छे	०००	मू ३	मू २	मू १	प
१	२	४	८	१६	३२	६४	०००	छे	छे २	व	व २	०००	छे २२२	छे २२	छे २	छे
०	१	२	३	४	५	६	०००	व	$\overline{व}$	छे	$\overline{छे}$	०००	व ३	व २	व १	व

अर्थसंदृष्टौ तु द्रव्यं प्रागुक्तप्रमाणः समयप्रबद्धः स्यात् । स्थित्यद्धा संख्यातपल्यानि सा च जीवेन सह समयप्रबद्धस्यावस्थानकालः ॥९२४॥

द्रव्यस्थितिगुणहानिदोगुणहानिसंदृष्टयः सप्तकर्मणां साधारणाः नानागुणहान्यन्योन्याभ्यस्तराशी चासाधारणौ तेन तयोर्विशेषं वक्तुमिच्छे इत्युक्तवान् । तत्र द्विरूपवर्गधारायाः पल्यवर्गशलाकादिपल्यपर्यंतराशीन्

और अर्थसंदृष्टि अर्थात् यथार्थ कथनके रूपमें द्रव्य तो पूर्वोक्त प्रमाण समयप्रबद्ध है। अर्थात् एक समयमें जितने परमाणु बँधते हैं उनका कथन पहले प्रदेशबन्धाधिकारमें कर आये हैं। उनका प्रमाण द्रव्य है। बँधा हुआ समयप्रबद्ध जितने समय तक जीवके साथ अवस्थित रहता है वह स्थितिआयाम है। सो स्थितिआयाम संख्यातपल्य प्रमाण है। उसके समयोंका प्रमाण स्थितिराशि है ॥९२४॥

द्रव्य, स्थिति, गुणहानि आयाम, दो गुणहानि, इनकी संदृष्टि तो सातों कर्मोंके समान है। यहाँ यद्यपि द्रव्य और स्थिति हीनाधिक है तथापि सामान्यसे द्रव्य समयप्रबद्ध प्रमाण और स्थिति संख्यात पल्य प्रमाण है। किन्तु नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि समान नहीं है। इससे इनके सम्बन्धमें विशेष कथन करना चाहते हैं—प्रथम ही मिथ्यात्व नामक कर्मको लेकर कहते हैं जिसकी स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बळिक्क तां स्थापिसिव मूरुं राशिगळ पंक्तिगळोळु प्रथमद्विरूपवर्ग्गंधारेयोळ् पुट्टिद पल्यवर्ग्गंशलाकाराशि मोदल्गोंडु पल्यप्रथममूलपर्य्यंतमिर्द्दवर्ग्गराशिगळ संवर्ग्गदिदं पुट्टिद राशि पल्यमं पल्यवर्ग्गशलाकाराशियिदं भागिसिदनितक्कु $\frac{प}{व}$ मिदु चरमप्प अन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणमक्कुमेंदु पेळल्पट्टुदु। चरमत्रमिदक्कें तावुदें दोडेमुं पेळ्द निर्द्देशविधियोळु पेळद द्रव्यादिगळोळ् षष्ठचरमराशियप्पुदरिंदं। मत्तमा पल्यवर्ग्ग वर्ग्गशलाकाराशिगर्द्धच्छेदंगळु पल्यवर्ग्गशलाकार्द्धच्छेदराशिप्रमाणंगळप्पुवु। व छे। मेलेद्विगुणद्विगुणक्रमदिदं पोगि प्रथममूलराशिगर्द्धच्छेदंगळ पल्यच्छेदार्द्धप्रमितंगळप्पुवु छे$_{०}$ इवर संकलनधनं अंतधणं छे$_{२}$ गुणगुणियं छे$_{२}$ २ आदिविहीणे छे व छे रूऊणुत्तरभजिय

तदर्धच्छेदान् तद्वर्गशलाकाश्च संस्थाप्य पंक्तित्रयं कृत्वा, तत्र वर्गशलाकादिपल्यप्रथममूलपर्यंतराशीनां संवर्गः पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्यमात्रः चरमः अन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात्। तदर्धच्छेदराशीनामंतधणं छे$_{२}$ गुणगुणियं छे$_{२}$

द्विरूप वर्गधाराके पल्यकी वर्गशलाकासे लेकर पल्यके प्रथम वर्गमूल पर्यन्त स्थानोंको, उनके अर्द्धच्छेदोंको और उनकी ही वर्गशलाकाओंको स्थापन करके तीन पंक्ति करो। प्रथम पंक्तिमें तो पल्यकी वर्गशलाका प्रमाण नीचे लिखो। उसके ऊपर उसका वर्ग लिखो। इस प्रकार क्रमसे प्रथम मूलपर्यन्त वर्गस्थान लिखो। दूसरी पंक्तिमें पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे लगाकर दूने-दूने पल्यके प्रथम वर्गमूलके अर्द्धच्छेद पर्यन्त लिखो। तीसरी पंक्तिमें पल्यकी वर्गशलाकाकी शलाकासे लगाकर एक-एक बढ़ाते हुए पल्यके प्रथम मूलकी वर्गशलाका पर्यन्त लिखो। प्रथम पंक्तिकी राशिको परस्परमें गुणा करनेपर पल्यकी वर्गशलाकाका भाग पल्यमें देनेपर जो प्रमाण आवे उतना होता है। वही अन्तिम छठी अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण जानना। दूसरी पंक्तिको जोड़नेपर पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंके प्रमाणको पल्यके अर्द्धच्छेदोंके प्रमाणमें-से घटानेपर जो रहे उतना होता है। वह कैसे होता है यही कहते हैं—

द्विरूप वर्गधारामें अर्द्धच्छेद प्रत्येक स्थानके दूने-दूने कहे थे। उन्हें 'अद्धन्तधणं गुणगुणियं आदि विहीणं रूऊणुत्तरपदभजियं' सूत्रके अनुसार जोड़िए। गुणकार करते हुए अन्तमें जो प्रमाण हो उसको जितनेका गुणकार हो उससे गुणा करें। उसमें-से पहले जितना प्रमाण हो उसे घटावें। जो प्रमाण हो उसमें एक हीन गुणकारका भाग दें। ऐसा करनेपर जो प्रमाण हो वही गुणकाररूप सब स्थानोंका जोड़ जानना। सो यहाँ अन्तमें पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे आधे पल्यके प्रथम मूलके अर्द्धच्छेद हैं। उनको यहाँ गुणकार दोसे गुणा करनेपर पल्यके अर्द्धच्छेदोंका प्रमाण होता है। उसमें-से पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंके प्रमाणको घटानेपर पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यकी अर्द्धच्छेद राशिका जो प्रमाण है उतना होता है। गुणकार दोमें-से एक घटानेपर एक रहा। उससे भाग देनेपर उतने ही रहे। सो यहाँ चतुर्थ राशि नानागुणहानिका प्रमाण जानना। इस कथनको अंकसंदृष्टिसे स्पष्ट करते हैं।

कल्पना करें कि पल्यका प्रमाण पण्णट्ठी ६५५३६ है। उसकी वर्गशलाका चार, उसका वर्ग सोलह और उसका वर्ग पण्णट्ठीका प्रथम वर्गमूल दो सौ छप्पन, इन तीनोंको प्रथम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एंदुतंद संकलित धनमिदु। चतुर्थी च चतुर्थमप्प नानागुणहानिशलाकाराशियक्कु। मी राशिगे दलशलाकेयें पेसरक्कुमेकें दोडा अन्योन्याभ्यस्तराशिय दळवारंगळप्पुदरिदं नानागुणहानिशलाकेगळगे दलशलाकेगळें दु पेळल्पट्टुवु। अदुकारणमागि :—

वग्गसलागेणवहिदपल्लं अण्णोण्णगुणिदरासी हु।
णाणागुणहाणिसला वग्गसलच्छेदणूणपल्लछिदी ॥९२६॥

वर्गशलाकयाऽपहृतपल्यमन्योन्याभ्यस्तराशिः खलु नानागुणहानिशलाकावर्गशलाकाच्छेदनोनपल्यच्छेदाः ॥

पल्यवर्गशलाकेगलिदं भागिसल्पट्ट पल्यमन्योन्याभ्यस्तराशि स्फुटमागियक्कुमप्पुदरिदमा राशिय दलवारंगळप्पुदरिदं नानागुणहानिशलाकेगळुं पल्यवर्गशलाकाराशिच्छेदनोनपल्यच्छेद प्रमितंगळप्पुवें दु अन्वयव्यतिरेकमुखदिदं समर्त्थिसल्पट्टुवु॥ अनंतरंगुणहान्यायामप्रमाणमं पेळदपरु :—

सव्वसलायाणं जदि पयदणिसेये लहेज्ज एक्कस्स।
किं होदित्ति णिसेये सलाहिदे होइ गुणहाणी ॥९२७॥

सर्व्वशलाकानां यदि प्रकृतनिषेकान् लभेत एकस्य किं भवेदिति निषेकान् शलाकाभिर्हृते भवेद्गुणहानिः ॥

---

२ आदिविहीणं छे–व–छे इति संकलनं चतुर्थो नानागुणहानिशलाकाराशिः स्यात् ॥९२५॥

पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्यमन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात्। नानागुणहानिशलाकाराशिः खलु पल्यवर्गशलाकानामर्धच्छेदैर्न्यूनपल्यच्छेदमात्रः ॥९२६॥ अथ गुणहान्यायामप्रमाणमाह—

पंक्तिमें लिखो। इन तीनोंके अर्द्धच्छेद—चारके दो, सोलहके चार और दो सौ छप्पनके आठ, इन तीनोंको दूसरी पंक्तिमें लिखो। इन तीनोंकी वर्गशलाका—चारकी एक, सोलहकी दो, दो सौ छप्पनकी तीन, ये तीनों तीसरी पंक्तिमें लिखो। प्रथम पंक्तिके चार, सोलह, दो सौ छप्पनको परस्परमें गुणा करनेपर सोलह हजार तीन सौ चौरासी होते हैं। तथा पण्णट्ठीमें चारका भाग देनेपर भी इतने ही होते हैं। दूसरी पंक्तिके दो, चार, आठको 'अन्तधणं गुणगुणियं' इत्यादि सूत्रके अनुसार जोड़नेपर अन्तधन आठको गुणकार दोसे गुणा करनेपर सोलह हुए। उसमें आदि दो घटानेपर चौदह रहे। एक हीन गुणकार एकका भाग देनेपर भी चौदह ही रहे। यही तीनोंका जोड़ है। तथा पण्णट्ठीके अर्द्धच्छेद सोलहमें-से पण्णट्ठीकी वर्गशलाका चारके अर्द्धच्छेद दो घटानेपर भी चौदह ही होते हैं। तीसरी पंक्तिका यहाँ प्रयोजन नहीं है।

इस प्रकार सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिवाले मिथ्यात्व कर्मकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और नानागुणहानि कही। अन्य कर्मोंकी आगे कहेंगे ॥९२५॥

इस प्रकार पल्यकी वर्गशलाकाका भाग पल्यमें देनेपर जो प्रमाण होता है उतना अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण जानना। तथा पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंको पल्यके अर्द्धच्छेदोंमें घटानेपर जो प्रमाण रहे उतना नानागुणहानिका प्रमाण जानना ॥९२६॥

आगे गुणहानि आयामका प्रमाण कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व्वनानागुणहानिशलाकेगळगे एत्तलानुं प्रकृति सर्व्वस्थितिनिषेकंगळं पडेयुमप्पोडोंदु गुणहानिशलाकेगेनितु निषेकंगळप्पुवेंदु त्रैराशिकमं माडि निषेकान् सर्व्वस्थितिनिषेकंगळं शलाकेगळिदं भागिसुत्तं विरलु प्र । छे व छे । फ । प १ । इ । श १ । लब्धं गुणहान्यायाममक्कुं । प १ ॥
छे व छे

अनंतरं दोगुणहानिप्रमाणमुमनदर प्रयोजनमुमं पेळदपरु । :—

दोगुणहाणिपमाणं णिसेयहारो दु होइ तेण हिदे ।
इट्ठे पढमणिसेये विसेसमागच्छदे तत्थ ॥९२८॥

द्विगुणहानिप्रमाणं निषेकहारस्तु भवेत्तेन हृते । इष्टान्प्रथमनिषेकान्विशेषमागच्छति तत्र ॥

तु मत्तं गुणहानियं द्विगुणिसिदोडे तत्प्रमाणं निषेकहारमक्कुमा निषेकहारदिदमिष्टगुणहानिप्रथमनिषेकमं भागिसिदोडा गुणहानियोळु विशेषप्रमाणमक्कुमितु द्रव्यस्थितिगुणहानि नानागुणहानि निषेकहार अन्योन्याभ्यस्तराशिगळेंदी षड्राशिगळ प्रमाणं ज्ञापितमागुत्तं विरलु :—

सर्वनानागुणहानिशलाकानां यदि प्रकृतसर्वस्थितिनिषेका लभ्यन्ते तदा एकगुणहानिशलाकायाः किं स्यादिति त्रैराशिकेन निषेके नानागुणहानिशलाकाभक्ते प्र छे–३–छे । फ–प १ । इ श १ लब्धं गुणहान्यायामः स्यात् प १ ॥९२७॥ अथ दोगुणहानिप्रमाणं तत्प्रयोजनं चाह—
छे व छे

तु पुनः द्विगुणितं तद्गुणहानिप्रमाणं निषेकहारः स्यात् । तेन हारेण इष्टगुणहानिप्रथमनिषेके भक्ते तद्गुणहानौ विशेषप्रमाणं स्यात् ॥९२८॥ एवं द्रव्यादीनां प्रमाणं ज्ञापयित्वोत्तरकृत्यमाह—

सर्व नानागुणहानि शलाकाओंके यदि स्थितिके सब निषेक होते हैं तो एक गुणहानि शलाकाके कितने निषेक होंगे ? ऐसा त्रैराशिक करे। प्रमाण राशि नानागुणहानि शलाकाका प्रमाण है। सो यहाँ पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण है। तथा फलराशि सब स्थितिके निषेक है। सो यहाँ संख्यात पल्य प्रमाण हैं। और इच्छाराशि एक शलाका है। सो फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणका भाग देनेपर जो प्रमाण हो उतना ही गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। जैसे अंकसंदृष्टिमें प्रमाण राशि नानागुणहानि छह, फलराशि स्थिति अड़तालीस, इच्छाराशि एक गुणहानि। सो फलसे इच्छाको गुणा करके प्रमाणका भाग देनेपर गुणहानि आयामका प्रमाण आठ होता है। एक गुणहानिमें आठ निषेक पाये जाते हैं ॥९२७॥

आगे गुणहानिका प्रमाण और उसका प्रयोजन कहते हैं—

गुणहानि आयामके प्रमाणको दुगुना करनेपर दो गुणहानि होती है। इसीका नाम निषेकहार है। इस दो गुणहानि प्रमाण भागहारका भाग विवक्षित गुणहानिके प्रथम निषेकमें देनेपर जो प्रमाण आवे वही उस गुणहानिमें विशेषका प्रमाण होता है। इसे ही चय कहते हैं ॥९२८॥

इस प्रकार द्रव्यादिका प्रमाण बतलाकर आगेका कार्य कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूऊणण्णोण्णब्भवहिददव्वं तु चरिमगुणदव्वं ।
होदि तदो दुगुणकमो आदिमगुणहाणिदव्वोत्ति ॥९२९॥

रूपोनान्योन्याभ्यस्तापहृतद्रव्यं तु चरमगुणहानिद्रव्यं । भवेत्ततो द्विगुणक्रमः आद्यगुणहानिद्रव्यपर्य्यंतं ॥

विवक्षितमिथ्यात्व कर्म्मसमयप्रबद्धद्रव्यमं ६३०० । रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशियिदं भागिसुत्तं विरलु ६३००/६३ बंद लब्ध नानागुणहानिगळोळुचरमगुणहानिद्रव्यप्रमाणमक्कु १०० । मल्लिदं बलिक्क केळगे केळगे प्रथमगुणहानि पर्य्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रममक्कु

१००	१
१००	२
१००	४
१००	८
१००	१६
१००	३२

मितु नानागुणहानिगळ द्रव्यं ज्ञातमागुत्तं विरलु । :—

रूऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयभागहारेण ।
हदगुणहाणिविभजिदे सगसगदव्वे विसेसा हु ॥९३०॥

रूपोनाध्वानार्द्धेनोनेन निषेकभागहारेण । हतगुणहानिविभक्ते स्वस्वद्रव्ये विशेषाः खलु ॥

विवक्षितमिथ्यात्वकर्मसमयप्रबद्धद्रव्यं ६३०० रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशिना भक्तं ६३००/६३ नानागुणहानिषु चरमगुणहानिद्रव्यप्रमाणं स्यात् १०० । ततः पश्चात् अधोधः प्रथमगुणहानिपर्यन्तं द्विगुणक्रमं स्यात्

१००	१
१००	२
१००	४
१००	८
१००	१६
१००	३२

॥९२९॥ एवं नानागुणहानिद्रव्येषु ज्ञातेषु किंकर्तव्यमित्यत आह —

एक हीन अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग सर्वद्रव्यको देनेपर जो प्रमाण आवे वही अन्तिम गुणहानिका द्रव्य जानना। इससे दूना-दूना द्रव्य प्रथम गुणहानि पर्यन्त होता है। जैसे अंकसंदृष्टिमें मिथ्यात्वका सर्व द्रव्य तिरसठ सौ है। उसको एक हीन अन्योन्याभ्यस्त राशि तिरसठका भाग देनेपर सौ पाये। यह अन्तकी गुणहानिका सर्वद्रव्य जानना। इससे पाँचवीं आदि गुणहानिमें दूना-दूना द्रव्य प्रथम गुणहानि पर्यन्त होता है। यथा—१००। २००।४००।८००।१६००।३२०० ॥९२९॥

इस प्रकार नानागुणहानियोंका द्रव्य जाननेपर क्या करना, यह कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ तंतम्म गुणहानिद्रव्यमं रूपोनाध्वानार्द्धदिदमूननिषेकभागहारदिदं गुणिसल्पट्ट गुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु तंतम्म गुणहानिद्रव्यदोळु चयद्रव्यं स्फुटमागप्पुददें तें दोडे प्रथमगुणहानिद्रव्यमिदं । ३२०० । रूपोनाध्वानार्द्धोननिषेकभागहारगुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु ३२०० / ८ । १६ । ८ / २ लब्धप्रथमगुणहानिविशेषप्रमाणमिनितक्कुं । ३२ । द्वितीयगुणहानिद्रव्यमनिदं १६०० मुन्निनंते रूपोनाध्वानार्द्धोननिषेक भागहारगुणगुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु १६०० / ८ । १६ । ८ / २ लब्धं द्वितीयगुणहानिद्रव्यदोळुविशेषप्रमाणनितक्कु । १६ । मितु स्वस्वगुणहानिद्रव्यमं रूपोनाध्वानार्द्धोननिषेकभागहारगुणगुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु स्वस्वगुणहानिद्रव्यदोळु विशेषप्रमाणं बक्कुं ।

सदृष्टि १ इंतु स्वस्वगुणहानिविशेषप्रमाणं ज्ञातव्यमागुत्तं विरलु :—
२
४
८
१६
३२

तत्तद्गुणहानिद्रव्ये ३२०० । १६०० । ८०० । ४०० । २०० । १०० । रूपोनगुणहान्यर्धोनिनिषेकभागहारेण गुणितगुणहान्या भक्ते सति तत्तद्गुणहानिचयाः स्युः—

३२०० / ८ । १६–८ / २	१६०० / ८ । १६–८ / २	८०० / ८ । १६–८ / २	→
←	४०० / ८ । १६–८ / २	२०० / ८ । १६–८ / २	१०० / ८ । १६–८ / २

३२ । १६ । ८ । ४ । २ । १ ॥९३०॥

एक हीन गुणहानि आयामके प्रमाणके आवेको निषेक भागहाररूप दो गुणहानिमें-से घटानेपर जो शेष रहे उससे गुणहानि आयामको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो, उसका भाग विवक्षित गुणहानिके द्रव्यमें देनेपर जो आवे वही इस गुणहानिमें विशेष या चयका प्रमाण होता है । जैसे अंकसंदृष्टिमें गुणहानि आयामका प्रमाण आठ है । उसमें एक घटानेपर सात रहे । उसका आधा साढ़े तीनको निषेक भागहार सोलहमें घटानेपर साढ़े बारह रहे । उससे गुणहानि आयाम आठको गुणा करनेपर सौ हुए । उसका भाग प्रथम गुणहानिके द्रव्य बत्तीस सौमें देनेपर बत्तीस पाये । यही प्रथम गुणहानिमें चयका प्रमाण होता है । दूसरी गुणहानिका द्रव्य सोलह सौ है । उसमें भाग देनेपर सोलह पाये । यही द्वितीय गुणहानिमें चय है । इसी प्रकार तृतीय आदि गुणहानिके द्रव्य आठ सौ, चार सौ, दो सौ, एक सौमें भाग देनेपर आठ, चार, दो, एक पाये । ये ही उन गुणहानियोंमें चयका प्रमाण है ॥९३०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पचयस्स य संकलणं सगसगगुणहाणिदव्वमज्झम्मि ।
अवणिय गुणहाणिहिदे आदिपमाणं तु सव्वत्थ ॥९३१॥

प्रचयस्य च संकलितं स्वस्वगुणहानिद्रव्यमध्येऽपनीय गुणहानिहृते आदिप्रमाणं तु सर्वत्र ॥

चयद संकलित धनमं तंतम्म गुणहानियोळ् तंबु स्वस्वगुणहानिद्रव्यदोळु कळेदु शेषधनमं गुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु तंतम्म गुणहानिप्रथमनिषेक प्रमाणमधिकसंकलनरूपदिनक्कुमदें तें-दोडे प्रथमगुणहानिद्रव्यचयधनमिदु ८°/२ ३२ । ८ लब्धचयधनमिदु । ८९६ । इदं प्रथमगुणहानि-द्रव्यदोळु ३२०० । कळेदुळिद शेषमं २३०४ । गुणहानियिदं भागिसिदोडे अधिकसंकलनक्रमदिद-मादिनिषेकप्रमाणमिनितक्कु २८८ । मिदरमेले स्वविशेषंगळु रूपोनगच्छमात्रंगलु पेर्च्चुत्तं पोगि-तच्चरमदोळु रूपोनगच्छमात्रचयंगळ ३२ । ८° पेर्च्चिदवुविनितक्कु ५१२ । मी प्रथमगुणहानिगे संदृष्टि २८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ ॥ द्वितीयगुणहानिचयधनमिदु ८°/२ । १६ ८ गुणिसिद लब्धमिदं ४४८ । द्वितीयगुणहानिद्रव्यमिदरोळु १६०० । कळेद शेषमिदं । ११५२ । गुणहानियिदं भागिसिदोड ११५२/८ धिकसंकलनरूपदिदमादिनिषेकप्रमाण १४४ । मिदर

तत्तच्चयस्य संकलितधनमानीय स्वस्वगुणहानिद्रव्यमध्येऽपनीय शेषे गुणहान्या भक्ते स्वस्वगुणहानि-प्रथमनिषेकप्रमाणमधिकसंकलनरूपेण स्यात् । तत्र प्रथमगुणहानौ चयधनमिदं ८°/२ । ३२ । ८ । लब्धं ८९६ । तत्सर्वद्रव्ये ३२०० । अपनीय शेषं २३०४ गुणहान्या भक्तमादिनिषेकप्रमाणं स्यात् २८८ अस्योपर्येकैकस्व-विशेषवृद्धौ संदृष्टिः—२८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ । तथा द्वितीयगुणहानि

विवक्षित गुणहानिके सर्वचय धनका प्रमाण निकालकर उसे अपनी-अपनी गुणहानि-के सर्वद्रव्यमें-से घटानेपर जो प्रमाण शेष रहे, उसमें गुणहानि आयामका भाग देनेपर अपनी-अपनी गुणहानिके प्रथम निषेकका प्रमाण होता है। उसमें एक-एक चय बढ़ानेपर द्वितीयादि निषेकोंका प्रमाण होता है। जैसे अंकसंदृष्टि रूपसे—प्रथम गुणहानिका चयधन—एक हीन गच्छ आठका आधा साढ़े तीनको चय बत्तीससे गुणा करनेपर एक सौ बारह हुए। उन्हें गच्छ आठसे गुणा करनेपर आठ सौ छियानबे हुए। यही चयधन है। इसको सर्वद्रव्य बत्तीस सौमें-से घटानेपर शेष तेईस सौ चार रहे। उसमें गुणहानि आठसे भाग देनेपर दो सौ अट्ठासी पाये। यही आदि निषेकका प्रमाण है। उसमें एक-एक चय बत्तीस-बत्तीस बढ़ाने-पर द्वितीयादि निषेकोंका प्रमाण होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि गुणहानिमें चयका प्रमाण आधा-आधा होनेसे चयधन भी आधा-आधा है। इसी तरह उनका सर्वद्रव्य भी आधा-आधा है। उसमें घटानेपर जो शेष रहे उसमें गुणहानि आयामसे भाग देनेपर अपना-अपना आदि निषेक आता है। उसमें अपना-अपना एक चय मिलानेपर अन्य निषेक होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेले चयाधिकक्रमदिदं द्वितीयगुणहानिचरमपर्य्यंतं पोक्कु। संदृष्टि :—१४४। १६०। १७६। १९२। २०८। २२४। २४०। २५६। यितु तृतीयादिगुणहानिगळोळमी क्रमदिदं तरल्पडुत्तिरलु तृतीयगुणहानियोळु ७२। ८०। ८८। ९६। १०४। ११२। १२०। १२८॥ चतुर्त्थं ३६। ४०। ४४। ४८। ५२। ५६। ६०। ६४॥ पंचम १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२॥ षष्ठ ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६॥ इंतु पेळल्पट्ट स्थितिरचनांक संदृष्टि यितु

१४४। १६०। १७६। १९२। २०८। २२४। २४०। २५६। तृतीयगुणहानि ७२। ८०। ८८। ९६। १०४। ११२। १२०। १२८। चतुर्थगुणहानि ३६। ४०। ४४। ४८। ५२। ५६। ६०। ६४। पंचगुणहानि १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२। षष्ठगुणहानि ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। उक्तस्थितिरचनांकसंदृष्टिः—

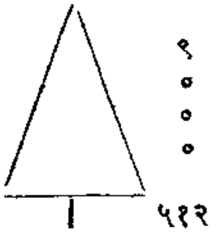

अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा निषेकोंका यन्त्र इस प्रकार है—

	प्रथम गु.	द्वितीय गु.	तृ. गु.	चतु. गु.	पंचम गु.	षष्ठ गु.
	२८८	१४४	७२	३६	१८	९
	३२०	१६०	८०	४०	२०	१०
	३५२	१७६	८८	४४	२२	११
	३८४	१९२	९६	४८	२४	१२
	४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३
	४४८	२२४	११२	५६	२८	१४
	४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५
	५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६
जोड़	३२००	१६००	८००	४००	२००	१००

विशेषार्थ—यहाँ दो सौ अट्ठासीको प्रथम निषेक इस दृष्टिसे कहा है कि उसके ऊपर ही चयकी वृद्धि होकर आगेके निषेक बनते हैं। किन्तु यथार्थमें यह अन्तिम निषेक है। प्रथम निषेक पाँच सौ बारह है। इसी प्रकार आगेकी गुणहानियोंमें भी जानना। निषेक रचना पाँच सौ बारहसे प्रारम्भ होकर उत्तरोत्तर एक-एक चय घाट होती जाती है। अतः अन्तिम गुणहानिका अन्तिम निषेक नौ जानना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेळल्पट्ट स्थितिनिषेकरचनाभिप्रायं पेळल्पडुगुमदें तें दोडे मिथ्यात्वाविरमणकषाययोगबंधकारणंगळिवं मिथ्यादृष्टिजीवं विवक्षितैकसमयदोळायुर्व्वज्जितज्ञानावरणादिसप्तविधकर्म्मरूपसमयप्रबद्धमं सर्व्वात्मप्रदेशंगळिदमाहरिसुगुमा समयप्रबद्धोत्कृष्टद्रव्यमिद । स छे । नपवर्त्तिसिदुदनिद ।
ə
स ə । नेळु कर्म्मंगळ्गे भागिसिदोडोंदु मोहनीयकर्म्मद्रव्यमिदं स ə देशघातिसर्व्वघातिगळनंतदिदं
१
खंडिसिदोडेकभागं सर्व्वघाति संबंधद्रव्यमिदं स ə १ मिथ्यात्व षोडशकषायंगळें ब सप्तदशप्रकृति-
१ । ख
गळ्गे भागिसिदोडोंदु मिथ्यात्वकर्म्मद्रव्यमिनितक्कु स । ə । १ मी समयप्रबद्धद्रव्यमदक्का
१ । ख । १७

बंधसमयदोळेककषायबंधाध्यवसायस्थानोदयविशेषदिदं स्थितियं सप्ततिकोटिकोटिसागरोपममं कट्टुगुमा स्थितिगे स्थित्यनुसारदिदं नानागुणहानिशलाकेगळु पल्यवर्ग्गशलाकार्द्धच्छेदराशिरहितपल्यार्द्धच्छेदराशिप्रमितंगळप्पु छे व छे वो नानागुणहानिशलाकेगळं विरळिसि रूपं प्रति द्विकमनित्तु वर्गितसंवर्ग्गं माडुत्तं विरलु लब्धं पल्यमं पल्यवर्ग्गशलाकाराशियिदं भागिसिदनितक्कु प में तें दोडे :—
व

विरळिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी हारो उप्पण्णरासिस्स ॥[1]

अत्रायमर्थः—कश्चिद्विवक्षिते समये मिथ्यात्वाविरमणं कषाययोगैरायुर्विना सप्तकर्मणामुत्कृष्टसमयप्रबद्धं सर्वात्मप्रदेशैराहरति तदिदं स छे अपवर्त्य सप्तभिर्भक्तं मोहनीयस्य स ə पुनरनन्तेन भक्तं सर्वघातिनः स ə १
ə १ १ ख
पुनः मिथ्यात्वषोडशकषायैर्भक्तं मिथ्यात्वस्य स ə १ पुनः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्वस्थितेः पल्यवर्ग-
१ ख १७

उक्त कथन तो समझानेके लिए है। अर्थरूपमें कहते हैं यही यथार्थ है—कोई जीव किसी एक विवक्षित समयमें मिथ्यात्व अविरति कषाय योगके द्वारा आयुके बिना सात कर्मोंके उत्कृष्ट समयप्रबद्धको ग्रहण करता है। वह उत्कृष्ट समयप्रबद्ध जघन्य समयप्रबद्धसे पल्यके अर्द्धच्छेदोंके असंख्यातवें भाग गुणा है। अपवर्तन करनेपर जघन्य समयप्रबद्धसे असंख्यात गुणा है। इस उत्कृष्ट समयप्रबद्धके परमाणुओंके प्रमाणरूप द्रव्यको सातसे भाग देनेपर मोहनीयका द्रव्य आता है। उसमें अनन्तसे भाग देनेपर मोहनीयका सर्वघाती द्रव्य होता है। इसमें एक मिथ्यात्व और सोलह कषाय इन सत्रहसे भाग देनेपर मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। यही सर्वद्रव्यका प्रमाण जानना। इस मिथ्यात्वकी स्थिति सत्तर कोड़ा-कोड़ी सागरके जितने समय हों उतनी स्थिति जानना। पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेदोंका जितना प्रमाण उतनी नानागुणहानि है। नानागुणहानि प्रमाण दोके

१. इल्लि प्रथमयेंदु मते अंत्यमेंबुदु चरम येंदु मते प्रथमे येंबुदु येकें दोडे अंतधणं गुणगुणियमेंब गाथाभिप्रायदिदं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एंदितु सिद्धमक्कुमप्पुदरिंदमी पल्यवर्गशलाकाराशिभक्तपल्यमुं मिथ्यात्वकर्म्मस्थिति-निषेकरचनाविषयदोळन्योन्याभ्यस्तराशियें दु पेळल्पट्टुदीयन्योन्याभ्यस्तराशियोळेकरूपं कुंदिसि मिथ्यात्वकर्म्मसमयप्रबद्धद्रव्यमं भागिसिदोडे चरमगुणहानि संबंधिद्रव्यमक्कु स । ० । १ -० / १ । ख । १२ । अ

द्वितीयादिगळधस्तनाधस्तनगुणहानिगळ द्रव्यंगळु प्रथमगुणहानिद्रव्यपर्य्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रमंगळप्पुवु।

संदृष्टि :—

स ० । १ -० / १ । ख । १२ । अ चरम
स ० । २ -० / १ । ख । १२ अ
० ०
स ० अ -० / १ । ख । १२ । २ । २ । अ
स ० । अ -० / १ । ख । १२ । अ । २ प्रथम

ई गुणहानि द्रव्यंगळनंतषणं गुणगुणियं आबिधि-हीणं रूऊणुत्तरभजियमें दितु संकलिसिदोडे मूलद्रव्यप्रमाणमेयक्कुमें बुदर्त्थमिल्लि प्रथमगुणहानि-

---

शलाकार्धच्छेदोनपल्यार्धच्छेदमात्रनानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नेनान्योन्याभ्यस्तेन पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्य-मात्रेण रूपोनेन भक्तं चरमगुणहानिः स ० १ -० / १ ख १२ अ तदधोधः प्रतिगुणहानि द्विगुणं द्विगुणं संदृष्टिः—

चरम स ० १ -० / १ ख १२ अ
स ० २ -० / १ ख १२ अ
० ० ०
स ० अ -० / १ ख १२ । २ । २ । अ
प्रथम स ० अ -० / १ ख १२ अ २

अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है। उसका प्रमाण पल्यकी वर्गशलाकासे भक्त पल्य है। अन्योन्याभ्यस्त राशिमें-से एक घटाकर उसका भाग सर्वद्रव्यमें देनेपर जो प्रमाण हो वही अन्तिम गुणहानिका द्रव्य होता है। उससे आदिकी गुणहानि पर्यन्त

---

१. म कममप्पुवु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यमं स ० अ / १ । ख २ । १२ । अ पूर्व्वोक्तक्रमदिदं "रूऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयभागहारेण । हृदगुणहाणि विभजिदे सगसगदव्वे विसेसा हु" एंदितु साधिसल्पट्ट सर्व्वगुणहानिगळ विशेषद्रव्यंगळगे संदृष्टि तोरल्पडुगुं । रूऊणद्धाण गु अद्धेण गु/२ ऊणेण णिसेयभागहारेण गु ३/२ हृदगुणहाणि गु गु ३/२ भजिदे सगसग दव्वविसेसा हु ।

चरम गुणहानि	स ० १
विशेष	१ । ख । १२ अ गु गु ३/२
द्विचरमगुणहानि	स ० २
विशेष	१ । ख । १२ अ गु गु ३/२
० ० ०	० ० ०
द्वितीय गुणहानि	स ० । अ
विशेष	१। ख १२ । २२ अ गु गु ३/२
प्रथम गुणहानि	स ० अ
विशेष	१। ख।१२ अ ।२। गु गु ३/२

येंदितु प्रथमगुणहानि मोदलगोंडु चरमगुणहानिपर्य्यंतमिवु विशेषप्रमाणंगळप्पुविवरोळु प्रथमगुणहानि विशेषधनमं पूर्व्वोक्तक्रमदिदं "पचयस्स य संकलणं सगसगगुणहाणिदव्वमज्झम्मि । अवणिय गुणहाणिहिदे आदि पमाणं तु सव्वत्थ" एंदितु प्रथमादि गुणहानिप्रचयधनंगळं साधिसिदोडिंतिप्पुवु । संदृष्टि :— ५

ततः रूऊणद्धाण गु अद्धेण गु/२ ऊणेण णिसेयभागहारेण गु ३/२ हृदगुणहाणि गु गु ३/२ विभजिदे सगसगगुणहाणिदव्वे विसेसा हु ततः प्रथमादिगुणहानीनामानीतप्रचयधनानि संदृष्टिः— १०

द्रव्य दूना-दूना जानना। 'रूऊणद्धाणद्धेणूणेण' इत्यादि सूत्रके अनुसार एक हीन गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छके आधेको दो गुणहानिमें घटानेपर जो प्रमाण रहा उसको गुणहानि आयामसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उसका भाग विवक्षित गुणहानिके द्रव्यमें देनेपर जो

स ∂ २ गु १ । ख १२ । अ गु गु / २ गु ३ / २
स ∂ २ गु १ ख १२ अ गु गु / २ गु ३ / २
० ० ०
स ∂ । अ गु १। ख १२ अ ।२।२ गु / गु गु ३ / २
स ∂ अ गु १ । ख । १२ अ । २ । गु / गु गु ३ २ / २

चरम स ∂ १ १ ख १२ अ गु गु ३ / २	स ∂ । १ गु गु १ ख १२ अ गु । गु ३ / २
द्विचरम स ∂ २ १ ख १२ अ गु गु ३ / २	स ∂ । २ गु गु १ ख १२ अ गु गु ३ / २
० ० ०	० ० ०
द्वितीय स ∂ अ १ ख १२ । अ २ । २ । गु गु ३ / २	स ∂ अ गु गु १ ख १२ अ २ । २ । गु ३ । २ / २
प्रथम स ∂ अ १ ख १२ अ २ गु गु ३ / २	स ∂ अ गु गु १ ख १२ अ २ । गु गु ३ । २ / २

प्रमाण आवे उतना-उतना अपनी-अपनी गुणहानिमें चयका प्रमाण होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ई चयधनंगळं तंतम्म गुणहानिद्रव्यंगळोळु कळेदु शेषमं गुणहानियिदं भागिसुत्तं विरलु तंतम्म गुणहानिगळ आदिनिषेकमधिकसंकलनक्रमदिदमप्पुववर तंतम्म केळगे केळगे द्विचरमादि निषेकं मोदलगोंडु तंतम्म गुणहानि प्रथमनिषेकपर्य्यंतं तंतम्म गुणहानि संबंधि येकैकचयविनधिक-मागुत्तं पोपुवल्लि प्रक्रियाविशेषं तोरल्पडुगुमें तें दोडे प्रथमगुणहानिद्रव्यमिदरोळु स ० अ

१। ख १९ अ २

चयधनमं कळेयल्वेडि स्थापिसिदो स ० अ गु गु / २

१। ख। १९। अ २। गु गु ३ / २

चयधनदोळिर्द्द भाज्यभागहारंगळं लेसागि निरीक्षिसि गुणहारिगे गुणहानियनपवर्त्तिसि कळेवोडिदु स ० अ गु

१। ख १९ अ २ गु ३। २ / २

इल्लि हारभूतरूपाधिकत्रिगुणगुणहानिगे हारमागिर्द्द द्विकमं हारस्य हारो गुणकोंशराशेः यॆंदितंशराशिगे गुणकारमप्पुदरिदमा द्विकमं रूपोनगुणहानिगे हारमागिर्द्द द्विकदोडनपवर्त्तिसिदोडितिर्क्कु :—

स ०। अ गु

१ ख १९ अ २। गु ३

मी चयधनदगुणहानिय मेलण ऋणरूपं ऋणस्य ऋणं राशेर्द्धनं भवति एंदिता ऋणरूपंराशिगे धनमक्कुमेंदु बेरे तेगेदिरिसिदोडिदु स ० अ १

१ ख १९ अ २ गु ३

शेषचय-धनमनिदं स ० अ गु

१ ख १९ अ २ गु ३

प्रथमगुणहानिद्रव्यदोळु कळेयल्वेडि समच्छेदमं

एतानि स्वस्वगुणहानिद्रव्येभ्यो गृहीत्वा शेषेषु गुणहान्या भक्तेषु स्वस्वगुणहानीनामादिनिषेका अधिकसंकलन-क्रमेण स्युः। ते चाधोधः स्वस्वप्रथमनिषेकपर्यंतं स्वस्वैकैकचयाधिकाः स्युः। तद्यथा—

प्रथमगुणहानिद्रव्यं स ०। अ

१ ख १९ अ २

उपर्यधो रूपाधिकत्रिगुणहान्या संगुण्य स ०। अ गु ३

१ ख १९ अ २ गु ३

तथा 'व्येकपदार्द्ध' इत्यादि सूत्रके अनुसार एक हीन गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छके आधेको अपने-अपने चयसे गुणा करके फिर गच्छसे गुणा करनेपर जो-जो प्रमाण हो उतना-उतना अपनी-अपनी गुणहानिमें चयधन होता है। चयधनको अपनी-अपनी गुणहानिके द्रव्य-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूपाधिक त्रिगुणहानि यिदं कळगेयुं मेगेयुं गुणिसि माडिदो प्रथमगुणहानिद्रव्यदोळु भाज्यराशीभूतत्रिगुणहानियोळिर्द्दधिकरूपं तेगेदु पूर्व्वं स्थापिसिद ऋण

स ० अ गु ३
१ । ख १ १ अ २ गु ३

ऋणमप्पेकरूपदोळ् समच्छेदमुंटप्पुद १ ख १ १ अ २ गु ३ रिंदं धन धनयोरैक्यमें दु कूडि स्थापिसिदोडिदु स ० अ २ यिल्लिय गुणकारभूतद्विकमं हारभूतरूपाधिकत्रिगुणगुणहानिगे

१ । ख १ १ अ २ गु ३

हारमं माडि स्थापिसिरिसि स ० अ १ बळिक्का समच्छेदमं माडिद प्रथम-

१ ख १ १ अ २ गु ३
२

गुणहानिद्रव्यदोळु स ० अ गु ३ चयधनमनिदं स ० अ गु १
१ ख १ १ अ २ गु ३ १ ख १ १ अ २ गु ३

कळेदोडे शेषप्रथमगुणहानिद्रव्यमिदु स ० अ गु २ ई द्रव्यद गुणहानिगे

१ ख । १ १ अ २ गु ३

अंशस्थिताधिकरूपं पृथक्कृत्य—स ० अ १ चयधन स ० अ गु गु स्थांशहारगुणहानी

१ ख १ १ अ २ गु ३ १ ख १ १ अ २ गु गु ३ । २
२

अपवर्त्य स ० अ गु हाररूपाधिकत्रिगुणगुणहानेर्हारद्विकं गुणहारद्विकेनापवर्त्य

१ ख १ १ अ २ गु ३ । २
२

स ० अ गु गुणहान्युपरिस्थितं ऋणरूपं ऋणस्य ऋणं राशेर्धनमिति पृथग्धृतरूपे
१ ख १ १ अ २ गु ३ २

निक्षिप्य स ० अ २ गुणकारद्विकं हाररूपाधिकत्रिगुणहानेर्हारं कृत्वा पृथग्धृत्वा

१ ख १ १ अ २ गु ३

में-से घटानेपर जो शेष रहे उसमें गुणहानि आयामका भाग देनेपर जो-जो प्रमाण हो वह-वह अपनी-अपनी गुणहानिके अन्तिम निषेकका द्रव्य होता है। उसमें अपना-अपना एक-एक चय मिलानेपर अन्य निषेकोंका प्रमाण होता है। अन्तिम निषेकमें एक हीन गुणहानि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणकारमागिद्दं द्विकमं केळगे हारमागिद्दं रूपाधिकत्रिगुणगुणहानिगे हारमं माडिरिसिदोडितिक्कु

स ० अ गु / १ ख ११ । अ २ गु ३ / २ मी घनराशियोळु मुन्नं बेरे स्थापिसिरिसिद घनरूपनिदं

स ० अ / १ ख ११ । अ २ गु ३ / २ अंशराशिगे गुणकारभूतगुणहानियोळु समच्छेदमुंटप्पुदरिदं कूडि-

दोडितिक्कुं । स ० अ गु / १ ख ११ । अ २ गु ३ मी चयधनरहितप्रथमगुणहानिद्रव्यमं गुणहानिहिदे

आदिपमाणं तु सव्वत्थ एंदितु गुणहानिर्यिदं भागिसुत्तं विरलु लब्धराशिधिक द्विकसंकलनक्रमदिंदं ५

प्रथमगुणहानि प्रथमस्थिति २८८ निषेकद्रव्यमक्कु स ० अ गु / १ ख ११ अ । २ गु ३ / २ गु मिदर

केळगे केळगे चयाधिकक्रमदिंद पोगि प्रथमगुणहानिचर ५१२ मस्थितिनिषेकदोळु रूपोन-

---

स ० अ १ / १ ख ११ अ २ गु ३ / २ तच्चयधनशेषेण स ० अ गु १ / १ ख ११ अ २ गु ३

ऊनयित्वा स ० अ गु २ / १ ख ११ अ २ गु ३ गुणहानेर्गुणकारद्विकं हाररूपाधिकत्रिगुणगुणहानेर्हारं कृत्वा

स ० अ गु / १ ख ११ अ २ गु ३ / २ पृगग्धृतं धनं स ० अ १ / १ ख ११ अ २ गु ३ / २ निक्षिप्य गुणहान्या १०

स ० अ गु / १ ख ११ २ गु ३ / २ भक्तं अधिकसंकलक्रमेण प्रथम २८८ निषेकः स ० अ गु / १ ख ११ अ २ गु ३ गु / २

प्रमाण चय मिलानेपर आदि निषेकका प्रमाण दो गुणहानिसे चयको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना है। इस प्रकार अन्तिम निषेकको आदिमें स्थापित करके क्रमसे चय बढ़ाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणहानिमात्र प्रथमगुणहानिसंबंधि चयंगळनिनितं स ० अ गु / १ ख १ १ अ २ गु गु ३/२ कूडिदोडे

दो गुणहानिमात्रचयंगळप्पुवु स ० अ गु २ / १ । ख १ १ । अ २ गु ३/२ गु मुन्नं त्रिकोणरचना धनसंकलित

दोर्ऽमितं होनसंकलितक्रमदिदं पेळल्पट्टुदद तं दोडे अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमाग-च्छदि एंदितु प्रथमगुणहानिसर्व्वधनमं गुणहानियिदं खंडिसिदोडे मध्यमधनमक्कु । मा मध्यमधनमं स ० अ / अ २ । गु तं रूऊण अद्धाण गु अद्धेण गु/२ ऊणेण णिसेयभागहारेण । ई रूपोन गुण-

हान्यर्द्धदिदं होनमप्पदोगुणहानियिदं गु ३/२ मज्झिमधणमवहरिदे पचयं मध्यमधनमं भागिसुत्तं विरलु प्रचयमक्कु स ० । अ / अ २ । गु गु ३/२ मी प्रचयमं दोगुणहानियिदं गुणिसि-

दोडादिस्थितिनिषेकं होनसंकलनक्रमदिदमक्कुं स ० । अ । गु २ / अ । २ । गु । गु ३/२ मेले द्वितीय-

---

अधः चयाधिकक्रमेण चरमो ५१२ रूपोनगुणहानिमात्रचया— स ० अ गु / १ ख १ १ अ २ गु ३/२ गु

त्रिको भूत्वा दोगुणहानिमात्रचयो भवति स ० अ गु २ / १ ख १ १ अ २ गु ३ गु हीनक्रमेण तु त्रिकोणरचनावज्ज्ञातव्यं ।

तद्यथा—प्रथमगुणहानिधने गुणहान्या भक्ते मध्यधनं स ० अ / अ २ गु तच्च रूपोनाध्वाना गु र्द्धेन गु/२ निषेक-

---

हुआ कथन किया है। किन्तु प्रथम निषेकसे अन्तिम निषेक पर्यन्त क्रमसे घटता-घटता त्रिकोण रचनाकी तरह जानना। वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निषेकं मोदल्गोंडु तत्प्रथमगुणहानिचरमस्थितिनिषेकपर्य्यंतमेकैकचयहीनक्रमदिदं नडदु चरमनिषेकप्रमाणमेनितक्कुमेंदोडे प्रथमगुणहानि प्रथमनिषेकदोळ् रूपोनगुणहानिमात्रविशेषंगळनिदं

स ० । अ गु
अ २ । गु । गु ३/२

कळेदोडे प्रथमगुणहानिचरमस्थितिनिषेकद्रव्यं रूपाधिकगुणहानिमात्र चयंगळप्पुवु

स ० । अ गु
अ २ । गु । गु ३/२

ई प्रथमगुणहानिस्थितिनिषेकरचना विशेषमेंतु पेळल्पट्टुदंते शेषगुणहानिगळोळं स्थितिरचनाक्रममक्कुमल्लि विशेषमुंटदाउदेंदोडे तंतम्म गुणहानिद्रव्यमुं तत्तत्प्रचयमुमरिल्पडुवुवु। शेषविधानमेकप्रकारमेयक्कुमंतागुत्तं विरलु अधस्तनाधस्तनगुणहानिप्रथमनिषेकंगळं नोडलुपरितनोपरितनगुणहानिप्रथमनिषेकंगळु चयहीनसंकलनक्रमदिदमर्द्धार्द्धक्रमदिनिप्पुंवु। तत्तद्गुणहानिचयंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिनिप्पुंवु। अवक्कंक संदृष्टि :—

हारेण गु ३/२ अपहृतं प्रचयः स ० अ स च दोगुणहान्या गुणित आदिनिषेकः स ० अ गु २ उपर्येकैकचयहीनो
अ २ गु गु ३/२ ... अ २ गु गु ३/२

भूत्वा चरमो रूपाधिकगुणहानिमात्रचयो भवति स ० । अ गु एवं शेषगुणहानिष्वपि कृते तदंकार्थसंदृष्टी—
अ २ गु गु ३/२

प्रथम गुणहानिके द्रव्यको गुणहानि आयामसे भाग देनेपर मध्यमधन होता है। जैसे प्रथम गुणहानिके द्रव्य बत्तीस सौको गुणहानि आयाम आठका भाग देनेपर मध्यधन चार सौ होता है। चौथा और पाँचवाँ निषेकके प्रमाणको जोड़कर आधा करनेपर भी मध्यधन होता है। एक हीन गुणहानि आयामके आधेसे हीन निषेक भागहारसे मध्यधनमें भाग देनेपर चयका प्रमाण होता है। जैसे एक हीन गुणहानि सातका आधा साढ़े तीनको निषेक भागहार सोलहमें घटानेपर साढ़े बारह रहे। उसका भाग मध्यधन चार सौमें देनेपर चयका प्रमाण बत्तीस आता है। इस चयको दो गुणहानिसे गुणा करनेपर प्रथम निषेक होता है। जैसे चय प्रमाण बत्तीसको दो गुणहानि सोलहसे गुणा करनेपर पाँच सौ बारह प्रथम निषेकका प्रमाण होता है। इसमें एक-एक चय घटानेपर अन्तिम निषेक एक अधिक गुणहानि प्रमाण चयरूप होता है। जैसे गुणहानि आठमें एक अधिक करनेपर नौ हुए। नौसे चयके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

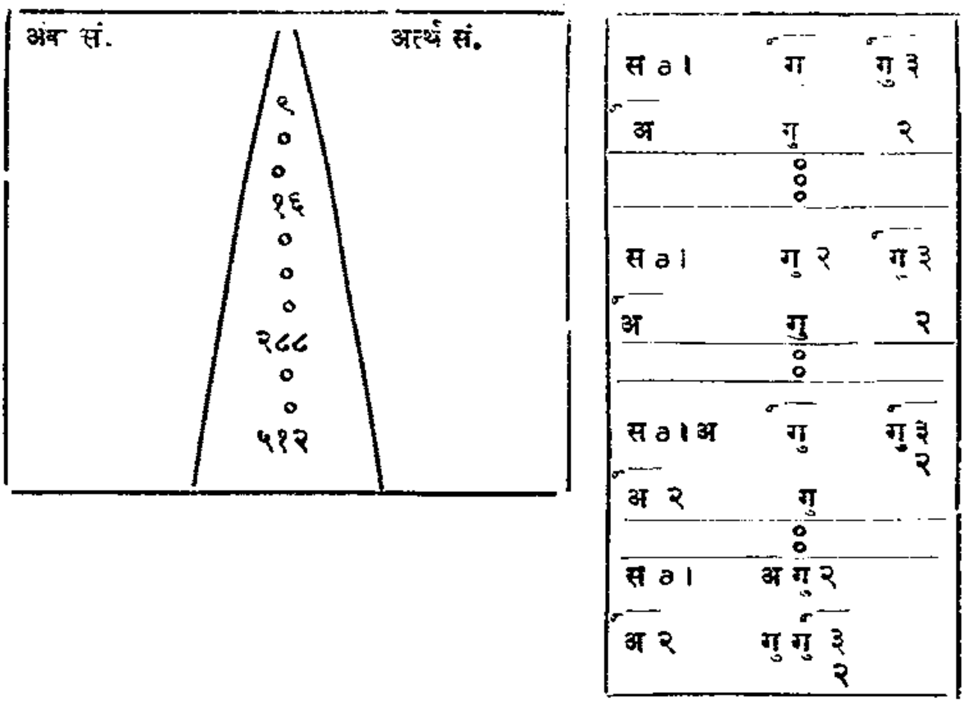

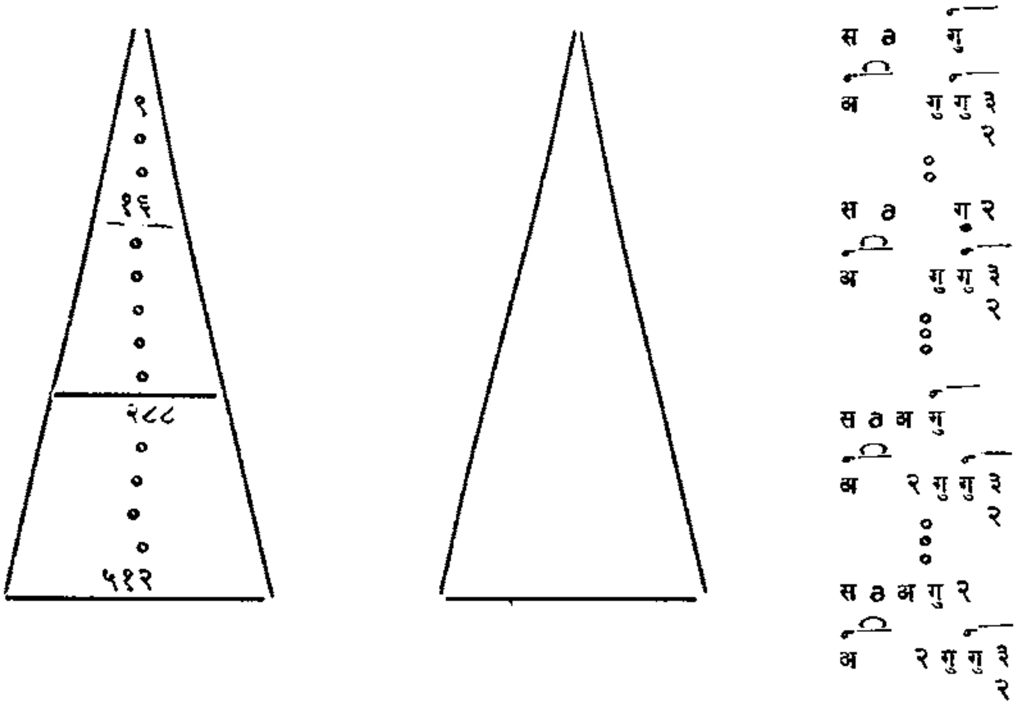

प्रमाण बत्तीसको गुणा करनेपर दो सौ अट्ठासी अन्तिम निषेकका प्रमाण है ऐसे ही अन्य गुणहानियोंमें भी जानना। संदृष्टि—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यितायुर्व्वजितसप्तकर्म्मंगळ्गमिते स्थितिनिषेकरचनाविरचनं प्रतिसमयमुमप्पुवें दरियल्पडुगुमिल्लि मूलप्रकृतिगळ्गमुत्तरप्रकृतिगळ्गं स्थितिनिषेकरचनाकरणदोळु एकगुणहान्यायामादि सामग्रीविशेषमं पेळ्दपरु । :—

सव्वासिं पयडीणं णिसेयहारो य एयगुणहाणी ।
सरिसा हवंति णाणागुणहाणिसलाओ वोच्छामि ॥९३२॥

सर्व्वासां प्रकृतीनां निषेकहारश्चैकगुणहानिः । सदृशाः स्युर्न्नानागुणहानिशलाका वक्ष्यामि ॥

एवमायुर्विना सप्तकर्मणां स्थितिनिषेकरचना प्रतिसमयं स्यात् । किन्तु—

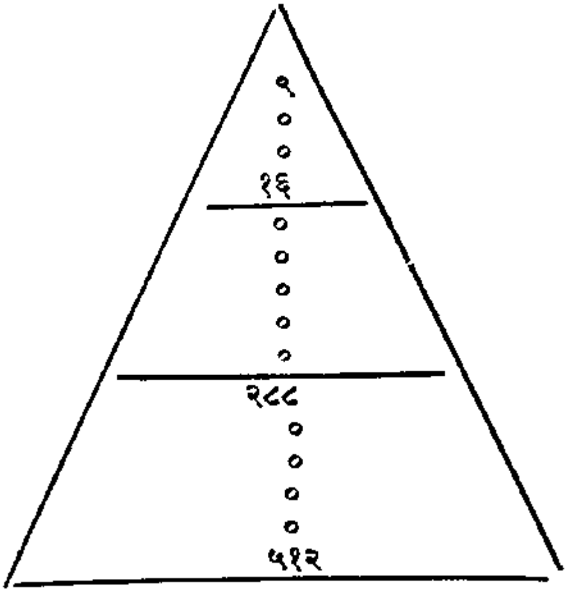

उक्त संदृष्टिमें प्रथम गुणहानिका आदि निषेक पाँच सौ बारह । मध्य निषेकोंके ग्रहण के लिए बिन्दी लिखीं । अन्तिम निषेक दो सौ अट्ठासी । मध्यकी गुणहानियोंके निषेकोंको ग्रहण करनेके लिए बीचमें बिन्दी लिखी हैं । अन्तिम गुणहानिका प्रथम निषेक सोलह । बीचके निषेकोंके लिए बिन्दी है । अन्तिम निषेक नौ । यह केवल अंकसंदृष्टि है ।

इस प्रकार मिथ्यात्वका कथन उत्कृष्ट स्थिति व उत्कृष्ट समयप्रबद्धकी अपेक्षा जानना । अन्यत्र जैसी जहाँ स्थिति और समयप्रबद्ध हो वैसा स्थिति और द्रव्यका प्रमाण जानना । दो गुणहानि और गुणहानि आयामका प्रमाण सर्वत्र समान है । नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशि स्थितिके अनुसार जानना ॥९३१॥

वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व्वमूलप्रकृतिगळ्गमुत्तरप्रकृतिगळगं निषेकहारमुमेकगुणहान्यायाममुं समानंगळप्पुवु। नानागुणहानिशलाकेगळगे स्थित्यनुसारमुंटप्पुवरिंदं विसदृशंगळप्पुवदु कारणमागियां नानागुणहानिशलाकेगळं पेळदपेमें दु मुंदण सूत्रंगळोळु पेळ्दपरु। :—

मिच्छस्सत्त य उत्ता उवरीदो तिण्णि तिण्णि सम्मिलिदा।
अट्ठगुणेणूणकमा सत्तसु रयिदा तिरिच्छेण ॥९३३॥

मिथ्यात्वकर्म्मणश्चोक्ता उपरितस्त्रयस्त्रयः सम्मिलिताष्टगुणेनोनक्रमाः सप्तसु रचितास्तिरश्चा ॥

मिथ्यात्वकर्म्मदुत्कृष्टस्थितिगे मुं पेळल्पट्ट नानागुणहानिशलाकेगळु एंतादुवं बोडे द्विरूपवर्गधारेयोळु पल्यवर्ग्गशलाकाराशियादियागि पल्यप्रथममूलपर्य्यंतमाद राशिगळर्द्धच्छेदंगळु तत्पल्यवर्गशलाका व छे र्द्धच्छेदराशियादियागि पल्यार्द्धच्छेदराश्यर्द्धपर्य्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रमदिंदमिर्द्दु तदर्द्धच्छेदराशिगळुं स्थापिसल्पड्डुत्तिरलुभयराशिगळुं क्रमदिंदमितिप्पुवु :—

२	४	१६	२५६	६५ =	४२ =	१८ =	०००	→
१	२	४	८	१६	३२	६४	०००	

	व	वव१	व२	व३	व४	व५	व६	व७	व८	
←	वछे	वछे२	वछे४	वछे ८	वछे१६	वछे३२	वछे६४	वछे१२८	वछे२५६	→
	वछे ७			वछे ८। ७।			वछे ८। ८। ७			

	००००००	मूल९	मूल८	मूल७	मूल६	मूल५	मूल४	मूल३	मूल२	मूल१	प
←	०००२००	छे व २९	छे व २८	छे व २७	छे व २६	छे व २५	छे व २४	छे व २३	छे व २२	छे व २१	छे
	००००००	छे। ७ ८। ८। ८। १			छे ७ ८। ८। १			छे ७ ८। १।			

सर्वमूलोत्तरप्रकृतीनां निषेकहारः एकगुणहान्यायामश्च द्वौ सदृशौ। नानागुणहानिशलाकाः स्थित्यनुसारित्वाद्विसदृशाः स्युः। ता वक्ष्यामि ॥९३२॥

मिथ्यात्वस्य ये पल्यवर्गशलाकादितत्प्रथममूलांतानां द्विगुणद्विगुणार्धच्छेदा उक्तास्ते संस्थाप्य उपरि-

सब मूल प्रकृतियोंका निषेकहार अर्थात् दो गुणहानि और एक गुणहानि आयाम ये दोनों समान हैं। किन्तु नानागुणहानि शलाका स्थितिके अनुसार होनेसे समान नहीं हैं। अतः उनको कहते हैं ॥९३२॥

मिथ्यात्व प्रकृतिका पल्यकी वर्गशलाकासे लेकर पल्यके प्रथममूलपर्यन्त अर्द्धच्छेद दूने-दूने कहे थे। उन्हें स्थापन करके ऊपरसे अर्थात् पल्यके प्रथममूलसे लगाकर तीन-तीन वर्गस्थानोंकी अर्द्धच्छेद राशिको मिलानेपर वे क्रमसे आठ-आठ गुना घाट होते हैं।

वही कहते हैं—

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

उपरितस्त्रयस्त्रय संमिलिताः मेलण मेलण पल्यप्रथममूलार्द्धच्छेदंगळप्प पल्यार्द्धच्छेदराश्यर्द्धमादियागि मूरुं मूरु राशिगळु कूडल्पडुतिरळु अष्टगुणोनक्रमर्दिदमिर्प्पुवर्देतेंदोडे पल्यप्रथममूलच्छेदंगळुमवर केळगण द्वितीयमूलच्छेदंगळु मवर केळगण तृतीयमूलच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिनिर्प्पुवल्लि छे / २ / छे / २२ / छे / २२२ अंतधणं छे / २ गुणगुणियं छे / २ आदि छे / ८ विहीणं छे / ८ ७ रूऊणुत्तर भजिय छे / ८ । १ एंदिदुपरितन त्रिराशिगळ युतियक्कुं। तदधस्तनपल्यचतुर्त्थमूलार्द्धच्छेदंगळु मवर केळगण पंचममूलार्द्धच्छेदंगळुमवर केळगण षष्ठमूलार्द्धच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिनिर्प्पुवल्लि छे / ८ । २ / छे / ८ । २ । २ / छे / ८ । २ । २ । २

तस्त्रयस्त्रयो राशयो मिलिता अष्टाष्टगुणोनहीनक्रमाः स्युः। तद्यथा—पल्यस्य प्रथमद्वितीयतृतीयमूलार्धच्छेदाः छे / २ / छे / २।२ / छे / २।२।२ अन्तधणं छे / २ गुणगुणियं छे / २ आदि छे / ८ विहीणं छे / ८ ७ रूऊणुत्तरभजियमिति मिलिताः छे / ८ । १ ७ तथा

पल्यके प्रथम वर्गमूलके अर्द्धच्छेद पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे आधे होते हैं। उनसे आधे पल्यके दूसरे वर्गमूलके अर्द्धच्छेद होते हैं। उनसे आधे पल्यके तीसरे वर्गमूलके अर्द्धच्छेद होते हैं। इन तीनोंको करणसूत्रके अनुसार जोड़ें। अन्तिम धन पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे आधे पल्यके प्रथममूलके अर्द्धच्छेद हैं। उनको दोसे गुणा करनेपर पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण होते हैं। इनमें आदिको घटाइए। आदि है—पल्यके तीसरे मूलके अर्द्धच्छेद जो पल्यके अर्द्धच्छेदोंके आठवें भाग हैं। घटानेपर सातगुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका आठवाँ भाग आया। उसमें

१.
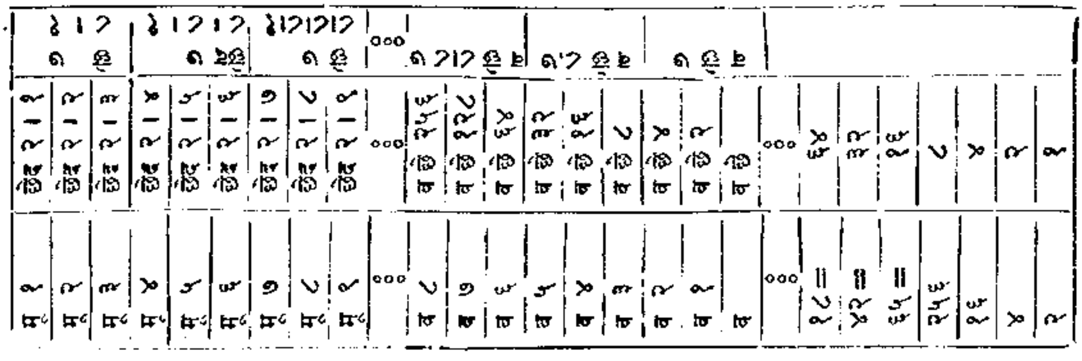

अंतधणं छे/८।२ गुणगुणियं छे।२/८।२ आदि छे/८।८ विहीणं छे।७/८।८ रूऊणुत्तरभजियं छे।७/८।८।१

एंदिदु द्विचरमत्रिराशियुतियक्कुं। तदधस्तनपल्य सप्तमूलार्द्धच्छेदंगळुमष्टमूलार्द्धच्छेदंगळुं नवम-मूलार्द्धच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिनिर्प्पुवल्लि छे/८।८।२ छे/८।८।४ छे/८।८।८ अंतधणं छे/८।८।२ गुणगुणियं छे २/८।८।२

आदि छे/८।८।८ विहीणं छे।१/८।८।८ रूऊणुत्तर भजियं छे।१/८।८।८।१ एंदिदु त्रिचरमराशि-त्रितययुतियक्कुमी क्रमदिदमिळिदिळिदु मूरु मूरुराशिगळं कूडुत्तं पोगि पल्यवर्गशलाकाराशियष्टम-वर्गदर्द्धच्छेदंगळुं सप्तमवर्गार्द्धच्छेदंगळुं षष्ठवर्गार्द्धच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिदमिर्प्पुवल्लि

व छे।८।८।४
व छे ८।८।२
व छे ८।८।१

अंतधणं व छे ८।८।४ गुणगुणियं व छे ८।८।२।२।२ आदि व छे ८।८ विहीणं व छे ८।८।७ रूऊणुत्तर भजियं व छे ८।८।७/१ एंदिदु तृतीय-

---

चतुर्थपंचमषष्ठमूलार्धच्छेदाः छे/८।२ छे/८।२।२ छे/८।२।२।२ मिलिताः सप्तमाष्टमनवमूलार्धच्छेदा छे/८।८।२ छे/८।८।४ छे/८।८।८

मिलिता छे।७/८।८।८ एवमवतीर्यावतीर्य पल्यवर्गशलाकानामष्टमसप्तमषष्ठवर्गार्धच्छेदाः व छे ८।८।४ व छे ८।८।२ व छे ८।८।१

एक हीन गुणकार एकका भाग देनेपर उतना ही रहा। वही उन तीनों राशिका जोड़ होता है। इसी प्रकार पल्यके चौथे, पाँचवें, छठे वर्गमूलके अर्द्धच्छेद पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे सोलहवें, बत्तीसवें और चौंसठवें भाग हैं। उन तीनों राशियोंको पूर्ववत् जोड़नेपर सातगुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका चौंसठवाँ भाग हुआ। यह पहलेकी तीन राशियोंके जोड़से आठ गुना घटता हुआ है। इसी प्रकार पहले-पहलेसे आधे-आधे सातवाँ, आठवाँ, नवाँ वर्गमूलके अर्द्धच्छेदों, को जोड़नेपर सातगुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका पाँच सौ बारहवाँ भाग हुआ। यह भी पहलेके जोड़से आठ गुना घाट है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर तीन-तीन वर्गस्थानोंके अर्द्धच्छेदोंको जोड़नेपर आठ-आठ गुना घाट होता है।

उतरते-उतरते पल्यकी वर्गशलाकाके आठवें, सातवें, छठे वर्गके अर्धच्छेद पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे दो सौ छप्पन गुने, एक सौ अठाईस गुने और चौसठ गुने होते हैं। तीनोंका जोड़ पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे चार सौ अड़तालीस गुना हुआ। तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राशित्रितययुतियक्कुं । तदधस्तनपल्यवर्गशलाकापंचमवर्गराश्यर्द्धच्छेदंगळुं चतुर्त्थवर्गराश्यर्द्धच्छेदंगळुं तृतीयवर्गराश्यर्द्धच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदिनिप्पुवल्लि व छे । ८ । ४ । अंतधणं व छे । ८ । ४ । गुणगुणियं व छे ८ । ४ । २ । आदि । व छे ८ । १ । विहीणं । व छे । ८ । ७ । रूऊणुत्तर भजियं । व छे । ८ ७ / १ एंदिदु द्वितीयराशित्रितययुतियक्कुं । तदधस्तनद्वितीयवर्गराश्यर्द्धच्छेदंगळुं तदधस्तनप्रथमवर्गराश्यर्द्धच्छेदंगळुं तदधस्तनवर्गशलाकार्द्धच्छेदंगळुमर्द्धार्द्धक्रमदि । व छे ८ । २ । निप्पुवल्लि । व छे ४ । अंतधणं । व छे ४ । गुणगुणियं । व छे ४ । २ । आदि । व छे । १ । विहीणं । व छे । ७ । रूऊणुत्तरभजियं व छे । ७ / १ । एंदिदु प्रथमराशित्रययुतियक्कु । मिती राशियुतिगळुमष्टगुणोन क्रमंगळप्पुवी राशिगळु तिर्य्यग्रूपदिदमेळेडेयोळु रचिसल्पडुवुवु । एकेंदोडे पत्तु कोटीकोटिसागरोपममिप्पत्तुकोटीकोटिसागरोपम । व छे ८ । १ । मूव । व छे २ । त्तु कोटीकोटिसागरोपम । नाल्वत्तु कोटीकोटिसागरोपममय्वत्तुकोटीकोटिसागरोपम । मेप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपमस्थितिगळ संबंधिगळप्प

मिलिताः व छे ८ । ८ । ७ / १ पंचमचतुर्थतृतीयवर्गार्धच्छेदाः व छे ८ । ४ / व छे ८ । २ / व छे ८ । १ मिलिताः व छे ८ । ७ / १

द्वितीयप्रथमवर्गयोर्वर्गशलाकानां चार्धच्छेदाः व छे ४ / व छे २ / व छे १ मिलिताः व छे ७ / १ अमी मिलितराशयः सर्वे सप्तसु

पल्यकी वर्गशलाकाके पाँचवें, चौथे, तीसरे वर्गके अर्धच्छेद पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे बत्तीस, सोलह और आठ गुने होते हैं। उन तीनोंका जोड़ पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे छप्पन गुणा होता है। वे पूर्व राशिसे आठ गुणे कम हुए। तथा पल्यकी वर्गशलाकाके दूसरे वर्ग, पहले वर्ग और वर्गशलाका, इन तीनोंके अर्धच्छेद पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे चौगुने, दुगुने और एक गुने हैं। इन तीनोंका जोड़ पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदोंसे सात गुणा होता है। यह भी पूर्वराशिसे आठ गुणा घाट हुआ इस तरह आठ-आठ गुना घाट होता है।

पल्यका वर्गमूल प्रथम वर्गमूल जानना। प्रथम वर्गमूलका वर्गमूल दूसरा जानना। दूसरे मूलका वर्गमूल तीसरा जानना। इसी प्रकार चौथा आदि जानना। तथा पल्यकी वर्गशलाकाका वर्ग प्रथम वर्ग जानना। प्रथम वर्गका वर्ग दूसरा वर्ग जानना। उसका वर्ग तीसरा वर्ग जानना। ऐसे ही चौथा आदि वर्ग जानना। सो पल्यके पहले, दूसरे, तीसरे मूलके अर्धच्छेद जोड़नेपर जो राशि हो उससे लगाकर तीन-तीन स्थानोंके अर्धच्छेदोंको जोड़नेपर

---

१. म क्रमदि निप्पुवल्लि व छे । ४ / व छे । २ / व छे । १ अंत°

२. म मय्वत्तु कोटिकोटिसागरोपममरुवत्तु कोटिकोटिसागरोपमेप्पत्तु ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नानागुणहानिशलाकेगळं साधिसल्वेडि यितेळेडेयोळु तिर्य्यग्रूपदिदंस्थापि। व छे १। सल्पवेडुगुमें बुदत्थंमवक्के संदृष्टिरचने इदु।

छे । ७ ८	छे । ७ ८	छे । ७ ८	छे । ७ ८	छे । ७ ८।८	छे ।७ ८।८	छे ।७ ८।८
छे । ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८	छे ७ ८।८	छे ७ ८।८	छे । ७ ८।८	छे । ७ ८।८	छे ।७ ८।८
छे ७ ८।८।८	छे । ७ ८।८।८	छे ।७ ८।८।८	छे।७ ८।८।८	छे । ७ ८।८।८	छे । ७ ८।८।८	छे । ७ ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
व छे।७।८।८	व।छे।७।८।८	वाछे।७।८।८	व छे।७।८।८	व छे७।८।८	व छे।७।८।८	व छे।७।८।८
व छे।७।८	व छे।७।८	व छे ७।७	व छे ७।८	व छे।७।८	व छे ।७।८	व छे । ७।८
व छे।७	व छे।७	व छे ।७	व छे । ७	व छे ।७	व छे । ७	व छे । ७

इंतु स्थापिसल्पट्ट सप्तपंक्तिगळोळु प्रथमपंक्तिगतराशिगळनष्टगुणोनक्रमदि निर्द्दुवं प्रत्येकं फलराशिगळं माडि मोहनीयोत्कृष्टसप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्थितियं प्रमाणराशियं माडि पत्तु-। मिप्पत्तु। मूवत्तु। नाल्वत्तु-। मय्वत्तु-। मरुवत्तु-। मेप्पत्तु-। कोटीकोटिसागरोपमंगळमेकैकपंक्तिगळिगिच्छाराशिगळं माडि त्रैराशिकंगळं माळ्पुदें बुदं सूचिसि तल्लब्धराशियं प्रथमपंक्तियोळु पत्तु कोटिकोटिसागरोपमप्रतिबद्धवोळाद्यंतराशिगळं पेळ्वपरु :—

> तत्थंतिमं छिदिस्स य अट्ठमभागो सलायछिदा हु।
> आदिमरासिपमाणं दसकोडाकोडिपडिबद्धे ॥९३४॥

तत्र चरमछेदराशेरष्टमभागः शलाकाच्छेदाः खल्वाद्यराशिप्रमाणं दशकोटिकोटिप्रतिबद्धे ॥

स्थानेष्वग्रेऽग्रे रचयितव्याः ॥९३३॥

तासु सप्तपंक्तिषु मध्ये प्रथमपंक्तिगतराशीन् प्रत्येकं फलं कृत्वा दशकोटीकोटिसागरोपमाणीच्छां कृत्वा

जो-जो राशि पल्यकी वर्गशलाकाका दूसरा, पहला वर्ग और पल्यकी वर्गशलाका इन तीनोंके अर्धच्छेदोंको जोड़नेपर जो-जो राशि हो वहाँ तक सब जोड़ी हुई असंख्यात राशि जुदे-जुदे सात स्थानोंमें आगे-आगे रचनारूप करना चाहिए ॥९३३॥

उक्त सात पंक्तियोंमें-से पहली पंक्तिमें जो-जो तीन-तीनका जोड़ देनेपर राशि हुई उन सबको जुदा-जुदा फल राशि करो। और सबोंमें दस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण इच्छाराशि करो तथा सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण राशि करो। इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिको इच्छा राशिसे गुणा करके उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर जो-जो प्रमाण हो उन सबको जोड़नेपर जो प्रमाण हो उतनी दश कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिकी नाना गुणहानि

---

१. म स्थापिसल्पडुगुमेंबुदर्थमवक्के।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुन्नं तिर्य्यग्रूपदिद मेळ्ं स्थानदोळु स्थापिसल्पट्ट पंक्तिगळोळु प्रथमपंक्तियं दशकोटीकोटि-सागरोपमप्रतिबद्धमं माडि तत्प्रथमपंक्तिगतराशिगळं फलराशिगळं माडि प्रतिराशियं पत्तु कोटीकोटिसागरोपमनिच्छाराशियं माडि गुणिसि सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमप्रमाणराशियिदं भागिसि बंद लब्धराशिगळोळु चरमराशिप्रमाणं पल्यच्छेदाष्टमभागमक्कुमाद्यराशिप्रमाणं पल्यवर्ग-शलाकार्द्धच्छेदंगळप्पुवल्लि अंतधणं छे । १/८ गुणगुणियं छे । ८/८ आदि । व छे । विहीणं ।

छे ८ व छे । रूऊणुत्तरभजिय छे व छे/७ भंविंतिदु पत्तु कोटीकोटिसागरोपमस्थितिप्रतिबद्धनाना-गुणहानिशलाकेगळप्पुवु । ई नानागुणहानिशलाकेगळान्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणमं नितक्कुमें दोडें पेळ्दपेमेतें दोडे छे व छे/७ ई नानागुणहानिशलाके गळोळिदं ऋणमं तेगवु बेरें स्थापिसल्पडुवुदु व छे/७ शेषराशिप्रमाणमनिदं छे/७ संदृष्टि :—

प्र = सा = ७०। को २	फ = छे ७ / ८	इ = सा = १० को २	लब्ध छे । १ / ८
प्र = सा = ७०। को २	फ = छे / ८।८	इ = सा = १०=को २	लब्ध छे । १ / ८ । ८
प्र = सा = ७०। को २	फ = छे।७ / ८।८।८	इ = सा = १० को २	लब्ध छे । १ / ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र = सा = ७०। को २	फ = व छ ।८।८।७	इ = सा = १०। को २	लब्ध व छे । ८।८
प्र = सा = ७०। को २	फ = व छे ।८।७	इ = सा = १०। को २	लब्ध व छे । ८।१
प्र = सा = ७०। को २	फ = व छे ।७	इ = सा = १०। को २	लब्ध व छे । १

संगुण्य सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमप्रमाणेन भक्ते लब्धं चरिमं छे १/८ गुणिगुणियं छे ८/८ आदि व छे विहीणं छे—व—छे रूऊणुत्तरभजियं छे—व—छे/७ इति दशकोटीकोटिसागरोपमस्थितिप्रतिबद्धनानागुणहानिशलाका भवन्ति ।

शलाका जानना । उनके जोड़नेका विधान कहते हैं—

'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि सूत्रके अनुसार पल्यके पहले, दूसरे, तीसरे वर्गमूलके अर्द्धच्छेद मिलकर सात गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंके आठवें भाग होते हैं। उनको दस कोड़ाकोड़ी सागरसे गुणा करके सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरका भाग देनेपर पल्यके अर्द्धच्छेदोंका आठवाँ भाग हुआ। उसे यहाँ अन्तधन जानना। चूँकि प्रत्येक जोड़में गुणकार आठ है इससे इसे आठसे गुणा करनेपर पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण होता है। उसमेंसे आदि घटाना चाहिए। सो पल्यकी वर्गशलाकाका दूसरा और पहला वर्ग तथा पल्यकी वर्गशलाका इन तीनोंके अर्द्धच्छेद मिलकर सात गुने पल्यकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निमित्तमागि केळगेयुं मेगेयुमें टरिंदं गुणिसि छे।८/७।८ इदरोळेकरूपं तेगदु बेरे स्थापिसि छे१/७।८ शेषम छे।७/७।८ पवत्तितमिदु छे/८ इदक्के :—

भज्जमिद वुगगुण्णठिदरासि मूलाणि हारछिदिपमिदं।
गंतूण चरिममूलं लद्धमिद वुगाहदी जणिदं ॥

एंदितो सूत्रेष्टदिदं हारमागिर्दं अष्टरूपुगळर्द्धच्छेदंगळु मूरप्पुवु। तावन्मात्र मा पल्यच्छेदंगळ्गे द्विक संवर्गदिदं पुट्टिद राशि पल्यमदर प्रथमादिमूलंगळनिळिदु पुट्टिद राशि पल्यतृतीयमूलमन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणमक्कु–। मू ३। मी राशिगे मुन्नं तेगदिरिसिद धनरूपमिदरोळु छे।१/७।८ मोदलु तेगेदिरिसिद वर्गशलाकार्द्धच्छेदसप्तमभागमनिदं व छे/७ किंचिन्यूनमं माडि छे–/७।८ तन्मात्रद्विकसंवर्गमं माडुत्तं विरलु लब्धराशियुं हारार्द्धच्छेदमात्रमूलंगळं केळगिळिदु पुट्टदुगुमप्पुदरिंद –१ मसंख्यातगुणपल्यपंचममूलप्रमितमक्कु– मू ५।a मिदु गुणकारमक्कुमेके दोडे :—

विरळिदरासीदो पुण जेत्तिय मेत्ताणि अहियरूवाणि।
तेसिं अण्णोण्णहदी गुणगारो लद्धरासिस्स ॥

एंदितु लब्धराशिगे गुणकारमक्कुमप्पुदरिं पत्तुकोटीकोटिसागरोपम स्थितिप्रतिबद्ध नानागुणहानिशलाकेगळिवक्के छे व छे/७ अन्योन्याभ्यस्तराशियिदं मू ३ मू ५।a। ई गुणकारभूता

तथा तन्नानागुणहानिस्थमृणं पृथग्धृत्य व छे/७ शेषं छे/७ संदृष्टचर्थमुपर्यधोऽष्टभिर्हत्वा छे ८/७।८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे १/७ ८ शेषं छे ७/७ ८ अपवर्त्यं छे/८ तन्मात्रद्विकसंवर्गे हारार्धच्छेदमात्रवर्गस्थानान्यधोऽवतीर्योत्पन्नराशित्वात्पल्यतृतीयमूलं मू ३ इदं पृथग्धृतवर्गशलाकार्धच्छेदसप्तमभागमात्रऋणन्यूनापनीतैकरूप छे १–/७।८ मात्रद्विकसंवर्गेणासंख्यातपल्य-

---

वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेद हुए। उनको दस कोड़ाकोड़ी सागरसे गुणा करके सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरसे भाग देनेपर पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेद प्रमाण होता है वही आदिधन जानना। इसके घटानेपर जो अवशेष रहा उसको गुणकार आठमें एक घटानेपर सात रहे उसका भाग दो, तब पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग प्रमाण हुआ। यही दस कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थिति सम्बन्धी नाना गुणहानि शलाकाका प्रमाण जानना। इतने प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर अन्योन्याभ्यस्तराशि होती है। उसका प्रमाण लानेके लिए उस नानागुणहानिमें ऋणरूप पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग कहा था उसे जुदा रखनेपर शेष पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग रहा। उसकी सहनानी (चिह्न) के लिए आठका गुणा करो और आठ ही से भाग दो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात पंचमूलंगळं गुणकारमनसंख्यातमें दु पल्यतृतीयमूलक्के गुणकारमनाचार्य्यं माडि रचनेयोळबरदं । मू ३ a । ई प्रकारदिदं शेषषट् पंक्तिगळोळु मरियल्पडुगुमल्लि द्वितीयपंक्तिपनिप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपम स्थितिप्रतिबद्धमं माडि तृतीयपंक्तियं त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिप्रतिबद्धमं माडि चतुर्थपंक्तियं चत्वारिंशत्सागरोपम कोटीकोटिस्थिति प्रतिबद्धमं माडि पंचमपंक्तियं पंचाशत्सागरोपम कोटीकोटिस्थितिप्रतिबद्धमं माडि षष्ठपंक्तियं षष्ठिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिप्रतिबद्धमं माडि सप्तमपंक्तियं सप्ततिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिप्रतिबद्धमं माडि त्रैराशिकसिद्धलब्धैकैकपंक्तिगळं तत्तत्स्थितिनानागुणहानिशलाकापंक्तिगळु मन्योन्याभ्यस्तराशिगळप्प तत्तन्मूलंगळुमप्पुवें दु मुंदण सूत्रंगळिंदं व्याप्तिरूपदिंदं पेळ्वपरु :—

इगिपंतिगदं पुध पुध अप्पिट्ठेण य हदे हवे णियमा ।
अप्पिट्ठस्स य पंति णाणागुणहाणिपडिबद्धा ।।९३५।।

एकपंक्तिगतं पृथक्पृथगात्मेष्टेन च हते भवेन्नियमात् । आत्मेष्टस्य च पंक्तिर्नानागुणहानिप्रतिबद्धा ।।

आ सप्तपंक्तिगळोळेक पंक्तिगत प्रथमपंक्तिगतराशिगळ दशकोटीकोटिसागरोपमस्थिति-

पंचमूलमात्रेण मू ५ a असंख्यातीकृतेन a विरलितराश्यधिकरूपोत्पन्नत्वाद् गुणितं तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् मू ३ a ।।९३४।। अथ विंशतिकोटीकोटिसागरोपमादिस्थितिकानां नानागुणहानिशलाकान्योन्याभ्यस्तराशी आह—

तासु शेषषट्पंक्तिष्वेकैकपंक्तिगतं सर्वं पृथक् फलराशिं कृत्वा तत्र प्रथमपंक्तिगतं आत्मेष्टेन त्रिंशति-

सो गुणकारमें-से एक घटाकर उसे जुदा रखो शेष सातका गुणाकार रहा और पहले सातका भागहार था। सो दोनोंको समान जानकर अपवर्तन करनेपर दोनों ही नहीं रहे। ऐसा करनेपर पल्यके अर्द्धच्छेदोंका आठवाँ भाग हुआ। इतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पल्यका तीसरा वर्गमूल हुआ। क्योंकि भागहारके जितने अर्द्धच्छेद होते हैं उतने वर्गस्थान भाज्यराशिसे नीचे जानेपर उत्पन्न राशिका प्रमाण होता है। सो यहाँ भागहार आठ है उसके अर्द्धच्छेद तीन हुए। सो पल्यसे नीचे तीसरा वर्गस्थान पल्यका तीसरा वर्गमूल है। तथा जो गुणकारमें-से एक जुदा रखा था वह पल्यका छप्पनवाँ भाग गुणकार था इससे पल्यका छप्पनवाँ भाग प्रमाण रहा। उसमें ऋणरूप पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग घटानेपर जो शेष रहे उतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर असंख्यात गुणा पल्यका पाँचवाँ वर्गमूलमात्र असंख्यातका प्रमाण हुआ।

'विरलिदरासीदो पुण' इत्यादि सूत्रके अनुसार अधिक राशिको परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि होती है वह गुणकार रूप होती है। अतः उस असंख्यातसे पल्यके तीसरे वर्गमूलको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना दस कोड़ाकोड़ीकी अन्योन्याभ्यस्त राशि जानना ।।९३४।।

आगे बीस कोड़ाकोड़ी आदि स्थितिकी नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि कहते हैं—

जैसे दस कोड़ाकोड़ी सागरकी प्रथम पंक्तिमें सब तीन-तीन स्थानोंकी जोड़रूप राशि-

यिदं तु गुणिसिदंते शेष षट्पंक्तिगळ राशिगळं बेरे बेरे तन्निष्टविंव विंशतिसागरोपमकोटीकोट्या-विस्थितिविकल्पंगळिदं गुणिसि सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्थितिइंदं भागिसुत्तं बिरलु वंद लब्धंगळु विंशतिकोटीकोटिसागरोपमादिस्थितिप्रतिबद्धनानागुणहानिशलाकापंक्तिगळप्पुवु । आ राशि-पंक्तिगळ्गे संदृष्टिरचने इदु :—

प्र=सा=७० को २	फल छे ७ / ८	इ सा = २० को २	लब्ध छे । २ / ८
प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ / ८ । ८	इ सा = २० को २	लब्ध छे । २ / ८।८
प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ / ८ । ८ । ८	इ सा = २० को २	लब्ध छे । २ / ८।८।८
० ०	० ०	० ०	० ०
प्र=सा=७० को २	फल व छे ७। ८।८	इ सा = २० को २	लब्ध व छे । / ८।८।२
प्र=सा=७० को २	फल व छे ७ । ८	इ सा = २० को २	लब्ध व छे। / ८ । २
प्र=सा=७० को २	फल व छे। ७	इ सा = २० को २	लब्ध व छे । २।

→

कोटीकोटिसागरोपमैः, द्वितीयपंक्तिगतं त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमैः तृतीयपंक्तिगतं चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमैः चतुर्थपंक्तिगतं पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमैः, पंचमपंक्तिगतं षष्टिकोटाकोटिसागरोपमैः, षष्ठपंक्तिगतं सप्ततिकोटाकोटिसागरोपमैश्चेच्छाराशीनां गुणयित्वा सर्वत्र सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमैः प्रमाणराशिना भक्त्वा लब्धानि आत्मेष्टस्य विंशतिकोटीकोटिसागरोपमादेः प्रतिबद्धा नानागुणहानिशलाकापंक्तयो भवन्ति ॥९३५॥

को जुदा-जुदा फलराशि किया था वैसे ही शेष छह पंक्तियोंमें फलराशि करो। प्रथम पंक्तिमें इच्छाराशि दस कोड़ाकोड़ी सागर कहा था और उस इच्छाराशिसे फलराशिको गुणा किया था। यहाँ छह पंक्तियोंमें-से अपने-अपने इष्टरूप प्रथम पंक्तिमें बीस कोड़ाकोड़ी सागर, दूसरी पंक्तिमें तीस कोड़ाकोड़ी सागर, तीसरी पंक्तिमें चालीस कोड़ाकोड़ी सागर, चौथी पंक्तिमें पचास कोड़ाकोड़ी सागर, पाँचवीं पंक्तिमें साठ कोड़ाकोड़ी सागर, छठी पंक्तिमें सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण इच्छाराशि रखकर गुणा करो। तथा जैसे प्रथम पंक्तिमें प्रमाण राशि सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरका भाग दिया था वैसे ही यहाँ भी सर्वत्र प्रमाण राशि सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरका भाग दो। ऐसा करनेसे जो-जो प्रमाण आवे वह-वह अपनी इष्ट बीस कोड़ाकोड़ी सागर आदि स्थिति सम्बन्धी नानागुणहानि शलाका होती है ॥९३५॥

प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ ८	इ सा=३० को २	लब्ध छे। ३ ८
प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ ८।८	इ सा=३० को २	लब्ध छे। ३ ८।८
प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ ८।८।८	इ सा=३० को २	लब्ध छे। ३ ८।८।८
← ० ०	० ०	० ०	० ०
प्र=सा=७० को २	फल व छे। ७।८।८	इ सा=३० को २	लब्ध व छे। ८।८।३
प्र=सा=७० को २	फल व छे। ७।८	इ सा=३० को २	लब्ध व छे। ८।३
प्र=सा=७० को २	फल व छे। ७।	इ सा=३० को २	लब्ध व छे। ३

प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७ ८	इ। सा २० को २	ल। छे २ ८
प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७ ८।८	इ। सा २० को २	ल। छे २ ८।८
प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७ ८।८।८	इ। सा २० को २	ल। छे २ ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ० →
प्र। सा ७०। को २	फ। व छे ७ ८।८	इ। सा २० को २	ल। व छे ८।८।२
प्र। सा ७०। को २	फ। व छे ७।८	इ। सा २० को २	ल। व छे ८। २
प्र। सा ७०। को २	फ व छे ७	इ। सा २० को २	ल। व छे २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र = सा = ७० को २	फल । छे । ७ ८	इ सा = ४० को २	लब्ध छे । ४ ८
प्र = सा = ७० को २	फल । छे । ७ ८ । ८	इ सा = ४० को २	लब्ध छे । ४ ८ । ८
प्र = सा = ७० को २	फल । छे । ७ ८ । ८	इ सा = ४० को २	लब्ध छे । ४ ८।८।८
० ०	० ०	० ०	० ०
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७।८।८	इ सा = ४० को २	लब्ध व छे । ८।८।४
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७ । ८	इ सा = ४० को २	लब्ध व छे । ८ । ४
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७	इ सा = ४० को २	लब्ध व छे । ४

→

प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	इ । सा ३० को २	ल । छे ३ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ७	इ । सा ३० को २	ल । छे ३ ८ । ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८ । ८	इ । सा ३० को २	ल । छे ३ ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ ८ । ८	इ । सा ३० को २	ल । व छे ८।८।३
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८	इ । सा ३० को २	ल । व छे ८।३
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	इ । सा ३० को २	ल । व छे ३

←

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८	इ सा = ५० को २	लब्ध छे । ५ ८
प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८ । ८	इ सा = ५० को २ ,,	लब्ध छे । ५ ८ । ८
प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८।८।८	इ सा = ५० को २	लब्ध छे । ५ ८।८।८
० ०	० ०	० ०	० ०
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७।८।८	इ सा = ५० को २	लब्ध व छे । ८।८।५
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७ । ८	इ सा = ५० को २	लब्ध व छे । ८ । ५
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७	इ सा = ५० को २	लब्ध व छे । ५

←

प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	इ । सा ४० को २	ल । छे ४ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८।८	इ । सा ४० को २	ल । छे ४ ८।८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८।८।८	इ । सा ४० को २	ल । छे ४ ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८।८	इ । सा ४० को २	ल । व छे ८।८।४
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८	इ । सा ४० को २	ल । व छे ८।४
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	इ । सा ४० को २	ल । व छे ४

→

Jain Education International 	For Private & Personal Use Only 	www.jainelibrary.org

प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८	इ सा = ६० को २	लब्ध छे । ६ ८
प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८ । ८	इ सा = ६० को २	लब्ध छे । ६ ८ । ८
प्र = सा = ७० को २	फल छे । ७ ८।८।८	इ सा = ६० को २	लब्ध छे । ६ ८।८।८
० ०	० ०	० ०	० ० →
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७।८।८	इ सा = ६० को २	लब्ध व छे । ८।८।६
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७ । ८	इ सा = ६० को २	लब्ध व छे । ८ । ६
प्र = सा = ७० को २	फल व छे । ७	इ सा = ६० को २	लब्ध व छे । ६

प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	इ । सा ५० को २	ल । छे ५ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८	इ । सा ५० को २	ल । छे ५ ८।८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८।८।८	इ । सा ५० को २	ल । छे ५ ८।८।८
← ० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८।८	इ । सा ५० को २	ल । व छे ८।८।५
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८	इ । सा ५० को २	ल । व छे ८।५
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	इ । सा ५० को २	ल । व छे ५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र=सा=७० को २	फल छे ७ ८	इ सा=७० को २	लब्ध छे। ७ ८
प्र=सा=७० को २	फल छे ७ ८।८	इ सा=७० को २	लब्ध छे। ७ ८।८
प्र=सा=७० को २	फल छे। ७ ८।८।८	इ सा=७० को २	लब्ध छे। ७ ८।८।८
० ०	० ०	० ०	० ०
प्र=सा=७० को २	फल व छे ७। ८।८	इ सा=७० को २	लब्ध व छे ८। ८।७
प्र=सा=७० को २	फल व छे। ७।८	इ सा=७० को २	लब्ध व छे। ८।७
प्र=सा=७० को २	फल व छे ७	इ सा=७० को २	लब्ध व छे ७

प्र। सा ७० को २	फ। छे ७ ८	इ। सा ६० को २	ल। छे ६ ८
प्र। सा ७० को २	फ। छे ७ ८। ८	इ। सा ६० को २	ल। छे ६ ८।८
प्र। सा ७० को २	फ। छे ७ ८।८।८	इ। सा ६० को २	ल। छे ६ ८। ८। ८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७।८।८	इ। सा ६० को २	ल। व छे ८। ८। ६
प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७। ८	इ। सा ६० को २	ल। व छे ८। ६
प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७	इ। सा ६० को २	ल। व छे ६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पिट्ठपंतिचरमो जेत्तियमेत्ताणि वग्गमूलाणं ।
छेदणिवहोत्ति णिहाणिय सेसं च य मेलिदे इट्ठा ॥९३६॥

आत्मेष्टपंक्तिचरमो यावन्मात्राणां वर्गमूलानां । छेदनिवहः इति निर्द्धार्य्य शेषांश्च मिलिते इष्टाः स्युः ॥

ई पंक्तिगळोळिष्टपंक्तिय चरमलब्धमेनितनेय मूलंगळ छेदनिवहमं वु निर्द्धारिसि संकलिसुत्तं विरलु इष्ट नानागुणहानियक्कुमेंते दोडो रचनयोळिप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपम प्रतिबद्धपंक्तियोळु अंतधणं छे २ / ८ गुणगुणियं छे । २ । ८ / ८ आदि । व छे । २ । विहीणं छे २ । रूऊणुत्तरभजियं

प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	इ । सा ७० को २	ल । छे ७ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८।८	इ । सा ७० को २	ल । छे ७ ८।८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८।८।८	इ । सा ७० को २	ल । छे ७ ८।८।८
← ⁞	⁞	⁞	⁞
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८।८	इ । सा ७० को २	ल । व छे ८।८।७
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७।८	इ । सा ७० को २	ल । व छे ८।७
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	इ । सा ७० को २	ल । व छे ७

निजेष्टपंक्तेश्चरमलब्धं यावत् वर्गमूलानां छेदनिवह इति निधार्य संकलिते इष्टस्य नानागुणहानिः स्यात् । तद्यथा—विंशतिकोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ अन्तधणं छे २ / ८ गुणगुणियं छे २ । ८ / ८ आदि व छे

अपनी-अपनी इष्ट पंक्तिमें अन्तिम स्थानपर्यन्त जितने स्थान हों उतने वर्गमूलोंके अर्द्धच्छेदोंके समूहको निर्धारित करके सबके मिलानेपर अपने-अपने विवक्षित इष्टकी नानागुणहानि होती है। मिलानेका विधान दस कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें जैसा कहा वैसा ही जानना। इतना विशेष है कि दस कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें जो अन्तधन और आदिका प्रमाण कहा है यहाँ इन छहों पंक्तियोंमें क्रमसे दूना, तिगुना, चौगुना, पाँचगुना, छहगुना और सातगुना जानना। क्योंकि इच्छाराशिके दुगुना, तिगुना आदि होनेपर सब ही दुगुने, तिगुने आदि होते हैं।

सो बीस कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें अन्तधन पल्यके अर्द्धच्छेदोंके चतुर्थ भाग है। उसको गुणकार आठसे गुणा करनेपर पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे दूना हुआ। उसमें आदिका प्रमाण—पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे चौदह गुणा घटाओ। यह प्रमाण किंचित् कम करना। फिर उसे एक हीन गुणकार सातका भाग दो। ऐसा करनेपर किंचित् कम दूना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छे २ इदं संदृष्टिनिमित्तं केळगेयुं मेगेयुमेंटरिदं गुणिसि छे २८ एकरूपं तेगदु बेरे स्थापिसि
७ ७ । ८

छे २ । १ । शेषमपवर्त्तितमिदु । छे । ई राशि नानागुणहानिशलाकेगळप्पुवरिं विरळिसि द्विक-
७ । ८ ४

मनित्तु वग्गितसंवग्गं माडुत्तिरलु पल्यद्वितीयमूलमक्कु । मू २ । मिदक्के बेरे स्थापिसिदेकरूपमिदं छे । २ । १ विरळिसि द्विकमनित्तु वग्गितसंवग्गं माडिदोडे लब्धं तद्योग्यासंख्यातमक्कु ० मदु
७ । ८

पूर्व्वोक्तपल्यद्वितीयमूलक्के गुणकारमक्कु । मू २ । ० । मिदु विंशति कोटीकोटिसागरोपमस्थिति-प्रतिबद्धान्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणमक्कुं । त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिनानागुणहानिशलाका-पंक्तियोळु अंतधणं छे ३ गुणगुणियं छे । ३ । ८ आदि । व छे ३ । विहीणं । छे ३ । रूऊणुत्तर
८ ८

भजियं छे ३ यें विंतिदु नानागुणहानिशलाकेगळप्पुवु । इदं मुन्निनंते संदृष्टिनिमितमेंटरिदं मेलेयुं
७

केळगेयुं गुणिसि छे ३ । ८ एकरूपं तेगदु बेरे स्थापिसि छे ३-१ शेषमनिदं छे ३।८ अपवर्त्ति-
७ । ८ ७ । ८ ७ । ८

---

२ विहीणं छे-२ रूउणुत्तरभजियमिति संकलितायां नानागुणहानिराशिः स्यात् छे-२ तं च संदृष्टचर्थमुपर्यधोऽ-
७

ष्टभिः संगुण्य छे-२ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्या छे-२ । १ पवर्त्य छे-तन्मात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यद्वितीयमूलं मू-२
७।८ ७।८ ४

पृथग्धृतैकरूप छे-२ । १ मात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नतद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू-२ । ० तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।
७।८

त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे । ३ नानागुणहानिराशिः स्यात् । तं च
७

संदृष्टयर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे- । ३ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे- । ३ ।-१ शेष छे- । ३ । ८ मपवर्त्य
७ । ८ ७ । ८ ७ । ८

पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग प्रमाण जोड़ हुआ। इतनी नानागुणहानि जानना। इस प्रमाणको पूर्वोक्त प्रकार आठसे गुणा करके आठका ही भाग दो। सो गुणकारमें एक जुदा रखकर शेष सात गुणकार रहा। पहले सातका भागहार था। दोनोंके समान होनेसे सातसे सातका अपवर्तन करो। शेष किंचित् कम पल्यके अर्द्धच्छेदोंका चतुर्थ भाग रहा। इतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर किंचित् कम पल्यका दूसरा मूल हुआ। तथा जो एक गुणकार जुदा रखा था वह किंचित् कम दूना पल्यके अर्द्धच्छेदोंके छप्पनवाँ भागका गुणकार था। अतः उतने प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात हुआ। उससे गुणा करनेपर अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण असंख्यात गुणित किंचित् कम पल्यका दूसरा वर्गमूल हुआ।

तीस कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें पूर्वोक्त प्रकारसे जोड़ देनेपर कुछ कम तिगुने पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग होता है। इतनी नानागुणहानि राशि है। उसको आठसे गुणा करके आठसे भाग दो। गुणकारमें-से एक जुदा रख शेष सातका गुणकार रहा। पहले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिदोडिदु छे ३/८ यिदं विरळिसि द्विकमनितु वर्गितसंवर्गं माडिदोडे लब्धमन्योन्याभ्यस्तराशिपल्य-तृतीयमूलमात्रद्वितीयमूलंगळप्पु । मू २ । मू ३ । वे तं दोडे गुणकारभूतत्रिरूपदोलों दुरूपिंगे तृतीय-मूलमक्कुं । शेषद्विरूपंगळिगे द्वितीयमूलमक्कुमप्पुदरिंद बेरे तेगेदेकरूपंधनमप्पुदरि छे ३।१/७।८ तावन्मात्रद्विकसंवर्गं माडिदोडे लब्धराशियुं यथायोग्यमसंख्यातमक्कुमदुवुं तृतीयमूलक्के गुणकार-मक्कु । मू २ । मू ३ ० । मिदु त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिगे अन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुं । चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिनानागुणहानिपंक्तियोळु अंतधणं छे ४/८ गुणगुणियं छे ४।८/८ अपवर्त्तितमिदु । छे ४ । आदि । व छे ४ । विहीणं । छे ४ । रूऊणुत्तरभजिय छे ४/७ में दिदु चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिनानागुणहानिशलाकेगळप्पुवु । यिदं मुन्निनंते संदृष्टिनिमित्तं केळगेयु मेगेयुमेंटरिंदं गुणिसि छे ४।८/७।८ गुणकारदोळेकरूपं तेगदु बेरिरिसि छे ४।१/७।८ शेषबहु-

छे-३/८ अत्रत्यगुणकारस्यैकरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नपल्यतृतीयमूलहतद्विरूपमात्र द्वकाहत्युत्पन्नद्वितीयमूलं मू । २ मू । ३ । पृथक्कृतैकरूप छे- । ३ । १/७ । ८ मात्रद्विकाहत्युत्पन्नवद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू । २ । मू । ३ । ० तदन्यो-न्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।

चत्वारिंशत्कोटाकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे-४/७ नानागुणहानिराशिः स्यात् ।

सातका भागहार था। दोनोंका अपवर्तन करनेपर किंचित् कम तिगुना पल्यके अर्द्धच्छेदोंका आठवाँ भाग हुआ। तिगुणामें-से एक गुणा प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पल्यका तीसरा मूल हुआ। और शेष दो गुणा प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करने-पर पल्यका दूसरा मूल हुआ। इन दोनोंका परस्परमें गुणा करनेपर पल्यके तीसरे वर्गमूलसे गुणित पल्यका दूसरा वर्गमूल प्रमाण हुआ। उसमें किंचित् कम करना। एक गुणकार जुदा रखा था वह किंचित् कम तिगुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका छप्पनवाँ भागका गुणकार था। अतः इतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात हुआ। उससे गुणा करनेपर असंख्यात गुणित किंचित् कम पल्यके तीसरे मूलसे गुणित पल्यके दूसरे वर्गमूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है।

चालीस कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें पूर्वोक्त प्रकार जोड़ देनेपर किंचित् कम चौगुना पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग होता है। इतनी नानागुणहानि राशि जानना। इसको आठसे गुणा करके आठसे भाग दें। गुणकारमें-से एक जुदा रखनेपर सातका गुणकार

१. चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणामपि तत्पंक्तौ अन्तधणं गुणगुणियं छे ४।८/८ अपवर्त्यं छे ४ आदि व छे ४/७ विहीणं छे-४/७ रूऊणुतरभजियमिति छे-४/७ नानागुणहानिप्रमाणं स्यात् । इयानधिकः पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भागमनिदं छे ४।७/७।८ अपवर्त्तिसिदोडिदु छे/२ एतावन्मात्रद्विकंगळं वर्गितसंवर्गं माडिदोडे लब्ध-राशिपल्यप्रथममूलमक्कु। मू १। मिदक्के मुन्नं तेगेदिरिसिद घनरूपमिदक्कं छे ४।१/७।८ द्विकसंवर्गमं माडि लब्धराशियुं तद्योग्यासंख्यातमक्कुमदुगुणकारमक्कु। मू १। ə। मिदु चत्वारिंशत्कोटी-कोटिसागरोपमस्थितिगन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुं। मत्तं पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिनाना-गुणहानिपंक्तियोळु अंतधणं छे ५/८ गुणगुणियं छे ५।८/८ आदि। व छे ५। विहीणं। छे ५–। रूऊणुत्तरभजियं छे ५-/७ यिल्लियुं संदृष्टिनिमित्तं केळगेयुं मेगेयुमेंटरिं गुणिसि छे ५।८/७।८ गुण-कारदोळोंदु रूपं तेगदु बेरिरिसि छे ५।१/७।८ शेषमनिदं छे ५।७/७।८ अपवर्त्तिसिदुदं छे ५/८ विरळिसि द्विकमनित्तु वर्गितसंवर्गं माडिदोडे लब्धराशिप्रमाणं पल्यतृतीयमूलमात्रपल्यप्रथममूलंगळप्पु-

---

तं च संदृष्ट्यर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे–४। ८/७।८ एकरूपं पृथग्धृत्वा छे–। ४। १/७।८ शेष छे–४। ७/७।८ मपवर्त्य छे–/२ तन्मात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यप्रथममूलं मू–१ पृथग्धृतैकरूपमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नतद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू–१। ə तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात्।

पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे–५/७ नानागुणहानिराशिः स्यात्। तं च संदृष्टयर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे–५। ८/८।८ एकरूपं पृथग्धृत्वा छे–५। /७। ८ शेष छे–५ ७/७। ८ मपवर्त्य छे–५/८

रहा। और पहले सातका भागहार था। दोनोंका अपवर्तन करनेपर किंचित् कम पल्यके अर्द्धच्छेदोंसे आधे रहे। इतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर कुछ कम पल्यका प्रथम वर्गमूल हुआ। जो एक जुदा गुणकार रखा था सो वह किंचित् कम चौगुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका छप्पनवाँ भागका गुणकार था। अतः उतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर यथायोग्य असंख्यात हुआ। उससे गुणा करनेपर असंख्यात गुना किंचित् कम पल्यके प्रथम मूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है।

पचास कोड़ाकोड़ी सागर सम्बन्धी पंक्तिमें पूर्वोक्त प्रकारसे जोड़नेपर किंचित् कम पाँच गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग होता है। इतनी नाना गुणहानि राशि जानना। उसे आठसे गुणा करके आठसे भाग दें। गुणकारमें-से एक जुदा रखकर शेष सातका गुणकार रहा और पहले सातका भागहार था। सो दोनोंका अपवर्तन करनेपर किंचित् कम पाँच गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका आठवाँ भाग प्रमाण हुआ। यहाँ पाँच गुणा कहा है उसमें-से एक

---

१. पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ अन्तधणं छे ५/८ गुणगुणियं छे। ५। ८/८ आदि व छे ५ विहीणं छे–५ रूऊणुत्तरभजियमिति छे–५/८। पाठोऽधिकः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वें तं वोडे गुणकारभूतपंचरूपंगळोळेकरूपं तेगददक्के द्विकमनित्तु संवर्गं माडिदोडे पल्यतृतीयमूलं गुणकारमक्कुं। शेषमं नाल्कुरूपुगळनें टरोडनपर्वात्तिसिदोडे पल्यच्छेदार्द्धमक्कुमदक्के द्विकसंवर्गं माडिदोडे लब्धराशिपल्यप्रथममूलं गुण्यमक्कुमें बुदत्थं। मुन्नं तेगेदिरिसिदेकरूपिंगे छे ५१/७।८ द्विकसंवर्गमं माडुत्तं विरलु यथायोग्यासंख्यातं तृतीयमूलक्के गुणकारमक्कु । मू १ । मू ३ ० । मिंतु पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिगे अन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुं। मत्तं षष्ठिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिनानागुणहानिपंक्तियोळु अंतधणं छे ६/८ गुणगुणियं छे ६/८ आदि। व छे। ६। विहीणं। । छे ६ रूऊणुत्तरभजियं छे ६/७ एंदिदु षष्ठिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिनानागुणहानिराशिप्रमाणमक्कु। मिदं मुन्निनंते संदृष्टिनिमित्तमागि केळगेयुं मेगेयुमें टरिंदं गुणिसि छे ६।८/७।८ गुणकारदोळेकरूपं तेगदु बेरिरिसि छे ६।१/७।८ शेषबहुभागमनपर्वात्तिसिदोडिदु छे ३/४ एतावन्मात्रद्विक-

अत्रत्यगुणकारस्यैकरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नपल्यतृतीयमूलहतशेषरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नप्रथममूलं पृथक्कृतैरूपो छे। ५। १/७।८ त्वन्नासंख्यातेन गुणितं मू १। मू ३। ० तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात्।

षष्टिकोटाकोटीसागरोपमलब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे–६/७ नानागुणहानिराशिः स्यात् तं च संदृष्टयर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे–६।८/७।८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे–६।१/७।८ शेषमपवर्त्य छे–३/४ तन्मात्रद्विकाहत्यु-

गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंके आठवें भाग प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पल्यका तीसरा मूल होता है। शेष रहा चार गुणा। उतने प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पल्यका प्रथम मूल होता है। दोनोंको परस्परमें गुणा करनेपर जो राशि हो उसको—जो एक गुणकार जुदा रखा था वह किंचित् कम पाँच गुणे पल्यके अर्द्धच्छेदोंके छप्पनवाँ भागका गुणकार था। उतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर असंख्यात होता है—उससे गुणा करें। तब असंख्यात गुणित किंचित् कम पल्यके तीसरे वर्गमूलसे गुणित पल्यके प्रथम मूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है।

साठ कोड़ाकोड़ी स्थिति सम्बन्धी पंक्तिमें पूर्वोक्त प्रकारसे जोड़नेपर किंचित् कम छह गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंका सातवाँ भाग होता है। सो इतनी नाना गुणहानि जानना। उसे आठसे गुणा करके आठसे भाग दें। गुणकारमें-से एक जुदा रख शेष सातका गुणकार रहा। पहले सातका भागहार था। दोनोंका अपवर्तन करनेपर किंचित् कम तिगुणा पल्यके

१. पुनः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ छे ७/८ गुणगुणियं छे ७।८/८ अपवर्त्य छे ७ आदि व छे ७ विहीणं छे ७– । व छे ७ रूऊणुत्तरभजियं छे ७–/७ ऊ छे ७/७ अपवर्त्य छे–व–छे। अधिकः पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवर्ग्गं माडिदोडे लब्धराशि पल्यद्वितीयमूलमात्रप्रथममूलंगळप्पुवु । मू १ । मू २ । बेरे तेगेदिरिसिद घनरूपं विरळिसि छे ६ । १ / ७ । ८ द्विकमनित्तु वग्गितसंवर्ग्गं माडिदोडे लब्धराशि यथायोग्यासंख्यातमक्कुमदु द्वितीयमूलक्के गुणकारमक्कु । मू १ । मू २ । ० । मिदु षष्टिसागरोपमकोटीकोटिस्थितिगन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणमक्कुं । मत्तं सप्ततिकोटीकोटि सागरोपमस्थितिनानागुणहानिपंक्तियोळु अंतधणं छे ७ / ८ गुणगुणियं छे ७ । ८ / ८ अपवर्त्तितमिदु । छे ७ । आदि । व छे । ७ । विहीण मेंदिदसंख्यातगुणहीनराशियप्पुदरिदं गुणकारक्के गुणकारमेळुरूपं तोरि किंचिन्न्यूनमं माडिदोडिदु । छे ७ । रूऊणुत्तरभजियं छे ७ / ७ अपवर्तितमिदु । छे । इवक्के द्विकसंवर्ग्गमं माडुत्तं विरलु लब्धं पल्यमक्कु । मा विरलनराशिय ऋणं पल्यवर्ग्गशलाकार्द्धच्छेदंगळिनितप्पुदरिदं व छे ७ / ७ अपवर्त्तितमिवक्के । व छे । द्विकसंवर्ग्गं माडिद लब्धराशि पल्यवर्ग्गशलाकामात्रमक्कुमदु पल्यक्के हारमक्कु प / व मिदेप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपमस्थितिगन्यो-

---

त्पन्नपल्यद्वितीयमूलमात्रप्रथममूलं मू १ । मू २ पृथग्धृतैकरूपमात्र छे—६ । १ / ७ । ८ द्विकाहत्युत्पन्नासंख्यातेन ० । गुणितं मू १ । मू २ । ० तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।

सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमलब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे—व—छे नानागुणहानिशलाकाराशिः स्यात् । अत्रत्य-छेदमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यं तदृणमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नतद्वर्गं शलाकाराशिना हीनरूपजत्वाद्भक्तं प / व

अर्द्धच्छेदोंका चौथा भाग हुआ। इतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर किंचित् कम पल्यके द्वितीय मूलसे गुणित पल्यके प्रथम मूल प्रमाण होता है। जो एक गुणकार जुदा रखा था वह किंचित् कम छह गुणा पल्यके अर्द्धच्छेदोंके छप्पनवाँ भागका गुणकार था। अतः उतने दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर असंख्यात हुआ। उससे गुणा करनेपर असंख्यातगुणा किंचित् न्यून पल्यके द्वितीय मूलसे गुणित प्रथममूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है।

सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थिति सम्बन्धी पंक्तिमें पूर्ववत् जोड़नेपर पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण नाना गुणहानि जानना। पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर पल्य होता है। 'विरलिद रासीदो पुण' इत्यादि सूत्रके अनुसार जितने हीनरूप थे उन प्रमाण परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि होती है वह उत्पन्न राशिका भागहार होती है। अतः पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेद प्रमाण

---

१. पुनः षष्टिकोटाकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ अन्तधणं छे—६ / ८ गुणगुणियं छे—६ । ८ / ८ आदि व छे—६ विहीणं छे—६ / ७ रूऊणुत्तरभजियमिति छे—६ नानागुणहानिप्रमाणं । इत्यधिकः पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्याभ्यस्तराशि प्रमाणमक्कुं। समुच्चयसंदृष्टि :—

नाना = छेवछे । ७	अन्योन्या मू ३ ०	सा १० को २
नाना = छे । २ ७	अन्योन्या मू २ ०	सा २० को २
नाना = छे । ३ ७	अन्योन्या मू २ ०	सा ३० को २
नाना = छे । ४ ७	अन्योन्या मू १ ०	सा ४० को २
नाना = छे । ५ ७	अन्योन्या मू १। ३ ०	सा ५० को २
नाना = छे । ६ ७	अन्योन्या मू १। २ ०	सा ६० को २
नाना = छे । ७ ७	अन्योन्या मू । प व	सा ७० को २

अनंतरमी नानागुणहानिशलाकेगळगे द्विकमनित्तु वर्गितसंवर्गं माडिदोडे तंतम्म स्थिति- गळन्योन्याभ्यस्तराशिगळप्पुवेंदु पेळ्वपरु। :—

इट्ठसलायपमाणे दुगसंवग्गे कदे दु इट्ठस्स ।
पयडिस्स य अण्णोण्णब्भत्थपमाणं हवे णियमा ॥९३७॥

इष्टशलाकाप्रमाणानि द्विकसंवर्गे कृते तु इष्टायाः प्रकृतेरन्योन्याभ्यस्तप्रमाणं भवेन्नियमात् ॥

ई नानागुणहानिशलाकेगळोळु तन्निष्टमप्प शलाकेगळ प्रमाणंगळं द्विकंगळं संवर्गं माडुत्तं विरलु लब्धराशि तन्निष्टप्रकृतिगळन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणं नियमदिवमक्कु। मंतु द्विकसंवर्गं माडि लब्धराशिगळोळितप्प राशियितप्प प्रकृतिगळन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुमेंदु पेळ्वपरु। :—

तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ॥९३६॥ उक्तान्योन्याभ्यस्तराशीनाह—

स्वेष्टशलाकाप्रमाणद्विकसंवर्गे कृते स्वेष्टप्रकृतेरन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणं नियमात्स्यात् ॥९३७॥ तत्किं कस्य कर्मणः स्यादिति प्रश्ने आह—

दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेसे पल्यकी वर्गशलाका होती है, उसे घटाओ। इस प्रकार पल्यकी वर्गशलाकासे हीन पल्य प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि होती है। इस तरह स्थितिकी अपेक्षा नानागुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशि कही। सो जिस कर्मप्रकृतिकी जितनी स्थिति हो उसकी उस स्थिति सम्बन्धी जानना ॥९३६॥

ऊपर कही अन्योन्याभ्यस्त राशिको गाथा द्वारा कहते हैं —अपनी-अपनी इष्टशलाका— नाना गुणहानि शलाका प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेपर अपनी इष्ट प्रकृति- की अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण नियमसे होता है ॥९३७॥

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

आवरणवेदणीये विग्घे पल्लस्स बिदियतदियपदं ।
णामागोदे बिदियं संखातीदं हवंति त्ति ॥९३८॥

आवरणवेदनीये विघ्ने पल्यस्य द्वितीयतृतीयपदं । नामगोत्रयोर्द्वितीयं संख्यातीतं भवेयुरिति ॥

ज्ञानावरणीयदोळं दर्शनावरणीयदोळं वेदनीयदोळमंतरायदोळमितो मूलप्रकृतिगळ्नाल्कक्कं मूवत्तु कोटीकोटिसागरोपमस्थितियुत्कृष्टमप्पुदरिनवक्कं अन्योन्याभ्यस्तराशि प्रत्येकं पल्यद्वितीयमूलमुमसंख्याततृतीयमूलमप्पुवु । नामगोत्रंगळगे प्रत्येकमिप्पत्तु कोटीकोटिसागरोपमस्थितियप्पुदरिंदमन्योन्याभ्यस्तराशि प्रत्येकमसंख्यातपल्यद्वितीयमूलंगळप्पुवु ॥

अनंतरमायुःकर्म्मक्के विलक्षणस्थितिभेदमप्पुदरिंदमदक्के प्रतिभागविंदं नानागुणहानिशलाकेगळं पेळ्दपरु ।—

आउस्स य संखेज्जा तप्पडिभागा हवंति णियमेण ।
इदि अत्थपदं जाणिय इट्ठठिदिस्साणए मदिमं ॥९३९॥

आयुषश्च संख्येयास्तत्प्रतिभागा भवंति नियमेन । इत्यर्थपदं ज्ञात्वा इष्टस्थितेरानयेन्मतिमान् ॥

आयुष्यकर्म्मक्के तत्प्रतिभागंगळु संख्येयभागंगळप्पुवु नियमदिंदमिंते अभीष्टस्थानमनरिदु इष्टस्थितिगे नानागुणहानिगळुमं मतिवंतं तंदु कोंबुदु । अदें ते दोडे एप्पत्तुकोटीकोटिसागरोपमस्थितिगे नानागुणहानिशलाकेगळुमिनितागलु मूवत्तमूरु सागरोपमस्थितिगेनितु नानागुणहानिशलाकेगळप्पुवेंदु त्रैराशिकमं माडि प्र सा ७० । को २ । फ छे व छे । इ सा ३३ । बंद लब्धमवु आयुष्यकर्म्मक्के नानागुणहानिशलाकेगळ प्रमाणं संख्यातैकभागंगळप्पुवु । आयुः नाना ।

ज्ञानदर्शनावरणयोर्वेदनीयेऽन्तराये चोत्कृष्टेन त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितित्वादन्योन्याभ्यस्तराशिः प्रत्येकं पल्यद्वितीयमूलसंख्याततृतीयमूलगुणं स्यात् । नामगोत्रयोर्विंशतिकोटीकोटिसागरोपमस्थितित्वादसंख्यातानि पल्यद्वितीयमूलानि भवन्ति ॥९३८॥

आयुषो विलक्षणः स्थितिभेदोऽस्तीति तन्नानागुणहानिशलाकास्तु प्रतिभागाः संख्येयाः स्युरिति नियमात् सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणामेआवल्यः छे—व—छे तदा त्र्यस्त्रिंशत्सागरोपमाणां कतीति लब्धाः

वह किस कर्मका होता है? ऐसा पूछनेपर कहते हैं—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, और अन्तरायकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर है। अतः इनकी अन्योन्याभ्यस्तराशि पल्यके द्वितीय मूलको असंख्यात तीसरे मूलोंसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतनी है। नाम और गोत्रकी उत्कृष्ट स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर है। अतः इनकी अन्योन्याभ्यस्त राशि असंख्यातगुणा पल्यका द्वितीय वर्गमूल प्रमाण है ॥९३८॥

आयुकर्मका स्थितिभेद सबसे विलक्षण है। अतः उसकी नाना गुणहानिशलाका स्थितिके प्रतिभागके अनुसार नियमसे होती हैं। सो सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिकी नाना गुणहानि शलाका पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेद प्रमाण होती हैं तो तैंतीस सागर स्थितिकी कितनी नाना गुणहानि शलाका होंगी? ऐसा त्रैराशिक करनेपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छे व छे ३३ । ई प्रकारदिंद मतिवंतं तन्निष्टस्थितिगे नानागुणहानिशलाकेगळं तंदु कों बुदु ॥
७० को २

यितु गुणहान्यध्वानमुं नानागुणहानिशलाकेगळु निषेकभागहारमुमन्योन्याभ्यस्तराशियु मरियल्पडुत्तिरलु । गु ८ । नाना ६ । दो गुण १६ । अन्योन्याभ्यस्त ६४ ॥

उक्कस्सट्ठिदिबंधे सयलाबाहा हु सव्वठिदिरयणा ।
तक्काले दीसदि तो दो दो बंधट्ठिदीणं च ॥९४०॥

उत्कृष्टस्थितिबंधे सकलाबाधा खलु सर्व्वस्थितिरचना । तत्काले दृश्यते ततो दो दो बंधस्थितीनां च ॥

उत्कृष्टस्थिति विवक्षितप्रकृतिगे बंधमागुत्तं विरला स्थितिगे उत्कृष्टाबाधेयक्कुं स्फुटमागि सर्व्वस्थितिरचनेयुमक्कुमा कालदोळे बंधमाद समयदोळे उत्कृष्टस्थित्युत्कृष्ट चरमनिषेकस्थिति-यत्तणिदं केळगे केळगे समयोत्तरहीनतेयुं काणल्पडुगुं :—

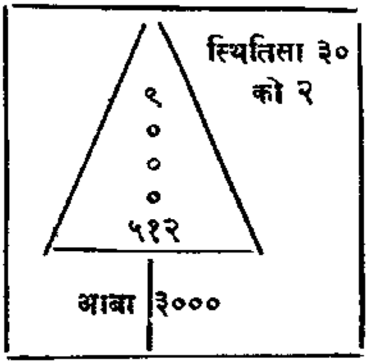

संख्यातैकभागः छे-व-छे ३३ इत्थमेवेष्टस्थानं ज्ञात्वा मतिमान् स्वेष्टस्थितेर्नानागुणहानिशलाका आनयेत् । एवं
७० को २

गुणहान्यध्वाननानागुणहानिशलाकानिषेकभागहारान्योन्याभ्यस्तराशिषु ज्ञातेषु गु ८ । नाना ६ । दोगु १६ । अन्योन्या ६४ ॥९३९॥

विवक्षितप्रकृतेरुत्कृष्टस्थितिबन्धे ज्ञाते तद्बंधसमये एव उत्कृष्टाबाधा सर्वस्थितिरचना च दृश्यते । तत्स्थितिचरमनिषेकादधोऽधः स्थितिबन्धस्थितीनां समयोत्तरहीनता दृष्टव्या

जो लब्धराशि आवे उतनी नाना गुणहानि शलाका जानना । इस प्रकार विवक्षित स्थानको जानकर बुद्धिमान् जीव विवक्षित स्थितिकी नाना गुणहानि शलाकाका प्रमाण लाता है । इस तरह गणहानि आयाम, नाना गुणहानि शलाका, निषेक भागहार और अन्योन्याभ्यस्त राशि जान लेनेपर क्या होता है सो कहते हैं ॥९३९॥

विवक्षित प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होते ही उसके बन्धके समयमें ही उत्कृष्ट आबाधा और सर्वस्थितिकी रचना देखी जाती है । उस स्थितिके अन्तिम निषेकसे नीचे-नीचे प्रथम निषेक पर्यन्त स्थितिबन्धरूप स्थिति एक-एक समय हीन होती है । अर्थात् अन्तिम निषेककी स्थिति तो विवक्षित समयप्रबद्धकी स्थिति प्रमाण ही होती है । उसके नीचे

१. घो धो मु. ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमधिकरूपविदमें तु काणल्पडुगुमें दोडे पेळ्दपरु । :—

आबाधाणं बिदियो तदियो कमसो हि चरिमसमयो दु ।
पढमो बिदियो तदियो कमसो चरिमो णिसेओ दु ॥९४१॥

आबाधानां द्वितीयस्तृतीयः क्रमशो हि चरमसमयस्तु । प्रथमो द्वितीयस्तृतीयः क्रमशश्चरमो निषेकस्तु ॥

सर्व्वप्रकृतिगळ बंधमाद समयदोळे सर्व्वाबाधेयुं सर्व्वस्थितिनिषेकरचनेयुमागिर्द्द स्थितिय अनंतरसमयंगळोळाबाधासमयंगळ द्वितीयसमयमुं तृतीयसमयमुमितु क्रमदिदं चरमसमयमक्कुं । तु मत्तं तदनंतरनिषेकप्रथमसमयमुं द्वितीयनिषेकद्वितीयसमयमुं तृतीयनिषेकस्थितितृतीयसमयमुं क्रमदिदमितु नडदु चरमनिषेकस्थिति चरमनिषेकमक्कु । मिदेनें बुदर्त्थमें दोडे कर्म्मप्रकृतिबंधसमयदोळे आबाधायुतनिषेकस्थितिरचनेयक्कुं । द्वितीयादिसमयं मोदलगों डु आबाधाचरमसमयपर्य्यंतं तत्कालबंधमाद समयप्रबद्धद्रव्यक्के समयाधिकाबाधाकालदिदं हीनस्थितियुतपरमाणुगळु कर्म्मप्रकृतिगळागल्लें बुदर्त्थमाबाधाकालं पोगुत्तिरलु अनंतरसमयदोळुदयप्रकृतिगळ प्रथमनिषेकमुदयिसि

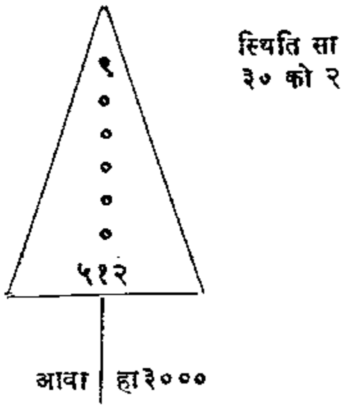

॥९४०॥ आधिक्यं च कथं दृश्यते इत आह—

सर्वप्रकृतीनां बन्धसमये सर्वाबाधासर्वस्थितिनिषेकरचनारूपस्थितायाः स्थितेरनंतरसमयेषु आबाधासमयानां द्वितीयः तृतीयः एवं गत्वा चरमः समयः स्यात् । तु-पुनः तदग्रे प्रथमः द्वितीयः तृतीयः एवं गत्वा

द्विचरम निषेककी उससे एक समय हीन स्थिति है। इसी प्रकार प्रथम निषेक पर्यन्त एक-एक समय हीन स्थिति जानना ॥९४०॥

इस प्रकार स्थितिकी अधिकता कैसे है ? यह कहते हैं—

सब प्रकृतियोंके बन्धसमयमें सर्व आबाधा और सब स्थितिकी निषेकरूप रचना होनेके अनन्तर समयोंमें आबाधा कालका दूसरा समय, तीसरा समय इस प्रकार एक-एक समय बढ़ते-बढ़ते आबाधा कालके अन्तमें अन्तिम समय होता है। उसके आगे प्रथम निषेक, दूसरा निषेक, तीसरा निषेक इस प्रकार जाकर स्थितिके अन्तिम समयमें अन्तिम निषेक होता है। सो आबाधाकाल बीतनेपर जिस-जिस समयमें जितने परमाणुओंका समूहरूप निषेक होता है उस-उस समयमें उतने परमाणु उदयरूप होते हैं। उस उदयरूप समयके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरसमय दोळु कर्म्मप्रकृतिस्वरूपमं पत्तुविडुगुमितु द्वितीयादिसमयंगळोळु द्वितीयादिनिषेकंगळु कर्मादिवं प्रकृतिस्वरूपमं पत्तुविडुत्तं पोगि चरमनिषेकमुत्कृष्टस्थितिचरमसमयदोळु कर्म्मप्रकृति-स्वरूपमं पत्तुविट्टु पोकुदें बुदर्त्थं ॥ अनन्तरसमयप्रबद्धप्रमाणमुमं वर्त्तमानसमयदोळु ओंदु समयप्रबद्धं बंधमक्कु । मोंदु समयप्रबद्धमुदयमक्कुमें बुदुमं पेळ्दपरु । :—

समयपबद्धपमाणं होदि तिरिच्छेण वट्टमाणम्मि ।
पडिसमयं बंधुदओ एक्को समयप्पबद्धो दु ॥९४२॥

समयप्रबद्धप्रमाणं भवेत्तिर्य्यग्रू पेण वर्त्तमाने । प्रतिसमयं बंधोदयमेकसमयप्रबद्धस्तु ॥

प्रागुक्तसमयप्रबद्धप्रमाणं द्रव्यं त्रिकोणरचनेयोळु विवक्षितवर्त्तमानसमयदोळु मोहनीयकर्म्मं प्रकृत्याबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्रगळितावशेषसमयप्रबद्धंगळोळु प्रथमसमयप्रबद्धचरमनिषेकं मोदल्गोंडु चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्य्यंतं तिर्य्यग्रूपदिदमेकैकनिषेकंगळु संपूर्णंकसमय-प्रबद्धद्रव्यप्रमाणमक्कुमितु प्रतिसमयमेकसमयप्रबद्धमुदयमुं बंधमुमक्कु । संदृष्टि :—

४१६।४४८।४८०		९
४४८।४८०।५१२		१०
४८०।५१२। ०	९।०।०।०।०।०।	०
५१२। ० ०	९।१०।०।०।०।०।०।	०
० ० ०	९।१०।११।०।०।०।०।०।	०
	९।१०।११।१२।०।०।०।०।०।	३५२।३८४
	९।१०।११।१२।१३।०।०।०।०।०।	३८४।४१६
	९।१०।११।१२।१३।१४।०।०।०।०।०।२४०।२५६।२८८।३२०।३५२।३८४।४१६।४४८	
	९।१०।११।१२।१३।१४।१५।०।०।०।०।०।२५६।२८८।३२०।३५२।३८४।४१६।४४८।४८०	
	९।१०।११।१२।१३।१४।१५।१६।०।०।०।०।०।२८८।३२०।३५२।३८४।४१६।४४८।४८०।५१२	

चरमो निषेकः स्यात् । तत्समये उदेत्यनन्तरसमये कर्मस्वभावं त्यजेदित्यर्थः ॥९४१॥ अथ समयप्रबद्धप्रमाण-द्रव्यं वर्तमानसमये बध्नात्युदेति चेत्याह—

त्रिकोणरचनायां विवक्षितवर्तमानसमये विवक्षितमोहनीयकर्मणः आबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्रगलिता-वशेषसमयप्रबद्धेषु प्रथमसमयप्रबद्धचरमनिषेकमादिं कृत्वा चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्यंतं तिर्यगेकैकनिषेको

अनन्तर वे परमाणु कर्म स्वभावको छोड़ देते हैं। इस प्रकार प्रथम निषेकसे दूसरे निषेककी और दूसरेसे तीसरे निषेककी स्थिति एक-एक समय अधिक होते-होते अन्तिम निषेककी पूरी स्थिति होती है ॥९४१॥

आगे कहते हैं कि समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य वर्तमान एक समयमें बँधता है और उदय-रूप होता है—

त्रिकोण रचनामें विवक्षित किसी एक वर्तमान समयमें विवक्षित मोहनीय कर्मकी आबाधा रहित उत्कृष्ट स्थिति मात्र कालमें समय-समयमें बँधनेवाले समयप्रबद्धोंमें-से जिन निषेकोंकी निर्जरा हो गयी उनकी तो निर्जरा हो गयी, शेष रहे निषेकोंमें-से प्रथम समय प्रबद्धका अन्तिम निषेकसे लगाकर अन्तिम समयप्रबद्धके प्रथम निषेक पर्यन्त तिर्यग् रचना-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं प्रतिसमयमुदयमुं बंधमुमेकसमयप्रबद्धमप्पुदरिं वर्त्तमानसमयदोळु बंधोदयात्मक-मेकसमयप्रबद्धमे सत्वमक्कुमें ब शंकेयं परिहरिसि सत्वं प्रतिसमयं किंचिदूनद्व्यर्द्धगुणहानिमात्र-समयप्रबद्धमें दु तत्प्रमाणक्कुपपत्तियं तोरिदपरु । :—

सत्तं समयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणि ताडियं ऊणं ।
तियकोणसरूवट्ठिददव्वे मिलिदे हवे णियमा ॥९४३॥

सत्वं समयप्रबद्धो द्व्यर्द्धगुणहानिताडित ऊनः। त्रिकोणस्वरूपस्थितद्रव्ये मिलिते भवेन्नियमात् ॥

भूत्वा सम्पूर्णैकसमयप्रबद्धद्रव्यं स्यात् इति प्रतिसमयमेकैकसमयप्रबद्ध उदेति । एकैकश्च बध्नाति । संदृष्टिः—

९
१०
०
०
०
३५२ । ३८४
३८४ । ४१६ ।

९ ।०।०।०।
९ ।१०।०।०।०।
९ ।१०।११।०।०।०।
९ ।१०।११।१२।०।०।०।
९ ।१०।११।१२।१३।०।०।०।
९ ।१०।११।१२।१३।१४।०।०।०।०।०।२४०।२५६।२८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ ।
९ ।१० ११।१२।१३।१४।१५।०।०।०।०।०।२५६।२८८।३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० ।
९।१०।११।१२।१३।१४।१५।१६।०।० ०।०।०।२८८।३२०।३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ ।

३८४	४१६	४४८
४१६	४४८	४८०
४४८	४८०	५१२
४८०	५१२	०
५१२	०	०
०	०	०

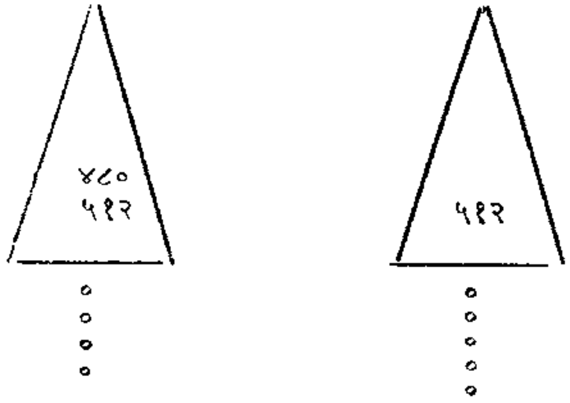

॥९४२॥ अथ बन्धोदययोः प्रतिसमयमेकैकः समयप्रबद्धोऽस्तीति तदुभयात्मकं सत्त्वमपि च वर्तमानसमये तावदेव भविष्यतीति शंकां परिहर्तुं सोपपत्ति तत्प्रमाणमाह—

रूप एक-एक निषेक मिलकर सम्पूर्ण एक समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य होता है। उसका वर्तमान समयमें उदय होता है। इस प्रकार प्रति समय एक-एक समयप्रबद्धका उदय होता है और प्रति समय एक-एक समयप्रबद्धका ही बन्ध होता है ॥९४२॥

यतः प्रतिसमय एक-एक समयप्रबद्धका बन्ध और उदय होता है इससे उन दोनोंका समुदायरूप सत्त्व भी उतना ही होगा, ऐसा सन्देह दूर करनेके लिए कहते हैं—

प्रतिसमयकिंचिदूनद्व्यर्द्धगुणहानिगुणितसमयप्रबद्धं नियमदिवं सत्वमक्कु-। मदुवुं त्रिकोण-स्वरूपदिनिर्द्द द्रव्यमं कूडुत्तं विरलु तावन्मात्रसमयप्रबद्धमप्पुवप्पुदरिदं । स ० १२ ॥

सत्त्वद्रव्यं तु प्रतिसमयं त्रिकोणस्वरूपस्थितद्रव्ये मिलिते किंचिदूनद्व्यर्धगुणहानिगुणितसमयप्रबद्धमात्रं नियमात् स्यात् स ० १२– ॥९४३॥ तद्यथा—

सत्तारूप परमाणुओंका समूहरूप सत्त्व द्रव्य कुछ कम डेढ़ गुणहानि गुणित समय-प्रबद्ध प्रमाण होता है। यह नियम है ॥९४३॥

विशेषार्थ—त्रिकोण रचनाके सर्व द्रव्यका जोड़ इतना ही होता है। पहले जीवकाण्ड-के योगाधिकारमें और कर्मकाण्डके बन्ध-उदय-सत्त्वाधिकारमें त्रिकोण यन्त्र लिखा है। वहाँ कैसे प्रतिसमय समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्यका उदय होता है और कैसे किंचित् न्यून डेढ़ गुण-हानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व रहता है यह कहा है। यहाँ अंकसंदृष्टिको स्पष्ट करते हैं—

जिस समयप्रबद्धके सर्वनिषेक सत्तामें हैं उसके अड़तालीस निषेक नीचे-नीचे लिखे। उसके ऊपर जिस समयप्रबद्धका प्रथम निषेक गल गया उसके सैंतालीस निषेक लिखे। उसके ऊपर जिसका पहला और दूसरा निषेक गल गया उसके छियालीस निषेक लिखे। इस प्रकार एक-एक निषेक हीन लिखते-लिखते अन्तमें जिस समयप्रबद्धके सैंतालीस निषेक गल गये उसका एक अन्तिम निषेक लिखा। यह सत्ताकी अपेक्षा रचना जाननी। तथा वर्तमान विवक्षित समयसे आगे जैसे एक समयप्रबद्धका बन्ध होता है वैसे ही एक समय प्रबद्धकी निर्जरा होती है। अतः जैसे सत्ताकी रचना कही वैसे ही जानना। इस त्रिकोण-यन्त्रकी रचनाका जोड़ किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। यही सत्त्व द्रव्यका प्रमाण है। विवक्षित वर्तमान समयमें जिस समयप्रबद्धके सैंतालीस निषेक पहले गल गये उसका एक अन्तिम निषेक उदयरूप होता है। जिसके छियालीस निषेक गल गये उसका द्विचरम निषेक उदयरूप है। अन्तका निषेक आगामी समयमें उदयमें आयेगा। इसी क्रमसे जिसका एक भी निषेक नहीं गला उसका प्रथम निषेक उदयरूप है, अन्य निषेक आगामी समयोंमें क्रमसे उदयमें आवेंगे। इस प्रकार अन्तके निषेकसे लगाकर प्रथम निषेक पर्यन्त सब निषेकोंको जोड़ देनेपर एक समय प्रबद्धका उदय होता है। उसके ऊपर उस विवक्षित समयके अनन्तर जो वर्तमान समय होता है उसमें जिस समयप्रबद्धका पहले अन्त निषेक उदयमें आया था उसके तो सर्व निषेक गल चुके। किन्तु जिसका द्विचरम निषेक उदयमें आया था उसका यहाँ अन्तका निषेक उदयरूप होता है। इस तरह पूर्वोक्त प्रकारसे एक-एक निषेकका उदय होते जिसके प्रथम निषेकका उदय पहले हुआ था उसका यहाँ दूसरे निषेकका उदय होता है और उस समयप्रबद्धके पीछे जो समयप्रबद्ध बँधा था उसका प्रथम निषेक उदयरूप होता है। इस प्रकार से इस दूसरे विवक्षित समयमें भी समयप्रबद्धका ही उदय होता है। इस प्रकार प्रतिसमय एक समयप्रबद्धका उदय होता है। इसीसे त्रिकोणरचना दो रूपमें की हैं। उनमें कुछ आदि निषेक और कुछ अन्त निषेक लिखे हैं और बीचमें बिन्दी लिखी हैं। सो उसका अभिप्राय है कि उनके स्थानमें मध्यके निषेक जान लेना ॥९४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं त्रिकोणरचनेयोळिद्दं नानागुणहानिगतद्रव्यंगळिनितप्पुववं कूडिदोडे किंचिन्यूनद्वयर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धंगळप्पुवें दु पेळ्वपरु :—

उवरिमगुणहाणीणं धणमंतिमहीणपढमदलमेत्तं ।
पढमे समयपबद्धं ऊणकमेण ट्ठिया [1]तिरिये ॥९४४॥

उपरितनगुणहानीनां धनमंत्यहीनप्रथमदलमात्रं । प्रथमसमयप्रबद्धः ऊनक्रमेण स्थितास्तिर्य्यग्रूपेण ॥

त्रिकोणरचनेयोळु विवक्षितवर्त्तमानसमयदोळु प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेकदोळु तिर्य्यग्रूपदिदं संपूर्णसमयप्रबद्धद्रव्यमक्कुं । शेषद्वितीयनिषेकं मोदल्गोंडूर्ध्वरूपदिं चरमगुणहानि चरमनिषेकपर्य्यंतं विशेषहीनक्रमदिदं पोगि मत्तमंते तिर्य्यग्रूपदिनिर्द्द द्वितीयादिगुणहानिगळ धनं अंत्यगुणहानिद्रव्यहीन स्वकीय स्वकीय प्रथमगुणहानिद्रव्यार्द्धमात्रमक्कुं । प्रथमगुणहानिधनमुं गुणहानिमात्रसमयप्रबद्धमक्कुमदें तेंदोडे त्रिकोणरचनेयोळनादिबंधनबद्धगळितावशेषसमयप्रबद्धंगळु विवक्षितमोहनीयमूलप्रकृतिगाबाधारहितोत्कृष्टस्थितिसमयमात्रंगळु तत्प्रथमसमयप्रबद्धचरमनिषेकं मोदल्गोंडु चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्य्यंतं तिर्य्यग्रूपदिं विशेषाधिकक्रमदिनिर्द्दुवनेकैकनिषेकंगळं कूडिदोडे विवक्षितवर्त्तमानसमयदोळोंदु समयप्रबद्धमुदयमक्कुमा समयदोळोंदु

त्रिकोणरचनायां विवक्षितवर्तमानसमये प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके तिर्यक्सम्पूर्णं समयप्रबद्धद्रव्यं स्यात् । द्वितीयनिषेकमादिं कृत्वा चरमगुणहानिचरमनिषेकपर्यंतं चयहीनक्रमेण गत्वा तिर्यक्स्थितद्वितीयादिगुणहानिधनं अन्त्यगुणहानिद्रव्यहीनस्वस्वप्रथमगुणहानिद्रव्यार्धमात्रं स्यात् प्रथमगुणहानिधनं तु गुणहानिमात्रसमयप्रबद्धप्रमितं । तद्यथा—

त्रिकोणरचनायामनादिबन्धनबद्धगलितावशेषसमयप्रबद्धाः विवक्षितमोहनीयमूलप्रकृतेराबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्राः स्युः । तत्प्रथमसमयप्रबद्धचरमनिषेकमादिं कृत्वा चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्यन्तं तिर्यग्विशेषा-

आगे इस सत्तारूप त्रिकोण यन्त्रके जोड़ देनेका विधान कहते हैं—

त्रिकोण रचनामें विवक्षित वर्तमान समयमें प्रथम गुणहानिके प्रथम निषेकमें तो तिर्यक्‌रूपसे लिखे निषेकोंका समुदायरूप सम्पूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। उसके ऊपर दूसरे निषेकसे लगाकर अन्तकी गुणहानिके अन्तिम निषेक पर्यन्त एक-एक चयहीनके क्रमसे जाकर तिर्यक्‌रूपसे स्थित द्वितीय आदि गुणहानिका धन अन्तकी गुणहानिके जोड़को अपनी-अपनी पहली गुणहानिके जोड़में-से घटानेपर जो-जो प्रमाण हो उसका आधा-आधा होता है। किन्तु प्रथम गुणहानिका धन (जोड़) तो गुणहानिके प्रमाणसे समयप्रबद्धको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना है।

विशेषार्थ—उक्त कथनका भाव यह है कि त्रिकोण रचनामें जो नीचे-नीचे प्रथम पंक्तिमें तिर्यक्‌रूपसे लिखा उसको प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक कहते हैं। उसके ऊपरकी पंक्तिमें जो लिखे उनको प्रथम गुणहानिका द्वितीयादि निषेक कहते हैं। गुणहानि आयाम प्रमाण पंक्ति पूर्ण होनेपर उसके ऊपर जो पंक्ति है उसको द्वितीय गुणहानिका प्रथम निषेक

१. तिरिया मु.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समयप्रबद्धं बंधमक्कु । मा समयदोळु सत्वद्रव्यमुं किंचिन्न्यूनद्व्यर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धमक्कु- । मल्लि प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेकदोळु नानासमयप्रबद्धसंबध्येकैकनिषेकंगळं कूडिदोडे संपूर्ण्ण-समयप्रबद्धमक्कुं । आ प्रथमगुणहानि द्वितीयादितिर्य्यग्निषेकंगळु समयप्रबद्धप्रथमनिषेकाद्येकैक-

धिकक्रमेण स्थितेरेकैकनिषेका मिलित्वा विवक्षितवर्तमानसमये एकः समयप्रबद्ध उदेति । तस्मिन्नेव समये एकः समयप्रबद्धो बध्नाति । सत्वद्रव्यं किंचदूनद्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं तिष्ठति । तत्र प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके

कहते हैं। उसके ऊपरकी पंक्तिको दूसरा निषेक कहते हैं। इस तरहसे गुणहानि प्रमाण पंक्ति पूर्ण होनेपर उसके ऊपरकी पंक्तिको तीसरी गुणहानिका प्रथम निषेक कहते हैं। इसी प्रकार अन्तकी गुणहानि पर्यन्त जानना। इसे अंकसंदृष्टिरूप त्रिकोणयन्त्रमें दिखाते हैं—नीचे ही नीचे बराबर पंक्ति रूपमें नौका निषेकसे लेकर पाँच सौ बारह पर्यन्त सब निषेक लिखे हैं। उनको प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक कहते हैं। इसका जोड़ सम्पूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण तिरसठ सौ होता है। उससे ऊपर दूसरी पंक्तिमें नौके निषेकसे लगाकर चार सौ अस्सीके निषेक पर्यन्त निषेक लिखे हैं। उसको प्रथम गुणहानिका दूसरा निषेक कहते हैं। इसका जोड़ पाँच सौ बारह चय हीन समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। उससे ऊपर तीसरी पंक्तिमें नौके निषेकसे लगाकर चार सौ अड़तालीसके निषेक पर्यन्त लिखे हैं। उसको प्रथम गुणहानिका तीसरा निषेक कहते हैं। इसका जोड़ इससे पूर्वकी पंक्तिके जोड़में-से चार सौ अस्सी घटाने-पर जो शेष रहे उतना है। इस प्रकार अन्तकी गुणहानिके अन्तिम निषेक पर्यन्त जोड़ एक-एक निषेकरूप चय हीन होता जाता है। इस प्रकार अड़तालीस पंक्तियाँ होती हैं। उनमें नीचे से लगाकर आठ पंक्ति पर्यन्त प्रथम गुणहानिका प्रथमादि निषेक कहते हैं। उसके ऊपर नौवीं पंक्तिसे लगाकर सोलहवीं पंक्ति पर्यन्त द्वितीय गुणहानिका प्रथमादि निषेक कहते हैं। इस प्रकार आठ-आठ पंक्तियोंकी एक गुणहानि जानना। उनमें जो चय घटाये थे उनको मिलानेपर प्रथम गुणहानिके तिरसठ सौको आठ गुणहानिसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना है। उसमें-से अन्तकी गुणहानिके जोड़ आठ गुणा सौ है, उसे घटानेपर आठ गुणा बासठ सौ होता है। उसका आधा आठ गुणा इकतीस सौ होता है। यही दूसरी गुणहानिका जोड़ है। उसमें अन्तकी गुणहानिका जोड़ आठ गुणा सौ घटानेपर आठ गुणा तीस सौ होता है। उसका आधा आठ गुणा पन्द्रह सौ होता है। यही तीसरी गुणहानिका जोड़ है। इसी प्रकार अन्तकी गुणहानि पर्यन्त जानना। इन सबको जोड़नेकी विधि—प्रथम गुणहानिमें जो चय घटे थे उनको जोड़नेपर प्रथम गुणहानिमें ऋण होता है। उसका आधा दूसरी गुणहानि-में ऋण होता है। इसी प्रकार अन्तकी गुणहानि पर्यन्त आधा-आधा होता है। इन सबको जोड़कर पूर्व प्रमाणमें-से घटानेपर जो शेष रहे वही त्रिकोणयन्त्रका जोड़ होता है। वही दिखाते हैं—

त्रिकोणरचनामें अनादि कालसे बँधे और उनमें-से निर्जरारूप होकर गल जानेसे शेष रहे, विवक्षित मोहनीय मूलप्रकृतिके समयप्रबद्ध आबाधा रहित उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण होते हैं। उनमें-से प्रथम समयप्रबद्धके अन्तिम निषेकसे लगाकर अन्तिम समयप्रबद्धके प्रथम निषेक पर्यन्त तिर्यक् रूपसे स्थित तथा एक-एक चय अधिक एक-एक निषेक मिलकर एक समयप्रबद्ध विवक्षित वर्तमान समयमें उदयमें आता है। उसी समयमें एक समयप्रबद्ध बँधता भी है। तथा सत्तारूप द्रव्य किंचित न्यून डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निषेकाधिकक्रमदिदं होनंगळप्पुवंतागुत्तं

५१२	७
५१२	६
५१२	५
५१२	४
५१२	३
५१२	२
५१२	१
	०

विरला होननिषेकंगळं ऋणमनिक्किदोडे

प्रथमगुणहानिधनं ऋणसहितमा ५१२ गि गुणहानिमात्रसमयप्रबद्धंगळप्पुवु । ६३०० । ८ । इल्लि
३२।१६
प्रथमनिषेकदोळु ऋणमिल्लप्पुदरिदं द्वितीयादिनिषेकंगळोळेकाद्येकोत्तरमागि समयप्रबद्धप्रथम-निषेकंगळिक्कल्पट्टुविवं संकलिसिदोडे रूपोनगच्छेय एकवारसंकलनमात्रंगळप्पु ५१२ $\frac{\overset{\circ}{८}}{२}$ $\frac{८}{१}$ विल्लि प्रथमनिषेकमुं वोगुणहानिमात्रचयंगळप्पुदरिदं भेदिसि स्थापिसिदोडे ऋणमिनितक्कुं । ३२ । ८ । २ । $\frac{\overset{\circ}{८}}{२}$ । ८ अदे तेदोडिल्लियुं तृतीयादिनिषेकंगळोळु संकलनार्थं द्विकवारसंकलनक्रम-

---

नानासमयप्रबद्धसम्बन्ध्येकैको निषेको मिलित्वा सम्पूर्णसमयप्रबद्धः स्यात् । द्वितीयादिनिषेकेषु प्रथमादिनिषेकैः क्रमेणैकैकाधिकैरूनोऽस्तीति तावति ऋणे निक्षिप्ते प्रथमगुणहानिधनं ऋणसहितगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं भवति । ६३०० । ८ तदृणं त्वेकोत्तररूपोनगुणहानिगच्छक्रमेण प्रथमनिषेकान् —

५१२ । ७
५१२ । ६
५१२ । ५
५१२ । ४
५१२ । ३
५१२ । २
५१२ । १

संकलय्य ५१२ $\frac{\overset{\circ}{८}}{२}$ । $\frac{८}{१}$ अत्रस्थप्रथमनिषेकं दोगुणहान्या संभेद्य ३२ । ८ । २ । $\frac{\overset{\circ}{८}}{२}$ । $\frac{८}{१}$ । उपर्यधस्त्रिभिः

रहता है। उसमें प्रथम गुणहानिके प्रथम निषेकमें अनेक समयप्रबद्धोंका एक-एक निषेक मिलकर सम्पूर्ण समयप्रबद्धका प्रमाण होता है। तथा द्वितीयादि निषेकोंमें प्रथमादि निषेकोंसे क्रमसे एक-एक अधिक चय घटता होता है। इस घटते हुए प्रमाणको ज्योंका त्यों मिलानेपर प्रथम गुणहानिका जोड़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। यहाँ अंकसंदृष्टिके द्वारा कथन दिखानेपर आठ गुणा तिरसठ सौ होता है। इसमें-से जितना घटाना है उसे ऋण कहते हैं। उसका प्रमाण कहते हैं—

एक हीन गुणहानिके प्रमाणरूप गच्छमें क्रमसे एकको आदि देकर एक-एक अधिकसे गुणित प्रथम निषेकका जोड़ दो। सो पाँच सौ बारहको क्रमसे एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह, सातसे गुणा करके जोड़ दो। तब पाँच सौ बारहको एक हीन आठ और आठसे गुणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवं प्रथमगुणहानिचयंगळिक्कल्पट्टुवप्पुदरिंदमा ऋणव ऋणमुमिनितप्पुवु

३२	२१
३२	१५
३२	१०
३२	६
३२	३
३२	१

इवं संकलिसिदोडे ऋणार्णं द्विरूपोनगच्छेय द्विकवारसंकलनमात्रचयंगळप्पुवु ३२ । ० ८ । ८
२ २ । १
८
३

ई ऋणमना ऋणदोळु शोधिसुवागळु मूररिंदं समच्छेदमं माडिदोडे षड्गुणहानियवकुमल्लि एकरूपं कळेदु ऋणव ऋणं धनमं दु द्विरूपमं पंचगुणहानिगळो धनमागिरिसिदोडे शुद्धऋणमितटक्कुं ३२ । २ । ५ । ८ । ८ । ई प्रथमगुणहानिधनमं नोडलु द्वितीयादिगुणहानिधनंगळु चरमगुणहानि-
८　　६

संगुण्य ३२ । ८ । ६ । ८ । ८ षड्गुणहानितः एकरूपं पृथग्धृत्वा ३२ । ८ । १ । ८ । ८ तत्र तृतीयादिनिषेकेषु
३　२　१　　　　　　　　　　　　　　३　　२　१

द्विकवारसंकलनक्रमेणाधिकपतितप्रथमगुणहानिचयान्

३२	२१
३२	१५
३२	१०
३२	६
३२	३
३२	१

संकलय्य द्विरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलनमात्रान् ३२ । ८ । ८ । ८ ऋणस्य ऋणं राशेर्धनमिति संशोध्य शेषे ३२ । २ । ८ । ८
३　२　१　　　　　　　　　　　　　　　　　　२　१

करो और दोको एकसे गुणा करके उसका भाग दो। तब इतना हुआ—५१२ × ८ । ८ । यहाँ
२ × १

प्रथम निषेकका दो गुणहानिसे भेदन करनेपर पाँच सौ बारहके स्थानमें बत्तीस गुणित आठ, गुणित दो हुए। यथा—३२ । ८ । २ । ८ । ८ । यहाँ गुणकार और भागहारको तीनसे गुणा
२ । १

करनेपर गुणकार और भागहारमें दोके स्थानपर छह हुआ—३२ । ८ । ६ । ८ । ८ । छहमें
६

एकको जुदा रखा। तब उसका जोड़ ३२ । ८ । १ । ८ । ८ तेईस सौ नवासी और दोका छठा
६

पर्य्यंतं "अंतिमहीणपढमवळमेत्तं पढमे समयपबद्धं" एंबितु पेळल्पट्टुदु। तन्निमित्तमा चरमगुणहानि ऋणसहितमप्प धनमिनितक्कु—। १०० । ८ मिदं प्रथमगुणहानि ऋणसहितधनदोळ् कळेवुदनिदं ६२०० । ८ । वळियिसिदोडिदु। ३१०० । ८। द्वितीयगुणहानिधनमक्कुमी क्रमदिदं चरमगुणहानि-धनरहितार्द्धार्द्धक्रमदिदं चरमगुणहानिपर्य्यंतं सर्व्वगुणहानि धनंगळितिप्पुवु

१००	८
२००	८
७००	८
१५००	८
३१००	८
६३००	८

यिल्लि संकलननिमित्तमागि सर्व्वत्र चरमगुणहानिधनमात्र १०० । ८। ऋणमनिक्कि द्विकावदं भेदिसि स्थापिसिदोडितिप्पुवु।

१००	८ । २
२००	८ । २
४००	८ । २
८००	८ । २
१६००	८ । २
३२००	८ । २

यिवं संकलिसिदोडे अंतधनं । ३२०० ।८।२।

रूपद्वये पुनः प्राक्तनपंचगुणहानीनामुपरि दत्ते एतावत् ३२ । ८ । ५ ८ ८ प्रथमगुणहानिऋणसहितधनं च
(२— ऊपर; ६ नीचे)

चरमगुणहानिऋणसहितधनेन १०० । ८ । ऊनयित्वा । ६२०० । ८ अर्धितं ३१०० । ८ द्वितीयगुणहानिधनं स्यात्। एवमुपर्यपि सर्वगुणहानिधनानि साध्यानि। संदृष्टिः १०० । ८ । अत्र सर्वत्र चरमगुणहानिमात्रं १०० ।

१००	८
३००	८
७००	८
१५००	८
३१००	८
६३००	८

भाग हुआ। तथा तीसरे आदि निषेकोंमें पहले कहे संकलन विधानसे दो बार संकलनके क्रमसे प्रथम गुणहानिके चयको जोड़ दीजिए। इस तरह दो हीन गच्छका दो बार संकलनमात्र प्रथम गुणहानिके चयको जोड़िए। तब चय बत्तीसको एक, तीन, छह, दस, पन्द्रह, इक्कीससे क्रमसे गुणा करके जोड़नेपर बत्तीसको दो हीन आठसे और एक हीन आठसे तथा आठसे गुणा करके छहका भाग दीजिए ३२ । $\frac{८-२}{३}$ । $\frac{८-१}{२}$ । ८ । ऐसा करनेपर सत्रह सौ बानबे हुए। एक जुदा रखे गुणकारके प्रमाणमें-से इनको घटानेपर पाँच सौ सत्तानबे और दोका छठा भाग रहा। शेष जो पाँच गुणकार रहे थे उनका प्रमाण ग्यारह हजार नौ सौ छियालीस और चारका छठा भाग हुआ। उनमें मिलानेपर बारह हजार पाँच सौ चौवालीस हुआ। इतना प्रथम गुणहानिमें ऋण जानना। जो राशि घटाने योग्य होती है उसे ऋण कहते हैं। और जो निवक्षितका प्रमाण होता है उसे धन कहते हैं। सो प्रथम गुणहानिके ऋण सहित धनमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणगुणियं । ६४०० । ८ । २ । आदि । १०० । ८ । २ । विहीणं । ६३०० । ८ । २ । रूऊणुत्तर भजियमं वु तावन्मात्रमेयक्कुं । प्रथमगुणहानिनिक्षिप्त शुद्धऋणमं नोडलु द्वितीयादि गुणहानिगळोळु ऋणमर्द्धार्द्धक्रममप्पुवु । संदृष्टि :—

२   १ ८।५ ८।८   ६
२   २ ८।५ ८।८   ६
२   ४ ८।५ ८।८   ६
२   ८ ८।५ ८।८   ६
२   १६ ८।५ ८।८   ६
२   ३२ ८।५ ८।८   ६

८ ऋणं निक्षिप्य द्वाभ्यां भित्वा— १०० । ८ । २
२०० । ८ । २
४०० । ८ । २
८०० । ८ । २
१६०० । ८ । २
३२०० । ८ । २

अन्तधणं ३२०० । ८ । २ । गुणगुणियं ६४०० । ८ । २ । आदि १०० । ८ । २ विहीणं ६३०० ।

अन्तकी गुणहानिके ऋण सहित धनको घटाकर उसका आधा द्वितीय गुणहानिका धन होता है। इसी प्रकार आगे भी सब गुणहानियोंका धन जानना। सो प्रथम आदि गुणहानियोंका धन तिरसठ सौ गुणित आठ, इकतीस सौ गुणित आठ, पन्द्रह सौ गुणित आठ, सात सौ गुणित आठ, तीन सौ गुणित आठ और सौ गुणित आठ हुआ। इन सबमें अन्तकी गुणहानिका प्रमाण मिलानेपर और दोसे भेदन करनेपर क्रमसे प्रथमादि गुणहानियोंमें बत्तीस सौ, सोलह सौ, आठ सौ, चार सौ, दो सौ और सौका आठ गुणा तथा दो गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना प्रमाण हुआ।

३२००×८×२।१६००×८×२।८००×८×२।४००×८×२।२००×८×२।१००×८×२।

इन सबको 'अन्तधणं गुणगुणियं' इत्यादि सूत्रसे जोड़ो। सो अन्तका धन प्रथम गुणहानिका प्रमाण है। उसको गुणकार दोसे गुणा करो। उसमें आदि जो अन्तकी गुणहानिका धन है उसे घटाइए। तब तिरसठ सौको आठ से गुणा करके दोसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु संकलिसिदोडे प्रथमऋणमिनितक्कुं । अंतधणं ३२ । ८ । ५ । ८ । ८ गुणगुणियं । ६४
(२ above and ६ below the second ८; the sign ꣿ above ८ । ८)

८ । ५ । ८ । ८ आदि १ । ८ । ५ । ८ । ८ विहीणं ६३ । ८ । ५ । ८ । ८ रूऊणुत्तरभजियमें वु
(२ above and ६ below each ८ that follows the leading number; the sign ꣿ above each ८ । ८)

८ । २ रूऊणुत्तरभजियमिति तावदेव स्यात् । द्वितीयादिगुणहानिधनादर्थार्थं संदृष्टिः—

१ । ८ । ५ । ८ । ८
२ । ८ । ५ । ८ । ८
४ । ८ । ५ । ८ । ८
८ । ८ । ५ । ८ । ८
१६ । ८ । ५ । ८ । ८
३२ । ८ । ५ । ८ । ८

(in each row: २– above and ६ below the first ८; the sign ꣿ above ८ । ८)

तदप्यंतधणं ३२ । ८ । ५ । ८ । ८ गुणगुणियं ६४ । ८ । ५ । ८ । ८ आदि १ । ८ । ५ । ८ । ८
(२– above and ६ below each first ८; the sign ꣿ above each ८ । ८)

उतना हुआ ६३०० × ८ × २ । यहाँ तिरसठ सौ तो समयप्रबद्धका प्रमाण है । आठ गुणहानिका प्रमाण है । और दोका गुणा दो गुणहानिका प्रमाण है । इस प्रकार दो तथा आठ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण जोड़ हुआ । अब इसमें-से जो ऋण घटाना है उसे लाते हैं—

प्रथम गुणहानिमें ऋण इस प्रकार है—बत्तीसको आठ, पाँच, एक हीन आठ तथा आठसे गुणा करो । उनमें-से एक गुणकार जुदा रखा था तथा उसमें दो बार संकलनमात्र चय घटानेपर जो प्रमाण हुआ था उसको मिलाने और छहका भाग देनेपर बारह हजार पाँच सौ चौवालीस हुआ । क्योंकि पाँच सौ बारहका निषेक सात पंक्तियोंमें घटा । चार सौ अस्सी छह पंक्तियोंमें घटा । चार सौ अड़तालीस पाँचमें घटा । चार सौ सोलह चारमें घटा । तीन सौ चौरासी तीनमें घटा । तीन सौ बावन दोमें घटा । तीन सौ बीस एकमें घटा । दो सौ अट्ठासीका निषेक आठों ही पंक्तियोंमें है अतः घटा नहीं । इन सबोंको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तावन्मात्रमेयक्कुं । सर्व्वत्र गुणहानिधनपंक्तियोळिक्किद द्वितीयऋणंगळुमिनितप्पुवु

१००।८
१००।८
१००।८
१००।८
१००।८
१००।८

इवं संकलिसिदोडे नानागुणहानिगुणितगुणहानिमात्रसमयप्रबद्ध चरमगुणहानिद्रव्यमक्कुं १००।८।६। मी धनराशियुमं प्रथमऋणमुमं द्वितीयऋणमुमं क्रमदिंस्थापिसि। ६३।०।०।८।२। ऋ ६३।८ (२/६)।५।८।८ द्वितीयऋण। १००।८।६ ई मूरुं राशिगळं समयप्रबद्धशलाकेगळं माडिदोडे मूरुं राशिगळितिप्पुवु

६३००।८।२	६३।८।५।८।८ (२)	१००।८।६
६३००	६३।०० ६	६३००

ई मूरुं राशिगळनपवर्त्तिसि स्थापिसिदोडितिप्पुं–। स।a।८।२। ऋ स a।८।५।८ (२)। स a।८।६
१००।६ ६३

विहीणं– ६३।८ (२/६)।५।८।८ रूऊणुत्तरभजियमिति तावदेव स्यात्। द्वितीयऋणानि १००।८ संकलितानि

१००।८
१००।८
१००।८
१००।८
१००।८
१००।८

नानागुणहानिगुणितगुणहानिमात्रचरमगुणहानिधनमात्राणि स्युः १००।८।६। एवमुक्तधनप्रथमर्ण-द्वितीयऋणानि च क्रमेण संस्थाप्य समयप्रबद्धशलाकाः कृत्वा ६३००।८।२ / ६३०० ६३।८ (२–)।५।८।८ / ६३०० ६ १००।८।६ / ६३०० अपवर्त्यैवं स्युः स।a।८।२ ऋ स a।८ (२–)।५।८।८ / १०० ६ स a।८।६ / ६३। तत्र

३५८४ + २८८० + २२४० + १६६४ + ११५२ + ७०४ + ३२० + २८८ जोड़नेपर बारह हजार पाँच सौ चौवालीस होते हैं। तथा प्रथम गुणहानिके ऋणसे द्वितीय आदि गुणहानियोंमें आधा-आधा ऋण होता है। सब गुणहानियोंका जोड़ 'अन्तधणं' के अनुसार अन्तधन प्रथम गुणहानिका ऋण। उसे दोसे गुणा करो। तथा उसमें आदि जो अन्तिम गुणहानिका ऋण घटाओ। सो अन्तधन बारह हजार पाँच सौ चौवालीसको दोसे गुणा करनेपर पचीस हजार अट्ठासी हुए। उसमें आदि तीन सौ बानबे घटानेपर चौबीस हजार छह सौ छियानबे हुए। यही सब गुणहानियोंका ऋण है। तथा अन्तकी गुणहानिके धन प्रमाण सब गुणहानियोंमें ऋण मिलाया था। उसको जोड़ देनेपर नानागुणहानिसे गुणित अन्तकी गुणहानिके धन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वी मूरुं राशिगळोळु मध्यमप्रथमऋणराशियं शतषट्कहारंगळं रूपाधिकत्रिगुणहानियं माडि चतुष्कमं द्विकदिदं गुणिसिगुणहानियनुत्पादिसियपवर्त्तिसिदोडितिक्कु स a ८ । ५ । ८ ८ । ३ । ३ मी राशियोळिद्दं ऋणरूपधनमं बु तेगेदु पार्श्वदोळु स्थापिसिदोडिदु स a । ८ । ५ । ८ । स a । ८ । ५ । १ ८ । ३ । ३ ८ । ३ । ३

ई एरडुं राशिगळ मेलिद्दं द्विरूपं तंतम्म केळगे स्थापिसि :—

स a । ८ । ५ । ८ । स a । ८ । ५ । १	
८ । ३ । ३ । ८ । ३ । ३	
स a । २ । ८ । स a । २ । १	
८ । ३ । ३ । ८ । ३ । ३	

प्रथमद्विकमं केळगेयुं मेगेयुं त्रिगुणिसि स a । ६ । ८ ८ । ३ । ३ । ३ अल्लि पंचरूपुगळं तेगेदु मेलण ऋणदोळिकि ५
स a । ८ । ३ । ५ । ८ ८ । ३ । ३ । ३ अपवर्त्तिसिदोडिनितक्कुं स a । ८ । ५ ९ शेषैकऋणरूपं स a । ८ । १ ८ । ३ । ३ । ३ उपरि-

प्रथमर्णस्य हारं शतषट्करूपाधिकत्रिगुणगुणहानिं कृत्वा चतुष्कं द्वाभ्यां संगुण्य गुणहानिमुत्पाद्यापवर्त्य—
स । a । ८ । ५ । ८ । ८ । ३ । ३ अत्रस्थमृणरूपं धनमित्यपनीय पार्श्वे संस्थाप्य स a । ८ । ५ । ८ स । a । ८ । ५ ८ । ३ । ३ ८ । ३ । ३
उभयत्र स्थितरूपद्वयं स्वस्वाधः संस्थाप्य स a । ८ । ५ । ८ ८ । ३ । ३ स a । २ ८ । ३ । ३ स a । ८ । ५ ८ । ३ । ३ स । a । २ ८ । ३ । ३ प्रथमद्विकमुपर्यधस्त्रिभिः
संगुण्य स । a । ६ । ८ ८ । ३ । ३ । ३ पंचरूपाण्यपनीयउपरितनर्णमध्ये निक्षिप्य स । a । ८ । ३ । ५ । ८ ८ । ३ । ३ । ३ १०

प्रमाण दूसरा ऋण हुआ। सो अन्तका धन आठ गुणा सौ है उसे नानागुणहानि छहसे गुणा करनेपर अड़तालीस सौ हुए। इन दोनों ऋणोंको जोड़नेपर कुछ अधिक आधी गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हुआ। सो उनतीस हजार चार सौ छियानबे हुआ। क्योंकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनपाइर्द्धधनदोळ् समच्छेदमं माडि कळेदोडिदु स ə । ८ । १५–१ / ८ । ३ । ३ । ३ द्वितीयधनद्विकमं कळगेयुं

मेगेयुमों भत्तरिं गुणिसि स ə १८ / ८ । ३ । ३ । ९ यिल्लिपदिनाल्कु रूपुगळं तेगेदुकोंडु पूर्व्वधनदोळ् मूररिदं

समच्छेदमं माडि कूडिदोडुभयधनमिदु स । ə । ८ । ३ । १४ / ८ । ३ । ३ । ३ । ३ । इवर भागहारदोळेकरूपहीनत्व-

मनवगणिसि अपवर्त्तिसिदोडे समयप्रबद्धार्द्धमक्कु स ə । १/२ मिल्लि शेषधनरूपचतुष्कम ।

स । ə । ४ / ८ । ३ । ३ । ९ निदं समयप्रबद्धासंख्यातैकभागमं स ə । १/ə साधिकं माडिदु स ə । १/२ ईधनमं

द्वितीयऋणदोळ् कळेदु अपवर्त्तिसिदोडे किंचिदून संख्यातवर्गशलाका मात्रमक्कुं । स ə । व १ ।

अपवर्तितमेतावत्स्यात् स । ə । ८ । ५/९ शेषकर्णरूपं स । ə । ८ । १ / ८ । ३ । ३ । ३ उपरितनपाइर्द्धधने समच्छेदेनापनीय

स । ə । ८ । १५–१ / ८ । ३ । ३ । ३ अस्मिन्नुपर्यधस्त्रिभिर्गुणिते स । ə । ८ । ३ । १४ / ८ । ३ । ३ । ३ । ३ द्वितीयधनद्विकादुपर्यधो

नवभिर्गुणितात् स । ə । १८ / ८ । ३ । ३ । ९ चतुर्दशरूपाणि गृहीत्वा प्रक्षिप्तेष्वेवं स । ə । ८ । ३ । १४ / ८ । ३ । ३ । ३ । ३ अस्य भागहारे

एकरूपहीनत्वमवगणय्यावर्तने समयप्रबद्धार्धं स्यात् स । ə १/२ अत्र तच्छेषधनरूपचतुष्कं स । ə । ४ / ८ । ३ । ३ । ९

गुणहानि आठके आधे चारसे समयप्रबद्धको गुणा करनेपर पचीस हजार दो सौ हुए। शेष चार हजार दो सौ छियानबे अधिकका प्रमाण जानना। इस प्रकार इन दोनों ऋणोंको जोड़नेपर जो प्रमाण हुआ उसको पूर्वोक्त दो गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्धमें-से घटानेपर किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हुआ। सो दो गुणहानि गुणित

---

१. स ə । ८ । ६/६३ यी द्वितीयऋणमर्थसंदृष्टियोलितिवकुं स ə प १ / प / व यिदं तक्कुमें —दोडे नानागुण-

हानियिं गुणहानियं गुणिसि विवक्षितस्थितियप्पुदरिंनिल्लि विवक्षित सा ७० को २ । स्थितिगे संख्यातपल्य-मक्कुं । रूपहीनत्वमनवगणिसियन्योन्याभ्यस्तराशिहारमागि यिंतिवकुं प/व ॥

मत्तमा प्रथमऋणमं स a । ८ । ५/९ । यिदं संदृष्टिनिमित्तं कॆळगॆयुं मेगॆयुं द्विगुणिसि स a ८ । १०/९ । २ अल्लि एकरूपं तॆगॆदु बेरिरिसि स a । ८ । १/१८ शेषमनिद स a । ८ । ९/१८ नपवर्त्तिसिदोडे गुणहान्यर्द्धमात्रसमयप्रबद्धंगळप्पु । स a ८ । १/२ वदं प्रथमधनराशियोळु दोगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धदोळु कळॆदोडे द्व्यर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धंगळप्पु । स a । ८ । ३/२ । वल्लि मुन्नं तॆगॆदु बेरिरिसिद गुणहान्यष्टादशभागऋणदोळु । स a । ८ । १/१८ । द्वितीयऋणमं किंचिदून संख्यातवर्गशलाकामात्रसमयप्रबद्धंगळं साधिकं माडि । स a । ८ । १°/१८ द्व्यर्द्धगुणहानियोळु किंचिदूनं माडिदोडे त्रिकोणरचना संकलितसर्व्वधनं समयं प्रति किंचिदूनद्व्यर्द्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं सत्वमक्कुमॆंदु पेळल्पट्टागमार्त्थं सुघटितमाद्दु ॥

समयप्रबद्धासंख्यातैकभागमात्रं स a । १/a साधिकं कृत्वा स । a । १'/a इदं धनं द्वितीयर्णमध्येऽपनीयापवर्त्य किंचिदूनसंख्यातवर्गशलाकामात्रं स्यात् । स a । व १–पुनस्तत्प्रथमर्णं स a । ८ । ५/९ संदृष्टिनिमित्तमुपर्यधो द्वाभ्यां संगुण्य– स । a । ८ । १०/९ । २ तत्रैकरूपं पृथग्धृत्वा स । a । ८ । १/१८ शेषं स । a । ८ । ९/१८ अपवर्तितं गुणहान्यर्धमात्रसमयप्रबद्ध भवति स a ८ १/२ तस्मिश्च प्रथमधनराशौ दोगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धेऽपनीते द्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धा भवन्ति स । a । ८ । ३/२ तत्र प्राक्पृथग्धृतगुणहान्यष्टादशभागर्णे स । a । ८ । १/१८ द्वितीयर्णं किंचिदूनसंख्यातवर्गशलाकामात्रसमयप्रबद्धं साधिकं कृत्वा स । a । ८ । १/१८ द्व्यर्धगुणहानौ किंचिदूनितं त्रिकोणरचनासंकलितसर्वधनमुक्तप्रमाणं स्यात् । स । a । १२– ॥ ९४४ ॥

समयप्रबद्धका प्रमाण एक लाख आठ सौ है। उसमें-से दोनों ऋणोंका प्रमाण उनतीस हजार चार सौ छियानवे घटानेपर इकहत्तर हजार तीन सौ चार रहे। इतनी ही त्रिकोणरचनाका जोड़ है। यह तो अंक संदृष्टिसे हुआ।

यथार्थमें तो दो गुणहानिमें-से आधा गुणहानि और एक गुणहानिका अठारहवाँ भाग तथा संख्यात वर्गशलाका घटानेपर जो किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानिमात्र प्रमाण रहा, उससे समयप्रबद्धको गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतना सर्व त्रिकोणरचनाका जोड़ होता है। सो किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व द्रव्य होता है। यहाँ जोड़नेमें गुणकार दो गुणहानिमें-से आधा गुणहानि और एक गुणहानिका अठारहवाँ भाग तथा संख्यात वर्गशलाका कैसे घटे इसका विधान जीवतत्त्वप्रदीपिका टीकासे जानना चाहिए। कठिन होनेसे यहाँ नहीं लिखा है। केवल सारमात्र लिखा है ॥९४४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरं ज्ञानावरणादिकर्म्मप्रकृतिस्थितिविकल्पंगळनुपपत्तिपूर्व्वकं पेळदपरु । :—

अंतो कोडाकोडिट्ठिदित्ति सव्वे णिरंतरट्ठाणा ।
उक्कस्सट्ठाणादो सण्णिस्स य होंति णियमेण ॥९४५॥

अंतः कोटीकोटिस्थितिपर्य्यंतं सर्व्वाणि निरंतरस्थानानि । उत्कृष्टस्थानात्संज्ञिनो भवेयुर्न्नियमेन ॥

ज्ञानावरणादिसप्तप्रकृतिगळ उत्कृष्टस्थितिमोदल्गोंडु अंतःकोटीकोटिस्थितिपर्य्यंतं समयोनक्रमदिनिर्द्द सर्व्वस्थितिविकल्पंगळुमंतरमिल्लदे निरंतरंगळप्पुवु । नियमदिदं संज्ञिजीवंगळप्पुवु । अवुं संख्यातपल्यमात्रंगळप्पुवु । संदृष्टि :—

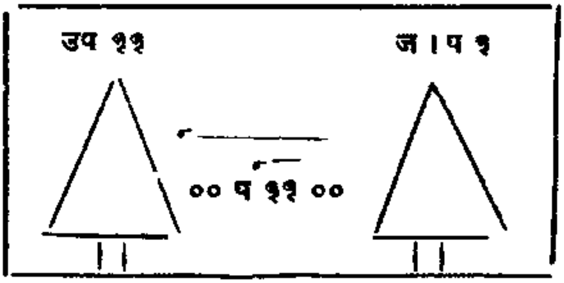

अथ सोपपत्तिस्थितिविकल्पानाह—

सप्तकर्मणामुत्कृष्टस्थितेरा अन्तःकोटाकोटिसमयोनक्रमेण सर्वे निरन्तरस्थितिविकल्पाः संख्यातपल्यमात्रा नियमेन संज्ञिजीवानां भवन्ति । संदृष्टिः—

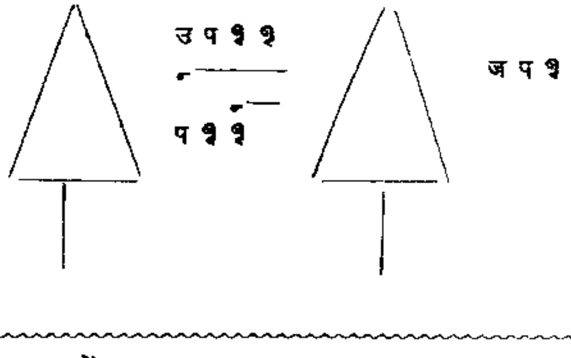

आगे स्थितिके भेद कहते हैं—

आयुके बिना सात कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर अन्तःकोटाकोटी सागर प्रमाण जघन्य स्थिति पर्यन्त क्रमसे एक-एक समय हीन सब निरन्तर स्थितिके भेद संख्यात पल्य मात्र हैं। वे नियमसे संज्ञीपंचेन्द्रिय जीवके होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इल्लि अंतःकोटीकोटिगळु प्रतिभागदिदं ज्ञानावरणादिगळगे साधिसल्पडुवुवल्लि त्रैराशिकमिदु । प्र सा २० । को २ । फ अंतः को २ । सा इ सा ३० । को २ ॥ लब्धज्ञानावरणादिगळंतःकोटीकोटिप्रमाणमिनितक्कुं । सा अंतः को २ । ३ । इंतु प्रतिभागदिदमंतः कोटीकोटिगळु साधिसिकोळल्पडुवुवु ॥

अनंतरं श्रेण्यारूढनोळु सांतरस्थितिविकल्पंगळप्पुवेंदु पेळ्दपरु । :—

संखेज्जसहस्साणिवि सेढीरूढम्हि सांतरा होंति ।
सगसग अवरोत्ति हवे उक्कस्सादो दु सेसाणं ॥९४६॥

संख्यातसहस्राण्यपि श्रेण्यारूढे सांतराणि भवंति । स्वस्वजघन्यपर्यंतं भवेदुत्कृष्टात्तु शेषाणां ॥

सम्यक्त्वाभिमुखनप्प मिथ्यादृष्टियुं संयमासंयम संयमाभिमुखनप्पऽसंयतनुं संयमाभिमुखनप्प देशसंयतनुं श्रेण्याभिमुखनप्प अप्रमत्तनुमपूर्व्वकरणनुमनिवृत्तिकरणनुं सूक्ष्मसांपरायनुमें बिवरगळु श्रेण्यारूढरेंदु पेळल्पट्टवरगंळोळु संभविसुव सांतरस्थितिविकल्पस्थानंगळु संख्यातसहस्रंगळप्पुवु । १००० । येंतेंदोडधः प्रवृत्तकरणपरिणामदोळु तत्प्रथमसमयं मोदल्गोंडु

अत्र प्र-सा २० को २ फ-सा अन्तः को २ । इ-सा ३० को २ लब्धमन्तः को २ । ३ । इति
२

ज्ञानावरणादीनामन्तःकोटीकोटि साधयेत् ॥९४५॥ अथ सान्तरस्थितिविकल्पानाह—

सम्यक्त्वदेशसकलसंयमश्रेण्यभिमुखाः क्रमशो मिथ्यादृष्ट्यसंयतदेशसंयताप्रमत्ताः, अपूर्वकरणादित्रयश्च श्रेण्यारूढाः तेषु सान्तरस्थितिविकल्पस्थानानि संख्यातसहस्राणि स्युः १००० तद्यथा—

जिन कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर है उनकी भी जघन्य स्थिति अन्तःकोटाकोटी सागर है और जिन कर्मोंकी स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर है उनकी भी स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर है । किन्तु दोनोंमें अन्तर है और उसे त्रैराशिक द्वारा जानना चाहिए। यदि बीस कोड़ाकोड़ी सागरकी उत्कृष्ट स्थितिवाले कर्मोंकी जघन्य स्थिति अन्तःकोटाकोटी सागर है तो तीस कोड़ाकोड़ी सागरकी उत्कृष्ट स्थितिवाले कर्मोंकी जघन्य स्थिति कितनी होगी । ऐसा करनेपर डयोढ़ी अन्तःकोटाकोटी सागर स्थिति होती है ॥९४५॥

आगे सान्तर स्थितिके भेद कहते हैं—

सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम, उपशमश्रेणी अथवा क्षपकश्रेणीके अभिमुख हुए क्रमसे मिथ्यादृष्टि, असंयत, देशसंयत, अप्रमत्त, अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानवर्ती जीव तथा उपशम अथवा क्षपकश्रेणीपर चढ़े जीवोंके सान्तर स्थितिके भेद संख्यात हजार हैं ।

वही कहते हैं—

---

१. अधःप्रवृत्तकरणपरिणामे तत्प्रथमसमयाच्चरमसमयपर्यंतं प्रतिसमयमनन्तगुणविशुद्धिवृद्धि सातादिप्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनन्तगुणवृद्धया चतुःस्थानानुभागबन्धं असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनन्तगुणहान्या द्विस्थानानुभागबन्धं बन्धापसरणं च करोति । किंनाम बन्धापसरणं ? ज्ञानावरणादीनां स्वयोग्यान्तःकोटीकोटिस्थितिं तद्योग्यान्तर्मुहूर्तपर्यंतं बध्नन् ततस्तदनन्तरसमये पल्यसंख्यातैकभागोनामन्तर्मुहूर्तपर्यंतं बध्नातीति । अमी स्थितिविकल्पा अधःप्रवृत्तकरणकाले संख्याताः त्रैराशिकेनानेन—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्कालचरमसमयपर्य्यंतं नाल्कावश्यकंगलप्पुववाउवे दोडें प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धि वृद्धि सातादिप्रशस्तप्रकृतिगलगें प्रतिसमयमनंतगुणवृद्धया चतुःस्थानानुभागबंध असाताद्यप्रशस्तप्रकृतिगळगें प्रतिसमयमनंतगुणहान्यादिस्थानानुभागबंध बंधापसरणमुमें ब नाल्कावश्यकंगळोळु बंधापसरणावश्यकदोळु बंधापसरणमें बुदें तें दोडे ज्ञानावरणादिप्रकृतिगळगे स्वयोग्यस्थितियंतः कोटीकोटिप्रमितमक्कुमा स्थितियं प्रथमसमयं मोदलगों डु तद्योग्यांतर्म्मुहूर्त्तकालपर्य्यंतं समस्थितिबंधमं माडि तदनंतरसमयदोळु पल्यसंख्यातैकभागमात्रस्थितियं कुंदिसि कट्टि तावन्मात्रसमस्थितिबंधमनंतर्म्मुहूर्तकालपर्य्यंतं माळ्कु । मितु बंधापसरण कालांतर्म्मुहूर्त्तक्कोंदोदु स्थितिविकल्पमागलधःप्रवृत्तकरणकालमंतर्म्मुहूर्त्तमादोडमदं नोडलु संख्यातगुणमक्कुमदक्कनितु स्थितिबंधविकल्पंगळप्पुवें दु त्रैराशिकमं माडि　प्र । २ । १ ।　　इ । का । २ । १ १ १
　　बंधापसरण　फ । श ला । १　अधः प्र = काल

बंद लब्धं संख्यातस्थितिबंधविकल्पंगळप्पु ।११॥

इंतपूर्व्वकरणनोळमो नाल्कावश्यकंगळुसहितमागि मत्तं स्थितिकांडकघात, मनुभागकांडकघातगुणश्रेणि, गुणसंक्रममें ब नाल्कावश्यकंगळु सहितमागि अष्टावश्यकंगळप्पुववु कारणदिदमनिवृत्तिकरणनोळं सूक्ष्मसांपरायनोळं बंधापसरणंगलिदं संभविसुव सांतरस्थितिविकल्पस्थानंगळु उत्कृष्टदिदमंतःकोटीकोटि ।　अंतःकोटि = २ प । जघन्यदिद "मपरा द्वादशमुहूर्त्ता वेदनीयस्य । नामगोत्रयोरष्टौ । शेषाणामंतर्म्मुहूर्त्तः" येंदितुत्कृष्टं मोदळगों डु स्वस्वजघन्यपर्य्यंतं स्थितिविकल्प-

अधःप्रवृत्तकरणे प्रथमसमयादन्तर्मुहूर्तं ज्ञानावरणादीनां स्वयोग्यांतःकोटाकोटिस्थितिं बध्नाति । तदग्रेऽन्तर्मुहूर्तं पल्यासंख्यातैकभागोनां पुनस्तदग्रेऽन्तर्मुहूर्तं तावतोनामिति संख्यातसहस्रवारं नीत्वा तं करणं समाप्यापूर्वानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसाम्परायेऽप्या स्व-स्वबंधं तदालापवारमपसृत्य वेदनीयस्य द्वादशमुहूर्तांतं नामगोत्रयोरष्टान्तर्मुहूर्तांतं शेषाणामन्तर्मुहूर्तांतं च बध्नातीति तानि तावन्त्युक्तानि । शेषद्वादशजीवसमासानां एवं

अधःप्रवृत्तकरणमें पहले समयसे अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त ज्ञानावरण आदि प्रकृतियोंको अपने योग्य अन्तःकोटी-कोटि सागर प्रमाण स्थिति बाँधता है। उसके पश्चात् अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पल्यके असंख्यातवें भाग हीन स्थितिको बाँधता है। उसके पश्चात् अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त उससे भी उतनी ही हीन स्थितिको बाँधता है। इस प्रकार संख्यात हजार बार करके उस करणको पूरा करता है। उसके पश्चात् अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायमें भी अपने-अपने स्थितिबन्धको उतनी-उतनी ही बार घटाकर वेदनीयकी बारह मुहूर्तपर्यन्त, नाम

प्र २ १　　फ श १　　इ का २ १ १ १
बन्धापसरण　　　अध:प्र = काल

भवन्ति ११ । अपूर्वकरणे तानि आवश्यकानि च स्थितिकाण्डकघातानुभागकाण्डकघातगुणश्रेणिगुणसंक्रमणानि चेत्यष्टौ संतीति कारणात् । अनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसाम्परायेऽप्यन्तःकोटाकोटितः वेदनीयस्य द्वादशमुहूर्तपर्यंतं नामगोत्रयोरष्टान्तर्मुहूर्त्तपर्यंतं शेषाणामन्तर्मुहूर्त्तपर्यंतं च बन्धापसरणानि स्युरिति संख्यातसहस्राणीत्युक्तं । पाठोऽयं श्रीमदभयचन्द्रनामांकितायां टीकायां ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

स्थानंगळु तद्योग्य संख्यातसहस्रंगळप्पुवेंदु पेळल्पट्टुवु । तु मत्ते शेषद्वादशजीवसमासंगळगे "एयप्पणकादि पण्णं = वासूपवासू अवरट्ठिदीओ" यें दोत्यादि स्थितिगळगे निरंतरस्थितिस्थानविकल्पंगळेयप्पुवु ॥ अनंतरमी स्थितिविकल्पबंधकारणंगळु कषायाध्यवसायंगळेंदवं मूलप्रकृतिगळोळु पेळ्दपरु—

आउट्ठिदिबंधज्झवसाणठाणा असंखलोगमिदा ।
णामागोदे सरिसं आवरणदु तदियविग्घे य ॥९४७॥

आयुस्थितिबंधाध्यवसायस्थानान्यसंख्यलोकमितानि । नामगोत्रयोः सदृशमावरणद्वयतृतीयविघ्ने च ॥

आयुस्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळु सर्व्वतस्तोकंगळप्पुवंतप्पुत्तलुं तद्योग्यासंख्यातलोकमात्रंगळप्पुवु । नामगोत्रंगळगे तम्मोळु पल्यासंख्यातैकभागत्वदिदं समानंगळप्पुवु । ज्ञानावरणदर्शनावरणवेदनीयांतरायंगळगेयुं तम्मोळु पल्यासंख्यातैकभागमात्रत्वदिदं समानंगळप्पुवु ॥

सव्वुवरि मोहणीये असंखगुणिदक्कमा हु गुणगारो ।
पल्लासंखेज्जदिमो पयडिसमाहारमासेज्ज ॥९४८॥

सर्व्वोपरि मोहनीये असंख्यातगुणितक्रमाणि खलु गुणकारः । पल्यासंख्यातैकभागः प्रकृतिसमाहारमाश्रित्य ॥

पणकदीत्यादि वासूपेत्यादिसूत्रोक्तानि तु तानि निरन्तराणि ॥९४६॥ अथ स्थितिविकल्पकारणकषायाध्यवसायान्मूलप्रकृतीनाह—

आयुःस्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानि सर्वतः स्तोकान्यपि तद्योग्यासंख्यातलोकमात्राणि । नामगोत्रयोस्ततः पल्यासंख्यातैकभागगुणत्वेन समानानि । ततः ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयान्तरायाणामपि तथा समानानि ॥९४७॥

और गोत्रकर्मकी आठ मुहूर्तपर्यन्त, शेष कर्मोंकी एक मुहूर्तपर्यन्त स्थितिको बाँधता है। इस प्रकार सान्तर स्थितिके भेद संख्यात हजार होते हैं। संज्ञीपर्याप्त और अपर्याप्तके बिना शेष बारह जीव समासोंमें 'एयं पणकदि पण्णं' तथा 'वासूप' आदि गाथाओंके द्वारा पहले स्थितिबन्धके कथनमें जघन्य तथा उत्कृष्ट स्थिति कही है। सो उत्कृष्ट स्थितिसे जघन्य स्थिति पर्यन्त क्रमसे एक-एक समय घाट निरन्तर स्थितिके भेद जानना ॥९४६॥

आगे स्थितिके भेदोंमें कारणभूत कषायाध्यवसायस्थान कहते हैं—उन्हें स्थिति बन्धाध्यवसायस्थान भी कहते हैं—

आयु कर्मके स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान यद्यपि सबसे थोड़े हैं। फिर भी यथायोग्य असंख्यात लोकप्रमाण हैं। उनसे नाम और गोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणे हैं। इस तरह परस्परमें दोनोंके समान हैं। उनसे पल्यके असंख्यातवें भाग गुणे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अन्तरायके स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान हैं। चारोंके परस्परमें समान हैं ॥९४७॥

सबसे ऊपर मोहनीयमें स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान उनसे पल्यके असंख्यातवें भाग गुणे हैं। यहाँ प्रसंगवश सिद्धान्तके वचन कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एल्लवरिदं मोहनीयदोळु प्रकृतिसमाहारमनाश्रयिसि प्रकृतिस्थितीनां विकल्पाः प्रकृतिसमाहारस्तमाश्रित्य प्रकृतिविकल्पंगळनाश्रयिसि कषायाध्यवसायस्थानंगळितु मूरेडेयोळमसंख्यातगुणितकमंगळप्पुवा गुणकारप्रमाणमुं पल्यासंख्यातैकभागमक्कुं । संदृष्टि :—

मोहनीय	≡ə प प प ə ə ə
णा. दं. वे. अं.	≡ə प प ə ə
नाम गोत्र	≡ ə प ə
आयुष्य	≡ । १

इल्लि प्रस्तुतमप्प सिद्धांतवाक्यंगळु :—ण च सव्वमूळपयडीणं समाणाणं कसायोदयट्ठाणाणमेत्थ गहणं । कसायोदयट्ठाणेण विणा मूळपयडिबंधाभावेण सव्वपयडिट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं समाणत्तप्पसंगादो । तम्हा सव्वमूळपयडीणं सगसगसगउदयदो समुप्पण्णप्पपरिणामाणं सगसगट्ठिदिबंधकारणं तेण ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणसण्णिदाणमुत्तरपच्चयाणमेत्थ गहणं । पयडिसमाहारमासेज्ज णाणावरणादीणं पयडीणं सगसगठिदिबंधकारणज्झवसाणट्ठाणाणि सव्वाणि ? एगत्तं काऊण पमाणं परूविदं ण ट्ठिदिं पडि एसा परूवणा होदि । उवरिमसुत्तेहि ठिदिं पडि अज्झवसाणपमाणस्स परूविज्जमाणत्तादो । हेट्ठिमेहिंतो उवरिमाणि किमट्ठमसंखेज्जगुणाणि साहावियादो । मिच्छत्तासंजमकसायपच्चयेहि सव्वाणि कम्माणि सरिसाणि । तेण एदेसिं कम्माणमज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणित्ति ण घडदे । हेट्ठिमाणं ठिदिबंधट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं ठिदिबंधट्ठाणाणि अहियाणित्ति असंखेज्जगुणत्तं ण

सर्वोपरि मोहनीये प्रकृतीनां स्थितिविकल्पसमूहमाश्रित्य कषायाध्यवसायस्थानानि त्रिषु स्थानेष्वसंख्यातगुणितैकभागः अत्र प्रस्तुतसिद्धान्तवाक्यानि—

ण य सव्वमूलपयडीणं समाणाणं कसायोदयट्ठाणाणमेत्थ गहणं । कसायोदयट्ठाणेण विणा मूलपयडिबन्धाभावेण सव्वपयडिट्ठिदिबन्धज्झवसाणट्ठाणाणं समाणप्पसंगदो । तह्मा सव्वमूलपयडीणं सगसगउदयादो समुप्पण्णपरिणामाणं सगसगट्ठिदिबन्धकारणत्तेण ठिदिबन्धज्झवसाणट्ठाणसण्णिदाणमुत्तरपच्चयाणमेत्थ गहणं । पयडिसमाहारमासेज्ज णाणावरणादीणं पयडीणं सगसगठिदिबन्धकारणज्झवसाणट्ठाणाणि सव्वाणि एगत्तकाऊण पमाणं परूविदं । ण ट्ठिदिं पडि एसा परूवणा होदि । उवरिमसुत्तेहि ट्ठिदिं पडि अज्झवसाणपमाणस्स

यहाँ सब मूलप्रकृतियोंके समान कषायोदय स्थानोंका ग्रहण नहीं; क्योंकि कषायके उदयस्थानोंके बिना मूलप्रकृतियोंका बन्ध नहीं होनेसे सब प्रकृतियोंके स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंकी समानताका प्रसंग आता है। अर्थात् यदि सब मूलप्रकृतियोंके कषायोदय स्थान समान होंगे तो सबके स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान भी समान होंगे क्योंकि कषायके उदय स्थानोंके बिना मूलप्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता। अतः सब मूलप्रकृतियोंके अपने-अपने उदयसे उत्पन्न हुए परिणाम अपने-अपने स्थितिबन्धके कारण होते हैं। इससे उन्हें स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान कहते हैं, उनका यहाँ ग्रहण है। प्रकृतियोंके स्थिति भेदरूप समुदायको लेकर ज्ञानावरण आदि प्रकृतियोंके अपने-अपने स्थितिबन्धके कारणभूत जो अध्यवसाय स्थान हैं उन सबको एकत्र करके प्रमाण कहा है। यह कथन स्थितिकी अपेक्षा नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जुज्जदे। हेट्ठिमहेट्ठिमकम्माणं ठिदिबंधट्ठाणा पाओग्गकसायेहिंतो उवरिमउवरिमाणं कम्माणमहियट्ठिदिबंधट्ठाणपाओग्गकसायउदयट्ठाणाणं असमाणाणमणुवलंभेण असंखेज्जगुणत्ताणुववत्तीदो। ण एस दोसो हेट्ठिमाणं उदयट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं उदयट्ठाणबहुत्तेण असंखेज्जगुणत्ताविरोहादो।

न च सर्व्वमूलप्रकृतीनां समानानां कषायोदयस्थानानामत्र ग्रहणं। कषायोदयस्थानेन विना मूलप्रकृतिबंधाभावेन सर्व्वप्रकृतिस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानां समानत्वप्रसंगात्। तस्मात्सर्व्वमूलप्रकृतीनां स्वस्वोदयतः समुत्पन्नपरिणामानां स्वस्वस्थितिबंधकारणत्वेन स्थितिबंधाध्यवसायस्थानसंज्ञितानामुत्तरप्रत्ययानामत्र ग्रहणं। प्रकृतिसमाहारमाश्रित्य ज्ञानावरणादीनां प्रकृतीनां स्वस्वस्थितिबंधकारणाध्यवसायस्थानानि सर्व्वाण्येकीकृत्य प्रमाणं प्ररूपितं। न स्थितिं प्रत्येषा प्ररूपणा भवेत्। उपरितनसूत्रैः स्थितिं प्रत्यध्यवसायप्रमाणस्य प्ररूप्यमाणत्वात्। अधस्तनेभ्य उपरिमाणि किमर्त्थमसंख्येयगुणानि स्वाभाव्यात्। मिथ्यात्वासंयमकषायप्रत्ययैः सर्व्वाणि कर्म्माणि सदृशानि। तेनैतेषां कर्म्मणामध्यवसायस्थानानि असंख्येयगुणहीनानीति न घटते। अधस्तनानां स्थितिबंध-

---

परूविज्जमाणत्तादो हेट्ठिमेहिंतो उवरिमाणि किमट्ठमसंखेज्जगुणाणि। साहावियादो मिच्छत्तासंजमकसायपच्चयेहिं सव्वाणि कम्माणि सरिसाणि तेण एदेसिं कम्माणमज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणित्ति ण घडदे हेट्ठिमाणं ठिदिबन्धट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं ठिदिबन्धट्ठाणाणि अहियाणित्ति असंखेज्जगुणत्तं ण जुज्जदे। हेट्ठिमहेट्ठिमकम्माणं ठिदिबन्धट्ठाणपाउग्गकसायेहिंतो उवरिमउवरिमाणं कम्माणयहियट्ठिदिबन्धट्ठाणं पाओग्गकसायउदयट्ठाणाणं असमाणाणमणुवलंभेण असंखेज्जगुणत्ताणुववत्तीदो। ण एस दोसो। हेट्ठिमाणं उदयट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं उदयट्ठाणबहुत्तेण असंखेज्जगुणताविरोहादो।

न च सर्वमूलप्रकृतीनां समानां कषायोदयस्थानानामत्र ग्रहणं कषायोदयस्थानेन विना मूलप्रकृतिबन्धाभावेन सर्वप्रकृतिस्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानां समानत्वप्रसंगात्। तस्मात् सर्वमूलप्रकृतीनां स्वस्वोदयतः समुत्पन्नात्मपरिणामानां स्वस्वस्थितिबन्धकारणत्वेन स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानसंज्ञितानामुत्तरप्रत्ययानामत्र ग्रहणं प्रकृतिसमाहारमाश्रित्य ज्ञानावरणादीनां प्रकृतीनां स्वस्वस्थितिबन्धकारणाध्यवसायस्थानानि सर्वाण्येकीकृत्य प्रमाणं प्ररूपितं। न स्थितिं प्रत्येषा प्ररूपणा भवेत्। उपरितनसूत्रैः स्थितिं प्रत्यध्यवसायप्रमाणस्य प्ररूप्यमाणत्वादधस्तनेभ्य उपरिमाणि किमर्थमसंख्येयगुणानि स्वाभाव्यात्। मिथ्यात्वसंयमकषायप्रत्ययैः सर्वाणि कर्माणि सदृशानि तेनैतेषां कर्मणामध्यवसायस्थानान्यसंख्येयगुणानि इति न घटते। अधस्तनानां

क्योंकि आगेके सूत्रोंके द्वारा स्थितिकी अपेक्षा अध्यवसायोंके प्रमाणका कथन किया है।

शंका—पहले कहे आयु आदि कर्मोंके स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंसे पीछे कहे कर्मोंके स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान असंख्यात गुणे कैसे हैं? क्योंकि स्वभावसे ही मिथ्यात्व, असंयम, कषायरूप प्रत्ययोंके द्वारा सब कर्म समान हैं। इनसे हीन जो कर्म हैं उनके अध्यवसाय स्थान असंख्यात गुणे कैसे हो सकते हैं? पहले कहे आयु आदि कर्मोंके स्थितिबन्धके स्थानोंसे पीछे कहे कर्मोंके स्थितिबन्धके स्थान अधिक हो सकते हैं किन्तु असंख्यात गुणे नहीं हो सकते? पहले-पहले कहे कर्मोंके स्थितिबन्ध स्थानके योग्य कषायोंसे पीछे-पीछे कहे कर्मोंकी अधिक स्थितिबन्धके स्थानोंके योग्य कषायके उदयस्थान असमान नहीं पाये जाते अतः असंख्यात गुणापना नहीं बनता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थानेभ्य उपरितनानां कर्म्मणां स्थितिबंधस्थानान्यधिकानीति असंख्येयगुणत्वं न युज्यते। अधस्तनाधस्तनकर्म्मणां स्थितिबंधस्थानप्रायोग्यकषायेभ्य उपरितनोपरितनानां कर्म्मणामधिक-स्थितिबंधस्थानप्रायोग्यकषायोदयस्थानानामसमानानामनुपलंभेनासंख्येयगुणत्वानुपपत्तितः। नैष दोषः। अधस्तनानामुदयस्थानेभ्य उपरितनानां कर्म्मणामुदयस्थानबहुत्वेनासंख्येयगुणत्वा-विरोधात् ॥

अनंतरं जघन्यादिस्थितिविकल्पं प्रति कषायाध्यवसायंगळं पेळदपर :—

अवरट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा असंखलोगमिदा।
अहियकमा उक्कस्सट्ठिदिपरिणामोत्ति णियमेण ॥९४९॥

जघन्यस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्येयलोकमितानि। अधिकक्रमाण्युत्कृष्टस्थिति-परिणामपर्य्यंतं नियमेन ॥

जघन्यस्थितियंतःकोटीकोटिसागरोपममदक्के संख्यातपल्यंगळप्पुवु। प १। तदुत्कृष्ट-स्थिति मोहनीयवक्के सप्ततिकोटीकोटिसागरोपममदक्के जघन्यस्थितियं नोडलु संख्यातगुणितपल्यं-गळप्पुवु। प ११। मध्यमस्थितिविकल्पंगळु एकैकसमयाधिकक्रमंगळप्पुवु। ई स्थितिविकल्पंग-ळेनितक्कुमें दोडे आदी। प १। अंते प ११। सुद्धे। प ११। वड्ढिहिदे। प ११। रूवसंजुदे ठाणा। प ११। एंदितु सर्व्वस्थिति निरंतरविकल्पंगलिनितप्पुवल्लि सर्व्वजघन्यस्थितिबंधाध्यव-

स्थितिबन्धस्थानेभ्य उपरितनानां कर्मणां स्थितिबन्धस्थानान्यधिकानि इत्यसंख्येयगुणत्वेन युज्यते अधस्तनाध-स्तनकर्मणां स्थितिबन्धस्थानप्रायोग्यकषायेभ्यः, उपरितनोपरितनानां कर्मणामधिकस्थितिबन्धस्थानप्रायोग्यकषा-योदयस्थानानामसमानानामनुपलंभेनासंख्येयगुणत्वानुपपत्तितः। नैष दोषः अधस्तनानामुदयस्थानेभ्य उपरितनानां कर्मणां उदयस्थानबहुत्वेनासंख्येयगुणत्वाविरोधात् ॥९४८॥ अथ जघन्यादिस्थितिविकल्पं प्रत्याह—

मोहनीयस्य स्थितिः जघन्यांतःकोटीकोटिसागरोपमासंख्यातपल्यमात्री प १ उत्कृष्टा सप्ततिकोटाकोटि-सागरोपमा। ततः संख्यातगुणा प ११ तद्विकल्पा एतावंतः प ११ एतेषु सर्वजघन्यस्य स्थितिबन्धाध्यवसाय-

समाधान—यह दोष ठीक नहीं है; क्योंकि नीचेके उदयस्थानोंसे ऊपरके कर्मोंके उदय-स्थान बहुत होनेसे असंख्यात गुणे होनेमें कोई विरोध नहीं है। उक्त कथनका सारांश यह है कि अपने-अपने उदयसे होनेवाले आत्माके परिणामोंका नाम स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान है। सो आयु आदि कर्मोंके उदयस्थानोंसे नाम आदि कर्मोंके उदयस्थान बहुत हैं इससे असं-ख्यात गुणे कहे हैं ॥९४८॥

आगे जघन्य आदि स्थितिकी अपेक्षा स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंका प्रमाण कहते हैं—

मोहनीय कर्मकी जघन्यस्थिति तो अन्तःकोटाकोटी सागर प्रमाण है सो संख्यात पल्य प्रमाण है। और उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है। यह जघन्य स्थितिसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सायस्थानंगळु असंख्यात लोकमात्रंगळप्पुवु । मेले मेले उत्कृष्टस्थितिपर्य्यंतं चयाधिकंगळप्पुवु नियमदिदं ॥

अनंतरमा विशेषप्रमाणंगळं पेळ्दपरु :—

अहियागमणणिमित्तं गुणहाणी होदि भागहारो दु ।
दुगुणं दुगुणं वड्ढी गुणहाणिं पडि कमेण हवे ॥९५०॥

अधिकागमननिमित्तं गुणहानिर्भवेद् भागहारस्तु । द्विगुणं द्विगुणं वृद्धिर्गुणहानिं प्रति क्रमेण भवेत् ॥

तच्चयागमननिमित्तमागि गुणहानिभागहारमक्कुमं तप्प गुणहानिये दोडे द्विगुणं द्विगुणितमप्प दोगुणहानि येंबुदर्थंमा दोगुणहानियिदं जघन्यस्थितिबंधनिबंधनाध्यवसाय प्रथमगुणहानि चरमनिषेकमं १६ । भागिसुत्तं विरलु १६/१६ तत्प्रथमगुणहानिसंबंधिचयप्रमाणमक्कु । १ । मथवा तु शब्ददिदं रूपाधिकगुणहानियिदं प्रथमादिगुणहानिगळ प्रथमनिषेकंगळं भागिसुत्तं विरलु तत्तद्गुणहानिसंबंधिचयंगळप्पुवु । अदु कारणमागि गुणहानि प्रति चयंगळु द्विगुणंगळु क्रमदिदंमक्कुं

९	१८	३६	७२	१४४	२८८
८	८	८	८	८	८
१	२	४	८	१६	३२

स्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि तत उपरि उत्कृष्टपर्यंतं चयाधिकानि भवन्ति ॥९४९॥

अधिकः चयः तमानेतुं विवक्षितगुणहानौ चरमनिषेके दोगुणहानिः, तुशब्दात् प्रथमनिषेके रूपाधिकगुणहानिश्च भागहारो भवति । तत एव स गुणहानिं प्रति द्विगुणद्विगुणक्रमेण स्यात् । तत्संदृष्टिः—

संख्यात गुणी है । उत्कृष्ट स्थितिमें-से जघन्यस्थितिको घटाकर उसमें एक मिलानेसे जो प्रमाण हो उतने स्थितिके भेद हैं । इन भेदोंमें-से सबसे जघन्य स्थितिबन्धके कारणभूत अध्यवसायस्थान असंख्यात लोकप्रमाण है । उससे ऊपर उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त नियमसे एक-एक चय अधिक हैं । सो जघन्यस्थितिके कारण अध्यवसाय स्थानोंके प्रमाणमें एक चयका प्रमाण मिलानेपर जघन्यस्थितिसे एक समय अधिक स्थितिके कारण अध्यवसाय स्थानोंका प्रमाण होता है । इसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त जानना ॥९४९॥

अधिक रूपको चय कहते हैं । उसे लानेके लिए विवक्षित गुणहानिमें अन्तिम निषेकको दो गुणहानिका भाग दीजिए । और 'तु' शब्दसे प्रथम निषेकको एक अधिक गुणहानिका भाग दीजिए । तब चयका प्रमाण आता है । जैसे अंकसंदृष्टिमें अन्तिम गुणहानिमें अन्तिम निषेकका प्रमाण सोलह है । उसमें दूनी गुणहानिके प्रमाण सोलहका भाग देनेपर एक आता है । अथवा प्रथम निषेकका प्रमाण नौ है । उसको एक अधिक गुणहानि नौका भाग देनेपर भी एक आता है । वही उस गुणहानिमें चयका प्रमाण होता है । उससे प्रत्येक गुणहानिमें दूना-दूना चयका प्रमाण होता है; क्योंकि प्रत्येक गुणहानिमें आदि निषेक और अन्तिम निषेकका प्रमाण दूना-दूना होता है ॥९५०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमा भागहारभूतगुणहानिप्रमाणमं पेळदपरु :—

ठिदिगुणहाणिपमाणं अज्झवसाणम्मि होदि गुणहाणी ।
णाणागुणहाणिसला असंखभागो ठिदिस्स हवे ॥९५१॥

स्थितिगुणहानिप्रमाणं अध्यवसाये भवेद्गुणहानिः । नानागुणहानिशलाका असंख्यभागः स्थितेर्भवेत् ॥

ई कषायबंधाध्यवसायदोळ् गुणहानिप्रमाणमेनितें दोडे आलापापेक्षेयिदं स्थितिरचनेयोळ् पेळल्पट्ट दशकोटीकोटयादिस्थितिगळ्गे पेळ्द प्रमाणमे स्थितिबंधाध्यवसायगुणहानिप्रमाणमक्कुं ।

परमार्त्थदिदमिनितक्कु प १ १ / छे व छे / a मिदं द्विगुणिसिदोडे दोगुणहानियक्कुं— प १ १ । २ / छे व । छे / a नानागुणहानिशलाकाप्रमाणमुमंते स्थितिगे पेळ्द नानागुणहानिशलाकाऽसंख्यातेकभागमक्कु । नाना छे व छे / a मी नानागुणहानिशलाकेगळिदं स्थितियं भागिसिदोडे गुणहान्यायाममक्कुमप्पुदरिंदमध्यवसायविषयदोळु गुणहानिप्रमाणं सामान्यालापापेक्षेयिदं स्थितिगुणहानिप्रमाणमेंदु पेळल्पट्टुदें दवधारिसल्पडुगुमेकेंदोडे नानागुणहानिशलाकेगळ् स्थितिय नानागुणहानिशलाकेगळं नोडलुमसंख्यात-

१६ / ८।२	३२ / ८।२	६४ / ८।८	१२८ / ८।२	२५६ / ८।२	५१२ / ८।२
९ / ८	१८ / ८	३६ / ८	७२ / ८	१४४ / ८	२८८ / ८
१	२	४	८	१६	३२

गुणहानिप्रमाणं तु प्रागबन्धावसरे कर्मस्थित्युक्तगुणहानिप्रमाणवदत्र कषायाध्यवसायेऽपि भवति प १ १ / छे—व—छे / a तदेव द्विगुणं दोगुणहानिः प १ १ २ / छे—व—छे / a नानागुणहानिशलाकाप्रमाणं स्थितिनानागुणहानि-

पूर्वमें बन्धके कथनमें कर्मस्थितिकी रचनामें जैसे गुणहानिका प्रमाण कहा है वैसे ही यहाँ कषायाध्यवसायस्थानके कथनमें भी गुणहानिका प्रमाण जानना । अर्थात् पूर्वमें कहा था कि स्थितिके प्रमाणमें नानागुणहानि शलाकाके प्रमाणका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे वही गुणहानिका प्रमाण है वैसे ही यहाँ जानना । सो यहाँ जघन्यस्थितिसे उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त जितने स्थितिके भेदोंका प्रमाण है वही स्थितिका प्रमाण है । उसमें नानागुणहानि शलाकाके प्रमाणका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे वही एक गुणहानि आयामका प्रमाण जानना । उससे दूना दो गुणहानिका प्रमाण जानना । तथा नानागुणहानिका प्रमाण, स्थिति रचनामें जो नानागुणहानिका प्रमाण कहा था उसके असंख्यातवें भाग जानना । सो विव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणहीनंगळें दु पेळल्पट्टुवप्पुदरिंदमा नानागुणहानिगळिंदं स्थितियं भागिसिदोडे गुणहान्यायाममप्पुदरिदं ॥

अनंतरमा स्थितिबंधाध्यवसायविषयप्रचयमुं महाराशियक्कुमेकें दोडा प्रथमगुणहानिसंबंधिजघन्यचयस्थानंगळोळसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानवारंगळप्पुवें दु पेळ्वपरु :—

लोगाणमसंखपमा जहण्णउड्ढिम्मि तम्हि छट्ठाणा ।
ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं होंति सत्तण्हं ॥९५२॥

लोकानामसंख्यप्रमाणं जघन्यवृद्धौ तस्यां षट्स्थानानि। स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानां भवेयुः सप्तानां ॥

आयुर्व्वर्जितज्ञानावरणादिसप्तमूलप्रकृतिगळस्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळ प्रथमादिगुणहानिगळ प्रचयंगळोळु प्रथमगुणहानिजघन्यवृद्धिप्रमाणं पेळल्पट्टुवदरोळु असंख्यातलोकमात्रषट्स्थानवारंगळप्पुवु ॥

अनंतरमायुष्यस्थितिबंधाध्यवसायंगळोळु विशेषमं पेळ्वपरु :—

आउस्स जहण्णट्ठिदिबंधणजोग्गा असंखलोगमिदा ।
आवलियसंखभागेणुवरुवरिं होंति गुणिदकमा ॥९५३॥

आयुषो जघन्यस्थितिबंधनयोग्या असंख्यातलोकमिताः। आवल्यसंख्यभागेनोपर्य्युपरि भवेयुर्गुणितक्रमाः ॥

शलाकानामसंख्यातैकभागः नाना छे–व–छे ॥९५१॥ तज्जघन्यचयस्य महत्त्वं दर्शयति —
a

विनायुः सप्तमूलप्रकृतीनां स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानां सर्वगुणहानिप्रचयेषु प्रथमो जघन्यवृद्धिः तत्रासंख्यातलोकमात्रषट्स्थानवारा भवन्ति ॥९५२॥ आयुःस्थितिबन्धाध्यवसायेषु विशेषमाह—

क्षित मोहनीयकी स्थिति रचनामें नानागुणहानि शलाकाका प्रमाण पल्यके अर्द्धच्छेदोंमें-से पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेद घटानेपर जो प्रमाण हो उतना कहा था। उसमें असंख्यातका भाग देनेपर जो प्रमाण रहे वही यहाँ कषायाध्यवसायकी रचनामें नानागुणहानिका प्रमाण जानना।

विशेषार्थ—स्थितिरचनामें जैसे अंकसंदृष्टिके द्वारा कथन किया था वैसे ही यहाँ भी जानना। यहाँ जो स्थितिके भेदोंका प्रमाण है वही स्थितिका प्रमाण जानना। जितना गुणहानि आयामका प्रमाण है उतने जघन्यसे लेकर जो स्थितिके भेद हैं उनमें प्रथम गुणहानि जानना। तथा जघन्यस्थितिका कारण जो अध्यवसायोंका प्रमाण है वही प्रथम निषेकका प्रमाण जानना। उसमें एक चय मिलानेपर एक समय अधिक जघन्यस्थितिके कारण अध्यवसायोंके प्रमाणरूप दूसरा निषेक होता है। प्रथम निषेकमें एक अधिक गुणहानि आयामका भाग देनेपर जो प्रमाण हो वही चयका प्रमाण है। इस प्रकार एक-एक चय अधिक प्रथम गुणहानिके अन्तिम निषेक पर्यन्त जानना। उसके ऊपर उतने ही स्थितिके भेदोंकी दूसरी गुणहानि होती है। उसमें भी निषेक चय आदिका प्रमाण प्रथम गुणहानिसे दूना जानना। इसी प्रकार अन्तकी गुणहानि पर्यन्त जानना ॥९५१॥

आगे जघन्य चयका महत्त्व दिखाते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयुःकर्म्मक्के सर्व्वजघन्यस्थितिबंधयोग्यंगळप्प अध्यवसायस्थानंगळु असंख्यातलोकमितंगळप्पुवु । द्वितीयादिस्थितिविकल्पंगळोळु मेले मेले आवल्यसंख्यातैकभागदिदं गुणितक्रमंगळप्पुवल्लि स्थितिगे षोडशमंकसंदृष्टि । असंख्यातलोकक्के अंकसंदृष्टि द्वाविंशति । २२ । आवल्यसंख्यातगुणकारक्के नाल्कु रूपुगळु संदृष्टि :—

△जं|२२	२२।४।१	२२।४।२	२२।४।३	२२।४।४	२२।४।५	२२।४।६
अनु ४	५	६	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२।१	६ २२।४।३।१
अनु ५	६	७	४ २२।४।-१	५ २२।४।२=१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४।१
अनु ६	७	४ २२।४।१	५ २२।४।२।१	६ २२।४।३।१	७ २२।४।४।१	४ २२।४।१ २२।४।५-१
अनु ७	४ २२।४।१	५ २२।४।२।१	६ २२।४।३।१	७ २२।४।४।१	४ २२।४।१ २२।४।५।१	२२।४।२-१ २२।४।६-१

२२।४।७	२२।४।८	२२।४।९
७ २२।४।४-१	४। २२।४।१	५ २२।४।२।१
४ २२।४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२।१	६ २२।४।३।१
५ २२।४।२-१ २२।४।६-१	६ २२।४।३।१	७ २२।४।४-१
६ २२।४।३।१ २२।४।७-१	७ २२।४।४।१	४ २२।४-१ २२।४।५।-१

२२।४।१०	२२।४।११	२२।४।१२	२२।४।१३	२२।४।१४	२२।४।१५

आयुःकर्मणः सर्वजघन्यस्थितिबन्धयोग्याध्यवसायस्थानान्यसंख्यातलोका भवन्ति । द्वितीयादिस्थितिविकल्पेष्वावल्यसंख्यातैकभागेन गुणितक्रमाणि भवन्ति । तत्रांकसंदृष्ट्या स्थितिः षोडश १६ । असंख्यातलोको द्वाविंशतिः २२ । आवल्यसंख्यातश्चतुष्कं ४ । अनुकृष्टिपदमपि चतुष्कं । ४ । संदृष्टिः—

आयुके बिना सात मूलप्रकृतियोंके जो स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान हैं उनके सर्व गुणहानि सम्बन्धी प्रचयोंमें जो प्रथम जघन्य वृद्धि होती है उसमें असंख्यात लोकप्रमाण षट् स्थानपतित वृद्धियाँ होती हैं ॥९५२॥

आयुकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसायोंमें विशेषता बतलाते हैं—

आयुकर्मकी सबसे जघन्य स्थितिबन्धके योग्य अध्यवसाय स्थान असंख्यात लोकप्रमाण हैं । उसको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जघन्यसे एक समय अधिक दूसरी स्थितिके योग्य अध्यवसाय स्थान होते हैं । इसी प्रकार उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त क्रमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इल्लि आयुस्थितिबंधाध्यसायंगळोळु जघन्यस्थितिबंधयोग्यासंख्यातलोकमात्राध्यवसाय-स्थानं मोदलगोंडावल्यसंख्यातगुणितक्रमदोळुत्कृष्टस्थितिबंधाध्यवसायंगळ संबंधि अनुकृष्टिखंडं-गळोळु सर्व्वजघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यासंख्यातलोकमात्राध्यवसायंगळगंकसंदृष्टि द्वाविंशतियप्पुदरिंद-मनुकृष्टिपदक्कंकसंदृष्टि नाल्कुरूपुगळप्पुवल्लि चयधन। ६। होनं द्रव्यं। २२। ६। पदभजिवे होदि आदिपरिमाणं $\frac{१६}{४}$ लब्धं नाल्कु रूपुगळप्पुवा नाल्कुं रूपुगळु आदिप्रमाणमक्कुं। तत्तो

√ज।२२	२२।४।१	२२।४।२	२२।४।३	२२।४।४	२२।४।५	२२।४।६
अनु ४	५	६	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१
अनु ५	६	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१
अनु ६	७	४ २२।४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१
अनु ७	४ २२।४।१-१	५ २२।४।२-१	६ २०।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१

→

२२।४।७	२२।४।८	२२।४।९	२२।४।१०
	२२।४।११	२२।४।१२	२२।४।१३
७ २२।४।४-१	२२।४।१४	२२।४।१५ज	
४ २२।४-१ २२।४।५-१ ←			
५ २२।४।२-१ २२।४।६-१			
६ २२।४।३-१ २२।४।७-१			

तत्र चय ६ होनद्रव्यं २२-६। पदभक्ते $\frac{१६}{४}$ जघन्यस्थितिजघन्यानुकृष्टिखण्डं स्यात्। ४ तत

आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित अध्यवसाय स्थान होते हैं। इस कथनको अंकसंदृष्टिसे दिखाते हैं—

आयुकर्मकी स्थितिके भेद संख्यात पल्यप्रमाण हैं। उनकी कल्पित संख्या सोलह १६ मान लीजिए। जघन्यस्थितिके योग्य अध्यवसाय स्थान असंख्यात लोकप्रमाणकी संख्या बाईस मान लीजिए। द्वितीय आदि स्थितिमें गुणकार आवलीका असंख्यातवाँ भाग है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसेस अहियकमम विंतु जघन्यस्थितिजघन्यानुकृष्टिखंडं मोदलगोंडु उत्कृष्टखंडपर्य्यंतमेकैकचयाधिकक्रमदिदं स्थापिसुत्तं विरला द्वाविंशति रूपुगळं संपूर्णंगळप्पुवु । ४ । ५ । ६ । ७ ॥ मत्तं द्वितीयस्थितिविकल्पबंधप्रायोग्यंगळि । २२ । ४ । विल्लिएकरूपं तेगेदु बेरे स्थापिसि । २२ । १ । अवशिष्टमिदु । २२ । ४—१ मत्तमा उद्धृतरूपं ।

२२।१। मुनिनंते विभागिसि मोदलगोंडु स्थापिसिदोडितिप्पुंवु । ५।६।७ । अवशिष्टचतुष्टयमनिदर । २२ । ४ ।—१ । मेलिरिसि कडेयोळु स्थापिसिदोडुत्कृष्टखंडमितिक्कुं २२।४
२२ । ४—१

मत्तं तृतीयस्थितिविकल्पबंधप्रायोग्यंगळिवरोळु । २२ । ४ । ४ । मुनिनंतेकरूपंतेगेदु बेरिरिसि । २२ । ४ । १ । अवशिष्टमनिदं । २२ । ४ । ४—१ । कडेयोळु बरेदु मत्तमा तेगेदिरिसिद रूप । २२ । ४ । १ । मिदरोळु एकरूपंतेगेदु बेरिरिसि । २२ । १ । अवशिष्टमनिदं । २२ । ४ । १ । उपांतदोलिरिसिल्पडुगुं । मत्तमा बेरिरिसिदुदनिदं । २२ । १ पूर्व्ववद्विभागिसि । ४ । ५ । ६ । ७ ।

उत्कृष्टखण्डपर्यंतमेकैकचयाधिकक्रमेण दत्ते ५ । ६ । ७ । द्वाविंशतिरूपाणि परिसमाप्नुवन्ति । द्वितीयविकल्पे तत्प्रायोग्याणीमानि २२ । ४ । अनेकभागं गृहीत्वा २२ । १ । विभज्य पंचादितो दत्वा ५ । ६ । ७ । अवशिष्टे चतुष्कं बहुभागस्य २२ । ४–१ । उपरि दत्ते उत्कृष्टखण्डं स्यात् । ४
२२ । ४–१

तृतीयविकल्पे २२ । ४ । ४ । एकभागं गृहीत्वा २२ । ४ । १ । शेषं २२ । ४ । ४–१ । अन्ते दत्वापनीतभागे २२ । ४ । १ अप्येकभागमुद्धृत्य २२ । १ । शेष २२ । ४–१ । मुपान्ते दत्वोद्धृतैकभागं २२ । १ ।

उसका प्रमाण चार भाग लीजिए। नीचेकी स्थितिके बन्धके कारण अध्यवसाय स्थानोंमें और ऊपरकी स्थितिके बन्धके कारण अध्यवसाय स्थानोंमें नाना जीवोंकी अपेक्षा समानता भी पायी जानेसे यहाँ अनुकृष्टिका विधान भी सम्भव है। क्योंकि ऊपर और नीचेमें समानताका नाम ही अनुकृष्टि है। सो अंकसंदृष्टिमें अनुकृष्टिके गच्छका प्रमाण चार जानना। स्थितिकी रचना तो ऊपर-ऊपर होती है और एक-एक स्थितिरचनाके बराबरमें अनुकृष्टि रचना होती है। जघन्यस्थितिकी अनुकृष्टिमें चयका प्रमाण एक है। चयधन छह है। प्रथम स्थितिके द्रव्य बाईसमें छह घटानेपर सोलह रहे। उसमें अनुकृष्टि गच्छ चारका भाग देनेपर चार पाये। यही जघन्यस्थितिमें अनुकृष्टिका जघन्य खण्ड है। इससे उत्कृष्ट खण्डपर्यन्त एक-एक चय अधिक होता है। सो दूसरे, तीसरे, चौथे खण्डका प्रमाण पाँच, छह, सात क्रमसे जानना। चारों खण्डोंका जोड़ बाईस होता है। स्थितिके दूसरे भेदका भी द्रव्य बाईस और चौगुने अध्यवसाय होनेसे अट्ठासी हुए। उनमें-से एक भाग बाईसको लेकर पहले आदि अनुकृष्टि खण्डोंमें क्रमसे पाँच, छह, सात दो। शेष रहे चार तथा तीन बाईस = ६६। उनको अन्तिम चतुर्थ उत्कृष्ट खण्डमें देनेसे सत्तर हुए। सब मिलकर अट्ठासी हुए। तीसरे स्थिति भेदमें अध्यवसाय बाईसका दो बार चौगुना है। अतः तीन सौ बावन हुए। उसमें-से एक भाग चौगुना बाईसको जुदा रखकर शेष चौगुना बाईसका तिगुना अर्थात् दो सौ चौंसठ अन्तके खण्डमें दो। और जुदे रखे चौगुना बाईसमें-से एक भाग बाईसको जुदा रखकर शेष तीन गुणा बाईस अर्थात् छियासठ तीसरे खण्डमें दो। जुदे रखे बाईसमें-से पहले और दूसरे

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

इवरोळु तिर्यग्रचनानिमित्तमागि षट्सप्तकंगळं । ६ । ७ । मोदलोंडु बरेदु अवशिष्टचतुःपंचकंगळं

४ । ५ । क्रमदिंदमुपांत्यांतंगळ मेले बरेदोडितिप्पुंवु । २२ । ४—१ । (४) २२ । ४ । ४ । १ । (५) मत्तं चतुर्त्थस्थितिविकल्पबंधप्रायोग्यंगळिवरोळु । २२।४।४।४ । येकरूपं तेगेदोडिवु । २२ । ४ । ४—१ । अवशिष्टमनिद । २२ । ४ । ४ । ४ । १ । नंत्यदोळु बरेदु मत्तं तेगेदेकरूपिनोळिदरोळु । २२ । ४ । ४ । १ एकरूपं तेगेदु बेरिरिसि । २२ । ४ । १ । शेषमनिद । २२ । ४ । ४।१ । नुपांत्यदोळु बरेदु मत्तं बेरिरिसि देकरूपिनोळिदरोळु । २२ । ४ । १ । मत्तमेकरूपं तेगेदु बेरिरिसि । २२ । १ । शेषमनिदं द्वितीयखंडदोळु बरेदु एकरूपनिदं मुन्निनंते विभागिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । सप्तकम । ७ । नादियोळबरेदु शेषचतुःपंचषट्कंगळं द्वितीयतृतीयचरमखंडंगळ मेलिरिसिदोडितिप्पुंवु ।

२२ । ४—१ (४) । २२ । ४ । ४—१ (५) । २२ । ४ । ४ । ४—१ (६) । पंचमस्थितिविकल्पबंधप्रायोग्यंगळि-

---

प्राग्वद्विभज्य ४ । ५ । ६ । ७ । षट्सप्तांको क्रमेणादितो दत्वा चतुष्पंचांको ४ । ५ । उपान्त्यान्त्ययोरुपरि दद्यात् ।

चतुर्थविकल्पे २२ । ४ । ४ । ४ । एकभागमुद्धृत्य २२ । ४ । ४ । १ । शेष २२ । ४ । ४ । ४–१ । (२२ । ४–१ / ४) मन्ते दत्वोद्धृतैकभागे २२ । ४ । ४ । १ (५) स्येकभागमुद्धृत्य २२ । ४ । १ शेषं २२ । ४ । ४–१ । उपान्ते (२२ । ४ । ४–१) दत्त्वोद्धृतैकभागे २२ । ४ । १ स्येकभागं गृहीत्वा २२ । १ शेषं २२ । ४–१ द्वितीयखण्डे दत्त्वैकभागं पूर्ववद्विभज्य ४ । ५ । ६ । ७ सप्तांक ७ मादौ दत्वा चतुष्पंचषडंकान् द्वितीयतृतीयचरमाणमुपरि दद्यात् ।

७ २२ । ४–१ (४) । २२ । ४ । ४–१ (५) । २२ । ४ । ४ । ४–१ (६) एवं ।

खण्डमें क्रमसे छह और सात दो । तथा तीसरे और चौथे खण्डमें जो पूर्वमें दिया था उसमें चार और पाँच मिलाओ । ऐसा करनेसे प्रथम खण्डमें छह, दूसरेमें सात, तीसरेमें सत्तर और चौथे खण्डमें दो सौ उनहत्तर हुए । सबको जोड़नेपर ६+७+७०+२६९ = ३५२ तीन सौ बावन हुए । चौथे स्थिति भेदमें बाईसको तीन बार चौगुना करनेपर चौदह सौ आठ अध्यवसाय हैं । उनमें-से एक भाग बाईसका दो बार चौगुनाको जुदा रखकर शेष बाईसके दो बार चौगुनाको तिगुना करनेपर एक हजार छप्पन हुए । इसे अन्तके चतुर्थ खण्डमें दो । जो बाईसका दो बार चौगुना जुदा रखा था उसमें-से एक भाग बाईसका चौगुना रखकर शेष चौगुना बाईसका तिगुना दो सौ चौंसठ हुआ । उसे तीसरे खण्डमें दो । जो बाईससे चौगुना जुदा रखा था उसमें-से एक भाग बाईसको जुदा रखकर शेष तिगुना बाईस अर्थात् छियासठ दूसरे खण्डमें देना । जो बाईस जुदा रखा था उसमें-से सात प्रथम खण्डमें और चार, पाँच, छह दूसरे, तीसरे, चौथे खण्डमें मिलाना । ऐसा करनेपर प्रथम खण्डमें सात, दूसरेमें सत्तर, तीसरेमें दो सौ उनहत्तर और चौथेमें एक हजार बासठ हुए । सबको जोड़नेपर ७+७०+२६९+१०६२=चौदह सौ आठ हुए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बरोळु । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । एकरूपं तेगेदोडिवु । २२ । ४ । ४ । ४ । १ । अवशिष्टमनिवं । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१ । चरमखंडदोळु बरेवु एकरूपमनिव । २२ । ४ । ४ । ४ । १ | रोळ्मत्तमेकरूपं तेगेवु बेरिरिसि । २२ । ४ । ४ । १ । शेषमनिव । २२ । ४ । ४ । ४ ।—१ । नुपान्त्यंतवोळु बरेवु एकभागमनिव । २२ । ४ । ४ । १ । रोळेकरूपं तेगेवु बेरिरिसि । २२ । ४ । १ । शेषमनिवं । २२ । ४ । ४—। १ । द्वितीयखंडदोळ् बरेवु एकभागमिदरोळु । २२ । ४ । १ । एकरूपं तेगेवु बेरिरिसि । २२ । १ । बहुभागमनिदं । २२ । ४ । १ । प्रथमखंडदोळ् बरेवु एकभागमनिवं । २२ । १ । मुन्निनंते भागिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । इदं प्रथमखंडं मोदल्गोंडु चरम-

४ ५ ६
खंडपर्य्यंतं मेले इरिसुत्तं विरलु क्रमदिनितिप्पुवु । २२ । ४—१ । २२ । ४ । ४—१ । २२ । ४ ।

७
४ । ४—१ । २२ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । षष्ठस्थितिविकल्पबंधनिबंधनप्रायोग्याध्यवसायंगळिव-रोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ एकरूपं तेगेवु बहुभागमनिदं । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१ । चरमखंडदोळु बरेवु एकभागमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगेवु बहुभागमनिवं २२ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१ । उपांत्यदोळ् बरेवु शेषैकभागमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । १ । द्वितीयखंडदोळ् बरेवु एकरूपिनोळिदरोळु । २२ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगवु शेषमनिवं प्रथमखंडदोळु बरेवु एकभागमिदरोळु । २२ । ४ । १ । एकरूपं तेगेवु शेषमनिवं । २२ । ४ । १ । चरमखंडद मेलिरिसि एकभागमनिवं । २२ । १ । पूर्व्वोक्तप्रकारदिवं विरळिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । पंचक षट्कसप्तकंगळं क्रमदिवं प्रथमादिद्विचरमपर्य्यंतं मेलिरिसि शेषचतुष्कमं चरमखंडद मेलिरि-सुवुदंतिरिसुत्तं विरलु प्रथमादिखंडंगळितिप्पुंवु ।

५	६	७
२२।४।४—१	२२।४।४।४—१	२२।४।४।४।४—१

→

४
२२ ४—१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ —१

←

सप्तमस्थितिविकल्पबंधकारणंगळप्प कषायपरिणामंगळिवरोळु । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । एकरूपं तेगेवु शेषमनिवं । २२।४।४।४।४।४।४—१

४ ५ ६ ७
पंचमविकल्पे २२ । ४–१ । २२ । ४ । ४–१ । २२ । ४ । ४ । ४–१ । २२ । ४ । ४ । ४ । ४–१

५ ६ ७
षष्ठविकल्पे २२ । ४ । ४–१ २२ । ४ । ४ । ४–१ २२ ४ । ४ । ४ । ४–१

४
२२ । ४–१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४–१

इसी प्रकार क्रमसे पाँचवें, छठे, सातवें, आठवें इत्यादि अन्तके स्थिति भेदमें अनुकृष्टि रचना जाननी। सर्वत्र जो नीचेके स्थिति भेदके दूसरे, तीसरे, चौथे अनुकृष्टि खण्डमें हो वही ऊपरके स्थितिभेदके पहले, दूसरे, तीसरे अनुकृष्टि खण्डमें लिखना। ऊपरके स्थिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चरमदोळु बरेदु एकरूपिनोळिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१ । एकरूपं तेगदु शेषमनिद । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । नुपांतवोळ् बरेदु एकरूपमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । द्वितीयखंडदोळु बरेदु एकरूपमिदरोळ् २२ । ४ । ४ । ४ । १ एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४ । ४–१ । प्रथमखंडदोळबरेदु एकरूपमिवरोळ् । २२ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४––१ । चरमखंडव मेलिरिसि एकरूपमिवरोळ् । २२ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिद । २२ । ४ ।—१ । नुपांतवोळ् मेल्लिरिसि एकभागमनिदं । २२ । १ । विरळिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । षट्कसप्तकंगळं । ६ । ७ । क्रमदिदं प्रथमद्वितीयखंडंगळ मेलिरिसि चतुष्कपंचकंगळं । ४ । ५ । क्रमदिदमुपांतांतखंडंगळ मेलिरिसिदोडे यथाक्रमदिदमितिप्पुवु ।

६
२२ । ४ । ४ । ४ ।—१ →

← ७
२२ । ४ । ४ । ४ । ४—१

४
२२ । ४ ।—१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१

५
२२ । ४ । ४—१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१

अष्टमस्थितिविकल्पबंधयोग्याध्यवसायिगंळिवरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । । ४ । ४ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं चरमखंडवोळ् बरेदु । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । एकरूपमिवरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ ।४।४ । ४—१ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२।४।४।४।४।४।४—१ । उपांतदोळु बरेदु एकरूपमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं द्वितीयखंडदोळ् बरेदु । २२ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । एकरूपमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४ । ४ । ४—१ । प्रथमखंडदोळ् बरेदु एकरूपमिदरोळ् । २२ । ४ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४ । ४ । १ । चरमखंडद मेलिरिसुवुदु । एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४—१ । द्विचरमखंडव मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२।४—१ ।

६ ७
सप्तमविकल्पे २२ । ४ । ४ । ४–१ २२ । ४ । ४ । ४ । ४–१ ।

४
२२ । ४–१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४–१

५
२२–४ । ४–१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४–१

७ ४
२२ । ४–१
अष्टमविकल्पे २२ । ४ । ४ । ४ । ४–१ । २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४–१

भेदके सर्वद्रव्यमें-से तीनों खण्डोंका प्रमाण घटानेपर जो अवशेष रहे उसे चौथे खण्डमें लिखना। इस प्रकार नीचेकी स्थितिके और ऊपरकी स्थितिके अध्यवसायोंमें समानता पायी जाती है। इसका अभिप्राय यह है कि किसी जीवके जिन अध्यवसायोंसे नीचेकी स्थिति बँधती है उन ही अध्यवसायोंसे किसी जीवके ऊपरकी स्थिति बँधती है। इस समानताके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीयखंडद मेलिरिसि एकरूपमनिदं । २२ । १ । विरळिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । चतुष्कपंचक षट्कंगळं । ४ । ५ । ६ । क्रमदिदं द्वितीयादिखंडगळ मेलिरिसि सप्तकमं । ७ । प्रथमखंडद मेलिरिसिदोडे क्रमदिनिप्पुवु

७	४
	२२ । ४ ।—१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४—१ ।	२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१ →

५	६
← २२ । ४ । ४—१	२२ । ४ । ४ । ४—१
२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।—१	२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१

ई प्रकारविंदंनडेदु चरमोत्कृष्टस्थितिविकल्पस्थितिबंधाध्यवसायस्थानविकल्पंगळिवरोळु । २२ । ४ । १५ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । १५—१ चरमानुकृष्टिखंडदोळु बरेदु एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १४ ।—१ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । १४—१ । उपांतखंडदोळु बरेदु एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १३ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । १३—१ । द्वितीयखंडदोळु बरेदु एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १२ । १ । एकरूपं तेगदु बेरिरिसि शेषमनिदं । २२ । ४ । १२—१ । प्रथमखंडदोळबरेदु एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ११ । १ । एकरूपं तेगदु बेरिरिसि शेषमनिदं । २२ । ४ । ११—१ । चरमखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १० । १ । एकरूपं तेगदु बेरिरिसि शेषमनिदं । २२ । ४ । १०—१ । उपांतद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ९ । १ । एकरूपं तेगदु बेरिरिसि शेषमनिदं । २२ । ४ । १ द्वितीयखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ८ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ८ ।—१ । प्रथमखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ७ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ७—१ । चरमखंडदो मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ६ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ६—१ । उपांतद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ५ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ५ ।—१ । द्वितीयखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ४—१ । प्रथमखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । ३ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । ३ ।—१ । चरमखंडद मेलिरिसि एकरूपमिदरोळु । *२२ । ४ । २ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४ । २—१ । उपांतदोळिरिसि एकरूपमिदरोळु । २२ । ४ । १ । एकरूपं तेगदु शेषमनिदं । २२ । ४—१ । द्वितीयखं द मेलिरिसि एकरूपमनिदं । २२ । १ ।

५	६
२२ । ४ । ४—१	२२ । ४ । ४ । ४—१
२२ । ४ । ४ । ४ ४ । ४ । ४—१ ।	२२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४—१ ।

एवं गत्वा द्विचरमचरमविकल्पयोः—

होनेसे ही अनुकृष्टि रचना कही है। किन्तु नीचेकी स्थितिका जघन्य खण्ड ऊपरकी स्थितिके खण्डोंसे समान नहीं है। इसी प्रकार ऊपरकी स्थितिका सर्वोत्कृष्ट खण्ड नीचेकी स्थितिके खण्डोंसे मेल नहीं खाता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विरळिसि । ४ । ५ । ६ । ७ । चतुष्कपंचकषट्कंगळं । ४ । ५ । ६ । क्रमदिदं द्वितीयादिखंडंगळोळिरिसि शेषसप्तकमं । ७ । प्रथमखंडद मेलिरिसि उत्कृष्टायुःस्थितिबंधप्रायोग्यकषायपरिणामस्थानंगळ अनुकृष्टि प्रथमादिखंडंगळपरिणामपुंजंगळु क्रमदिनितिर्प्पुवु :—

	७	४	५	६
अंतानुकृष्टि १६ नेय	२२।४। ४–१	२२।४। –१	२२।४।४ –१	२२।४।४।४–१
	२२।४। ८–१	२२।४।५ –१	२२।४।६ –१	२२।४।७ –१
स्थितिय कोष्ठगळु	२२।४।१२–१	२२।४।९ –१	२२।४।१०–१	२२।४।११–१
		२२।४।१३–१	२२।४।१४–१	२२।४।१५–१
	६	७	४	५
उपांतानुत्कृष्टि १५ नेय	२२।४।३ –१	२२।४।४ –१	२२।४। –१	२२।४।४ –१
	२२।४।७ –१	२२।४।८ –१	२२।४।५ –१	२२।४।६ –१
स्थितिय कोष्ठ	२२।४।११–१	२२।४।१२–१	२२।४।९ –१	२२।४।१०–१
			२२।४।१३–१	२२।४।१४–१

यितायुष्यकर्म्मस्थितिबंधाध्यवसायंगळु पेळल्पट्टुवनंतरं ज्ञानावरणादिसप्तप्रकृतिगळोळु स्थितिबंधाध्यवसायंगळु पेळल्पडुगुमदें तें दोडे मोहनीयकर्म्मजघन्यस्थितियंतःकोटीकोटिसागरोपम प्रमितमक्कु । सा अंतः को २ । ओंदु सागरोपमक्के पत्तु कोटीकोटियद्धारपल्यगलागुत्तं विरलु मोहनीयजघन्यस्थितियंतःकोटीकोटिसागरोपमंगळगेनितद्धारपल्यं गळप्पुवेंदु त्रैराशिकमं माडिदोडे प्र सा १ । फ । पल्य १० । को २ । इ । सा । अंतः को २ । लब्धमोहनीयजघन्यस्थितिगिनितद्धारपल्यंगळप्पुवु । प १० । सा १ । को २ । सा अंतः को २ । इदनपवर्त्तिसिदोडे सागरोपमक्के सागरोपम पोगि शेष पल्यंगळिनितप्पुवु । प १० । को २ । अंतः को २ । यिदं संख्यातपल्यमेंदु स्थापिसल्पडुगु । प १ । मत्तमेकसागरोपमक्के पत्तु कोटीकोटियद्धारपल्यंगळागुत्तं विरलु मोहनी-

	७	४	५	६
अन्तानुकृष्टिः—	२२।४।४–१	२२।४–१	२२।४।४–१	२२।४।४।४–१
	२२।४ ८–१	२२।४।५–१	२२।४।६–१	२२।४।७–१
	२२।४।१२–१	२२।४।९–१	२२।४।१०–१	२२।४।११–१
		२२।४।१३–१	२२।४।१४–१	२२।४।१५–१
	६	७	४	५
उपान्तानुकृष्टिः—	२२।४।३–१	२२।४।४–१	२२।४–१	२२।४।४–१
	२२ ४।७–१	२२।४।८–१	२२।४ ५–१	२२।४।६–१
	२२।४।११–१	२२।४।१२–१	२२।४।९–१	२२।४।१०–१
			२२।४।१३–१	२२।४।१४–१

आयुषः स्थितिबन्धाध्यवसाया उक्ताः शेषकर्मणामुच्यन्ते—तत्र मोहनीयस्य निरन्तरस्थितिविकल्परचनेयं—

इस प्रकार आयुके बन्धके अध्यवसाय कहे । शेष कर्मोंके कहते हैं—

उनमें-से मोहनीयकी जघन्य स्थिति संख्यात पल्य प्रमाणसे लगाकर एक-एक समय बढ़ते हुए उस जघन्यस्थितिसे संख्यात गुणी उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त जो स्थितिके भेद होते हैं उनकी स्थिति रचनामें ऐसा △ आकार जानना । इसमें जो नीचेकी सीधी लकीर है उसे
|

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योत्कृष्टस्थिति सप्ततिकोटाकोटिसागरोपमंगळ्गे येनितद्धारपल्यंगळप्पुवें दु त्रैराशिकमं माडिदोडे। प्र। सा। फ। प १०। को २। इ। सा ७०। को २। बंद लब्धं मोहनीयोत्कृष्टस्थितिगिनितद्धारपल्यंगळप्पुवु। प १०। को २। ७० को २। यिनितुं पल्यंगळं जघन्यस्थितियं नोडलु संख्यातगुणितपल्यंगळें दु स्थापिसल्पट्टुवु। प १ १। जघन्यस्थितियमेले समयोत्तरक्रमदिदमुत्कृष्टस्थितिपर्य्यंतं निरंतरस्थितिविकल्पंगळितिप्पुवु :—

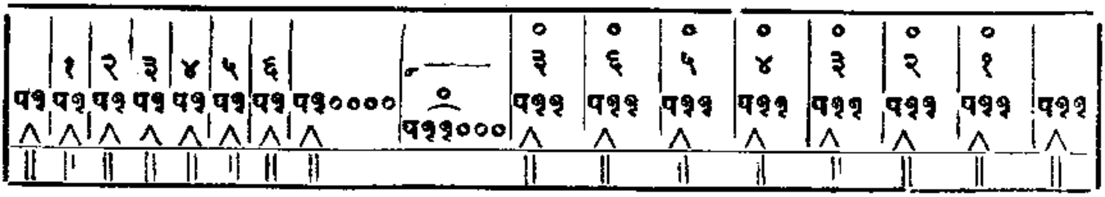

इल्लि आदि प १। अंते प १। १। शुद्धे प १। १। वड्ढिहिदे प १। १। रूवसंजुदे ठाणा प १। १ / १ एंदिनितुं मोहनीयस्थितिस्थानविकल्पंगळप्पुवु। स्थितिविकल्पंगळ नानागुणहानिशलाकेगळिंदं भागिसुत्तं विरलु गुणहान्यायाममक्कु प १ १ / छे व छे / a मिदं द्विगुणिसिदोडे दोगुणहानि-

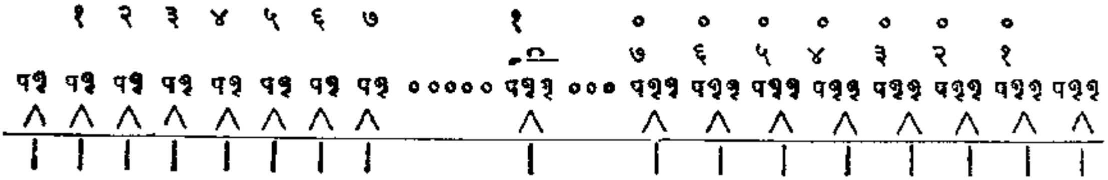

अस्यां नानागुणहानिशलाकाभिर्भक्तायां गुणहान्यायामः प १ १ / छे व छे / a अयं च द्विगुणितो दोगुणहानिः

आबाधाकालके समय जानना। उसके ऊपर प्रथम समयसे लगाकर अन्तिम समय पर्यन्त निषेक घटते जाते हैं। इसीसे नीचेसे चौड़ा और ऊपरसे सकरा आकार बनाया है। यहाँ जितने स्थितिके भेद होते हैं उन्हें मोहनीयकी स्थितिबन्धाध्यवसाय रचना स्थितिका प्रमाण जानना। उसको नानागुणहानि शलाकासे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे गुणहानि

१. अत्र आदी प १ अन्ते प १ १ शुद्धे प १ १ वड्डिहिदे— प १। १ रूवसंजुदे ठाणा प १। १ / १

अधिकोऽयं पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यक्कुं प १ १ / छे व छे / a नानागुणहानिशलाकेगळ्गे द्विकसंवर्गमं माडिदोडन्योन्याभ्यस्तराशियक्कुं प / a मोह-
नीयविवक्षेयिदं कर्म्मस्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळु द्रव्यमं बुदक्कुं ≡ a प प प / a a a स्थितिविकल्पं-
गळु स्थितियक्कुं। यिवर समुच्चयसंदृष्टि :—

द्रव्य	स्थिति	गुण	दो गुण		अन्यो
≡ a प प प / a a a	प १ १	प १ १ / छे व छे / a	प १ १ । २	नाना गु छे a छे / a	प / a
६३००	४८	गु ८	१६	६	६४

इंतागुत्तं विरलु रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशियिदं द्रव्यमं भागिसिदोडधिकसंकलनविवक्षेयिदं प्रथमगुणहानिद्रव्यमक्कुं ≡ a प प प / ० a a a / १ / अ द्वितीयादिगुणहानिद्रव्यंगळु द्विगुणद्विगुणक्रमदिदं पोगि चरमगुणहानिद्रव्यमिनितक्कुं ≡ a प प प अ / ० a a a गु २ / १ / अ ई सर्व्वगुणहानिद्रव्यंगळोळु प्रथमगुणहानि-

---

प १ १ । २ । / छे-व-छे / a नानागुणहानिशलाकामात्रद्विकसंवर्गेऽन्योन्याभ्यस्तः प / a स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानि द्रव्यं ≡ a प प प / a a a रूपोनान्योन्याभ्यस्तेन द्रव्ये भक्तेऽधिकसंकलनविवक्षया प्रथमगुणहानिद्रव्यं ≡ a प प प / अ a a a
द्वितीयादिगुणहानिषु द्विगुणद्विगुणं भूत्वा चरमायामेतावत् ≡ a प प प अ / अ a a a २ तत्र प्रथमगुणहानिद्रव्ये ≡ a प प प / अ a a a

---

आयाम जानना। यहाँ पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेदोंसे हीन पल्यके अर्द्धच्छेदोंके प्रमाणका असंख्यातवाँ भाग गुणहानि शलाकाका प्रमाण जानना। गुणहानि आयामका दूना दो गुणहानिका प्रमाण होता है। तथा नानागुणहानि शलाका प्रमाण दोके अंक रखकर परस्परमें गुणा करनेसे जो प्रमाण हो वही अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण है। सो पल्यके असंख्यातवाँ भाग प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि है। असंख्यात लोकको तीन बार पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो उतने स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान हैं। वही यहाँ द्रव्यका प्रमाण जानना। इस द्रव्यमें एक हीन अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भाग देनेपर जो प्रमाण आवे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यमनिदं ≡ ० प प प अद्धाणेण गु सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि ≡ ० प प प
अ ० ० ०. अ ० ० ०

तं रूऊण अद्धाण अद्धेण ग/२ ऊणेण णिसेयहारेण गु ३/२ मज्झिमधणमवहरिदे पचयं—

≡ ० प प प प गु गु ३/२ तस्मिन् प्रचये अधिकसंकलनविवक्षया रूपाधिकगुणहान्या गुणिते प्रथम-
अ ० ० ०

निषेको भवेत् ≡ ० प प प गु एंदितिदु प्रथमनिषेकमक्कुं। द्वितीयादिनिषेकंगळेकैकचयाधि-
अ ० ० ० गु गु ३/२

कंगळागुत्तं पोगि प्रथमगुणहानिचरमनिषेकं रूपोनगुणहानिमात्रचयंगळि नधिकमक्कुं—
≡ ० प प प गु २ ई प्रकारदिदं गुणहानि प्रति द्रव्यमं चयमुं द्विगुणद्विगुणंगळ रचनाविशेषं-
अ ० ० ० गु गु ३/२

गळागुत्तं पोगि चरमगुणहानिद्रव्यमिदु ≡ ० प प प अ इदं अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिम
अ ० ० ० २

आद्धाणेण खडिदे मज्झिमधणमागच्छदि ≡ ० प प प तं रूऊणद्धाण ८ अद्धेण ८/२ ऊणेण णमेयभागहारेण
अ ० ० ० गु

गु ३/२ अवहरिदे पचयो ≡ ० प प प — अयमधिक ≡ ० प प प संकलनविवक्षया रूपाधिकगुणहान्या
अ ० ० ० गु गु ३/२ अ ० ० ०

गुणितः प्रथमनिषेकः ≡ ० प प प गु द्वितीयादिषेका एकैकचयाधिका भूत्वा चरमनिषेको रूपोनगुणहानि-
अ ० ० ० गु गु ३/२

वही प्रथम गुणहानिका प्रमाण है। इस प्रथम गुणहानिसे द्वितीयादि गुणहानियोंमें अन्तकी गुणहानि पर्यन्त दूना-दूना द्रव्य जानना।

प्रथम गुणहानिके द्रव्यमें गुणहानि आयामका प्रमाणरूप गच्छका भाग देनेपर मध्यम धनका प्रमाण आता है। गच्छके बीचके निषेकोंके प्रमाणको मध्यमधन कहते हैं। मध्यम-धनको—एक हीन गुणहानि प्रमाणका आधाको निषेक भागहार जो दो गुणहानि है उसमें घटाकर जो शेष रहे उससे भाग देनेपर चयका प्रमाण होता है। यहाँ निषेकोंका प्रमाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धणमागच्छदि ≡ ० प प प अ / ०-अ ० ० ० गु ३/२ तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयहारेण मज्झिमधणमवहरिदे

पचयं ≡ ० प प प अ / ०-अ ०·० ० गु गु ३/२२ ई प्रचयमधिकसंकलनविवक्षेयिदं रूपाधिकगुणंगळप्पुवु। गुणहानियिदं

गुणिसिदोडे चरमगुणहानिप्रथमनिषेकमक्कुं। ≡ ० प प प अ गु / ०-अ ० ० ० गु ३/२ द्वितीयादिनिषेकंगळु एकै-

कचयाधिकंगळा गुत्तं पोगि चरमगुणहानिचरमनिषेकदोळु रूपोनगुणहानिमात्रचयंगळु—

≡ ० प प प अ गु / ०-अ ० ० ० २ गु गु ३/२ अधिकंगळप्पुवु। कूडिदोडधिक चरमनिषेकं दोगुणहानि मात्रचयंग-

---

मात्रचयाधिको भवति— ≡ ० प प प गु २ / ०-अ ० ० ० गु गु गु ३/२ एवं गुणहानिं गुणहानिं प्रति द्विगुणद्विगुणचयाभ्यां रचनां कृत्वा

चरमगुणहानौ द्रव्ये ≡ ० प प प अ / ०-अ ० ० ० २ अद्धाणेण खण्डिदे मज्झिमधणमागच्छादि ≡ प प प अ / ०-अ ० ० ० २ गु

तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयहारेणवहरिदे पचयो ≡ ० प प प अ / ०-अ ० ० ० गु गु ३ २/२ अयं रूपाधिकगुणहान्या गुणितः

प्रथमनिषेकः ≡ ० प प प अ गु / ०-अ ० ० ० २ गु गु ३/२ द्वितीयादिनिषेका एकैकचयाधिका भूत्वा चरमनिषेको

अधिक-अधिक है अतः उस चयके प्रमाणको एक अधिक गुणहानि आयामके प्रमाणसे गुणा करनेपर जो प्रमाण हो वही प्रथम निषेकका प्रमाण जानना। उसमें क्रमसे एक-एक चय मिलानेपर द्वितीयादि निषेकोंका प्रमाण होता है। एक हीन गुणहानि प्रमाण चय मिलनेपर अन्तिम निषेक होता है। प्रत्येक गुणहानिमें चयका प्रमाण दूना-दूना होता जाता है। इस प्रकार रचना करें। प्रथम गुणहानिके द्रव्यको अन्योन्याभ्यस्त राशिके आधे प्रमाणसे गुणा

१. म ०डे डरं०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ळप्पुवु । ≡ a प प प अ गु २ / अ a a a गु गु ३ २   अंकसंदृष्टियुं तोरल्पडुगुमन्नेवरमर्त्थसंदृष्टिय समुच्चय-

रचनेयिदु :—

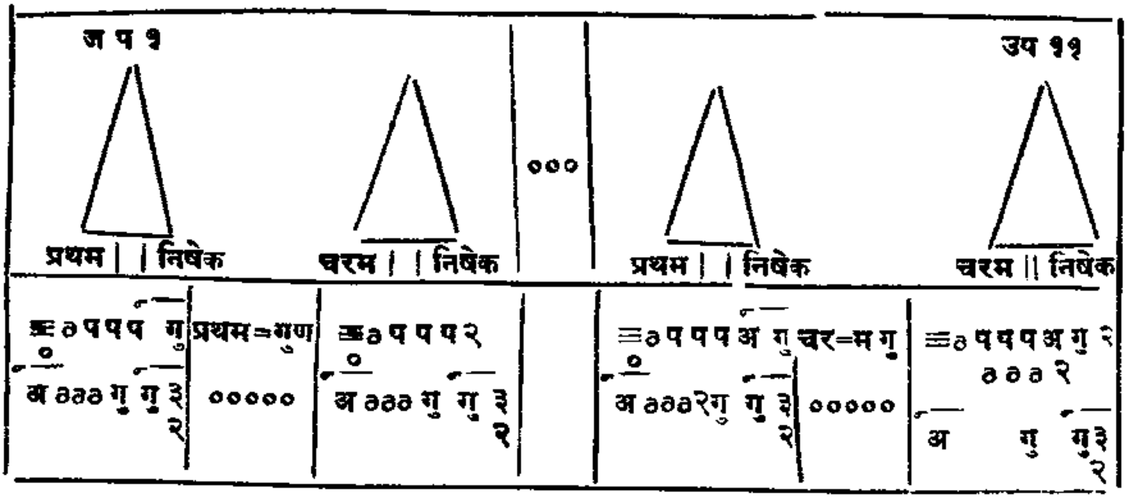

रूपोनगुणहानिमात्रचया   ≡ a प प प अ गु / अ a a a गु गु ३ २ / २ धिको भवति   ≡ a प प प अ गु २ / अ a a a गु गु ३ २ / २

समुच्चयरचना ।

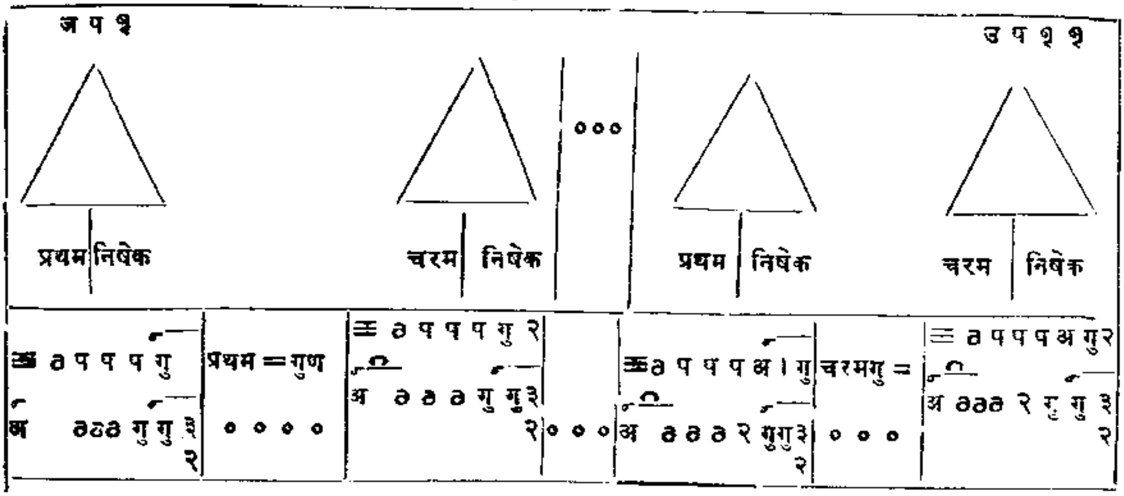

१ करनेपर अन्तिम गुणहानिमें द्रव्यका प्रमाण होता है। उसमें गुणहानि आयामरूप गच्छका भाग देनेपर मध्यमधन होता है। उस मध्यमधनमें एक हीन गच्छके आधेसे हीन दो गुण-हानिका भाग देनेपर चयका प्रमाण होता है। उसको एक अधिक गुणहानि आयामसे गुणा

अंकसंदृष्टियोळ "रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं तु चरिमगुणदव्वं" एंदु चरमगुणहानिद्रव्यमधिकसंकलनविवक्षेयिदं प्रथमगुणहानिद्रव्यमिनितक्कुं। संदृष्टि ६३०० / ६३ मेले चरमगुणहानिपर्यंतं द्विगुण द्विगुणक्रमदिं पोगि चरमगुणहानिद्रव्यमन्योन्याभ्यस्तार्द्धगुणितमक्कुं

१०० । १
१०० । २
१०० । ४
१०० । ८
१०० । १६
१०० । ३२

इल्लि प्रथमगुणहानिद्रव्यमं १०० अद्धाणेण खंडिदे मज्झिम धणमागच्छदि १०० / ८ तं रूऊण अद्धाण अद्धेण ऊणेण णिसेयहारेण मज्झिमधणमवहरिदे पचयं १०० / ८।८ तं रूवहियगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेयं १०० ८ / ८। ८ ३ / २ यिदनपवर्त्तिसिदोडे रूपाधिकगुणहानिमात्र चयंगळप्पुवु। ८। द्वितीयादिनिषेकंगळेकैक-

---

अंकसंदृष्टौ रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं, अधिकसंकलनविवक्षया प्रथमगुणहानिद्रव्यं ६३०० / ६३ उपरि द्विगुणं द्विगुणं भूत्वा चरमगुणहानावन्योन्याभ्यस्तार्धगुणितं स्यात्

१०० । १
१०० । २
१०० । ४
१०० । ८
१०० । १६
१०० । ३२

अत्र प्रथमगुणहानिद्रव्यं १०० अद्धाणेण खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि १०० / ८ तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयहारेण अवहरिदे पचयं १०० / ८। ८। ३ / २ तं रूवाहियगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेयो १०० । ८ / ८। ८। ३ / २ अपवर्तितो रूपाधिकगुणहानिमात्रचयः स्यात् ८

करनेपर प्रथम निषेक होता है। द्वितीयादि निषेकोंमें क्रमसे एक-एक चय अधिक होता है। एक हीन गुणहानि प्रमाण चय मिलनेपर अन्तिम निषेक होता है। इस प्रकार स्थितिके भेदोंमें स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानका बँटवारा कहा। अब इसी कथनको अंक संदृष्टि द्वारा दिखाते हैं—

सब स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान तिरसठ सौ हैं। उसमें एक हीन अन्योन्याभ्यस्त राशि तिरसठसे भाग देनेपर सौ पाये। सौ प्रथम गुणहानिका द्रव्य जानना। सौमें गच्छ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चयाधिकंगळागुत्तं पोगि प्रथमगुणहानिचरमनिषेकदोळु दोगुणहानिमात्र चयंगळप्पुवु । ८ । २ ॥ चरमगुणहानि द्रव्यमुमनिदं । ३२०० । गुणहानियिंदं भागिसिदोडे मध्यमधनमक्कु ३२०० / ८ मा मध्यमधनमं रूपोनगुणहान्यर्द्धरहित दोगुणहानियिंदं भागिसिदोडे चरमगुणहानिसंबंधि प्रचयमक्कु ३२०० / ८ । ८ । ३ / २ मिदं रूपोनगुणहानियिंदं गुणिसिदोडे चरमगुणहानिप्रथमनिषेकमक्कुं ३२०० । ८ / ८ । ८ । ३ / २ अपवर्त्तितमिदु ३२ । ८ । मेले द्वितीयादि निषेकंगळोळु एकैकचयाधिकमागुत्तं पोगि चरमगुणहानि चरमनिषेकदोळु दोगुणहानिमात्रचयंगळप्पुवु । ३२ । ८ । २ । मितिनितक्कुं । संदृष्टि :—

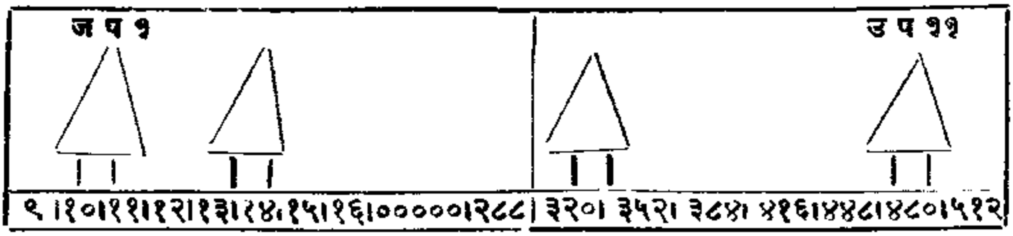

द्वितीयादिनिषेकः एकैकचयाधिको भूत्वा चरमो दोगुणहानिमात्रचयो भवति ८ । २ चरमगुणहानौ द्रव्यं ३२०० गुणहान्या भक्तं मध्यमधनं ३२०० / ८ तदेव रूपोनगुणहान्यर्धोनदोगुणहान्या भक्तं प्रचयः ३२०० / ८ । ८ । ३ / २ स एव रूपाधिक-गुणहानिना गुणितः प्रथमनिषेकः— ३२०० । ८ / ८ । ८ । ३ / २ अपवर्तितः ३२ । ८ । ततो द्वितीयादिनिषेकः एकैकचयाधिको भूत्वा चरमो दोगुणहानिमात्रचयो भवति ३२ । ८ । २ संदृष्टिः—

गुणहानि आठसे भाग देनेपर साढ़े बारह मध्यधन जानना। एक हीन गच्छ सातका आधा साढ़े तीनको दो गुणहानि सोलहमें-से घटानेपर साढ़े बारह रहे। मध्यधनमें साढ़े बारहका भाग देनेपर एक पाया सो चयका प्रमाण जानना। उसको एक अधिक गुणहानिके प्रमाण नौसे गुणा करनेपर नौ पाया। यही प्रथम निषेक जानना। द्वितीयादि निषेकोंमें एक-एक चय अधिक होता है। एक हीन गुणहानिका प्रमाण सात है। सात चय मिलनेपर सोलह हुए। यही अन्तिम निषेक जानना। द्वितीयादि गुणहानियोंमें द्रव्य निषेक चय सब दूना-दूना होते हैं। अन्तिम गुणहानिमें प्रथम गुणहानिके द्रव्य सौको अन्योन्याभ्यस्त राशिके आधे बत्तीससे गुणा करनेपर बत्तीस सौ तो द्रव्य जानना। उसमें गच्छ आठसे भाग देनेपर मध्य धन चार सौ हुआ। उसमें एक हीन गुणहानिके आधेसे हीन दो गुणहानिके प्रमाण साढ़े बारहका भाग देनेपर बत्तीस पाया। वही चय जानना। द्वितीयादि निषेकोंमें एक-एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंतु स्थितिविकल्पंगळुमवर स्थितिबंधाध्यवसायंगळुं स्थापिसल्पट्टुवल्लि स्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळगे अनुकृष्टिविधानमुंटें दु पेळदपरु :—

पल्लासंखेज्जदिमा अणुकड्ढी तत्तियाणि खंडाणि ।
अधियकमाणि तिरिच्छे चरिमं खंडं च अहियं तु ॥९५४॥

पल्यासंख्यातैकभागोनुकृष्टिस्तावन्मात्राणि खंडान्यधिकक्रमाणि तिर्यक्चरमखंडं चाधिकं तु ॥

जघन्यस्थिति मोदल्गोंडु तदुत्कृष्टस्थितिपर्यंतमिर्द्द स्थितिविकल्पंगळ स्थितिबंधाध्यवसायंगळगे प्रत्येकमनुकृष्टि विधानमुंटा अनुकृष्टिपदप्रमाणमेनितक्कुमेंदोडे स्थितिबंधाध्यवसायगुणहान्यायाममिदं प ११ / छे व छे a नोडलु संख्यातैकभागमक्कुमप्पुदरिदं प ११ / छे व छे १ a इदनपवर्त्ति-

---

ज प १ उ प ११

९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। ०००। २८८। ३२०। ३५२। ३८४। ४१६। ४४८। ४८०। ५१२।

तेषामनुकृष्टिविधानमाह—

अनुकृष्टिपदं पल्यासंख्यातैकभागः प / a स्थितिबन्धाध्यवसायगुणहान्यायामस्य प १ । १ / छे–व–छे

चय मिलाते हुए एक हीन गुणहानि प्रमाण सात चय मिलानेपर पाँच सौ बारह अन्तिम निषेक जानना। यह कथन अंक संदृष्टिसे जानना।

यहाँ भी प्रथम गुणहानिके प्रथम निषेकरूप अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थितिके कारण जानना। द्वितीय निषेक प्रमाण अध्यवसाय स्थान एक समय अधिक स्थितिके कारण जानना। इसी प्रकार अन्तिम गुणहानिके अन्तिम निषेक प्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान उत्कृष्ट स्थितिके कारण जानना ॥९५३॥

यहाँ एक स्थिति भेद सम्बन्धी अध्यवसायोंमें नाना जीवोंकी अपेक्षा खण्ड पाये जाते हैं। अथवा किसी जीवके जिन अध्यवसायोंसे नीचे की स्थिति बँधती है किसी अन्यके उन्हींसे ऊपरकी स्थिति बँधती है। इस प्रकार ऊपर-नीचेमें समानता होनेसे अनुकृष्टि विधान कहते हैं—

स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंमें जो गुणहानि आयामका प्रमाण कहा है उसमें संख्यातका भाग देनेपर पल्यका असंख्यातवाँ भाग होता है। उतना ही अनुकृष्टि रचनामें गच्छका प्रमाण जानना। उतने ही अनुकृष्टिके खण्ड होते हैं। विवक्षित भेदरचनामें उन खण्डोंकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिदोडे पल्यासंख्यातैकभागमक्कुमें दु पेळल्पट्टुदु प अनुकृष्टिखंडंगळुं तावन्मात्रंगळेयप्पुवंतागुत्तलुं
a

तिर्य्यक्कागिचयाधिकक्रमंगळप्पुवेन्नेवरं चरममन्नेवरं अंतुचयाधिकक्रमंगळादोडं स्वस्वजघन्यानुकृष्टिखंडमं नोडलुं स्वस्वोत्कृष्टानुकृष्टिखंडं विशेषाधिकमेयक्कुं। द्विगुणत्रिगुणमागदें बुदर्त्थं ॥ आविशेषप्रमाणविज्ञापनार्त्थं मुंदणगाथासूत्रमं पेळ्दपरु। :—

लोगाणमसंखमिदा अहियपमाणा हवंति पत्तेयं।
समुदायेणवि तच्चिय ण हि अणुकड्ढिम्मि गुणहाणि ॥९५५॥

लोकानामसंख्यमितान्यधिकप्रमाणानिभवंति प्रत्येकं। समुदायेनापि तावन्मात्रं न ह्यनुत्कृष्टौ गुणहानिः ॥

अनुकृष्टि, तिर्य्यक् प्रचयप्रमाणंगळुं गुणहानिं प्रति द्विगुणद्विगुणंगळादोडमाळापसामान्यदिदं प्रत्येकमसंख्यातलोकप्रमाणंगळप्पुवु। एंतेंदोडे प्रथमगुणहानिप्रचयमनिदं ≡a प प प / अ a a a गु गु ३/२ अणुकड्ढिपदेण हिदे पचये पचयंतु होदि तेरिच्छे एंदितनुकृष्टिपददिंदमूर्ध्वप्रचयमं भागिसिदोडेतिर्य्यगनुकृष्टि प्रचयप्रमाणमक्कु ≡a प प प / अ a a a गु गु ३/२ प/a मिदनपवर्त्तिसिदोडसंख्यातलोकमात्रमक्कुमप्पुदरिंदमधिकप्रमाणसंख्यातलोकमात्रमें दितु पेळल्पट्टुदु। ईयसंख्यात-

संख्यातैकभागे प। १। १ अपवर्तिते तत्सिद्धे। अनुकृष्टिखंडानि तावन्ति तिर्यक् चयाधिकक्रमाणि। तथापि
छे-व-छे१
a

तज्जघन्यात्तदुत्कृष्टविशेषाधिकमेव न द्विगुणादि ॥९५४॥ तद्विशेषप्रमाणं ज्ञापयति—

अनुकृष्टिप्रचयस्य गुणहानि गुणहानिं प्रति द्विगुणत्वेऽपि तत्प्रमाणान्यालापसामान्येन प्रत्येकमसंख्यातलोका

रचना तिर्यक्रूपसे बराबरमें होती है। तथा प्रथम खण्डसे लेकर क्रमसे उनमें एक-एक चय अधिक होता है, फिर भी जघन्य प्रथम खण्डसे उत्कृष्ट अन्तिम खण्ड कुछ अधिक प्रमाणवाला है, दुगुना-तिगुना नहीं है ॥९५४॥

उस विशेष प्रमाणको कहते हैं—

अनुकृष्टिका चय प्रत्येक गुणहानिमें दूना-दूना होता है फिर भी सामान्यसे असंख्यात लोकमात्र है; क्योंकि विवक्षित गुणहानिकी ऊर्ध्वरचनामें जो चयका प्रमाण है उसमें अनुकृष्टि गच्छका भाग देनेपर अनुकृष्टिके चयका प्रमाण आता है, सो स्थूलरूपसे असंख्यात लोकप्रमाण ही है। उसमें प्रथम खण्डसे एक-एक चय अधिक द्वितीयादि खण्ड होते हैं।

१. मु. अणुकिट्टिम्मि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकमात्रप्रचयदिंदं खंडंगळु प्रत्येकमधिकंगलादोडमा चयसहितमागियुं तावन्मात्रमेयक्कुमसंख्यात-लोकमात्रमेयक्कु मनंतमागदें बुदत्थं । मेकें दोडसंख्यातलोकंगळसंख्यातलोकमात्रविकल्पंगळप्पुदरिंद। मदु कारणदिंदं तिर्य्यगनुकृष्टिपददोळु गुणहानि यें बुदिल्लें दु पेळल्पट्टुदु। सर्व्वखंडंगळु उत्कृष्टंगळु रूपोनपदमात्रचयाधिकंगळप्पुदरिंदं । यितनुकृष्टिपदमुमनुकृष्टिचयमुमरियल्पडुत्तं विरलु इन्ननुकृष्टि-खंडंगलोळु स्थितिबंधाध्यवसायंगळु पेळल्पडुगु । मदें तें दोडे मोहनीय सर्व्वस्थितिविकल्पंगळोळु प्रत्येकमूद्ध्वंरूपदिनिर्द्द स्थितिबंधाध्यवसायंगळनुत्कृष्टिरचने बरेदु बळिक्कं पेळल्पडुगुं ।

उत्कृष्ट स्थितिगुणहानि चरम १६ △ ||	≡ ० प प प गु २ अ ० ० ० गु गु ३ २	≡ ० प प प गु २ । प ० । २ अ ००० गु गु ३ प २ ०
गुणहानि द्विचरम १५ △ ||	≡ ० प प प गु २ अ ० ० ० गु गु ३ २	≡ ० प प प गु२ प ० । २ अ ००० गु गु३ प २ ०
० ० ०	० ० ०	० ० ०
गुणहानि द्वितीयस्थिति १० △ ||	≡ ० प प प गु अ ० ० ० गु गु ३ २	२ ≡ ० प प प गु प ० । २ अ ००० गु गु३ प २ ०
गुणहानि प्रथमजघन्य- स्थिति क ९ △ ||	≡ ० प प प गु अ ० ० ० गु गु ३ २	≡ ० प प प गु प ० । २ अ गु गु ३ प २ ०

एव भवन्ति । तत्तद्गुणहान्यूर्ध्वप्रचये तदालापेऽनुकृष्टिपदेन भक्ते तत्तत्प्रमाणत्वप्रसिद्धः । तेन तेनाधिकखंडान्यपि तदालापानि । असंख्यातलोकानामसंख्यातलोकविकल्पत्वात् । न चानुकृष्टौ गुणहानिरस्ति सर्वेषामुत्कृष्टखंडानां रूपोनपदमात्रचयैरेवाधिक्यात् । एवमनुकृष्टेः पदचयौ ज्ञापयित्वा तत्खंडेषु स्थितिबन्धाध्यवसाया उच्यन्ते । तद्रचितसंदृष्टिरियं—

तथापि उन सबका प्रमाण असंख्यात लोक ही कहा जाता है; क्योंकि असंख्यात लोकके भेद भी असंख्यात लोक ही होते हैं। तथा अनुकृष्टिके गच्छमें गुणहानि रचना नहीं है; क्योंकि सर्वोत्कृष्ट खण्डोंमें जघन्य खण्डसे एक हीन गुणहानिके गच्छ प्रमाण चयोंकी अधिकता पायी जाती है। इस प्रकार अनुकृष्टिके गच्छ और चयका प्रमाण बतलाकर उन अनुकृष्टिके खण्डोंमें स्थितिबन्धाध्यवसायोंका प्रमाण कहते हैं—

≡ ∂ प प प गु २– प ० – ∂ २ अ ∂∂∂ गु गु ३ प २ ∂	२ ≡ ∂ प प प गु प ० ० ∂ २ अ ∂∂∂ गु गु ३ प २ ∂	३ ≡ ∂ प प प गु २ प ० – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	००००००
≡ ∂ प प प गु २ प ० – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	≡ ∂ प प प गु २ प ० – ∂ २ अ ∂∂∂ गु गु गु ३ प २ ∂	२– ≡ ∂ प प प गु प ० – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	००००००
← ०००	०००	०००	०००००० →
३– ≡ ∂ प प प गु प – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	४– ० ≡ ∂ प प प गु प ० – ∂ २ अ ∂ ∂∂ गु गु ३ प २ ∂	५– ≡ ∂ प प प गु प – – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	००००००
२– ≡ ∂ प प प गु प ० – ∂ २ अ ∂∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	३ ≡ ∂ प प प गु प ० – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	४ ≡ ∂ प प प गु प – – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂	००००००

उ गुणहानिचरम १६ △ |	≡ ∂ प प प गु २ ᗝ १– अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ २	ᗝ ≡ ∂ प प प गु २–प ᗝ –∂ २ अ ∂∂∂ गु गु ३ प २ ∂
गुणहानिद्विचरम १५ △ |	ᗝ ≡ ∂ प प प गु २ ᗝ १– अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ २	ᗝ ᗝ ≡ ∂ प प प गु २– प ᗝ – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂
०००	०००	००० →
गुणहानिद्वितीय स्थिति १० △ |	२– ≡ ∂ प प प गु ᗝ १– अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ २	– ᗝ ≡ ∂ प प प गु प – – ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂
गुणहानि प्रथम जघन्यस्थिति ९ △ |	१– ≡ ∂ प प प गु ᗝ १– अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ २	१– ᗝ ≡ ∂ प प प गु प ᗝ १– ∂ २ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ प २ ∂

मध्यधन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

	पदहतमुखमादिधनं	व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणोगच्छ उत्तरधनं
० ० ≡ a प प प चय प गु२ प ० — a a।२ अ aaa गु गु ३ प २ a	१— ≡ a प प प गु २— प प १० १— a।२ अ aaa गु गु ३ प २ a	१— ≡ a प प प प प ० १a।२ a अ a a a गु गु३ प २ a
० ० — ≡ a प प प प गु२ प ० — a।२ अ a a a गु गु३ प २ a	१— १— ≡ a प प प गु २— प प १० १— a।२e अ aaa गु गु३ प २ a	१० ≡ a प प प प प १० १a।२ a अ a a a गु गु३ प २ a
⁞	⁞	⁞
१० २ १० ≡ a प प प चय प गु प १० १— a।२ अ a a a गु गु३ प २ a	२— १० ≡ a प प प गु प प १० १— a।२a अ a a a गु गु३ प २ a	१० ≡ a प प प प प १० १a।२ a अ a a a गु गु३ प २ a
१० १— १— ≡ a प प प चय प गु प १० a १—२ a।२ अ a a a गु गु ३ प २ a	१— १० ≡ a प प प गु— प प १० १— a।२a अ a a a गु गु ३ प २ a	१० ≡ a प प प प प १० १— a।२ a अ aaa गु गु३ प २ a

उभयधनयुतिनिषेकप्रमाणमक्कु ।

१— ० ≡ a प प प गु २— प ० १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	२— ० ≡ a प प प गु २— प ० ० a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	३— १० ≡ a प प प गु २— प १० १— a २ अ a a a गु गु३ २	० ० ०
० ≡ a प प प गु २—प ० १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	१— ० ≡ a प प प २—प ० १— a २ अ a a a गुगु ३ प २ a	२— १० ≡ a प प प गु २— प १० १— a २ अ aaa गु गु३ प २ a	० ० ०
⁞	⁞	⁞	⁞
३— ० ≡ a प प प गु प ० १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	४— ० ≡ a प प प गु प १— १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	५— १० ≡ a प प प गु— प १० १— a २ अ aaa गु गु ३ प २ a	० ० ०
२— ० ≡ a प प प गु प ० १— a २ अ aaa गु गु ३ प २ a	३— ० ≡ a प प प गु प ० १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	४— १० ≡ a प प प गु— प १० १— a २ अ a a a गु गु३ प २ a	० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यकषायपरिणामस्थानविकल्पंगळिर्द ≡ a प प प गु / ० अ a a a गु गु३ / २ द्रव्यमें दुद

प्रथमगुणहानिचयमनिदं ≡ a प प प / ० अ a a a गु गु३ / २ अनुकृष्टिपदर्दिदं भागिसिदोडे तिर्य्यगनुकृष्टिचयमक्कु ।

१ – १ – ≡ a प प प गु २ – प चय प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – ≡ a प प प गु २ – प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – ≡ a प प प प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a
१ – १ – १ – ≡ a प प प गु २ – प चय प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – १ – ≡ a प प प गु २ – प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – ≡ a प प प प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a
० ० ०	० ० ०	० ० ०
२ – १ – १ – ≡ a प प प गु प चय प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	२ – १ – ≡ a प प प गु – प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – ≡ a प प प प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a
१ – १ – १ – ≡ a प प प गु प चय प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – १ – ≡ a प प प गु – प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a	१ – ≡ a प प प गु प प १ – १ – a २ a अ a a a गु गु३ प २ a
चरमखंडानि	आदिधनानि	उत्तरधनानि

←

जघन्यस्थितिबन्धप्रायोग्यकषायपरिणामाः १ – / ≡ a प प प गु / ० १ – / अ a a a गु गु ३ / २ द्रव्यं प्रथमगुणहानिच

जघन्य स्थितिबन्धके योग्य कषाय परिणाम तो द्रव्य है। प्रथम गुणहानिमें जो चय का प्रमाण है उसको अनुकृष्टि गच्छ-पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देनेपर अनुकृष्टि चयका प्रमाण होता है। तथा 'व्येक पदार्धघ्न' इत्यादि सूत्रके अनुसार एक हीन अनुकृष्टि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

≡a प प प मिदर चयधनमंनितवकुमें वोडे व्येकपद प अर्द्ध प घनचय
अ a a a गु गु ३ प a aa
२ a

≡a प प प प गुणो गच्छ ≡a प प प प प उत्तरधनमें दितु तंदचयधनमनिदं "चय-
अ a a a a।२ अ a a a२ a a
गु गु ३ प गु गु ३ प
२ a २ a

धणहीणंदव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं" यें दिताचय[1]धनद अनुकृष्टिपद पल्यासंख्यातैकभागमं भाज्यभागहारभूतंगळनपवर्त्तिसि कळेदु शेषधनमनिदं

≡a प प प प प्रथमगुणहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबंधाध्यवसायंगळिवरोळु। ५
अ a a a a।२ गु गु३
२

≡a प प प अनुकृष्टिचयः ≡a प प प व्येकपदा प द्धं प
१— १— a a २
अ a a a गु गु ३ अ a a a गु गु ३ प
२ २ a

धनचयः ≡a प प प प गुणो गच्छ उत्तरधनं ≡a प प प प प
१— a २ १— a २ a
अ a a a गु गु ३ प अ a a a गु गु ३ प
२ a २ a

पल्यासंख्यातभाज्यभागहारापवर्तिते एवम् ≡a प प प प
१—a २
अ a a a गु गु ३
२

गच्छके आवेको अनुकृष्टि चयसे गुणा करके अनुकृष्टि चयसे गुणा करनेपर चयधनका प्रमाण होता है।

प्रथम गुणहानिमें जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबन्धाध्यवसायोंका जो प्रमाण है उसमें प्रथम धनका प्रमाण घटानेपर जो शेष रहे उसको अनुकृष्टि गच्छका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उसे प्रथम गुणहानिमें जघन्य स्थितिसम्बन्धी अनुकृष्टिका प्रथम खण्ड १०
जानना। द्वितीयादि खण्डमें एक-एक अनुकृष्टि सम्बन्धी चय अधिक होता है। जघन्य

---

१. म चयद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

≡a प प प गु / अ a a a गु गु३ / २ रूपोनानुकृष्टि पदार्द्धप्रमितविशेषगळं कळेदु ≡a प प प गु प / अ a a a गु गु३ a२ / २

अनुकृष्टिपददिदं भागिसिदोडे प्रथमपवहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबंधाध्यवसायजघन्यानुकृष्टि-

प्रथमखंडप्रमाणमक्कुं ≡a प प प गु प / अ a a a गु गु३ प a२ / २ a द्वितीयादिखंडंगळोळेकैकचयाधिक(ग)ळागुत्तं-

योगि चरमखंडदोळु रूपोनानुकृष्टिपदमात्रचयंगळधिकंगळप्पुवु ≡a प प प गु प चय प / अ a a a गु गु३ प a२ / २ a ई प्रथम-

---

प्रथमगुणहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबन्धाध्यवसायेषु ≡ a प प प गु १— / अ a a a गु गु ३ १— / २

रूपोनानुकृष्टिपदार्धगुणितानुकृष्टिपदप्रमितविशेषानुद्धृत्य शेषे- ≡ a प प प गु— १— प / अ a a a गु गु ३ १— a २ / २

ऽनुकृष्टिपदेन भक्ते प्रथमगुणहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धानुकृष्टिप्रथमखण्डं स्यात् । ≡ a प प प गु— प १— / अ a a a गु गु ३ प १— a २ / २ a

द्वितीयादिखण्डमेकैकचयाधिकं भूत्वा चरमं रूपोनानुकृष्टिपदमात्रचयाधिकं भवति ≡ a प प प चय प / अ a a a गु— प १— a / गु गु ३ प १— a २ / २ a

---

खण्डमें एक हीन अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण चय अधिक होनेपर अन्तका उत्कृष्ट खण्ड होता है। 'पदहतमुखमादिधनं' के अनुसार पद जो अनुकृष्टिका गच्छ है उससे मुख जो प्रथम खण्ड है उसे गुणा करनेपर आदिधन होता है। 'व्येकपदार्धघ्न' इत्यादि सूत्रके अनुसार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निषेकानुकृष्टिखंडंगळंसंकलिसुत्तं विरलु लब्धं पूर्व्वोक्तमोहनीयकर्म्मंजघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबंधाध्यवसायस्थानंगळ प्रमाणमेयक्कुमदें तें दोडे पदहतमुखमादिधनं एंदितनुकृष्टिपर्वदिदं प्रथमजघन्यानुकृष्टियं गुणिसिदोडादि धनमिनितक्कुं ≡ a प प प गु प प / a अ गु गु ३ २ a १२ a प a व्येकपदार्द्धघ्नचयगुणोगच्छ एंदित्तुत्तर धनमंतंदोडे इनितक्कु।

≡ a प प प प प / अ a a a a १२ a गु गु ३ २ प a मी उत्तरधनमुमनादिधनमुमं कूडिदोडे मूलधनमपर्वात्ततमिनितक्कुं—

≡ a प प प गु / अ a a a गु गु ३ २ ई प्रकारदिदं द्वितीयादिनिषेकंगनुत्कृष्टिखंडंगळं मुन्न रचनेयोळु बरेवंते रचियिसुत्तं पोगि प्रथमगुणहानिचरमनिषेकमिदरोळु ≡ a प प प गु २ / अ a a a गु गु ३ २ पूर्व्वोक्तक्रमदिदं

एतेषु पुनः संकलितेषु पूर्वोक्तमेव जघन्यस्थितिबन्धाध्यवसायप्रमाणमायाति। तद्यथा—

पदहतमुखमादिधनं ≡ a प प प गु १— प प / अ a a a गु गु १— ३ प २ a a २ a व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ

उत्तरधनं ≡ a प प प प प / अ a a a गु गु १— ३ प २ a a २ a तयोर्योगो मूलधनमपवर्तितमेतावत् ≡ a प प प गु १— / अ a a a गु गु १— ३ २

एवं द्वितीयादिनिषेकाणामप्यनुकृष्टिखण्डानि रचयित्वा प्रथमगुणहानिचरमनिषेके ≡ a प प प गु २ / अ a a a गु गु १— ३ २

एक हीन गच्छके आधेको चयसे तथा गच्छसे गुणा करनेपर चयधन होता है। आदिधन और चयधनको मिलानेपर जघन्य स्थितिसम्बन्धी अध्यवसायोंके प्रमाणरूप सर्वधन होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि निषेकोंमें अनुकृष्टिरचना क्रमसे करके प्रथम गुणहानिके अन्तके निषेक-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तंदपवर्त्तितचयधनमनिदं ≡ a प प प प कळेदु अनुकृष्टिपददिदं भागिसुत्तमिरलु तदनुकृष्टि-
a a a a।२
अ गु गु ३
२

प्रथमखंडप्रमाणमक्कुं ≡ a प प प गु २ प द्वितीयादिखंडंगळोळु रचनेयोळु बरेदंतेकैकचया-
a a a a।२
अ गु गु ३ प
२ a

धिकंगळागुत्तं पोगि चरमखंडदोळु रूपोनानुकृष्टि पदमात्रचयंगळधिकंगळप्पुवु—

≡ a प प प चय प गु २ प ई प्रथमगुणहानि चरमनिषेकानुकृष्टिखंडंगळ संकलितं पदहत-
अ a a a a a।२
गु गु ३ प
२ a

मुखमादि धनमें विदादिधनमक्कुं। ≡ a प प प गु २ प प a चयधनमुं मुख
a a a a।२
अ गु गु ३ प
a

प्राग्वदानीतापवर्तितचयधनमिदं ≡ a प प प प उद्धृत्यानुकृष्टिपदेन भक्ते प्रथमखण्डं स्यात्
१—a २
अ a a a गु गु ३
२

≡ a प प प गु २—प द्वितीयादिखण्डमेकैकचयाधिकं भूत्वा चरमं रूपोनानुकृष्टिपदमात्रचयाधिकं भवति
१—a २
अ a a a गु गु ३ प
२ a

≡ a प प प प १—प पुनरिदं संकलितं पदहतमुखमादिधनं ≡ a प प प गु २—प प
१— a गु a २ १— a २ a
अ a a a गु गु ३ प अ a a a गु गु ३ प
२ a २ a

में जो द्रव्य है उसमें पूर्वोक्त चयधन घटाकर शेषको अनुकृष्टि गच्छका भाग देनेपर प्रथम खण्ड होता है। द्वितीयादि खण्ड एक-एक अनुकृष्टि चय अधिक होते हैं। तथा अन्तिम खण्डमें एक हीन अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण चय अधिक होते हैं। तथा गच्छसे प्रथम खण्डको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

≡ ɔ प प प १   भूमि ≡ ə प प प प   जोग ≡ ə प प प प
ə ə ə ə।२   ə ə ə ə
अ ə ə ə गु गु ३ प   अ गु गु ३ प   अ गु गु ३ प
२ ə   २ ə   २ ə

दळे ≡ ə प प प प प
ə ə ə ə।२ ə
अ गु गु ३
२

पदगुणिदे चयधणं होदि एंदितु चयधनमक्कुं—

≡ ə प प प प प
ə ə ə ə।२ ə
अ गु गु ३ । प
२ ə

इल्लियुभयधनंगळ भाज्य भागहार भूतानुकृष्टिपदपल्यासंख्यातंगळ-नपवर्त्तिसि रूपोनानुकृष्टिपदार्द्धमादिधनदोळु प्रक्षेपिसुत्तं विरलु मूलधनमिनितक्कुं—

≡ ə प प प गु २
ə ə ə
अ गु गु ३
२

अंकसंदृष्टियोळु प्रथमगुणहानिद्रव्यंगळिवु १६ १५ १४ १३ १२ ११ १० ९ अनुकृष्टचायाम ४ विशेष

मुखमेकचयः ≡ ə प प प
अ ə ə ə गु गु ३ प
२ ə

रूपोनपदमात्रचयो भूमिः ≡ ə प प प   प
अ ə ə ə गु गु ३   ə
२   प
  ə

योगः ≡ ə प प प
अ ə ə ə गु गु ३ प प
२ ə ə

दलं ≡ ə प प प
अ ə ə ə गु गु ३ प प
२ ə २ ə

पदगुणितं चयधनं ≡ ə प प प   प
अ ə ə ə गु गु ३ प   प ə
२ ə २ ə

तयोरादुत्तरधनयोः भाज्यभागहारौ पल्यासंख्यातावपवर्त्य रूपोनानुकृष्टिपदार्धे आदिधने प्रक्षिप्ते मूलधनं स्यात्

≡ ə प प प गु २
अ ə ə ə गु गु ३
२

गुणा करनेपर आदिधन होता है। चयधनका प्रमाण लानेके लिए 'मुहभूमि' इत्यादि सूत्रके अनुसार मुख हुआ एक चय और भूमि हुई एक हीन अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चय। इनको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ चयधनमिदु १।३।४ अपवर्तितमिदं ३ द्रव्यदोळु कळेदोडिनितक्कु– ८ ३ मिदं पददिदं
४ ४।२ २ २
—
३
२

भागिसिदोडादि धनमक्कु ८–३ द्वितीयादिखंडंगळेकैकचयाधिकंगळप्पुवु। द्वितीयनिषेकद्रव्यमिदु
४।२

२
२ चयधनमनिदं ३ कळेदु पददिदं भागिसि दोडादिखंडप्रमाणमिनितक्कु ८—३ द्वितीयादि
८ २ ४।२
खंडंगळेकैकचयाधिकंगळप्पुवु। प्रथमगुणहानिचरमनिषेकद्रव्यमिदु। ८।२। चयधनमनिदं। ३
२
कळेदु पददिदं भागिसिदोडादिखंडप्रमाणमिनितक्कुं ८।२।३ द्वितीयादिखंडंगळु मेकैकचयाधि-
४।२
कंगळागुत्तं पोगि चरमखंडदोळु रूपोनगच्छमात्रचयंगळधिकंगळप्पुवु। समुच्चयसंदृष्टि :—

१— १—
अंकसंदृष्टौ प्रथमगुणहानौ प्रथमनिषेके ८ चयधनेना १।३।४ पवर्तितेनो ३ ने ८–३ पदेन ४
४।२ २ २

१—
भक्ते प्रथमखण्डं भवेत् ८।३ द्वितीयादिखण्डमेकैकचयाधिकं भवति। समुच्चयसंदृष्टिः—
४।२

जोड़कर आधा करो। फिर एक हीन अनुकृष्टिके गच्छ प्रमाण गच्छसे गुणा करो तब चयधनका प्रमाण होता है। सो आदिधन और चयधनको मिलानेपर प्रथम गुणहानिके अन्तिम निषेकका प्रमाण होता है। इस प्रकार प्रथम गुणहानिमें अनुकृष्टि रचना कही। अब इस कथनको अंकसंदृष्टिके द्वारा दिखाते हैं—

प्रथम गुणहानिमें प्रथम निषेकका प्रमाण नौ है। यही द्रव्य है। ऊर्ध्वचय एक है उसमें अनुकृष्टि गच्छ चारका भाग देनेसे अनुकृष्टि चय एकका चतुर्थांश हुआ। 'व्येकपदार्धघ्न' इत्यादि सूत्रके अनुसार चयधन डेढ़ हुआ। उसे सर्वधन नौमें-से घटानेपर साढ़े सात रहे। उसमें अनुकृष्टि गच्छ चारसे भाग देनेपर प्रथम खण्डका प्रमाण एक अष्टमांशसे हीन दो हुआ। उसमें चतुर्थांश प्रमाण अनुकृष्टिका एक-एक चय मिलानेपर द्वितीयादि खण्ड होते हैं। चारों खण्डोंको जोड़नेपर नौ होता है। इसी प्रकार अन्तिम निषेकका द्रव्य सोलह है। उसमें चयधन डेढ़ घटानेपर साढ़े चौदह शेष रहे। उसमें अनुकृष्टि गच्छ चारका भाग देनेपर एक-अष्टमांश अधिक साढ़े तीन पाये। यही प्रथम खण्डका प्रमाण है। उसमें चतुर्थांश मात्र एक-एक चय बढ़ानेपर द्वितीयादि खण्ड होते हैं। चारों खण्डोंका जोड़ सोलह होता है। यहाँ जो आधा या चौथाई कहा है सो अर्थसंदृष्टि द्वारा समझनेके लिए कहा है। अर्थसंदृष्टि तो महापरिमाणरूप है अतः उसमें आधा चौथाई-जैसा कुछ नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६ ० ०	७+ ९ ३ ४०२	१ ७+ ९ ३ ४+२	२ ७+ ९ ० ३ ४ २	३ ७+ ९०३ ४०२
० ० ११	२० ९०३ ४+२	०३ ९+३ ४+२	४ ० ९। ३ ४। २	५० ९+३ ४। २
१०	१ ९+३ ४+२	२ ९+३ ४। २	३ ९+३ ४। २	४ ९+३ ४। २
९	९+३ ४+२	१ ९+३ ४।२	२ ९+३ ४। २	३ ९+३ ४। २

२२२ २१८ २१४ २१० २०६	५४ ५३ ५२ ५१ ५०	५५ ५४ ५३ ५२ ५१	५६ ५५ ५४ ५३ ५२	५७ ५६ ५५ ५४ ५३
१०२ १९८ १९४ १९०	४९ ४८ ४७ ४६	५० ४९ ४८ ४७	५१ ५० ४९ ४८	५२ ५१ ५० ४९
१८६ १८२ १७८ १७४	४५ ४४ ४३ ४२	४६ ४५ ४४ ४३	४७ ४६ ४५ ४४	४८ ४७ ४६ ४५
१७० १६६ १६२	४१ ४० ३९	४२ ४१ ४०	४३ ४२ ४१	४४ ४३ ४२

अथवा अंकसंदृष्टियोळु स्वेच्छासंदृष्टिकरणमुंटप्पुदरिंदं अधःप्रवृत्तकरणरचनेयं सर्व्वंमनवतरिसिकोंडु अनुकृष्टिरचनेयं व्याख्यानमं माळ्पुदु। अत्यंतपरोक्षात्थंगळं मनंबुगिसुवल्लिवुपाय-

१६	७ ९—३ ४। २	१— ७ ९—३ ४। २	२— ७ ९—३ ४। २	३— ७ ९—३ ४। २
० ०	० ०	० ०	० ०	० ०
११	२ ९—३ ४। २	३ ९—३ ४। २	४ ९—३ ४। २	५ ९—३ ४। २
१०	१ ९—३ ४। २	२ ९—३ ४–२	३ ९—३ ४। २	४ ९—३ ४। २
९	९—३ ४। २	१ ९—३ ४। २	२ ९—३ ४। २	३ ९—३ ४। २

२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
१०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

यदि स्वेच्छानुसार अंकसंदृष्टि करना हो तो त्रिकरणचूलिका अधिकारमें अधःप्रवृत्तकरणकी रचनामें जैसी अंकसंदृष्टि है वैसी करना। तब प्रथम गुणहानिमें सब अध्यवसाय तीन हजार बहत्तर। गुणहानि आयाम सोलह। उसमें जघन्य स्थितिसम्बन्धी प्रथम निषेक ५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मप्पुवरिवं। यितु स्थितिबंधाध्यवसायंगळ प्रथमगुणहानियोळस्थंसंवृष्टियुमंकसंवृष्टियुमनुकृष्टि-विधानदोळु तोरल्पट्टुविते द्वितीयाविगुणहानिगळोळं विचारं माडल्पडुवुदों वु विशेषमुंटवावुदें दोडे गुणहानि प्रति द्रव्यमुं चयमुं द्विगुणद्विगुणक्रमंगळप्पुवु ॥

एक सौ बासठ। प्रत्येक निषेकमें चयका प्रमाण चार। प्रथम निषेकके द्रव्य एक सौ बासठमें चयधन छह घटानेपर एक सौ छप्पन रहे। उसमें अनुकृष्टि गच्छ चारका भाग देनेपर उनतालीस पाये। यही प्रथम खण्ड हुआ। द्वितीयादि खण्डोंमें एक-एक चय अधिक जानना। चारों खण्डोंका जोड़ एक सौ बासठ होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि निषेकोंकी रचना करना। अन्तिम निषेकका द्रव्य दो सौ बाईस। उसमें चयधन छह घटानेपर दो सौ सोलह रहे। उसमें अनुकृष्टिगच्छ चारका भाग देनेपर चौवन पाये। यही प्रथम खण्ड है। द्वितीयादि खण्डोंमें एक-एक चय अधिक जानना। चारों खण्डोंका जोड़ दो सौ बाईस हुआ। इसी प्रकार द्वितीयादि गुणहानियोंमें भी अनुकृष्टिका विधान कर लेना। प्रथम गुणहानिके अनुकृष्टि चय, द्रव्य आदिसे द्वितीयादि गुणहानियोंमें अनुकृष्टि चय आदिका प्रमाण दूना-दूना होता है।

अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा स्थितिबन्धाध्यवसाय रचना

जघन्यादि स्थितिबन्ध-की ऊर्ध्व रचना	प्रथम खण्ड	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ
२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमुक्त प्रथमगुणहानियोळनुकृष्टि खंडंगळोळल्पबहुत्वमं सूचिसिदपं :—

पढमं पढमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिल्लुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५६॥

प्रथमं प्रथमं खंडं अन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं । अधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणस्तूपरितनजघन्यं ॥

अंतु रचियिसलुपट्ट प्रथमादिगुणहानिगळोळनुकृष्टि प्रथमं प्रथमं खंडं स्वोत्कृष्टपर्य्यंतं गुणहानिचरमनिषेकप्रथमानुकृष्टिखंडपर्य्यंतं निरंतरविशेषाधिकंगळप्पुदरिंद संख्येइंदं परस्परं विसदृशंगळप्पुवु । शक्तिविशेषदिदमुं परस्परं विसदृशंगळेयप्पुवु । शक्तिविशेषदिनेंतु विसदृशंगळें-दोडे स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टस्थानमं नोडलुपरितनजघन्यस्थानमनंतगुणमप्पुदरिंदं ॥

विदियं विदियं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५७॥

द्वितीयं द्वितीयं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशमधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणस्तूपरितनजघन्यं ॥

गुणहानिप्रथमादि निषेकंगळ द्वितीयं द्वितीयं खंडं गुणहानिचरमनिषेकद्वितीयखंडपर्य्यंतं परस्परं निरंतरं चयाधिकं गळप्पुदरिंदं विसदृशंगळप्पुवु । स्थानविकल्पंगळिंदमुं शक्तिविशेषदिद-मुमेकेंदोडे स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टमं नोडलुपरितनजघन्यस्थानमनंतगुणमप्पुदरिंदं ॥

ई प्रकारदिंदं रूपोनानुकृष्टिपदप्रमितंगळु नडेवुः—

चरिमं चरिमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरिच्छं ।
हेट्ठिलुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५८॥

चरमं चरमं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं अधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणस्तूपरितनजघन्यं ॥

एवंरचितप्रथमादिगुणहानिष्वनुकृष्टेः प्रथमं प्रथमं खण्डमन्योन्यमपेक्ष्य संख्यया विसदृशं भवति । तिर्यगुपरि च तत्तच्चरमखण्डपर्यंतं तेषामेकैकचयाधिक्यात् । तथा शक्त्याऽपि स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टस्थानादुपरितनजघन्यस्थानस्याप्यनन्तगुणत्वात् ॥९५६॥

गुणहानिप्रथमादिनिषेकाणां द्वितीयं द्वितीयं खण्डं गुणहानिचरमनिषेकद्वितीयखण्डपर्यंतं परस्परं निरन्तरं चयाधिकमिति विसदृशं स्थानविकल्पैः शक्तिविशेषैश्चासदृशं स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टादुपरितनजघन्यस्थानस्याप्यनन्तगुणत्वात् ॥९५७॥ एवं रूपोनानुकृष्टिपदमात्राणि नीत्वा—

इस प्रकार रचित प्रथमादि गुणहानियोंमें अनुकृष्टिका पहला-पहला खण्ड परस्परकी अपेक्षा करनेपर विसदृश है—संख्यारूपसे समान नहीं हैं; क्योंकि तिर्यक्रूप रचनामें ऊपर-ऊपर रचनारूप जो पहला-पहला खण्ड है वह अपने-अपने अन्तिम खण्ड पर्यन्त एक-एक चय अधिक है। तथा शक्तिकी अपेक्षा भी अपने-अपने नीचेके उत्कृष्ट स्थानसे ऊपरका जघन्य स्थान भी अनन्त गुणा है। अतः पहला खण्ड समान नहीं है ॥९५६॥

गुणहानिमें प्रथमादि निषेकोंका दूसरा-दूसरा खण्ड गुणहानिके अन्तिम निषेकके दूसरे खण्ड पर्यन्त निरन्तर एक-एक चय अधिक है अतः स्थानभेद और शक्तिभेदसे समान नहीं है। अर्थात् नीचेके दूसरे खण्डके उत्कृष्टसे ऊपरका दूसरे खण्डका जघन्य भी अनन्त गुणा है। इसी प्रकार तीसरे आदि खण्डोंकी भी असमानता जानना ॥९५७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणहानिप्रथमादिनिषेकानुकृष्टि चरमं चरमं खंडंगळु गुणहानिचरमनिषेकानुकृष्टि चरमखंडपर्य्यंतं निरंतरं विशेषाधिकक्रमंगळप्पुदरिदं स्थानविकल्प संख्र्येयिदंविसदृशमक्कुं। शक्त्यपेक्षेयिदं स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टस्थानशक्तियं नोडलु स्वस्वोपरितनजघन्यस्थानमनंतगुणितमक्कु–। मितनंतगुणत्वक्के कारणमेनें दोडे पेळ्दपरु :—

हेट्ठिमखंडुक्कस्सं उव्वंकं होदि उवरिमजहण्णं।
अट्ठंकं होदि तदोणंतगुणं उवरिमजहण्णं ॥९५९॥

अधस्तनखंडोत्कृष्टमुर्व्वको भवेदुपरितनजघन्यमष्टांको भवेत्ततोऽनंतगुणमुपरितनजघन्यं॥

स्वस्वजघन्यानुकृष्टिखंडमोदल्गोंडु स्वस्वोत्कृष्टखंडपर्य्यंतमेकैकतिर्य्यग्विशेषदिंदमधिकक्रमंगळप्पुवा विशेषप्रमाणमिदु ≡ ∂ प प प १ / १ ∂ अ ∂ ∂ ∂ गु गु ३ / २ — १ ई प / ∂ चयदोळमसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानंगळप्पुवें तें दोडिल्लि त्रैराशिकं माडल्पडुगुमदें तें दोडे :—

एक्कं खलु अट्ठंकं सत्तंकं कंडयं तदो हेट्ठा। रूवहिय कंडयेण य गुणियकमा जाव उव्वंक।
में दितो डु षट्स्थानदोळो दष्टांकमक्कं। १। सप्तांकंगळु कांडक प्रमितंगळप्पुवु २/∂ षडंक पंचांकचतुरंकमुर्व्वंकगळु क्रमदिदं रूपाधिककांडकदिदं गुणितक्रमंगळप्पुवु २/∂ । २/∂ ६ । २/∂ ५ । २/∂ । २/∂ ४ २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ । उ २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ अष्टांकसहितमागनितुमं कूडिदोडों दु षट्स्थानदोळिनितु स्थानंगळप्पुवु २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ । २/∂ यिन्नु त्रैराशिकमं माडल्पडुगु

चरमं चरमं खण्डं गुणहानिचरमनिषेकस्य चरमखण्डपर्यन्तं निरन्तरं विशेषाधिकत्वात् संख्यया विसदृशं। शक्त्याऽप्यधस्तनोत्कृष्टस्थानादुपरितनजघन्यस्थानमप्यनन्तगुणं ॥९५८॥ तत्र किं कारणमिति चेदाह—

यतः कारणात्तिर्यगुपरि चाधस्तनाधस्तनखण्डोत्कृष्टाध्यवसायस्थानमुर्वंकः अनन्तभागवृद्धयात्मकं भवति।

गुणहानिके प्रथमादि निषेकोंका अन्तिम-अन्तिम खण्ड अन्तिम निषेकके अन्तिम खण्ड पर्यन्त निरन्तर एक-एक चय अधिक होनेसे संख्यासे समान नहीं है। शक्तिकी अपेक्षा भी नीचेके अन्तिम खण्डके उत्कृष्ट स्थानसे ऊपरके अन्तिम खण्डका जघन्य स्थान भी अनन्त गुणा है ॥९५८॥

इसका कारण क्या है? यह कहते हैं—

क्योंकि तिर्यक्रूप रचनामें ऊपर-ऊपर लिखे खण्डोंके अपने-अपने नीचे लिखे खण्डोंका उत्कृष्ट अध्यवसाय स्थान ऊर्वक अर्थात् अनन्तभागवृद्धिको लिये हुए है और ऊपर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र २/a २/a २/a २/a २/a फ १ इ ≡ a प प प / १० अ a a a गु गु ३/२ प/a १— ई त्रैराशिकदिदं बंद लब्धं

चयदोळु नडेद षट्स्थानवारंगळ संख्येयक्कुं २ । ६२/a । २/a । २/a । २/a । २/a । २/a । २/a । २/a (५, ४)

≡ a प प प गु गु ३ प २/a २/a २/a २/a २/a (० / अ a a a २ a, १—) यिवनपवर्त्तिसिदोडेयुमसंख्यात-लोकमक्कुमेकें दोडे लोकक्के गुणकारभूतासंख्यातं भाज्यं अदु भागहारभूतरूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातंगळ वर्गमात्रघनराशियं सरिगळेदु मत्तमसंख्यातगुणकारमिक्कु-। मिदनें तरियलक्कुमें दोडे :—

लोगाणमसंखपमाजहण्ण उड्ढिम्मि तम्मि छट्ठाणा। ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं होंति सत्तह ॥ में विती सूत्रप्रमाणदिदमरियल्पडुगुं। जघन्यानुकृष्टिखंडदोळेनितु षट्स्थानंगळप्पुववर मेले प्रतिखंडमिनितिनितु षट्स्थानवारंगळधिकंगळागुत्तमुत्कृष्टखंडपर्य्यंतं पोपुववु कारणमागि स्वस्वजघन्यानुकृष्टिमोदलगोंडु स्वस्वोत्कृष्टखंडपर्य्यंतं स्वस्वखंडजघन्यमष्टांकमक्कुमुत्कृष्टस्थानविकल्पमुर्व्वंकमक्कुमधस्तनखंडोत्कृष्टमुर्व्वंकमं नोडलुपरितनखंडजघन्यमष्टांकमप्पुदरिदं प्रथमं प्रथमं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं स्यात्। अधस्तनोत्कृष्टादुपरितनजघन्यमनंतगुणमें दितु पेळल्पट्टुदु। अहंगे द्वितीयं द्वितीयखंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं स्यादधस्तनोत्कृष्टादुपरितनजघन्यमनंतगुणमें दितु नडेवु चरमं चरमंखंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं स्यादधस्तनोत्कृष्टादुपरितनजघन्यमनंतगुणमें दितु पेळल्पट्टुदु।

अनंतरं जघन्यस्थितिप्रतिबद्धजघन्यखंडमुत्कृष्टस्थितिप्रतिबद्धमुत्कृष्टखंडमुं (३९, ५७) पोरगागि शेषसर्व्वखंडंगळूर्ध्वरूपदिदं सदृशंगळप्पुवें दु मुंदणसूत्रदिदं पेळ्दपरु :—

अवरुक्कस्सठिदीणं जहण्णमुक्कस्सयं च णिव्वग्गं[1]।
सेसा सव्वे खंडा सरिसा खलु होंति उड्ढेण ॥९६०॥

जघन्योत्कृष्टस्थित्योर्ज्जघन्यमुत्कृष्टकं च निर्व्वर्ग्गं। शेषाणि सर्व्वाणि खंडाणि सदृशानि खलु भवेयुरूर्ध्वेन ॥

उपरितनोपरितनखण्डजघन्याध्यवसायस्थानमष्टांकः अनन्तगुणवृद्धयात्मकं भवति ततः कारणात्तदधस्तनोत्कृष्टात्तदुपरितनजघन्यमनन्तगुणं ॥९५९॥

ऊपरके खण्डका जघन्य अध्यवसाय स्थान अष्टांक अर्थात् अनन्त गुणवृद्धिको लिये हुए है। इस कारणसे नीचेके खण्डके उत्कृष्टसे ऊपरके खण्डका जघन्य अनन्त गुणा कहा है ॥९५९॥

---

१. वर्ग्गः समयसादृश्यं ततो निःक्रांतं निर्व्वर्ग्गं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्योत्कृष्टस्थिति कर्मविदं जघन्यखंडमुमुत्कृष्टखंडमुमेरडुं सर्व्वथा निर्व्वर्गामवकुमेल्लियुं विसदृशंगळेयप्पुवु । शेषसर्व्वखंडंगळुसदृशंगळप्पुवूर्ध्वरूपदिदं ॥

अट्ठण्हं पि य एवं आउजहण्णाट्ठिदिस्स वरखंडं ।
जाव य ताव य खंडा अणुकड्ढिपदे विसेसहिया ॥९६१॥

अष्टानामप्येवमायुर्ज्जघन्यस्थितेर्व्वरखंडं । यावत्तावत् खंडानि अनुकृष्टिपदे विशेषाधिकानि ॥

ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्म्मंगळगेल्लमितुक्तरचनाविशेषं समानमक्कुमेन्नेवरमायुर्ज्जघन्यस्थितिवरखंडमन्नेवरमनुकृष्टिपददोळु विशेषाधिकंगळेयप्पुवु ।

अनंतरमनुकृष्टिपददोळायुष्यकर्म्मक्के विशेषमं पेळ्दपरु :—

तत्तो उवरिमखंडा सगसगउक्कस्सगोत्ति सेसाणं ।
सव्वे ठिदीण खंडाऽसंखेज्जगुणक्कमा तिरिये ॥९६२॥

तत उपरितनखंडानि स्वस्वोत्कृष्टपर्य्यंतं विशेषाणां सर्व्वाणि स्थितीनां खंडानि असंख्यगुणक्रमाणि तिर्य्यक् ॥

ततः आयुष्यकर्म्मजघन्यस्थितिसंबंधि वरखंडमाउदों दु अदरमेलिर्द्द स्थितिखंडंगळु तंतम्म उत्कृष्टखंडपर्य्यंतं तिर्य्यगसंख्यातगुणितक्रमंगळप्पुवु । आ जघन्यादिस्थितिखंडंगळगे संदृष्टिरचने :

४ २२।४ १	५ २२।४।४ १	६ २२।४।४।४। १	७ २२।४।४।४।४ १
७	४ २२।४। १	५ २२।४।४ १	६ २२।४।४।४ १
०	७	४ २२। ४ १	५ २२।४।४ १
०	०	७	४ २२।४। १
०	०	०	७

जघन्यस्थितेर्जघन्यखण्डमुत्कृष्टस्थितेरुत्कृष्टखण्डं च निर्वर्गं सर्वथा असदृशं । शेषसर्वखण्डानि ऊर्ध्वरूपेण सदृशानि भवन्ति ॥९६०॥

अष्टानामपि कर्मणामेवमुक्तरचनाविशेषः सर्वोऽपि समानः । किन्त्वायुषोऽनुकृष्टिपदे खण्डानि यावज्जघन्यस्थितिवरमखण्ड तावदेव विशेषाधिकानि । ततस्तद्वरखण्डादुपरितनस्थितिखण्डानि स्वस्वोत्कृष्टखण्डपर्यंतानि

जघन्य स्थितिका कारण प्रथम निषेकका जघन्य-प्रथम खण्ड और उत्कृष्ट स्थितिका कारण अन्तिम निषेकका अन्तिम उत्कृष्ट खण्ड, ये दोनों तो निर्वर्ग हैं अर्थात् किसी भी खण्डके समान नहीं हैं, सर्वथा असमान हैं। शेष सब खण्ड ऊर्ध्वरचना रूपसे अन्य खण्डोंके समान हैं ॥९६०॥

आठों ही कर्मोंकी उक्त रचना विशेष सब समान हैं। अर्थात् जैसे मोहनीयका कहा वैसा ही ज्ञानावरणादिका भी जानना। किन्तु आयुकर्मके अनुकृष्टिगच्छमें जो खण्ड हैं वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेले शेषस्थितिगळ खंडंगळु स्वस्वजघन्यखंडंमोदल्गोंडु स्वस्वोत्कृष्टखंडपर्य्यंतमनुकृष्टिखंडंगळि-र्य्यंग्रूपदिंदमसंख्यातगुणितक्रमंगळायुष्यकर्म्मदोळप्पुवु। संदृष्टि :—

७ २२।४।४।४।४ १	४ २२।४-१ २२।४।४।४।४।४ १	५ २२।४।४-१ २२।४।४।४।४।४।४ १	६ २२।४।४।४।-१ २२।४।४।४।४।४।४।४ १
६ २२।४।४।४ १	७ २२।४।४।४।४ १	२२।६।१ २२।४।४।४।४।४ १	५ २२।४।४-१ २२।४।४।४।४।४।४ १
५ २२।४।४। १	६ २२।४।४।४ १	७ २२।४।४।४।४। १	४ २२।४।-१ २२।४।४।४।४ १

यितायुष्योत्कृष्टस्थिति अनुकृष्टिखंडंगळपर्य्यंतं स्वस्वजघन्यखंडमं मोदल्गोंडु स्वस्वोत्कृष्ट-खंडपर्य्यंतं तिर्य्यग्रूपदिंदमसंख्यातगुणितक्रमंगळप्पुवें दरियल्पडुवुवु।

अनंतरमनुभागबंधाध्यवसायंगळं जघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबंधाध्यवसायंगळोळु सर्व्व-जघन्यस्थितिपरिणामस्थानक्के पेळ्दपरु :—

रसबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखलोगमेत्ताणि।
अवरट्ठिदिस्स अवरट्ठिदिपरिणामम्मि थोवाणि ॥९६३॥

रसबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यलोकमात्राणि। अवरस्थितेरवरस्थितिपरिणामे स्तोकानि ॥

रसबंधाध्यवसायस्थानविकल्पंगळुमसंख्यातलोकमात्रंगळाळावसामान्यदिंदप्पुवु। ≡ a ≡ a। जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यकषायपरिणामंगळुमसंख्यातलोकमात्रंगळ्पूर्व्वोक्तंगळिनितप्पु। ९। विवरोळु

तथा शेषस्थितीनां स्वस्वजघन्यखण्डात् स्वस्वोत्कृष्टखण्डपर्यंतानि च सर्वाणि तिर्यगसंख्यातगुणितक्रमाणि भवन्ति ॥९६१–९६२॥ अथानुभागबन्धाध्यवसायान् जघन्यस्थितिप्रतिबद्धाध्यवसायेषु सर्वजघन्यस्याह—

रसबन्धाध्यवसायस्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि ≡ a ≡ a तत्र जघन्यस्थितिबन्धप्रायोग्यपरिणामेषु

जघन्य स्थितिके अन्तिम खण्ड पर्यन्त तो चय अधिक हैं। उससे आगे उत्कृष्ट खण्डसे ऊपरकी स्थितिके खण्ड अपने-अपने उत्कृष्ट खण्ड पर्यन्त तथा शेष स्थितियोंके अपने-अपने जघन्य खण्डसे अपने-अपने उत्कृष्ट खण्ड पर्यन्त सब तिर्यक् रचनारूप असंख्यात गुणे-असंख्यात गुणे हैं ॥९६१–९६२॥

आगे अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थानोंका कथन करते हुए जघन्य स्थितिसम्बन्धी अध्यवसायोंमें सबसे जघन्य सम्बन्धी अनुभागाध्यवसाय स्थानोंको कहते हैं—

अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोकमात्र हैं। अर्थात् असंख्यात लोकसे गुणित असंख्यात लोकमात्र हैं। उनमें जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानमें जघन्य स्थितिबन्धयोग्य अध्यवसायोंके प्रमाणसे असंख्यातलोक गुणे अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान हैं फिर भी वे अन्य स्थितिबन्धाध्यवसाय सम्बन्धी अनुभागाध्यवसायोंसे थोड़े हैं। वही कहते हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यजघन्यपरिणामप्रतिबद्धंगळनुबंधाध्यवसायस्थानविकल्पंगळवं नोडलसंख्यातलोकगुणितंगळप्पु । ९ । ≡a । विवु स्तोकंगळप्पुवें तें दोडे मेले मेले जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्योत्कृष्टकषायपरिणामपर्य्यंतमनुभागाध्यवसायंगळु निरंतरं विशेषाधिकंगळप्पुदरिद–। मदें तें दोडे द्रव्यं स्थितिगुणहानि दोगुणहानि नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्तमें बिवारुं राशिगळ प्रमाणमरियल्पडुवुवल्लि विवक्षितमोहनीयजघन्यस्थितिबंधकारणाध्यवसायस्थानंगळिवर ज ००००० उ
९

जघन्यपरिणाममोदल्गों डुत्कृष्टपरिणामपर्य्यंतमिर्द्द सर्व्वस्थितिबंधपरिणामप्रतिबद्धसर्व्वानुभागबंधाध्यवसायंगळ समुच्चयमसंख्यातलोकमात्रंगळप्पुवु । द्रव्यमें बुदक्कुं । जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यकषायपरिणामंगळु । ९ । स्थिति यें बुदक्कु–। मुपदेशागम्यमप्प नानागुणहानिशलाकेगळावल्यसंख्यातैकभागमक्कुमदं नोडलन्योन्याभ्यस्तमसंख्यातगुणमक्कुमादोडमावल्यसंख्यातैक भागमात्रमेयक्कुं । स्थितियं नानागुणहानिशलाकेगळिंदं भागिसिदोडे गुणहान्यायामक्कु–। मदं द्विगुणिसिदोडे निषेकहारप्रमाणमक्कुमिवक्के संदृष्टि :—

≡ a ≡ a द्रव्य	स्थिति ९	गु २ a । a	दो । ९ । २ a । a	नाना । २ a । a	अन्योन्य २ a

यिन्तु रूपोनान्योन्याभ्यस्तदिंदं द्रव्यमं भागिसिदोडेकभागं प्रथमगुणहानिद्रव्यमक्कुं । द्वितीयादिगुणहानि द्रव्यंगळु चरमगुणहानिपर्य्यंतं द्विगुणक्रमंगळप्पुवु

≡ a ≡ a । अ अ २
० ० ०
≡a ≡a । १ ० अ

यिल्लि

जघन्यपरिणामे तेभ्योऽसंख्यातलोकगुणा ९ ≡ a न्यपि स्तोकानि । तद्यथा द्र ≡ a ≡ a स्थि ९ । गु ९ दो ९ । २ । नाना २ अन्यो २ द्रव्यं जघन्यस्थितिसम्बन्ध्यनुभागबन्धाध्यवसायमात्रेऽन्योन्याभ्यस्तेनावल्य-
२ २ a a a
a a a । a
संख्येयभागेन रूपोनेन भक्ते प्रथमगुणहानिद्रव्यं द्वितीयादिगुणहानीनां द्विगुणं भवति ≡ a ≡ a अ तत्र
०
अ ० २
०
≡a≡a । १
अ

जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंकी रचना दिखाते हैं। जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंके प्रमाणसे असंख्यातलोक गुणा अनुभागबन्धा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्धाणेण । गु । सब्बधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि । | ≡a≡a । १ / अ गु | तं रूऊणद्धाद्धेण

गु/२ ऊणेण णिसेयहारेण गु ३/२ मज्झिमधणमवहरिदे पचयं । ≡ a ≡ a / अ गु गु ३/२ तं रूवहिय-

गुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेय ≡a≡a गु / अ गु ग३/२ मेंबिदु जघन्यस्थितिबंधकारणकषाय-

परिणामंगळोळ् जघन्यपरिणामस्थितिप्रतिबद्धानुभागबंधाध्यवसायंगळप्पुविवंमनदोळिरिसि अवरि-ट्ठिदिपरिणामम्मि थोवाणि एंदिदाचार्य्यर्नि पेळल्पट्टुदेके दोडे मेले स्वस्थानचयदिदं विशेषाधिकंगळागुत्तं परस्थानचयदिदं संख्यातासंख्यातगुणंगळागुत्तं पोपुदप्पुदरिवं ।

प्रथमगुणहानिद्रव्ये गुणहान्यायामेनावल्यसंख्येयभागभक्त जघन्यस्थितिकारणकषायाध्यवसायसंख्येन भक्ते मध्यमधनं ≡ a ≡ a १ / अ । गु इदं रूपोनगुणहान्यायामार्धोन गु/२ निषेकहारेण गु ३/२ (१—) भक्तं प्रचयः ≡ a ≡ a / अ गु गु ३/२ (१—) अयं रूपाधिकगुणहान्या गुणित आदिनिषेकः स्यात् ≡ a ≡ a गु / अ गु गु ३/२ (१—) इति ॥९६३॥

ध्यवसाय स्थानोंका प्रमाण है। वही यहाँ द्रव्य है। तथा जघन्य स्थितिसम्बन्धी स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंका प्रमाण यहाँ स्थितिका प्रमाण है। आवलीमें दो बार असंख्यातका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे वह नानागुणहानि शलाकाका प्रमाण जानना। स्थितिके प्रमाणमें नानागुणहानिका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे वही गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। उसका दूना दो गुणहानिका प्रमाण है। आवलीके असंख्यातवें भाग अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण है। उक्त द्रव्यमें एक हीन अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे वही प्रथम गुणहानिके द्रव्यका प्रमाण है। उससे दूना-दूना द्वितीयादि गुणहानियोंका द्रव्य होता है। प्रथम गुणहानिके द्रव्यमें गुणहानि आयामका भाग देनेपर मध्यम धनका प्रमाण होता है। उसमें एक हीन गुणहानि आयामके आधेसे हीन दो गुणहानिका भाग देनेपर चय आता है। इस चयको एक अधिक गुणहानि आयामसे गुणा करनेपर प्रथम निषेक होता है ॥९६३॥

१. म°णामप्रति°।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंतरमोयनुभागबंधाध्यवसायप्रथमगुणहानिप्रथमनिषेकद मेले असंख्यातलोकमात्रचयदिंदं तद्गुणहानिचरमनिषेकपर्य्यंतमेकादृशमप्प चयदिदं पेर्च्चुंववंदु पेळ्दपरु :—

तत्तो कमेण वड्ढदि पडिभागेण य असंखलोगेण ।
अवरट्ठिदिस्स जेट्ठट्ठिदिपरिणामो त्ति णियमेण ।।९६४।।

ततः क्रमेण वर्द्धन्ते प्रतिभागेन चासंख्यलोकेनावरस्थितेर्ज्येष्ठस्थितिपरिणामपर्य्यंतं नियमेन ।।

ततः आ जघन्यस्थितिजघन्यपरिणामप्रतिबद्धानुभागबंधाध्यवसायंगळत्तणिदं जघन्यस्थिति-द्वितीयादिपरिणामप्रतिबंधाध्यवसायंगळुमसंख्यातलोकमात्रप्रतिभागदिदं पुट्टिद विशेषदिं निरंतरं पेर्च्चुत्तं पोपुवन्नेवरं जघन्यस्थितिप्रतिबद्धकषायपरिणामंगळोळु प्रथमगुणहानिचरमपरिणाममन्नेवरं अल्लिदं मेले गुणहानिं गुणहानिं प्रतियादियं नोडलादिद्विगुणमक्कुं । विशेषमं नोडलु विशेषमुं द्विगुणमक्कु–। मितु द्वितीयस्थितिमोदलगोंडुत्कृष्टस्थितिपर्य्यंतमिर्द्द स्थितिबंधकारणजघन्योत्कृष्ट-

० १०	११	०।०।०।
स्थि = बं = ज ।०। उ	ज ।०। उ ०	०।०।०।०।ज ० ० उ
अनु = ज ० ज	ज ।०। ज	० ० ० ज ज
० ०	० ०	० ०
० ०	० ०	० ०
० ०	० ०	० ०
उ उ	उ उ	उ उ

परिणामप्रतिबद्धानुभागबंधाध्यवसायंगळ रचनाविशेषमरियल्पडुगु–। मनुभागबंधाध्यवसायंगळगे नानागुणहानिशलाकेगळु उंदु इल्ल येंदितुपदेशद्वयमुंदु । अदं सर्व्वज्ञररिवरु ।

ततो जघन्यस्थितिजघन्यपरिणामप्रतिबद्धानुभागबन्धाध्यवसायेभ्यस्तद्द्वितीयादिपरिणामप्रतिबद्धानुभागबन्धाध्यवसायाः प्रथमगुणहानिचरमपरिणामपर्यंता असंख्यातलोकमात्रप्रतिभागोत्पन्नविशेषेण निरन्तरं वर्द्धमाना गच्छन्ति । ततोऽग्रे गुणहानिं गुणहानिं प्रति आदित आदिविशेषतो विशेषश्च द्विगुणो द्विगुणः । एवं द्वितीयादिस्थितावुत्कृष्टस्थितिपर्यंतायामपि ज्ञातव्यं । अनुभागबन्धाध्यवसायानां नानागुणहानिशलाकाः सन्ति न

तत्पश्चात् जघन्य स्थितिके जघन्य परिणाम सम्बन्धी प्रथम निषेकरूप अनुभागाध्यवसायस्थानोंसे उस जघन्य स्थितिके द्वितीयादि परिणामसम्बन्धी द्वितीयादि निषेकरूप अनुभागाध्यवसाय स्थान प्रथम गुणहानिके अन्तिम निषेकरूप अन्तिम परिणाम पर्यन्त एक-एक चय प्रमाण निरन्तर वृद्धिको लिये होते हैं। यहाँ असंख्यात लोक मात्र प्रमाण प्रतिभाग सर्वद्रव्यमें देनेसे चयका प्रमाण होता है। उससे आगे प्रत्येक गुणहानिमें प्रथम निषेकसे प्रथम निषेक तथा चयसे चयका प्रमाण दूना-दूना होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि स्थिति योग्य द्वितीयादि निषेकोंमें भी उत्कृष्ट स्थिति रूप अन्तिम निषेक पर्यन्त रचना जानना। यहाँ जघन्य स्थितिसम्बन्धी जघन्य स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थानोंमें प्रथम निषेक प्रमाण अनुभागाध्यवसाय स्थान होते हैं। उसीके दूसरे स्थानमें द्वितीय निषेक प्रमाण होते हैं। अनुभागबन्धाध्यवसायों-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्तार्थसंदृष्टिरचनेयिदु । :—

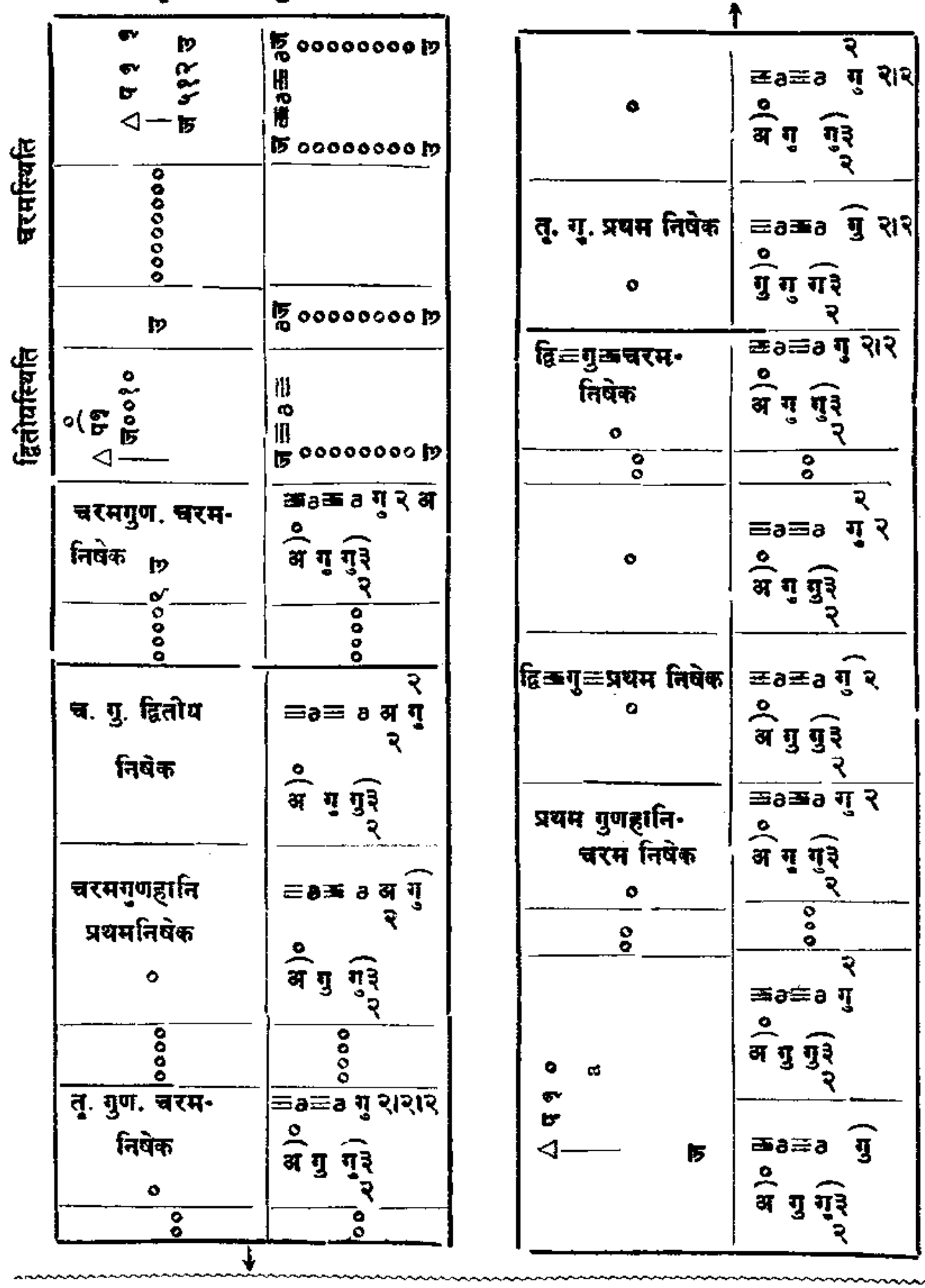

सन्तीत्युपदेशद्वयमस्ति ।। संदृष्टिः—

में नानागुणहानिशलाका हैं और नहीं भी हैं ऐसे दो उपदेश विभिन्न आचार्योंके हैं ॥९६४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटदेवेण गोम्मटं रइयं ।
कम्माण णिज्जरट्ठं तच्चट्ठवधारणट्ठं च ॥९६५॥

गोम्मटसंग्रहसूत्रं गोम्मटदेवेन गोम्मटं रचितं । कर्म्मणां निर्ज्जरात्थं तत्त्वात्थविधारणात्थं च ॥

ई गुम्मटसारसंग्रहसूत्रं गुम्मटदेवर्निदं श्रीवीरवर्द्धमानदेवर्निदं गुम्मटनयप्रमाणविषयमें ल-प्पुदंते रचितं रचिसल्पट्टुदेके दोडे ज्ञानावरणादिकर्म्मंगळ निर्ज्जरानिमित्तमागियुं तत्त्वात्र्थंगळ निश्चयनिमित्तमागियुं ।

जम्हि गुणा विस्संता गणहरदेवादिइड्ढिपत्ताणं ।
सो अजियसेणणाहो जस्स गुरू जयउ सो राओ ॥९६६॥

यस्मिन्गुणा विश्रांता गणधरदेवादिऋद्धिप्राप्तानां । सोऽजितसेननाथो यस्य गुरुर्जयतु स राजा ॥

गणधरदेवादिऋद्धिप्राप्तरुगळ गुणंगळावनोर्व्वनोळु विश्रमिसल्पट्टुवंतप्पजितसेननाथनाव-नोर्व्वंगे व्रतगुरुवा राजं सर्व्वोत्कर्षदिदं वर्त्तिसुत्तिक्कें ।

इदं गोम्मटसारसंग्रहसूत्रं गोम्मटदेवेन श्रीवर्धमानदेवेन गोम्मटं नयप्रमाणविषयं रचितं । किमर्थं ? ज्ञानावरणादिकर्मनिर्जरार्थं च ॥ ९६५॥

गणधरदेवादीनां ऋद्धिप्राप्तानां गुणा यस्मिन् विश्रान्ताः सोऽजितसेननाथो यस्य गुरुः स राजा सर्वोत्कर्षेण वर्तताम् ॥९६६॥

ग्रन्थकार प्रशस्ति

आगे ग्रन्थकार आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ग्रन्थ समाप्तिके सम्बन्धमें कहते हैं—

यह गोम्मटसार नामक संग्रह गाथा गोम्मटदेव श्रीवर्धमानदेवने कर्मोंकी निर्जराके लिए और तत्त्वार्थके अवधारणाके लिए रचा है। नय और प्रमाणके विषयको लेकर रचा है ॥९६५॥

विशेषार्थ—टीकाकारने गाथामें आये गोम्मटदेवका अर्थ वर्धमान स्वामी किया है। वह हमें ठीक प्रतीत नहीं होता। क्योंकि ग्रन्थ रचनाका एक उद्देश्य कर्मोंकी निर्जरा भी है। भगवान् महावीर कर्मोंकी निर्जराके लिए ग्रन्थ क्यों रचेंगे? इसी प्रकार दूसरे गोम्मटका अर्थ 'नय प्रमाण विषय' किया है। किन्तु इस ग्रन्थमें नय-प्रमाणकी चर्चा तो नहीं है। गुणस्थान और मार्गणाओंकी चर्चा है। या कर्मसिद्धान्तकी चर्चा है।

इसीसे पं. टोडरमलजी साहबने इसके भावार्थमें कहा है कि यह ग्रन्थ वर्धमान स्वामीकी वाणीके अनुसार बना है।

ऋद्धिको प्राप्त गणधरदेव आदिके गुण जिसमें पाये जाते हैं ऐसे अजितसेनाचार्य जिसके गुरु हैं वह राजा गोम्मट—चामुण्डराय जयवन्त होओ ॥९६६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धंतुदयतडुग्गयणिम्मलवरणेमिचंदकरकलिया।
गुणरयणभूसणंबुहिमइवेला भरउ भुवणयलं ॥९६७॥

सिद्धांतोदयतटोद्गतनिर्म्मळवरनेमिचंद्रकरकलिता। गुणरत्नभूषणांबुधिमतिवेला पूरयतु भुवनतलं ॥

अथवा भुवनयलं भुवने अलमतिशयेन। सिद्धांतमें बुदयाद्रियोळुदयिसल्पट्ट निर्म्मलवरनेमिचंद्रकिरणंगळिवं पेर्चिव गुणरत्नभूषणांबुधिय चामुंडरायनें बंबुनिधिय मतियें ब वेलें भुवनतलमं तीवुगें। अथवा भुवनदोळतिशयदिव पसरिसुगें।

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटसिहरुवरि गोम्मटजिणो य।
गोम्मटरायविणिम्मिय दक्खिणकुक्कुडजिणो जयउ ॥९६८॥

गुम्मटसंग्रहसूत्रमुं चामुंडरायन वेहारदोळेकहस्तमितेंद्रनीलरत्ननेमीश्वरन प्रतिमेयुं गुम्मटराय चामुंडरायं विनिर्म्मिसिव दक्षिणकुक्कुटजिननुं। सर्व्वोत्कृष्टविवं वर्त्तिसुगें ॥

सिद्धान्तोदयाचले उदितनिर्मलवरनेमिचन्द्रकिरणैर्वर्धिता गुणरत्नभूषणाम्बुधेश्चामुण्डरायसमुद्रस्य मतिवेलाभुवनतलं पूरयतु, अथवा भुवनेऽतिशयेन प्रसरतु ॥९६७॥

गोम्मटसंग्रहसूत्रं च चामुण्डरायविनिर्मितप्रासादस्थितैकहस्तप्रमेन्द्रनीलमयनेमीश्वरप्रतिबिम्बं च चामुण्डरायविनिर्मितदक्षिणकुक्कुटजिनश्च सर्वोत्कर्षेण वर्तताम् ॥९६८॥

सिद्धान्तरूपी उदयाचलपर उदयको प्राप्त निर्मल और उत्कृष्ट आचार्य नेमिचन्द्ररूपी चन्द्रमाके वचनरूपी किरणोंसे वृद्धिको प्राप्त 'गुणरत्नभूषण' अर्थात् चामुण्डरायरूपी समुद्रकी मतिरूपी वेला भुवनतलको पूरित करे।

विशेषार्थ—जैसे उदयाचलपर उदित चन्द्रमाकी किरणोंके सम्पर्कसे समुद्रमें लहरें उठकर समुद्रके तटको लाँघ जाती हैं और सर्वत्र फैल जाती हैं वैसे ही आचार्य नेमिचन्द्रका उदय षट्खण्डागम सिद्धान्तरूपी उदयाचलसे हुआ और ज्ञानरूपी किरणोंसे राजा चामुण्डरायरूपी समुद्र आप्लावित होकर सर्वत्र फैले ऐसा ग्रन्थकारका आशीर्वाद है। उन्होंने चामुण्डरायके लिए ही यह ग्रन्थ रचा था। उसीके नामपर ग्रन्थका नाम गोम्मटसार रखा गया है ॥९६७॥

गोम्मटसाररूपी संग्रह ग्रन्थ जयवन्त हो। गोम्मट शिखरके ऊपर गोम्मटजिन जयवन्त हो। अर्थात चन्द्रगिरि पर्वतपर चामुण्डरायके द्वारा बनवाये गये जिनालयमें विराजमान एक हाथ प्रमाण इन्द्रनीलमणि निर्मित नेमिनाथ भगवान्का प्रतिबिम्ब जयवन्त हो। तथा गोम्मटराजा चामुण्डरायके द्वारा निर्मापित दक्षिण कुक्कुट जिन अर्थात् बाहुबलिका प्रतिबिम्ब जयवन्त हो ॥९६८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जेण विणिम्मिय पडिमावयणं सव्वट्ठसिद्धिदेवेहिं ।
सव्वपरमोहिजोगिहि दिट्ठं सो गोम्मटो जयऊ ॥९६९॥

आवनोर्व्वंनि निर्म्मिसलुपट्ट प्रतिमावदनं सर्व्वार्त्थसिद्धिदेवरुगळिवमुं सर्व्वपरमावधियोगिगळिवमुं काणल्पट्टुदंतप्प गोम्मटं सर्व्वोत्कृष्टदिदं वर्त्तिसुत्तिवर्कं ॥

वज्जयलं जिणभवणं ईसिपभारं सुवण्णकलसं तु ।
तिहुवणपडिमाणेक्कं जेण कयं जयउ सो राओ ॥९७०॥

वज्रावनितलं भूमितलमीषत्प्राग्भारं सुवर्णकलशमितु । त्रिभुवनप्रतिमानमद्वितीयं जिनभवनमावनि कृतमाराजं विराजिसुत्तिवर्कं ॥

जेणुब्भियथंभुवरिमजक्खतिरीटग्गकिरणजलधोया ।
सिद्धाण सुद्धपाया सो राओ गोम्मटो जयउ ॥९७१॥

आवनोर्व्वं नेत्तिव स्तंभद मेलण यक्षमकुटाग्रकिरण जलदिदं प्रक्षालिसल्पट्टुवु । सिद्धपरमेष्ठिगळ शुद्धपादंगळा राजं चामुंडरायं गेलुत्तिवर्कं ॥

येन त्रिनिर्मितप्रतिमावदनं सर्वार्थसिद्धिदेवैः सर्वपरमावधियोगिभिः दृष्टं स गोम्मटः सर्वोत्कर्षेण वर्तताम् ॥९६९॥

वज्रावनितलं ईषत्प्राग्भारं सुवर्णकलशमिति त्रिभुवनप्रतिमाने अद्वितीयं जिनभवनं येन कृतं स राजा विराजताम् ॥९७०॥

येनोद्धीकृतस्तम्भस्योपरि स्थितयक्षमुकुटाग्रकिरणजालेन धौतौ सिद्धपरमेष्ठिनां शुद्धपादौ स राजा चामुण्डरायो जयतु ॥९७१॥

जिसके द्वारा निर्मापित उत्तुंग बाहुबलिकी प्रतिमाका मुख सर्वार्थसिद्धिके देवोंके द्वारा अथवा सर्वावधि परमावधि ज्ञानी योगियोंके द्वारा देखा गया, वह राजा चामुण्डराय सर्वोत्कर्ष रूपसे प्रवर्तमान रहें ॥९६९॥

जिस राजाने ऐसा जिनभवन बनवाया जिसका भूमितल वज्रके समान सुदृढ़ है, सुवर्णके कलशसे शोभित है और तीनों लोकोंमें जिसकी कोई उपमा नहीं है वह राजा जयवन्त हो ॥९७०॥

जिसके द्वारा (गोम्मटेशकी मूर्तिके द्वारके सामने) स्थापित उत्तुंग स्तम्भके ऊपर स्थित यक्षके मुकुटके अग्रभागसे निकलनेवाली किरणरूपी जलसे सिद्धपरमेष्ठियोंके शुद्ध चरण युगल धोये गये हैं वह राजा चामुण्डराय जयवन्त हो ॥९७१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोम्मटसुत्तं लिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी ।
सो राओ चिरकालं णामेण य वीरमत्तंडी ॥९७२॥

ई गोम्मटसारसूत्रलेखनदोळ् गोम्मटरायनिंदमाउदोंदु देशीभाषे माडल्पट्टुदा रायं नामदिदं वीरमार्त्तंडं चिरकालं जयसुत्तिक्कें ॥

[मत्तेभ विक्रीडित-वृत्त :]

सुगमं वार्द्धियनीवदिक्कलिपुदुं मेरुवंप्रभागक्केयुं ।
नेगेदुल्लंघिपुदुं करं सुगममा लोकांतदाकाशमम् ॥
सुगमं पोगि बेरलगळि मिडिदवं नोळ्पंदमावंदवि ।
सुगमं तानिनितल्तु गोम्मटमहाशास्त्राब्धिपारंगमं ॥१॥

[कंद पद्य :]

मण्णं पिडिदोडे कैयाळु मण्णुं पोन्नप्पुदेन्न जैनतनक्के ।
बण्णहरियण्णनोदिन डोण्णेय घायक्के बेदरवण्णगळोळरे ॥२॥

गोम्मटसूत्रलेखने गोम्मटराजेन या देशी भाषा कृता स राजा नाम्ना वीरमार्तण्डश्चिरकालं जयतु ॥९७२॥

संस्कृतटीकाकारप्रशस्ति

श्रीवृषभोऽजितो भक्त्या शंभवोऽभिनन्दनः । सुमतिः पद्मभासः श्रीसुपार्श्वश्चन्द्रभः स्तुतः ॥१॥
सुविधिः शीतलः श्रेयान् सुपूज्यो विमलेश्वरः । अनन्तो धर्मनाथो नः शान्तिः कुन्थुररप्रभुः ॥२॥

गोम्मटसार ग्रन्थके लिखे जानेपर गोम्मटराज चामुण्डरायने जो देशी भाषामें टीका रची, जिसका नाम चामुण्डरायकी उपाधिपर वीरमार्तण्डी था, वह राजा चिरकाल तक जीवित रहे ॥९७२॥

सागरको बिना किसी कष्टके पार करना, मेरु पर्वतके शिखरपर चढ़कर उसको पार करना, लोकान्त तक फैले हुए विशाल आकाशके अन्ततक पहुँचकर अपनी अँगुलियोंसे छूकर उसका अनुभव करना, ये सब काम सुलभ साध्य हैं। परन्तु गोम्मटसारके शास्त्र समुद्रको पार करना सुलभ नहीं ॥१॥

विशेषार्थ—प्रपंचमें जो दुःसाध्य कार्य हैं उन्हें चाहे हम कर सकेंगे, लेकिन गोम्मटसारके सिद्धान्त सागरको पार करना असाध्य काम है। इन बातोंसे स्पष्ट है कि गोम्मटसारके अर्थ लगानेमें, विवरण देनेमें पढ़नेवालेको जो पाण्डित्य और संस्कार चाहिए उसका दिग्दर्शन केशवण्णा दे रहा है। साथ ही वैसे संस्कारको मैंने प्राप्त किया है, ऐसे आत्मविश्वासकी ध्वनि भी यहाँ प्रतिध्वनित होती है ॥१॥

जैनागमकी प्रतिभाके कारण अगर मैं अपने हाथमें मिट्टी भी ले लूँ वह सोना बन जायेगी। विद्वान् केशवण्णकी विद्वत्ताको देखकर कौन ऐसा है जो डर न जाय ॥२॥

---

१. नाभेयमजितं देवं शम्भवं भवतारकम् । घातिकर्मप्रणाशाय प्रणमाम्यहमादरात् ॥१॥
अभिनन्दनमानन्दरूपं सुमतिमच्युतम् । पद्मप्रभं प्रभुं वन्दे रत्नत्रयविशुद्धये ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानेन्न मतिय पर्वणिगेनुं किरिबिल्लवरिवे जैनागममं।
ज्ञानं मत्यनुसारं ज्ञानिगळेनगोवदळिवरें बंगंगं ॥३॥
बरिवेनगादोडे तिण्णं बरिविट्टियोळेके धनमनीवेनेनुसि।
प्परिविन कणि बोडप्पं गुरुवरे किरिकिरिदनरिव केशण्णंगळु ॥४॥
सेसेगोळल्वेळ्वं कोललोसुगलेन्नं दुरात्मनी केशण्णं।
दोसियेनुत्तितु तोरेदं पेसि जिनागममनरिवनं गोपण्णं ॥५॥

श्रीमल्लिः सुव्रतः स्वामी नमिर्नेमिः श्रीपार्श्वकः। वीरस्त्रिकालजोऽप्यर्हन् सिद्धः साधुः शिवं क्रियात् ॥३॥
यत्र रत्नैस्त्रिभिर्लब्ध्वार्हन्त्यं पूज्यं नरामरैः। निर्वान्ति मूलसंघोऽयं नन्द्यादाचन्द्रतारकम् ॥४॥
तत्र श्रीशारदागच्छे बलात्कारगणोऽन्वयः। कुन्दकुन्दमुनीन्द्रस्य नन्द्याम्नायोऽपि नन्दतु ॥५॥

विशेषार्थ—केशववर्णीके समकालीन पण्डितवर्ग एवं विद्वानोंके लिए यह सवाल है और चुनौती है। इससे उसके आत्मविश्वासका अंश प्रकट होता है और वह कहता है कि मेरा पाण्डित्य प्रश्नातीत है ॥२॥

वह कहता है कि मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार अगाध जैनागमका अध्ययन किया है। ज्ञान तो हमेशा सतताध्ययनसे और संस्कारसे प्राप्त होता है। क्या बिना संस्कारके लोग मेरी बराबरी कर सकते हैं? ॥३॥

विशेषार्थ—केशववर्णी अपनी अध्ययनप्रवृत्ति और संस्कार विशेष पर अभिमानसे कहता है कि मेरी विद्वत्ता किसीसे कम नहीं है ॥३॥

ज्ञान तो सदा मुफ़्तमें नहीं मिलता। मेरी निश्चित धारणा है कि मैंने धन देकर ही ज्ञान प्राप्त किया है। ऐसोंका ज्ञान पाण्डित्य पूर्ण है ॥४॥

विशेषार्थ—ऊपरकी पंक्तियोंसे यह स्पष्ट विदित होता है कि केशववर्णीके समकालीन कोई विद्वान् उसकी विद्वत्ताको वक्रदृष्टिसे देखनेवाला था। वह व्यक्ति आगेके पद्य (नं. ५) में सूचित गोपण्ण ही शायद हो। लेकिन अपनी गोम्मटसारकी टीकाके अन्तिम भागमें इस अंशका उल्लेख करनेका औचित्य क्या था यह एक कुतूहलकी बात मनमें रह जाती है। शायद उसका आशय यह रहा होगा कि वह अपने प्रतिस्पर्धियोंकी सत्त्वपरीक्षामें खरा उतरा है और अगाध पाण्डित्यवाला है ॥४॥

दुरात्मा गोपणगने मुझे मारनेके लिये मन्त्राक्षत स्वीकारनेके लिये कहा। आखिर वही दोषी ठहराया जाकर जिनागमको त्यागकर केशवण्णको (मुझे) छोड़कर चला गया। उसकी हार हुई ॥५॥

विशेषार्थ—ऊपरके पद्यसे यह वार्ता स्पष्ट हो जाती है कि गोपण्ण नामका समकालीन व्यक्ति था जिसका सम्बन्ध केशवण्णके साथ मधुर नहीं था। साथ ही जैनागमके ज्ञाता गोपण्ण जैसे व्यक्तिने अपने ऊपर जो झूठा अपवाद लगाया है उसकी चोटका दुःख भी केशवण्णको था। लेकिन स्पष्ट था कि वह अपवाद बेबुनियाद था ॥५॥

सुपार्श्वमनघं चन्द्रप्रभं त्रिभुवनाधिपम्। पुष्पदन्तं जगत्सारं वन्दे तद्गुणसिद्धये ॥३॥
शीतलं सुखसाद्भूतं पुण्यमूर्ति नमाम्यहम्। श्रेयान्सं वासुपूज्यं च केवलज्ञानसिद्धये ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[मत्तेभविक्रीडित वृत्त :]

पोणर्द्दों धूर्त्तजनोपसर्गमनिशं बेंबत्ते बेंबोळवा-
नोणद्दें गोम्मटसार वृत्तियनिदं कर्न्नाटवाक्यंगळि ।
प्रणुतद्धींधनरुं बहुश्रुतरिदं तिद्दिबुधर्द्धर्म्मभू-
षणभट्टारकदेवराज्ञेयनिदं संपूर्णमं माडिदें ॥६॥
नेरेदु शकाब्दमिदुवसुनेत्रशशिप्रमितं(१२८१)गळागि सं- ।
विरुतिरेयुं विकारिवरवत्सरचैत्रविशुद्ध पक्ष भा-
सुरतरपंचमीदिवसदंदिदु गोम्मटसारवृत्ति भा-
स्करनोगेदं विनेयजनहृत्सरसिजमनुरुळलच्चुतं ॥७॥

यो गुणैर्गणभृद्गीतो भट्टारकशिरोमणिः । भक्त्या नमामि तं भूयो गुरुं श्रीज्ञानभूषणम् ॥६॥
कर्णाटप्रायदेशेशमल्लिभूपालभक्तितः । सिद्धान्तः पाठितो येन मुनिचन्द्रं नमामि तम् ॥७॥

यद्यपि धूर्त जनोंने सदा उपद्रव मचाया फिर भी बिना डरे मैंने उसका सामना किया और धर्मभूषण भट्टारक देवकी आज्ञा पाकर गोम्मटसारकी कन्नड भाषामें टीका रची। इसमें यदि कोई त्रुटि रह जाय तो श्रुतपारंगत विद्वान् पण्डितगण उसको ठीक बनानेका अनुग्रह करें ॥६॥

विशेषार्थ—कृति निर्माण कालमें केशवण्णने स्वयं जिन समस्याओंका सामना किया था, यहाँ उसका उल्लेख किया है। वह कहता है कि मैंने अपवादोंको जीत लिया और इस कृति रचनामें मुझे मेरे गुरु धर्मभूषण भट्टारककी कृपाका अनुग्रह प्राप्त हुआ है। इन सब बातोंसे स्पष्ट है कि केशवण्णको कृतिरचनामें अनेकों कष्ट सहने पड़े, फिर भी गुरुके अनुग्रहसे उनने ग्रन्थको सम्पूर्ण किया। यहाँ केशवण्णकी बातोंमें विनयपूर्ण आत्मविश्वासकी झलक दीख पड़ती है ॥६॥

यह पद्यकृति रचनाकारकी न होकर प्रतिलिपिकारकी जान पड़ती है। प्रसिद्ध शालिवाहन शक वर्ष इन्दु-वसु-नेत्र-शशि (१८२१ उलटा करें तो १२८१ में) के विकारि संवत्सरके चैत्र शुदी पंचमीके शुभ दिनमें इस गोम्मटसारकी कर्नाटक वृत्तिको शिष्योंके हृदयको प्रफुल्लित करनेवाले श्रीभास्करने सम्पूर्ण किया ॥७॥

विशेषार्थ—इस गोम्मटसार वृत्तिकी प्रतिलिपि शालिवाहन शक संवत् १२८१ के विकारि संवत्सरके चैत्र शुक्ल पंचमीके पवित्र दिन भास्करने लिखकर पूर्ण किया ॥७॥

विमलं निर्जितानङ्गं प्राप्तानन्तचतुष्टयम् । अनन्तं धर्मनाथं च वन्दे स्वात्मोपलब्धये ॥५॥
शान्तिनाथं च कुन्थुं च अरं चैवाप्तमाम्यहम् । यथारूपातगुणोपेतान् यथाख्यातप्रसिद्धये ॥६॥
नेमिनाथं च पार्श्वं च वर्धमानं जिनेश्वरम् । त्रिकालमभिवन्देऽहं नवक्षायिकलब्धये ॥७॥
त्रिकालगोचराः सर्वेऽप्यर्हत्सिद्धसाधवः । निःश्रेयसपदं दद्युः शरणं तममङ्गलम् ॥८॥
यमाराध्यैव भव्यौघाः प्राप्ताः कैवल्यसम्पदः । शाश्वतं पदमापुस्तं मूलसंघमुपाश्रये ॥९॥
तत्र श्रीशारदागच्छे बलात्कारगणोऽन्वयः । कुन्दकुन्दमुनीन्द्रस्य नन्द्याम्नायचक्रतारकम् ॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाभेयमजितं देवं शंभवं भवतारकं । घातिकर्म्मप्रणाशाय प्रणमाम्यहमादरात् ॥
अभिनंदनमानंदरूपं सुमतिमच्युतं । पद्मप्रभं प्रभुं वंदे रत्नत्रयविशुद्धये ॥
सुपार्श्वमनघं चंद्रप्रभं त्रिभुवनाधिपम् । पुष्पदन्तं जगत्सारं वंदे तद्‍गुणसिद्धये ॥
शीतलं सुखसाद्‍भूतपुण्यमूर्त्ति नमाम्यहम् । श्रेयांसं वासुपूज्यं च केवलज्ञानसिद्धये ॥
विमलं निर्ज्जितानंगं प्राप्तानंतचतुष्टयम् । अनंतं धर्म्मनाथं च वंदे स्वात्मोपलब्धये ॥
शांतिनाथं च कुंथुं च अरं चेशान्नमाम्यहम् । षट्‍खंडवसुधाचक्रधर्म्मचक्रप्रणायकान् ॥
मल्लि सुव्रततीर्थेशं नमिं भक्त्या नमाम्यहम् । यथाख्यातगुणोपेतान्यथाख्यातप्रसिद्धये ॥
नेमिनाथं च पार्श्वं च वर्द्धमानं जिनेश्वरम् । त्रिकालमभिवंदेऽहं नवक्षायिकलब्धये ॥
श्रीपंचगुरुभ्यो नमः । श्रीमल्लिनाथाय नमः ॥ * ॥ * ॥ * ॥
श्रीमच्चौंडरसुपाध्याय सुपुत्र समंतभद्रदेवानां ग्रंथः परिसमाप्तोऽयं ॥

ज्ञाता धरघ्नागतवर्षयुक्ता पापोनितास्याच्छककालसंख्या ।
चालुक्ययुक्ता मुनिचित्रसमेता श्रीवर्द्धमानस्य समा भवेयुः ॥
श्रीमद्वंशसमुद्भवाः प्रविलसद्वृत्तोज्ज्वला निर्म्मलाः
प्रांचत्कांतिभरास्सदाप्तरुचयो भव्याः सुसेव्याः सतां ।
ये ते लोकशिरोमणित्वमधिकं संप्राप्य मुक्तोपमा (मुक्ता इवाऽऽ-)
भांतु स्वात्यमलामृतोदयभवैर्भास्वद्‍गुणैर्भूषिताः ॥

योऽभ्यर्थ्य धर्मवृद्धयर्थं मह्यं सूरिपदं ददौ । भट्टारकशिरोरत्नं प्रभेन्दुः स नमस्यते ॥८॥
त्रिविद्यविद्याविख्यातविशालकीर्तिसूरिणा । सहायोऽस्यां कृतौ चक्रेऽधीता च प्रथमं मुदा ॥९॥
सूरेः श्रीधर्मचन्द्रस्याभयचन्द्रगणेशिनः । वणिलालादिभव्यानां कृते कर्णाटवृत्तितः ॥१०॥
रचिता चित्रकूटे श्रीपार्श्वनाथालयेऽमुना । साधसांगासहेसाभ्यां प्रार्थितेन मुमुक्षुणा ॥११॥

तत्र श्रीमज्जिनधर्माम्बुधिवर्धनपूर्णचन्द्रायमानश्रीज्ञानभूषणभट्टारकशिष्येण सौगतसांख्यकणादभिक्षिवक्षुपादप्रभाकरादिपरवादिगजगंडभेरुंडप्रभाचन्द्रभट्टारकदत्ताचार्यपदेन त्रैविद्यविद्यापरमेश्वरमुनिचन्द्राचार्यमुखात् कर्णाटदेशाधिनाथप्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मीनिवासजैनोत्तममल्लिभूपालयत्नादधीतसिद्धान्तेन वणिलालाविहिताग्रहाद् गौर्जरदेशाच्चित्रकूटजिनदाससाहनिर्मापितपार्श्वप्रभुप्रासादाधिष्ठितेनामुना नेमिचन्द्रेणाल्पमेधसाऽपि भव्यपुण्डरीकोपकृतीहानुरोधेन सकलज्ञातिशेखरायमाणखंडेलवालकुलतिलक-साधुवंशावतंसजिनधर्मोद्धरणधुरीणसाहसांगसाहसहसाविहितप्रार्थनाधीनेन विशदत्रैविद्यविद्यास्पदविशालकीर्तिसहायादियं यथाकर्णाटवृत्ति व्यरचि ।

यावच्छ्रीजिनधर्मश्चन्द्रादित्यौ च विष्टपं सिद्धाः ।
तावन्नन्दतु भव्यैः प्रपाठ्यमाना त्वियं वृत्तिः ॥
निग्रन्थाचार्यवर्येण त्रैविद्यचक्रवर्तिना ।
संशोध्याभयचन्द्रेणालेखि प्रथमपुस्तकः ॥

॥ इत्यभयनन्दिनामाङ्कितायाम् ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीसर्व्वज्ञसुबोधवज्रतलभाक् स्यात्कार तीरोद्गुरो
गंभीरो वरनेमिचंद्रविसरद्वाक्चंद्रिकावर्द्धितः ।
विस्तीर्णो गुणरत्नभूषणभरस्सारार्थपूर्णो महा-
न्नित्यं गोम्मटसारसंज्ञितसुधांभोधिश्शिवायास्तु वः ॥
श्रीमद्धर्म्मसुधासमुद्रविजयोल्लासस्तमस्तोमभित्
भास्वद्भव्यचकोरसम्मदकरः प्रध्वस्ततापोत्करः ।
प्रांचत्पंचसुसंग्रहस्त्रिभुवनोद्योती सदानंदनो
जीयाद्भासुरबोधमाधवबलश्रीनेमिचंद्रोदयः ॥

गोम्मटसारवृत्तिर्हि नव्याद्भव्यैः प्रवर्तिता । शोधयन्त्वागमात् किञ्चित् विरुद्धं चेद् बहुश्रुताः ॥१२॥
निर्ग्रन्थाचार्यवर्येण त्रैविद्यचक्रवर्तिना । संशोध्याभयचन्द्रेणालेखि प्रथमपुस्तकः ॥१३॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रकृतायां गोम्मटसारापरनाम पञ्चसंग्रहवृत्तौ कर्मरचनास्वभावो नाम
नवमोऽध्यायः समाप्तः ।

संस्कृत टीकाकारकी प्रशस्तिका आशय

चौबीस तीर्थंकरोंको नमस्कार करनेके पश्चात् टीकाकार कहते हैं—जिसमें रत्नत्रयके द्वारा पूज्य अर्हन्तपदको प्राप्त करके मोक्ष जाते हैं वह मूल संघ जयवन्त हो। उसके सरस्वती-गच्छमें बलात्कारगण है। उसमें कुन्दकुन्द मुनीन्द्रका नन्दिसंघ है वह भी जयवन्त होओ। मैं अपने गुरु भट्टारक शिरोमणि ज्ञानभूषणको भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। कर्णाट देशके मल्लि राजाकी भक्तिसे जिसने मुझे जिनागम पढ़ाया है उन मुनिचन्द्रको नमस्कार करता हूँ। जिनने धर्मवृद्धिके लिए मुझे सूरिपद दिया उन प्रभाचन्द्र भट्टारकको नमस्कार करता हूँ। त्रैविद्य विशालकीर्ति सूरिने इस टीकाके रचनेमें सहायता की और बड़े हर्षसे प्रथम उसे पढ़ा। यह टीका चित्रकूटमें श्री पार्श्वनाथ जिनालयमें धर्मचन्द्र सूरि अभयचन्द्र भट्टारक वर्णीलाला आदि भव्य जीवोंके लिए साधुसांग और सहेसकी प्रार्थनापर कर्णाट-वृत्तिसे रची।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्टः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोम्मटसार ग्रन्थकी गणितात्मक प्रणाली

षट्खण्डागम ग्रन्थ सम्भवतः ईसाकी दूसरी सदीमें आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलिकी अद्भुत कृति है। इसमें-से प्रथम पाँच खण्डोंपर नवीं सदीमें आचार्य वीरसेन द्वारा विशाल धवला नामक टीका रची गयी। छठा खण्ड महाधवलके नामसे भी विख्यात है और महाबन्ध कहलाता है। ग्यारहवीं सदीमें नेमिचन्द्राचार्यने इन ग्रन्थोंके गणितीय सार रूप गोम्मटसार जीवकाण्ड तथा कर्मकाण्ड रूपमें रचना की। इन्हीं ग्रन्थोंकी केशववर्णी कृत कर्णाटवृत्ति जीवतत्त्वप्रदीपिका विलक्षण प्रतीकोंसे भरी हुई है और गणितज्ञोंके लिए अभूतपूर्व सामग्री प्रदान करती है।

इस टीकाके अतिरिक्त एक अपूर्ण टीका मन्दप्रबोधिका है और पण्डित टोडरमल कृत सम्यग्ज्ञान-चन्द्रिका है। पण्डित टोडरमलने अन्तःप्रज्ञासे अनेक प्रतीकोंके अर्थ समझनेका प्रयास किया, तथा अर्थ संदृष्टि अधिकार उक्त टीकाके अतिरिक्त निर्मित किया, जिसमें उन्होंने प्रायः प्रत्येक कठिन प्रतीकबद्ध पदको सरल वाक्यों या शब्दों द्वारा समझाया है। यह कार्य अठारहवीं सदीमें सम्पूर्ण किया गया।

प्रस्तुत निबन्धमें पण्डित टोडरमलके अभिप्रायकी सिद्धिके लिए उन्हींकी रचनाके आधारपर लोकोत्तर प्रमाणकी गणितात्मक प्रणालीको सरलतापूर्वक समझाया गया है। आशा है कि इसके द्वारा न केवल शोधार्थी अपितु जिज्ञासु मुमुक्षु भी लाभान्वित हो सकेंगे। इसके साथ ही विभिन्न पारिभाषिक शब्दोंके लक्षणके पठन-पाठन हेतु यहाँ प्रायः सभी गणितीय परिभाषाएँ दे दी गयी हैं। संदृष्टियोंके प्रयोग भी निर्दिष्ट कर दिये गये हैं। इस प्रकार प्रारम्भिक रूप से लेकर आवश्यक गणितीय सामग्रीको समझाते हुए, शोधार्थी अथवा मुमुक्षुको लब्धिसारकी बड़ी टीकामें गति हेतु तैयारी कराने का भी अवसर प्राप्त हो सकेगा।

§ १. भूमिका

किसी भी गणितीय प्रणालीमें अध्ययनके पूर्व उसमें प्रविष्ट प्रतीकोंकी जानकारी आवश्यक है। गोम्मटसारादि ग्रन्थोंकी टीकाओंमें इस प्रणालीके सार संक्षेपरूप अध्ययन हेतु, साथ ही उन्हें स्मरण रखने हेतु प्रतीकमय सामग्री निर्मित की गयी, जो पूर्ववर्ती ग्रन्थोंमें उपलब्ध नहीं है। तिलोयपण्णत्ती जैसे ग्रन्थोंमें कुछ प्रतीकबद्ध सामग्री है और कुछ धवला टीका ग्रन्थोंमें भी उपलब्ध होती है। किन्तु विशाल पैमाने पर यह सामग्री अंक संदृष्टि, अर्थ संदृष्टि तथा रेखा संदृष्टि रूपमें केशववर्णीकी कर्णाटकीटीकामें दृष्टिगत होती है। इसी प्रकार लब्धिसार क्षपणासारकी टीकामें सम्भवतः माधवचन्द्र त्रैविद्य तथा ज्ञानभूषणके शिष्य नेमिचन्द्र (१६ वीं सदी) द्वारा जो संदृष्टि प्रयोग हुआ वह भी विलक्षण है और विशेषकर धर्मके मर्मको कर्मके गणित द्वारा प्रकट करता प्रतीत होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व प्रथम ऐसे समस्त प्रतीकोंका स्वरूप दिखाना आवश्यक होनेसे उन्हें मूल रूपमें प्रस्तुत करना लाभप्रद होगा। साथ ही ऐसे प्रतीक उनके स्थानमें लेना आवश्यक होगा जो उनके स्थानमें अगले गहरे अध्ययनमें उपयोगी हों। ऐसे नवीन कार्यकारी प्रतीकोंको आधुनिक गणित के तारतम्यमें रखना भी अनिवार्य है, क्योंकि प्राचीन सामग्रीका प्रायोगिक रूप इसी आधारपर निखर सकेगा।

इसके पूर्व जो महत्त्वपूर्ण आधार है वह वैकल्पिक (Abstract) इकाइयोंको लेकर बनता है। प्रारम्भ परमाणुसे करते हैं जो अविभागी पुद्गल है और जो विश्राम अवस्थामें जितनी जगह घेरता है उसे प्रदेश कहते हैं। प्रदेशोंके आधारपर, उनकी सूचि, प्रतर अथवा घनमें समाये नये क्षेत्रमान स्थापित करता हैं जो उपमा मानके लिए आधारभूत हैं। इस प्रकार अंगुल, जगश्रेणीके उक्त तीनों रूप किसी भी राशि की गणात्मक संख्याका प्रतिनिधित्व अथवा निर्वाचन करते हैं। निश्चयकालकी पर्यायको समय कहते हैं, जो व्यवहारकालकी सर्वल्पितम इकाई हैं। इसे दूसरी तरह भी परिभाषित करते हैं। जितने कालमें कोई परमाणु दूसरे संलग्न परमाणु-प्रदेशका मन्दतम गतिसे अतिक्रमण करता है, उसे एक समय कहते हैं। इसी एक समयमें तीव्रतम गतिसे चलायमान परमाणु चौदह राजु गत प्रदेशोंका अतिक्रमण कर सकता है। इस प्रकार समय राशियोंसे पल्य तथा सागरके कालमान स्थापित करते हैं और उनका उपयोग अन्य अज्ञात राशियोंकी गणात्मक संख्याका निरूपण या प्रतिनिधित्व करनेमें होता है। यह कालमान भी उपमामान कहलाता है।

दूसरा मान संख्यामान है जिसमें गणना द्वारा संख्येय, असंख्येय तथा अनन्तकी अनेक प्रकारकी क्रमात्मक राशियाँ उत्पन्न कर उनके द्वारा अनेक अज्ञात राशियोंके द्रव्य प्रमाणको स्थापित करते हैं। इस प्रकार किसी भी अध्ययन योग्य राशिको द्रव्य प्रमाण, क्षेत्र प्रमाण और काल प्रमाणसे तौलते हैं तथा भाव प्रमाणमें स्थापित करते हैं। भावका तात्पर्य ज्ञानके उतने अविभाग-प्रतिच्छेद-राशिसे है जो केवल ज्ञान अविभागी प्रतिच्छेद राशिकी एक उपराशि ही होती है। सभी राशियाँ केवलज्ञानकी अविभागी प्रतिच्छेद राशिमें समायी हुई होती हैं और उससे छोटी ही होती हैं।

यहाँ अविभागी प्रतिच्छेद का अर्थ समझ लेना आवश्यक है। गुणोंमें गुणांशका विकल्प अविभागी प्रतिच्छेदको जन्म देता है। वैसे भी पुद्गल पदार्थको छेदते हुए अविभागी प्रतिच्छेदकी कल्पना वीरसेनाचार्यने धवल ग्रन्थ (पु. ४) में की है, जहाँ लोकके आयतनका छेदा है। कर्म सिद्धान्तके अध्ययनमें भी एक और विकल्प है जो परमाणुओंके स्निग्ध-रुक्ष स्पर्शके अविभागी प्रतिच्छेदोंसे परे है। वह है अनुभागके अविभागी प्रतिच्छेदकी कल्पना जिसका सम्बन्ध स्निग्ध-रुक्ष स्पर्शके अविभागी प्रतिच्छेदोंसे जोड़ा जा सकता है, पर स्पष्ट है कि दोनों तादात्म्य सम्बन्ध नहीं रखते होंगे। यदि हो तो उसे सिद्ध किया जाये।

इस प्रकार विभिन्न प्रमाणोंका वर्णन सिद्धान्त ग्रन्थोंमें है और उन्हें संदृष्टियों द्वारा दर्शाया गया है। उन्हें ठीक रूपमें समझने हेतु पण्डित टोडरमलने अलगसे अर्थ संदृष्टियोंपर दो अधिकार लिखे थे। एक गोम्मटसार जीवकाण्ड कर्मकाण्ड प्रकरणपर है तथा दूसरा लब्धिसार क्षपणासार प्रकरणपर है। इन्हीं अधिकारोंके आधार पर संदृष्टियोंका स्पष्टीकरण करेंगे ताकि विभिन्न कर्म सिद्धान्त सम्बन्धी गणितीय प्रणाली-का रूप समझा जा सके। संदृष्टि कभी-कभी एक ही होते हुए भी भिन्न-भिन्न प्रकरणोंमें भिन्न-भिन्न अर्थ प्ररूपित करती है। अतएव अंक, अर्थ एवं आकाररूप संदृष्टियोंको बड़ी सावधानीसे समझ लेनेपर कर्म सिद्धान्त का अधिकांश भाग स्मृतिमें रखना सरल हो जाता है। साथ ही अनेक प्रकरणोंका आधुनिक गणितसे तुलनात्मक अध्ययन भी सम्भव हो जाता है। यह भी प्रकट हो जाता है कि इन संदृष्टियोंमें क्या सुधार किया जाये ताकि आधुनिक ढंगसे गणित पढ़नेवाले कर्म सिद्धान्तकी गणितीय प्रणालीको भलीभाँति समझकर उसके प्रायोगिक रूप पर अनुसन्धान भी कर सकें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

§ २. संदृष्टियों का स्पष्टीकरण

विवक्षित द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावोंके जो प्रमाण आदि हैं उसे अर्थ कहते हैं। अर्थकी संदृष्टि अथवा सहनानीको अर्थ संदृष्टि कहते हैं।

शब्दोंके द्वारा अंकोंका बोध भी कराया जाता है। यथा : विधु = १, निधि = ९, अन्तरिक्ष = ०, इन्द्रिय = ५, करणीय = ५, कर्मन् = ८, कषाय = ४, गति = ४, जिन = २४, तत्त्व = ७, दिक् = ८, द्रव्य = ६, नय = २, पदार्थ = ९, रत्न = ३, (रत्न = ९ भी), रस = ६, लब्धि = ९, वर्ण = ५, व्यसन = ७, व्रत = ५, इत्यादि। विशेष वर्णनके किए महावीराचार्य कृत गणितसार संग्रह (शोलापुर, 1963) देखा जा सकता है।

अक्षरोंके द्वारा भी कहीं-कहीं अंकोंका निरूपण किया जाता है। इनमें एक पद्धति कटपयादि है।

कटपयपुरस्थवर्णैर्नवनव पंचाष्टकल्पितैः क्रमशः।
स्वर ञन शून्यं संख्यामात्रोपरिमाक्षरं त्याज्यं ॥

अर्थात्, निम्नरूपमें क आदि अक्षरों द्वारा संख्याओंका निरूपण होता है—

क	ख	ग	घ	ङ			च	छ	ज	झ	ञ	
१	२	३	४	५			६	७	८	९	०	
ट	ठ	ड	ढ	ण			त	थ	द	ध	न	
१	२	३	४	५			६	७	८	९	०	
प	फ	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
१	२	३	४	५	१	२	३	४	५	६	७	८
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ		ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ
०	०	०	०	०	०		०	०	०	०	०	०
			ओ	औ	अं		अः					
			०	०	०		०					

अक्षरकी मात्रा ऊपर कोई अक्षर होनेका भी कोई प्रयोजनीय अर्थ नहीं होता है।

प्रभृति अथवा इत्यादिको निर्दर्शित करनेके लिए = चिह्नका उपयोग हुआ है। उदाहरणार्थ ६५ = का अर्थ पणट्ठी अथवा ६५५३६ अथवा $(२)^{२^{४}}$ है। यह $२^{१६}$ का मान है। इसी प्रकार बादालको ४२ = द्वारा प्ररूपित किया जाता है जिसका मान $(२)^{२^{५}}$ अथवा $(२)^{३२}$ है। इसी प्रकार एकट्ठी अथवा १८ = का मान $(२)^{२^{६}}$ अथवा $(२)^{६४}$ है। जघन्यको भी ज = लिखा जाता है।

कर्मस्थिति रचनामें बीचकी संख्याओंको दर्शानेके लिए बिन्दुओं अथवा शून्योंका प्रयोग किया जाता है। यदि आदि निषेककी संख्या ५१२ हो और अन्तनिषेकको ९ द्वारा प्ररूपित किया गया हो तो बीचके निषेकोंका इसी प्रकार निदर्शन है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९　कहीं नामका आदि अक्षर ही संदृष्टि बन जाता है। यथा लक्षके ल, कोटिके लिए को,
०　जघन्यके लिए ज, इत्यादि। लक्ष कोटिको ल को, जघन्य ज्ञानको ज ज्ञा द्वारा निरूपित
०　करते हैं।
०　इसी प्रकार कोटाकोटिके लिए को २ (अर्थात् कोटिवर्ग) द्वितीय मूलके लिए
५१२　मू २ (अर्थात् किसी राशिके वर्गमूलका वर्गमूल) प्रयुक्त है। अंतःकोटाकोटिको

१४

अं को२ द्वारा निरूपित करते हैं जिसका अर्थ १ और (१०) के बीच स्थित कोई भी प्राकृत संख्या होता है। ६५००० को लिखने हेतु ६ ५ ० का उपयोग किया गया. यह बिन्दु बढ़ानेकी

३

प्रक्रियाके लिए नवीन संकेतनाका उपयोग है। इसी प्रकार तिलोयपण्णत्ती (९, १२४–२४) में

८

९० । ९६ । ५०० । ८ । ८ । ८ । ८ । ८ । ८ । ८ । ८ । का अर्थ (१०००) (९६) (५००) (८) है।

अब संख्यामान संबंधी प्राचीन संकेतोंका उल्लेख करेंगे—संख्यातको १ द्वारा, असंख्यातको a द्वारा, और अनन्तको ख द्वारा प्ररूपित किया जाता रहा है। इसी प्रकार जघन्य संख्यातके लिए २, उत्कृष्ट संख्यातके लिए १५, जघन्य परीत असंख्यातके लिए १६ सहनानी रूप है। आवलीकी सहनानी भी

२ है। उत्कृष्ट परीत असंख्यातके लिए २ अथवा आवली ऋण एक संकेत है। जघन्य युक्त असंख्यात भी आवलीके समान २ संकेत द्वारा निरूपित होता है। वह उत्कृष्ट परीत असंख्यातसे एक अधिक है।

उत्कृष्ट युक्ता संख्यातकी सहनानी ४ है, अर्थात् प्रतरावली ऋण एक। यह जघन्य असंख्यात असंख्यातसे एक कम है, क्योंकि यह प्रतरावली मात्र अथवा ४ है जो आवलीका वर्ग है। घनावलीका संकेत ८ है। यह आवली समय राशिका घन करनेपर प्राप्त होती है।

उत्कृष्ट असंख्यात असंख्यात की सहनानी २५६ है। यह जघन्य परीतानन्तसे एक कम है। जघन्य परीतानन्तका संकेत २५६ है। उत्कृष्ट परीतानन्तकी सहनानी ज जु अ है। जघन्य युक्तानन्तका संकेत ज जु अ है। वर्ग का संकेत व है। इस प्रकार उत्कृष्ट युक्तानन्तका संकेत ज जु अ व है। यह जघन्य अनन्तानन्तसे एक कम है क्योंकि जघन्य अनन्तानन्तका संकेत ज जु अ व है। जघन्य अनन्तानन्त वास्तवमें जघन्ययुक्त अनन्तका वर्ग होता है।

अब निम्नलिखित सहनानियाँ प्रकृत रूपमें सरलतासे समझी जा सकती हैं—

सम्पूर्ण जीव राशि	१६	: स्पष्ट है कि संसारी जीवराशि और सिद्ध जीव मिलकर सम्पूर्ण जीवराशि बनती है।
संसारी जीव राशि	१३	
सिद्ध जीव राशि	३	
पुद्गल परमाणु राशि	१६ ख	: स्पष्ट है कि यह राशि सम्पूर्ण जीव राशिसे अनन्त गुणी है।
काल समय राशि	१६ ख ख	: यहाँ काल समय राशि पुद्गल परमाणु राशिसे अनन्त गुणी निर्दशित है।

आकाश प्रदेश राशि	१६ ख ख ख	: स्पष्ट है कि आकाश प्रदेश राशि वस्तुतः काल समय राशिसे अनन्तगुणी है।
केवलज्ञान अथवा उत्कृष्ट अनन्तानंत	के	: केवलज्ञानकी अविभागी प्रतिच्छेद राशिको उत्कृष्ट अनन्तानन्त संख्यामानवाली माना गया है। इससे बड़ी कोई राशि नहीं है।
केवलज्ञानका प्रथम मूल	के मू १	: इसे (के)$^{\frac{1}{2}}$ द्वारा निरूपित कर सकते हैं.
केवलज्ञानका द्वितीय मूल	के मू २	: इसे (के)$^{\frac{1}{4}}$ द्वारा निरूपित कर सकते हैं।
पल्य	प	
सागर	सा	
सूच्यंगुल	२	: यह संकेत आवलीका भी है। यह अंगुलमें समाविष्ट प्रदेश राशि है।
प्रतरांगुल	४	: अंगुल प्रदेश राशिका वर्ग।
घनांगुल	६	: अंगुल प्रदेश राशिका घन।

नोट : यदि अंगुल के लिए अं और आवलिके लिए आ संकेत लिये जायें तो विशेष सुविधा हो सकेगी। इसी प्रकार जगश्रेणी के लिए भी श्रे का संकेत सरल पाया जायेगा। हम इन तीन संदृष्टियोंका उपयोग आगे करेंगे।

जगश्रेणी	—	: इस क्षैतिज रेखा द्वारा जगश्रेणीमें स्थित प्रदेश राशि प्ररूपित की जाती है।
जगप्रतर	=	: इन दो रेखाओं द्वारा श्रेणीके वर्ग में स्थित प्रदेश राशि निरूपित की जाती है।
घनलोक	≡	: इन तीन क्षैतिज रेखाओं द्वारा जगश्रेणीसे बने घनमें स्थित प्रदेश राशि प्ररूपित होती है।
रज्जु	$\frac{—}{७}$	: क्षैतिज रेखा के नीचे लिखे ७ का भाग जगश्रेणी राशिमें देने पर रज्जु अथवा रज्जुमें स्थित प्रदेश राशिका निरूपण होता है।
रज्जु प्रतर	$\frac{=}{४९}$	: उपर्युक्त रज्जु राशिका वर्ग रज्जु प्रतर राशि होता है। यहाँ अंश तथा हर, दोनों ही वर्गित किये गये हैं।
रज्जु घन	$\frac{≡}{३४३}$	: यहाँ रज्जु राशिका घन निरूपित है। अंश और हर जो रज्जुको निरूपित करते हैं, उनके घन करनेपर रज्जुघन स्थित प्रदेश राशि संख्या उत्पन्न होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पल्य राशिकी अर्द्धच्छेद राशि	छे	: पल्य राशिको तबतक अर्द्धित किया जाता है जबतक १ प्राप्त न हो। जितने बार इस विधिमें अर्द्धित किया गया वही संख्या अर्द्धच्छेद है। यथा—१६ या $२^४$ के अर्द्धच्छेद ४ होते हैं। इसका संकेत $\log_२$ प सरल है।
पल्यकी वर्गशलाका राशि	व	: पल्यकी अर्द्धच्छेद राशिकी भी अर्द्धच्छेद राशिको वर्गशलाका राशि कहते हैं। इसे $\log_२$ $\log_२$ प द्वारा भी निरूपित किया जा सकता है।
सागरकी अर्द्धच्छेद राशि	छे १	: यहाँ सागरकी अर्द्धच्छेद राशि पल्यकी अर्द्धच्छेद राशिसे संख्यात अधिक है। अस्तु इसे सरल रूपमें $\log_२$ प + १ भी लिखा जा सकता है।
सागरकी वर्गशलाका राशि		: इसे $\log_२$ $\log_२$ सा लिखा जा सकता है। पण्डित टोडरमलने लिखा है कि सागरकी वर्गशलाका राशि नहीं होती है।
सूच्यंगुलकी अर्द्धच्छेद राशि	छे छे	: इसे $\log_२$ प $\log_२$ प भी लिखा जा सकता है क्योंकि पल्यकी अर्द्धच्छेद राशिका वर्ग ही सूच्यंगुलकी अर्द्धच्छेद राशि है। पुनः इसे $\log_२$ अं भी लिखा जा सकता है। इस प्रकार अंगुल स्थित प्रदेश राशिका सम्बन्ध पल्य गत समय राशिसे स्थापित किया गया है।
सूच्यंगुलकी वर्गशलाका राशि	व २	: इसे $\log_२$ $\log_२$ अं लिखा जा सकता है। वस्तुतः पल्यकी अर्द्धच्छेद राशि $\log_२$ प के वर्ग $\log_२$ प $\log_२$ प के अर्द्धच्छेद पुनः करनेपर २ $\log_२$ $\log_२$ प प्राप्त होता है जो पल्यकी वर्गशलाका राशिका द्विगुणित है।
प्रतरांगुलकी अर्द्धच्छेदराशि	छे छे २	: इसे $\log_२ (अं)^२$ लिखा जा सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि यह अंगुलकी अर्द्धच्छेद राशिका द्विगुणित है। logarithm के नियमोंसे समझ लेना चाहिए। (धवला पु० ४ में शलाका गणन (लघुरिक्थ) के नियम डा. ए. एन. सिंहके प्रस्तावना रूप लेखमें देखिए)
प्रतरांगुलकी वर्गशलाका राशि	१—व २	: इसे $\log_२ \log_२ (अं)^२$ भी लिखा जा सकता है। स्पष्ट है कि इसका मान १ + $\log_२$ $\log_२$ (अं) अथवा १ + व २ है। इसे १ + २ $\log_२$ $\log_२$ प भी लिख सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घनांगुलकी अर्द्धच्छेद राशि	छे छे ३	: इसे $\log_२ (अं)^{\frac{3}{2}}$ भी कहते हैं। यह ३ $\log_२$ (अं) है अर्थात् ३ $\log_२$ प $\log_२$ प अथवा ३ छे छे है।
घनांगुलकी वर्गशलाका राशि	व २	: इसे $\log_२ \log_२ (अं)^3$ लिख सकते हैं। यह $\log_२$ (३ $\log_२$ (अं)) है अथवा $\log_२$ ३ + $\log_२$ $\log_२$ अं है जिसे निकटतः १ + २ $\log_२ \log_२$ प अथवा १ + २ व रूपमें लिखना सही है!

(नोट : यहाँ पण्डित टोडरमलने लिखा है कि द्विरूप वर्गधारामें जितने स्थान जानेपर सूच्यंगुल प्राप्त होता है, उतने ही स्थान आनेपर द्विरूप घनधारामें घनांगुल होता है। स्पष्ट है कि यहाँ अनुमानसे १ को विलुप्त कर दिया गया है जो निकटतः $\log_२$ ३ का मान हो सकता है।)

जगश्रेणीकी अर्द्धच्छेद राशि	छे छे छे ३ / a	: इसे वि छे छे ३ भी लिखा जाता है जहाँ वि का अर्थ विरलन राशि है। इसका मान $\frac{\log_२ प}{a} \log_२ (अं)^3$ माना गया है।

[नोट : हम इसे $\log_२$ श्रे भी लिख सकते हैं। वस्तुतः इसका मान तिलोयपण्णत्तिमें-से इस आधारपर किया गया है कि राशितः ($\log_२$ पल्य/असंख्यात)

जगश्रेणी = [घनांगुल] $^{[\log_२ प / a]}$

अथवा श्रे = [अं ³]

$$\therefore \log_२ श्रे = \frac{\log_२ प}{a} \log_२ (अं)^3 = \frac{\log_२ प}{a} (३) (\log_२ अं)$$

$$= \frac{\log_२ प}{a} (३) (\log_२ प) (\log_२ प) \quad]$$

जगश्रेणीकी वर्गशलाका राशि	व / १६।२ / व २	: इसे $\log_२ \log_२$ श्रे भी लिख सकते हैं। इसे $\log_२$ $\frac{\log_२ प}{a} \log_२ (अं)^3$] भी लिख सकते हैं। अर्थात् यह $\log_२ \log_२ प - \log_२ a + \log_२ \log_२ अं^3$ है।

[नोट : पण्डित टोडरमलने इसे इस रूपमें लिखा है कि १६ जघन्यपरीत असंख्यात लेकर $\frac{\log_२ \log_२ प}{२ (जघन्य परीतासंख्यात)}$ + $\log_२ \log_२ अं^3$ रूपमें बतलाया है।]

जगप्रतरकी अर्द्धच्छेद राशि	छे छे छे ६ / a	: इसे $\log_२ श्रे^2$ लिखते हैं। स्पष्ट है कि यह २ $\log_२$ श्रे होता है अर्थात् जगश्रेणीकी अर्द्धच्छेद राशिसे द्विगुणित होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जगप्रतरकी वर्गशलाका राशि	१— व १६।२ व २	: इसे $\log_2 \log_2$ (श्रे)^2 लिख सकते हैं। अस्तु यह $\frac{१ + \log_2 \log_2 प}{२ (\text{जघन्य परीतासंख्यात})}$ + + $\log_2 \log_2$ (अ)^3 लिखा जा सकता है।)
घनलोककी अर्द्धच्छेद राशि	छे छे छे ९ a	: इसे $\log_2$ (श्रे)^3 लिख सकते हैं। स्पष्ट है कि यह ३ $\log_2$ श्रे होनेसे जगश्रेणीकी अर्द्धच्छेद राशिसे त्रिगुणित होता है।
घनलोककी वर्गशलाका राशि	व १६।२ व २	: इसे $\log_2 \log_2$ (श्रे)^3 लिख सकते हैं। इस प्रकार इसका मान $\log_2$ ३ + + $\frac{\log_2 \log_2 प}{२ (\text{जघन्यपरीत असंख्यात})}$ + $\log_2 \log_2$ (अ)^3 है। स्पष्ट है कि प्राचीन प्रतीकोंमें कुछ त्रुटि रह गयी है।

[नोट : पण्डित टोडरमलने $\log_2$ ३ की उपेक्षा की है, वह इस आधारसे कि अनुमानतः असंख्यातकी तुलनामें १ उपेक्षित हो सकता है। कारण यह भी है कि द्विरूप घनधारामें जितने स्थान जानेपर जगश्रेणी प्राप्त होती है, उतने-उतने ही स्थान द्विरूपघनधारामें होनेपर घनलोक होता है।]

संख्यात	४ अथवा ५	: कहीं-कहीं संख्यातके लिए ४ अथवा ५ सहनानी रूप लिये गये हैं।
असंख्यात	९	: इसी प्रकार ९ के सम्बन्धमें भी है।
आवली असंख्यात	९	
संकलन	—	: क्षैतिज रेखाका प्रयोग धनके लिए अथवा योगके लिए हुआ है।
एक अधिक लक्ष	१— १ ल अथवा ल	
दो अधिक लोक	२— ≡	: यह स्पष्ट है, क्योंकि ≡ घनलोककी संदृष्टि है।
घनलोक अधिक अनन्त	≡ ख	: वास्तवमें यहाँ ख के ऊपर एक उदग्र लकीर भी आवश्यक थी। इसे श्रे^{3}/ख भी लिखा जा सकता है।
अजीव द्रव्य परिमाण	३ ≡ १६।ख	: यहाँ १६ ख पुद्गल द्रव्य है, ≡ काल द्रव्यका परिमाण है, शेष धर्म, अधर्म एवं आकाश हेतु ३ का उपयोग किया गया प्रतीत होता है।
किंचित् अधिक अनन्त	। ख	: यहाँ ख के ऊपर उदग्र लकीर अनन्तके कुछ कम राशि बतलानेके लिए है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो राशि अधिक संख्यात	॥ १	: दो राशियां संख्यातमें संयुक्त करने हेतु यहाँ दो उदग्र लकीरें संख्यातकी संदृष्टिके ऊपर रखी गयी हैं।
घटाना या व्यवकलन क्रियाकी संदृष्टियाँ अलग-अलग	० - — ~~~	: इन चारों सहनानियों द्वारा घटानेकी गणितीय प्रक्रिया दर्शायी जाती है। उदाहरण आगे दिये गये हैं।
एक कम कोटि	० १ को अथवा - को	: यहाँ कोटि ऋण एकको उदाहरण रूपमें निरूपित किया गया है। १ के ऊपर ० का चिह्न बतलाता है कि १ को कोटि को में-से घटाया जाना है। इसी प्रकार नीचे भी।
एक कम अनन्त	- ख	: यहाँ अनन्त ऋण एकका निदर्शन है।
दो कम घनलोक	० २ ≡	: स्पष्ट है कि घनलोक ≡ है तथा इस प्रदेश राशिमें-से २ घटाया जाना है, अस्तु उसके ऊपर शून्य संकेत बनाया है। स्थानमान पद्धतिके विकासका इस उदाहरणसे पता चलता है।
एक कम लक्ष	ल ० १	: यहाँ ०/१ की स्थिति बदल दी गयी है।
दो कम लक्ष	ल—२	: यहाँ ऋण चिह्नने आधुनिक रूप लिया है। हालांकि यह प्राचीन है।
दो कम कोटि	को ~~~ २ अथवा को ० २	: यहाँ ऋणके लिए लहरिया लकीरको क्षैतिज रूपमें लिया है। साथ ही ०/२ की स्थिति बदल दी गयी है। ये सब क्रमिक विकासके चिह्न हैं, अथवा स्थानान्तर विकासक्रममें हैं।
किंचित् ऊन अनन्त	ख —	: किंचित् ऊनके लिए यह चिह्न वैज्ञानिक है, क्योंकि वह जिसे घटाया जाना है, लेखीमें नगण्य है, ख की तुलनामें।
एकेन्द्री जीवराशि	१३ =	: यहाँ संसारी जीवराशि १३ में से विकलेन्द्री और सकलेन्द्री जीवराशियाँ घटायी गयी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाँच कम लक्ष	ल ⌣ ५ अथवा $\frac{ल}{५}$)	: यहाँ सीधी लकीरके स्थानमें चन्द्रकलाका संकेत दिया है।
पल्यकी वर्गशलाकाकी अर्द्धच्छेद राशिसे हीन पल्यकी अर्द्धच्छेदराशि	छे व छे (⌣)	: इसे Log_2 प – Log_2 Log_2 Log_2 प लिख सकते हैं।
पाँच गुणा लाख	ल ५	: यहाँ ५ का गुणा इकाई की ओरसे किया गया है।
असंख्यातगुणा घनलोक	≡a व	: इसे श्रे ३ व भी लिख सकते हैं।
पल्यका संख्यातवाँ भाग	$\frac{प}{१}$	: विभाजनकी यह संदृष्टि बहुधा उपयोगमें लायी जाती रही है। इसे $\frac{प}{१}$ रूपमें भी लिखा जा सकता है।
जगश्रेणीका संख्यातवाँ भाग	$\frac{—}{१}$	: इसे श्रे ÷ १ भी लिखा जा सकता है।
केवलज्ञानका अनन्तवाँ भाग	$\frac{के}{ख}$	: इसे $\frac{के}{ख}$ रूपमें लिख सकते हैं।
बादाल वर्ग	४२ = ४२ =	: स्पष्ट है कि यहाँ बादालको वर्गित किया गया है। यह [₂३२]², राशि है।
घनांगुलके संख्यातवें भागके घनकी संदृष्टि	$\frac{६}{१}$ । $\frac{६}{१}$ । $\frac{६}{१}$	: इसे $\frac{अं^3}{१}$ $\frac{अं^3}{१}$ $\frac{अं^3}{१}$ रूपमें भी लिखा जा सकता है। इस प्रकार घनके लिए उसी राशिको तीन बार उक्त रूपमें लिखा जाता है।

अब कुछ उदाहरण देते हुए उपर्युक्त संदृष्टिके प्रयोग दिखाते हैं—

१—

ल ३ ल १००० / ४ ₒ⌒
१० ल १०० / ५

इसे
$$\frac{ल\,(३)\,\frac{ल}{४}\,(१०००+१)}{(१०)\,\frac{ल}{५}\,(१००-१)}$$
रूपमें समझेंगे।

१—

६ । ८ । व / व ₒ⌒
प / व $\frac{८}{व}$

अथवा
$$\frac{अं^3\,\frac{आ^3}{ə}\,(ə+१)}{\frac{प}{ə}\left(\frac{आ^3}{ə}-१\right)}$$
रूपमें होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ प ⌐Ω ə	अथवा	अं^{3} ÷ (प/ə)$^{⌐Ω}$ रूपमें होगा।
= ४ २ ə	अथवा	श्रे^{२}/अं^{२} ÷ आ/ə रूपमें होगा।
⌐Ω ल ५ । ४ । ३	अथवा	ल [(५) (४) (३) – १]
⌐—Ω— ल ५ । ४ । ३ ।	अथवा	ल (५) (४) [(३) – १]
अन्तर्मुहूर्त या २ १	अथवा	संख्यात आवली
	अथवा	आवली + १ समयसे लेकर मुहूर्त – १ समय या भिन्न मुहूर्त तक

षट्स्थानपतित हानिवृद्धि

अनन्तभाग उर्वंक	उ	वृद्धि हानि	वृ/ख हा/ख
असंख्यात भाग	४	वृद्धि हानि	वृ ÷ ə हा ÷ ə
संख्यात भाग	५	वृद्धि हानि	वृ ÷ १ हा ÷ १
संख्यात गुण	६	वृद्धि हानि	वृ १ हा १
असंख्यात गुण	७	वृद्धि हानि	वृ ə हा ə
अनन्त गुण	८	वृद्धि हानि	वृ ख हा ख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल परिवर्तन संदृष्टि

गृहीत	१	एक
अगृहीत	०	बिन्दु
मिश्र	×	हंसपद
सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग बार अनन्त भाग वृद्धि	उ उ	$\frac{व}{ख}$ $\frac{व}{ख}$ $\left(\frac{अं}{a}\right.$ बार $\left.\right)$

करण

अनिवृत्तिकरणकाल	२ १	: संख्यात आवली अथवा आ १
अपूर्वकरणकाल	२ १ १	: आ १ १
अधःकरण काल	२ १ १ १	: आ १ १ १

कर्म सम्बन्धी संदृष्टि

समय प्रबद्ध	स	
उत्कृष्ट समय प्रबद्ध	स ७ अथवा स ३२	
सत्त्व : किंचिदूनद्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रबद्ध	स ७ १२ —	स्पष्ट है कि ८ संदृष्टि गुणहानिका प्रतीक है।

कर्म स्थिति रचना सम्बन्धी संदृष्टि (विशेष परिभाषाएँ बादमें दी गयी हैं।)

आबाधा काल	|	: यह एक उदग्र रेखा है। इसे टाइम लेग भी कह सकते हैं।
अचलावली	|	: यही चिह्न है। आवली गत निषेक यहाँ अचल होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निषेक हानि

: आधारसे ऊपरकी ओर निषेक कम होते जाते हैं।

उदयावली

: संकेत वही है। यहाँ ऐसी आवली गत निषेकोंका संकेत है जो उदयमें आनेवाले होते हैं।

उच्छिष्टावली

: इसका भी वही संकेत है। यह ऐसी आवली गत निषेकोंका संकेत है जो उच्छिष्ट होते हैं।

उपरितन स्थिति

: ऊपरकी स्थितिवाले निषेकोंका संकेत इसके द्वारा मिलता है।

आबाधाके ऊपर निषेक रचना

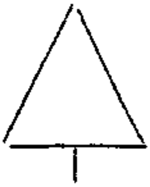

संयुक्त रचना

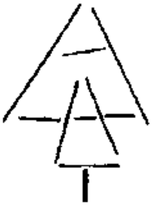

वर्गणा अनुभाग

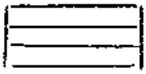

संयुक्त

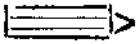

वर्ग

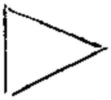

संयुक्त रचना

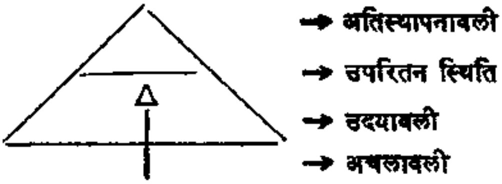

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणाम सम्बन्धी श्रेणियोंमें प्रयुक्त सूत्र

गणितसार संग्रह (महावीराचार्य) में कुछ विधियाँ समीकरण हल करनेकी दी गयी हैं जिनसे कूटस्थिति या अनुमानसे अज्ञात राशिका मान निकाला जाता है। इनका उपयोग करण आदिसे सम्बन्धि गणितमें होता है—

$$\left.\begin{array}{l}\text{सर्वधन या}\\ \text{श्रेणियोग}\end{array}\right\} = \frac{\text{गच्छ}}{२}\left[२\,(\text{आदि}) + (\text{गच्छ}-१)\,\text{चय}\right]$$

$$\text{चय} = \frac{\text{श्रेणियोग}-(\text{गच्छ})\,(\text{आदि})}{\dfrac{(\text{गच्छ}^{२}-\text{गच्छ})}{२}}$$

$$= \frac{\text{श्रेणियोग}}{(\text{गच्छ}^{२}} \times \frac{१}{\text{संख्यात}}$$

$$\text{चयधन} = \text{सर्वधन} - (\text{गच्छ})\,(\text{आदि})$$

$$\text{आदि} = \frac{\text{सर्वधन} - \text{चयधन}}{\text{गच्छ}}$$

$$\text{आदिधन} = \text{सर्वधन} - \text{चयधन} = \text{आदि} \times \text{गच्छ}$$

अंग्रेजी में
सर्वधन = sum
गच्छ = number ofterms
आदि = first term
चय = common differnnce

यथा अधःप्रवृत्तकरणमें

सर्वधन	≡ a	अथवा $श्रे^{3}$ a
गच्छ	२१११	अथवा आ १११
चय	≡ a / २१११।२१११।१	अथवा $\frac{श्रे^{3} a}{(\text{आ १११})(\text{आ १११})\,(१)}$
चयधन	∼ ⌂ / ≡ a।२१११ / २१११।१।२	अथवा $\frac{श्रे^{3} a\,(\text{आ १११}-१)}{(\text{आ १११})\,१\,(२)}$
आदिधन	१ —— ∼ ⌂ / ≡ a।२१११।१।२ / २१११।१२	अथवा $\frac{श्रे^{3}\,व\,[१+\text{आ १११}\,(२१-१)]}{(\text{आ १११})\,(१)\,(२)}$
प्रथम समय सम्बन्धी परिणामपुंज	१ —— ∼ ⌂ / ≡ a२१११।१२ / २१११।२१११।१।२	अथवा $\frac{श्रे^{3}\,a\,[१+\text{आ १११}\,(२१-१)]}{(\text{आ १११})\,(\text{आ १११})\,(१)\,(२)}$
अंत समय सम्बन्धी परिणाम पुंज	१ — ⌂ — ∼ — / ≡ a।२१११।१।२ / २१११।२१११।१।२	अथवा $\frac{श्रे^{3}\,a\,[\text{आ १११}\,(२१+१)-१]}{(\text{आ १११})\,(\text{आ १११})(१)\,(२)}$

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

अनुकृष्टि अर्थ संदृष्टि

गच्छ २ ११ अथवा आ ११

ऊर्ध्वचय $\frac{\equiv a}{\text{२११११।२१११। १}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 \, a}{(\text{आ } १११)\,(\text{आ } १११)\,(१)}$

अनुकृष्टिचय $\frac{\equiv a}{\text{२१११।२१११।१।२११}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 a}{(\text{आ } १११)\,(\text{आ } १११)\,(१)\,(\text{आ } ११)}$

चय धन $\frac{\equiv a \text{ । २११।२११}}{\text{२१११।२१११।१।२११।२}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 a\,(\text{आ}११-१)}{(\text{आ } १११)\,(\text{आ } १११)\,(१)\,(२)}$

आदिधन $\frac{\equiv a \text{ । २१११ । १ २}}{\text{२१११।२१११।१२}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 a[२ \times \text{आ}११(१\,(२१-१)-१)]}{(\text{आ } १११)\,(\text{आ } १११)\,(१)\,(२)}$

प्रथम समय सम्बन्धी प्रथम खण्ड

$\frac{\equiv a \text{ । २ १ १ १ । १ । १ २}}{\text{२१११ । २१११ ।१। २११। २}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 a\,[\,४ + \text{आ } ११\,\{१(२१-१) - १\}\,]}{(\text{आ } १११)\,(\text{आ } १११)\,(१)\,(\text{आ } ११)\,(२)}$

प्रथम समय सम्बन्धी अन्तका खण्ड

$\frac{\equiv a \text{ । २ १ १ १ । १ । २}}{\text{२१११ । २१११ ।१। २११ । २}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 \, a\,[\,\text{आ } ११\,\{\,१\,(२१-१) + १\}\,]}{(\text{आ } १११)(\text{आ } १११)\,(१)\,(\text{आ}११)\,(२)}$

अन्त समय सम्बन्धी प्रथम खण्ड

$\frac{\equiv a \text{ । २ १ १ १ । १ । २}}{\text{२१११ । २१११ ।१। २११। २}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 \, a\,[\text{आ } ११\,\{१\,(२१ + १) - १\}]}{(\text{आ } १११)(\text{आ } १११)\,(१)\,(२)\,(\text{आ } ११)}$

समय सम्बन्धी अन्त खण्ड

$\frac{\equiv a \text{ । २ १ १ १ । १ । २}}{\text{२१११ । २१११ । १ ।२। २११}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 \, a\,[\text{आ } ११\{१(२१ + १) + १\}-२]}{(\text{आ } १११)(\text{आ } १११)\,(१)(२)(\text{आ } ११)}$

उपर्युक्त परिणामोंमें षट्स्थान राशि

$\equiv a$

$४१ \frac{१-}{\frac{२}{a}} \frac{१-}{\frac{२}{a}} \frac{१-}{\frac{२}{a}} \frac{१-}{\frac{२}{a}} \frac{१-}{\frac{२}{a}}$ अथवा $\frac{\text{श्रे}^3 \, a}{\text{अं}^2 \, १ \left(\frac{\text{अं} + १}{a}\right)^५}$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूक्ष्म साम्पराय विवरणमें

जघन्य वर्गणा	व
एक गुणहानिमें स्पर्धक प्रमाण	९
नाना गुणहानि	ना
अनन्त	ख
अपकर्षण भागहार	उ
असंख्यात गुणा अपकर्षण भागहार	उ । a
एक स्पर्धकमें वर्गणाओंका प्रमाण	४
उत्कृष्ट पूर्व स्पर्धकके वर्गकी संदृष्टि	व ९ ना
जघन्य पूर्व स्पर्धकके वर्गकी संदृष्टि	व
उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धक के वर्गकी संदृष्टि	व ख
जघन्य अपूर्व स्पर्धक के वर्गकी संदृष्टि	व ख ९ उ a
उत्कृष्ट बादर कृष्टिके वर्गकी संदृष्टि	व ख ९ ख उ a
जघन्य बादर कृष्टिके वर्गकी संदृष्टि	व ख ९ ख ४ उ a ख
उत्कृष्ट सूक्ष्म कृष्टि के वर्गकी संदृष्टि	व ख ९ ख ४ ख उ a ख
जघन्य सूक्ष्मकृष्टिके वर्गकी संदृष्टि	व ख ९ ख ४ ख ४ उ a ख ख

गुणश्रेणी निर्जरामें संदृष्टियाँ इसी प्रकार सरल हैं। ये अर्थ संदृष्टि अधिकारमें प्राप्य हैं।

§ ३. अर्थ एवं संज्ञाका स्पष्टीकरण

गोम्मटसारके दूसरे भाग कर्मकाण्डमें जैनकर्मसिद्धान्तका वर्णन है। उसके प्रारम्भमें कहा है कि शरीर सहित जीव प्रति समय सर्वांगसे कर्म और नोकर्मको ग्रहण करता है, जैसे आगसे तपा हुआ लोहपिण्ड जलको ग्रहण करता है। सभी शरीरोंकी उत्पत्तिके कारण कार्मणशरीरको कर्म या द्रव्यकर्म कहते हैं और शेष चार शरीरोंको नोकर्म कहते हैं। यहाँ 'नो' शब्दका प्रयोग ईषत् अथवा स्तोकके अर्थमें है। औदारिक, वैक्रियिक, आहारक और तैजसनाम कर्मके उदयसे चार शरीर होते हैं। ये आत्मगुणोंके घातक नहीं होते। इसलिए इन्हें नोकर्मशरीर कहते हैं। ये कर्मशरीरके सहायक होते हैं (गो. जी. २४४)।

कर्म शब्दके अनेक अर्थ हैं। वीर्यान्तराय और ज्ञानावरणके क्षयोपशमकी अपेक्षासे आत्माके द्वारा निश्चयनयकी अपेक्षा आत्मपरिणाम और पुद्गलके द्वारा पुद्गल परिणाम तथा व्यवहारनयसे आत्माके द्वारा पुद्गल परिणाम और पुद्गलके द्वारा आत्मपरिणाम जो किये जाते हैं वह यहाँ कर्म विवक्षित है। वे जीवको परतन्त्र करते हैं अथवा उनके द्वारा जीव परतन्त्र किया जाता है अतः उन्हें कर्म कहते हैं। अथवा मिथ्यादर्शन अविरति, कषाय और योगरूप परिणामोंके द्वारा जीवके द्वारा किये जाते हैं अतः वे कर्म कहे जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्मके मुख्य भेद दो हैं—द्रव्यकर्म और भावकर्म। ज्ञानावरण आदि पुद्गल द्रव्यका पिण्ड द्रव्यकर्म है। और उसमें जो शक्ति है वह भावकर्म है, अथवा कार्यमें कारणका उपचार करके उस शक्तिके निमित्तसे आत्मामें उत्पन्न मिथ्यात्व राग, द्वेष आदि भाव भावकर्म हैं। द्रव्यकर्म और भावकर्ममें निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध होनेसे द्रव्यकर्मसे भावकर्म और भावकर्मसे द्रव्यकर्मकी परम्परा अनादि है।

शुभ और अशुभ कर्मोंके आनेके द्वार रूप **आस्रव** हैं। आत्मा और कर्म प्रदेशोंका परस्परमें एक क्षेत्रवगाह **बन्ध** है। आस्रवका रोकना **संवर** है। कर्मोंका एक देश पृथक् होना **निर्जरा** है। सर्व कर्मोंका आत्मासे अलग हो जाना **मोक्ष** है।

संज्ञाके अनुसार गुण रहित वस्तुमें व्यवहार हेतु स्वेच्छा की गयी संज्ञाको **नाम** कहते हैं। काष्ठ कर्म, पुस्तककर्म, चित्रकर्म और अक्ष विक्षेप आदिमें "यह वह है", इस प्रकार स्थापित करनेको **स्थापना** कहते हैं। जो गुणोंके द्वारा प्राप्त हुआ था, या गुणोंको प्राप्त हुआ था अथवा जो गुणोंके द्वारा प्राप्त किया जायेगा या गुणोंको प्राप्त होगा उसे **द्रव्य** कहते हैं। वर्तमान पर्यायसे युक्त द्रव्यको **भाव** कहते हैं। प्रमाण और नयोंसे पदार्थोंका **ज्ञान** होता है।

किसी वस्तुके स्वरूपका कथन करना **निर्देश** है। **स्वामित्व**का अर्थ आधिपत्य है। जिस निमित्तसे वस्तु उत्पन्न होती है वह **साधन** है। आधारको **अधिकरण** कहते हैं। जितने काल तक वस्तु रहती है वह **स्थिति** है। **विधान**का अर्थ प्रकार या भेद है। इनसे पदार्थोंका ज्ञान होता है।

सत् अस्तित्वका सूचक है। **संख्या**से भेदोंकी गणना होती है। वर्तमान काल विषयक निवासको **क्षेत्र** कहते हैं। त्रिकाल विषयक निवासको **स्पर्शन** कहते हैं। मुख्य और व्यावहारिक प्रकारसे दो **काल** होते हैं। विरह कालको **अन्तर** कहते हैं। **भाव**से औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक एवं पारिणामिक भावोंका भी अर्थ ग्रहण होता है। एक दूसरेकी अपेक्षा न्यूनाधिकका ज्ञान **अल्पबहुत्व** कहलाता है। इनके द्वारा भी पदार्थोंका ज्ञान होता है।

इन्द्रिय और मनके द्वारा यथायोग्य पदार्थ जिसके द्वारा मनन किये जाते हैं, जो मनन करता है या मनन मात्र **मति-ज्ञान** है। श्रुत ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम होनेपर निरूप्यमाण पदार्थ जिसके द्वारा सुना जाता है, जो सुनता है या सुननामात्र **श्रुत** ज्ञान है। अधिकतर नीचेके विषयको जाननेवाला होनेसे या परिमित विषयवाला होनेसे **अवधि ज्ञान** नाम सार्थक है। दूसरेके मनोगत अर्थमें परिगमन करनेवाला ज्ञान **मनःपर्यय** है। अर्थी जन जिस असहाय ज्ञानके लिए बाह्य एवं आभ्यन्तर तप द्वारा मार्गका केवल या सेवन करते हैं वह **केवलज्ञान** है।

विषय और विषयीके सम्बन्धके बाद होनेवाले प्रथम ग्रहणको **अवग्रहमति** कहते हैं। अवग्रह द्वारा ग्रहण किये गये पदार्थमें उसके विशेषके जाननेकी इच्छा **ईहामति** है। विशेषके निर्णय द्वारा जो यथार्थ ज्ञान होता है वह **अवाय मति** है। जानी हुई वस्तुका जिस कारण कालान्तरमें विस्मरण नहीं होता वह **धारणा मति** है। चक्षु आदि इन्द्रियोंके विषयको **अर्थ** कहते हैं। ये चारों मति ज्ञान अर्थके होते हैं। अव्यक्त शब्द-समूह **व्यंजन** है, जो केवल अवग्रहमति रूप है। चक्षु और मनसे व्यंजन अवग्रह नहीं होता है। **केवलज्ञान**की प्रवृत्ति सब द्रव्यों और उनकी सभी पर्यायोंमें होती है।

आत्मामें कर्मकी निज शक्तिका कारणवशसे प्रकट न होना **उपशम** है। कर्मोंका आत्मासे सर्वथा दूर हो जाना **क्षय** है। उभय भाव रूप **मिश्र** है। द्रव्यादि निमित्तके वशसे कर्मोंका फल प्राप्त होना **उदय** है। जिसके होनेमें द्रव्यका स्वरूपलाभमात्र कारण है वह **परिणाम** है। ये भाव जीवके हैं, जो अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रकारके निमित्तोंसे होता है। और चैतन्यका अन्वयी परिणाम **उपयोग** कहलाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। उपयोग ज्ञान और दर्शन रूप है। **गुण** अन्वयी होते हैं, **पर्याय** व्यतिरेकी होती है। अथवा द्रव्यमें भेद करनेवाले धर्मको **गुण** और द्रव्यके विकार को **पर्याय** कहते हैं। द्रव्य इन दोनोंसे संयुक्त, अयुत सिद्ध और नित्य होता है।

काय, वचन और मनकी क्रिया **योग** है जिससे आस्रव होता है जिसकी विशेषता तीव्र, मन्द, ज्ञात, अज्ञात भावों, अधिकरण और वीर्यसे होती है।

जो आत्माका घात करती है, वह **कषाय** है। चारित्रमोहके भेदरूप कषायवेदनीयके उदयसे आत्मामें जो कलुषता क्रोधादिरूप होती है उसे आत्मविघातक होनेसे **कषाय** कहते हैं। हास्यादि कषायवत् न होनेसे **नोकषाय** कहलाती हैं। क्रोधादिकी तीव्रताको **लेश्या** द्वारा निर्दिष्ट करते हैं, और आसक्तिकी तीव्रता मन्दताको **अनन्तानुबन्धी** आदि द्वारा निर्दिष्ट करते हैं। जो क्रोधादिक जीवके सुख-दुख रूप अनेक प्रकारके धान्यको उत्पन्न करनेवाले कर्मरूप खेतको कर्षण करते हैं अर्थात् जोतते हैं और जिनके लिए संसारकी चारों गतियाँ मर्यादा—मेंढ रूप हैं, इसलिये उन्हें **कषाय** कहते हैं। वे कर्मोंके श्लेषका कारण हैं—निक्षेपादिकी अपेक्षा योग और कषायके अनेक भेद हैं।

कर्मोंके संयोगके कारणभूत जीवके प्रदेशोके परिस्पन्दको भी **योग** कहते हैं, अथवा मन, वचन, कायकी प्रवृत्तिके प्रति जीवका उपयोग या प्रयत्न विशेष **योग** है। योग, समाधि, ध्यान, सम्यक् प्रणिधान एकार्थवाची हैं। क्रियाकी उत्पत्तिमें जो जीवका उपयोग है वही **योग** है। (विशेष विवरणके लिए जैन सि. कोष देखें)।

कषायसे अनुरंजित जीवकी योगकी प्रवृत्तिको **भावलेश्या** कहते हैं। शरीरके रंगको **द्रव्य लेश्या** कहते हैं। जो कर्मोंसे आत्माको लिप्त करती है उसे **लेश्या** कहते हैं। मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये **बन्ध**के हेतु हैं। कषाय सहित होनेपर जीव कर्मके योग्य पुद्गलोंको ग्रहण करता है, वह **बन्ध** है। अथवा कर्म प्रदेशोंका आत्मप्रदेशोंमें एक क्षेत्रावगाह हो जाना **बन्ध** है। वाचक शब्दोंकी अपेक्षा बन्ध संख्यात, अध्यवसाय स्थानोंकी अपेक्षा असंख्यात, तथा कर्मप्रदेशोंकी अथवा कर्मोंके अनुभाग अविभागी प्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा अनन्त प्रकार है। ज्ञानावरणादिक **कर्मबन्ध** है और औदारिकादि **नोकर्मबन्ध** है। क्रोधादि परिणाम **भावबन्ध** है।

ज्ञानावरणादि अष्टविध कर्मोंके उस कर्मके योग्य ऐसा जो पुद्गल द्रव्यका स्व-आकार (?) वह **प्रकृति बन्ध** है। योगके वशसे कर्म स्वरूपसे परिणत पुद्गल स्कन्धोंका कषायके वशसे जीवमें एक स्वरूपसे रहनेके कालको **स्थितिबन्ध** कहते हैं। शुभाशुभ कर्मकी निर्जराके समय सुखदुःख रूप फल देनेकी शक्तिवाला **अनुभाग बन्ध** है। कर्मरूपसे परिणत पुद्गल स्कन्धोंका परिमाणुओंकी जानकारी करके निश्चय करना **प्रदेश बन्ध** है।

अधःप्रवृत्तकरण वह है जिसमें-से ऊपरके समयवर्ती जीवोंके परिणाम नीचेके समयवर्ती जीवोंके परिणामोंके सदृश—अर्थात् संख्या और विशुद्धिकी अपेक्षा समान होते हैं। **अपूर्वकरणमें** भिन्न समयवर्ती जीवोंमें विशुद्ध परिणामोंकी अपेक्षा कभी भी सादृश्य नहीं पाया जाता, किन्तु एक समयवर्ती जीवोंमें सादृश्य और वैसादृश्य दोनों पाये जाते हैं। **अनिवृत्तिकरण** गुणस्थान वह है जिसके कालके प्रत्येक समयमें एक ही परिणाम होता है। **कृष्टिका** अर्थ कर्म अनुभागको कृश करना होता है।

प्रतिसमय बंधनेवाले कर्म या नोकर्मके समस्त परमाणुओंके समूहको **समयप्रबद्ध** कहते हैं। विवक्षित समयप्रबद्धमें समान अनुभाग शक्तिके अंश—**अविभाग प्रतिच्छेद** जिस परमाणुमें पाये जायें उसे **वर्ग** कहते हैं। जिन परमाणुओंमें समान संख्यावाले अविभाग प्रतिच्छेद पाये जाय उन सब वर्गोंके समूहको **वर्गणा** कहते हैं। जिनमें अविभाग प्रतिच्छेदोकी समान वृद्धि पायी जाये उन वर्गणाओंके समूहको **स्पर्धक**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहते हैं। गुणाकार रूपसे हीन-हीन द्रव्य जिसमें पाया जाये उसको **गुणहानि** कहते हैं। गुणहानिके समय-समूहको **गुणहानि आयाम** कहते हैं। गुणहानियोंके समूहको **नानागुणहानि** कहते हैं। दो गुणहानि आयामके प्रमाणको **निषेकहार** कहते हैं। नानागुणहानि प्रमाण दोके अंक रखकर परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसे **अन्योन्याभ्यस्त राशि** कहते हैं। समान वृद्धि या हानिके प्रमाणको **चय** कहते हैं। 'निषेचनं निषेक:' इस निरुक्तिके अनुसार कर्म परमाणुओंके स्कन्धोंके निक्षेपण करनेका नाम **निषेक** है। आयुवर्जित सात कर्मोंकी अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिमें-से उन-उनका आबाधाकाल घटाकर जो शेष रहता है, उतने कालके जितने समय होते हैं उतने ही उस-उस कर्मके निषेक जानना चाहिए। आयुकर्मकी स्थिति प्रमाण कालके समयों जितने उसके निषेक हैं, क्योंकि आयुकी आबाधा पूर्वभवकी आयुमें व्यतीत हो चुकती है। प्रथम निषेक अवस्थित हानिसे जितनी दूर जाकर आधा होता है उस अध्वान (अन्तराल या काल) को **'गुणहानि'** कहते हैं। जहाँ अपनी-अपनी द्वितीयादि वर्गणाके वर्गोंमें अपनी-अपनी प्रथम वर्गणाके वर्गोंसे एक-एक अविभागी प्रतिच्छेद बढ़ता अनुक्रमसे है, ऐसे स्पर्धकोंका समूह **प्रथम गुणहानि** कहलाता है। इस प्रथम गुणहानिके प्रथम वर्गमें जितने परमाणु पाये जायें, उनमें एक-एक चय प्रमाण घटते द्वितीयादि वर्गणाओंमें वर्ग जानना चाहिए। इस क्रमसे जहाँ प्रथमगुणहानिकी प्रथम वर्गणाके वर्गोंसे आधा जिस वर्गणामें वर्ग हों वहाँसे **दूसरी गुणहानि**का प्रारम्भ होता है। वहाँ द्रव्य चय आदिका प्रमाण भी आधा-आधा होता है।

एक जीवके एक कालमें जितनी प्रकृतियोंकी सत्ता पायी जावे उनके समूहका नाम **स्थान** है। उस स्थानकी एक-सी समान संख्या रूप प्रकृतियोंमें जो संख्या समान ही रहे परन्तु प्रकृतियाँ बदल जायें तो उसे **भंग** कहते हैं। जिस कर्मके बन्धका अभाव होकर फिर वही कर्म बँधे उसे **सादिबन्ध** कहते हैं। जिसके बन्धका अभाव नहीं हुआ वह **अनादिबन्ध** है। जिस बन्धका आदि तथा अन्त न हो वह **ध्रुवबन्ध** है और जिस बन्धका अन्त आ जाये वह **अध्रुव बन्ध** है। जिन कर्म प्रकृतियोंमें कोई प्रकृति विरोधी नहीं होती हैं उन्हें अप्रतिपक्षी कहते हैं। जिन प्रकृतियोंमें आपसमें विरोधीपना है वे **सप्रतिपक्षी** कहलाती हैं।

जीवोंकी उत्कृष्ट आबाधासे भाजित जो अपने-अपने कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति है उसके प्रमाणको **आबाधा काण्डक** कहते हैं। पर्याय धारण करनेके पहले समयमें तिष्ठते हुए जीवके **उपपाद योगस्थान** होते हैं। शरीर पर्याप्तिके पूर्ण होनेके समयसे लेकर आयुके अन्त तक **परिणाम योगस्थान** कहलाते हैं। **एकान्तानुवृद्धि योगस्थान** पर्याय धारण करनेके दूसरे समयसे लेकर एक समय कम शरीर पर्याप्तिके अन्तर्मुहूर्तके अन्त समय तक होते हैं, जिनमें नियमकर समय-समयप्रति असंख्यातगुणी अविभाग प्रतिच्छेदोंकी वृद्धि होती है।

बँधे हुए कर्मकी दश अवस्थाएँ अथवा दश करण होते हैं। कर्मोंका आत्मासे सम्बन्ध होना **बन्ध** है। जो कर्मोंकी स्थिति तथा अनुभागका बढ़ना है वह **उत्कर्षण** है। जो बन्ध रूप प्रकृतिका दूसरी प्रकृतिरूप परिणम जाना है वह **संक्रमण** है। जो स्थिति तथा अनुभागका कम हो जाना वह **अपकर्षण** है। उदयकालके बाहर स्थित, अर्थात् जिसके उदयका अभी समय नहीं आया है ऐसा जो कर्म द्रव्य उसको अपकर्षणके बलसे उदयावली कालमें प्राप्त करना **उदीरणा** है। जो पुद्गलका कर्मरूप रहना वह **सत्त्व** है। जो कर्मका अपनी स्थितिको प्राप्त होना अर्थात् फल देनेका समय प्राप्त हो जाना वह **उदय** है। जो कर्म उदयावलीमें प्राप्त न किया जाये अर्थात् उदीरणा अवस्थाको प्राप्त न हो सके वह **उपशान्तकरण** है। जो कर्म उदयावलिमें भी प्राप्त न हो सके और संक्रमण अवस्थाको भी प्राप्त न हो सके उसे **निधत्तिकरण** कहते हैं। जिस कर्मकी उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण और अपकर्षण ये चारों ही अवस्थाएँ न हो सकें उसे **निकाचितकरण** कहते हैं।

जो प्रकृतियाँ अपने ही रूप उदय फल देकर नष्ट हो जायें वे **स्वमुखोदयी** हैं, उनका काल एक समय अधिक आवलि प्रमाण है, वही क्षयदेश है। जो प्रकृतियाँ अन्य प्रकृतिरूप उदयफल देकर विनष्ट हो जाती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं, वे **परमुखोदयी** हैं, उनके अन्तकाण्डककी अन्त फालि क्षयदेश है। एक समय मात्रमें संक्रमण होनेको **फालि** कहते हैं। समय समूहमें संक्रमण होना **काण्डक** है।

अधःप्रवृत्त आदि तीन करण रूप परिणामोंके बिना ही कर्म प्रकृतियोंके परमाणुओंका अन्य प्रकृति रूप परिणमन होना वह **उद्वेलन संक्रमण** है। मन्द विशुद्धतावाले जीवकी, स्थिति अनुभागके घटानेरूप, भूतकालीन स्थितिकाण्डक और अनुभाग काण्डक तथा गुणश्रेणी आदि परिणामोंमें प्रवृत्ति होना **विध्यात संक्रमण** है। बन्धरूप हुई प्रकृतियोंका अपने बन्धमें सम्भवती प्रकृतियोंमें परमाणुओंका जो प्रदेश संक्रम होना वह **अधःप्रवृत्त संक्रमण** है। जहाँपर प्रति समय असंख्यात गुणश्रेणीके क्रमसे परमाणु-प्रदेश अन्य प्रकृतिरूप परिणमें सो **गुण संक्रमण** है। जो अन्तके काण्डककी अन्तकी फालिके सर्व प्रदेशोंमें-से जो अन्य प्रकृतिरूप नहीं हुए हैं उन परमाणुओंका अन्य प्रकृतिरूप होना वह **सर्व संक्रमण** है। उत्तर प्रकृतियोंमें ही संक्रमण होता है, किन्तु दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयका तथा चारों आयुओंका **परस्परमें संक्रमण** नहीं होता। संसारी जीवोंके अपने जिन परिणामोंके निमित्तसे शुभकर्म और अशुभ कर्म संक्रमण करें, अर्थात् अन्य प्रकृति रूप परिणमें उसको **भागहार** कहते हैं।

त्रिकोण रचनामें समयप्रबद्धका प्रमाण विवक्षित वर्तमान समयमें तिर्यक् रूप हर एक समयमें एक समयप्रबद्ध बँधता है और एक समयप्रबद्ध ही उदय रूप होता है। **सत्त्व द्रव्य** कुछ कम डेढ़ गुणहानि कर गुणा हुआ समयप्रबद्ध प्रमाण है जो त्रिकोण रचनाके सब द्रव्यको जोड़ देनेसे नियमसे इतना ही होता है।

उपर्युक्त परिभाषाएँ जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, जैन लक्षणावली, राजेन्द्र अभिधान कोश, षट्खण्डागम, धवल, गोम्मटसार, जीव तत्त्व प्रदीपिका टीका आदि ग्रन्थोंसे ली गयी हैं। इतनी जानकारीके पश्चात् लब्धिसार एवं क्षपणासारकी पूर्व पीठिका बाँधने हेतु अगला अधिकार दिया जा रहा है जो मुख्यतः पण्डित टोडरमलका प्रयास है। उसे याद करनेके पश्चात् ही गणितीय प्रणालीमें प्रवेश करना लाभप्रद होगा। उपर्युक्त लक्षण केवल संकेत मात्र हैं जिनके आलम्बनसे कर्म सिद्धान्तका अनुभव वृद्धिगत हो सके।

§ ৪. अर्थके प्रयोजन

पं. टोडरमलने निम्न पद्यमें अर्थसार निर्दिष्ट कर दिया है—

"नेमिचन्द आह्लादकर माधवचन्द प्रधान।
नमौं जास उज्जास तैं जाने निज गुण थान॥
लब्धिसार कौं पायकैं करिकैं क्षपणासार।
हो है प्रवचनसार सो समयसार अविकार॥"

सम्यक्दर्शनका सहकारी सम्यक्ज्ञान है। मोक्षमार्ग सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्र और सम्यक्ज्ञानका संयुक्त रूप, आत्मस्वरूप है। सम्यक्दर्शन तीन प्रकार—औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक प्रकारका है। सम्यक्चारित्र दो प्रकार—देशचारित्र और सकलचारित्र प्रकारका है। देशचारित्र क्षायोपशमिक ही है और सकलचारित्र तीन प्रकार है—क्षायोपशमिक, औपशमिक और क्षायिक। इस प्रकार सम्यक्दर्शन सम्यक्चारित्रकी लब्धि होनेपर केवलज्ञान पाकर सयोगी, अयोगी जिन और सिद्धपद प्राप्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवोंके परिणमनके साथ-साथ कर्मोंके बन्ध, सत्त्व उदय अवस्था किस प्रकार परिणमन करती है, विशेष रूपसे ज्ञात करना युक्त हैं। इसी प्रकार चौदह गुणस्थानोंका स्वरूप भी विशेष जानने योग्य है। दशकरणोंका भी विशेष प्रयोजन होता है इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

नवीन पुद्गलोंका कर्म रूप आत्माके साथ सम्बन्ध होना बन्ध है। यह चार प्रकारका है—प्रकृति-बन्ध, प्रदेशबन्ध, स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध। कर्मरूप होने योग्य जो कार्मण वर्गणा रूप पुद्गलका ज्ञानावरणादि मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति रूप परिणमना सो **प्रकृतिबन्ध** है। जितनी प्रकृतियोंका जहाँ बन्ध सम्भव हो वहाँ उतनी प्रकृतियोंका बन्ध जानना चाहिए। उन प्रकृतिरूप जितने पुद्गल परमाणु परिणमें उनका प्रमाण रूप प्रदेशबन्ध है, क्योंकि प्रदेश नाम पुद्गल परमाणुका है। वह अभव्य राशिसे अनन्तगुणा तथा सिद्धराशिके अनन्तवाँ भागमात्र प्रमाण होता है। इनको मिलकर एक **कार्माण वर्गणा** होती है। उतनी ही वर्गणाएँ मिलकर एक **समयप्रबद्ध** होता है। इतने परमाणु प्रति समय कर्मरूप होकर एक जीवके बँधते हैं इसलिए इसे समयप्रबद्ध कहते हैं। यह सामान्य प्रमाण है। विशेष योगोंकी अधिक और हीनताके अनुसार समयप्रबद्धमें परमाणुओंकी अधिक और हीनताका अनुपात जानना चाहिए।

एक समयमें ग्रहण किया हुआ जो समयप्रबद्ध है वह यथासम्भव मूल प्रकृति और उत्तर प्रकृति रूप परिणमता है। इन प्रकृतियोंके परमाणुओंके विभागका विधान, बन्ध सत्त्व तथा उदय द्वारा प्रदेशबन्ध रूपमें होता है। जिस प्रकृतिके जितने परमाणु बँटनमें आते हैं उस प्रकृतिका उतने परमाणुओंका समूह मात्र समयप्रबद्ध जानना चाहिए।

जो परमाणु प्रकृतिरूप बँधे, वे परमाणु उस रूप जितने कालके लिए बँधते हैं उस स्थिति प्रमाणके लिए **स्थिति बन्ध** होता है। वहाँ एक समयमें जो स्थिति बन्ध होता है उसमें बन्ध समयसे लगाकर आबाधा-काल तक वहाँ बँधी हुई परमाणुओंके उदय आनेकी योग्यताका अभाव है, इसलिए वहाँ निषेक रचना नहीं है। उसके पश्चात् प्रथम समयसे लेकर बँधी हुई स्थितिके अन्तिम समय तक प्रत्येक समयमें एक-एक निषेक उदय आने योग्य हो जाता है। इसलिए प्रथम निषेककी स्थिति एक समय अधिक आबाधाकाल मात्र होती है। द्वितीय निषेककी स्थिति दो समय अधिक आबाधाकाल मात्र होती है। इस क्रमसे द्विचरम निषेककी स्थिति एक समय कम स्थिति बन्ध प्रमाण होती है। अन्तिम निषेककी स्थिति सम्पूर्ण स्थितिबन्धकी समय राशि प्रमाण होती है।

उदाहरण : मोहकी सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थिति बँधी हो तो आबाधाकाल सात हजार वर्षका होगा। प्रथमनिषेककी स्थिति एक समय अधिक सात हजार वर्ष होगी। द्वितीयादि निषेकोंकी क्रमसे एक-एक समय अधिक होगी और अन्तिम निषेककी सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति होगी। इस प्रकार आयु कर्मको छोड़कर शेष सात कर्मोंके लिए यह विधान है।

आयुकी स्थितिबन्धमें आबाधाकाल नहीं गिनते हैं क्योंकि उसका आबाधाकाल पूर्व पर्यायमें ही व्यतीत हो चुका होता है। वहाँ उस कालके उदय होनेकी योग्यता नहीं होती इसलिए आयुके प्रथम निषेककी स्थिति एक समय, द्वितीय निषेककी दो समय आदि होती है। इस क्रमसे अन्तिम निषेककी स्थिति सम्पूर्ण स्थितिबन्ध मात्र स्थिति होती है। निषेक रचनाका वर्णन गोम्मटसार कर्मकाण्डमें उपलब्ध है। त्रिकोणयन्त्र रचनाका विवरण द्रष्टव्य है।

बन्ध होनेपर शक्ति ऐसी होती है जो उदयकालमें हीनाधिक विशेष लिये जीवके ज्ञान आच्छादित करती है, इत्यादि। इस प्रकार बन्ध होते हुए शक्तिके होनेका नाम **अनुभाग बन्ध** है। वहाँ एक प्रकृतिके एक समयमें जो परमाणु बँधते हैं उनमें नाना प्रकारकी शक्ति होती है। शक्तिके अविभागी अंशका नाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविभागी प्रतिच्छेद है। उनके समूह द्वारा युक्त जो एक परमाणु होता है उसे **वर्ग** कहते हैं। समान अविभाग प्रतिच्छेदों युक्त जो वर्ग हैं उनके समूहका नाम वर्गणा है। यहाँ स्तोक अनुभाग युक्त परमाणुका नाम **जघन्य वर्ग** है। उनके समूहका नाम **जघन्य वर्गणा** है। जघन्य वर्गसे एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेद युक्त जो वर्ग उनके समूहका नाम **द्वितीय वर्गणा** है। इस क्रमसे एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद अधिक वर्गोंकी समूह रूप वर्गणा जहाँ तक होती है वहाँ तक उन वर्गणाओंके समूहका नाम **जघन्य स्पर्धक** होता है। जघन्य वर्गसे द्विगुणित अविभागी प्रतिच्छेद युक्त वर्गोंके समूहरूप **द्वितीय स्पर्धक** की प्रथम **वर्गणा** होती है। उसके ऊपर एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद अधिक क्रम लिये जो वर्ग हैं उनके समूह रूप वर्गणा जहाँ तक होती हैं वहाँ तक उन वर्गणाओंका समूह रूप द्वितीय स्पर्धक होता है। इसी प्रकार तृतीय, चतुर्थ आदि स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके वर्गमें जघन्य स्पर्धकसे तिगुणे, चौगुणे आदि अविभागी प्रतिच्छेद होते हैं। यहाँ सर्व परमाणुओंका प्रमाण उपरिलिखित एक-एक अधिक क्रममें होता है। ऐसा विधान जब तक सम्पूर्ण परमाणु पूर्ण न हो जायें तबतक चलता है। इस क्रमसे गुणहानिशलाकाएँ, स्पर्धकशलाकाएँ, वर्गणा शलाकाएँ तथा वर्गोंकी शलाकाओंकी संख्या प्राप्त की जा सकती है।

त्रिकोण यन्त्रमें स्पर्धकोंकी रचना इस प्रकार होती है कि प्रथमादि स्पर्धक पहलेवाले, निचले स्पर्धक कहलाते हैं। पिछले स्पर्धकोंको ऊपरले स्पर्धक कहते हैं। प्रथमादि स्पर्धकोंमें क्रमसे परमाणुओंका प्रमाण घटता-घटता है अनुभाग बढ़ता-बढ़ता है। वहाँ प्रथमादि सर्वस्पर्धकोंके चार विभाग करते हैं। घातियोंके चार भाग लता, दारु, अस्थि और शैलके समान शक्ति रखते हैं। अप्रशस्त अघातियोंके निंब, कांजीर, विष, हलाहल शक्तिवाले होते हैं। प्रशस्त अघातियोंके गुड़, खंड, शर्करा और अमृत समान शक्तिवाले होते हैं। घातियोंमें लता भागके और कुछ दारु भागके स्पर्धक देशघाती हैं। अवशेष सर्वघाती हैं। स्थितिके पहले निषेक पहले उदय आते हैं, पिछले बादमें उदयमें आते हैं। उसी प्रकार अनुभागके पहले स्पर्धक पहले उदय आनेका, या पिछले स्पर्धक पीछे उदय आनेका नियम नहीं है।

अनेक समयोंमें बँधे हुए कर्मोंका विवक्षित कालादिमें जीवमें अस्तित्व होना **सत्त्व** है। यह चार प्रकारका है: प्रकृतिसत्त्व, प्रदेशसत्त्व, स्थितिसत्त्व और अनुभागसत्त्व। यहाँ अनेक समयों में बँधी ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा उनकी उत्तर प्रकृतियोंका जो अस्तित्व है उसे **प्रकृतिसत्त्व** कहते हैं। उन प्रकृति रूप परिणमें तथा अनेक समयोंमें बँधे, ग्रहण किये गये पुद्गल परमाणुओंका अस्तित्व **प्रदेशसत्त्व** कहलाता है। प्रत्येक समयमें एक-एक समयप्रबद्ध ग्रहण किये गये परमाणुओंके एक-एक निषेक क्रमसे निर्जरित होते हैं। यदि समयप्रबद्धके सर्व निषेक गल जायें तो उनका अस्तित्व समाप्त हो जाये। यहाँ त्रिकोण यन्त्र रचनामें किसी समयप्रबद्धके अन्य निषेक गलनेपर एक निषेक अवशेष रहता है, किसी अन्यके अन्य निषेक गलनेपर दो निषेक अवशेष रहते हैं। इस क्रमसे जिस समयप्रबद्धका एक निषेक गला हो तो उसके बिना सर्व निषेक अवशेष रहते हैं। जिसका कोई भी निषेक नहीं गला हो उसके सर्व ही निषेक अवशेष रहते हैं। ऐसे सभी अवशेष रहे निषेकोंका कुछ प्रमाण सत्त्व है जिसका प्रमाण किंचित् ऊन ड्योढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सिद्ध होता है। (देखिए, गोम्मटसार जीवकाण्ड)।

यह महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि उपर्युक्त विवक्षा एक प्रकृति सम्बन्धी है। ऐसे ही सर्व प्रकृतियों सम्बन्धी समयप्रबद्धोंका वर्णन होगा।

पुनः उन अनेक समयोंमें बँधी प्रकृतियोंकी स्थितिका नाम **स्थिति सत्त्व** है। उन प्रकृतियोंका जिस समयप्रबद्धका एक निषेक अवशेष रहा उसकी एक समयकी स्थिति है। जिसका दो निषेक अवशेष रहा उसके प्रथम निषेककी एक समय और द्वितीय निषेककी दो समय स्थिति है। इस क्रमसे जिसका एक भी निषेक नहीं गला है उसकी प्रथमादि निषेकोंकी एक, दो आदि समयोंसे अधिक आबाधाकाल मात्र स्थितिके क्रमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तिम निषेककी सम्पूर्ण स्थितिबन्ध मात्र स्थिति होती है। यहाँ सत्त्वमें अनेक समयप्रबद्धोंके एक समयमें उदय आने योग्य अनेक निषेक मिलकर जितना हो उसे एक निषेक जानना चाहिए (पं. टोडरमलके अनुसार)। इनमें परमाणुओंका प्रमाण निकाला जा सकता है। सामान्यतः यदि एक प्रकृतिकी विवक्षा हो तो उसके पहले बँधे तथा बादमें बँधे समयप्रबद्धोंमें जिसके बहुत निषेक सत्तामें पाये जायें उस समयप्रबद्धके अन्तिम निषेककी जो स्थिति हो उस प्रमाण स्थितिसत्त्व होता है। यदि सर्व प्रकृतियोंकी विवक्षा हो तो जिस प्रकृतिके समयप्रबद्धके अन्तिम निषेककी बहुत स्थिति हो, उसके अन्तिम निषेककी स्थिति प्रमाण स्थिति सत्त्व कहना चाहिए।

उन अनेक समयोंमें बँधी जो प्रकृतियाँ हैं उनका जो अनुभाग अस्तित्व रूप है उसका नाम **अनुभाग सत्त्व** है। वहाँ एक समयमें उदय आने योग्य अनेक समयप्रबद्धोंके निषेक मिलकर सत्ता सम्बन्धी एक निषेकके परमाणुओंमें; अथवा अनेक समयप्रबद्धोंमें बँधे समयप्रबद्धोंके गलनेके पश्चात् अवशेष रहे उन सभी परमाणुओंमें पूर्वोक्त प्रकार अविभाग प्रतिच्छेद वर्ग वर्गणा, स्पर्धक रूप अनुभागका विशेष गणित ज्ञातव्य है। वहाँ परमाणुओंका प्रमाण भी पूर्वोक्त प्रकार लाना चाहिए।

इसी प्रकार कर्मोंका अपने काल आये फल देने रूप खिरनेको सम्मुख होना **उदय** है, जो चार प्रकार है—प्रकृति उदय, प्रदेश उदय, स्थिति उदय तथा अनुभाग उदय। जिस समयप्रबद्धका एक भी निषेक नहीं गला हो उसका प्रथम निषेक उदयमें आता है। जिसका प्रथम निषेक पहले गला हो उसका द्वितीय निषेक वहाँ उदय होता है। इस क्रमसे जिसके दो निषेक अवशेष रहे उसका वहाँ उपान्त निषेक उदय होता है। जिसका एक निषेक अवशेष रहा हो उसका वही अन्तिम निषेक वहाँ उदयमें आता है। इस प्रकार सभी निषेक मिलकर एक समयप्रबद्ध मात्र परमाणुओंका उदय होता है।

अब विशेषता लिये हुआ विवरण उदीरणा आदिका निम्न रूपमें प्रस्तुत है—ऊपरके नीचेके अन्य समयोंमें उदय आने योग्य निषेकोंके परमाणु, उस विवक्षित समयमें उदय आने योग्य निषेकोंमें मिलाया गया हो तो वे परमाणु भी उन्हींके साथ उसी समयमें उदयमें आते हैं। इसी प्रकार घटानेकी प्रक्रिया है। इसी प्रकार अनुभाग उदयका मिश्रप्रभाव सम्भव होता है।

अपक्व पाचन, उदय कालको प्राप्त न हुआ जो कर्म है उसका पाचन उदय कालमें प्राप्त करना **उदीरणा** है। वहाँ वर्तमान समयसे लगाकर आवली मात्र कालमें उदय आने योग्य जो निषेक हैं उनका नाम **उदयावली** है। उसके ऊपरवर्ती निषेकोंको **उदयावली बाह्य** कहते हैं। उदयावली बाह्यमें जो तिष्ठे हुए निषेक हैं उनके परमाणुओंको उदयावलीके निषेकोंमें मिलाते हैं। इस प्रकार बहुत कालमें उदय आनेवाले अपक्व निषेकोंको उदयावलीके निषेकोंके साथ ही उदय आने योग्य करना, वही पाचन जैसा कार्य जिस समय हो उसी समयमें उदीरणा कहलाती है। उसी समयमें वही द्रव्य सत्तारूप वा उदयरूप है।

स्थिति, अनुभागका बढ़ना उत्कर्षण है। वहाँ स्तोककालमें उदय आने योग्य जो नीचेके निषेक, उनके परमाणु, बहुत कालमें उदय आने योग्य जो ऊपरके निषेकोंमें मिलें, तो इस प्रकार स्तोक स्थितिका बहुत स्थिति होनेका नाम **स्थिति उत्कर्षण** है। पुनः स्तोक अनुभाग युक्त जो नीचेके स्पर्धक, उनके परमाणु जब बहुत अनुभागवाले ऊपरके स्पर्धकोंमें मिलते हैं; तब स्तोक अनुभागका बहुत अनुभाग होनेका नाम **अनुभाग उत्कर्षण** होता है। इसी प्रकार **अपकर्षण**का विवरण है। गणितीय प्रक्रिया इस प्रकार है—यहाँ विवक्षित सर्व परमाणुओंके समूहको उत्कर्षण और अपकर्षण भागहार द्वारा विभाजित करनेपर, एक भाग मात्र परमाणुओंका ग्रहण कर उन्हें यथायोग्य नीचे अथवा ऊपर मिलाया जाता है। ये भागहार गुणसंक्रम भागहारसे असंख्यात गुणा और अधःप्रवृत्त संक्रम भागहारके असंख्यातवें भाग रूप पल्यके अर्द्धच्छेदोंके असंख्यातवें भागमात्र जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य प्रकृतिका परमाणु अन्य प्रकृति रूप होनेकी प्रक्रिया **संक्रमण** कहलाती है। जैसे संक्लेशपनेसे पूर्वमें असाता वेदनीय बँधी थी, बादमें विशुद्धताके बलसे उसके परमाणु साता वेदनीय रूप होकर परिणमन करते हैं। इसी प्रकार यथायोग्य अन्य प्रकृतियोंका संक्रमण भी ज्ञातव्य है। उद्वेलन प्रकृतिके जो परमाणु उन्हें उद्वेलन भागहारका भाग देनेपर, एक भाग मात्र परमाणु जहाँ अन्य प्रकृति रूप होकर परिणमन करते हों वहाँ **उद्वेलन संक्रमण** होता है। जहाँ मन्द विशुद्धता युक्त जीवके जिसका बन्ध न पाया जाये ऐसी जो विवक्षित प्रकृति हो, उसके परमाणुओंमें विध्यात भागहारका भाग देनेसे प्राप्त एक भागमात्र परमाणु अन्य प्रकृति रूप होकर परिणमन करनेको **विध्यात संक्रमण** कहते हैं। जहाँ जिसका बन्ध सम्भव हो ऐसी जो विवक्षित प्रकृति, उसके परमाणुओंमें अधःप्रवृत्त भागहार द्वारा भाग देनेसे प्राप्त एक भागमात्र परमाणुओंका अन्य प्रकृति रूप होकर परिणमन करना **अधःप्रवृत्त संक्रमण** कहलाता है। जहाँ विवक्षित अशुभ प्रकृतिके परमाणुओंको गुणसंक्रमण भागहार द्वारा विभाजित करनेसे प्राप्त एक भाग मात्र परमाणु अन्य प्रकृति रूप होकर परिणमन करें; कि प्रथम समय जितने परमाणु परिणमें, उसके दूसरे समय असंख्यात गुणे परिणमें, इत्यादि, वहाँ **गुणसंक्रमण** है। जहाँ विवक्षित प्रकृतिके परमाणु अन्य प्रकृति रूप समय-समय परिणमते हुए अन्त समयमें अन्तिम फालिरूप ही अवशेष परमाणु जो हों वे सभी अन्य प्रकृति रूप होकर परिणमें, तो वहाँ **सर्वसंक्रमण** कहलाता है। भागहारोंका प्रमाण गोम्मटसारादि ग्रन्थोंसे ज्ञातव्य है।

इसी प्रकार उपशान्तकरण, निधत्तिकरण और निकाचितकरणका विवरण है। **बन्ध सत्वकी हानि** होनेपर **संवर-निर्जरा** होती है। ये दर्शनचारित्र लब्धिपर आधारित हैं। दर्शनचारित्र लब्धिके निमित्तसे प्रथम ही मिथ्यात्व, नारक गति आदि अति अप्रशस्त प्रकृतियोंका और बादमें ज्ञानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतियों वा प्रशस्त प्रकृतियोंके बन्धका अभाव हो जाता है। वहाँ प्रकृति बन्धका क्रमसे घटनेका नाम **प्रकृतिबन्धापसरण** है। प्रदेशबन्ध योगोंके अनुसार है इसलिए योगोंकी चंचलता हीन होनेपर **प्रदेशबन्ध** हीन हो जाता है। सर्वथा योग नाश होनेपर प्रदेशबन्धका भी सर्वथा अभाव हो जाता है। **स्थितिबन्ध** कषायोंके अनुसार होता है इसलिए मिथ्यात्वादि कषायोंके कम होनेपर स्थितिबन्ध क्रमसे हीन हो जाता है जिसे **स्थितिबन्धापसरण** कहते हैं। पूर्वमें जितना स्थितिबन्ध होता था उससे विवक्षित कालमें जितना स्थितिबन्ध घटा उसी प्रमाण लिये स्थितिबन्ध अपसरण है। स्थितिबन्धापसरण होनेपर जितने कालमें समान स्थितिबन्ध सम्भव हो वह स्थितिबन्धापसरण काल है। **उदाहरण** : पूर्वमें १ लाख वर्ष मात्र स्थितिबन्ध सम्भव था। उसके एक हजार वर्ष प्रमाण मान लो स्थितिबन्धापसरण हुआ। तब अवशेष ९९००० वर्ष मात्र स्थितिबन्ध रहा। स्थितिबन्धापसरणके कालके पहले समयमें इतना स्थितिबन्ध होता है। इतना ही दूसरे समय, इत्यादि समान स्थितिबन्ध होता रहता है। बादमें मान लो ८०० वर्ष मात्र अन्य स्थितिबन्धापसरण हुआ, तब ९८२०० वर्ष मात्र शेष स्थितिबन्ध रहा। उस स्थितिबन्धापसरण कालके प्रथमादि समयोंमें उतना समान स्थितिबन्ध होता रहेगा। इस प्रकार स्थितिबन्ध घटते अपनी व्युच्छित्ति होनेके समयमें जघन्य स्थितिबन्ध होता है। बादमें **स्थितिबन्धका नाश** होता है। यह आयु बिना सर्व प्रकृतियोंका उपरोक्त क्रममें होता है। आयुका स्थितिबन्धापसरण सम्भव नहीं होता है क्योंकि नरक बिना तीन आयुका स्थितिबन्ध विशुद्धिसे अधिक होता है। पुनः अन्य सर्व शुभाशुभ प्रकृतियोंका स्थितिबन्ध संक्लेशतासे बहुत होता है और विशुद्धतासे स्तोक होता है।

अनुभाग बन्ध पापप्रकृतियोंका संक्लेशसे बहुत होता है और विशुद्धतासे स्तोक होता है। पुण्य प्रकृतियोंका संक्लेशतासे स्तोक होता है विशुद्धिसे अधिक होता है। इस प्रकार अनन्तगुणा वा यथासम्भव घटता वा बढ़ता अप्रशस्त वा प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग बन्ध अधिक हीन क्रमसे जैसे जहाँ सम्भव होता है वहाँ वैसे जानना चाहिए। पुनः प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग बन्ध अधिक होनेसे आत्माका कथंचित् बुरा

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

नहीं होता इसलिए संसारमें रहना तो स्थिति बन्धके अनुसार है। घातियोंके द्वारा आत्मगुणोंका घात होनेसे घातिया अप्रशस्त ही है इसलिए दर्शन चारित्रकी लब्धिसे प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागकी अधिकता, अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागकी हीनता होती है। इस प्रकार कषायोंका अभाव होनेपर **अनुभाग बन्धका अभाव** होता है।

सत्त्व नाशका क्रम इस प्रकार है—दर्शनचारित्र लब्धिके निमित्तसे सर्वप्रथम मिथ्यात्वादि अति अप्रशस्त प्रकृतियोंका, तत्पश्चात् ज्ञानावरणादि अप्रशस्त प्रकृतियोंका और फिर प्रशस्त प्रकृतियोंका सत्त्व नाश होता है। सत्त्व नाश स्वमुख उदय द्वारा तथा परमुख उदय द्वारा दोनों प्रकार होता है। वहाँ जो प्रकृति अपने ही रूप रहकर अपनी स्थिति सत्त्वके अन्त निषेकका उदय होनेपर अभावको प्राप्त होती है उसका स्वमुख उदय द्वारा सत्त्व नाश होता है। जैसे संज्वलन लोभ प्रकृति, क्षपक सूक्ष्मसाम्परायके अन्तमें अपने ही रूप उदय होकर नाशको प्राप्त होती है। जो प्रकृति संक्रमणके वशसे अन्य प्रकृति रूप परिणमन कर अपने अभावको प्राप्त होती है उसका परमुख उदय द्वारा सत्त्व नाशको प्राप्त होता है। एक-एक सत्ताके निषेकोंके परमाणु एक-एक समयमें उदय रूप होकर निर्जरित होते हैं। दर्शनचारित्र लब्धिके निमित्तसे ऊपरके निषेकोंके परमाणु निचले निषेक रूप होकर परिणमते हैं। वहाँ एक-एक समयमें साधिक समयप्रबद्धकी वा अनेक समय प्रबद्धोंकी निर्जरा होती है। इस प्रकार निर्जरा अधिक किन्तु बन्ध थोड़ा होता है। यहाँ तक कि किसी कालमें किसी प्रकृतिका बन्ध नहीं होता है, केवल निर्जरा ही होती है। इस प्रकार सर्व कर्म परमाणुओंका नाश होनेपर **सर्वथा प्रदेश सत्त्व नाश** होता है।

अब स्थिति सत्त्व नाश क्रमका वर्णन है। एक-एक समय व्यतीत होते स्थिति सत्त्व एक-एक समय घटता है। दर्शनचारित्र लब्धिके निमित्तसे स्थिति काण्डक विधानसे और अपकृष्टि विधानसे स्थिति सत्त्वका घटना होता है।

काण्डक विधान : बहुत प्रमाण लिये स्थिति सत्त्व था, उसके समय-समय प्रति उदय आने योग्य बहुत ही निषेक थे, उनमें कितने एक ऊपरके निषेकोंका नाश कर स्थिति सत्त्व घटाया जाता है। वहाँ उन नाश करने योग्य निषेकोंके जो सर्व परमाणु हैं उनका नाश करनेके पश्चात् जो स्थिति रहेगी उसके आवली मात्र ऊपरके निषेक छोड़कर सर्व निषेकोंमें मिलते हैं। वहाँ उन सर्व परमाणुओंमें कितने एक परमाणु पहले समयमें मिलते हैं, कितने एक दूसरे समयमें मिलते हैं, इस प्रकार यथासम्भव अन्तर्मुहूर्त काल पर्यन्त परमाणुओंको निचले निषेकमें प्राप्त करते हैं। वहाँ अन्त समयमें अवशेष रहे सर्व परमाणुओंको निचले निषेकमें प्राप्त होते रहते उन नाश करने योग्य निषेकोंका नाश हुआ, तब जितने निषेकोंका नाश हुआ उतने समय प्रमाण स्थिति सत्त्व वहाँ घट जाता है।

उदाहरण—मान लो स्थिति सत्त्व ४८ समय मात्र था। उसके ४८ ही निषेक थे। उन सर्व निषेकोंके मान लो २५००० परमाणु थे। उनमें ८ निषेकोंका नाश करनेपर वहाँ उन निषेकोंके १००० परमाणु हैं। अवशेष ४० निषेकोंमें ऊपरके दो निषेक छोड़कर नीचेके ३८ निषेकोंमें वे १००० परमाणु मिलते हैं। वहाँ उन निषेकोंमें कई परमाणु पहले समयमें, कई दूसरे समयमें, इस प्रकार चार समय पर्यन्त मिलते हैं। वहाँ चौथे समय अवशेष सर्व परमाणुओंको उन ३८ निषेकोंमें मिलनेपर उन ८ निषेकोंका अभाव हो जाता है। उनका अभाव होनेपर ४८ समयका स्थिति सत्त्व था वह अब ४० समयका शेष रहा।

इस प्रकार निषेकोंको क्रमसे निचले निषेक रूप परिणमाकर स्थितिका घटाना **स्थिति काण्डक** है। इस एक काण्डकमें निषेकोंका नाश कर जितनी स्थिति घटायी गयी उसके प्रमाणका नाम **स्थिति काण्डक आयाम** है। उपरोक्त उदाहरणमें आठ समय यह आयाम है। उसके नाश करने योग्य निषेकोंका जो सर्व द्रव्य है उसका नाम **काण्डक द्रव्य** है, यहाँ उदाहरणमें १००० है। इस द्रव्यको अवशेष स्थितिके निषेकोंमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलाते हैं। वहाँ आवली मात्र निषेकोंमें नहीं मिलाया जाता है, इस आवलीको **अतिस्थापनावली** कहते हैं। यहाँ उदाहरणमें यह दो निषेक हैं। पुनः इसके बिना अवशेष स्थितिके ३८ निषेकोंमें उस काण्डक द्रव्यको मिलाना **काण्डकोत्करण** अथवा **काण्डकघात** संक्रिया (?) कहलाती है। एक काण्डकका उत्कर्षण, अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा पूर्ण होता है। जिसका नाम **काण्डकोत्करण काल है**, यहाँ उदाहरणमें यह चार समय है। पुनः इस कालके प्रथम समयमें उस काण्डक द्रव्यका ग्रहण कर जितने परमाणु अवशेष निषेकोंमें मिलाये गये उसका नाम **प्रथम फालि** है। द्वितीय समयमें मिलाये गये परमाणु, **द्वितीय फालि** कहलाते हैं। इसी प्रकार क्रमशः अन्तिम समयमें मिलाये गये का नाम **चरम फालि** है। इस तरह एक काण्डक समाप्त होनेपर द्वितीय काण्डक प्रारम्भ होता है। ऐसे ही अनेक काण्डक होनेपर, स्तोक स्थिति सत्त्व अवशेष रहनेपर काण्डक क्रिया नहीं होती है। इस अवशेष स्थितिका नाश एक-एक समय व्यतीत होते कम (?) होता है।

अपकृष्टि विधान—विवक्षित कर्म प्रकृतिके सर्व निषेक सम्बन्धी सभी परमाणु राशिमें अपकर्षण भागहारका भाग देनेपर एक भाग मात्र परमाणु ग्रहण करनेपर **अपकृष्ट द्रव्य**का प्रमाण होता है। उस अपकृष्ट द्रव्यमें कितने एक परमाणु उदयावलीमें मिलते हैं, कितने एक प्रमाण गुणश्रेणी आयाममें मिलते हैं, अवशेष परमाणु उपरितन स्थितिमें मिलाते हैं। वहाँ वर्तमान समयसे लगाकर आवलीमात्र समय सम्बन्धी जो निषेक हैं उनका नाम **उदयावली** हैं। उन निषेकोंमें उदयावलीमें देने योग्य जो द्रव्य है, उसको निषेक निषेक प्रति एक-एक चय घटता क्रम-क्रमसे मिलाते हैं। पुनः उन आवली मात्र निषेकोंके उपरिवर्ती, यथा-सम्भव अन्तर्मुहूर्तके समय सम्बन्धी जो निषेक हैं उनका नाम **गुणश्रेणी आयाम है**।

गुणश्रेणी आयाम निषेकोंमें देने योग्य जो द्रव्य है उसे निषेक-निषेक प्रति असंख्यातगुणा क्रम लिये मिलाते हैं। उनके उपरिवर्ती अवशेष सर्व स्थिति सम्बन्धी निषेकोंका नाम **उपरितन स्थिति** है। उनमें अन्तके आवली मात्र निषेकोंमें तो द्रव्य नहीं मिलाते हैं, इस आवलीका नाम **अतिस्थापनावली है**। उसके बिना अन्य निषेकोंमें उपरितन स्थितिमें देने योग्य जो द्रव्य है उसे **नानागुणहानि रचना** द्वारा निषेक प्रतिचय घटते क्रमसे मिलाते हैं।

उदाहरण—मान लो विवक्षित कर्म प्रकृतिकी स्थिति ४८ समय है। उसके ४८ निषेक हैं तथा परमाणु २५००० हैं। इसमें अपकर्षण भागहार प्रमाण (मान लो) पाँचका भाग देनेपर ५००० हुए। सर्व परमाणुओंमेंसे इतने ५००० परमाणु ग्रहण कर उनमेंसे २५० परमाणु उदयावलीमें देते हैं। इस प्रकार ४८ निषेकोंमेंसे प्रथमादि चार निषेक उदयावलीके हैं, उनमें चय घटते क्रमसे मिलाते हैं। पुनः १००० परमाणु गुणश्रेणि आयाममें देते हैं। इसलिए पाँचवाँ आदि बारहवें पर्यन्त जो ८ निषेक गुणश्रेणी आयामके हैं उनमें असंख्यात गुणाक्रम लिये मिलाते हैं। ३७५० परमाणु उपरितन स्थितिमें देते हैं, वहाँ ३६ निषेक अवशेष रहनेवालोंमें अन्तके ४ निषेक छोड़ देते हैं क्योंकि वे अतिस्थापनावलीके हैं। अवशेष तेरहवाँसे लेकर चवालीस पर्यन्त ३२ निषेकोंमें नानागुणहानिकी रचना लिये चय घटते क्रममें मिलाते हैं। मिलानेका विधान आगे वर्णित है।

कहीं **उदयादिक गुणश्रेणि आयाम** होता है। अपकृष्ट द्रव्यमें कितने एक द्रव्यको तो गुणश्रेणी आयाम प्रमाण जो वर्तमान समय सम्बन्धी निषेकसे लगाकर निषेकोंमें असंख्यात गुणाक्रमसे मिलाते हैं। अवशेषको उपरितन स्थितिमें मिलाते हैं। इस प्रकार यहाँ गुणश्रेणि आयाममें उदयावली गर्भित होती है।

गुणश्रेणि आयाममें कहीं गलितावशेष और कहीं अवस्थित होता है। गलितावशेष गुणश्रेणिका प्रारम्भ करनेके लिए प्रथम समयमें जो गुणश्रेणि आयामका प्रमाण था, उसमेंसे एक-एक समय व्यतीत होते उसके द्वितीयादि समयोंमें गुणश्रेणि आयाम क्रमसे एक एक निषेक घटता हुआ अवशेष रहेका नाम **गलितावशेष है**। **अवस्थित** गुणश्रेणि आयामके प्रारम्भ करनेके प्रथम-द्वितीयादि समयोंमें गुणश्रेणि आयाम जितनाका तितना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बना रहता है। ज्यों-ज्यों एक-एक समय व्यतीत होता जाता है, त्यों-त्यों गुणश्रेणि आयामके अनन्तरवर्ती ऐसे उपरितन स्थितिके एक-एक निषेक गुणश्रेणि आयाममें मिलते जाते हैं—इसीका नाम **अवस्थित गुणहानि आयाम** है। इसी गुणश्रेणि आयामके अन्तके बहुतसे निषेकोंका नाम कहीं **गुणश्रेणि शीर्ष** कहा गया है। कहीं-कहीं अन्तके एक निषेकका ही नाम **गुणश्रेणी शीर्ष** है क्योंकि शीर्ष नाम उपरितन अंगका ही है। इस प्रकार यथासम्भव **गुणश्रेणी निर्जरा**का विधान जानना चाहिए।

यहाँ उदयावलीमें दिये गये द्रव्यका नाम **उदीरणा** जानना चाहिए। जहाँ स्तोक स्थिति सत्त्व अवशेष रहे वहाँ गुणश्रेणीका भी अभाव होता है। अपकृष्ट द्रव्यमें कितना एक द्रव्यको उदयावलीमें देकर अवशेषको उपरितन स्थितिमें देते हैं। एक समय अधिक आवली मात्र स्थिति शेष रहे, आवलीके उपरिवर्ती जो एक निषेक—उसके द्रव्यका अपकर्षण कर उदयावलीके निषेकोंमें एक समय कम आवलीका उपरिवर्ती जो एक निषेक—उसके द्रव्यका अपकर्षण कर उदयावलीके निषेकोंमें एक समय रूप कम आवलीके दो त्रिभाग मात्र निषेकोंको अतिस्थापना रूप छोड़कर समय अधिक आवलीको त्रिभागमात्र निषेकोंमें मिलाते हैं। वहाँ **जघन्य उदीरणा** नाम पाते हैं। ऐसा अपकृष्टि विधान है।

काण्डक विधानमें स्थिति सत्त्वका घटना मूलसे होता है क्योंकि ऊपरके अनेक निषेकोंका नाश कर स्थिति सत्त्वका घटना मूलसे है। पुनः **अनुकृष्टि विधान**में ऊपरके निषेकोंके अनेक परमाणुओं हीं की स्थिति घटाना होती है। मूलसे निषेक नाश नहीं होता, इसलिए मूलसे स्थिति सत्त्वका घटाना नहीं होता है। स्थिति सत्त्वमें आवली मात्र अवशेष रहनेका नाम **उच्छिष्टावली** है। उसमें उदीरणा आदि कार्य नहीं होते हैं। पूर्वमें ये कार्य हुए थे जिनके द्वारा एक-एक समयमें उदय आने योग्य ऐसे अनेक समयप्रबद्ध मात्र परमाणुओं-के समूह रूप निषेक हुए, उन्हींके द्वारा एक समयमें गलते और निर्जरित होते हैं। इसका नाम **अयोगकल** है। इस प्रकार उच्छिष्टावली व्यतीत होनेपर सर्वथा स्थिति सत्त्व नाश होता है।

सत्ता रूप विवक्षित कर्म प्रकृतिके परमाणुओंमें अनुभागकी अधिकता हीनता लिये स्पर्धक रचना होती है। वहाँ नीचेके स्पर्धक स्तोक अनुभागयुक्त होते हैं। ऊपरके स्पर्धक बहुत अनुभाग युक्त होते हैं। वहाँ जो निषेक उदयमें आते हैं उनके अनुभागका भी उदय पूर्वोक्त प्रकार होता है। दर्शन चारित्र लब्धिके द्वारा अप्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग घटाना सम्भव होता है। वहाँ जिस प्रकार स्थिति घटाने हेतु काण्डक विधान कहा गया है वैसे यहाँ भी विधान जानना चाहिए। वह निम्न प्रकार है—

बहुत अनुभागयुक्त ऊपरके बहुत स्पर्धकोंका अभाव कर उनके परमाणुओंको स्तोक अनुभाग युक्त नीचेके स्पर्धकोंमें क्रमसे मिलाकर अनुभागके घटानेका नाम **अनुभाग काण्डक** है अथवा **अनुभाग खण्डन** है। अनुभागको लांछित करना अथवा खण्डित करना **अनुभाग काण्डकोत्करण** अथवा **अनुभाग काण्डक घात** कहते हैं। एक अनुभाग काण्डकका घात अन्तर्मुहूर्त कालमें सम्पूर्ण होता है। इस कालका नाम **अनुभाग काण्डकोत्करण काल** है। इस काल अन्तरालमें नाश करने योग्य स्पर्धकोंके परमाणुओंको ग्रहण कर नाश करनेके पश्चात् जो अवशेष स्पर्धक रहें उनमें कितने एक ऊपरके स्पर्धक अतिस्थापना रूप छोड़कर अन्य सर्व निषेकोंमें मिलाते हैं।

उदाहरण : मान लो विवक्षित प्रकृतिके पाँच सौ स्पर्धक थे। उनमें अनन्तके प्रमाण प्रतीक ५ का भाग देनेसे प्राप्त बहुभाग प्रमाण ४०० स्पर्धकोंका नाश करते हैं। वहाँ उनके परमाणुओंको अवशेष १०० स्पर्धकोंमें इस प्रकार मिलाते हैं कि १० स्पर्धक अतिस्थापना रूप छोड़कर ९० स्पर्धकोंमें उक्त निक्षिप्त हो जायें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ एक अनुभाग काण्डक द्वारा जितना अनुभाग घटाया गया उसका नाम **अनुभाग कांडक आयाम** है। पुनः नाश करने योग्य स्पर्धकोंके सर्व परमाणुओंको ग्रहण कर अनुभाग काण्डकके प्रथम समयमें जितनी परमाण राशि अवशेष स्पर्धकोंमें मिलायी उसका नाम **प्रथम फालि** है। द्वितीय समय जो मिलायी गयी उसका नाम **द्वितीय फालि** है। इत्यादि क्रम है। इस प्रकार एक काण्डककी समाप्ति कर अन्य काण्डकका प्रारम्भ होता है। इस तरह अनेक अनुभाग काण्डकों द्वारा अनुभाग घटाते हैं। जहाँ विशुद्धता बहुत होती है वहाँ अन्तर्मुहूर्तमें होता था जो काण्डकघात उसके अनुभागका **समयापवर्तन** होता है। वहाँ समय-समय प्रति अनन्त गुणे क्रमसे अनुभाग घटाते हैं। पूर्व समयमें जो अनुभाग था, उसमें अनन्तका भाग देनेसे प्राप्त बहुभाग-का नाश कर एक भाग मात्र अनुभाग अवशेष रखते हैं। इस प्रकार समय-समय प्रति अनुभागका घटाना होनेसे इसका नाम **अनुसमयापवर्तन** है। [काण्डक पोरको कहते हैं। कुछ अनुभागके हिस्से करके, एक-एक हिस्सेका फालिक्रमसे अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा अभाव करना **अनुभाग काण्डक घात** है। प्रतिसमय अनन्त बहुभाग अनुभागका अभाव करना **अनुसमयापवर्तन** है।]

संज्वलन कषायमें अनुभाग घटनेके क्रमसे अपूर्व स्पर्धक रचना और बादर कृष्टि रचना होती है। संज्वलन लोभमें सूक्ष्म कृष्टि रचना होती है। सर्वत्र स्तोक अनुभाग युक्तकी रचना नीचे होती है और बढ़ती अनुभाग रचना ऊपर होती है। उसकी अपेक्षा स्पर्धकोंकी कृष्टियोंको नीचे ऊपर कहते हैं। इस क्रमसे अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभाग सत्त्वका नाश होता है। प्रकृति सत्त्वका नाश होनेपर सर्वथा उनके अनुभाग सत्त्वका नाश होता है। प्रशस्त प्रकृतियोंका काण्डकादि विधानसे अनुभाग सत्त्वका नाश करते हैं। प्रकृति सत्त्वके साथ उनके अनुभाग सत्त्वका नाश जानना चाहिए। इस क्रमसे निर्जराका विधान है।

प्रयोजित संज्ञाएँ

कर्म प्रकृतियोंके कथनमें उनके परमाणुओंका नाम **द्रव्य** है। बन्धरूप परमाणुओंका नाम **बन्ध द्रव्य** है। सत्त्व रूप परमाणुओंका नाम **सत्त्व द्रव्य** है। स्थिति काण्डकके निषेकोंके परमाणुओंका नाम **काण्डक द्रव्य** है। वहाँ प्रथमादि फालियोंके परमाणुओंका नाम प्रथमादि **फालि द्रव्य** है। ऊपरके वा नीचेके निषेक छोड़कर बीचके कितने एक निषेकोंका अभाव करनेरूप **अन्तरकरण** होता है। वहाँ अभाव करने रूप निषेकों-के परमाणुओंका 'नाम **अन्तरकरण द्रव्य** है। उदय आनेके अयोग्य किये परमाणुओंका नाम **उपशम द्रव्य** है। विवक्षित सत्ता रूप निषेक थे, उनमें नवीन मिलाये गये परमाणुओंको **दीयमान द्रव्य** कहते हैं। सत्तारूप थीं, उनमें नवीन परमाणुओंके मिलने पर जो सर्वपरमाणुओंका समूह बना उसे **दृश्यमान द्रव्य** कहते हैं (?)। काण्डकका नाम **पर्व** (पोरा) भी है। जिस प्रकार गन्नेको पेरा जाता है उसी प्रकार मर्यादारूप स्थानका नाम **पर्व** है। जिस प्रकार स्थितिमें घटनेका मर्यादारूप स्थान होता है, उसका नाम **स्थिति काण्डक** है। अनुभागमें भी घटनेका मर्यादा रूप स्थान होता है, उसका नाम **अनुभाग काण्डक** है। अनन्तानुबन्धीकी स्थितिमें चार **स्थान** ही चार पर्व कहे जाते हैं। पुनः अपकृष्ट द्रव्यके मिलानेके जहाँ तीन स्थान हैं वहाँ **तीन पर्व** कहे जाते हैं।

आयाम का दूसरा नाम लम्बाई है जो युगपत्से भिन्न कालके प्रमाणकी संज्ञा रूप है। कहीं ऊपर-ऊपर रचना होती है वहाँ उनके प्रमाणमें भी आयाम संज्ञा होती है। जैसे, स्थितिके प्रमाणका नाम **स्थिति आयाम** है। स्थिति काण्डकके निषेकोंके प्रमाणका नाम **स्थिति काण्डक आयाम** है। अन्तरकरणमें जितने निषेकोंका अभाव किया गया हो उसका नाम **अन्तरायाम** है। गुणश्रेणिके निषेकोंके प्रमाणका नाम **गुणश्रेणि आयाम** है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुण नाम **गुणकार** का है। गुणकारकी पंक्ति लिए जहाँ निषेकोंमें द्रव्य देते हैं उसका नाम **गुणश्रेणी** है। समय-समय गुणकार लिये विवक्षित प्रकृतिके परमाणु अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण करनेका नाम **गुणसंक्रम** है। गुणकार लिये हानि अथवा हीनता या घटवारी जहाँ होती है उसका नाम **गुणहानि** है।

विवक्षित कर्मस्थितिमें निषेकोंके उपरिवर्ती निषेकोंका नाम **उपरितन स्थिति** है गुणश्रेणीके कथनमें गुणश्रेणी आयामसे उपरिवर्ती निषेकोंका नाम उपरितनस्थिति है। केवल उदीरणाके कथनमें उदयावलीसे उपरिवर्ती निषेकोंका नाम उपरितन स्थिति है।

विवक्षित प्रमाण लिये निचले निषेकोंका नाम **प्रथम स्थिति** है। पुनः उपरिवर्ती सर्वस्थितियोंके निषेकोंका नाम **द्वितीय स्थिति** है। उदाहरणार्थ, अन्तरायामसे निचले निषेकोंका नाम **प्रथम स्थिति** है। उपरले निषेकोंका नाम द्वितीय स्थिति है। अथवा संज्वलन क्रोधका जितना प्रमाण लिये प्रथमस्थिति स्थापित की गयी हो उसके निषेकोंका नाम प्रथम स्थिति है। अवशेष सर्व स्थितियोंके निषेकोंका नाम द्वितीय स्थिति है।

समुदाय रूप एक क्रियामें अलग-अलग खण्ड कर विशेष करनेका नाम **फालि** है। उदाहरणार्थ, काण्डक द्रव्यको काण्डकोत्करण कालमें अन्यत्र प्राप्त करना। वहाँ प्रथम समय जो प्राप्त किया वह काण्डककी **प्रथम फालि** है। द्वितीय समयमें जो प्राप्त किया वह **द्वितीय फालि**, इत्यादि। इसी प्रकार उपशमन कालमें प्रथम समय जितना द्रव्य उपशमाया, वह उपशमकी **प्रथम फालि** है; द्वितीय समय जो उपशमाया, वह **द्वितीय फालि** है, इत्यादि।

अन्य निषेकोंके परमाणुओंको अन्य निषेकोंमें मिलानेको अथवा देनेको **निक्षेपण** कहते हैं। दिये हुए निषेकोंको **निक्षेपण** रूप जानना चाहिए। द्वितीय स्थितिवाले निषेकोंके द्रव्यको प्रथम स्थितिवाले निषेकोंमें मिलानेकी **आगाल** संज्ञा है। प्रथम स्थितिवाले निषेकोंके द्रव्यको द्वितीय स्थितिके निषेकोंमें मिलानेकी **प्रत्यागाल** संज्ञा है। विवक्षितके कालका जो प्रमाण हो वही उसका काल है। उदाहरणार्थ, एक काण्डक के घात करनेका जो काल है उसका नाम **काण्डकोत्करण काल** है। वहाँ प्रथम समयमें प्रथम फालिका **पतन** जो निचले निषेकोंमें प्राप्त होना सो होता है। इसलिए प्रथम समयको प्रथम फालिका **पतन काल** कहते हैं। द्वितीय समयको द्वितीय फालिका पतनकाल कहते हैं। इसी प्रकार अन्त समयको **चरमफालि** का पतनकाल कहते हैं। उसके पूर्व समयको द्विचरमफालि पतन काल कहते हैं। जिस कालमें अन्तरकरण करते हैं उसका नाम **अन्तरकरण काल** है। जिस कालमें क्रोधको वेदता है, उसके उदयको भोगता है, उसका नाम **क्रोध वेदन काल है।**

आवली मात्र कालका अथवा उतने काल सम्बन्धी निषेकोंका नाम **आवली** है। वहाँ वर्तमान समयसे लेकर आवली मात्र कालको **आवली** कहते हैं। आवलीके निषेकोंको भी **आवली** या **उदयावली** कहते हैं। उसके उपरिवर्ती जो आवली है उसे **द्वितीयावली** कहते अथवा **प्रत्यावली** कहते हैं। बन्ध समयसे लगाकर आवली पर्यन्त उदीरणादि क्रिया जहाँ न हो सके उसका नाम **बन्धावली** या अचलावली अथवा **आबाधावली** है। द्रव्य निक्षेपण करते समय जिन आवली मात्र निषेकोंमें निक्षेपण नहीं करते हैं उसका नाम **अतिस्थापनावली** है। स्थिति सत्त्व घटते हुए जो आवलिमात्र स्थिति अवशेष रह जाये उसका नाम **उच्छिष्टावली** है। जिस आवलीमें संक्रमण पाया जाये उसे **संक्रमणावली** और जहाँ उपशमन करना पाया जाये उसे **उपशमावली** कहते हैं।

अन्तः नाम माहीका (?) है। उक्त प्रमाणसे कुछ कम होना—इसे **अन्तः** संज्ञा दी जातीहै। जैसे कोडाकोडीके नीचे और कोडीके ऊपर प्रमाणको **अन्तःकोटाकोटी** कहते हैं। मुहूर्तसे कम और आवलीसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधिकको अन्तर्मुहूर्त कहते हैं। दिवससे कुछ कमादिको अन्तर्दिवस कहते हैं। तीनके ऊपर और नौके नीचे प्रमाणका नाम पृथक्त्व है। दृष्टान्त अपेक्षा भी संज्ञाएँ होती हैं— जहाँ एक-एक चय घटते क्रममें निषेक पाये जाँय वहाँ गोपुच्छ संज्ञा है। द्रव्य देनेमें जहाँ ऊँटकी पीठिवत् हीनाधिकपना हो वहाँ उष्ट्रकूट संज्ञा है। जहाँ समान पट्टिकाके आकारवत् सर्वस्थानमें समान रचना हो वहाँ समपट्टिका संज्ञा है।

कर्म स्थिति वा अनुभाग रचनाओंमें एक-से करणसूत्रोंका उपयोग होता है। आय और व्यय द्रव्योंके सम्बन्धमें भी संक्रिया (?) जानने योग्य है।

करण सूत्रोंकी संप्रयुक्ति

नाना गुणहानिके सम्बन्धमें चय घटते हुए क्रमरूप द्रव्यके विभागका विधान है। सर्वप्रथम द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दो गुणहानि और अन्योन्याभ्यस्त राशियोंका स्वरूप और प्रमाण जानना चाहिए। स्थिति रचनाके सम्बन्धमें यह उल्लेख है। विवक्षित समयमें ग्रहण किये समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणु राशिका **द्रव्य** कहते हैं। उसकी आबाधा रहित स्थिति बन्धके समय राशिका प्रमाण है वह **स्थिति** है। वहाँ एक गुणहानिमें निषेकोंकी राशि प्रमाणको **गुणहानि आयाम** कहते है। स्थितिमें गुणहानियोंके प्रमाणको **नानागुणहानि** कहते हैं। गुणहानि आयामसे दुगुना प्रमाण **दो गुणहानि** कहलाता है। नाना गुणहानि मात्र दूवा (२ के अंक) विरलित कर, परस्पर गुणित करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसे **अन्योन्याभ्यस्त** राशि कहते हैं। **उदाहरणार्थ**—मिथ्यात्वका द्रव्य अपने समय प्रबद्ध मात्र है। स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। स्थितिमें नानागुणहानिका भाग देनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो वह गुणहानि आयाम है। पल्यके अर्द्धच्छेदोमें-से पल्यकी वर्गशलाकाके अर्द्धच्छेद घटानेपर जो प्रमाण प्राप्त हो वह नानागुणहानि है। गुणहानि आयामसे दूना **निषेकहार** है। पल्यमें पल्यकी वर्गशलाकाओंका भाग देनेपर जो प्राप्त हो वह अन्योन्याभ्यस्त राशि (?) है। इसी प्रकार अन्य प्रकृतियोंका विवरण है।

अनुभाग रचनाके सम्बन्धमें विवक्षित कर्म प्रकृतिके परमाणुओंका प्रमाण **द्रव्य** है। सर्व वर्गणाओंका जो प्रमाण है वह **स्थिति** है। एक गुणहानिमें वर्गणाओंके प्रमाणको **गुणहानि आयाम** कहते हैं। स्थितिमें गुणहानियोंके प्रमाणको **नानागुणहानि** कहते हैं। दूना गुणहानि मात्र **निषेकहार** है। नाना गुणहानि मात्र दूवोंको विरलित कर परस्पर गुणित करनेपर **अन्योन्याभ्यस्त** राशि प्राप्त होती है। इन छहोंका प्रमाण हीनाधिकपन लिये अनन्त प्रमाण है।

काण्डकादि द्रव्य ग्रहण कर यथायोग्य निषेकोंमें निक्षेपण करने सम्बन्धी निम्नप्रकार है। जितना द्रव्य ग्रहण किया हो वह प्रमाण मात्र **द्रव्य** है। जितने निषेकोंमें देना हो उनका प्रमाण मात्र **स्थिति** है। **गुणहानि**का प्रमाण बन्धकी स्थिति रचनामें जितना कहा उतना है। इसका भाग यहाँ सम्भव स्थितिमें देनेपर **नानागुणहानि**का प्रमाण प्राप्त होता है। दूना गुणहानि मात्र निषेकहार है। नानागुणहानि मात्र दूवों (२ के अंकों) को विरलित कर परस्पर गुणित करनेपर **अन्योन्याभ्यस्त** राशि है।

उदाहरण : अंकसंदृष्टि अनुसार मान लो द्रव्य ६३००, स्थिति ४८, गुणहानि ८, नानागुणहानि ६, दो गुणहानि १६, अन्योन्याभ्यस्त राशि $२^{६}$ अथवा ६४ है। निषेकोंमें द्रव्यका प्रमाण लानेके लिए सूत्र, "दिवड्ढगुणहानिभाजिदे पढमा" है। अर्थात् सर्व द्रव्यमें साधिक डेढ़ गुणहानिका भाग देनेपर प्रथम निषेकका द्रव्य होता है। जैसे ६३०० में साधिक १२ का भाग देनेपर ५१२ होता है। पुनः, "तं दो गुणहाणिणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भजिये पचयं" सूत्रसे प्रथम निषेकमें दो गुणहानिका भाग देनेपर चयका प्रमाण आता है। जैसे ५१२ में १६ का भाग देनेपर ३२ होता है। यह द्वितीयादि निषेकोंमें एक-एक चय घटता प्रमाण प्राप्त कराता है। यथा, ४८० आदि।

इस क्रममें जिस निषेकमें प्रथम निषेकसे आधा प्रमाण द्रव्य हो वहाँसे दूसरी गुणहानि प्रारम्भ हो जाती है। जैसे यहाँ दूसरी गुणहानिका प्रथम निषेक ५१२ ÷ २ = २५६ होगा। यहाँ चयका प्रमाण भी प्रथम गुणहानिके चयसे आधा होगा, अर्थात् १६ होगा। इत्यादि।

अन्तिम गुणहानिका अन्तिम निषेक	९	१८	३६	७२	१४४	२८८	
	१०	२०	४०	८०	१६०	३२०	
	११	२२	४४	८८	१७६	३५२	
	१२	२४	४८	९६	१९२	३८४	
	१३	२६	५२	१०४	२०८	४१६	
	१४	२८	५६	११२	२२४	४४८	
	१५	३०	६०	१२०	२४०	४८०	प्रथम गुणहानिका
	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	प्रथम निषेक

इसी प्रकार अनुभाग रचना होती है। जैसे यहाँ द्रव्यादिका प्रमाण जानते हैं, उसी प्रकार अनुभाग रचनामें भी जानते हैं। जैसे यहाँ निषेकोंमें परमाणु संख्याका प्रमाण निकालते हैं, वैसे ही अनुभाग रचनामें वर्गणाओंमें परमाणु संख्याका प्रमाण प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार देने योग्य द्रव्यमें भी।

उदाहरण : एक योग्य स्थानमें नानागुणहानि दो बार असंख्यात द्वारा भाजित पल्य मात्र; एक गुणहानिमें स्पर्धकोंका प्रमाण दो बार असंख्यात द्वारा भाजित श्रेणिमात्र; एक स्पर्धकमें वर्गणाओंका प्रमाण असंख्यात द्वारा भाजित श्रेणिमात्र; एक वर्गणामें वर्गोंका प्रमाण असंख्यात जगत्प्रतर मात्र; तथा एक वर्गमें अविभाग प्रतिच्छेद असंख्यात लोकमात्र हैं। इनकी अर्थ संदृष्टि और अंक संदृष्टि निम्नप्रकार हैं—

नाम	एक वर्गमें अविभाग प्रतिच्छेद	एक वर्गणामें वर्ग	एक स्पर्धकमें वर्गणा	एक गुणहानिमें स्पर्धक	एक स्थानमें गुणहानि (नाना गुणहानि)	स्थान
अर्थ संदृष्टि	$\equiv\!\equiv a$	$= a$	$\overline{a}$	$\overline{a\ a}$	$\frac{प}{a\ a}$	१
अंक संदृष्टि	८	२५६	४	९	५	१

एक स्थानमें स्पर्धकों और वर्गणाओंके प्रमाण निकालने सम्बन्धी त्रैराशिक—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाण	फल	इच्छा	लब्ध
गुणहानि १	स्पर्धक — a a	गुणहानि प a a	एक स्थान स्पर्धक —— प a a a a
स्पर्द्धक १	वर्गणा — a	स्पर्द्धक — प aa a a	एक स्थान वर्गणा — प — aa a a a

यहाँ एक स्थानमें वर्गोंका प्रमाण जीव प्रदेश मात्र ≡ हैं। अविभागी प्रतिच्छेदोंका प्रमाण असंख्यात लोकमात्र ≡a a हैं। यहाँ द्रव्यादिका प्रमाण निम्न प्रकार है—

नाम	द्रव्य	स्थिति	गुणहानि	नाना गुणहानि	दो गुणहानि	अन्योन्याभ्यस्त
अंक संदृष्टि	३१००	४०	८	५	१६	३२
अर्थ संदृष्टि	≡a	— a	— aa	प aa	— २ aa	प a

उपरोक्त प्रकार सूत्रोंसे यह सिद्ध होता है। विशेष विवरणके लिए गो. सा. अर्थसंदृष्टि, पृ. २३२ आदि देखिये।

यदि द्रव्य स्तोक हो और उसे निषेकोंमें निक्षेपित करना हो वहाँ गुणहानिकी रचना सम्भव नहीं है। वहाँ निम्नविधि अपनाते हैं—

जिस प्रकार एक गुणहानिके निषेकोंमें द्रव्यके प्रमाण लानेका विधान है, उसी प्रकार, "अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि" इत्यादि विधानसे वहाँ प्रथमादि निषेकोंका प्रमाण प्राप्त करना चाहिए। विशेष इतना है कि यहाँ जितने निषेकोंमें द्रव्य देना हो उतने ही प्रमाण गच्छ स्थापित करना चाहिए। और जितना द्रव्य वहाँ देने योग्य हो उस प्रमाण द्रव्यको स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार करनेपर जो प्रथमादि निषेकोंका प्रमाण आवे उतने द्रव्यको विवक्षितके पूर्व वाले सत्तारूपी जो प्रथमादि निषेक पाये जायें उनमें मिला देना चाहिए। उदयावलीमें द्रव्य देना हो वहाँ, अथवा स्तोक स्थिति शेष रहने पर उपरितन स्थितिमें द्रव्य देना हो वहाँ; अथवा अन्यत्रके लिए ऐसा विधान जानना चाहिए।

पुनः गुणश्रेणि आयाम आदिमें द्रव्य निक्षेपित करनेका निम्न विधान है—"प्रक्षेपयोगोद्धतमिश्रपिण्डं प्रक्षेपाकाणां गुणको भवेदिति।" जैसे सीरके द्रव्यका नाम मिश्र पिण्ड है। सीरीनिके बिसवाओंका नाम प्रक्षेप है। सो प्रक्षेपको जोड़कर उसका भाग मिश्रपिण्डको देते हैं। जो एक भाग प्रमाण आता है वह प्रक्षेपक अपने-अपने बिसवेका गुणकार होता है। इनको परस्पर गुणित करने पर जो जो प्रमाण आवे वही वही अपने अपने बिसवाके स्वामी जो सीरी है उनका द्रव्य जानना चाहिए। यहाँ सीरका द्रव्य मिश्रपिण्ड १७०० है, सीरीनिके बिसवेका एकका १, दूसरेके ४, तीसरेके १६, चौथेके ६४, ये प्रक्षेप हैं। इनका योग ८५ है। ८५ का भाग मिश्रपिण्डको देनेपर २० प्राप्त हुआ। इसके द्वारा अपने अपने प्रक्षेप बिसवोंको गुणित करनेपर पहलेका २०, दूसरेका ८०, तीसरेका ३२०, चौथेका १२८० द्रव्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार गुणश्रेणी आयाममें जितना द्रव्य देना हो उसे मिश्रपिण्ड जानना चाहिए। पुनः गुणश्रेणी आयामके प्रथम समयकी एक शलाका, द्वितीय समयकी उससे असंख्यात गुणी शलाकाएँ, तृतीय समयकी उससे भी असंख्यात गुणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शलाकाएँ—ऐसे ही असंख्यात गुणा क्रम लिये उसके अन्तिम समय पर्यंतकी शलाकाएँ जानना चाहिए। इसका नाम **प्रक्षेपक** है। इनको जोड़नेपर जो प्रमाण आवे उसका भाग उस सर्वद्रव्यको देनेपर जो प्रमाण हो उसके द्वारा अपनी अपनी शलाकाओंके प्रमाणको गुणित करनेपर गुणश्रेणी आयामके प्रथमादि समय सम्बन्धी निषेकोंमें द्रव्य देनेका प्रमाण आता है। इतना-इतना द्रव्य **गुणश्रेणी आयामके** प्रथमादि निषेकोंमें मिलाना चाहिए। यह विधान **गुणसंक्रममें** भी जानना चाहिए। वहाँ जो गुणसंक्रमण कालके प्रथमादि समय सम्बन्धी एक आदि क्रमसे असंख्यातगुणी शलाकाएँ **प्रक्षेपक** हैं। जो गुणसंक्रमण द्वारा अन्य प्रकृति रूप परिणमावने योग्य सर्वद्रव्य **मिश्रपिण्ड** है। प्रक्षेपकोंके जोड़का भाग मिश्रपिण्डमें देकर लब्ध द्वारा अपनी अपनी शलाकाओंको गुणित करने पर संक्रमणकालके प्रथमादि समयोंमें अन्य प्रकृतिरूप परिणमावने योग्य द्रव्यका प्रमाण आता है। इसी प्रकार अन्यत्र भी यथासम्भव मिश्रपिण्ड और प्रक्षेपकोंका प्रमाण जानकर जैसा जहाँ सम्भव हो वहाँ वैसा जानना चाहिए। सत्तामें प्राप्त निषेकोंके द्रव्यको ज्ञात करनेका विधान निम्न प्रकार है—

विवक्षित कोई समयमें जो सत्ता रूप कर्मपरमाणुओंका द्रव्य हो वहाँ स्थिति सत्त्वका प्रथम समय वर्तमान है। उसीमें उदय आने योग्य जो द्रव्य है वही प्रथम निषेकका द्रव्य है। उसका प्रमाण सम्पूर्ण समय प्रबद्ध मात्र साधारणतः है।

[अंक संदृष्टि द्वारा सत्त्वका निरूपण—यहाँ केवल एक समय प्रबद्ध आस्रवको लेकर सबसे सरल रचना की गयी है। वास्तवमें योग कषाय एवं परिणाम गत फल दुर्गम है।]

वर्तमानसे सम्पूर्णस्थिति पर्यन्त रचना ←	४८	४७	४६	४५	४४	४३	४२	४१	० ० ०	५	४	३	२	१	
														९	अन्तिम गुणहानि
													९	१०	
												९	१०	११	
											९	१०	११	१२	
										९	१०	११	१२	१३	
										१०	११	१२	१३	१४	
										११	१२	१३	१४	१५	
										१२	१३	१४	१५	१६	
										०	०	०	०	०	आस्रव →
										०	०	०	०	०	
										०	०	०	०	०	
								९	० ० ०	२०८	२२४	२४०	२५६	२८८	प्रथम गुणहानि
							९	१०	० ० ०	२२४	२४०	२५६	२८८	३२०	
						९	१०	११	० ० ०	२४०	२५६	२८८	३२०	३५२	
					९	१०	११	१२	० ० ०	२५६	२८८	३२०	३५२	३८४	
				९	१०	११	१२	१३	० ० ०	२८८	३२०	३५२	३८४	४१६	
			९	१०	११	१२	१३	१४	० ० ०	३२०	३५२	३८४	४१६	४४८	
		९	१०	११	१२	१३	१४	१५	० ० ०	३५२	३८४	४१६	४४८	४८०	
विभिन्न समयोंमें शेष	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	० ० ०	३८४	४१६	४४८	४८०	५१२	
परमाणुओंका योग ←	९	१९	३०	४२	५५	६९	८४	१००		४४४४	४८६०	५३०८	५७८८	६३००	

↓

उदय

इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है। पूर्ववर्ती समय समय प्रति समय प्रबद्ध बाँधे उनमें जिस समयप्रबद्धका एक भी निषेक पूर्वमें नहीं गला है उसका प्रथम निषेक इस वर्तमानमें उदय होने योग्य ५१२ है। जिसका एक निषेक पूर्वमें गल गया उसका दूसरा निषेक ४८० इस वर्तमान समयमें उदय होने योग्य है। इसी क्रमसे जिस समयप्रबद्धका एक निषेक छोड़कर अवशेष सर्व निषेक पूर्वमें गल चुके हों उसका अन्तिम निषेक ९ इस समयमें उदय होने योग्य है। इस प्रकार इन सभी ४८ समयप्रबद्धोंके एक एक निषेक मिलकर इस विवक्षित वर्तमान समयमें उदय आने योग्य सम्पूर्ण एक समय प्रबद्ध मात्र द्रव्य हुआ—यही सत्ताका प्रथम निषेक है। इसका प्रमाण ६३०० है। पुनः स्थितिसत्त्वके दूसरे समयमें उदय आने योग्य द्रव्य प्रथम निषेक घटा हुआ समयप्रबद्ध मात्र होता है। इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—प्रथममें जिस समयप्रबद्धका प्रथम निषेक गले उसका दूसरा निषेक है। जिसका दूसरा निषेक गले उसका तीसरा निषेक इत्यादि क्रमशः दूसरे समय उदय आने योग्य निषेक होते हैं—ये सभी मिलकर प्रथम निषेक ५१२ कम समयप्रबद्ध मात्र अर्थात् यहाँ ५७८८ होता है। इसी प्रकार स्थितिसत्त्वके तृतीय समयमें उदय आने वाला निषेक ५१२ एवं ४८० कम समयप्रबद्ध मात्र, अर्थात् ५३०८ होता है। अन्ततः अन्त समयमें उदय आने वाला निषेक यहाँ ९ होगा।

उपर्युक्त सत्ताके सभी निषेकोंका योग किंचिद् ऊन द्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रबद्ध मात्र होता है। यही सत्त्व द्रव्य है। यहाँ अंक संदृष्टि अनुसार ६३०० + ५७८८ + ५३०८ + ... + ११ + १० + ९ का योग ७१३०४ है। गुणहानि आयाम ८ के ड्योढ़े १२ से कुछ कमका गुणा समय प्रबद्ध प्रमाण ६३०० में करने पर भी ७१३०४ आता है। यह विवरण गोम्मटसारमें विशदरूपसे वर्णित है।

जिस प्रकार स्थिति सत्त्व रचनामें आय व्ययका विधान है, उसी प्रकार अनुभाग सत्त्व रचनामें भी वर्गणाओंका प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार लाना चाहिए और वर्गणाओंमें यथा सम्भव द्रव्य निकालते अथवा मिलाते पूर्वोक्त प्रकार चय घटता क्रमका रहना अथवा न रहना ज्ञात करना चाहिए।

उपरोक्त विवरण मुख्यतः पण्डित टोडरमल कृत लब्धिसारकी टीकाकी पीठिकासे लिया गया है।

स्पष्ट है कि त्रिकोण यन्त्र सम्बन्धी रचना जब अर्थ संदृष्टि मय रूप लेगी तब उपरोक्त विवरणमें बीजगणितका प्रवेश हो जावेगा। और भी गहराईमें जानेहेतु आधुनिक रूपमें विकसित मेट्रिक्स यान्त्रिकी, नवीन बीजगणित, स्थलविज्ञान (Topology), तथा अन्य विश्लेषक कलनोंका उपयोग करना होगा। कारण यह है कि समयप्रबद्धमें विभिन्न प्रकृतियों मय कर्म परमाणुकी प्रदेश संख्या, उनकी स्थिति तथा अनुभाग अंश न केवल योग कषायादिके अनुसार परिणमित होते हैं, किन्तु इनकी मन्दता होनेपर विशुद्धिके अनुसार भी परिणमित होने लगते हैं। और ये घटनाएँ सूक्ष्म जगत्में होनेके कारण, साथ ही समूह रूपमें होनेके कारण, सहज होते हुए भी कूटस्थ विश्लेषणका विषय बन जाती हैं।

अगले पृष्ठोंमें अर्थ संदृष्टि मय कुछ प्रकरण प्रस्तुत किये जायेंगे जिनसे उन विधियोंका ज्ञान हो सकेगा जो जैन स्कूलमें कर्म सिद्धान्तके सूक्ष्म विवेचन हेतु उपयोगमें लायीं गयीं। मुख्यतः वे वही हैं जिन्हें पारिभाषिक रूपसे ऊपर वर्णित किया जा चुका है, और अब उन्हें प्रयोग रूपमें गणितीय परिधानमें कुछ चुने हुए प्रकरण लेकर स्पष्ट किया जायेगा। गणितीय प्रणालीके इस प्राचीन रूपको आधुनिक सांचेमें ढालनेका प्रयास किया जा रहा है और आने वाली पीढ़ीके शोधार्थीके लिए इस गूढ़ विषयको और भी अथक एवं अगम्य प्रयासों द्वारा विश्लेषित क ने हेतु यह सामग्री एक दिशा दे सकेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विगत पृष्ठोंमें अधःप्रवृत्तकरण सम्बन्धी संदृष्टि बतलायी गयी है। यहाँ अपूर्वकरणके सम्बन्धमें गणितीय प्रक्रिया बतलायेंगे।

अर्थ संदृष्टि द्वारा अपूर्वकरणमें समस्त परिणामधन श्रे^{3} ə श्रे^{3} ə होता है। गच्छ दो बार संख्यात गुणित आवली प्रमाण, अपूर्वकरणका कालमात्र आ **२२** होता है। यहाँ **२** संख्यात है। आ आवलि, श्रे जगश्रेणी और ə असंख्यात है।

[1]इस प्रकार चय $= \dfrac{\text{सर्व द्रव्य}}{(\text{गच्छ})^2\ (\text{संख्यात})} = \dfrac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə}{(\text{आ २२})\ (\text{आ २२})\ (\text{२})}$

इसी प्रकार,

$$\text{चयधन} = \left(\frac{\text{गच्छ}-१}{२}\right)(\text{ चय })(\text{ गच्छ })$$

$$= \left(\frac{\text{आ २२}-१}{२}\right)\left(\frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə}{(\text{आ २२})\ (\text{आ २२})\ (\text{२})}\right)(\text{आ २२})$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ (\text{आ २२}-१)\ (\text{आ २२})}{(\text{आ २२})\ (\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ (\text{आ २२}-१)}{(\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

आगे, सर्वधन–चयधन

$$= \text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə - \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ (\text{आ २२}-१)}{(\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ (\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२) - \text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ (\text{आ २२}-१)}{(\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ [\text{आ २२}\ \{(\text{२})\ (२)-१\} + \text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə}{(\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ [\text{आ २२}\ \{(\text{२})\ (२)-१\} + १]}{(\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

अब प्रथम समय सम्बन्धी परिणाम संख्या

$$= \frac{\text{सर्वधन} - \text{चयधन}}{\text{गच्छ}}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^3\ ə\ \text{श्रे}^3\ ə\ [\text{आ २२}\{(\text{२})\ (२)-१\}+१]}{(\text{आ २२})\ (\text{आ २२})\ (\text{२})\ (२)}$$

---

१. यहाँ चय निकालनेमें सूत्रमें जो संख्यातका उपयोग हुआ है, वह महत्त्वपूर्ण है। कुट्टीकार विधिसे इसका ठीक मान निकालना महावीराचार्यने गणितसार संग्रहमें बतलाया है, क्योंकि यह एक अज्ञात राशि है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीय समय सम्बन्धी परिणाम संख्या

= प्रथम समय सम्बन्धी परिणाम संख्या + चय

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\,\{(\text{१})(\text{२}) - \text{१}\} + \text{१}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})\,(\text{२})} + \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\{(\text{१})\,(\text{२}) - \text{१}\} + \text{३}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})\,(\text{२})}$$

इस प्रकार एक-एक चय मिलाते एक कम गच्छ मात्र चय प्रथम समय सम्बन्धी परिणाम संख्यामें मिलानेपर अन्त समय सम्बन्धी परिणाम संख्या होती है।

अन्त समय सम्बन्धी परिणाम संख्या

= प्रथम समय सम्बन्धी परिणाम संख्या + (गच्छ − १) (चय)

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\,\{(\text{१})\,(\text{२}) - \text{१}\} + \text{१}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})\,(\text{२})}$$

$$+ (\text{आ ११} - \text{१})\,\frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\{(\text{१})\,(\text{२}) + \text{१}\} - \text{१}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})}$$

उपर्युक्तमें-से दो द्वारा समच्छेद किया हुआ एक चय घटानेपर उपान्त समय सम्बन्धी परिणाम पुंज प्राप्त होता है।

उपान्त समय सम्बन्धी परिणामपुंज

= (अन्त समय सम्बन्धी परिणाम संख्या) − (चय)

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\{(\text{१})\,(\text{२}) + \text{१}\} - \text{१}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})\,(\text{२})} - \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})}$$

$$= \frac{\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,\text{श्रे}^{3}\,\text{a}\,[\text{आ ११}\,\{(\text{१})\,(\text{२}) + \text{१}\} - \text{३}]}{(\text{आ ११})\,(\text{आ ११})\,(\text{१})\,(\text{२})}$$

इस प्रकार अपूर्वकरणमें संदृष्टि कही गयी है। इसमें अनुकृष्टि रचना नहीं होती है। अधःप्रवृत्तकरणमें विशेष विशुद्धता किये हुए परिणामोंके होनेपर भी गुणश्रेणी निर्जरा, गुण संक्रमण, स्थितिकाण्डोत्करण, अनुभागकाण्डोत्करण—ये चार आवश्यक नहीं होते हैं, परन्तु अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा ये होते हैं। कारण कि त्रिकालवर्ती नाना जीव सम्बन्धी अपूर्वकरण रूप विशुद्ध परिणाम सर्व भी अधःप्रवृत्त परिणामोंसे असंख्यात लोक गुणित होकर इस योग्यताको प्राप्त होते हैं। अपूर्वकरणके कालमें प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय पर्यन्त परिणाम स्थान असंख्यात लोक बार षट्स्थान पतित वृद्धिको लिये हुए जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदसे युक्त होते हैं। उनके प्रतिसमय और प्रत्येक परिणामस्थानके प्रति विशुद्धिके अविभाग प्रतिच्छेदोंका प्रमाण अवधारण हेतु अल्पबहुत्व निम्न प्रकार है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम समयवर्ती सबसे जघन्य परिणामकी विशुद्धि अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समय सम्बन्धी अन्तिम खण्डकी उत्कृष्ट विशुद्धिसे यद्यपि अनन्तगुणे अविभाग प्रतिच्छेदोंको लिये हुए हैं, तथापि अपूर्वकरणके अन्य परिणामोंकी विशुद्धिसे स्तोक है। उससे प्रथम समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धि अनन्तगुणी है। उससे द्वितीय समयवर्ती जघन्य परिणाम विशुद्धि अनन्त गुणी है। कारण यह है कि प्रथम समय सम्बन्धी उत्कृष्ट विशुद्धिसे असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानोंका अन्तराल

$$\frac{\text{श्रे}^3\ \text{ə}\ \text{श्रे}^3\ \text{ə}}{\left(\frac{\text{आ}+1}{\text{ə}}\right)^5}$$

देकर वह द्वितीय समवर्ती जघन्य विशुद्धि उत्पन्न होती है। उससे उसी द्वितीय समयकी उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धि अनन्त गुणी है। इस तरह उत्कृष्टसे जघन्य और जघन्यसे उत्कृष्ट विशुद्धि स्थान अनन्त गुणे हैं। इस प्रकार सर्प गतिकी भाँति अपूर्वकरणके चरम समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धि पर्यन्त जघन्य और उत्कृष्ट विशुद्धिका अल्पबहुत्व है।

अपूर्वकरण गुणस्थानके प्रथम भागमें निद्रा और प्रचलाके बन्धकी व्युच्छित्ति मनुष्य आयुके विद्यमान होते होती है। उपशम श्रेणिपर आरोहण करनेवाले अपूर्वकरणवाले जीवका प्रथम भागमें मरण नहीं होता है। यदि ऐसे मनुष्य उपशम श्रेणीपर आरोहण करते हैं तब वे नियमसे चारित्र मोहनीयका उपशम करते हैं। यदि क्षपक श्रेणिपर आरोहण करते हैं तो वे नियमसे चारित्रमोहनीयका क्षपण करते हैं। क्षपक श्रेणिमें सर्वत्र नियमसे मरण नहीं है।

अनिवृत्तिकरणमें परिणाम विशेषके अभावसे विशेष संदृष्टि नहीं है। इसका काल आ १ है। इसके कालके एक समयमें वर्तमान त्रिकालवर्ती नाना जीव जैसे शरीरका आकार वर्ण, वय, अवगाहना, ज्ञानोपयोग आदिसे परस्परमें भेदको प्राप्त होते हैं, उस प्रकार विशुद्ध परिणामोंके द्वारा भेदको प्राप्त नहीं होते हैं। अनिवृत्तिकालके प्रथम समयसे लेकर प्रतिसमय वर्तमान सर्व जीव हीन अधिक परिणामसे रहित समान विशुद्ध परिणामवाले होते हैं। वहाँ जो प्रति समय अनन्तगुणी अनन्तगुणी विशुद्धि लिये परिणाम होते हैं उनसे दूसरे समयमें होनेवाले परिणामोंकी विशुद्धि अविभाग प्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा अनन्तगुणी है। अनिवृत्तिकरण परिणामवाले जीव विमलतर ध्यानरूपी अग्निकी ज्वालासे कर्मरूपी वनको जलाकर चारित्रमोहका उपशम अथवा क्षपण करते हैं।

उपर्युक्त तीन करणोंके निमित्तसे होनेवाले सत्त्वादि द्रव्य प्रदेश, प्रकृति, अनुभाग एवं स्थितिमें परिवर्तन की गणितीय प्रणालीके लिए यहाँसे लब्धिसारका अध्ययन प्रारम्भ करना चाहिए।

सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थानके विवरणमें हम नवीन प्रतीक निम्न प्रकार लेकर निरूपण कर सकते हैं।

जघन्य वर्गणा	$\text{व}_{\text{ज}}$
एक गुणहानिमें स्पर्द्धक	$\text{गु}_{\text{स्प}}$
नानागुणहानि	ना
अनन्त	ख
अपकर्षण भागहार	उ
एक स्पर्धकमें वर्गणाएँ	$\text{स्प}_{\text{व}}$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्धक शलाकाओंमें असंख्यात अपकर्षण भागहारका भाग देने पर गु$_{\text{स्प}}$ ÷ उ a का प्रमाण प्राप्त होता है। अविभागी प्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा नाना गुणहानि और स्पर्धक शलाका गुणि जघन्य वर्गमात्र उत्कृष्ट पूर्व स्पर्धक वर्गोंकी संदृष्टि व$_{\text{ज}}$ गु$_{\text{स्प}}$ना होती है। जघन्य वर्गमात्र जघन्य पूर्व स्पर्धकके वर्गकी संदृष्टि व$_{\text{ज}}$ है। इसमें अनन्तका भाग देनेपर उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धकका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ ख प्राप्त होता है। इसे असंख्यात गुणित अपकर्षण भागहार द्वारा भाजित स्पर्धक शलाकाका भाग देनेपर जघन्य अपूर्व स्पर्धकका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ (ख गु$_{\text{स्प}}$ ÷ उ a) प्राप्त होता है। उपर्युक्तमें अनन्तका भाग देनेपर उत्कृष्ट बादर कृष्टिके वर्गोंका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ (ख गु$_{\text{स्प}}$ ख ÷ उ a) प्राप्त होता है। इसमें वर्गणाशलाकाके अनन्तवें भागका भाग देनेपर जघन्य बादर कृष्टिके वर्गोंका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ (ख गु$_{\text{स्प}}$ ख स्प$_{a}$) ÷ (उ a ख)] प्राप्त होता है। इसमें अनन्तका भाग देनेपर उत्कृष्ट सूक्ष्म कृष्टिके वर्गोंका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ [(ख गु$_{\text{स्प}}$ ख स्प$_{a}$ख) ÷ (उ a ख)] प्राप्त होता है। इसमें वर्गणा शलाकाके अनन्तवें भागका भाग देनेपर जघन्य सूक्ष्म कृष्टिके वर्गोंका प्रमाण व$_{\text{ज}}$ ÷ [{ख गु$_{\text{स्प}}$ ख स्प$_{a}$ख स्प$_{a}$} − (उ a ख ख)] प्राप्त होता है।

अनिवृत्तिकरणमें की गयी सत्तामें सूक्ष्म कृष्टि, जब उदयरूप होती है तब सूक्ष्म साम्पराय होता है।

यहाँसे गुणश्रेणि निर्जरा प्रारम्भ होती है जो उत्तरोत्तर असंख्यात गुणी बढ़ती जाती है। इसका प्रमाण इस प्रकार प्राप्त करते हैं—

अनादि संसारका कारण जो बन्ध, उसकी परम्परामें बँधा जगत्श्रेणीके घन प्रमाण श्रे^{3}, एक जीवके प्रदेशोंमें स्थित; ज्ञानावरणादि मूल और उत्तर प्रकृतियोंके सत्ता रूप द्रव्य त्रिकोण रचनाके अभिप्रायसे कुछ कम डेढ़ गुणहानि आयामसे समयप्रबद्धको गुणित करनेपर स a $\frac{3}{2}$ गु— है, जहाँ स जघन्य समयप्रबद्ध है, स a उत्कृष्ट समयप्रबद्ध है, $\frac{3}{2}$ डेढ़ है तथा गु— कुछ कम गुणहानि आयाम है। इतने द्रव्यमें आयुकर्मके द्रव्यको घटा दिया गया है। इसलिए यह ज्ञानावरणादि सात कर्मोंका द्रव्य है। इसमें ७ का भाग देनेपर ज्ञानावरण कर्म द्रव्यका प्रमाण $\frac{\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—}}{७}$ प्राप्त होता है। इसमें अनन्तका भाग देनेपर एक भागका प्रमाण $\frac{\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—}}{\text{७ ख}}$ होता है जिसे सर्वघाती केवल ज्ञानावरणका द्रव्य कहते हैं। अवशेष बहुभाग प्रमाण

$$\frac{\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—}}{७} - \frac{\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—}}{\text{७ ख}} = \frac{(\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—})\ (\text{ख} - १)}{\text{७ ख}}$$

मतिज्ञानावरण आदि देशघाति प्रकृतियोंका द्रव्य होता है। इस देशघाति द्रव्यको मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ज्ञानावरण रूप चारसे भाजित करनेपर एक भाग मतिज्ञानावरणके द्रव्यका प्रमाण $\frac{\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु—}}{७ \times ४}$ अनुमानतः हुआ। कारण यह है कि (ख—१) और (ख) का अनुपात १ लिया जा सकता है। इस मतिज्ञानावरण द्रव्यमें अपकर्षण भागहार उ का भाग देनेसे प्राप्त बहुभागका प्रमाण $\frac{(\text{स a } \frac{3}{2} \text{ गु— } (\text{उ—१}}{७ \times ४ \text{ उ}}$

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है जो जैसेका तैसा तिष्ठता है। अवशेष एक भाग $\frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)}{(७)\ (४)\ (उ)}$ होता है जिसे निम्नलिखित रूपमें परिणमाते हैं।

इसमें पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण $\frac{प}{a}$ का भाग देनेपर बहुभाग $\frac{(स a \frac{3}{2}\ गु-)\left(\frac{प}{a}-१\right)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)}$

प्राप्त होता है जिसे उपरितन स्थितिमें देते हैं। पुनः अवशेष एक भाग प्रमाण $\frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)}$

है जिसे असंख्यात लोकप्रमाण श्रे^{3} a द्वारा भाजित करनेपर बहुभाग $\frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)\ (श्रे^3\ a-१)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)\ (श्रे^3 a)}$

प्राप्त होता है जिसे गुण श्रेणि आयाममें देते हैं। अवशेष एक भाग $\frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)\ (श्रे^3 a)}$

प्रमाण होता है जिसे उदयावलीके निषेकोंमें देते हैं। द्रव्यको निक्षेपित करनेके सूत्रादि पूर्वमें ही बतला चुके हैं। पुनः जो यह उदयावलीमें द्रव्य दिया है उसे यहाँ आवली आ द्वारा भाजित करनेपर मध्यधनका प्रमाण $\frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)\ (श्रे^3 a)\ (आ)}$ होता है। पुनः एक कम आवलीके अर्द्धभागका भाग दो गुणहानिमें-से घटानेपर २ गु $-\ \frac{आ-१}{२}$ प्राप्त होता है जिसके द्वारा मध्यधनको भाजित करनेपर चयका प्रमाण आता है—चय = [मध्यधन] ÷ [निषेकहार $-\ \frac{आवली-१}{२}$]

$$= \frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)\ (श्रे^3 a)\ (आ) \left[२\ गु-\left(\frac{आ-१}{२}\right)\right]}$$

होता है। इसे दो गुणहानि २ गु द्वारा गुणित करनेपर प्रथम निषेकका प्रमाण

$$= \frac{(स\ a\ \frac{3}{2}\ गु-)\ (२\ गु)}{(७)\ (४)\ (उ)\ \left(\frac{प}{a}\right)\ (श्रे^3 a)\ (आ) \left[२\ गु-\left(\frac{आ-१}{२}\right)\right]}$$

प्राप्त होता है। इसमेंसे एक, एक चय घटानेपर क्रमशः द्वितीयादि निषेकका प्रमाण प्राप्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार एक-एक चय घटाते हुए एक कम आवली प्रमाण चय प्रथमनिषेकमें-से घटानेपर अन्तिम निषेक = प्रथम निषेक − चय (आवली − १)

$$= \frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)(\text{२ गु})}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)(\text{श्रे}^{3}a)(\text{आ})\left[\text{२ गु}-\left(\frac{\text{आ}-१}{२}\right)\right]}$$

$$- \frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)(\text{श्रे}^{3}a)(\text{आ})\left[\text{२ गु}-\left(\frac{\text{आ}-१}{२}\right)\right]}$$

$$= \frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)[\text{२ गु}-(\text{आ}-१)]}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)(\text{श्रे}^{3}a)(\text{आ})\left[\text{२ गु}-\left(\frac{\text{आ}-१}{२}\right)\right.}$$ होता है।

अब गुणश्रेणि आयाम अन्तर्मुहूर्त मात्र जिसमें दिया गया द्रव्य $\frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)(\text{श्रे}^{3}a-१)}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)(\text{श्रे}^{3}a)}$ है। इसको समय प्रतिसमय असंख्यातसे गुणित करनेपर निषेक रचना निम्न प्रकार होती है। यहाँ असंख्यातकी संदृष्टि (४) करने पर प्रथम समय शलाका (१), दूसरे समय (४), तीसरे समय (१६), अन्त समय (६४) होती है, जिन सभीका योग (८५) होता है। इस प्रकार समानुपातमें बँटनेपर निषेकोंका प्रमाण निम्न रूपमें होता है—

प्रथम निषेक

$$= \frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)(\text{श्रे}^{3}a-१)((१))}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)\text{श्रे}^{3}a((८५))}$$

इसी प्रकार अन्तिम निषेक

$$= \frac{(\text{स } a \ \frac{३}{२}\text{गु}-)(\text{श्रे}^{3}a-१)((६४))}{(७)(४)(\text{उ})\left(\frac{\text{प}}{a}\right)(\text{श्रे}^{3}a)((८५))}$$

होता है। यहाँ अन्तर्मुहूर्तके भेदोंमें जघन्य अन्तर्मुहूर्त आ १ है जिससे संख्यात गुणा उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त आ ११ होता है। दोनोंका अन्तर आ ११ − आ १ होता है। इसके ऊपर एक समय और जोड़नेपर समस्त अन्तर्मुहूर्तोंके भेदोंका प्रमाण आ १ (१ − १) + १ होता है।

इस प्रकार गणितके रूपको भलीभाँति समझकर लब्धिसार ग्रन्थमें प्रवेश करना लाभप्रद होगा। उपरोक्त सामग्री गोम्मटसारादि ग्रन्थोंमें गति देनेमें समर्थ होगी।

प्रो० लक्ष्मीचन्द्र जैन
प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय,
सिहोरा (जबलपुर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीकोद्धृत पद्यानुक्रमणी

अंतधणं गुणगुणियं १३१८
उत्तर सेढिबद्धा [त्रि. सा. ४७६ गा.] ८७२
ओरालमिस्स तसवह ११२७
कथञ्चित्केनचित् कश्चित् १०५५
कथञ्चित्ते सदेवेष्टं [आ. मी. १४ श्लो.] १०५४
कर्ताद्या वस्तुनो भिन्ना [अन. ध. १।१०२] ८१२
कार्योत्पादाक्षयो हेतो [आ. मी. ५८ श्लो.] १०५२
चदुगदिमिच्छो सण्णी [लब्धि. २ गा.] ८७७
चरया य परिव्वाजा [त्रि.सा. ५४७ गा.] ८४३,८७४
णरतिरियगदीहिंतो [त्रि. सा. ५४९ गा.] ८७४
णरतिरियदेस अयदा [त्रि.सा. ५४५ गा.]८४३,८७३
णिट्ठवगो तट्ठाणे [ल. सा. १११ गा.] ८८४
दंसणमोहक्खवणा [ल. सा. ११० गा.] ८८४
दोण्णि य सत्त य ११२६
देशो मदीय [अन. ध. १।१७७] ८१३
मत्यादिविभावगुणा [अन. ध. १।१०६] ८१३
महपूजासु जिणाणं [त्रि. सा. ५५४ गा.] ८७५
मिच्छे पण मिच्छत्तं ११२७
भज्जमिव दुग १३०६
भूतार्थे रज्जुवत्स्वैरं [अन. ध. १।१०१] ८१४
रसाद् रक्तं ततो मांसं ३१
रूऊणण्णोण्णब्भत्थ २२८
वातः पित्तं ततो श्लेष्मा ३१
विरलिदरासीदो पुण [त्रि. सा. १०१ गा.] १३०६
विविहवररयणभूसा [त्रि. सा. ५५५ गा.] ८७५
व्येकपदं चयगुणितं ३६१
सच्चाणुभयं वयणं ११२७
सदेकनित्यवक्तव्या [स्व. स्तो. १०१ श्लो.] १०५६
सकारे वा निराकारे ४४
सामान्यं समवायश्च [आ. मी. ६५ श्लो.] १०५६
सुखबोहिया वि मिच्छा [त्रि. सा. ५५२ गा.] ८७५
सुण्णं पमादरहिदे ११२७
सुहसयणग्गे देवा [त्रि. सा. ५५० गा.] ८७४
सुहुमे सुहुमो लोहो ११२७
सोहम्मो वरदेवी [त्रि. सा. ५४८ गा.] ८७४

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष शब्द-सूची

[अ]

अकाम निर्जरा ११५४
अक्रियावाद १२४१
अगुरुलघु नाम ३०
अङ्गोपांग नाम २९
अघातिकर्म ६
अचलावली १८६
अज्ञानवाद १२४२
अधःप्रवृत्तकरण १२४९
अधःप्रवृत्तसंक्रमण ६६०
अध्रुवबन्ध १२३
अनन्तानुबन्धी २६
अनादिबन्ध ६४, १२३
अनादेय नाम ३३
अनिवृत्तिकरण १२७२
अनेक क्षेत्र २०९
अन्तराय ११५१
अन्तरायकर्म ६, ९, १०
अन्तरायकर्म (भेद) २२, ३३
अन्तःकोटाकोटि १२७५
अन्योन्याभ्यस्तराशि ३७३, १२८०
अपकर्षणकरण ६७४
अपर्याप्तनाम ३२
अप्रत्याख्यानावरण २६
अयशःकीर्तिनाम ३३
अरति २६
अर्धनाराचसंहननाम २९
अल्पतर बन्ध ६८६, ७००
अवक्तव्य बन्ध ६८६, ७००
अवधिज्ञानावरण २३
अवस्थित बन्ध ६८६, ७००
अविभाग प्रतिच्छेद २६६, ३११
अशुभ नाम ३२
असात वेदनीय १३
अस्थिर नाम ३२
असंप्राप्तसृपाटिका संहनन नाम २९

[आ]

आगम द्रव्य कर्म ४६
आगम भाव कर्म ५१
आत्मवाद १२४०
आदिघन १२५१
आदेय नाम ३२
आनुपूर्वी नाम २१, ३०
आबाधा १८२, १२७४
आयुकर्म ६, ७, ९, १०
आयुकर्म (भेद) १६, २६
आसादन ११५१
आहारक शरीर नाम २८

[इ]

इंगिनीमरण ४९
ईश्वरवाद १२४०

[उ]

उच्चगोत्र ३३
उच्छ्वास नाम ३१
उत्कर्षणकरण ६७४
उत्तरघन १२५२
उदयकरण ६७४
उदीरणाकरण ६७४
उद्योतनाम ३०
उद्वेलन ५७९
उद्वेलन संक्रमण ६६०
उपघात नाम ३०
उपपाद योगस्थान २६२
उपशमकरण ६७४
ऊर्ध्वगच्छ १२५१
ऊर्ध्वचय १२५१

[ए]

एकक्षेत्र २०९
एकान्तानुवृद्धियोगस्थान २६६
एकेन्द्रिय जाति नाम २७

[औ]

औदारिक शरीर नाम २८
औदयिक भाव ११५८
औपशमिक भाव ११५८

[क]

कदलीघात ४७
कर्मतद्व्यतिरिक्त ५०
कषायवेदनीय १६, २५
कार्मणशरीरनाम २८
कालवाद १२३९
कीलितसंहनननाम २९
क्रियावादी १२३८
क्षयदेश ६७८
क्षायिक भाव ११५८
क्षायोपशमिक भाव ११५८
क्षेत्र विपाकी ४१

[ग]

गतिनाम १७, २७
गन्ध नाम २१, ३०
गुण संक्रमण ६६०
गुणहानि ४, २२३, १२८०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणहानि आयाम १२८०
गोत्रकर्म ७, ९, १०
गोत्रकर्म (भेद) २२

[घ]

घातिकर्म ६

[च]

चतुरिन्द्रिय जाति नाम २७
चय १२५१
चयधन १२५१
चारित्र मोहनीय १६, २५
चूलिका ६४७
च्यावित शरीर ४८
च्युत शरीर ४७

[ज]

जाति नाम १७, २७
जातिपद भंग ११९०
जात्यन्तर सर्वघाती ३६
जीवविपाकी ४२
जुगुप्सा २६

[त]

तद्व्यतिरिक्त नोआगमकर्म ५०
तिर्यग्गच्छ १२५१
तिर्यग्गति नाम २७
तिर्यञ्चायु २७
तीर्थंकरत्व नाम ३२
तैजस शरीर नाम २८
त्यक्त शरीर ४८
त्रस नाम ३१
त्रीन्द्रिय जाति नाम २७

[द]

दर्शन मोहनीय १३, २४
दर्शनावरण ६, १०
दुर्भगनाम ३२
दुःस्वर नाम ३३
देवगति नाम २७
देवायु २७
देशघाति ३३
दैववाद १२४५
दो गुणहानि १२८०
द्रव्यकर्म ४
द्रव्यराशि १२७९
द्वीन्द्रिय जातिनाम २७

[ध]

धर्मकथा ६२
ध्रुवबन्धी ६९४
ध्रुवोदयी ६५२

[न]

नपुंसकवेद २६
नयवाद १२४५
नरकगतिनाम २७
नानागुणहानि १२८०
नामकर्म ६, ७, ९, १०, १६
नाममल ४५
नारकायु २७
नाराच संहनन नाम २९
निकाचितकरण ६७५
निद्रा १३, २४
निद्रानिद्रा १२, २४
निधत्तिकरण ६७१
निह्नव ११५१
निरन्तरबन्धी ६५२
निर्माणनाम ३२
निषेक १८७
नीचगोत्र ३३
नोआगम द्रव्यकर्म ४६, ५०
नोआगम भावकर्म ५१
नोकर्म तद्व्यतिरिक्त ५०
नोकषाय वेदनीय (स्वरूप) २१
,, (भेद) १६, २६

[प]

पञ्चेन्द्रिय जातिनाम २७
पदगतभंग ११६६
परघातनाम ३०
परमुखोदयी ६७८
परिणाम योगस्थान २६४
पर्याप्तिनाम ३१
पारिणामिक भाव ११५८
पिण्डपद १२०२
पुंवेद २६
पुद्गलविपाकी ४१
प्रकृति २
प्रचला १३, २४
प्रचलाप्रचला १३, २४
प्रत्यनीक ११५१
प्रत्याख्यानावरण २६
प्रत्येकपद १२०२
प्रत्येकशरीरनाम ३१
प्रदोष ११५१
प्रायोपगमन ४९

[ब]

बन्ध २२, ६७४
बन्धननाम २८
बालतप ११५४

[भ]

भक्त प्रतिज्ञा ४८
भय २६
भवविपाकी ४७
भावकर्म ४
भुजकार बन्ध ६८६, ७००

[म]

मतिज्ञानावरण २३
मध्यमधन १२९७
मनःपर्ययज्ञानावरण २३
मनुष्यगतिनाम २७
मनुष्यायु २७
मिथ्यात्व प्रकृति २५
मोहनीय ६, १०
,, (भेद) २४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[र]

रति २६

रसनाम २१, ३०

[ल]

लोकवाद १२४५

[व]

वज्रनाराचसंहनननाम २९

वज्रर्षभनाराचसंहनननाम २९

वर्ग २६६, ३१२

वर्गणा २६६, ३१२

वर्णनाम २१, ३०

वासनाकाल ४०

विध्यातसंक्रमण ६६०

विहायोगतिनाम २१, ३१

वेदनीयकर्म ६, ८, १०

वैक्रियिक शरीरनाम २८

वैनयिकवाद १२४४

[श]

शरीरनाम १७, २८

शुभनाम ३२

शोक २६

श्रुतज्ञानावरण २३

[स]

संक्रमण ६५७, ६७४

संघातनाम २८

संज्वलन २६

संयोगवाद १२४५

संस्थाननाम २८

संहनननाम २९

सत्त्वकरण ६७४

समयप्रबद्ध ३, ४

सम्यक्त्व प्रकृति २५

सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृति २५

सर्वघन १२५३

सर्वसंक्रमण ६६०

सातवेदनीय १३, २४

सादिबन्ध ६४, १२३

साधारण शरीरनाम ३२

सान्तरबन्धी ६५२

सुभगनाम ३२

सुस्वरनाम ३२

सूक्ष्मनाम ३२

स्तव ६२

स्तुति ६२

स्त्रीवेद २६

स्त्यानगृद्धि १२, २३

स्थापनाकर्म ४५

स्थावरनाम ३१

स्थानगतभंग ११६६

स्पर्धक २६६

स्पर्शनाम २१, ३०

स्वभाववाद १२४१

स्वमुखोदयी ६७८

स्थिति आयाम १२८०

स्थितिबन्धाध्यवसाय
स्थान १३४२, १३४४

स्थिरनाम ३१

[ह]

हास्य २६

[ज्ञ]

ज्ञानावरण ६

ज्ञायक शरीर ४६

ज्ञायक शरीरभावि ४९

●

Jain Education International		For Private & Personal Use Only		www.jainelibrary.org

गाथासूत्रोंकी अकारादिक्रम-सूची

	पृ.	गा.
[अ]		
अक्खाणं अणुभवणं	८	१४
अजहण्णट्ठिदिबंधो	१८	१५२
अट्ठगुणिज्जा वामे	११५८	८९
अट्ठत्तरीहिं सहिया	७५७	५०६
अट्ठत्तीस सहस्सा	७५४	५०५
अट्ठं देक्खिय जाणदि	८	१५
अट्ठमं सत्तय छक्कय	७६२	५०८
अट्ठविह सत्त छव्वं	९७४	६२८
अट्ठसमयस्स थोवा	३५५	२४३
अट्ठसु एक्को बंधो	९९०	६५३
अट्ठण्हंपि य एवं	१३८०	९६१
अट्ठारह चउ अट्ठं	६४३	३९३
अट्ठुदओ सुहुमोत्ति य	६८६	४५४
अट्ठेव सहस्साहिं	७५८	५०७
अडचउरेक्कावीसं	७६४	५११
अड छव्वीसं सोलस	९८८	६४१
अडदालं छत्तीसं	१२०१	८५५
अडदालं चारिसया	१२३५	८७२
अडवण्णा सत्तसया	९६१	६०८
अडवीसतिय दु साणे	८९२	५५१
अडवीसमिवुणतीसे	१११८	७८१
अडवीसे तिगिगवदे	१११८	७८०
अडवीसदुगं बंधो	१०२५	४००
अडवीस चऊ बंधा	१०४२	७३१
अडवीस दु हारदुगे	८२०	५४६
अडसट्ठी एक्कसयं	१२३४	८७१
अणणोकम्मं मिच्छ	५६	७५
अणुथीणतियं मिच्छं	१९५	१७१
अणरहिदसहिदकूडे	११४३	९७६
अणसंजोजिदमिच्छे	९०४	५६१
अणसंजोजिदसम्मे	७२०	४७८
अण्णत्थठियस्सुदये	६७४	४३९
अण्णदर आउसहिया	६२३	३७८
अण्णाणदुगे बंधो	१०३८	७२३
अण्णाणि हु अणीसो	१२४०	८८०
अण्णोण्णगुणिदरासी	३७२	२४९
अण्णोण्णब्भत्थं पुण	६७१	४३३
अणियट्टिकरणपढमा	७३७	४८३
अणियट्टिगुणट्ठाणे	६४३	३९२
अणियट्टिचरमठाणा	६३९	३८९
अणियट्टि बंधतियं	९९०	६५४
अणुकट्ठिपदेण हदे	१२५५	९०६
अणुदयतदियं णीचम	५५९	३४१
अणुवदमहव्वदेहिं	११५४	८०७
अणुभयवचि वियलजुदा	४८८	३११
अणुभागाणं बंध	४०६	२६०
अत्थि णवट्ठ य दुदओ	१०४७	७३८
अत्थि सदो परदोवि य	१२३८	८७७
अत्थि सदो परदोवि य	१२३९	८७८
अपमत्ते य अपुव्वे	१०२६	७०१
अपमत्ते सम्मत्तं	४३५	२६८
अप्पदरा पुण तीसं	७१०	४७३
अप्पपरोभयठाणे	९०२	५५५
अप्पिट्ठपंतिचरमो	१३१४	९३६
अप्पोवयारवेक्खं	४९	६१
अप्पं बंधतो बहु	७००	४६९
अब्भीरिहिदा दु पुव्वं	८	१६
अभव्वसिद्धे णत्थि हु	५९१	३५५
अयदापुण्णे ण हि थी	४४९	२८७
अयदे विदियकसाया	४३५	२६६
अयदे विदियकसाया	७०	९७

अयदुवसमगचउक्के	११९०	८४५
अरदीसोगे संढे	१२७	१३०
अरहंतसिद्धचेदिय	११५२	८०२
अरहंतादिसु भत्ती	११५५	८०९
अवरट्ठिदिबंधज्झव	१३४४	९४९
अवरादीणं ठाणं	११२७	७९१
अवरुक्कस्सठिदीणं	१३७९	९६०
अवरुक्कस्सेण हवे	३५१	२४२
अवणिदतिप्पयडीणं	४४४	२८०
अवधिदुगेणविहीणं	११६८	८२७
अवरो भिण्णमुहुत्तो	१२५	१२६
अवसेसा पयडीओ	२०७	१८३
अविभागपडिच्छेदो	२६६	२२३
अविरदभंगे मिस्सय	८९९	५५३
अविरदठाणं एक्कं	४७५	३०५
अविरदसम्मो देसो	९०३	५५८
अविरमणे बंधुदया	१०४१	७२९
अत्थि णवट्ठयदुदओ	१०४७	७३८
असिदिसदं किरियाणं	१२३७	८७६
अहियागमणणिमित्तं	१३४५	९५०
अंगुल असंखभागं	६७१	४३४
अंगुल असंखभागं	३३३	२३०
अंतरगा तदसंखे	३९२	२५५
अंतरमुवरीवि पुणो	३४०	२३९
अंतिमठाणं सुहुमे	८३५	५४८
अंतिमतियसंहडणस्सु	२१	३२
अंतोकोडाकोडी	१८३	१५७
अंतोकोडाकोडी	१३३८	९४५
अंतोकोडाकोडी	१२७५	९१६
अंतोमुहुत्तमेत्ते	१२६८	९१०
अंतोमुहुत्तकालं	१२६७	९०८
अंतोमुहुत्तमेत्तो	१२५०	८९९
अंतोमुहुत्तपक्खं	४०	४६

[आ]

आउक्कस्स पदेसं	२५२	२११
आउगभागो थोवो	२१७	१९२
आउग बंधाबंधण	५९७	३५९
आउट्ठिदि बंधज्झव	१३४१	९४७
आउदुगहारतित्थं	६०२	३६७
आउवलेण अवट्ठिदि	९	१८
आउस्स जहण्णट्ठिदि	१३४७	९५३
आउस्स य संखेज्जा	१३२१	९३९
आऊणि भवविवाई	४१	४८
आदाओ उज्जोओ	१९२	१६५
आदिघणादो सव्वं	१२५१	९०१
आदिमपंचट्ठाणे	६२५	३७९
आदिमसत्तेव तदो	६७५	४४२
आदिम्मि कमे वड्ढदि	१२५६	९०७
आदिल्लदससु सरिसा	६२५	३८१
आदी अंते सुद्धे	३९१	२५४
आदेसे वि य एवं	१२३७	८७५
आयदणाणायदणं	५५	७४
आलसड्ढो णिरुच्छाओ	१२४४	८९०
आवरण देसघादं	२०५	१८२
आवरणमोहविग्घं	६	९
आवरणवेदणीए	१३२१	९३८
आवलियं आबाहा	१८६	१५९
आवलियं आबाहा	१२७७	९१८
आबाधाणं विदिओ	१३२३	९४१
आबाहूणीय कम्म	१२७८	९१९
आवाहूणियकम्म	१८७	१६०
आवाहं बोलाविय	१२७८	९२०
आवाहं बोलाविय	१८८	१६१
आहारदुगं सम्मं	६६१	४१५
आहारगा दु देवे	८०३	५४२
आहारमप्पमत्ते	१९५	१७२
आहारे बंधुदया	१०४७	७३७
आहारं तु पमत्ते	४२७	२६१

[इ]

इगि अड अट्ठिगि अट्ठिगि	९२१	५७७
इगिछक्कणणवीसं	१०३४	७१६
इगि छक्कणणवीसं	१०२९	७०८
इगिठाणफड्ढयाओ	२६८	२२७
इगिठाणफड्ढयाओ	३८८	२५०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इगिणवदीए बंधा	१०९५	७५६
इगिणउदीए तीसं	१११३	७७१
इगितीसबंधठाणे	१११५	७७४
इगितीसे तीसुदओ	१०५०	७४४
इगिदालं च सयाइं	१२३४	८७०
इगिपंचेंदियथावर	१२७	१३१
इगिपंतिगदं पुध पुध	१३०७	९३५
इगिबंधट्ठाणेण दु	१११२	७६८
इगिवारं वज्जित्ता	९८३	६४३
इगिविगलथावरचऊ	४५०	२८८
इगिविगलबन्धठाणं	१०३३	७१५
इगिविहिगिगिखगतीसे	९२३	५७८
इगिवीसट्ठाणुदये	१०१६	७७५
इगिवीसमोहखवणुग	१२४९	८९७
इगिवीसादट्ठुदयो		७७२
इगिवीसादी एक्कं	१०२४	६९७
इगिवीसेण णिरुद्धे	१००४	६७५
इगिवीसं णहि पढमे	१००५	६७६
इट्ठपदे रूऊणे	१२०७	८६१
इट्ठसलायपमाणे	१३२०	९३७
इट्ठाणिट्ठविजोगं	५६	७७
इत्थीवेदेवि तहा	५०६	३२१
इदि चदुबंधक्खवगे	७७०	५१५
[उ]		
उक्कडजोगो सण्णी	२५२	२१०
उक्कस्सट्ठिदिबंधे	१३२२	९४०
उगुदालतीससत्त य	६६२	४१८
उगुवीसतियं तत्तो	११८६	८३९
उगुवीसं अट्ठारस	६९४	४६५
उच्चस्सुच्चं देहं	५९	८४
उच्चुव्वेल्लिद तेऊ	९७९	६३६
उच्चुव्वेल्लिद तेऊ	९८०	६३७
उज्जोवो तमतमगे	१९४	१६९
उद्दतिरिच्छपदाणं	१२३१	८६३
उत्तरपयडीसु पुणो	२२२	१९६
उत्तरभंगा दुविहा	१११६	८२३
उवधिपुधत्तं तु तसे	९६४	६१५
उदओ तीसं सत्तं	१०२६	७०२
उदयइगिपणसग अड	१०३२	७१३
उदयट्ठाणं पयडिं	७३३	४९०
उदयट्ठाणं दोण्हं	७२६	४८२
उदयस्सुदीरणस्स य	४४३	२७८
उदया इगिपणवीसं	१०४४	७३३
उदया इगियवीसचऊ	१०४५	७३५
उदया उणतीस तियं	१०३९	७२४
उदया चउवीसूणा	१०२५	६९९
उदया मदि व ऊइए	१०४५	७३४
उदयेणवखे चडिदे	११७५	८३४
उदये संकममुदये	६७४	४४०
उदये संकममुदये	६८०	४५०
उदयो ग्व्वं चउपण	१०४०	७२६
उदयं पडि सत्तण्हं	१२७४	९१५
उदयं पडि सत्तण्हं	१८२	१५६
उभयधणे संमिलिदे	१२५२	९०२
उम्मग्ग देसगो म	११५३	८०५
उववादमसग्गमणं	३८	४४
उववादहीणतीसे	११३	१६७
उवरदबंधे चदुयं	९७६	६३२
उवरिमगुणहाणीणं	१३२७	९४४
उवरदबंधेसुदया	१०५०	७४५
उवरिल्ल पंचमे पुण	११२४	७८८
उववाद जोगठाणा	२६२	२१९
उव्वेलण पयडीणं	६५९	४१३
उव्वेलणविज्झादो	६५७	४०९
उव्वेल्लिद देवदुगे	६११	३६८
उवसमखइओ मिस्सो	११५८	८१३
उवसमभावो उवसम	११५९	८१६
उवसामगा दु सेढिं	९०३	५६९
उवसामगेसु दुगुणं	११८८	८४३
उवसंत खीणमोहे	७३	१०२
उवसंतोत्ति सुराऊ	६७९	४४६
उसहाइजिणवरिंदे	६४७	३९८
[ऊ]		
ऊणत्तीस सयाइं	१२३४	८६९
ऊणत्तीस सयाहिय	९४६	६०५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[ए]

एइंदियमादीणं	५७	८०
एकम्हि कालसमये	१२७१	९११
एक्कादी दुगुणकमा	१२०४	८६०
एक्कवके पुण वग्गे	२६८	२२६
एक्क य छक्केयारं	७३१	४८८
एक्क य छक्केयारं	७२४	४८१
एक्काउस्स तिभंगा	९८५	६४५
एक्कारं दसगुणियं	१२००	८५२
एक्कावण्णसहस्सं	७३९	४९३
एक्कुदयुवसंतंसे	१०२०	६९०
एक्के एक्कं आऊ	९८३	६४२
एक्को चेव महप्पा	१२४०	८८१
एक्कं व दो व तिण्णि य	९२८	५८४
एक्कं च तिण्णि पंच य	११२९	७९३
एगुण तीसंसिदयं	१०२४	६९८
एगे इगितीसपणं	९३९	५९५
एगेगमट्ठ एगे	१०२२	६९४
एगेगं इगितीसे	१०४८	७४१
एगे वियले सयले	१०३१	७११
एदेण कारणेण दु	४४०	२७५
एदे सत्तट्ठाणा	६३७	३८६
एदेसिं ठाणाओ	३५०	२४१
एदेसिं ठाणाणं	३४२	२३२
एयक्ख अपज्जत्तं	७८४	५३०
एयक्खेत्तोगाढं	२०९	१८५
एयसरीरोगाहिय	२०९	१८६
एयाणेयक्खेत्त	२१०	१८७
एयं पणकदिपण्णं	१३८	१४४
एयं वा पणकाये	४८१	३०९
एयंतवड्ढिठाणा	२६६	२२२
एवं खिगितीसेणहि	११११	७६७
एवं तिसु उवसमगे	६३६	३८५
एवं पणछव्वीसे	१११३	७७०
एवं पंचतिरिक्खे	५६९	३४७
एवमडसीदितिदए	१११६	७७६
एवमवंधे बंधे	९८४	६४५
एवं माणादितिये	५१३	३२१
एवं सत्तट्ठाणं	६४५	३९५

[ओ]

ओक्कट्टणकरणं पुण	६७७	४४५
ओघादेसे संभव	११६०	८२०
ओघे वा आदेसे	७८	१०५
ओघं कम्मे सरगदि	५००	३१८
ओघं तसे ण थावर	४८९	३१०
ओघं देवे ण हि णिर	५७५	३४८
ओघं पंचक्खतसे	५७७	३४९
ओघं वा णेरइये	५६६	३४६
ओदइया पुण भावा	११५९	८१८
ओरालदुगं वज्जे	६६६	४२५
ओरालमिस्सजोगे	५८३	३५३
ओरालिय वेगुव्विय	५८	८१
ओराले वा मिस्से	१०२	११६
ओरालं दण्डदुगे	९२९	५८७
ओहिदुगे बंधतियं	१०४२	७३०
ओहिमणपज्जयाणं	५४	७१
ओहीकेवलदंसण	५४	७३

[क]

कदलीघादसमेदं	४७	५८
कप्पित्थीसु ण तित्थं	९२	११२
कम्मकयमोहवड्ढिय	७	११
कम्मत्तणेण एक्कं	४	६
कम्मद्व्वादण्णं	५०	६४
कम्मसरूवेणागय	१८२	१५५
कम्मसरूवेणागय	१२७४	९१४
कम्मागमपरिजाणग	५०	६५
कम्माणं संबंधो	६७४	४३८
कम्मुदयजकम्मिगुणो	११५८	८१३
कम्मुवसमम्मि उवसम	११५८	८१४
कम्मेव अणाहारे	५५०	३३२
कम्मेवाणाहारे	५९३	३५६
कम्मे उरालमिस्सं	१०६	११९
कम्मोरालिय मिस्सं	९२९	५८६
कम्मं वा किण्हतिये	८५०	५४१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालो सव्वं जणयदि	१२३९	८७९
किं बंधो उदयादो	६४७	३९९
केवलणाणं दंसण	६	१०
केवलणाणावरणं	३६	३९
को करइ कंदयाणं	१२४१	८८३
को जाणइ सत्तचऊ	१२४३	८८७
जो जाणइ णवभावे	१२४२	८८६
कोहस्स य माणस्स य	७२९	४८६

[ख]

खवणं वा उवसमणे	५६३	३४३
खाइय अविरदसम्मे	११७३	८३१
खाइयसम्मो देसो	५४२	३२९
खाओवसमियभावो	११५९	८१७
खिवतमदुग्गदि दुस्सर	४७६	३०८
खीणकसायदुचरिमे	४३६	२७०
खीणोत्ति चारि उदया	६९२	४६१

[ग]

गदि आणु आउ उदओ	४४८	२८५
गदिआदिजीवभेदं	७	१२
गदिआदिसु जोग्गाणं	४४८	२८४
गदि जादी उस्सासं	४२	५१
गयजोगस्स दु तेरे	९६३	६११
गयजोगस्स य बारे	९४२	५९८
गुडखंडसक्करामिय	२०७	१८४
गुणसंजादप्पयडि	९६३	६१२
गुणहाणिअणंतगुणं	६७२	४३२
गोम्मटजिणिदचंदं	११५७	८११
गोम्मटमुत्तलिहणे	१३८९	९७२
गोम्मटसंगहसुत्तं	१३८६	९६५
गोम्मटसंगहसुत्तं	१३८७	९६८

[घ]

घादितिमिच्छकसाया	१२३	१२४
घादितियाणं सगसग	२३१	२०१
घादिव वेयणीयं	९	१९
घादीणं अजहण्णो	२००	१७८
घादीणं छदुमट्ठा	६८६	४५५
घादी णीचमसादं	३०	४३
घादीवि अघादिं वा	९	१७
घोडणजोगोऽसण्णी	२५६	२१६

[च]

चउ छक्कदि चउ अट्ठं	५९९	३६२
चउरुदयुदमंतंसे	१०२०	६८९
चउवीसट्ठारसयं	११४७	७९७
चक्खुम्मि ण साहारण	५२२	३२५
चक्खूण मिच्छसासण	११७२	८३०
चत्तारि तिण्णि कमसो	३९१	२४६
चत्तारि तिण्णि तियचउ	६८३	४५३
चत्तारि वारमुवसम	९६७	६१९
चत्तारिवि खेत्ताइं	५५४	३३४
चदुगदिया एइंदी	९३३	५९३
चदुगदिमिच्छे चउरो	५७९	३५१
चदु पच्चइगो बंधो	११२३	७८७
चदुबंधे दोउदये	१००६	६७८
चदुरेक्कदुपण पंच य	९०२	५५६
चयधणहीणं दव्वं	१२५३	९०३
चरिम अपुण्णभवत्थो	२५७	२१७
चरिमदुवीसूणुदओ	१०९५	७५७
चरिमं चरिमं खंडं	१३७७	९५७
चरिमे चदुतिदुगेक्कं	९९९	६६८
चारुसुदंसणधरणे	१०४८	७३९

[छ]

छट्ठोत्ति चारिभंगा	९७७	६३४
छट्ठे अथिरं असुहं	७१	९८
छण्णउदि चउसहस्सा	१२६७	९०९
छण्णवछत्तियसग इगि	१०२२	६९३
छण्णोकसाय णिद्दा	२५३	२१३
छण्हं पि अणुक्कस्सो	२५०	२०७
छप्पण उदये उवसं	१०१९	६८८
छप्पंचादेयंतं	११४८	७९९
छव्वावीसे चदुइगि	६९९	४६७
छव्वीसे तिगिणउदे	१११७	७७८
छसु सगविहमट्ठविहं	६८३	४५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[ज]

जत्थ वरणेमिचंदो	६५६	४०८
जत्तु जश जेण जहा	१२४०	८८२
जदि सत्तरिस्स एत्तिय	१३९	१४५
जम्हा उवरिमभावा	१२४९	८९८
जम्हि गुणा विस्संता	१३८६	९६६
जस्स य पायपसाए	६७३	४३६
जहस्लादे बंधतियं	१०४१	७२८
जह चक्केण य चक्की	६४६	३९७
जाणुगसरीरभवियं	४६	५५
जावदिया वयणवहा	१२४५	८९४
जीरदि समयपबद्धं	४५	५
जीवत्तं भव्वत्तम	११६०	८१९
जुगवं संजोगित्ता	५५५	३३६
जेट्ठे समयपबद्धे	२१२	१८८
जेट्ठावाहोवट्टिय	१४५	१४७
जेण विणम्मियपडिमा	१३८८	९६९
जेणुब्वियथंभुवरिम	१३८८	९७१
जेहिंदु लक्खिज्जंते	११५७	८१२
जोगा पयडिपदेसा	३९३	२५७
जोगिम्मि अजोगिम्मि य	१२३५	८७३
जोगिम्मि अजोगिम्मि य	१०२७	७०३
जोगट्ठाणा तिविहा	२६१	२१८
जंतेण कोद्दवं वा	१४	२६

[ठ]

ठाणमपुण्णेण जुदं	७७९	५२२
ठिदि अणुभागाणं पुण	६६८	४२९
ठिदि अणुभागपदेसा	६३	९१
ठिदिगुणहाणिपमाणं	१३४६	९५१

[ण]

णउदी चदुग्गदम्मि य	९६९	६२१
णट्ठा य रायदोसा	४३८	२७३
णत्थि अणं उवसमगे	६४२	३९१
णत्थि णउंसयवेओ	७४४	४९७
णत्थि य सत्थपदत्था	१२४२	८८५
णत्थि सदो परदोवि य	१२४१	८८४
णभ चउवीसं बारस	७०९	४७२
णभ तिगि णभ इगि दोद्दो	५६१	३४२
णमिऊण अभयणंदि	११२२	७८५
णमिऊण णेमिणाहं	६८२	४५१
णमिऊण णेमिचंदं	६१	८७
णमिऊण वड्ढमाणं	५९६	३५८
णमह गुणरयणभूषण	१२४९	८९६
णरगइणामरगइणा	७८१	५२५
णरतिरिया सेसाउं	१३१	१३७
णलया बाहू य तहा	१९	२८
णवगेवेज्जाणुद्दिस	१९	३०
णव छक्क चदुक्कं चय	६८९	४५९
णव णउदिसगसयाहिय	७३८	४९२
णवपंचोदयसत्ता	१०४८	७४०
णवरि य अपुव्वणवगे	१००५	६७७
णवरि य सव्वुवसम्मे	११४	१२०
णवरि विसेसं जाणे	६७६	४४३
णवरि विसेसं जाणे	११७१	८२९
णवसयसत्तत्तरिहिं	७३३	४८९
णवसासणोत्ति बंधो	६९०	४६०
णहि सासणो अपुण्णे	१००	११५
णाणस्स दंसणस्स य	५	८
णाणस्स दंसणस्स य	१०	२०
णाणावरणचउक्कं	३६	४०
णाणागुणहाणिसला	३७२	२४८
णाणंतरायदसयं	२५१	२०९
णामस्स णवधुवाणि य	७८२	५२६
णामधुवोदयबारस	९३१	५८८
णामस्स बंधठाणा	८०५	५४४
णामस्स य बन्धादिसु	११२०	७८४
णामस्स य बन्धोदय	१०२३	६९५
णामस्स य बन्धोदय	१०२२	६९२
णामं ठवणा दवियं	४५	५२
णारकछक्कुव्वेल्ले	६१३	३७०
णारय सण्णिमणुस्ससु	९५४	६०७
णिरयगदि आउणीचं	४९७	३१६
णिरय तिरिक्खदुवियलं	५५८	३३८
णिरिय तिरिक्खसुराउग	५५४	३३५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिरिय तिरियाउ दोण्णिवि	६३५	३८४
णिरयादि जुदट्ठाणे	८९९	५५२
णिरयादिणामबन्धा	१०३२	७१२
णिरयादिसु पयडिट्ठिदि	५६५	३४४
णिरयादीण गदीणं	५७	७९
णिरया पुण्णा पण्हं	७७५	५१९
णिरयायुस्स अणिट्ठा	५७	७८
णिरयेण विणा तिण्हं	७७९	५२३
णिरये वा इगिणउदी	९७०	६२३
णिरयेव होदि देवे	९०	१११
णिरयं सासणसम्मो	४२८	२६२
णिव्वत्ति सुहुमजेट्ठं	३४४	२३४
णीचुच्चाणेकदरं	९७९	६३५
णेरयियाणं गमणं	७९७	५३८
णोआगमभावो पुण	५१	६६
णोआगमभावो पुण	६०	८६

[त]

तग्गुणगारा कमसो	१२३३	८६७
तट्ठाणे एक्कारस	७६७	५१४
तण्णोकसायभागो	२४१	२०४
तत्तो उवरिमखंडा	१३८०	९६२
तत्तो कमेण वड्ढदि	१३८४	९६४
तत्तो तियदुगमेक्कं	१००३	६७२
तत्तो पल्लसलाय	६७०	४३२
तत्थतणविरदसम्मो	७९९	५३९
तत्थावरणजभावा	११६७	८२५
तत्थासत्थ एदि हु	७९२	५३४
तत्थासत्था णारय	९४३	६००
तत्थासत्थो णारय	७९१	५३३
तत्थेव मूलभंगा	११६५	८२२
तत्थंतिमच्छिदिस्स य	१३०४	९३४
तदियेक्कवज्जणिमिणं	४३७	२७१
तदियेक्कं मणुवगदी	४३७	२७२
तदियो सणामसिद्धो	९०६	५६४
तम्मिस्सेऽपुण्णजुदा	४९३	३१२
तव्वदिरित्तं दुविहं	५०	६३
तसबंधेण हि संहृदि	७८२	५२७
तसमिस्से ताणि पुणो	९३२	५९०
तह य असण्णी सण्णी	३४५	२३६
तह सुहुमसुहुमजेट्ठं	३४६	२३८
तिण्णि दस अट्ठठाणा	६८८	४५८
तिण्णेगे एगेगं	७६३	५०९
तिण्णेव दु बावीसे	७७२	५१६
तित्थण्णदराउदुगं	६१७	३७४
तित्थयरमाणमाया	५१०	३२२
तित्थयरसत्तणारय	९११	५७४
तित्थयरं उस्सासं	४२	५०
तित्थाहारचउक्कं	६१७	३७३
तित्थाहारा जुगवं	५५३	३३३
तित्थाहाराणंतो	१३७	१४१
तित्थाहारे सहियं	६२२	३७७
तित्थेणाहारदुगं	७८४	५२९
तिदु इगि बंधे अडचउ	१०१६	६८४
तिदु इगिणउदी णउदी	९६१	६०९
तिदु इगि बंधेक्कुदये	१००६	६७९
तिय उणवीसं छत्तिय	७६	१०४
तियपण छवीसबंधे	१०४९	७४२
तिरिय अपुण्णं वेगे	४७६	३०६
तिरियदु जाइचउक्कं	६६०	४१४
तिरियाउग देवाउग	६०२	३६६
तिरिये ओघे सुरणिर	४५५	२९४
तिरिये ओघो तित्था	८३	१०८
तिरिए ण तित्थसत्तं	५६५	३४५
तिरियेयारुव्वेलण	६६२	४१७
तिरियेयारं तीसे	६६४	४२१
तिरियेव णरे णवरि हु	८६	११०
तिव्वकसाओ बहु.	११५३	८०३
तिविहो दु ठाणबंधो	९०५	५६३
तीसण्हमणुक्कस्सो	२५१	२०८
तिसु एक्केक्कं उदओ	९९६	६६४
तिसु तेरं दसमिस्से	७३९	४९४
तीसुदयं बिगितीसे	११२०	७८३
तीसे अट्ठवि बंधो	१००४	७५१
तीसं बारस उदयु	४४३	२७९
तीसं कोडाकोडी	१२६	१२७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ेउ तिगुणतिरिक्खे	४५१	२८९
ेउदुगं तेरिच्छे	८००	५४०
ेउतिगे सगुणोघं	५३२	३२७
ेउदुगे मणुवदुगं	९६५	६१६
ेणउदि छक्कसत्तं	११११	७६६
ेणउदीए बंधा	१०९४	७·४
ेण णभिगितीसुदए	१११०	७६३
ेण तिये तिदुबंधो	१०२१	६९१
ेण दुणउदे णउदे	१११९	७८२
ेणवदिसत्तसत्तं	१११०	७६४
ते णव सगसदरिजुदा	१०७३	७५०
तेणुवरिमपंचुदये	११०९	७६१
तेणेवं तेरतिये	१०१५	६८३
ते चोद्दसपरिहीणा	६४०	३९०
तेजदुगं वण्णचऊ	६५०	४०३
तेजदुहारदुसमचऊ	७१	१००
तेजाकम्मेहिंतिये	१७	२७
तेरट्ठचऊदेसे	९१२	६५७
तेरणवे पुव्वंसे	१०१४	६८२
तेरदु पुव्वं बंसा	९९९	६६७
तेरसवारेयारं	७६५	५१२
तेरससयाणि सत्तर	७५१	५०१
तेरिच्छा हु सरिच्छा	१२३१	८६२
तेवट्ठि च सयाइं	१२८०	९२३
तेवण्णणवसयाहिय	७४९	४९८
तेवण्णतिसदसहियं	७५२	५०२
तेवत्तरि सयाइं	१२३३	८६८
तेवीसट्ठाणादो	९११	५६६
तेवीसबंधगे इगि	११०८	७६०
तेवीसबन्धठाणे	१११२	७६९
तेवीसादीबन्धा	१०२३	६९६
तेवीसं पणुवीसं	७७७	५२१
तेहिं असंखेज्जगुणा	४०१	२५९
तं पुण अट्ठविहं वा	५	७

[थ]

थावरदुगसाहारण	४५७	२९५
थिरजुम्मस्स थिराथिर	५६	८३
थिरसुहजससाददुगं	१९८	१७७
थीणतियीपुरसूणा	४५१	२९०
थीणुदयेणुट्ठविदे	१२	२३
थी पुरिसोदयचडिदे	६३९	३८८
थीपुंसंढसरीरं	५६	७६
थूले सोलस पहुदो	११२४	७९०

[द]

दइवमेव परं मण्णे	१२४५	८९१
दव्वे कम्मं दुविहं	४६	५४
दव्वं ठिदि गुणहाणी	१२७९	९२२
दव्वतियं हेट्ठुवरिम	३६१	२४५
दव्वं समयपबद्धं	१२८०	९२४
दस अट्ठारस दसयं	११२८	७९२
दसगुदये अडवीसदि	१०१६	६८५
दस चउरिगि सत्तरसं	४२९	२६३
दसय चऊ पढमतियं	९९५	६६२
दस णव पण्णरसाइं	७७४	५१८
दस णव णवादि चउतिय	७२३	४८०
दस णब अट्ठ य सत्त य	७१५	४७५
दसयादिसु बंधंसा	९९८	६६५
दसवीसं एक्कारस	६९९	४६८
दुक्ख तिघादीणोघं	१२६	१२८
दुग छक्क तिण्णिवग्गे	६३४	३८३
दुग छक्क सत्त अट्ठं	६२१	३७६
दुग्गमणादावदुगं	६५२	४०५
दुग्गदि दुस्सर संहदि	४९९	३१७
दुति छस्सत्तट्ठणवे	६०१	३६५
दुविहा पुण पदभंगा	११८९	८४४
दुसु दुसु देसे दोसुवि	११८५	८३५
देवचउक्काहारदु	६४८	४००
देवचउक्कं वज्जं	२५३	२१४
देवजुदेक्कट्ठाणे	९२०	५७६
देवट्ठवीसणरदे	९१८	५७२
देवट्ठ वीस बन्धे	९१८	५७३
देवाउगं पमत्तो	१३१	१३६
देवा पुण एइंदिय	१३१	१३८
देवाहारेसत्थं	९४५	६०२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवे वा वेगुव्वे	१०४	११८
देवेसु देवमणुवे	९०५	५६२
देवोघं वेगुव्वे	४९६	३१४
देसणरे तिरये तिय	९८८	६४८
देसतियेसु वि एवं	६३१	३८२
देसावरणण्णोण्ण	२३२	१०
देसे तदियकसाया	४३९	२६७
देसे तदियकसाया	४६२	३००
देसोत्ति हवे सम्मं	२०३	१८१
देहादी फस्संता	५५९	३४०
देहादी फासंता	४०	४७
देहे अविणाभावी	३३	३४
देहोदयेण सहिओ	३	३
दो गुणहाणिपमाणं	१२८४	९२८
दो छक्कट्ठउचक्कं	१०३०	७१०

[ध]

धम्मे तित्थं बंधदि	७९	१०६
धुववड्ढी वड्ढन्तो	३९०	२५३

[प]

पचयधणस्साणयणे	१२५४	९०४
पचयस्स य संकलणं	१२८७	९३१
पज्जत्तगविदिचप	७८४	५३१
पडिणीगमन्तराये	११५१	८००
पडपडिहारसिमज्जा	११	२१
पडपडिहारसिमज्जा	५२	६९
पडिय मरिएक्कमेक्कू	९२६	५८२
पढविसयपहुदि दव्वं	५३	७०
पडिसमय धणे वि पदं	१२५५	९०५
पढमकसायाणं च वि	६७९	४४८
पढमचऊ सीदिचऊ	१०३९	७२५
पढमतियं च य पढमं	७६४	५१०
पढमादिया कसाया	३९	४५
पढमुवसमिये सम्मे	६५	९३
पढमं पढमं खण्डं	१३७७	९५६
पढमं पढमतिचउपण	९९८	६६६
पण णव इगि सत्तरसं	४३३	२६४
पण णव इगि सत्तरसं	४४४	२८१
पण णव णव पणभंगा	९८६	६४६
पणदालछस्सयाहिय	७५०	५००
पण दो पणगं पणचउ	१०२८	७०४
पणबंधगम्मि बारस	७२८	४८५
पणमिय सिरसा णेमि	१	१
पणवण्णा पण्णासा	११२४	७८९
पणविग्घे विवरीयं	२४६	२०६
पणवीसे तिगिणउदे	१११६	७७७
पण्णरकसायभयदुग	६४८	४०१
पण्णारसमुगतीसं	१०३	११७
पण्णास वार छक्कदि	६००	३६४
पण्णरसोलट्ठारस	१२३२	८३६
पण्णेकारं छक्कदि	६४४	३९४
पत्तेयपदा मिच्छे	१२०२	८५७
पत्तेयाणं उवरिं	१२०३	८५९
पयडिट्ठिदिअणुभाग	६२	८९
पयडीए तणुकसाओ	११५४	८०६
पयडी सीलसहावो	२	२
पयलापयलुदयेण य	१३	२४
पयलुदयेण य जीवो	१३	२५
परघाददुगं तेजदु	१९७	१७५
परघादमंगपुण्णे	९३२	५९१
परसमयाणं वयणं	१२४६	८९५
परिणामजोगठाणा	२६४	२२०
परिणामो दुट्ठाणो	११७४	८३२
परिहारे बंधतियं	१०४०	७२७
पल्लासंखेज्जदिमा	२६७	२२४
पल्लासंखेज्जदिमं	९६५	६१७
पाणवधादीसु रदो	११५५	८१०
पिंडपदा पंचेन य	१२०२	८५८
पुढवी आऊ तेऊ	७९३	५३५
पुढवीयादिसु पंचसु	१०३४	७१७
पुणरवि देसोत्ति गुणो	११८६	८३८
पुण्णतस जोगठाणं	३७०	२४७
पुण्णिदरं विगिविगले	९७	११३
पुण्णेकारसजोगे	५८१	३५२
पुण्णेण समं सव्वे	७८२	९२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरिसोदयेण चडिदे	७२८	४८४
पुरिसोदयेण चडिदे	७६६	५१३
पुरिसं चदुसंज्जलणं	७२	१०१
पुव्वाणं कोडितिभा	१८४	१५८
पुव्वाणं कोडितिभा	१२७६	९१७
पुव्विल्लेसुवि मिलिदे	७२२	४७९
पुव्वे पंचणियट्टी	११८८	८४२
पुव्वं व ण चउवीसं	१०४९	७४३
पुव्वंधद्धा अंतो	२४३	२०५
पुंसंढूणित्थिजुदा	४५९	२९६
पंचक्खतसे सव्वं	८०७	५४५
पंच णव दोणि अट्ठा	१२	२२
पंच णव दोण्णि छव्वी	३४	३५
पंच णव दोण्णि०	३६	३८
पंच णव दोण्णि अट्ठा	३५	३६
पंचण्हं णिद्दाणं	५४	७२
पंचविधचदुविधेसु य	७७२	५१७
पंचसहस्सा बेसय	७५३	५०४
पंचादिपंचबंधो	९९३	६५८
पंचेक्कारसवावी	४४२	२७७
पंचेक्कारसवावी	४४७	२८३
पंचेंदियेसु ओघं	९८	११४

[फ]

फड्डयगे एक्के क्के	२६७	२२५
फड्ढयसंखाहि गुणं	२७४	२२९

[ब]

बंधणपद्धदिसमण्णिय	५८	८२
बंधतियं अडवीस दु	१०३७	७२१
बंधपदे उदयंसा	९९४	६६०
बंधा तिय पण छण्ण०	१०२८	७०६
बंधुक्कट्टणकरणं	६७३	४३७
बंधुक्कट्टणकरणं	६७७	४४४
बंधुदये सत्तपदं	१००३	६७३
बंधे अधापवत्तो	६६१	४१६
बंधोदयकम्मंसा	९७५	६३०
बंधे संकामिज्जदि	६५७	४१०

[भ]

भत्तपयण्णाइविही	४८	६०
भत्तपइण्णा इंगिणि	४८	५९
भयदुगरहियं पढमं	११३०	७९४
भयसहियं च जुगुच्छा	७१६	४७७
भवणतियाणं एवं	८०४	५४३
भवयंति भवियकाले	४९	६२
भव्विदराणण्णदरं	१२०१	८५६
भव्विदरुवसमवेदग	५३६	३२८
भव्वे सव्वमभव्वे	८७६	५५०
भव्वे सव्वमभव्वे	१०४३	७३२
भिण्णमुहुत्तो णरतिरि	१३७	१४२
भुजगारप्पदराणं	९१७	५७१
भुजगारा अप्पदरा	९०१	५५४
भुजगारा अप्पदरा	९२५	५८०
भुजगारे अप्पदरे	९२६	५८१
भूदाणुकंपवदजो	११५२	८०१
भूवादरतेवीसं	९०६	५३५
भूवादरपज्जत्ते	७८०	५२४
भूदं तु चुदं चइदं	४७	५६
भेदे छादालसयं	३५	३७
भेदेण अवत्तव्वा	७१४	४७४
भोगभुमा देवाउं	९८२	६४०
भोगे सुरट्ठवीसं	९११	५६७
भोगं व सुरे णरचउ	४७३	३०४
भंगा एक्केक्का पुण	६३८	३८७

[म]

मज्झे जीवा बहुगा	३६१	२४४
मज्झे थोवसलागा	१७०	१४९
मणवयणकायदाणग	१२४३	८८८
मणु ओरालदु वज्जं	१९२	१६६
मणवयणकायवक्को	११५४	८०८
मणिवचिबंधुदयंसा	१०३५	७१८
मणुवे ओघो थावर	४६१	२९७
मणुसिणि एत्थीसहिदा	४६७	३०१
मणुसोघं वा भोगे	४७०	३०२
मरणूणम्हि णियट्टी	७१	९९

मिच्छ चउक्के छक्कं	७५३	५०३
मिच्छतिये तिचउक्के	११६४	८२१
मिच्छतिये मिस्सए	११९१	८४६
मिच्छत्तस्स य उत्ता	१३००	९३३
मिच्छत्ताणण्णदरं	११३९	७९५
मिच्छत्तं अविरमणं	११२२	७८६
मिच्छत्त हुंडसंढा	६९	९५
मिच्छतियसोलसाणं	६७९	४४७
मिच्छदुगयदचउक्के	११७४	८३३
मिच्छदुगे मिस्सतिये	११६६	८२४
मिच्छदुगे मिस्सतिये	७३४	४९१
मिच्छमणंतं मिस्सं	४५२	२९२
मिच्छमपुण्णं छेदो	४६२	२९९
मिच्छस्स ठाणभंगा	९१२	५६८
मिच्छस्संतिमणवयं	१९३	१६८
मिच्छस्स य मिच्छोत्ति य	६८०	४४९
मिच्छा इट्ठिप्पहुदि	१२३३	८६६
मिच्छादिठाणभंगा	११८७	८४०
मिच्छादिगोदभंगा	९८०	६३८
मिच्छादीणं दुतिदुसु	१२३१	८६४
मिच्छादुवसंतोत्तिय	६९२	४६२
मिच्छूणिगिवीससयं	६६७	४२७
मिच्छे अट्ठुदयपदा	११९१	८४७
मिच्छे परिणामपदा	११९१	८४८
मिच्छे मिच्छादावं	४३४	२६५
मिच्छे वग्गसलाय	१२८१	९२५
मिच्छे सम्मिस्साणं	६५८	४१२
मिच्छे सासणअयदे	७४०	४९५
मिच्छो हु महारंभो	११५३	८०४
मिच्छं मिस्सं सगुणे	७१५	४७६
मूलुण्हपहा अग्गी	२२	३३
मूलुत्तरपयडीणं	९७३	६२७
मूलुत्तरपयडीणं	५२	६८
मूलुत्तरपयडीणं	५१	६७
मूलोघं पुंवेदे	५०३	३२०
मिस्सम्मि तिअंगाणं	९३१	५८९
मिस्सा आहारस्स य	९०४	५६०
मिस्साविरदमणुस्स	७९५	५३७
मिस्साविरदे उच्चं	८१	१०७
मिस्सूण पमत्तंते	६८७	४५६
मिस्से अपुव्वजुगले	९७४	६२८
मोहस्स य बंधोदय	९९०	६५२
मोहे मिच्छत्तादी	२३६	२०२
[र]		
रसबंधज्झवसाण	१३८१	९६३
रागजमं तु पमत्ते	११६७	८२६
रिणमंगोवंगतसं	४७६	३०७
रूऊणण्णोण्णब्भ	१२८५	९२९
रूऊणद्धाणद्धे	१२८५	९३०
रूवहियडवीससया	११८७	८४१
[ल]		
लघुकरणं इच्छंतो	९१५	५७०
लद्धीणिव्वत्तीणं	३४८	२४०
लिंगकसाया लेस्सा	११७०	८२८
लोगाणमसंखपमा	१३४७	९५२
लोगाणमसंखमिदा	१३६४	९५५
लोहस्स सुहुमसत्त	१३६	१४०
लोहेक्कुदओ सुहुमे	९९३	६५९
[व]		
वग्गसलायेणवहिद	१२८३	९२६
वज्जयलं जिणभवणं	१३८८	९७०
वज्जं पुंसंजलणति	६६७	४२८
वण्ण चउक्कमसत्थं	१९४	१७०
बरइंदणंदिगुरुणो	६४५	३९६
बहुभागे समभागो	२१९	१९५
बहुागे समभागो	२३०	२००
बादरणिव्वत्तिवरं	३४४	२३५
बादालं पणुवीसं	९८९	६५०
बादालं तु पसत्था	१९१	१६४
बादालं वेण्णिसया	१२००	८५३
वाणउदी णउदि चऊ	१०७३	७४९
वाणउदी णउदि चऊ	१०२९	७०७
बाणउदीणउदिसत्तं	११०९	७६२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाणउदिणउदिसत्तं	१०४६	७३६
वाणउदिणउदिसत्तं	९७२	६२६
वाणउदीए बंधा	१०९४	७५५
वामे चउदस दुसु दस	११९९	८५१
वामे दुसु दुसु दुसु तिसु	११८५	८३७
वारचउतिदुगमेक्कं	११८५	८३६
वारट्ठ छवीसं	११९९	८५०
वारसयवेयणीए	१३६	१३९
वारससयतेसीदी	७३०	४८७
वावत्तरि अप्पदरा	९१९	५७५
वावत्तरिति सहस्सा	१२५०	९००
वावीस बंध चदु तिदु	१०१७	६८६
बावीसमेक्कवीसं	६९३	४६३
वासीसमेक्कवीसं	६९४	४६४
वावीसयादिबंधे	९९५	६६१
बावीसे अडवीसे	१०१३	६८०
बावीसेण णिरुद्धे	१००४	६७४
बावीसं दसयचऊ	९९०	६५५
वासीदि वज्जित्ता	९७१	६२४
बासीदे इगिचउपण	१११४	७७३
वासूप वासूप वरट्ठिदीओ	१५९	१४८
विग्गहकम्मसरीरे	९२७	५८३
विगुण णव चारि अट्ठं	५९९	३६१
विदियगुणे अणथीणति	६९	९६
विदियस्सवि पण ठाणे	६२५	३८०
विंदियादिसु छसु	४५३	२९३
विदियावरणे णव	९७६	६३१
विदिये तुरिये पणमे	६१६	३७१
विदिये विगिपणगयदे	७५०	४९९
विदिये विदियणिसेगे	१२७९	९२१
विदिये विदियणिसेगे	१८८	१६२
विदियं विदियं खंडं	१३७७	९५७
विरियस्स य णोकम्मं	५९	८५
विवरीयेणप्पदरा	९१२	५६९
विसवेयणरत्तक्खय	४७	५७
वीइंदियपज्जतज	३८९	२५१
वीसं छडणव वीसं	१०९६	७५९
वीसण्हं विज्झादं	६६५	४२३

वीस दु चउवीस चऊ	९३९	५९७
वीसादिसु बंधंसा	१०७१	७४६
वीसादीणं भंगा	९४६	६०३
वीसुत्तरछच्चसया	९४६	६०४
वीसुदये बंधो ण हि	१०७२	७४७
वीसं इगि चउवीसं	९३३	५९२
वेगुव्व अट्ठरहिदे	६११	३६९
वेगुव्वछ पण संहदि	५४७	३३१
वेगुव्व तेजथिर सुह	४५२	२९१
वेगुव्वे तम्मिस्से	१०३६	७२०
वेगुव्वं वा मिस्से	४९७	३१५
वेदकसाये सव्वं	१०३७	७२२
वेदगजोग्गे काले	९६४	६१४
वेदणियमोदघादी	४२	४९
वेदतियकोहमाणं	४३६	२६९
वेदादाहारोत्ति य	५८५	३५४
वेयणिये अडभंगा	९८९	६५१

[स]

सइ उट्ठिया पसिद्धी	१२४५	८९३
सच्छंददिट्ठीहिं वियप्पयाणि	१२४४	८८९
सगसगखेत्तगयस्स य	२१२	१८९
सगसगगदीणमाउं	९८२	६४१
सगचउपुव्वं वंसा	९९६	६६३
सगपज्जत्ती पुण्णे	२६५	२२१
सगवीस चउक्कुदये	११११	७६५
सगवीसे तिगिणउदे	१११७	७७९
सगसंभव धुवबंधे	६९५	४६६
सगसगसादिविहीणे	२१५	१९०
सत्त तिगं आसाणे	६१६	३७२
सत्तपदे बंधुदया	१०००	६६९
सत्तरसपंचतित्था	१७९	१५१
सत्तण्हं गुणसंकम	६६४	४२२
सत्तं तिणउदिपहुदी	१०७३	७४८
सत्तं दुणउदि णउदी	१०७५	७५२
सत्तं समयपबद्धं	१३२५	९४३
सत्तरसादि अडादी	१००२	६७१
सत्तरसुहुमसरागे	२५३	२१२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तरसेकग्गसयं	७५	१०३
सत्तरसेक्कारखचदु	४४२	२७६
सत्तरसेक्कारखचदु	४४७	२८२
सत्तरसे अडचउरिगिवीसे	१०१३	६८१
सत्तरसं णवयतियं	९९२	६५६
सत्तरसं दसगुणिदं	१२०१	८५४
सत्ता वाणउदितियं	१०३२	७१४
सत्तावीसहियसयं	७०५	४७१
सत्ती य लदादारू	२०२	१८०
सत्तुदये अडवीसे	१०१८	६८७
सत्तेव अपज्जत्ता	१०२८	७०५
सत्तेताल धुवा वि य	६५२	४०४
सत्ते बंधुदयाचदु	१०९३	७५३
सत्थगदी तस दसयं	६६३	४२०
सत्थत्तादाहारं	९६३	६१३
सत्थाणं धुवियाणम	२०१	१७९
सण्णिअसण्णिचउक्के	१४३	१४६
सण्णिम्मि मणुस्सम्मि य	९४४	६०१
सण्णिम्मि सव्वबंधो	१०३०	७०९
सण्णिस्स हु हेट्ठादो	१७५	१५०
सण्णिस्स मणुस्सस्स य	७९४	५३६
सण्णिस्सुववादवरं	३४६	२३७
सण्णाणपंचयादी	५१५	३२४
सण्णाणे चरिमपणं	८३१	५४७
सण्णी छस्संहडणो	२०	३१
सण्णीवि तहासेसे	८०२	५४१
समचउरवज्जरिसहं	३७	४२
समयपबद्धपमाणं	१३२४	९४२
समयट्ठिदिगो बंधो	४३९	२७४
समविसमट्ठाणाणि य	९७१	६२५
सम्मत्तूणुव्वेल्लण	६६७	४२६
सम्मत्तं देसजमं	९६७	६१८
सम्मविहीणुव्वेल्ले	६६६	४२४
सम्मेव तित्थबंधो	६४	९२
सम्मो वा मिच्छो वा	१९७	१७६
सम्मं मिच्छं मिस्सं	६५८	४११
सरगदिदु जसादेज्जं	४६१	२९७
सरिसायामेणुवरिं	३३४	२३१
सरिसासरिसे दव्वे	४५	५३
सयलंगेक्कंगेक्कं	६१	८८
सयलरसरूवगंधे	२१७	१९१
सव्वपरट्ठाणेण य	९२५	५७९
सव्वट्ठिदीणमुक्क	१३०	१३४
सव्वसलायाणं जदि	१२८३	९२७
सव्वरसेक्कं रूवं	६६८	४३०
सव्वाउबंधभंगे	९८७	६४७
सव्वाओ दु ठिदीओ	१८१	१५४
सव्वापज्जत्ताणं	९२९	५८५
सव्वावरणं दव्वं	२२२	१९७
सव्वावरणं दव्वं	२२९	१९९
सव्वासिं पयडीणं	१२९९	९३
सव्वुक्कस्सठिदीणं	१३०	१३५
सव्वुवरिं मोहणीये	१३४१	९४८
सव्वे जीवपदेसे	२७१	२२८
सव्वं तिगेगसव्वं	५९७	३६०
सव्वं तित्थाहारु	९६२	६१४
सव्वं तिवीसछक्कं	१०३६	७१९
सव्वं सयलं पढमं	१००१	६७०
साणे तेसिं छेदो	४९३	३१३
साणे थीवेदछिदी	५०१	३१९
साणे पण इगिभंगा	६१८	३७५
साणे सुराउ सुरगदि	५२२	३२६
सादासादेक्कदरं	९७७	६३३
सादि अणादी धुव अ०	६२	९०
सादि अणादी धुव अ०	१२१	१२२
सादी अबंधबंधे	१२२	१२३
सादं तिण्णेवाऊ	३७	४१
सासणमिस्से देसे	५९८	३६१
सामण्ण अवत्तव्वो	७००	४७०
सामण्णकेवलिस्स	९५३	६०६
सामण्णतित्थकेवलि	७३५	५२०
सामण्णतिरियपंचि	८३	१०५
सामण्ण सयलवियलवि	९३३	५९४
सासण अयदपमत्ते	७४२	४९६
सासण पमत्तवज्जं	९०३	५५७
सिद्धाणंतिमभागं	३	४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धे विसुद्धणिलये	१२७४	९१३	सोलट्ठेक्किगिछक्कं	५५७	३३७
सिद्धेसु सुद्धभंगा	१२३६	८७४	सो मे तिहुवणमहिओ	५९४	३५७
सिद्धंतुदयतडुग्गय	१३८७	९६७	सोलस पणवीस णभं	६६	९४
सीदादि चउट्ठाणा	९७०	६२२	सोलसयिसदं कमसो	११४८	७९८
सीदादि चउसु बंधा	१०९६	७५८	सोहम्मोत्ति य तावं	१९६	१७४
सुक्के सदरचउक्कं	११४	१२१	संकमणा करणूणा	६७१	४४१
सुरणरतिरियोरालि य	६५३	४०६	संखाउग णरतिरिए	४४९	२८३
सुरणरसम्मे पढमो	९६८	६२०	संखेज्ज–सहस्सा	१३३९	९४६
सुरणिरया णरतिरियं	९८१	६३९	संठाण संहदीणं	१२७	१२९
सुरणिरयविसेसणरे	९३९	५९६	संठाणे संहडणे	७८९	५३२
सुरणारयाऊणोघं	१२७	१३३	संठाणे संहडणे	९४३	५९९
सुरणिरयाऊ तित्थं	६५०	४०२	संढित्थि छक्कसाया	५५८	३३९
सुरणिरये उज्जोवो	१९६	१७३	संताणकमेणागय	७	१३
सुहदुक्खणिमित्तादो	२१८	१९३	संतोत्ति अट्ठसत्ता	६८८	४५७
सुहपयडीण विसोही	१९१	१६३	संजलणभागबहुभाग	२३६	२०३
सुहुमगलद्धिजहण्णे	३४२	२३३	संजलणसुहुमचोद्दस	१८०	१५३
सुहुमणिगोदअपज्ज०	२५६	२१५	संजोगमेवेति वदंति तण्णा	१२४५	८९२
सुहुमणिगोदअपज्ज०	३९३	२५६			
सुहुमस्स बंधघादी	६६३	४१९	**[ह]**		
सेढिअसंखेज्जदिमा	३९४	२५८	हस्सरदिपुरिसगोददु	६५३	४०७
सेढियसंखेज्जदिमा	३८९	२५२	हस्सरदि उच्चपुरिसे	१२७	१३२
सेवट्टेण य गम्मइ	१९	२९	हारदु सम्मं मिस्सं	५७९	३५०
सेसाणं पज्जत्तो	१३७	१४३	हारदुहीणा एवं	४७०	३०३
सेसाणं पयडीणं	२१९	१९४	हारं अधापवत्तं	६६९	४३१
सेसाणं सगुणोघं	५४५	३३०	हेट्ठिमखंडुक्कस्सं	१३७८	९५९
सेसे तित्थाहारं	१२४	१२५	होंति अणियट्टिणो ते	१२७२	९१२

इति कर्मकांडीय गाथासूची ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित

जैनधर्म-दर्शन, सिद्धान्त एवं आचारपरक ग्रन्थ

गोम्मटसार, जीवकाण्ड (दो भाग)
(कर्णाटिकी वृत्ति, संस्कृत टका एवं हिन्दी अनुवाद)

गोम्मटसार, कर्मकाण्ड (दो भाग)
(कर्णाटिकी वृत्ति, संस्कृत टीका एवं हिन्दी अनुवाद)

सर्वार्थसिद्धि (संस्कृत, हिन्दी) : आचार्य पूज्यपाद
सम्पादन-अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. फूलचन्द्र शास्त्री

तत्त्वार्थराजवार्तिक (दो भाग)
मूल : भट्ट अकलंक
सम्पादन-अनु. : डॉ. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य

सत्यशासनपरीक्षा (संस्कृत), मूल : आचार्य विद्यानन्द
सम्पादन-अनु : डॉ. गोकुलचन्द्र जैन

प्रमाणप्रमेयकलिका (संस्कृत), मूल : नरेन्द्रसेन

षड्दर्शनसमुच्चय
सम्पादन-अनु. डॉ. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य

षट्खण्डागम-परिशीलन : पं. बालचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

श्रावकप्रज्ञप्ति (सावयपण्णत्ति)
सम्पादन-अनु. : पं. बालचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

मूलाचार (प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी) दो भाग
सम्पा.-अनु. : आर्यिकारत्न ज्ञानमती

धर्मामृत (अनगार, सागार)
ज्ञानदीपिका पंजिका एवं हिन्दी अनुवाद सहित
सम्पादन-अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री

आराधना-समुच्चयो योगसारसंग्रहश्य (संस्कृत)
मूल : रविचन्द्र; गुरुदास

ध्यानस्तव (संस्कृत, अँग्रेज़ी), मूल : भास्करनन्दी

गीतवीतराग (संस्कृत), मूल : पण्डिताचार्य
सम्पादन : डॉ. आ.ने. उपाध्ये

ज्ञानपीठ पूजांजलि (जैन पूजा, व्रत, स्तोत्रपाठ आदि संगह)

SAMAYASAR (समयसार)
Edited by A. Chakravarti

Structure and Functions of Soul in Jainism—Dr. S.C. Jain

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारतीय ज्ञानपीठ

स्थापना : सन् 1944

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्री का अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्य का निर्माण

संस्थापक

स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन

स्व. श्रीमती रमा जैन

अध्यक्ष

श्रीमती इन्दु जैन

कार्यालय : 18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण

हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मंदिर में उपयोग हेतु उपकरण और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है

(पांडुशिला .सिंघासन, छत्र, चवर प्रातिहार्य,जाप माला .मंगल कलश, पूजा बर्तन .चंदोवा,तोरण .झारी .

(शुद्ध चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किया जाता है)

नोट:-हमारे यहाँ घरो में उपयोग हेतु .साधुओ के उपयोग हेतु. अनुष्ठानों में उपयोग हेतु शुद्ध घी भी आर्डर पर उपलब्ध कराया जाता है

SOURABH KUMAR JAIN
9993602663
77229 83010
SOURABHJN1989@GMAIL.COM

जय जिनेंद्र
श्री
शुद्ध घी
देशी गाय का शुद्ध घी
शुद्धता पूर्वक बनाया गया देशी घी
साधु व्रती एवं धार्मिक अनुष्ठानों को ध्यान
में रखकर बनाया गया शुद्ध देशी घी
पहले इस्तेमाल करें फिर विश्वास करें
संपर्क सूत्र
CONTACT FOR ORDER
CALL AND WHATSAPP
9993602663
7722983010

Contact for order
Call and whatsapp
9993602663
7722983010

9993602663

10"
11"
13"

11"
13"
15"

णमोकार महामंत्र
णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायणं
णमो लोए सव्वसाहूण
एसो पंच णमोकारो, सव्व-पावप्पणासणो ।।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ।।

जी महाराज

5feet

6.5
22/29

18/29
शुभ
लाभ
5.5

पीतल डिब्बा सेट

REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA

WEIGHT
42040
Essae
DS-852

WEIGHT g
4060
Essae
DS-852

WEIGHT
21565

दिगंबर जैन ग्रंथो की पीडीएफ
के लिये हमारे whatapp नंबर
पर संपर्क करें
09993602663
सौरभ सागर (इंदौर)